

श्रम समस्यायें

एव

समाज कल्याण

लेखक

प्रार० सी० सक्सेना

एम०ए०, बी०ए० (मानसं) पी०एच०डी०

प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग,
मेरठ काश्मिर मेरठ ।



ज्येष्ठ मकाश नाथ एराड कम्पनी

पुस्तक प्रकाशक

मेरठ ।

प्रकाशक
काशीनाथ त्रिपाठी
व्यवस्थापक
जय प्रकाश नाथ एण्ड कम्पनी
मेरठ ।

प्रथम संस्करण, दिसम्बर १९६०
द्वितीय संस्करण, सितम्बर १९६२
(लेखक द्वारा संपादन द्वारा सुधारित है)
मुद्रण १९६२

मुद्रक ।
नवयुग प्रेस
वाल्मीकि
मेरठ कान्त ।

परमपूज्य पिताजी

स्वर्गीय प्रोफेसर विश्वेश्वरचरणलाल

को

सादर समर्पित

प्रथम हिन्दी संस्करण की भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक 'लेबर प्रोब्लम एण्ड सोलन बेनफेयर्स' नामक मेरी अंग्रेजी पुस्तक का अनुबाद है। अनेक भारतीय विद्वानविद्यालयों में हिन्दी भाषा ही अब अधिकाधिक रूप में विद्या का माध्यम होती जा रही है। विद्यार्थियों अध्यापकों तथा अन्य पाठकों की यह निरन्तर मांग रही है कि मैं अपनी अंग्रेजी पुस्तक का हिन्दी संस्करण भी प्रकाशित करूँ। अंग्रेजी पुस्तक की लोकप्रियता के विषय में मुझे कुछ नहीं कहना है। पाठकों में ही इसके पाठ संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं और सभी क्षेत्रों में इसका काफी स्वागत किया गया है। इसके लिए मैं विद्यार्थीगण अध्यापकों विभिन्न समाचारपत्रों व पत्रिकाओं और प्रमुख व्यक्तियों (जैसे स्व० डा० एन० सी० बैन) तथा श्री० बी० बी० मित्रि, राज्यपाल केरल का धामाटी हूँ जिन्होंने मेरी अंग्रेजी पुस्तक की प्रशंसा की है। मैं धारा करता हूँ कि मेरी हिन्दी पुस्तक भी बँसी ही उपयोगी सिद्ध होगी वैसे इस विषय की मेरी अंग्रेजी पुस्तक सिद्ध हुई है।

अंग्रेजी पुस्तक का हिन्दी अनुबाद करने में हिन्दी के प्रमाणिक व उपयुक्त शब्दों की समस्या प्रायः सामने आती है। इस पुस्तक में यथासम्भव मैंने उन शब्दों का प्रयोग किया है जो कि भारत सरकार की पारिभाषिक शब्दावली की अर्थशास्त्र विशेषज्ञ समिति ने स्वीकार किए हैं, जिसका मैं कई वर्षों से सदस्य भी हूँ।

इस पुस्तक के अनुबाद में मुझे काफी समय लगा है। बीच-बीच में अंग्रेजी पुस्तक के संस्करण की मांग के कारण मैं अनुबाद के कार्य को और अधिक ध्यान नहीं दे पाया हूँ। यह हिन्दी संस्करण कुछ सीधता में ही प्रकाशित किया जा रहा है। इस कारण इस संस्करण में कहीं-कहीं त्रुटियाँ या गड़बड़ें भी ठीक नहीं हो पाई हैं। मुझे धारा है कि पाठकगण इसके लिए मुझे क्षमा करेंगे। प्रथम संस्करण में भाषा, शब्दावली तथा जर्नल की भी त्रुटियाँ होनी उन्हें दूर करने का प्रयत्न करना।

इस संस्करण की तैयारी और अनुबाद में मुझे अनेक व्यक्तियों का सहयोग मिला है तथा सहायता प्राप्त हुई है। इस सम्बन्ध में श्रीमती कोकिला सक्सेना श्री सुरेश सिमल तथा कुमारी प्रीति सक्सेना के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त श्री संतोषकुमार गुप्ता भी हर्षकुमार बैन श्री पी० के० बैन श्री राजेश शर्मा श्री सुरेश पाठक श्री राजेश कश्यप श्री राजकुमार शर्मा श्री परमहंस शर्मा मेहता तथा श्री राजकुमार गुप्ता ने भी अनेक रूपों में सहायता की है। श्रीमती सकुन सक्सेना कुमारी हेम सक्सेना श्री बमराजनायक तथा प्रफुल्ल पाली व इन्दु का सहयोग भी प्रशंसनीय रहा है। मैं इन सबका धामाटी हूँ।^१

मेरठ

दिसम्बर, १९९०

आर० सी० सक्सेना

परमपूज्य पिताजी

स्वर्गीय प्रोफेसर विश्वेश्वरचरणलाल

को

साबर समर्पित

प्रकाशक :
कामठीलाय पुस्तक
व्यवस्थापक
जय प्रकाश नाथ एण्ड कम्पनी
मेरठ ।

११

प्रथम संस्करण, दिसम्बर १९६०
द्वितीय संस्करण, सितम्बर १९६५
(सेकण्ड हाण्ड संप्रतिबन्धन अर्थात्कृत है) । २०
मुद्रण १५

मुद्रण :
नक्षत्र प्रेस
बाबू बैल
मेरठ शहर ।
२०

परमपूज्य पिताजी

स्वर्गीय प्रोफेसर विश्वेश्वरचरणलाल

की

सादर समर्पित

द्वितीय हिन्दी संस्करण की भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक के प्रथम हिन्दी संस्करण का स्वागत विद्यापियों तथा मध्यापकों द्वारा उसी प्रकार हुआ जिस प्रकार इस विषय पर मेरी अंग्रेजी पुस्तक का स्वागत हो रहा है। इसके लिए मैं विद्यापियों मध्यापकों तथा विद्वानों का अत्यन्त आभारी हूँ। उनमें सुम्हबों के अनुसार पुस्तक के इस संस्करण में स्वातन्त्र्य पर पारियायिक दृष्टियों के साथ-साथ अंग्रेजी के दृष्ट भी देखे गए हैं। इस संस्करण में भी मैंने यथासम्भव उन दृष्टियों का प्रयोग किया है जो कि भारत सरकार की अर्थशास्त्र विषयक पारिभाषिक सञ्चालनी तैयार करने वाली विशेषज्ञ समिति ने स्वीकार किए हैं जिसका कई बयों से मैं सबस्य हूँ।

पुस्तक के इस द्वितीय संस्करण में कई स्थानों पर पूर्ण रूप से सशोधन किया गया है और अमूल्य में जो भी हास के बयों में परिवर्तन हुए हैं उनका तथा अमूल्य से सम्बन्धित मनीषितम दृष्टियों तथा आंकड़ों का समावेश किया गया है। तीसरी पंचवर्षीय आयोजना का भी संक्षेप में बयान किया गया है तथा पंचवर्षीय आयोजनाओं में अमूल्य तथा अमूल्य सम्बन्धी सुम्हबों पर प्रकाश डाला गया है। कुछ महत्वपूर्ण विषयों (उदाहरणतः अमूल्य प्रबन्ध अनुशासन संहिता आभरण संहिता, विद्यालय विचारण क्रियाविधि प्रबन्ध में अमूल्यों का हास आदि) का अत्यन्त परिशिष्ट 'ग' में किया गया है। आशा है प्रस्तुत संस्करण पाठकों के लिए पहले से अधिक उपयोगी सिद्ध होगा।

1 इस संस्करण की तैयारी में मुझे अपने शिष्य श्री बी० मिश्र तथा मुखर श्री जे० मिश्र से काफी सहायता मिली है जिसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

मेरठ

सितम्बर, १९९२

प्रार० सी० सक्सेना

प्रथम पुस्तक के प्रथम संस्करण की भूमिका

धर्म धारा का एक मुख्य विषय है। औद्योगिक प्रणाली और देश के भावी आर्थिक विकास के लिए धर्म की महत्ता को सबने स्वीकार किया है परन्तु इस विषय पर काफी अस्पष्टता है। प्रकाशित सूचनाओं की बहुसंख्या के कारण कई बार जनता में धर्म-समस्याओं को ठीक-ठीक समझने के स्थान पर धर्म ही उत्पन्न हो जाता है। अतः विभिन्न धर्म-समस्याओं को स्पष्ट रूप से समझने की आवश्यकता है।

भारतवर्ष के समय सभी विश्वविद्यालयों में धर्म-समस्याएँ एवं समाज कल्याण अध्ययन का विषय है। स्नातकोत्तर कक्षाओं में अधिकतर विद्यार्थी इस विषय का अध्ययन कर रहे हैं। एक ऐसी पुस्तक की आवश्यकता काफी समय से अनुभव की जाती रही है जिसमें धर्म-समस्याओं के विषय में विस्तारपूर्वक सूचनाएँ सभी विचार तथा तथ्य और भाँकड़े प्राप्त हो सकें। इस विषय पर जो कुछ साहित्य मिश्रता भी है वह या तो सरकार द्वारा प्रकाशित बड़ी-बड़ी रिपोर्टें हैं अथवा धर्म विषय के विभिन्न रूपों पर विविध अध्ययन हैं। साधारण छात्रों के लिए, विशेषकर पढ़ाई के साथ-साथ नौकरी भी करने वाले छात्रों के लिए, ऐसी रिपोर्टों और साहित्य को पाना कठिन ही जाता है। परिणामस्वरूप विद्यार्थी या तो अध्यापक से प्रार्थना करते हैं कि कक्षा में कुछ नोट्स दे दिए जायें अथवा परीक्षा के दृष्टिकोण से अपना अध्ययन कुछ विशेष प्रश्नों तक ही सीमित रखते हैं। इस प्रकार धर्म समस्याओं का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन करने का प्रयत्न नहीं किया जाता।

प्रस्तुत पुस्तक इस कठिनाई को दूर करने के लिए ही लिखी गई है। पुस्तक में इस बात का प्रयत्न किया गया है कि धर्म-विषय से सम्बन्धित तथ्य और विचारों को उचित दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया जा सके। इस बात की ओर विशेष ध्यान रखा गया है कि पुस्तक की विषय सामग्री को इस प्रकार प्रस्तुत किया जाए कि विद्यार्थियों को धर्म-समस्याओं पर विचार करने और अधिक अध्ययन करने की प्रेरणा मिले। महत्वपूर्ण समस्याओं के सैद्धांतिक आधार का भी विशेष ध्यान दिया गया है। अतः मैं इस बात का दावा नहीं करता कि इस पुस्तक में कोई मौलिक सामग्री प्रस्तुत की गई है। जो भी तथ्य और विचार दिए गए हैं वे विभिन्न रिपोर्टों, पत्रिकाओं, समाचारपत्रों तथा विषय से सम्बन्धित विविध ब्रह्मविद्यालयों के लेखकों के लेखों और पुस्तकों से लिए गए हैं। सत्य तो यह है कि स्नातकोत्तर कक्षाओं के लिए तैयार किए गए नोट्स के आधार पर इस पुस्तक को तैयार किया गया है। अतः कई स्थानों पर सरकारी रिपोर्टों तथा ब्रह्मविद्यालयों के लेखकों का पुस्तक

प्रथम हिन्दी संस्करण की भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक 'मेजर प्रोब्लम एण्ड सोशल वेल्फेयर' नामक मेरी अंग्रेजी पुस्तक का अनुबाव है। अनेक भारतीय विद्वानों में हिन्दी भाषा ही अब अधिकाधिक रूप में शिक्षा का माध्यम होती जा रही है। विद्यार्थियों अध्यापकों तथा अन्य पाठकों की यह निरन्तर मांग रही है कि मैं अपनी अंग्रेजी पुस्तक का हिन्दी संस्करण भी प्रकाशित करूँ। यह भी पुस्तक की लोकप्रियता के विषय में मुझे कुछ नहीं कहना है। पाठकों में ही उसके पाठ संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं और सभी क्षेत्रों में इसका काफी स्वागत किया गया है। इसके लिए मैं विद्यार्थियों अध्यापकों विभिन्न समाचारपत्रों व पत्रिकाओं और प्रमुख व्यक्तियों (जैसे स्व० डा० एन० सी० जैन) तथा पी० बी० पी० विरि राज्यपाल केरल का ध्याती हूँ जिन्होंने मेरी अंग्रेजी पुस्तक की प्रशंसा की है। मैं ध्याती हूँ कि मेरी हिन्दी पुस्तक भी जैसी ही उपयोगी सिद्ध होगी जैसी इस विषय की मेरी अंग्रेजी पुस्तक सिद्ध हुई है।

अंग्रेजी पुस्तक का हिन्दी अनुबाव करने में हिन्दी के प्रमाणिक व उपयुक्त शब्दों की समस्या प्रायः सामने आती है। इस पुस्तक में यथासम्भव मैंने उन शब्दों का प्रयोग किया है जो कि भारत सरकार की पारिभाषिक शब्दावली की अर्थात्स्य विधेयक समिति ने स्वीकार किए हैं, जिसका मैं कई वर्षों से सदस्य भी हूँ।

इस पुस्तक के अनुबाव में मुझे काफी समय लगा है। बीच-बीच में अंग्रेजी पुस्तक के संस्करण की मांग के कारण मैं अनुबाव के कार्य की ओर अधिक ध्यान नहीं दे पाया हूँ। यह हिन्दी संस्करण कुछ धीमती में ही प्रकाशित किया जा रहा है। इस कारण इस संस्करण में कहीं-कहीं त्रुटियाँ या मर्र हैं जो ठीक नहीं हो पाई हैं। मुझे ध्याती है कि पाठकगण इसके लिए मुझे क्षमा करें। अगले संस्करण में भाषा, शब्दावली तथा छपाई की जो भी त्रुटियाँ होंगी उन्हें दूर करने का प्रयत्न करूँगा।

इस संस्करण की तैयारी और अनुबाव में मुझे अनेक व्यक्तियों का सहयोग मिला है तथा सहायता प्राप्त हुई है। इस सम्बन्ध में श्रीमती कोकिला सक्सेना श्री सुरेन्द्र सियल तथा कुमारी प्रीति सक्सेना के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त श्री संतोषकुमार गुप्ता श्री हर्षकुमार जैन श्री पी० के० जैन श्री राजेन्द्र पाठक श्री सुरेश पाठक श्री राजेन्द्र कंसल श्री राजकुमार त्यागी श्री परमहंस लाल मेहता तथा श्री राजकुमार गुप्ता ने भी अनेक रूपों में सहायता की है। श्रीमती सक्सेना कुमारी हेम सक्सेना श्री बलराजगारायस तथा प्रफ़ेसर व बनी व इन्दु का सहयोग भी प्रशंसनीय रहा है। मैं इन सबका ध्याती हूँ।^१

मेरठ

दिसम्बर, १९६०

आर० सी० सक्सेना

अप्रेमी पुस्तक के प्रथम संस्करण की भूमिका

धम धाम का एक मुख्य विषय है। मौखिक प्रणाली और देश के भाषी प्रायोगिक विचार के लिए धम की महत्ता को सबसे स्वीकार किया है, परन्तु इस विषय पर काफी असुविधा है। प्रकाशित सूचनाओं की बहुसंख्या के कारण कई बार अनिष्टता में धम-समस्याओं को ठीक-ठीक समझने के स्थान पर धम ही उत्पन्न हो जाता है। अतः विभिन्न धम-समस्याओं को स्पष्ट रूप से समझने की प्रायोगिक आवश्यकता है।

भारतवर्ष के लगभग सभी विश्वविद्यालयों में धम-समस्याएँ एवं समाज कल्याण अध्ययन का विषय है। स्नातकोत्तर कक्षाओं में अधिकतर विद्यार्थी इस विषय का अध्ययन कर रहे हैं। एक ऐसी पुस्तक की आवश्यकता काफी समय से अनुभव की जाती रही है जिसमें धम-समस्याओं के विषय में विस्तारपूर्वक सूचनाएँ सभी विचार तथा तथ्य और आंकड़े प्राप्त हो सकें। इस विषय पर जो कुछ साहित्य मिलता भी है वह या तो सरकार द्वारा प्रकाशित बड़ी-बड़ी रिपोर्टें हैं अथवा धम विषय के विभिन्न स्कों पर विद्युत् अध्ययन हैं। साधारण छात्रों के लिए, विशेषकर पढ़ाई के साम-साथ मौकरी भी करने वाले छात्रों के लिए, ऐसी रिपोर्टें और साहित्य की कमी कठिन हो जाता है। परिणामस्वरूप विद्यार्थी या तो अभ्यास से प्राप्ति करते हैं कि कक्षा में कुछ नोट्स दे दिए जायें अथवा परीक्षा के दृष्टिकोण से अपना अध्ययन कुछ विशेष प्रश्नों तक ही सीमित रखते हैं। इस प्रकार धम समस्याओं का सम्मीरतापूर्वक अध्ययन करने का प्रयत्न नहीं किया जाता।

प्रस्तुत पुस्तक इस कठिनाई को दूर करने के लिए ही लिखी गई है। पुस्तक में इस बात का प्रयत्न किया गया है कि धम विषय से सम्बन्धित तथ्य और विचारों को उचित दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया जा सके। इस बात की ओर विशेष ध्यान रखा गया है कि पुस्तक की विषय सामग्री को इस प्रकार प्रस्तुत किया जाए कि विद्यार्थियों को धम-समस्याओं पर विचार करने और अधिक अध्ययन करने की प्रेरणा मिले। महत्वपूर्ण समस्याओं के वैज्ञानिक आधार का भी विश्लेषण किया गया है। अतः मैं इस बात का दावा नहीं करता कि इस पुस्तक में कोई मौखिक सामग्री प्रस्तुत की गई है। जो भी तथ्य और विचार दिए गए हैं वे विभिन्न रिपोर्टों पत्रिकाओं समाचारपत्रों तथा विषय से सम्बन्धित विद्युत् व स्वातिप्राप्त लेखकों के लेखों और पुस्तकों से लिए गए हैं। सत्य तो यह है कि स्नातकोत्तर कक्षाओं के लिए तैयार किए गए नोट्स के आधार पर इस पुस्तक को तैयार किया गया है। अतः कई स्थानों पर सरकारी रिपोर्टों तथा स्वातिप्राप्त लेखकों के लेखों का पुस्तक

में उपभोग किया गया है। (अभिजी की पुस्तक परिशिष्ट 'D' में ऐसी सभी किताबों की सूची दी गई है जिनसे इस किताब के लिखने में सहायता मिली है।) अन्तर्राष्ट्रीय अम-संगठन के प्रकाशन रॉबिन थम आयोग तथा थम अनुसन्धान समिति की रिपोर्टें, 'इण्डियन सेक्टर ईयर बुक्स' डा० रामकमल मुकुर्जी की पुस्तक 'इण्डियन बॉम्बिंग क्वास' तथा श्री ए० एन० अग्रवाल की पुस्तक "इण्डियन सेक्टर प्रोब्लम्स" का विशेष रूप से इस सम्बन्ध में उल्लेख किया जा सकता है। मैं इन सभी प्रकाशनों तथा थम्य पुस्तकों के प्रति जिनका नाम सूची में दिया गया है अपना आभार प्रदर्शित करता हूँ। इंसोड की थम समस्याओं के लिए मैसर्स जी० डी० एच० कोस तथा रिचर्डसन की पुस्तकें बहुत उपयोगी सिद्ध हुई हैं।

अम-समस्याओं में रुचि मुझे १९१२ से ही रही है जब अपने बड़े भाई श्री एच० सी० सक्सेना डा० ए० एस० के निर्देशन में जो उस समय पंजाब विश्वविद्यालय लाहौर में लेक्चरर थे, मैंने इस विषय को एम० ए० में लिया था। उसके पश्चात् पिछले कई वर्षों से स्नातकोत्तर कक्षाओं को यह विषय पढ़ाने, तथा थम-विषयों पर अनुसन्धान का पर्यवेक्षण करने के कारण इस विषय पर मेरी रुचि बढ़ा बनी रही है। उत्तर भारत के अधिकांश औद्योगिक और खनिज क्षेत्रों को स्वयं देखने का मुझे अवसर मिला है। अतः मैंने इस पुस्तक में कोई ऐसी बात नहीं लिखी है जो मेरे व्यक्तिगत अध्ययन पर आधारित न हो या जिसमें मुझे पूर्ण विद्वान्त न हो।

इस पुस्तक के लिखने में मुझे कई विद्यापियों जैसे सर्वश्री गोपीचन्द्र हसन, बीरेन्द्रर त्यागी श्री पी० कुन्दरेजा भार० डी० बी० बी० सी० शर्मा आदि ने कई रूपों में सहायता की है। इन सबको मैं अनन्यवाद देता हूँ प्रो० पी० सी० माधुर, प्रो० ए० एस० गर्ग और प्रो० एस० के० मुकुर्जी के सहयोग तथा डा० के० के० शर्मा ने इस पुस्तक में जो रुचि दिखाई है उसके लिए मैं अपना आभार प्रदर्शित करता हूँ प्रो० लक्ष्मण भटनागर, अध्यक्ष, प्रबंधात्मक विभाग मैरठ कांसिज का आभार प्रकट करने के लिए मेरे पास उपयुक्त शब्द नहीं हैं। इस किताब को लिखने का विचार सर्वप्रथम प्रो० भटनागर ने ही दिया था और इस वर्ष तो इनका यह 'आवेष्ट' मिला गया था कि मैं इस किताब को पूर्ण कर दूँ। उनके स्नेह और प्रोत्साहन के कारण ही यह पुस्तक लिखी जा सकी है।

मैरठ

जनवरी १९५२

भार० सी० सक्सेना

विषय-सूची

५८—

अध्याय

पृष्ठ

१—विषय प्रवेश ✓

यम की विशेषतायें यम सम्बन्धी समस्याओं की उत्पत्ति भारतवर्ष में उद्योगों की उत्पत्ति सरकार की भूतपूर्व औद्योगिक नीति कारखानों का विकास उद्योग सम्बन्धी कुछ आँकड़ों प्राचीन भारत में अम-बीबी-वर्तमान समय की समस्यायें आयोजन आयोग द्वारा व्यक्त किए गए विचार ।

१—१३

२—भारतीय अमिकों में प्रवृत्ति ✓

प्रवृत्ति का अर्थ; अमकों की जनसंख्या में वृद्धि अमिक प्रति का उद्गम स्थान; प्रवृत्ति का स्वभाव प्रवृत्ति के कारण दुष्परिणाम प्रवृत्ति के साम; उपसंहार भावी नीति ।

१४—२४

३—औद्योगिक अमिकों की अर्थों की समस्यायें ✓

प्रारम्भिक इतिहास अर्थों प्रणाली में मध्यस्थों का स्थान; मध्यस्थों के दोष वर्तमान स्थिति और अविष्य विभिन्न उद्योगों में अर्थों की प्रणाली-टेके के अमिक; अमिकों का स्वायत्तकरण अर्थों की कुछ अन्य पद्धतियाँ ।

रोजगार दफतर; उनकी परिभाषा; कार्य तथा महत्व अन्य देशों में रोजगार दफतर; भारत में रोजगार दफतर, ऐतिहासिक रूपरेखा रोजगार दफतरों का संयोजन अमिकों की प्रसिद्ध व्यवस्था विचारण समिति की रिपोर्ट; रोजगार दफतरों के कार्यों का सूचीकरण; पंचवर्षीय आयोजनाओं में सुझाव ।

२५—३७

४—अनुपस्थिति अमिकवर्त तथा वेतन सहित कुटियाँ

अनुपस्थिति; परिभाषा उसकी व्यापकता उसके प्रभाव कारण अनुपस्थिति को दूर करने के उपाय ।

अमिकवर्त परिभाषा उसका प्रभाव; मापने में कठिनाइयाँ; अमिकवर्त की व्यापकता उसके कारण अमिकवर्त को कम करने के उपाय ।

सुट्टियाँ और बैठन सहित सबकास सुट्टियों की आवश्यकता तथा महत्व भारतीय उद्योगों में सुट्टियाँ और सबकास सम्बन्धित विभाग वर्तमान स्थिति सुट्टियों की स्मृततम संख्या पत्रों पर सुट्टियाँ । १८—७५

५—भारतीय श्रमिक संघ आन्दोलन ✓

श्रमिक संघ की परिभाषा विभिन्न मत श्रमिक संघवाद का विकास श्रमिक संघों के कार्य श्रमिक संघों के हानि और लाभ उनका मजदूरी पर प्रभाव श्रमिक संघों के विभिन्न रूप उनके विकास के लिए आवश्यक तत्व ।

भारतीय श्रमिक संघ आन्दोलन का इतिहास प्रारम्भिक इतिहास प्राथमिक श्रमिक संघों का विकास इतिहास विभिन्न संघों महामदानाद सुती बस्त्र मिल मजदूर परिवार श्रमिक संघ सम्बन्धी प्रांतीय संघों की प्राय तथा अन्य श्रमिक संघ विभाग १९२६ का श्रमिक संघ अधिनियम १९४७ तथा १९६० में संशोधन १९६० का विधेयक अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघटना तथा श्रमिक संघ व्यापार संघों का प्रकार भारतीय श्रमिक संघों के शेष और कठिनाईयाँ उपसंहार और सुझाव । ७६—१०९

६—इंग्लैंड में श्रमिक संघवाद

मध्य युग में हस्तकारी श्रमियों प्राथमिक श्रमिक संघों का विकास संघर्ष का विरोधी व्यवहार संघटना के विकास विभाग श्रमिक संघों का प्रारम्भ १८७१ का अधिनियम संघों का विकास टेक्स्टाइल रेलवे कम्पनी और प्रांसबोर्न के मुकदमे युद्ध और संघ वर्तमान स्थिति इंग्लैंड में संघों विविध श्रमिक संघों की उपलब्धियाँ अमासय प्रतिनिधि आन्दोलन अन्य देशों में श्रमिक संघ अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संघ भारत और इंग्लैंड के श्रमिक संघों की तुलना । १०७—१२४

७—भारतवर्ष में औद्योगिक विवाद ✓

विवादों के मूल कारण भारत में औद्योगिक विवादों का इतिहास प्रथम बिस्व-युद्ध के पश्चात् औद्योगिक विवाद १९२६ के पश्चात् विवाद १९३६ के पश्चात् स्थिति औद्योगिक विवाद सम्बन्धी प्रांतीय औद्योगिक विवादों के कारण हड़तालों का प्रभाव हड़ताल करने का अधिकार ।

भारतवर्ष में औद्योगिक विवादों को रोकने और सुलझाने के उपाय, विवादों की रोकथाम-प्रतिपालनी अमिक संघ; मासिक मजदूर समझौते-मासिक-मजदूर समितियाँ उनका महत्व और कार्य; उनके कार्यों में बाधायें भारत में मासिक-मजदूर समितियाँ; औद्योगिक विवाद और अमिकों की आर्थिक स्थिति-स्वामी आदेश १९४६ का अधिनियम; स्वामी आदेशों के शेष १९२६ में संशोधन ।

भारतवर्ष में औद्योगिक विवाद विधान १९२६ का व्यापार विवाद अधिनियम १९१४ व १९२८ के अधिनियम १९३८ का बम्बई औद्योगिक विवाद अधिनियम मुंबई-काम में औद्योगिक विवाद विधान; १९४० का औद्योगिक विवाद अधिनियम; इसमें किए गए विभिन्न संशोधन सम् १९४६ का बम्बई औद्योगिक सम्बन्धी अधिनियम; १९४७ का उत्तर प्रदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम मध्य प्रदेश औद्योगिक विवाद समझौता अधिनियम औद्योगिक विवाद विधान की संक्षिप्त समीक्षा; कार्यान्वित व्यवस्था १९३० का धन सम्बन्ध विवेक पंच-वर्षीय आयोजनाओं में औद्योगिक सम्बन्ध विदेशीय धन व्यवस्था औद्योगिक विधान सम्बन्धी प्रस्ताव उसे लागू करने के लिए उठाए गए पग ।

सुसह तथा विवाचन पर टिप्पणी-समझौता विवाचन और मध्य स्वता-अवपीडक हस्तक्षेप; विभिन्न अधिनियमों में सुसह और विवाचन-सुसह व्यवस्था-अतिचार्य सुसह विवाचन विधि ऐच्छिक एवं अतिचार्य की विधि के विचार; उपसंहार; उपस्था का समाधान ।

१२३—१६४

६. ब-ग्रेट ब्रिटेन में औद्योगिक सम्बन्ध

वामूहिक सीराकारी; इससेब में औद्योगिक विवाद और अमिक संघ-औद्योगिक विवादों के कारण-औद्योगिक विवाद सम्बन्धी विधान; विवादों को निपटाने का ऐच्छिक आचार; संयुक्त औद्योगिक परिवर्षे मजदूरी को नियन्त्रित करने वाली व्यवस्था-राज्य द्वारा सुसह और विवाचन व्यवस्था; औद्योगिक शांति की स्थापना के लिए की गई व्यवस्था की प्रमुख विशेषतामें इससेब में मासिक-मजदूर समितियाँ; ग्रेट ब्रिटेन-क अनुभव और भारत ।

१६५—२१२

प्राथमिक धमिकों की भाषास समस्या :

भाषास की महत्ता और भाषासकता जनसंख्या में वृद्धि धमिकों के भाषास की सामान्य दसायें विभिन्न प्राथमिक केन्द्रों में भाषास की दसायें बुरी भाषास व्यवस्था के परिणाम ।

भाषास व्यवस्था की राजकीय योजनायें सरकार की उपदान प्राप्त प्राथमिक भाषास योजना उसमें संघोचन कोयसा ज्ञान धमिकों के लिए भाषास योजना बम्बई तथा उत्तर प्रदेश में भाषास योजनायें श्रीनी मिस धमिकों के लिए भाषास योजनायें अन्य राज्यों में भाषास योजनायें बांगाल में भाषास व्यवस्था धमिक सबों की भाषास योजनायें प्राथमिक भाषास अधिनियम ।

भाषास व्यवस्था और उसके उत्तरदायित्व का प्रश्न किण्व की समस्या भाषास और स्थानीय निकायों भाषास और उद्योगों का विकेन्द्रीयकरण भाषास सम्बन्धित कुछ समस्यायें वित्त की समस्या गन्धी बस्तियों की समस्या पंचवर्षीय आयोजनाओं में भाषास व्यवस्था उपसंहार ।

२११—२१०

त्रिबेर्ग में भाषास समस्या

समस्या की गम्भीरता प्रारम्भ में भाषासों का अधियोजित विकास समिति के प्रयत्न गन्धी बस्तियों की सफाई के लिए अधिनियम ११०१ का अधिनियम युद्ध-कालीन व्यवस्था युद्ध पश्चात् भाषास निर्माण विभिन्न भाषास योजनायें तथा अधिनियम बर्तमान दसा भाषासों का प्रसारण स्तर, वित्त व्यवस्था उसके मकान किरायों पर नियन्त्रण स्कॉटलैंड तथा धायर लैंड में भाषास योजनायें उपसंहार ।

भाषास व्यवस्था तथा अन्तर्राष्ट्रीय धम संमेलन ।

२११—२३१

—धम कल्याण कार्य

धम कल्याण की परिभाषा और क्षेत्र कल्याण कार्यों का वर्णन करण उसका उद्देश्य भारत में धम कल्याण कार्यों की भाषासकता उसका उद्देश्य सरकार द्वारा सम्पादित धम कल्याण कार्य कारखाना अधिनियमों में कल्याण सम्बन्धी उपबन्ध धम कल्याण विधियाँ रैसदे तथा बन्दरगाहों धादि में धम कल्याण कार्य बम्बई, उत्तर प्रदेश प्रविन्धी बंगाल तथा अन्य राज्यों में कल्याण कार्य उत्तर प्रदेश में

शैली कारखानों में कल्याण कार्य सरकार के कार्यों का प्रासोचनात्मक मूल्यांकन मासिकों द्वारा कल्याण कार्य विभिन्न उद्योगों में कल्याण कार्य सामान में कल्याण कार्य १९४७ का कोयला खान मजदूर कल्याण निधि अधिनियम १९४६ का प्रत्येक काम धन कल्याण निधि अधिनियम धन्य कार्यों में कल्याण कार्य मासिकों के कल्याण कार्यों का प्रासोचनात्मक मूल्यांकन समाज सेवा मंत्रालय के मासिक संघों द्वारा धन कल्याण कार्य ।

कल्याण कार्यों के कुछ विशेष पहलू; कैंटीन सिगु-रि; मनोरंजन सुविधायें विकिरण सुविधायें महाम बोले की सुविधायें शिक्षा की सुविधायें अनाज की दुकानों की सुविधायें कुछ सुझाव कल्याण कार्य और उनका उत्तरदायित्व ।

२७३—३२२

१२—भारत में सामाजिक सुरक्षा (Social Security) ✓

सामाजिक सुरक्षा का अर्थ सामाजिक बीमे की परिभाषा उसके मुख्य सभ्य सामाजिक बीमा व्यावसायिक बीमा तथा सामाजिक सहायता में अन्तर्गत; सामाजिक सुरक्षा का क्षेत्र तथा विभिन्न विधियाँ सामाजिक सुरक्षा के विचार की उत्पत्ति और विकास भारत में इस विचार की उत्पत्ति और विकास भारत में अर्थिकों के लिए सामाजिक बीमे की आवश्यकता विभिन्न विधियाँ अर्थिकों की सामान्य रूपसे सामाजिक बीमे के नाम; उसकी विभिन्न व्यवस्थाएँ भारत में सामाजिक सुरक्षा की वर्तमान अवस्था ।

भारत में अर्थिकों के लिए अतिपूर्ति की व्यवस्था अतिपूर्ति की आवश्यकता अतिपूर्ति के निम्ने कुछ प्राथमिक व्यवस्थाएँ १९२६ का अर्थिक अतिपूर्ति अधिनियम इसके विभिन्न उपबंध तथा प्रासोचनात्मक मूल्यांकन; इसके मुख्य दोष सुधार के सुझाव अर्थिक अतिपूर्ति और बीमा ।

भारत में मातृत्व हित लाभ मातृत्व हित लाभ का महत्व विभिन्न राज्यों में मातृत्व हित लाभ अधिनियम तथा उनके मुख्य उपबन्ध अधिनियमों का प्रासोचनात्मक मूल्यांकन मातृत्व हित लाभ और बीमा ।

भारत में बीमार बीमा इसकी वांछनीयता इसके विचार की उत्पत्ति प्रोटेक्टर अध्याय की स्वास्थ्य बीमा योजना १९४० का - कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम इसके मुख्य उपबंध इस अधिनियम

को लागू करने की तैयारियाँ तथा विभिन्न मासिकों की प्राप्तियों पर विचार; बीमारी बीमा योजना का विभिन्न क्षेत्रों में कार्यान्वित होना इसके कार्यान्वित में कठिनाइयाँ उपसंहार; मासिकों के लिए सामाजिक बीमा ।

बेरोजगारी बीमा बेरोजगारी के मूल कारण बेरोजगारों को सहायता देने की आवश्यकता तथा इसके लिए कुछ योजनायें भारत में बेरोजगारी सहायता प्रदान करने में कठिनाइयाँ बेरोजगारी बीमा; कुछ सुझाव जबरी छुट्टी और छटनी के समय शक्तिपूर्ति देने की व्यवस्था बेरोजगारी सहायता निधि ।

बुढ़ावस्था और निवृत्त सुरक्षा इसकी आवश्यकता बुढ़ावस्था तथा निवृत्तता क्या है ? पेंशन की व्यवस्था वर्तमान समय में प्राविडेन्ट फंड पेंशन और अचक्राण प्राप्त बन की व्यवस्था १९३२ का कर्मचारी प्रोविडेन्ट फंड अधिनियम इसका विस्तार; आसोचनात्मक मूल्यांकन कोयला काल में प्रोविडेन्ट फंड और बोनस की योजनायें उत्तर प्रदेश में बुढ़ावस्था पेंशन योजना ।

उत्तरजीवी पेंशनें इनकी आवश्यकता और वांछनीयता ।

उपसंहार सामाजिक सुरक्षा की एक संवर्धित योजना । ३२३-३२५

३-पेट ब्रिटेन में सामाजिक सुरक्षा ✓

मध्यकासीन युग में निर्धन सहायता इंग्लैंड में सामाजिक सेवाओं पर व्यापक वैश्विक योजना के पूर्व निर्धन सहायता बेरोजगारी बीमा स्वास्थ्य बीमा बुढ़ावस्था पेंशनें आश्रित पेंशनें शक्ति शक्तिपूर्ति मासिकों की लाभ योजनायें इन सब योजनाओं के दोष वैश्विक योजना इसकी आचार-सूत विशेषतायें तथा पूर्व आरणायें वैश्विक योजना का क्षेत्र तथा मध्य उपबन्ध और इसके अन्तर्गत अंगरेजों की तर तथा लाभ इसका आसोचनात्मक मूल्यांकन वैश्विक योजना का कार्यान्वित होना वर्तमान स्थिति-पारिवारिक भत्ते राष्ट्रीय बीमा शक्ति बीमा योजना राष्ट्रीय सहायता स्वास्थ्य सेवा समाज कल्याण की धर्म व्यवस्था ।

सोवियत रूस में सामाजिक बीमा प्रणाली अमेरिका में सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था आस्ट्रेलिया में सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था धर्म देशों में सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था और भारत में उनके लागू होने की सम्भावना ।

अध्याय

पृष्ठ
hours of
work of

१४-कार्य की दशाओं कार्य के घंटे, आदि (Working conditions and hours of work)

कार्य की दशाओं की महत्ता कार्य करने की दशाओं का शेष विभिन्न रूप सन् १९४८ का कारखाना अधिनियम तथा इसके उपरान्त कानों बागान आदि में अधिनियम विभिन्न उद्योगों में कार्य की दशाओं दशाओं में सुधार करने के सुझाव शौचासन पेसाब-बर, पीने का पानी विधायन स्पस कुर्बटनाओं की रोकथाम रिफार्ड के संवीत की ब्यवस्था उपसहार ।

कार्य के घंटे इनको विनियमित करने का महत्त्व कारखाना अधिनियमों द्वारा निर्धारित कार्य के घंटे; भारतीय उद्योगों में प्रचलित कार्य के घंटे कानों रेलों बागान तथा अन्य धेरिणियों के अधिकां के कार्य क घंटे कार्य क घंटों की धातोचनात्मक ब्याख्या विधायन मन्थान्तर और अन्य विराम ।

पाटी प्रणामी इसकी धावदयकता विभिन्न रूप परस्पर-भ्यापी पारियां राशि पारियां धम समय विस्तार ।

रोजगार की कुछ दशाओं, अधिकां की धेरिणियों सेवा काल पदोभति अनुशासन कार्यवाही की समस्या ।

बिबेकीकरण परिभाषा इसके पुण एवं शेष भारतीय उद्योगों में बिबेकीकरण भारत में बिबेकीकरण के सतरे सुझाव बिबेकीकरण के धावरी सिद्धान्त उत्तर प्रदेश के उद्योगों में बिबेकीकरण उपसहार ।

४२४-४७४

१५-औद्योगिक अधिकां की मजदूरी (Wages of industrial labour)

परिभाषा असल तथा मकर मजदूरी मजदूरी धवायणी की पद्धतियां मजदूरी के सिद्धान्त, धीचन निर्वाह सिद्धांत धीचन स्तर सिद्धांत धेपाधिकारी सिद्धांत मजदूरी निधि सिद्धांत सीमांत उत्पादकता का सिद्धांत टौसिय का मजदूरी सिद्धांत मजदूरी को माय और पूति का सिद्धांत ।

भारत में मजदूरी समस्या का महत्त्व भारत में मजदूरी दलों का अध्यायन कैस्टरी उद्योग कान बायाम परिवहन एवं सम्बाह बाहन, बंरगाह, नगरपालिका नाविक आदि की मजदूरी तथा धाय ।

न्यूनतम मजदूरी इसकी बाधनीयता इसके उद्देश्य न्यूनतम - मजदूरी निरिषठ करने में कठिनाइयां; भारत में न्यूनतम मजदूरी

की समस्या १९४८ का शून्यतम मजदूरी अधिनियम इसमें संशोधन इसका कार्यान्वित होना अधिनियम का आलोचनात्मक मूल्यांकन आदर्श सिद्धांत कृषि अधिकों के लिये शून्यतम मजदूरी तथा इसकी बाधाएँ ।

उचित मजदूरी की समस्या उचित मजदूरी के बारे में विभिन्न विचार पर्याप्त शून्यतम एवं उचित मजदूरी उचित मजदूरी जैसे निश्चित की जाने उद्योग की सुव्यवस्था क्षमता उत्पादकता तथा सामग्री से सम्बन्धित मजदूरी की समस्या उचित मजदूरी और आधार वर्ष की समस्या १९५० का उचित मजदूरी विवेक पंचवर्षीय आयोजनाएँ तथा मजदूरी मजदूरी बोर्ड मजदूरी गणना ।

मजदूरी घंटा और मजदूरी का समानीकरण समानीकरण की आवश्यकता विभिन्न उद्योगों में मजदूरी का समानीकरण समान कार्य के लिये समान मजदूरी पुरुषों एवं स्त्रियों की मजदूरी मजदूरी और निर्वाह खर्च ।

मजदूरी धरायमी का तरीका १९३९ का मजदूरी धरायमी अधिनियम तथा इसके मुख्य उपबन्ध १९५० में संशोधन अधिनियम का मूल्यांकन बोनस धरायमी ।

भारत में काम सहभाजन योजना काम सहभाजन का धर्म इसकी वांछनीयता इसमें बाधाएँ उपसंहार अधिक सह-साम्प्रदायी भारत में काम सहभाजन के विचार का विकास १९४८ की काम सहभाजन समिति काम सहभाजन का आलोचनात्मक मूल्यांकन ।

४०१-४४०

† १९-औद्योगिक अधिकों की श्रम प्रवृत्ति (Indebtedness of Industrial Workers)

श्रम प्रवृत्ति की व्यापकता विभिन्न औद्योगिक क्षेत्रों में श्रम प्रवृत्ति इसके कारण दुष्परिणाम समस्या को सुलभाने के उपाय मजदूरी की कुर्रों के विरुद्ध लिये गये पत्र श्रम हेतु कारवाय के विरुद्ध उपाय श्रम समाकरण के उपाय औद्योगिक संस्थानों को देने के विरुद्ध उपाय अधिनियमों का मूल्यांकन उपसंहार एवं सुझाव ।

१४८-११८

१७-जीवन स्तर : (*The Standard of Living*)

जीवन स्तर की परिभाषा एवं उसका अर्थ जीवन स्तर और उसको निर्धारित करने वाले तत्व जीवन स्तर किस प्रकार मात होता है; पारिवारिक दण्ड सम्बन्धी पुष्टताएँ, पुष्टताएँ की कठिनाइयाँ, पुष्टताएँ के निष्कर्ष व्यय की विभिन्न मदें उपसंहार, निम्न जीवन स्तर के कारण निर्बाह वर्ष सूचकांक जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने के प्रयत्न कुछ अन्य सुझाव उपसंहार ।

१११-

१८-श्रौटोपेक्ष्य कमिष्ठों का स्वास्थ्य और उनको कार्य कुशलता (*Health of workers*)

कमिष्ठों के स्वास्थ्य की समस्या अंतोपेक्ष्यक स्वास्थ्य पर कुछ रिपोर्टें जालों और बामान में कमिष्ठों का स्वास्थ्य बुरे स्वास्थ्य के मुख्य कारण और उनको दूर करने के सिधे सरकार के प्रयत्न व्यवसायिकजनित रोग ।

कमिष्ठों की कार्य-कुशलता और उसका अर्थ कार्य-कुशलता पर प्रभाव डालने वाले तत्व कार्यकुशल कमिष्ठों के नाम भारतीय कमिष्ठों की कार्यकुशलता अकुशलता के कारण क्या भारतीय कमिष्ठ वास्तव में कार्य अकुशल हैं गठ बपों में कार्य अकुशलता की शिक्षापठों के कारण उत्पादकता परिभाषा उत्पादकता प्रायोजमाण राष्ट्रीय उत्पादकता परिपद; सुझाव ।

१७२-

११-भारत तथा अंतर्राष्ट्रीय अम संघटन (*India and International Labour Orgⁿ*)

भारत तथा अंतर्राष्ट्रीय अम संघटन अंतर्राष्ट्रीय अम संघटन का प्रारम्भ इसके आधारभूत सिद्धांत इससे पूर्ण अमिक बलाघों के सिधे अंतर्राष्ट्रीय नियमन; इस संघटन का संविधान अंतर्राष्ट्रीय अम कार्यालय अंतर्राष्ट्रीय अम संघटन अम सम्मेलन सम्मेलन के अभिसमय और उसकी सिफारिशों; फिसाबेल्सफिसा की बोधणा अंतर्राष्ट्रीय अम संघटन तथा समुक्त राष्ट्र संघ संघटन की विभिन्न समितियाँ इसके प्रादेशिक अम सम्मेलन तथा एशियाई कार्य; प्रादेशिक सम्मेलनों का महत्व तथा उनसे लाभ, भारत द्वारा अमनाये अये अभिसमय अम अभिसमयों का प्रभाव अधिक अभिसमय अमनाये न जाने के कारण अंतर्राष्ट्रीय अम संघटन का भारतीय अम विधान पर प्रभाव अम आन्दोलन पर प्रभाव संघटन के कार्यों का सुझावन अंतर्राष्ट्रीय अम संघटनों के कार्यों में भारत का योगदान ।

११८-

✓ २०—भारत में श्रम विधान (Labour Legislation in India)

श्रम विधान का सामान्य सर्वोच्च इतिहास प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् श्रम विधान प्राप्ति में श्रम विधान प्राप्त के वर्षों में श्रम विधान ।

भारतवर्ष में कारखाना विधान प्रारम्भिक प्रस्ताव १८८१ का प्रथम कारखाना अधिनियम १८९१ का अधिनियम १९११ १९२२, तथा १९३४ के कारखाना अधिनियम; १९४६ में कारखाना अधिनियम में संशोधन १९४८ का कारखाना अधिनियम इसके मुख्य उपबंध अधिभूत कारखानों के सम्बन्ध में विधान; भारत में कारखाना विधान का आलोचनार्थक मूल्यांकन ।

कानों में श्रम विधान १९२३ का भारतीय श्रम अधिनियम १९३२ का भारतीय श्रम अधिनियम १९३९ का श्रम (संशोधन) अधिनियम कानों के लिए श्रम विधान १९३९ तथा १९३२ में बचत तथा सुरक्षा अधिनियम ।

बाबत श्रम विधान बाबत के श्रमिक उनके लिये धारण में उठाने लगे कुलपण १९३२ का श्रम क्षेत्र पदावधि श्रमिक अधिनियम १९३१ का श्रमिक अधिनियम ।

वातायात श्रम विधान रेलवे श्रम विधान १९३० में संशोधित १८९० का भारतीय रेलवे अधिनियम; १९३६ में संशोधन स्यापा शीघ्र राज्याध्यक्ष का विधान निर्णय बहाल सम्बन्धी श्रम विधान १९२३ का भारतीय स्यापाटी बहाल अधिनियम १९३५ का अधिनियम गोरी श्रमिक विधान धारण में उठाने लगे कुलपण १९४८ का मोरी श्रमिक (रोजगार विनियमन) अधिनियम मोटर वातायात के श्रमिकों के लिए विधान । १९६१ का मोटर वातायात श्रमिक अधिनियम ।

श्रम श्रम विधान बुकान और बाणिज्य संस्थानों के श्रमिकों के लिए विधान श्रम अधिनियमों की श्रम संशोधन १९४२ तथा १९३३ के श्रमिकी अधिनियम श्रम-जीवी पत्रकारों के लिए १९३३ का अधिनियम १९६१ का श्रमिक अधिनियम ।

अम विधान का प्रालोचनात्मक मूल्यांकन, छाटे पैमानों के उद्योगों, भावास आदि के लिये विधान की आवश्यकता सुझाव और उपसंहार।

१२१-११६

२१—ब्रिटेन में अम विधान :

प्रारम्भिक इतिहास और अधिनियम; कारखानों में घोर शोचनीय दृष्टार्थ; बास अधिक और उनकी दयनीय स्थिति बर्धनिक सुरक्षा प्रदान करने के विचार का विकास १८०२ का प्रथम कारखाना अधिनियम १८१६ का अधिनियम; १८२० और १८०० के बीच के अधिनियम, १८०१, १८३७ तथा १८४८ के अधिनियम; बच्चों के सम्बन्ध में विधान अथवा स्वास्थ अधिनियम दुकान अधिनियम; बासकों के सम्बन्ध में विधान मजदूरी विनियमन अधिनियम अथवा अम विधान ऐश्वर्यक समझौते तथा प्रस्ताव उपसंहार।

१७०-१८४

२२—बास तथा स्त्री अधिक ✕

बासकों के रोजगार पर लगाने की समस्या उसके कारण; बास में बास अधिक कारखानों में बास अधिक बालों में बास अधिक; धनियमित कारखानों आदि तथा कृषि में बास अधिक; बास अधिकों की कार्य करने की दृष्टियों उनकी मजदूरी, भाग्य तथा कार्य बन्धे; १८३३ का बास (अम अनुबन्ध) अधिनियम; अनुबन्धन के सम्बन्ध में स्थिति १८३८ का बास अधिक रोजगार अधिनियम निष्कर्ष तथा सुझाव।

उद्योगों में स्त्री अधिक स्त्री अधिकों के रोजगार की समस्या हास में हुए एक सर्वलक्षण के निष्कर्ष स्त्री अधिकों के कार्य की प्रकृति स्त्री अधिकों की मजदूरी उनके भाग्य तथा उनके लिए लाभ; स्त्रियों के लिए बालों के पीछर कार्य करने की समस्या स्त्री अधिक तथा सामाजिक बाधाकरण स्त्री अधिक तथा संघ उपसंहार।

१८२-७०७

✓ २३—भारतीय कृषि अधिक ✕

कृषि अधिकों की संख्या कृषि अधिकों के प्रकार; कृषि कार्यों की प्रकृति; तथा रोजगार; कृषि अधिकों की दृष्टियों उनके कार्य बन्धे;

कृषि में अपूर्ण रोजगार; कृषि श्रमिकों की मजदूरी; उनका जीवन स्तर; उनकी श्रम प्रस्तुता; उनके मकानों की बनावट; उनका सबटा; कृषि भूमि सुधार; कृषि श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी; न्यूनतम मजदूरी का निवारण; सरकार द्वारा की गई प्रथम एवं द्वितीय कृषि श्रमिक पुस्तिकाएँ, उनके निष्पत्ति बेमार की समस्या; अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन तथा कृषि श्रमिक उपसंहार ।

७०८-७११

२४—श्रम और सहकारिता

सहकारिता का श्रम और उसके सिद्धान्त; संगठन के अन्य प्रकार तथा सहकारिता; सहकारिता के विचार का विकास; सहकारिता के अनेक प्रकार; विभिन्न देशों में सहकारिता; आन्दोलन; सहकारिता के नाम; भारत में सहकारी आन्दोलन का संक्षिप्त इतिहास; भारत में सहकारी आन्दोलन के दोष; सहकारिता आन्दोलन का अर्थ; सहकारिता एवं श्रम सहकारी उत्पादन; श्रम सह-सामुदायिक समितियाँ; श्रम सहकारी उत्पादन समितियाँ; श्रमिक सहकारी उत्पादन समितियों की विशेषताएँ; भारत में श्रमिक सहकारी उत्पादन समितियों की सम्भावनाएँ; उत्पादन सहकारिता एवं छोटे पैमाने के उद्योग; ग्राम्य क्षेत्रों में सहकारिता; सहकारिता और श्रमिकों की श्रम प्रस्तुता; सहकारिता और आवास; सहकारिता एवं केंद्रीय; उपभोक्ता सहकारी मेषाएँ; उपसंहार; श्रमिकों के लिए सहकारिता का महत्व ।

७११-७११

२५—श्रम प्रसादन

१९११ का भारत सरकार अधिनियम; बुद्ध-काश और इसके बाह्य से केन्द्रीय नियंत्रण; बुद्ध-काश में श्रम सम्मेलन; विश्वीय श्रम व्यवस्था; भारत सरकार का श्रम और रोजगार मन्त्रालय; राज्यों में श्रम प्रसादन; उत्तर प्रदेश में श्रम प्रसादन; वर्तमान संविधान में श्रम विषय; उपसंहार ।

७१२-७१२

२६—व्यवसायिक आयोजनाएँ और श्रम

अव्यवस्था की सिद्धांत; आयोजना के विचार का विकास; आयोजना का श्रम और उसके परिमाण; आयोजना के कुछ

आवश्यक तब भारत में आयोजना के विचार का विकास विभिन्न आयोजनाओं की संक्षिप्त रूपरेखा १९२० का आयोजना आयोजक कोलम्बो आयोजना प्रथम पंचवर्षीय आयोजना का प्राकल्प प्रथम पंचवर्षीय आयोजना की प्रगति; द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना तीसरी पंचवर्षीय आयोजना पंचवर्षीय आयोजनाओं में धम उपसंहार ।

७६३-७२४

परिसिद्ध (क)—उपमोक्ता मूल्य सूचकांक

सूचकांक का अर्थ तथा उसके महत्व सूचकांक की निर्माण विधि; उपमोक्ता मूल्य सूचकांक तथा उनकी सीमाओं भारत में उपमोक्ता मूल्य सूचकांक भारत में उपमोक्ता मूल्य सूचकांक के दोष भारत सरकार की योजना विभिन्न स्थानों के उपमोक्ता मूल्य सूचकांक ।

७२५-८३१

परिसिद्ध (ख)—बेरोजगारी

बेरोजगारी का अर्थ व परिमाण; बेरोजगारी पर विभिन्न विचार तथा उसके सिद्धांत बेरोजगारी के कारण बेरोजगारी के प्रभाव बेरोजगारी के उपचार; भारत में बेरोजगारी तथा उसके विभिन्न प्रकार; भारत में बेरोजगारी की सीमा बेरोजगारी के कारण देश की हानि भारत में बेरोजगारी का उपचार; रोजगार और आयोजनाएं, तीसरी आयोजना में रोजगार की स्थिति पूर्ण रोजगार की समस्या मन्दी के काम तथा उसके प्रभाव का सामना करने के लिए मासिकों द्वारा उपाय ।

८३२-९६१

परिसिद्ध (ग)

कार्मिक प्रवृत्त तथा मानवी सम्बन्धों पर एक टिप्पणी ।
उत्तर प्रदेश कारखाना कम्प्लेक्स अधिकारी नियम १९२५ ।
अन्तर कार्य प्रशिक्षण की योजना ।
रिक्ता जमाने का सम्मूहन ।

उद्योग में अनुशासन संहिता कार्य कुशलता और कम्प्लेक्स कार्य संहिता; संघों की माध्यता प्रदान करने के लिए धर्म ।

शास्त्ररत्न संहिता ।

सिद्धायतन-निर्धारण-क्रियाविधि ।

अधिक-प्रबन्धक सहयोग ।

प्रबन्ध में अभिर्ज्ञो का भाग ।

अम के क्षेत्र में अनुसंधान ।

कुछ नवीनतम तथ्य तथा धांकड़े ।

८१२-८१३

परिशिष्ट (घ) :

पारिभाषिक शब्दावली ।

८१४-१००

यदि इस विचार का हृदय से समर्पण करता हूँ कि कोई भी ऐसी
 आयोजना जिसके अन्तर्गत देश के कच्चे माल का उपयोग तो होगा
 है परन्तु प्रायिक सम्भाव्य शक्तिवासी मानव शक्ति की अक्षयता
 होती है एकपक्षीय आयोजना है और देश के मनुष्यों में परस्पर
 समानता साने के लिए सहायक सिद्ध नहीं हो सकती ।

—महात्मा गाँधी

“किसान और मजदूर राष्ट्र की रीढ़ हैं ।”

—श्री जगजीवन राम

“जब कि सम्पूर्ण राज्य यह प्रयत्न कर रहा है कि जनता के साथ
 शक्ति स्थाय हो तब राज्य यह सहन नहीं कर सकता कि समाज
 के दुर्बल वर्ग के व्यक्तियों के साथ-साथ के औद्योगिक शक्ति हों,
 हाथ शक्ति हों अथवा किसी अन्य वर्ग के व्यक्ति हों—अत्याय
 होता रहे ।”

—श्री लक्ष्मण जी शर्मा

“सघोल किञ्चन जहोदय की पूर्ति का एक सामन है तथा स्वयं उद्योग को जहोदय नहीं माना जा सकता । मनुष्य का स्थान सब से प्रथम है । मानव के जीवन को ही— कार्य करते समय भी तथा कार्य न करते हुए भी— वास्तव में सबसे अधिक महत्ता देनी चाहिए, विशेषकर ऐसे बेस में जो प्रजातन्त्र का सम भरता है ।”

—प्रिंस फ्रिन्स ड्यूक ऑफ एडिन्बरा

“मर्बलास्त्री सर्वत्र इस बात पर बल देते हैं कि श्रम ही वह स्रोत है जिससे सब बल उत्पन्न होता है । प्रकृति के बाव श्रम का ही स्थान है । प्रकृति श्रम को सामग्री प्रदान करती है और श्रम द्वारा इस सामग्री को मन में परिवर्तित कर दिया जाता है । परन्तु श्रम सुग-सुगान्तर से इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण रहा है । मानव के अस्तित्व का मूल आधार श्रम ही है और वह भी इस सीमा तक कि यह भी कहा जा सकता है कि मानव का निर्माण श्रम द्वारा ही हुआ है ।”

—फ्रेडरिक एंगेल्स

मजदूर समितियाँ भारतीय औद्योगिक प्रणाली में एक बहुत उपयोगी कार्य कर सकती हैं।" परन्तु यह १० वर्ष पन्चायत हुआ कि सरकार ने इन समितियों की स्थापना की ओर रुख उठाया। १९४७ के औद्योगिक विवाद प्रतिनियम में इन बातों की व्यवस्था की गई कि मासिक मजदूर समितियाँ बनाई जायें जिनमें धर्मिकों एवं मासिकों के प्रतिनिधि हों। इन प्रतिनियम के अन्तर्गत राज्य सरकारों को इस बात का अधिकार दे दिया गया है कि उन सभी औद्योगिक संस्थानों में जिनमें भी या अधिक धर्मिक काम करते हैं मासिक मजदूर समितियाँ स्थापित करें जिनका उद्देश्य मासिकों व धर्मिकों के बीच दिन प्रतिदिन के मतभेदों के कारणों को दूर करना तथा उनके बीच मधुर सम्बन्ध बनाय रखना है। मासिक मजदूर समितियों में मासिक व धर्मिकों को समान प्रतिनिधित्व दिया गया है और धर्मिकों के प्रतिनिधियों का चुनाव धर्मिक संघों के परामर्श में करने का सुझाव है। प्रतिनियम में मासिक मजदूर समितियों के कार्यों का उल्लेख भी किया गया है। उनके कार्य मासिकों व धर्मिकों के बीच मधुर सम्बन्ध बनाय रखना है और इन ध्येय की प्राप्ति के लिए पारस्परिक मतभेदों को दूर करना एवं पारस्परिक हित व धर्मों पर विचार करना है।

प्रतिनियम में मासिक मजदूर समितियों के उद्देश्यों पर भी जोर दिया गया है। इनका मुख्य उद्देश्य यह होना चाहिए कि वह मासिकों व धर्मिकों के मध्य पारस्परिक परामर्श का एक माध्यम प्राप्त साबित बन सकें और धर्मिकों में अपने काम के प्रति अधिक रूचि एवं उत्तरदायित्व की भावना पैदा कर सकें तथा जो भी निर्णय सामूहिक सौदाकारी सरकार, यम न्यायालय या औद्योगिक न्यायालय के विचारण के द्वारा हों या उनके द्वारा कोई नियम बनाये गये हों उनको लागू करें। तथा मासिक व मजदूरों के बीच हुई किसी भी मतभेदों या तनाव को दूर करें। मासिकों के प्रति निरि प्रवृत्तियों के द्वारा मनोनीत होंगे। धर्मिकों के प्रतिनिधि ऐसे पंजीकृत धर्मिक संघों के द्वारा मनोनीत होंगे जो किसी मासिकता प्राप्त (Recognised) धर्मिकों के संघ से सम्बन्ध (Affiliated) हों। जहाँ कहीं ऐसे सम्बन्ध धर्मिक संघ न हों वहाँ पर धर्मिकों के प्रतिनिधियों का चुनाव उनके सदस्यों में से ही किया जायगा और उनके चुनाव की विधि प्रतिनियम में दी गई है। मासिक मजदूर समितियों के संचालन कार्य की सर्वे कार्य का रंग प्रादि का भी उल्लेख जहाँ किया गया है। मासिकों व धर्मिकों के प्रतिनिधियों की संख्या औरहू में धर्मिक नहीं हो सकती।

उत्तर प्रदेश की सरकार ने १९६० में इन सम्बन्ध में एक प्रादेश जारी कर एक अधली कबम उठाया। सम्बन्धम नीती के कारखानों में, उत्तरप्रदेश धर्मिक कारखानों में एक महीने के अन्दर मासिक मजदूर समितियों की स्थापना करने का प्रादेश दिया। प्रादेश में उत्तर प्रदेश सरकार ने कहा कि ऐसे समान संस्थानों में वहाँ २०० धर्मिक अधिक कर्मचारी काम करते हैं, ऐसी समितियाँ बनाई जायें। २०० की यह धर्मिक संख्या इसलिए रखी गई थी कि सरकार चाहती थी कि प्रारम्भ में मासिक मजदूर समितियाँ केवल बड़ी फैक्ट्रियों में ही स्थापित की जायें। मासिक

मजदूर समितियों की स्थापना करने का उत्तरदायित्व मासिकों पर सौंपा गया। १९४९ में उत्तर प्रदेश में मासिक मजदूर समितियों की संख्या १६१ थी परन्तु उनका १ नवम्बर १९५० से समाप्त कर दिया गया। इसका कारण धर्मिक संघों के मध्य पारस्परिक स्पर्धा थी जिसके परिणामस्वरूप मासिकों के लिए धर्मिकों को प्रतिनिधित्व देना कठिन हो गया और इस प्रकार समितियों का कार्य करना भी कठिन हो गया।

उत्तर प्रदेश सरकार ने पुनः १९५८ में इस बात के लिए धारणा लिए कि उन सभी राज्य सञ्चालित उद्योगों में जिनमें १०० घण्टा अधिक कर्मचारी कार्य करते हैं तथा उत्तर प्रदेश सहकारी बैंक सहकारी संघम तथा दुग्ध वितरण भूमिगत में मासिक मजदूर परिषदें (Works Councils) बनाई जाएँ। इसके साथ-साथ राज्य स्तर पर एक स्थायी सुलह बोर्ड (Conciliation Board) बनाने की भी व्यवस्था की गई है। इन परिषदों का कार्य एवं विधान मासिक मजदूर समितियों जैसा ही है। यह धर्म-कल्याण सलाहकार समिति के रूप में भी कार्य करेगी। यदि यह किसी भी विवाद में उचित समझौता कराने में असमर्थ रहती है तब विवाद स्थायी सुलह बोर्ड को विचारार्थ सौंप दिया जाएगा।

अन्य राज्यों तथा केन्द्र में मासिक मजदूर समितियाँ स्थापित कर दी गई हैं और उन्होंने प्रमुख कार्य भी किया है। इसके अतिरिक्त जैसा कि १९४७ के उद्योग सम्मेलन में सिफारिश की थी कई उद्योगों में उत्पादन व कार्यसमता बढ़ाने तथा विवेकीकरण की समस्या पर विचार करने के लिए इकाई उत्पादन समितियों (Unit Production Committees) की भी स्थापना की गई है। १९४६ के बम्बई औद्योगिक सम्बन्ध अधिनियम के अन्तर्गत भी बम्बई में संयुक्त समितियों (Joint Committees) तथा उत्पादन समितियों (Production Committees) की स्थापना की गई है और १९५९ में उनकी संख्या क्रमशः १३९ व ५७ थी। मासिक मजदूर समितियों की संख्या बम्बई में २०२ थी। १९६० में केंद्रीय श्रेण में ८९ मासिक मजदूर समितियाँ कार्य कर रही थीं।

१९६० में विभिन्न राज्यों में मासिक मजदूर समितियों की संख्या इस प्रकार थी — मध्य-१२ असम-९ बिहार-१४६, गुजरात-८६, जम्मू व काश्मीर-९, केरल-७३ मध्य प्रदेश-५, महाराष्ट्र-२९०, महाराष्ट्र-१३५, मैसूर-१३६, उड़ीसा-६ पंजाब-११ राजस्थान-४ उत्तर प्रदेश-२३ पश्चिमी बंगाल-६२ पच्छिम बंगाल व निकोबार द्वीप-२ वैहणी-२५ त्रिपुरा-२५, योप-१९२३। उत्पादन समितियों की संख्या इस प्रकार थी — मध्य-२४, बिहार-११, गुजरात-७६, केरल-६, महाराष्ट्र-५०, महाराष्ट्र-१७, मैसूर-८७, पंजाब-३९, पच्छिम बंगाल व निकोबार द्वीप-१, योप-३१२। संयुक्त समितियों की संख्या इस प्रकार थी — बिहार-२, गुजरात-८२, केरल-६, मध्य

प्रवेश - १ महाराष्ट्र - १५० पंजाब - १ पश्चिमी बंगाल - २ देहली - १
भाग २३८ ।

सरकारी क्षेत्र में मासिक मजदूर समितियों के कार्यों का केन्द्रीय मुख्य अयमानुक्त द्वारा १९५८-५९ में एक प्रासंगिकतात्मक विश्लेषण किया गया था। बम्बई में के० सी० कॉर्पोरेशन द्वारा भी उसी वर्ष इन समितियों का सर्वेक्षण किया गया। इन सर्वेक्षणों से जो मासिक मजदूर समितियों के कार्यों की कठिनाइयाँ ज्ञात हुईं उन पर बुलाई १९५९ में भारतीय अयमानुक्त के १७ वें अधिवेशन में विचार हुआ। इस अधिवेशन ने इस सम्बन्ध में एक विश्वीय समिति की स्थापना की। इस समिति ने ३० नवम्बर १९५९ को मासिक मजदूर समितियों के कल्याण के लिए तथा उनके कार्यों के लिए कुछ 'गुंदाक नियम' (Guiding Principles) बनाए और इन समितियों द्वारा जो कार्य करने चाहिए और जो नहीं करने चाहिए उनकी भी एक सूची बना दी है।

यह भी उल्लेखनीय है कि देशों में तथा केन्द्रीय सरकार के विभिन्न मन्त्रालयों में अमानुक्त रूप से परामर्श करने की व्यवस्था इस उद्देश्य से कर दी गई है कि कर्मचारियों और सम्बन्धित अधिकारियों के मतभेदों को धारण में दूर किया जा सके।

औद्योगिक विचार और श्रमिकों की प्राथमिक स्थिति —

श्रमिकों और श्रमिकों में तिकट और पारस्परिक सम्बन्ध बनाये रखने के सिद्धे सन्तुष्टिवासी श्रमिक संघों एवं मासिक मजदूर समितियों के प्रतिरिक्त औद्योगिक विचारों की रोकथाम करने का एक और उपाय उन कारणों को ही दूर करना है जो विवादों को जन्म देते हैं। इससे बर्ण्य और कोई तरीका नहीं हो सकता क्योंकि इससे धर्माति की समझ को समुक्त नष्ट किया जा सकेगा। श्रमिक अपनी कुछ धारणाएँ स्वयं की पूर्ति हेतु हड़ताल का सहारा लेते हैं। समय-समय पर होने वाली हड़तालों में श्रमिकों ने व्याप्त असन्तोष की अभिव्यक्ति मिलती है। हमने औद्योगिक विचारों के कारणों के विवेचन में इस बात की ओर संकेत किया है कि विवादों का एक प्रमुख कारण मजदूरी के प्रश्न से सम्बन्धित है। राष्ट्रीय श्रमिक की मजदूरी बहुत कम है। और यह धारणा होता है कि जिस प्रकार से यह निर्धन व्यक्ति इस दुष्प्रश्न से राशि में निर्याह कर पाता है। मासिक अपने लाभ में से श्रमिकों को हिस्सा देने में धानाकारी करते हैं और मोनस देने के प्रश्न पर कई बार झगड़े हुए हैं। यद्यपि इस कारण को दूर करने के लिए श्रमिकों की मजदूरी में वृद्धि की जानी चाहिए। एक न्यूनतम मजदूरी निर्दिष्ट होनी चाहिए और साम सहमानता जैसी कुछ योजनाएँ भी प्राग्भ्य करनी चाहिए। इसके प्रतिरिक्त नोकरी और रोजगार की व्यवस्थाओं में सुधार करने श्रमिकों में एक प्रकार की सुरक्षा की भावना भी पैदा करनी चाहिए। श्रम की व्यवस्थाओं में सुधार, कार्य के बंटों में कमी प्राप्ति की भी धारणाएँ हैं। बेकारी बीमा, बृद्धावस्था पुनर्स्थापना एवं जीवन की अन्य विपदाओं से भी सुरक्षा प्रदान करने के लिए सामाजिक बीमा जैसी योजनाओं की तीव्र

भावश्यकता है। धमिकों के लिए कल्याणकारी कार्यों की व्यवस्था उनके बच्चों के लिए शिक्षा और आवास की व्यवस्था में सुधार करने की धार भी ध्यान दिया जाना चाहिए। जब तक यह सुधार नहीं किये जाते और धमिक यह अनुभव नहीं करते कि वह उत्पादन के केवल मात्र साधन न होकर मानव प्राणी भी है औद्योगिक संघर्षों को दूर नहीं किया जा सकता।

परन्तु यह एक और बिजान का विषय है कि वर्तमान धर्म-व्यवस्था में इस प्रकार के सुधार सम्भव है अथवा नहीं। समाजवादियों व साम्यवादियों का विश्वास है कि पूँजीवादी धर्म-व्यवस्था में पूँजी और भ्रम के बीच का संघर्ष दूर नहीं किया सकता। इसका केवल मात्र हम समाज के इन्हीं को पूर्णतया बदल देने और धमिकों को स्वयं ही उद्योग-बन्धों का संभालन करने का अधिकार देने से हो सकता है। परन्तु दूसरी ओर कुछ व्यक्तियों का यह विश्वास है कि वर्तमान धर्म-व्यवस्था में भी एक व्यापक सरकार मातृकों के सहयोग से उचित नियम व उद्योग-बन्धों पर नियन्त्रण कर सुधार कर सकती है। इन प्रश्नों पर काफी मतभेद है और यह कहना कठिन है कि कौनसा विचार ठीक है। कम में भी औद्योगिक विवादों की सम्भावनाएँ हैं और विवाद होने पर उनके निपटारे के हेतु एक निश्चित व्यवस्था भी की गई है। ब्रिटेन और अमेरिका के उदाहरण यह बताते हैं कि भूमिक पूँजीवादी धर्म-व्यवस्था में भी अपनी धाराएँ सुधार सकते हैं। यहाँ हमारा मुख्य विषय भारत में वर्तमान व्यवस्थाओं को ध्यान में रखकर उनके हल के लिए व्यावहारिक उपचारों पर विचार करना है। भारतवर्ष में साम्यवाद का सरलता से स्थापित होना कठिन प्रतीत होता है और न ही यह सम्भव मामूम होता है कि धमिकों का उद्योगों पर नियन्त्रण हो जायेगा। धमिकों के पास न तो इतना धन ही है न इतनी योग्यता कि वह विशाल पैमाने के उद्योगों को संगठित कर सकें। यद्यपि पूँजी और भ्रम भिन्न भिन्न हाथों में ही रहेंगे और हमें वर्तमान व्यवस्था में ही सुधार की सम्भावनाओं को खोजना पड़ेगा। दोनों पक्षों को पारस्परिक रूप से एक दूसरे में विश्वास रखना चाहिए और समस्या के समाधान की ओर व्यक्तिगत दृष्टिकोण से ही नहीं बल्कि राष्ट्रीय दृष्टिकोण से भी ध्यान देना चाहिए। यदि पारस्परिक सहयोग की भावना हो और धमिकों की बधाओं में सुधार हो तो कोई कारण नहीं है कि औद्योगिक विवादों को यदि पूर्णतया समाप्त न भी किया जा सके तो कम से कम उनमें पर्याप्त कमी क्यों न की जा सके।

स्वायी आदेश — (Standing Orders)

मातृक मजदूर समितियों के प्रतिरिक्त औद्योगिक शक्ति स्थापित करने की दृष्टि से दूरता रचनात्मक (Constructive) पण सरकार द्वारा रोबदार की शर्तों और नियमों को निश्चित करना है। कमी कमी यह छोटे छोटे विषय उभर रूप कारण कर लेते हैं और धमिकों में असन्तोष व्याप्त हो जाता है। दिन प्रतिदिन के कार्यों में मातृकों व भ्रमवादियों के सम्बन्ध को मातृकों की दृष्टि पर ही नहीं छोड़ा जा सकता क्योंकि ऐसा करने से ही औद्योगिक शक्ति उत्पन्न हो जाती है।

प्रत्येक औद्योगिक श्रमिक को इस बात का अधिकार है कि वह रोजगार की उन शर्तों और दशाओं को जान सकें जिनसे अन्तर्गत उसे नोकरी पर रखा गया है और अनुशासन के वह नियम भी जिनसे उससे पालन करने की धारा की जाती है। स्वामी धारेण रोजगार और कार्य की शर्तों को निर्धारित करते हैं। ग्रेट ब्रिटेन में ऐसी शर्तें संयुक्त ऐंग्लिक समझौतों द्वारा निर्दिष्ट होती हैं जिनको कानून की भाँति ही महत्त्व प्रदान किया जाता है। उद्योग धर्म इन समझौतों का उस्तपन नहीं कर सकत। भारत में भी कुछ सीमा तक बड़े उद्योगों में विद्यमान था जिनमें जिनमें ब्रिटेनी पूंजी लगी हुई थी कुछ अपने स्वामी धारेण बना लिए गए थे जो मालिकों व श्रमिकों के पारस्परिक सम्बन्धों को निश्चित करने के लिए थे। उत्तरी भारत की मालिक परिषद् (Employers Association of Northern India) जैसे कुछ मालिकों के संघों ने भी अपने स्वामी धारेण बना लिए थे जो कि परिषद् के सभी सदस्यों पर लागू होते थे। परन्तु और कहीं इस प्रकार का धारोबन्ध नहीं था यदि कहीं था भी तो वह एकपक्षीय था तथा ऐम स्वामी धारेण श्रमिकों की धारेण मालिकों के हितों का अधिक ध्यान में रखकर बनाए गए थे। उनका कोई वैधानिक मान्यता भी प्राप्त नहीं थी। ये धारेण समान भी नहीं थे क्योंकि प्रदेश-प्रदेश के अन्तर्गत वे अपने अपने सिद्ध स्वामी धारेण बना लिए थे।

भारत के उद्योग श्रमों में मालिकों और श्रमिकों के बीच प्रायः संघर्ष होने का एक मुख्य कारण यह भी है कि ऐन कोई स्वामी धारेण नहीं था जो मालिकों और श्रमिकों के अधिकार और उत्तरदायित्वों को ठीक ठीक धारणा कर सकें। शर्तों बर्दाश्तनी दृष्टियाँ अनुशासनमूलक कार्यवाही धारण धारि ही ऐसी बातें हैं जिन पर मतभेद हो सकता है। अनेक विदेशीय धर्म सम्मेलनों ने इस बात पर कई बार जोर दिया कि स्वामी धारेणों के लिए एक धर्म में वैश्वीय कानून बनाया जाए। परिष्कारमस्वरूप औद्योगिक रोजगार (स्वामी धारेण) अधिनियम [Industrial Employment (Standing Orders) Act] १९४६ में पारित किया गया परन्तु प्रथम वैधानिक अधिनियम जिसमें स्वामी धारेणों के भी उल्लेख था वह १९३८ का औद्योगिक विवाद अधिनियम था जिसके अन्तर्गत धारेण नामे श्रमी मालिकों का निर्धारित काम पर दो माह के अन्दर अनेक औद्योगिक विषयों से सम्बन्धित स्वामी धारेणों को धर्म कमिश्नर के सम्मुख प्रस्तुत करने का धारेण था।

१९४६ का औद्योगिक रोजगार (स्वामी धारेण) अधिनियम जम्हू अन्वीर धर्म को छोड़कर समस्त भारत में लागू होता है। अधिनियम के अन्तर्गत उन सभी औद्योगिक संस्थाओं में जिनमें १०० या उससे अधिक कर्मचारी काम कर रहे स्वामी धारेण निर्दिष्ट करने की व्यवस्था है। इससे अन्तर्गत इस बात का उल्लेख है कि अधिनियम के कार्यधीन होने के १ माह के अन्दर धर्म मालिकों का प्रमाण अधिकारी (Certifying Officer) के सम्मुख ऐसे स्वामी धारेण प्रस्तुत करने होंगे

जिनमें निम्नलिखित बात होगी — धमिकों का बर्फीकरण उनको कार्य के बंधे बताने की बिधि पुष्टियां मजदूरी बढ़ाने का दिन मजदूरी की दर, धमकाय के लिए प्रार्थनापत्र की बिधि नौकरी की समाप्ति व बर्खास्तगी अनुशासनात्मक काम बाही धादि धादि । धमिनियम व धमर्गस बिन्धी भी धौद्योगिक संस्थान व स्थायी धादेधों को प्रमाणित करने से दूध धमिकों व परामर्श करने की भी ब्यवस्था की गई है । प्रमाण धमिकारी धमिकों धौर मासिकों की धापरतियों को ध्यान में रखते हुए स्थायी धादेधों को प्रमाणित करता है । प्रमाण धमिकारी के निर्णय के बिन्दु धौद्योगिक स्वाभाविक म धपीस की जा सकती है । मासिकों को स्थायी धादेधों का मसौदा प्रस्तुत व करने पर दण्ड दिया जाता है जो पुमनि के रूप में होता है । प्रमाण धमिकारियों का काम धम कमिश्नर करते हैं धौर बहूँ यह नहीं होते बहूँ धम्य किसी धमिकारी को यह कार्य सौंप दिया जाता है । धमिनियम को ऐसे समाधार पत्र संस्थानों में भी लागू कर दिया गया है बहूँ २० या धमिक धमजीवी धमकार काम करते हैं । इस धमिनियम का प्रधासन केन्द्रीय सरकारें तथा राज्य सरकारें दोनों हा धपने धपने क्षेत्र में करती है ।

यह धमिनियम एक अनुमति प्रदान करने वाला कालन वा धौर इसके धमर्गस राज्य सरकारों को यह धमिकार दे दिया गया वा कि बहूँ इनके निर्धारित करन के धियम में कबम उठानें । इस धमिनियम क धमर्गस धौद्योगिक रोजगार (स्थायी धादेध) नियम कई राज्यों में बन गये हैं जैसे धसम (धर्गस १९४०) बंगाल (धमदूबर १९४६) बिहार (नवम्बर १९४७) बम्बई (नवम्बर १९४८) मध्य प्रदेश (नवम्बर १९४७) मद्रास (नवम्बर १९४७) उड़ीसा (जीमाई १९४७) पंजाब (धर्गस १९४९) तथा उत्तर प्रदेश (दिसम्बर १९४६) । उत्तर प्रदेश की बीनी मिसों के सम्बन्ध में स्थायी धादेध १९४७ के धौद्योगिक बिबाध धमिनियम क धमर्गस निर्धारित होते हैं । कई राज्यों ने धपने धपने क्षेत्र में धमिनियम को लागू करने के लिए इसमें संशोधन किए हैं । उत्तर प्रदेश सरकार ने इस धमिनियम को उत्तरी भारत की मासिक परिपद् तथा उत्तर प्रदेश टेम मित मासिक परिपद् के सभी धवस्थों (मिसों) बिबन्धी पूर्ण उद्योग धम कस उद्योग टेम तिकासने का उद्योग तथा कांठ उद्योगों में भी लागू किया है । उत्तर प्रदेश सरकार ने धादेधों की सूची में कुछ धौर बातें भी बढ़ा दी हैं । उदाहरणतः, नौकरी प्रमाण पत्रों का देना मजदूरी की परधी देना कल्याणकारी योजनाधों को प्रारम्भ करना प्रॉबिडेण्ट फण्ड धादि । इसके धतिरिक्त धमि मासिक स्वधें ही प्रमाण पत्र के लिए प्रार्थना करे तो यह धमिनियम ऐसे संस्थानों में भी लागू किया जा सकता है जिनमें १० से कम धमकारी काम करते हो । बम्बई तथा पश्चमी बंगाल म धमिनियम उन संस्थानों में लागू होता है जिनमें ३ या धमिक धमिक कार्य करते हैं तथा धसम में उन पर लागू होता है जिनमें १ या धमिक धमिक कार्य करते हैं । (परन्तु धानें टेम क्षेत्र तथा रेमें इनके धमर्गस नहीं धाती) मद्रास में यह धमिनियम उन सभी धमिकारियों

पर जो कंपनी अधिनियम के अन्तर्गत रजिस्ट्रड है लागू होता है ।

१९२६ के अधु में ऐसी संस्थानों की संख्या जिनमें प्रमाणिक स्थाई आदेश सभी श्रमिकों के लिए बन गए वे ८०४३ थी । विभिन्न राज्यों में संख्या इस प्रकार की — आंध्र— २१३ असम— ८३६ बिहार— १७७ बम्बई— २१६६ कर्नाट— ३३३ मध्य प्रदेश— ६ मद्रास— ८१६ मसूर— १४० उड़ीसा— ४६ पंजाब— ८ राजस्थान— २३ उत्तर प्रदेश— ६६२, पश्चिमी बंगाल— १२१६ दहली— ३३ हिमाचल प्रदेश— १ त्रिपुरा— १६ अफगान व निकोबार द्वीप— ६ राज्यों का योग— ६,८१० कर्नातीय संस्थानों में— १२१९ कुम योग— ८०४३ ।

१९४६ के औद्योगिक रोज़गार (स्वायी आदेश) अधिनियम को संशोधन करने के लिए नवम्बर १९६० में एक विधेयक संसद में प्रस्तुत किया गया जो १४ दिसम्बर १९६० को पास होकर अधिनियम बन गया है । इसके अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार को यह अधिकार मिल गया है कि वह अधिनियम को ऐसी औद्योगिक संस्थानों पर लागू कर सकती है जिनमें १०० से कम श्रमिक कार्य करते हों । सम्बन्धित सरकारें अब अतिरिक्त प्रमाण अधिकारी भी नियुक्त कर सकती हैं । अधिनियम के अन्तर्गत श्रमी बनाने का समय २१ दिन से बढ़ाकर ३० दिन कर दिया गया है । केन्द्रीय सरकार को इस अधिनियम के अन्तर्गत जो अधिकार हैं वह आवश्यकता पड़ने पर राज्य सरकारों को दिए जा सकते हैं ।

स्वायी आदेशों के साथ —

स्वामी आदेशों के प्रमाणीकरण की गति बड़ी धीमी है । इसका कारण यह है कि मासिकों की धोर में कोई सहयोग नहीं है और मासिक आदेशों के बापपूर्णे भरी-प्रस्तुत करते हैं । जिस सिद्ध उद्योगों व संस्थानों में भी स्वामी आदेशों में काफ़ी मिश्रता पाई जाती है । यद्यपि अधिनियम के अन्तर्गत मासिकों को स्वामी आदेश बनाकर प्रमाण अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करना आवश्यक है तथापि इसमें प्रमाण अधिकारियों वचना श्रमिक अधिकारियों का यह अधिकार प्रदान नहीं किया गया था कि वह स्वामी आदेशों की धण्डाई (fairness) और धीर्य (reasonableness) के बारे में कोई निर्णय दे सकें । माटिन एण्ड कम्पनी के एक मुकदमे में निर्णय देते हुए इसाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीश श्री के० एन० वास्करू ने अधिनियम के अंतर्गत धीर्य शीमाओं का विलुप्त विवेचन किया था । उन्होंने अपने निर्णय में कहा कि अधिनियम का कोई ऐसा उद्देश्य नहीं था कि मासिकों द्वारा प्रस्तुत स्वामी आदेशों पर किसी भी व्यक्ति द्वारा टीका टिप्पणी की जा सके और उनके उचित या न्यायपूर्ण होने का निर्णय दिया जा सके । राज्य सरकारों द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली अधिकतर रिपोर्टों में भी अधिनियम की इस श्रमी की धोर संकेत किया गया और कहा गया कि इस बात में श्रमिकों में काफ़ी असंतोष उत्पन्न हो गया था और उनमें यह भावना पाई थी कि अब तक मासिकों द्वारा प्रस्तुत स्वामी आदेशों के मसौरे में परिवर्तन करने की व्यवस्था नहीं की जाती अब तक उन्हें

अधिनियम से कोई साम न होगा ।

अधिनियम का यह शेष अगस्त १९५६ में पारित औद्योगिक विवाद (संघोषण एवं विविध कारणों) अधिनियम द्वारा दूर कर दिया गया है । इसका अन्तर्गत १९५६ के औद्योगिक रोजगार (स्वामी धायेन) अधिनियम में भी कुछ आवश्यक संशोधन किए गए हैं । इसमें प्रमाण्य अधिकारी व धनीय अधिकारियों को इस बात का अधिकार दे दिया गया है कि वह स्वामी धायेनों को प्रमाण्य पत्र देने से पूर्व उनके अधिनियम तथा न्याययुक्त होने का भी विचार कर सकें । १९५६ के अधिनियम के अन्तर्गत स्वामी धायेनों में संशोधन करने की प्रारंभना केवल मामिकों द्वारा ही की जा सकती थी परन्तु अब इस प्रकार का अधिकार अधिकारियों को भी प्रदान कर दिया गया है । अधिनियम में इस बात की भी व्यवस्था कर दी गई है कि यदि स्वामी धायेनों के प्रश्नों पर मामिक मजदूरों में कोई मतभेद हो तो उसको सुलभतया जा सके । अब सम्बन्धित पदा सरकार के हस्तक्षेप के बिना ही सीधे भम न्यायालय से निर्णय के लिए प्रारंभना कर सकते हैं ।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस प्रकार के स्वामी धायेन देण में होने वाले औद्योगिक विवादों के एक प्रमुख कारण को दूर कर सकते हैं । परन्तु इस विषय में केवल अधिनियम ही काफी नहीं है बल्कि आवश्यकता इस बात की है कि इसको ठीक प्रकार से लागू किया जाए । सरकार तो इस विषय में अधिनियम बनाकर ही अपना कर्तव्य पूरा करती है । अब यह मामिकों और अधिकारियों विशेषकर मामिकों पर निर्भर है कि वह पारस्परिक विवादाधीन उद्योग-सम्बन्धी विषयों का स्वयं ही निर्णय करें ।

भारतवर्ष में औद्योगिक विवाद विधान

(Industrial Disputes Legislation in India)

इसमें कोई सन्देह नहीं कि औद्योगिक विवादों की रोक बाम उनके मुसम्माने के उपायों की अपेक्षा सर्वत्र ही उचित होती है । विवादों की रोकबाम के उपायों का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है । परन्तु इसमें बुझिमानी नहीं है कि विवादों की रोकबाम पर ही निर्भर रहा बाम और उनके निपटारे के प्रश्न की अपेक्षा कर ही बाम । बँसा कि पहले भी बताया जा चुका है कि जब तक भम और पूँबी पृथक-पृथक हावों में रहेंगे तब तक इन विवादों के पूर्णतया समाप्त हो जाने की कोई संभावना नहीं है । इसके अतिरिक्त भारत में राज्य को औद्योगिक शान्ति बनाने के लिए तथा सामाजिक न्याय स्थापित करने के लिए और अधिक कार्य करने पड़ेंगे क्योंकि सरकारी शेष में भीरे भीरे बुझि होती जा रही है और अधिकारों के संयुक्त धनीय तक अलि-लामी नहीं हो पाए हैं और उनकी सीमाकारी की अलि भी कमबोर है । राज्य पर इस बात का भी उत्तरदायित्व है कि वह ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करे जिनमें विभिन्न पक्ष आपस में मिस जुल कर सहयोग और सहृदयता की भावना से विचार विमर्श कर सकें और अपने मतभेदों का निपटारा कर में । सरकार द्वारा औद्योगिक शान्ति

के लिए जो व्यवस्था की जाती है उनको दो शीर्षकों में बाँटा जा सकता है — (१) परामर्श करने की व्यवस्था (Consultative Machinery) (२) मुझ और विवाहन व्यवस्था (Conciliation and Arbitration Machinery)। परामर्श करने की जो व्यवस्था है उसके औद्योगिक विवादों का निपटारा भी होता है और उनकी रोक-बाम भी की जा सकती है। ऐसी व्यवस्था प्रत्येक स्तर पर होती है जैसे संस्था उद्योग राज्य और राष्ट्र। संस्था के स्तर पर तो मासिक मजदूर और संयुक्त समितियाँ हैं जिनका उल्लेख किया जा चुका है। उद्योग के स्तर पर मजदूरी निपारण बोर्ड (Wage Boards) तथा औद्योगिक समितियाँ हैं। राज्य स्तर पर धम सभाह कार बोर्ड हैं तथा राष्ट्र स्तर पर भारतीय धम सम्मेलन तथा स्वामी धम समितियाँ पादि हैं। इन सब का वर्णन धामे किया जाएगा। औद्योगिक विचार विधान का पहले उल्लेख करना उचित होगा। इस विधान द्वारा विवादों के निपटारे के लिए भारतवर्ष में औद्योगिक विवादों के विधान का इतिहास बहुत पुठना नहीं है। समयत इसका कारण यह है कि भारत के धार्मिक जीवन म १९१५ - १८ के मझ युद्ध पूर्व बिद्यमान स्तर की हदतास सामान्य नहीं थी। इनसे पूर्व विवादों के निपटारे के लिए केबल १८६० का मासिक एक धमिक (विचार) अधिनियम था जिसके धर्मवर्षत यह व्यवस्था थी कि कुछ-बिद्येय धमिकों की मजदूरी से सम्बन्धित यदि कोई विचार हो तो उसको धीम्राधिधीम सुमन्नाया जा सके। यह अधिनियम केबल रेलवे महरूं तथा धन्य सार्वजनिक निमणि कार्यों पर ही लागू होता था। इसमें इस बात की व्यवस्था थी कि न्यायाधीशों द्वारा विचारों का तत्काल ही फैसला हो जाए। यह अधिनियम केबल सीमित ही नहीं था परन्तु दुर्माम्यवस इसके धर्मर कुछ धर्माधनीय उपबन्ध भी थे। उदाहरणस्वरूप धमिकों के द्वारा सविदा भंग करना एक पौबधारी धपराध माना गया था। रॉयस धम धायोग ने धपनी रिपोर्ट में बताया था कि यह अधिनियम निष्क्रिय हो गया था और यह बात सीमाम्यपूर्ण ही थी कि यह क्रियाधीन न हुआ। कमीशन ने इसको पूर्णतया समाप्त करने की सिध्दरिध की थी और इसको १९३२ म निरसिध (Repeal) कर दिया गया।

१९२० में भारत सरकार ने इस प्रसन पर विचार किया कि ब्रिटेन ने १९१९ के क औद्योगिक म्यायालय अधिनियम (Industrial Courts Act of 1919) के धाधार पर भारत में भी औद्योगिक विवादों के लिए कानून बनाया जाय। परन्तु यह इस समय ब्रिटीश धाधार पर बना हुआ कानून प्रमाधधामी न हो सकेगा। इस प्रसन पर १९२१ में बंगाल और बन्धई की औद्योगिक विचार समितियों ने भी विचार किया। बंगाल समिति ने एक समन्धीवा-नामिका (Panel) बनान की सिध्दरिध की थी और इसको बनाया भी गया परन्तु संभवत इसका कमी भी उपयोग नहीं किया गया। तनी उद्योगों में कुछ धाधि धा जाने के कारण कानून बनाने का प्रसन कटाई में

पड़ गया। परन्तु १९२४ में बम्बई में श्रुती बन्द मिर्मा में होने वाली एक गम्भीर हड़ताल के कारण बम्बई सरकार ने एक विधेयक तयार किया। किन्तु इस विधेयक को रोक लिया गया क्योंकि उसी वर्ष भारत सरकार ने एक विधेयक संसद के लिए परिष्कारित किया। यह विधेयक कुछ सीमा तक १९१९ के ब्रिटिश औद्योगिक न्यायालय अधिनियम पर आधारित था। परन्तु १९२८ तक संसद में कोई विधेयक प्रस्तुत नहीं किया जा सका। उस वर्ष ही एक विधेयक प्रस्तुत हुआ जो कि अंततः १९२९ में व्यापार विवाद अधिनियम के नाम से पारित किया गया।

१९२९ का व्यापार विवाद अधिनियम — (Industrial Disputes Act of 1929)

यद्यपि सन् १९२९ का व्यापार विवाद अधिनियम मुख्यतः ब्रिटिश औद्योगिक न्यायालय अधिनियम पर ही आधारित था तथापि इससे यह भ्रमरा भी कि इसमें औद्योगिक न्यायालय की कोई व्यवस्था नहीं थी। अधिनियम के अन्तर्गत जांच न्यायालयों (Courts of Enquiry) या सुलह बोर्डों (Conciliation Boards) की स्थापना उपयुक्त केन्द्रीय प्रांतीय या रेलवे अधिकारियों द्वारा की जा सकती थी तथा कोई भी विवाद इन संस्थाओं के सम्मिलित समझौते के हेतु प्रस्तुत किया जा सकता था। जांच न्यायालय के सदस्य या तो एक स्वतन्त्र अध्यक्ष या कोई अन्य स्वतन्त्र व्यक्ति या केवल एक स्वतन्त्र व्यक्ति ही सकते थे। सुलह बोर्ड में एक स्वतन्त्र अध्यक्ष तथा दो प्रबन्धन और दो श्रमिकों को बरबोर संख्या में दोनों पक्षों का प्रतिनिधित्व करते हैं प्रबन्धन उनके द्वारा मनोनीत किए जाते हैं होते थे। सुलह बोर्ड में केवल एक स्वतन्त्र व्यक्ति भी हो सकता था।

अधिनियम के अनुसार जांच न्यायालय का यह कर्तव्य था कि वह इसके सम्मिलित जाने वाले मामलों की जांच पड़ताल कर इस पर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करे। सुलह बोर्ड का कर्तव्य यह था कि वह विवाद की जांच पड़ताल कर आपस में समझौता कराने का प्रयत्न करे तथा दोनों पक्षों को इस बात के लिए प्रेरित करे कि वह एक निश्चित समय में आपस में समझौता कर लें। समझौता कराने में असफल होने की अवस्था में बोर्ड को निम्नलिखित प्राधिकारी को अपनी जांच पड़ताल तथा सिफारिशों की विस्तृत रिपोर्ट देनी होती थी और उसके पश्चात् रिपोर्ट प्रकाशित कर दी जाती थी। अधिनियम के अन्तर्गत जांच के उपरान्त जन-उपयोगी सेवाओं में हड़तालों से सम्बन्धित वे जैसे रेलवे डाक-घर व टेलीफोन सेवाएँ विद्युत एवं वस्तुपूर्ति स्वास्थ्य व सफाई सेवाएँ प्रादि-प्रादि। ऐसी सेवाओं में हड़ताल एवं तालाबंदी करने से पूर्व १४ दिन की सूचना देना आवश्यक था। इस बात को न मानने वालों के लिए विधेयक बन्द की व्यवस्था की गई थी। इस अधिनियम में प्रथम हड़तालों और तालाबंदी की परिभाषा में वह विवाद भी सम्मिलित कर लिए गए जिनका उद्देश्य औद्योगिक विवाद के परिचित कुछ और हो प्रबन्धन जिनसे सर्वसाधारण को कष्ट हो। इस अधिनियम के द्वारा सहानुभूति के लिए की गई हड़तालों (Sympathetic strikes) को भी

धर्म्य घोषित कर दिया गया। १९२९ के इस अधिनियम में इस बात की भी व्यवस्था की कि धर्मिकों के हितों के लिए सरकारी धर्म अधिकारी (Labour Officers) नियुक्त किए जायें।

सन् १९२९ के अधिनियम के अन्तर्गत कई दोष भी थे। उदाहरणतया इसमें औद्योगिक विवादों की रोकथाम के लिए किसी स्थायी प्रबन्ध की व्यवस्था नहीं की। सहाय्यता न दी गई हड़तालों को धर्म्य घोषित कर देने की भी प्राप्ति नहीं की गई। किसी भी बड़े विवाद को इस प्रकार पर धर्म्य घोषित किया जा सकता था कि उससे सर्वसाधारण को कुछ पट्टन रहा है। बीच न्यायालय तथा सुसह बोर्ड ऐसी संस्थाएं नहीं थी जो उद्योगों में होने वाले मामलों के निकट सम्पर्क में रह सकें। धर्म्य स्थिति पर अपना अधिकारपूर्ण दृष्टिकोण अपना सकें। रोयल धर्म प्रायोग को यद्यपि अधिनियम की कार्यप्रणाली का धर्मिक अनुभव नहीं था तथापि प्रायोग ने इन दोषों की धर्म्य संकेत किया और औद्योगिक विवादों का निपटारा करने के लिए एक स्थायी धर्मिक व्यवस्था की आवश्यकता पर बल दिया। राज्य सरकारों द्वारा धर्मिक अधिकारियों की नियुक्ति की भी सिफारिश की जिन्का कार्य विवाद की प्रारम्भिक अवस्था में ही सम्बन्धित पक्षों में समझौता कराना था।

१९२९ के अधिनियम में १९३२ में संशोधन हुआ जिसके अन्तर्गत सुसह बोर्डों का न्यायालय के सदस्यों को किसी भी गुप्त सूचना को प्रकट करने से मना कर दिया गया और यदि वह ऐसा करते थे तो उन पर सरकार की आज्ञा से मुकदमा चलाया जा सकता था। १९२९ का अधिनियम सर्वप्रथम केवल पाँच वर्ष के लिए धर्म्य किया गया था किन्तु १९३४ में एक संशोधन के द्वारा इसके स्थायी बना दिया गया और इसके उपबन्धों को और धर्मिक स्पष्ट कर दिया गया। बम्बई सरकार ने भी १९३४ में बीच न्यायालय व सुसह बोर्डों की नियुक्ति से सम्बन्धित उपबन्धों को स्पष्ट करने के लिए एक धर्म्य कानून बनाया।

भारत सरकार ने इस अधिनियम में कुछ संशोधन करने के लिए एक विधेयक सन् १९३६ में प्रस्तुत किया जो कि अंततः सन् १९३८ में अधिनियम के रूप में पारित हुआ। बीच कि रोयल धर्म प्रायोग ने सुझाव दिया था इस अधिनियम में सुसह अधिकारियों की (Conciliation Officers) की नियुक्ति की व्यवस्था की गई थी जिन्का कर्तव्य यह था कि वह औद्योगिक झगड़ों में सम्मेलित करें और उनका निपटारा करने के लिए प्रयास करें। इस संशोधित अधिनियम द्वारा औद्योगिक संघों के क्षेत्र को विस्तृत कर दिया गया और इसके अन्तर्गत सांख्यिक और धर्म्य अधिकारियों के मतभेदों को भी ले लिया गया तथा जनोपयोगी सेवाओं के अन्तर्गत द्रव्य व बल-आधारित को भी सम्मिलित कर लिया गया तथा धर्म्य मामलों की हड़तालों सम्बन्धी उपबन्ध भी कम प्रतिबंधनात्मक (Restrictive) कर दिए गए। यद्यपि इस संशोधित अधिनियम द्वारा कुछ उन्नति हुई थी लेकिन फिर भी इसमें कुछ दोष रहे

गए। उदाहरणस्वरूप औद्योगिक संघों को सुसम्भाने के लिए कोई स्वामी प्रबन्ध की व्यवस्था नहीं थी तथा सुसह बोर्ड या जॉब न्यायालय के निर्णयों को विचार सम्बन्धित पक्षों के लिए मानना अनिवार्य नहीं था। इस कारण बम्बई सरकार ने सन् १९३४ और १९३८ में अपने प्रथम विधान बना लिए। बम्बई के १९३४ के औद्योगिक विवाद सुसह अधिनियम के अन्तर्गत मूली बस्त्र मिलों में काम करने वाले श्रमिकों के हितों की रक्षा करना और उनकी कठिनाइयों को दूर करने के लिए भ्रम अधिनियमों की नियुक्ति की व्यवस्था की गई। यम कमिश्नर की नियुक्ति के लिए भी एक उपबंध था ताकि वह उन विवादों में जाहें कि भ्रम अधिकारी प्रत्यक्ष हो जाते थे परन्तु (Ex Officio) अधिकारी के रूप में मुख्य सुसह अधिकारी का कार्य कर सके।

१९३८ का बम्बई औद्योगिक विवाद अधिनियम — (Bombay Industrial Disputes Act)

प्रान्तीय स्वायत्तता के पश्चात् बम्बई सरकार ने तत्कालीन विवादों के बोधों को दूर करने तथा हड़ताओं की एक सहर सी या जाने के कारण सन् १९३८ में बम्बई औद्योगिक विवाद अधिनियम पारित किया। यह अधिनियम कई बातों में विस्तृत बना था और इसका प्रागे जाने वाले विधानों पर भी प्रभाव पड़ा। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य सुसह तथा विवाचन द्वारा औद्योगिक विवादों का शांति व मैत्री पूर्वक ढंग से निपटारा करना था। इस अधिनियम ने विभिन्न प्रकार के संघों में प्रथम क्रिमा उदाहरणतः मान्यता प्राप्त (Recognised) संघ पंजीकृत (Registered) संघ नियम-अनुकूल (Qualified) संघ तथा प्रतिनिधि (Representative) संघ। अधिनियम की दूसरी विशेषता यह थी कि इसके अन्तर्गत कई प्राधिकारियों (Authorities) की नियुक्ति की व्यवस्था थी। भ्रम कमिश्नर पदेन मुख्य समझौता अधिकारी बना दिया गया जिसका कार्यक्षेत्र सम्पूर्ण प्राप्त था। इसके अतिरिक्त विवादों का निपटारा करने के लिए स्थानीय सुसह अधिकारी प्रथम किरी भी उद्योग के लिए विशेष सुसह अधिकारियों की नियुक्ति की भी व्यवस्था थी। प्रान्तीय सरकार स्थानीय क्षेत्रों प्रथम उद्योगों के लिए भ्रम अधिकारियों तथा सुसह बोर्ड की नियुक्ति भी कर सकती थी। सुसह बोर्ड में एक स्वतंत्र अध्यक्ष तथा मासिकों व श्रमिकों द्वारा बराबर बराबर संख्या में मनोनीत सदस्य होते थे। प्रान्तीय सरकार दो या उससे अधिक सदस्यों की औद्योगिक न्यायालय (Industrial Court) या औद्योगिक विवाचन न्यायालय भी बना सकती थी। इनके सदस्यों में से एक अध्यक्ष होता था जो किसी भी उद्योग से सम्बन्धित नहीं होता था। उदाहरणतया उच्च न्यायालय के न्यायाधीश ही इस पद पर नियुक्त किए जाते थे। औद्योगिक न्यायालय एक महत्वपूर्ण संस्था थी जो कि संघों के पंजीकरण विवाचन स्वामी धारक हड़ताओं की रचना आदि से सम्बन्धित विवादों का निर्णय करती थी और क्रिमी को भी

गवाही देने तथा सम्बन्धित कागजात प्रस्तुत करने का आदेश दे सकती थी। धर्म विनियम की एक धीरे विधेयता यह थी कि इसमें स्थायी प्रादेष्टों के विषय में भी उप बंध के जिनका ऊपर उल्लेख किया जा चुका है। इस धर्मविनियम की एक धर्म विधेयता थी कि इसमें प्रबंध हड़तालों तथा ठासाबंदी की परिभाषा की गई थी। यदि कोई हड़ताल स्थायी प्रादेष्टों में उल्लिखित मामलों पर की जाती है या जित हड़ताल की उचित सूचना नहीं दी जाती वह हड़ताल अवैध है। यदि मामला सुसह को स्थिति में प्रथमा प्रौद्योगिक न्यायालय के सम्मुख है तो हड़ताल की घोषणा नहीं की जा सकती धीरे इतनी आकार पर उल्लेखनी करता भी प्रबंध है। मालिकों का धर्मिकों को सताने तथा स्वच्छन्द रूप से बलवत् कर देने के विषय भी उपका बनाये गये थे। प्रबंध हड़तालों तथा ठासाबंदी में म केवल भाग लेने वालों के ऐसे व्यक्तियों के लिए भी जो पूर्व में को ठेकी हड़तालों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करते थे या उनका लिए जवाबदाय करके वे उनके लिए भी कठोर दण्ड की व्यवस्था की गई थी। समझौता कायदाही के समय में मालिक भी रोजगार की घटों में कोई परिवर्तन नहीं कर सकते थे जब तक की ऐसा परिवर्तन पहले से प्रच्छे

१९३८ का बन्दर्ष प्रौद्योगिक विवाह धर्मविनियम धार्ये के विधान के लिए प्रचण्टी का धीरे इस विषय पर पूर्व के धर्मविनियमों से पूर्णतया विभिन्न था। यह हड़तालों को कम करने में काफी सफल हुआ धीरे इसने सुसह तथा विवाहन के द्वारा प्रौद्योगिक धर्मिकों का निपटारा करने के लिए व्यापक साधनों की व्यवस्था की। परन्तु इस धर्मविनियम की भी कई बातों पर आलोचना की गई। उदाहरणार्थ धर्मिकार्य समझौतों की बाध धर्मिक धर्मों का विभागीकरण सुसह प्रणाली की अधिकारिक प्रवृत्ति तथा प्रबंध हड़तालों में भाग लेने वालों को कठोर दण्ड की व्यवस्था धारि ऐसे ही धर्मिक उपबन्ध उस समय के नेताओं को अप्रिय लगे। परन्तु धर्मविनियम के कार्यान्वित होने के पश्चात् यह अनुभव किया गया कि अधिकार्य धारणियाँ राजनीतिक ही थीं धीरे यदि कोई उचित आलोचना की जा सकती थी तो वह केवल धर्मिक धर्मों के बर्णिकरण को थी।

युवकास में प्रौद्योगिक विवाह विधान —

युवकासीन परिस्थितियों ने प्रौद्योगिक धर्मों की दृष्टि से धर्मिक धारव्यक्त पण उठाने के लिए सरकार को विवध कर दिया। एक धारणिकासीन पण के रूप में धर्मिक उल्लाहन की धारव्यक्तता के कारण १९४१ धीरे १९४२ में १९३८ के बन्दर्ष प्रौद्योगिक विवाह धर्मविनियम में संशोधन किए गए। प्रथम संशोधन से तो सरकार को इस बात का अधिकार मिस गया कि वह कोई भी प्रौद्योगिक विवाह प्रौद्योगिक विवाहन न्यायालयों को सौंप सकती थी यदि सरकार यह समझे कि विवाह से धीरे व्यवस्था उल्लेखी या सम्बन्धित उद्योग पर दूषित प्रभाव पड़ेगा या समाज को बहुत समय तक कष्ट होगा। सन् १९४२ के संशोधित धर्मविनियम द्वारा

मालिकों को कार्य के घंटे और विधायन समय में परिवर्तन करने की छूट दे दी गई। यह पत्र सरकार द्वारा मुद्राकामीन धारक्यकृतार्थों को देखते हुए उठाया गया था। बम्बई में तीसरा संशोधित अधिनियम १९४२ में पारित किया गया जिसके अन्तर्गत सरकार द्वारा नियुक्त धम अधिकारियों की अधिकार दिया गया कि वह धमिकों को कोई भी मीटिंग उस कारखाने में बुला सकते थे जहाँ के कार्य करते हों और यदि मालिकों को धमना दी गई हो तो मीटिंग की घोषणा करने को वह मना नहीं कर सकते थे।

जनवरी १९४२ में हड़तालें तथा तालाबंदी को निबंधित करने के लिए सरकार ने भारत सुरक्षा नियम (Defence of India Rules) में ८१ (घ) धारा और जोड़ दी। इसके अन्तर्गत सरकार को इस बात का अधिकार मिला गया कि वह साम्राज्य प्रबन्धना स्थानीय क्षेत्र की धारक्यकृतार्थों को देखते हुए कई प्रकार के विधेय धारक्य बना सके। इन धारक्यों से वह किसी भी हड़ताल प्रबन्धना तालाबंदी का निषेध घोषित कर सकती थी और किसी भी विवाह को मुनह या विवाचन के लिए र्णय सकती थी। मालिकों को इस बात के लिए विषय कर सकती थी कि वह रोजगार की कुछ विधेय शर्तों को लागू करें। सरकार विवाचन निर्णयों को भी लागू कर सकती थी। उसी वर्ष मई मास में दूसरी घोषणा की गई जिससे समझम ऐसे ही अधिकार प्रांतीय सरकारों को दे दिये गये और धगस्त में एक धारक्य निकाला गया जिसके अनुसार चौध बिना की पूर्ण सूचना बिना हड़ताल तथा तालाबंदी निषेध कर दिए गए। उस तमाम धबधि के लिए भी हड़ताल तथा तालाबंदी करना निषेध घोषित कर दिया गया जब कोई विवाह कानूनी बांध मुनह या विवाचन के लिए प्रस्तुत हो। निर्णय के पश्चात् को महीने तक हड़ताल तथा तालाबंदी निषेध थे। अप्रैल १९४३ में भारत सुरक्षा नियम में कुछ और संशोधन किए गए और बांध बूम कर काम बन्द करना या कार्यस्थल पर एकत्रित कर्मचारियों को काम करने से मना करना निषेध घोषित कर दिया गया सिवाय उस धबस्था के जबकि काम बन्द करना उनके किसी ऐसे व्यावसायिक विवाह के कारण हो जिससे कि उनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध हो। प्रांतीय सरकारों को भी इस विषय में धारक्यक कामबाही करने का अधिकार प्रदान किया गया।

सन् १९४७ का औद्योगिक विवाह अधिनियम —

मुद्राकामीन विवाह बिना कि ऊपर उल्लेख किया गया है ३० सितम्बर १९४६ से निष्क्रिय हो गये। परन्तु मुद्राकामीन धनुषधों से सरकार धारक्यस्त हो गई थी कि इस प्रकार के नियम बहुत लाभदायक हैं और यदि यह देय के स्वायी धम कानूनों में सम्मिलित कर लिए जाते हैं तब यह मुद्रापर्यंत औद्योगिक परिवर्तनों के कारण निरन्तर बढ़ रही उद्योग-धधधति को रोकने में बहुत सहायक सिद्ध होंगे। फलतः सन् १९४७ में केन्द्रीय सरकार ने औद्योगिक विवाह अधिनियम पारित किया जिसने १९२९ के व्यापार विवाह अधिनियम को निरस्त (Repeal) कर दिया। प्रांतीय क्षेत्रों में इस सम्बन्ध में अधिनियम १९४७ में बम्बई, उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश में

परिष्कृत किया गया। सन् १९४७ के बम्बई औद्योगिक विवाद अधिनियम ने १९३८ के बम्बई औद्योगिक विवाद अधिनियम को निरस्त (Repeal) कर दिया।

भारत सरकार का १९४७ का औद्योगिक विवाद अधिनियम पच्चीसवें अक्टूबर १९४७ से लागू किया गया। इस अधिनियम में पिछले अधिनियमों के बहुत से उपबन्ध बँधे ही रहे परन्तु इस नये अधिनियम में औद्योगिक विवादों के निपटारे के लिए दो नई संस्थाओं की व्यवस्था की गई अर्थात् मानिकों और अधिकांश के प्रतिनिधियों द्वारा बनी हुई मानिक मजदूर समितियाँ और औद्योगिक अधिकारण जिनमें एक या दो ऐसे सदस्य हों जिनमें उच्च न्यायालय के न्यायाधीश होने की योग्यता हो। (१९४६ के संशोधन के अनुसार विवाहन के लिए एक यम न्यायालय औद्योगिक अधिकारण और राष्ट्रीय अधिकारणों की व्यवस्था की गई है)। इस अधिनियम के अन्तर्गत उपयुक्त सरकारों को ऐसे औद्योगिक मस्त्राओं में जिनमें १०० या उससे अधिक कर्मचारी कार्य करते हों मानिक मजदूर समितियाँ बनाने का अधिकार दे दिया गया जिनका उद्देश्य यह था कि मानिकों व अधिकांश के हितों संघर्षों को सुलझाकर उनमें सद्भावना एवं मधुर सम्बन्ध स्थापित करें। औद्योगिक अधिकारण या यम न्यायालय के सम्मुख मामला तब जायेगा जब किसी विवाद के दोनों पक्ष मामले को इसके सामने ले जाने की प्रार्थना करें अथवा उपयुक्त सरकारें उनको मामला छोड़ना उचित समझें। अधिकारण के पंचाट अथवा निरुपय साधारणतया सरकार द्वारा लागू होंगे और जो भी समय निर्धारित किया जावे उस समय तक दोनों पक्षों के लिए मान्य होंगे। सम्पूर्ण समझौता व्यवस्था को एक नवीन रूप देना अधिनियम की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता है। इसके अन्तर्गत उपयुक्त सरकारों को समझौता अधिकारी नियुक्त करने का अधिकार भी प्रदान किया गया है। इन अधिकारियों का कार्य यह है कि वह किसी भी विवाद क्षेत्र या विधेय उद्योग अथवा विभिन्न उद्योगों में औद्योगिक संघर्षों के निपटारे का प्रयत्न करें या उनको सुलझाने के लिए मध्यस्थता करें। अधिनियम इस बात का भी अधिकार देता है कि ऐसे सुलह क्षेत्रों की स्थापना की जाए जिनमें एक स्वतन्त्र अध्यक्ष तथा विवाद से सम्बन्धित दोनों पक्षों के बराबर-बराबर संख्या में दो या उससे अधिक सदस्य हों। उपयुक्त सरकारों को इस बात का भी अधिकार दिया गया है कि वह किसी भी विवाद की बीच पड़ताल के लिए बीच न्यायालय की स्थापना कर सकें। न्यायालय में एक या अधिक स्वतन्त्र व्यक्ति होंगे जिनमें से एक सभापति होगा।

जब कोई औद्योगिक विवाद होता है या उसके होने की आशंका होती है तब सर्वप्रथम समझौता अधिकारी नियुक्त करके सम्मुख विवाद प्रस्तुत किया जाता है, दोनों पक्षों में मधीनस्थ समझौता कराने का प्रयत्न करता है। उसको अपनी रिपोर्टें सरकार को चौबहू दिन में अन्दर भेजनी होती हैं। यदि समझौता हो जाता है तब इस पर दोनों पक्षों के हस्ताक्षर हो जाते हैं और तब यह सरकार को भेज दिया जाता है। यदि प्रयत्न अयथल रहते हैं तब समझौता अधिकारी सरकार को अपनी

प्रयत्नों की पूरी रिपोर्ट भेज देता है। जब सरकार मामले को मुंह बंद बोर्ड प्रथा औद्योगिक अधिकरण को सौंप सकती है। मुंह बंद बोर्ड को दो मास की अवधि के अन्दर अन्दर समझौता कराने के अपन प्रयत्नों को पुरा करना होता है और यदि उसके सफलता प्राप्त हो जाती है तब वह समझौता छः मास तक या यदि सम्बन्धित पक्ष चाहें तो उसने भी अधिक अवधि के लिए लागू हो जाता है। सफल होने की अवस्था में बोर्ड अपनी पूरी रिपोर्ट सरकार को भेज देता है तब सरकार विवाद को जाँच न्यायालय का मौखिक करती है जो उसके सम्बन्धित सभी तथ्यों को एक निश्चित अवधि में जो साधारणतया ६ मास की होती है एकत्रित करती है। राज्य सरकार को यह भी अधिकार है कि वह मुंह बंद बोर्ड या जाँच न्यायालय की रिपोर्ट के पश्चात् मामले को औद्योगिक अधिकरण को पंच फँसते के लिए सौंप दे। जब इस अधिकरण के द्वारा कोई निर्णय दिया जाता है तब अधिनियम के अनुसार सरकार इस निर्णय को ऐसी अवधि के लिए जिसका वह उचित समझती हो परन्तु जो छान्द से अधिक न हो सम्बन्धित पक्षों पर लागू कर सकती है। परन्तु जब १९२२ के औद्योगिक विवाद (अपील अधिकरण) अधिनियम [Industrial Disputes (Appellate Tribunal) Act] के अन्तर्गत सरकार के लिए यह आवश्यक नहीं रहा है कि वह फँसते को लागू करे और जब निर्णय के प्रकाशन के या निर्णय देने के ३ दिन के पश्चात् वह पक्षों पर अपने आप ही लागू और बाध्य हो जाता है। एक वर्ष की यह अवधि कम भी की जा सकती है जबकि कुछ ३ वर्ष तक की अवधि के लिए बढ़ाई भी जा सकती है। यदि सरकार विवाचन निर्णय (Award) प्रथा उसके किसी भाग से सहमत नहीं है तब वह ३ दिन के अन्दर अन्दर उसे अस्वीकार कर सकती है जबकि उसमें संशोधन कर सकती है परन्तु ऐसी अवस्था में इसको विवाचनप्रथा के समुक्त प्रस्तुत करना होगा जो कि विवाचन निर्णय को स्वीकार प्रथा अस्वीकार कर सकती है या उसमें संशोधन कर सकती है और सरकार को उस निर्णय को लागू करना आवश्यक होगा। इस प्रकार १९४७ के इस अधिनियम में अनिवार्य विवाचन के सिद्धान्त को अपनाया गया है क्योंकि राज्य सरकारें किसी भी विवाद को विवाचन के लिए अधिकरण को प्रस्तुत कर सकती है और उनके निर्णय को मानना बाध्य होता है।

अधिनियम की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसके अन्तर्गत सरकार को जन उपयोगी सेवाओं में होने वाले सभी विवादों को समझौते के लिए अनिवार्य रूप से प्रस्तुत करना आवश्यक है तथा अन्य मामलों में सरकार निर्णय स्वयं कर सकती है। जन उपयोगी सेवाओं में यदि उचित सूचना नहीं दी गई है तब हड़ताल या तालेबन्दी करना अर्थात् शोषित कर दिया गया है। जन उपयोगी सेवाओं में कोई भी कर्मचारी ६ सप्ताह की निश्चित रूप में पूर्व सूचना दिए बिना अपना ऐसी सूचना की समाप्ति के १४ दिन पश्चात् तक प्रथा मुंह बंद कार्यवाही चलाने की अवधि में तथा ऐसी कार्यवाही की समाप्ति के सात दिन पश्चात् तक हड़ताल नहीं कर

सकता। इसी प्रकार मुसह कायवाही के जसते समय और उसकी समाप्ति के ७ दिन पश्चात् तक, तथा अधिकरण की कायवाही जसते समय या उसके निर्णय के दो मास पश्चात् तक तथा उस अवधि के लिए जिसमें विवादान निर्णय सागू रहेगा हड़तालो पर धाम रोक लगा दी गई है। अधिनियम के अन्तर्गत सरकार को यह भी अधिकार है कि वह विशेष सेवाओं को जन उपयोगी सेवाएँ जोषित कर सकती है और समय समय पर राज्य सरकार इस अधिकार का प्रयोग भी करती है। अधिनियम में इस बात के लिए दृष्ट की भी व्यवस्था है (एक मास तक का कायगार अथवा १० व तक का दण्ड अथवा दोनों) कि कोई धर्म हड़ताल और तामाबन्दी में भाग ले या किसी भी अवय हड़ताल और तामाबन्दी को उरुसाए अथवा अधिक सहायता दे (१ मास तक का कायगार अथवा १ १० तक का दण्ड अथवा दोनों)। धर्म हड़तालों में भाग लेने से इकार करने वाले अतिकों की सुरक्षा की भी व्यवस्था की गई है। कार्यवाही जसते समय कोई भी मासिक अथिक की रोजगार की शर्तों में परिवर्तन नहीं कर सकता और न ही किसी कर्मचारी को सजा दे सकता है सिवाय उन मामलों में जिनमें कर्मचारियों का दुर्भवहार हो और वह मामला विवाद के विषय से सम्बन्धित न हो।

१९४७ के इस अधिनियम को देश के औद्योगिक विवाद विधान में एक उन्नति थीत पय कहा जा सकता है। इसमें विवादों को सुमन्त्रने की व्यापक व्यवस्था की गई है। इस अधिनियम की अधिकतर धासोचना अनिवार्य समझीते तथा अनिवार्य सेवाचन पर केन्द्रित रही है। इस समस्या की हम धयते पृष्ठों में विवेचना करेगे।

हड़तालों से सम्बन्धित उपबन्ध और सरकार के पंच पँसतों को सागू करने के अधिकार की भी धासोचना की गई है।

माद्य सरकार ने औद्योगिक विवाद अधिनियम के उपबन्धों की शेषपूर्ति करने तथा कुछ विशेष स्थितियों का सामना करने के लिए कुछ अध्यादेश (Ordinances) व संशोधन अधिनियम पारित किए हैं।

एक से अधिक राज्यों में धासा रखने वाली बैंकिंग तथा बीमा कम्पनियों में धसय धसय विवादान से उत्पन्न कठिनाइयों को दूर करने के हेतु अगस्त १९४९ में औद्योगिक विवाद (बैंकिंग तथा बीमा कम्पनियाँ) अध्यादेश पारित किया गया जिसको दिसेम्बर सन् १९४९ में एक अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित (Replaced) कर दिया गया। इस अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित (Replaced) कर दिया गया। इस अधिनियम के अधिनियम को संशोधित करके इस बात की व्यवस्था कर दी गई है कि बैंकिंग तथा बीमा कम्पनियों को जन संसाधनों की सूची में सम्मिलित कर लिया जाए जिसमें कि केबल केन्द्रीय सरकार ही मुसह बोड ग्यायासन व अधिकरणों की स्थापना कर सकती है और इस सम्बन्ध में राज्य सरकारों के अधिकार से लिए जाएँ। अतत केन्द्रीय सरकार ने जून १९४९ में एक औद्योगिक अधिनियम की स्थापना की और विभिन्न बैंकिंग कम्पनियों के विवादों को इसको सीप दिया।

११ जून १९४६ को एक और प्रत्यादेश औद्योगिक अधिकरण बोनस भुगतान (राष्ट्रीय बचत प्रमाणपत्र) [Industrial Tribunal Payment of Bonus (National Savings Certificates) Ordinance] जारी किया गया। यह बन्वाई औद्योगिक न्यायालय की कुछ सिफ़ारिशों के परिणामस्वरूप पारित किया गया था क्योंकि १९४८ में इन न्यायालय ने एक निर्णय में बोनस के एक भाग को राष्ट्रीय बचत प्रमाणपत्रों के रूप में देने की बांझनीयता पर जोर दिया था। १९१६ की मजदूरी भुगतान अधिनियम (Payment of Wages Act) के अन्तर्गत इस प्रकार के भुगतान में कुछ कानूनी कठिनाइयाँ थीं। परन्तु इस प्रकार की कठिनाई उपरोक्त प्रत्यादेश द्वारा दूर कर दी गई हैं। अब औद्योगिक अधिकरण को यह अधिकार दे दिया गया है कि वह बोनस का १०% भाग तक राष्ट्रीय बचत प्रमाणपत्रों में देने का आदेश दे सकती है। इन प्रमाणपत्रों का मूल्य भी यही अधिकरण निर्दिष्ट कर सकती है। परन्तु इन प्रमाणपत्रों के द्वारा भी गई राशि बोनस की नकदी राशि से कम नहीं होनी चाहिए। केन्द्रीय सरकार को इस सम्बन्ध में उत्पन्न हुई कठिनाइयों को दूर करने के लिए आवश्यक नियम बनाने के अधिकार भी दे लिए गए हैं।

मद्रास में उन समय एक रोचक विषय उच्च न्यायालय के एक निर्णय के कारण उठ खड़ा हुआ। न्यायालय ने यह घोषित कर दिया कि औद्योगिक विवाद अधिनियम के अन्तर्गत सरकार को इस बात का अधिकार नहीं था कि वह सभी संभावित विवादों को औद्योगिक अधिकरण को सौंप दे। अतः अगस्त १९४६ में औद्योगिक विवाद (मद्रास संशोधन) अधिनियम पारित किया गया जिसके अन्तर्गत यह उपबंध बना दिया गया कि मद्रास सरकार द्वारा अधिनियम के अन्तर्गत निमित्त किये गये औद्योगिक अधिकरण के किसी भी पक्ष से किसी भी न्यायालय इस आधार पर संबंध घोषित नहीं कर सकता कि यह अधिकरण कानूनी नहीं है। संशोधित अधिनियम के अन्तर्गत मद्रास सरकार को इस बात का अधिकार दे दिया गया कि वह न केवल उन्हीं उद्योगों को जिनका अधिनियम में उल्लेख किया गया है वरन् किसी भी उद्योग को जनोपयोगी उद्योग घोषित कर सकती है।

१९५५ में एक और महत्वपूर्ण अधिनियम औद्योगिक विवाद (अपीलीय अधिकरण) Industrial Disputes (Appellate Tribunal) Act पारित किया गया। १९४७ के अधिनियम के अन्तर्गत केन्द्रीय व राज्य सरकारों के द्वारा औद्योगिक अधिकरणों की स्थापना होती थी। परन्तु किसी भी समन्वित (Co-ordinating) और पुनर्बिज्ञापनी (Reviewing) प्राधिकारी (Authority) के अभाव में तथा किसी मार्ग-दर्शक नीति न होने के कारण अनेक अधिकरणों ने कई महत्वपूर्ण मामलों पर विभिन्न मत प्रकट किये थे। विभिन्न राज्यों में और कभी कभी एक ही राज्य में अधिकरणों द्वारा किये जाने वाले विभिन्न निर्णयों से कुछ ऐसी नीति विरुद्ध बातें उत्पन्न हो गईं जिससे न केवल मामलों में बल्कि धर्मिकों में भी असंतोष व्याप्त हो गया। इस परिस्थिति का सामना करने के लिए भारत सरकार ने अपीलीय न्याया

नय स्थापित करने का निश्चय किया तथा मई १९३० में औद्योगिक विवाद (अपीलीय अधिकारण) अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम के अन्तर्गत अपीलीय अधिकारण की स्थापना की व्यवस्था की तथा औद्योगिक विवाद सम्बन्धी कानूनों में कुछ परिवर्तन किए गये। उदाहरणस्वरूप अधिकारण के विवाचन निर्णय को राज्य सरकार द्वारा लागू करने के लिये कुछ उपबंध बताये गये। तथा न्यायालय मा अधिकारण के समस्त औद्योगिक विवादों में वकीलों के धाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। अपीलीय अधिकारणों को इस बात का अधिकार दिया गया कि वह किसी भी विवाचन अधिकारी के निर्णय अथवा पंच फँसले के विरुद्ध अपील सुन सकें जब भी ऐसी अपील उपयुक्त सरकारों अथवा असतुष्ट पक्ष द्वारा की जाय। अपीलीय अधिकारण के समस्त केवल कुछ ही विषयों पर अपील हो सकती थी। उदाहरणतः वित्त सम्बन्धी मामले पदवी के अनुसार वर्गीकरण कर्मचारियों की छ्टनी कानूनी प्रश्न आदि। १९३६ के एक संशोधित अधिनियम द्वारा अब इस १९३० के अधिनियम को निरस्त (Repeal) कर दिया गया है। परन्तु अब भारत सरकार पुनः अपीलीय अधिकारणों की स्थापना करने के प्रश्न पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर रही है।

१९४७ के अधिनियम में १९३१ में पुनः संशोधन किया गया जिसका उद्देश्य यह था कि अधिकारणों में रिक्त स्थानों की पूर्ति से सम्बन्धित मामलों में जो दोष थे उनको दूर कर दिया जाय। १९३१ में एक अध्यादेश के द्वारा अधिनियम में पुनः संशोधन किया गया जिसके लिए मार्च १९३२ में अधिनियम भी बना दिया गया। इससे अन्तर्गत उपयुक्त राज्य सरकारों को इस बात का अधिकार दे दिया गया है कि वह विवाचन के क्षेत्र में ऐसे संस्थानों को भी ला सकती थी जिनमें वास्तव में कोई विवाद नहीं हुआ है। यह संशोधन इसलिये आवश्यक समझा गया क्योंकि १९४७ के अधिनियम के अन्तर्गत विवाचन उस समय किया जा सकता था जबकि कोई विवाद हो रहा हो अथवा उसकी सम्भावना हो। परन्तु विवाद की सम्भावना के प्रश्न पर मतभेद था और बँक विवाद के सम्बन्ध में एक पंच फँसले का सर्वोच्च न्यायालय में इसी प्रकार पर कि विवाद की कोई 'सम्भावना' नहीं थी चुनौती दी गई। इस संशोधन के परभाव अब ऐसी कोई आपत्ति नहीं की जा सकती। अब सरकार उद्योगों के किसी ऐसे संस्थान को भी जिस पर विवाद के कारण प्रभाव पड़ने की सम्भावना हो पंच फँसले के लिए सम्मिलित कर सकती है।

कुछ महत्वपूर्ण नये अधिनियम १९३३ का औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम या जिसमें जबरी छुट्टी (Lay off) तथा छुट्टी की व्यवस्था में अधिकों को प्रति-भूति देने तथा इस सम्बन्ध में अन्य आवश्यक कार्यवाही करने के सम्बन्ध में उपबंध थे। आर्थिक मन्त्री के कारण औद्योगिक संस्थानों को अपना काम कम करने अथवा अधिकों की संख्या को कम करने के लिये बाध्य होना पड़ा। अब अधिकों की जबरी छुट्टी तथा छुट्टी बड़ गई। परन्तु कई बार ऐसी जबरी छुट्टी व छुट्टी निष्कपट नहीं

कही जा सकती थी। छुट्टी घोर जबरी छुट्टी इतनी घनिष्ठ बढ़ गई कि एक संघटन मय परिस्थिति उत्पन्न हो गई और श्रमको नियंत्रित करना आवश्यक हो गया। अक्टूबर १९२३ में इस समस्या पर स्थायी श्रम समिति ने विचार किया। उपद्रवों में एक अध्यादेश प्रस्तापित किया जो कि उत्पदात्त औद्योगिक विवाद (संघोष) अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया। मई १९२४ से फेब्रुअरी तथा जातों के अतिरिक्त इस संशोधित अधिनियम को बाधान पर भी लागू कर दिया गया है। इस अधिनियम के अन्तर्गत इस बात की व्यवस्था कर दी गई है कि किसी भी ऐसे श्रमिक को किसी भी मालिक के साथ कम से कम १ साल की निरन्तर अवधि में रोक-थाम पर जमा रहा है छुट्टी गृही हो सकती जब तक उसको एक महीने का विहित नोटिस नहीं दिया जायगा या उसने बदले में एक महीने की मजदूरी नहीं भी चायेगी। इससे अतिरिक्त श्रमिक के लिये सतिपुति की भी व्यवस्था है जो हर पूरे साल की नौकरी पर या छः महीने से अधिक नौकरी पर १७ दिन के प्रसन्न वेतन के हिसाब से दी जाती है। जबरी छुट्टी के सम्बन्ध में इस बात की व्यवस्था है कि हर ऐसे श्रमिक का जो बदली या भाकस्मिक श्रमिक गृही है और जिसने १ साल से कम की निरन्तर नौकरी नहीं की है उसको सतिपुति भी चायेगी। ऐसी सतिपुति उन सम्पूर्ण दिनों की जिनमें श्रमिक जबरी छुट्टी पर रहा है मूल मजदूरी और मजौगई भत्ता का ५ % के हिसाब से होगी। परन्तु एक वर्ष में यह अधिक से अधिक ४३ दिनों के लिए ही चायेगी अगर इस अवधि में श्रमिक को पुनः जबरी छुट्टी नहीं दी जाती है।

ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण संशोधन बैंकिंग विचारों के सम्बन्ध में हुए हैं। अगस्त १९२४ में श्रम घरीबीय अधिकरण ने प्रसन्न भारतीय औद्योगिक अधिकरण (बैंक विवाद) के एक फेसले पर धयना निर्णय किया जो कि 'सास्त्री' अधिकरण के रूप में जाना जाता है। कागून द्वारा सरकार को निर्णयों के सम्बन्ध में सोच विचार करने के लिए प्रवान की गई ३ दिन की अवधि को परिस्थितियों को देखते हुए अर्थात् समझ गया था। अस्त १९२५ के औद्योगिक विवाद घरीबीय अधिकरण अधिनियम में एक अध्यादेश द्वारा संशोधन किया गया जिससे अवधि ३० दिन से बढ़ाकर १२ दिन कर दी गई। विषय पर विचार करने में बाध २४ अगस्त सन् १९२४ को सरकार ने एक आदेश जारी किया जिसके अन्तर्गत श्रम घरीबीय अधिकरण के निर्णय को कई बातों में संशोधित कर दिया गया। इसके परिणामस्वरूप मी बी बी विरि ने श्रम मंत्री पद से त्यागपत्र दे दिया तथा बैंक कर्मचारियों द्वारा होर असंतोष व्यक्त किया गया व आर्थिक हड़ताल हुई। सरकार ने म्यायाबीस की एक राजाभ्यस की अध्यक्षता में अनेक प्रकों पर आंश करवाई। बुर्जुआयस फरवरी १९२३ में म्यायाबीस राजाभ्यस का स्वर्णशत हो गया। उनके स्वान पर म्यायाबीस की भी मन्त्रागकर नियुक्त किए गए। मन्त्रागकर आबोन ने विस्तृत आंश पदतास के परणात् बुलाई १९२३ में सरकार को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। सरकार ने प्रामोस की सभी विकारिखें स्वीकार कर ली। इन विकारिखों की लागू करने के हेतु आवश्यक

विधान भी बनाया गया जो औद्योगिक विवाद (एक कम्पनी) निर्णय अधिनियम के नाम से अक्टूबर १९२५ में पारित हुआ। १९२८ में इसमें कुछ महंगाई मत से सम्बन्धित संशोधन कर दिए गए हैं।

अन्य महत्वपूर्ण संशोधन अगस्त १९२६ में औद्योगिक विवाद (संशोधन और विविध उपबंध) के नाम से हुआ है। इस अधिनियम ने सन् १९२७ के औद्योगिक विवाद अधिनियम तथा सन् १९२६ के औद्योगिक रोजगार (स्वार्थ धारण) अधिनियम में अनुसूची की जा रही धारणकर्ताओं को पूरा किया है। इस अधिनियम के द्वारा सन् १९२० के औद्योगिक विवाद (प्रोसीय अधिनियम) को निरसित कर दिया गया। अधिनियम की मुख्य विशेषताएँ इन प्रकार हैं — (१) कर्मचारी छद्म की नई परिभाषा की गई है और इसके अन्तर्गत उन निरीसक कर्मचारियों को भी सम्मिलित कर लिया गया है जिनकी मासिक आय २०० इ० से कम है तथा जो मुख्यतः प्रबन्धक का कार्य नहीं करते। (२) कोई भी मासिक कुछ विशेष कामों में जैसे मजदूरी प्राबिन्धक पत्र में अंतर्गत कार्य के बच्चे धारि में भनिकों को २१ दिन की सूचना दिए बिना कोई परिवर्तन नहीं कर सकता। (३) मासिकों को यह अधिकार दे दिया गया है कि अगर किसी विवाद के मामले पर विचार भी हो रहा है तब भी अगर आवश्यक समझे तो श्रमिक के विरुद्ध ऐस मामले में कार्य जारी कर सकते हैं जिसका विवाद से कोई सम्बन्ध न हो। परन्तु ऐसी कामवाही द्वारा यदि श्रमिक को बर्खास्त किया जाता है तो संघर्ष से सम्बन्ध रखने वाले प्राधिकारी की धाम्ना लना अनिवार्य है। (४) सन् १९२० के औद्योगिक विवाद (प्रोसीय अधिनियम) अधिनियम को निरसित कर दिया गया है तथा अधिनियमों की वर्तमान प्रणाली को अब अधिनियमों के निम्नलिखित है — (क) धम धदासत (ख) औद्योगिक अधिनियम तथा (ग) राष्ट्रीय अधिनियम। धम धदासत का कार्य कुछ छोट विषय प्रान्तों पर विभाजन करना है। औद्योगिक अधिनियमों का क्षेत्र अधिक विस्तृत है तथा मजदूरी जैसे कार्य क बड़े छुट्टी धनकास तथा बीमज जैसे महत्वपूर्ण विषयों से सम्बन्धित है। राष्ट्रीय अधिनियम की स्थापना केन्द्रीय सरकार द्वारा होती है और एक से अधिक राज्यों में स्थापित संस्थानों को प्रभावित करते हैं। (५) अधिनियम के अन्तर्गत इस बात की भी व्यवस्था की गई है कि दोनों पक्ष किसी भी विवाद को स्वयं ही एक निश्चित समझौते द्वारा पंच फैसल के लिए सौंप सकते हैं। इस बात को भी व्यवस्था कर दी गई है कि मुसह् कार्यवाही के प्रतिरिक्त अगर कोई और समझौता होता है तो उसको भी मासिकों के अधिनियम पर लागू किया जा सके। (६) इस अधिनियम के अन्तर्गत १९२६ के औद्योगिक रोजगार (स्वार्थ धारण) अधिनियम में भी कुछ आवश्यक संशोधन किए गए हैं। (जिनका ऊपर उल्लेख किया

जा चुका है — एक पृष्ठ १३२) ।

सितम्बर १९३६ में एक और संशोधन हुआ जिसके अन्तर्गत १९३६ के संशोधित अधिनियम में जबरी छुट्टी व छुट्टी के समय क्षतिपूर्ति देने के विषय में उत्पन्न हुए कुछ संदेहों का समाधान कर दिया गया । अब ऐसी बातें भी साबू कर दी गई हैं जिनके अन्तर्गत एक संस्थान के प्रबन्ध प्रथम स्वामित्व के हस्तांतरण होने के समय भी धर्मियों को छुट्टी क्षतिपूर्ति दी जा सके । परन्तु नवम्बर १९३६ में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि किसी उद्योग के उचित तथा वास्तविक रूप से बन्द होना तथा उसका एक मासिक से दूसरे मासिक को हस्तांतरण होने की प्रवृत्ति में यदि धर्मिक की नौकरी समाप्त कर दी जाती है तब उसे कोई छुट्टी क्षतिपूर्ति नहीं दी जाएगी । इसका परिणामस्वरूप धर्मियों को राष्ट्रीय फठिनाइयाँ हुई क्योंकि अहमदाबाद कानपुर तथा पश्चिमी बंगाल में कई संस्थान बन्द हो गए और उन्होंने अपने धर्मियों को जो नौकरी से प्रसन्न हो गए थे कोई क्षतिपूर्ति नहीं दी । अतः सरकार ने मार्च १९३७ में एक अध्यादेश जारी किया जो पून १९३७ के औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम के द्वारा विस्थापित कर दिया गया । इसके अनुसार किसी भी उद्योग के उचित बन्द होने तथा स्वामित्व के हस्तांतरण होने पर भी छुट्टी क्षति पूर्ति दी जाएगी । इसको १ दिसम्बर १९३६ से कार्यशील किया गया । इस बात की व्यवस्था की गई है कि कोई क्षतिपूर्ति उस समय नहीं दी जाएगी जबकि धर्मिक को उद्योग के हस्तांतरण की व्यवस्था में ऐसी बातों पर पुनः कार्य पर तथा दिया जाता है जो पहले से कम अनुदान नहीं है प्रथम यदि उद्योग किसी निर्माण कार्य में व्यस्त है और कार्य के पूरा हो जाने के कारण वा ही वर्षों में बन्द हो गया है । इस बात की भी व्यवस्था है कि प्रत्येक कोई व्यवसाय मासिक की शक्ति से बाहर की परिस्थितियों के कारण बन्द हुआ है तब धर्मिक को प्रथम से प्रथम मिलने वाली क्षतिपूर्ति उसकी तीन मास की औसत धार के बराबर होगी ।

इस प्रकार १९४७ के औद्योगिक विवाद अधिनियम के मुख्य उपबन्ध निम्नलिखित बातों से सम्बन्धित है — (१) मासिक मजदूर समितियाँ (२) सुतह और विवाचन व्यवस्था (३) हड़ताल और धामावन्दी (४) जबरी छुट्टी और छुट्टी के समय क्षतिपूर्ति ।

स्वार्थ शम समिति द्वारा नियुक्त एक उपसमिति की सिफारिशों के आधार पर सरकार १९४७ के अधिनियम में पुनः संशोधन करने का विचार कर रही है । यह सिफारिशें निम्नलिखित हैं — (१) कट्टरमैट बोर्ड के विवादों को केन्द्रीय क्षेत्र में ले लिया जाए (२) 'उद्योग' शब्द की परिभाषा में इस प्रकार संशोधन किया जाए कि उसमें व्यावसायिक संस्थाएँ भी आ जाएँ (३) हवाई यातायात को स्वार्थ रूप से सार्वजनिक सेवा घोषित कर दिया जाए (४) जो व्यक्ति औद्योगिक अधिकारियों में नियुक्ति के योग्य हो उनको धर्म म्यामात्रियों में भी नियुक्ति दी जा सके (५) विवाचन के लिए जो विषय हों उनमें संशोधन करने या उनमें और विषय

खोज का अधिकार सम्बन्धित सरकार को होना चाहिए (६) विवाचन कार्यवाही के काल में हड़ताल और लाभादयी निरव होनी चाहिए ।

बम्बई मध्य प्रदेश उत्तर प्रदेश मैसूर ट्रावनकोर काचीन तथा जम्मू व कश्मीर एक पत्रकार समझौते के लिए औद्योगिक विवादों में सम्बन्धित घनत अधिनियम बनाए गए हैं । सन् १९३० के ट्रावनकोर कोचीन औद्योगिक विवाद (समझौता) अधिनियम तथा सन् १९३० का जम्मू व कश्मीर औद्योगिक विवाद अधिनियम की धाराएं सन् १९८७ के औद्योगिक विवाद अधिनियम की मूल धाराओं के समान हैं । ट्रावनकोर काचीन अधिनियम में काछी चाम व रबड़ का कृषि व उत्पादन में संलग्न व्यक्ति भी सम्मिलित किए गए हैं । यह केरल में १९३९ में एक औद्योगिक सम्बन्ध अधिनियम पारित किया जा रहा है । इन नए अधिनियम में विवादों के निपटारे के लिए धारणी बालासाय और बाबू विशा पर अधिकार दिया गया है और इसमें प्रतिद्वन्द्वी संघों की समस्या पर भी प्रकाश डाला गया है । एक सरकारी औद्योगिक सम्बन्ध बोर्ड स्थापित करने का भी उपरन्ध है । जम्मू व कश्मीर अधिनियम की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि सरकार को यह अधिकार दिया गया है कि वह अधिनियम के सम्बन्ध में उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों को दूर करने के लिए कोई भी पद उठा सकती है । सन् १९३३ में पञ्जाब सरकार ने एक धम्यारेष पञ्जाब औद्योगिक विवाद (कार्यवाहियों की बधता) अध्यायेसारी विवाह जिसमें औद्योगिक अधिकारियों व कार्यो के सम्बन्ध में कृष्ण जागणों को स्पष्ट किया गया था । यह बम्बई, उत्तरप्रदेश के अधिनियमों का मॉडल बर्णन किया जाएगा ।

सन् १९४६ का बम्बई औद्योगिक सम्बन्ध अधिनियम —

बम्बई ही पहला राज्य था जिसने कि औद्योगिक विवादों की राठयाम तथा समझौते के लिए अपना स्वयं का अधिनियम पारित किया । १९३८ में इनके औद्योगिक विवाद समझौता अधिनियम पास किया जा कि तत्पश्चात् सन् १९३८ के बम्बई औद्योगिक विवाद अधिनियम द्वारा विस्थापित कर दिया गया । इसमें युद्ध के समय कृष्ण संघोषण भी हुए थे । जब युद्ध समाप्त हुआ गया तब सरकार ने अधिनियम की पुनः जांच की और १९८७ में एक व्यापक अधिनियम पारित किया जो कि सन् १९४६ के बम्बई औद्योगिक सम्बन्ध अधिनियम के नाम न आता आता है । इन अधिनियम का आधार नी १९३८ के अधिनियम के समान ही है परन्तु १९३८ के अधिनियम के अज्ञात जो समझौता व्यवस्था की गई थी और जो व्यवस्था केन्द्रीय सरकार के १९८७ के औद्योगिक विवाद अधिनियम में भी उनका इन अधिनियम में पूर्ण और इष्ट कर दिया गया है । इन अधिनियम में अनिवाय विवादों की व्यवस्था करके विवाचन का क्षेत्र विस्तृत कर दिया है । इन अधिनियम पहली बार औद्योगिक ग्यायामन की स्थापना की भी व्यवस्था का गई है ताकि स्थायी प्रादणों तथा जाप की रजाओं में सर्वथ परिवर्तनों के सम्बन्ध में चीन और पक्षपातहीन

नियम हुआ सके। इस अधिनियम में ऐसी संयुक्त समितियों की स्थापना की भी व्यवस्था है जिसमें विभिन्न पेशों तथा उद्योग के संस्थानों के मानिकों एवं अधिकाओं के समान संख्या में प्रतिनिधि हों। १९४८ में इस अधिनियम में एक अन्य संशोधन द्वारा राज्य सरकार को विभिन्न उद्योगों में मजदूरी बोर्डों की स्थापना करने का अधिकार प्रदान किया गया है। इस अधिनियम के अन्तर्गत किसी विवाद का शीघ्र सुलझाने के लिए पंजीकृत सभी को इस बात का अधिकार दे दिया गया है कि वे विवाचन के लिए औद्योगिक न्यायालयों के पास सीधा प्रार्थना पत्र दे सकते हैं।

१९२६ के एक संशोधन द्वारा 'कर्मचारी' की परिभाषा का विस्तृत कर दिया गया है और औद्योगिक न्यायालय अथवा न्यायालय तथा मजदूर बोर्डों को इस बात का अधिकार दे दिया गया है कि वे किसी भी औद्योगिक विषय या विवाद से सम्बन्धित या उत्पन्न हुए प्रश्न पर निर्णय दे सकते हैं। इससे कार्यवाहियों में बाहुल्यता (Multiplicity) समाप्त हो गई है। बम्बई अधिनियम की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि समझौता कार्यवाहियों में अधिक संघों को एक भागस्वरूप भाग के रूप में मान्यता देता है और अनेक सुविधाओं से युक्त एक'नप वर्ग के संघ का निर्माण किया है जिसको अनुमोदित (Approved) संघ का नाम दिया है। ऐसा संघ सभी कहा जाएगा जब कोई संघ इस बात की शर्त मान लेता कि समझौते के अन्तर्गत हो जान पर सभी विवाद पंच-फैसले को सौंप दिये जाएँ और उस समय तक कोई भी हड़ताल नहीं की जायेगी जब तक कि अधिनियम में उल्लिखित समझौते के सभी शर्तें समाप्त न हो जायें तथा अधिकों का बाहुल्य ऐसी हड़ताल के पक्ष में न हो। जसा कि पूर्व अधिनियम में था इस अधिनियम के अन्तर्गत भी अथवा अधिकारी और न्यायालय तथा समझौताकारों की नियुक्तियाँ की व्यवस्था है। कुछ कानूनी बाधों को दूर करने के लिए इस अधिनियम में सन् १९२२ व १९२६ में संशोधन किये गये।

सन् १९४७ का उत्तर प्रदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम —

उत्तर प्रदेश में औद्योगिक विवाद अधिनियम सन् १९४७ में पारित किया गया जोकि १ फरवरी १९४८ से लागू किया गया। यह अधिनियम सरल है तथा सन् १९४७ के केन्द्रीय सरकार द्वारा पारित औद्योगिक विवाद अधिनियम के अन्तर्गत राज्य सरकार को अधिकार प्रदान करता है। यह बम्बई के अधिनियम के समान संघों के वर्गीकरण की कोई व्यवस्था नहीं करता और न ही समझौता और विवाचन के लिए कई प्रकार की एग्जिस्टेंसों की इसमें व्यवस्था है। परन्तु यह राज्य सरकार को इस बात का अधिकार देता है कि वह हड़तालें और तालाबन्दी को निषेध घोषित कर सके तथा मानिकों और मजदूरों को बाध्य कर सके कि वे रोजगार की विशेष शर्तों को मान्य करें। राज्य सरकार औद्योगिक न्यायालय भी स्थापित कर सकती है। उसमें यह भी अधिकार है कि किसी भी विवाद को सुलझा या विवाचन के लिए सौंप दे और विवाचन निर्णय को सम्बन्धित पक्षों पर लागू कर दे। सार्वजनिक उपयोगी

समाप्तों पर भी सरकार नियन्त्रण रख सकती है ताकि एसी सेवाओं की पूर्ति निरन्तर होती रहे और इस प्रकार सार्वजनिक सुरक्षा धाराय और रोजगार में कोई बिम्ब न पड़े। मई १९४८ के प्रारम्भ में सरकार ने भादेधानुसार राज्य के धन विभाग के अनेक अधिकारियों को विभिन्न क्षेत्रों में समझौताकार के रूप में नियुक्त किया गया तथा औद्योगिक विभागों का सुसभाने के लिए कई ऐसी ही और प्रांतीय मुसह बोर्ड और औद्योगिक ग्यामासथा की स्थापना की गई। मुली नपड़ा बोटी काच नमड़ा बिद्युत और इन्जीनियरिंग उद्योगों के लिये क्षेत्रीय मुसह बोर्ड स्थापित किये गये और इनके लिये कानपुर, सलनऊ, धागरा और प्रयाग में औद्योगिक ग्यायालय भी स्थापित किए गये। अगस्त १९५० में इस अधिनियम में संशोधन हुआ जिसके अन्तर्गत सरकार को इस बात का अधिकार दे दिया गया कि ऐसे जन उपयोगी सेवा संस्थानों के प्रशासन को जो बन्द हो गये हों प्रथम बन्द होने की ही अपने नियन्त्रण में ले ले।

सन् १९५१ में उत्तर प्रदेश में औद्योगिक शांति को स्थापित करने की जो व्यवस्था की इसका पुनर्संयोजन हुआ। विशेष उद्योगों के लिये जो क्षेत्रीय मुसह बोर्ड के अन्तर्गत समाप्त कर दिया गया। और यह व्यवस्था कर दी गई कि हर क्षेत्र का मुसह अधिकारी ही किसी भी उद्योग से सहायता प्राप्त पर या सरकार द्वारा निर्देश पाने पर मुसह बोर्ड का काम करेगा। इस प्रकार के बोर्ड का कर्तव्य केवल मुसह करना और समझौते की संभावना के लिये पत्तन करना होता है और यदि किसी समझौते की संभावना नहीं है तो अपनी रिपोर्ट धन कमिश्नर और सरकार को यह बोर्ड देना होता है। फिर किसी उचित कार्यवाही के लिये धाने करम उठाया जाता है। उदाहरणार्थ अगर धानकयक हो ता विवाहन के लिये मामला सौंप दिया जाता है। औद्योगिक ग्यायालयों को भी जप कर दिया गया तथा पूरे राज्य के लिये इलाहाबाद में एक औद्योगिक अधिकरण की स्थापना कर दी गई। सरकार अपनी इच्छा से या मुसह बोर्ड की सूचना पर किसी भी मामले को विवाहन के लिए किसी विवाहक को या इलाहाबाद के राज्य औद्योगिक अधिकरण को सौंप सकती है तथा उसके निर्णय को लागू कर सकती है। इसके बिकट अधीन सन् १९५० के अधिनियम के अन्तर्गत निर्मित प्रबल भारतीय धन अधीनीय ग्यायालय में १९५१ तक जब कि अधीनीय ग्यायालय समाप्त नहीं हुए न की जा सकती थी। फरवरी १९५३ में एक संशोधन के द्वारा विवाहक और औद्योगिक अधिकरण द्वारा निर्णय देने की शक्ति को मूल धादेश में मामले का सौंपने की लिये में ४० दिन की धन १८० दिन कर दी गई। सन् १९५४ में एक और संशोधन द्वारा मुसह अधिकारियों को यह अधिकार प्रदान कर दिया गया है कि वे कुछ परिस्थितियों में प्रारंभ-पत्र लेने से इनकार कर सकते हैं ताकि निरर्थक टिकावों को रोक कर सकें। और औद्योगिक अधिकरण के विवाहक को अधिकार प्रदान कर दिया गया है कि वह लिपि या हिसाब की प्रतियों को ठीक कर सकते हैं। राज्य में सात क्षेत्रीय मुसह कार्यालय — कानपुर, इलाहाबाद और कानपुर, सलनऊ, धागरा बरेली और मेरठ में स्थापित किये गये हैं। धन

कमिस्तर और उप-धम-कमिस्तर पूर्ण राज्य के लिए मुसह अधिकारी हैं। हर क्षेत्र में मुसह अधिकारियों के प्रतिरिक्त अब १९२९ से एक सहायक धम कमिस्तर की भी नियुक्ति हो गई है। इनकी संख्या इस समय ७ दोशों में ६ है (गोरखपुर और इलाहाबाद दोशों के लिए अब एक सहायक धम कमिस्तर है)।

सन् १९४७ के अधिनियम में एक अन्य संशोधन सन् १९२६ के उत्तर प्रदेश प्रौद्योगिक विवाद (संशोधन और विधि उपबंध) अधिनियम द्वारा किया गया जो कि अप्रैल १९२७ से लागू हुआ। इस संशोधन द्वारा उत्तर प्रदेश के अधिनियम में भी १९२६ के संशोधित केन्द्रीय अधिनियम के उपबंधों को लागू कर दिया गया। संशोधित अधिनियम के द्वारा फमबाटी शब्द की परिभाषा का विस्तृत कर दिया गया है। और राज्य सरकार का इस बात का अधिकार है किया गया है कि वह प्रौद्योगिक विवादों के विवाचन के लिए एक या अधिक धम-न्यायालय और प्रौद्योगिक अधिकारियों की स्थापना कर सकती है। धम-न्यायालय का अधिकार क्षेत्र केवल उन विषयों तक है जिनका उल्लेख अधिनियम की धनुसूची (Schedule) नं० १ में किया गया है। इसके अन्तर्गत स्थायी दारोप छद्मी या परसास्तमी छनका पुन नौकर रचना श्रमिकों की सुविधायें और अधिकार, हड़ताओं और शालाबन्धियों की सेवा निष्ठा आदि विषयों से सम्बन्धित तमाम मामले या बातें हैं। धनुसूची नं० २ में उनसे अधिक महत्वपूर्ण विषय रखे गये हैं। जैसे मजदूरी बोलस मत्ता कार्य करने के घंटे विधाम-कास प्रकाश और छुट्टियाँ साम-विभाजन पारियाँ प्रोबीडेण्ट फंड धनुषासन विवेकीकरण छद्मी आदि। प्रौद्योगिक अधिकारियों का यह अधिकार भी प्रदान कर दिया गया है कि वे दोनों धनुसूचियों के मामलों को सुन सकता है। यदि विवाचन का निर्णय एक से अधिक उद्योग सन्धानों को प्रभावित करता है तो सरकार तीन व्यक्तियों के एक विषय अधिकारण की स्थापना कर सकती है या सरकार को इस बात का भी अधिकार है कि वह धनुसूची नं० २ का भी कोई मामला धम न्यायालय को सौंप सकती है अगर ऐसे मामले से १० से अधिक धमिक सम्बन्धित नहीं हैं। अधिनियम की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें इस बात की व्यवस्था है कि किसी भी विवाद का ऐच्छिक रूप से विवाचन को सौंपा जा सकता है। मासिक और धमिक लिखित समझौते द्वारा जब रहे संघर्ष प्रकटा सम्भावित विवाद को किसी विशेष विवाचक या विवाचकों को सौंप सकते हैं। मासिकों को यह अधिकार दिए गए हैं कि वे धनुसूची नं० १ में बरिष्ठ विषयों पर श्रमिकों की नौकरी की शर्तों को परिवर्तन करने के लिए शूचना दे सकते हैं। अधिनियम में किसी भी संस्थान के स्वामित्व प्रकटा प्रबन्ध के परिवर्तन होने की प्रकटा में छद्मी शक्ति पूर्ति के सम्बन्ध में मासिकों की स्थिति को और स्पष्ट किया गया है। इस प्रकटा में श्रमिकों को एक एक कोई भी शक्ति पूर्ति न दी जायगी जब तक परिवर्तन द्वारा उस श्रमिक की नौकरी में बाधा न पहुँचती हो या जब नौकरी की शर्तें कम धनुसूची हो जाती हों। प्रकटा नया मासिक छद्मी शक्तिपूर्ति देने के लिये श्रमिकों की शर्तों को निरन्तर नहीं मानता।

इस नये संशोधित अधिनियम के अन्तर्गत सरकार ने इसाहाबाद में तीन औद्योगिक अधिकारियों की स्थापना कर दी है जो क्रमशः सामान्य सूती तथा चीनी उद्योग वर्गों के लिये हैं। गोरखपुर, कानपुर बरेली और मेरठ में चार धम म्यामा नगों की स्थापना की गई है। समझौता प्रणाली पुनः की जाति कार्यवीर्य है। क्वम १९२९ में लेबीय सहामक धम कमिन्तरों की भी नियुक्ति कर दी गई है।

एक अन्य महत्वपूर्ण सम्बन्धन उत्तर प्रदेश अधिनियम न जुलाई १९२७ में हुआ। इसके अन्तर्गत इस बात की व्यवस्था है कि किसी समय का कोई भी अधिकारी किसी भी पक्ष का उस समय तक प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता जब तक की धमिक सब अधिनियम के अन्तर्गत उस सब को पञ्जीकृत हुए वा बप अतीत न हो गये हों। तथा सब एक ही व्यवस्था के लिए पञ्जीकृत किया गया है। इस बात की भी व्यवस्था है कि किसी भी औद्योगिक सम्बन्ध में हड़ताल एवं लासाबन्दी दूसरे पक्ष को १० दिन की पूर्व सूचना दिये बिना नहीं की जा सकती है। धमिक को अधिकार दिये गया है कि वह राज्य सरकार से इस बात की प्रार्थना कर सकता है कि वह उसको मामिलों से उसके बकाया धन की बसुली करवाये। और अगर सरकार संतुष्ट हो जाए तो उस धन की बसुली के लिये बिलायीय क नाम एक प्रमाण पत्र जारी कर सकती है जो उसकी बसुली उसी प्रकार कर सकता है जैसे कि लगान की बकाया की बसुली की जाती है। यदि राज्य सरकार को इस बात का विश्वास हो जाय कि कोई बिना धन निर्लभ बोधे (Fraud) मिथ्या निवपण (Misrepresentation) या दुरमि-सन्धि (Collusion) द्वारा प्राप्त किया गया है या दिया गया है तो ऐसा निर्गुण साबू नहीं होगा। सुलह कार्यवाहियों के धरिस्त्र भी यदि कोई सम्झौता होता है तो उसकी रजिस्ट्री कराना आवश्यक है ताकि उसे साबू किया जा सके परन्तु वह सामाजिक ध्याय के धाधार पर रजिस्ट्रेशन को मना किया जा सकता है। उत्तर प्रदेश के इस औद्योगिक विवाद अधिनियम में सब धिर संघाधन करने पर विचार किया जा रहा है और संशोधित विधेयक तैयार किया जा चुका है।

जुलाई १९२८ से उत्तर प्रदेशीय सरकार ने राजकीय उद्योगों और संस्थानों तथा उत्तर प्रदेशीय सहकारी बैंक और उसकी शाखाओं और उत्तर प्रदेशीय सहकारी संघम तथा उत्तर प्रदेशीय बुध पूति सहकारी संघ और शाखाओं धिममें १०० से अधिक धमिक काम करते हों क लिय एक स्वाधी मुनह बोर्ड की स्थापना की है। इसका मुख्य कार्यालय लखनऊ में है।

मध्य प्रदेश औद्योगिक विवाद समझौता अधिनियम —

मध्य प्रांठ तथा बरार (मध्य प्रदेश) में मई १९२७ में औद्योगिक विवाद समझौता अधिनियम धारित किया गया था तथा इसमें दिसम्बर १९२७ मई सन् १९२१ तथा नवम्बर सन् १९२२ में संशोधन किये गये थे। प्रथम दो संशोधित अधिनियमों से तो केवल कुछ बोधे ही संशोधन हुए। परन्तु १९२२ के अधिनियम से कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। इसके अनुसार धमिक के प्रतिनिधि की परिभाषा में संशोधन हुआ। माय्या प्राप्त धमिक संघों को धमिक सदस्य नामे धमिक संघों से प्रतिस्थापित करने

का उपबन्ध भी था। मुन्सू बोर्ड के अधिकारों को भी विलुप्त कर दिया गया और एक प्रबन्ध प्रविष्ट उद्योगों के लिए मजदूरी बोर्ड की स्थापना की भी व्यवस्था की गई। राज्य सरकार द्वारा कोई भी औद्योगिक विषय जिसका सम्बन्ध मजदूरी कार्य के घटे विवेकीकरण मूलतः मजदूरी नियुक्ति या छप्पी घाबि से हो मजदूरी बोर्डों को सौंपा जा सकता है। सरकार को मजदूरी बोर्ड के निर्णय का सागू करना होगा। परन्तु यदि वह निर्णय स अग्रहमत् हो तब मामले को राज्य विधान सभा के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा जो कि निर्णय का स्वीकार अस्वीकार तथा उसमें संशोधन कर सकती है। मध्य प्रदेश का यह अधिनियम बम्बई के औद्योगिक सम्बन्ध अधिनियम पर ही समझ समझा है यद्यपि इसकी धारणें बम्बई के अधिनियम की तरह व्यापक नहीं हैं। इसके अन्तर्गत मामलों द्वारा प्रविष्टि रूप से स्थायी घाबेसों को बनाना का उल्लेख है। किसी भी औद्योगिक मामले में परिवर्तन करने के लिये १४ दिन की सूचना देनी आवश्यक है और यदि वह अग्रहमत् हो तब समझीता कार्यवाही की प्रबन्ध में उनको हड़ताल एवं तालाबन्धियों को रोकने की भी व्यवस्था है। अधिनियम के अन्तर्गत एक स्थायी मुन्सू व्यवस्था का उपबन्ध है जिसके अन्तर्गत समझीताकार, विधेय समझीताकार, मुख्य समझीताकार, बिना औद्योगिक न्यायालय तथा राज्य औद्योगिक न्यायालय का जाते हैं। इस समय अधिकारियों की व्यवस्था है जो विधेय परिस्थितियों में अधिकों के प्रतिनिधियों का कार्य कर सकते हैं। १९२५ के संशोधन के अनुसार मुन्सू बोर्ड और मासिक मजदूर समितियां भी तमाम उद्योगों में स्थापित की जा सकती है। अधिनियम के अन्तर्गत यदि सम्बन्धित पक्ष चाहें तो विवाचन की भी व्यवस्था है। राज्य सरकार को अधिकार है कि यदि वह यह समझे कि जन साधारण की सुरक्षा और सुविधा के विचार से इस प्रकार का पक्ष आवश्यक है तब वह अपनी ही इच्छा से किसी भी औद्योगिक विवाच को राज्य औद्योगिक न्यायालय को विवाचन के लिये सौंप सकती है। संप की कार्यवाही में भाग लेने पर किसी भी अधिक को दण्ड देना या सताना मामलों के लिए गैरकानूनी कर दिया गया है। मध्य प्रदेश सरकार ने अगस्त १९२६ में एक विधेयक को परिष्कृत किया है जिसका नाम मध्य प्रदेश औद्योगिक सम्बन्ध विधेयक है। इसके अन्तर्गत राज्य में उद्योग सम्बन्धी जो नौ विधान हैं उनको संयोजित कर उनमें उन्नति करने की व्यवस्था है। यह विधेयक १९६ में पास होकर अब अधिनियम बन गया है। इस १९६ के अधिनियम में औद्योगिक विवाचों के निपटारे के लिए उपबन्ध है और कई प्रकार की व्यवस्थाएँ की गई हैं जैसे प्रतिनिधित्व अधिक संघों को मान्यता देना अथ अधिकारियों की नियुक्ति, संयुक्त समितियां अथ न्यायालय औद्योगिक न्यायालय अथ न्यायालय विवाचन बोर्ड घाबि की स्थापना तथा हड़तालों और तालाबन्धियों को अथ घोषित करने के लिए उपबन्ध घाबि है।

औद्योगिक विवाच विधान की संक्षिप्त समीक्षा —

अब हम भारतवर्ष में औद्योगिक विवाचों को रोकने तथा मुन्सूने सम्बन्धी सभी उपायों की संक्षिप्त समीक्षा करेंगे। १९२६ का व्यापार विवाच अधिनियम

जिसके अन्तर्गत औद्योगिक विवादों के निपटारे के लिए एक अस्थायी ब्राह्म व्यवस्था की गई थी पहला कानून था जिसमें इस याद का उपलब्ध था कि भारत में औद्योगिक विवाद रोकने और निपटारे के लिए कोई वैधानिक व्यवस्था स्थापित की जाए। परन्तु इस अधिनियम में भी इस बात की कोई व्यवस्था न थी कि कोई ऐसी प्राथमिक व्यवस्था की जाये जिससे पारस्परिक यातनाहट द्वारा प्रारम्भिक प्रवृत्ति में ही विवादों को निपटाया जा सके। अधिनियम का यह शेष सन् १९३० के एक संघोचन द्वारा दूर किया गया जिसमें कि सुसह अधिकारियों की नियुक्ति का प्रबन्ध था। बम्बई में सन् १९३० के बम्बई औद्योगिक विवाद अधिनियम में न केवल विवादों उत्साहकारों आदि की नियुक्ति की व्यवस्था थी बल्कि औद्योगिक न्यायालय के रूप में एक स्थायी व्यवस्था का भी प्रबन्ध था जिससे भारतवर्ष में यम न्यायालयों का प्रारम्भ हुआ। यद्यपि यह भी प्राथमिक व्यवस्था की अपेक्षा ब्राह्म व्यवस्था पर अधिक बल था। परन्तु युद्ध के बाद के वर्षों में अधिक उद्योग अशांति के कारण प्राथमिक व्यवस्था की आवश्यकता अनुभव की गई। भारत सरकार ने १९४७ का औद्योगिक विवाद अधिनियम पारित किया और कुछ प्रांतीय सरकारों जैसे बम्बई मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश ने भी केन्द्रीय अधिनियम के आधार पर अधिनियम बनाये। औद्योगिक संघर्षों को रोकने के लिए तथा निपटारे के सिद्धे प्राथमिक तथा ब्राह्म व्यवस्था दोनों की गई हैं।

जैसा ऊपर उल्लेख किया जा चुका है सरकार द्वारा औद्योगिक अशांति यथाए रखने की जो व्यवस्था है वह इस प्रकार है — (१) परामर्श व्यवस्था तथा (२) सुसह व विवादान व्यवस्था। औद्योगिक विवाद विधान के अन्तर्गत प्राथमिक मजदूर प्रतिष्ठानों यम तथा सुसह अधिकारी औद्योगिक न्यायालय यम न्यायालय औद्योगिक अधिकरण तथा राष्ट्रीय अधिकरण आदि की व्यवस्था है। केन्द्रीय क्षेत्र के संस्थानों के लिए एक सुसह यम प्रायुक्त की नियुक्ति की गई है जिसका कार्य औद्योगिक संस्थानों को भी देखना है। इसकी सहायता के लिए क्षेत्रीय यम प्रायुक्त सुसह अधिकारी और यम निर्देशक हैं। औद्योगिक विवादों के विवादान के लिए यम न्यायालय औद्योगिक अधिकरण तथा राष्ट्रीय न्यायालय स्थापित किए गए हैं जिनका अपना अपना अधिकार क्षेत्र है। देहली में एक यम न्यायालय है और बम्बई में दो तथा जनजाद में एक औद्योगिक अधिकरण है। देहली में भी एक औद्योगिक अधिकरण बना बिना गया है जिसका उपयोग केन्द्रीय सरकार भी कर लेती है। राज्य सरकारों ने भी सुसह के लिए व्यवस्था की है जिसके अध्याय यम प्रायुक्त होते हैं। राज्यों में भी अधिकरण और यम न्यायालय स्थापित हो गए हैं। उत्तर प्रदेश में सरकारी औद्योगिक संस्थानों के लिए तथा सहायकी संघों व बैंक के लिए एक स्थायी सुसह बोर्ड तथा प्राथमिक मजदूर परिषदों की स्थापना की गई है। इस प्रकार हम देखते हैं कि देश में औद्योगिक विवादों को सुसहाने तथा जनकी रोकनाम के लिए एक व्यापक व्यवस्था की गई है।

कार्यान्वित व्यवस्था — (Implementation Machinery)

श्रम सम्बन्धी विवाधान निर्णय समझौते तथा विधान का लागू न करना या लागू करने में देर का कारण सदा धिकायतों जाती रहती है तथा इन कारण औद्योगिक विवाद भी हो जाते हैं। इन सब का लागू न करना एक बड़ा अपराध तो है और इसके लिए दण्ड की व्यवस्था भी है परन्तु अनुभव से यह पता चलता है कि इससे बनाव और बहुत कम नहीं होती और दण्ड प्रादि से औद्योगिक सम्बन्ध दण्डे नहीं चलते। इसीलिए स्वामी श्रम समिति ने इस समस्या पर अक्टूबर १९५० में अपने १६वें अधिवेशन में विचार किया। इसकी सिफारिशों के आधार पर केन्द्र में और राज्यों में इस बात की विशेष व्यवस्था कर दी गई है कि श्रम सम्बन्धी विवाधान निर्णय समझौते प्रादि और अनुशासन संहिता उचित प्रकार से कार्यान्वित हों। इस का प्रारम्भ जनवरी १९५० में हुआ जबकि केन्द्रीय श्रम व रोजगार मंत्रालय में एक कार्यान्वित विभाग खोला गया। (Implementation Cell) खीम ही इसके कार्यों का विस्तार हो गया और एक केन्द्रीय मूल्यांकन तथा कार्यान्वित प्रभाग (Central Evaluation and Implementation Division) की स्थापना हो गई। जून १९५० में एक विदेशीय केन्द्रीय कार्यान्वित समिति भी बनाई गई जिसके अध्यक्ष केन्द्रीय श्रम मंत्री हैं। सब राज्य सरकारों ने भी अब अपने श्रम विभागों में कार्यान्वित प्रभाग खोस दिए हैं तथा विदेशीय कार्यान्वित समितियाँ स्थापित कर दी हैं। केन्द्रीय प्रभाग राज्यों की कार्यान्वित व्यवस्था में समन्वय स्थापित करता है तथा नीति में समानता लाता है। राज्यों के कार्यान्वित अधिकारियों की समय समय पर बैठकें होती रहती हैं।

केन्द्रीय मूल्यांकन तथा कार्यान्वित प्रभाग के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं —

(१) यह देखना कि अनुशासन संहिता धारण संहिता श्रम सम्बन्धी विधान विवाधान निर्णय समझौते प्रादि उचित प्रकार से लागू हो रहे हैं ताकि औद्योगिक विवादों के मुख्य कारणों की धारण में ही रोकथाम की जा सके (२) औद्योगिक विवादों की रोकथाम के लिए कुछ प्राथमिक पग उठाया ताकि ऐसे विवाद जति कारण न हो जाएँ और बहुत दिनों तक न चलते रहें (३) कुछ मुख्य हड़तासों तात्कालिकियों और विवादों का मूल्यांकन करना ताकि यह जाना जा सके कि उनका उत्तरदायित्व किस पर है। इसके परिचित यह प्रभाग श्रम सम्बन्धी विधान विवाधान निर्णय नीति तथा अन्य निर्णयों का भी मूल्यांकन करता है और इस बात को देखता है कि जिस उद्देश्य से यह सब बनाए गए हैं वह उद्देश्य पूरे हो रहे हैं या नहीं तथा उनमें और क्या सुधार किए जा सकते हैं।

१९५० का श्रम-सम्बन्ध विधेयक — (The Labour Relations Bill 1950)

उल्लिखित धिनियमों से जो अनुभव हुए उसको देखते हुए सरकार ने औद्योगिक विवादों सम्बन्धी विधान में महत्वपूर्ण परिवर्तन करने के विषय में गम्भीरतापूर्वक विचार किया और इसके परिणामस्वरूप १९५० का श्रम सम्बन्ध

विधेयक संसद में प्रस्तुत किया गया। इस धम सम्बन्ध विधेयक में नये उपायों का मार्ग प्रदत्त किया और विवादों को सुमन्यन के लिए प्रांतरिक एवं बाह्य व्ययस्था पर जोर दिया। स्वामी प्रादेश सामूहिक सौदाकारी छत्ती काम मन्दन नीति प्रादि के लिए कई प्राधिकारियों की नियुक्ति के लिए उपसम्भवे। किसी समझौते सामूहिक करार, प्रादि तथा पंचाट का उन्मादन करने प्राधका किसी भी प्राधक हड़ताल तथा तालाबन्दी को घोषित करने पर कठोर दण्ड की व्यवस्था थी। उपयुक्त मामलों में सरकार को किसी भी उन्मादन का धपने नियंत्रण में साने का प्राधिकार था।

इस विधेयक को कई प्राधकारों पर कठोर प्राधोधना की गई और सरकार ने विधेयक के पास होने में बिलम्ब किया तत्पश्चात् यह व्यपगत (Lapse) हो गया। श्री वी वी गिरि के केन्द्रीय सरकार के धम मन्त्री के रूप में धाने पर औद्योगिक सम्बन्धों की समस्यार्यों के प्रति बिस्कुस बुरा दृष्टिकोण धपनाया गया। जुलाई १९३२ में सरकार ने विधेयक की धाराओं के सम्बन्ध में जनमत जानने के लिए एक प्रस्तावनी

तयार की और इसका परिचासन भी किया। इसक ठपर जो भी मत प्राण जन पर पशूबर १९३० में मंत्रीमाल में हुए बिदस धम मन्मेसन में बिचार किया गया। श्री वी वी गिरि ने ऐच्छिक समझौता तथा ऐच्छिक विवाहन के साधनों पर धपना

हड़ निरबान प्रकट किया। सम्मेसन ने औद्योगिक विवादों के बिभिन्न स्वरूपों पर बिचार करने के लिए ७ सरस्यों का एक समिति की नियुक्ति की। डिसेम्बर १९३२ में समिति की समा हुई जिसमें समस्या से सम्बन्धित बिभिन्न महत्त्वपूर्ण विधयों पर बिचार बिमर्ष किया गया। फरवरी १९३३ में धम मन्त्रियों के सम्मेसन में इस विधेयक पर पुन बिचार किया गया। मार्च १९३४ में कांघेरी संमधीय दल ने इस बिलम्ब

पुन बिसम्ब कर दिया गया। मार्च १९३४ में कांघेरी संमधीय दल ने इस बिलम्ब पर धसंठोप प्रकट किया। ३१ मार्च १९३४ को श्री गिरि न संसद में बोपणा की कि एक व्यापक धम सम्बन्धी विधेयक की रूपरेखा तयार की जा चुकी थी और संसद में प्रस्तुत होने से पूर्व केबस मंत्रीमन्डल की स्वीकृति लेनी थी। परन्तु धीम ही

श्री गिरि ने स्थापपय से विना और धम सरकार ने इस विधय पर नया बिधान प्रस्तुत करने के स्थान पर सप् १९३७ के औद्योगिक विवाद प्राधिनियम में संशोधन कर दिया है। इस संशोधन का उन्नेत ठपर किया जा चुका है।

प्रथम पंचवर्षीय प्राधोजना में प्राधोजना प्रायोग ने अनुमन किया कि औद्योगिक शांति की दृष्टि से कई औद्योगिक विवादों में बधानिक व्यवस्था में विधेयक योगदान नहीं दिया था। इसका बिचार था कि निर्णय देने में प्राधबिक डेरी होती थी और कई मामलों में निर्णय परिस्थिति की बास्तविक प्राधदयकता से बुर हट गए थे। उसने यह भी अनुमन किया कि औद्योगिक धीर धम स्थायासयों में कार्य का स्तर कम हो गया है और काम क निपटाने की पति भी मंर थी। धम प्राधोजना प्रायोग का मत था कि बिवाद को निपटाने का सबसे उपयुक्त साधन किसी भी धीसरे

पत्र के हस्तक्षेप के बिना धर्मिकां एवं मामिकों के बीच स्वयं ही छापों पर आपसी समझौता करना था। धायोम धर्मोपीय अधिकरण के पत्र में नहीं था। उनके अनुसार औद्योगिक न्यायालयों या अधिकरणों के निर्णय के विरुद्ध कोई धर्मिक नहीं होनी चाहिए सिवाय उन विशेष मामलों के जिनमें निर्णय विपरीत तथा स्वाभाविक न्याय के विरुद्ध मान्य हो। परन्तु धायोम का मत किसी ऐसी व्यवस्था के विरुद्ध नहीं था जिससे कुछ विशेष विवादों को निपटाने में न बिसम्बद्ध हो और न अधिक व्यय हो। औद्योगिक छापों का सुझाने के लिए जो भी व्यवस्था की जाए वह निम्नलिखित पाँच सिद्धांतों पर आधारित होनी चाहिए — (क) वैधानिक विधियों और कार्यवाही की औपचारिकता (technicalities) जितनी भी कम हो सके कम कर देनी चाहिए। (ख) प्रत्येक मामले की प्रकृति और महत्त्व के अनुसार धर्मिक और सीमा निपटारा होना चाहिए। (ग) न्यायालयों या अधिकरणों से केवल प्रशिक्षण पाए हुए विशेषज्ञों की नियुक्ति होनी चाहिए। (घ) धमाधारण मामलों को छोड़कर उन न्यायालयों के विरुद्ध धर्मिक कम कर देनी चाहिए। (ङ) पाँच नईसे को सीमा से सीमा सागू करने की व्यवस्था होनी चाहिए।

धायोम ने एकपक्षता को साने के लिए और अधिकरणों को मार्ग बदल के लिए आपसी सम्झौतों को नियमित करने वाले कुछ प्रावर्ध नियमों की स्थापना की सिफारिश भी की थी। सरकार, धर्मिक और मामिक की निवर्तीय प्रतिनिधि समितियों द्वारा इस प्रकार के प्रावर्ध नियम बनाने की व्यवस्था की और किसी मत भेद होने की अवस्था में सरकार को विशेषज्ञों के परामर्श पर निर्णय लेकर इस निर्णय को न्यायालयों या अधिकरणों पर लागू करने का सुझाव था।

द्वितीय पंचवर्षीय धायोजना में धायोम ने संकेत किया है कि औद्योगिक संघर्षों का मुख्य उद्देश्य औद्योगिक शांति स्थापित करना होना चाहिए जिसके लिए पारस्परिक बाधा समझौता और ऐच्छिक पंच-नईसे का उपयोग किया जा सकता है और दुस्साध्य या हठी (intractable) मामलों में अनिवार्य पंच-नईसे का प्रयोग भी किया जा सकता है। औद्योगिक सम्बन्ध में अगर काम रुक जाता है तो इस बात की आवश्यकता लोक प्रसिद्धि हो जाती है। इसके प्रतिरोध की आवश्यकता है। इस प्रतिरोध के लिए ऐसे उद्योग संघों में जिनमें बहुत समय से धातिपूर्वक काम करने की परम्परा पड़ी हुई है, उन बातों के अध्ययन की आवश्यकता है जिनके कारण औद्योगिक शांति या एकता भा जाती है। धायोम ने औद्योगिक शांति स्थापित करने की दृष्टि से रोक धाम के साधनों को धर्मिक महत्त्व प्रदान किया है। इसने यह भी सुझाव दिया है कि विवाहन निर्णय तथा समझौतों प्रादि को न मानने और न लागू करने की अवस्था में कठोर दण्ड की व्यवस्था की जाए। उत्सर्जन की अवस्था में निर्णयों को लागू करने का उत्तरदायित्व किसी उपयुक्त अधिकरण को होना चाहिए जिस पर दोनों पक्षों को सीधी पहुँच हो। यह सुझाव दिया गया है कि केन्द्रीय राज्यों और निजी संस्थानों में सजी दरों पर एक स्थायी संयुक्त

परामर्श दातो व्यवस्था होनी चाहिए। सत्त्वानो में इन उद्देश्य में मानिक मजदूर मितितिया कार्य कर सकती है और उनके प्रभावपूर्ण काम करने के लिए उनके उत्तरदायित्वों तथा अधिक संघों व उत्तरदायित्वों व बीच सीमा स्पष्ट कर देनी चाहिए। समुक्त परामर्शदात्री बोर्ड का भी पूर्णरूप में उपयोग किया जाना चाहिए। प्रामाण्य के अर्थ और प्रवृत्ति में अधिक महत्त्व को बहुत महत्त्व प्रदान किया है जो कि प्रवृत्ति परिपक्वों के द्वारा प्राप्त हो सकता है जिसमें प्रवृत्तिको तकनीकी विभागों एवं धर्मियों के प्रतिनिधि हों। इस प्रकार की परिपक्वों का सम्बन्धन में सम्बन्धित सभी मामलों पर विचार-विमर्श करना चाहिए जबकि उन मामलों का छोड़कर या सामूहिक मौलाकारी के अन्तर्गत आते हैं।

ठीकरी पंचवर्षीय आयोजना में यह कहा गया है कि औद्योगिक सम्बन्धों के विकास में अनुशासन संहिता को आधार-दिशा माना जा सकता है। पिछले तीन वर्षों में अनुशासन संहिता व कार्यों से उसकी उपयोगिता सिद्ध हो चुकी है। इसके अन्तर्गत जो मानिकों और श्रमिकों के उत्तरदायित्व हैं उनको उन्हें सभी भाति समझ लेना चाहिए और यह सभी मानिकों और श्रमिकों पर लागू होना चाहिए। अनुशासन संहिता औद्योगिक सम्बन्धों के विषय में एक महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकती है। जिन आचार्यों पर यह संहिता बनी है उनको हृदय करनी चाहिए। प्रामाण्य में इन और भी संकट किया गया है कि एष्टिक विवाचन को लागू करने के लिए अधिक प्रयत्न किए जाएं। सरकार को क्षेत्रीय और औद्योगिक स्तर पर विवाचकों की एक तामिका (Panel) बनाने के लिए अग्रणीय कार्य करना चाहिए।

यह सब सुझाव बहुत कामदायक हैं। परन्तु सुझावों को आयोजना नहीं कहा जा सकता। आवश्यकता तो इस बात की है कि इन सुझावों को कार्य रूप में परिणत किया जाय अन्यथा कोरी आशाओं में कुछ प्राप्ति नहीं हो सकेगी।

त्रिदलीय श्रम व्यवस्था — (Tripartite Labour Machinery)

सरकार की अर्थ नीति को निर्धारित करने अथ सम्बन्धी आदर्श नियम तथा स्तर निश्चित करने तथा मानिकों एवं श्रमिकों से सम्बन्धित अर्थ महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार करने के लिये त्रिदलीय व्यवस्था की महत्ता को अर्थ सूची दोनों में स्वीकार कर लिया गया है। बान्धव में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का पुरा डोका इस त्रिदलीय विचार-विमर्श के मिटान्त पर ही आधारित है। भारतवर्ष में सरकार ने सन् १९४० में ही सर्वे अर्थ एक त्रिदलीय श्रम व्यवस्था का व केवल विकास किया है वरन् उसे पूर्ण भी किया है। यह अर्थ नहीं वताहकार संस्था बन गई है। इसका एक रूप भारतीय श्रम सम्मेलन है जिसको नाबारण्डया त्रिदलीय श्रम सम्मेलन भी कहा जाता है। इसका पहले परिपूण (Plenary) श्रम सम्मेलन कहते थे। इस श्रम सम्मेलन में जो कि वर्ष में एक बार होता है अर्थ से सम्बन्धित सभी पक्षों अर्थात् केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों तथा मानिकों और श्रमिकों के सर्वों को प्रतिनिधित्व दिया जाता है। सम्मेलन में स्थायी श्रम समितियाँ तथा औद्योगिक समितियाँ स्थापित

की है जिनकी सभाएँ साधारणतया होती रहती हैं। यह सम्मेलन जब ऐसी सत्ता बन गई है जिसकी सभायाँ में बिधान सभा में ध्यान से पूरा श्रम कानून के लिए सुझावों तथा श्रम-नीति और श्रम प्रशासन में सम्बन्धित विषयों पर विचार-विमर्श किया जाता है। इस प्रकार विधान सभा में श्रम कानून के पास होने में सरसता हो जाती है क्योंकि प्रस्ताव की प्रथम रूपरेखा तैयार करने से पूरा मतभेद के सभी पहलुओं पर विचार-विनिमय हो जाता है और सभी पक्षों को धपना-भपना दृष्टिकोण रखने का अवसर मिल जाता है। श्रम-मंत्रियों का सम्मेलन भी इस व्यवस्था से सम्बन्धित है मद्यपि यह त्रिदलीय नहीं है। केन्द्र तथा राज्य में त्रिदलीय समाहकार समितियाँ भी स्थापित की गई हैं तथा सभी समझौता व्यवस्था के लिए एक केन्द्रीय समाहकार समिति की भी स्थापना की गई है।

गत वर्षों में इन सम्मेलनों और स्थायी श्रम समितियों की समय-समय पर सभाएँ होती रही हैं और श्रम नीति से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर निर्णय लिए गए हैं। सन् १९४८ में एक केन्द्रीय श्रम सलाहकार परिषद की स्थापना की गई जिसमें उच्चतम मजदूरी तथा श्रम विभाजन पर विचार के लिए विशेषज्ञों की दो समितियाँ नियुक्त की गईं। सन् १९५१ में मासिकों और श्रमिकों के बीच सुलह करने के लिए एक संयुक्त उद्योग और श्रमिक सलाहकार बोर्ड स्थापित किया गया। सन् १९५४ में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघठन के प्रस्ताव तथा सिफारिशों की जांच करने के लिए तीन सदस्यों की एक त्रिदलीय समिति बनाई गई। आयोजना आयोग ने भी श्रम नीति पर परामर्श के लिये श्रम विशेषज्ञों की एक समिति बनाई है। केन्द्र तथा राज्यों में कई श्रम सम्मेलनों तथा समिति की अनेक बैठकें हुई हैं जिनमें महत्वपूर्ण विषयों पर विचार-विमर्श हुआ है। इससे मासिकों सरकार और श्रमिकों की एक छूटने के दृष्टिकोण को समझने में बहुत सहायता मिली है। भारतीय श्रम सम्मेलन का १६ वाँ अधिवेशन अक्तूबर १९६१ में बंगलौर में हुआ तथा श्रम मंत्रियों के सम्मेलन का १७ वाँ अधिवेशन तथा स्थायी श्रम समिति का १९ वाँ अधिवेशन भी १९६१ में हुए। उत्तर प्रदेश में श्रमिकों के कल्याण के लिए राज्य त्रिदलीय श्रम सम्मेलन कानपुर त्रिदलीय श्रम सम्मेलन स्थायी श्रम समिति तथा अनेक सलाहकार समितियाँ हैं।

औद्योगिक विराम सन्धि प्रस्ताव — (Industrial Truce Resolution)

यहाँ औद्योगिक विराम सन्धि प्रस्ताव का भी उल्लेख कर देना उचित होगा। यह प्रस्ताव दिसम्बर १९४७ में सरकार, मासिकों और श्रमिकों के एक त्रिदलीय सम्मेलन द्वारा पारित हुआ था। इसका कारण यह था कि १९४७ में बहुत अधिक संख्या में हड़ताएँ हुई थीं जिनसे उत्पादन बहुत गिर गया था और चारों ओर 'उत्पादन कटो या नरो' की ही पुकार थी। देश की धर्म व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने रखने के लिए उत्पादन बढ़ाने के हेतु इस प्रस्ताव में मासिकों और श्रमिकों में सहयोग और मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की आवश्यकता पर बल दिया गया था। इस प्रस्ताव में मासिकों और

धमिकों से इस बात का अनुरोध किया गया था कि वह इस बात के लिए सहमत हो जाएं कि तीन वर्ष तक औद्योगिक शक्ति बनाये रखेंगे और हड़तास तासाबंदी तथा उत्पादन-सूची के साधनों को न अपनायेंगे। धमिकों को उद्योग में काम की महत्ता और धमिकों के लिए उचित मजदूरी और प्रशिक्षण कार्य की शर्तों की आवश्यकता से स्वीकार करना था। धमिकों को भी राष्ट्रीय धाय में दृष्टि करने के अपने तर्कों को समझना था जिसके बिना उनके रजन-सहन के स्तर में स्थायी उन्नति ही हो सकती थी। प्रस्ताव में यह भी कहा गया था कि विवादों को सुलझाने में

.. धमिकों और धमिकों दोनों का ही दृष्टिकोण यह होना चाहिए कि उत्पादन में किसी प्रकार की बाधा डालने बिना पारस्परिक बातसाम से मामला सुलझा सें। उपभोक्ताओं के हित के लिए यह सुझाव था कि उद्योगों के प्रत्येक साम को नए तपाकर और अन्य साधनों से रोका जाय। अन्य सुझाव प्रस्ताव में यह थे कि धमिकों को उचित मजदूरी मिलने का प्रबन्ध होना चाहिए। प्रत्येक औद्योगिक संस्थान में अनुपस्थान (Maintenance) और बिस्तार के लिए उचित बन धारणित करने के पश्चात् इस बात की भी व्यवस्था होनी चाहिये कि धमिकों को उचित मजदूरी मिले और सगी हुई पूंजी पर भी उचित लाभ हो।

सम्मेलन ने इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए निम्नलिखित साधनों की सिफारिश की — (क) दाम्निपुर्ण उपायों से बिबारों को सुलझाने की व्यवस्था का पूर्ण उपयोग किया जाना चाहिए और जहाँ ऐसी व्यवस्था न हो वहाँ पर तुरन्त ही ऐसी व्यवस्था हो जानी चाहिए। (ख) केन्द्रीय क्षेत्रीय उत्पादन इकाई समितियाँ तपाकर धमिकों को औद्योगिक उत्पादन के सभी मामलों पर सम्मिलित किया जाना चाहिए। (ग) प्रत्येक औद्योगिक संस्थान में दिन प्रति दिन के बिबारों को समझने के लिए प्रबन्धकों और धमिकों के प्रतिनिधियों की मासिक मजदूर समितियाँ बनाई जानी चाहिए। (घ) धमिकों के जीवन स्तर को सुधारने के लिए शैक्षिक धमिकों के आवास पर तत्कास ध्यान देना चाहिए और आवास की त धरकार, मासिकों और धमिकों तीनों के ही द्वारा ही प्रबन्धित किया जाना चाहिए।

धर्मस १९४८ में भारत सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति की घोषणा में इस प्रस्ताव को स्वीकार किया और इस हेतु एक विशेष धमिकारी की नियुक्ति भी की। यह भी निश्चय किया गया कि प्रत्येक मुख्य उद्योग के लिए एक केन्द्रीय समाहकार परिषद तथा अनेक समितियों की स्थापना की जाये। विशेष प्रश्नों पर विचार करने के लिए उप-समितियों को भी नियुक्ति की जाये। धर्मस १९४८ में हुए भारतीय

धम सम्मेलन के नवें अधिवेशन में मासिकों और धमिकों ने भी प्रस्ताव को स्वीकृत कर लिया। नेशनल धमिक भारतीय धमिक संघ कांग्रेस ने ही इसको स्वीकार करने में कुछ घर्षे रली। विभिन्न राज्य सरकारों ने इस प्रस्ताव को कार्यान्वित करने के

सिए प्रयत्न किए और मानिक-मजदूर व उत्पादन समितियों भ्रम अधिकरणों विचारकों और भ्रम सलाहकार परिषदों आदि की नियुक्ति की। कुछ राज्यों ने औद्योगिक विवादों का निबटाने के लिए कुछ भ्रम से अपने प्रतिनियम बनाये जिनका उद्देश्य ऊपर किया जा चुका है। इस प्रस्ताव के परिष्कारस्वरूप ही उचित मजदूरी पृथी पर उचित साम लाभ विभाजन की योजनाओं आदि पर विचार करने के सिधे विधेयक समितियों की नियुक्ति की गई। संसद में एक उचित मजदूरी विधेयक भी प्रस्तुत किया गया था परन्तु लाभ विभाजन के सिधे अभी तक कोई पग नहीं उठया गया है। धारा ७ व्यवस्था की दृष्टि से सरकार ने विभिन्न योजनाएँ कार्यान्वित की हैं। विवादों को रोकने और उनके निबटाने के सिधे सरकार के प्रयत्नों की विवेचना ऊपर की जा चुकी है। विभिन्न राज्यों में बहुत से उद्योगों के सिधे मजदूरी बोर्डों की स्थापना हो चुकी है।

इसमें संवह नहीं है कि औद्योगिक विराम सधि प्रस्ताव से एक स्वस्व वातावरण उत्पन्न हो गया और औद्योगिक विवादों की संख्या में भी कुछ कमी दिखाई दी। इसने देश के हित के सिधे औद्योगिक शान्ति की आवश्यकता पर जोर दिया। परन्तु माँकों को देखने से स्पष्ट है कि विवादों में कोई प्रगंतीय कमी नहीं हुई। यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि बाहे परिस्थितियाँ कहीं भी कठिन क्यों न हों जब तक राष्ट्र की सुरक्षा को ही खतरा न हो तब तक मानव के मूल्य पर उत्पादन में वृद्धि करना प्राथमिकीय है। इस प्रकार स उद्योग में शान्ति स्थापित करने से पूर्णपरित्यों की स्थिति टक होती है। और यमिकों का और अधिक धोपल होता है। घट व्यावहारिक रूप में औद्योगिक विराम सधि प्रस्ताव अधिक प्रभावशाली सिद्ध नहीं हुआ। 'इस्टर्न इकोनोमिस्ट' ने लिखा था कि यदि यमिक कारखाने में घाने पर निरीक्षक की घाँवों में बंधी ही पहले की भयानकता देखता है और पर सौटने पर बड़ी पम्दमी व निर्धनता आदि दृष्टिबोध होती है और जब वह इस बात का अनुभव करता है कि उसके पैसे की कम-बलि दिन प्रतिदिन कम होती जा रही है तो वह इस बात की कोई परवाह नहीं करेगा कि उसकी घोर से किसी ने किसी सधि पर हस्ताक्षर किये हैं या नहीं। घट उद्योग में शान्ति स्थापित करने के सिधे इस प्रकार के प्रस्तावों में घासा व्यक्त करने के स्थान पर औद्योगिक विवादों को उत्पन्न करने वाले कारणों का समाधान और उनका निबटाना और रोकने के सुरक्षात्मक बाधन अपनाए जाने की अधिक आवश्यकता है।

सुलह तथा विवाधम पर टिप्पणी

समझौता, विवाधन और मध्यस्थता - (Conciliation, Arbitration and Mediation)

औद्योगिक विवादों को शांतिपूर्वक ढंग से सुलझाने के सुलह तथा विवाधन की मान्यताप्राप्त साधन हैं। सुलह व्यवस्था वह विधि है जिसमें यमिकों और मानिकों मजदूरी और प्रदाय मूल्य के बंधन रहित।

क प्रतिनिधि तीसरे व्यक्ति या व्यक्तियों क समग्र इस हनु साब जाय है कि उनको पारस्परिक बातालाप द्वारा समझीना कराने क मिग प्रेरित किया जा मटे। दूसरा साधन मध्यस्थता है। मध्यस्थता म किसी बाहरी व्यक्ति को उन समय हस्तक्षेप करना पड़ता है जबकि साधारण मुसह सोड द्वारा बातालाप क प्रयत्न अनफल होन लगत है। मध्यस्थ कोई व्यक्ति या व्यक्तिगत अधिपार क सार्ह भी हा मकता है। मुसह तथा मध्यस्थता क यह साधन इस बात का प्रयत्न करने है कि सम्बन्धित पक्ष आपस म मिलकर पारस्परिक बातसािन और वाद-विवाद द्वारा घपन मगनेशों का शांतिपूर्वक निपटारा कर म। विवाहन इस बात का साधन है कि किसी भी विवादपूर्ण विषय पर एक तीसरे पक्ष द्वारा एक निश्चिन नियुय या विवाहन प्राप्त कर लिया जाय। इस प्रकार विवाहन व्यवस्था म प्रलय स एक प्राधिकारी होता है जो कुछ निश्चित नियमों क आधार पर औद्योगिक विवादों पर घपना

मुसह और विवाहन की यह दानों विधिया ऐश्वर्य या घनिवार्य शोनों ही हो सकती है। यदि राज्य कुछ विशेष प्रकार के विवादों को घनिवार्य रूप न मुसह या विवाहन को सौंपने के सिर नियम बना दे तो यह विधिया घनिवार्य न जानी है। यह मापन ऐच्छिक इस हट्टि म हाण है कि मरफार विवादो को मुसह या विवाहन का प्रस्तुत करने के सिग कथम सुविधाग प्रदान कर दती है। इस प्रकार की घपनस्था स्थामी तदय (ad hoc) साधारण ना विधिष्ट मन्था द्वारा हो सकती है। विवादों के निपटारे में इन विधियों की पयोगिता घत्याधिक है।

प्राध्मर पीयू न कहा है कि हड़तास और तासावदी क कारण कब दस और पूरी घुन उद्योग या उरक किसी भी माग म बकार हो जाते हैं तो राष्ट्रीय सामाज कम हा जाता है और घायिक कल्याण म घति पड़सती है। इन विवाधा के कारण उत्पादन में बौ हानि हाती है उसका प्रभाव कबस उनी उद्योग पर नहीं पडता जिसम विवाह हाता है बरम् इस हानि का प्रभाव दूर दूर तक पड़सता है। इसका कारण यह है कि यदि किसी महत्वपूर्ण उद्योग में काम बर हो जाता है तो उसके और उद्योगों के कायों में भी घो प्रकार स रकाबत पड़ जाती है। एक प्रभाव तो यह पडता है कि जिस उद्योग में काम रत जाता है उन उद्योग के व्यक्तियों की माग कम हा जाती है और फिर दूसरे उद्योगों की बीबों की माग भी कम हा जाती है। दूसर पयर बह उद्योग जिसमें काम रक गया है ऐसा उद्योग है जिसकी वनाई हुई बीबें दूसरे उद्योगों में काम घाती है तो इसका घर्व यह हुआ कि दूसरे उद्योगों म कबसा माल या सामान की कमी हो कायमी। यह सब प्रभाव इस बात पर निमर करता है कि किस प्रकार की बीब का उत्पादन हा रहा है। परन्तु कुछ सीमा तक घयी प्रकार क कायों के रकन स राष्ट्रीय सामाज का अग्रत्यथ रूप से घति पड़सती है क्योंकि इनका प्रभाव न कबस प्रत्यस रूप से हानिकारक होना है बरम् दूसरे उद्योगों में भी काम रकने स हानि पड़सती है।

यह सच हो सकता है कि औद्योगिक विचारों के कारण जो उत्पादन में घटवट कमी आती है वह तत्कालीन कमी से धामतीर पर कम होती है। इसका कारण यह है कि एक स्थान पर कार्य का रुकन से धर्म स्थानों पर कार्यों में वृद्धि हो सकती है तथा उसी संस्था में जिनमें कार्य रुक गया है वहाँ में धर्मिक कार्य हो सकता है। इससे धर्मिरिक्त हड़तालों और ताताबंदियों से जो प्रत्यक्ष रूप से हानि होती है वह कमी कमी इस बात से पूरी हो जाती है कि इनके कारण मशीन धर्मि म कुछ सुधार कर लिए जात हैं और कार्य का संग्रह भी धर्मि हूँ जाता है। परन्तु यदि सब बातों को ध्यान में लिया जाय तो यह मानना पड़ेगा कि उन उद्योगों में जिनमें कार्य रुक जाता है वह कास्पतिक साम इतना नहीं होता जितनी उत्पादन की हानि होती है तथा सम्बन्धित उद्योगों में भी कच्चा माल न मिलने से प्रभाव पड़ता है और उत्पादन पूर्ण रूप से नहीं हो पाता। इसके धर्मिरिक्त धर्मिकों को भी स्वामी रूप से हानि पहुँचती है। उनके औद्योगिक जीवन में टकाबट आने से उनकी धर्म कम हो जाती है। स्वामी रूप से उन्हें श्रम बना पड़ता है और जाना धर्मि न मिलने के कारण उनका बच्चों की सहूल भी खराब हो जाती है। यह हानियाँ कहाँ तक हो सकती हैं इसकी सीमा इस बात पर निर्भर है कि किस वस्तु का उत्पादन बंद हो गया है उसका उपयोग गरीब लोग कहाँ तक करते हैं और उसका जीवन स्वास्थ्य और समाज में सुरक्षा और शांति के लिए क्या महत्व है। परन्तु कोई भी बात हो औद्योगिक विचारों से राष्ट्रीय सामाज्य में सब बातों को देखते हुए जो हानि होती है वह बहुत गम्भीर है इसी कारण औद्योगिक शांति बनाये रखने के लिए सामाजिक सुधारक सदा कोई व्यवस्था करने और उसे हड़ करने के लिए उत्पर रहते हैं। परन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि केवल तकनीकी बातों पर ही ध्यान न दिया जाए क्योंकि औद्योगिक तथा धर्मराष्ट्रीय तातालाप में किसी व्यवस्था का होना इतना महत्वपूर्ण नहीं होता है जितना दुधरों के लिए धूम भावनाओं और धर्मिरिक्त विस्वात का प्रभाव होता है। फिर भी इस बात का कुछ तो धर्मि पड़ता ही है कि किस प्रकार की व्यवस्था की गई है और कमी कमी तो मासिकों और धर्मिकों में एक दूसरे के प्रति जो हर्मिकोण होता है उस पर प्रभाव डाल कर, और प्रत्यक्ष रूप से भी इस व्यवस्था का महत्व धर्मिक हो जाता है। इस कारण औद्योगिक शांति को बनाए रखने के लिए जो व्यवस्था की जाए उसके लिए जो भी समस्यार्थ सामन आती है उनका धर्म्यन महत्वपूर्ण है*।

भारतवर्ष में औद्योगिक विचार निरन्तर तीव्र धर्मि से बढ़ते जा रहे हैं। उनका धर्मि-जल्दी हाना और उनसे और औद्योगिक और सामाजिक धर्म्यवस्था धर्मिता ऐसी बातें हैं जो चिन्ता का धर्म्य बन आती हैं। किसी विचार विधाय के हर्मिकोण से हड़ताल धर्मि ताताबंदी का धर्म्यन चाहे किया जा सकता हो परन्तु धर्मिरिक्त सामाजिक हर्मिकोण से धर्मिष्ठ धर्मिर्जन जाने के लिए यह हानिकारक धर्म्यन है।

मत कोई भी प्रगतिशील नीति हो उसका उद्देश्य यह होना चाहिए कि इस प्रकार के धौघोगिक बिबादों को कम किया जाये। मत इइतासों धीर तासावदी को रोकने धीर निबटाने के साधनों की पर्याप्त भावश्यकता है। मुमह तथा बिबाधन इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए दो महत्वपूर्ण साधन हैं।

मुमह तथा बिबाधन से मुम उद्देश्य यह होता है कि एक ऐसी व्यवस्था कर दी जाए जो काम रोकने के विकल्प (Alternative) न हो धीर जिस सम्बन्धित पक्षों के हितों के लिए जो सामूहिक बिबाधन हो जाते हैं उनका निपटारा किया जा सके — बिबाधनकर ऐसे बिबादों का निपटारा हो सके जो धार्मिक बिषयों पर मतभेद उत्पन्न कर देते हैं। ऐसे बिषय मजदूरी काम के घंटे धीर रोजगार की व्यवस्थाएं होती हैं जो साधारणतः सामूहिक करारों द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। साधारणतः कार्य ठक सकता है जब सम्बन्धित पक्षों में बाटा असफल हो जाती है। मान्य व्यवस्था द्वारा निबटारे के प्रयत्नों में असफलता होने पर ही काम बन्द करना अनिश्चित साधन के रूप में अपनाया जाता है। इइतासों तथा तासावदी की धिक्रता धारस्वरिक बाटाभाप धीर समझौता साधनों की असफलता को प्रकट करती है। मत इस उद्देश्य के लिए एक उचित तथा समझ सोज कर व्यवस्था करने की धति भावश्यकता है।

प्रो० पीगू के धनुसार धौघोगिक धान्ति की विधिया कई प्रकार की हो सकती हैं — जैसे मुमह धीर बिबाधन के लिए ऐबिदन व्यवस्था मध्यस्थता तथा धबपीडक हस्तग्रेप (Coercive Intervention)। मानिकों धीर धमिकों के प्रतिनिधि द्वारा बनाये गये स्टाई बोर्डों से धौघोगिक धान्ति स्थापित की जा सकती है। इन बोर्डों का कार्य केवल समझौता कराना ही नहीं होना चाहिए बरन् कार्य की दशाओं मजदूरी देने के तरीकों तकनीकी शिक्षा धौघोगिक धनुसधान तथा कार्य प्रक्रियाओं धारि में उधति करना भी होना चाहिये। यदि मानिक धीर धमिकों के प्रतिनिधि इन समझौतों पर संयुक्त रूप से बिबाद करते तो वे एक दूसरे को प्रतिस्पर्धी मानने के स्थान पर सहयोगी मानने समेंगे। इसका परिणाम यह होगा कि यदि कभी मत भेद भी होया तो न केवल बाटाभाप का बाटावरण धबध्ता होगा वरन् दोनों पक्षों को यह ध्यान रहेया कि वह कुछ ऐसी सीमा का उत्संभन न कर जाए जिससे उनके हितों के लिये जो संगठन बना हुआ है उधो को लति पहुँके। इस प्रकार मुमह के सिने जो ऐबिदन व्यवस्था की जाती है उसमें धौघोगिक परिपद धीर मानिक मजदूर समितियाँ सम्मिलित की जा सकती हैं। प्रो पीगू ने इस धोर में संकेत किया है कि इन बोर्डों धीर परिपदों में महत्वपूर्ण बात यह है कि दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों में बिदेप कर धमिकों के प्रतिनिधियों में धपन धपने पक्षों का बिदवाव होना चाहिए। तकनीकी बाटों धीर तकनीक इन बोर्डों के सम्मुख नहीं धाने चाहिए धकि कोई ऐसी बात न हो जिससे कुछ तनाब हो तथा बाटाभाप में मुकदमे बाबी की भावना नहीं होनी चाहिये बरन् समझौते की भावना पर बस देना चाहिए।

* A. C. Pigou — Economics of Welfare

जहाँ तक सम्भव हो नियम भी केवल बहुमत से न हाकर एकमत से होने चाहिए। बाहों की बढक भी मुक्त होनी चाहिए ताकि जनमे स्पष्टता से विचार विमर्श हो सके।

यह भी प्रत्य उठता है कि औद्योगिक मान्दिक न सिधे जो ऐच्छिक व्यवस्था की जाती है उसमे प्रत्य विवाचन होना चाहिये या नहीं। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मुसल बाद के प्रापसी समझौते की प्रवेसा विवाचन व्यवस्था से अधिक भूमिस्ताहट तथा बुरी भावनाएँ हो सकती हैं। इसलिये जब तक प्रति प्राचरयक न हो विवाचन का सहारा नहीं मना चाहिए। परन्तु यदि विवाचन के सिधे कोई व्यवस्था न की जाय तो प्रापसी मतभेद का कारण हड़तासे घोर तासाबन्धियाँ हो सकती हैं जिनसे जन की हानि घोर प्रापस में बुरे सम्बन्ध पैदा हो जाते हैं। यदि पहले से ही किसी विवाचक की व्यवस्था कर ली जाती है तो इसका तात्पर्य यह होता है कि शान्ति से दोनों पक्ष इस बात का निर्णय कर लेते हैं कि भविष्य में कोई कार्य उत्पन्नता से नहीं करेंगे। परन्तु विवाचन की कुछ प्रप्रत्यक्ष रूप से हानियाँ भी हैं। प्रथम तो दोनों पक्षों के प्रतिनिधि प्रापसी समझौते की घोर प्रयत्न करने में बन्नीरता नहीं दिखाते। वे दूसरे पक्ष को कोई भी रिघायत देने में हिचकिचाते हैं ताकि कहीं ऐसा न हो कि विवाचन के समय उनके सुझाव का उन्हीं के लिखाफ प्रयोग किया जाय। दूसरे प्रापसी मत भेदों की संख्या विवाचन व्यवस्था होने से अधिक बढ़ सकती है क्योंकि काय बन्ध होने का डर न रहने से कुछ न कुछ लाभ हासिल करने के सिधे मतभेद अधिक उत्पन्न हो सकते हैं। इसलिये कोई नियमित रूप से विवाचन व्यवस्था करने के स्थान पर विवाचन तक होना चाहिए जब दोनों पक्ष इस बात के सिधे सहमत हों। जो भी विवाचक हो वह अपनी निष्पक्षता एवं कार्य समता के सिधे प्रसिद्ध होना चाहिए।

यह हो सकता है कि ऐच्छिक व्यवस्था हड़तासे घोर तासाबन्धियों की रोका-धाम करने के सिधे सजी परिस्थितियों में सहायक सिद्ध न हो। ऐसी प्रवस्था में मंत्रीपुर्सा मध्यस्थता का प्रापन सामने आता है प्रर्सा दोनों पक्षों में मतभेद के निपटारे के सिधे किसी बाहरी व्यक्ति को हस्तक्षेप करना चाहिये। जब कभी कोई मतभेद बढ़ जाता है घोर उत्स मुझे तौर पर सर्वय उत्पन्न हो जाता है तब दोनों पक्ष उसको धारण सम्मान का प्रदान बना लेते हैं घोर मुकने से अपनी हीनता सम्झते हैं। ऐस समय से मध्यस्थ के प्रदर्शनों द्वारा मामला सुलभ सकता है घोर बिना सम्मान में हानि अनुभव किए हुए कोई भी पक्ष धुक सकता है। यदि मध्यस्थ समझौता या भी कटा पाय तब भी वह इस बात में तो सफल हो सकता है कि दोनों पक्ष मध्यता करने के स्थान पर विवाचन द्वारा निर्णय करने के सिधे सहमत हो जाएँ। मध्यस्थता की जो व्यवस्था होती है उसमें कोई बाहरी प्रसिद्ध व्यक्ति हो सकता है या कोई घोर मरकाटी या मरकाटी बोर्ड हो सकता है। इन सब का अपने-अपने क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य होता है परन्तु मध्यस्थता व्यवस्था से परस्पर शान्ति बनाये रखने की व्यवस्था में रकाबत नहीं पड़नी चाहिये घोर उद्योगों में प्रात्यरिक बोर्डों की स्थापना में सहयोग मिलना चाहिये।

अवपीठक हस्तक्षेप — (Coercive Intervention)

द्विज प्रकार कभी कभी ऐच्छिक सुसह व्यवस्था स प्राप्त मत्तमेव नही सुसह प्राप्त उची प्रकार सम्बन्ध के प्रयत्न भी असफल हो सकते है । एम इलिन मत्तमेव के बार बार हाने के कारण यह सोचना पड़ता है कि राज्य द्वारा जो अवपीठक अधिकार है उनका प्रयोग करना चाहिये या नही । राज्य के इन प्रकार के हस्तक्षेप को प्राचीन में 'अवपीठक हस्तक्षेप' (Coercive Intervention) कहा है । यह बार प्रकार से हो सकता है । सबसे मोषा धीर नर्म तरीका यह है । क जब भी दोनों पक्ष चाहें ता उनके मिय अनिर्णय विवाचन की व्यवस्था कर बी जाय । दोनों पक्ष अपने आपसी मत्तमेवों को किसी सरकारी बाई के सम्मुख रख देते है धीर उमका निर्णय अपने प्राप्त तथा बंध रूप से लागू हो जाता है । यह कहा जा सकता है कि एक बार विवाचन व्यवस्था से सहमत हो जाने पर इस बात का पर्याप्त आश्वासन मिल जाता है कि जो भी निर्णय होया वह मान्य होगा क्योंकि जनमन का तथा उचित धरवा अनुचित का ध्यान रसना पड़ता है । इस प्रकार यदि बंध रूप से लागू करने की कोई व्यवस्था की जाती है तो विवाचन का सामनीय सतान मष्ट हो जाता है । इस प्रकार जब ऐच्छिक विवाचन होता है ता अनिर्णय व्यवस्था करने स सुसह व्यवस्था का कम प्रयोग होया । परन्तु इसक उत्तर म यह कहा जा सकता है कि ऐच्छिक विवाचन तो तब भी रहेगा ही धीर इसका प्रयोग किया जा सकता है । इसके अतिरिक्त यदि विवाचन मे कोई मजदूरी न हो तो यह हो सकता है कि इसको इतना पसंद न किया जाये । बंध रूप से लागू करने की जा घारा है उसका प्रयोग मेवा लोग अपने एम समिकों के विरुद्ध कर सकते है जो उनक विवाचन पाबाध उठाए ।

राज्य के हस्तक्षेप का दूसरा तरीका यह है कि जो भी निर्णय मासिकों धीर समिकों के मुख्य सस्वाओं द्वारा ल किया गया है उसे सभी उद्योगों व्यापार, बिमा या वेध मे लागू कर दिया जाये । इससे यह साम होगा कि कोई भी समन्वित कुछ बुरे मासिकों द्वारा रद्द मही किया जा सकेगा । कई मासिक समिकों को मजदूरी देने के लिये धीर उनके कार्य के बन्दे कम करने के लिये सहमत हो सकते है यदि उनके सभी प्रतिस्पर्धी ऐसा करन के लिये तैयार हो जाए नही तो उनको मुकसान होगा । परन्तु राज्य के इस हस्तक्षेप से यह भी मय है कि मासिकों के कुछ ऐसे बुरे न बन जाएं जिनस उपजोक्तियों का मुकसान पहुँचे । इस बात मे भी व्यवहारिक रूप स कठिनाई घाती है कि इस सम्बन्ध में विधान किस सीमा तक लागू किया जाये । इन सब बातों के हल होने को राज्य के इस प्रकार के हस्तक्षेप को बहुत से लोगों स सराहा गया है । भारत में भी मजदूरी बोर्डों के जो निर्णय होते है वह सरकार द्वारा लागू किये जाते है ।

राज्य के हस्तक्षेप का तीसरा तरीका यह है कि राज्य कोई ऐसा विधान बना के जिसके अन्तर्गत हड़ताल या आजावन्दी करने से पहले औद्योगिक विवादों

को किसी अधिकरण के सम्मुख रखना अनिवार्य है। इस व्यवस्था के तीन लाभ हैं। प्रथम तो दोनों पक्षों के बीच सम्भीर प्रकार में विचार विमर्श हो सकता है और एक निर्वेध प्राधिकारी की सहायता से आपसी मतभेदों का निपटारा हो सकता है। दूसरे — सरकार द्वारा नियुक्त अधिकरण को इस बात का पूरा अधिकार होता है कि वह विवाद से सम्बन्धित हर बात की जाँच कर सके और प्रपत्रों (Documents) को देख सके और गवाहों को बुला सके। तीसरे — कामों को रोकना प्रथम बोधित कर दिया जाता है जब तक जाँच का कार्य समाप्त न हो जाये और उसकी रिपोर्ट प्रस्तुत न कर दी जाये। भारत में औद्योगिक विवाद अधिनियम के अन्तर्गत सरकार जाँच न्यायालय नियुक्त कर सकती है और कोई भी मामला धर्म न्यायालय या अधिकरण को निर्णय के लिये सौंप सकती है। विवाचन काल में हड़ताल और तामाबन्दी करना निषेध है।

राज्य के हस्तक्षेप का चौथा तरीका अनिवार्य विवाचन का है। इसका तात्पर्य यह है कि कोई ऐसा विधान बना दिया जाता है जिससे अन्तर्गत जो कोई भी सरकार द्वारा नियुक्त होता है वह विवादों के निपटारे को पक्षों की न केवल सिफारिश करता है बल्कि महँ पक्षों को स्वयं से सागु हो पाती है और उनके खिलाफ कोई भी हड़ताल या तामाबन्दी करना एक दण्डनीय अपराध माना जाता है। विचार विमर्श और सुमह व्यवस्था से निपटारा करने का तरीका भी रहता है लेकिन मुख्यतः इस बात पर जोर दिया जाता है कि जब और सब तरीके समाप्त हो जाएँ और विवाद कठिन हो जाएँ तो हड़ताल और तामाबन्दी को निषेध कर दिया जाये। ऐसे विधान विभिन्न देशों में कुछ विभिन्नता रखते हैं परन्तु सभी जगह राज्य द्वारा इस प्रकार से स्वतन्त्रता कम कर देने के खिलाफ आवाजें उठाई गई हैं। हमारे देश में भी कई परिस्थितियों के अन्तर्गत हड़तालों और तामाबन्धियों पर रोक समझी हुई है उदाहरणार्थ सार्वजनिक सेवाओं में बिना अधित नोटिस के कोई तामाबन्दी या हड़ताल नहीं हो सकती है।

जब हम अपने देश की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए सुमह और विवाचन व्यवस्था पर विचार विमर्श कर सकते हैं।

यहाँ इस और भी संकेत किया जा सकता है कि विवादों को शांतिपूर्ण ढंग से निपटारने की व्यवस्था पर पूर्णतया निर्भर रहने का अधिक स्वागत नहीं करते। इसका कुछ कारण तो यह होता कि राज्य और उसकी व्यवस्था में इनका विश्वास होता है क्योंकि ऐसी व्यवस्था को सार्वजनिकता वह पूर्णतया क हितों के लिए समझते हैं। अन्य कारण यह भी है कि अधिकों के संकटन दुर्बल है जिससे उनको अपना मामला निमित्त रूप से प्रस्तुत करने में कठिनाई होती है। परन्तु इसका मुख्य कारण यह है कि अधिक शांतिपूर्ण उपायों के विरोध में रहते हैं और अपने हड़ताल के अन्त को छोड़ने को तैयार नहीं होते। इस कारण शांतिपूर्ण समझौता करने की अनिवार्य विधियाँ बनाने का मुख्य सार्वजनिकता अधिकों की ओर से या सरकार

में उनके समर्थकों की धारण ही धारणा है जिन्हें द्वारा बहाना यह भी व्यवहार मिल जाता है कि अपनी राजनैतिक स्वार्थसिद्धि के लिए राष्ट्रीय एकता की बातें करें। परन्तु अधिकतर देशों में विवादों को निबटाने के रोक्ने में राज्य के हस्तक्षेप की आवश्यकता को अधिकारी ने भी स्वीकार कर लिया है। दूसरे देशों में विवादों का इस इस बात का प्रमाण है कि राज्य जब अधिक से अधिक इन विवादों में भाग ले रहा है। यह प्रवृत्ति दो विश्व युद्धों द्वारा उत्पन्न हुए संकटकाल में अधिक घटितवासी हो गई थी। अतः वर्तमान समस्या यह मही रही है कि मुसह तथा विवाधन हो या न हो वर्तमान समस्या जब यह है कि उनके निश्चित क्षेत्र की परिभाषा किस प्रकार की जाने और प्रभावपूर्ण कार्य करने के लिए विभिन्न समझौतों के साधनों के बीच और युद्धों के सम्बन्ध की ओर ध्यान दिया जाये।

विभिन्न अधिनियमों में मुसह और विवाधन —

औद्योगिक विवादों के निपटारे के साधन के रूप में मुसह व्यवस्था की सम्भावना पर विचार यद्यपि सन् १९२१ में बंगाल और बम्बई सरकारों द्वारा नियुक्त समितियों ने व्यक्त किया था तथापि औद्योगिक विवादों को सुलभान के लिए बीच न्यायालय एवं मुसह बोर्ड की बर्धनिक व्यवस्था सर्वप्रथम १९२९ में व्यापार विवाद अधिनियम में की गई थी। इस सम्बन्ध में अधिनियम की धाराओं का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। अधिनियम में धाति स्थापित करने के लिए कोई भी स्थायी व्यवस्था नहीं की गई थी और इसमें सरकार को मुसह बोर्ड के निर्णयों को लागू करने का भी अधिकार नहीं दिया गया था। सन् १९३४ और सन् १९३८ के बीच बम्बई में औद्योगिक विवादों के समझौते के लिए स्थाई मुसह व्यवस्था की स्थापना की और विधेय पत्र उद्यम गये। सन् १९३४ में बम्बई व्यवसाय विवाद समझौता अधिनियम पारित किया गया जो १९३८ में एक व्यापक अधिनियम — बम्बई औद्योगिक विवाद अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। इन अधिनियमों के उपबन्धों का उल्लेख भी ऊपर किया जा चुका है। सन् १९३८ के अधिनियम द्वारा अधिनियम मुसह की व्यवस्था की गई और समझौताकारों मुख्य समझौताकारों विधेय समझौता कारों औद्योगिक न्यायालय प्रादि की नियुक्ति की गई। युद्धकाल में सन् १९३८ के बम्बई अधिनियम में १९४१ और १९४२ में संशोधन किए गये जिनके अन्तर्गत सरकार को इस बातका अधिकार दे दिया गया कि सरकार यदि आवश्यक समयमें तो विवादों को औद्योगिक विवाधन न्यायालय को सौंप सकती है। सन् १९४२ में बम्बई में एक संशोधन द्वारा धम अधिकारियों की नियुक्ति को गई। केन्द्रीय सरकार ने सन् १९४२ में हड़तालों और तालाबन्दी को रोकने और किसी भी विवाद को मुसह तथा विवाधन को सौंपने के लिए कई धम्मारेष जारी किये। सन् १९४७ में भारत सरकार ने औद्योगिक विवाद अधिनियम पारित किया। बम्बई उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश की सरकारों ने भी इस सम्बन्ध में कानून बनाये। सन् १९४७ के अधिनियम में औद्योगिक विवादों को सुलभाने के अनेक साधनों की व्यवस्था की गई है।

समझौता अधिकारियों सुसह बोर्डों का स्वामालय तथा औद्योगिक अधिकारण की नियुक्ति की भी व्यवस्था है। अधिनियम में अनिवार्य समझौते के अतिरिक्त अनिवार्य विवाचन की भी व्यवस्था है क्योंकि सरकार कोई भी विवाद अधिकारण को विवाचन के लिए सौंप सकती है और इसके निर्णय का पूर्ण रूप से प्रबन्ध अधिकारण से मागू करा सकती है। अधिनियम में अनेक विशेष न्यक्तियों का समावेश और सेग्युंति करन के लिए अनेक संघोषन किए गये हैं। १९५० में एक अपीलीय अधिकारण की स्थापना की गई जिसका कि १९५६ में समाप्त कर दिया गया। प्रबन्ध अधिकारणों की तीव्र शक्ति व्यवस्था की गई है। अर्थात् धर्म न्यायालय औद्योगिक अधिकारण और राष्ट्रीय अधिकारण। अधिनियम की धाराओं को दोहराने का उद्देश्य इस उद्देश्य की ओर संकेत करता है कि भारतवर्ष में औद्योगिक विवादों को रोकने और निपटाने के लिए सुसह व्यवस्था तथा विवाचन को आवश्यक समझा जाने लगा है और इनके लिए सरकार द्वारा व्यवस्था की गई है। प्रबन्ध तो केवल इस बात पर महत्त्व है कि इस प्रकार के साधन ऐच्छिक हों प्रबन्ध अनिवार्य।

सुसह व्यवस्था — (Conciliation)

उपचार से रोकथाम सर्वत्र प्रचली होती है और औद्योगिक विवादों के विषय में भी यह बात मागू होती है। प्रारम्भिक व्यवस्था में ही यदि ठीक प्रकार से सहायता मिल जाय तो सुसह व्यवस्था के रूप में हा सकती है ता उचका महत्व बहुत बढ़ जाता है। रॉयल भ्रम आयोग के अनुसार 'यह कहीं प्रचली है कि कोई भी समझौता विवाद के पक्षों में स्वयं के प्रयत्नों से ही बजाम इसके कि समझौता उचक सामने रखकर अन्ततः या किसी और के ओर से उचको मागू किया जाय। कई बार ऐसा होता है कि अतुर और अनुभवशील अधिकारी पक्षों को एक दूसरे के सम्पर्क में लाने में सहायता कर सकते हैं या एक पक्ष के सम्मुख दूसरे पक्ष का दृष्टिकोण जिस पर ध्यान न गया हो रख सकते हैं या पारस्परिक समझौते के सम्भावित मार्ग का सुझाव दे सकते हैं'। सुसह-सुसह में भारत में अट ब्रिटेन की नकल करते समय हमने पुनर्माध्यम वहाँ की व्यवस्था के कम महत्वपूर्ण भाग को ही अपनाया और वहाँ की व्यवस्था के सबसे महत्वपूर्ण भाग की ओर ध्यान ही नहीं दिया। अट ब्रिटेन में ऐसी उच्चतम सार्वजनिक धारणों के अन्तर्गत निर्मात्र रखा जाता है जिस प्रकार की धारण हम भारत में करते हैं, और सुसह अधिकारियों के प्रयत्नों पर जो पक्षों को निजी तौर पर समझौता करने में सहायता देते हैं प्यारा निर्मात्र रखा जाता है। इस लिए रॉयल भ्रम आयोग ने अपना निर्णय सुसह व्यवस्था के पक्ष में दिया था और धारण स्वामालयों धारण विवाचन कार्यवाहियों में अपना विश्वास प्रकट नहीं किया था।

सुसह के व्यावहारिक लाभ की महत्ता का उच समय सबसे अधिक पता चलता है जब इसकी विवाचन से तुलना की जाती है। उद्योग शांति की स्थापना में सुसह व्यवस्था को विवाचन की प्रवेसा निश्चित रूप से प्रचली समझा जाता है। यह

प्रस्तुत किया गया है कि जहाँ भी विवाधान इच्छित परिणामों को प्राप्त करने में प्रयत्न रखा है वहाँ मुलह व्यवस्था को विशेष सफलता प्राप्त हुई है। बरेली की 'बस्टन इण्डिया मैच फेक्टरी (दियासलाई कारखाना) के एक विवाद में दिए गये विवाधान के नियम का उदाहरण इस सम्बन्ध में लिया जा सकता है। एक उच्च श्रेणी श्रमिक कारी द्वारा दिये गये निर्णय को सरकार द्वारा लागू किया गया था परन्तु श्रमिक फिर भी असंतुष्ट रहे थे। तात्पर्य से एक हड़ताल हुई और फिर श्रमिकों ने कार्य मन्दन मुक्तियाँ (Go slow tactics) अपना ली और दियासलाई का उत्पादन बन्द कर चौपाई ही रह गया। परन्तु जब श्रम कमिश्नर ने कारखाने को स्वयं प्रारम्भ देखा और दोनों पक्षों से सम्पर्क स्थापित किया तब यह मुलह की सरल विधि से ही समझौता कराने में सफल हो गया। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जब देश में इस बात को सबसे बड़ी आवश्यकता है कि उद्योगों में मासिक मजदूरों में सम्पर्क स्थापित करके उत्पादन का बढ़ाया जाय तब औद्योगिक विवादों को सुलझाने के लिए कानून की शक्ति की अपेक्षा मानवीय विधियों को ही अपनाया चाहिए। यदि मुलह के रूप में मानवता के दृष्टिकोण से कार्य किया जाता है तब इसके अच्छे प्रभाव पड़ने में कभी असफलता नहीं होगी। यह ध्यान रखना चाहिए कि मुलह व्यवस्था में दोनों पक्षों का एक दूसरे के दृष्टिकोण को समझना करना आवश्यक है और यह केवल तब ही संभव है जबकि दोनों पक्षों में न केवल सर्वव्यय में वर्य स्थायी रूप से सम्पर्क स्थापित किया जाए।

भारत में विभिन्न परिस्थितियों के प्रत्यक्ष मुलह बोर्ड और समझौता कार्यों की नियुक्ति के विषय में ऊपर कहा जा चुका है और उनकी कार्य व्यवस्था पर पूर्ण रूप से विचार भी किया जा चुका है। यह बात भी उल्लेखनीय है कि इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए जो व्यवस्था की गई है उसमें कुछ दोष भी हैं। प्रथम तो यह कहा जाता है कि पक्षों में समझौता कराने के लिए समझौताकारों की विचार शक्ति शोषपूर्ण है। समझौताकार न्यायाधीश से भिन्न होता है क्योंकि उस कानूनी दृष्टिकोण से दोनों पक्षों के अधिकारों पर विवाधान नहीं करना होता है। उसका कार्य केवल माँगों और विरोधी माँगों की व्यक्तिगत रूप से व्याख्या करना है जिससे दोनों पक्ष एक दूसरे की माँगों के बीचिये को समझ सकें। परन्तु व्यवहार में देखने में आता है कि हमारे देश में समझौता अधिकारी अधिकतर निर्णय ही देते हैं और इस प्रकार न्यायाधीश के समान कार्य करते हैं। इस व्यवस्था का दूसरा दोष यह है कि उचित शर्तों के अभाव में श्रमिकों के दृष्टिकोण को धन्यता ही जाती है। श्रमिकों को मुलह बोर्डों के समझौते की धारणा नहीं है। इसका उद्देश्य न्यायालय के आदेशों को बुरा रखना और धनाढ्यव्यय अतिव्यय को बुरा करना है। लेकिन दुर्भाग्यवश श्रमिकों में मुलह कार्यवाहियों के सम्मुख अपने दृष्टिकोण को सफलतापूर्वक रखने की योग्यता नहीं है। उनके मामले श्रमिक संघ अधिकारियों द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं जो साधारणतया बाहरी व्यक्ति होते हैं और इस प्रकार श्रमिकों की सही भावनाओं का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकते। श्रमिक

श्रमजी शिकायतों व समझौते में उचित हस्ताक्षरों के बिना ही कई बार श्रमजी मांगों को बढ़ाकर प्रस्तुत करने का प्रयत्न करते हैं। इसी कारण उनकी अधिकतर मांगें प्रत्याकार कर ही जाती हैं। इसके अलावा श्रमिकों और मालिकों दोनों का व्यवहार सुसह बोर्ड के सामने लगभग ऐसा ही होता है मानो वह किसी न्यायालय में किसी मुकदमे के ऊपर सड़ रहे हों। समझौते की भावना और पक्षों के विवेकपूर्ण व्यवहार का भारत में अभाव रहा है जो सुसह की सफलता के लिए यदि आवश्यक है। ऐसे व्यवहार और भावना से ही ग्रेट ब्रिटेन में सफलता मिली है। श्रमिकों और मालिकों दोनों के प्रतिनिधियों के व्यवहार इन सुसह बोर्डों के सामने ऐसे स्वतन्त्र व्यक्तियों की भाँति नहीं होते जो समझौता करने का प्रयत्न कर रहे हों वरन् ऐसी वसवन्दी के रूप में होते हैं जो एक दूसरे के मूल्य पर लान बठाना चाहते हैं और अपने पक्ष की मांगों पर ही जोर देते हैं। देश के श्रमिक नेताओं को श्रम प्रतिनिधियों का ज्ञान भी बहुत कम है और कमी कमी तो वह इस प्रकार की मांग करने लगते हैं जो कानून के विरुद्ध होती हैं। इनके प्रतिरिक्त सुसह बोर्डों के निर्णयों के विरुद्ध प्रथम औद्योगिक न्यायालयों में होती हैं जिसके अभाव न्यायाधीश होते हैं। इस कारण सुसह अधिकारी स्वभावतः पूरे मामलों पर कानूनी दृष्टिकोण से विचार करना शुरू कर देता है क्योंकि वह जानता है कि सम्पूर्ण मामले पर औद्योगिक न्यायालयों ने न्यायाधीशों द्वारा वैधानिक दृष्टिकोण से ही विचार किया जायेगा। अतः कार्यवाही में सुसह की भावना का अभाव हो जाता है। परन्तु इस प्रकार के दोष सुसह व्यवस्था की कार्यप्रणाली व ही हैं और इन्हें समझौता अधिकारियों को उचित निर्देश देकर और श्रमिकों में शिक्षा का प्रसार करके दूर किया जा सकता है। वहाँ तक सुसह व्यवस्था का सम्बन्ध है औद्योगिक विवादों की समस्या को सुलझाने के लिए उसको अपनाते में कोई एतराज नहीं किया जा सकता।

अनिवार्य सुलह — (Compulsory Conciliation)

यह भी उल्लेखनीय है कि केवल सुलह को ही नहीं वरन् अनिवार्य सुलह को भी देश में अपनाया गया है। प्रथम बार इसकी व्यवस्था १९३८ के बम्बई औद्योगिक सम्बन्ध अधिनियम में और इसके पश्चात् १९४७ के औद्योगिक विवाद अधिनियम में की गई थी। अनिवार्य सुलह की आलोचना इस आधार पर की गई थी कि समझौते की ऐच्छिक प्रकृति के कारण इस सम्बन्ध में किसी भी प्रकार की अनिवार्यता अकार्यकारी है, विशेषतः ऐसी स्थिति में जबकि १९२९ के व्यापार विवाद अधिनियम में ऐच्छिक सुलह की प्रकृति को बहुत ही कम अपनाया गया था। इसके प्रतिरिक्त श्रमिक अभी तक अस्थी प्रकार से संगठित नहीं हो सके हैं और अपने मामलों को नियमित रूप से प्रस्तुत नहीं कर सकते हैं। इसीलिए यह हो सकता है कि सुलह अधिकारियों के निर्णय श्रमिकों के विरुद्ध हों। परन्तु इन आलोचनाओं में अधिक सार नहीं था क्योंकि जब ऐच्छिक सुलह की व्यवस्था का प्रयोग नहीं किया गया था

सब ही इस बात की आवश्यकता अनुभव हुई कि विवादों को प्रारम्भिक अवस्था में ही सुलझाने के लिए यदि तब सुलह की व्यवस्था की जाये। अतिनिम्न के कार्यान्वित होने पर अनिवार्य सुलह की दलीलों को धीरे धीरे अधिक बल मिला। परन्तु यह बात ध्यान देने योग्य है कि अनिवार्य सुलह व्यवस्था जिसमें सुलह कार्यवाहियों के चुक होने या समाप्ति की अवधि में हड़तामें धीरे तानाबन्दी निवेश कर दी जाती है, का उद्देश्य केवल यह होता है कि शांतिपूर्वक समझौता करने की सम्भावना को सोंबा जाए। इस प्रकार, अतिक्रमों का हड़ताल करने का अधिकार केवल स्वयं ही कर दिया जाता है। यह कहना कि प्रौद्योगिक सम्बन्धों को नियंत्रित करने में राज्य का हस्तक्षेप करना या हड़ताम करने के अधिकार पर कोई बंधनान्तरिक रोक लगाना अतिक्रमों के मूल अधिकारों को छीनता है, गलत होगा। इसका तो यह धर्म होगा कि स्वतंत्रता और उच्चतमता में कोई भेद नहीं किया जाता। हड़तालों का उस अधिकार के लिए स्थापित करना जब तक समझौते और सुलह की सम्भावनाओं पर प्रयत्न नहीं कर लिए जाते विवादों को सुलझाने में एक उचित बाधाबन्धन पैदा करने के लिए आवश्यक है। अतिक्रमों के इच्छिकोण से भी यह वास्तविक होता। इससे निरर्थक और अपरिपक्व (Premature) हड़तामें समाप्त हो जायेगी और जो वास्तविक और मुख्य मामले होंगे उनके लिए संघर्ष करने के लिए अतिक्रमपूर्ण छलियों को संचित रख सकेंगे। इसके हड़तालों का महत्व भी बढ़ जायेगा अतिक्रमों के संगठन में अधिक सुदृढ़ हो सकेंगे और उन्हें जनता का सहयोग भी प्राप्त होगा। इस प्रकार उपर्युक्त हड़तालों की संख्या बढ़ जायेगी।

विवाचन विधि ऐच्छिक एवं अनिवार्य —

ऊपर उल्लेख किया जा चुका है कि देश में विवाचन विधि अपना भी गई है और इसको कुछ काल में अनेक अध्यादेशों द्वारा और १९४७ के प्रौद्योगिक विवाद अधिनियम द्वारा लागू किया गया है। विवाचन ऐच्छिक भी हो सकता है और अनिवार्य भी। ऐच्छिक विवाचन से यह तात्पर्य है कि दोनों पक्ष अपने मतभेदों को पारस्परिक रूप से सुलझाने में असमर्थ होने पर तथा सम्झौता एवं समझौताकार के प्रयत्नों से भी कोई सहायता न पाकर अपने विवाद को एक विवाचक के सम्मुख प्रस्तुत करके उसके द्वारा दिए गए निर्णय को मानना स्वीकार कर लेते हैं। इस प्रकार ऐच्छिक विवाचन का मुख्य तत्व ऐच्छिक रूप से किसी विवाद को विवाचन हेतु प्रेषित करना है। इस प्रकार, इसमें यह आवश्यक नहीं रहता कि बाह्य में गवाहों की उपस्थिति हो या कोई बाध पड़ताल की जाए या निर्णय को लागू किया जाए, क्योंकि इसमें अनिवार्यता नहीं होती। इसके विपरीत अनिवार्य विवाचन से यह तात्पर्य है कि दोनों पक्षों को आवश्यक रूप से विवाद को विवाचक को प्रस्तुत करना पड़ता है। अधिनियम (Adjudication) इसी विवाचन का दूसरा नाम है जिसका अर्थ है कि सरकार विवाद को विवाचन के लिए किसी अधिकारी को मौख देती है और इसके निर्णय को दोनों पक्षों को मानने को बाध्य

करती है। इस प्रकार सरकार द्वारा विवाह को व्यवस्था को अभिनिर्णय कहा जाता है। अनिवार्य विवाह में अनिवार्य रूप से गवाहों की उपस्थिति अनिवार्य रूप से बांध पड़ता है कि विवाह और अनिवार्य रूप से निर्णय को लागू करना और इन विवाह निर्णयों के उत्पन्न करने पर दृष्ट देने की व्यवस्था प्रादि सब ही या जाते हैं। द्वितीय महायुद्ध में युद्ध के लिए उत्पादन को जारी रखने और उद्योग में शांति स्थापित करने के विचार से अनिवार्य विवाह का कई देशों में अपनाया गया था। भारत में भी इस व्यवस्था को अपनाया गया था और इसमें इतनी सफलता हुई कि युद्ध के बाद भी अनिवार्य विवाह के सिद्धान्त को १९४७ के औद्योगिक विवाद अभिनियम में अपना लिया गया।

क्योंकि अनिवार्य मुसह के पक्ष में तर्क दिखस स्पष्ट है यह बात अनिवार्य विवाह के लिए नहीं कही जा सकती क्योंकि अनिवार्य विवाह व्यवस्था में दोनों पक्षों पर यह उत्तरदायित्व होता है कि यह विवाह निर्णय को स्वीकार करें और इसी प्रकार अनिवार्य अभिनिर्णय व्यवस्था में सरकार को यह अधिकार होता है कि वह विवाह के निर्णय को लागू करे। इस प्रकार, इन दोनों व्यवस्थाओं में अधिक के भाग्य का निर्णय अधिकारियों के हाथों में होता है। इन अधिकारियों को जो भी अधिकार मिलते हैं, स्वभावतः राज्य से ही मिलते हैं। इस प्रकार सामाजिक न्याय पूर्णतया निर्णायक अधिकारी की कार्यक्षमता सम्भावना और विद्वता पर निर्भर होता है। इसलिए अधिक अपनी स्थिति में किसी प्रकार के अधिकारी परिवर्तन की माता नहीं कर सकते और अधिकों को ऐसे मामूली परिवर्तनों से ही संतुष्ट होना पड़ता है जो राज्य अधिकारी को स्वीकार हों। अनिवार्य विवाह या अभि निर्णय को जब तक सावधानी से और यदा कदा ही उपयोग में न लाया जाये तो जब तक यह सम्भावना बनी रहेगी कि राज्य का अनुचित हस्तक्षेप हो जाए। यह प्रघात के सिद्धान्त के पूर्णतया विरुद्ध बात होगी। अतः अनिवार्यता का यह सिद्धान्त आलोचनात्मक बाध विवाह का विषय रहा है। रॉयल अम आयोग भी अनिवार्य विवाह के विरोध में था। इसके मतानुसार औद्योगिक शांति की स्थापना के लिए किसी बाह्य शक्ति पर निर्भर रहने की प्रवृत्ति यदि सामान्य हो जाती है और उद्योग में प्रापची भावना से विवाह निपटाने के प्रयत्न को प्रोत्साहन नहीं दिया जाता तो उद्योग पर इसका विनाशपूर्ण प्रभाव पड़ेगा। यह कहा जाता है कि अनिवार्य विवाह अपने उद्देश्य के लिए स्वयं ही असफल सिद्ध होता है। इसके उद्योग में शांति स्थापना की प्रयत्ना अधिकों में जोर असंतोष की भावना पैदा हो जाती है। दूसरे देशों में भी इस व्यवस्था का उर्ध्व विरोध हुआ है। सिडनी रैब ने कहा है "अनिवार्य विवाह को विवाह नहीं कहा जा सकता इसका अर्थ यह होगा कि सामूहिक सौभाग्य की पूर्णतया यथा किया जाए। विवाह कानून बनाने का एक उपाय है। न्यायालय का काम तो केवल कानून की व्याख्या करना है न कि विवाह बनाने का। अमेरिका में अनिवार्य विवाह अभिनियम पर विचार करते समय अमेरिकन संघीयत प्रॉफ

लेकर न मत प्रकट किया था 'धर्मिका के धर्मिक कमी तुल्य बनकर काम नहीं करते। धर्मिक विवाचन से औद्योगिक विचारों को बड़ाका मिनगा और बहु धर्मिक मन्त्र हो जायेंगे। इसमें स्वशासन (Self-Govt) समझ समान्त हो जाता है; मालिकों और धर्मिक संघों में स्वयं अपनी समस्याओं पर विचार करने का उत्तरदायित्व मिल जाता है। सामूहिक मोशकारी पर कूटारागत हुला है और इसकी बगल मुकदमेबाजी घा जाती है। विवाचन का धर्म व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का हनन गति धीमता की गति प्ररणा की समाप्ति तथा धाया और स्वयं (Self) उगत होने की धान्दियाओं का टूट जाना है। दूसरे देयों के अनुभवों में भी यह पता चलता है कि धर्मिक विवाचन का कहीं भी समर्थन नहीं किया गया है। युद्ध के समय में ऐसे विवाचन को धननाया मया था परन्तु असा कि ब्रिटिश धम मशामय द्वारा प्रकाशित एक औद्योगिक गति सम्बन्धी पुस्तिका में कहा गया है कि काम मन्त्र करने पर कानूनी निरव, तथा धर्मिक विवाचन व्यवस्था के होने हुए भी युद्ध के मध्य काम में सम्पूर्ण देश में औद्योगिक धनानि धा गई थी। ब्रिटिश धर्मिक संघ और ब्रिटिश समिति ने भी ब्रिटिश धम समस्या का विस्तार में धर्मिक धिया था धर्मिक विवाचन के विरोध में विचार प्रकट किए हैं। १२४२ में धर्मिका राज्य के तीसरे धम सम्मेलन में एक ऐसे प्रस्ताव में धर्मिक धनराष्ट्रीय धम संगठन ने भी स्वीकार कर लिया है यह स्पष्ट रूप में लिखा है कि धर्मिकों के सामूहिक मोशकारी के धर्मिकों की रक्षा की जानी चाहिये।

इस समय यह ठीक ठीक नहीं कहा जा सकता कि भारतवर्ष में धर्मिक विवाचन सफल होगा धमका नहीं। इस धम पर तीव्र मतभेद है। रॉयल धम धायोम का मत इसके विरोध में था। परन्तु भारत सरकार ने इस सिद्धान्त को स्वीकार कर इस विषय पर धर्मिक धनाये हैं। परन्तु धम मंत्री के रूप में श्री बी० बी० गिरि के धा धाने के परधान से सरकार का धर्मिकोस कुछ बढता हुआ सा प्रतीत हुआ। फिर विचारों को धमिक धमिक धमिकों तथा मालिकों के धर्मिकों के बीच धीमि धानों को धर्मिक महरक धमिक धिया मया और इस बात पर जोर दिया गया कि औद्योगिक ध्याधलय का ती धायति के समय के लिए धुमिक ध सेना की मति ही होना चाहिए जो धाधमिक समय पर ही धार्यगीत होते हैं। युद्धकाल में संभवतः धर्मिक विवाचन ठीक माना भी जा सकता है परन्तु सामान्य धमिक में इस सिद्धान्त को धनाये रक्षना धनतः धानिकारक होगा। यह भी देखने में धाया कि धिस समय भी जगजीवन धम धम मंत्री के तब धनमत धान धाने धर्मिक विवाचन के धम में होता चला मया परन्तु श्री बी० बी० गिरि के धम मंत्री के रूप में धान पर पुनः धर्मिक धाधाधाय की और हो गया। श्री लूनाई रेधाई की इस धिय में धिधारधाय कुछ-कुछ भी गिरि जैसी ही थी और धर्मिक धम मंत्री भी धनकाठी लाल नन्दा ती और भी सजग प्रतीत होते हैं। उनका उद्देश्य यह है कि धर्मिकों का सङ्घान प्राप्त करने के लिए सङ्घक धर्मिकों और धर्मिकों के धमिक में

भाग क्षेत्र की व्यवस्था जैसी कुछ योजनाएं शुरू की जायें ताकि प्रबन्धक और धर्मिक एक दूसरे के निकट ही जायें और पारस्परिक संबंध बुरा हो जाये तथा आपस में विश्वास उत्पन्न हो जाये। इन सब का अन्ततः परिणाम यह होगा कि धर्मिक विभाजन को अपनाते की अपेक्षा नीचे वर्तमान और सामूहिक सौदागरी की प्रणालियों को अपना सिमा जायगा।

परन्तु यहाँ हम यह कह सकते हैं कि हमारे देश में धर्मिक अंधविश्वास और धर्मिक संघों में बाह्य व्यक्तियों के छापे रहने के कारण समझौता कार्यवाहियों में धर्मिक अपने मामले को प्रभावपूर्ण तरीके से प्रस्तुत नहीं कर पाते। अतः धर्मिक विचारों में सरकार के हस्तक्षेप करने का अधिकार को मानना ही पड़ेगा। निम्नलिखित विभाजन से धर्मिकों के हित को ध्यान में रखा जा सकता है। इससे धर्मिक विचारों में धार्मिक ध्याय भी हो सकेगा। इदानीं प्रथम सामाजिक नीति निजी प्रदान नहीं है। इससे नारे समाज पर प्रभाव पड़ता है। यदि सरकार हस्तक्षेप नहीं करती तब सम्पूर्ण समाज का जीवन ही बुरा हो जाता है। भारत में दूसरे देशों की अपेक्षा स्थिति भिन्न है। हमारे देश में दूसरे देशों की भाँति धर्मिक सब मसी जाती संघ ठिठ नहीं हैं और न ही वे पश्चिम की भाँति धर्मिक सम्बन्ध व्यवस्था के मुख्य भाग माने जाते हैं। भारतवर्ष में इस समय कुछ गन्धी परिस्थितियाँ हैं जैसे उपमोक्ष बस्तुओं की कमी जैसी कीमते निर्वाह स्वर्ण की अधिकता उत्पादन बढ़ाने और लोगों को रोजगार दिलाने की तीव्र आवश्यकता धार्मिक-धार्मिक। हम धर्मिकता के बीर में हैं और हमारे देशों की भाँति धर्म और पूजा की आपसी कथमकथ और जीवातमी का समाधान नहीं हो सकता। समय की सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि धर्मिकों और धर्मिकों की आपसी सझाई को पूर्णतया समाप्त कर दिया जाय और सवासंभव अधिकतम उत्पादन करने के लिए धर्मिक से धर्मिक प्रयत्न किये जायें। अतः कुछ मामलों में हम समय देस में धर्मिक विभाजन की आवश्यकता है। परन्तु यह भी ध्यान रखना चाहिए कि धर्मिक विभाजन ही केवल-मात्र साधन नहीं है। यह तो राज्य का एक प्रतिम साधन है। इसका प्रयोग केवल उभी समय होता चाहिए जबकि सर्वोत्तम समझौते के सभी प्रयत्न असफल हो गये हों। अतः यदि धर्मिक और धर्मिक धर्मिक धर्मिकों की समस्या के प्रति वास्तविक और विवेकपूर्ण दृष्टिकोण अपनाएं तब धर्मिक विभाजन की आवश्यकता यथा-कथा ही पड़ेगी। धर्मिक विभाजन जैसी व्यवस्था से कोई अनादरक डर नहीं होना चाहिए। समस्या के इस पहलू पर भी धर्मिकों की धर्मिक के धर्मिक धर्मिकों में ध्यान धर्मिक कटाया है और नैनीताम धर्मिक में भी धर्मिक उल्लेख पढ़ने क्रिया या जुका है इसको स्वीकार कर लिया गया है। धर्मिकों की धर्मिक के इस सम्बन्ध में विचार महत्वपूर्ण है। उन्होंने धार्मिकता ही एक आपस में कहा था 'इस धर्म पर मेरे विचार सब को मसी भाँति मान्य है। मैं सामूहिक सौदागरी और विचारों के निपटारे के लिये पारस्परिक समझौते में हड़ बिस्वास रखता हूँ। मेरे विचार में प्रबन्ध और धर्म के

बीच स्वामी सम्बन्ध उत्पन्न करने एवं हट्ट तथा घातमित्रताओं को दम घातमान निर्माण करने के लिए रही सर्वोत्तम मान्य है। परन्तु सम्बन्धित सभी पक्षों से विचार विनिमय करने के पश्चात् में इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि अभी ऐसा समय नहीं आया है कि घनिष्ठता विचारण को छोड़ कर हम विचारों के समझने के लिए केवल पारस्परिक बातचीत पर निर्भर रहे। पंचवर्षीय आयोजना को सफलता पूर्वक लागू करने के लिए हम सब लोगों ने इस समय व्रत लिया है और हमें यह बात इस समय मेल नहीं लगती कि हम कोई ऐसा महा प्रयोग शुरू करें जिससे औद्योगिक विचार बढ़ जाएं जाँहे वह प्राम्प्रीवी ही क्यों न हों। इसका प्रतिरिक्त एक ऐसे समय में जबकि रोजगार में कमी हो रही है और घनिष्ठता की सीमाकारी शक्ति स्वाभाविक कमजोर है श्रमिकों में अपने रोजगार की ओन्निम पर, घातमित्रता होने की घाघा नहीं करनी चाहिए। अतः में इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि यद्यपि इसमें कोई संदेह नहीं कि विचारों के पारस्परिक निबटारे के लिए सामूहिक सीमाकारी का प्रोत्साहित करने के लिए हर प्रकार के प्रयत्न करने चाहिए और धीरे धीरे इस व्यवस्था को प्रावश्यकता के स्वान पर एक घातन ही बना देना चाहिए, फिर भी ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहिए जिससे औद्योगिक संस्कारों में विचारों के निबटारे की वर्तमान व्यवस्था कमजोर हो जाय और सरकार को इस समय विचारों को घनिष्ठकरणों को नीपने का जो घनिष्ठता है उससे संबंधित कर दिया जाए।" श्री संहुमाई देसाई के भी ऐसे ही विचार थे। श्री मन्त्र की सभ्य विचारवाच्य का ऊपर उल्लेख किया जा चुका है। श्री मित्रि में नवम्बर १९३५ में औद्योगिक सम्बन्धों में पुनः स्वगामन व्यवस्था पर बोल दिया है। उन्होंने बताया है कि घनिष्ठता विचारण एक पुनिसर्जन की शक्ति है जो कि अस्तव्योप के चिह्न देखा जाता है और जो ही उत्पन्न होने पर पक्षों को ऐसे म्याम के लिए न्यायालय के सामने ले जाता है जो महंगा पड़ता है और जिससे पूर्ण संतुष्टि भी नहीं होती। द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में औद्योगिक घातन की स्थापना के लिए पारस्परिक बातचीत समझौता तथा ऐच्छिक विचारण तथा कुछ विषय विचारों में घनिष्ठता विचारण की व्यवस्था पर बोल दिया गया है तथा तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में भी ऐच्छिक समझौतों और अनुगामन शक्ति के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है।

अपसहार समस्या का समाधान —

यद्यपि यह मान भी लिया जाय कि देश में घनिष्ठता विचारण की प्रावश्यकता है फिर भी इसकी सफलता के लिए कुछ मूल बातों का होना प्रावश्यक होगा। औद्योगिक विचारों की समस्या विचारों के घुस कारणों का दूर किए बिना नहीं घुसस्यवी जा सकती। औद्योगिक विचारों की समस्या को ठीक प्रकार से समझने के लिए तथा उनके शक्तिपूर्व निबटारे के हेतु विभिन्न प्रकार की व्यवस्थाओं को अपनाते के लिए हमें घनेष्ट बातों को म्यान में रखना प्रावश्यक होगा। तथाहरणतः मजदूरी की दर में एक शक्तिकारी परिवर्तन करना होगा, सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का

सानु करना होगा राजगार के स्तर को भी ऊँचा धीरे स्वर बनाता होगा कार्य एक रहने की दशाओं में सुधार लाना होगा यदि विचारकों का ठीक प्रकार से जुलाब धीरे एक सक्रियतामी भूमिक संघ भी आवश्यक है। राज्य की नीति का यही उद्देश्य होना चाहिए कि विचारों के क्षेत्र का जितना भी हो सके कम करे। मामिकों धीरे भूमिकों में संयुक्त रूप से धीरे सीधी बातों को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है धीरे सबसे पहले सुमह व्यवस्था पर ही धीरे देना चाहिए। परन्तु यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि यदि भूमिकों धीरे मामिकों के धापसी समझौते के परिणामस्वरूप कीमती में वृद्धि करके दोनों पक्षों को संतुष्ट करने का प्रयत्न किया जाता है तो ऐसी व्यवस्था प्राम्जीवी होगी क्योंकि उपभोक्ता अपने ऊपर धार्मिक भार होने से भर्त्सोप प्रकट करेगे। धत उद्योग में छाति की समस्या पर न केवल भूमिकों धीरे मामिकों के दृष्टिकोण से बरन् उपभोक्ताओं के दृष्टिकोण से भी विचार करना होगा। इसलिए प्रत्येक उद्योग में सीमान्त इकाइयों को धर्त्सो ऐसी संस्थाओं को जिनकी उत्पादन लागत सबसे धार्मिक है धत करना होगा ताकि उनकी लागत में कमी हो धीरे मुख्य धार्मिक न बड़े। औद्योगिक विचारों की समस्या को सुमझने के लिए केवल विधान पर ही धार्मिक निर्भर नहीं रहना चाहिए। मामिकों धीरे भूमिकों में निकट सम्पर्क स्थापित करने की धार्मिक आवश्यकता है धीरे भूमिकों को धीरे धार्मिक सीमा तक प्रबन्ध कार्यों में सम्मिलित करना चाहिए। इस समय औद्योगिक विचारों की समस्या मनोबैज्ञानिक भी है। दोनों पक्षों का एक दूसरे के प्रति धर्त्सोसा है। यदि मामिक भूमिकों को उत्पादन में बराबर का साथी समझने लवें धीरे उनसे दूर-दूर रहने की वर्त्मान प्रवृत्ति को छोड़ दें तो भूमिकों का भर्त्सोप काधे सीमा तक दूर हो जाएगा धीरे औद्योगिक छाति मां स्थापित हो सकयी। इस बात पर बार बार धीरे दिया जा सकता है कि विचारों के मूल कारणों को दूर करना चाहिए। डा राधाकमल मुकर्षी के धर्त्सो में "उचित मजदूरी सुन्दर धागत बीमारी तथा मातृत्व धित नाम के लिए बीमा योजना धार्मिक बीसी मानवीय मूल धार्मिकताओं को पूरा किए बिना इकाओं को धतपूर्वक समाप्त कर देने की नीति धताना धीरे उनके लिए रण्ड की व्यवस्था करना भूमिक समस्याओं को धतत ढंग से सुमझने का प्रयत्न करना होगा।

धत सामाजिक धीरे धार्मिक धाजे को हमें इस प्रकार से समायोजित करने का प्रयत्न करना चाहिए कि दूर भूमिक को इस बात का धार्त्सासन हो जाए कि उसकी धूनतम धार्मिकताओं की संतुष्टि होयी रहेगी उसका रोडगार में सुरक्षा रहेगी यदि बीरोधकारी हों हों जाव तो इस धर्त्सो में उसको कोई धीरे रोडगार धितने की व्यवस्था होयी तथा ऐसी मजदूरी में कि वह काम करने के धवोम्य हो जाए, उसका धर्त्सो होना रहेगा। भूमिकों में उचित धितसा धीरे धतवीवी धर्त्सो में उचित प्रकार का धर्त्सा होना चाहिए ताकि भूमिक अपने धर्त्सो के धारे में ही न छोवें बरन् अपने धर्त्सो की धीरे भी ध्यान दें। धतान्य व्यवस्था में

घनक कानून बनाकर और सरकार के अधिक हस्तक्षेप में समस्या का समाधान नहीं हो सकता। इससे सम्बन्धित पक्षों को बुरा ही समय मजता है। जहाँ तक हाँ एक धमिकों और शक्तियों का एक दूसरे के निकट आने का प्रयत्न करना चाहिए। कानूनी विपयताओं का दूर ही रखना चाहिए। यदि पारम्परिक महदाय की भावना है और धमिकों की व्यवस्था में सुधार कर दिया जाता है तो कोई कारण नहीं है कि औद्योगिक विचार यदि पूर्णतया समाप्त न भी हों फिर भी धमिक में धमिक कम क्यों न हो जायें।

इस प्रकार के विचारों पर जो हम पहल में कई बार ब्यक्त कर चुके हैं वी. सी. वी. गिरि ने भी अपना मन आखार धारण में प्रकट किया है। वी. गिरि ने औद्योगिक सम्बन्धों की समस्या पर बहुत व्यावहारिक दृष्टि में विचार किया है। वी. गिरि की इस विचारधारा (Guns & Approach) का अर्थ यह है कि विचारों को पारम्परिक रूप से सुलभान के प्रयत्न करने चाहिए और धमिकी विचारधारा की अपेक्षा सामूहिक धोखाधारी और ऐच्छिक विचारधारा को अधिक प्रोत्साहन देना चाहिए। वी. गिरि की विचारधारा एक अचिन्त पक्ष है और इसका स्वागत करना चाहिए। परन्तु अना उपर मकल किया जा चुका है अभी कुछ क्यों तक हम सरकार के हस्तक्षेप का पूर्ण तथा दूर नहीं कर सकते और किन्हीं किन्हीं प्रकार की धमिकी विचारधारा व्यवस्था बना रलनी ही होगी। वी. गिरि ने भी अपनी इस विचारधारा में कुछ मन्तव्य किया था। परन्तु यह मानना ही पड़ता कि कभी न कभी धमिकी और धमिकों में इस बात की भावना धाना बहुत बकरी है कि यदि दोनों पक्षों का उग्रता करनी है तो उन्हें एक दूसरे को सहयोग देना होगा तथा अपने विचारों और मतभेदों का प्राप्य में ही सुलभाना होगा। इस प्रकार एक दक्षिणगामी धमिक मक्ष धान्नेमन तथा धमिक प्रबन्धक सहयोग प्रबन्ध में धमिकों का भाव अनुमानन धमिकी धमिकी भावनाओं का रूप में औद्योगिक धमिकी स्थापित करने में बहुत धमिक महत्त्व है।

ग्रेट ब्रिटेन में औद्योगिक सम्वन्ध

(Industrial Relations in Great Britain)

सामूहिक सौदाकारी — (Collective Bargaining)

सामूहिक सौदाकारी का विकास ग्रेट ब्रिटेन के मालिक-मजदूर सम्बन्धों की एक महत्वपूर्ण विशेषता है और इस सामूहिक सौदाकारी को कई वर्षों तक उद्योग धर्मों की समस्याओं में निवारणार्थ मान्यता प्राप्त होती रही है। बहुत समय तक मालिकों ने धर्मिकों के इस अधिकार को स्वीकार नहीं किया कि वे अपने संघों के प्रति निधियों द्वारा किसी प्रकार का सौदा करें और मालिक धर्मिकों से व्यक्तिगत रूप से ही व्यवहार करने पर जोर देते रहें। उन्नीसवीं शताब्दी में बहु नामान्य विचारधारा की कि धर्मिक संघ अनुचित रूप से धर्मिकों के व्यक्तिगत में हस्तक्षेप करते हैं और जैसा कि इंग्लैंड के धर्मिक संघ इतिहास के सम्माम में बताया जा चुका है धर्मिक संघों को काफी समय तक धम्की दृष्टि से नहीं देखा गया। धर्मिकों के संघों के विरुद्ध कई कानून बना दिए गये थे क्योंकि धर्मिक वर्ग का विकास नहीं हो सका था। इसीलिए १८११ तक सामूहिक सौदाकारी की प्रगति की ओर कोई विशेष प्रयत्न भी नहीं उठाया गया। परन्तु १८७१ के बाद धर्मिक संघ धार्मिकता के विकास के साथ-साथ सामूहिक सौदाकारी को भी महत्वपूर्ण समझ जाने लगा और धीरे-धीरे यह साक्ष्य अधिकारहीन होता जाता गया। प्रायः इंग्लैंड के मालिक मजदूर सम्बन्धों को निर्धारित करने में सामूहिक सौदाकारी का मुख्य स्थान है।

इंग्लैंड में सामूहिक सौदाकारी का तात्पर्य उस व्यवस्था से लिया जाता है जिसके अन्तर्गत मजदूरों और कार्य की दृष्टियों एक ऐसे पारस्परिक सौदे द्वारा निश्चित होती है जो मालिकों और मजदूरों के संघों के बीच होता है और जिसको एक समझौते या करार का रूप दे दिया जाता है। इस प्रकार सामूहिक सौदाकारी उस व्यवस्था को कहते हैं जबकि प्रत्येक धर्मिक एक सौदाकार एकाघ के रूप में अपने रोजगार से सम्बन्धित विषयों पर मालिकों से या मालिकों के किसी समूह से समझौता करने के उद्देश्य से बातचीत करते हैं। किसी या व्यक्तिगत धर्मिक से उस बातचीत की प्राप्ति नहीं की जा सकती कि वह असंगठित रूप से अपने लिए समस्त हितों को प्राप्त कर सके। बहु संभव सामूहिक सौदाकारी द्वारा ही अनुचित प्रति-योगिता से अपनी सुरक्षा कर सकता है। इन सामूहिक करारों में विभिन्न विषय आ जाते हैं जैसे मजदूरी समायोजन, मेहनताना, छुट्टियाँ, कार्य की दृष्टियों, रोजगार की स्थिति आदि। एक व्यक्तिगत धर्मिक यह समस्त लाभ प्राप्त नहीं कर सकता और

अप्रतिष्ठ उद्योगों में उमको मालिकों द्वारा प्रस्तुत की गई पतों को ही स्वीकार करना आवश्यक करना पड़ता है। यह स्थिति सामूहिक मीशकारी में नहीं रहती क्योंकि सामूहिक मीशकारी का मकसद यह होता है कि एक ही यन्त्री या स्तर के समस्त धर्मिक धोर किन्तो एक विषय उद्योग के सब ही मालिक एव करार द्वारा बंध जायें हैं। एम करारों में न केवल धर्मिकों का नाम होता है बरन् मालिकों को भी साम प्रकृतता है क्योंकि किसी भी भगड़े के समय यह सामूहिक करार मालिकों की भी रखा करत है। सामूहिक मीशकारी की सफलता बातों पशों की पारस्परिक स्वीकृति धोर करार को बफादाये स निमान पर निर्भर करती है। यद्यपि एम करारों के पीछे कोई बमानिक मान्यता नहीं है तथापि इगबैण्ड में शोनों पत्र इनको पूर्ण बफादारी से निमात है। जनमत कभी इस पत्र में नहीं रहा है कि करारों के उल्लंघन पर किसी दण्ड की व्यवस्था की जाए। फिर भी संयुक्त एण्ड्रिक व्यवस्था (Joint Voluntary Machinery) का प्रास्तावित करने के लिए कुछ कानून बनाए गए हैं।

धर्मिक शर्तों के इष्टिकोण स सामूहिक मीशकारी का उद्देश्य मालिकों की एकपत्रीय कार्यवाही को रोकना होता है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए स मालिकों से एक ऐस संविदा (Contract) पर हस्ताक्षर करा मते है जिसने निश्चित समय के लिए रोडफार की बफादाओं को निर्धारित करत धोर उन समय में उत्पन्न होने वाले भगड़ों को निपटाने के लिए व्यवस्था होती है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सामूहिक मीशकारी मालिकों पर नियंत्रण लागू करने का एक उपाय है। इन साधन स धर्मिकों को कई धर्मिकारों का प्रावधान मिल जाता है धोर कई बातों की सूट भी मिल जाती है क्योंकि मालिक छिद स्वतन्त्र रूप में प्रत्येक कार्य नहीं कर सकते। यह ठा स्पष्ट है कि उद्योगों में धोर प्रत्येक प्रत्येक कारवायों में जो समस्याएँ उत्पन्न होती हैं उनके निवारण के लिए मालिकों धोर मजदूरों के सगठनों को प्राप्त में मिलानुक्त कर ही बात करती चाहिए। धर्मिक विधान धोर उनका सामु करने को व्यवस्था ठो केवल उद्योग बन्धों को लागू रखन के लिए उचित बाधाकरण ही देना कर सकत है। पारस्परिक समझौतों का समाधान ठो उन्ही पशों द्वारा किया जा सकता है जिनका मामले से सीधा सम्बन्ध होता है। इस विषय में सामूहिक करार ही एसा बाधाकरण उत्पन्न कर सकते हैं जिससे प्रयति में सहायता मिले। यह सामूहिक करार मालिक धोर मजदूर संघों के बीच कार्य में का पारस्परिक सम्बन्ध होने चाहिए उनकी रूपरेखा का निर्माण करते हैं धोर धर्मिकों की भावों धोर मालिकों द्वारा सुविधाएँ इन के मध्य समाधान सा देत हैं। इस प्रकार यह सामूहिक मीशकारी धोर करार इन बात को प्रकट करते हैं कि धर्मिक मध्य प्रावधान परिवर्तन (Mature) धोर धर्मिकताही हा मर है धोर मालिकों के इष्टिकोण में भी परिवर्तन सा गया है।

सामूहिक मीशकारी का क्षेत्र धोर कार्य प्रत्येक रूप में विस्तृत हर है।

अन्तर्राष्ट्रीय धर्म सङ्गठन की रिपोर्ट के अनुसार अमेरिका में गैर कृषि उद्योगों में लगे हुए लगभग एक तिहाई धर्मियों की कार्य की बजाएँ सामूहिक सौदाकारी के द्वारा निश्चित की जाती हैं। स्विट्जरलैण्ड में लगभग आधे औद्योगिक धर्मिक सामूहिक करारों के अन्तर्गत आ जाते हैं। इसी प्रकार आस्ट्रिया बल्जियम जर्मन पण्डराइन मुकम्बन स्केडेनेवियन देशों तथा ग्रेट ब्रिटेन में कम से कम आधे औद्योगिक धर्मिक भी इसी प्रकार सामूहिक करारों के अन्तर्गत आ जाते हैं। सोवियत संघ और पूर्वीय योरोप के प्रभावशाली राज्यों में ऐसे सामूहिक करार हर उद्योग संस्थान में पाए जाते हैं और अधिकांश धर्मिक इनके अन्तर्गत आ जाते हैं। पड़ विकसित देशों में भी सामूहिक सौदाकारी की रीति अब काफी धर्मियों में फैल गई है यद्यपि अनुपात के हिसाब से ऐसे देशों में धर्मियों तक कम धर्मिक ही इनके अन्तर्गत आए हैं। भारत में हाल ही में कुछ सामूहिक करारों पर हस्ताक्षर हुए हैं। (देखिये पृष्ठ १४२)। इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि ऐसे करार राष्ट्रीय स्थितियों के बहुत अनुकूल हैं विशेषकर जब हम औद्योगिक विकास के मार्ग पर अग्रसर हो रहे हैं।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि सामूहिक सौदाकारी यह बात मान कर चलती है कि धर्मिक संघों को मामलों द्वारा माम्यता प्राप्त है। अगर ऐसा नहीं होता प्रकृत एक उद्योग में या या उससे अधिक प्रतिद्वन्द्वी संघ होते हैं तब सामूहिक सौदाकारी निष्क्रिय (Ineffective) हो जाती है। ग्रेट ब्रिटेन में धर्मिक संघ मामलों द्वारा माम्यता प्राप्त कर चुके हैं और धर्मियों में एकता है। इस कारण ग्रेट ब्रिटेन में सामूहिक सौदाकारी अत्यन्त सफल रही है और जो भी करार हुए हैं उनको न केवल व्यापक रूप से बनाया गया है बल्कि उनमें निश्चितता और स्पष्टता भी पाई जाती है और ये करार औद्योगिक सम्बन्धों के समागम सभी पहलुओं पर प्रकाश डालते हैं। इसलिए इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि ब्रिटेन में एक ऐसी समायोजित और स्वीकृत कार्य प्रणाली बना भी गई है जो न केवल धर्मिक उद्योगों पर प्रभाव डालती है — बल्कि जिसके अन्तर्गत बहुत बड़ी संख्या में धर्मिक आ जाते हैं। इससे यह प्रकृत और रीतियाँ इतनी प्रभावशाली और महत्वपूर्ण हो गई हैं कि हमारे देश में धर्मिक और उद्योगपति दोनों ही स्वयं के और देश के हित के लिए उनका अनुसरण कर सकते हैं।

इंग्लैण्ड में औद्योगिक विवाद और धर्मिक संघ —

इंग्लैण्ड में धर्मिक संघों के प्रारम्भिक विकास से दो बातें सामने आती हैं— एक तो धर्मियों में 'औद्योगिक संघर्ष' प्रकृत उद्योगों में अपने स्थान बनाने की धर्मिताया और दूसरे उनके राजनीतिक विचार। १८५५ तक इंग्लैण्ड में धर्मिक संघों में काम की बजाएँ म सुधार की ओर अधिकांश ध्यान देना प्रारम्भ कर दिया था। अधिकांश संघों की सर्वस्य संख्या महत्वपूर्ण हो गई थी। मुजह या विवाधन द्वारा विवादों के निपटारे के लिए व्यवस्था भी कर दी गई थी। कई उद्योगों में

मुसह बोंडे स्थापित कर दिए गए य यद्यपि विचारों के समझौते में इनका कार्य सीमित ही रहा गया था। जैसे जैसे उद्योगों का विकास हुआ इस व्यवस्था का क्षेत्र भी विस्तृत होता गया। इस प्रक्रिया में व्यापार परिषद् और मासिक सत्रों के संघर्षों ने काफी सहायता की। १९०० तक विचारों को निपटाने के लिए सामूहिक घोषणाकारी को अधिकतर उद्योगों में अपना लिया गया था। इस प्रकार इंग्लैण्ड में विचारों के निबटाने में धमिक सत्रों ने महत्वपूर्ण कार्य किए हैं और इस सम्बन्ध में उनके कार्यों का बर्लिन हम इसमें एक के धमिक संघर्ष के प्रथम म कर चुके हैं (पृष्ठ ११८ - १९)।

इंगलैण्ड में औद्योगिक विचारों के कारण —

धमिकों में घसंतीय की भावना इसलिए पाई जाती है कि उनके मतानुसार उन्हे उद्योग के लाभ में से कम हिस्सा मिलता है। यह धमिक होने के साथ साथ मनोवैज्ञानिक समस्या भी है। जहाँ तक भौतिक उपयोग का प्रश्न है धमिक की स्थिति प्रारम्भ की धमिक प्रणाली की अपेक्षाकृत यद्यपि धमिकी तो है परन्तु फिर भी वह कम संयुक्त है। धमिकों में विद्या का विकास इस घसंतीय का एक कारण है। धमिक समाज में अपने स्वान तथा उचित कर्तव्यों के बारे में पहले से कहीं अधिक जाय विचार करते हैं। संयुक्त पूँजीवादी प्रणाली (Joint Stock System) के विकास ने भी इस घसंतीय की भावना में वृद्धि की है। इस प्रणाली से पूँजी के नियन्त्रण एवं स्वामित्व में मिश्रता या जाती है और मासिकों व धमिकों के व्यक्तित्व सम्बन्ध टूट जाते हैं। मासिक और धमिक के जीवन के उद्गम सहज के स्तर में भी पूर्व की अपेक्षा धम बहुत धमतर हो गया है। धमिक अपनी स्थिति की अपने प्रबन्धों से तुलना नहीं करता बरन् मासिकों के वर्तमान वर्ग से करता है और दोनों के मध्य की गहरी कानि निहारता है। जब उसे मासिकों के बड़े बड़े लाभार्थों (Dividends) का ज्ञान होता है तब वह धमभव करता है कि उससे उसका उचित भाग छीना जा रहा है। वह देखता है कि विभिन्न प्रकार की सम्पत्ति के केवल स्वामित्व के कारण ही पूँजीपति कितने धान्य से रहते हैं। यद्यपि वह यह स्वीकार करता है कि उत्पादन के लिए पूँजीगत वस्तुएँ आवश्यक हैं परन्तु वह मासिकों द्वारा उद्योग के लाभ में से एक बड़े हिस्से को हथक जाना प्रथमय समझता है। दो महायुद्धों से भी धमिकों पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ा है और वह मासिकों की ही भाँति मुक्तपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करने के धमिकार को पाने का दावा करते हैं। इसीलिए मजदूरी बोनस और महँगाई यत्ने के प्रश्नों पर ही धमिक हड़तालें हुई हैं। धमिकों के मेहनताने के प्रश्न से ही कार्य के बच्चे और कार्यों की हताशों के प्रश्न भी सम्बन्धित हैं। इंगलैण्ड में धमिक कटु संघर्ष कार्य विषय के घंटों के कारण हुए हैं। समयोपरि (Overtime) का प्रश्न औद्योगिक प्रक्रिया का प्रमुख कारण रहा है, विशेषकर उस समय जब व्यवसाय में बैरोबगारी होती है। मासिक धमिकर बंधे

संबंधों में कमी करने के लिए श्रमिकों से प्रतिरिक्त बंटों तक काम कराते से क्योंकि पापी प्रणामी के समाज में नए श्रमिकों को कार्य पर लवाने से मशीनरी धारि पर प्रतिरिक्त बन व्यय करना पड़ता था। इस कारण श्रमिक समयोपरि का विरोध करते हैं क्योंकि उससे कम पष्टे कार्य करने से जो सुविधा मिलती है उसका भ्रत हा जाता है और उतक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इसके प्रतिरिक्त समयोपरि के न होने से श्रमिक श्रमिक रोजगार पा सकते हैं।

इंग्लैण्ड में धनेक हड़तालें इस कारण भी हुई हैं कि मालिकों ने श्रमिक संबंधों को उचित तथा सक्षम (Competent) सौगाकारी संगठन क रूप में मान्यता देने से इन्कार कर दिया है। उदाहरणतः रेलवे श्रमिकों का काफ़ी समे समय तक संघर्ष करना पडा तब कहीं आकर रेलवे कम्पनियों ने उनको पूर्ण मान्यता प्रदान की। परन्तु औद्योगिक असाति का यह कारण धन विधेय महत्त्व नहीं रखता क्योंकि मालिक धन श्रमिकों के उनके संबंधों द्वारा बाधपीत और सीबा करने के अधिकार को स्वीकार करते हैं। धन मानिक बंध में सत्त्विवाली श्रमिक संघ आन्दोलन की जेसा करने का साहस नहीं कर सकते।

इंग्लैण्ड में औद्योगिक असाति का एक और कारण कुछ उत्साही श्रमिकों का उद्योग के प्रबन्ध में धाम लेने की इच्छा है। वह उस व्यवस्था से संतुष्ट नहीं है जिनमें श्रमिकों का स्तर अधीनत्व (Subordinate) हो जाता है उनके व्यक्तित्व का मोप हो जाता है और इस प्रकार उन्हें अपनी प्रतिमाधों के विकास का धनसर नहीं मिलता। उनका उद्देश्य हड़तालों के माध्यम से पूँजीवादी प्रणामी को पूर्णतया समाप्त कर श्रमिकों का नियंत्रण स्थापित करना है। श्रमिकों के स्तर को 'बास मजदूर' (Wage slave) की स्थिति से ऊँचा उठाना उनका लक्ष्य है। इन विचारों के परिणामस्वरूप धनेक औद्योगिक विवाद हुए हैं। यदि विटिल लोक अतिकारी विचारों के विरोधी न होते तो इनका प्रभाव धीरे धीरे अधिक होता। किन्तु इंग्लैण्ड में समकत-कुछ साम्यवाहियों को छोड़कर धन्य कोई भी धर्म व्यवस्था ने वर्तमान स्वल्प को मूट कर श्रमिकों के नियंत्रण के पक्ष में नहीं है।

प्रोफ़ेसर पीगू ने औद्योगिक मजमेदों का जो श्रेणियों में वर्गीकरण किया है— (१) ऐसे मजमेद जो मजदूरी में भिन्नता (Fraction of Wages) के कारण होते हैं और (२) ऐसे मजमेद जो कार्यों के सीमांकन (Demarcation of Functions) के कारण होते हैं। मजदूरी में भिन्नता के कारण जो मजमेद होते हैं उनको निम्नलिखित भागों में बाँटा जा सकता है — (क) ऐसे मजमेद जो धम के मेहनताने से सम्बन्धित होते हैं। यह मजमेद साधारणतया तकर मजदूरी दर की समस्याओं के कारण उत्पन्न होते हैं परन्तु कुछ धन्य बातों से भी सम्बन्धित होते हैं जैसे कार्यवाजा की बसाए, बुर्माना या नकरी या जिन्स के रूप में रीप भत्ते की मात्रा धारि। (ख) ऐसे मजमेद जिनका सम्बन्ध कर्मकारियों के कार्य व व्यवहार से होता है। यह साधारणतया कार्यों के घंटों के प्रस से सम्बन्धित होते हैं।

कार्यों के सीमांकन के कारण (जिनमें सम्बन्धित व्यापारों के सीमांकन विचार भी था जाते हैं) को मजबूत होते हैं उनके अन्तर्गत ब मज मजदूरी आ जाते हैं जो यमिकों के इस काम से उत्पन्न होते हैं कि उन्हें प्रकृत कार्यों में भाग मिलना चाहिए। ऐसे मजबूत विम्वन्धित बाधा से सम्बन्धित हात हैं — (क) काम को विभिन्न वर्गों के यमिकों में तथा विभिन्न प्रकार की मीतना में किस प्रकार बाँटा जाता है। (ख) भासिक अपने कामकारियों का किस प्रकार और कहां से कार्य पर मघाता है। इसमें मजबूत प तपात तथा कवस यमिक मर्गों के द्वारा ही कार्य पर मघाना प्रादि ममस्याएं आ जाती हैं। (ग) दम बाज की ममस्या कि यमिकों का मघनी कार्य बचाएँ निर्धारित करन में किना हास होना चाहिए।

किन्तु प्रोफ़ेसर पोयू ने यह भी कहा है कि उपरोक्त वर्गीकरण द्वारा मजबूतों को छीक छीक बाँटना कठिन भी है। प्रौद्योगिक मजबूतों को एक और तरीके से भी दो बिनागों में बाँटा गया है (१) ऐम मजबूत को वर्तमान रोडगार की घटों के घर्ष निर्णय (Interpretation) में सम्बन्धित होत हैं तथा (२) जो मबिष्य के रोडगार के सामान्य प्ररनों में सम्बन्धित होत हैं। वर्तमान रोडगार की घटों का घर्ष निर्णय तो एक न्यायिक (Judicial) कार्य है, तथा सामान्य प्ररनों का मममीता एक विषायी (Legislative) कार्य है। ऐम सभी मजबूत को किनी करार के बाद उत्पन्न होते हैं घर्ष निर्णय मजबूत कहे जा सकते हैं। ऐम मजबूत घर्षिकरर किनी विरुध मरन तक ही सीमित रहते हैं और बहुधा पूर्णतया किनी प्रकार के हाते हैं। ऐम मजबूत माना और मुण की वास्तविक बाधों के अन्तर जो मजबूत उत्पन्न हो जात हैं उनसे सम्बन्धित होते हैं। यह मजबूत स्थायीय 'ब्रान्च' (Branch) की घोर से उच्च सस्था द्वारा निपटाए जाते हैं। 'सामान्य प्ररन' रोडगार की घटों तथा नौकरी की सम्बन्ध से सम्बन्धित बाधों से उत्पन्न होते हैं घर्षान् ऐमो बाधों से जिनका प्रभाव मबिष्य में पड़ता है। इनके अन्तर्गत बहुत बाधें आ जाती हैं और इनका प्रभाव बहुत मनुष्यों पर पड़ता है। हड़तालों और ताताघन्धियों के विलुत रूप में होने के साधारणतया यही कारण होत हैं। ऐम प्ररनों का निपटारा प्रत्यक्ष रूप से घसम्बद्ध सस्थाओं द्वारा किया जाता है।

प्रौद्योगिक विवाद सम्बन्धी विधान —

मघसि इंपरैड में प्रौद्योगिक विवाद सम्बन्धी विधान एक गताम्बी से भी घबिक पुपना है परन्तु १८६६ के पूर्व जो भी विधान बनाए गए थे उनमें घबिक उत्साह नहीं दिखाया गया था और इस कारण भासिक और मजबूतों के बीच जो बाई बीरे बीरे उत्पन्न होती जा रही थी उनको कम करने में इन विधानों से घबिक सहायता प्राप्त नहीं होती थी। १८२४ के घबिनिमम के अन्तर्गत 'जस्टिसेज आफ पीस (Justices of Peace) की स्वेच्छापूरुबक मजबूरी निर्धारित करन का घबिहार के दिया गया था। १८६७ और १८७२ के घबिनिममों में मघसि मुजह बोधों की व्यवस्था की गई थी परन्तु इनकी स्थापना की घोर कोई विषय पण नहीं सघाया

गया था। १८९४ में प्रकाशित धर्म आयोग की रिपोर्ट की सिफारिश के आधार पर १८९६ का सुलह अधिनियम (Conciliation Act) पारित किया गया। इसमें सुलह का ऐच्छिक सिद्धान्त पर जोर डाला गया था। सुलह का ऐच्छिक सिद्धान्त ब्रिटिश विधान की अपनी एक निराली विशेषता रही है। वहाँ सुलह बोर्ड नहीं बनाए गए थे वहाँ मासिकों को ऐसे बाड़ों के स्थापित करने को प्रोत्साहित किया गया। बोर्ड आफ ट्रेड (Board of Trade) को सम्पन्नता करने का अधिकार था। किसी भी एक पक्ष की प्रार्थना पर बाड़ समझौताकार को धीरे धीरे पक्षों की प्रार्थना पर विचारक को नियुक्त कर सकता था। यद्यपि बोर्ड का निर्णय को मानना वैधानिक रूप से बाध्य नहीं था परन्तु फिर भी बाधा की जाती थी कि सामान्यतः दोनों पक्ष निर्णय का आधार करते।

१८९६ का अधिनियम केवल सामारण रूप से सफल रहा। पंजीकृत सुलह बोर्डों की संख्या धीरे धीरे बढ़ने लगी। हड़ताल धीरे-धीरे घटने में बोर्ड आफ ट्रेड का काफी हाथ रहा। १९०० में एक स्थाई विभाजन न्यायालय (Court of Arbitration) की स्थापना की गई और इसके तीन वर्ष पश्चात् औद्योगिक परिषदें (Industrial Councils) बनाई गईं। यह परिषद जिसका अध्यक्ष एक स्थायी अधिकारी होता था मालिकों और कर्मचारियों की एक संयुक्त संस्था थी और इसका मुख्य कार्य बोर्ड आफ ट्रेड को सुलह और विचारन कार्यों में सहयोग और सहायता देना था। इतना ही नहीं १९१४ के युद्ध से पूर्व राष्ट्रीयी हड़तालों हुईं और उनको सुमझने के लिए एकासीम व्यवस्था पूर्णतया असफल सिद्ध हुईं।

युद्ध ने परिणामस्वरूप नीति में कुछ समय के लिए परिवर्तन हुआ। समय की आवश्यकताओं का कारण ही १९१५-१७ के 'म्युनिशन ऑफ वार एक्ट' (Munitions of War Act) पारित किए गए जिनके अंतर्गत हड़तालों को अर्थ कोपित कर दिया गया तथा विचारण बोर्ड के निर्णयों को मानना वैधानिक रूप से अनिवार्य कर दिया गया। परन्तु इतना सब होने पर भी युद्धकाल में ही औद्योगिक अशांति दृष्टिकोण से बढ़ने लगी। फलतः अक्टूबर १९१६ में सरकार ने व्हीटले समिति (Whitley Committee) नियुक्त की। इसने संगठित उद्योगों में संयुक्त औद्योगिक परिषदों (Joint Industrial Councils) के निर्माण आदि रूप से संगठित उद्योगों के लिए मासिक मजदूर समितियों (Works Committees) के निर्माण और संगठित उद्योगों में मजदूरी के नियन्त्रण करने की सिफारिश की। समिति ने विभिन्न उद्योगों में ऐच्छिक रूप से राष्ट्रीय संयुक्त स्थायी औद्योगिक परिषदों (National Joint Standing Industrial Council) और विभिन्न क्षेत्रों के लिए जिला परिषदों (District Councils) के स्थापित करने की भी सिफारिश की। राष्ट्रीय संयुक्त परिषदों का कार्य सामान्य नीति (General Policy) से सम्बन्धित समस्याओं पर विचार करना था और जिला परिषदों का कार्यक्षेत्र स्थानीय प्रश्नों

में सम्बन्धित वा घोर मानिक-मजदूर समितियों के कार्य उन विषयों से सम्बन्धित थे जो किनी विषय उद्योग मस्या के आंतरिक (Internal) सम्बन्धों और कामों पर प्रभाव डालते थे।

१९१६ में सरकार ने औद्योगिक न्यायालय अधिनियम (Industrial Courts Act) पारित किया जो जस्टिस समिति के सुझावों को मानकर बनाया गया था। इस समिति ने अनिवार्य विवाचन विधि का घोर विरोध किया था और वर्तमान व्यवस्था को हाथ डालने का मुन्हाव दिया था जिनमें मानिक और धमिक स्वयं ही समझौते करते थे और धरने मतमेंडों को पारस्परिक रूप से निबट्टा करते थे। अधिनियम के अन्तर्गत एक स्थायी औद्योगिक न्यायालय (Standing Industrial Court) की स्थापना भी की गई। इस न्यायालय में मानिकों और धमिकों के प्रतिनिधि तथा अन्य स्वतन्त्र व्यक्ति व घोर यह सब धम मंत्रालय द्वारा मनोनीत किए जाते थे। दोनों पक्षों की सहमति से कोर्ट भी विवाद इस न्यायालय को सौंपा जा सकता था। इन्हीं में इस न्यायालय ने विवादों को सुलझाने की दृष्टि से उपयोगी कार्य किया है। अधिनियम के अन्तर्गत धम मंत्रालय को यह अधिकार था कि वह किसी भी विवाद की जांच कराने के लिए जांच न्यायालय (Court of Inquiry) स्थापित कर दे और जांच की रिपोर्ट भी प्रकाशित कर दे। पिछले युद्ध के समय विवादों को सुलझाने की दृष्टि से 'रोब्यार और राष्ट्रीय विवाचन आदेश (Employment and National Arbitration Order) के अन्तर्गत एक राष्ट्रीय विवाचन अधिकरण (National Arbitration Tribunal) की स्थापना की गई। इसके अन्तर्गत उन समय तक हड़तालों और तामाबन्दियों का प्रबंध मोपित कर लिया गया जब तक कि कोई भी विवाद धम मंत्रों को प्रस्तुत नहीं किया जाता और वह २१ दिन के अन्दर अन्तर समझौता नहीं कर पाता। सर्वप्रथम मामूहिक संयुक्त व्यवस्था से परामर्श लिया जाता जरूरी था और इनके निर्णय की महत्ता भी विवाचन निर्णय जैसी ही मानी गई थी। इस प्रकार इन्हीं में मामूहिक मीठाकारी की व्यवस्था युद्ध काम में भी कार्यान्वित होती रही है।

विवादों को निवटाने का ऐच्छिक आधार — (Voluntary Basis of Settlement)

युद्धापरान्त वर्तमान समय में भी औद्योगिक सम्बन्धों की व्यवस्था मुख्य रूप से ऐच्छिक आधार पर स्थापित है। कुछ ही मामलों में मरजाटी व्यवस्था इसके पूरक के रूप में की जाती है। औद्योगिक सम्बन्धों की व्यवस्था धमिकों और मानिकों के मध्यमों अर्थात् मानिकों के सब और धमिक संघों पर निर्भर है। यह संघटन धमिकों के काम की छतों और अन्य मामलों पर विचार-विमर्श और जानकी करते हैं। कुछ विषयों में तो यह बातों धरन आकरता हां हा केवल सबों की मया बुझा कर ही की जाती है। अन्य विषयों के लिए एक स्थायी ऐच्छिक संयुक्त व्यवस्था की गई है। साधारणतः यह व्यवस्था सामने आने वाले प्रश्नों को सुलझाने के लिए पर्याप्त

है। परन्तु उन विवादों के लिए जिनका निपटारा इस प्रकार नहीं हो पाता स्वतन्त्र रूप से विवादात्मक के लिए प्रस्तुत करने की भी व्यवस्था है। कुछ व्यवसाय विधेयों में जहाँ मामलों और श्रमिकों के ऐच्छिक संघठनों का इतना विकास नहीं हो पाया है कि वह इस प्रकार के मामलों को सामूहिक सौदाकारी द्वारा निबटारें या इस प्रकार होने वाले समझौतों का मागू कर सकें वहाँ ऐसे मामलों को निबटारने के लिए राजकीय कानूनों द्वारा व्यवस्था की गई है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मजदूरी निर्धारित करने की व्यवस्था सम्बन्धी अनेक अधिनियम भी पारित किए गए हैं।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है इंग्लैण्ड में मालिकों और श्रमिकों के संघ सामूहिक सौदाकारी और औद्योगिक सम्बन्धों के दृष्टिकोण से बहुत महत्वपूर्ण हैं। इंग्लैण्ड में अधिकतर मालिक मालिक-संघों का सदस्य हैं। इनमें से अनेक संघ काफी समय से बने आ रहे हैं। साधारणतया संघ औद्योगिक आधार पर संगठित किए गये हैं। इनमें से कुछ तो स्थानीय हैं और कुछ राष्ट्रीय आधार पर बनाये गये हैं। 'ब्रिटिश एम्प्लायर्स कन्फेडरेशन' (British Employers Confederation) मालिक संघों की केन्द्रीय संस्था है और इससे अधिकतर मालिक संघ और संघम सम्बद्ध (Affiliated) हैं। यह संगठित मालिकों के ऐसे हितों को ध्यान में रखकर कार्य करती है जिनका श्रमिकों के साथ सम्बन्ध होता है। जहाँ तक श्रमिक संघों का सम्बन्ध है अधिकतर श्रमिक इन संघों में संगठित हैं। इनके विकास और कार्यों का वर्तमान इंग्लैण्ड में श्रमिक संघवाद अभ्यास में पहले ही किया जा चुका है। 'ट्रेड यूनियन कांसेस' श्रमिक संघों की केन्द्रीय संस्था है और इससे अधिकतर श्रमिक संघ सम्बद्ध हैं। सरकारी विभागों व संगठित मालिकों और श्रमिकों के प्रतिनिधियों के बीच उनके हितों को व्यापक रूप से प्रभावित करने वाले विषयों पर परामर्श करने के लिए 'ब्रिटिश एम्प्लायर्स कन्फेडरेशन' और 'ट्रेड यूनियन कांसेस' को सरकार द्वारा मुख्य संस्था के रूप में मान्यता प्राप्त है।

संयुक्त औद्योगिक परिषदें — (Joint Industrial Councils)

जहाँ तक ऐच्छिक संयुक्त बाताँ व्यवस्था का सम्बन्ध है यह देखने में आता है कि रोजगार की शर्तों और दशाओं को प्रभावित करने वाले सभी मामलों पर सम्बन्धित मालिकों और श्रमिकों के संगठन द्वारा तदर्थ (Ad hoc) रूप से विचार किया जाता है और अन्य मामलों में संयुक्त औद्योगिक परिषदों के रूप में स्थायी संस्थाएँ हैं और उनका कार्य इस प्रकार के मामलों पर राष्ट्रीय स्तर पर संयुक्त रूप से विचार करना है। इनकी स्थापना 'सिस्टम सनिटि' की सिफारिशों और १९१९ के 'औद्योगिक न्यायालय अधिनियम (Industrial Courts Act) के परिणामस्वरूप हुई है। इस समय इस प्रकार की संस्थाओं की संख्या २० है। इनमें उद्योग के दोनों पक्षों के प्रतिनिधि होते हैं और कुछ मामलों में एक स्वतन्त्र अध्यक्ष भी होता है। इनके कार्यों में बहुत मिश्रता होती है। जबकि कुछ संस्थाएँ केवल मजदूरी के विषय पर ही बाधपीठ करती हैं, अन्य महत्वपूर्ण संस्थाएँ उद्योग के हितों को प्रभावित करने वाली अनेक बाताँ

पर विचार करती हैं। यदि निबटारे की बातों पर समझौता नहीं हो पाता है तब वह अपने विवाद को किसी स्वतंत्र विवाचक के सम्मुख रखने को प्रपञ्च १९१९ के औद्योगिक व्यापार अधिनियम के अन्तर्गत किए गए अथवा किसी माध्यम को अपना देने को सहमत हो जाते हैं।

अनेक उद्योगों में इसी प्रकार के प्रबन्ध जिम्मा और कारखाना स्तरों (District and Factory Levels) पर हैं जहाँ मामलों पर दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों द्वारा या तो उद्वेग (Ad hoc) रूप से विचार किया जाता है प्रपञ्च जिम्मा संयुक्त औद्योगिक परिषदों या ऐसी ही संस्थाओं या मासिक-मजदूर परिषदों द्वारा की गई किसी नियमित व्यवस्था द्वारा विचार होता है। इस प्रकार की संस्थाएँ राष्ट्रीय स्तर पर किए गए समझौतों को अपने जिम्मे या कारखाने में लागू करने के प्रश्न पर विचार करती हैं परन्तु साधारणतया इन्हें राष्ट्रीय समझौतों की बातों में परिवर्तन करने का अधिकार नहीं है। वे कई समस्याओं पर भी विचार करते हैं और यदि जिम्मा प्रपञ्च कारखाना स्तरों पर उनका कोई हल नहीं निकलता तब उनको राष्ट्रीय संस्था का चीप दिया जाता है।

मजदूरी को नियंत्रित करने वाली व्यवस्था — (Wage Regulating Machinery)

अनेक उद्योगों में जहाँ श्रमिकों और मालिकों के संगठन की कमी के कारण ऐच्छिक रूप से पारस्परिक बातचीत का प्रबन्ध नहीं है या यदि है तो वह अपर्याप्त है वहाँ कुछ बंधनान्तरिक निकायों (Statutory Bodies) की स्थापना की गई है जिन्हें मजदूरी निर्धारण परिषद् (Wage Council) और मजदूरी निर्धारण बोर्डों (Wage Boards) के नाम से जाना जाता है। इनमें मालिकों और श्रमिकों के प्रतिनिधियों के साथ-साथ कुछ विशेष स्वतन्त्र व्यक्ति भी होते हैं। इन निकायों से सम्बन्धित मंत्री को जो साधारणतया श्रम मंत्री होता है मजदूरी की न्यूनतम बातों और दशाओं के लिए सुझाव देने का अधिकार है। मंत्री को इन न्यूनतम दशाओं और बातों को बंधनान्तरिक रूप देने का अधिकार है। अथवा २०-२३ साल श्रमिकों के रोजगार की दशाओं का निर्धारण एसी ही बंधनान्तरिक व्यवस्था द्वारा होता है। १९४३ के मजदूरी परिषद् अधिनियम (Wages Council Act) द्वारा भी मजदूरी निर्धारण करने वाली इस व्यवस्था को स्थापना की गई है। अनेक उद्योगों के लिए भी अधिनियम बनाए गए हैं जैसे १९४८ में कृषि की मजदूरी निर्धारण के लिए (Agricultural Wages Act), १९३८ में सड़क यातायात के कार्यों में मजदूरी निर्धारण के लिए (Road Haulage Wages Act) १९४३ में भाजनामयों में काम करने वालों के लिए मजदूरी निर्धारण के लिए (Catering Wages Act) आदि। इन सब में न्यूनतम मजदूरी की व्यवस्था है।

राज्य द्वारा सुलह और विवाचन व्यवस्था — (State Conciliation and Arbitration)

सरकार की ओर से सुलह विवाचन और अनुमोचन की भी व्यवस्था की गई है। १८९१ के सुलह अधिनियम (Conciliation Act) और १९१९ के औद्योगिक न्यायालय अधिनियम (Industrial Courts Act) के अन्तर्गत भ्रम मंत्री को यह अधिकार है कि यदि ऐच्छिक सुलह व्यवस्था द्वारा औद्योगिक विवादों का निपटारा न किया जा सके तो वह उद्योगों के विवादों के निपटारे में सहायता करें। इन अधिकारों का उद्देश्य ऐच्छिक साधनों और संयुक्त व्यवस्था को रक्षाना नहीं बल्कि पूरक करता है। सुलह व्यवस्था द्वारा उद्योगों को सहायता देने के लिए सुलह अधिकारियों की व्यवस्था है जो भ्रम मंत्रालय का एक भाग माने जाते हैं। इन सुलह अधिकारियों का कार्य राष्ट्रीय और बिना और कुछ विषयों में कारखाना स्तर पर मालिकों और श्रमिकों के आपसी सम्बन्धों को ध्यान में रखना है और यदि श्रमिक और मालिक जाँहें तो यह पारस्परिक बर्तनाप और बाह-बिबाद द्वारा उनके विवादों का निपटारा करने में सहायता देना है। जिन विवादों को इस प्रकार से नहीं निपटारा जा सकता उनको यदि सम्बन्धित पक्ष जाँहें तो ऐच्छिक विवाचन के लिये सौंपा जा सकता है। यह विवाचन या तो एक विवाचक द्वारा या एक तबर्ष (Ad hoc) विवाचन बोर्ड द्वारा या औद्योगिक न्यायालय द्वारा जो १९१९ के अधिनियम के अन्तर्गत एक स्थायी अधिकरण के रूप में स्थापित हुआ है किया जाता है। मुद्रकाल के आपत्कालीन (Emergency) पक्ष के रूप में यह उपबंध बनाया गया था कि किसी भी पक्ष द्वारा मंत्री को प्रस्तुत किये जाने वाले मामलों को राष्ट्रीय विवाचन अधिकरण को सौंपा जा सकता था और इसके निर्णयों का सम्बन्धित पक्षों पर लागू करना अनिवार्य था। यह व्यवस्था १९२८ तक बसती रही जबकि उसी वर्ष नवम्बर में अधिकरणों को समाप्त कर दिया गया यद्यपि श्रमिक संघ के नेताओं ने इसका विरोध किया था। वर्ष १९२९ के रोजगार की शर्तों और बधाओं से सम्बन्धित अधिनियम (Terms and Conditions of Employment Act) के अन्तर्गत श्रमिकों के प्रति निहित संयमन द्वारा भ्रम मंत्री को यह रिपोर्ट दी जा सकती है कि उसके व्यापार या उद्योग में कोई विशेष मासिक रोजगार की एसी शर्तों और बधाओं को कार्यान्वित नहीं कर रहा है जिनका प्रापण में निर्णय हो चुका है या जिनके लिए कोई विवाचन निर्णय दिया जा चुका है या जिनको मान्यता प्राप्त है। यदि मामले का निपटारा नहीं हो पाता तो भ्रम मंत्री को उसे औद्योगिक न्यायालय को सौंपना पड़ता है। मालिकों को रोजगार की शर्तों और बधाओं को मनवाने के लिए न्यायालय द्वारा विवाचन निर्णय दिया जा सकता है। यह निर्णय रोजगार संबंधी की एक निहित शर्त के रूप में मान्य हो जाता है। भ्रम मंत्री को यह अधिकार भी है कि वह उन विवादों के लिए जो हो चुके हैं या जिनके होने की सम्भावना है प्रथम जिनकी उपरोक्त साधनों द्वारा सरलता से सुलहने की श्रमा नहीं है जांच न्यायालय या

अनुसंधान समिति की स्थापना कर दें। इन निकायों (Bodies) को रिपान् मुख्यतः सर्वत्र और जनता की सूचना के लिए होती है। यद्यपि रिपोर्ट का किसी पत्र के लिए मानना अनिवार्य नहीं है फिर भी इन रिपोर्टों की सिफारिशों का विभागों के निपटार का प्राचार्य समझकर स्वीकार कर लिया जाता है।

इंग्लैंड में श्रमिकों और धर्मियों के सम्बन्धों को प्रभावित करने वाले विषयों पर विचार करने के लिए सरकार और उद्योग में पारस्परिक सम्पर्क भी रहता है। दोनों पक्षों के सामान्य हितों के विषयों पर सरकार मनी स्ट्रों पर विचार करने के लिए श्रमिकों और मानिकों के प्रतिनिधियों के साथ सम्पर्क बनाये रखती है। स्वाभाविक और जिम्मेदार स्तर पर हम मन्त्रालय के मुख्य अधिकारी उद्योग के दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों के सम्पर्क में रहते हैं। राष्ट्रीय स्तर पर विभाग के अधिकारी पारस्परिक सम्पर्क बनाये रखने वाले अधिकारियों के रूप में निर्भर पाकर प्रथम श्रेष्ठता के गते से संयुक्त औद्योगिक परिषदों की समझौतों में उपस्थित होते हैं। राष्ट्रीय संयुक्त सलाहकार परिषद के माध्यम से सरकार के ब्रिटिश एम्प्लायमन्ट कॉन्फ़िडेंस और ट्रेड यूनियन काँग्रेस के बीच परामर्श करने की स्थायी व्यवस्था भी है। इस राष्ट्रीय संयुक्त सलाहकार परिषद (National Joint Advisory Council) की स्थापना १९१९ में की गई थी। इसमें दोनों पक्षों का प्रतिनिधित्व होता है और इसका कार्य सामान्य हित के प्रश्नों पर सरकार को सलाह देना है।

उत्पादन सम्बन्धी सभी विषयों पर कारखाना स्तर पर उद्योग में संयुक्त रूप से परामर्श करने की व्यवस्था की गई है। बहुधा विषयों पर संयुक्त रूप से विचार किया जाता है जो अनौपचारिक (Informal) रूप से होता है विशेषकर छोटे कारखानों में ऐसा ही होता है। कुछ अन्य उद्योगों में ऐसे विचार-विमर्श कुछ संयुक्त निकायों (Bodies) द्वारा होते हैं जो कारखाना बिना और राष्ट्रीय हर स्तर पर स्थापित कर दिये गए हैं। यह संयुक्त निकायों रोजगार की शर्तों और दशाओं के बारे में विचार और समझौता करने का प्रयत्न करती हैं और उत्पादन से सम्बन्धित विषयों पर भी विचार करती हैं। अनेक अन्य उद्योगों में इन मामलों पर विचार करने के लिए संयुक्त उत्पादन समिति प्रथम मानिक मजदूर परिषद की प्रथम व्यवस्था है। इनकी स्थापना कारखाना स्तर पर की जाती है और इनमें उन मामलों को सम्मिलित नहीं किया जाता जिन पर सामान्य बार्तालाप व्यवस्था के अन्तर्गत विचार किया जाता है। इन संयुक्त उत्पादन समितियों का गठन भिन्न-भिन्न होता है, और कुछ उद्योगों में प्राथमिक बार्तालाप की सामान्य निकायों द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर इनको नियंत्रित करने का प्रयत्न होता है।

इंग्लैंड में औद्योगिक शांति की स्थापना के लिए की गई व्यवस्था की प्रमुख विशेषताएँ —

इस प्रकार ब्रिटिश औद्योगिक व्यवस्था की मुख्य विशेषता यह है कि विचारों की प्रारम्भिक व्यवस्था में ही विचारों को दूर करने का प्रयत्न मिलता है। इंग्लैंड

में औद्योगिक सम्बन्धों को सम्पूर्ण व्यवस्था का आधार ऐच्छिक है। वहाँ पर दोनों पक्ष एक दूसरे के दृष्टिकोणों को समझने का प्रयत्न करते हैं और अपने सामान्य हितों को भी जानते हैं। इस कारण इंग्लैंड में पिछले बीस वर्षों में हड़तास और ताताबन्धी बहुत ही कम हुई है। १९३३ से १९४४ तक २२ वर्षों में औद्योगिक केवल १०६ लाख कार्य दिनों की क्षति हुई जबकि १९१० से १९३२ तक २३ वर्षों में २१० लाख कार्य दिनों की क्षति हुई थी। १९३१ में कोयला खान रेल यातायात और बन्दरगाहों पर हुई हड़तालों से जो कार्य दिनों की क्षति हुई वह १९४४ के बाढ़ के किसी भी वर्ष की अपेक्षा बहुत अधिक थी। विचारों के सर्वातिपूर्व निपटारे के लिए और अधिक सुनिश्चितक व्यवस्था की सम्भावना पर विचार किया जा रहा है।

उपरोक्त में हम कह सकते हैं कि इंग्लैंड में औद्योगिक-शांति स्थापित करने के लिए निम्नलिखित व्यवस्था है — (१) मामिकों और श्रमिकों में सामूहिक सौदाकारी द्वारा किए गए संयुक्त ऐच्छिक समझौते करार, (२) मामिकों और श्रमिकों के प्रतिनिधियों में औद्योगिक परिषदों द्वारा राष्ट्रीय क्षेत्रीय और स्थानीय स्तरों पर संयुक्त रूप से औद्योगिक बार्ताभाष (३) प्रत्येक संस्थान में मामिकों और श्रमिकों के प्रतिनिधियों की मामिक मजदूर समितियाँ (४) ऐसे उद्योगों में जहाँ संग कर्मचोर हैं वहाँ 'सूचक मजदूरी निर्धारित करने के लिए बौधानिक मजदूरी निबंधन' की व्यवस्था (Statutory Wages Regulating Machinery) (५) सरकार द्वारा मुझ विवाचन और अनुसंधान तथा युद्ध काल में अनिवार्य विवाचन की व्यवस्था (६) श्रमिकों और मामिकों के पारस्परिक सम्बन्धों पर प्रभाव डालने वाले विषयों पर सरकार और उद्योग में पारस्परिक संपर्क बनाए रखने की व्यवस्था (७) कारखाना स्तर पर उद्योग में संयुक्त परामर्श व्यवस्था।

इंग्लैंड में मामिक मजदूर समितियाँ — (Works Committees)

इंग्लैंड में मामिक मजदूर समितियों की स्थापना के प्रत्येक उद्देश्य रहे हैं। श्रमिक मामिक मजदूर समितियों को प्रबन्ध में हिस्सा लेने का साधन मानते हैं। मामिकों के विचार से यह समितियाँ सर्वाति को कम करने और कार्यकुशलता को बढ़ाने का साधन हैं। उचित रूप से संगठित मामिक मजदूर समितियों से श्रमिकों को बहुत ज्ञान होता है। प्रत्येक संस्थान में मजदूरी एवं कार्य के बर्तों आदि विषयों से सम्बन्धित विचारों को पुरन्द ही सुझाया जा सकता है। इन समितियों द्वारा रोज़गार और कार्य की दशाओं से सम्बन्धित प्रत्येक विषयों पर भी विचार किया जाता है। परन्तु ऐसे उदाहरण बहुत कम हैं जहाँ श्रमिकों को प्रबन्ध में बारम्बारिक रूप से भाग मिला हो। जहाँ तक नीति निर्धारण में श्रमिकों के सहयोग का प्रश्न है उसका अस्तित्व अगम्य है ही नहीं। जिन श्रमिकों ने इस उद्देश्य से अमास्य समितियों का निर्माण किया वा साधारणतया उन्हें निरास ही

होना पड़ा। यह बात उल्लेखनीय है कि कुछ-कुछ में यथासय समितियों और यथासय प्रतिनिधि समितियों का धमिक संघों द्वारा अपनी गतिविधियों के पुरस्कार के रूप में समर्थन किया गया था परन्तु बाद में जब यथासय प्रतिनिधि याम्बोसन प्रभावशाली हुआ तो धमिक संघ इनके विरोधी हो उठे जिसके कारण यह याम्बोसन १९१० के बाद घटपट्टन हो गया। वर्तमान समय में यथासय समितियाँ धमिक संघों से मिसकर अपनी कार्य सुचारु रूप से कर रही हैं और इन्होंने विवादों को तत्काल ही सुलझाने की स्वतन्त्र परम्परा का विकास किया है। धमिकों की सुरक्षा और कल्याण के लिए भी इन्होंने प्रच्छन्न कार्य किया है। ग्रेट ब्रिटेन की औद्योगिक सम्बन्ध व्यवस्था में इनका धन एक मुख्य स्थान है।

ग्रेट ब्रिटेन के अनुभव और भारत —

धन हमको यह देखना है कि किंग भीमा तक हम भारत में इंग्लैण्ड के अनुभवों से साज बठा सकते हैं और किस-किस रूप में इंग्लैण्ड और भारत के औद्योगिक सम्बन्ध व्यवस्था में भिन्नता पाई जाती है। कुछ लोगों का ऐसा विचार है कि इंग्लैण्ड की भाँति औद्योगिक विवादों के विषयों पर राजकीय हस्तक्षेप यथासमय कम होना चाहिए और बेर से करने की अपेक्षा प्रारम्भिक व्यवस्था में ही तर्क और धन विवाद को प्रोत्साहित करना चाहिए। भारत में धन तक धमिक संघों ने औद्योगिक विवादों के सुलझाने में कोई विशेष योग नहीं दिया है जबकि ग्रेट ब्रिटेन के औद्योगिक सम्बन्धों के बहु-अंश (Integral) अंग हैं। इसके अतिरिक्त ग्रेट ब्रिटेन में भारत के विपरीत किसी भी औद्योगिक विवाद के सम्बन्धित पक्ष एक दूसरे के हृदयकोण की सराहना करते हैं तथा पारस्परिक वास्तविक और स्वतन्त्र विचार विमर्श द्वारा स्थिति को स्पष्ट रूप से समझने का प्रयत्न करते हैं। भारत में कर्तव्यनिष्ठ (Responsible) धमिक नेताओं की कमी है। धमिक अखिल भारतीय अर्थात् होने के कारण पारस्परिक विचार विमर्श में भाग नहीं लेते और इस प्रकार प्रतिपक्ष के विचारों को समझ भी नहीं पाते। ग्रेट ब्रिटेन में औद्योगिक सम्बन्धों की व्यवस्था सफलतापूर्वक पश्चिम माभार पर कार्य करती है और इसका कारण अतिशय धमिक संघ और अखिल धमिक वर्ग है। भारत में धमिक संघ याम्बोसन धनी तक दुर्बल है और धमिक वर्ग अखिल है इसलिए राजकीय हस्तक्षेप आवश्यक और बाध्यकारी प्रतीत होता है। परन्तु भारत में भी धन प्रारम्भिक व्यवस्था में ही स्वतन्त्र और निष्पक्ष विचार विमर्श की महत्ता को धीरे-धीरे समझ जा रहा है। भारत में भी इंग्लैण्ड के समान विभिन्न औद्योगिक धमिनियमों में धमिक मजदूर समितियों संयुक्त औद्योगिक परिषदों समन्वितकारों धमिक की व्यवस्था की गई है। धन धमिकों और धमिकों के बीच संयुक्त ऐच्छिक विचार विमर्श पर धमिक जोर दिया जा रहा है। भारत में कुछ औद्योगिक केन्द्रों में धमिकों और धमिकों के मध्य हाथ ही में हुए कठोरों ने यह सिद्ध कर दिया है कि पारस्परिक विवादों में ही रह जाने के पुराने तरीकों का प्रभाव धन कम होता

वा रहा है। इस प्रकार भारत अपनी औद्योगिक सम्बन्ध व्यवस्था में ग्रेट ब्रिटेन की व्यवस्था का अनुसरण करने का प्रयत्न कर रहा है। इंग्लैण्ड और भारत की औद्योगिक सम्बन्ध व्यवस्था में कुछ न कुछ अन्तर तो रहेगा ही क्योंकि दोनों देशों की परिस्थिति बहुत भिन्न है। इसलिये इस समय औद्योगिक विचारों में सरकारी हस्तक्षेप को किसी बड़ी सीमा तक समाप्त नहीं किया जा सकता क्योंकि अधिक और मासिक बोनो ही इस समय इस बात के पक्ष में प्रतीत नहीं होते। हम इतना कह सकते हैं कि भारत में अधिकों और मासिकों बोनो को ही प्रतिपक्षी के दृष्टिकोण को समझने के लिए ग्रेट ब्रिटेन की भाँति निष्पक्ष एवं स्वतन्त्र विचार विमर्श की महत्ता को समझना होगा। औद्योगिक विचारों के हो जाने के पश्चात् उनके निवारण के लिए हम बूढ़ने की अपेक्षा हमें भी इस बात का अधिक प्रयत्न करना चाहिए कि औद्योगिक विवाद उत्पन्न ही न हों।

औद्योगिक श्रमिकों की आवास समस्या

(Housing of Industrial Labour) ✓

आवास की महत्ता और आवश्यकता -

आवास की समस्या निश्चय ही भारत में औद्योगिक श्रमिकों की एक महत्वपूर्ण समस्या है। भोजन तथा कपड़े के बाद आवास का ही स्थान है। उचित आवास के अभाव के कारण ही बीमारियाँ फैलती हैं व्यक्तियों में असंतोष व्याप्त हो जाता है मानव की उच्चतर आवश्यकताओं का अन्व हो जाता है तथा उनमें असम्यक्ता एवं निर्दयता पा जाती है। अनेक अमेरिकन तथा यूरोपियन देशों द्वारा मकानों के आर्थिक एवं सामाजिक महत्त्व पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया गया है। यह देखा गया है कि उद्योगों के स्थान (Choice) तथा स्थापन (Location) के साथ-साथ अन्य देशों में आवास समस्या भी बहुत महत्वपूर्ण बन गई है तथा नगर नियोजन पर भी पर्याप्त ध्यान दिया गया है। हमारा देश इस दृष्टि से बहुत पीछे है क्योंकि यहाँ पर कुछ स्वार्थी को छोड़कर, देश में आवास केवल व्यक्तिगत रूप से ईंटों व मिट्टी का एक संघय मात्र ही है। प्राथमिक आवास असा कि माय से ही निर्मित है औद्योगिक क्षेत्रों में नहीं पाये जाते। प्राथमिक आवासों की अपनी कुछ विशेषताएँ हैं और उसकी कुछ ऐसी विशिष्ट पद्धतियाँ हैं जिनके कारण पिछली पढ़ाई के आवास-जाताकरण से प्राथमिक आवास भिन्न होते हैं। मकानों का निर्माण सीक कामीन उपयोग के हेतु किया जाता है और इस कारण उनको केवल दीर्घता से नाम कमाने के निमित्त नहीं बनाया जाता। आवास एक आयोजित व्यवस्था है और इस कारण इसको व्यापारिक दृष्टि से नहीं देखना चाहिये। आवास से तात्पर्य यह नहीं है कि परिवारों का स्वयं संवर्धित रूप से विस्तार हो जाय या ईंटों को एक स्थान पर एकत्रित कर दिया जाय। आवास का एक आदि और एक अन्त होता है और इसका एक भौतिक रूप भी होता है। इसका एक भाग बूमने भाग से सम्बन्धित होता है और प्रत्येक भाग एक उद्देश्य विशेष की पूर्ति करता है। इसमें वैदिक जीवन की सुनतम सुविधाएँ जैसे वायु जाने जाने के लिए संवातन, सूर्य प्रकाश प्रत्येक खिड़की से प्राप्त व सुहावना हरव पर्याप्त एकान्यता बीमारी तथा प्रसूतिकारकता में आश्चर्य लक्ष्मई की सुविधा तथा बच्चों के खेलने के स्थान आदि होनी चाहिये। आवास केवल मौसम से बचाव जाना बनाने और सोने के लिये ही

* *Modern Housing* by Catherine Bauer quoted by the Labour Investigation Committee Report page 294

नहीं होता वरन् यह विषय सामाजिक रीतियों का कन्द्र भी है। फिर एक प्राकृतिक मकान उस कीमत पर मिमता चाहिये, जिस शीतल प्रपचा कम धाम का शक्ति भी दे सके।

जनसंख्या में वृद्धि —

हमारे औद्योगिक क्षेत्रों में कितना बड़ा प्राकृतिक बूढ़ के उपरोक्त वर्णानुसार है प्रपचा उसका निकट भी प्राप्त है? सम्भवतः कोई भी नहीं प्रपचा इतना कम कि उनकी संख्या समुद्र में एक बूढ़ के समान है। आवास समस्या दिन प्रति-दिन बढ़ित होती जा रही है और वर्तमान आवास व्यवस्था अत्यन्त असन्तोषजनक है। औद्योगिक क्षेत्र बहुत भीड़-भाड़ वाले हो गये हैं। प्राप्य भूमि की अपेक्षा जनसंख्या में अधिक वृद्धि हुई है। बम्बई, कलकत्ता प्रहमवाबाद जैसे शहरों की जनसंख्या बहुत बढ़ गई है तथा छोटे नगर एवं अतिक्रमिता क्षेत्रों में भी प्रपचा एक विशिष्ट स्थान बना लिया है। न केवल जनसंख्या में ही वृद्धि हुई है वरन् निम्न कई वर्षों से गावों से शहरों व नगरों की ओर जनसंख्या बढ़ती गई है। १९२१ की जनगणना के आँकड़ों से सात होता है कि १९४१ तथा १९५१ के १ वर्षों में ऐसे ७३ नगरों की जनसंख्या में जिनमें १ लाख या अधिक आबादी थी ४३-८% वृद्धि हुई। मई देहली में १९७७% मद्रास में ८३९% बम्बई में ६३१% कलकत्ता में २९% तथा उ.प्र. के १६ नगरों में १३-७% जनसंख्या की वृद्धि हुई है। १९६१ की जनगणना के आँकड़ों से भी स्पष्ट हो जाता है कि औद्योगिक नगरों की जनसंख्या तीव्र गति से और बहुत अधिक मात्रा में बढ़ रही है। देहली की जनसंख्या में ही १९२१-१९६१ के मध्य ५१-६ प्रतिशत वृद्धि हो गई है। औद्योगिक क्षेत्रों में जनसंख्या की यह वृद्धि अतिक्रमण प्रामाण्य जनता के नगरों में धाम के कारण हुई है जो बड़े पैमाने के उद्योगों के विकास के कारण श्रमिकों की मांग बढ़ने से नगरों में आई है। कारखानों की स्थापना के साथ-साथ कोई नगर नियोजन नहीं हुआ और इसका परिणाम यह हुआ कि श्रमिकों के मकान बड़े मध्यमवर्गित वर्ग से बनाये गये। भूमि तथा इमारती सामान के उच्च मूल्यों के कारण नये मकान नहीं बनाये गये अतः भीड़-भाड़ की समस्या और भी बढ़ गई। विभाजन के पश्चात् शरणार्थियों के आ जाने तथा प्राकृतिक मुक्त की संकुल परिवार को छोड़कर प्रपचा पर बसाने की इच्छा के कारण भी समस्या की गम्भीरता अधिक हो गई है। काम के अधिक बच्चे व मातापिता की सुविधाओं में कमी के कारण श्रमिकों की फँसटरी के पास ही रहने की इच्छा के कारण भी यह समस्या अधिक गम्भीर हो गई है।

औद्योगिक श्रमिकों के आवास की सामान्य बहायें —

सरकार की विभिन्न आवास योजनाओं के होते हुये भी श्रमिकों की वर्तमान आवास व्यवस्था अत्यन्त अधोनीय है। रॉयल श्रम प्रायोग के अन्तर्गत इस सम्बन्ध में धाम भी शरण है। नगरों तथा औद्योगिक क्षेत्रों में एक दूसरे से दूरे हुये स्थान भूमि का उच्च मूल्य तथा श्रमिकों की अपने उद्योगों के निकट रहने की आवश्यकता के

कारण अधिक मीठ और बनी घाबारी में वृद्धि हुई है। व्यस्त देशों में प्राप्त भूमि का पूरा उपयोग करने के हेतु मकान एक दूसरे से मग्न कर बनाए जाते हैं। यहाँ तक की छोटी न छोटी छुट्टी है और शीशर में शीशर मिली होती है। वास्तव में भूमि इतनी मूल्यवान है कि मकानों में पहुँचने के लिये महकों के स्थान पर छोटी एवं संकरी गलियाँ हाँकी हैं। सफ़ाई की और कोई स्थान नहीं दिया जाता और मह इन बात से प्रकट है कि यहाँ हुए कुओं के डेर पडे रहने हैं और गन्दे पानी के गड्ड भरे रहते हैं। टट्टियों के समान में हवा और भरनी दोनों में पन्दा बाताबरण जैसे बाठा है। प्रत्येक मकान जिनमें चौकट लिफ्टकी और संवातन (Ventilation) का प्रभाव होता है प्रायः एक कमरे वाले होते हैं, जिनमें वायु के आवागमन का मार्ग कबल एक द्वार होता है जो कि इतना नीचा होता है कि उसमें बिना कुछ पृथना घसम्भव है। एकाग्रता पान के लिये पुराने कनस्ट्रक्शनों के टौन एवं पुठनी बारियों को परदे के रूप में काम में लाया जाता है जिसमें प्रकाश एवं निर्मल वायु का धाना और भी बन्ना हो जाता है। इस प्रकार के घरों में मनुष्य जन्म तथा है माता है साठा है, रहता है और मृत्यु को प्राप्त होता है।^१

ऐसी ही श्रमिका का वर्णन १९२८ में ब्रिटिश ट्रेड युनियन काँग्रेस के एक प्रति निधि मण्डल द्वारा किया गया था 'हम जहाँ भी ठहरे हमने श्रमिकों के बर्तारों का रक्षा और यदि हम उन्हें न देखते तो कभी विश्वास न करत कि ऐसे कुएँ स्थान भी हैं पकियाँ न मकानों का समूह हाठा है जिनका मासिक किरायेदारों प ४५ सि० प्रतिमास किराया लता है। प्रत्येक आशान में एक घबेरी काउरी जो खूने सामा पकाने सोने बाहि सभी के काम घाठी है ६ × ६ माप की होती है। इनमें मिट्टी की शीशरें और बीनी लपरेंस की धनं होती है। इसके सामने एक छोटा ना खुसा आशान होता है जिसका एक काना चौबालम के काम में घाठा है। खून क कमरों में टूटी धन समवा सुने हुए प्रवेश द्वार के घटिरिक कोई संवातन नहीं होता। दर के बाहुर सभी संकरी एक नामी हाँकी है जहाँ सब प्रकार का कूड़ा करकट संचित होता है और जहाँ कीड़े और मक्खियों की अधिकता होती है सब मकानों के बाहुर भूमि की पट्टी के एक कोर पर पकियों के बीच खुसी नासियाँ होती हैं कूड़ा - करकट और धन्य धन्य की बीजों से जिनमें से प्रति तीक्षण दुग्ध घाठी रहनी है कही कही पर बन्ध भी हो जाती है। यह तो स्पष्ट ही है कि यह नासियाँ बन्धों के टट्टी करने के काम में लाई जाती हैं।^२

यही श्रावणों की सामान्य श्रमिका है जो आज तक बनी हुई है। यह किसी भी श्रीश्रीयोगिक कन्ड को स्वयं देखन से स्पष्ट हो जायगा। नेकक न स्वयं उत्तरी भारत के श्रीश्रीयोगिक कन्डों में ऐसी शोबनीय श्रावणों का श्रमिकजन किया है। श्रम मनुष्यबल-समिति ने भी बताया था कि उक्त मनुष्य प्रस्तुत गवाही घादि का रक्षक

1. Report of the Royal Commission on Labour page 271-72

2. Quoted in Palme Datt's India Today page 361

हुए वह इस निष्कर्ष पर पहुंची कि सम्पूर्ण देश में वर्तमान व्यवस्था उतनी ही खोजनीय थी जितनी कि रॉयस धम प्रायोग ने बताई थी। १९४६ की स्वास्थ्य सर्वेक्षण एवं विकास समिति अर्थात् 'मोर समिति' ने भी धमिकों के रहने की खोजनीय बधाई की थी और ध्यान आकृष्ट कराया था। पिछले कुछ वर्षों के बाद प्रायः समस्या घर-आश्रितियों के धान के कारण और भी अधिक गम्भीर हो गई। वर्ष १९५२ में कानपुर में धमिकों की बन्धी बस्तियों का प्रथमोक्त कर पं. नेहरू को बड़ा आश्चर्य तथा झुंझलाहट हुई थी। बड़े शहरों में इतनी भीड़ और जमीन आबादी होती है कि वास्तव में उसका वर्णन करना भी कठिन है और छोटे छोटे शहरों में भी व्यवस्था अच्छी नहीं है। किरानेदारों द्वारा भी मकान फिर से किराने पर उठाने का रिवाज भी बहुत अधिक पाया जाता है। कसकता और बन्दूक जैसे शहरों में बहुत से धमिक बिना किसी आवास के पाए जाते हैं। ऐसे धमिक दिन में कर्म करते हैं और रात को सारे सामान को तकिये की बगल प्रयोग कर फुट पाथ पर सो रहते हैं। हाल ही में वर्ष १९६२ के प्रारम्भ में जो उत्तरी भारत में शीत लहर (Cold wave) आयी थी उसमें आवास रहित व्यक्तियों की खोजनीय बधाई का हाल सबको विदित है। कानपुर, देहली आदि कुछ बड़े शहरों में जो बहुत से ऐसे व्यक्ति जो सड़कों पर सोते थे मृत्यु को प्राप्त हो गए। कबल हाल ही के कुछ वर्षों में सरकारों की विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत बड़ा सुधार हुआ है फिर भी अभी बहुत कुछ करने की बाकी है।

विभिन्न औद्योगिक केन्द्रों में आवास की बहाल —

बन्दूक में धमिक ऐसी श्रमिकों या शोषारों में रहते हैं जिनको 'जबेनी' कहते हैं जो कभी बीमारों तथा गारियस की सूखी बट्टियों की छतों से बनी होती है। परन्तु अधिकतर धमिक ऐसे मकानों में रहते हैं जिनको 'जॉल' कहते हैं जो कि ३ या ४ मजिस् उंचे पक्के मकान होते हैं। जहाँमें एक सामान्य बरतमा प्रथम बीच में से एक रास्ता होता है जो एक कमरे वाले मकानों तक सञ्चलता है। यह 'जॉल' बियेय कम से धमिकों के लिए सित क्षेत्रों के निकट बनाए जाते हैं और इस कारण इनमें बड़ी भीड़ रहती है। इन जॉलों की व्यवस्था बँसी ही खोजनीय है और कि रॉयस धम प्रायोग का उपरोक्त बर्णन है। प्रायोग ने यह भी कहा था कि इनमें सुधार होना असम्भव था और इसलिए इनको गिरा देना ही ठीक था। बन्दूक में मगर निगम के भी कुछ 'जॉल' हैं। बन्दूक शहर सुधार ट्रस्ट ने भी धमिकों के हेतु कुछ आवास एवं धर्म स्थायी श्रमिकों का निर्माण किया है। बन्दूक के बन्दूकगाह ट्रस्ट ने भी अपने सपमप ३०% धमिकों को आवास की सुविधा दी है और धम कल्याण अधिकारी की धर्मिता में जो मित्र स्वार्थों पर स्वतन्त्र आवास क्षेत्रों का निर्माण किया गया है। इनमें २,३६ ठीकरी और बीपी मशी के कर्मचारी रहते हैं। बन्दूक मिस मालिक परिवार की २३ सदस्य मित्तों ने भी अपने धमिकों के लिए १६६ जॉल बनवाये हैं जिनमें ४८४४ एक या दो कमरे वाले मकान

है। इनका क्रियाया १६ म नकर ७६० प्रति माह तक जाता है और जो कमरे बाने मकानों का क्रियाया १४ ६० तक है। इनमें सगमम १६ ००० शमिक (७१%) एहने है। शमिकों के लिए मकान बनाने के सम्बन्ध में सरकारी प्रयासों का उत्पन्न आगामी पुष्ठों में किया गया है।

पहमशाबाद में आवास की स्थिति भी उतनी ही शयन्तापजनक है। मकान एक दूसरे से इतने सटे हुए हैं कि कभी ता हजारां श्यक्ति इपर उबर भूमत विकारि बेते हैं और कभी यकायक दूसरों को स्थान देने के हनु एक काने में वायव हो आते हैं। शमी कुछ समय पहन सरकार की शमिकों क लिए कोई आवास योजना नहीं थी। नगरपालिकाओं ने शमी हाम ही में हरिबनों और शय्य श्यक्तियों के लिए कुछ मकान बनबाए हैं। इसके पतिरिक्त मिस शमिकों की एक संस्था शर्वात् पहमशाबाद मिस आवास कम्पनी ने शमिकों के लिए ८०० मकानों की श्यवस्था की है। प्रत्येक मकान में एक कमरा रसोईपर व एक बरामदा होता है। उनका क्रियाया ४ ६० प्रति मास शयुक्त किया जाता है। यहाँ पर भी सफाई पानी और स्वच्छ आतावरण क शिय में शनक शिकायतें हैं। पहमशाबाद व नपडा मिस मकदूर परिषद न भी ६० मकानों के एक श्रेष का निर्माण किया है जो कि क्रियाया खरीर श्यवस्था (Hire Purchase System) पर क्रियाये पर दिए गए हैं और प्रत्येक क्रियायेवार १० ६० प्रति माह शुकता है और २० शर्ष म उस मकान का श्यामी बन जाता है। प्रत्येक मकान में दो कमरे, एक रसोई एक बरामदा और एक शाला है। फिर पहमशाबाद में १०० से शधिक शमिक शुककारी आवास शमितियों भी हैं शिनकी श्यापना पहमशाबाद के नपडा मिस मकदूर परिषद के प्रयत्नों द्वारा हुई है। उन्होंने ४०० मकानों का निर्माण किया है शिनमें से प्रत्येक म एक खून का कमरा एक शाला कमरा एक रसोईपर और दो शलवार बरामदे शम्मिशित हैं। फिर भी मिस शिस संस्थाओं द्वारा प्रशाम की गई आवास सुविधाएँ शमिकों के लिए श्यक्तिपत मकान की सुविधाओं की तुलना में शत्रुत कम हैं। शमिकों की शधिक संस्था शब भी 'आत' में ही रहती है शिनमें म बहुत सी सखे शरामान से निर्मित की गई हैं। इनमें कोई सुविधाएँ नहीं हैं और सफाई की श्यवस्था शरपन्त शोषनीय है। क्रियाया भी बहुत शधिक लिया जाता है। इन 'आतों' की श्यारें भी शंबल शय यमोमे द्वारा शरण की हुई शयाओं शैंकी ही हैं।

१९३८ तक कागपुर के नगर सुधार ट्रस्ट ने २३९ श्वार्टेंटों का निर्माण किया था शकिन.बाद में उनको शामत शूस्य पर शुककारी आवास शमिति नगरपालिका एवं श्यक्तिपत शमिकों को हस्तान्तरित कर दिया गया। प्रत्येक पक्ति में ७० श्वार्टेंटों का निर्माण किया गया है जो एक दूसरे से सट कर बनए गए हैं। १९३९ से इन श्वार्टेंटों में शनी शीड़ हो गई है।

सरकार द्वारा शमिकों के लिए आवास योजना की कागपुर में कोई सुविधा नहीं थी। शैवक १९४३-४४ में श्रांतीय सरकार ने २,४०० पारिवारिक मकानों के

निर्माण के लिए मगर सुमार ट्रस्ट को १३३ साल रुपये ब्याज मुक्त ऋण के रूप में प्रदान किए गए। इन क्वार्टरों का निर्माण हो चुका है लेकिन स्वयं जाकर देखने से पता लगा है कि सफाई की कोई सुव्यवस्था नहीं है और निर्माण में लगाया गया सामान भी उत्तम क्वालिटी का नहीं है। फरवरी १९५२ में प्रधान मंत्री पं० नेहरू के कानपुर जाने के पश्चात् ही सरकार ने कानपुर में औद्योगिक इंधन समस्या की ओर ध्यान दिया और धन अधिकियों के लिए बहुत से क्वार्टरों का निर्माण-कार्य हाथ में लिया है। (सरकारी योजनाओं का अन्तर्गत देखिए)

कानपुर में मासिकों की आवास-योजनाएँ भी हैं। १९३८ तक ३० मकानों की व्यवस्था मासिकों ने की थी। तब से स्थिति में कोई विशेष उन्नति नहीं हुई है। अधिकियों की संख्या को दृष्टि में रखते हुए कानपुर में मासिकों के लिये १% से भी कम अधिकियों के लिए आवास व्यवस्था की है। मासिकों में ब्रिटिश इंडिया कॉरपोरेशन अधिकियों की आवास-सुविधा प्रदान करने में धनहीन थी। उन्होंने दो स्थानों पर— अर्थात् ऐमेन गंज और मैक रॉबर्ट गंज में १६६ क्वार्टरों का निर्माण किया है जिनमें साधारणतया एक या दो कमरों के मकान हैं। एक कमरे वाले क्वार्टरों का किराया १।) प्रति मास तथा दो कमरों वाले क्वार्टरों का किराया ४।) प्रति मास है। एस्मिन मिस्त ने भी दो आवास क्षेत्रों की व्यवस्था की है — जिनमें मैकसवेल गंज और एस्मिन मिस्त के आवास क्षेत्र कहते हैं। इनमें १५६ मकानों की व्यवस्था है। प्रति मास किराया २।) और ६।) के बीच है। वे क. मिस्त ने भी अपने अधिकियों के लिए एक बड़े आवास क्षेत्र का निर्माण किया है।

कानपुर नगरपालिका ने भी पाकों व उद्योगों में कार्य करने वाले अधिकियों के लिए और अधिकियों के लिए कुछ बिना किराए के क्वार्टरों की व्यवस्था की है। चार स्थानीय क्षेत्रों में लगभग २० क्वार्टरों का निर्माण किया गया है और उनमें लगभग ५० व्यक्ति रहते हैं। क्वार्टर तीन प्रकार के हैं — एक कमरे वाले दो कमरे वाले और बरामदे के साथ दो कमरे वाले। पानी व मस सामान्य है और स्त्री पुस्तकों के लिए भवन टट्टियों की व्यवस्था है।

फिर भी कानपुर में अधिकतर अधिक बस्तियों एवं झुग्गीयों में रहते हैं जो व्यक्तिगत मकान-आवासों की सम्पत्ति होते हैं। झुग्गीयों को स्वयं जाकर देखने से उनमें रहने वाले अधिकियों की औद्योगिक तथा वास्तविक ज्ञान हो सकता है और रोजगार भ्रम प्रयोग द्वारा बणित व्यवस्था प्राप्त भी उत्पन्न है। रोजगार भ्रम प्रयोग से इन झुग्गीयों का मिश्रित-सिद्धि बर्तन दिया जा सकता है "अधिकतम मकान ८ × १ गज के एक कमरे वाले हैं जिनमें से कुछ में एक बरामदा है तथा कुछ में उत्तम भी सम्भव है, और ऐसे आवास प्रायः दो तीन या चार परिवारों द्वारा लिए जाते हैं। इन मकानों के फर्श साधारणतया पृथ्वी की सतह से नीचे होते हैं और नालियों संवातन (Ventilation) और सफाई का उनमें पूर्ण अभाव है।" तब से यदि कोई सुधार हुआ है तो वह केवल कुछ सड़कों तथा नालियों की सुविधाएँ हैं अथवा प्रायः

की उनकी बचाने उतनी ही असन्तोषजनक है जितनी कि पहले थी।

कानपुर-शम-जाँच-समिति के मुसब पर उत्तर प्रदेश के धार्मिक ज्ञान ब्यूरो (Bureau of Economic Intelligence) ने १९३८-३९ में कानपुर नगर के मिस क्षेत्र के मकानों की दशाओं की जाँच की जिसमें अत्यन्त उमने समस्त बस्तियों एवं प्रहातों का सर्वेक्षण किया। सर्वेक्षण के अनुसार ६५% परिवार एक कमरे वाले मकान में रहते थे, ३१% दो कमरे वाले में तथा केवल ४% तीन या चार कमरों वाले मकानों में रहते थे। चार कमरों से अधिक कमर वाले मकान नहीं थे। कमरे बहुत ही छोटे थे तथा उनमें बहुत ही नीचे दरवाजे सजे हुए थे। लगभग ६२% मकानों के कमरों में बिड़कियों व संवातन का प्रभाव था और ७२% कमरों में कच्चा फर्श था। बरामदों के फलस्वरूप उनमें कोई एकान्ता नहीं थी तथा मकान की चारदीवारी के अन्दर का पक्कीकृत बराबर के मकान की छत से पूर्णरूपेण किया जा सकता था। पानी का प्रबन्ध बहुत असन्तोषजनक था। लगभग ६९% परिवार सार्वजनिक नल से पानी लेते थे और केवल ७% के अपने व्यक्तिगत नल थे। लगभग ३०% व्यक्ति कुओं से पानी भरते थे। कुओं और नलों पर बहुत मीढ़ हो जाती थी अतिसतम प्रति मिनट से २३३ व्यक्ति और प्रति कुएँ से ३१३ व्यक्ति पानी भरते थे। २६% परिवारों के लिए टट्टियों की कोई व्यवस्था नहीं थी। केवल १९% मकानों में शौचालयों की व्यवस्था थी और सेव परिवार सार्वजनिक शौचालयों में जाते थे जो कि अत्यधिक पन्दे होते थे। सफाई की दशा बहुत शोचनीय थी और बर्तों के दिनों में अचिकांश मकानों की छतें टपकती थीं और बस्तियों में पानी भर जाता था। सड़कों की दशा बहुत असन्तोषजनक थी। सड़कों पर प्रकाश का प्रबन्ध भी नहीं था। इस सम्बन्ध में कानपुर-शम-जाँच-समिति ने इस क्षेत्र के प्रादाओं के विषय में लिखा है कि "एक अपरिचित के लिए रात्रि में इन स्थानों को देखने जाना एक संकटमय कार्य है। टहने में मोच तो अवश्य ही आ जाएगी जबकि किसी पन्दे कुएँ या निस्तृत प्रकार के लड्डू में तिर नहीं गुड़वा लेना भी कोई असम्भव बात नहीं होगी।" कानपुर में सड़कों शक्ति भूमि के नीचे बनाए गए कमरों में रहते हैं जिसको देखकर समिति के एक सदस्य की धांस में सड़क के दिनों की आइनों की याद आ गई, और उसने कहा "इन पन्दी बस्तियों में रहने वालों की बायुधानों द्वारा कमबर्षा व मोतावारी से तो रक्षा हो सकती है परन्तु ऐसे रहने वाले शक्ति सरलता से मनुष्य के शत्रु मच्छर, कीड़े अटमक धांस के सिकार हो जाते हैं।" डा० श्री अग्निहोत्री द्वारा १९३० और १९३४ में किए गए सर्वेक्षणों से स्पष्ट है कि कानपुर में मकानों की दशा मुझ के पश्चात् के वर्षों में बहुत ही शोचनीय हो गई थी और मीड़माड़ पन्दी शक्ति अत्यन्त और सामाजिक पठन प्रायः इन प्रहातों के साधारण लक्षण हैं। डॉ० अबाहराल नेहरू ने जब फरवरी १९५२ में कानपुर का निरीक्षण किया तो उन्हें इन पन्दी बस्तियों को देखकर अत्यन्त चमका लगा था। उन्होंने बिड़किसाहू व अनेकपूर्व वर्षों में कहा था "अब शक्ति बस्तियाँ मानवता के अत्यधिक पठन का

प्रदर्शन करती हैं। जो व्यक्ति इन स्थितियों के लिए उत्तरदायी है उन्हें फंसी दे देनी चाहिए।" उन्होंने यह भी कहा कि इन गम्भीर स्थितियों को धीम ही बना देना चाहिए और उनकी बगल प्रस्थायी रूप से स्वस्थ व साफ बगइलों में भर बना देना चाहिए। व्यक्तिगत पूछताछ से ज्ञात हुआ है कि इन स्थितियों में रहने वाले श्रमिकों तथा अन्य लोगों को अधिकारों के अभाव में इन स्थितियों एवं बगइलों में सुधार करण की धोर से कुछ उदासीन थे। हास के बगों में ही इस धोर कुछ सुधार किए गए हैं लेकिन समस्या केवल इन गम्भीर स्थितियों के सुधार की ही नहीं बरए उनक पुनर्निर्माण की और श्रमिकों के लिए इनके स्थान पर अन्य स्थान की व्यवस्था करने की है।

कसकता में भी धारास की दशाएँ कोई धन्नी नहीं हैं। मालिकों ने अपने श्रमिकों के धारास की व्यवस्था के प्रति बहुत ही उदासीनता दिखाई है। सरकार धर्नाय मध्यस्थ और निजी मकान मालिकों ने अधिकतर श्रमिकों के लिए ऊँचे किराए पर सस्ते मकानों की व्यवस्था की है। जहाँ श्रमिकों के मकान हैं उन बगइलों को बस्ती के नाम से पुकारा जाता है जिनका कसकता नियम की एक रिपोर्ट में 'बेसी धाम' के नाम से बर्णन किया गया है और जिनमें बिना किसी योजना के बिना एक के तथा बिना मालिकों के भोपड़ियाँ बनी हैं जिनमें न कोई संवातन होता है और न कमी सफाई होती है। इनमें से अधिकतर प्रकाशरहित नम और टपकने वाली हैं और इनमें कुछ पाप गम्भीर रोग और बीमारियों ने बर कर लिया है। बगइ पर अन्ये और सड़ी अपस्थितियों और कुँड़े से भरे बरबूबार पानी के गड्ढे भी पाए जाते हैं जिनकी हानिकारक बाहु बाठावरण को सृष्टि करती है। ऐसे ही अन्ये ताजा श्रमिकों के पारिवारिक कार्यों के लिए असुविधा के साधन हैं। रास्त तग है सड़कों का तो नामोनिधान भी नहीं है। स्वच्छता का कोई प्रबन्ध नहीं है। बस्ती के प्रत्येक मकान के दरवाजे पर कुँड़े के डेर को उठाने का भी कोई प्रबन्ध नहीं है। अधिकतर मकान कच्चे और पूस की छतों के बने हैं। उनके कमरे बहुत छोटे और लंग हैं जो कि रसोई बर और मखार-बूह के भी काम पाते हैं और श्रमिकों के लिए बाहर खुले में सोना अधिक सुविधापूर्व होता है। इन मकानों में संवातन सिड़की प्रकाश और एकाग्रता की कोई व्यवस्था नहीं है। बगल के धास्ट्रेनियन गवर्नर श्री केसी ने १९४५ में इन स्थितियों का निरीक्षण किया और कहा कि "जो कुछ मैंने देखा है उसकी भर्भकरता से मुझे बचका लगा है। मनुष्य बुरे मनुष्यों को इन बगइलों में रहने के लिए कभी भी स्वीकृति नहीं दे सकते। बड़ धाघा की गई की कि इसके पश्चात् कुछ सुधार किए जायेंगे। लेकिन इसके बाद के उपद्रव और बंगाल के विभाजन से उत्पन्न हुई समस्याओं ने इस प्रबन्ध को बाट्टई में डाल दिया और धारास की दशाएँ धरखाजिबों के जारी संस्था में धाने के कारण पहले से भी अधिक धोचनीय हो गईं।

कसकता में सूती बस्म मिलों के लगभग ६२% श्रमिकों को मालिकों द्वारा

कान प्रदान किए गए हैं। मकान पक्के हैं परन्तु पानी व स्वच्छता का प्रबंध प्रत्यन्त असंतोषजनक है। कुछ मित्रों तो कुछ भी किराया नहीं लेती परन्तु अन्य १५-२० से पैसे मासिक किराया लेती हैं। कसकता बन्दरगाह के लगभग ५०% कर्मचारियों को भी बिना किराये के क्वार्टर मिले हुए हैं और वहाँ व्यवस्था भी इतनी बुरी नहीं। कुछ और कारखानों के मालिकों ने भी अपने कुछ धर्मियों के लिए मकानों की व्यवस्था की है जैसे इन्डियन अजरम डेवीगेशन एण्ड रेलवे कम्पनी हावड़ा ब्यापार मनी कुछ रासायनिक कारखाने सिगरेट व चाँच फॅक्टरियाँ तथा कुछ अन्य कारखानों अपने कुछ धर्मियों के लिए मकान बनाये हैं। परन्तु अधिकतर क्वार्टर बँकरों जैसे दो एक कमरे और बरामदे प्रकवा बिना बरामदे वाले हैं। भीड़भाड़ सामान्य है। संवाहन और स्वच्छता असंतोषजनक है। कलकत्ता तथा निकटवर्ती क्षेत्रों में कुछ बूट मित्रों ने भी अपने कुछ धर्मियों के लिए मकान प्रदान किए हैं। ऐसे मित्रों की संख्या जिनको मकान मिले हैं विभिन्न बूट मित्रों में ७१% से १००% तक है। पश्चिमी बंगाल सरकार द्वारा एक चाँच से पता चलता है कि १९५६ में बूट मिन के कर्मचारियों के लिए ४८८१२ मकानों की व्यवस्था की जिनमें ४८१३७ मकान केवल एक कमरे वाले थे। यह पर अधिकतर बँकरों की भाँति हैं जिनमें ३ बीड़ा एक संयुक्त बरामदा है जिसका एक भाग रसोई के कार्य में लाया जाता है। १४% मकानों में धमिक एवं उसके परिवार को १०० वर्ग फीट से भी कम जगह मिलती है। प्रकाश, संवाहन सफ़ाई व शौचालयों की व्यवस्था प्रत्यन्त असंतोषजनक है। हम ही में बूट मिन कर्मचारियों के लिए आवास क्षेत्र बने हैं। इनमें से एक अच्छा आवास क्षेत्र बिड़मा बूट मिन द्वारा निर्मित किया गया है जो कि मिन के लगभग ४३% कर्मचारियों को पक्के मकान उपलब्ध करता है। इनको कुल संख्या लगभग १२०० है। फिर भी अधिकतर धमिक जैसा कि ऊपर बताया गया है, कसकता की वस्तियों में रहते हैं, वहाँ की व्यवस्था प्रत्यन्त शोचनीय है।

मद्रास में भी आवास-व्यवस्था समान रूप से असंतोषजनक है। बरामदे प्रकवा बिना बरामदे वाले एक कमरे के मकानों में अधिकतर धमिक रहते हैं जिनमें बिड़की व संवाहन भी नहीं हैं। इँटों की पक्की इमारतें हैं तथा प्रत्येक मकान को घने छोटे-छोटे भागों में बाँट दिया गया है और प्रत्येक भाग में धमिकों का एक परिवार किराये पर रहता है। कमरे साधारणतः १० × ८ से १२ × १६ तक बाप के होते हैं। शौचालयों का प्रबन्ध प्रत्यन्त असंतोषजनक है। स्नानघरों का नितान्त अभाव है और मस सामे के होते हैं जिनके कारण अनेक भगड़े लड़े हो जाते हैं। कमरों में बहुत कम स्वच्छ हवा प्राप्ती है तथा उनमें धुंधला होता है। किराया १) से १०) २० प्र० मास तक होता है। इसके अतिरिक्त मद्रास निगम अपने बरामदे विभाग के लगभग ३५% कर्मचारियों को आवास की सुविधाएँ देता है। इससे ३३४ क्वार्टर बनाये हैं जिनमें २४४ एक कमरे वाले और ११० दो कमरे वाले हैं। किराया क्वार्टरों के अनुसार एक घने से २) प्रति मास तक है। प्रकाश

संवादन तथा जनपूर्ति की व्यवस्था भी धनस्रोतजनक ही है। इसके प्रतिरिक्त मन्त्रालय में एक दूसरी नीति के भी धारण हैं जिन्हें 'थेरी' कहते हैं। मूम नदी के किनारे तथा ग्राम्य कुल स्थानों में छोटी-छोटी मूम की झीलियों के यह धारास क्षेत्र हैं। यह बिना किसी सफाई व सुविधा के बनाये गये हैं। यह गन्दे तम धीर धस्तासम्पूण है धीर वर्षा ऋतु में यह मिट्टी की झीलियाँ सूती हैं। सारा स्थान गन्दगी धीर कुड़े स परिपूर्ण रहता है। यह झीलियाँ धमिकों द्वारा उधार लिए हुए धन से ऐसे क्षेत्र में बनाई जाती हैं जहाँ मूम का यह किराया बेते हैं।

मन्त्रालय में एक धस्ता उधारण जो मिलता है वह बकिधन तथा कर्णिक मिलों द्वारा धपने १० प्रतिशत धमिकों को धस्ता धारास व्यवस्था प्रदान करता है। उन्हीं धार धामो में सबधग ६५६ मकान बनाये हैं। साधारणतः हर मकान में रहने का एक कमरा एक रसोई घर, एक स्नानाघार एक बरामदा धीर एक धायन होता है। पानी के मस की भी व्यवस्था है। साधारणतः किराया १(1) व मासिक है परन्तु बड़े मकानों का किराया १) से ५) व १० प्रति मास तक है। धामों में धमी सड़कों पर बिजली का प्रकास है धीर इस प्रकार सफाई तथा पानी का ध्यय कम्पनी द्वारा दिया जाता है। फिर भी सब धमिकों में से ऐसे धमिकों की सख्या धिनको गृह उपसब्ध हैं केवल १ प्रतिशत है।

जमशेदपुर में धारास की सुविधा उसकी मात्र से बहुत कम है धर धीर धाड़ साधारण बात है। टाटा के द्वारा जो कि जमशेदपुर के धीरधमिक मर के स्वामी हैं धारास की कुछ धस्ता सुविधाएँ प्रदान की गई हैं। टाटा धीर व इस्यात कम्पनी ने धब तक धपने धमिकों के लिए १५ ०० क्वार्टर बनाये हैं। धमिक को कम से कम दो कमरे एक रसोईघर, एक स्नानाघार धीर एक धीरधाम धामे मकान मिलते हैं। सभी घर पक्के हैं बिजली की भी व्यवस्था है धीर कुछ घरों में पंखे भी हैं। एक कमरे वाले धारास गृहों को छोड़ कर धिनमें धामे के धीरधाम है धमी क्वार्टरों में प्लस की व्यवस्था है। पानी के मस की व्यवस्था सन्तोषजनक है। फिर भी मासिकों में धमृधन धमिकों की जो धसन्तोषजनक स्थितियों में रहते हैं धारास व्यवस्था की धीर ध्यान नहीं दिया है। कम्पनी की धारास ऋण-धोरना के धन मस कम्पनी द्वारा पट्ट पर धी हुई धूम पर धमिकों के द्वारा लपधग ८ १ मकान बनाये गये हैं। धमिकों के द्वारा एक सहायि-धारास-धमिति भी बनाई गई है। जमशेदपुर की धिन ध्येत कम्पनी ने भी ६३१ पक्के घर बनाये हैं, बकि धमिकों में स्वयं भी कम्पनी के धारास ऋण की सहायता से धिस पर १ प्रतिशत धर से ध्याज वसूल किया जाता है ५ ० कच्चे मकान बनाये हैं।

देहली में भी गन्धी बस्तियों की धवस्था धति धीरनीय है, धीर हाल ही में प्रधान मंत्री तथा धधिकारियों का ध्यान इस धीर धारकपित हुआ है। यहाँ लपधम ७ ० कटरे हैं जहाँ कि जो मात्र से धमिक धमिक धमानधीय व्यवस्था में रहते हैं। नवम्बर १९३८ में एक सर्वधण रिपोर्ट से पता चलता है कि देहली के ८ धमिक-

कैम्पों में १२५,००० श्रमिक सुव्यवहारक एवं प्रमाणवी व्यवस्थाओं में रह रहे हैं। प्रमुख श्रमिकों तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं की एक समिति इन श्रमिकों को सुविधाएँ देने के हेतु बनाई गई है।

मोनापुर में आवास व्यवस्था सन्तोषजनक प्रतीत होती है तथा मासिक अपने श्रमिकों को आवास की सुविधाएँ प्रदान करने में रुचि लेते हैं। तगर में भीड़भाड़ नहीं है और अधिकतर श्रमिक दो कमरों वाले मकानों में रहते हैं। मद्रुरा में भी आवास व्यवस्था प्रायः सन्तोषजनक है और आवास क्षेत्र में दो-दो पक्के चरों की पंक्तियाँ हैं जिनमें प्रत्येक परिवार को पर्याप्त सुविधा है। उनमें एक रहने के लिए कमरा एक सोने के लिए कमरा एक रसोई एक मष्णर, एक शौचन एक बरामदा तथा सामने बाड़ी खुली हुई बगइचा है। हर पक्ति के लिए प्लम्ब गौबालय तथा पानी के नल सामने क है। मकान का किराया केवल ४) ८ प्रति मास है और यह १०) ८) के परभाव श्रमिक को अपनी सम्पत्ति हो जाता है। विद्यालय बाजार तथा शौचालय की सुविधाओं की दृष्टि से आवास क्षेत्र आत्म-निर्भर है। नागपुर की एग्जेंस मिस तथा बंगमौर की सिल्क सूती व ऊनी मिसों में भी अपने कर्मचारियों के लिए आवास क्षेत्रों का निर्माण किया है जिनकी व्यवस्थाएँ सन्तोषजनक हैं। चीनी उद्योग में मासिकों में ३० से ५० प्रतिशत तक कर्मचारियों को आवास की सुविधाएँ प्रदान की हैं। कागज, मासिक रसायन वर्ग रंगाई इजीनिपेरिंग आदि फेक्टरी उद्योगों में केबल बड़े-बड़े संस्थानों ने अपने श्रमिकों को आवास की सुविधाएँ प्रदान की हैं परन्तु ऐसे श्रमिकों की संख्या बहुत थोड़ी रही है। कुछ गोड़ी कर्मचारियों (Dock Workers) को भी आवास की सुविधाएँ प्रदान की गई हैं जिनकी संख्या साधारणतः ४ से १० प्रतिशत तक ही है।

अपनी स्थिति के कारण इन उद्योगों को भी अपने श्रमिकों को बड़ी संख्या में मकान देने पड़ते हैं। अधिकतर क्वार्टर बिना किराये के हैं। भरिया रानीगंज और हुजारी बाग में जाल-स्वास्थ्य-बोर्ड द्वारा निर्धारित विविध नमूनों और बर्तन के अनुसार ही मासिकों द्वारा मकान बनाये जाते हैं। इन मकानों में जिनको 'बोटा' कहते हैं, एक कमरा और एक बरामदा होता है, और यह प्रायः एक हूमेरे से सटे होते हैं। १९३४ में इन 'बोटों' की संख्या भरिया में ३७ ३८६ और आसनसोल में १६,११० और हुजारीबाग जनों में १ ४४२ थी। टाटा जमी कुछ बड़ी खानों में इन मकानों में एक घसम रसोई और स्नान-घर भी प्रदान किये गये हैं। रानीगंज की कोयले की खानों में समय-समय २० प्रतिशत श्रमिकों को मासिकों द्वारा मकान दिये गये हैं। हुजारीबाग की खानों के मासिकों ने आवास के लिये ६८८६ चरों का निर्माण किया है। यह कहा जाता है कि अधिकतर खानों में मकानों में भीड़ रहती है। अब कोयला-खान-कल्याण-निधि के समर्थन कुछ सुधार किया जा रहा है। (सरकारी योजनाओं के अन्तर्गत देखिये।)

शोमार की, सोने की खानों के मासिकों ने अपने श्रमिकों के लिये स्वच्छ

भाषा-शेख प्रदान किये हैं। यहाँ पर एक ब दो कमरे वाला लगभग ११,००२ क्वार्टर हैं जिनमें से ४४०० पक्के हैं। १९३० में ४०० घोर ध्वस्त क्वार्टर बने थे। किराया भी साधारण है जो एक कमरे वाले मकानों के लिये घाट घाना घौर को कमरे वाले के लिये १) ४० प्रथम १) ४० प्रति मास है। पानी की ब व्यवस्था सन्तोषजनक है। परन्तु जिन श्रमिकों को कम्पनी द्वारा मकान नहीं मिलते वह अत्यन्त अस्वस्थतापूर्ण स्थिति में रहते हैं। हत्ती मोगा खानों में कम्पनी द्वारा ०३३ मकानों की व्यवस्था श्रमिकों के लिए की गई है।

मध्य प्रदेश में म प्र० कच्चा रमनीज कम्पनी ने भी बाहर से घाये हुए श्रमिकों को मकान प्रदान किये हैं जिनकी प्रतिघट संख्या विभिन्न खानों में ४ से १०० तक है। इन मकानों की व्यवस्था विशेष सन्तोषजनक नहीं है। बम्बई में शिबराबपुर सिडिकेट ने भी अपने कर्मचारियों के लिये कुछ घर बनाने का कार्य हाथ में लिया है। फिर भी धारम्भ में यह मानव के रहने के अयोग्य थे घट इनको पिरा दिया गया था। कच्चे मोहे की खानों में भी कम्पनी प्रथम ठेकेदारों की घोर से पीड़े से श्रमिकों को भाषा की सुविधाओं भी गई हैं, जिनमें कम्पनी द्वारा बिये घरे क्वार्टर पक्के हैं। परन्तु यहाँ भी मकान पाने वाले श्रमिकों का प्रतिघट २ से १० तक है। प्रत्येक की खानों में कुछ प्रतिघट श्रमिकों को जो खानों पर ही रहते हैं भाषा की सुविधाओं भी गई हैं। खान क्षेत्रों में एक मुख्य कठिनाई ऐसी भूमि का प्राप्त करना है जहाँ की भूमि ठोस हो घौर जिस पर नींव रखी जा सके। इसलिये ध्वस्त श्रमिक प्रवासी हैं जो कि लिफ्टवर्ती क्षेत्रों से घाते हैं। खान क्षेत्रों में भाषा की एक विशेषता यह है कि एक ही मकान कई श्रमिकों के नाम निम्न (Allot) कर लिया जाता है जो पार्टी प्रवासी के कारण उसमें विविध समय में रहते हैं। खान क्षेत्रों से यह कहा गया है कि यह घब इस बात की अनुमति न दें।

बाबान में मकान बिना किराये के प्रदान किये जाते हैं। यह मिट्टी के प्लास्टर की बीवारों ब फूस की छतों के बने होते हैं। भाषा के इण्डिकोए से घसम के नामात में व्यवस्था बड़ी अस्वस्थजनक है। बीवारों का घभाव है सफाई की बड़ी अस्वस्थजनक बधा है तथा मलेरिया साधारण बात है। मकानों की टूट-फूट स्वयं श्रमिकों से ही ठीक करवाई जाती है। किसी भी मकान में बिजली का बरामदा नहीं है। घसम के नाम बागान में लममम २ प्रतिघट मकान कच्चे हैं। यह 'या' ती एक पॉलि में घबका गांव की तरह एक भुख में बने रहते हैं। मकान का आकार साधारणतया १२ × १२ होता है। १ — १२ कमरे वाली एक घुसरे से सटी हुई बरको की पॉलिया होती है। यद्यपि यह लीका घब बने निर्माण में घूर होता जा रहा है। घसम में एक घुराई यह है कि श्रमिकों के क्वार्टरों में उनके सम्बन्धियों घबका मित्रों के घतिरिक्त घय्य किसी के प्रवेश पर रोक है। बागान मासिक घपनी जिन्ही सम्पत्ति के स्वामित्व के घधिकार का प्रयोग कर प्रवेश पर रोक सघाते हैं। रॉयस श्रम घायीन ने इस बात पर बिरोध प्रकट किया था घौर कहा था

एक सजी बायान क्षेत्र जनता के लिये खुले होने चाहिये तथा मकानों की न्यूनतम आवश्यकताओं को निर्धारित करने के लिये स्वास्थ्य और कल्याण बोर्ड होने चाहिये। फिर भी अब तक बायान ग्राम जनता के लिये बन्द है क्योंकि सरकार ने निजी सम्पत्ति में हस्तक्षेप करने को मना कर दिया है। बायान में श्रमिकों का संगठन भी कमजोर है। प्रथम सरकार द्वारा दिये गये मकानों के प्राक्कड़ों से पता चलता है कि बायान के श्रमिकों के लिये १८८६२० मकान हैं जिनमें से ४६२२३ पहले, १२२९१२ अर्ध पहले तथा ४१६७८३ कच्चे हैं।

बंगाल के 'डार' नामक बायान में मकान बँकरों की पंक्ति में बनाये गये हैं और साधारणतः प्रत्येक घर में अपना एक प्रहाता होता है। इनमें मिट्टी के घर भी हैं, जिनमें ढाँचा बाँस का होता है। प्रकाश संवातन आदि के दृष्टिकोण से व्यवस्था संतोषजनक नहीं है। तथा अन्धेरे कम और बिना संवातनों के होने के कारण छपे विक की बीमारी घाय है। ब्रिटीश भारत के बायान में मकान साधारणतः १ से १० कमरे वाली पंक्तियों में होते हैं जिनमें साधारणतः स्थान १० × १२ घनबा १० × १० होता है। यहाँ घर भी व्यवस्था संतोषजनक नहीं है। मैसूर और कुर्ग के कच्चा बायान तथा ट्रावनकोर के रबड़ बायान में भी मकानों की ऐसी ही असंतोषजनक व्यवस्था है।

सितम्बर १९५१ तक बायान कर्मचारियों के लिये भारतीय श्रम परिषद् ने २६२४११ श्रम बायान मासिक परिषद् ने ३१४३२ तथा ब्रिटीश भारत की संयुक्त बायान मासिक परिषद् ने ४३,१२८ मकान बनाये थे। राज्यों द्वारा प्रदान किये जाने वाले मकानों की संख्या इस प्रकार थी—बिहार १३३१ उड़ीसा ४० उत्तर प्रदेश १०८ तथा हिमाचल प्रदेश ३। १९५४ से बायान श्रम अधिनियम १९३९, तथा बायान श्रम आवास योजना १९५६, के अन्तर्गत बिनका उम्मेद सरकारी योजनाओं में किया गया है अब अधिक मकान बनाये जा रहे हैं। यह नियम लागू किया गया है कि प्रतिवर्ष कम से कम आठ प्रतिशत श्रमिकों और उनके परिवारों के लिये मकान बनाने चाहिये। प्राप्त प्राक्कड़ों से पता चलता है कि २,८८३ बायानों में जिनमें ३,४८,९३४ श्रमिक परिवार रहते हैं, केवल १९७,७३३ परिवारों के लिये मकान बनवाये गये हैं। १९६० के अन्त तक भारतीय श्रम बायान परिषद् ने ३,२३७ ऐसे मकान बनाये जिनके प्रकार प्रकार की स्वीकृति मिल चुकी थी। इनमें से ४,०६६ मकान तो 'डार' क्षेत्र में थे ३१३ तराई क्षेत्र में ४१८ बार्डिंग की गृहाङ्कियों में तथा २६० प्रथम में थे।

सीमेंट उद्योग में श्रमिकों की आवास की सुविधा प्रदान करने की भी योजनाएँ बनाई गई हैं, बड़े देश की सर्वोत्तम आवास योजनाओं में से हैं। यहाँ पर मासिकों ने अपने श्रमिकों को आराम और सुविधा प्रदान करने के लिये क्वार्टरों के निर्माण में दुरुस्तता का परिश्रम किया है। सीमेंट उद्योग में एक साधारण मध्यम श्रमिक को भी ऐसे क्वार्टर प्रदान किए गए हैं जिनमें दो रहने के अन्धे कमरे, एक भोगल तथा

पानी और सफ़ाई का प्रश्न से प्रबन्ध होता है। इसके प्रतिरिक्त हाबैपती 'ग्रह-निर्माण समिति' ने औद्योगिक श्रमिकों के लिए महकारी रूप से मकान बनाने का सुन्दर उपाहरण प्रस्तुत किया है। इसके द्वारा मयुरा मिक्स सिमिटेड (मद्रास) ने ६०० मकानों के एक पूर्ण आवास क्षेत्र का निर्माण किया है जिसमें बिजली की रोशनी पानी मासियाँ सड़कें पार्क स्कूल निःशुल्क यातायात आदि की सभी सुविधाएँ हैं। इस क्षेत्र का प्रबन्ध एक महकारी समिति व एक डायरेक्ट्रों के बोर्ड द्वारा किया जाता है जिसमें मिश्रित श्रमिक संघों और मिश्रित श्रमिकों के एक एक प्रतिनिधि होते हैं तथा जिलाधीश तथा मयुरा जिला बोर्ड के अध्यक्ष अपना उपाध्यक्ष होते हैं। प्रत्येक घर का मुख्य मुँह काल से पूर्व की कीमतों के अनुसार १० व १० है और इस राशि को मासिक किस्तों के रूप में जो १२½ साल तक फँसी हुई है देने पर श्रमिक उसका स्वामी हो जाता है। इस योजना की सफलता का मुख्य कारण यह है कि मिश्रित प्रबन्धकों ने इसमें वित्तीय सहायता दी है और समिति को उसकी सेयर पंजी और निर्माण के लिए एक बड़ा ऋण प्रदान किया है और पंजीगत व चामू खर्चों को पूरा करने के लिए अनेक अनुदान भी प्रदान किये हैं।

रेलवे कर्मचारियों के आवास के सम्बन्ध में रेलवे बोर्ड की नीति केवल उन्हीं श्रमिकों के आवास की व्यवस्था करना है जिनको विशेष कारणों से कार्य के स्थान के निकट रहना पड़ता है जैसे चिकित्सा स्टाफ, स्टेशन स्टाफ गाड़ियों के चालक आदि आला स्टाफ, गाड़ियों और रेल की पटरियों की देखभाल करने वाला स्टाफ आदि। इसके प्रतिरिक्त उन लोगों के लिए भी मकानों की व्यवस्था की गई है जिनके लिए निजी संयोजकों ने मकान नहीं बनाए हैं। इसलिए वर्तमान आवास व्यवस्था रेलवे कर्मचारियों के लिए बहुत कम है। अतः अनेक श्रमिकों को निजी मकान मालिकों द्वारा निर्मित मकानों में रहना पड़ता है। श्रमिकों में सामान्य चारणा है कि सभी वर्ग के श्रमिकों को क्वार्टर मिलाने चाहिए। ३१ मार्च १९३२ तक तृतीय व चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारियों के लिए २८ २८८ क्वार्टर बनाए जा चुके थे। प्रथम पंचवर्षीय आयोजना के अन्तर्गत रेलवे श्रमिकों के लिए ४० नये क्वार्टर बनाये गये। उसके पश्चात् विभिन्न वर्गों में रेलवे कर्मचारियों के लिये निम्नलिखित संख्या में क्वार्टर बनाये गये— १९३३-३६- ८ ६४५, १९३६-३७- ८,६४५, १९३७-३८ १५ ६, १९३८-३९- ११ ४८१ १९३९-४०- ११ १९६। रेलवे कर्मचारियों की तीन सहकारी आवास समितियाँ भी हैं जिन्होंने १९३९-६ तक ८६ मकान बनाये थे।

नगरपालिकाओं में केवल १३ प्रतिशत कर्मचारियों को मकान प्रदान किये जाते हैं। आवास की यह सुविधा मुख्यतः सफ़ाई, धातु बुझाने व धातु कल तथा अस्पतालों के कर्मचारियों तक ही सीमित है। आवास तथा सामान्यतः उनको दिया जाता है जिनको मकान नहीं दिये जाते हैं। कुछ विशेष प्रकार के श्रमिकों को भी आवास प्रदाता मिलता है। इसकी दर लखनऊ में ८ आने प्रति माह से देहली में ७ ६०

इसम कोई संदिह नहीं कि धर्मिकों को गांव जाने क मिये हर प्रकार की सुविधामें देनी चाहिये जैसे सस्त बापसी टिकट तथा फुट्टी घाबि । परन्तु धर्म अनुसंधान समिति इस बात से सहमत नहीं है कि मबिप्य में धर्मजीवियों की सुरक्षा के हृष्टि कारण से गांवों में सम्बन्ध स्थापित रहना चाहिए । निःसन्देह उपाय यही है कि औद्योगिक नगरों की दृष्टा में उन्नति की जाय और धर्मिका क मिये सामाजिक सुरक्षा योजना मकाल मजदूरी प्रच्छा भोजन घाबि का उचित प्रबन्ध किया जाय और कारखानों में काम करने क बातावरण म उन्नति की जाय । इस बात सं धर्म सब सहमत है कि गांव में संकुल परिवार प्रजा और जाति-बन्धनों का ह्रास होता बा रहा है जो धर्म तक धार्मिक हृष्टि से मजदूरों की सुरक्षा के साधन के और धर्मिक इस समय ऐसी परिवर्तनशील अवस्था में है जबकि धीरे-धीरे उतका बाबा से लो सम्बन्ध टूटता बा रहा है परन्तु धर्म तक के औद्योगिक नगरों क पूर्णतमा स्वाधी निवासी नहीं बन सक हैं । अतः एसी स्थिति म धर्मिक को गांव से जाने से रोकना या उसको बांभ बापिस जाने क मिये विवस करना समस्या का समयानुकूल समाधान न होपा ।^१

औद्योगिक श्रमिकों की भर्ती की समस्याएँ

(The Problems of Recruitment of the Industrial Workers)

प्रारम्भिक इतिहास—(Early History)

श्रमिकों के राजगार में सबसे प्रथम समस्या उनकी भर्ती की है। उद्योगों में जिन पद्धतियों और सगठनों द्वारा श्रमजीवियों को भर्ती किया जाता है उन पर व्यवसाय की सफलता अथवा विफलता बहुत कुछ निर्भर करती है। यदि कार्य के अनुकूल श्रमिक काम पर नहीं लगाया जाता तो उत्पादन और शक्तिशालता पर कुछ प्रभाव पड़ता है। बड़े उद्योगों के स्थापन के प्रारम्भिक समय में कारखानों और बाजार के मासिकों को श्रमिक भर्ती करने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। इनका कारण यह था कि श्रमिक अपना गांव छोड़ कर नये बाजारस्थल में कारखानों और बाजार में जान के लिय तैयार नहीं थे। काम करने की स्थिति भी वर्तमान समय में अधिक खराब थी। १८६६ की प्लग तथा १९१० की इन्फ्लूएन्जा की बीमारियों के कारण भी श्रमिकों का घमाव हुआ गया था। इनका प्रभाव यह पड़ा कि मासिकों को मजदूर भर्ती करने के लिय अल्पकालीन प्रकार के तरीकों का अपनाना पड़ा और भर्ती मध्यस्थों (Intermediaries) तथा ठेकेदारों (Contractors) द्वारा हुआ लगी। यह प्रणाली आज भी प्रचलित है यद्यपि विद्यमान कुछ वर्षों में अब भर्ती यंत्रों द्वारा हुआ लगी है। इनका कारण यह है कि अब श्रमिकों का मजदूरी में उद्योग-स्थलों में जान लग है क्योंकि जनसंख्या की वृद्धि के कारण और कृषि पर असमस्या का अधिक दबाव होने के कारण जीविका की खोज में लोगों का गांव छोड़ना पड़ा है। यातायात के साधनों में उन्नति हो जाने के कारण उन्हें नगरों में जाने में कठिनाई भी नहीं होती। फिर भी प्रारम्भ में श्रमिकों के घमाव और उनकी प्रवासिता (Migratory character) के कारण भर्ती की प्रणाली सोच विचार कर प्रारम्भ नहीं की गई और श्रमिकों के प्रवासन तथा व्यवस्था में कोई सैद्धान्तिक तरिका नहीं अपनाया गया। श्रमिक नगरों में कभी केन्द्रित नहीं हुए। और असा विद्यमान अध्याय में बताया जा चुका है श्रमिकों की सहायता के लिए और उनमें अपना सम्बन्ध स्थापित रहता था। इसलिये भर्ती प्रणाली भी श्रमजीवियों की इस प्रवासिता में प्रभावित हुई और श्रमिकों को प्राप्त करने के लिये भर्ती की अनेक दोषपूर्ण पद्धतियाँ काम में लाई गईं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि श्रमजीवियों की प्रवासिता ने भर्ती प्रणाली पर अपना काफी प्रभाव डाला।

भर्तों प्रणाली में मध्यस्थों का स्थान — (The Role of Intermediaries)

संगठित व घसगठित दोनों प्रकार के उद्योगों में धमिकों को पांव से नयनों में लाने के लिये अधिकतर मध्यस्थों पर निर्भर रहा गया है। प्रायः धमिकों को अच्छा वेतन मुक्तिवाचक व्यवसाय धारि का प्रसोक्त देकर मगलों की धोर धारकपित किया जाता है। मध्यस्थों को धमिक लाने के लिये प्रयत्न करनीचन मिसवा रहा है। मध्यस्थों द्वारा धमिकों की भर्ती बहुत समय से अनेक भारतीय उद्योगों का मुख्य लक्ष्य रहा है यद्यपि पिछले बयों में इस प्रणाली में कुछ परिवर्तन हुआ है।

मध्यस्थों द्वारा धमिकों को नाराज व विभिन्न उद्योग-वृत्तों में विभिन्न नामों से पुकारा जाता है जैसे सरदार, मिस्त्री मुकद्दम टिगैल चौधरी कंयनी धारि। मध्यस्थ एक महत्वपूर्ण व्यक्ति है जो अनेक कार्य करता है। बड़े-बड़े उद्योगों में मध्यस्थ एक महत्वपूर्ण व्यक्ति है जो अनेक कार्य करता है। बड़े-बड़े उद्योगों में प्रधान मध्यस्थ धीरे धीरे मध्यस्थ भी जिन्हें नायकिम या मुकद्दमि कहते हैं पाव जाते हैं। मध्यस्थ या सरदारों का धमिकियों में से ही चुना जाता है। यह कोई बाहर के व्यक्ति नहीं होते हैं जो धमिक धनुषवी हो जाते हैं धीरे धमिकों की कृपा

हृष्टि प्राप्त कर लेते हैं उनको इस पर पर नियुक्त कर दिया जाता है। इन सरदारों पर अनेक कामों का भार सौंप दिया जाता है। धमिकों की नियुक्ति प्रथिमा परो-प्रति बरखास्तगी इच्छा छुट्टी धीरे धमिकता के समय उन्हें व उचार देना धारि सभी प्रकार के कार्य मध्यस्थ करते हैं। कारखानों में मर्चाओं को देखभाल में वे

मिस्त्रियों की सहायता या करते हैं। धमिक उन्हें अपने धमिकारो का संरक्षक भी समझते हैं जिनके बिना उनका निर्वाह कठिन हो जाता है। मालिक भी मजदूरों की इच्छाओं तथा मांगों धारि क बारे में मध्यस्थों से ही जानकारी प्राप्त करते हैं धीरे यदि उनको मजदूरों के पास कोई संदेह भेजना हो तो यह कार्य भी मध्यस्थों द्वारा ही सम्पन्न होता है। जो उद्योग विदेशी मालिका के हाथों में वे जो भार तीय भाया नहीं जानते वे वहां मध्यस्थ धीरे भी धमिक शक्तिवासी रहे हैं।

मध्यस्थों के दोष — (Evils of Intermediaries)

मध्यस्थों द्वारा धमिकों की भर्ती की प्रणाली सर्वत्र व ही धमिक शोषपूर्ण सिद्ध हुई है। रोजगार धम धायोय के उद्योग में "मध्यस्थ का पर धमिक प्रसोक्तनीय है धीरे यदि वे लोभ इन धमिकों से लाभ न उठायें तो यह धमिकवर्जनक होगा। ऐसे धोड़े न ही कारखानों में धमिकों की मुरझा कुछ सीमा तक मध्यस्थों क हाथ में न हो। अनेक कारखानों में तो मध्यस्थों को धमिकों की नियुक्ति तथा बरखास्तगी का धमिकार भी है। इस बाध में कोई संदेह नहीं कि मध्यस्थ अपने धमिकारों व माधारायतया लाभ उठाते रहते हैं। यह दोष कुछ उद्योगों में कम धीरे कुछ उद्योगों में धमिक मात्रा में पाव जाते हैं। यह प्रथा तो बहुत प्रचलित है कि धमिकों को नया रोजगार देने या फिर से रोजगार पर लपाने के बरसे में धुस्क लिया जाये। बहुतों को देखा गया है कि धमिकों को अपने धमिक वेतन का एक पांच भी नियमित रूप

न बना पड़ता है। धमिकों को समय-समय पर नवीन पेय पदार्थ या दूध उपहारों द्वारा भी मध्यस्वों का प्रमत्न करने खूना पड़ता है। कमी-कमी स्वयं मध्यस्व का भी प्रबन्धन मध्यस्व की उम्र भरती पड़ती है और एसा सुनने में धाया है कि मध्य निरीक्षणगण (Supervisory staff) भी कमी-कमी इम से कुछ भाग पाते हैं।¹ इसके प्रतिरिक्त धनेक प्रबन्धनों पर इन मध्यस्वों द्वारा धमिकों का गतत उग से प्रतिनिधित्व होने के कारण बहुधा मासिकों और धमिकों के बीच भगड़ उत्पन्न होते रहते हैं और फिर यह आवश्यक नहीं कि वे कृगत धमिक का ही भर्ती करें। ये तो उसी को भर्ती करेयें या उम्ह अधिका कमीगन दे या जिनम बहु दूयरे कारणों त दित्तचस्वी रहते हों। इस प्रकार बन प्राप्य करन की साममा क कारण धनेक धमिक मध्यस्वों द्वारा धन्यापपूर्वक बरखास्त कर दिय जात है और इमसे धमिकावर्त (Labour Turnover) धमिक हा जाता है। मध्यस्व सर्वे ब स्वानों को रिक्त करने के प्रयत्न में खूना है जिनमे नई भर्ती करके बहु धपती जेधें भर मके। बहु धमिकों को उनके बतन की बमानत पर ढंकी ब्याज दर पर ऋण भी देना है। धनेक मध्यम्य बर्माना करके ऋण के हिमाब में ऐसी गन्बरो कर मन है जिनम मजदूरों को हानि हो। महिला धमिकों का महिला मध्यम्य। हाग और भी अधिका गोपण हाता है क्योंकि महिला मध्यम्य अधिकातर धण्ड बरिष की नहीं होती हैं। धण्ड बरिष की स्त्रिया नम पर का इममिय स्वीकार नहीं करती क्वाचि यह पर मम्मालिन नहीं ममभा जाता है। एम धनेक उदाहरण मिसते है बबकि इन नायकिनों के कारण महिला धमिकों को धनेगिक जीवन व्यतीत करना पड़ा है।

बतमान स्थिति और भविष्य—

मध्यस्वों द्वारा भर्ती की प्रया को मब भाग धरयन्त धमतापजनक तथा धर्वाधनीय ममभते हैं। गिरधने कुछ बर्षों म उमी उगह मध्यस्वों की धालि तथा धमिकारों को कम करने का प्रयत्न किया गया है जिनमे धूमकोरी व प्रष्टाधार का धन्त हो मक। बम्बई मुनी कपड़ा धम जांच समिति का कथन है कि बम्बई और गोलापुर जये केन्द्रों में भी जहाँ पर धमिकों विद्यप एम म 'बहनी' क धमिकों की भर्ती करन में थोड़ा बहुत नियन्त्रण लागू कर दिया गया है धनी तक मध्यस्व म ता हटाव ही जा मके हैं और न उनका प्रभाव ही कम हो मका है। 'उत्तरी भारत मासिक संघ' ने भी स्वीकार किया है कि भर्ती में मन्बन्धित प्रष्टाधार और धूमसाराय एब भी प्रबन्धित है। परन्तु इस मय न एम विबगलन की धार नी संकेत किया है कि बहु एक ऐसी पड्डिन को अद्भुत न नही ममान्य कर मकते जा कि उदाय-बन्धों में धनी की हृष्टि म मान्य हा गई है।² मम धनुर्मन्धान समिति का भी धही मत है कि भारतीय धमिक धपती बिकाम और गतिशीलता की उम मीमा पर धनी तक नहीं पडुब सका है कि भर्ती के तिये मध्यस्वों को धासानी स धलन किया जा मक। वर्तमान परिस्थितियों में भर्ती के धम्य धाधनों क न होने के कारण मध्यस्व एक

1 Report of the Kanpur Labour Enquiry Committee.

धनिचार्य सा साधन प्रतीत होता है। इस प्रणाली के कुछ नाम भी हैं। मध्यम उम्र गांधी और बिर्सा से निकटता का सम्पर्क रखता है जहां से धर्मिक भर्ती किये जाते हैं। अतः वह धर्मिकों की धारतों धांधलों और भय को भसी-भांति समझता है और प्राग अपने व्यवहार में उनका ध्यान रखता है जबकि अन्य सीधे भर्ती करने वाली संस्थाओं का इन धर्मिकों से कोई भी निकट सम्पर्क नहीं होता। यही कारण है कि मध्यम उम्र की स्थिति इन संस्थाओं की तुलना में धर्मिक लाभदायक सिद्ध हुई है। यह बात उल्लेखनीय है कि युद्ध के समय में फौज तथा नौसेना की धर्म्य योजनाओं में भर्ती के लिये सरकार को भी मध्यम उम्र की सहायता लेनी पड़ी थी और उनको कुछ कमीशन भी देना पड़ा था। फिर भी मध्यम उम्र की धनिचार्यता को स्वीकार करने का तात्पर्य यह नहीं होगा चाहिये कि इस प्रणाली को नियमित बनाने की ओर कोई भी प्रयत्न न किया जाये या भर्ती का कोई संज्ञान्तिक तरीका न अपनाया जाए। इस प्रणाली को सुधारने के लिए विभिन्न सुझाव प्रस्तुत किये जा चुके हैं और कुछ ठोस कदम भी उठाये जा चुके हैं। इस समय सरकार द्वारा स्थापित विभिन्न केंद्रों में रोजगार बल्तर भर्ती की प्रणाली के दोष दूर करने में सहायक सिद्ध हुए हैं तथा स्थायीकरण (Decasualisation) की योजनाएं भी कई केंद्रों में लागू हैं। इस प्रकार विभिन्न केंद्रों और उद्योगों में भर्ती की प्रणाली इस समय एक समान नहीं है।

विभिन्न उद्योगों में भर्ती की प्रणाली—

फैक्टरी उद्योगों में वहीं थोड़ी मात्रा में और वहीं सभी धर्मिकों की भर्ती साधारणतया सीधी प्रणाली द्वारा होती है। बम्बई, मद्रास पंजाब बिहार व जड़ीसा के राज्यों में सीधी (Direct) भर्ती प्रणाली धर्मिक प्रचलित है। इसका तरीका यह है कि फैक्टरी के फ्लॉक पर एक नोटिस लगा दिया जाता है कि धर्मिक संख्या में धर्मिकों की आवश्यकता है। इसके पश्चात् जनरल मैनेजर स्वयं या कोई धर्म्य धर्मिकारी या धर्म प्रवीणक (Superintendent) फ्लॉक पर धाकर आवश्यक धर्मिकों का चुनाव कर लेता है। कमी-कमी ऐसा होता है कि रिक्त स्थानों की पूरना काम पर सब धर्मिकों को दे दी जाती है जो उसका बिज्ञापन अपने मित्रों तथा सम्बन्धियों में कर देते हैं। इस प्रकार निरत दिन पर बहुत बड़ी संख्या में प्राचीन फैक्टरी के फ्लॉक पर एकत्रित हो जाते हैं। किसी-किसी स्थान पर तो प्रातःकाल ही काम के इच्छुक लोग लम्बी पंक्तियों में लड़े दिखाई देते हैं। लेकिन यह प्रणालियां साधारण तथा धनिपुण (Unskilled) या बबली के धर्मिकों को प्राप्त करने में ही धर्मिक लाभप्रद सिद्ध हुई हैं। निपुण (Skilled) या अर्ध-निपुण (Semi-skilled) धर्मिकों की भर्ती धर्मिक कठिन है। इनकी भर्ती दो प्रकार से की जा सकती है—प्रथम तो कुछल धर्मिकों की परीक्षा करके चुनकर प्राथमिकता देना कर, धाव्यक परीक्षाओं के बाद योग्य धर्मिकों का सीधा चुनाव करके। बीड़ी लाल तथा जूट की बटाइयों की भांति कुछ धनिनियमित उद्योगों में भी भर्ती सीधी प्रणाली द्वारा ही होती है। फिर

भी मध्यमकों को बुरा रूप में हटाया नहीं जा सका है।

मध्यमकों द्वारा भर्ती के बोझ का दूर करने के लिए रॉयल लैबर प्रायाम ने निवारण की भी कि जनरल मनेजर के प्राधीन ठीके बतन ठकर धम-धमिकारी (Labour Officers) रहे जायें। यह धफ्तर उचित ज्ञान वक्तन प्रभावशाली ध्यक्तित्व धौर दूमर ध्यक्तियों को डीक से समझ मकने की धोष्यता रखन बाम होन चाहियें। धधिकतर उधोगों में धध ऐसे धफ्तर निमुक्त किये जा कुटे हैं धौर बहुधा धमिकों की भर्ती उन्हीं के द्वारा की जाती है। व धमिकों की धिकायतों धारि की बानध पड़ताम करके धधनी रिपोर्ट भी प्रस्तुत करते हैं। इनके धनिरिक्त व धामिकों धौर धमिकों के बीच मैत्रीपूण सम्बन्ध स्थापिन कराते हैं। कनी-कभी व धफ्तर धामपाध के गांठों में धमिकों की भर्ती के लिए बाते हैं। एसे धफ्तर बम्बई की समयन १० प्रतिघठ सूठी कपडा मिलों कनकता की बाटा सू कम्पनी बिसाखापट्टन के सिम्बिया बहानी बेडा डिगबोई की धधम लेन कम्पनी धौर बंधाम की डूट मिलों में पाये बाते हैं। कामपुर की धनेक मिलों में भी ऐसे धफ्तर निमुक्त धिए गए हैं। परन्तु ध्यावहारिक रूप में यह देखा गया है कि इन धफ्तरों पर धमिकों को हठना मरोडा नहीं होता जितना मरोमा के मध्यमकों पर करते हैं। धत इन धम धधि कारियों की धाड़ में मध्यम्य प्रणामी धध भी प्रचलिन है।

महमदाबाद में भर्ती साधारणतया मध्यमको धौर जिभागीय धधमकों द्वारा की जाती है। मद्रास की बकिमम धौर कर्नाटक मित में धमिक एक बिधेय 'भर्ती पदाधिकारी' द्वारा भर्ती धिए जाते हैं। कुछस नौकरियों के लिए परीक्षायें भी ली जाती हैं। मद्रास की मियों में मित-धामिकों धौर धमिक मयों के बीच में यह समझौता है कि रिक्त स्थानों की सूचना संघों को दी जाएगी जो कि धमिकों के बेरोजगार सम्बन्धियों धौर कारखाने के पूर्ब धस्थावी (Temporary) धामिकों की सूची रखते हैं। संघ रिक्त स्थानों के लिए कुछ धमिकों के नामों की निवारण करता है। धमिकों का चुनाव धधिकतर प्रबन्धकर्तव्यों द्वारा ही उसी सूची में से किया जाता है। इस प्रकार से दोनों पक्ष के लोभ सन्तुष्ट रहते हैं। हैदराबाद में भी ऐसी ही ध्यवस्था है। कोयम्बटूर में भर्ती करने की कोई भी बिधेय संस्था नहीं है। कामपुर में धम-धमिकारियों के धनिरिक्त मधु १९३० से उत्तरि भागध धामिक संघ द्वारा स्थापित किया हुआ धम ब्यूरो (Labour Bureau) भी धम रहा है। कामपुर में धध एक स्थायीकरण (Decasualisation) योजना चल रही है। जिसके अन्तर्गत रोजगार के दफ्तर धमिकों की एक संघित सूची रखते हैं। योजना में सहयोग देने बामे उधोग-बन्धों में धमिकों की भर्ती रोजगार के दफ्तारों द्वारा इसी संघित सूची से की जाती है। इसके पूर्ब एक बहती नियंत्रण योजना की जिसके अन्तर्गत मित के धाकृतियक रिक्त स्थानों की पूति घंटीनी किये हुये धमिकों द्वारा होती थी। टाटा की बोई व इसाठ कम्पनी ने तथा बिहार की कुछ बड़ी-बड़ी रैफिनरियों ने भर्ती के लिए धधने स्वयं के ब्यूरो लोभ रहे हैं। जमशेदपुर की निम्पन कर्मनी तथा धहनपाबाद,

बम्बई, खोलापुर और कोयम्बटूर की सूती कपड़ा मिला में भी स्थायीकरण योजनाएं चम रही हैं। बंगाल की सूट की मिलों में श्रम अधिकारियों की नियुक्ति करके उनको श्रम शून्यो का अधिकारी बना दिया गया है। भर्ती के कार्य के लिए एक बहरी रजिस्टर रखा जाता है। अगर रिक्त स्थानों के लिए श्रमिकों की फिर भी कमी रहती है तब फेक्ट्री के प्रैक्टिस पर ही सीधी प्रणाली द्वारा भर्ती कर ली जाती है। यद्यपि यह प्रणाली मध्यस्त्रों को हटाने के लिए चासू की गई थी परन्तु इन मध्यस्त्रों का प्रभाव अब भी काफी है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अधिकतर फेक्ट्रियों में भर्ती सीधी प्रणाली और मध्यस्त्रों द्वारा होती है। पिछले कुछ वर्षों से अब हम भर्ती के तरीकों में काफी उन्नति पाते हैं। कई स्थानों पर स्थायीकरण की योजनाएं लागू हो चुकी हैं। रोजगार के दफ्तरों द्वारा भी अब भर्ती काफी मात्रा में होने लगी है।

चीनी के कारखानों में जहाँ कार्य सामयिक (Seasonal) होता है कुछ निरीक्षकों और तकनीकी विद्वेषकों (Technicians) को छोड़ कर सभी मजदूर मौसम या समय समाप्त होने पर निकाल दिये जाते हैं तथा मौसम फिर आरम्भ होने पर उनको सुविधा किया जाता है। यदि वे निश्चित समय पर उपस्थित हो जाते हैं तो उनकी नियुक्ति फिर से हो जाती है। सामयिक या मौसमी श्रमिकों के सम्बन्ध में उत्तर प्रदेश की सरकार विद्यय आजायें जारी करती है।

रैलवे के विभिन्न विभागों में भर्ती की प्रणालियां मिश्र-मिश्र हैं। रैलवे विभाग के उच्च पदाधिकारियों की नियुक्ति या तो प्रत्यक्ष रूप से सीधी प्रणाली द्वारा हो जाती है या दूसरे और तीसरे वर्गों की शौकरियों से पदोन्नति के द्वारा। तीसरे वर्गों के पदों पर भर्ती रैलवे सेवा आयोग द्वारा होती है जो कसकता बम्बई इलाहाबाद और मद्रास में है। साधारणतया अनुसूचित और निम्न श्रेणी के श्रमिकों की भर्ती सीधी प्रणाली द्वारा की जाती है। रैलवे में टैकेटारों के श्रमिक भी काफी संख्या में पाए जाते हैं। १९५९ में सरकार ने शीबी श्रेणी के कर्मचारियों की पदोन्नति के लिए नियुक्त की हुई समिति की सिफारिशों को स्वीकार कर लिया है।

जानों में अधिकतर श्रमिक टैकेटारों द्वारा ही भर्ती किये जाते हैं। अन्य देशों के विपरीत भारतवर्ष में जान के श्रमिकों का कोई पुषक वर्ग नहीं है। अधिकतर कुपक वर्ग से ही उन श्रमिकों की भर्ती की जाती है जो समय पर इति सम्बन्धी कार्यों के हेतु अपने गाँवों को लौट जाते हैं। कोयले की खानों में जमींदारी प्रथा भर्ती की सबसे पुरानी प्रथा थी। इसके अन्तर्गत श्रमिकों को यह प्रतीभन दिया जाता था कि उनको बिना कीमत के या नाममात्र लजान पर ही रैल लिए जायेंगे। श्रमिकों का इन भूमियों पर अधिकार रहने की यह धर्त थी कि वे जानों में काम करते रहें। परन्तु बहुत जल्दी ही कोयले की खानों के पास इति-योग्य भूमि का प्रभाव अनुभव होने लगा और ऐम श्रमिक श्रमिक कार्यकुशल भी नहीं सिद्ध हुए। इस प्रकार से यह प्रथा अष्टम न हो सकी। रोजगार श्रम आयोग ने भी यह कह कर

इस प्रथा का खण्डन किया है कि यह ठेके की प्रथा प्रापञ्चिक है। यद्यपि हास ही में कुछ शानों ने अपने प्रतिनिधि बाहर भेजकर सीधी मर्ती की प्रणाली अपना ली है परन्तु अब भी ठेकेदारों द्वारा श्रमिकों की मर्ती करने की प्रणाली प्रचलित है। मर्ती के लिये कई प्रकार के ठेकेदार होते हैं। बहुत सी शानें केवल "मर्ती करने वाले ठेकेदार" (Recruiting Contractors) रखती हैं जो श्रमिकों की पूर्ति करते हैं। इस प्रकार से मर्ती किये गए श्रमिकों को प्रबन्धकमण लौकर रखकर बेतन रोजे है। कुछ शानें "प्रबन्धक ठेकेदार" (Managing Contractors) रखती हैं जो केवल श्रम की पूर्ति ही नहीं करते हैं बरन ज्ञान की मजूदगी तथा उपनि के लिये भी उत्तर दानी होते हैं और इस प्रकार से प्रबन्धकमण के धर्मार्थ ही घा जात हैं। "धर्म कार्य ठेकेदारों" (Raising Contractors) द्वारा मर्ती की प्रथा सबसे अधिक प्रचलित है। ये ठेकेदार न केवल श्रमिकों की मर्ती करते हैं और उनके व्यर्थों को महन करते हैं बरन् इसके साथ ही कोयले को काटने तथा लादने के लिये भी उत्तरदायी होते हैं। इनके लिये इन्हें प्रति टन की दर से कुछ पैसा मिसाला है। मुद्र के दिनों में कोयले की तीव्र मातृवकता तथा श्रमिकों की कमी के कारण म्बय सरकार न मजदूर श्रमिकों की पूर्ति के लिये ठेकेदारों का काम किया।

१९४८ की कोयला लान औद्योगिक समिति ने ठेके की प्रथा को कोयला शानों में समाप्त करने पर विचार किया। उनक मुसद्दों क अनुसार केवल दो को छोड़कर अन्य ऐसे के लिये कोयला शानों में इस प्रथा की समाप्ति हो गई है। अन्य शानों में भी इस प्रथा को तब तक चामू रखने का निश्चय हुआ है जब तक इस बारे में कुछ और सोच विचार न कर लिया जाये। राजकीय तम्ब बांध समिति (मई १९४७) ने भी इस प्रथा को समाप्त करने की सिफारिश की और हैदराबाद प्रथम की शानों में भी इस प्रथा को बुरा बताया गया है। १९२१ में कोयला की कोयले की शानों में भी इस प्रथा को बुरा बताया गया है। १९२१ में कोयला शानों क लिये नियुक्त काय इस (Working Party) के श्रमिक प्रतिनिधियों ने भी कोयले की शानों में ठेके की मूदा समाप्त करने की जोरदार सिफारिश की। और "कोयला खान मर्ती मंगलन" (Coal Fields Recruiting Organisation) जिसके द्वारा प्रत्येक कोयले की शानों के मासिक गोरलपुर न श्रमिकों की मर्ती करते हैं को भी समाप्त करने पर बल दिया। १९२४ में होने वाली भारतीय श्रम सम्मेलन की सिफारिशों के अनुसार एक त्रिदलीय समिति बनाई गई थी। उसने भी ठेकेदारों की प्रथा के दोषों को कम करने तथा ठेके के श्रमिकों को अन्य श्रमिकों के स्तर पर माने के लिये कई बावों की सिफारिश की है। परंतु १९६० में कोयला शानों से सम्बन्धित औद्योगिक समिति (Industrial Committee) की सिफारिशों के फल स्वरूप सरकार ने नवम्बर १९६० में एक बांध समिति (Court of Enquiry) की नियुक्ति की। इसका कार्य यह था कि कोयला शानों में ठेके के श्रमिकों की पड़ति को समाप्त करने पर विचार करे जिससे उत्पादन पर बुरा प्रभाव न पड़े और इस बात की सिफारिश करे कि यह पद्धति किञ्च-किञ्च स्थान पर और कम समय तक

समाप्त हो सकती है। ठेके के श्रमिक यदि समाप्त नहीं किये जा सकते तो उनके लिये उचित मजदूरी और उचित काम की बग़ायें देने के लिये क्या पम उठाने चाहिए। इस मुमिति में अभी हाल ही (दिसम्बर १९६१) में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की है और यह सिफ़ारिश की है कि ठेके के श्रमिकों की प्रथा दिसम्बर १९६२ तक समाप्त कर दी जाय। केवल सात प्रकार के रोज़गारों में यह प्रथा अभी चालू रह सकती है। गोरखपुर में कोयले की खानों में श्रमिकों का भर्ती करने के लिये जो संस्था बनाई हुई है (Coal Fields Recruiting Organisation) उसको भी समाप्त करने का निर्णय कर लिया गया है। बिहार और बंगाल में कुछ कोयला खानों में रोज़गार बस्तर जोमे जा रहे हैं।

धम्य खानों में भर्ती करने के लिये कुछ मिश्र हैं। कच्चे सोहे की खानों में बहुधा सीधी प्रणाली द्वारा ही श्रमिक भर्ती किये जाते हैं। कभी-कभी काम पर जाने हुए श्रमिकों की सहायता से निकट के गाँवों में भी श्रमिकों की भर्ती होती है। मूल्यवान पत्थरों की खानों में ठेके के काम के लिये श्रमिकों की भर्ती 'सरबार' या 'उप-डेन्टवारों' द्वारा की जाती है। धम्य की खानों में 'सरबार' निकट के गाँवों में भेजे जाते हैं जिससे वे इच्छुक श्रमिकों को पेशगी पेशा लेकर भर्ती कर सकें। भर्ती करने वाले सरबारों को कोई कमीशन नहीं मिलता है। उनकी मजदूरी भर्ती किये गए श्रमिकों की संख्या पर निर्भर करती है। जो खाने जमीदारों के अधिकार में हैं उनके लिये श्रमिक कार्तकारों में से ही प्राप्त कर लिए जाते हैं। १९२८ में की गई एक जांच से यह पता लगता है कि धम्य की खानों में इस समय लगभग ८२-६ प्रतिशत श्रमिक सीधी प्रणाली द्वारा भर्ती किये जा रहे हैं और शेष श्रमिकों की भर्ती ठेकेदारों द्वारा होती है। मींगनीज की खानों में ४२ प्रतिशत श्रमिकों की भर्ती ठेकेदारों द्वारा होती है और शेष सीधी प्रणाली द्वारा भर्ती किये जाते हैं। लगभग २० प्रतिशत श्रमिक आदिवासी वर्ग के होते हैं। बम्बई राज्य में शिवराजपुर की खानों में भर्ती 'टिम्बर्सों' द्वारा की जाती है। सत्रपुर राज्य में लगभग ४० प्रतिशत श्रमिकों का बाहर से घाममन होता है और उनको खानों के निकट बसावा जाता है। बाकी श्रमिक गाँव या इस मील की दूरी से गाँवों से प्रतिदिन जाते हैं। मोने की खानों में श्रमिक 'समय-कार्यालय' (Time Office) के द्वारा भर्ती होते हैं।

बांगाल के श्रमिक जो लगभग १२२ लाख की संख्या में हैं अपनी एक विशेषता रखते हैं। बांगाल इतने दूर तथा ऐसे स्वाना पर पाये जाते हैं जहाँ की जलवायु धरमन्त नम है तथा वातावरण स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। श्रमिक वहाँ जाना पसन्द नहीं करते इसलिए धारम्भ में वहाँ भर्ती की समस्या एक बिकट समस्या थी और इसके कारण बहुत सी आपत्तिलक्षण प्रभावों अपनी पड़ी। अनेक मध्यम गीकर रहे गये जो श्रमिकों को ऊँचे दर की मजदूरी तथा धम्य मुविदारों का लोभ दिनाकर बांगाल के क्षेत्रों में ले जाते थे। परन्तु एक बार वहाँ पहुँच जाने पर

श्रमिक को वापिस लौटने या अपने परिवार के लोगों से सम्बन्ध रखने की आज्ञा नहीं थी। श्रमिकों को मघा कर कर बहका लाने या बालकों का अपहरण जैसे प्रापतजनक तरीकों द्वारा भी श्रमिक प्राप्त किये जाते थे। श्रमिकों की शर्तों बागान में धरमन्त मर्हूयी भी पड़ती है।

बागान में श्रमिकों की शर्तों से सम्बन्धित कुछ शर्तों के कारण समय-समय पर बहुत से कानून बनाये गए। जिसमें १९३२ का 'चाय क्षेत्र परवासी श्रमिक श्रम नियम' (Tea Districts Emigrant Labour Act) सबसे बाद का कानून है। यह केवल श्रमिकों की शर्तों से ही सम्बन्धित है। बागान के श्रमिकों से सम्बन्धित दूसरे नामसे १९५१ के बागान श्रमिक श्रमनियम (Plantation Labour Act) द्वारा नियन्त्रित होते हैं परन्तु १९३२ का श्रमनियम केवल प्रवेश करने वाले लोगों को धारण करने पर ही लागू है। इस श्रमनियम के द्वारा धन शर्तों की धनेक धाने भेजने धषधषा शर्तों करने पर ही नियन्त्रण रकता है। धौर यह भी केवल धनम के चाय के बागान पर ही लागू है। इस श्रमनियम के केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण धनुचित शर्तों समाप्त हो गई हैं। इस श्रमनियम से केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण में स्थानीय सरकारों को धन बह श्रमिकार मिल गया है कि बह श्रमिकों के बाग प्रवेश करने पर कोई भी रोक सपा है धौर यदि धनरधन हो तो श्रमिकों के शर्तों पर भी नियन्त्रण सपा है। मानिकों पर भी यह रोक सपा दी गई है कि :

1. धाधम से शर्तों न करे। १६ साल से कम उम्र वाले निधौर उस समय तक श्रित बागान के शरधारों या लाइसेंस प्राप्त शर्तों करने वालों के धविरिक्त किती धेरे नहीं जा सकते धन तक कि वे अपने माता-पिता धनषा शरधारों के साथ न हों तथा शिवया अपने पति की धनुमति के बिना शर्तों नहीं की जा सकती। धसम में प्रवेश करने की शिवि से तीन वर्षों को धनषि समाप्त होने पर, या कुछ निधेष परिस्थितियों में जैसे कुछ स्वास्थ्य होने पर इससे पूर्व भी प्रत्येक परवासी तथा उसके परिवार को स्वदेश लौटने का श्रमिकार है बिसका धन्य भी मानिकों को सहन करना पड़ता है। श्रमिकों की शर्तों के लिये कुछ क्षेत्र निश्चित कर दिये गए हैं, जिनको "शर्तों के नियन्त्रित परवासी क्षेत्र" कहा जाता है। ऐसे क्षेत्रों के धनुषधत तथा मघाध। इन क्षेत्रों में से जो भी लोग शर्तों किये जाते हैं उनको सबसे निकट के धाने भेजने वाले स्थानीय श्रमिकारता के सम्मुख धर्यास्थत होगा पड़ता है धौर शिर के एक निश्चित राश्टे से धसम भेज दिये जाते हैं। इस राश्टे पर धनेक शिपो होते हैं, जहाँ पर इनको बिधाम भोषन सोने का स्थान तथा धनरधनत्वा होने पर बिधिरिधा सहामया भी जाती है। इस वर्ष से कम धायु के बच्चों को धुष भी दिया जाता है। साधारणतया धन शर्तों निम्न प्रकार से की जाती है—(क) शरधारी मया (ध) स्थानीय शर्तों करने वालों द्वारा (ग) धुल पद्धति द्वारा। शरधारी प्रया के लक्ष्यधत बागान से धुने हुये कुछ श्रमिक धाने भेजने वाले स्थानीय श्रमिकारताओं के लक्ष्यधत बागान से भेज दिये जाते हैं जहाँ ने उनकी शर्तों होती है। कुछ बागान

स्वामीय भर्ती करने वालों को ही अमिक भर्ती करने के लिये नीकर रख भेते हैं। अत किसी सरकार या मध्यस्थ को भेजने की आवश्यकता नहीं रहती। पुन प्रजा के अन्तर्गत अमिक स्वयं ही अपने को प्राये भेजने वाले स्वामीय अमिकर्ताओं के द्विपों में भर्ती के लिये प्रस्तुत कर देते हैं। फिर वे उन बाबान में भेज दिये जाते हैं जहाँ उनकी आवश्यकता होती है। इस प्रकार यह कानून केवल भर्ती किए हुए अमिकों को असम भेजने पर ही नियन्त्रण रखता है। भर्ती के साधनों या पद्धतियों पर इसका नियन्त्रण नहीं है। यह कानून केवल उपरोक्त ६ राज्यों के लिये ही है जो कि नियन्त्रित परवासी क्षेत्र कहलाते हैं। लगभग समस्त भर्ती चाय-बाबान अमिक परिपदों द्वारा की जाती है जो कि भर्ती किये हुए अमिकों को प्राये भेजने का प्रबन्ध करती है। परन्तु वास्तविक भर्ती मध्यस्थों द्वारा ही की जाती है जिनको इसके लिये कमीशन मिलता है। इस संघ के द्वारा एक बयस्क परवासी की भर्ती में १९२५ में १४१ व० ३५ न० पै घौसठ व्यय होते थे। परवासी अमिकों के अतिरिक्त 'अकलू' या 'बस्ती' अमिक भी होते हैं जो कि निकट के गाँवों से आते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे अमिक भी होते हैं जिन्होंने किसी समय बाहर से असम में प्रवेश किया था और अब बाबान में आकर बस गए हैं। ऐसे अमिक आवासित (Bettled) अमिक कहलाते हैं।

पश्चिमी बंगाल में चाय के बाबान में साधारणतया अमिकों की कमी रहती है। इसलिये भर्ती पर कोई नियन्त्रण नहीं है। चाय उद्योगों के विभिन्न परिपदों जैसे "भारतीय चाय परिपद" 'भारतीय चाय बाबान नियोजक परिपद' तथा 'चाय बाबान अमिक परिपद' अपने बाबान के लिये अमिकों की भर्ती स्वयं करते हैं। बांग्लादेश में भर्ती की कोई समस्या नहीं है, क्योंकि वहाँ स्वामीय अमिक ही पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो जाते हैं। बिहार के चाय बाबान में भर्ती साधारणतया बाबान के सरदारों द्वारा होती है। वे अमिकों को प्राये भेजने वाले अमिकर्ताओं के समक्ष उपस्थित करते हैं और वे अमिकर्ता उनको बाबान में भेज देते हैं। परन्तु इससे पहले वह इस बात से आश्वस्त हो सते हैं कि वे अमिक लौकरी की तथा कार्य की अवस्थाओं से परिचित हैं और वे अपनी इच्छा से काम करने वाले हैं उनका स्वास्थ्य ठीक है और उन्होंने भेजक का टीका घाबि लयवा लिया है। कुछ अमिक भेजने वाले अमिकर्ताओं के सम्मुख सीधे ही आ जाते हैं। मात्रा का समस्त व्यय बाबान नियोजक ही देते हैं। पंजाब व त्रिपुरा के बाबान उद्योगों में मासिक स्वयं सीधी प्रणाली द्वारा अमिक भर्ती कर भेते हैं अथवा भर्ती मध्यस्थों द्वारा कर देते हैं, जिनको पंजाब में "चौधरी" कहते हैं। केरल राज्य के बाबान में ऐसे अमिक जिनको थोड़े समय के लिये ही काम पर लयाया जाता है बाबान के अमिकों के द्वारा ही भर्ती कर लिये जाते हैं।

पश्चिमी भारत के बाबान में भर्ती 'कर्मियों' के द्वारा होती है। साधारणतया यह कर्मनी सोय बाबान के अमिकों में से ही होते हैं। इन कर्मियों के

कमीशन की भांति श्रमिकों की मजदूरी के आधार पर निर्दिष्ट होती है। इसीलिए भर्ती के पश्चात् भी ये श्रमिकों से अपना सम्पर्क बनाए रखते हैं। कर्मियों द्वारा भर्ती करने की इस प्रथा के बहुत से दुष्परिणाम प्रकट हुये हैं। नवम्बर १९५० में बांग्लादेशी औद्योगिक आयोग तथा फरवरी १९५१ की त्रिदलीय गोष्ठी ने भी इसका विरोध किया है। भारतीय सरकार ने प्रदेशक कंगनी के अन्तर्गत श्रमिकों की संख्या ४० तक सीमित कर दी है; और जब उनको समाप्त करने के लिये पत्र जमाए जा रहे हैं। परिणामस्वरूप कंगनी प्रबन्ध धीरे-धीरे सुप्त होते जा रहे हैं। कौन्सी व रबर के बाजार में श्रमिकों की भर्ती के लिये पक्षेतर व्यक्ति नियुक्त किए जाते हैं जो दक्षिण भारत के अत्यन्त बांग्लादेशी परिवार के भ्रम विभाग द्वारा पंजीकृत होते हैं। यह समस्या इन लोगों की भर्ती के काम में सहायता भी देती है। बांग्लादेश में भर्ती की पद्धति में अत्यन्तनीय बात यह है कि भर्ती परिवार के आधार पर होती है यद्यपि यह प्रथा बांग्लादेशी और दूसरे लोगों में भी कुछ सीमा तक प्रचलित है।

बन्दरगाहों में बहुत समय तक सामान उतारने और चढ़ाने वाले सभी श्रमिकों की भर्ती छोटे-छोटे ठेकेदारों के द्वारा की जाती थी जो "तोलीबाना" कहलाते थे। परन्तु मार्च १९४८ में इस प्रथा का अन्तमन कर दिया गया है। जब बम्बई, कलकत्ता और मद्रास के बन्दरगाहों पर सामान चढ़ाने व उतारने वाले श्रमिकों की भर्ती १९४८ के एक अधिनियम 'बन्दरगाह श्रमिक रोजगार नियंत्रण अधिनियम' (Dock Workers' Regulation of Employment Act) के द्वारा नियमित कर दी गई है। यह अधिनियम बन्दरगाह के श्रमिकों की उन कठिनाइयों को जो उनके आकस्मिक (Casual) रोजगार के कारण उत्पन्न होती हैं दूर करने का प्रयत्न करता है। यह अधिनियम श्रमिकों के रोजगार को अधिक नियमित बनाने के लिये श्रमिकों को पंजीकृत होने में सुविधा प्रदान करता है। उसके साथ-साथ यह अधिनियम सारे श्रमिकों के रोजगार का तथा उनके रोजगार की व्यवस्थाओं को जैसे कार्य के लिये सुट्टियाँ और बेतम धारि नियमित करता है। उसी के साथ-साथ उनके स्वास्थ्य-सुरक्षा और कल्याण के कार्य का भी प्रबन्ध करता है। सरकार द्वारा इस कानून को लागू कराने के लिये एक परामर्श समिति नियुक्त की गई थी और उसी समिति की रिपोर्ट के आधार पर योजनाएँ बना कर बम्बई (जनवरी १९५१) कलकत्ता (नवम्बर १९५१) और मद्रास (मार्च १९५२) में लागू की गई हैं। ऐसी ही योजनाएँ बिलासपट्टन (जुलाई १९५१) और कोचीन (जून १९५१) में भी लागू कर दी गई हैं। ये योजनाएँ जो इस अधिनियम के अन्तर्गत नहीं हैं इस बात का प्रयत्न करती हैं कि सामान चढ़ाने व उतारने वाले श्रमिकों को मौजूदा नियमित रूप से मिलती रहे और अहाज पर से सामान उतारने व चढ़ाने के कार्य के लिये पर्याप्त मात्रा में श्रमिक मिलते रहें। इन योजनाओं को लागू करने के लिये बम्बई (मार्च १९५१) कलकत्ता (सितम्बर १९५२) व मद्रास (जुलाई १९५१) कोचीन (जुलाई १९५१) तथा बिलासपट्टन (नवम्बर १९५१) में कुछ ठेकेदारों की स्थापना कर दी

पई है जिनमें सरकार, मासिक तथा श्रमिक तीनों के प्रतिनिधि सम्मिलित हैं (Dock Labour Boards)। बम्बई व मद्रास में इस योजना के दैनिक प्रबन्ध का उत्तर दायित्व "स्टेवडोर्स परिषद" (Stevedores' Associations) नाम की संस्थाओं पर है। इस योजना के अन्तर्गत श्रमिकों का एक मासिक रजिस्टर तथा एक संरक्षित पूल रजिस्टर भी बनाया गया है। मासिकों के सिमे भी एक रजिस्टर है। इस योजना में उन नियमों का भी स्पष्टीकरण कर दिया गया है जिनके आधार पर किसी श्रमिक या मासिक का नाम रजिस्टर पर लिखा जा सकता है। इस योजना के अनुसार पंजीकृत श्रमिकों को पंजीकृत मासिकों के बीच बांट दिया जाता है। जिन श्रमिकों को जिस मासिक के साथ काम करना होता है वह उसके प्रतिरिक्त किसी अन्य मासिक के साथ कार्य नहीं कर सकते और न ही वह मासिक किसी अन्य पंजीकृत (Registered) श्रमिकों को अपने यहाँ कार्य पर लगा सकता है। संरक्षित पूल रजिस्ट्रों में जिन श्रमिकों का नाम होता है उनको इस योजना के अनुसार एक माह में कम से कम १२ दिन की मजदूरी व महँवाई भत्ता मिलने का प्रावधान रहता है। जिन दिनों के काम के सिमे तैयार हों और उन्हें काम न मिले उन दिनों के सिमे भी इस योजना के अन्तर्गत श्रमिकों को कुछ मजदूरी मिल जाती है जिसको "हाजिरी की मजदूरी" या "गिरास होने की मजदूरी" कहा जाता है। अनुशासनहीनता तथा दुर्भिक्षहार के कारण श्रमिकों को बर्खास्त किया जा सकता है।

जनवरी १९५५ में सरकार ने इन योजनाओं के कार्य की जाँच तथा सुधार के लिये एक जाँच समिति की नियुक्ति की। इस समिति ने सितम्बर १९५५ में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और अनेक सिफ़ारिशों की जैसे मजदूरी और उत्पत्ति का सम्बन्ध स्थापित करना बोलस देना माह में प्रावधानित दिनों की संख्या १२ से २१ तक बढ़ा देना श्रमिकों को साल में ८ दिन बेतन सहित छुट्टी देना, 'बम्बरगाह श्रमिक बोर्ड' के अन्तर्गत के श्रमिकों में कृषि जिससे अनुशासन रोका जा सके आदि। इन सिफ़ारिशों के आधार पर सरकार ने मार्च १९५६ में एक संशोधित योजना प्रकाशित की जिसे नवम्बर १९५६ में कार्यान्वित किया गया। अब श्रमिकों को हाजिर होने पर १ रुपया ३ न० ५० प्रतिदिन के हिसाब से मजदूरी मिल जाती है (Attendance Wage) और काम न होने पर प्राची मजदूरी मिलती है (Disappointment Money)। कई प्रकार के श्रमिकों की भर्ती रोजगार दफ़तर्में टाप भी होती है।

कसकत्ता व बम्बई के बन्दरगाहों में अज्ञान पर काम करने वाले श्रमिकों की भर्ती मध्यस्थों के हाथ होती है। इस व्यवसाय में श्रमिकों की पूर्ण शक्ति होने के कारण इनकी भर्ती प्रणाली में बहुत से दोष पाये हैं। १९४० में सरकार ने एक 'त्रिपक्षीय सामुहिक परामर्श समिति' (Tripartite Maritime Labour Advisory Committee) स्थापित की और उसकी सिफ़ारिशों के आधार पर सामुहिक श्रमिकों के लिए दो रजिस्टर बनाए और उनकी असहृदयी के सर्टीफ़िकेट प्रदान करने पर नियंत्रण लगा दिया गया है। केवल अनुभवी श्रमिक ही अब फिर से पंजीकृत हो सकते हैं।

कमकता घोर बम्बई में एसे बोर्ड भी स्थापित किये गये हैं जो एसे प्रमाणित सामुहिक श्रमिकों का एक रजिस्टर रखते हैं जो कुछ काल में जहाज पर काम कर चुके हैं। बम्बई में पर सामुहिक श्रमिकों के रोजगार दफ्तर स्थापित करने के लिये घोर जवकी मर्ती को नियमित बनाने के लिये सरकार ने १९४९ के 'भारतीय व्यापारी जहाज अधिनियम' (Indian Merchant Shipping Act) में कुछ संशोधन किये हैं। कमकता (१९३४) घोर बम्बई (१९३४) में ऐसे रोजगार दफ्तर खोल किये गये हैं। घोर उनको सहाह देने के लिये निदेशीय राजगार बोर्डों की भी स्थापना कर ली है। मद्रास में जहाज पर काम करने वालों की मर्ती स्थायी रूप से होती है। भारतीय व्यापारी अधिनियम के अनुसार किन्नी भी भारतीय ब्रिटिश या विदेशी जहाज पर श्रमिक केवल जहाज के सयोजक द्वारा ही नियुक्त किय जा सकते हैं घोर यह नियुक्ति विशेष नियमों के अधीन घोर जहाज के नियन्त्रक (Master) की उपस्थिति में ही हो सकती है।

दुम्ने में कर्मचारियों की मर्ती विभिन्न मयों में विभिन्न प्रकार से होती है। कमकता में मर्ती या तो सीधी प्रणाली के द्वारा श्रमिकों के सम्बन्धियों में से होती है। या रोजगार दफ्तरों के द्वारा। बम्बई में रिक्त स्थानों की पूर्ति प्रारम्भ-मय संघा कर ली जाती है।

उन्के के श्रमिक — (Contract Labour)

हमारे उद्योग-धर्मों में उन्के के श्रमिक की श्रमिक भाषा में पाये जाते हैं। निम्न कुछ की प्राकृतिक आवश्यकताओं के कारण इस प्रणाली का बहुत प्रोत्साहन मिला। इंजीनियरिंग सीमेंट कायज तथा प्रहमहाबाद के सूरी कपड़े के उद्योग धर्मों में तथा लानों व बम्बई में उद्योगों में घोर कन्द्रीय व राज्यीय जन-निर्माण विभाग में अधिकतर उन्के के श्रमिक ही पाये जाते हैं। जैसा कि पहले बताया जा चुका है लानों में अधिकतर श्रमिक उन्के के ही श्रमिक होते हैं, घोर यह प्रथा बायान में भी चल चुकी है। प्रहमहाबाद में लगभग १०% घोर सीमेंट, कायज तथा बूट की बटाइयों के उद्योग में लगभग २० से २५% उन्के के ही श्रमिक हैं। कोसार की लाने की लानों में एक तिहाई श्रमिक तथा बंगाल के बम्बई में लगभग ४३% श्रमिक उन्केवालों के द्वारा ही रोजगार पाते हैं।

उन्के के श्रमिकों की प्रथा के प्रचलन के प्रत्येक कारण है। कई बार ऐसा होगा कि कार्य को जल्दी समाप्त करने के लिये कुछ श्रमिकों की एकाएक आवश्यकता घा पड़ती है। श्रमिक कई बार मिलते भी नहीं हैं। हमारे देश में रोजगार के बदलने की स्थापना हुए भी बहुत दिन नहीं हुए हैं। कारणों में निरीक्षक कर्मचारियों की भी कमी रही है। इन प्रत्येक कारणों से उन्के के श्रमिकों को ही काम पर लगाया श्रमिक कमी रही है। परन्तु यह प्रथा के स्वतन्त्र पर हानियाँ ही श्रमिक हैं। उन्हें प्रथम यह स्पष्ट है कि इस प्रथा से लाभ के स्वतन्त्र पर हानियाँ ही श्रमिक हैं। उन्हें प्रथम ही श्रमिकों के हित के लिये बताया गये प्रत्येक कानून जैसा कारणों श्रमिकों पर

मजदूरी अधिनियम मातृत्व हित-साम अधिनियम आदि ठेक के धमिकों पर लागू नहीं होते और धमिक अपने सामो व मुविभागों से संबंध रख जाते हैं। ठेक के धमिक अधिकतर प्रवासी होते हैं। श्रम इन के लिये कानूनों को लागू करना कठिन हो जाता है। कबल धमिकों का शक्ति-पूर्ति देने के लिये जो अधिनियम है वही इन पर लागू होता है। रॉयस श्रम आयोग ने ठेक के धमिकों की प्रथा की पर्यन्त बुराई की है और सिफररिण की है कि धमिकों की भर्ती उनके नाम के बटा तथा उनके बतल धमिक पर प्रबन्धको का पूरा नियंत्रण होना चाहिये। इसी प्रकार से बिहार की श्रम आंच समिति ने ठेकदारों द्वारा भर्ती की प्रथा का खंडन किया है क्योंकि ठेकदार अपने धमिकों की ओर कोई नैतिक कृतज्ञता नहीं मानते हैं और उनको असहाय स्थिति का अनुचित लाभ उठाते हैं। बम्बई की 'कपड़ा श्रम आंच समिति' ने इससे सङ्घर्ष प्रकट करते हुये इस प्रथा के बहुत से दोषों की ओर संकेत किया है। क्योंकि ठेकदार अपना ठेका सबसे कम बोसी पर पाता है इसलिये उसके लिये यह स्वाभाविक है कि वह धमिकों को कम से कम मजदूरी देने का प्रयत्न करे चाहेना उसे लाभ न होना। इस प्रथा का एक अन्य दोष यह है कि धमिकों पर ठेके के धमिकों के कस्याएँ-कार्यों का कोई उत्तरदायित्व नहीं होता और इस प्रकार ठेकदारों द्वारा धमिकों को काम पर लगाने से उनको आर्थिक लाभ होता है। ठेके की भर्ती की प्रणाली तो मध्यस्थ द्वारा भर्ती की प्रणाली से भी अधिक दोषपूर्ण है क्योंकि मध्यस्थ धमिकों में से ही एक हाता है परन्तु ठेकदार तो बिस्मृत बाहरी व्यक्ति होता है।

इन बिचारों का ध्यान में रखते हुये यह धमिक उपयुक्त प्रतीत होता है कि ठेक के धमिकों की प्रथा व त्याग पर सीधी भर्ती की प्रणाली अपनाई जाये। जन निर्माण-विभाग बीसी कुल जगहों में जहाँ ठेक के धमिकों की प्रथा का पूर्णतया त्याग नहीं किया जा सकता वहाँ यह प्रथा नियमित कर दी जानी चाहिये। धमिक सम्बन्धी सभी कानून ठेके के धमिकों पर पूर्ण रूप से लागू होना चाहिये। किसी भी स्थिति में कोई भी ठेकदार कानून द्वारा निश्चित न्यूनतम मजदूरी से कम मजदूरी न दे। इसके धनिरिक्त जहाँ कहीं भी सम्भव हो ठेके के धमिकों की प्रथा के उन्मूलन का प्रयत्न किया जाना चाहिये। सरकार ने इस प्रथा को समाप्त करने या नियंत्रित करने के लिये एक विधाय आंच करने का निश्चय किया है। कई औद्योगिक समितियों ने भी इस प्रथा को समाप्त कर देने का सिफारिश की है। जैसा ऊपर बताया जा चुका है इस प्रथा का खानों में समाप्त करने के लिये एक समिति भी नियुक्ति की गई थी जिसने अपनी रिपोर्ट में (दिसम्बर १९६१ में) इस प्रथा को सितम्बर १९६२ तक समाप्त करने की सिफारिश की है।

जनवरी १९६१ में उत्तर प्रदेश की सरकार ने तीन-बार बड़े-बड़े धमिक विधो बसामा निश्चित किया और जन-निर्माण विभाग के ठेकदारों के लिये यह धनिकार्य कर दिया कि वह कबल जन्ही विधो में से धमिक भर्ती करें। गोरखपुर और लखनऊ

में रोजगार दफ्तरों द्वारा बसाम जान बास श्रमिक श्रमियों को अपने अधिकार में लेकर सरकार ने इस योजना को कार्यान्वित करने की ओर प्रथम कदम उठाया है। यह श्रमिकों को किसी निश्चित काल तक कार्य करने का आश्वासन देते हैं। भर्ती कर सिये जाते हैं, और उनका प्रारम्भिक प्रशिक्षण भोजन और कपड़े का प्रबन्ध किया जाता है। काम करने वाले श्रमिकों का भोजन कपड़ा और बोझ का जेबखर्च दिया जाता है। उनके बेलन में से साफत काट कर उप बेलन उनके परिवारों को भेज दिया जाता है। इस प्रकार से श्रमिक मध्यस्थों व ठेकेदारों के अनुचित व्यवहार से बच जाता है और उसका पर्याप्त बतन सुरक्षित हो जाता है।

गोरखपुर में एक भर्ती का श्रमियों १९४२ में खाना गया था जिसका उद्देश्य यह था कि सड़क से सम्बन्धित सामान बनाने के लिये जो संस्थायें थी उनमें श्रमिकों की कमी न रहे। इस श्रमियों ने पीछे ही एक बड़ी संस्था का रूप धारण कर लिया और इसके द्वारा लगभग २ ००० श्रमिक भर्ती होने लगे। इस संस्था का नाम 'गोरखपुर श्रम संस्था (Gorakhpur Labour Organisation)' पड़ गया। स्वामीय श्रमिकों की कमी के कारण यह संस्था बिहार व वंगाल की कोयले की खानों के लिए भी श्रमिकों की पूर्ति करने लगी। सड़क समाप्त होने पर भी खान उद्योग की प्रारम्भ पर यह संस्था कोयले की खानों के लिये श्रमिकों की पूर्ति करती रही परन्तु भर्ती का व्यव धन ध्यान उद्योग बहान करने लगा। सामान में श्रमिकों की भर्ती के लिये इस प्रकार यह एक संयोजन बन गया जिसका नाम 'कोयला क्षेत्र भर्ती संयोजन' पड़ गया (Coal Fields Recruiting Organisation)। भर्ती का प्रारम्भ का व्यव तो केन्द्रीय सरकार करती है और बाद में कार्य पर लगाने वाली खानों से उनमें श्रमिकों की भर्ती के अनुसार व्यव सं लिया जाता है। १९३६ में विभिन्न कायला खानों में गोरखपुर के श्रमिकों की संख्या १२,८६७ थी। परन्तु इस योजना के विरुद्ध कई विचारों प्राप्त हुई और १९३६ में इनका बारे में जांच की गई। कोयला खानों की औद्योगिक समिति ने १९३६ में इस बात का निर्णय किया कि गोरखपुर के श्रमिकों और अन्य श्रमिकों में कोई भेद नहीं होना चाहिए और गोरखपुर की संस्था का सम्बन्ध केवल भर्ती से ही रहना चाहिए। अगस्त १९३६ में समिति द्वारा अन्तिम रूप में यह निर्णय किया गया कि गोरखपुर की श्रम संस्था विस्तृत ही बन कर ही जाये और इसके जो भर्ती के कार्य हैं वे रोजगार दफ्तरों को सौंप दिये जायें। संसद सभा के इस सभार्यों की एक समिति ने इस सम्बन्ध में बना हो गई थी। इस प्रकार अब गोरखपुर की इस श्रम संस्था को समाप्त करने का निर्णय कर लिया गया है।

श्रमिकों का स्वायत्तीकरण —(Decasualisation of Labour)

श्रमिकों की भर्ती को नियमित करने के लिए कुछ परराज्यों ने बरती के श्रमिकों के नियन्त्रण की रीति अपनाई है। इस योजना को बरती नियन्त्रण प्रथा प्रथा बरती श्रमिकों का स्वायत्तीकरण कहते हैं। इस योजना को दो चर्चों से

धनपान्या गमा है। प्रथम—बदली क धमिका के रोबगार को नियमित बनाना और पुसर—धमिकों की भर्ती में मध्यस्थों के प्रभाव का मिटाना। इस योजना के अन्तर्गत प्रत्येक माह की पहली तारीख को कुछ धुने हुये लोगों को एक विषय बदली कार्य दिया जाता है जिन्हें प्रतिदिन प्रातःकाल मिस के फाटक पर हाथिरी बेगी होती है और अस्वायी रिक्त स्थानों की पूर्ति इन्हीं लोगों में से की जाती है। जब तक बदली क कार्य प्राप्त धमिक पर्याप्त होते हैं किसी धर्म धमिक को भर्ती नहीं किया जा सकता। इन नौकरियों की पूर्ति कार्य व अनुभव की अवधि की देखता के अनुसार की जाती है। इस कार्य के लिये एक रजिस्टर रखा जाता है। अहमदाबाद में केन्द्रीय सरकार की सहायता से सितम्बर १९४८ में इस योजना को सूती कपड़ा मिस के धमिकों के लिये आरम्भ किया गया और बाद में यह योजना बम्बई अहमदाबाद और पोसापुर में भी लागू कर दी गई। इस योजना के अन्तर्गत बम्बई राज्य में सूती मिसों में काम करने वाले ३६७ • धमिक घाटे हैं। यह योजना बम्बई व अहमदाबाद क मिस मालिक संघों के सहयोग से ऐच्छिक रूप से चालू है। बदली धमिकों का स्वीकरण और उनकी अनुपस्थिति धमिकावर्त (Labour Turn-over) की दरों व मान के आधार पर धमिकों पर नियन्त्रण तथा धमिक व अन्धा उत्पादन भर्ती के दोष तथा रिक्तता को समाप्त करना और धमिकों को प्रशिक्षण देना धमि ही इस योजना के उद्देश्य हैं। पंजीकृत धमिकों को प्रमाण पत्र दिये जाते हैं और नौकरी दिखाने में नौकरी कर चुकने की अवधि का विचार रखा जाता है। कोयम्बटूर की कपड़ा मिसों में भी यह योजना लागू कर दी गई है। बम्बई के धमिकों के राजपार को नियन्त्रण में लाने के लिये जो १९४८ का अधिनियम है उसके अन्तर्गत बम्बई व कसकला मद्रास काचीन तथा विशाखापट्टम में धमिकों के स्वीकरण की योजनायें लागू हैं। एसी स्वीकरण योजना अमदाबाद की मोहें की बाहर की कम्पनी में भी लागू है। इन योजनाओं के अन्तर्गत पैंटरी क प्रत्येक विभाग में धमिकों क पूल बना लिये गये हैं और प्रत्येक पारी (Shift) में धमि एकतानुसार धमिकों को काम पर लगा दिया जाता है। धमिकों की अनुपस्थिति क कारण जो स्थान रिक्त हो जाते हैं उनको भी इन्हीं पूल के धमिकों से भर लिया जाता है। इन्दौर में भी सूती कपड़ों के कारखानों में धमिकों की भर्ती के लिए १९३३ में एक केन्द्रीय बदली नियन्त्रण कमेटी की स्थापना की गई थी। परन्तु यह योजना धमिक दिनों तक न चल सकी।

अक्टूरी १९३० में छंटनी के धमिकों का पूल बनाने तथा धमिकों के स्वीकरण के लिये उत्तर प्रदेश की सरकार द्वारा एक योजना बनाई गई। यह योजना पहले से चालू फिर एक वर्ष तक चलाने का विचार था परन्तु जब इसकी सफलता का देखकर इनको धापी रखने का निर्णय किया गया है। प्रयोगात्मक रूप से यह योजना काठपुर में आरम्भ की गई और आलटोनी कातपी रोड बूही तथा इपरान्त में रोबगार दफ्तर के उप-कार्यालय लगे गये। यद्यपि इस योजना की पूर्ण प्रगति

में कुछ प्रारम्भिक कठिनाइयों की फिर भी इस योजना का प्रारम्भ सफल रूप से हुआ। परन्तु नतीजामें हुए त्रिदलीय श्रम सम्मेलन ने इस बात का निर्णय किया कि इस योजना को १ जुलाई १९३४ में समाप्त कर दिया जाये। परन्तु फिर भी राज्य सरकार ने इस बात का निर्णय किया कि रोजगार दफ्तरों से सम्बन्धित विधायक समिति की सिफारिशों पर निर्णय हुआ कि इस योजना का कुछ दिनों तक अस्थायी रूप से जारी रखा जाए। कंसन कूपरगंज का कार्यालय बन्द कर दिया गया। हमारे विचार में इस योजना का समाप्त नहीं करना चाहिये क्योंकि भर्ती के तरीके में जो पक्षपात व भ्रष्टाचार था गया था वह इस योजना से काफी सीमा तक समाप्त हो गया। यह योजना रोजगार के दफ्तरों और उत्तरी भारतवर्ष के मासिक संघ के सम्बन्ध में सम्मानित सम्झौते पर आधारित है। और इस योजना के अन्तर्गत जो कार्य अब तक हुआ है वह भी काफी सराहनीय कहा जा सकता है। यह योजना कानपुर की ऊनी सूती कपड़ा और टेस मिलों में लागू है। १९३२ में १६,४०२ पुरुष के श्रमिकों को कानपुर में पंजीकृत किया गया जिनमें से १२,९४८ को मौकूरियों भी बिसाई गई। इस अवधि में १४,९६८ रिक्त स्थानों की सूचना मिली जिनमें से १४,३३१ स्थानों पर लोगों का भरा भी दिया गया।

भर्ती की कुछ अन्य पद्धतियाँ —

एक स्थायी श्रमिक वर्ग तैयार करने के उद्देश्य में अनेक अस्थायी रोजगार में लगे हुए श्रमिकों के सम्बन्धियों को ही भर्ती में प्रथम ध्यान देती है। यह कहा जाता है कि ऐसे लोग सरलता में कारखाने के अनुशासन को स्वीकार कर लेते हैं। अनेक प्रबन्धकर्मियों के अनुकूल भी होते हैं। फिर भी यह रीति वापस नहीं है। यदि वेप बाने सामान्य हों अर्थात् श्रमिकों के पुत्र रूप में योग्य हों तो इसमें कोई हानि नहीं है बल्कि यह वांछनीय है कि रोजगार में लगे हुए तथा रोजगार में पहले रहे चुके लोगों के पुत्र तथा सम्बन्धियों का प्रथम ध्यान दिया जाये। परन्तु व्यावहारिक रूप में यह रीति पक्षपात साम्प्रदायिकता तथा जातीयता का प्रारंभ देती है और बहुत से अनुकूल लोग मौकूरियों में जाते हैं। अनेक भर्ती करने में केवल वैज्ञानिक विद्वानों का ही पालन होना चाहिए और इसमें किसी भी प्रकार का पक्षपात न होना चाहिये।

सम्भवतया भर्ती की प्रवृत्तियों को दूर करने और उसे वैज्ञानिक रूप से चलायाने का एक ही उपाय है कि रोजगार के दफ्तरों में बुद्धि करके उनका अधिकतम उपयोग किया जाय।

रोजगार दफ्तर (Employment Exchanges)

परिभाषा—

रोजगार दफ्तर एक विधायक प्रकार की वह संस्था है जिसका मुख्य कार्य कार्य-रक्षक लोगों को उनकी योग्यतानुसार उपयुक्त कार्य बिसाना तथा मासिकों को योग्य और अच्छे श्रमिक प्राप्त करने में सहायता देना है। इस प्रकार के कार्य

इच्छुक लोगों और मालिकों को धीमे-धीमे सम्पर्क में लाने का कार्य करते हैं। प्रत्येक श्रमिक को कार्य हूँ देने में सहायता चाहता है अपने घर के निकटतम रोजगार बप्तर में प्राथमिकता देता है। वहाँ उसका नाम योज्यता अनुभव तथा विशेष शक्ति धारि का विवरण मिल लिया जाता है। इसी प्रकार मालिक जिनको श्रमिकों की धार्यकता होती है रोजगार बप्तरों को यह सूचित करते हैं कि उनके पास कौन से स्थान रिक्त हैं और उन्हें किस योज्यता के श्रमिकों की धार्यकता है। यह सारे विवरण रोजगार बप्तर में सुव्यवस्थित रूप से रखे जाते हैं। जब भी कोई स्थान रिक्त होने की सूचना मिलती है तो रोजगार बप्तर कार्य-इच्छुक व्यक्तियों में से उस स्थान के लिये उपयुक्त योज्यता रखने वालों को चुन लेता है और उनके नाम मालिकों के सम्मुख विचारार्थ भेज देता है और यदि धार्यकता हुई तो दोनों पक्षों के बीच समाक्षाप (Interview) का प्रबन्ध कर देता है। अन्तिम निर्णय मालिकों पर निर्भर करता है। जिन व्यक्तियों का चुनाव नहीं हो पाता है उनके लिये रोजगार बप्तर तक प्रयत्न करता रहता है जब तक वे योज्य व्यवसाय नहीं पा लेते। इस प्रकार रोजगार बप्तर श्रमिकों की मान और प्रति में सम्बन्धन स्थापित करता है और प्रत्येक स्थान पर उपयुक्त व्यक्तियों की नियुक्ति करने में सहायक होता है।

रोजगार बप्तरों का काम तथा महत्त्व —

उद्यम द्वारा संचालित रोजगार बप्तरों के महत्त्व को १९१९ में विश्व व्यापी मास्यता प्रबन्ध की गई, जबकि बाधिगटन में अन्तर्राष्ट्रीय धन सम्मेलन ने एक धर्मिसमय (Convention) द्वारा इस बात पर जोर दिया कि प्रत्येक सभ्य देश को जनता के लिए एक नि-मुक्त रोजगार बप्तर स्थापित करना चाहिये जो कि एक विशेष केन्द्रीय नियन्त्रण के अधीन रहे। यह विषय १९४७ में वेनेवा में हुए अन्तर्राष्ट्रीय धन सम्मेलन के तीसरे धर्मिसमय की कार्य-सूची पर फिर से रखा गया और सभ्य सरकारों से रोजगार बप्तरों के संघठनों के बारे में सूचना मांगी गई। यह सूचना धनक देशों से प्राप्त हुई, जिनमें भारत भी था। इसके आधार पर १९४८ में अन्तर्राष्ट्रीय धन सम्मेलन ने धन-संसिद्धि में होने वाले ३१ वें बाधिक धर्मिसमय में एक धर्मिसमय पास किया और एक सिफारिश भी की। इस धर्मिसमय में रोजगार बप्तरों के कार्यों और कर्तव्यों की स्पष्टता दी गई है और इनको सफल बनाने के लिये मालिक और मजदूरों के सहयोग का अनुरोध किया गया है।

रोजगार बप्तर का कार्य धर्मियक महत्त्वपूर्ण है। एक सुसंचालित प्रौद्योगिक व्यवस्था में इनका एक विशेष स्थान है। राष्ट्रीय धामांश (National dividend) की धर्मिकतम वृद्धि की बातों पर निर्भर है। प्रथम तो श्रमिकों को धर्मियक (Involuntary) बेकारी से बचना चाहते प्रत्येक श्रमिक को उसकी योज्यतानुसार कार्य देना। रोजगार बप्तर इस सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं। हममें नन्देह नहीं कि रोजगार बप्तर नवीन व्यवसायों का निर्माण नहीं कर सकते। इनका मुख्य कार्य धन की मान्य प्रति में पूर्ण रूप से सम्बन्धन स्थापित करना है। श्रमिकों और उनकी शक्ति में

उचित प्रकार का अनुसन्धन स्थापित न हो पाने का एक कारण यह भी है कि श्रमिकों को रिक्त नौकरियों की और मासिकों को बेरोजगार मजदूरों की सूचना नहीं मिल पाती। ऐसी स्थिति में रोजगार दफ्तर दोनों को उपयुक्त सूचना दे सकते हैं। कितने आश्चर्य की बात है कि विनियोग तथा अन्य अनेक महत्वपूर्ण वस्तुओं के लिए तो संगठित बाजार काफ़ी समय से पाये जाते हैं परन्तु धन के लिये कोई ऐसी व्यवस्था नहीं है। यद्यपि धन का मोनभाव भी संसार में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अतः इसके लिए भी किसी उचित व्यवस्था का होना अत्यधिक आवश्यक है।

यह तो सरकार का कर्तव्य है कि वह जन-निर्माण कार्यों में उद्योग-व्यवहारी को प्रोत्साहन देकर, कृषि में उत्पत्ति करके तथा देश में धन का समान वितरण आदि करने लोगों के लिये अधिक नौकरियाँ उपलब्ध करे। रोजगार दफ्तरों का यह उत्तर दायित्व होता है कि वे इस बात का ध्यान रखें कि रिक्त स्थानों पर वही मनुष्य नियुक्त किया जाय जो उनके लिये सर्व-उपयुक्त हो। इस प्रकार रोजगार दफ्तरों के द्वारा श्रमिकों को सर्व-उपयुक्त नौकरी और मासिकों को सर्व-उपयुक्त कर्मचारी मिल जाते हैं। इस प्रकार हर नौकरी पर उचित व्यक्ति की ही नियुक्ति होती है। जो समय स्थानों के रिक्त होने तथा उनकी पूर्ति होने में व्यय जाता है वह भी यथा सम्भव कम हो जाता है। मध्यस्थों द्वारा भर्ती के दोष आदि भी रोजगार दफ्तरों के होने से दूर हो जाते हैं। रोजगार दफ्तर इस बात का भी ध्यान रखते हैं कि आवश्यकतानुसार नियुक्त श्रमिक बाजार में प्राप्त होते रहें और उनका उचित रूप से उत्पत्ति की विभिन्न शाखाओं में वितरण हो जाये। वे कार्य योग्य मनुष्यों नौकरियों बेरोजगारी तथा व्यवसाय आदि के बारे में सूचना भी देते रहते हैं जो कि जनता और सरकार के लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होती है। वे विस्थापित (Displaced) व्यक्तियों आरक्षणियों तथा पूर्व सेनिकों (Ex-servicemen) को बसाने में भी सहायता देते हैं। यद्यपि यह सत्य है कि रोजगार दफ्तर नौकरियाँ निर्मित नहीं कर सकते और जब तक कोई स्थान खाली न हो वह किसी को काम पर नहीं लगा सकते फिर भी एक सीमा तक रोजगार के दफ्तर बेरोजगारी कम करने में सहायक सिद्ध होते हैं। अनेक बार ऐसा होता है कि एक स्थान पर तो बेकारी होती है और अन्य स्थानों पर श्रमिकों का अभाव होता है। ऐसी व्यवस्था दो कारणों से उत्पन्न हो सकती है—एक तो नौकरी के सम्बन्ध में बेरोजगार मनुष्यों की कुछ अनभिज्ञता के कारण, दूसरे उचित प्रशिक्षण के अभाव-स्वरूप उस स्थान के लिए अयोग्यता के कारण। ऐसी अनेक अवस्थाओं में रोजगार दफ्तर बेकारी कम करने में अत्यधिक सहायक सिद्ध हो सकता है। वे केवल आवश्यक सूचना देना का साधन ही नहीं होते बल्कि नौकरियों के लिए उपयुक्त प्रशिक्षण देने का कार्य भी करते हैं। इस प्रकार रोजगार दफ्तर धन बाजार में श्रमिकों की माँग व पूर्ति के अनुसन्धन में जो विलम्ब होता है उसका कम कर देते हैं। इस प्रकार यद्यपि कुछ रोजगार की कृति करने में उनका अधिक हाथ नहीं होता, तथापि बेरोजगारी के दोषों को दूर करने में वे

सहायक होते हैं।

सोर्गों का यह विचार भी भ्रमपूर्ण है कि रोजगार दफ्तरों से सब काम केवल श्रमिकों को ही होते हैं। वे दफ्तर मासिकों के लिए भी अत्यन्त लाभदायक हैं। प्रत्येक मासिक के लिए रिक्त स्थान का सीधे से सीधे भर जाना बहुत महत्व रखता है। मासिक यह भी समझते हैं कि रिक्त स्थानों का भर जाना ही काफी नहीं है, अपितु उपयुक्त स्थान के लिए उपयुक्त मनुष्य का होना भी आवश्यक है। रोजगार दफ्तर इन दोनों उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। जब श्रमिक घनायास ही भर्ती के लिए आ जाते हैं तो या तो मासिक को उपयुक्त श्रमिक पाने के लिए काफी प्रतीक्षा करनी पड़ती है या उन्हें नए श्रमिकियों की बहुत बड़ी संख्या में सिखा देनी पड़ती है। परन्तु मासिक के लिए यह दोनों ही बातें झुंझकर होती हैं और परिश्रामस्वरूप अनुपयुक्त लोगों की भर्ती श्रमिक हो जाती है। जिसका फल यह होता है कि श्रमिकों का श्रमिकार्थ बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त मासिकों को और भी बर्से करने पड़ते हैं जैसे रिक्त स्थानों का विज्ञापन या भर्ती के लिए एक विशेष विभाग का संभालना आदि। परन्तु यदि मासिकों को रोजगार दफ्तरों के द्वारा श्रमिक मिल जायें तो यह सब कठिनाइयाँ तथा व्यय दूर हो सकते हैं।

यह सर्वमान्य है कि रोजगार दफ्तर बेरोजगार मनुष्यों के लिए अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुए हैं। इनके न होने से काम की खोज में श्रमिक को प्रार्थनापत्र मिले हुए स्थान स्थान पर घूमना पड़ता है। ऐसी स्थिति में यह समय पर ही निर्भर है कि भाग्यवश श्रमिक ऐसे स्थान पर पहुंच जाए जहाँ उसे मौकरी मिल जाए। अधिकांश श्रमिकों को ऐसा सुसंयोग बहुत दिनों तक नहीं मिल पाता। एक बड़े नगर में एक श्रमिक एक दिन में कुछ ही स्थानों पर जा सकता है और इस अवस्था में यह सम्भव है कि वह जगह पाने के लिए घूमता फिरता रहे जबकि उसी नगर के किसी ऐसे स्थान पर, जहाँ पर वह संयोगवश न जा पाया हो स्थान रिक्त हो। इस प्रकार समय व धम का नष्ट होना श्रमिक मासिक तथा समाज सभी के दृष्टि कोण से हानिकारक होता है और यदि मौकरी की खोज में कहीं दूर जाना पड़ता है तो व्यय और भी बढ़ जाता है। रोजगार दफ्तरों की सहायता से, वे सब हानियाँ जो अर्थशास्त्रिक रूप से मौकरियाँ खोजने के कारण उत्पन्न हो जाती हैं, दूर हो सकती हैं।

संक्षेप में रोजगार दफ्तरों के कार्य निम्नलिखित कहे जा सकते हैं:— (१) वे मासिकों तथा श्रमिकों के बीच मध्यस्थ का काम करते हैं और मौकरी का प्रापसी निर्णय उन्हीं लोगों पर छोड़ देते हैं। इस प्रकार यह धम की माँग व पूर्ति में समुत्पन्न स्थापित करते हैं। (२) उस स्थान से जहाँ श्रमिक श्रमिक हों वे श्रमिकों को उस स्थान पर भेज देते हैं जहाँ उनकी कमी हो। इस प्रकार वे धम की यथार्थता को बढ़ाते हैं, और मूचना के अभाव के कारण उत्पन्न हुए धम के अद्यतन विवरण में समानता लाते हैं। (३) उनके कारण भर्ती में प्रवृत्ति रिक्त और अप्रत्याचार दूर हो जाते

हैं क्योंकि वे सबको निःशुल्क समान सहायता देते हैं। उनके कारण सर्व-उपयुक्त व्यक्तियों की ही नियुक्ति होती है। (४) वे कार्य-योग्य मनुष्यों तथा बेरोजगारी के घातकों को एकत्रित करते हैं और इस प्रकार देश में श्रमिकों की वास्तविक स्थिति ज्ञात हो जाती है। (५) वे अनेक योजनाओं को लागू करने व बसाने में सहायता देते हैं; जैसे बेरोजगारी बीमा योजना स्थायीकरण योजना तथा विस्थापित व्यक्तियों को बसाने तथा उनको कार्य पर लगाने की योजना आदि। (६) वे श्रमिकों को प्रशिक्षण की सुविधाएँ देते हैं तथा बच्चों के माता-पिता व प्रबिभाबकों को व्यवसाय सम्बन्धी तथा व्यापार सम्बन्धी परामर्श व निर्देशन देते हैं। (७) वे शीकरियों के घामी होने और उनके भरणे के बीच के समय को कम कर देते हैं और इस प्रकार अर्नैशियर बेकारी को कम करने में सहायक होते हैं यद्यपि यह सत्य है कि वे रोजगार की उत्पत्ति नहीं कर सकते।

अग्य देशों की भाँति रोजगार दफ्तरों का महत्व हमारे देश में भी सामाजिक सुरक्षा और धार्मिक उत्पत्ति की योजनाओं में अत्यधिक है। इनका संगठन हुए अभी धार्मिक रूप नहीं हुए हैं और इनकी संघर्षों निःशुल्क तथा ऐच्छिक रूप से होती हैं। यदि इनको व्यापारिक दृष्टि से देखा जाए, जैसी कुछ अग्य देशों में इनकी स्थिति है तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह भारत में सफल नहीं हो सकते। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ का धर्मिसमय भी इसी बात की सिफारिश करता है कि रोजगार के दफ्तर निःशुल्क सेवा देते रहें। इनको एक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय और समाजसेवी संस्था समझना चाहिए परन्तु इस बात का अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि इनके अन्दर भी सरकारी कार्यालयों की भाँति केमस कागजी कार्यवाही की ही प्रचालना न रहे। यदि रोजगार दफ्तर कार्य के लिये उपयुक्त व्यक्तियों को खोजने में धार्मिक समय लगावेँ तो श्रमिकों के लिये श्रमिकों की प्रतीक्षा करना कठिन हो जायेगा। इसी प्रकार बिना श्रमिकों को काम की आवश्यकता है बहु बार-बार रोजगार के दफ्तरों के ही बन्दगी नहीं काट सकते जबकि उनके घर में खाने का भी अभाव हो। इसलिये रोजगार दफ्तरों को अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये शीघ्रता बुधलता और व्यापारिक रूप से कार्य करना चाहिये।

अग्य देशों में रोजगार दफ्तर—

रोजगार दफ्तरों की आवश्यकता औद्योगिक विकास के आरम्भ में ही अनुभव की जाने लगी थी। आरम्भ में यह व्यापारिक दृष्टि से साम उद्योगों के लिये व्यक्ति-युक्त संस्था के रूप में अथवा कुछ शानी संस्थाओं, जैसे युवक शिश्चियन संघ (Y. M. C. A.) द्वारा निर्मित समाजसेवी संस्था के रूप में प्रचलित हुये। उच्च श्रेणी निर्मित रोजगार दफ्तरों का बाद में विकास हुआ और न्यूजीलैंड में इनको १८९१ में प्रथम बार आरम्भ किया गया। जर्मनी में पहला रोजगार दफ्तर १८८३ में बर्लिन में शुरू हुआ परन्तु उनका राष्ट्रीयकरण १९१० के बाद हुआ। १९२० में रोजगार दफ्तरों की एक राष्ट्रीय संस्था और रोजगार दिखाने की एक बीमा योजना

का बलिग में प्रारम्भ हुआ। यह एक विदेशीय प्रायोग के नियंत्रण में थे। फ्रान्स ने सामुदायिक रोजगार कार्यालयों से प्रारम्भ किया जिनके स्थान पर बाद में १९१४-१८ के बीच में विभागीय रोजगार कार्यालयों की स्थापना हुई। धातुकर्म एक तो क्षेत्रीय परिष्करण गृह (Regional Clearing House) है और एक श्रम मंत्रालय के अधीन केन्द्रीय रोजगार कार्यालय है। फ्रान्स के रोजगार दफ्तरों का एक विशेष लक्षण यह है कि वह व्यवसाय के आधार पर विभिन्न खंडों में विभाजित है और प्रत्येक खण्ड मास्त्रिकों और श्रमिकों से पूर्ण रूप से पठमर्ष करके अपनी नीति भागू करता है। इस में राष्ट्रीय समाजवादी व्यवस्था के अधीन १९११ में स्टाफ कार्यालयों की स्थापना हुई जो रोजगार दफ्तरों का कार्य करते हैं और यह सभी संस्थाओं के लिये प्रतिनियुक्त है कि वे श्रमिकों को इन दफ्तरों के द्वारा ही भर्ती करें। अमरीका में प्रारम्भ में व्यक्तिगत और समुदाय रोजगार बिलाने की संस्थायें जिन्हें लाइसेंस लेना पड़ता था स्थापित हुईं। सरकार का इनके ऊपर नियंत्रण १९१३ से प्रारम्भ हुआ जबकि एक श्रम-विभाज्य लोसा गया परन्तु नियंत्रण में इडता १९१८ के पश्चात् ही आई। १९१४-१८ की सड़ाई के दिनों में व्यक्तिगत संस्थाओं ने बहुत कार्य किया और प्रत्यक्ष काम उठाया। धातुकर्म भी अमरीका में व्यक्तिगत रोजगार के दफ्तर काफी प्रचलित है यद्यपि नगरपालिका और सरकार द्वारा स्थापित कार्यालयों से उनकी संख्या अधिक नहीं है।

ग्रेट ब्रिटेन में जिसके आधार पर भारतीय रोजगार दफ्तर निमित्त किए गये हैं प्रथम रोजगार दफ्तर १८८३ में ऐशम में प्रारम्भ हुआ। किसी प्रकार का शुल्क नहीं लिया जाता था परन्तु जिनको नौकरी मिल जाती थी उनसे धंसदान ग्रहण कर लिया जाता था। १९०२ में एक 'श्रम ब्यूरो (लन्दन) अधिनियम' (Labour Bureau 'London, Act) पास हुआ जिसके अधीन स्थानीय संस्थाओं को रोजगार के दफ्तर स्थापित करने का अधिकार मिल गया। १९११ में बेरोजगार श्रमिकों के लिये एक अधिनियम पास हुआ जिसके अधीन पीडित मनुष्यों के लिये स्थापित समितियों ने २१ रोजगार दफ्तर स्थापित किये किन्तु इनकी धानोचना की गई। पहला रोजगार दफ्तर १९१० में सरकार ने व्यापार बोर्ड (Board of Trade) के अन्तर्गत स्थापित किया। यह १९११ में जो बरिष्ठ मनुष्यों के कानून (Poor Law) के लिये रॉयल प्रायोग की नियुक्ति हुई थी उसकी सिफारिशों के परिणामस्वरूप स्थापित किया गया था। देश को फिर ११ विभागों में विभाजित किया गया और लन्दन में एक केन्द्रीय कार्यालय लोसा गया। महीने भर के अन्दर ही रोजगार दफ्तरों की संख्या ११ से बढ़कर २१४ हो गई और १९१२ में उनकी संख्या ४१४ तक पहुंच गई। १९१६ में जब श्रम मंत्रालय की स्थापना हुई तब इसने श्रम दफ्तरों का प्रसामन भार व्यापार बोर्ड से लेकर स्वयं संभाल लिया और तब से इस संस्था का नाम श्रम दफ्तरों के स्थान पर रोजगार दफ्तर हो गया। १९१९ में इन रोजगार दफ्तरों के कार्यों की जांच करने के लिए एक समिति की नियुक्ति हुई। हमने यह निष्कर्ष की कि इनका एक राष्ट्रीय आधार

पर विमर्श किया जाये और राष्ट्रीय बीमा योजना भी इनके ही द्वारा लागू की जाए। परिणामस्वरूप १२० लाख धर्मियों का १९२० में बेरोजगारी बीमा अधिनियम के पास होने के पश्चात् रोजगार दस्तरों के द्वारा बीमा हुआ। अब यम मन्त्रालय और राष्ट्रीय बीमा योजना रोजगारों दस्तरों के संचालन के लिये उत्तरदायी हैं। इनका शेष भी धीरे धीरे विकसित कर दिया गया है और यह अब व्यवसाय सम्बन्धी निर्वहन और प्रविक्षण का कार्य भी करती हैं। १९४८ में एक रोजगार और प्रविक्षण अधिनियम भी इनके कार्यों को स्पष्ट करने के लिये पारित हुआ। इस समय ब्रिटेन में ६०० स्थानीय तथा प्रांश रोजगार दस्तर हैं। १४ सरकारी प्रविक्षण केन्द्र हैं, जिनमें व्यवसाय सम्बन्धी प्रविक्षण दिया जाता है। दो विशेष रोजगार दस्तर भी हैं जो युवकों को रोजगार देने और अपाहिज लोगों को बसाने का कार्य करते हैं।

भारत में रोजगार दस्तर

ऐतिहासिक स्पन्द—

द्वारत्तीय धर्म संघ ने १९१९ में अधिसूचना द्वारा इस बात की सिफारिश की थी कि एक निःशुल्क रोजगार दस्तर की स्थापना होनी चाहिये। भारत ने १९२१ में इस अधिसूचना को स्वीकार कर लिया था पर १९३८ में उसको पस्वीकृत घोषित कर दिया। १९२९ की मन्त्री व दाम्पत्य बेकारी की समस्या के विषय में सुझाव प्रस्तुत करते हुये रॉयल धर्म आयोग ने इस बात को स्वीकार नहीं किया था कि रोजगार दस्तर बेकारी को दूर कर सकते हैं। उसके मतानुसार ऐसे दस्तर केवल धर्म की गतिशीलता में ही वृद्धि कर सकते हैं। आयोग के उद्देश्यों में "ऐसे कार्यक्रम उन क्षेत्रों से बर्हाये धर्मियों को मिया जाता था भूतकाम में तो कुछ उपयोगी सिद्ध हो सकते थे परन्तु हमारे विचार में ऐसे समय में उनको स्थापित करना बुद्धिमानी नहीं होगी जबकि अधिकतर धर्मिक कारखाने के फाटक पर ही मिल जाते हैं।" किन्तु इस विचार के होते हुये भी धर्मिक और मालिकों के संघों ने तथा अनेक समितियों ने जैसे समूहमेटी बिहार व कानपुर की धर्म आर्थ समिति और अथ अनुसंधान समिति आदि ने रोजगार दस्तरों की स्थापना के पक्ष में ही अपना मत प्रकट किया।

पिछले युद्ध के दिनों में जब कि सरकार ने तकनीकी कर्मचारियों का अभाव अनुभव किया तब युद्ध की सामग्री के कारखानों और फौज के लिये तकनीकी क्राफ्टरों की पूर्ति करने के लिये धर्म विभाग के अख्तियार कारीगरों के तकनीकी प्रविक्षण के लिये एक योजना बनाई गई। केवल इस प्रविक्षण के लिये १९४३-४४ में ६ रोजगार दस्तरों की स्थापना की गई। युद्ध की समाप्ति के पश्चात् सेना से निकले हुये सैनिकों और कारीगरों को काम पर लगाने की समस्या उपस्थित हो गई और यह आवश्यक हो गया कि रोजगार दस्तरों का विस्तार और संयोजन किया जाये। अतः जुलाई १९४२ में पुर्ननिवास तथा रोजगारी का विभाग एक महा-विधेयक के अधीन खोला गया और उसके अन्तर्गत देश में ७० रोजगार

दफ्तर स्थापित किये गये। धारम्भ में इन दफ्तरों का कार्य कबल यहीं था कि सेवा से निकले हुये सैनिकों और कारीगरों की सहायता करे और उनके प्रशिक्षण की व्यवस्था करे। परन्तु १९४७ में इस संगठन का क्षेत्र विस्तृत करके इनके घन्तर्गत पाकिस्तान से विस्थापित हुये लोगों की सहायता का कार्य भी सम्मिलित कर लिया गया और अगस्त १९४२ में रोजगार दफ्तरों को उन सभी मनुष्यों के लिये जिनको रोजगार की आवश्यकता हो खोल दिया गया।

भारत में रोजगार दफ्तरों का संगठन—

१९४७ में भारत में ७० रोजगार दफ्तर थे परन्तु देश के विभाजन के बाद १७ रोजगार दफ्तर पाकिस्तान के अधिकार में आ गये। फरवरी १९४८ में पश्चिमी बंगाल में एक नया दफ्तर खोला गया। देहली के केन्द्रीय रोजगार दफ्तर को क्षेत्रीय रोजगार दफ्तर में परिणत कर दिया गया। यह विभिन्न क्षेत्रों के लिये परिसूचन गृह (Clearing House) का कार्य भी करता रहा। देहली में एक केन्द्रीय निरीक्षण कार्यालय भी स्थापित किया गया। अगस्त १९४० में 'ब' श्रेणी के राज्यों के दफ्तरों को भी केन्द्रीय संगठन के घन्तर्गत ले लिया गया। जनवरी १९४१ में रोजगार दफ्तरों की संख्या १२८ की जिनमें ६ क्षेत्रीय दफ्तर, १४ उप-क्षेत्रीय दफ्तर और ३३ जिंदा दफ्तर थे। १ नवम्बर १९४६ से रोजगार दफ्तर और प्रशिक्षण केन्द्र (Training Centres) राज्य सरकारों के नियन्त्रण में आ गये हैं। प्रत्येक राज्य में अब प्रशिक्षण तथा रोजगार निदेशालय (Directorate of Training and Employment) बना दिये गये हैं। अब केन्द्रीय सरकार का उत्तरदायित्व केवल नीति संबंधी कार्य संयोजन (Coordination) तथा देखभाल और व्यवस्था सम्बन्धी व्यय का १०% खर्च बहन करने तक ही सीमित रह गया है। केन्द्रीय नियन्त्रण और संयोजन अब रोजगार तथा प्रशिक्षण महानिदेशालय (Directorate General of Employment and Training) गई देहली द्वारा होता है। इसके दो मुख्य विभाग हैं— रोजगार तथा प्रशिक्षण। अगस्त १९६१ से पहले इसका नाम पुनः स्थापन (Resettlement) तथा रोजगार महानिदेशालय था। रोजगार दफ्तरों से सम्बन्धित कुछ रोजगार सृजना म्युरो तथा कुछ उप-दफ्तर भी हैं। समुद्री और हवाई कर्मचारियों के लिये विशेष दफ्तर हैं। इसके अतिरिक्त देश के विस्तार को ध्यान में रखते हुए रोजगार दफ्तर से दूर रहने वाले लोगों के लिये कुछ बसते-फिरते रोजगार दफ्तरों (Mobile Exchanges) की स्थापना की गई है। यह बसते-फिरते दफ्तर बड़ी मोटरों में होते हैं और क्षेत्रीय तथा उपक्षेत्रीय दफ्तरों द्वारा संचालित होते हैं। रोजगार दफ्तरों की सहायता के हेतु केन्द्र क्षेत्रों तथा उपक्षेत्रों में सरकार, मानिक तथा अधिकांश के प्रति निधियों से बनी हुई कुछ परामर्श समितियाँ भी होती हैं। विशेष प्रकार के रोजगार की खोज करने वालों के लिए पृथक-पृथक विभाग हैं जैसे विस्थापित व्यक्ति संटनी में आए हुए सरकारी कर्मचारी अधिसूचित जाति के नीच ज्ञानपूर्व सैनिक एंको-इंडियन प्रार्थी तथा स्त्रियाँ। पत्राधिकारियों के माय प्रवर्तन के लिये 'पत्राधिकारी-प्रशिक्षण-गर्भ'

निकासे जाते हैं और उनके लिये कई प्रशिक्षण कार्य-क्रम भी लागू किए गये हैं। प्रस्थानीय श्रमिकों के स्थायीकरण होने की योजना में भी रोजगार के दफ्तर सहायता व सहयोग देते हैं। १९५८-५९ में रानीय व और स्त्रिया की कोयले की खानों के लिये प्रथम से रोजगार दफ्तरों की स्थापना हुई है। विरबविद्यालय के छात्रों की सहायता के लिये दिल्ली विश्वविद्यालय में एक रोजगार ब्यूरो की भी स्थापना की गई थी और अब ऐसे ब्यूरो वार विरबविद्यालयों में पाये जाते हैं अर्थात् देहली विवेन्द्रम प्रसीयड और वाराणसी। कुलाई १९५ से नई दिल्ली में रोजगार तथा प्रशिक्षण महानिदेशालय के अन्तगत एक केन्द्रीय रोजगार दफ्तर स्थापित कर दिया गया है। सरकारी संस्थाओं में २००० प्रतिमाह से अधिक के जो भी पद रिक्त होते हैं उनकी सूचना १५ केन्द्रीय रोजगार दफ्तर को देना आवश्यक है। मासिक भी अपने रिक्त स्थानों की सूचना इस केन्द्रीय रोजगार दफ्तर के द्वारा दूसरे राज्यों में भेज सकते हैं। १९५० में विरबालय में एक विशेष विभाग केन्द्रीय सरकार के अन्तर्गत रिक्त स्थानों की पूर्ति करने और यदि किसी विभाग में आवश्यकता से अधिक कर्मचारी हों तो उनको अन्य राज्यों में भेजा देने का प्रयत्न करने हेतु खोल दिया गया है। नवम्बर १९५९ से बरसू मीकरों के लिये भी एक विशेष रोजगार दफ्तर देहली में स्थापित कर दिया गया है। १९५९ में एक अधिनियम भी पारित किया गया जो १ मई १९६० में लागू कर दिया गया है। इसको रोजगार दफ्तर (रिक्त स्थानों की अधिवार्य सूचना) अधिनियम [Employment Exchanges (Compulsory Notification of Vacancies) Act] कहते हैं। इस अधिनियम के अन्तर्गत अब मासिकों के लिये अधिवार्य हो गया है कि वे विशेष रिक्त स्थानों की सूचना रोजगार दफ्तरों को दें और नियमित रूप से अपने कर्मचारियों की संख्या भी समय-समय पर प्रस्तुत करते रहें। मितम्बर १९६१ में रोजगार दफ्तरों की संख्या ३१६ की और इनके अतिरिक्त ४ विरबविद्यालयों के रोजगार ब्यूरो भी थे। उत्तर प्रदेश में रोजगार दफ्तरों की संख्या ३३ की-१ क्षेत्रीय १ उप क्षेत्रीय तथा ४३ जिला रोजगार दफ्तर थे।

श्रमिकों के लिये विभिन्न व्यवस्थाओं का प्रशिक्षण (Training of Workers)

श्रमिकों के लिये विभिन्न व्यवस्थाओं का प्रशिक्षण अति आवश्यक है। अन्य देशों में सरकार द्वारा प्रशिक्षण के अतिरिक्त मजदूर संघों तथा मासिक संघों द्वारा के द्वारा भी प्रशिक्षण व्यवस्था है। भारत में प्रशिक्षण का भार केवल सरकार पर ही पड़ा है क्योंकि मजदूर संघों की ऐसी व्यवस्था नहीं है कि वे प्रशिक्षण योजनाओं को नियमित रूप से चला सकें। मासिकों ने भी केवल कुछ संगठित उद्योग-धर्मों को छोड़कर, इस प्रकार ही ध्यान दिया है। भारत में प्रथम प्रशिक्षण योजना कही थी जो कि द्वितीय और तृतीय रोजगार दफ्तरों के द्वारा तकनीकी कारीगरों की पूर्ति के लिए वार्षिक रूप से चलायी गई थी। युद्ध की समाप्ति के बाद यह योजना लागू रही और इसके अन्तर्गत युद्धपूर्व संतिका को विभिन्न कक्षाओं तथा व्यवस्थाओं का प्रशिक्षण दिया जाता था। १९५० में इस योजना को समाप्त कर लिया गया। और इसके स्थान पर नव

१९५० में एक व्यापक योजना जिसको बयस्क लोगों के प्रशिक्षण की योजना कहा गया प्रारम्भ की गई। इस योजना का भी १९५४ में पुनर्संगठन किया गया और अब 'शिल्पियों के प्रशिक्षण की योजना' (Craftsmen Training Scheme) के नाम से यह योजना चल रही है। प्रारम्भ में इसमें बस हजार व्यक्तियों के लिए जगह थी। द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना की अवधि में ३२ • अन्य व्यक्तियों के लिए और जगह बना दी गई। इस प्रकार द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना की समाप्ति पर ४२ •• व्यक्तियों के प्रशिक्षण हेतु स्थान का तथा १६६ औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों भी। तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में ३१८ और संस्थानों स्थापित करने का कार्यक्रम बनाया गया है और ५८ हजार और व्यक्तियों के लिए प्रशिक्षण व्यवस्था कर दी जायेगी। इस प्रकार एक लाख शिल्पियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था हो जाएगी। इस योजना के अन्तर्गत अब प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है और दोनों प्रकार के अर्थात् तकनीकी तथा व्यवसायिक प्रशिक्षण की व्यवस्था है। इसके पाठ्य-विषय को उद्योग-अर्थों की आवश्यकताओं के अनुसार बनाया गया है और जो प्रशिक्षण समाप्त कर लेते हैं उनको एक शिल्पी प्रमाणपत्र दे दिया जाता है। इस प्रमाणपत्र को अनेक राज्य सरकारों ने मान्यता प्रदान की है। एक "राष्ट्रीय व्यवसाय प्रमाणपत्र बोर्ड" की भी स्थापना की गई है जो परीक्षाओं का संचालन करता है और विस्तृत प्रदान करता है। तकनीकी व्यवसायों में प्रशिक्षण की अवधि दो वर्ष तथा व्यवसायिक प्रशिक्षण की अवधि एक वर्ष है। इस योजना का उद्देश्य यही है कि उद्योग-अर्थों के लिए निपुण कारीगर मिलते रहें और शिक्षित लोगों में बेकारी कम हो तथा उत्पादन की मात्रा बढे और वृद्धि हो। मई १९५७ में प्रशिक्षण नीति निर्धारण में परामर्श देने के लिए तथा स्तरों में एकता लाने के लिए एक व्यवसायिक प्रशिक्षण सम्बन्धी राष्ट्रीय परिषद् की स्थापना की गई।

शिल्पी प्रशिक्षण (Craftsmen Training) योजना के अतिरिक्त द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना के अन्तर्गत कुछ अन्य कार्यक्रम भी प्रारम्भ किये गये हैं जिनमें तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में और वृद्धि करने का कार्यक्रम है। एक तो शिद्यार्थी प्रशिक्षण योजना (Apprenticeship Training Scheme) है तथा दूसरी शिक्षित बेरोजगार व्यक्तियों को काम दिलाने हेतु केन्द्र (Orientation Centres for Educated Unemployed) हैं तथा तीसरी शिल्पियों के लिए संध्या कक्षाओं के केन्द्र (Evening Classes for Industrial Workers) हैं। सितम्बर १९५१ में प्रशिक्षण योजना के अन्तर्गत इस प्रकार के—ऐसी संस्थानों की कुल संख्या जिनमें प्रशिक्षण दिया जा रहा था—२९५ (शिल्पी प्रशिक्षण संस्थानों—१९९, शिद्यार्थी प्रशिक्षण संस्थानों—१९, शिक्षित बेरोजगारों हेतु प्रशिक्षण केन्द्र—१५ तथा संध्या कक्षाओं के केन्द्र—१५, योग २९५)। ऐसे व्यक्तियों को संस्था जिनको प्रशिक्षण दिया जा रहा था ४१ •••• की [बै-इंजीनियरिंग (Non-Engineering) व्यवसाय में—कुल १,५४८ तथा शिल्पी ४९, इंजीनियरिंग (Engineering) व्यवसाय

में-३८१६६, विद्यार्थी केन्द्रों में-१०११ विभिन्न बरोजगारों के काम व प्रशिक्षण केन्द्रों में-७११ तथा संघ्या कक्षाओं में-८८४]। तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में शिक्षण प्रशिक्षण संस्थाओं की संख्या १६६ से बढ़ाकर ११८ करने का कार्यक्रम है। विद्यार्थी प्रशिक्षण योजना के अंतर्गत १४००० और अधिक व्यक्तियों को प्रशिक्षित करने की योजना है। संघ्या कक्षाओं के अंतर्गत भी १५०० व्यक्तियों हेतु स्थान बनाने की योजना है।

इसके अतिरिक्त "प्रशिक्षकों" के प्रशिक्षण हेतु एक केन्द्रीय संघ्या (Central Training Institute for Craft Instructors) है। इसकी स्थापना १९४८ में मध्य प्रदेश में कोनी विद्यामपुर में हुई। एक और संस्था १९५८ में इसी उद्देश्य से पूना के पास धौब में स्थापित की गई। कोनी विद्यामपुर की संस्था ता धब कलकत्ता में स्थापित कर दी गई है तथा धौब को मसूदा का भी धम्बई में स्थापित किया जा रहा है। जनवरी १९६१ में कानपुर में भी एक ऐसी ही संस्था स्थापित कर दी गई है। इन सब संस्थाओं में ५१२ प्रशिक्षकों को प्रशिक्षण देने की योजना है। तृतीय आयोजना में इन संस्थाओं में ६७६ व्यक्तियों के लिये स्थान बना दिये जायेंगे और माहौला प्रशिक्षकों के लिये भी प्रशिक्षण को व्यवस्था की जायेगी। मार्च १९६१ तक इन संस्थाओं में १८०६ पूर्ण प्रशिक्षित प्रशिक्षक निकल चुके थे। तीन धम्य केन्द्र धीरे धीरे खोलने का भी कार्यक्रम है और तृतीय पंचवर्षीय आयोजना की अवधि में ७८०० प्रशिक्षकों को प्रशिक्षण देने की योजना है। इलाहाबाद में दिसम्बर १९५४ में एक शौक केन्द्र (Hobby Centre) भी खोला गया जिसका उद्देश्य यह है कि विद्यार्थियों को पारोरिक धम की महत्ता का ज्ञान कराया जाए और उनमें लक्ष्मी की तथा व्यवसायिक विषयों के प्रति रुचि उत्पन्न की जाए। इस केन्द्र में १९५६ में ११२ विद्यार्थी प्रशिक्षण पा रहे थे। इसके अतिरिक्त अनेक राज्यों में धीरे धीरे विनाय ने भी प्रशिक्षण केन्द्र तथा औद्योगिक विद्यालय खोल रहे हैं। नई दिल्ली में लिवियों के लिए १९५४-५६ से एक औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्र की भी स्थापना की गई है। हमने १९५६ तक २०० महिलाओं को कढ़ाई सिलाई कढ़ाई धीरे बुनाई के कार्यों में प्रशिक्षण दिया जा चुका था।

रोजगार बस्तारों के विषय में दिवााराज समिति की रिपोर्ट—

आयोजना आयोग के सुझाव पर सरकार ने मजम्बर १९५० में श्री बी० गिजाधर के समापनत्रिक में प्रशिक्षण तथा 'रोजगार बस्तारों' के लिए एक समिति की नियुक्ति की जिसमें ७ सदस्य थे जिनमें धमिकों तथा मानिकों के प्रतिनिधि भी थे। इसका कार्य रोजगार बस्तारों के संगठन पद्धति व कार्य आदि की जांच करना तथा उनमें उपयुक्त परिवर्तनों के विषय में सुझाव देना था। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट २८ अगस्त १९५४ को सरकार के सम्मुख प्रस्तुत की।

इस समिति ने यह सुझाव दिया कि रोजगार बस्तारों का उपयुक्त नाम "राष्ट्रीय रोजगार मेधा" होना चाहिये और मिश्रणिक की कि इन बस्तारों की स्थायी

संस्था का रूप दे देना चाहिए। इस समिति ने ऐसी सरकारी तथा गैर-सरकारी नौकरियों की संख्या घीर बढ़ा दी है जो कि अनिर्धार्य रूप से रोजगार बप्टरों द्वारा ही भरी जानी चाहिए। परन्तु यह समिति वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए इस बात के पक्ष में नहीं थी कि रोजगार बप्टरों द्वारा ही अनिर्धार्य रूप से भर्ती की जाए। परन्तु निजी मामिकों के लिए यह अनिर्धार्य कर देने की सिफारिश भी कि वे सभी रिक्त स्थानों की सूचना इस बप्टर को दें। किन्तु यह बात अस्थायी नौकरियों तथा अनिपुण श्रमिकों की भर्ती के लिए लागू नहीं की गई।

इस रिपोर्ट का एक अन्य मुख्य सुझाव यह था कि इन बप्टरों का दैनिक प्रबन्ध शाखों को सौंप दिया जाये और केवल नीति-निर्धारण स्तर-निर्धारण और बप्टरों के सञ्चालन तथा उनके कार्यों की देख रेख का उत्तरदायित्व केन्द्रीय सरकार पर रहे। नये बप्टर जोड़ने अथवा किसी बप्टर को बन्द करने के लिये भी केन्द्रीय सरकार की पूर्वानुमति आवश्यक भी जाए। इन बप्टरों के लक्ष्य का ६ % भार केन्द्रीय सरकार पर होना।

रिपोर्ट में एक अन्य महत्वपूर्ण सिफारिश यह भी थी कि श्रमिक अपने को रोजगार बप्टरों में स्वेच्छा से रजिस्टर कराने के लिये स्वतन्त्र हों। मामिकों और रोजगार बुझने वालों से रोजगार बप्टर कोई छुस्त न ले। समिति ने रोजगार बप्टर के कार्यों को अधिक विस्तृत करने का सुझाव दिया था। उदाहरणार्थ रोजगार के धाँकड़े हटाने करना रोजगार के लिये परामर्श देना तथा व्यवसायिक अनुसन्धान विस्लेषण और परीक्षण करना आदि। इस रिपोर्ट में रोजगार बप्टरों के संगठन की व्यापक ऐतिहासिक विवेचना अब तक के लिए नये कार्यों की रिपोर्ट तथा इस मसल के शासन के विषय में सुझाव और कार्य करने की प्रणाली तथा पद्धति की विवेचना भी सम्मिलित है। इस रिपोर्ट में पुनः स्थापना संस्था की धिसियों और प्रधिसकों के लिए विभिन्न तकनीकी तथा व्यवसायात्मक प्रधिसण योजनाओं का भी प्रबन्धन किया गया है और इनके सम्बन्ध में अपनी सिफारिशें भी प्रस्तुत की हैं।

इन सिफारिशों को आधार मानकर द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में रोजगार बप्टरों के पुनर्गठन के लिये अनेक सुझाव उपस्थित किये गये थे जिनको अब लागू भी कर दिया गया है।

जनता में रोजगार बप्टरों की कार्य-विधि पर काफी असंतोष रहा है। यद्यपि इनकी आवश्यकता तथा महत्व के बारे में कोई शक नहीं उठा सकता परन्तु इन पर व्यय होने वाली जनराशि को दृष्टि में रखते हुये यही कहा गया कि इनसे अधिक लाभ नहीं हुआ था। इसलिए इन विषय में जांच करना अति आवश्यक था और आयोजना आयोग ने भी इसकी सिफारिश की थी।

यहाँ यह भी उल्लेख करना अनुचित न होगा कि रोजगार बप्टरों के नियंत्रण का विदेशीकरण करना अधिक लाभदायक सिद्ध न होगा क्योंकि इससे अन्य सरकारों का दृष्टिकोण बहुत अनुचित हो जाएगा और हाँ सचता है कि वे अपनी आयोजनाओं में

कार्य करने वाले भूमिकों को धन्य राज्यों से न बुसायें। इस प्रकार धन की मति सीमता पर कुछ प्रभाव पड़ेगा जबकि रोजगार दफ्तरों से यह प्राप्ता की जाती है कि वह इस गतिशीलता में वृद्धि करेंगे। विचारार्थ समिति ने यह भी कहा था कि रोजगार दफ्तरों के लिये यह अनिवार्य नहीं होना चाहिये कि वे अनिपुण भूमिकों को भी रजिस्टर करें। इस सुझाव का कारण सम्भवतः यह प्रतीत होता है कि ऐसा करने से रोजगार दफ्तरों का कार्य बड़ आसानी और कार्य सुचारु रूप से नहीं चल सकेगा। परन्तु हम इस सुझाव से सहमत नहीं हैं क्योंकि बिना अनिपुण भूमिकों को रजिस्टर किये देश के कार्य योग्य मनुष्यों की संख्या का ठीक अनुमान नहीं लगाया जा सकता।

बहुधा ऐसा देखा गया है कि रोजगार दफ्तर अपने अस्तित्व को प्रमाणित करने के लिये अपने कर्मचारियों को कारखानों के फाटका पर भेज देते हैं और वे वहीं पर भर्ती किए गये भूमिकों को रजिस्टर कर लेते हैं और फिर अपने प्रांशुओं में यह बिना देते हैं कि दफ्तर ने इतने अधिक भूमिकों को कार्य पर लगाया है। बहुधा ऐसा भी देखा गया है कि अपने कर्मचारियों तथा सरकारी पदाधिकारी भी किसी विद्यार्थी को या तो पूर्ण नियुक्ति कर देते हैं या नियुक्त करने का निश्चय कर लेते हैं और तब उस धन को रोजगार दफ्तर में रजिस्टर कराने का कह देते हैं। यह सब बातें अनुचित हैं क्योंकि इनसे रोजगार दफ्तरों का वास्तविक उद्देश्य अर्थात् उपयुक्त स्थानों पर उपयुक्त भूमिकों की पूर्ति करना—पूरा नहीं होता और भर्ती की कुशलता बुर नहीं होती। रोजगार दफ्तरों को भूमिका को नौकरी दिखाने में पूर्ण उत्सवता दिखानी चाहिये और अनुचित पक्षपात नहीं करना चाहिए। इसके अतिरिक्त यदि रोजगार दफ्तर वास्तव में सामग्र्य सिद्ध होता चाहते हैं तो उनका केवल काम बूटने वालों का और नौकरियों का रजिस्टर बना लेने से ही सम्पुष्ट नहीं होना चाहिए बल्कि उनको भूमिकों को सलाहाकार के रूप में उन्हें धन के आकार की स्थिति का ज्ञान कराने का उत्तरदायित्व भी लेना चाहिए। उन्हें भूमिकों का बताना चाहिए कि किन क्षेत्रों में व्यवसाय बढ़ रहे हैं अथवा बढ़ रहे हैं। इसके अतिरिक्त उनको बड़ते हुए व्यवसायों में भूमिकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी चाहिये जिससे पुराने कार्य को छोड़कर नये कार्य लेने में भूमिकों को बाधा न पड़े। रोजगार दफ्तरों के इस प्रशिक्षण तथा माग प्रवर्धन की सेवाओं का सामग्र्य उपयोग (Rationalization) समय हो सकता है जबकि किसी भी उद्योग-धन्धे का विवेकीकरण (Rationalization) किया जाए। यदि विवेकीकरण की योजना से परिणामस्वरूप किसी विद्यार्थी को नौकरी मिलती है तो उसे नौकरी से असंगत कर दिया जाये तो रोजगार दफ्तरों के लिए कर्तव्य है कि वे उनको दूसरी नौकरियों दिखाने में या उन नौकरियों के लिए प्रावधानक प्रशिक्षण देने में सहायक सिद्ध हों। प्रशिक्षण नाम में अपने पूर्ण मानिका से इन भूमिकों को अलग मिलता रहना चाहिए।

रोजगार दफ्तर एक अन्य विद्या में भी अपनी सेवा का विस्तार कर सकते

है। कभी-कभी श्रमिकों के पास इतना पैसा नहीं होता कि वे दूरस्थ स्थानों पर नौकरी करने के लिये जा सकें या ऐसी नौकरियों के लिये आवश्यक प्रशिक्षण प्राप्त कर सकें। ऐसी अवस्था में रोजगार वृद्धि धार्मिक रूप से उनकी कुछ सहायता कर सकते हैं। जो भी रुपया इस प्रकार दिया जाये वह बाद में किस्तों में वापस लिया जा सकता है।

इन साधारण रोजगार वृद्धियों के प्रतिरिक्त कुछ विशेष रोजगार वृद्धि भी कोस जाने चाहिए जिनसे विशेष प्रकार के उद्योग के मजदूर भी लाभ उठा सकें। जैसे बहाज पर, बन्दरगाहों पर, बरधु नौकरी के लिये बाजार में तथा स्थानों में काम करने वाले श्रमिकों के हेतु प्रादि। इन विशेष प्रकार की संस्थाओं की आवश्यकता इसलिए है क्योंकि इन उद्योगों की अपनी अलग विशेषताएँ हैं। उदाहरणार्थ समुद्र के कर्मचारी एक बार में केवल निश्चित समय तक के लिये ही नौकर रहे जाते हैं और समुद्री यात्रा समाप्त होते ही उनका नौकरी का संसिद्धा टूट जाता है। अतएव एक बहाज पर जितनी बार भी किसी कर्मचारी की नौकरी की अवधि समाप्त होती है उतनी ही बार उसे रोजगार वृद्धि की सहायता की आवश्यकता होती है। बन्दरगाह के कर्मचारियों की नौकरी धार्मिक होती है अतः श्रमिक की मसाई और उद्योग की कार्यक्षमता के लिये स्वाधीकरण योजना का लागू होना अनिवार्य है। स्वाधीकरण (De-casualisation) का तात्पर्य है भर्ती को नियमित बनाना और रोजगार वृद्धियों के द्वारा नौकरी दिलाना। इसी प्रकार से कोयल की स्थानों में रोजगार बढ़ाने वाले मजदूरों तथा उन कोयल की स्थानों में जिनको मजदूरों की आवश्यकता होती है उनका मध्य रोजगार वृद्धि एक कड़ी का काम करते हैं। इन प्रकार से कोयल की स्थानों में या वर्तमान कठिनाइयों श्रमिकों की भर्ती में पड़ती है वह दूर हो जायेगी और भर्ती का व्यय भी कम हो जायेगा।

इसके प्रतिरिक्त रोजगार वृद्धि को नफस बनाने के लिए मासिकों का यह ध्यान अति आवश्यक है। उनको चाहिए कि वे बराबर रिक्त स्थानों की सूचना रोजगार वृद्धियों को देते रहें और उनकी पूर्ति भी उन्हीं के द्वारा करवायें। दुर्भाग्यवश मासिकों से इस प्रकार का सहयोग अभी तक प्राप्त नहीं हो सका है और यदि इसी प्रकार रोजगार वृद्धियों से अलग रहकर भर्ती करते रहे तो रोजगार वृद्धि अपना कार्य सफलतापूर्वक न कर सकेंगे। अब वह समय आ गया है जबकि मासिकों के लिये रोजगार वृद्धियों को प्रयोग में लाना अनिवार्य हो जाना चाहिए। यदि कुछ मासिक इस विचार को नापसन्द करते हैं तो सबसे अपनी अज्ञानता तथा अन्धेह प्रवृत्ति के कारण ही। यह हर्ष का विषय है कि मासिकों का एक प्रभावशाली दल हम अनिवार्यता के पक्ष में है उदाहरणतः महामन्त्रालय मिला मासिक संयुक्त ने अपना धन आज समिति १९५५-६ के सम्मुख यह प्रस्ताव रखा था कि श्रमिकों की भर्ती रोजगार वृद्धियों द्वारा अनिवार्य होनी चाहिए। वहाँ पर यह उल्लेखनीय है

कि सोवियत रूस में इन रोजगार दफ्तरों द्वारा भर्ती प्रक्रिया है।

इस सम्बन्ध में हम डा० रामाकमल मुक्तजी के मत से सहमत हैं कि जब जब कि रोजगार दफ्तर मार्गमिक प्रवृत्तियाँ पार कर चुके हैं, इनका संगठन एक राष्ट्रीय आधार पर स्थापित किया जाना चाहिए। भारतीय सरकार को एक रोजगार दफ्तर अधिनियम बनाना चाहिये जिससे श्रम मन्त्रालय के अन्तर्गत पूरे देश भर में रोजगार दफ्तरों का एक सुसंगठित जाल सा बिछ सके। यद्यपि और अमरीका के अनेक देशों में रोजगार दफ्तर सम्बन्धी व्यापक कानून बनाए गये हैं और इसके फलस्वरूप उन देशों में रोजगार दफ्तर काफी सीमा तक उन्नति कर गए हैं। कोई कारण नहीं प्रतीत होता कि भारत में भी हम ऐसे कानून क्यों न बनायें। २० • से अधिक आबादी वाले प्रत्येक नगर में एक रोजगार दफ्तर होना चाहिए। इसके अतिरिक्त कुछ विशेष उद्योगों और क्षेत्रों में मासिकों के लिये रोजगार दफ्तरों के द्वारा ही भर्ती प्रक्रिया कर दी जानी चाहिए। रोजगार दफ्तरों के लिये भी यह प्रक्रिया होना चाहिए कि वे रोजगार के दफ्तर में अपने को रजिस्टर करवायें। भारतीय सरकार तथा अनेक राज्य सरकारों ने इसी धारणा को घोषित कर रखा है कि सरकारी नौकरियों के रिक्त होने की सूचना रोजगार कार्यालयों को दी जायें और उनकी पूर्ति भी उन्हीं के द्वारा हो। इस सम्बन्ध में बीसा ऊपर उल्लेख किया जा चुका है १९२६ में रोजगार दफ्तर (रिक्त स्थानों की प्रक्रिया सूचना) अधिनियम के अन्तर्गत मासिकों के लिए अपने कर्मचारियों की संख्या समय-समय पर बताना और रिक्त स्थानों की सूचना रोजगार दफ्तरों को देना प्रक्रिया कर दिया गया है। यह अधिनियम १ मई १९१० से लागू हो गया है।

यह भी उल्लेखनीय है कि प्रथम पंचवर्षीय धायाजना में धायाजना धायोग ने श्रम शक्ति का पूर्ण प्रयोग करने में रोजगार दफ्तरों का महत्त्व पर काफी बल दिया था। इसके लिये श्रम शक्ति सम्बन्धी धायाजने एकत्रित करना विभिन्न प्रकार के श्रम की मात्रा का पूर्ण ज्ञान होना और श्रमिकों को उचित प्रशिक्षण देना प्रति आवश्यक है। रोजगार दफ्तरों के संगठन तथा कार्य विधि की बाँध करन की निष्ठाविका की गई थी जिसके परिणामस्वरूप धायाजना समिति की निष्ठाविका हुई थी। उसकी निष्ठाविका के अनुसार भारत सरकार ने रोजगार दफ्तरों का धायाजना १ नवम्बर १९२६ में राज्य सरकारों को दे दिया है। द्वितीय पंचवर्षीय धायाजना में रोजगार दफ्तरों को अधिक सामर्थ्यक बनाने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये गये थे—

(१) रोजगार दफ्तरों की संख्या में वृद्धि—धायाजना नाम में १२० नव रोजगार दफ्तर जोसे जान की व्यवस्था की। (२) रोजगार सम्बन्धी अधिक से अधिक जानकारी एकत्रित करना। (३) युवक व्यक्तियों को सहाय देने के लिये एक युवक रोजगार कार्यालय की स्थापना करना। (४) रोजगार दफ्तरों में नौकरों को जाने वालों को सूचना देने तथा उनका भाग प्रदर्शन के लिये एक 'रोजगार सहाय'

कार्यालय की स्थापना तथा उसका द्वारा जीवन कृति के सिधे पुस्तकों तथा धर्म साहित्य का प्रकाशन करना । (५) व्यवसाय सम्बन्धी पारिभाषिक शब्दों का समानाकरण करने के लिये और एक व्यापक व्यवसायिक शब्द कोष बनाने के लिये व्यवसाय सम्बन्धी अनुसंधान तथा बिस्लेषण करना । (६) रोजगार ब्पत्तों में मौकरी खोजने वालों के लिये व्यवसाय सम्बन्धी परीक्षाओं का प्रबन्ध करना ।

प्रशिक्षण के सम्बन्ध में द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में निम्नलिखित सुझाव थे—(१) शिल्पियों की वर्तमान प्रशिक्षण योजनाओं में वृद्धि तथा बिस्तार करना । (२) शिल्पियों की एक निरमित रूप से सिक्कारी प्रशिक्षण योजना का आरम्भ करना । (३) मध्य प्रदेश में कोनी बिन्नासपुर में जो प्रशिक्षण के प्रशिक्षण के लिये एक केन्द्रीय संस्था है उसकी उत्पत्ति और बिस्तार करना तथा एक ऐसी ही संस्था की और स्थापना करना ।

तृतीय आयोजना में १ और रोजगार ब्पत्तों के खोजने का कार्यक्रम है ताकि हर जिले में १ रोजगार ब्पत्त हो सके । वर्तमान कार्यों के बिस्तार हेतु भी कार्यक्रम है । तृतीय आयोजना में प्रशिक्षण सम्बन्धी कार्यक्रमों का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है ।

द्वितीय आयोजना के अधिकतर सुझाव कार्यान्वित हो चुके हैं और रोजगार ब्पत्तों के कार्यों को बिस्तृत कर दिया गया है । सितम्बर १९६१ में ३१९ रोजगार ब्पत्तें ब. १ १४०६२ प्राचीन पञ्चीकृत के जिले में ४ ४४४३ व्यक्तियों को रोजगार मिला । १९, ७ २७९ प्राचीन रोजगार ब्पत्तें के रजिस्टर में छपे थे । उत्तर प्रदेश में २३ रोजगार ब्पत्तें के । रोजगार ब्पत्तों पर लगभग ३७ ९६ लाख रुपया बापिक व्यय होता है । रोजगार सम्बन्धी जागकारी एकत्रित करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय धन संघ के एक बिसेस की बेसिमास में १९२६ में देहली में एक अद्ययामी योजना प्रारम्भ हुई जिसके अनुबन्ध के माध्यम पर यह योजना अन्य राज्यों में भी लागू कर दी गई है । इस कार्यान्वित करने के लिए अनेक पदाधिकारियों को प्रशिक्षण दिया जा चुका है । सरकारी क्षेत्रों में सभी संस्थाओं से इस सम्बन्ध में सूचना प्राप्त की जा रही है । तथा निजी क्षेत्रों से भी २२ रोजगार क्षेत्रों से सूचना १ जनवरी १९६० से एकत्रित की जाने लगी है । अन्तर्राष्ट्रीय धन संघ के अन्तर्गत १९२७ की अन्तिम तिमाही में मई दिल्ली में "रोजगार बाजार सम्बन्धी जागकारी" और व्यवसायिक मार्ग-दर्शक और रोजगार परामर्श पर "एशियाई क्षेत्रीय प्रशिक्षण कोर्स" प्रारम्भ हुआ जिसमें एशिया के अनेक देशों से भाग लिया जिसमें भारतवर्ष भी था । मुबंको को रोजगार सम्बन्धी मन्त्रालय केने की योजना भी शुरू हो गई है और ऐस ७२ केन्द्र खोले जा चुके हैं और तृतीय आयोजना में १०० ऐसे और केन्द्र खोले जायेंगे । १९२७ में ४६ जीवनकृति (Career) पुस्तिकाएं अंग्रेजी में और १३ हिन्दी में छपी गईं और १९२८ में इनकी संख्या अन्त ४ और २६ थी । १९२९ में १२ अंग्रेजी में और २९ हिन्दी में ऐसी पुस्तिकाएं छपी गईं । और

१९६० में ऐसी २० ग्रन्थ पुस्तकें तयार की गईं। अन्तर्राष्ट्रीय भ्रम संघ के एक विशेषज्ञ की देखभाल में १३ वर्षों की व्यवसायिक परिभाषाएं बन चुकी हैं और ग्रन्थ १० वर्षों पर खोज हो रही है। वेदा में मिलने वाले प्रशिक्षण के सम्बन्ध में अनेक पुस्तिकायें छपी जा चुकी हैं। राजगार दफ्तरों में रजिस्टर्ड व्यक्तिमों की व्यवसायिक योग्यता जांचने के लिए एक और योजना भी चालू की गई है जिसे 'व्यवसायिक विशेष बर्तन और समासाप' Occupational Specification and Interview Aids (O S I A) का नाम दिया है। भ्रम शक्ति प्रथमन और राजगार दफ्तरों के लिए एक कार्य समिति भी बना दी गई है और एक केन्द्रीय राजगार समिति की भी स्थापना हुई है जिसमें राज्य सरकारों मासिकों यमिकों और संघ के प्रतिनिधि हैं। राजगार दफ्तरों को इस बात का भी विशेष उत्तरदायित्व सौंप दिया गया है कि वे शारीरिक रूप से असमर्थ व्यक्तियों को काम दिखाने में सहायता करें और उन्हें ऐसा राजगार दिखाने में बड़ा उनकी असमर्थता से बाधा न पहुंचे। बम्बई, देहली और मद्रास में इनके लिए विशेष राजगार दफ्तर स्थापित कर दिये गये हैं। सामुदायिक विकास क्षेत्रों में भी राजगार सूचना तथा सहायता ब्यूरो विशेष-विशेष स्थानों पर स्थापित कर दिये गये हैं। वे ब्यूरो सूचना एकत्रित करके राजगार दफ्तरों और शारीख नौकरी खोजने वालों के मध्य एक कड़ी का कार्य करते हैं। राष्ट्रीय प्रयोजन मार्गों (Projects) में भी राजगार दफ्तर इन बड़े काम हेतु स्थापित कर दिये गये हैं कि कार्य की सम्पत्ति पर अधिकों को प्रथम स्थानों पर राजगार दिखाने सकें तथा इन राजगार दफ्तरों के द्वारा प्रशिक्षित व्यक्ति भी प्राप्त हो सकें। कोम्मने की जगहों में भी १ विशेष राजगार दफ्तर स्थापित कर दिये गये हैं।

इन सब बातों से स्पष्ट है कि अनेक प्रारम्भिक कठिनाइयाँ होने पर भी हमारे देश में राजगार दफ्तरों में कम सफलता प्राप्त नहीं की है। यदि मासिक बोझ और सहयोग देने लगे और अधिक राजगार दफ्तरों के कार्य तथा मार्गों के विषय में और अधिक ज्ञान प्राप्त कर सकें तथा पंचवर्षीय आयोजनाओं के सुझावों को पूर्णतया लागू कर दिया जाए और यदि श्रमिकारी वर्ग अधिक सहानुभूति और ईमानदारी से कार्य करें तो हमारे राजगार दफ्तरों का परिणाम और भी अधिक उत्कृष्ट होने की सम्भावना है। अन्त में हम पंडित महरू के उन शब्दों को बुरहा सकते हैं जो उन्होंने सितम्बर १९४९ में हुए राजगार संगठन के चौथे वार्षिकोत्सव के अध्यक्ष पद से कहे थे "जिम समय तक समाज का वर्तमान ढाँचा अस्तित्व रखता है जब तक इससे स्थान पर एक ऐसा ढाँचा नहीं खड़ा हो जाता जिसमें प्रशिक्षण और राजगार मार्गिकों के लिए स्वाभाविक रूप से सुरक्षित हो जाएँ सब समय तक राजगार की सेवाओं का रहना भ्रम की भांग तथा पूर्ति में तन्तुलन स्थापित करने के लिए आवश्यक है। इसलिए इस संस्था को पूर्ण रूप से समाप्त करना गलत और अनुचित होगा।"

कार्यालय' की स्थापना तथा उसके द्वारा जीवन कृति के लिए पुस्तकों तथा ग्रन्थ साहित्य का प्रकाशन करना । (३) व्यवसाय सम्बन्धी पारिभाषिक शब्दों का समानो-करण करने के लिये और एक व्यापक व्यवसायिक शब्द कोष बनाने के लिये व्यवसाय सम्बन्धी अनुसंधान तथा विरहमण्डल करना । (५) रोजगार दफ्तरों में नौकरी खोजने वालों के लिये व्यवसाय सम्बन्धी परीक्षाओं का प्रबन्ध करना ।

प्रशिक्षण के सम्बन्ध में द्वितीय पंचवर्षीय धायोजना में निम्नलिखित सुझाव—(१) शिक्षियों की वर्तमान प्रशिक्षण योजनाओं में वृद्धि तथा विस्तार करना । (२) शिक्षियों की एक नियमित रूप से शिक्षार्थी प्रशिक्षण योजना का चालू करना । (३) मध्य प्रदेश में कानी बिसासपुर में जो प्रशिक्षकों के प्रशिक्षण के लिये एक केन्द्रीय संस्था है उसकी उन्नति और विस्तार करना तथा एक ऐसी ही संस्था की और स्थापना करना ।

तृतीय धायोजना में १०० और रोजगार दफ्तरों के खोलन का कार्यक्रम है ताकि हर जिले में १ रोजगार दफ्तर हो जाय । वर्तमान कार्यों के विस्तार हेतु भी कार्यक्रम है । तृतीय धायोजना में प्रशिक्षण सम्बन्धी कार्यक्रमों का उत्सेज ऊपर किया जा चुका है ।

द्वितीय धायोजना के अधिकतर सुझाव कार्यान्वित हो चुके हैं और रोजगार दफ्तरों के कार्यों को विस्तृत कर दिया गया है । सितम्बर १९६१ में ३१६ रोजगार दफ्तर थे । ३१४ ३२ प्राचीं पचीकृत व जिनमें से ३४४३ व्यक्तियों को रोजगार मिला । १९, ७५७९ प्राचीं रोजगार दफ्तर के रजिस्टर में धप थे । उत्तर प्रदेश में ५३ रोजगार दफ्तर थे । रोजगार दफ्तरों पर लगभग ३७९६ लाख रुपया वार्षिक व्यय होता है । रोजगार सम्बन्धी जानकारी एकत्रित करने के लिए धन्त रीट्रीय धम संघ के एक विद्यपत्र की देखभाल में १९५६ में देहली में एक धन्तपामी योजना प्रारम्भ हुई जिसके अनुभव के आधार पर यह योजना धन्त राज्यों में भी लागू कर दी गई है । इसे कार्यान्वित करने के लिए धनेक पदाधिकारियों को प्रशिक्षण दिया जा चुका है । सरकारी क्षेत्रों में सभी संस्थाओं से इस सम्बन्ध में सूचना प्राप्त की जा रही है । तथा निजी क्षेत्रों से भी ३२ रोजगार क्षेत्रों से सूचना १ जनवरी १९६१ से एकत्रित की जाने लगी है । धन्तरीट्रीय धम संघ के धन्तर्गत १९३७ की धन्तम तिमाही में गई दिन्धी में 'रोजगार बाजार सम्बन्धी जानकारी' और व्यवसायिक मार्ग-दर्शक और रोजगार परामर्श पर "एधियाई क्षेत्रीय प्रशिक्षण कोर्स" धारम्भ हुआ जिसमें एधिया के धन्त क्षेत्रों ने धाय लिया जिनमें भारतधप भी था । पुस्तकों को रोजगार सम्बन्धी सहाह देने की योजना भी शुरू हो गई है और ऐसे ७२ धन्त खोल जा चुके हैं और तृतीय धायोजना में १०० ऐसे और केन्द्र खोलें जायेंगे । १९३७ में ४६ जीवनकृति (Career) पुस्तिकाएं धंपजी में और १३ दिन्धी में धपपी गईं और १९३८ में इनकी संस्था धमध-४ और २६ की । १९५९ में १२ धंपेकी में और २९ दिन्धी में ऐसी पुस्तकें धपपी गईं । और

१९९ में ऐसी २० अन्य पुस्तकें तयार की गईं। अन्तर्राष्ट्रीय यम संघ के एक विशेषज्ञ की देखभाल में १२ बगों की व्यवसायिक परिभाषाएं बन चुकी हैं और अन्य १० बगों पर खोज हो रही है। देश में मिलने वाले प्रशिक्षण के सम्बन्ध में अनेक पुस्तिकाएँ छपीं जा चुकी हैं। रोजगार दफ्तरों में रजिस्टर्ड व्यक्तियों की व्यवसायिक योग्यता जांचने के लिए एक और योजना भी चालू की गई है जिस 'व्यवसायिक विशेष बर्गों और समासाय' Occupational Specification and Interview Aids (O S I A) का नाम दिया है। यम गति धम्पयन और रोजगार दफ्तरों के लिए एक कार्य समिति भी बना दी गई है और एक केन्द्रीय रोजगार समिति की भी स्थापना हुई है जिसमें राज्य सरकारों या मिकों समिकों और संसद के प्रतिनिधि हैं। रोजगार दफ्तरों को इस बात का भी विशेष उत्तरदायित्व सौंप दिया गया है कि वे सार्वीरिक रूप से असमर्थ व्यक्तियों को काम दिलाने में सहायता करें और उन्हें ऐसा रोजगार दिनाम बड़ा उनकी असमर्थता से बाधा न पहुँचे। बम्बई, बेहली और मद्रास में इसके लिए विशेष रोजगार दफ्तर स्थापित कर दिये गये हैं। साप्ताहिक विकास संघों में भी रोजगार सूचना तथा सहायता स्मूरो विशेष-विद्यय स्थानों पर स्थापित कर दिये गये हैं। ये स्मूरो सूचना एकत्रित करके रोजगार दफ्तरों और राष्ट्रीय प्रायोजक नामों (Projects) में भी रोजगार दफ्तर इस उद्देश्य हेतु स्थापित कर दिये गये हैं कि कार्य की समाप्ति पर मिकों को अन्य स्थानों पर रोजगार दिसा सके तथा इन रोजगार दफ्तरों के द्वारा प्रशिक्षित व्यक्ति भी प्राप्त हो सकें। कोयले की खानों में भी ३ विद्यय रोजगार दफ्तर स्थापित कर दिये गये हैं।

इन सब बातों से स्पष्ट है कि अनेक प्रारम्भिक कठिनाइयाँ होन पर भी हमारे देश में रोजगार दफ्तरों ने कम सफलता प्राप्त नहीं की है। यदि मालिक बोझ और सहाय्य देने लग और अधिक रोजगार दफ्तरों के कार्य तथा सामों के विषय में और अधिक ज्ञान प्राप्त कर सकें तथा पंचवर्षीय धायोजनार्थों के सुझावों को पूर्णतया मान्य कर लें तो हमारे रोजगार दफ्तरों का अधिक महत्त्व होना शुरू होना शक्य है। अतः हम पंडित नेहरू के उन शब्दों को सुहरा सकते हैं जो उन्होंने अक्टूबर १९४९ में हुए रोजगार संगठन के चौथे वारिकोत्सव के धम्पयन पत्र से कहे हैं—

“जिस समय तक समाज का वर्तमान ढाँचा अस्तित्व रखता है जब तक इसके अन्तर्गत एक ऐसा ढाँचा नहीं बड़ा हो पाता जिसमें प्रशिक्षण और रोजगार की आवश्यकता है। अतः हमें एक नया ढाँचा अस्तित्व रखना होगा जो प्रशिक्षण और रोजगार की आवश्यकताओं का पूर्णतया समाधान करेगा।”

कार्यालय' की स्थापना तथा उसके द्वारा जीवन कृति के लिये पुस्तकों तथा ग्रन्थ साहित्य का प्रकाशन करना । (५) व्यवसाय सम्बन्धी पारिभाषिक शब्दों का समायोजन करने के लिये और एक व्यापक व्यवसायिक शब्द कोष बनाने के लिये व्यवसाय सम्बन्धी अनुसंधान तथा विद्वानों को भेजना । (६) रोजगार दफ्तरों में नौकरी लाने वालों के लिये व्यवसाय सम्बन्धी परीक्षाओं का प्रबन्ध करना ।

प्रशिक्षण के सम्बन्ध में द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में निम्नलिखित सुझाव थे—(१) विस्मियों की वर्तमान प्रशिक्षण योजनाओं में वृद्धि तथा विस्तार करना । (२) विस्मियों की एक नियमित रूप से शिक्षार्थी प्रशिक्षण योजना का प्रारम्भ करना । (३) मध्य प्रदेश में कोमी विनासपुर में जो प्रशिक्षण के लिये एक केन्द्रीय संस्था है उसकी उन्नति और विस्तार करना तथा एक ऐसी ही संस्था की और स्थापना करना ।

तृतीय आयोजना में १० और रोजगार दफ्तरों के खोलने का कार्यक्रम है ताकि हर जिले में १ रोजगार दफ्तर हो सके । वर्तमान कार्यों के विस्तार हेतु भी कार्यक्रम है । तृतीय आयोजना में प्रशिक्षण सम्बन्धी कार्यक्रमों का उत्प्रेक्ष्य उन्नत क्रिया जा चुका है ।

द्वितीय आयोजना के अधिकतर सुझाव कार्यान्वित हो चुके हैं और रोजगार दफ्तरों के कार्यों को विस्तृत कर दिया गया है । सितम्बर १९६१ में ३१६ रोजगार दफ्तर थे । ३१४ ३२ प्राचीन पञ्जीकृत थे जिनमें से ३४४४३ व्यक्तियों को रोजगार मिला । १९०७ ५७९ प्राचीन रोजगार दफ्तर के रजिस्टर में से ५० उत्तर प्रदेश में २३ रोजगार दफ्तर थे । रोजगार दफ्तरों पर लगभग ३० ९६ लाख रुपये वार्षिक व्यय होता है । रोजगार सम्बन्धी जानकारी एकत्रित करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मंच से एक विशेषज्ञ की सहायता में १९६६ में देहली में एक अन्तर्राष्ट्रीय योजना प्रारम्भ हुई जिसके अनुभव के आधार पर यह योजना अन्य राज्यों में भी लागू कर दी गई है । इसे कार्यान्वित करने के लिए अनेक नवाचारियों को प्रशिक्षण दिया जा चुका है । सरकारी क्षेत्रों में सभी संस्थाओं में इस सम्बन्ध में सूचना प्राप्त की जा रही है । तथा निजी क्षेत्रों में भी २२ रोजगार क्षेत्रों से सूचना १ जनवरी १९६० से एकत्रित की जाने लगी है । अन्तर्राष्ट्रीय मंच के अन्तर्गत १९५७ की अन्तिम विभागीय बैठक दिल्ली में 'रोजगार बाजार सम्बन्धी जानकारी' और व्यवसायिक मार्ग-दर्शक और रोजगार पत्रिका पर 'एशियाई क्षेत्रीय प्रशिक्षण कोष' प्रारम्भ हुआ जिसमें एशिया के अनेक देशों के भाग लिया जिनमें माछलबर्ग भी था । मुंबई को रोजगार सम्बन्धी सप्ताह के की योजना भी शुरू हो गई है और ऐसे ७२ केंद्र लोभे जा चुके हैं और तृतीय आयोजना में १०० ऐसे और केंद्र लोभे जायेंगे । १९६७ में ४६ जीवनकृति (Career) पुस्तिकाएं अंग्रेजी में और १३ हिन्दी में छपी गईं और १९६८ में इनकी संख्या क्रमशः ४ और २६ थी । १९६९ में १२ अंग्रेजी में और २९ हिन्दी में ऐसी पुस्तकें छपी गईं । और

१९६० में एसी २० धर्म्य पुस्तकें तयार की गईं। अन्तर्राष्ट्रीय धर्म सभ के एक बिधेयज की देखभाल में १३ बगों की धर्म्यसाधिक परिभाषाए बन चुकी हैं और धर्म्य १० बगों पर खोज हा रही है। वेध में मिमने नाम प्रसिधलण के सम्बन्ध में धनेक पुस्तिकायें छपी या चुकी हैं। राज्यार दफ्तरों में रजिस्टर्ड धर्म्यियों की धर्म्यसाधिक योग्यता जांचने क लिए एक और योजना भी बामू की गई है जिसे 'धर्म्यसाधिक बिधेय बर्णन और समासाय' Occupational Specification and Interview Aids (O S I A) का नाम दिया है। धर्म्य धर्म्य प्रध्पयन और राज्यार दफ्तरों के लिए एक धर्म्य समिति भी बना दी गई है और एक केन्द्रीय राज्यार समिति की भी स्थापना हुई है जिसमें राज्य सरकारों मासिकों धर्मिकों और समद के प्रतिनिधि हैं। राज्यार दफ्तरों को इस बात का भी बिधेय उत्तरदायित्व सौंप दिया गया है कि वे धारीरिक रूप से धर्म्यर्ध धर्म्यियों का धर्म्य दिमाने में सहायता करें और उन्हें ऐसा राज्यार दिमाने बहू उनकी धर्म्यधर्म्यता से बाधा न पहुँचे। बम्बई, देहली और मद्रास में इनक लिए बिधेय राज्यार दफ्तर स्थापित कर दिसे धर्म्य हैं। सामुदायिक विकास संघों में भी राज्यार सूचना तथा सहायता धर्म्यो बिधेय-बिधाय स्वार्ना पर स्थापित कर दिसे गये हैं। ये धर्म्य सूचना एकत्रित करक राज्यार दफ्तरों और धार्मिक गीकरी बाजत बालों के धर्म्य एक कडी का धर्म्य करत है। राष्ट्रीय धर्म्यय गधों (Projects) ध भी ९ राज्यार दफ्तर इस उद्धेध हेतु स्थापित कर दिसे गये हैं कि धर्म्य की समाप्ति धर धर्मिकों को धर्म्य स्वार्नों पर राज्यार दिमा सकें तथा इन राज्यार दफ्तरों क द्वारा प्रसिधित धर्म्यिक भी प्राप्त हो सकें। धर्म्य की धार्मों में भी ५ बिधेय राज्यार दफ्तर स्थापित कर दिसे गये हैं।

इस सभ धार्मों से स्पष्ट है कि धनेक धर्म्यिक कठिनाइयाँ होने पर भी इनारे वेध में राज्यार दफ्तरों न धर्म्य सफलता प्राप्त नहीं की है। धरि धर्मिक धोडा धर्म्य सहाय्य देने सधे और धर्मिक राज्यार दफ्तरों के धर्म्य तथा धार्मों न बिधेय में धर्म्य धर्मिक धान प्राप्त कर सकें तथा पंचबर्षीय धर्म्ययोजनाधों के धर्म्यर्धों को पूर्णतया धर्म्य कर दिमा धर और धरि धर्मिकारी धर्म्य धर्मिक सहाय्यधुति धर्म्य धर्म्ययधारी धर्म्य धर्म्य करें ता इनारे राज्यार दफ्तरों का धर्म्यिक धर्म्य भी धर्मिक उध्बधन होने की सम्भावना है। धर्म्य में हक पंथित गहूक के धर्म्य धर्म्यों को बुद्धि सफरते हैं धो उध्मि सिध्मर १९५९ में हुए राज्यार संगठन क धर्म्ये धर्म्यिकीयध के धर्म्ययध पर धर्म्य धर्म्य के धर्म्यिक सधयध हक समाज का धर्म्ययध धर्म्यिक धर्म्यिक रध्धता है धर तक इधक स्वार्न पर एक ऐसा धर्म्यिक नहीं खड़ा हा जाता जिसमें प्रसिधलण और राज्यार धर्म्यिकों के लिए स्वार्मिक रूप सं सुरक्षित हा जाए उध सधयध तक राज्यार की धर्म्यिकों का रध्धना धर्म्य की धर्म्य तथा धर्म्यिक में धर्म्ययध स्वार्नित करन क लिए धर्म्यिक है।" रध्धलण धर्म्य संस्था को पूर्ण रूप से समाप्ति करना धर्म्य और धर्म्यिक होना।"

अनुपस्थिति, श्रमिकावर्त तथा वेतन सहित छुट्टियां

(Absenteeism Labour Turn-over and Holidays with Pay)

किसी भी संगठित उद्योग की सफलता श्रमिकों की कार्यकुशलता और अनुभव पर निर्भर है। अतः किसी उद्योग में श्रमिकों की अनुपस्थिति और श्रमिकावर्त जितना भी कम हो सके उतना ही बह उस उद्योग की सफलता के लिये सामनायक है। परन्तु अधिक समय तक न तो इन दोषों की उचित परिभाषा ही की गई और न स्पष्ट रूप से इनको समझा ही गया। बहुत कम ऐसी औद्योगिक संस्थाएँ थीं जिनमें अनुपस्थिति और श्रमिकावर्त के घाँकड़ों को एकत्रित करने का प्रयत्न किया गया। ये घाँकड़े भी अधिक निरवसरनीय न थे। पिछले कुछ वर्षों से ही इन घाँकड़ों को एकत्रित करने की ओर कुछ ध्यान दिया गया है।

अनुपस्थिति (Absenteeism)

परिभाषा —

अनुपस्थिति शब्द की उचित परिभाषा सबसे पहले भारतीय सरकार के श्रमिक विभाग के एक परिपत्र द्वारा की गई जिसके अनुसार काम पर आने वाले कुल निर्धारित श्रमिकों में से जितने प्रतिशत श्रमिक काम से अनुपस्थित रहते हैं उस अनुपात को ही श्रमिकों की अनुपस्थिति बर कहा जा सकता है। इस प्रकार यह बर ज्ञात करने के लिये हम काम पर आने वाले निर्धारित (Scheduled) श्रमिकों की संख्या तथा वास्तव में उपस्थित श्रमिकों की संख्या मासूम होनी चाहिये। एक श्रमिक जो किसी पारी के एक भी घंटे में उपस्थित हो उसे उपस्थित ही मानना चाहिये। एक श्रमिक तब ही काम करने के लिये निर्धारित समय आया जब मासिक के पाम श्रमिक के लिये कार्य विद्यमान हो और श्रमिक भी उससे अवगत हो तथा जब मासिक को काफी पहले से ही यह ज्ञात न हो कि श्रमिक निर्धारित समय पर उपस्थित न हो सकेगा। निम्नलिखित उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जायगी। एक ऐसा श्रमिक जो नियमित निश्चित छुट्टी पर है उसकी न तो काम पर आने वाला निर्धारित श्रमिक समझना चाहिये और न ही अनुपस्थित। यही बात मिल मासिकों के द्वारा जबरी छुट्टी (Lay-off) पर भी लागू होती है। इसके विपरीत यदि एक श्रमिक नियमित छुट्टी के काल के प्रतिरुद्ध अवकाश की प्रार्थना करता है तो वह उन समय तक काम पर आने वाले निर्धारित श्रमिकों में से अनुपस्थित समझा जायगा जब तक वह लौट न आये या उसकी अनुपस्थिति की धरमि इतनी न हो कि उसका पाम सक्रिय श्रमिकों की सूची में से काटा जा सके। ऐसी दिवि के पश्चात्

वह अधिक न तो काम करने के लिये निर्धारित समझ जायगा और न ही अनुपस्थित। इसी प्रकार स एक ऐसा धमिक जो किना सूचना बिय हुये नौकरी छोड़ देता है उसको निर्धारित कार्य से उस समय तक अनुपस्थित समझना चाहिये जब तक सक्रिय सूची से उसका नाम हटा न दिया जाय। परन्तु जहाँ तक हो सक यह धमिक एक सप्ताह से अधिक नहीं होनी चाहिये। यदि कोई हज्जाम बस रही है वा हड़ठासो धमिकों को न तो कार्य करने क लिये निर्धारित समझना चाहिये और न ही अनुपस्थित क्योंकि हड़ठास द्वारा बच्य समय क भाकड़ अन्य प्रकार स एकत्रित किये जाते है। धनुपस्थिति दर के धाकड़ों की सरुमा मासिक आधार पर होती है।

धनुपस्थिति की व्यापकता (Extent of Absenteeism) —

धनुपस्थिति क सम्बन्ध मे प्राप्त धाकड़ इतने पर्याप्त नहीं है कि उनके आधार पर किसी सामान्य निष्कर्ष पर पहुँचा जा सके। धनुपस्थिति के धाकड़े एकत्रित करने में किसी सैद्धान्तिक प्रणाली को जहो अपनाया गया है। सत्साधनों मे धाकड़े एकत्रित करने की जो प्रणालियां अपनाई हैं वह भी समान नहीं हैं। केवस कोयले की खानों में धनुपस्थिति क धाकड़े कानूनी रूप स एकत्रित किये जाते है। अन्य खानों पर धनुपस्थिति के धाकड़े सत्साधनों द्वारा स्वय ही हुई सूची में से ही लिये जाते हैं। यदि कोई सत्सा सूची नहीं भेजती है तो उस सत्सा के धाकड़े छोड़ बिये जाते हैं। विषयसनीय धाकड़े एकत्रित करने म एक धम्य कठिनाई यह है कि जैसे ही एक धमिक धनुपस्थित होता है जैसे ही एक बढी का धमिक उसके खान पर रब चिबा जाता है और धनुपस्थिति कही पर एकत्रित नहीं की जाती। इस प्रकार से प्राप्त धाकड़ों की सरुमा को पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं किया जा सकता।

कुछ काम में भारतीय सरकार ने एक विषय धर्म पर धनुपस्थिति के मासिक धाकड़े ऐसे कारखानों से लिये य जो इनका हिसाब रखते हों। तब से ऐसे धाकड़ों की सूचना सब संस्थाओं से धमिक धूरो मे प्राप्त होती है जहाँ इन धाकड़ों को एकत्रित किया जाता है। कुछ विषय उद्योगों के धाकड़े 'इन्डियन मबर जर्नल' मे प्रकाशित किये जाते हैं। यड़े-यड़े केन्द्रों के विषय उद्योगों में धनुपस्थिति के धाकड़ों, का हिसाब रखा जाता है। कुछ राज्य सरकारों और खानों के मुख्य निरीक्षण के कार्यालय द्वारा भी यह धाकड़ प्रकाशित किये जाते हैं। जानपुर के कुछ विषय उद्योगों में धनुपस्थिति के धाकड़े उन्नी भारत क मासिक संघ द्वारा भी एकत्रित किये जाते हैं। परन्तु धनुपस्थिति दर निकालते समय इस बात का ध्यान नहीं रखा जाता कि धमिक की धनुपस्थिति धमिकृत (Authorised) है धमका धनाधिकृत (Unauthorized) है अर्थात् धमिक किसी प्रकार की छुट्टी सेत क कारण धनुपस्थित है वा बर्बर किसी छुट्टी क काम पर नहीं गया है। कुछ समय से इस विषय मे कुछ परि वर्तन हुआ है। औद्योगिक धाकड़े धमिनियम (धम नियम) (Industrial Statutes Act, Labour Rules) के अन्तर्गत धनुपस्थिति के व्यापक धाकड़े एकत्रित और प्रकाशित करना सम्भव हो जायगा क्योंकि इस धमिनियम में कारखानों दाम्ने,

बन्दरगाहों तथा बाजारों से श्रमिकों की अनुपस्थिति के प्राक्कड़े एकत्रित करने के लिये एक विशेष धारा है।

सितम्बर १९६१ में सूची कपड़ा मिल उद्योग में अनुपस्थिति की प्रतिष्ठत दर इस प्रकार थी—बम्बई १.६, प्रहमबाबाव ७.३ (घोसठ १९६) घोलापुर १२.२ मद्रास ७.६ मद्रास १२.१ कामम्बटूर १०.६ कानपुर १४.२ (घोसठ १९६०)। अन्य मिल उद्योगों में अनुपस्थिति की प्रतिष्ठत दर कुछ मुख्य स्थातों पर इस प्रकार थी—ऊनी मिल (बारीबाल) ९.१ और (कानपुर) १.१ (घोसठ १९६०)। इलीनियॉरिब (बम्बई) ११.२ और (प. बंगाल) १०.१। चमड़ा (कानपुर) ९.६ (घोसठ १९६०)। मोहा तथा इत्याठ (बिहार) ११.४। फौजी खस्त्र फॅक्टरी (उत्तर प्रदेश) ५.७। सीमेंट (मध्य प्रदेश) १२.६। बियासलाई (बसम) १६.४। ठार बिमान कारखाना (महाराष्ट्र) १२.०। ट्राम कारखाना (कसकला) ६.१।

कोयले की खानों में श्रमिकों की अनुपस्थिति के बारे में श्रम मंत्रालय द्वारा १९४२ की एक जांच द्वारा ज्ञात हुआ कि हर मीसम में प्रवासिता के प्रतिरिक्त खान के श्रमिकों में विशेष रूप से जोदने वाले घोर कोयला खाने वाले श्रमिकों में अनुपस्थिति की काफी चिकावठ थी। जांचों से यह पता चलता है कि खानों के भीतरी अणतल पर कार्य करने वाले श्रमिक घौसठ रूप से प्रति सप्ताह ४-५ दिन घौर खानों के अगरी अणतल पर काम करने वाले श्रमिक ५-५ दिन काम करते थे। खानों क मुख्य निरीक्षक की जांच पर आधारित प्राक्कड़ों से पता चलता है कि जुलाई १९६१ में कोयले की खानों में श्रमिकों की अनुपस्थिति दर इस प्रकार थी—खानों के भीतरी अणतल पर १३.४ खुले मैदान में १४.२ अगरी अणतल पर १.९, कुल १३.९। पिछले वर्षों में कभी कभी यह अनुपस्थिति की दर २५ से २८ तक पहुच जाती थी। यह अनुपस्थिति की दर कम होने का कारण संभवत यह है कि सरकार के १९४७ के सुमह बोर्ड की सिफारिशों के अनुसार बंगाल और बिहार की कोयला खान के श्रमिकों के वार्षिक बोनस को उनकी उपस्थिति से सम्बन्धित कर दिया है। इसके प्रतिरिक्त प्रत्येक दिन की उपस्थिति पर पाब भर जाबन बिना मूल्द के इनाम के रूप में दिया जाने सपा है।

हैदराबाद की कोयला खान जांच समिति (१९४९) के अनुसार हैदराबाद में कोयले की खानों के सभी श्रमिकों की अनुपस्थिति की प्रतिष्ठत दर १९६८ में १२-६ थी तथा कोयला काटने वाले श्रमिकों की ३०-२ थी। खानों के भीतरी अणतल पर काम करने वाले श्रमिकों की साप्ताहिक घौसठ उपस्थिति ६७ दिन थी। बिहार की अग्रक की खानों के सम्बन्ध में १९४८ के औद्योगिक अधिकरण ने श्रमिकों की बढ़ती हुई अनुपस्थिति दर की घौर लकित किया था। ऐसा अनुमान था कि एक श्रमिक घौसठ रूप से एक सप्ताह में ३ या ३.२ दिन काम करता है और वर्षा ऋतु में उपस्थिति १०% तक गिर जाती है। सितम्बर १९३८ में अग्रक की खानों में अनुपस्थिति दर इस प्रकार थी—अग्रप्र प्रदेश १३.६, बिहार १९.८ तथा राजस्थान

११२। कोलार की मोने की खानों में अनुपस्थिति की दर अगस्त १९९१ में ८२ थी।

बागान के आबासित धमिकों के नियंत्रक की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार सितम्बर १९९८ में अंशम आय बागान में अनुपस्थिति की प्रतिशत दर नैमित्तिक (Casual) धमिकों में २६४ और विवासित (Settled) धमिकों में १७८ थी। अंशम के बागान में अनुपस्थिति की प्रतिशत दर अगस्त १९९१ में २३६ थी। १९४७ में धमिक ब्यूरो ने भारतीय आय कौंसी और एकर के उद्योगों के धमिकों के पारिवारिक बजट की जाँच पड़ताल की और उनकी अनुपस्थिति का भी अध्ययन किया। इन जाँच पड़ताओं से यह ज्ञात हुआ कि अंशम में अनुपस्थिति की प्रतिशत दर पुरुषों में २२ तथा महिलाओं में ३० थी। अंशम में पुरुषों में अनुपस्थिति की प्रतिशत दर ३६ तथा महिलाओं में ३४ तक पहुँच गई थी। बखिरी भारतीय आय बागान में पुरुषों व महिलाओं दोनों की अनुपस्थिति की प्रतिशत दर लगभग २२ थी जब कि कृषा के बागान में यह उससे अधिक थी। मद्रास और कुर्म में पुरुषों में अनुपस्थिति की प्रतिशत दर ३० तथा महिलाओं में ३३ थी और कोचीन में पुरुषों में २१ तथा महिलाओं में २३ थी। एकर के बागान में भी अनुपस्थिति की दर काष्ठ जमीनी में पुरुषों में २७ तथा महिलाओं में ३० पाई गई थी। बन्दरगाहों में सितम्बर १९९८ में अनुपस्थिति दर १२२ थी।

केंद्रीय अंशम अंशमय द्वारा १९९६ में किये गये अध्ययन के अनुसार अनुपस्थिति दर इस प्रकार थी—मूठी कपड़ा उद्योग में ७ से १८ तक जनी कपड़ा उद्योग में ७१ इन्जीनियरिंग में १२१ अमड़ा उद्योग में ६४ मोने की खानों में ६७ बागान में २०५ तथा कोयले की खानों में १३२। अनुपस्थिति का प्रभाव—

उपरोक्त आँकड़ों से यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि हमारे देश के संपत्ति उद्योगों में धमिकों की अनुपस्थिति अत्यन्त व्यापक है। इस अनुपस्थिति से बोझिल हानि होती है। प्रथम तो इससे धमिकों को ही स्पष्ट हानि होती है। अनुपस्थिति में अनियमितता उनकी आय को कम कर देती है क्योंकि "काम नहीं तो बैठन ही नहीं" तो साधारण नियम है। धमिकों को हानि इससे भी अधिक होती है क्योंकि अनुपस्थिति से अनुशासन और कार्यकुशलता दोनों को ही बाध पहुँचती है और उत्पादन कम हो जाता है। इसके अतिरिक्त अनुपस्थिति से एक अन्य दोष यह उत्पन्न हो जाता है कि धमिकों को या तो सदब बुद्ध अतिरिक्त धमिकों को रखना पड़ता है जिसमें आर्थिक आवश्यकता के समय उनको काम पर लगाया जा सके या फिर अनुपस्थिति के समय उनको ऐसे धमिकों को भर्ती करना पड़ता है जो उनको उत्पादन ही प्राप्त हो जाते हैं यद्यपि ऐसे धमिक साधारणतया कुशल नहीं होते। कुछ और अधिक धमिक रखने की इस प्रथा से अनेक दोष तथा बटिन समस्तार्थ उत्पादन

हो जाती है। विशेष रूप से मालिक इन प्रतिरिक्त या बचसी धमिकों को काम दिखाने के लिए बहुधा काम पर सये हुए धमिकों को बचरी छुट्टी देने के लिए बाध्य करते हैं जिससे धमिकों में असन्तोष उत्पन्न हो जाता है और वे यह समझते हैं कि यह प्रतिरिक्त धमिक मुामिकों द्वारा केवल इस कारण रते जाते हैं कि हड़ताल घाति के समय में वे इन प्रतिरिक्त धमिकों के द्वारा काम जारी रख कर अपनी सुरक्षा का प्रबन्ध ररें। धमिकों को ऐसे छुट्टी दिखाने की प्रथा नागपुर की कपड़ा मिर्चों में काफी मात्रा में पाई जाती है। इसके विपरीत मालिक यह कहते हैं कि प्रतिरिक्त धमिक रखने के प्रत्तावा उनके पास कोई और चारा नहीं है क्योंकि धमिकों का अनुपस्थित होना उनके लिए एक गम्भीर समस्या बन जाती है। विशेष रूप से जबकि उद्योग के कुछ विभागों में धमिकों की प्रतिबिल की आवश्यकता का पहले से अनुमान लगा देना कठिन होता है। अत अनुपस्थिति मालिकों और धमिकों दोनों के लिए हानिकारक है।

अनुपस्थिति के कारण—

धमिक अनेक कारणों से अनुपस्थित हो जाते हैं जिनमें से कुछ ही कारण यथार्थ कहे जा सकते हैं। अधिकतर स्थानों में अनुपस्थिति का कारण बहुधा बीमारी ही होती है। धमिक अपनी शारीरिक दुर्बलता तथा मन्वी बसितमों में रहने के कारण ह्वा शेषक मपरिया घाति अनेक बीमारियों के शिकार बन जाते हैं जिनके कारण उनको अपने काम पर से अनुपस्थित होना पड़ता है। इससे प्रतिरिक्त रात के कार्य में धमिक अनुविधाएं होने के कारण दिन की पारियों की अपेक्षा राति की पारियों में अनुपस्थिति की प्रतिघट दर अधिक होती है। परन्तु अनेक स्थानों पर, जैसे बम्बई की सूती कपड़ा मिर्चों में पारी में बचसी की प्रथा अपना भी यई है जिससे राति की पारी में अनुपस्थितियों की दर कम हो गई है। धमिकों की अनुपस्थिति का सबसे महत्वपूर्ण कारण उनकी समय समय पर बेहाल जाते रहने की प्रवृत्ति है जिससे बारे में हम धमिकों में प्रवासिता का वर्णन करते समय बता चुके हैं। फलत काटने के समय अनुपस्थिति बढ़ जाती है। अनुपस्थिति के अन्य कारण शौचोिक दुर्वटनाएं, सामाजिक और धार्मिक उत्सव बुधा खेतना तथा शराब पीना निवास तथा कार्य की बुी र्थायें मकानों का प्रभाव कुछ कार्यों का अंतरलाक होना इत्यादि इत्यादि हैं। महिला धमिकों में पुरुषों की अपेक्षा अनुपस्थिति दर अधिक पाई जाती है क्योंकि उन्हें घरेलू नाय करने पड़ते हैं और गर्भ और प्रसूति की वया में वे अनुपस्थित हो जाती हैं। ३१ वर्ष से कम आयु के और ४० वर्ष से अधिक आयु के व्यक्तियों में तथा एस व्यक्तियों में जो परिवार नहीं रखते अनुपस्थिति दर अधिक पाई जाती है। इसके प्रतिरिक्त बेतन मिसने के दौरान बाब ही अनुपस्थिति तुमकात्मक रूप से अधिक हो जाती है क्योंकि धमिक बेतन पाठ ही था तो बहुधा मनोरंजन में समय व्यतीत करना चाहता है या वह अपने गाँव को अपने परिवार में मिलने तथा अपनी आवश्यकताएं पूरी करने के लिए जाता जाता है। कोयने की गानों में अधिक

घनूपस्थिति होने का कारण यह है कि वहाँ काम करने की व्यवस्था बनाकर एक ही घोर धमिक स्वभाव वाले कामों के भीतर काम नहीं करना चाहते। उनका स्वास्थ्य भी उनको इस घोर धमिक प्रेरित नहीं करता।

सितम्बर १९६१ में कुछ उद्योगों में विभिन्न कारणों से घनूपस्थिति की दर निम्नलिखित थी—

उद्योग	बीमारी या दुर्घटना	सामाजिक या धमिक कारण	धम्य कारण		कुल कारण
			छुटी	बिना छुटी	
सोहा तथा इस्पात (बिहार)	३२	११	३७	३१	११६
बस्त्र-वास्य उद्योग (उत्तर प्रदेश)	२६	०६	१६	०६	२७
सीमेन्ट (मध्य प्रदेश)	३१	३२	२४	१६	१२६
रियासतमार्ई (महाराष्ट्र)	१६	०७	१६	३८	७८
कपड़ा मिल—					
(मद्रास)	६५	०३	०६	१२	७६
(मद्रास)	४०	२६	३८	१४	१२१
अन्य कपड़ा मिल (बारीवास)	२२	—	२४	१२	६१

घनूपस्थिति को कम करने के उपाय—

वहाँ तक घनूपस्थिति को कम करने के लिये मुम्बई का प्रयत्न है बम्बई की कपड़ा मिल धमिक जांच समिति के मुम्बईय सदस्य से धमिक उपयुक्त हैं और उनसे धम घनूपस्थिति समिति भी सहमत है। इस समिति के अनुसार घनूपस्थिति को कम करने का प्रभावपूर्ण उपाय यही है कि धमिकों के काम करने का बाताबरतन तथा दशाएं सुधकर व स्वास्थ्यप्रद बनाई जायें। उनको पर्याप्त मजदूरी मिले बीमारी तथा दुर्घटना से बचाव के लिये सामाजिक सुरक्षा का प्रबन्ध हो और विधाम तथा स्वास्थ्य के लिये छुटियों की व्यवस्था हो। कार्य की दशाएं एवं धमिक धमिक (fatigue) धमिकों में स्वाभाविक रूप से बिटोह की प्रवृत्ति बना देती है। यद्यपि हम यह चाहते हैं कि धमिक स्वामी रूप से एक स्थान पर काम करता रहे तो उसके धमिक करने की तथा रहने की व्यवस्थाओं में सुधार करना और उसको समुचित व प्रथम रचना ही सबसे उचित नीति होगी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि घनूपस्थिति की समस्या का समाधान करने का सबसे प्रथम व प्रभावशाली उपाय उनको बेतन सहित या बेतनसहित छुटिया देना तथा उन्हें समय समय पर अपनी निजी

सावधान्यपूर्वकताओं को पूर्ण करने के लिए बचकास देना है। इस प्रकार से श्रमिकों की अनुपस्थिति निवृत्त हो जायेगी और उनके निरुद्ध अनुशासनीय कार्यवाही करने की आवश्यकता न पड़ेगी। औद्योगिक नगरों में श्रमिकों से रहने के लिए अल्पे मकानों का प्रबन्ध भी उपस्थिति की दृष्टि में काफी सहायक सिद्ध हो सकता है। श्रमिकों को कार्य श्रमिक करने के लिये प्रोत्साहन देने हेतु बोनस देने की योजना से तथा बोनस को उत्पादन से सम्बन्धित करने से भी अनुपस्थिति कम हो जायेगी।

श्रमिकावर्ष (Labour Turn Over)

परिभाषा—

श्रमिकावर्ष तथा अनुपस्थिति में अन्तर है। श्रमिकावर्ष तो किसी उद्योग संस्था में कर्मचारियों के हुए परिवर्तन को कहा जाता है और अनुपस्थिति उस संस्था को कहा जाता है जब श्रमिक अपना नियमित काम करने के लिए उपस्थित नहीं होता। इस प्रकार श्रमिकावर्ष कर्मचारियों के परिवर्तन की बहुर है जो किसी उद्योग संस्था में एक विशेष समय में पाई जाती है। यद्यपि एक समय विशेष में जिस सीमा तक पुनः कर्मचारी किसी संस्था को छोड़ देते हैं और नए कर्मचारी या जाते हैं उनको श्रमिकावर्ष कहते हैं।

श्रमिकावर्ष का प्रभाव—

श्रमिकावर्ष रोडबहार की अस्थिरता का कारण भी है और उसका परिहारा भी। कुछ सीमा तक तो श्रमिकावर्ष अनिवार्य सा हो जाता है जैसे श्रमिकों की मौम न रहने पर श्रमिक कार्य से हटा दिये जाते हैं। कुछ श्रमिकावर्ष स्वाभाविक भी होता है जैसे कुछ श्रमिकों के प्रकाश प्रहस नर लेने पर तथा नए श्रमिकों की नियुक्ति होने पर। ऐसा श्रमिकावर्ष कुछ सीमा तक उचित कहा जा सकता है। परन्तु हम प्रकार के श्रमिकावर्ष की प्रतिफल पर बहुत पड़ी है। अधिकतर श्रमिकावर्ष स्थापन-नव देने तथा बरखास्तियों के कारण होता है। श्रमिकावर्ष की उंची दर श्रमिकों की कार्यकुशलता और उत्पादन के परिमाण तथा गुणों की दृष्टि से हानिप्रद है। श्रमिकावर्ष के कारण श्रमिक अनेक ऐसे क्षुभों से संबंधित रह जाते हैं, जो निरन्तर एक स्वान पर कार्य करने से उन्हें मित सकते हैं, जैसे क्रमबद्धि वेतन बावस प्रॉब्लैट फंड व सुट्टी इत्यादि। इनके प्रतिरिक्त अर्थात् प्रत्यासी के होपपूर्ण होने के कारण उनको बहुधा पुनः नौकरी पाने के लिए कुछ मूल्य भी चुकाना पड़ता है। श्रमिकों के संघटन पर भी श्रमिकावर्ष का बुरा प्रभाव पड़ता है। यद्यपि जब श्रमिक एक उद्योग से दूसरे उद्योग में या एक कारणाने से दूसरे कारणाने में चले जाते हैं तो उनमें एका कठिन हो जाती है। श्रमिकों को बार बार नाम पर मवाने से नावसिप में कुछ व्यय भी बढ़ जाता है और जब श्रमिकों को किसी कार्यविशेष के लिए प्रतिष्ठा देना होता है तो श्रमिकावर्ष के कारण ऐसे प्रतिष्ठा का व्यव भी अधिक हो जाता है। श्रमिकावर्ष के कारण देश के मानवीय तथा प्राकृतिक साधनों का पूर्णतया उपयोग नहीं हो जाता। यद्यपि श्रमिकावर्ष का बहुरोच भारत जैसे देश

में जहाँ बेकारी तथा अपूर्ण रोजगार वाले श्रमिकों की संख्या अत्यधिक है कोई विशेष महत्त्व नहीं रखता ।

भूमिकावर्त को मापने में कठिनाइयाँ—

धनुपस्थिति के घाँकड़ों की माँति ही धूमिकावर्त के घाँकड़े भी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त नहीं हैं । धूमिकावर्त का ठीक ठीक ज्ञानता धीर मापता कठिन भी है । यदि इस बात को मान भी लिया जाए कि ज़िन्नी संस्था में नौकरियों की संख्या एकसी ही रहेगी तब धूमिकावर्त को मापने में अधिक कठिनाइयाँ न होने क्योंकि तब या तो कुल विमुक्ति दर (Separation Rate) (पर्याप्त कितने कर्मचारी एक निश्चित समय में नौकरी छोड़ जाते हैं) को मानकर काम सकते हैं, या कुल नियुक्ति दर (Accession Rate) (पर्याप्त कितने कर्मचारियों की एक निश्चित समय में नियुक्ति होती है) को मान सकते हैं क्योंकि जिनके धूमिक एक संस्था को एक समय में छोड़ते हैं उन्हे ही धूमिक माधारणतः उन संस्था में नौकरी पर घा भी जाने चाहिये । कारणों का आधार पर विमुक्ति दर को तीन हिसाबों में बाँटा जा सकता है जिनको हम त्याग दर, बरखास्तगी दर, धीर जबरी छुट्टी दर कह सकते हैं । परन्तु जब व्यवसाय में मन्दी धीर तेजी होती है तब नौकरियों की संख्या भी बदलती रहती है धीर फिर यह मानस्यक नहीं है कि विमुक्ति दर धीर नियुक्ति दर एक ही समान हो । ऐसी अवस्था में धूमिकावर्त की माप कठिन हो जाती है । दूसरी कठिनाई यह है कि जब धूमिक कुछ दिनों के लिए छुट्टी लेकर धनुपस्थित हो जाते हैं तब उन्कास ही बदली के धूमिकों से उनके स्थानों की पूर्ति कर दी जाती है । स्थायी धूमिक न त्यागपत्र देते हैं धीर न बरखास्त किये जाते हैं अपितु वे जबरी छुट्टी पर होते हैं । इस प्रकार धूमिकावर्त की दर तो काफी ऊँची मासुम होती है परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं होता । तीसरी कठिनाई यह है कि धूमिकावर्त तथा धनुपस्थिति के पारस्परिक सम्बन्ध को ठीक प्रकार से समझ नहीं जाता । यदि एक धूमिक दो या तीन माह छुट्टी पर रहकर वापिस मा जाए तो इस अवधि में उसकी स्थानपूर्ति हो चुकी होती है । अतः धूमिकावर्त की माप कठिन हो जाती है । एक धीर बात ध्यान में रखने की यह है कि धगर एक धूमिक उसी उद्योग-वर्ग में एक कारखाना छोड़कर दूसरे कारखाने में नौकरी करने जाता है तो दोनों कारखानों में धूमिकावर्त की दर बढ़ जाती है । परन्तु इससे धूमिक की कार्य-कुशलता पर इतना बुरा प्रभाव नहीं पड़ता ।

इन कठिनाइयों का कारण धूमिकावर्त की धनेक उद्योग-वर्गों में ऊँची दर होने पर भी उसके ठीक ठीक घाँकड़ें प्राप्त नहीं हो पाते । फिर भी धनेक समितियों तथा धनुसम्मानकर्ताओं ने जो भी घाँकड़े मिला सके हैं एकत्रित किए हैं धीर उन्के आधार पर हम विभिन्न उद्योग-वर्गों में धूमिकावर्त की सीमा का अनुमान लगा सकते हैं ।

श्रमिकावर्त की व्यापकता—(Extent of Labour Turnover)

राज्य श्रम आयोग के अनुसार अधिकतर कारखानों में नए कर्मचारियों की नती प्रत्येक माह कम से कम २% तक होती है। श्रम अनुसन्धान समिति के अनुसार श्रमिकावर्त की मासिक प्रतिशत दर विभिन्न उद्योगों में इस प्रकार की—सूती कपड़ा • ६, धर्म कपड़ा • ४ सीमेंट २ • काच २ १ चाय ३ १ तथा छोटे की शर्म १ ६ । डा० मुकुर्जी के अनुसार बंधास की बूट की मिस। में श्रमिकावर्त की मासिक प्रतिशत दर २ २६ है । बम्बई की सूती कपड़ा मिसों में १९३२ में श्रमिकों की औसत नियुक्ति दर प्रति सैकड़ा १ ६० थी तथा औसत विमुक्ति दर १ २३ थी। व्यापक दृष्टि से देखा जाय तो विभिन्न आंकड़ों द्वारा यह सात होता है कि श्रमिकावर्त की दर बम्बई की सूती कपड़ा मिसों में मद्रास बन्धकला और नागपुर की मिसों की अपेक्षा अधिक है। इसका कारण यह है कि बम्बई में मिसों अधिक है और श्रमिक एक मिस को छोड़कर दूसरी मिस में नौकरी करते रहते हैं। इन्जीनियरिंग उद्योग में श्रमिकावर्त की प्रतिशत दर का अनुमान बम्बई में ३ १ तथा मद्रास बन्धकला में १ ६ लगाया गया है। काच के उद्योग में भी श्रमिकावर्त प्रत्यधिक है क्योंकि बड़ा श्रमिक काफ़ी गतिशील है। इसका कारण वहाँ प्रसिद्ध श्रमिकों की कमी है और मासिक प्रशिक्षण श्रमिकों को किसी भी मूल्य पर भर्ती करने के लिये तैयार रहते हैं। १९३४ में काच के कारखानों में नौकरी छोड़ने वालों की दर सत्रस दस के लिये ३ १४ घाटी की तथा उत्तर प्रदेस में यह दर ५ ६४ थी। धातु के अतिरिक्त उद्योग में १९३३ में श्रमिकावर्त की दर का अनुमान ६ ६% तथा चाय की मिसों में १७% लगाया गया था। श्रमिकों की भर्ती की अपनी विधेय प्रणाली होने के कारण बायान के सम्बन्ध में श्रमिकावर्त के पर्याप्त आंकड़े प्राप्त नहीं हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि यद्यपि श्रमिकावर्त का कोई नियमित आंकड़े एकत्रित नहीं किए जाते हैं और न प्रकाशित होते हैं फिर भी हममें कोई संशय नहीं कि भारतीय उद्योग-बन्धों में श्रमिकावर्त व्यापक है। परन्तु यह भी मानना पड़ेगा कि श्रमिकावर्त की दर अनुपस्थिति दर से कम है और धारतवर्ष में श्रमिकावर्त अन्य औद्योगिक देशों की अपेक्षा कम है। इसका मुख्य कारण नगरीय श्रमिकों के रोजगारी और गाँवों में अपूर्ण रोजगार का होना है जिसके कारण कोई भी व्यक्ति अपना रोजगार, जहाँ तक सम्भव हो छोड़ना नहीं चाहता।

श्रमिकावर्त के कारण—

श्रमिकावर्त के मुख्य कारण त्यागपत्र देना तथा बरखास्तपनी है। त्यागपत्र देने के अनेक कारण हैं, जैसे कार्य करने के बाधावरण तथा अवस्थानों के प्रति असन्तोष अथवा अन्य मजदूरी बुरा स्वास्थ्य बीमारी वृद्धावस्था पारिवारिक समस्याएँ तथा इति सम्बन्धी कारणों के लिये पात्र को प्रवास। अनेक उद्योगों जैसे लाल बायान सूती कपड़ा बूट तथा छोटे उद्योग-बन्धों जैसे कपड़ा चायन बूटमा मजक आदि, के श्रमिकों का गाँव से सम्बन्ध घब भी काफी महत्वपूर्ण है। श्रमिकों

को पाब पाने के लिये सम्झी छुट्टी प्राप्त नहीं होती इसलिये फसल काटने व बोलने के समय वे व्यावपन्न बेकर बने जाते हैं। इसके विपरीत बरखास्तगी अधिकावर्त के कारणों की दृष्टि से इतनी नहत्त्वपूर्ण नहीं है। बरखास्तगी के कई कारण होते हैं। बरखास्तगी अधिकतर अधिकों के प्रति अनुशासनीय कार्यबाही के कारण होती है जबकि अधिक ठीक प्रकार से काम नहीं करते या आज्ञा-उत्संभन तथा बुझबुझा करते हैं अथवा हड़तालों में भाग लेते हैं। बरखास्तगी का एक कारण यह भी है कि ऐसे अधिक जो अधिक सबों में शक्ति दिखाते हैं मासिकों द्वारा किसी न किसी बहाने से सत्ताये व निकास दिया जाते हैं। अस्थायी अधिकों में अधिकावर्त इसलिये अधिक होती है कि कार्य समाप्त पर अधिकों को निकास दिया जाता है और जब कार्य फिर आरम्भ होता है तो नये अधिकों को भर्ती कर लिया जाता है। बरखी अधिकों को रखने की प्रणामी के कारण भी अधिकावर्त में वृद्धि हो जाती है क्योंकि अनेक बार बरखी अधिकों को काम दिमाने के लिये पुराने अधिकों को छुट्टी देने के लिए बाध्य किया जाता है। सड़ाई के दिनों में अधिकावर्त इसलिये अधिक हो गया या कि बेतन वृद्धि के माध्यम से अथवा अन्य उद्योगों में प्राप्त अतिरिक्त सुविधाओं के कारण अधिकों ने एक कारखाने से दूसरे कारखाने में या एक उद्योग से दूसरे उद्योग में जाना आरम्भ कर दिया था। अधिकों को पाने के लिये मासिकों में भी पारस्परिक प्रतिस्पर्धा का भाई भी और अनेक बार एक कारखाने के अधिकों को दूसरे कारखाने के मासिक प्रसोमन देकर बुझा लेते थे।

अधिकावर्त को कम करने के उपाय—

संसा उपर बताया जा चुका है अधिकावर्त अवाञ्छनीय है क्योंकि इससे कार्य कुशलता कम होती है और उत्पादन कम हो जाता है। अतः कुछ ऐसे उपाय अपनाये जावश्यक हैं जिनसे अधिकावर्त कम हो। इसके लिये एक निश्चित नीति तथा कार्य प्रणामी का अनुसरण आवश्यक है। बुर्माव्यवस्था अधिकांश मासिक अधीक तक अधिकों में विशेष रूप से अतिपुण अधिकों में अधिकावर्त के कम होने के मानों को अभी भाँति समझते नहीं हैं। साधारणतया सान्त्विकाम में अतिपुण अधिक काफ़ी संख्या में प्राप्त हो जाते हैं। इस कारण मासिक कम बेतन पर अधिक पाने के लिये एक अधिक को निकास दूसरे को भर्ती कर लेते हैं और यदि उन्हें अपनी मसकूरी के बिस में कमी करने का अवसर मिलता है तो अधिकावर्त को अधिक अक्षय समझते हैं। वह इस बात का अनुभव नहीं करते कि नए अधिकों को मसीनों और काम के नये तरीकों से सम्मस्त होने में कुछ समय लगता है और निरन्तर कार्य करने से अतिपुण अधिक भी कुछ कुशलता प्राप्त कर लेते हैं जिससे सब को लाभ होता है। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि अधिकावर्त की समस्या भर्ती की समस्या से सम्बन्धित है क्योंकि अधिकतर उद्योगों में भर्ती प्रणामी में काफ़ी अप्रत्याचार तथा रिश्वत प्रचलित है और अक्षय सदा इस बात का प्रयत्न करते हैं कि पुष्टने कर्मचारी निकास विद् जायें और नये भर्ती हों जिनमें उन्हें अपनी जब तब करने का अवसर मिले। इसलिये भर्ती

प्रशासकी में सुधार करने से अधिकारकर्त कम किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त ऐस उपाय भी अपनाये जाहिये जिसे अधिकारों की धार्मिक स्थिति में उन्नति हो उनकी नौकरी सुरक्षित रहे तथा नगरों में ऐसी सुविधाएँ प्राप्त होगी जाहिये कि अधिक बार बार अपने गाँव न जायें। स्थायीकरण योजना भी जो बम्बई जादि अनेक स्थानों पर लागू हो चुकी है अधिकारकर्त को कम कर सकती है। जैसे कि बम्बई की सूची कयदा अधिक पाँच समिति ने भी संकेत किया जा अल्पधिक अधिकारकर्त को कम करने का मुख्य उपाय भर्ती की पद्धतियों में उन्नति करना ही है। और इसके लिए कुछ विदेश प्रभावपूर्ण व अन्तिमारी उपाय होने जाहिये जैसे रोजगार दफ्तरों की स्थापना मध्यस्थों के अधिकारी पर नियंत्रण तथा कामिक (Personnel) विभाग का उचित संघटन। एक स्थायी अधिकार वर्ग की स्थापना के लिए और भी कई बातों की आवश्यकता है जैसे कार्य की दशाओं में उन्नति मम कल्याणकारी कार्य सामाजिक बीमा योजना नवतन छुट्टियाँ तथा अधिक मजदूरी आदि। इसके अतिरिक्त मम वर्गों को प्रोत्साहन देने तथा उनकी उन्नति करने से औद्योगिक नगरों में स्थायी अधिकार वर्ग की स्थापना हो सकती है।

छुट्टियों और वेतन सहित अवकाश

छुट्टियों की आवश्यकता तथा महत्व —

अधिकारों तथा मामलों के पारस्परिक सम्बन्धों को अच्छा बनाने तथा औद्योगिक कार्यकुशलता को स्थिर रखने तथा उनकी वृद्धि के लिए छुट्टियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। भारतीय उद्योग-धर्मों में अनुपस्थिति तथा अधिकारकर्त की प्रतिष्ठत दर अधिक होने का एक कारण यह भी है कि अधिकारों को पर्याप्त छुट्टियाँ तथा अवकाश मिलने की सुविधा नहीं है। बिहार अधिकार पाँच समिति ने टीका ही कहा है कि परिचामी वर्गों की प्रेरणा भारत में छुट्टियों तथा वेतन सहित अवकाश की आवश्यकता अधिक है क्योंकि यहाँ जनबाहु गर्म है अधिकारों का भोजन घराब तथा अपमर्णित है शारीरिक दृष्टि से वे दुर्बल हैं और उनके रहने का बातावरण दूषित व घनाकर्षक है। अधिकारों अधिक गाँवों से आते हैं और वहाँ से अपना सम्बन्ध बनाए रखते हैं। पता जा भी छुट्टियाँ उन्हें मिलती हैं वे उन्हें अपने गाँव में ही बिचाने का प्रयत्न करते हैं। इससे वे बेवस उनके स्वास्थ्य को ही नष्ट होता है अतः, चाहे एक वर्ग में भोजे ही बिलों के लिये जायें इससे उनका हृदय में प्रसन्नता का संचार होता है। रोजगार मम आयोग ने यह सिफारिश की थी कि मामलों को छुट्टियों के महत्व तथा आवश्यकता को स्वीकार करना चाहिए और अधिकारों को एक निश्चित काम की छुट्टी के लिये प्रोत्साहित करना चाहिए और उन्हें यह प्रोत्साहन देना चाहिए कि वापिस जाने पर वे अपने पुराने कार्य का पूरा प्राप्त कर सकेंगे। यदि छुट्टियाँ बिना वेतन या भत्ते के भी दी जायेंगी तब भी वर्तमान पद्धति में एक बहुत बड़ा सुधार होगा। जालपुर मम पाँच समिति तथा बम्बई की नगर मम अधिकार पाँच समिति ने भी वेतन सहित छुट्टियों के महत्व पर जोर दिया है। डा० रामानुजम मुञ्जरी ने भी

श्रीयोगिक धर्मिकों के लिए छुट्टियों के महत्त्व और आवश्यकता की ओर संकेत करते हुए इसकी विवरणपूर्ण व्यवस्था पर जोर दिया है।

इस प्रकार श्रीयोगिक धर्मिकों की प्रवासिता को नियमित बनाने के लिए, वर्तमान भर्ती की पद्धति के कुछ दोषों को दूर करने के लिए, अनुपस्थिति तथा धर्मिकार्थ को कम करने के लिए तथा श्रीयोगिक धर्मिका की कार्यक्षमता को बढ़ाने और धर्मिकों से उनके सम्बन्ध प्रच्छेद बनाने के लिए छुट्टियों तथा अवकाश का महत्त्व वास्तव में बहुत अधिक है। इसके अतिरिक्त यह तो मानना ही पड़ेगा कि धर्मिक भी मनुष्य होते हैं केवल उत्पादन के साधन मात्र नहीं। किसी भी मनुष्य के लिए, बिना छुट्टी या बिना काम के बर्षों तक निरन्तर काम में लगे रहना कठिन है। मनुष्य के जीवन में अनेक ऐसे अवसर आते हैं जब बीमारी, पारिवारिक कार्यों तथा सामाजिक उत्सवों आदि के कारण वह अपने काम पर ध्यान में अवसर्य होता है। ऐसे अवसरों पर उसे छुट्टी अवकाश मिलनी चाहिए। अतः बेतन सहित अवकाश देने का प्रासंगिक कारण पक्का है और धर्मिक श्रीयोगिक देशों में या ठीक कानून द्वारा या यमबीतियों के धर्मिकों के पारस्परिक समझौते द्वारा ऐसी छुट्टियों की सुविधा मिल रही है।

भारतीय उद्योगों में छुट्टियाँ और अवकाश —

भारत में अद्यत्ति अनेक उद्योगों में छुट्टियाँ और अवकाश प्रदान किया जाता है परन्तु इन छुट्टियों का महत्त्व अभी पूर्ण रूप में समझा नहीं गया है। छुट्टियों में अवकाश देने की रीतियाँ भी विभिन्न उद्योगों में भिन्न-भिन्न हैं। अतः इनके बारे में कोई सामान्य निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है। बेतन सहित छुट्टियाँ अल्प स्थायी धर्मिकों तथा कमर्से और निरीक्षक कर्मचारियों को ही दी जाती हैं। साधारण तथा दैनिक बेतन पाने वाले या कार्य के अनुसार बेतन पाने वाले तथा अस्थायी धर्मिकों को बेतन सहित छुट्टियाँ नहीं मिलती। अधिकतर कारखानों में साधारणतः रविवार की छुट्टी होती है और वर्षों पर भी छुट्टी प्रदान की जाती है। कुछ संघर्ष आकस्मिक तथा विशेष छुट्टियाँ भी प्रदान करती हैं। परन्तु इस सम्बन्ध में सम्यक् ज्ञान प्रबन्ध नहीं है। फिर भी दक्षिणी भारत की जिलों बर्से में १ से १५ दिन तक की बेतन सहित छुट्टी देने की सहूलयता विद्यमान है। मायपुर की एम्प्लॉय निग में जो धर्मिक २० वर्ष तक नोकरी कर चुके हैं १२ दिन की बेतन सहित छुट्टियों के अधिकारी हैं। १९४३ से दूत के उद्योग में प्रत्येक धर्मिक को ७ दिन की बेतन सहित छुट्टी मिलती है। बंगाल के अजिंठा रासायनिक उद्योगों में रविवार के अतिरिक्त ११ से २४ दिन तक की अवकाश छुट्टी दी जाती है। बम्बई की मुंठी कपड़ा मिलों की धर्मिक श्रमिकों के धर्मिकों को सबसेतन छुट्टियाँ प्रदान करती हैं। इंडोनिशिया उद्योग में भी धर्मिकों के धर्मिकों को अवकाश छुट्टियाँ मिलती हैं। मद्रास में स्थायी धर्मिकों को २१ दिन की विशेष छुट्टियाँ का अधिकार है। ऐसे कर्मचारियों का भी आकस्मिक छुट्टियाँ प्रदान की जाती हैं। टाटा की लोहे और इस्पात की उद्योगों में

यम समस्याएं एव समाज कल्याण

मासिक वेतन पाने वाले धमिकों को एक बर्ष की नौकरी पर एक माह की सवेतन छुटियाँ मिलती हैं और ऐसे धमिकों को जिनकी मजदूरी बैनिक कार्य के अनुसार निर्धारित होती है परन्तु मजदूरी महीने भर बाव होती है १५ दिन की मजतन छुटियाँ मिलती हैं। साप्ताहिक मजदूरी पाने वाले धमिकों को कोई छुट्टी नहीं मिलती। सोने की प्याले में मीठरी पराठम पर काम करने वाले धमिकों को १ दिन की बिजाय छुट्टी और ऊपरी पराठम पर काम करने वाले धमिकों को १५ दिन की सवेतन छुटियाँ तथा २८ दिन की बेतनरहित छुटियों का अधिकार है। पञ्जाब में मासिक वेतन पाने वाले धमिकों को १५ दिन की सवेतन छुटियाँ तथा २८ दिन की बेतनरहित छुटियों का अधिकार है। पञ्जाब में मासिक वेतन पाने वाले धमिकों को १५ दिन की सवेतन छुटियाँ तथा २८ दिन की बेतनरहित छुटियों का अधिकार है। पञ्जाब में मासिक वेतन पाने वाले धमिकों को १५ दिन की सवेतन छुटियाँ तथा २८ दिन की बेतनरहित छुटियों का अधिकार है। पञ्जाब में मासिक वेतन पाने वाले धमिकों को १५ दिन की सवेतन छुटियाँ तथा २८ दिन की बेतनरहित छुटियों का अधिकार है।

धमिकों और धमिकों के लिए —
 १. १९३६ में पञ्जाबीय धमिक सम्मेलन ने सवेतन छुटियों के सम्बन्ध में एक धमिकमय पाम किया था। भारत सरकार द्वारा यह धमिकमय स्वीकार नहीं हुआ और उससे यह भोगिन किया कि धमिकमय में उल्लिखित सब सस्थाओं पर इस लागू करना सम्भव नहीं था। फिर भी ऐसी धमिकमय के अन्तर्गत धमिकों के कारखानों में एक साप्ताहिक छुट्टी प्रदान कर दी गई। केन्द्रीय सरकार ने १९४२ में साप्ताहिक छुट्टी के लिए एक अधिनियम बनाया जिसके अन्तर्गत सभी धमिकों को नौकरी को मजदूरी में एक छुट्टी प्रदान करने की तथा धमिकों को सप्ताह में एक दिन बन्ध रखने की व्यवस्था की गई। परन्तु यह अधिनियम राज्यो को इस प्रकार के अधिनियम पाम करने की या लागू करने की शक्त अनुमति प्रदान करता है। मात राज्यो में ही इस अधिनियम को अपनाया जाता है। इसके अतिरिक्त कुछ राज्य धमिकों में बुकान व बाणिज्य सम्बन्धी कर्मचारियों (Shops and Commercial Establishments Employees) के लिए भी छुट्टियाँ की व्यवस्था है। ऐसे अधिनियम राज्यो के पुनर्वसन से पहले नौकरी के लिए भी छुट्टियाँ की व्यवस्था है।

1. See Labour Investigation Committee Report pages 120-21
 2. See Labour Year Books

२१ राज्यों में लागू थे और अब सभी राज्यों में यह अधिनियम बना दिये गये हैं। बम्बई में १९३७ में सर्वप्रथम ऐसा अधिनियम पास हुआ था। कुछ अन्य ऐसे महत्व पूर्ण अधिनियम उत्तर प्रदेश (१९४७) पंजाब (१९४ तथा १९४८), पश्चिमी बंगाल, मद्रास मध्य प्रदेश बिहार असम पारस करम तथा मेसूर प्रायि के हैं। पश्चिम बंगाल में भी राष्ट्रीय स्तर के भी ऐसे अधिनियम थे। देहली में भी १९४४ से एक ऐसा अधिनियम लागू है। यह सभी अधिनियम सप्ताह में एक दिन की अवकाश छुट्टी की व्यवस्था करते हैं। परन्तु बंगाल का अधिनियम इसमें भी एक कदम आगे बढ़ गया है और सप्ताह में दो दिन की छुट्टी की व्यवस्था करता है। असम ईदराबाद और मद्रास के अधिनियम केवल बुकानों को एक दिन के लिए बन्ध करने की व्यवस्था करते हैं तथा बम्बई और देहली के अधिनियमों में होटलों और थियेट्रों का विचार नहीं है। सभी अधिनियमों में हर प्रकार की छुट्टी की व्यवस्था है। १२ माह को निरन्तर मौकों के बाद पूरे बतन सहित विशेष छुट्टी (Privilege Leave) की व्यवस्था विभिन्न राज्यों में इस प्रकार है—बम्बई तथा पश्चिमी बंगाल में १४ दिन असम में १६ दिन मद्रास व ईदराबाद में १२ दिन उत्तर प्रदेश और देहली में १३ दिन (उत्तर प्रदेश में चौकीदारों के लिए ३० दिन) और मध्य प्रदेश में एक माह। बिहार, उड़ीसा और पंजाब में २० दिन के कार्य पर १ दिन तथा मेसूर में १ वर्ष में १ दिन। ऐसी विशेष छुट्टियाँ एकत्रित भी की जा सकती हैं। पूरे बतन सहित याकस्मिक छुट्टियों (Casual Leave) की व्यवस्था इस प्रकार है—असम उत्तर प्रदेश मेसूर और पश्चिमी बंगाल में १० दिन मद्रास ईदराबाद और देहली में १२ दिन मध्य प्रदेश में १६ दिन। बीमारी की छुट्टियाँ इन्टरमीडियेट प्रमाण-पत्र उपलब्ध करने पर ही प्रदान की जाती हैं। इनकी व्यवस्था विभिन्न राज्यों में इस प्रकार है—असम में एक वर्ष की मौकरी के बाद घाये बतन पर एक माह उत्तर प्रदेश में ६ महीने की मौकरी के बाद पूरे बतन पर १३ दिन पश्चिमी बंगाल में घाये बतन पर १४ दिन और ईदराबाद व मद्रास में पूरे बतन पर १२ दिन तथा उड़ीसा में १ वर्ष की मौकरी के पश्चात् १३ दिन। इनके अतिरिक्त असम में धार्मिक कार्यों के लिए तीन छुट्टियों की व्यवस्था है। उत्तर प्रदेश के अधिनियम में ३ गजेटेड छुट्टियों की व्यवस्था है। ईदराबाद में अनेक गजेटेड छुट्टियाँ प्रदान करने की व्यवस्था है। पंजाब में २ राष्ट्रीय तथा ४ पब्लिक की छुट्टियाँ प्रदान करने की व्यवस्था है। देहली में तीन राष्ट्रीय छुट्टियाँ की जाती हैं। केरम में १९४८ के एक अधिनियम के अनुसार ७ अवकाश छुट्टियाँ प्रदान की जाती हैं जिनमें ४ राष्ट्रीय छुट्टियाँ और एक पब्लिक की छुट्टी भी है जो छुट्टियाँ समाप्त उद्यान-बन्धों के लिए हैं। अन्य राज्यों में भी इसी प्रकार छुट्टियाँ प्रदान करने की व्यवस्था है।

इसके अतिरिक्त सरकार ने एक 'अवकाश छुट्टी अधिनियम (Holidays with Pay Act) पास किया था जिसको १ जनवरी १९४६ से लागू किया गया था। यह केवल निरन्तर काम कारवायों पर ही लागू किया गया था। इस अधिनियम में

यह व्यवस्था की कि प्रत्येक ऐसे श्रमिक को जो १२ माह तक किसी कारखाने में निरन्तर काम कर चुका हो उस सामान्य १२ महीनों में अगर बचस्क हो तो १० दिन की छुट्टी यदि कामकाज हा हो १४ दिन की लगातार छुट्टी मिलेगी। ऐसी छुट्टियां दो बय तक जमा की जा सकती थीं। इन दिनों में श्रमिकों को पिछले तीन महीनों की दैनिक औद्योगिक मजदूरी का हिस्सा में बतन मिलने की व्यवस्था थी। धारा केनन छुट्टी पर जाने से पहले छुट्टी के वेतन कापिग भाग पर मिलने की व्यवस्था थी।

१९४० के फ़ैक्टरी अधिनियम के अन्तर्गत श्रमिकों का छुट्टिया की छुट्टी भी सुविधाएँ प्रदान की गई हैं। १२ माह लगातार काम करने के पश्चात् साप्ताहिक छुट्टिया के प्रतिरिक्त प्रत्येक श्रमिक को निम्नलिखित दर पर सबतन छुट्टियों का अधिकार दिया गया है—बसस्क—प्रत्येक २ दिन का काम पर एक दिन की छुट्टी परन्तु कम से कम १० दिन की छुट्टी बचके—१५ दिन के काम पर एक दिन की छुट्टी परन्तु कम से कम १४ दिन की छुट्टी। इस प्रकार छुट्टियों की व्यवस्था श्रमिकों के काम करने की प्रबन्धन का भाग सम्बन्धित है।

१९४० के फ़ैक्टरी अधिनियम में श्रमिकों को छुट्टियों प्रदान करने से पहले जो १२ माह की निरन्तर नौकरी की प्रबन्धन रखी गई थी उसका निर्लप्य करने में कई कठिनाइया का सामना करना पडा। इस कारण इस अधिनियम में १९५४ में संशोधन दिया गया। "यदि अन्तर्गत सब छुट्टी मने से पहले की नौकरी की प्रबन्धन का एक संशोधन बय म २४ दिन कर दिया गया है। उन तमाम दिनों को जबकि श्रमिक प्रबन्धी छुट्टी प्रगुन काम की छुट्टी प्रबन्धन मण क कार्य के अनुसार उपरिष्ठ छुट्टी पर हा मण दिन माना जाता है जब श्रमिक कार्य करता हो। परन्तु श्रमिकों का मने दिना क आधार पर छुट्टी मने का अधिकार न होगा। जो श्रमिक १ जनवरी के बाद नौकरी शारम्भ करने उनका भी छुट्टी प्राप्त करने का अधिकार हाता यदि वे बय के रूप से निहाई दिना क काम कर मण। यदि किसी श्रमिक का उपरिष्ठ छुट्टी मने क पहलम ही निष्कास दिया जाता है तो श्रमिकों को उपरोक्त दर से छुट्टी के दिना का वेतन देना पड़ेगा चाह उपरिष्ठ कार्य की प्रबन्धन किनी ही रही हो। वह छुट्टी मने छुट्टियों के प्रतिरिक्त प्रदान की जाती है। तथा एक बय म ३ दिनों में यह छुट्टी भी जा सकती है।

खाने और आवास के श्रमिकों को भी सब ऐसी ही सुविधाएँ प्रदान कर दी गई हैं। १९४५ के खानों के अधिनियम के अन्तर्गत खाने का प्रत्येक श्रमिक एक साप्ताहिक छुट्टी के प्रतिरिक्त १२ माह की लगातार नौकरी के बाद निम्नलिखित दर में पूर्ण वेतन मणन छुट्टी का अधिकारी होगा—(i) मासिक वेतन पाने वाले कर्मचारियों का—१४ दिन (ii) साप्ताहिक वेतन पाने वाले कर्मचारी या श्रमिक उठाने वाले श्रमिक प्रबन्धन खान के शौकीन पुरानन पर काम करने वाले के श्रमिक जो बार्ड के आधार पर वेतन पाते हैं—७ दिन। जबकि मासिक वेतन पाने वाले कर्मचारी ही अपनी छुट्टियों को २८ दिनों तक एकत्रित कर सकते हैं। छुट्टी मने के तिय काम की प्रबन्धन

एक घण्टि या कम बढाने वाले धर्मिकों तथा ध्यान के भीतरी वरातन पर काम करने वाले ऐसे धर्मिकों के लिये, जो काम के साधार पर बेतन पाते हैं १२ महीनों में १६० दिन है और अन्य सब धर्मिकों के लिये २६५ दिन है ।

१९३१ के वातान धर्म अधिनियम के अन्तर्गत प्रत्येक धर्मिक को निम्न लिखित पर से सवेतन छुट्टी देने की व्यवस्था है—(क) वयस्क के लिये २० दिन के कार्य पर १ दिन की छुट्टी (ख) बच्चों तथा किजाराबन्धा वातों के लिये १३ दिन के कार्य पर १ दिन की छुट्टी । धर्मिकों को ३ दिन तक छुट्टी एकत्रित करने का अधिकार है । राज्य सरकार धर्मिकों की साप्ताहिक छुट्टी के बारे में तथा उस दिन काम करने पर बेतन के बारे में नियम बना सकती है ।

१९४६ के औद्योगिक रोजगार (स्वामी आदेश) अधिनियम के अनुसार प्रत्येक मालिक को यह स्पष्ट कर देना चाहिये कि वह धर्मिकों को कितनी बेतन सहित मा बेतन सहित छुट्टियाँ देगा और छुट्टियाँ किस प्रकार दी जायेंगी ।

उत्तर प्रदेश में भीनी मिर्चों के धर्मिकों के सम्बन्ध में नवम्बर १९३७ में एक विशेष नियम बनाया गया जिसके अनुसार औसती अधिनियम के प्रतिरिक्त, छुट्टी बेतन अधिक के सम्बन्ध में निम्नलिखित व्यवस्था की गई है—स्वामी धर्मिक—सात में धार्मिक छुट्टी ६ दिन बीमारी की छुट्टी १० दिन मौसमी धर्मिक—मिर्चों में भीनी बनने के मौसम में हर महीने पर पांच दिन की धार्मिक छुट्टी तथा आठ दिन की बीमारी की छुट्टी । यदि किसी माह में १३ दिन से अधिक कार्य हो तो वह पूरा माह तमम्मा जायगा ।

१९४७ के औद्योगिक विचार अधिनियम में अन्तर्गत उत्तर प्रदेश में पर्वों की छुट्टियों की भी व्यवस्था कर दी गई है । १९३० में इनकी संख्या सात में १७ दिन निश्चित की गई जो १९३३ में बढाकर १८ कर दी गई । नवम्बर १९४५ में यह २० दिन पर्वों की छुट्टियाँ भीनी मिर्चों पर भी लागू कर दी गई । अगस्त १९६१ में उत्तर प्रदेश में एक और अधिनियम पास हुआ है जिसको औद्योगिक छुट्टियाँ (राष्ट्रीय छुट्टियाँ) अधिनियम [Industrial Establishment (National Holidays) Act] कहते हैं । इसके अन्तर्गत औद्योगिक धर्मिकों को मण्डलिय विषय में स्वतन्त्रता विषय तथा गांधी जयन्ती पर सबतन छुट्टी प्रदान करने की व्यवस्था है ।

वर्तमान स्थिति —

इन वैधानिक उपबन्धों के हात हुए भी छुट्टियाँ तथा अवकाश देने की व्यवस्था संतोषजनक नहीं है । स्वयं अधिनियमों में ही कुछ मुद्दा सम्भव है जैसे कि अधिक नियम सब कारखानों पर लागू होना चाहिये । छुट्टियों का एकत्रित करने की अधिकारी भी दो वर्ष से अधिक हानी चाहिये । यह अधिक पांच वर्ष की हो सकती है । इस बात की सुविधा भी होनी चाहिये कि धर्मिक अपनी सवेतन छुट्टियाँ की अधिक को बेतन सहित छुट्टियाँ लेकर धार्ये बढा सकें । इस प्रकार यदि आवश्यक हो तो धर्मिकता (Doe) छुट्टियों में दुगुनी छुट्टियाँ तक भी दे सकें । ऐसा भी देखा गया है कि व्यवहार में

प्रचिनियम की धाराया का न ठीक से पालन होता है और न उनकी ठीक से जागू किया जाता है। अधिकतर कारखानों में 'काम नहीं तो बतन भी नहीं' का सिद्धान्त ही अपनाया जाता है और क्योंकि भारतीय श्रमिक निबन होता है और एक काफ़ी बड़े परिवार का भार उस पर होता है अतः सामारणतः वह उस समय तक बेतन रहित छुट्टी नहीं मंगा पाट्टा जब तक यह उसके लिए बहुत ही आवश्यक न हो जाए। केवल यही नहीं बल्कि कमी कमी छुट्टियों में भी काम करना चाहता है। ऐसा प्रायः मौसमी व अनिश्चित कारखानों में देखा जाता है। मासिक भी श्रमिकों से मिसकर छुट्टी वाले दिन कारखाना खुला रहता है। यह इस बात से स्पष्ट हो जाता है कि कहीं कहीं हाजिरी के रजिस्टर में तो श्रमिक साप्ताहिक छुट्टी के दिन अनुपस्थित दिखाया गया होता है परन्तु बेतन की बही पर सप्ताह के सातों दिनों का भुगतान मिलता है। प्रबन्धक और छुट्टियाँ भी अधिकार के रूप में नहीं अपितु बिषय कृपा के रूप में प्रदान की जाती हैं। परिणामस्वरूप अत्यन्त परदात तथा असमान व्यवहार होता है और बहुधा श्रमिक संघ के कार्यकर्त्तार्यों का इस बिषय में इच्छित किया जाता है। बीमारी की छुट्टी के लिए कारखाने के डाक्टर का प्रमाण-पत्र उपस्थित करना पड़ता है। परन्तु वे सर्वत्र पड़पाठरहित नहीं होते और बहुधा भ्रष्ट ब्रूस भी भेते हैं। अतः कानूनी व्यवस्था की सफ़लता इस बात पर निर्भर करती है कि वे किस प्रकार कार्यान्वित किए जा रहे हैं और यह सभी सम्भव है जब पर्याप्त निरीक्षण और मासिकों का पूरा सहयोग प्राप्त हो। अनेक राज्यों में ऐसा देखा गया है कि प्रचिनियम की धाराओं को ठीक से नहीं जागू किया जाता। यदि मासिका को अपने श्रमिकों में एक सन्तोष की भावना पैदा करनी है और उनकी कार्यक्षमता बढ़ानी है तो उन्हें बेतन छुट्टियों का मुख्य तथा उनकी महत्ता को भली भाँति अनुभव करना चाहिए। छुट्टियों की न्यूनतम संख्या -

कांग्रेस की राष्ट्रीय समिति की श्रम उपसमिति ने इस बात की सिफारिश की थी कि प्रत्येक औद्योगिक श्रमिक को १२ माह मौकरी करने के बाद १० कार्य के दिनों की सबेरा छुट्टियाँ मिलनी चाहिए, जिनमें सार्वजनिक छुट्टियाँ सम्मिलित नहीं होनी चाहिए। परन्तु डा. की धार० सेठ ने एक माह में अपना यह मत प्रकट किया कि श्रमिकों के लिए दस दिन की छुट्टियाँ इतनी पर्याप्त नहीं है कि वह शैक्षिक मेहनत के बाद कुछ धाराय या सफ़े और अपने स्वास्थ्य का ठीक कर सकें जबकि वास्तव में छुट्टियाँ देने का मुख्य उद्देश्य यही है। श्रमिक अधिकतर छुट्टियाँ अपने घर व्यतीत करना चाहते हैं और उनका घर साधारणतया औद्योगिक नगर से काफ़ी दूर होता है। इसलिए पाँचे दिनों के लिए वे यात्रा का व्यय धारि सहन करना पसन्द नहीं करेंगे। अतः १२ माह की मौकरी के बाद सबेरा छुट्टियों की न्यूनतम संख्या कम से कम १२ दिन होनी चाहिये और प्रत्येक वर्ष इस संख्या में एक दिन की वृद्धि होनी चाहिए। इस प्रकार अधिकतम छुट्टियों की संख्या ३० दिन तक होनी चाहिए जोकि श्रमिकों को १५ वर्ष की मौकरी के पश्चात् मिल सके। श्रमिकों

को कम से कम दो बर्ष तक अपनी छुट्टियाँ एकत्रित करने की सुविधा हानी चाहिए। मासिकों का प्रसुविधा न हो इसलिये छुट्टियाँ ऐसे समय भी जा सकती हैं जबकि कार्य और व्यापार में कुछ स्थितिज्ञता हो। और एक समय में इस प्रतिष्ठत से अधिक कामचारियों को छुट्टी प्रदान नहीं करनी चाहिए। इस बात का भी सुझाव दिया गया है कि छुट्टियों के दिनों का बतन मासिकों द्वारा सञ्चित ऐसी निधि से दिया जाना चाहिए जो सार्वजनिक नियंत्रण में हो। मासिकों को इस निधि में बतन अपने अमिकों की संख्या तथा कुल मजदूरी के बिल के अनुसार जमा करना चाहिए। छुट्टियों के दिनों का बतन अमिकों को छुट्टी से वापिस आने पर मिलना चाहिए, जिससे अमिकावर्त के दोष कम हो जायें।

कृपि अमिकों के लिए भी सबेदन छुट्टियों की महत्ता स्वीकार कर ली गई है और अन्तर्राष्ट्रीय अमिक सम्मेलन ने जून १९५२ में अपने ३१वें अधिवेशन में इस सम्बन्ध में एक अधिसूचना भी पास किया था। कृपि अमिकों के लिए एक बर्ष की नौकरी के बाद कम से कम एक सप्ताह की छुट्टी की सिफारिश की गई है और १८ या १९ बर्ष से कम आयु के लोगों के लिए छुट्टियों की संख्या इससे भी अधिक होनी चाहिए। ध्याता है कि इस अधिसूचना को भारतीय सरकार स्वीकार कर लागू कर देगी।

थी बी बी मिरि ने राष्ट्रीय तथा पबों की छुट्टियों के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण विचार प्रकृत किया है। ऐसी छुट्टियों में प्रत्येक राज्य तथा स्थान पर विभिन्नता पाई जाती है। परन्तु विभिन्न उद्योगों तथा कारखानों में छुट्टियों की संख्या में समता आवश्यक होनी चाहिए। कुछ संस्थाओं में राष्ट्रीय तथा पब-सम्बन्धी छुट्टियाँ की संख्या बहुत है। हमें आवश्यक प्रवकाश तथा काम काम की बात ही नहीं साजनी चाहिए। परन्तु इसके साथ ही यह भी मानना पड़ेगा कि ऐसे लोगों के लिए बिनके जीवन में कोई अर्थ मुक्त और शान्ति नहीं है, हमारे पुराने पर्व ही मनोरंजन तथा विभाम के सर्व-उपयुक्त साजन हैं। अतः हमारी प्रवकाश की इच्छा तथा उत्पादन के प्रति उत्तरदायित्व में एक कार्योपिठ सामंजस्य होना चाहिए और राष्ट्रीय तथा पब-सम्बन्धी छुट्टियाँ प्रदान करने के लिए एक समान रीति अपनानी चाहिए। सरकार इस ओर ध्यान दे रही है और इस समस्या पर अनेक अम सम्मेलनों में भी विचार किया जा चुका है।

भारतीय श्रमिक संघ आन्दोलन (Trade Unionism in India)

श्रमिक संघ की परिभाषा—विभिन्न मत—

श्रमिक संघों की उत्पत्ति पर प्रकाश डालते हुए विभिन्न लेखकों ने इन संघों की विभिन्न परिभाषाएँ दी हैं। सिडनी और बेट्रिस वेब¹ के मतानुसार "एक श्रमिक संघ मजदूरी प्राप्त करने वालों का एक ऐसा निरालस समुदाय है जिसका उद्देश्य उनकी कार्मिक जीवन की स्थितियों को सुधारना तथा कायम रखना है। वेब के अनुसार इन संघों का मूल उद्देश्य "रोजगार की स्थितियों को इस प्रकार सक्रिय रूप से नियमित बनाने का है कि श्रमिकों को औद्योगिक प्रतिस्पर्धा के दुर प्रभावों से बचाया जा सक। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये सामाजिक विकास की स्थिति के अनुसार वार्षिक बीमा सामूहिक सीमाकारी (Collective Bargaining) तथा कानूनी विधि जैसे तरीकों को अपनाया जाना है। उनके मतानुसार प्रजातांत्रिक समाज में एक ऐसे श्रमिक संगठन की अत्यन्त आवश्यकता है जिसके द्वारा श्रमिक भी अपने रोजगार की स्थितियों का नियंत्रित करने में कुछ योग दे सक। इस प्रकार से श्रमिक संघों के विकास को पूँजीवादी व्यवस्था की एक घटनामान नहीं कहा जा सकता बल्कि प्रजातंत्र राज्य में उनका एक स्थायी पहलू है। एक अन्य विद्वान² के अनुसार "श्रमिक आन्दोलन एक परिणाम है, जिसका मुख्य कारण यही है। मशीन श्रमिकों की रोजगार सम्बन्धी सुरक्षा में बाधक सिद्ध होती है। श्रमिक अपने बचाव के लिए संघों के द्वारा मशीन पर नियंत्रण पाने का प्रयत्न करता है और इस प्रकार से ये मध्य सामाजिक व्यवस्था में सहायक सिद्ध होते हैं। श्रमिक संघ आन्दोलनों द्वारा वर्तमान पूँजीवादी व्यवस्था के स्वान पर एक औद्योगिक प्रजातंत्र की स्थापना करने का प्रयत्न किया गया है। रॉबर्ट हॉल्मी का विश्वास है कि श्रमिक संघों का सामूहिक मनोविज्ञान (Group Psychology) के कारण उत्पन्न हुए हैं। श्रमिक संघ ही ऐसी संस्था है जिसमें मध्य सम्बन्धी अनेक समस्याओं तथा श्रमिकों की उत्पत्ति के कार्यक्रम पर सामूहिक रूप से विचार किया जाता है। 'वैलिंग पर्सनल' के अनुसार चिठी भी वेब ने श्रमिक संघ आन्दोलन का स्वरूप उस दशक के बुद्धिमान लोगों के कार्यों पूँजीवाद के विरोध तथा श्रमिकों के रोजगार पाने की दृष्टियों के पारस्परिक सम्बन्ध

1 History of Trade Unionism by Sidney and Beatrice Webb

2 Frank Tonnenbaum — Quoted in Insights into Labour Issues by Lester and Shister

पर निर्भर करता है। कार्ल मार्क्स^१ के मतानुसार यह ही सबसे प्रथम तथा सबसे प्रगामी 'संगठनकर्ता केन्द्र' (Organising Centre) था। श्रमजीवियों के एकत्रीकरण का प्रारम्भ इन मंचों से ही होता है। संगठन की अनुपस्थिति में श्रमिक रोड़गार पाने के लिये धावप में ही प्रतिस्पर्द्धी बने रहते थे। श्रमिक संघों के विकास का वास्तविक कारण यही है कि श्रमिक इन स्पर्द्धी को समाप्त कर देना चाहते थे या इस स्पर्द्धी को इतना सीमित कर देना चाहते थे कि उनको रोड़गार की ऐसी शक्ति प्राप्त हो सके जिससे उनका स्तर वास्तविक श्रेणी में ऊँचा उठ सके। मार्क्स के विचार में श्रमिक संगठन ही एक ऐसा साधन और केन्द्र है जिसके अन्तर्गत कार्य करते हुए श्रमिक वर्ग समाज की व्यवस्था में परिवर्तन कर सकता है। जिस प्रकार सम्यकालीन नगरपालिकाएँ तथा समितिवादी 'बुजुर्ग' वर्ग का संगठन का केन्द्र थीं श्रमिक संघ उसी प्रकार स मजदूर वर्ग (Proletariat) के संगठन के केन्द्र हैं। इस प्रकार स श्रमिक संघों का अपने साधारण कार्यों के अतिरिक्त एक महत्वपूर्ण कार्य यह भी होना चाहिये कि वे श्रमिक वर्ग की राजनैतिक मुक्ति के हेतु संगठन का केन्द्र बनें।

श्रमिक संघवाद का विकास —

श्रमिक संघवाद का विकास आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था के परिणामस्वरूप ही हुआ है। पहले जब मालिकों तथा श्रमिकों में पारस्परिक सम्पर्क रहता था तब उनके सम्बन्धों को उचित रूप देने के लिए किन्हीं विरोध संगठन की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। परन्तु आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था में बहु पारस्परिक सहयोग तथा सम्पर्क समाप्त हो गया है, और उनके सम्बन्ध अत्यन्त कटु हो गये हैं। इसके अतिरिक्त आधुनिक औद्योगिक जीवन में मजदूर वर्ग व्यक्तिगत रूप से सीना करने में अपने मालिक की अज्ञानता अथवा अंधकार से निरन्तर होता है। इसका कारण अज्ञान ही विशेष कारण है। अज्ञान एक नाशवाद् पशु है। इसको उचित नहीं किया जा सकता। श्रमिक यदि काम नहीं करेगा तो उसे भूला रहना पड़ेगा। इसके विपरीत मालिक अज्ञानता कर सकते हैं। अतः श्रमिक मालिकों से उचित शर्तों पर शौका करने में असमर्थ रहते हैं, और मालिक अधिक लाभ प्राप्त करने के हेतु उनका शोषण करने में सफल हो जाते हैं। व्यक्तिगत रूप से श्रमिक अपना महत्त्व तथा बाजार में अपनी मूल्य भी ठीक प्रकार से नहीं जान पाता। अतः प्रदेश देश में औद्योगिक प्रगति के प्रारम्भ में ही श्रमिकों को इस श्रेय का ध्यान हो गया कि जब तक वे श्रमिक संघों की सहायता के द्वारा अपनी शौकाकारी की व्यवस्था को प्रथम न बनायेंगे तब तक वे मालिकों से शोषण से अपनी सुरक्षा नहीं कर सकते। इस प्रकार श्रमिक संघों की उत्पत्ति हुई। उनके विकास की गति तथा कार्यों का स्वरूप प्रदेश देश की राजनैतिक आर्थिक तथा बौद्धिक प्रगति पर निर्भर रहा है। इनसे सामाजिक संघर्ष का संबंध मिलता है परन्तु साम ही ये सामाजिक उत्पत्ति के परिणामक हैं।

संदेह में यह कहा जा सकता है कि श्रमिक संघ मजदूरों का संगठन है।

1) Marx and the Trade Unions by A. Lozovsky

धमिक स्वयं को संगठित करते हैं, जन्मा जमा करते हैं, तथा अपने संघ को कानून के अनुसार पंजीकृत करवाते हैं और फिर उनका यह संघ आमजीवियों के हित के लिये घनेक कार्य करता है। पारिनायक दृष्टि से ट्रेड यूनियन भर्नात् 'व्यापार संघ' में मासिक तथा मजदूर बोनो ह्री के संघों को सम्मिलित किया जाता है परन्तु साधारण-तथा 'व्यापार संघ' का तात्पर्य मजदूरों के संगठन धर्नात् धमिक संघ से लिया जाता है।

धमिक संघों के कार्य —

धमिक संघों के कार्यों को तीन विमार्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(१) अंतर्मुखी कार्य (Intra-mural Activities)—इनके अन्तर्गत वे सब कार्य आते हैं जिनके द्वारा धमिकों के रोजगार की स्थिति में उत्थति हो सकती है। इन कार्यों का उद्देश्य यह है कि वे धमिकों के लिये पर्याप्त मजदूरी रोजगार व कार्य की बख्शी स्थितियां मासिकों से उचित व्यवहार, काम के घंटों में कमी आदि की सुविधा प्राप्त करने का प्रयत्न करें। इसके प्रतिरिक्त ये संघ इन बात का भी प्रयत्न करते हैं कि धमिकों को लाभ-सहभाजन (Profit-sharing) तथा उद्योग व्यवस्था के नियन्त्रण में भाग लेने का अधिकार मिले। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये ये संघ सामूहिक सौदागारी मासिकों से पारस्परिक बार्तालाप हड़ताल तथा बहिष्कार जैसे साधनों को अपनाते हैं। इसीलिये इन कार्यों को कमी कमी 'अमड़े या संघर्ष के कार्य' भी कह दिया जाता है।

(२) बहिर्मुखी कार्य (Extra-mural Activities)—इन कार्यों का उद्देश्य धमिकों की कार्यक्षमता में वृद्धि करना तथा आरक्षणता के समय उनकी सहायता करना होता है। धमिक संघ धमिकों में सहकारिता तथा मित्रता की भावना उत्पन्न करते हैं और उनमें शिक्षा व संस्कृति का प्रसार करते हैं। बीमारी व दुर्घटना तथा बेकारी हतास व तामावशी के समय ये संघ धमिकों को हर प्रकार की आर्थिक सहायता देते हैं। आरक्षणता के समय वे धमिकों को कानूनी सहायता भी प्रदान करते हैं। इसके प्रतिरिक्त धमिकों के लिये ये संघ घनेक अन्य कल्याणकारी कार्य भी करते हैं जैसे धमिकों के बच्चों के लिये स्कुल खोलना पुस्तकालय तथा बाचनासलों की व्यवस्था करना घर के बाहर व भीतर के देमों का प्रबंध करना और अन्य मनोरंजन के साधन प्रदान करना। कुछ संघ तो धमिकों के लिये मकानों की व्यवस्था भी करते हैं, और उनके लिये पत्र-व्यभिचार प्रकाशित करते हैं। ऐसे कार्यों को 'अभ्युत्थ-कार्य' (Fraternal Activities) भी कह्य है। इन कार्यों की गणना धमिकों के स्वयंसेवक तथा उनकी पर्याप्त निधि (Funds) पर निर्भर करती है किन्तु निमाण संघ के सदस्यों के जन्मे तथा अन्य लोगों द्वारा भी कई आर्थिक महामना से होता है।

(३) राजनैतिक कार्य—कुछ धमिक संघ चुनाव लड़ने हैं, और सरकार बनाने का प्रयत्न करते हैं। घनेक देमों में शक्तिशाली धमिक दलों का विकास हो चुका है और इंग्लैण्ड में तो घनेक बार धमिक दल से सरकार बनाने के प्रयत्न हुए हैं। भारत में संघों के

राजनैतिक कार्य श्रमिक महत्त्वपूर्व नहीं है यद्यपि कभी कभी श्रमिक संघों ने सरकार की श्रम नीति को प्रभावित करवाया है और विधान सभाओं में श्रमिकों का प्रतिनिधित्व भी किया है।

श्रमिक संघों के हानि और लाभ—

श्रमिक संघों द्वारा किये हुए कार्य श्रमिकों के लिये इतने महत्त्वपूर्ण तथा हितकारी हैं कि इन संघों का अस्तित्व उनक लिये बरदानम्बरूप है। परन्तु कई बार इनके कार्य आशोचनात्मक भी हो जाते हैं। श्रमिक संघ उत्पादन के विवेकीकरण तथा अन्य उन्नत पद्धतियों के प्रति साधारणतया एक प्रकार का विरोधात्मक दृष्टि कोण सा बना बैठे हैं क्योंकि ऐसी पद्धतियों से कुछ श्रमिकों को काम पर से हटाने की सम्भावना रहती है। इसके प्रतिश्लिष्ट कभी कभी वे श्रमिकों को कार्य-संभल नीति अपनायाने के लिये प्रेरित करते हैं जिससे औद्योगिक उन्नति में बाधा पहुँचती है और राष्ट्रीय धन्य को हानि पहुँचती है। अनेक बार अपनी शक्ति के लक्ष्य में मामूली बातों पर ही वे झड़तास करा करते हैं और इस प्रकार से वे न केवल उत्पादकों तथा समाज को हानि पहुँचाते हैं बरन् स्वयं भी हानि उठाते हैं। अनेक बार ये संघ श्रमिकों को इस बात के लिये बिभय करते हैं कि श्रमिक उनके द्वारा ही कार्य पर लगाये जायें। इस प्रकार से वे श्रमिकों की पूर्ति में इशिम (Artificial) प्रभाव उत्पन्न कर देते हैं।

परन्तु इन दोषों के हुंते हुए भी श्रमिक संघ अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध हुये हैं और उनके विकास ने समय की एक बहुत बड़ी आवश्यकता को पूरा किया है। एक दृष्टिकोणी संघ उद्योग-धन्धों की स्थिरता तथा औद्योगिक शक्ति के हेतु एक आवश्यकता है। अगर कोई भी निर्णय सामूहिक रूप से किया जाय तो वह स्वयं श्रमिकों में श्रमिक मान्य होता है और श्रमिक भी ऐसे निर्णयों को आसानी से ठाम नहीं सकते। ये संघ अपने कार्यों द्वारा न केवल श्रमिकों की रोजगार तथा मजदूरी की अवस्था में सुधार व संप्रति करते हैं, बरन् श्रमिकों की कार्य-सुसज्जता बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण सिद्ध होते हैं और उनमें धारम-सम्मान तथा धारम-विश्राम की भावना उत्पन्न करते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इन संघों की अनुपस्थिति में श्रमिक वर्ग का कूटोपार्थक सोपण हावा जो राष्ट्र की प्रगति के लिये पाठक सिद्ध होता।

श्रमिक संघों पर मजदूरी का प्रभाव—

श्रमिक संघ मजदूरी की दर पर भी प्रभाव डालते हैं। संस्थापक धर्मशास्त्रियों (Classical Economists) का मत था कि संघ मजदूरी में स्थायी रूप से वृद्धि नहीं कर सकते। क्योंकि यदि मजदूरी में वृद्धि होती तो साम कम हो जायेगा। साम कम होने से उद्योग-धन्धों की संख्या भी कम हो जायेगी। परिणामस्वरूप श्रमिकों की माँग भी गिर जायेगी। इसलिए या तो मजदूरी कम होगी या श्रमिकों को बेरोजगारी का सामना करना पड़ेगा। इसके धार्तरिष्ट मजदूरी श्रमिक की सीमान्त उत्पादकता (Marginal Productivity) द्वारा निर्धारित होती है। प्रत्येक श्रमिक

संघों का मजदूरी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।

परन्तु धातुनिक अर्थशास्त्री मजदूरी पर धमिक संघों के प्रभाव को स्वीकार करते हैं । धमिक संघ प्रत्यक्ष रूप से ता माधारणतया मजदूरी पर प्रभाव नहीं डालते परन्तु उनका प्रभाव उन अनेक आर्थिक शक्तियों पर होता है जिनके कारण मजदूरी स्थायी रूप से बढ़ सकती है । प्रथम तो संघ इन बात का पुरा ध्यान रखते हैं कि धमिक को उतनी सीमांत उत्पादकता के अनुसार पुरी मजदूरी मिल जाए । सम्पूर्ण प्रतियोगिता में मजदूरी सीमांत उत्पादकता के अनुसार तो मिलती है परन्तु वास्तविकता यह है कि सम्पूर्ण प्रतियोगिता कम ही होती है । धमिकों की सौदा करने की शक्ति धमिकों की अघणना कम होती है और उनका घोषण होता है तथा उनको सीमांत उत्पादकता के अनुसार भी मजदूरी नहीं मिल पाती । धमिक संघ मजदूरों की सौदा करने की शक्ति का ब्यापार मजदूरों को सीमांत उत्पादकता की सीमा तक बढ़ा सकते हैं । हमारे वे स्वयं धमिकों की सीमांत उत्पादकता में वृद्धि कर सकते हैं और इस प्रकार मजदूरी को स्थायी रूप से बढ़ा सकते हैं । धमिक संघ धमिकों द्वारा अचली मशीन तथा मनुष्यित संगठन की व्यवस्था कराके तथा स्वयं धमिकों में शिक्षा तथा कल्याणकारी कार्यों का प्रसार करके उनकी कार्यकुशलता में वृद्धि कर सकते हैं । इससे अतिरिक्त धमिक संघ किसी विशेष व्यवसाय में भी धमिकों की पूर्ति मागित करके उनकी मजदूरी बढ़ा सकते हैं । परन्तु उनका यह प्रयत्न अनेक बाधों पर निर्भर करता है । प्रथम तो जो वस्तु धमिकों द्वारा निर्मित की जा रही है किसी अन्य मापन में प्राप्त न की जा सके । दूसरे उस वस्तु की माँग भी वैशेष्यपूर्ण हो जिससे उसका मूल्य बढ़ाया जा सके । तीसरे उस वस्तु के निर्माण में जो कुल व्यय आता हो उसमें मजदूरी का अंश कम हो जिससे कि मजदूरी धमिक बेतों पर भी वस्तु का मूल्य अधिक न बढ़े । चौथे उत्पात के अन्य साधन तथा अन्य प्रकार के धमिक भासानी से विभक्त रहे और वे अपनी पूर्ति को सीमित न करें । इन सभी बाधों का होने पर ही किसी विशेष व्यवसाय के धमिक अपने मंच को महायता द्वारा अपनी पूर्ति सीमित करके अपनी मजदूरी को बढ़ा सकते हैं ।

अनेक बार ऐसा भी कहा गया है कि धमिक संघ धमिकों को इस बात के लिए बाध्य करते हैं कि वे धमिकों के रोजगार में काम की स्थिति में सुधार करें तथा उनको बोनस व मंहगाई भत्ता आदि के रूप में समय-समय पर लाभ में से भी एक भाग देते रहें । इस प्रकार वे संघ अपने प्रयत्नों द्वारा न केवल नकद मजदूरी (Nominal Wages) में ही वृद्धि करते हैं बल्कि वास्तविक मजदूरी (Real Wages) में भी वृद्धि कर सकते हैं ।

धमिक संघों के विभिन्न रूप—

धमिक मंच कई प्रकार के होते हैं । प्रथम तो 'हस्तकारी मंच' (Craft Unions) होते हैं जिनको व्यवसायिक मंच भी कहा जाता है । यह ऐसे धमिकों के

संगठन होते हैं जो किसी एक विरोध व्यवसाय या दो तीन सम्बन्धित व्यवसायों में काम पर लगें हैं। उदाहरणतः रेल इन्जिन के इञ्जीनियरों का संघ और अहमदाबाद खुसाहा संघ आदि। इनके धार्मिक संघ होते हैं। ये संघ एक ही उद्योग-व्यवसाय में लगे हुए धर्मियों का संगठन होते हैं जो बनना चाहे कोई भी करते हैं। उदाहरणतः कपड़ा उद्योग में लगे हुए धर्मियों का संघ या रेल कर्मचारियों का संघ आदि। अधिकतर धर्मिक संघ धार्मिक संघ ही होते हैं। नीमरी प्रकार संघ (Federation) की है। विभिन्न संघ जब किसी विरोध उद्योग की पूर्ति के लिए संघटित होकर एक सम्मिलित संघ बना लेते हैं तो उसे संघ कहते हैं। उदाहरणतः रेल स्टाफ होते हैं जैसे अहमदाबाद का मूठी कपड़ा संघ या प्रान्तीय होते हैं जैसे बम्बई के रेल वाक कर्मचारियों का संघ या राष्ट्रीय भी होते हैं, जैसे नेशनल फेडरेशन ऑफ इन्डियन रेलवेमैन या इन्डियन नेशनल ट्रेड यूनियन काँग्रेस आदि। कुछ अन्तर्राष्ट्रीय संघ भी होते हैं जैसे इंटरनेशनल काम्प्यूटेशन ऑफ ट्रेड यूनियन (स्वतन्त्र धर्मिक संघों का अन्तर्राष्ट्रीय संघ)।

धर्मिक संघों के विकास के लिए आवश्यक तत्त्व —

प्रत्येक संघ में धर्मिक संघ के विकास के लिए कुछ बातों का होना आवश्यक है। प्रथम बात ता संघ का धार्मिक विकास है। धर्मिक संघ आधुनिक धार्मिक व्यवस्था के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुए हैं। बड़े पैमाने के आधुनिक उद्योग-व्यवसायों की अनुपस्थिति में धर्मिक संगठन का प्रथम ही नहीं उठता। इनके धर्मिक संघों के विकास के लिए यह भी आवश्यक है कि मजदूरों में असंतोष की भावना हो। जब तक धर्मिक संघों का विकास न हो पाएगा। यह बात इससे स्पष्ट हो जाती है कि विरोधी दल सरकार की बटियों से भाग उठाते हैं। साम्प्रदायी दल के आन्दोलन में कई देशों में यह नीति रही है कि पूर्णकारी व्यवस्था को बाड़ा सा प्रोत्साहन दिया जाए जिससे कि उनके दोष इतने बढ़ जाएं कि उसे समाप्त करने में कठिनाई न हो। अतः जब तक संघ न होगा और धर्मिक आन्दोलन बने रहेंगे धर्मिक संघ उत्पन्न नहीं कर सकते। तीसरे यह भी आवश्यक है कि धर्मियों के स्वतन्त्र व्यक्तित्व को स्वीकार किया जाए और उन्हें 'शान न समझा जाए। उनके संगठन भी समान हारा मान्य हों। एक हितकर जैसी फासिस्ट धर्म-व्यवस्था में हम किसी प्रभावशाली धर्मिक संघ की कल्पना भी नहीं कर सकते। इसके अतिरिक्त धर्मिक संघों के विकास के लिए यह भी आवश्यक है कि धर्मिक मिश्रित हों उन्हें अपने अधिकारों तथा संगठन के लक्ष्यों का ज्ञान हो उनकी धार इतनी हो कि वे आतमी से संघों को बना दे सकें, जनता और सरकार भी उनके उद्देश्यों से सहानुभूति रखती हो और संघ के नेता भी धर्मिक धर्म के ही हों। धर्मिक संघों को अपनी उत्पत्ति के लिए बहुसंख्यी कार्यों की ओर भी धर्मिक मान्यता देना चाहिये।

संघों में एक धर्म के धर्मिक संघ की विशेषताएँ प्रकटित हैं —

(क) संघ के सदस्यों की संख्या घटिक हो — अर्थात् सम्बन्धित व्यापार या व्यवसाय के अधिकारधर श्रमिकों का बहु प्रतिनिधित्व करती हो। (ख) उसकी वार्षिक स्थिति अच्छी हो। (ग) उसके नेता योग्य ईसाधार तथा धर्मिक बर्ग के हों। (घ) उसके सदस्य शिक्षित हों और उन्हें अपने अधिकारों का पूर्ण ज्ञान हो तथा संघ के कार्यों में उन्हें पूर्ण रुचि हो। (ङ) सदस्यों में एकता की भावना हो और उनमें प्रतिद्वन्द्विता तथा पारस्परिक द्वेषभाव न हो। (च) संघ अपने सदस्यों की भलाई के लिये बहिर्मुखी कार्यों पर अधिक समय तथा धन व्यय करे।

भारतीय श्रमिक संघ आन्दोलन का इतिहास

प्रारम्भिक इतिहास —

भारतीय श्रमिक संघ आन्दोलन का इतिहास अत्यन्त संक्षिप्त है। परन्तु आन्दोलन के इस संक्षिप्त इतिहास में ही अनुभव तथा अन्तिकारी कार्यों के इतने प्रचुर उदाहरण मिलते हैं, जितने अन्य देशों के श्रमिक पुराने तथा विकसित आन्दोलनों में भी नहीं मिलते।

अन्य देशों की भाँति भारत में भी श्रमिक आन्दोलन की उत्पत्ति औद्योगिक विकास के परिणामस्वरूप ही हुई है। पिछली शताब्दी के मध्य में बड़े उद्योगों के विकास के साथ ही औद्योगिक संगठनों की स्थापना की और ध्यान आकषिप्त हुआ। परन्तु पहले संघटन मालिकों के ही स्थापित हुए, जिन्होंने श्रमिकों के विरुद्ध अपने हितों की रक्षा के लिए अपने संघ बनाए। सर्वप्रथम यूरोपियन मालिकों ने अपने संघ बनाए और सन् १८१० में ये एक ऐसा अधिनियम पास करवाने में सफल हुए, जिस के अन्तर्गत काम छोड़ने वाले श्रमिकों पर मुकदमा चलाया जा सकता था। इसका नाम 'श्रमिक विद्रोह रोक अधिनियम' (Workmen's Breach of Contract Act) था। इसके बाद से ही मालिकों के संघटन अत्यन्त शक्तिशाली होते चले गए और समय समय पर इन्होंने सरकार की धम भीति पर काफी प्रभाव डाला है। मालिकों के ऐसे संघटनों को 'बैम्बर्न प्रोड कॉमर्स' कहा जाता है। १९१४-१८ के युद्ध तक श्रमिक संगठनों का विकास परिस्थितियाँ अनुकूल न होने कारण समुचित रूप से न हो सका। श्रमिक अत्यन्त निर्धन व कमजोर थे मालिक अत्यन्त शक्तिशाली थे जनता ऐसी बातों के प्रति उदासीन थी तथा सरकार की भी उनसे कोई सहानुभूति न थी।

परन्तु इनका तात्पर्य यह नहीं है कि औद्योगिक विकास के प्रारम्भ में श्रमिकों के हितों की ओर कोई ध्यान दिया ही नहीं गया। बरन् सामाजिक कार्यकर्ताओं जन उपायी व्यक्तियों तथा श्रमिक नेताओं द्वारा अनुप्यता का आधार लेकर इस ओर ध्यान प्रयत्न किए गए, परन्तु ये सब प्रयत्न अनुप्यता तथा धर्म की भावना से प्रेरित होकर ही किये गये थे। इनमें किसी प्रकार की सामूहिक शौराकारी न थी। सन् १८७२ में बंगाल के वी० सी० मजूमदार नामक एक राष्ट्रीयताक ने बम्बई नगर

में श्रमिकों के हित के लिए घाठ एगिन्सट्स स्थापित किए। सन् १८७८ में कसकटा में बड़ा ममाज के अन्तर्गत 'कर्मचारियों के मिशन' की स्थापना हुई, जिसने बर्से और नैतिकता सम्बन्धी उपदेश दिये तथा श्रमिकों व पिछड़ी जातियों के लिये एगिन्सट्स स्थापित किए। इसी समय पटसन के काम में लगे हुए श्रमिकों की शिक्षा तथा सामाजिक कल्याण के लिये श्री संसीपाद जनर्सी ने 'बड़ा नगर संस्थान' की नींव डाली।

यह बात महत्वपूर्ण है कि इस समय से ही श्रमिकों और मजदूरों में संघर्ष पैदा हो गया था। सन् १८७७ में नायपुर की ऐम्पस मिल में मजदूरों के प्रथम पर एक हड़ताल होने का विवरण मिलता है। सन् १८८२ और १८९० के मध्य में मद्रास और बम्बई में २३ हड़तालों का विवरण पाया जाता है।^१

सन् १८७३ में सोएजजी घापुरी बगामी जैसे कुछ बक-बपकारी व्यक्तियों ने श्रमिकों की दयनीय अवस्था की ओर सरकार का ध्यान आकषिप्त करने के लिए एक आन्दोलन किया जिसका उद्देश्य श्रमिकों (विशेषतया महिला व वाम श्रमिकों) की सुरक्षा के हेतु कानून बनवाना था। परन्तु यह आन्दोलन श्रमिक प्रभावपूर्ण नहीं सिद्ध हो सका। केवल सन् १८८१ का प्रथम 'फैक्टरी श्रमनियम' ही पाया हुआ। परन्तु इसके अन्तर्गत श्रमिकों को पूर्ण रूप से सुविधाएँ न मिली और बम्बई में श्रमिकों ने इसके विरुद्ध आवाज उठाई। इसी समय श्री नारायण मेहजी सोलान्हे जनता के सम्मुख घाट जिन्हें श्रमिकों का प्रथम नेता कहा जा सकता है। इन्होंने अपना जीवन एक मजदूर के रूप में आरम्भ किया था और जीवन भर वाम आन्दोलनों में सहयोग देते रहे। सन् १८८४ में इन्होंने बम्बई के फ़ैक्टरी-श्रमिकों का एक सम्मेलन आयोजित किया जिसमें एक निवेदन-पत्र^२ (Memorial) तयार किया गया। इस निवेदन-पत्र में सप्ताह में एक छुट्टी, काम के बंटों में कमी तथा अन्य सुविधाओं को दूर करने के पक्ष में प्रस्ताव थे। यह निवेदन-पत्र भारतीय फ़ैक्टरी आयोग के सम्मुख प्रस्तुत किया गया जिसने इस पर विचार भी किया परन्तु सरकार ने आयोग की रिपोर्ट पर कोई कार्यवाही न की। कारखानों के लिए कामून बमान के लिए आन्दोलन जारी रहे और श्रमिक श्री सोलान्हे के नेतृत्व में इसमें भाग लेते रहे। सन् १८८९ में यर्नर जनरल से एक निवेदन-पत्र द्वारा प्रार्थना की गई कि श्रमिकों को सुरक्षा प्रदान की जाए। अगस्त १८९० में बम्बई में एक बहुत बड़ी सभा हुई जिसमें १० हजार श्रमिकों ने भाग लिया और २ महिला श्रमिकों ने भाग ले भी लिया। इसी वर्ष श्रमिकों ने सप्ताह में एक छुट्टी के लिए प्रार्थना करते हुए एक निवेदन-पत्र बम्बई के मिल-मालिक संघ के सम्मुख प्रस्तुत किया। उनकी माँग घाघाकी से स्वीकार हो गई। इस सफलता से प्रोत्साहित होकर सन् १८९० में श्री सोलान्हे ने 'बम्बई मिल-मजदूर संघ' (Bombay Mill hands Association) नामक प्रथम

1. Palms Dutt India Today page 375

2. R. K. Das The Labour Movement in India.

धमिक संस्था की स्थापना की थीर एक धमिक पत्रिका भी निकाली जिसका नाम 'वीनबंदु' था। श्री लोसांगे का प्रभाव इस समय काफी बढ़ गया था और उनको १८९० के फ़ैक्टरी अधिनियम के सम्मुख गवाही देने के लिए बम्बई का प्रतिनिधि निर्वाचित किया गया। परन्तु यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि बम्बई मिल-मजदूर संघ कोई संगठित धमिक संघ न था। इसके सदस्यों की न तो कोई सूची थी न इसकी कोई निधि थी और न इसके कोई नियम थे। श्री लोसांगे को धमिक आन्दोलन का प्रयत्न नहीं कहा जा सकता क्योंकि धमिकों के हित के लिए तथा उनके लिए कानून बनवाने के लिए उन्होंने जो भी कार्य किए उनमें जन-सेवा की भावना ही धमिक प्रबल थी।

सन् १८९१ के फ़ैक्टरी अधिनियम के पास होने के छाम ही धमिक आन्दोलन का प्रबल प्रख्याप समाप्त होता है। इसके बाद केवल कुछ स्थानीय आन्दोलन हुए और कुछ नए संघ भी उत्पन्न हुए परन्तु ज्येष्ठ अकाल तथा धार्मिक मस्वी धादि के कारण इनकी प्रगति घटि सीमी रही। श्री बंगाली तथा श्री लोसांगे की मृत्यु के बाद आन्दोलन को नेताओं का अभाव अनुभव होने लगा। सन् १८९७ में यूरोपियन और एम्बो-इण्डियन रेलवे कर्मचारियों का एक संघ (Amalgamated Society of Railway Servants of India and Burma) 'भारत और बर्मा रेलवे कर्मचारी विभक्तित समिति' के नाम से स्थापित हुआ और इसको भारतीय कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत पञ्जीकृत करवाया गया। सन् १९२८ में इस संस्था का नाम (National Union of Railway Men) 'रेलवे कर्मचारियों का राष्ट्रीय संघ' हो गया। इस संस्था ने भारतीय धमिक आन्दोलन में कोई विशेष भाग नहीं लिया और इसका कार्यक्षेत्र मुख्यतः धमिकों के हित सम्बन्धी कार्यों तक ही सीमित रहा।

सन् १९०१ में बंगाल-विभाजन के समय धमिक आन्दोलन ने फिर सिर उठाया। इस विभाजन से राजनीति आन्दोलन आरम्भ हुआ और कुछ राजनीतिक नेताओं ने धमिकों का पक्ष लिया। स्वदेशी आन्दोलन जो इस समय आरम्भ हुआ का उनसे भी धमिकों की प्रवस्था सुधारने के प्रयत्नों में सहायता मिली। मन्दी के बाद जब व्यवसाय में कुछ पुनरुत्थान (Revival) हुआ तो धमिकों द्वारा धमिक मजदूरी की मांग बढ़ी। इसी समय बम्बई की मिलों में विद्युत्-शक्ति का जाने से काय के चर्चों में वृद्धि हो गई और सरकार के इस विचार के समर्थन में कि बयस्क पुनः धमिकों के काम के घटे कम होना चाहिए धमिकों ने आन्दोलन आरम्भ कर दिया। परिणामस्वरूप १९०३ और १९११ के बीच में हड़तालों की एक सहर सी घा गई। उदाहरणतः बम्बई की अनेक मिलों में और उत्तरी बंगाल रेलवे में अनेक हड़तालें हुईं। सबसे बड़ी हड़ताल थी जिसका को १९०८ में ६ वर्ष के कारावास विमर्श के विरोध में हुई। यह राजनीतिक हड़ताल बम्बई में ६ दिन तक चलती रही। इसी धमिकों के कुछ संकट भी बन गए; उदाहरणतः १९०३ में बनारस में मुद्रक-

संघ और १९०७ में बम्बई का डाक-कर्मचारी संघ। १९१० में बम्बई के श्रमिकों की दूसरी महत्वपूर्ण संस्था 'कामगार हितवर्द्धक संघ' का निर्माण हुआ। इस संस्था ने भी 'कामगार समाचार' नामक एक पत्र निकाला। इस संघ ने श्रमिकों के रहन-सहन की तथा काम करने की शर्तों में सुधार करने के लिए, उनके झगड़े निपटाने के लिए, उनके कार्यों के बन्दे कम करने के लिए तथा उन्हें दुर्घटना की सति-पुष्टि दिसाने के लिए अनेक सफल प्रयत्न किए और सरकार का प्रार्थना-पत्र दिए। १९११ के कैंक्टरी अधिनियम के पास होने के साथ-साथ श्रमिक आन्दोलन का दूसरा अध्याय समाप्त होता है।

इस समय तक श्रमिकों के जो भी संगठन बने वे एक निरन्तर संस्था के रूप में न थे। केवल किसी विशेष उद्देश्य या किसी विशेष कार्य की पूर्ति के लिए ही वे प्रास्थायी रूप से बनाए जाते थे। श्रमिक संघों का वास्तविक प्रारम्भ लड़ाई के उत्तरार्द्ध काल में हुआ जब कि अनेक कारणों वश श्रमिकों में असन्तोष की भावना तथा धरती का भय उत्पन्न हो गया था। असन्तोष की भावना श्रमिकों में लड़ाई से पहले भी थी परन्तु यह अभी तक प्रकट नहीं हो पाई थी क्योंकि श्रमिक अतिशय थकने से अशुशासन की कमी थी और उनका न कोई संगठन था और न कोई नेता। इसके अतिरिक्त उनमें बर्तमान सन्तोष तथा दासत्व की भावना भी थी तथा असन्तोष परिस्थितियों में वे पाँच सौट जात थे। अतः उनका असन्तोष बसा ही रहा। सन् १९१४-१८ की लड़ाई ने इन परिस्थितियों को बिलकुल बदल दिया। युद्ध के कारण सभी में विशेषकर औद्योगिक श्रमिकों में जागृति पा गई। युद्ध से सौट हुए श्रमिकों ने दूसरे देशों के श्रमिकों की असीम शक्ति का वर्णन किया। किसी शक्ति से अन्य देशों में भी शक्ति की एक लहर सी पैदा हो गई थी और भारतीय श्रमिक भी इससे प्रभावित हुए बिना न रह सके थे। नवीन विचारों तथा नयी आशाओं का संचार हुआ। असन्तोष तथा विरोध करने की भावना अब दबी न रह सकी। इसके अतिरिक्त श्रमिकों में वृद्धि होने के कारण निर्वाह-साधन बढ़ गया था। परन्तु मजदूरी में उतनी वृद्धि नहीं हुई थी। लड़ाई के दिनों में उद्योगपतियों ने बहुत लाभ उठाना था और श्रमिक भी उस लाभ में सश्रम भाग प्राप्त करना चाहते थे। देश में फैले हुए राजनीतिक असन्तोष के कारण भी श्रमिकों में अपने अधिकारों के प्रति सजगता पा गई थी। अतिस और मुस्लिम सीमा में स्वराज्य पाने के लिए एकता हो गई थी। महात्मा गांधी के 'स्वराज्य आन्दोलन' तथा सरकार द्वारा किए गए अनेक अत्याचार जैसे अशियावाला बाप की दुर्घटना 'मागत लॉ', 'रॉलिंग अधिनियम' तथा करों में वृद्धि आदि, से देश में एक असन्तोष तथा अस्थिरता की स्थिति पा गई थी। इसके अतिरिक्त 'अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ' (International Labour Organisation) की स्थापना होने से भी श्रमिकों में आत्मसम्मान की भावना उत्पन्न हो गई थी और उन्हें यह अधिकार पिस गया था कि 'मजदूर' के श्रमिक सम्मेलनों में अपना एक प्रतिनिधि भेज सकें। अतः स्पष्ट था कि अपने

घमिष्ठारों तथा धारमसम्मान के प्रति सज्जम हो जाने के बाद प्रथम धमिक उन पुरानी परम्पराओं में बँधे हुए घमिष्ठारों को सहन नहीं कर सकत थे। नवीन घमिष्ठकारी विचारों के प्रभाव के कारण उनमें नई सामाजिक व राजनीतिक चेतना प्राप्ती थी। परिणामस्वरूप यह विराट व असन्तोष हड़तालों के रूप में प्रकट हुआ जो १९१८ में प्रारम्भ हुई थीर १९१९ व १९२० तक समस्त देश में फैल गई। १९१८ में एक बहुत बड़ी हड़ताल बम्बई की कपड़ा मिलों में धारम्भ हुई थीर जनवरी १९१९ तक १०१०० धमिक इस हड़ताल में सम्मिलित हो गये थे। १९१९ में रनिट घमि नियम के विरुद्ध जो हड़ताल हुई उससे यह स्पष्ट हो गया कि धमिक राजनतिक घमिष्ठोमन में भाव लेने में पीछे नहीं रहे थे। सन् १९१९ के अन्त में थीर १९२० के धारम्भ में हड़ताल-सहुर ने एक विराट रूप धारण कर लिया था। १९२० के प्रथम ६ महीनों में २०० हड़तालें हुई जिनमें लगभग ११ लाख धमिकों ने भाग लिया^१। घमिष्ठारिक धर्म संघों के विकास का इतिहास —

इन कथकों की परिस्थितियों के अन्तर्गत ही भारत में धर्म कर्मों का जन्म हुआ। मुख्य उद्योग-व्यवसाय के थीर विभिन्न क्षेत्रों में जो धमिक सब हैं उनका विकास इसी समय में प्रारम्भ हुआ यद्यपि परिस्थितियोंके धारम्भ में धमिक संगठन निरंतर रूप से चामू न हो सका था।

प्रथम धमिक धर्म के निर्माण का ध्येय थी थी थी बाडिया को है जिम्हाने थीमती घमिष्ठ व साध थी बाध किया था। श्री बाडिया ने सन् १९१८ में मद्रास के 'कुमारी' नामक स्वान के कपड़ा उद्योग कर्मियों के धमिकों को संगठित किया। एक ही धर्म व धमिक कर्मों की सरया बार तक पहुँच गई जिनमें बीस हजार सदस्य व। यह बड़ी समय था जबकि सम्पूर्ण देश में धमिक धर्मों की स्थापना के प्रयत्न किये जा रहे थे। इस बात का भी पता चलता है कि सन् १९१७ में घमिष्ठबाबा के सूची कपड़ा मिलों के धमिकों ने कुमारी धनुमुण्या बहिन^२ के नेतृत्व में एक संघ बनाया। कुमारी धनुमुण्या बहिन ने घमिष्ठबाबा के धमिकों की हड़ताल का भी नेतृत्व किया। परन्तु धमिक संगठन के सिधे जा विविध प्रकार प्रथम प्रयास हुआ वह थी बाडिया ही का था। इस धर्म की सरस्यता नियमित थी जिसके सिधे मुक्त भी लेना पड़ता था। दूसरे उद्योग क्षेत्रों में भी इसका धनुकरण किया थीर स्थानीय धमिकों के संगठन बनने लगे। १९१९ व १९२१ के बीच में अनेक धर्मों की स्थापना हुई। थी मिलर के नेतृत्व में पंजाब के रेश कर्मचारियों का एक धमिष्ठकारी संघ बना। महारामा वीथी की प्रेरणा ने घमिष्ठबाबा में कई व्यवसायिक धर्मों की स्थापना हुई जैसे काठने वालों का धर्म थीर बुनेने वालों का धर्म धारि। ये सब सब एक संगम में संयुक्त हो गये जिसका नाम घमिष्ठबाबा कपड़ा मिल मजदूर परिषद् (Ahmedabad Textile Labour Association) रखा गया। यह संगम देश के धमिष्ठारिक उद्योग धर्मों का

^१ Palme Dutt : India Today pages 377 - 78

^२ वरुण धमिक संघ के अन्त में धमिष्ठारिक संघों की धमिष्ठारी थी।

एक उदाहरण है और यह बग धान्ति के धाधार पर स्थापित है और धाव भी इसका स्थाव दूसरे सर्षों से कुछ ऊंचे स्तर पर है ।

प्रारम्भ में व संघ धधिकतर हड़ताल समितियों की भांति चामू रहे । जैसे ही उनकी भांगे पूरी हो जाती थी संघ भी समाप्त हो जाते थे । ऐसे संघ हड़ताल की पूर्ब सूचना कम देते थे और धपनी सिकायतों को ठीक से प्रस्तुत भी न कर पाते थे । कई बार ऐसा होता था कि उनके कायों व बातों में हड़ताल न होती थी और बहुधा वे ऐसी भांगे प्रस्तुत कर देते थे जिनका पूरा करना कठिन होता था । इसके धतिरिक्त वे संघ एक दूसरे से पूयक भी रहते थे और इनमें एकता नहीं थी । देश में इस समय कोई ऐसा कानून भी न था जिसके धन्तर्गत धमिक संघों की मान्यता प्राप्त होती । मामिकों का ध्यवहार भी संघों के प्रति विरोधपूर्ण था । मामिकों और संघों में सदा धीचातानी चमती रहती थी । इस धीचातानी के परिणामस्वरूप सन् १९२१ में एक बड़ा ध्गड़ा हुआ जबकि मद्रास की बकिधम मिसों में एक तालाबन्धी के बाह हड़ताल धोपित कर दी गई । मामिकों ने हाईकोर्ट से मद्रास धमिक संघ के विरुद्ध मजदूरों को हड़ताल से लिये बहकाने के धारोप में एक ध्यादेश (Injunction) प्राप्त कर लिया । संघ पर इस धमियोग के परिणामस्वरूप ७०० पाँड का जुर्माना हुआ । धी बाधिया ने विरुध होकर इस दार्ठ पर कि मिस वाले संघ से जुर्माना बमूस न करें धमिक संघ धान्दोलन से धपना सम्बध तोड़ दिया । इस घटना से यह विधित हो गया कि धम धान्दोलन को समाप्त करने क लिय मामिका के हाथ में एक धक्तिस्वामी धस्व था और धमिक नेताधों ने यह धनुमध किया कि धमिक संघों के कायों को नियमानुसार करने पर भी उन पर मुकदमा चमाया जा सकता था । सन् १९२१ में धी एम एम बोधी ने इस बात का प्रचरण किया कि एक धमिक मध कानून बनाया जाए और विधान परिषद् में उन्हींने एक विधेयक (Bill) प्रस्तुत किया परन्तु यह उसे पास कराने में सफल न हो सके ।

यही समय था जबकि धम संघों व सामन्स्य (Coordination) स्थापित करने के प्रयत्न धारम्भ हुए । धन्तर्राष्ट्रीय धम संघटन के धाधिक सम्मेलनों में धमिकों के प्रतिनिधियों के चुनाव की धाबधयकता न भी इस धान्दोलन को प्रोत्साहन दिया । धल्लिस भारतीय ट्रेड यूनियन कांघ्रेस की सन् १९२० में इसी उद्दध से स्थापना हुई । यह कांघस पहिली धल्लिस भारतीय संस्था थी जिसन यह स्पष्ट कर दिया कि सम्पूर्ण देश में धमजीवियों का ध्येय एक ही है । परन्तु यह बात धर्षपूरस है कि इस समय धम धान्दोलन व पहिला मध राष्ट्रीय कांघ्रेस के मताधों ने उठाया । यह इस बात से स्पष्ट होता है कि ट्रेड यूनियन कांघ्रेस क प्रथम धधिबधन के मभापति कांघ्रेस के धनुमधी नेता लाला साजपतराय थे और स्वागत समिति क धध्यग दीवान चमनलाल थे । कर्नस बंजबुध बंन जो इंसर्ज के धम नेता व इस धधिवेशन में उपस्थित थे । बार में इसक मभापति देसबन्धु चित्तरंजन राम व उवाहरलाल बेहक धी मुभापचन्द्र धोम और धी बी बी गिरि भी हुए । राष्ट्रीय कांघ्रेस ने भी

श्रमिकों को नवदृष्टि करन और उनके आन्दोलन को सन्धिध्यासी करन के लिये एक श्रम उप-समिति की स्थापना की। इन सब बातों से स्पष्ट होता है कि श्रम आन्दोलन श्रमिकों की बेचन प्रतिदिन की आर्थिक समस्याओं तक ही सीमित नहीं रहा परन्तु इसमें राजनैतिक रंग भी आ गया। प्रथम में चाय बामान के श्रमिकों की जो इस समय हड़ताल हुई वह इन राजनैतिक रंग का ही झोठक है। परन्तु इन बात में भी कोई गन्दह नहीं कि ट्रेड यूनियन काँग्रेस ने श्रमिकों की समस्याओं और उनकी आवश्यकताओं के महत्व पर प्रकाश डालने में बड़ा भारी कार्य किया। सन् १९२४ में 'शुभार समिति (Reforms Committee)' के सामने इस काँग्रेस ने इस बात की मांग रखी कि बिहार सभा में श्रमजीवियों के श्रमिक सदस्य हों। इसने कई प्रस्तावों द्वारा श्रमिकों की दुर्दशा की ओर सरकार का ध्यान आकषिप्त किया और कई कठोर कानून जैसे 'श्रमिक संविदा बंग अधिनियम' को रद्द कराया।

इसी समय सन् १९२२ में रेलवे कर्मचारियों के प्रथम भारतीय संघ की स्थापना हुई जिसमें रेलवे कर्मचारियों के सभी संघ सम्मिलित हो गये। श्रमिकों के और कई मण्डल जैसे बयान के श्रमिक संघों का संघम और बम्बई का केन्द्रीय श्रमिक बाहें प्रावि की स्थापना भी इसी समय हुई।

परन्तु इस समय श्रम आन्दोलन में अग्रगण्य करने की प्रकृति कुछ श्रमिक साधुम हात सभा और साम्यवादी लोग (Communists) श्रमिकों में दिखाई देने लगे। इस साम्यवादिता की ओर सरकार का ध्यान सबसे पहिले कानपुर में बना जबकि सन् १९२४ में कुछ साम्यवादी श्रमिकों को पदमन के आरोप में बन्दी बना लिया गया और उन पर मुकदमा चलाया गया और भिन्न भिन्न शर्तों के लिए उन्हें बंदिठ किया गया। सरकार ने इन नई प्रकृति को रोकने के लिये कई कदम उठाये। सन् १९२१ में बयान में और १९२२ में बम्बई में औद्योगिक घणालि और बिहार की समस्याओं पर सुभाष चने के लिये समितिमा नियुक्त की गई। बम्बई और मद्रास में इसी समय श्रम विभागा की भी स्थापना हुई। एक श्रमिक सब विधेयक भी तयार किया गया और लोगों की राय मन के लिये परिचासित किया गया जो सन् १९२६ में एकीकृत होकर अधिनियम बना। सन् १९२६ का यह अधिनियम श्रमिक संघ आन्दोलन के 'निदान' में एक पर्याप्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत श्रमिक सभा को वैधानिक मान्यता प्राप्त हो गई। प्रारम्भ में संघों ने रजिस्टर कराने में बहुत उगाह नहीं कियाया क्योंकि बकिचम पिल की कटना के बाद संघिणी संघ पर अधियाग नहीं चलाया गया था और संघ इस बात पर तयार नहीं थे कि रजिस्ट्रेशन का लर्वा उठार्ये और बाधिक व्यौर देने की भी अनुबिधा धान आर में। परन्तु ऐसी भावना अधिक दिन न टिक सकी क्योंकि यदि कोई श्रमिक संघ रजिस्ट्रेशन न हाता था तो श्रमिकों को उनको मान्यता न देने का बहाना मिल जाता था। पंजीकृत श्रमिक संघों की संख्या अब तीव्र गति से बढ़ने लगी।

सन् १९२६ के बाद में श्रमिक आन्दोलनों का नेतृत्व साम्यवादीयों के हाथों में

जता गया। ये साम्यवादी श्रमिक संघ आन्दोलन की भाँव में अपना कार्य करते रहे। दूसरे देशों के कुछ साम्यवादी जैसे ब्रिटिश साम्यवादी दल के नेता 'स्ट्रेट एंड ब्रॉडसे' १९२७ में कानपुर ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अधिवेशन में भाग लेते हुए बैठे गए। इन साम्यवादियों ने सन् १९२७ में एक मजदूर और किसान पार्टी की भी स्थापना की जिसका उद्देश्य यह था कि नये श्रमिक संघों की स्थापना हो और जो संघ बन चुके व उनको सुधारवादियों के नियन्त्रण से निकाल लिया जाये। बम्बई में एक संघ 'गिरनी कामगार संघ' के नाम से नाम किया गया जिसकी सदस्यता १४०००० तक पहुँच गई। इसने मजदूर जनता भी एकत्रित की और सन् १९२८ में एक इकठ्ठा का एक माह तक चला। इस सफलता से प्रोत्साहित होकर साम्यवादियों ने अपना कार्य बंगाल तक फैला दिया और कमकता में एक प्रचार केन्द्र भी खोला। सन् १९२७ में श्री सक्ताठनासा के जाने पर ये साम्यवादी एक पृथक दल के रूप में सामने आये जिसके कार्य करने के दम कार्यक्रम तथा विचार बनाने ही थे। परिणाम यह हुआ कि असन्तुष्ट और इकठ्ठाओं का युग बंग में स्याप्त हो गया। कई इकठ्ठाओं बम्बई की सूती कपड़ा मिलों में ठेक कारखानों में और बी० आई० पी० रेलवे धारि में हुई। सन् १९२८ में मद्रिया ये साम्यवादियों ने इस बात का पूरा प्रयत्न किया कि अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस पर अधिकार जमा में। सरकार को उनके बढ़ते हुए प्रभाव से चिन्ता हुई और सरकार ने अपनी इस शोहरी नीति को अपनाया कि एक ओर तो कठोरता से बर्बात नाम और दूसरी ओर कुछ सुधार का बचन दिया जाय। कठोरता की नीति का परिणाम तो यह हुआ कि श्रमिक वर्ग में जो प्रमुख साम्यवादी नेता थे उन्हें बन्दी बना लिया गया और उन पर मुकदमा चलाया गया। यह मुकदमा संसार के बहुत बड़े और शक्तिशाली मुकदमों में से एक था। यह मेरठ में चार बयों तक चलता रहा और 'मेरठ दामन' (Meerut Trial) के नाम से मशहूर हुआ। नेताओं को मित्र मित्र शक्ति के लिए इकट्ठा किया गया। सरकार के सुधार के बचन के परिणामस्वरूप रॉयल कम आयोग की सन् १९२८ में नियुक्ति हुई जिसका नाम 'इकठ्ठे कमीशन' भी था। सन् १९२९ में बम्बई में बम्बरवालों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए एक श्रम समिति की स्थापना हुई। इस समिति ने अखिल भारतीय श्रमिकों का बोध 'गिरनी कामगार संघ' पर लगाया तथा साम्यवादियों के विरुद्ध कठिन कार्यवाही करने के सुझाव दिये। पहला 'श्रमिकों के विवाद अधिनियम' (Trade Disputes Act) १९२९ में पारित हुआ। इसके पश्चात् साम्यवादियों और सुधारवादियों में अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस पर अपना आधिपत्य जमाने के लिये खींचतानी प्रारम्भ हुई। संयमी (Moderate) श्रमिक संघों को साम्यवादियों के प्रभाव से घंटा उत्पन्न हो गई थी। ट्रेड यूनियन कांग्रेस के सबसे अधिकारियों में जो नागपुर में १९२९ में पं० जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में हुआ आमूल परिवर्तन चाहने वालों (Radicals) ने कुछ प्रस्ताव

पाम कर सिधे जिनमें से मुख्य प्रस्ताव रॉयल धर्म बायोग का बहिष्कार करने और ट्रेड यूनियन काँग्रेस को मॉस्को की 'ठासरी इन्टरनेशनल' से सम्बन्ध कराने के हेतु थे। इसका परिणाम यह हुआ कि संयमी वल श्री एन० एम० जोशी के नेतृत्व में काँग्रेस से वृत्त हो गया और अपनी अलग संस्था बना श्री जिसका नाम उन्होंने 'अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन फेडरेशन' रखा। ट्रेड यूनियन काँग्रेस को जिसके नये अध्यक्ष श्री सुधापत्तन बोस चुने पये के अपने कार्य में अब कठिनाई प्रतीत होने लगी। रेल कर्मचारियों का जो संगम था वह इन भयों से अलग हो रहा। साम्यवादी इतने सीधे विभाजन के सिधे तैयार न थे। उनका धारणा में मत्भेद हो गया। कुछ लोग तो मॉस्को की ठासरी इन्टरनेशनल के बताये हुये नियमों पर चलने के वल में वे और कुछ लोग श्री एम० एम० राम के वल में वे जो इस समय भारत में गुप्त रूप से कार्यवाहियाँ कर रहे थे। श्री राम की गिरफ्तारी तथा सन् १९३१ के महाराष्ट्र गान्धी के आत्मा उत्सव आन्दोलन के कारण संगठित रूप से कोई कार्यवाही करना कठिन हो गया। परिणामस्वरूप सन् १९३१ में कमकता में ट्रेड यूनियन काँग्रेस परम्पत घोर घोर मड़बड़ के बाद दो घोर लणों में विभाजित हो गई। और कुछ लोगों ने भी इसपक्ष और श्री रण्डिवे के नेतृत्व में एक और संस्था की स्थापना की जिसका नाम अखिल भारतीय रैड ट्रेड यूनियन काँग्रेस रला।

इसके पश्चात् संघों ने राष्ट्रीय काँग्रेस का मंठल फिर से प्रकट होने लमा। सन् १९३१ में समझौते के प्रयत्न आरम्भ हुए और रेल कर्मचारियों के संगम के पदाधिकारियों के प्रयत्नस्वरूप एक 'धर्मिक संघ एकता समिति' की स्थापना हुई जिसने एकता प्राप्त के लिये एक कार्यक्रम प्रस्तुत किया। सन् १९३४ संघ हनुहरनाथ शास्त्री की अध्यक्षता में जब ट्रेड यूनियन काँग्रेस का बापिकोत्सव हुआ तब उसमें साम्य कारियों से समझौता हो गया और रैड ट्रेड यूनियन काँग्रेस को समाप्त कर दिया गया। सन् १९३८ में श्री बी० श्री० गिरि के प्रयत्नस्वरूप ट्रेड यूनियन फेडरेशन की ट्रेड यूनियन काँग्रेस में सम्मिलित हो गई। इस प्रकार सम्मिलित हुई अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस का बापक अधिवेशन सन् १९४० में बड़े समारोह के साथ नागपुर में हुआ। इसके समापति डा. सुरेण बनर्जी और जनरल मेकनी श्री एन० एम० जोशी व) विभाजन नागपुर में ही हुआ का और नागपुर में ही फिर सब एक हो गये। इस बात से पहले के लिए छि पहिले जैसे विचारों और विभाजन का अन्तर न थाये यह निर्णय किया गया कि कोई भी राजनैतिक प्रस्ताव तब तक पाम नहीं होगा जब तक कि वह उपस्थित सदस्यों की सीधे बीघाई संख्या को माय न हो।

इसी समय कमकता में बंगाल धर्म संघ की स्थापना हुई और सन् १९३४ में श्री जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में पटना में समाजकारी धर्म का जन्म हुआ। 'हिन्दुस्थान मजदूर मेक संघ' की भी एक धर्म समारोहकार समिति के रूप में स्थापना हुई जिनका सम्बन्ध 'महानाबाद कपड़ा मिल मजदूर परिषद्' के बा और जिसका उद्देश्य धर्म आन्दोलन को वीभीवार के सिद्धान्तों जैसे अहिंसा संस्थाई तथा रण

धार्मिक पर चलाया था।

परन्तु यह एकता धार्मिक दिनों में बस पाई। सन् १९३२ में जब लड़ाई प्रारम्भ हुई तब फिर बिच्छेद ही गया। काँग्रेसी नेता सब बेमन चले गए और धार्मिक भारतीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस में साम्यवाधियों का प्रभाव बढ़ गया। इस काँग्रेस ने प्रारम्भ में तो युद्ध के प्रति लट्ठबट्ठा को अपनाया परन्तु कुछ लोग थी एम० एन० राय के मन्तव्य में लड़ाई के प्रयत्नों में पूरा पूरा सहयोग देने के पक्ष में थे। श्री एम० एन० राय और उनके अनुयायियों ने अलग सम्मेलन बना ली जिसका नाम उन्होंने 'इण्डियन फौडरेसन प्रॉफ सेक्टर' रखा। इस समय का सरकार से धार्मिक सहायता मिलने के कारण जनता का पूर्ण समर्थन प्राप्त न हो सका।

इस प्रकार लड़ाई के दिनों में दो धार्मिक भारतीय धर्मिक संघ संस्थाएँ थीं। एक तो 'धार्मिक भारतीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस' और दूसरी 'इण्डियन फौडरेसन प्रॉफ सेक्टर'। १९४४ में भारत सरकार ने इस बात को मान लिया कि इन दोनों ही संस्थाओं को बारी बारी से अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में प्रतिनिधित्व करने का अधिकार दिया जाय। इसीसमये १९४४ में फौडरेसन ने और १९४५ में ट्रेड यूनियन काँग्रेस से प्रतिनिधि भेजने के लिए परामर्श लिया गया। १९४६ में सरकार ने इस बात की जाँच की कि इन दोनों संस्थाओं में स कौनसी संस्था धर्मिकों का धार्मिक प्रतिनिधित्व करती थी और इस बात की घोषणा की गई कि धार्मिक भारतीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस का प्रतिनिधित्व धार्मिक था।

सन् १९४७ में फिर एक बिभाजन हो गया। युद्ध के पश्चात् धार्मिक पक्षान्ति की एक तीव्र महर ही सारे देश में फैल गई। जब काँग्रेस ने वास्तव भारत संघासा तो उसने देखा कि धर्मिकों पर साम्यवाधियों का धार्मिक प्रभाव है। प्रारम्भ में काँग्रेस ने धर्म की समस्याओं को हिन्दुस्तान मजदूर सेवक संघ के द्वारा हल करने की चेष्टा की तथा धार्मिक भारतीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस पर प्रभाव डालने का प्रयत्न किया। परन्तु अन्त में मई १९४७ में राष्ट्रीय काँग्रेस के प्रमुख नेताओं ने एक सम्मेलन में जिसमें हिन्दुस्तान मजदूर सेवक संघ के अध्यक्ष सरदार पटेल और धार्मिक श्री सुसज्जातीलाल मन्वा ने भी भाग लिया एक पृथक धर्मिक संगम बनाने का निर्णय किया। परिणामस्वरूप भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस (Indian National Trade Union Congress) की स्थापना हुई। इस संस्था ने बन्दी ही और पकड़ लिया। सन् १९४६ और १९४७ में अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में प्रतिनिधि भेजने के लिए धार्मिक भारतीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस को नियमित किया गया था। परन्तु दिसम्बर १९४७ में भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस ने भारत में संघठित धर्मिकों का धार्मिक प्रतिनिधित्व करने वाली संस्था होने का दावा किया। सरकार ने १९४८ में इस बात की सरकारी जाँच कराई। इससे यह बात हुआ कि धार्मिक भारतीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस की सदस्य-संख्या = १५,०११ थी और भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस की सदस्य-संख्या २७३ १७६ थी। इस प्रकार सरकार ने इस बात को मान

लिमा कि भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस ही संघटित श्रमिकों का अधिक प्रतिनिधित्व करती थी। तब से हमी संस्था को राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में प्रतिनिधित्व दिया जाता रहा है। १९४८ में घटित भारतीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस ने देश में सबसे बड़ी सबस्युगा वाली श्रमिक संस्था होने का दावा किया था। परन्तु सरकार ने यह नहीं माना क्योंकि अन्तिम भारतीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस द्वारा विदे पये प्राकड़े ठीक नहीं थे। यह बात एक मुख्य धन कमिश्नर की जाँच द्वारा प्रमाँनित हो गई थी।

दिसम्बर १९४८ में फिर एक विभाजन हुआ। समाजवादी प्रत्यक्ष हो पय और उन्हींने 'हिन्द मजदूर समा' नाम से अपना अलग मजदूरों का संघटन बनाया। सी एम० एन० राम की जो भारतीय फ़ेडरेशन ऑफ़ मेबर थी वह इसी में विलीन हो गई। श्रमिकों का एक और संघटन मई १९४९ में प्राकेश्वर के० टी० शाह तथा सी मुण्डल कान्ति बाम ने बनाया जिसका नाम संयुक्त ट्रेड यूनियन काँग्रेस रखा गया (United Trade Union Congress)। अखिल भारतीय रेलवे कर्मचारी संघम में समाजवादियों का अधिकार स्थापित हो गया। उसके समापति सी अयप्रकाश नाटमण हुए। सी हरिहरनाथ साम्बी की अध्यक्षता में रेलवे कर्मचारियों का एक और संघम बना जिसका नाम भारतीय राष्ट्रीय रेलवे कर्मचारी संघम रखा गया।

इस प्रकार आजकल चार केन्द्रीय श्रमिक संघम हैं। अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस पर तो साम्यवादियों का अधिकार है और यह संस्था उन्हीं की विचारपाठमों पर विस्थात रहती है। भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन काँग्रेस पर राष्ट्रीय काँग्रेस का प्रभाव है और इस संस्था का विस्थात इस बात पर है कि अगलों का अन्तिमपुत्रक निबटाया किया जाय। इस संस्था ने पंचवर्षीय आयोजनामों के लागू होने में सरकार को पूर्ण सहयोग देने का भी निर्णय किया है। हिन्द मजदूर समा समाजवादियों के प्रभाव में है और उद्योग-धर्मों के राष्ट्रीयकरण में विस्थात रहती है। इस समय यह प्रजा समाजवादी बल तथा समाजवादी बल दोनों से ही प्रभावित है। संयुक्त ट्रेड यूनियन काँग्रेस राजनैतिक दलधनियों से अलग रहती है और इसका मुख्य साम्यवादिता की धार अधिक है। इसमें अखिलकारी समाजवादी इस जैसी संस्थाओं का प्रभाव अधिक है। इन चार संघमों के अतिरिक्त कुछ अखिल भारतीय संघम भी हैं जैसे रेल डाक और तार विभागों के कर्मचारियों के संघम आदि। १९४९ में ऐसे संघमों की संख्या ७२ थी। रेलवे श्रमिकों की दो मुख्य संस्थाएं अर्थात् अखिल भारतीय रेलवे कर्मचारी संघम और भारतीय राष्ट्रीय रेलवे कर्मचारी संघम अक्टूबर १९४३ में अलग में संबंठित हो गई और एक नई अखिल भारतीय संस्था बना सी जिसका नाम भारतीय रेलवे कर्मचारियों का राष्ट्रीय संघम रखा गया। परन्तु इनकी यह एकरा अधिक दिनों नहीं चल सकी और अखिल भारतीय रेलवे कर्मचारी संघम वृद्ध हो गई परन्तु नवम्बर १९४७ में इनने भारतीय राष्ट्रीय रेलवे कर्मचारी संघम से फिर संबंठित हो जाने का निर्णय किया। किन्तु यह एकठा अमी तक नहीं था

पाई है। बाक और तार निचाणों के कर्मचारियों के संघ भी एक ही सस्था में एकत्रित हो जाने के लिये प्रयत्न करते रहे हैं।

श्रमिक संघ सम्बन्धी धाँकड़ें -

पंजीकृत श्रमिक संघों के धाँकड़ों में जो प्रति वर्ष वृद्धि होती रही है वह निम्नलिखित सूची से स्पष्ट हो जायगी -

पंजीकृत श्रमिक संघ और उनकी संख्या

वर्ष	रजिस्टर्ड संघों की संख्या	श्री वासुदेव संघों की संख्या	श्री वासुदेव संघों की सम्पूर्ण संख्या			श्री वासुदेव संघों की संख्या	श्री वासुदेव संघों की संख्या
			पुरुष	महिलाएँ	योग		
२७-२८	२६	२८	६६,४४१	१,१६८	१००,६१९	३,४६३	१२
२८-२९	१७०	१४७	२,३२,२७६	४,०६	२,३७,३६६	१,६१३	२१
२९-३०	६९७	४३	४,६२,३२६	१८,६१२	४,८१,९३८	१,१९६	३६
३०-३१	१,८७	३८३	८,२३,४६१	३८,४७०	८,६१,९३१	१,४८	४३
३१-३२	२,६३६	१,६२८	१३,६०,६१	१,०२,२६६	१४,६२,८७६	१,०२१	६२
३२-३३	३,४२२	१,६१६	१६,८८,८८७	१,१६,३६३	१८,०५,२५०	१,४६	६६
३३-३४	३,७६६	२,००२	१९,४८,६६६	१,०६,४२४	१९,५५,०९०	८७७	६९
३४-३५	४,६२३	२,३३६	२८,४६,६६२	१,३६,२३७	२९,८२,९०१	७८१	७८
३५-३६	६,६३४	२,७१८	३६,३६,२३३	१,३६,३६७	३८,०२,६०३	७७२	७३
३६-३७	६,०२६	३,२६३	३६,२३,४४३	१,७६,४७६	३८,००,९१९	६४१	८४
३७-३८	६,६३८	३,३४३	३६,४०,४२३	२,२६,२८७	३८,६६,७१०	६१२	९०
३८-३९	८,०६४	४,००६	४०,३४,१६२	२,४०,०४३	४२,७४,२०५	३६८	९०
३९-४०	८,७३३	४,३६४	४०,६१,३३७	२,८०,१०३	४३,४१,४४०	३४०	९१
४०-४१	१०,०४३	४,३२०	४६,८१,८३८	३,३१,८८२	४८,१३,७२०	३४६	९२
४१-४२	१०,२२८	६,०६०	४२,३४,७६४	३,६२,३३४	४६,४७,१४८	६०४	९०
४२-४३	४,६२६	२,७६१	१६,३६,४२०	१,२६,३२७	१७,६८,७४७	६४	७३

१९३६-३७ के धाँकड़े सब राज्यों से प्राप्त हुए धाँकड़ों पर आधारित नहीं हैं क्योंकि कई राज्यों से सूचना नहीं मिल पाई थी। १९३८-३९ में विभिन्न राज्यों में संघों की संख्या इस प्रकार थी। आन्ध्र-१८७ असम-१३७ बिहार-१६३, बम्बई-१७२४ केरल-१३४६, मध्य प्रदेश-३२० मराठ-६४६, मैसूर-४०३ उड़ीसा-१३६, बंगाल-४६६, राजस्थान-प्राप्त नहीं उत्तर प्रदेश-१,०११, पश्चिमी बंगाल-१,६६७ देहली - ३१६, हिमाचल प्रदेश-१२, त्रिपुरा-३० सम्भ्रमान व निकोबार द्वीप-६, योग-१०,२२८।

1 Indian Labour Year Books, Indian Labour Journals and Annual Review of Activities, Department of Labour, U P

विभिन्न केन्द्रीय धन-संस्थाओं से सम्बन्धित संघों की संख्या और उनकी सदस्यता निम्नलिखित है —

संस्था	सम्बन्धित संघों की संख्या			सदस्यता		
	१९२७	१९२८	१९२९	१९२७	१९२८	१९२९
भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड युनियन कॉन्ग्रेस	६७२	७७२	८८६	६,३४,६८२	६,१०,२२१	६,०२,९७०
पश्चिम भारतीय ट्रेड युनियन कॉन्ग्रेस	प्राप्त नहीं	८०७	८१४	प्राप्त नहीं	२,३७,२६७	२,७६,६३३
हिन्दू मजदूर समाज	१३८	१४१	११२	२,३३,९९०	१,९२,९४२	२,४१,९३३
संयुक्त ट्रेड युनियन कॉन्ग्रेस	प्राप्त नहीं	१८२	१७२	प्राप्त नहीं	८२,००१	२,९२,९३३
योग	—	१,८६७	१,९८७	—	१७,२२,७६१	१८,२३,६३३

संघों की आय तथा व्यय —

सन् १९२८-२९ में मासिकों के संघों की आय १३,२६,१३१ रुपये और व्यय १२,८३,६११ रुपये था। धार्मिक संघों की आय १,२४,९१८ रुपये और व्यय १,१६,२२१ रुपये था। धार्मिक संघों की आय के मुख्य साधन सदस्यों के बनाये गये पत्रिकाओं की बिक्री विशेष पर व्याज तथा अन्य विविध मर्चे थीं। ७१,२४ प्रतिशत आय तो केवल सदस्यों के बन्दे से ही थी। व्यय की मुख्य मर्चे इस प्रकार थीं — कार्यालय सम्बन्धी व्यय कर्मचारियों का वेतन हिमाज बाँच का व्यय कानूनी कार्यों का व्यय हड़ताल और भयङ्गों का व्यय सदस्यों को आवश्यक सामान वर सहायता पत्रिकाओं की छपाई, विविध मर्चे आदि। व्यय का २५,१२ प्रतिशत तो केवल कार्यालय सम्बन्धी कार्यों पर खर्च हो जाता है तथा ४०,६१ प्रतिशत व्यय विविध मर्चे पर होता है।

धार्मिक संघ विधायन —

केवल भारतीय धार्मिक संघ अधिनियम १९२६ में बना जो १ जून १९२७ से लागू हुआ। १९४७ तक इस अधिनियम में कोई विधेय परिवर्तन नहीं हुआ केवल १९२८ व १९४२ में कुछ साधारण से परिवर्तन किए गए थे। १९४७ के संशोधित अधिनियम के यह वैधानिक उपबन्ध बनाया गया था कि मासिकों के लिये वह धार्मिक है कि वह रजिस्टर्ड संघों को लागूता है। इस संशोधित अधिनियम में एक विधेय

बाद यह भी थी कि रजिस्टर्ड श्रमिक संघों के कुछ कार्य और मासिकों के कुछ कार्यों को अनुचित बोधित कर दिया गया था। परन्तु १९४७ के इस संशोधित अधिनियम की बाढ़ों लागू नहीं की गईं। १९६० में इस अधिनियम में फिर संशोधन किया गया जिसे लागू कर दिया गया है। इस समय अंसा कि अधिनियम लागू है उसने अनुसार उसकी मुख्य बाढ़ों नम्मासिधित हैं —

जहाँ तक रजिस्ट्री कराने का सम्बन्ध है किसी भी श्रमिक संघ के कोई से भी सात या अधिक सदस्य संघ की रजिस्ट्र कराने के लिये रजिस्ट्रार के पास आवेदन पत्र दे सकते हैं। इस रजिस्ट्रार की इसी अधिनियम के अन्तर्गत नियुक्ति होती है। यदि ये सदस्य और संघ अधिनियम के सख ६ में दी हुई धर्तों को पूर्ण करते हैं तो उनको रजिस्ट्रेशन का प्रमाण-पत्र मिला जाता है। कुछ पदाधिकारियों (Office Bearers) में से कम से कम प्राची सदस्य ऐसे व्यक्तियों की होनी चाहिये जो उद्योग में जिससे संघ सम्बन्धित है काम करते हों। रजिस्ट्रार को अधिकार है कि कुछ स्थितियों में वह रजिस्ट्रेशन को हटाने या रद्द कर दे। परन्तु ऐसी स्थिति में उसके निर्णय के विरुद्ध अपील की जा सकती है।

जहाँ तक रजिस्टर्ड श्रमिक संघों के अधिकारों और रिषामनों का सम्बन्ध है उसके सदस्यों और पदाधिकारियों के लिये यह बत कर दी गई है कि यदि वे अपने संघ के नियमित उद्देश्यों की पूर्ति के लिये कोई भी कार्य कर रहे हों तो उस कार्य के लिये उन पर कौबदाठी मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। सदस्यों को इस बात की भी सुरक्षा दे दी गई है कि अगर वे कोई ऐसा काम करते हैं जिसका उद्देश्य किसी औद्योगिक विवाद से सम्बन्धित होता है तो इस बात पर कि उनका वह कार्य किसी अन्य व्यक्ति को रोजगार के सविदा को भग करने को प्रेरित करता है या उस व्यक्ति के रोजगार, व्यवसाय प्राप्ति में बिम्न आसता है उन पर बीषानी मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है।

जहाँ तक रजिस्टर्ड श्रमिक संघों के प्रतिबन्धों और दायित्व का प्रश्न है, अधिनियम के अन्तर्गत उनकी सामान्य निषि का ब्यय कुछ विधेय उद्देश्यों के लिये सीमित कर दिया गया है। परन्तु संघों को यह अधिकार दिया गया है कि यदि वे चाहें तो ऐच्छिक रूप से ऐसे कार्य के लिये पृथक निषि जमा कर सकते हैं जिनका उद्देश्य सदस्यों के नागरिक और राजनैतिक हितों की वृद्धि करना हो। रजिस्टर्ड श्रमिक संघों पर यह बात भी लागू है कि वह अपना नाम और संघ बनाम क उद्देश्य का ठीक ठीक वर्णन करें तथा हिसाब सादा रखें और प्रति वर्ष जांच किया हुआ हिसाब प्रस्तुत करें। हिसाब सादे की जांच संघ का कोई भी पदाधिकारी या सदस्य कर सकता है। अमर नाम नियम और रिषाम में कोई परिवर्तन किया जाय तो उसकी सूचना रजिस्ट्रार को देनी आवश्यक है।

१९६० में भारतीय श्रमिक संघ अधिनियम में एक महत्वपूर्ण संशोधन हुआ जो अब लागू कर दिया गया है। इस संशोधन के अनुसार श्रमिक संघों के प्रत्येक सदस्य

के लिये २३ न० वी० प्रतिमाह का चन्दा देना अनिवार्य कर दिया गया है। रजिस्ट्रार या किसी अन्य माम्यता प्राप्त अधिकारी का यह अधिकार दे दिया गया है कि वह वही जाता या रजिस्टर या रजिस्ट्रेशन का प्रमाण-पत्र या अन्य कोई भी कागजात जो शमिक संघ तथा उनके व्योरे से सम्बन्धित हों उनकी जाँच कर सके। इस अधिनियम के अन्तर्गत सरकार अब अतिरिक्त अथवा उपरजिस्ट्रार भी नियुक्त कर सकती है जिनके अधिकार और कार्य रजिस्ट्रार के ही समान होंगे। एक अन्य बात इस सम्बन्ध में भी है कि यदि एक बार रजिस्ट्रेशन के लिये प्रार्थना पत्र स्वीकार कर लिया जाता है तो वह इस कारण रद्द घोषित नहीं किया जा सकता कि कुछ शर्तों (यदि उनकी संख्या धार्य से अधिक न हो) उसकी सद्यता छोड़ चुके हैं या उन्होंने प्रार्थना-पत्र से अपना नाम वापस ले लिया है।

१९४७ में अधिनियम में जो संशोधन हुआ या उसके अन्तर्गत एक बात बना दी गई थी कि मामिकों के लिये यह अनिवार्य होगा कि वह ऐसे संघ को माम्यता दें जो शमिकों का प्रतिनिधित्व करता हो। मामिकों क किसी विशेष संघ को माम्यता देने या न देने पर जो भ्रांति उत्पन्न हों उनकी सुनने तथा निरुप्य देने के लिये शमिक अवासनों की भी व्यवस्था की गई थी। शमिक अवासन के किसी आदेश से किसी संघ को तब तक माम्यता प्राप्त नहीं हो सकती जब तक वह कुछ शर्तों को पूरा न करे जैसे—(१) वह संघ अधिनियम के अन्तर्गत रजिस्टर्ड हों। (२) उसके कुल सदस्य एक ही उद्योग या उससे सम्बन्धित उद्योगों में कार्य करते हों। (३) वह उन कुछ शमिकों का जो कि उस उद्योग में मामिकों द्वारा काम पर मगाये गये हों प्रतिनिधित्व करता हो। (४) उसके नियम उस उद्योग के किसी शमिक को सदस्य होने से नहीं रोक्ते हों। (५) उसके नियम हड़ताल की घोषणा करने के ङप का व्योरा भी दें हों। (६) उसकी कार्यकारिणी की बैठक ६ माह में कम से कम एक बार होने की व्यवस्था हो।

१९४७ का यह संशोधित अधिनियम रजिस्टर्ड शमिक संघों के कुछ कार्यों को अनुचित घोषित भी करता था उदाहरणतया—(१) अधिकोश सदस्यों का किसी अनियमित हड़ताल में भाग लेना। (२) कार्याय (Executive) का किसी अनियमित हड़ताल के लिये परामर्श या सहायता देना या उनके लिये भड़काना। (३) संघ के किसी पराधिकारी का ऐसा व्योरा प्रस्तुत करना जिसमें अमत्य बयान हों।

इसी प्रकार संशोधित अधिनियम मामिकों के भी कुछ कार्यों को अनुचित घोषित करता था—(१) अपने शमिकों के इस अधिकार में किसी भी प्रकार से हस्तक्षेप करना कि वह अपने संघ को संगठित करें या पारस्परिक सहायता और रक्षा के लिये कुछ कार्य करें। (२) किसी भी शमिक संघ के बनाने या उनके अदन्ध में दखल देना या किसी भी संघ को शमिक या किसी और प्रकार की सहायता देना। (३) किसी भी माम्य शमिक संघ के पराधिकारी अथवा शमिक को इस बात पर विनाश देना या उनके विरुद्ध कोई भेद की नीति बर्तना कि उसने अधिनियम के

प्रत्येक की गई जाँच में कोई गवाही दी है। (५) किसी भी मान्य संघ से बातचीत करने से इन्कार करना या प्रतिनिधिम क अन्तर्गत उसको किसी अधिकार या रिषायत से वंचित करना।

कोई मानिक यदि अनुचित कार्य करे तो उस पर १ • ६० तक जुमनि के दंड की व्यवस्था थी। मान्य संघों के लिये अनुचित कार्य करने पर यह दंड नियत किया गया था कि उनकी मान्यता खंडित कर दी जाय। यदि किसी ऐसे संघ को भय प्रभावित मान्यता दे नी होती है जो कोई अनुचित कार्य करता है या धमिकों का प्रतिनिधित्व करना बन्द कर देता है या प्रतिनियम के अन्तर्गत श्पौर देन में असफल रहता है तो रजिस्ट्रार उस मान्यता को खंडित करने के लिये आवेदन-पत्र दे सकता था।

१९५७ के इस संशोधित प्रतिनियम का कारण मानू नहीं की गई है। परन्तु इस बात का निर्णय कर लिया गया है कि यदि किसी धमिक संघ की अवधि एक वर्ष से अधिक है और यदि उसमें संस्था क कुछ धमिका म से कम से कम १५ प्रतिशत धमिक सदस्य हैं तो एम संघ को मान्यता दे नी चाहिये। यदि किसी संस्था में एक ही संघ है तो यह १५ प्रतिशत सदस्य की धर्म लागू नहीं होगी। संघों को मान्यता प्रदान करने के लिये शर्तें भी भारतीय धम सम्मेलन क १९५५ अधिवेशन म (जो मई १९५८ में हुआ था) बना नी गई है। और अनुसामन सचिता (Code of Discipline) के अनुच्छेद में यह शर्तें दी गई हैं। (दलिये परिशिष्ट 'ग')।

यह प्रतिनियम राज्य की सरकारें लागू करती हैं जो व्यापार संघों के रजिस्ट्रारों की नियुक्ति करती हैं। परन्तु रजिस्ट्रार किसी संघ के बहो-जाते की जाँच नहीं कर सकता था और यह इस प्रतिनियम का एक दोष था जो धम १९६० के संशोधन प्रतिनियम द्वारा दूर कर दिया गया है। 'ट्रेड यूनियन प्रवर्ग' धमिक संघ प्रतिनियम धम सम्पूर्ण भारत म, बम्बू और काश्मीर को छोड़कर लागू होता है। बम्बू और काश्मीर में इस विषय पर केन्द्रीय प्रतिनियम के आधार पर एक अलग प्रतिनियम धर्म १९५० में बनाया गया था।

सन् १९५० में भारतीय विधान परिषद् म एक व्यापार संघ विधेयक (Bill) नी प्रस्तुत किया गया था जिसका उद्देश्य यह था कि धम संघ सम्बन्धी भिन्न प्राणधों और कानूनों को एक जगह संघित कर दे। इसमें अनेक नए उपबन्ध भी थे। सब बातों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि इस विधेयक का उद्देश्य धमिक संघों की स्थिति में उत्थति करना तथा अन्धे ढंग से उनका विकास करना था। परन्तु इस विधेयक का अन्धे विरोध हुआ और सरकार ने भी इसका स्वीकृत कराने में विफल किया और अन्त में यह व्यपगत (Lapse) हो गया। जुलाई १९५२ में सरकार ने राज्य सरकारों, मामिकों और धमिकों के संघों के पास एक प्रस्तावनी परिचामित की जिसमें इस विधेयक की प्राणधों के विषय में राय माँगी। जो भी रायें आईं उन पर विचार-विमल करने के लिए मंत्रीमाल में एक त्रिदलीय धम सम्मेलन बुलाया

गया जिसके परिणामस्वरूप एक नया विवेक तैयार किया गया। परन्तु इस विवेक को भी विधान परिषद् में रखने में देर हुई जिसका कारण यह बताया गया कि विभिन्न केन्द्रीय मंत्रालयों से राय ली जा रही थी। तब से अब तक उसके विषय में कुछ बात नहीं हुआ है। ऐसा जान पड़ता है कि सरकार इस प्रकार का अधिनियम बनाना उचित नहीं समझ रही है। सरकार का ऐसा व्यवहार टीका-टिप्पणी का विषय बन जाता है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन और श्रमिक संघ —

अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिकों का राष्ट्रीय श्रमिक संघों पर बड़े प्रभाव पड़ा है। श्रमिक संघ आन्दोलन का प्रारम्भ और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना दोनों साप-साप ही हुई। इस अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का राष्ट्रीय श्रम आन्दोलन पर पर्याप्त मात्रा में प्रभाव पड़ा है। इसने श्रमिकों में एकता की भावना उत्पन्न कर उनमें प्रथम प्रसंग रहने की भावना को दूर कर दिया है। श्रमिकों में अपने अधिकारों और रिश्तों की जाँच-पैठ की प्रति जागृति पैदा करने में भी इसने सहायता की है। सामयिक पत्रिकाओं और श्रम रिपोर्टों आदि ने ठाण श्रमिकों को अत्यन्त मूल्यवान् सूचनाएँ भी यह देता रहा है। श्रमिकों के प्रतिनिधि भी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलनों में भाग लेते हैं और ऐसे श्रम सम्मेलनों में चुनकर प्रतिनिधि भेजने की आवश्यकता के कारण ही कुछ प्रारम्भिक 'संगमों' की स्थापना हुई थी। इसके अतिरिक्त बूरे देशों के श्रमिक संघों के प्रतिनिधियों ने भी भारतीय श्रमिकों में अपना संगठन बनाने के प्रति रुचि उत्पन्न करने में बड़े सहायता की है। यह बात भी देखने में आई है कि ब्रिटिश ट्रेड यूनियन कांग्रेस ने अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक संघों के संघर्ष में और मास्को की तीसरी 'इंटर-नेशनल' ने औद्योगिक अघान्ति और हड़ताल कर्मियों में भारतीय श्रमिकों के लिये प्राथमिक सहायता भेजी। इस कारण इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि भारतीय श्रम आन्दोलन को अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिकों से असीम सहायता मिली है। नई देहली में सन् १९४० और नवम्बर १९४७ में हुए 'एशियाई ट्रेड यूनियन श्रम-सम्मेलनों' ने भी भारतीय श्रम-आन्दोलन के सही ढंग पर विकास होने में और श्रमिकों में उनकी समस्या पर प्रकाश डालकर एकता की भावना उत्पन्न करने में बड़े सहायता की है। इसके अतिरिक्त श्रमिक संघ के प्रतिनिधि न केवल अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लेते रहे हैं बल्कि भारतीय सरकार द्वारा स्थापित विश्वीय समितियों में श्रम-विधान श्रम-नीति श्रम-शासन और अन्य श्रम-सम्बन्धी कार्यों से सम्बन्धित बाह-विवाद में भी भाग लेते रहे हैं। मिस्टर एलवर्ट रॉबर्ट्स ने जो कि ब्रिटिश ट्रेड यूनियन कांग्रेस के एक नेता हैं और जो भारत में १९२१ में आये थे यह बताया कि ब्रिटिश ट्रेड यूनियन कांग्रेस एशिया में व्यापार संघों के विकास के लिये १९०० और अघान्ति के लक्ष्य हैं। 'स्वतन्त्र व्यापार संघों के अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष' (International Federation of Free Trade Union) ने भी बहिरंगी पूर्वी

एशिया में व्यापार संघों के विकास के लिये एक एशियाई क्षेत्रीय संगठन की स्थापना की है जिसका मुख्य कार्यक्षेत्र कमकता में है।

व्यापार संघों का आकार — (Structure of Trade Unions)

भारत में अधिकांश श्रमिक संघ औद्योगिक संघ हैं। इसका तात्पर्य यह है कि एक ही उद्योग के श्रमिक अपना संघ बनाते हैं — चाहे उनका कोई देश हो किसी प्रकार के कार्य पर लय हों चाहे पुरुष हों या स्त्री। इसका एक विशेष प्रस्ताव महमदाबाद के कपड़ा मिल मजदूर परिषद् में मिलता है जिसे सम्बद्ध सदस्य सिन्धी संघ हैं। हाल ही में केन्द्रिय श्रमिक संघों का इस धोर मुद्दाब होने समा है कि औद्योगिक संघ सम्पूर्ण देश के लिये बनें। इसका उदाहरण हमको रेल कर्मचारियों के राष्ट्रीय संगम में और कपड़ा मिल श्रमिकों के अखिल भारतीय संगम में मिलता है।

श्रमिक संघों ने बम्बई राज्य में विशेष उत्थति की है। और मातापिता के श्रमिकों का संगठन सबसे अच्छा है। सबसे अधिक शक्तिशाली संघ रेलवे कर्मचारियों तथा डाक टार और एग्री करने वाले श्रमिकों के हैं क्योंकि ये श्रमिक कुछ पड़ लिये भी होते हैं और उनके कार्य को चलाने के लिये अपने ही नेता होते हैं। भारत में सबसे महत्वपूर्ण श्रमिक संघों का संगम रेलवे कर्मचारियों डाक और रेल डाक विभाग श्रमिकों के हैं। सन् १९२६ में रजिस्टर्ड श्रमिक संघों के ७२ संगम थे। महमदाबाद का कपड़ा मिल मजदूर परिषद् श्रमिकों के एक ऐसे संगठन का उदाहरण है जो कि अनुपम है। यह सन् १९२० में स्थापित हुई थी। वी बुलगायीताल गया इसके प्रथम जनरल सेक्रेटरी थे। इस समय इसका संगम ३३००० सदस्य हैं। यह कई सिन्धी संघों का संगम है जैसे बुलाहा संघ कटाई करने वालों का संघ मरीचि बनाने वालों का संघ कलपुनों में ठेक देने वालों का संघ फायरमैन का संघ चौकीदारों का संघ आदि। यह श्रमिकों के हितार्थ कई अन्धे सामाजिक न्यायकारी कार्य करता रहा है जो दूसरों के निर्भे उदाहरणस्वरूप हैं। इस संगम की सफलता का मुख्य कारण यह भी रहा है कि महारत्ना बोधी का इसमें कई बपों तक सम्बन्ध रहा।

भारतीय श्रमिक संघों के दोष और कठिनाइयाँ —

श्रमिक संघों के उपरोक्त बर्तन से यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि श्रमिक संघ धान्दोलन देश में अब हड़ रूप से स्थापित हो चुका है और मजदूर बर्तन को एक शक्तिशाली बल में बदला होने लगी है। जैसा ऊपर उचित किया जा चुका है रजिस्टर्ड संघों की संख्या उत्तरात्तर बढ़ती रही है। इनके अतिरिक्त अनेक पेशेवादी तथा धनीधोगिक सरकारी तथा अर्धसरकारी संस्थाओं में काम करने वाले श्रमिकों के बहुते से ऐसे संघ हैं जो रजिस्टर्ड नहीं हैं और जिनके अन्दर प्रासानी से प्राप्त नहीं होते। कई स्थानों पर श्रमिक संघों ने श्रमिकों के न्याय के लिये और उनकी शक्ति बला की उत्थति करने के लिये कई अन्धे बाप लिये हैं।

इन सब बातों के होते हुए भी हम यह देखते हैं कि अन्य देशों की तुलना में हमारे देश में श्रमिक संघ आन्दोलन का ठोस आधार पर विकास नहीं हुआ है। श्री रौबर्ट्स ने जिनका ऊपर उल्लेख किया था चुका है स्पष्ट कहा है कि भारत में श्रमिक संघ आन्दोलन इतना अतिशयोक्ति नहीं है जितना इसे होना चाहिये। श्री बी. बी. विरि ने भी कहा है कि भारत में श्रमिक संघ आन्दोलन अभी तक प्रारम्भिक अवस्था में ही है और सामुहिक श्रमिक संघ पिछले तीस बरसों में ही कार्य करते हुए पाये गये हैं। साँकड़ों से पता चलता है कि औद्योगिक संघों में केवल ३० लाख श्रमिक सम्मिलित हैं जबकि बड़े उद्योगों में ही एक करोड़ से अधिक श्रमिक कार्य करते हैं। इस आन्दोलन के इतिहास से यह स्पष्ट पता चलता है कि श्रमिक संघ संगठन में बहुधा विच्छेद हो चुका है और इस आन्दोलन के निर्माण तथा विकास में राजनीति का महत्वपूर्ण प्रभाव रहा है। इस आन्दोलन के वास्तविक और ठोस विकास में कई कारकों से रुकावटें पड़ी हैं।

प्रथम कठिनाई तो भारतीय श्रमिकों की प्रवासिता (Migratory Character) है। श्रमिक जब हर समय गाँव वापिस जाने की ही सोचता रहता है तो वह संघों के कार्यों में कोई सीख और निरन्तर रुचि नहीं लेता। स्वस्थ संप्रदाय के लिये यह प्राबल्यक है कि एक स्थायी औद्योगिक जन-संख्या हो। परन्तु ऐसी जन-संख्या का हमारे देश में अभाव है। श्रमिकों की यह प्रवृत्ति कि किस प्रकार उद्योगों से नौकरी छोड़कर अपने गाँव वापिस जा सकें उनमें संयुक्त प्रयत्नों द्वारा अपनी रक्षा को सुचारु के उपायों को कम कर देती है।

दूसरी कठिनाई यह है कि भारत में सबकुछ बहुत कम है और श्रमिक अल्पमत निर्णय है और वे अल्प में भी दबे रहते हैं। यह बात स्वस्थ संगठन के विकास के लिये एक बहुत बड़ी रुकावट बन जाती है। श्रमिकों के लिये संघ निधि में थोड़ा सा खन्दा पैसा भी एक बोनस बन जाता है। असत्यता का पन्ना नियमित रूप से नहीं दिया जाता और बहुत से श्रमिक तो महसूस भी नहीं करते। इसका परिणाम यह होता है कि संघों की आर्थिक रक्षा अक्षम भी रहती है और किसी बाहरी सहायता के बिना उनके पास संपत्ति बन नहीं होता। श्री रौबर्ट्स ने यह भी बताया था कि उन्हें भारत में कई ऐम संघ मिले जिनके पास कोई निधि नहीं थी और जिन्हें केवल 'कागजी-संघ' कहा जा सकता था। उन्हें इन बातों से भी आश्चर्य हुआ कि बहुत से महत्वपूर्ण अल्प नहीं वेन व अर्थात् बाकीबार ये। ब्रिटेन में टूट व पुनियन निर्णय के ८ लाख महत्वपूर्ण प्रति सप्ताह अपना खन्दा नियमित रूप से देना देते हैं।

तीसरी कठिनाई एक अतिशयोक्ति संगठन बनाने में यह है कि श्रमिक अल्पमत बना पाने का पता जाना और स्वभाव के अनुसार प्रायः एक घुंगरे में गूँथक रहते हैं। यह सब बातें एकता को विघ्न विघ्न करने वाली हैं और श्रमिकों के आपस में मिलकर बैठने में रुकावटें डालती हैं। मानिक उनही ऐसी अवस्था का प्रायः अनुचित लाभ

उठाते हैं और पूट बासकर के पासन को हड़ बनाये रखने वाली नीति को अपनाते हैं। सेह है कि देहमी सलमज और बगान में कुछ संघों को साम्प्रदायिकता के आधार पर संगठित किया गया था। परन्तु सन् १९४३ ई० में सरकार ने ऐसे संघों को मान्यता नहीं दी।

कोबी कठिनार्थ यह है कि धर्मिकों में जीवन-स्तर नीचा होने के कारण और काम के घटे धर्मिक होने के कारण न तो इतनी पक्ति रहती है और न उन्हें इतना समय मिला पाता है कि वह धर्मिक संघ का कोई काम कर सकें। जिस गिरी हुई दशा में हमारे धर्मिक रहते हैं उसे देखते हुए उनमें यह माया नहीं की जा सकती कि वे अपने संगठन कार्य की ओर ध्यान दे सकें।

धर्मिक प्रायः धनपत्र और पत्राली भी होते हैं और उनमें प्रजातन्त्रीय उखाह का प्रभाव पाया जाता है। पीड़ियों से उनमें धारित होने का स्वभाव पड़ गया है और उनमें दासता और हीमता का भाव भर कर गया है। इन्हीं कारणों से बहुत से धर्मिक ठा सोच भी नहीं पाते कि वे स्वयं संगठित होकर कोई काम कर सकते हैं। एक और दोष जो बलने में आता है वह यह है कि धर्मिकांत धर्मिक संघ हड़ताल करने और उसे बाध रखने के धर्मिप्राय से ही बनाये जाते हैं। वे धर्मिकों के हितों का स्वागतारी कार्य करने में धर्ममर्ष रहते हैं। इन कारण यह देना गया है कि धर्मिकांत संघ केवल हड़ताल-मिति ही कहलाए जा सकते हैं। वे स्वल्प रूप से विकास करने का कोई प्रयत्न नहीं करते।

इसके अतिरिक्त भारतीय धर्मिक संघों का संगठन में एक भारी दोष यह है कि वे संघ अपने धर्मिकों में से ही अपने नेताओं को नहीं बना पाये हैं। साधारणतया धर्मिक संघों का धार्मिक नेता मध्यम वर्ग का एक बकील होता है जो जत उपचार की भावना से मा राजनैतिक उद्देश्य से अपनी सम्पूर्ण पक्तियों को धर्मिकों के हितों के लिए सजा देता है। इन धर्मिकों को उद्योग की विभिन्न तकनीकी विधियों के विषय में पूर्ण ज्ञान नहीं होता है और इस कारण वे मालिनों के साथ समानता के आधार पर किसी पारस्परिक बाधाभास में भाग नहीं ले सकते। वे धर्मिकों की वास्तविक कठिनाइयों को और उनकी शिकायतों को भी समझ नहीं पाते। कभी-कभी वे इतना धर्मिक प्रयत्न कर बैठते हैं कि उनका प्रभाव स्वयं कम हो जाता है। फिर एक बहुत बड़ा दोष यह है कि उनका कुछ निजी स्वार्थ होता है। कई बार वे स्वयं प्रायस में भगड़ा कर बैठते हैं और धर्मिकों से प्रायः अनुचित साम उठाते हैं। वर्तमान समय में ऐसा देखा गया है कि धर्मिकतर नेता किसी न किसी राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं। स्वयं संप्रदाय का विकास तब तक नहीं हो सकता जब तक कि उसके नेता मजदूर वर्ग के ही न हों। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि धर्मिक संघों में जो बाहरी नेतृत्व पाया जाता है, उसे धर्म और

निरन्तर प्राय जाने का उत्तरदायित्व कुछ सीमा तक मासिकों पर भी है। धर्मिकों में यह वास्तविक भय होता है कि अगर उन्होंने संघों का नेतृत्व किया तो उन पर भार में किसी न किसी प्रकार से प्रत्याहार होगा। इस कारण मासिक ही धर्मिकों के हृदय में यह भावना उत्पन्न कर सकते हैं कि यदि धर्मिक वर्ग से ही उनके नेता बनें तो उनका स्वागत होगा। बाहरी नेतृत्व का एक अन्य कारण यह भी है कि राजनैतिक दल धर्मिकों में अपना प्रचार करते हैं और उनके कार्यों में दखल देते हैं। इसके प्रतिरिक्त धर्मिकों की अज्ञानता और उनके अल्प होने के कारण भी बाहरी नेतृत्व धर्मिक संघों में पाया जाता है। ईमानदार, सच्च और कुछसे नेता धर्मिकों में से नहीं मिलते। अमरीका और पश्चिमी देशों के धर्मिक संघों की भांति भारतीय धर्म संघों के पास इतना धन नहीं होता कि वे बाहरी व्यक्तियों को पैसा देकर अपने कर्म करा सकें।

एक और कठिनाई यह है कि मध्यम प्राय संघों के विरोधी होते हैं। धर्मिक संघों के धन जाने से मध्यम वर्गों के अधिकार क्षिप्त होते हैं। इस कारण ये मध्यम वर्ग उचित और अनुचित उपाय से धर्मिकों में घूट डालने और धर्मिक संघों के उद्देश्यों का विघ्न बनाने का प्रयत्न करते हैं। इसके प्रतिरिक्त मासिकों का व्यवहार भी संघों के प्रति विरोधपूर्ण रहता है। भारत में अधिकांश मासिक धर्मिकों के संघों को अपने अधिकारों कायम और प्रभाव के लिये एक जुनीटी समझते हैं और कुछ हीन प्रवृत्ति के मासिक तो धर्मिकों की एकता तोड़ने के लिये हर प्रकार के उचित या अनुचित साधन अपनाते से नहीं हिचकते। ऐसी कई बटमारों हुई हैं जबकि मासिकों ने संघ में भाग लेने वाले धर्मिकों पर धरदाचार किया है। वे भेरिया गुण्डे और हड़ताल-तोड़क आदि व्यक्तियों को सघ-कार्यों में विघ्न डालने के लिये नीकर रखते हैं। मासिक प्रतिद्वन्द्वी धर्मिक संघों की स्थापना को भी प्रोत्साहन देते हैं और कई बार उन्होंने ऐसे धर्मिक संघों को मायता देने से इन्कार कर दिया है जिनमें उनकी कबि के धर्मिक न हों। संघों के पदाधिकारियों का मासिकों द्वारा प्राय घूस भी भी जाता है और धर्मिकों में साम्प्रदायिकता तथा विभिन्न जातियों के कारण उत्पन्न हुए भेदों में साम उठाते का प्रयत्न किया जाता है। डा० राजकमल मुकुर्जी० ने धर्मिकों पर धरदाचार होने की कई बटमारों का उल्लेख किया है। डा० राजेन्द्र प्रसाद और प० अबाहरनाम नेहरू ने जो कुछ भण्डों के विवाचक के अपने निर्याप में यह लिखा है कि "अमरोहरपुर पिछले वर्षों में अल्प गुण्डों के लिये धरदाचार कुख्यात रहा है। प्रतिद्वन्द्वी संघों के धर्मिकों के बीच प्राय घूट-भेदें हुई हैं। समाजों को तोड़ा गया है। हावा-पानी और पत्थर फेंकने की बटमारों भी सामान्य थी। कई भ्रम नेताओं और उनके अनुयायियों पर गुप्तमनुस्त्रा यह धारणा लगाया गया कि वे मासिकों से कुछ धनराशि लेते हैं। एसी परिस्थिति में कोई शक्तिशाली तथा अनुयायित धर्मिक संघ नहीं बन सकता था और धर्मिकों के हितों का सालनी नेताओं द्वारा अनिदान होता रहा।"

एस घत्याचारों को कई स्थानों पर देखा गया है। सत्राये जाने का यह मय कोई कास्पनिक मय नहीं है। सन् १९२६ और १९३६ ई० के बीच में प्रहमशाबाह कपड़ा मिस मजदूर परिषद ने घत्याचार होने पर ४३,००० इ० सहायता बनराधि के रूप में बटि दे। उत्तर प्रदेश म भी कानपुर की कपड़ा मिसों में घत्याचार होने की घटनाओं की जाँच के लिये एक जाँच ग्यायालय की स्थापना करनी पड़ी थी।

इस सम्बन्ध म यह उल्लेख किया जा सकता है कि बम्बई का सन् १९३८ का प्रौद्योगिक बिबाद अधिनियम संघों के धमिकों पर घत्याचार होने को एक अपराध घोषित करता है जिस अपराध के लिये १००० इ तक जुर्माना दिये जाने के इच्छ की व्यवस्था है। ग्यायालयों को इस बात का अधिकार दिया है कि जुमनि में से कुछ भाग सत्राये हुए धमिक को क्षतिपूर्ति के रूप में दिया जाय। डा० राजाकमल मुकुर्जी ने इस बात का सुझाव दिया है कि भारत में भी घमरीका के सन् १९३२ के 'नेशनल लेबर रिसेसन्स एक्ट' की भाँति एक अधिनियम होता चाहिये। यह अधिनियम घमरीका में धमिकों का 'भैगना कार्टी' माना जाता है। इससे घन्तर्वत धमिकों को स्वयं संयुक्त करने के लिए कई अधिकार दिये गये हैं। मानिकों का संघों में हस्तक्षेप करना या धमिकों को संघ कार्यों में भाग लेने स राकना अपराध घोषित कर दिया है। किसी भी प्रकार का घत्याचार नियेक है। कनाडा में भी धमिकों को ऐम ही अधिकार दिये गये हैं। भारत में १९४२ में मसूर राज्य में 'मसूर धम अधिनियम' के घन्तर्वत धमिकों की घत्याचार से रक्षा की गई थी। भारत के धमिक संघ अधिनियम क घन्तर्वत सन् १९४७ क संसोधन क अनुसार मानिकों क कई कार्यों को अनुचित ट्यूहया गया या धीरे ऐसे कार्यों के लिये दृढ कुरमाने क रूप में देने की व्यवस्था थी। यह भी धनिचार्य कर दिया गया या कि संघों को मान्यता दी जाय। परन्तु ये बाधनों धमी तक साधू नहीं की गई हैं। मुझ अधिकांशियों के सम्मुख जो मुकदमे घात हैं उनसे यह स्पष्ट पता चलता है कि जिन धमिकों को मानिक कुछ झगड़ा करने वाला समझते हैं उनको किसी न किसी बहाने लौकरी स प्रलग कर दिया जाता है।

धमिक संघों के संघटन में एक धीरे टोय यह है कि अधिकांश संघों की संघस्यता बहुत कम है। इस कारण इनमें यथेष्ट बल संगठन धीरे मैतुल की कमी रहती है। उदाहरणार्थ १९३८-३९ में झीरा देने वाली ७१-९४ प्रतिगठ संघों की संघस्यता ३०० से कम थी। संघस्यता के कम होने का मुख्य कारण यह है कि एक ही उद्योग में धमिकों क कई संघ होते हैं और धमिकों में धापस में एकता नहीं है। बी० बी० बी० गिरि टीक हो इस बात पर जोर देते रहे हैं कि एक उद्योग में एक ही संघ होना चाहिये। बड़े संघ धमिक टिकाऊ होंगे। उनका नियमितरूप स कार्यालय बन सक्ता है। समस्त समय के लिये उनमें कमचाठी भी लगाये जा सकते हैं धीरे सीधा करने की शक्ति भी उनमें धमिक हो सक्ती है।

देस में धमिक संघों में जो फूट पड़ी हुई है धीरे उनमें इ प भावना से जा प्रतिधमिता बल रही है उसका कुछ उत्तरदायित्व राजनैतिक दलों पर भी है। प्रत्येक

राजनैतिक दल बहु प्रयत्न करता है कि धर्मिक दम उन्की धार या धार धीर इस प्रयत्न में बहु धर्मिकों में परस्पर द्वेषित भावनाएँ धीर मतभेद उत्पन्न कर देते हैं। धार्मिक सभों में इस प्रतिद्वन्द्विता ने इस समय एक जटिल समस्या या रूप धारण कर लिया है धीर इस कारण उनका स्वस्थ विकास में एक बहुत बड़ी रुकावट घाती है।

उपसंहार धीर सुझाव —

रॉयस धर्म धायोप के अनुसार धर्मिक सभों के पूर्ण प्रभावशाली होने के लिये दो बातों की आवश्यकता है — एक तो प्रजातन्त्रीय भावना धीर दूसरी शिक्षा। धर्मिकों में प्रजातन्त्रीय उद्देश्य की भावना धर्मी उत्पन्न करनी है। उससे भी धर्मिक या रुकावट है बहु शिक्षा का समाव है। द्वितीय पंचवर्षीय धायोजना में बतलाया गया है कि एक ही उद्योग में घनेक धर्मिक संघों का होना राजनैतिक प्रतिस्पर्धा धन की कमी तथा धर्मिकों की पारस्परिक घूट इत्यादि ही वर्तमान समय के गर्भों की बुबुलताओं में से कुछ हैं। एक सत्त्वियासी धर्मिक सब धार्मिक धर्मिकों के हितों की रक्षा करने के लिये तथा उत्पादन के सक्षम को प्राप्त करने के लिए धर्पण आवश्यक है। इससे सपटित धर्मिकों धीर मासिका में धर्मिकतर सहयोग भी उत्पन्न होगा धीर धीरधार्मिक दाम्नि भी रहेगी। एक सत्त्वियासी संघ धर्मिकों की उम समय महायुगा करता है जब वे प्रथम बार गर्व से घाते हैं। इस प्रकार बहु प्रभाविता धनुषध्वनि तथा धर्मिकबाधतें का कम करता है धीर भर्ती के दोषों को दूर करता है। मजदूरी की उचित नीति के निर्धारण में धर्मिक संघ सहायता कर सकते हैं धीर प्रबन्धकों के साथ धीरधार्मिक विराम सन्धि (Truce) समझौते भी धर्मिक संघ ही कर सकते हैं। इस प्रकार दल के धार्मिक विकास में धीर धायोजनों की गहनता में भी सभों का एक विशेष धीर महत्वपूर्ण स्थान है। इस समय ऊपर लिख कई कारणों में धर्मिक सभों में धायोप में मतभेद धीर घूट है। इसलिये यह धर्पण आवश्यक है कि प्रथम तो धर्मिकों को शिक्षा धीर प्रतिक्षण दिया जाय जिससे वे एक सत्त्वियासी धीर स्वस्थ सभटन के सभों का समझ सकें। धर्मिक संघों को केवल एक हउतास नविनि की प्रति कार्य नहीं करना चाहिये बल्कि उनको अपने कार्य धर्मिकों की शिक्षा की धीर भी विस्तृत करने चाहिये। ये कार्य के धर्मिक समाएँ करने बाद विचार करके धायोप कराके तथा कल्याणकारी कार्य करके कर सकते हैं। इस धार निरन्तर प्रयत्न होने चाहिये कि विभिन्न धर्मिक सभों में एकता या धाय धीर एक उद्योग में एक ही संघ हो। इसके धर्तिरिक्त इन बातों की भी धायोपकता है कि धननता एम हों या स्वयं धर्मिक रूठे हों धीर उनका उचित प्रतिक्षण भी लिया जाता चाहिये। द्वितीय पंचवर्षीय धायोजना ने इस प्रस्ताव के साथ कि धर्मिक संघों में बाहर बाधों की संख्या कम हो यह भी कहा है कि बाहर बाधों के दम में धर्मिक संघ धार्मिकन के निर्माण में यथेष्ट महत्वपूर्ण कार्य किया है धीर उनके धर्मिकों के बिना यह धायोजन इतना सत्त्वियासी धीर विगत नहीं

हो पाता । परन्तु हम यह भी कह सकते हैं कि यदि बाहर वालों का सम्पर्क न होता तो धर्मिक संघ धामोत्सव का विकास ऐसे धर्मस्वरूप रूप में न होता । संघों को इस बात को समझ सेना चाहिये कि यदि वे किसी ऐसे व्यक्ति पर जो धर्मिक वर्ग का नहीं है अधिकतर निर्भर रहेंगे तो उनका ध्यान को सम्यक्त बनाने की शक्ति धर्मरूप कम हो जायगी । वर्तमान समय की सबसे बड़ी धारण्यकता यह है कि राजनीतिक हम धर्मिक संघों से धरम रहें और धर्मिक संघों को राजनीति से दूर रखा जाय और वे अपने कार्यों को धर्मिकों की मर्यादा तक ही सीमित रखें । इस सम्बन्ध में यह बात बहुत धारण्यक है कि धर्मिकों को संघ ज्ञान और सच-विधियों में प्रशिक्षण दिया जाय । द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में इसने लिये कृत्तिया देने की व्यवस्था है । इस बात का सुझाव दिया जा सकता है कि ऐसे धर्मिकों के प्रशिक्षण के लिये जो संघ-मेता बनने की आकांक्षा रखते हों उनके लिये प्रविष्टकर (संसाधन) खोली जाएँ । कोलम्बो आयोजना के धर्मगत धर्मिक संघों के प्रशासिकाचारियों को प्रशिक्षण के लिए ईयसंबंध भेजा जा रहा है ।

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में इस बात का भी सुझाव था कि संघों को कुछ शर्तें पूरी करना पर बंधानिक माग्यता देनी चाहिये । परन्तु वामून केबस उपधामन (Palliative) का कार्य ही कर सकता है और केबस दोषों को ही दूर कर सकता है । यदि धर्मिक स्वयं शक्तिशाली होंगे तो किसी विधान की धारण्यकता नहीं होगी । मासिक भी एक शक्तिशाली और पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व करने वाले संघ को माग्यता देने से इनकार नहीं कर सकते । इस सम्बन्ध में इस बात का उल्लेख किया जा सकता है कि मई १९५८ में भारतीय धर्म सम्मेलन व १९६० अधिवेशन में धर्मिक संघों को माग्यता प्रदान करने के लिये कुछ शर्तें बनाई गईं और धर्म उनको धनुःशासन संहिता के परिशिष्ट में जाड़ दिया गया है । (बिबिय परिशिष्ट 'घ') संघों को धपनी धनराशि में वृद्धि करने के लिये द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में यह सुझाव दिया गया था कि संघों के नियमों में यह बात भी धा जानी चाहिये कि कम से कम धार धामे मासिक सन्धयता सुम्न होगी । इस नियम के बिना किसी भी संघ को एक माग्य संघ से रूप में रजिस्टर्ड न किया जाय । धप धनराशि या बकाया के चुकाने के जो नियम हैं उनको दृढ़ता से लागू करना चाहिये । जुलाई १९५९ में भारतीय धर्म सम्मेलन (१७वें अधिवेशन) में इस सुझाव को बंधानिक रूप देने का निश्चय किया गया । १९६० के भारतीय धर्मिक संघ (संघोचित) अधिनियम के धर्मगत धर्म प्रत्येक सदस्य के लिए कम से कम २५ म० पै प्रतिमाह का धम्दा देना धनिवार्य कर दिया गया है ।

यह बात भी ध्यान देने धाम्य है कि धर्मिकों की धार्मिक रक्षा में सुधार को बहुत धारण्यकता है । धपन संघटन-कार्यों के लिये धर्म तक धर्मिकों के पास यथेष्ट समय शक्ति और धन न होगा स्वस्थ संघवाद का विकास सम्भव नहीं है । इस कारण स्वस्थ संघटन की समस्या को धूपक रूप से नहीं सुधधयाना जा सकता । इसके

सिधे सब धोर से तथा हर प्रकार के प्रयत्न की आवश्यकता है। धर्मिक संघों को यह समझना चाहिए कि उनका कार्य केवल यही नहीं है कि वे मालिकों से भ्रमड़ा करते रहें या केवल धर्मिकों की भलाई व उन्नति के लिए ही कार्य करते रहें। अब उन्हें राष्ट्रीय हित के लिए धार्मिक-त्याग और सहयोग की भावना से कार्य करने की रीति अपनानी चाहिए। उन्हें धर्मिक संघ अनुशासन की एक संहिता का भी निर्माण करके इस बात का प्रयत्न करना होगा कि सब धर्मिक ठीक राह पर चलें। इस सम्बन्ध में 'अनुशासन संहिता' तथा 'भाषण संहिता' जैसे महत्वपूर्ण पत्र धर्मिक सहायक सिद्ध हो सकते हैं। (देखिए परिशिष्ट 'ब')। पिछले कुछ वर्षों से धर्मिकों में धर्मिक मनोवैज्ञानिक (Psychological) परिवर्तन पाया जाता है। वे अपने धर्मिकों से तो धर्मिकतर परिचित हो गये हैं परन्तु इस परिवर्तन के समय में वे अपने कर्तव्यों को भूल गये हैं। हर धोर से मालिकों की वे सिकायतें पाती हैं कि धर्मिकों की कार्यकुशलता कम हो गई है। धर्मिक धर्मिक कार्य करने में कोई रुचि नहीं दिखाते और मालिक उनसे कुछ कह नहीं सकते क्योंकि हड़ताल का हर समय डर भगा रहता है। पिछले दिनों में धर्मिकों की धोर से हिंसामक कार्य भी हुये हैं जैसे कलकत्ता लड़मपुर, बम्बई, महमदाबाद आदि में। ऐसे स्वस्व बातावरण को दूर करने की आवश्यकता है। इसका सबसे अच्छा उपाय यही है कि स्वस्व धर्मिक संघटन के विकास का प्रयत्न किया जाय। देश में इस बात का ध्यानोत्तन भी चल पड़ा है कि धर्मिकों को भी प्रबन्ध कार्यों में भाग लिया जाय। इसका प्रयोजन भी सफलतापूर्वक कई स्थानों पर किया गया है। इस ध्यानोत्तन का विस्तार हो सकता है परन्तु इसकी सफलता के लिये भी यह आवश्यक है कि सक्षिपाती धोर पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व करने वाले धर्मिक संघ हों। यदि हम अपने धर्मिकों से धर्मिक कार्यकुशलता की आशा करते हैं तथा देश में धर्मिक उत्पादन चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि सभी के समस्त दोषों को दूर करने और स्वस्व संभार के बिकाश में उन्नति करने की धोर हमें पम्नीर रूप से प्रयत्न करने चाहियें।

इंग्लैंड में श्रमिक संघवाद

(Trade Unionism in England)

मध्ययुग में हस्तकारी श्रेणियाँ — (Craft Guilds in Middle Ages)

ब्रिटेन के श्रमिक संघ औद्योगिक क्रांति की उपज हैं। इससे पूर्व अधिकतर उद्योग-बन्धे श्रमिकों के घर पर ही होते थे और श्रमिक कठिनाता से ही मिस पाठे से क्योंकि वह अलग-अलग कार्य करते थे। अतः किसी प्रकार के संघ बनाने का अवसर न था। परन्तु मध्ययुग में श्रमिकों की हस्तकारी श्रेणियों (Craft Guilds) का उत्पन्न मितता है। यह उन कुछ श्रमिकों के संघ थे जो एक ही प्रकार की वस्तु का उत्पादन में संलग्न होते थे। इस प्रकार की अरुणी या गिरुह सभी व्यवसायों जैसे सीमेंट यातायात धारि में पाये जाते थे। परन्तु ये हस्तकारी श्रेणियाँ प्राथमिक श्रमिक संघों से भिन्न थीं। हस्तकारी श्रेणियाँ उन शिपियों का संगठन थीं जो श्रमिक होने के साथ-साथ श्रमिक भी थे और यह सम्पूर्ण हस्तकारी को नियंत्रित करते थे जबकि श्रमिक संघ में केवल श्रमिक ही होते हैं। इसके अतिरिक्त यह मध्यकालीन हस्तकारी श्रेणियाँ अधिकतर स्थानीय ही होती थीं जबकि प्राथमिक श्रमिक संघ अधिक विस्तृत आधार पर संगठित किए जाते हैं। श्रेणियाँ श्रमिक व दान के कार्य भी करती थीं जो कि प्राथमिक श्रमिक संघों के द्वारा सम्भव नहीं किए जाते। श्रेणियाँ एक ही व्यवसाय में लगे व्यक्तियों का संगठन होती थीं परन्तु श्रमिक संघों में विभिन्न व्यवसायों के श्रमिक भी हो सकते हैं। दोनों में विभिन्नता का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण यह है कि हस्तकारी श्रेणियाँ अपने तथा जनता दोनों के ही हितों को ध्यान में रखती थीं। प्राथमिक श्रमिक संघ सामान्यतः मजदूरों के ही हितों का ध्यान रखते हैं और कभी-कभी जनसाधारण और अपने उद्योग तक की पताई की परवाह नहीं करते।

प्राथमिक श्रमिक संघों का विकास —

अठारहवीं शताब्दी तथा उसके पश्चात् प्राथमिक उद्योग-बन्धों के विकास होने के कारण श्रमिक संघों की आवश्यकता अनुभव हुई। कारखाना प्रणाली से श्रम शिपियों के एक नय वर्ग की उत्पत्ति हुई जो अपने निर्वाह के लिये पूरातया अपनी मजदूरी पर ही निर्भर था। व्यक्तिवाद (Individualism) के ऐसे युग में जबकि पारम्परिक नीति (Laissez-faire) ही सर्वोपरि थी श्रमिक वर्ग को अनेक हानियाँ

पहुँचीं। अनेक कठिनाइयों तथा समस्यायें के तिकार अधिका के घोषण किया जाता था। प्रारम्भिक अधिका संगठन इस घोषण के स्वाभाविक परिणाम थे।

संसद का विरोधी व्यवहार संगठन कानून —(Combination Laws)

१९०० युग में पूर्व कुछ ऐसे अधिनियम थे जिनके अन्तर्गत मजदूरी का निर्धारण 'जस्टिस ऑफ पीस (Justices of Peace) द्वारा होता था। इस प्रकार जब सरकार ने अधिका की व्यवस्था पर नियंत्रण रखने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया तब मजदूरी बढ़ाने अथवा घटाने की हस्तक्षेप करने के लिए अधिका संगठनों का कानून द्वारा नियंत्रण कर दिया गया। इसी प्रकार के नियंत्रण अधिकाओं के लिये भी थे। परन्तु समय की गति के साथ साथ अधिकाओं के लिए राज्य का यह हस्तक्षेप निरर्थक होता गया। औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप अधिकाओं का तीव्र गति से विकास हुआ राज्य के कानूनों का प्रभाव कम हो गया और मजदूरी तथा धर्म की व्यवस्थाएँ मानिका द्वारा निर्धारित की जाने लगीं। परिणामस्वरूप अधिकाओं का घोषण हुआ। परन्तु संगठन अब भी अघोषित माने जाते थे और पक्षपात के कानून (Law of Conspiracy) के अन्तर्गत दंडित होते थे। तत्कालीन आर्थिक मिश्रण में भी अधिकाओं के प्रति सरकार के दृष्टिकोण पर प्रभाव डाला। मजदूरी निधि मिश्रण (Wages Fund Theory) के अनुसार मजदूरी एक निश्चित निधि में से ही जाती है और यदि अधिकाओं का कोई संघ किसी एक उद्योग में अधिकाओं के माध्यम से अधिक मजदूरी प्राप्त कर लेता है तो दूसरे उद्योग में अधिकाओं को कम मजदूरी मिलती। इसके अतिरिक्त धार्मिक क्रांति में भी इंग्लैंड में यह भय व्याप्त कर दिया कि कहीं यह अधिका संघ क्रांतिकारी न हो जायें। अतः संसद (Parliament) इन संघों के प्रति विरोधी हाँ उठी और कई ऐसे अधिनियम पारित किए गये जिनके अन्तर्गत एक के बाद एक उद्योगों में संघों को घोषित कर दिए गये। इन सब कानूनों के परिणामस्वरूप मजदूरी १७६६ और १८०० में संघों के कानून (Combination Laws) के रूप में और भी कठोर बनाने उगाये गये जिनके अन्तर्गत सामान्य उद्योगों में संघों का अस्तित्व घोषित कर दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि अधिका के गुप्त रूप बनने लगे। गुप्त सहायता में समाये होने लगीं तथा सदस्यों के नाम भी गुप्त रखे जाने लगे। जब अधिकाओं के सब प्रयत्न रूप से बाध नहीं कर सकते थे और अतिपुष्ट संघों से समझौतों का रास्ता बन्द हो गया था तब परिणामस्वरूप अनेक स्थानों पर हड़ताल हुईं और अधिकाओं द्वारा उत्तर प्राये तथा अर्थियों की ताड़ चोट की गई क्योंकि अर्थियों अधिकाओं द्वारा उनकी निर्धनता और कठिनाइयाँ का कारण समझी जाती थी। इस समय कुछ 'फ्रेंडली सोसाइटीज' अर्थात् मित्र समितियाँ बनाई गईं जो कि १७६३ के 'फ्रेंडली सोसाइटीज एक्ट' (Friendly Societies Act) के अन्तर्गत पंजीकृत होती थी। इन 'फ्रेंडली सोसाइटीज' में कुछ लाभपूर्णा कार्य किए गये अधिकाओं को बकारी और बीमारी के दिनों में सहायता दी। यह कार्य बाद में अधिकाओं द्वारा हीएँ जाने लगे।

परन्तु एसी संस्थाएँ धमिकों का संगठन नहीं कही जा सकती थी क्योंकि तमाम संस्थाएँ नियम थीं।

धमिक संघों का प्रारम्भ —

धमिकों में घसींठाप ब्याप्त ही रूा परन्तु गिंसा और तीव्र बुद्धि न होने के कारण बहु घनेक बयों तक संगठन कानूनों (Combination Laws) को समाप्त न करा सक। संघान्ठिक रूप से तो मासिकों के संघ बनाने पर भी प्रतिबन्ध था परन्तु इस प्रतिबन्ध का सागु करन के लिये बहुत ही कम काय किया गया जबकि धमिकों के लिये ‘पइयत्र क कानून’ क अस्तयन कठोर दण्ड की ब्यवस्था थी। कुछ तीव्र बुद्धि वाले धमिकों न संगठन कानूनों को समाप्त कराने के हेतु घान्ठोत्तन किया। ‘फ्रान्स प्लेन’ (Francis Place) नामक एक दर्जी ने कई बयों तक इन अधिनियमों को समाप्त कराने क लिये कार्य किया और १८०४ में संसद के निम्न सदन (House of Commons) के कतिवाते नेताओं विशेषकर जोसेफ ह्यूम (Joseph Hume) की सहायता से एक ऐसा अधिनियम पारित कराने में सफल हुआ जिसके अन्तर्गत धमिकों को मजदूरी और काम के घटो के प्रदन पर मासिकों से बातचीत करने क लिये संघ बनान की अनुमति प्राप्त हा गई। परन्तु इस अधिनियम क परिणामस्वरूप घनेक हठानों हुईं और घनबन्धना फँसी। इसकी प्रतिक्रिया हुई। सन् १८०४ के अधिनियम के द्वारा धमिकों को पइयत्र के सामान्य नियम के अस्तयत भी दण्डित नहीं किया जा सकता था। इसलिये इसक स्थान पर सन् १८२३ का संघोक्त अधिनियम पारित किया गया जिसक अन्तर्गत संघों को वैधानिक रूप तो प्रदान किया गया परन्तु सामान्य कानून का कोई भी उल्लेख नहीं था। घत धमिक सब किसी भी संगठन के लिये जिसका उद्देश्य काय क पन् या मजदूरी के बारे में सभस्यता कराना नहीं था सामान्य कानून क अन्तर्गत दण्डित किये जा सकते थे और ना ही हठतास करने काय धमिक दूसरे मजदूरों को काम पर घान से रोक सकते थे। इसस धमिक संघों को काफी घति पहुंचा और १८०५ क अधिनियम द्वारा इनको केवल वैधानिक मान्यता ही प्राप्त हो सकी।

सन् १८२४ के पइयत्र धमिक संघों का मुक्त रूप से संगठन होना बन्द हो गया और इनकी तथा उनके सदस्यों की संख्या में घासाओत कृद्धि होन लयी। इस समय क अधिकतर संघ केवल हठतास समितियों के रूप में थ। अंसे ही हठतासों को काबू रखने के लिये निधि की सभाति हो जाती थी धमिक काम पर सौत घाते थे। स्वासीय छोटे छोटे धमिक संघों को बड़े संघटनों क रूप में परिवर्तित करने का प्रयत्न भी किया गया। १८३४ में राबर्ट ओवन के प्रभाव के परमस्वरूप ‘शॉड मैगनस कम्सोसिडेटेड ट्रेड यूनियन’ की स्थापना हुई। परन्तु यह ‘शॉड मैगनस’ सदस्यों की घाजाओं को पूर्ण करने में असमय रही क्योंकि इसस घाधिक पुन निर्माण के घादसं बहुत ऊँचे रूप लये थे जिनको प्राप्त करना कठिन था। इसलिये यह बन्द ही समाप्त हो गई। कुछ बयों तक धमिकों का बिन्वास संघवाद से उठ

के घनेक सघ बन । एसी समय १८९० ई० म रेलवे कर्मचारियों का एक सम्मिलित संघ (Amalgamated Society of Railway Servants) बना यद्यपि रेलवे कर्मचारियों के संघ १८७१ से बनने सघे से ।

यहाँ इस बात का भी उल्लेख किया जा सकता है कि १९वीं शताब्दी के प्रथम तक अधिकांश संघ घनने सबस्यों का कस्वाएलकारी साम नहीं पहुँचाते से क्योंकि यह काम सरकार का ममस्य जाता था । सन् १८९३ म अधमीबियों की घबस्था को मुधारने के लिए स्वतन्त्र मकदूर दल (Independent Labour Party) का निर्मस्य किया गया । इस संघर पार्टी ने कई बार घपनी सरकार बनाई है । इसके बाद से अधिका संघों ने स्वतन्त्र रूप से राजनीतिक कार्यों म भाग लिया तथा सामाजिक कानूनों की उन्नति की घोर अधिका ध्यान दिया ।

ट्रेड्यूस रेलवे कम्पनी और घास्वोर्म क मुकदमे —

वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भिक सघों म इंग्लैण्ड के अधिका संघ घान्मोन की को भारी भटके सगे । सन् १९०० मे ट्रेड्यूस रेलवे कम्पनी के कर्मचारियों मे हड़ठारों की । कम्पनी ने रेलवे कर्मचारियों के सम्मिलित सघ (Amalgamated Society) पर शक्तिपूति के लिये मुकदमा दापर किया । संघ का बिचार जा कि सन् १८७१ और १८७३ क अधिनियमों द्वारा उसको पर्याप्त सुरक्षा प्रदान की । परन्तु स्यायालय ने संघ को कम्पनी को भारी मात्रा मे शक्तिपूति देने का घादेघ दिया । इससे यह धारणा बन गई कि राजा का बन मुकदमों में तथा शक्तिपूति देने मे ही व्यर्ष होता था । सन् १९०९ में व्यापार बिहार अधिनियम (Trade Disputes Act) के प्रस्तावित इस बिषय मे कुछ अधिकार लिये और स्यायालय को इस बात क लिए मका कर दिया गया कि यह शक्तिपूर्वक घरना देने वालों तथा संघ क नायों क बिषय में कोई भी मुकदमा न से ।

अधिका संघबाह की दूसरा महत्वपूर्ण भटका घपनी राजनीतिक क्रियाओं क परिणामस्वरूप लगा । कई अधिका संघ घनने सबस्यों से मकदूर दल का समर्थन करने के लिए जम्हा सेते से । उनके इस अधिकार क बिषय सन् १९०८ में रेलवे कर्मचारियों के [सम्मिलित संघ (Amalgamated Society) क एक सदस्य मि० ब्रन्डू घांनबोर्म ने घाकाउ उठाई और उनके इस मत का स्यायालयों न भी समर्थन किया । इससे मकदूर दल (Labour Party) का प्रगतिश ही घठरे में पहु गया । यह केबल बनी स्यति ही दल के लिए घन से नकते से और अधिका ऐसा करने में घमघर्ष क ।

सन् १९१३ में 'ट्रेड यूनियन एक्ट' पारित किया गया जिसके अनुसार संघ राजनीतिक क्रियाओं मे भाग ले सघने से तथा इस कार्य के लिये घन भी एकत्रित कर सकते से । परन्तु राजनीतिक क्रियाओं में भाग लेने के लिये घाबरकर जा कि उसका लक्ष्य मग हाउ बहुमत मे होवा चाहिए तथा राजनीतिक निधि को प्रथम निधियों से पूरक रना जाय । इससे अनिश्चित कई भी स्यतिगत सन्स राजनीतिक निधि में

बन्दा देने से मना कर सकता था और उसे इस कार्य क लिए कोई दण्ड नहीं दिया जा सकता था।

युद्ध और संध —

प्रथम महायुद्ध में धमिक संघ धान्दोलन का महत्त्व बढ़ गया। युद्ध काम में हड़तालें स्वगित कर दी गईं और धमिक संघ ने मजदूर दल ने अपने प्राणको पूर्णतया युद्ध में लगा दिया तथा अपने अनेक अधिकारों का परित्याग कर दिया। परन्तु युद्ध की स्थिति के कारण नई औद्योगिक समस्याएँ सामने आईं और 'अमात्य प्रतिनिधि' (Shop Steward) धान्दोलन के रूप में एक नया धमिक नाव धान्दोलन उठा। युद्ध के पश्चात् ही धमिक मन्दी आई। मजदूरी में कमी कर दी गई और अनेक हड़तालें हुईं। १९१९ में रूसों की हत्या में धमिका को सफलता प्राप्त हुई। सत्य के गोरी कर्मचारी पार्लेट बेबिन के नेतृत्व में न्यूनतम मजदूरी प्राप्त करने में सफल हुए। सन् १९२६ में एक धाम हड़ताल हुई जिसके परिणामस्वरूप सन् १९२७ का धमिक संघ अधिनियम पारित किया गया। इसके द्वारा धाम हड़तालों को प्रवृत्त कर दिया गया। इस अधिनियम ने धान्दोलन इस बात की भी व्यवस्था की कि प्रत्येक सदस्य को राजनैतिक निष्ठा में बन्दा देने की अपनी इच्छा को ब्यक्त करना चाहिए और सन् १९१३ के अधिनियम की भाँति यह आवश्यक नहीं रह गया है। इस बात से मजदूर दल में असन्तोष व्याप्त हुआ। परन्तु उस समय की 'सेक्टर' सरकार ने भी इस धोर को ब्याप्त नहीं दिया। सन् १९४६ के धमिक संघ अधिनियम तथा ब्यापार विवाद अधिनियम के द्वारा ही इस बात को पुनः साम्य किया गया कि प्रत्येक सदस्य को राजनैतिक निष्ठा में बन्दा देना होगा जब तक कि वह छूट के लिए प्रार्थना न करे।

वर्तमान स्थिति —

इस अधि के पश्चात् से इंग्लैंड में धमिक संघ धान्दोलन निरन्तर उत्थितामी होया जा रहा है और इसने धमिकों के हस्याण और हित के लिए अनेक कार्य किए हैं। अधिकतर कर्मचारी जो उद्योगों में लगे हुए हैं जिनमें कृषि और मातायात जैसी जनोपयोगी सेवाएँ भी सम्मिलित हैं अब धमिक संघों में संगठित हैं। इनका विकास स्वतन्त्र रूप से धीरे धीरे कई वर्षों में हुआ है। यह धान्दोलन २०० वर्ष पूर्व कुशल कर्मचारियों से धारम्भ हुआ था और तत्पश्चात् धनुषास वर्षों में भी फैल गया। द्वितीय विश्व युद्ध के समय में सपत्तियों की संख्या २३ प्रतिशत और धमिक बढ़ गई। सन् १९४६ में ब्रिटिश धमिक संघों की सदस्यता ८७ १४००० थी। सन् १९२७ में सदस्य संख्या १७००० तक पहुँच गई। अब भी ६४७ अल्पमत संघ हैं परन्तु जो तिहाई सदस्य १७ ऐसे बड़े बड़े संघों में संगठित हैं जिनमें प्रत्येक में सदस्यों की संख्या १ लाख से भी अधिक है। कुछ संघ एक दस्तकारी (Craft) या दस्तकारों के प्रत्येक मीनिंग हैं जबकि कुछ बृहत् संघ जिनकी उद्योग

घरवा उद्योगों में लगे हुए सभी प्रकार के धमिक व कर्मचारियों तक फैले हुए हैं। प्रत्येक मंच अपने समय-समय में स्वतन्त्र रूप से कार्य करता है और इसका धारा शाखा (Branch) घरवा मंच (Lodge) है जो स्थानीय क्षेत्रों पर आधारित है। 'शाखा' धमिकारियों और समितियों का निर्वाचन करती है और उन सभी विषयों पर विचार करती है जो कि स्थानीय रूप से सुलभाये जा सकते हैं। धमिक महत्वपूर्ण मामलों में घरेलू राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा सुलभाये जाते हैं। धन क्षेत्रों तथा हर प्रकार के कर्मचारियों में भी संघर्ष विकसित होता जा रहा है। कई संघों में समामय प्रतिनिधि (Shop Steward) या कर्मचारियों के प्रतिनिधि भी होते हैं। इनके अतिरिक्त व्यापारिक परिषदें (Trade Councils) भी हैं जो विभिन्न उद्योगों में संगठित धमिकों के राजनैतिक और औद्योगिक प्रश्नों पर सहयोग देने के लिए हैं। यह प्रत्येक क्षेत्र में धमिक संघों की छाया का कार्य करती हैं। इंग्लैंड में धमिक संघ धान्योत्पन्न कृषक बस्तकारों जैसे हनीनिर्माय खानों, बस्त्र उद्योग ऐलने पाठ्यागत और मोदी कर्मचारियों में पर्याप्त धमिकता है। इंग्लैंड में धमिक संघों का एक महत्वपूर्ण कार्य सामूहिक सौदाकारी (Collective Bargaining) के माध्यम से शक्तियों से बातचीत करना रहा है।

इंग्लैंड में संगम - (Federations in England)

ब्रिटेन में धमिक संघ धान्योत्पन्न की एक प्रमुख विशेषता संघों की स्थापना है। सन् १८८६ में धान्य-धमिकों के संगम और सन् १९१३ में ऐलने कर्मचारियों की राष्ट्रीय यूनियन बनाई गई। सन् १९१४ में ऐलने धान और पाठ्यागत कर्मचारियों का एक विश्वीय संगठन बनाया गया। अनेक अन्य संघों की विधि के प्रश्नों पर विचार करते हैं। इंग्लैंड में धमिक संघ धान्योत्पन्न का केन्द्रीय संगठन 'ट्रेड यूनियन काँग्रेस' है जिससे अधिकांश धमिक संघ सम्बद्ध हैं। यह ट्रेड यूनियन काँग्रेस सन् १८९८ में स्थापित की गई थी और यह एक प्रकार से धमिकों की संघ है जिसमें अनेक वर्गों का प्रतिनिधित्व मिलता है। इस संस्था की एक सामान्य परिषद् सन् १९२१ में स्थापित की गई थी जिसका धमिक संघ में महत्वपूर्ण प्रभाव है। सामान्य परिषद् प्रतिबंधों कांच स द्वारा अपनी कामकाज (Executive) के रूप में निर्वाचित की जाती है। यह परिषद् उन सामान्य नीति को कार्यान्वित करती है जो कि सम्बद्ध संघों के प्रतिनिधियों के धान्य अधिवेशन द्वारा निश्चित की जाती है। ट्रेड यूनियन काँग्रेस को सरकार द्वारा सरकारी विभागों और धमिकों के प्रतिनिधियों के बीच परामर्श करने के लिए मांगता भी प्राप्त है।

ब्रिटिश धमिक संघों की उपसिद्धियां - (Achievements)

इंग्लैंड में धमिक संघ धान्योत्पन्न ने धमिकों की बला सुधारने और धन व सामाजिक कल्याण कांचों की धरणाओं में सुधार करने के लिए महत्वपूर्ण कार्य किया है। धमिक संघों ने धमिकों से बातचीत और समय-समय पर संघ कमीशन और धमिक प्रतिनिधियों को बराबरी देकर बजट्टी और धमिक की धरणाओं में सुधार कराया

है। समय-समय पर उन्हें ही हड़तालें और धीमी कार्यवाहियाँ भी की हैं परन्तु हड़ताल उनका अन्तिम ध्येय है जिसका प्रयोग उस समय किया जाता है जबकि परस्पर समझौते और वार्तालाप के साधन असफल हो जाते हैं। विकासारमक और वैधानिक उपायों से ही उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है। अतिक्रारी तरीके इंग्लैण्ड के संघ घान्दोसन के नेताओं और साधारण सदस्यों के विचारों के अनुकूल नहीं हैं। अनेक धमिक संघ अपने सदस्यों के लिए धनक साम प्राप्त करने में सफल हुए हैं। सब न वेदस कारखाने बर्कशॉप और ज़ानों में कार्य की सिकायतों पर ही ध्यान देते हैं बरन् प्रगतिशील निर्मायुकारी सुझावों में सहयोग भी देते हैं। उनका यह सहयोग छोटी छोटी बातों से बड़ी बड़ी बातों तक होता है। उदाहरणतः यह उचित प्रकाश रोशनदान कार्य सगठन की व्यवस्था से लेकर प्रकाश समय केटीम व्यवस्था और धमिकों के मनोरंजन एवं कस्याण कार्य जैसे प्रश्नों तक में रुचि लेते हैं। इस कार्य को समायोजित करने और इस ओर निरन्तर विचार करने के लिए धमिक संघ कांप स ने एक स्वामी 'बकर्मस कम्पनयन एण्ड लैक्रीड कमेटी' स्थापित की है। अनेक उद्योगों में अनुदान के अन्त पर भी संघ विचार करते हैं। उदाहरणतः संघ और मालिकों की मिमी बुमी कमेटी कुछ उद्योगों में इसलिए बनी हुई है कि यह नियमों का उत्सर्जन करने वाले कर्मचारियों के विरुद्ध आरोपों की सुनवाई कर सके। कर्मचारियों के मुकदमों में बकासत करने का काम भी संघ करते हैं। यदि किसी धमिक को मुअतस (Suspend) कर दिया जाता है या उसे कोई अन्य बन्ध मिलता है तो धमिकों की ओर से संघ सफ़ाई पत्र करने का कार्य भार भी संभालते हैं। यहाँ तक कि कई बार धमिकों की नियुक्ति और बर ब्रासगी का निर्णय संघ और मालिक मिलकर स्वयं करते हैं। इसके अतिरिक्त संघ अपने सदस्यों को तकरी के रूप में अनेक प्रकार की सहायता देते हैं जो कि विभिन्न संघों में मिश्र-मिश्र हैं। यह सहायता बीमारी दुर्घटना घपना मृत्यु की अवस्था में ही जाती है। अंतिम संस्कार के लिए भी सदस्यों को धन दिया जाता है जो अधिकतर उनकी पत्नी की मृत्यु पर प्रदान किया जाता है। कभी कभी मातृत्व हित नाम भी प्रदान किए जाते हैं। कुछ संघ बेकारी की अवस्था में भी सहायता देते हैं। मकद साम का प्रबन्ध इंग्लैण्ड में धमिक संघों का बहुत पुराना कार्य है और कई प्रारम्भिक धमिक संघ वास्तव में कस्याण समितियाँ ही थे। राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा अधिनियम के अन्तर्गत भी सदस्यों को जो बीमारी के दिनों में सहायता मिलती है उसको नियोजित करने का कार्य भी संघों का ही होता है और इसके लिए संघों को मास्यता प्राप्त समितियाँ माना जाता है। कुछ संघ सदस्यों के लिए सेवा सुभुया इहों (Convalescent Homes) की भी व्यवस्था करते हैं। इसके अतिरिक्त धमिक संघ अपने सदस्यों के लिए, जब उन पर कोई मुकदमा चलता है या जब वह दुर्घटना के परबाद् अतिपुति की मांग करते हैं, वानुनी सहायता की भी व्यवस्था करते हैं। अनेक संघ सदस्यों को गिरा सुविधाएँ प्रदान करने के लिए अनुदान और

एववृत्ति भी प्रदान करते हैं। इन उद्देश्यों के लिए 'वर्कर्स एम्प्लोयमन्ट एवो-
मिनेशन' तथा 'नेशनल कॉन्सिल ऑफ़ सेक्टर कॉमिटीज' स्थापित किए गए हैं जहाँ
सर्वोच्चतम सामाजिक विद्यान सांस्कृतिक विषयों और धार्मिक संनवाड का प्रथमम
कराया जाता है। कुछ संघ विशेष पाठ्यक्रमों की भी व्यवस्था करते हैं। उदाहरणतः
"ट्रांसपोर्ट एण्ड अनरस वर्कर्स यूनियन" ने अपने सदस्यों के लिए दिन के स्कूलों की
व्यवस्था की है और 'संघ पीएल युड' या संघ और उसकी समस्पाओं पर 'एन
व्यवहार कोस' की भी व्यवस्था की है। इसके अतिरिक्त अमिक संघों और सेक्टर
पार्टी के बीच बनिष्ठ सहयोग रहा है नचपि पिछली सेक्टर सरकार के समन धार्मिक
संघों का सेक्टर पार्टी की सरकार से मतभेद हो गया था जबकि मोदी और इस्पाठ
कर्मचारियों और लाम धर्मिकों ने हृदयताम कर दी थी। फिर भी यह कहा जा सकता
है कि धार्मिक संघ सेक्टर पार्टी और सरकार के बीच एक कड़ी है और इन्होंने सेक्टर
पार्टी पर दबाव डालकर संघन म धर्मिकों के लिए अनेक कामून बनवाये हैं। धार्मिक
संघों ने धर्मिकों की आवास समस्या की भी उपेक्षा नहीं की है। अन्तर्राष्ट्रीय दौरे में
ब्रिटिश सम संनवाड ने अन्तर्राष्ट्रीय सम संगठन के माध्यम से अनेक देशों का
सन्तोषजनक अन्तर्राष्ट्रीय स्तर स्थापित किया है।

इस प्रकार स इंग्लैंड में धार्मिक संघ अपने को केवल धर्मिकों क जीवन
तक ही सीमित नहीं रखते बल्कि ग्रेट ब्रिटेन की औद्योगिक प्रजाती में जनता पर्यन्त
ही महत्वपूर्ण स्थान है। ये धार्मिक-मजदूर सम्बन्धों की व्यवस्था का एक भाग हैं,
और धर्मिकों की ओर से मजदूरी पर बातचीत करने और रोजगार की अवस्थाओं पर
विचार करने के लिए धर्मिकों की संघटित संस्था हैं। उन्होंने अद्योग में मजदूर सम्बन्ध
स्थापित किए हैं और इस प्रकार एक महत्वपूर्ण जन-सेवा की है। उन्होंने इतमड में
अधिक विवादों की संख्या कम की है। धर्मिकों के सामान्य जीवन के रहन-सहन क
स्तर को ऊँचा उठाने की ओर भी ध्यान दिया है। उन्होंने धर्मिकों के मौखिक मान
सिक और सांस्कृतिक तथा नानरिक उत्तरदायित्व के स्तरों को ऊँचा उठाने में सहायता
की है। पिछन कुछ बयों से संघन के अपने सदस्यों की शिक्षा की ओर भी अधिक
ध्यान दिया है। इस बायों ने धर्मिकों के स्तर और धारम-सम्मान को बहुत ऊँचा
बठाया है। पर संघों से सरकार के हाथ निम्नतर धार्मिक सामाजिक और प्रतिरक्षा
(Defence) जैसे विषयों पर भी बरामर्ष लिया जाता है। धार्मिक संघ धार्मिकतन
सनाड के जीवन का प्रतिबिम्ब है और कोई भी इंग्लैंड के १ करोड धर्मिकों की
उपेक्षा करने का साहस नहीं कर सकता।

अमानय प्रतिनिधि धाम्बोसम (Shop Stewards Movement) —
इंग्लैंड में अमानय प्रतिनिधि धाम्बोसम का भी कुछ बल्लेन कर देना
उपयुक्त होगा। अमानय प्रतिनिधि धाम्बोसम और इसके परिणामस्वरूप उत्पन्न होने
वाला धार्मिक समिति धाम्बोसम (Workers Committee Movement) १११६-

१८ क बिदबपुत्र की देन था। एक समय तो ऐसा प्रतीत हुआ कि यह आन्दोलन धर्मिक सभों की नीति और संयोजन बिधि में परिवर्तन ला देगे परन्तु कुछ समाप्ति के एक दो वर्ष पश्चात् यह आन्दोलन प्रगति न कर सका।

सन् १९१६ की श्रिटले समिति की सिफारिशों के परिणामस्वरूप जट ब्रिटेन में संयुक्त औद्योगिक परिषदें (Joint Industrial Councils) स्थापित की गई थी। यह परिषद उद्योग की समस्याओं पर विचार करने के लिये थी। इनके प्रतिरिक्त प्रत्येक कार्यालय ही में धर्मिकों और मासिका के मध्य मतभेद दूर करने के लिये हवाई की सभ्या में मासिक मजदूर समितियाँ (Works Committee) स्थापित हो गई थीं। धर्माध्य प्रतिनिधि आन्दोलन इसके साथ ही साथ विकसित हुआ।

‘धर्माध्य प्रतिनिधि’ उस धर्मिक का कहते हैं जो किसी कारखाने में कारखाने की समस्याओं से सम्बन्धित विषयों पर प्रतिनिधित्व करने के लिए अपने अधिकारों द्वारा छूट लिया जाता है। इस प्रकार के धर्माध्य प्रतिनिधि कुछ से कुछ किसी कारखाने बिरोध की समझौतों पर विचार करना और उनका बिना प्रति बि क मासिकों को सुसम्भवा बड़ा कठिन होता है। धर्मिक सभों के अधिकारी बोड़े होते हैं और वह हर समय हर स्थान पर उपस्थित नहीं हो सकते। धर्मिक मंच तो केवल धर्मिकों के मामलों ही पर ही विचार करते हैं। धर्मिकों की कारखान में भी किसी ऐसे व्यक्ति को धारण्यता होती है जो तत्कालीन और बिरोध समझौतों को बंद ही वह उत्पन्न हों सुसम्भवा कर।

अतः यह उपयुक्त ही है कि प्रत्यक्ष मस्थान में धर्मिक अपने बीच स किमी एम व्यक्ति को चुने जो उनकी ओर स बोस सके और सभ में विषय बिरोध पर उनका प्रतिनिधित्व कर सक। लाण-धर्मिक इस कार्य के लिये ‘चैकचेमैन’ (Checkweighman) की सेवाएँ प्राप्त करत है बिनाका कानून के द्वारा उन्हें चुनने का अधिकार है और बिनाको धर्मिकों के द्वारा वतन दिया जाता है। धर्म्य उद्योगों में इस उद्देश्य के लिए धर्माध्य प्रतिनिधि छूटि जात हैं। परन्तु कुछ स पूरा वह महान् पुरुष नहीं थे। धर्मिक संघ भी उनका समर्थन नहीं करत था क्योंकि यह विचार था कि वह धर्मिक संघ अधिकारियों के विरोध में था जायेंगे। इनका मन्देश उचित ही था क्योंकि कई बार मासिका ने मासिक-मजदूर समितियाँ बनाईं और सभों को दूर रखने के लिए कारखानों के धर्म्य ही प्रतिनिधियों का चुनाव कर लिया। अतः सम्भ समय तक धर्माध्य प्रतिनिधियों को धर्मिक सभों के द्वारा किसी प्रकार के संयोजनार्थक कार्य नहीं लिए जाते थे।

परन्तु कुछ स सारी स्थिति ही बदल गई। मजदूरपक्ष का मास्यता प्राप्त धर्मिक सभों की शक्ति ही समाप्त हो गई क्योंकि पहले तो उन्होंने एक्टिव रूप से ही कुछ के दिनों में हड़ताल न करने का संकल्प लिया और फिर सन् १९१५ के ‘म्युनिसल ऑफिस बिल’ के अन्तर्गत हड़तालों को धर्म्य बोधित कर दिया गया।

इसका परिणाम यह हुआ कि जब लिपिट इतनी कम्योर हा जाती थी कि हड़ताल करने की स्थिति उत्पन्न हो जाये तो भूमिकों को मंच में बाहर के नेतृत्व की सहायता लेनी पड़ती थी। इस नेतृत्व की भूमि समाज्य प्रतिनिधियों ने थी। दूसरे वर्ष १९१५ के प्रारम्भ में ही घस्य-घस्यो की तीव्र धावकमकता के कारण कारखानों की प्रणाली में कार्याकारी परिवर्तन हो रहे थे। यहाँ तक कि कुछ भूमिकों के स्थान पर मनुष्यक व घस्युघस्य म्पी व पुरुष रज जा रहे थे। निरन्तर होने वाले इस परिवर्तन में सचर्प उत्पन्न हो गया और भूमिकों के प्रतिनिधियों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से बातचीत करना आवश्यक हो गया। इस प्रकार से समाज्य प्रतिनिधि महत्वपूर्ण हो गए। तीसरे मार्च १९१६ में घना में धनिवाय भर्ती साडू हो गई। इसके परिणामस्वरूप भूमिक से भूमिक सस्या में कुछ भूमिकों की मांग बुद्ध के कारण बहुत बढ़ गई और उनको सभा के लिए भेजना पड़ा। मार्च १९१७ में वही स्थिति के परभाव, बुद्ध के निरन्तर बढ़ते हुए विरोध के कारण सचर्प और भी बढ़ गया। इन विरोध का नेतृत्व भी समाज्य प्रतिनिधियों ने किया।

इन तीन कारणों के परिणामस्वरूप ही समाज्य प्रतिनिधियों के धान्दोलन का धम्पुवय और विकास हुआ। धान्दोलन के रूप में यह स्याहड में म्य १९१५ ई० में इम्पिनियर्स की हड़ताल से प्रारम्भ हुआ था। यह हड़ताल भूमिक वर्गों की धनुमति के बिना हुई। इसका नेतृत्व 'सेन्ट्रल विडड्रावल ऑफ़ सेक्टर कमेटी' (Central Withdrawal of Labour Committee) ने किया जिसमें संघों के द्वारा मान्यता प्राप्त समाज्य प्रतिनिधि तथा भूमिका के चुने हुए प्रतिनिधि होते थे। इस हड़ताल के परभाव इसमें स्याहड वर्कर्स कमेटी के रूप में घने को परिपठित कर लिया और प्रत्यक्ष इम्पिनियर्स कारखाने में एक निजी तौर में साधारण भूमिकों का सयलन हुआ। स्याहड का उपाहरण इन की बीमारी की तरह पैला तथा 'समाज्य प्रतिनिधि' धान्दोलन और विकसित हुआ। घनेक जिज्ञा में भूमिकों की समितिप्रा स्थापित की गई। प्रारम्भ में प्रतिनिधि केवल कृषक भूमिकों के प्रतिनिधि होते थे परन्तु और ही धान्दोलन मनुष्यक भूमिकों में भी फैल गया। भूमिकों की समितिप्रा स्थापित की गई जिन्होंने मर्गों में भी धावक प्रभावशाली प्रतिनिधित्व का दावा किया। परन्तु समाज्य प्रतिनिधि धान्दोलन मनुष्यक भूमिका की धपता कुशल भूमिकों का भूमिक प्रतिनिधित्व करता था तथा इसमें रिमों का कोई महत्वपूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं था।

स्याहड भूमिक समिति बुद्ध काल में ही सक्रिय रही परन्तु म्य १९१६ ई० में इसका नेतृत्व के कारण और देश निष्कासन के कारण इसकी सक्रिय रिम-रिम हा गई तथा नेतृत्व म्य स्थानों के स्थितियों में जाता गया। इसके परभाव 'सेक्टर वर्कर्स कमेटी' विकसित हुई। इम्पिनियर्स की समिति एक ठम कुशल भूमिक को जिसे घना में भर्ती कर निवा गया था हड़ताल द्वारा बापित बुनाने में लक्ष्य हुई। इसी समय घनेक स्थानीय समाज्य प्रतिनिधियों के सयलन को राष्ट्रीय धान्दोलन के रूप में संवर्धित करने का प्रयत्न किया गया। एक राष्ट्रीय समाज्य प्रतिनिधि समिति

की स्थापना की गई और जनवरी १८१८ में इसी क्रांति की प्रेरणा से राष्ट्रीय धर्मालय प्रतिनिधि परिषद् पूर्णतया संगठित हो गई। कुछ मास में इसीनीयतों और बहाज-निर्माण धर्मियों की जो हड़ताएँ हुईं वह धर्मासय प्रतिनिधियों के द्वारा संघामित की गई थी और यह मामला प्राप्त धर्मिक संघों के नेताओं की इच्छा के विरुद्ध हुई। प्रारम्भ में उन्होंने मजबूरी जैसे औद्योगिक प्रश्नों तक ही अपने को सीमित रखा परन्तु इसी क्रांति के परिणामस्वरूप यह सेवा की नीकरी के विरोध में हो गए और धर्म-स्थापना तथा पूजाबाध की समाप्ति के लिए क्रांतिकारी उपायों में विश्वास करने लगे। परन्तु यहाँ इस बात का उल्लेख कर दिया जाना आवश्यक है कि इस धर्मालय में सभी धर्मासय प्रतिनिधि सम्मिलित नहीं थे। इनमें से कई कट्टर धर्म-संघवादी और कुछ के समर्थक थे। धर्मालय के क्रांतिकारी विचारों के कारण सरकार और जनता में इसका जोर विरोध किया। जब तक कुछ होता रहा जब तक जो कुछ धर्मिकों की कमी के कारण धर्मासय प्रतिनिधियों से किसी ने कुछ न कहा। परन्तु कुछ समाप्त होते ही एक नवीन परिस्थिति उत्पन्न हो गई। धर्मिकों की पूर्ण धर्मिक थी और धर्म मामलों के लिए धर्मालय के नेताओं को बर्हास्त करना सरल हो गया। परिणामस्वरूप धर्मासय प्रतिनिधि का हाग्रा ही बर्हास्तियों को विम-बल देना था। धर्म धर्मासय प्रतिनिधि धर्मालय की पति शीघ्रता से शीघ्र होती गई। कई सक्रिय नेता धर्मालय इस में सम्मिलित हो गए और कुछ धर्मिक संघ नेतृत्व के अन्तर्गत आ गए।

यद्यपि धर्मिक संघों के नेता धर्मासय प्रतिनिधि के पक्ष में थे परन्तु उनके धर्मालय का सर्वत्र विरोध करते थे क्योंकि वह इसकी संघों के अधिकार और प्रणाली को चुनौती समझते थे। इसके अतिरिक्त धर्मासय प्रतिनिधि धर्मालय ने विभिन्न संघों के अन्तर् की ओर ध्यान नहीं दिया और सभी धर्मिकों को बिना इस बात का विचार किए कि वह किस संघ से सम्बन्धित है संगठित किया। धर्म यह धर्मालय धर्मिक संघ व्यवस्था से मत नहीं रख सका तथापि इसने काफी महत्ता प्राप्त कर ली थी। कुछ के पक्ष में भी धर्मिक धर्म सप नेताओं ने इस बात का प्रयत्न किया कि जैसी कुछ से पूर्व स्थिति थी धर्मासय प्रतिनिधियों को धर्म संघों के अधीन काय करने दिया जाए। परन्तु धर्मालय अक्षम रहा क्योंकि इसने क्रांतिकारी उपायों और संघों पर धर्मिकों के नियंत्रण में विश्वास करना प्रारम्भ कर दिया था। इंग्लैण्ड में धर्मिक संघ धर्मालय क्रांतिकारी धर्मियों के सर्वत्र विरुद्ध रहा है और धर्मिक व्यवस्था में सुधार के लिए धर्म-व्यवस्था के वर्तमान रूप में ही विश्वास करता रहा है। धर्म धर्मासय प्रतिनिधि धर्मालय सभी समय पुनः शक्तिशाली हो सकता है जबकि धर्मिकों में क्रांतिकारी विचार प्रसर जायें। उनका धर्मिक संघों की चुनौती के रूप में होना अन्वेषण ही है। धर्मासय प्रतिनिधि धर्मिक संघ धर्मालय के साथ धर्मिक उनके एक भाग के रूप में ही सर्वोत्तम तरीके में काय कर सकते हैं। यद्यपि धर्मासय प्रतिनिधि धर्म भी अपने को एक धर्म

य एही के रूप में समझत हैं तथापि अमिक संघ इतने सक्तिशाली हो पय है कि सन् १९१४-१८ के महायुद्ध के समय क समाज्य प्रतिनिधि जैसे धाम्बोलन का बिकसित होना कठिन है।

अम्य देशों में अमिक संघ —

अम संघवार बिकस्यपी धाम्बोलन है। अत्यन्त पूजीवाद वच में इसक बिकाम भी पूजीवाद क बिकास के साथ हुआ है और यह पूजीवादी घोषण के अतर के रूप म धारा बढा है। सिद्धांत' धारवा 'धाम्बोलन' क कारण नही बरन् धमजीवी वय की तीव्र धारवाकटा के कारण ही अम संघवार का धम्यवय हुआ। अत धम संघवार सब पूजीवादी देशों मे बिकसित हुआ है। इटली जर्मनी और कुछ चीना तक जापान में भी अम संघों को समाप्त कर दिया गया था क्योंकि फ्यासिस्ट सरकार कभी भी धमिकों को सक्ति में बिकवास नहीं करती थी और अतने केवल बही संघ बनाए जो कि सत्तावादी दम के द्वारा नियमित हो। ऐसे देशों में धमिकों में धम्यवाचन बनाए रखने क लिए सब स्थापित हुए थे। परन्तु चूकि उन्हें हड़ताल करने प्रववा धरने दिवों की रखा करने का अधिकार न था अत इनको अमिक संघ नहीं कहा जा सकता। इसरी और अम संघवार अमेरिका ब्रिटन व वच मं काफ़ी सक्ति-धामी एहा है। अमेरिका में काफ़ी समय से अमेरिकन फेडरेशन ऑफ मेबर (A. F. L.) इस्तकारी संघ का संगठन रही है जिसमें मुख्यतया कुशल अमिक हॉटे कम्पनी के सय धार हुए व जिनका निर्माण बड़े-बड़े नामिकों द्वारा स्वतंत्र धमजीवी बगं संगठन को रोकन के उद्देश्य से किया गया था। अमरिकन फेडरेशन ऑफ मेबर के अपनी इस्तकारी संघ नीति म परिवर्तन नहीं किया। परिवर्णमस्वरूप डॉन एम. सीबिस की धम्यवाता मे सन् १९१८ मं एक कमेटी फार इन्डस्ट्रियस धारवेनाइडेसन (C. I. O.) बनाई गई जिनके धरंगठित उद्योगों मे भी धीरोगिक संघ बनाने प्रारम्भ किए। मेबर फेडरेशन के बिराध के बावजूद भी इस कमेटी मे धपना प्रचार जारी रहा और अन्त्येत्तनीय सधमता पाई। सन् १९१७ मं यह दोनों संघन मिल कर एक सम्मिलित नाम स एच हा गये (A. F. L. — C. I. O.)।

अम के अमिक संघ जिनको ध्यवसायिक संघ कहा जाता है अतदिम सरकार को उबारता व कारण तीव्रता से बिकसित हुए। यद्यपि संघ कारखानों पर सरकार म धपना अधिकार कर लिया था तथापि इस बात को संघ ने स्वीकार किया कि अमिक संघों का यह मौलिक कार्य कि वह धमिकों की धरस्वाधों में उन्नति लार्ने धनार्थ बना रहेगा। सन् १९२८ मे अमिक संघों को समाजवादी नीति के साथ समायोजित किया गया और धप धम संघों का केवल धमिकों की धरस्वाएं मुधारना धन कार्य नहीं रह गया है। अत यह अम धनुगामन लापू करने और उत्पारन बढाने में सरकार की महायक संस्का हो गये हैं। वे धमिकों की धोम्यवाधों एवं कुशलवाधों में भी वृद्धि करने और कारखानों के बिकेकीकरण का प्रयत्न करने में सहयोग प्रदान

करते हैं। धमिक संघ उद्योगों के आचार पर मर्यादित किए जाने हैं। आचार स्तर पर कारखाना मजदूरों की स्थानीय समिति होती है जिसका निर्वाचन उद्योग मजदूरों द्वारा किया जाता है। प्रत्येक प्राइमरी प्रशासन इकाइयों के सभी मजदूरों द्वारा युक्त मजदूर होता है। प्रत्येक प्राइमरी समिति जिसे मोबियव (District Soviet) के लिए प्रतिनिधियों का निर्वाचन करती है वहाँ से प्रतिनिधि प्रांतीय सोवियत (Provincial Soviet) का और प्रांतीय सोवियत से संवैधानिक गणतन्त्र की धम मजदूर सोवियत (Tr de Union Soviet of the Constituent Republic) के लिए चुने जाते हैं। मजदूरों पर धम संघों की पुलिस संघ परिषद (All Union Council of Trade Unions) की सर्वोच्च सामान्य सभा (Supreme Common Assembly) होती है। यह संघ में सब धमिकों के लिए काम करती है।

अन्य देशों में भी धम संघ विकसित हुए हैं। फ्रांस में ऐसे अनेक धम संघ पाए जाते हैं जो मालिकों के द्वारा समर्थित हैं और उन्हें उनका हानि घटा दिया जाता है। इस संघों को पोपित संघ (Yellow Unions) कहा जाता है।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में काफी समय में धमिक मजदूर धाम्योत्तम का प्रतिनिधित्व मुख्यतः दो संस्थाओं द्वारा किया गया है। एक है "इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ ट्रेड यूनियन" जिसका प्रधान कार्यालय एमस्टर्डम में है तथा दूसरी है रेड "इंटरनेशनल ऑफ लैबर यूनियन" का मास्का में मर्यादित है। दोनों के बिचारे में काफी अन्तर है। दोनों के व्यवहार में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पाया जाता है। यही कारण है कि दोनों को समायोजित करने के प्रयत्नों में सफलता नहीं मिल पाई है। वर्तमान समय में यह अन्तर्राष्ट्रीय समस्या कई फेडरेशन ऑफ ट्रेड यूनियन" जिनमें साम्यवादी का प्रभाव है तथा "इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ लैबर यूनियन" जिनमें साम्यवादी विरोधी दलों के सदस्य हैं और जिनमें ब्रिटिश ट्रेड यूनियन कायम भी सम्मिलित है का नाम से जानी जाती हैं। यह अन्तर्राष्ट्रीय समस्या समय-समय पर सब दलों में धमिकों के सामान्य हित के ही हनु सम्मेलन आयोजित करती हैं। १९२२ में सन्तन में बरिड ट्रेड यूनियन कायम आयोजित की गई जिसमें समार की धम समस्याओं पर विचार करने के लिए ३० राष्ट्रीय प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं का विकास एक स्वतंत्र बिन्दु है परन्तु यह अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं का धमिक संघों का कथन एक ही संगम हो और संसार के सब देशों के धमिकों का धम एक ही समझ जाए। यह बात स्पष्ट रूप से समझ लेनी चाहिए कि धमिक संघ धाम्योत्तम मजदूरों प्रणाली के अन्तर्गत धमिकों का धाम्योत्तम है अर्थात् यह धमिकों और धमिकों की पहने में ही उपस्थिति को मानकर चलता है। धम धमिक

सब धार्यात्मक म साम्यवादी विचारों का साना धार्यात्मक का निबल करना है और
 मासिकों म धनाकरयक ही धमिकों के प्रति विरोध की भावना उत्पन्न करता है।
 यदि धर्म-धर्मवत्सा को बलसता धार्यात्मक हा तो धर्म साधनों व उपायों को काम में
 साना चाहिए। धमिक मध धार्यात्मक को राजनीतिक सधनों का धलासा नहीं बनाना
 चाहिए।

भारत और इंग्लैंड के धमिक संघों की तुलना —

यह हम भारत तथा इंग्लैंड के धमिक सधनवाद की विभिन्नताओं का उल्लेख
 करते। यह बात ध्यान देने योग्य है कि इंग्लैंड म पूर्ण राजवार है जिसने परिष्कार
 स्वरूप धर्म की पूर्ति की कमी है। भारत में स्थिति इसके विरुद्ध विपरीत है। यहाँ
 धार्यात्मक बेरोजगारी है और धर्म की पूर्ति माग से धमिक है। भारतवर्ष में मजदूरी
 की धर्म देणों की अपेक्षा बहुत कम है। हमारे देश म धमिक धर्म व रहन-सहन की
 रक्षा बड़ी जोखनीय है जबकि धर्म देणों म धमिकों की परिस्थितियों म काफी
 सुधार हुआ है। इंग्लैंड में सभी धर्मकीधियों के लिए ध्यापक सामाजिक बीमा योजना है
 जबकि भारतवर्ष म इस बिना म प्रारम्भिक धर्म ही उठाया गया है। धर्म देणों के
 धमिक हमारे धमिकों की धपसा धमिक पिहित और जापक भी है। धर्म देणों
 म जबकि स्वामी धीधोमिक जनसंख्या है भारतवर्ष के धमिकों म प्रकाशिता पाई
 जाती है।

इसके धनिरिक्त धर्म तथा व सगठन में भी धर्म है। इंग्लैंड में धमिक
 सधनवाद इस्लामी धरिणियों म विकसित हुआ। इंग्लैंड और धर्मरिका दोनों म ही
 वह धमिकतर दस्तकारी के धनुमार धार्यात्मक है। भारत म धर्म सध धमिकतर
 उधोगों के धनुमार धार्यात्मक है। इंग्लैंड और धर्मरिका म धमिक मध राष्ट्रीय
 धार्यात्मक पर सधठित किए गए हैं। भारतवर्ष म यह धमिकतर स्वामीय है। इस
 धनिरिक्त धर्म देणों में धमिक सधों की धपनी विधाय निधि होती है उनके प्राय
 धपने सधन हात है धिनम कि उनका कार्य-रत मनासय तथा सुधधस्थित कार्यसिध
 होता है। कुछ राष्ट्रीय धमिक सधों व तो धपन धार्यात्मक भी है और धमिकतर
 राष्ट्रीय सध धपने ममाधार-धन भी प्रकाशित करते हैं। इसके विपरीत भारतवर्ष
 में धमिकतर सध के कार्यसिध किधय के धमिकस्थित मनासों में है तथा उनके पास
 धनरधति धर्म मात्रा म होती है। यहाँ के सध प्राय इंग्लैंड हात की समारना
 के समय ही धपन लिए धन एकत्रित करत हैं। साधारण स्थिति म यहाँ कम ही
 एकत्रित होता है। यहाँ के धमिक सधों के कार्यसिध धमिकस्थित धप में है और
 कार्य-रत भी धमिक नहीं है। इसके धनिरिक्त सधों में रचनात्मक कार्य का धभी
 विकास नहीं हो पाया है और यह धमिकतर धार्यात्मक के देश में कार्य करने रहे हैं।
 धर्म देणों म धीधोमिक इंग्लैंड में धमिक सधों के रचनात्मक कार्य का धपति
 काफी विकास हो चुका है तथाकि उन्होंने धपना धार्यात्मक रूप भी बनाय रगा है।

इंग्लैंड के धार्मिक संघर्ष के सामाजिक और व्यापारिक कार्यों की वजह से हम ऊपर कर चुके हैं। इतिहासी वेब्स की बातों के धार्मिक सिनेमा-थर, पुस्तकालय चार्जार्जिक कमरों और स्कूलों का भी धारोजन करते हैं। अमेरिका में तो एक सभ अपनी स्वयं की बीमा कम्पनी भी बनाया है और कुछ संघों में स्वयं के जगह-जगह विभाग-वृह भी बोल रहे हैं जहां सख्त्य जाकर ठहर सकते हैं। इंग्लैंड और अमेरिका में प्रत्येक सख्त्य अपनी सख्त्यता काई अपने साम रखता है और प्रुतरो का विलास में और धनुभव करता है। इस प्रकार की भावना का हमारे धर्मियों में समाज है। अन्य देशों में हम देखते हैं कि धार्मिक सख्त्यता मुस्क को स्वयं ही बना अपना कर्त्तव्य समझते हैं जो कि कमी-कमी मनी-प्राइर द्वारा भी भेजा जाता है। इसका विपरीत भारत में सख्त्यता मुस्क को एकज करने के लिए सबों के पराधिकारियों को धर-धर फिरना पड़ता है। मुस्क भी निर्मित रूप से नहीं दिया जाता और जमा में देने वालों परात् वकामाचारों की संख्या काफी होती है। भारत की संवेष्टा अन्य देशों में सख्त्यता मुस्क भी अधिक है और मुस्क साप्ताहिक संख्या मासिक दिया जाता है। इंग्लैंड में धर्मस्य प्रतिनिधि बान्दोसन काफी विकसित हुआ है तथा धर्मस्य प्रति निधि का काफी महत्व है। भारत में हम प्रत्येक दुकान या मस्जान पर धर्मियों का कोई प्रतिनिधि नहीं पाते। अन्य देशों में धार्मिक संघों के तथा धार्मिक धर्मों में ही होते हैं। भारत में अधिकांश धर्म सबों पर वाहरी व्यक्ति काम करते हैं। इंग्लैंड के धर्म सभ राजनैतिक जीवन में महत्वपूर्ण काम लेते हैं परन्तु भारत में धर्म और धार्मिक ध्यान नहीं किया गया है। धार्मिक संघों का सुभान की इच्छा भी काफी धन्य है। भारत के अधिकांश धार्मिक संघों पर राजनैतिक संस्थाएँ छाई हुई हैं। भारतीय राष्ट्रीय दृष्ट पुनियन काईस बाठालाप और समझौतों में विचारात करती हैं जबकि धार्मिक भारतीय दृष्ट पुनियन काईस मदैव हड़ताम को प्ररित करती हैं। इसका विपरीत विन्डिष्ट दृष्ट पुनियन काईस में प्रत्येक संघ पर यह अनिवार्य कर दिया है कि वह हर प्रकार के संघों की मुक्तता केन्द्रीय संस्था की है। जब समझौतों की धारणा नहीं रखती तब ही केन्द्रीय संस्था हस्तक्षेप करती है। मासिक मजदूरों में पारम्परिक बाठ खोल अधिकांश सामूहिक संस्थाकायी पर ही आधारित होती है। भारत में धर्मियों में अधिकांश पाया जाता है और वह किया भी एही सामूहिक संस्थाकायी में अधिकांश सरकार भी एक पक्ष के रूप में स हो सम्मिलित होते हुए करते हैं। अमेरिका और इंग्लैंड में हड़ताम होने में पूज्य मठ का लिया जाना प्राथमिक है। भारत में अधिकांश हड़तालें एकस्मात् रूप में ही जाती हैं। हमारे देश में धार्मिक संघों के कार्यकर्ताओं को धर्म एक संस्था भी जाता है और बाप स धन्य भी कर दिया जाता है। परन्तु एमो बातें दूसरे देशों में नहीं पाई जाती। यह भी उल्लेखनीय है कि भारत में कुछ धार्मिक संघ नैतिक धारण को भी मानते हैं जबकि वह बाग हम अन्य देशों में नहीं पाते। भारत में धार्मिक संघ धन्य राजनैतिक दलों में विभक्त हैं। इनके विपरीत इंग्लैंड में धार्मिक संघ धर्मोसन केवल एक राजनैतिक संस्था धर्मात् मेवरे-पार्टी का ही

अधिकतर समर्पन करता है।

भारत व इंग्लैंड के अनेक संघों में अन्तर होते हुए भी यह कहा जा सकता है कि हमारे देश में मठ कुछ वर्षों से धर्म मंत्र धाम्बोसन स्वर और अस्तित्वात्मी होता आ रहा है। यह दिन भी दूर नहीं जब भारत में धर्म संघ धाम्बोसन उदयता ही अस्तित्वात्मी हो जायगा जितना अन्य देशों में है और हमारे धर्मजीवी वर्ग के लिए भी धर्म धाम्बोसन प्राप्त करने में सहायता दया जितने उनका उन्नति हो और वह एक स्वस्थ जीवन और धाम्बो धर्म की बगामों को प्राप्त कर सकें।



भारतवर्ष में औद्योगिक विवाद

(Industrial Disputes in India)

१९१४ - १८ के महायुद्ध के पश्चात् से हमारे औद्योगिक क्षेत्रों में घोर प्रचण्ड निरन्तर रूप से व्याप्त हो रहा है। यह प्रचण्ड इतनी प्रबल मात्रा में बढ़ गया है कि यह धर्मबोधियों के हित तथा इनकी कार्यक्षमता में रूचि रखने वाले विचारकों की विस्ता का विषय बन गया है। हड़तालें न केवल भूतकाल में हुई हैं हैं बल्कि वर्तमान समय में भी प्रचलन होता रहती है। प्रबलतर हड़तालों से प्रचण्ड-बीबी और अनियमित रूप से होती हैं परन्तु कुछ हड़तालों दीर्घकाल तक चलन वाली होती हैं और उनमें कठुता भी आ जाती है। धर्मिकों तथा मालिकों के बीच की खाई गहरी होती जा रही है और यह बात स्पष्ट है कि मालिक मजदूरों के ऐसे सम्बन्ध तथा इस प्रकार की प्रवृत्ति वर्तमान समय में भारतीय उद्योगों व धर्मिकों की एक मुख्य व अटल समस्या बन गई है और सम्भवतः भविष्य में भी रहेगी। भारत का भावी औद्योगिक विकास तथा पंचवर्षीय आयोजनाओं की सफलता इस समस्या के उचित समाधान पर ही निर्भर है।

विवादों के मूल कारण —

पूर्व अध्यायों में यह बात स्पष्ट कर दी गई है कि धातुनिक औद्योगिक प्रणाली की मुख्य विशेषता धर्म और पूंजी के बीच का संघर्ष है। धातुनिक उद्योगों में बड़ी मात्रा में पूंजी की आवश्यकता होती है जिसकी पूर्ति करना निर्धन धर्मिकों की शक्ति के बाहर है। परिणामस्वरूप दो विभिन्न बग उत्पन्न हो गए हैं एक बग तो पूंजी की पूर्ति करता है तथा दूसरा बग धर्म की पूर्ति करता है। माषारण्डतया इनको पूंजी पति व धर्मिक कहा जाता है। इन पूंजीपतियों व धर्मिकों के न केवल अपने-अपने बल्कि कभी-कभी एक दूसरे के विरोधी हित भी हो जाते हैं। यही वास्तव में धातुनिक औद्योगिक प्रवृत्ति का मूल कारण है। जब तक धर्म और पूंजी एक ही व्यक्ति के हाथों में रहते हैं तब तक संघर्ष की समस्या उत्पन्न नहीं होती। परन्तु जैसे ही धर्म और पूंजी पृथक हो जाते हैं जैसा कि बड़े पैमाने के उद्योगों में होता है तब शक्तिशाली द्वारा निर्धन का शोषण करने की प्रवृत्ति जागृत हो उठती है और संघर्ष उत्पन्न हो जाता है। इस प्रकार जहाँ भी औद्योगीकरण का विस्तार हुआ है वहीं हमें पारस्परिक असहमति हड़तालों तामाबन्दी आदि की समस्याएँ दृष्टिगोचर होती हैं।

हड़ताल उभ परिस्थिति को कहते हैं जबकि धर्मिक धर्म समय तक काम पर जाने को तयार नहीं होने जब तक कि उनकी माँगें स्वीकार न कर ली जायें।

अधिकतर समान है ।

भारत व इंग्लैंड के अमित नर्चा में अन्तर हात हुए भी यह कहा जा सकता है कि हमारे देश में यह कुछ वर्षों में धर्म सब धार्मिकान्तर स्थिर और अल्पवर्षी होता जा रहा है । यह दिन भी दूर नहीं जब भारत में धर्म सब धार्मिकान्तर उतना ही अल्पवर्षी हो जायगा जितना अल्प है । और हमारे धर्मजीवी लोग के लिए भी ऐसी अवसरों प्राप्त करने में सहायता देना जिसमें उन्हीं उन्नति हो और यह एक स्वस्थ जीवन और अल्पे वाय की दशाया वा प्राप्त कर सकें ।



भारतवर्ष में औद्योगिक विवाद

(Industrial Disputes in India)

१९१४ - १८ के महायुद्ध के पश्चात् से हमारे औद्योगिक केन्द्रों में घोर असन्तोष निरन्तर रूप से व्याप्त हो रहा है। यह असन्तोष इतनी अधिक मात्रा में बढ़ गया है कि यह अमजबूतियों के हित तथा इनकी कार्यक्षमता में रूचि रखने वाले विचारकों की चिन्ता का विषय बन गया है। हड़तालें न केवल मुक्तकाल में हुई हैं हैं बल्कि वर्तमान समय में भी अन्तर होता रहती है। अधिकतर हड़ताले तो अल्प बीबी और अनियमित रूप में होती हैं परन्तु कुछ हड़तालों दीर्घकाल तक चलने वाली होती हैं और उनमें कठुता भी आ जाती है। धर्मिकी तथा मानिक के बीच की घाई गहरी होती आ रही है और यह बात स्पष्ट है कि मानिक मजदूरों के ऐसे सम्बन्ध तथा इस प्रकार की असाति वर्तमान समय में भारतीय उद्योगों व धर्मिकी की एक मुख्य व अटल समस्या बन गई है और सम्भवतः अविष्य में भी रहेगी। भारत का जारी औद्योगिक विकास तथा पञ्चवर्षीय आयोजनाओं की सफलता इस समस्या के उचित समाधान पर ही निर्भर है।

बिवादों के मूल कारण —

पूर्व अध्यायों में यह बात स्पष्ट कर दी गई है कि प्राथमिक औद्योगिक प्रणाली की मुख्य विशेषता अम और पूँजी के बीच का संघर्ष है। प्राथमिक उद्योगों में बड़ी मात्रा में पूँजी की आवश्यकता होती है जिसकी पूर्ति करना निर्भर धर्मिकों की शक्ति के बाहर है। परिणामस्वरूप दो विभिन्न वर्ग उत्पन्न हो गए हैं एक वर्ग तो पूँजी की पूर्ति करता है तथा दूसरा वर्ग अम की पूर्ति करता है। साधारणतया इनको पूँजी पति व धर्मिक कहा जाता है। इन पूँजीपतियों व धर्मिकों के म. क. व. अपने-अपने बरन् कनी-कनी एक दूसरे के विरोधी हित भी हो जाते हैं। यही वास्तव में प्राथमिक औद्योगिक असाति का मूल कारण है। जब तक अम और पूँजी एक ही व्यक्ति के हाथों में रहते हैं तब तक संघर्ष की समस्या उत्पन्न नहीं होती। परन्तु जैसे ही अम और पूँजी पृथक् हो जाते हैं जैसा कि बड़े पैमाने के उद्योगों में होता है तब अक्षितशाली द्वारा निर्भर का शोषण करने की प्रकृति जागृत हो उठती है और संघर्ष उत्पन्न हो जाता है। इन प्रकार जहाँ भी औद्योगीकरण का विस्तार हुआ है वहीं हमें पारस्परिक असहमति हड़ताले तात्काली धारि की समस्याएँ दृष्टिगोचर होती हैं।

हड़ताले अम परिस्तिपति को कहते हैं जबकि धर्मिक उम समय तक काम पर जाने को तैयार नहीं होते जब तक कि उनकी माँगें स्वीकार न कर ली जायें।

तामाबन्दी मासिकों के द्वारा लिया गया वह पग है जिसके द्वारा वह संस्थानों को उस समय तक बन्द रखते हैं जब तक कि धमिक उनकी ही छतों पर कार्य करने की संसार न हो। दोनों ही स्थितियों में सम्बन्धित पलों का उद्देश्य यही होता है कि वह अपने सिंग उचित मुक्तिप्राप्त कर सकें। इन कारण हड़ताल न तामाबन्दी दोनों ही प्रस्थायी होते हैं। इन मजदूरों के कई कारण हैं। उदाहरणस्वरूप किसी कर्मचारी को पबन्धित करना धमिकों की छतनी धक्का धम्य महत्वपूर्ण समस्वारों से मजदूरी बोनस धक्काध कार्य के बन्धे कार्य की बधाएँ धादि। वास्तव में जब कभी भी धमिक किसी कठिनाई का अनुभव करते हैं या उनको कोई शिकायत होती है तब वह उसके समाधान के लिए संगठित हो जाते हैं और औद्योगिक धमिक उत्पन्न हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप समय समय पर अनेक हड़ताले होती हैं। धीमपरिवर्तनीय धामिक क्रियाध का समय में विचार धमिक गम्भीर हो जाते हैं और हड़तालों और तामाबन्दी धमिक होने लगती हैं। इन धामिक परिवर्तनों का कारण साधारणतया मन्दी विवेकीकरण बेकारी रहन-सहन के म्य में वृद्धि धादि समस्वारों से सम्बन्धित होता है।

भारत न औद्योगिक विचारों का इतिहास -

विद्यमान धमिकों के मध्य में बड़े पैमाने के उद्योगों की स्थापना के बाव से ही भारत में ऊपर लिखे कारण दृष्टिकोण होने लगे। परन्तु १९१० - १९ की सरद म्भु से पूर्व भारतवर्ष में हड़तालों सामान्य रूप से नहीं होती थी क्योंकि धमिक धमिक से लोकमत धमिक विचारधारा न था और सरकार भी ऐसी समस्वारों में तटस्थ रहती थी। परन्तु धामिक उद्योगों के विकास के प्रारम्भिक समय में भी छोटे स्तर पर कुछ हड़ताले हुए। १८५९ - ६ में यूरोपियन रेलवे ठेकेदारों तथा उनके भारतीय धमिकों के बीच एक महत्वपूर्ण संघर्ष हुआ। फलतः १८६६ में मासिक एवं धमिक (विचार) धमिकियम पारित किया गया। १८७७ में मागपुर की एम्प्लेस मिश में मजदूरी दर के प्रश्न पर तथा १८८२ में बम्बई की सूटी बस्न मिश में महत्वपूर्ण हड़तालों का विवरण मिलता है। १८८२ से १८९९ के बीच बम्बई तथा मद्रास में २५ हड़तालों का विवरण मिलता है। ऐसी सर्वप्रथम बड़ी हड़ताल जिसका अभिष्ट (Official) विवरण मिलता है महमदाबाद की एक सूटी मिश में हुई, जो साप्ताहिक मजदूरी की घण्टा धामिक (Fortnight) रूप से मजदूरी देने के प्रश्न पर थी। सूची बड़ी हड़ताल १८९७ में मजदूरी धुगतान के प्रश्न को लेकर बम्बई में हुई। परन्तु यह हड़ताल धमिक नहीं थी। १९११ में बम्बई की मिलों में विद्युत धमिक धा धाने एवं कार्य के बन्धे बढ़ाये जाने के फलस्वरूप हड़ताले हुए। रेलों में विशेषतया पूर्वी बंगाल स्टेट रेलवे में भी मन्दीर हड़ताले हुए। हड़तालों की धमिक सीमा तब पहुंची जब १९०८ में धी विलक को ६ वर्ष का काठबाध मिलने पर बम्बई में ६ दिन की धमिक धाम हड़ताल हुई। परन्तु मुझ से पूर्व हड़ताले कम ही होती थी क्योंकि धमिकों में संगठन एवं नेतृत्व की कमी थी जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण

निराशापूर्ण था और औद्योगिक जीवन का कटुता से बचने के लिए उनका एकमात्र महाप यही था कि वह अपने गांव के घरों को वापिस लाने जाएं। वास्तव में उस समय तक अधिकांश भाग्यशाली और मतोपी ही थे।

प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् औद्योगिक विवाद -

१९१४-१८ के प्रथम विश्वयुद्ध ने इस स्थिति में महत्वपूर्ण परिवर्तन कर दिया। तब से विरोधपूर्ण युद्ध के अन्त में अधिकांश और मासिकों के सम्बन्ध अधिकांश कटु हो गए हैं तथा दोनों के मध्य विवाद भी बढ़ गए हैं। विश्वयुद्ध के कारण देश में जन जागृति उत्पन्न हो गई थी। जन की प्राप्ति के समस्त समार में प्राधिकारी महार उत्पन्न करती थी जिसका प्रभाव भारतीय अधिकांश पर भी पड़ा। रूढ़-मार्ग का ध्यान बढ़ रहा था कीमतें सगमम दुगुनी हो गई थी। परन्तु मजदूरी की दर उतनी नहीं बढ़ सकी जिसकी कीमतें बढ़ गई थी। पूँजी-निष्ठा का लाभ युद्ध के कारण बहुत बढ़ गया था और अधिकांश भी इसमें अपना भाग चाहते थे। जन की राजनैतिक प्रगति से अधिकांश को ना अपने अधिकांश का मान हुआ। बांध-समुक्ति का लाभ प्राप्त कर ली गई थी। महान्मा गोपी राजनैतिक क्षेत्र में आ गए थे। अहिंसावादी बाग की घटना सरकार के रॉसट अधिकांश के मार्ग लों जैसे अत्याचारी कार्य करों के बन्धे हुए भार अधिकांश सभी न अगति उत्पन्न करती थी। अन्तर्राष्ट्रीय धर्म समार की स्थापना से अधिकांश का कुछ प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। इस सब का परिणाम यह हुआ कि हस्तामा की जा लहर १९१८ में मार्च और १९१९ और १९२० तक सम्पूर्ण देश में व्याप्त हो गई यह अधिकांश सम्भार थी। सन् १९१८ के अन्त में बम्बई की मूठी बल्ल मियों में पहली बड़ी हड़ताल हुई और जनवरी १९१९ तक सगमम १-५.० • अधिकांश में जिनमें सभी अधिकांश आ जाते थे यह हड़ताल फैल गयी।

सन् १९१९ में रॉसट एक न विरोध में हस्तामां हुई। सन् १९२० के प्रथम ६ मासों में सगमम २०० हस्तामां हुई जिनमें १५ साल अधिकांश सम्मिलित थे। जैसे जैसे देश में अधिकांश अधिकांश विविध होना गया इनमें से अधिकांश हड़तालों अन्त भी होती रहीं। सन् १९२० की अन्त अन्तु के पश्चात् अधिकांश औद्योगिक अधिकांश कुछ कम हो गई थी परन्तु इस समय तक अधिकांश अधिकांश हस्तामा के अन्त से परिचित हो चुके थे। इस समय की बड़ी हड़तालों में १९२१ की प्रथम के बांध बागान की हड़ताल अन्तःस्थनीय है। जन हड़ताल में प्रथम के बागान के कुमियों के अन्त काम अधिकांश बागान से बाहर जाने का प्रथम क्रिया परन्तु बांधपुर देनके अन्त पर अधिकांश एवं अधिकांश कुमियों पर गोरना निपाहियों द्वारा बांधमग लिया गया। परिणामस्वरूप प्रथम बांधम रमके न अन्तःस्थनीय के अधिकांश न तत्काल ही सहायुक्ति में हड़ताल कर दी जा सगमम तीन मास तक बसती रही। परन्तु कुमियों की हड़ताल अन्त में सगमम के अन्तःस्थनीय के कारण अधिकांश रही। सन् १९२२ में

ईस्ट इंडिया कम्पनी के कर्मचारियों ने हड़ताल की। उन् १९२४ में बम्बई नगर में सामान्य रूप से हड़ताल की गई और समग्र १९०००० अधिकियों ने उत्तम भाव लिया। अपने कार्य ही एक और अधिक बड़ी घाम हड़ताल हुई; जिसमें समग्र एक करोड़ रम लाख रम दिनों की छति हुई। यह कहा जा सकता है कि इस समय तक देश में औद्योगिक अशांति की जो प्रथम सत्र घाई की गई ही व्याप्त रही। इसका मुख्य कारण युद्ध के समय और उसके पश्चात् के मूल्को में कृषि और अधिकों का उच्च मजदूरी की माग थी।

१९२६ के पदघात औद्योगिक विवाद

१९२८ में औद्योगिक विवादों की दूसरी सत्र घाई। धार्मिक मंत्री प्रारम्भ हो चुकी थी जिसमें उद्योग पर कुछ प्रभाव पड़ा। उद्योगपतियों ने इस मंत्री के प्रभाव को दूर करने के लिए विवेकीकरण सीमित उत्पादन मजदूरी में कमी तथा अधिकों की छुट्टी की नीति को अपनाया। स्वभावतः अधिकों ने इस नीति के विरुद्ध असहयोग प्रकट किया। इस समय तक अधिक सब आन्दोलन हुए हो गया था और देश में साम्यवादी गम भी दृष्टिगोचर होने लग प। फलतः देश में औद्योगिक अशांति बढ़ गई। १९२८ में विवेकीकरण लागू करने के विरोध में बम्बई में एक बड़ी हड़ताल हुई। अधिकों पर व्यापार किया गया। परिस्मात्सक्य १९२६ में बम्बई में पुनः एक बड़ी हड़ताल हुई जो ६ महीने तक चलती रही और बम्बई के सूती बस्त्र मिलों में कार्य करने वाले लगभग सभी कर्मचारियों ने इसमें भाग लिया। १९२६ की यह हड़ताल दो कारणों से अत्यन्त महत्वपूर्ण थी। प्रथम तो इसी हड़ताल में साम्यवादी विचारवादा का प्रभाव भारतीय अधिकों पर दृष्टिगोचर हुआ। दूसरे, १९२६ के अन्ततः विवाद अधिनियम के पारित होने का यह हड़ताल एक कारण बनी। इसके अतिरिक्त बंगाल घूट मिलों में कार्य के बन्दे बन्दाम जाने के कारण कई हड़तालें हुईं। जमशेदपुर में भी एक बड़ी हड़ताल हुई।

उसके पश्चात् १९३ से १९३७ का समय सापेक्षिक रूप से औद्योगिक अशांति का समय रहा। यद्यपि बम्बई सूती मिलों में कुछ अल्पकालीनी हड़तालें हुईं जो सफल न हो सकीं। इस समय प्रत्येक कारणों से अधिकों को बड़ी-बड़ी मागए हो गईं थीं और इसीलिए उनमें असहयोग की भावना भी पैदा हो गई थी। इस समय मंत्री का प्रभाव कम होने लगा था और साम्यवादी कार्य अतिव्यापनी हो गए थे और उनका अधिकों में प्रचार बढ़ गया था। १९३३ में मेट्र का सुकसमा समाप्त हो गया था जिसमें साम्यवादी नेताओं को दीर्घकालीन कारावास का दण्ड प्रदान किया गया। प्रांतीय स्वायत्त शासन के अन्तर्गत चुनाव से पूर्व कांग्रेस के अधिवक्ता-मन्त्र से अधिकों में बड़ी-बड़ी मागए उत्पन्न हो गईं थीं और उनका विचार था कि अब सब प्रकार का शोषण समाप्त हो जावेगा और उनके कार्य में अधिन-निर्वाह की अघाओं में भी परिवर्तन होगा। जब कांग्रेस ने सत्ता ग्रहण की थी और अधिकों की अघाओं में

तात्कालिक कोई उपाधि हाती दिखाई नहीं गी ता अनेक हड़तामें हुई । साम्यवादीयों ने इस परिस्थिति का लाभ उठाया और धर्मिकों में धार्मिक समन्ताप उत्पन्न कर दिया । अनेक प्रांतीय सरकारों ने धर्मिका की व्यवस्था सुधारने के लिये अनेक उपाय किए । उदाहरणस्वरूप १९३० में उत्तर प्रदेश सरकार ने धर्मिकों की व्यवस्था को बाँध करने के लिए एक समिति नियुक्त की । समिति ने अनेक महत्वपूर्ण सुझाव दिए । परन्तु मालिकों के मन्षा ने न बजल इन सुझावों का मानने में इन्कार कर दिया वरन् सरकार व्यवसाय मन्षों द्वारा बिनी प्रकार के हस्तश्रेय के लिए भी वे तैयार न हुए । कानपुर मिलों में धाम हड़तामें हुई तथा दम्वाई व बगाम में भी हड़तामें हुई । यह वेस में औद्योगिक समिति का समय था । १९३० और १९३० में क्रमशः ३०६ तथा ३६६ हड़ताएँ हुई जो कि उनसे पूर्व वर्षों में हुई हड़ताओं में सबसे अधिक थी । इस धर्षम में उत्तर प्रदेश बीनी मिलों में भी हड़ताएँ हुई ।

१९३६ के पश्चात् औद्योगिक विवाद —

सितम्बर १९३६ में मुद्र प्रारम्भ हो जाने के पश्चात् मुद्रा स्फीति के कारण कीमत और बढ़ गई व धर्मिक की मजदूरी और उमड़े रहने-महल के ध्यय के बीच बढ़ती जाती हो गई । परिणामस्वरूप अनेक औद्योगिक विवाद हुए और उनकी मर्यादा १९४० में ३२२ विवादों में बढ़ते-बढ़ते १९४० में ६२४ तक पहुँच गई । उस समय से हमारे देश में औद्योगिक विवाद धाम हो गए हैं । मुद्र के प्रारम्भिक वर्षों में अनेक हड़ताओं का कारण महलाई मत्ता था । माघ १९४० में हड़तासी नेताओं की निरपराधी एवं धर्मिकों की पुसिष हाथ पिटोई पर भी दम्वाई के १०२ साल सूती बरस मिल के कर्मचारियों ने हड़ताएँ कर दी जो ४० दिन तक चालू रही । १० माघ को सभी कर्मचारियों ने सहानुभूति में हड़ताएँ की इसने नारे देश में हड़ताएँ की तरह व्यापक हो गई । कानपुर के सूती मिल कर्मचारियों क्रमशः के म्युनिनिपल कर्मचारियों, बंगाल और बिहार में सूट कर्मचारियों अस्वय में दिल्होई के ठेक कर्मचारियों अनेक व मरिया के कोयला खानों के कर्मचारियों अमधेरपुर के मोहों के कर्मचारियों तथा अन्य धर्मिकों ने मजूगाई भले की मांग की और काम पर नहीं गए । सरकार ने मुद्र का सञ्चालन सफलतापूर्वक करने के लिए इस घर्षाति को रोक्ने के निपय में विचार किया और इसके लिए उनसे "डिसेंम ऑफ इन्डिया कम्प" बनाए, जिनके अन्तर्गत अनेक धान्ययक उद्योगों में हड़ताओं धर्षय कोयित कर दी गई तथा अन्य दूसरे उद्योगों में चौबहू दिन की पूर्ष मूचना धिय बिना हड़ताएँ या तालाबन्दी करना धर्षय हो गया । इन प्रतिबन्धों का परिणाम यह हुआ कि १९४२ से १९४६ तक के समय में कोई बड़ी हड़ताएँ तथा तालाबन्दी नहीं हुई, यद्यपि छोटे छोटे औद्योगिक विवादों की संख्या में वृद्धि धर्षय हुई । धर्मिक कोई भी बड़ी हड़ताएँ नहीं कर सकते थे परन्तु धर्मजीवी वर्ग को इन निनों अनेक बलिआइयाँ भेजनी पनी । विशेषतया रेलों डाक-तार जैसी जन-उपयोगी सेवाओं में जहाँ हड़ताएँ पूर्णतया निरुधेय थी उन्को शापी मुनीबतों का मामला बनना पड़ा क्योंकि धर्मिकों की मजदूरी में

कोई वृद्धि नहीं की गई थी केवल बोझ सा महँगाई मत्ता अमूल्य प्रयाग किया गया था। अधिक किसी प्रकार का भी विरोध प्रकट नहीं कर सकते थे। परन्तु जैसे ही मुझ समाप्त हुआ और अमिकों पर से बन्धन हटा दिए गए, अमिकों के रूप में बचकनी हुई घसंठोप की अल्पि प्रग्नसित हो उठी और यह पौर हड़ताल की ही अर्थात् बल पकी। जुलाई १९४६ में डाक व तार कर्मचारियों की बेसव्यापी हड़ताल हुई और ऐससे कर्मचारियों में भी हड़ताल की बमकी ही जो कि कुछ राजनैतिक नेताओं के हस्तक्षेप करने के फलस्वरूप एक गई।

सन् १९४७ में देश के स्वतन्त्र हो जाने के पश्चात् अनेक महत्वपूर्ण राजनैतिक परिवर्तनों के फलस्वरूप हड़तालों की संख्या में वृद्धि हो गई। राष्ट्र उस समय मुद्रा स्थैरि के कारण और कुछ तथा मुद्रा-उपरान्त स्थितियों में उत्पन्न हुई वस्तुओं की दुर्लभता के कारण कठिनाइयों के दौर से गुजर रहा था। काग्रस ने सत्ता प्राप्त कर ली थी परन्तु हैबराबाद कारमीर तथा बिभाजन की अन्य समस्याओं के कारण बहु अमिकों की समस्याओं की ओर उचित ध्यान न दे सकी। साम्यवादियों ने इस घबघर से लाभ उठाया। उनके हियालक प्रकार के कारण १९४७ में देश में बोर पीघोमिक घघाति फैली। बम्बई, मद्रास और उत्तर प्रदेश में हड़तालों की संख्या में विशेष वृद्धि हुई। सितम्बर १९४७ में बम्बई की १८ सूती बरन मिलों में हड़ताल हुई जिसमें १ लाख अमिकों ने भाग लिया। दूसरी महत्वपूर्ण हड़ताल मद्रास में बकिबम और कलकत्ता मिल में हुई जो तीस महीने से भी अधिक रही। इन हड़तालों व ठानाबन्दी के घटितरिक्त अनेक छात्रासुविधपूर्ण प्रबंधन भी हुए, जिनका पीघोमिक विचार सम्वन्धी धाकड़ों में उत्पन्न नहीं है। १९४७ में सरकार ने पीघोमिक विराम संधि का प्रस्ताव पारित किया परन्तु इसका प्रभाव अधिक उत्साहजनक नहीं हुआ। १९४८ में कोयम्बटूर, नागपुर, कानपुर, बंगाल व बम्बई की सूती बरन मिलों बंगाल की बड़ी बड़ी कूट मिलों बम्बई बम्बरगाह घासनमोल का एम्प्लियम उद्योग बम्बई बी० घाई० पी के इन्जिनियरिंग विभाग की एन ऐलने कार्यशाळा अनेक कूट मिलों बम्बई के बीड़ी उद्योग कलकत्ता की ट्राम्पे घादि में बड़ी मात्रा में हड़तालों हुईं।

१९४९ में मध्य प्रदेश की सूती बरन मिलों में ठानाबन्दी घोषित हुई तथा मद्रास बम्बई एवं बंगाल में हड़तालों हुईं। बम्बई नगर नियम में एक विचार लघयय १ मास में समाप्त हुआ। ऐससे में भी हड़ताल करने की बमकी ही गई थी परन्तु हड़ताल रोकने के प्रयत्न सफल हो गए। १९४९ - ५० में कलकत्ता निगम में घाम हड़ताल हुई। ईकानपुर कीम नूर मिस्स एवं न्यू बिक्टोरिया मिल तथा मद्रास की मीनासी हड़ताल हुई। बम्बई के बीड़ी उद्योग हाबड़ा की कूट मिलों, नागपुर की मॉइल मिल तथा बी एन ऐलने कार्यशाळा में भी हड़तालों हुईं। अगस्त १९५० में बम्बई के सूती बरन उद्योग में अमिकों के मोनस मुगदान के प्रसन्न पर महत्वपूर्ण हड़ताल हुई। यह भारत में उस समय तक हुई हड़तालों में सब से बड़ी थी। इसमें

नवम्बर २ साप्ताहिक दिनों में काम लिया और वह ६३ दिन तक चलती रही जिसके परिणामस्वरूप ६४ साप्ताहिक दिनों की छति हुई। १९३० में कुछ केंद्रों में दैनिक संघ विधेयक एवं औद्योगिक सम्बन्ध विधेयक को लेकर कुछ सांकेतिक (Token) हड़तालें हुईं। तिसका नगर (बम्बई) की चीनी मिल तथा बिहार व पश्चिमी बंगाल की कारखानों में भी कुछ सांकेतिक हड़तालें हुईं। १९३१ में रेलवे कर्मचारियों ने हड़ताल की जमकी बी किम्पु बाघ सामग्री के आवागमन की आवश्यकता एवं पाकिस्तान के साथ उत्तरोत्तर करतब हो रहे सम्बन्धों के कारण राष्ट्रपति ने एक सम्बन्धित द्वारा सभी आवश्यक सेवाओं में हड़ताल करना अर्थात् घोषित कर दिया। तत्पश्चात् परस्पर वार्ता द्वारा इस हड़ताल को टाल दिया गया। उत्तर प्रदेश की चीनी मिलों में न्यूनतम मजदूरी निश्चित करने के प्रश्न को लेकर एक धाम हड़ताल हुई। उत्तमम न्यायालय द्वारा औद्योगिक (बैंक) प्रतिकरण के विवादात्त निर्णय को अर्थात् घोषित कर देने पर बैंक कर्मचारियों ने श्रेष्ठभावी हड़तालें कीं। पश्चिमी कोयला क्षेत्रों में व कानपुर, मद्रास तथा नागपुर की सूती बम्ब मिलों में भी महत्वपूर्ण हड़तालें हुईं। किराणियों की स्टाईव बूट मिलों एवं बम्बई की स्वदेशी मिल व ताताबन्धी हुई तथा बम्बई में होटल के कर्मचारियों ने हड़तालें की।

१९३२ में राजकीय प्राधिकार कैंब्री पुता महामदावार नागपुर, बम्बई की सूती बम्ब मिलों कलकत्ता में जहाजी कर्मचारियों तथा बम्बई के यातायात कर्मचारियों की हड़तालें महत्वपूर्ण थीं। हावड़ा की बंगाल बूट कम्पनी कलकत्ता की एलन बेरी कम्पनी तथा बम्बई की मेटल रोलिंग वर्क्स में ताताबन्धी हुई। १९३३ में बरनपुर व धारन एण्ड स्टील बम्ब में पम्पीर हड़ताल हुई। प्रसम और ट्रायनकोर कोबीन के नाम बायान में भी कुछ छोटी छोटी हड़तालें हुईं। १९३४ में राजीवम की बर्न एण्ड स्टील कम्पनी लिमिटेड, बम्बई की न्यू चार्ना मिस्स, आसमबाबर की वैस्टर्न इण्डिया मंच कम्पनी तथा बंगाल की बूट मिल व अमृतसर में कुछ छोटे-छोटे उद्योगों में भी हड़तालें हुईं। १९३५ में कानपुर की सूती बम्ब मिलों में विधेयककरण के लागू करने के विरोध में एक बड़ी हड़ताल हुई, जो २ मई १९३५ से लेकर २० जुलाई १९३५ तक चली रही जिसके परिणामस्वरूप १६,६३७४७ घण्टा दिनों की छति हुई। कानपुर की एक बूट मिल में सात मास तक ताताबन्धी रही। दिल्ली के होटल कर्मचारियों बम्बई के यातायात कर्मचारियों व पश्चिमी बंगाल के रबड़ और कितिक उद्योग धारि में अनेक हड़तालें हुईं।

१९३६ में बम्बई, महामदावार व कलकत्ता में राज्यों के पुनर्गठन के प्रश्न को लेकर धाम हड़तालें हुईं। इसमें कुछ हितात्मक प्रवृत्तियाँ भी उत्पन्न हो गईं। इसी वर्ष नागपुर, रायपुर व पश्चिमी बंगाल की ३० कारखानों, किराणियों में प्रतिस्थापन कारखानों, धारि में भी हड़तालें हुईं। १९३७ में केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों एवं डाक-घर विभाग की धार्मिक हड़ताल को उपलब्धतापूर्वक टाल दिया गया परन्तु

पश्चिमी बंगाल तथा बिहार की धानों व पश्चिमी बंगाल की बैकिंग कम्पनियों धारि
 व हड़तालें हुईं। मोचीनगर की बत्ताई व बुताई मिल में तामाबन्दी हुई। उड़ीसा
 की द्विपीर रामपुर जाल में भी धमिकों के द्वारा मीनेजर के मारे जाने
 पर तामाबन्दी हुई। कानपुर की म्यूर मिल में भी हड़ताल व तामाबन्दी हुई।
 १९२८ में मैसूर की कपिसा टैक्सटाइल मिल बन्दरगाहों में गोरी कर्मचारियों बम्बई
 के नगर विगम कर्मचारियों जमशेदपुर क टाटा सोहा व स्यात के कार
 खानों में बिहार के पश्चिमी बकाये की खानों में कसकता की दाम्ने कम्पनी में
 धीर केरम के बागान में महत्वपूर्ण हड़तालें हुईं। हिन्दुस्तान वायुयान उद्योग
 बंगलौर में भी हड़ताल धीर तामाबन्दी हुई। बम्बई की प्रीमियर पीटोमोबाइल
 कम्पनी कसकता की बगास कैमीकल वर्क में मद्रास की तथा कानपुर की बैकिंग
 धीर कर्मिक मिस्स तथा बर्नपुर की धायरल बर्क में हड़तालें धीर तामाबन्दी हुई।
 १९२९ में कोसार की छोने की खानों में जगदी में हड़ताल व तामाबन्दी हुई।
 रामपुर की रजा बीनो मिल धनबाद कोयला खानों में उत्पी धारकोट के बीड़ी
 कारखानों में राउरकेसा के लोहे के कारखान के तकनीकी विद्येपत्रों की कसकते
 की धाई जो एन रेसने कम्पनी में इलाहाबाद में स्वदेशी सूती कपड़ा मिलों धारि
 व हड़तालें हुईं। मधुप मिल कम्पनी में तामाबन्दी भी घोषित की गई। कई
 स्थानों पर धमिक द्वारा मार-पीट के भी समाचार मिले। १९२९ में महत्वपूर्ण जगते

धारका कम्पनी में हाबका मिस्स में सुबसो बूट क हाबका में कर्मिजाय
 बूट मिल में केदारनाथ बूट मिल हाबका में सुधिराबाद की बीड़ी के कारखाने में
 कसकता में कांच के कारखाने में हिन्दुस्तान इलेक्ट्रिक कम्पनी हाबका में कोहपुर
 रबर बर्क कसकता में बिजापापट्टम धीर कठियार की बूट मिलों में नयापुर की
 कपका मिलों में कसकता की कलाइल मिल में हिन्द साइकिस्स बम्बई में धारि
 धारि। पुलाई ११ १९२९ से केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों की भी एक हड़ताल
 हुई जो पांच दिन तक चलती रही। कर्मचारियों की मुख्य मांग यह थी कि उनको
 १२२ व० माह का म्युण्डम वेतन दिया जाए धीर मर्दानाई अथा 'निबहि जर्ब सुषकांठ'
 से सम्बन्ध कर दिया जाए। इस हड़ताल से रेल डाक धीर तार बची पावस्यक
 सेवाओं पर भी प्रभाव पड़ा जिसके कारण बनता इस हड़ताल के धमिक पक्ष में न
 की। इस हड़ताल के परिणामस्वरूप सरकारी कर्मचारियों से संघ बनाने का धमिकार
 सीन लिया गया जिसके कारण काफी बाह-विवाद उत्पन्न हो गया। यह हड़ताल
 घसफल रही। इसके विषय में संसद धीर भारतीय मज सम्मेलन में भी बहस हुई।
 धीरोमिक विवादों के इतिहास से स्पष्ट हो जाता है कि हमारे देश में
 धीरोमिक प्रघाति काफी बढ़ गई है धीर हास में हड़तालें फिर महत्वपूर्ण हो
 गई हैं।

औद्योगिक विवाह सम्बन्धी आंकड़े —

निम्न तालिका में १९२१ के बाद होने वाले औद्योगिक विवाह सम्बन्धी आंकड़े प्रस्तुत हैं ० —

वर्ष	हस्ताक्षरों और तालाबन्दी की संख्या	विवाहों में सम्मिलित धर्मियों की संख्या	वर्ष में हाथि हुए कार्य विवाहों की संख्या
१९२१	३९	६०० ३५१	६९,८४ ४२६
१९२३	२१३	३०१ ०४४	२०,५१ ००४
१९२७	१२९	१३१ ६५५	२० १९,९००
१९२९	१४१	३,३१ ०४९	१२१ ६५,६९१
१९३७	३७९	६,४७ ८०१	८९ ८२ ०००
१९३८	३९९	४ १ ००५	९१ ९८,७०८
१९३९	४०६	४०९ १८९	४९ ९२ ७९५
१९४०	३२२	४५२ ३३९	७५,७७ २८१
१९४२	६९४	७७२ ६५३	३७ ७९,९६५
१९४६	१ ६०९	१९ ६१ ९४८	१२७ १७ ७६०
१९४७	१ ८११	१८ ४ ७८४	१ ९९,९२ ६६६
१९४८	१ ४५९	१ ५९,१००	७८ ३७ १७१
१९४९	९२	९ ८५ ४३७	६६ ०० ३९५
१९५०	८१४	७ १९,८८३	१,४८ ०७ ००
१९५१	१ ०७१	९ ८१ ३४१	३८ १८ ९२८
१९५२	९६३	८ ०९ २४२	३३ ३६,९६१
१९५३	७७२	४ ६६,६०७	३३ ८२ ६०८
१९५४	८४०	४ ७७ १३८	३३ ७२ ६३०
१९५५	१ १६६	५ २७,७६७	५६,९७ ८६८
१९५६	१ २०३	७ १५,१३०	६९ ९२ ०४०
१९५७	१ ६३०	८ ८९,३७१	६४ २९,३१९
१९५८	१,५२४	९,२८ ५६६	७७ ९७ ५८५
१९५९	१,५३१	६९,३ ६१६	५६ ३३ १४८
१९६०	१ ५५६	९८ २ ८६८	६५ १४ ९५५

भारतवर्ष म औद्योगिक विवाह सम्बन्धी दो मुख्य बातें दृष्टिगोचर होती हैं । प्रथम ता अधिकतर विवाह मुत्तो मरम उद्योगों म तथा बम्बई और पच्छिमी बंगाल में होते हैं और दूसरे यह अधिकतर असफल रहत है, जिसका कारण भारत में धर्मश्रीही वर्ग की निर्दयता और उनकी और-वारी दृष्टि की पीछता है ।

* From Indian Labour Year Books, Palme Dutt's India Today, page 382, Indian Labour Gaxettes and Journals

निम्न तालिका से यह स्थिति और अधिक स्पष्ट हो जायगी —

राज्य	१९६ में विचारों की संख्या	सितम्बर १९६१ में विचारों की संख्या
प्राय	७०	६
असम	२९	२
बिहार	९१	१
बम्बई	२८८	१२ (महागण)
बम्बू व कश्मीर	४	—
केरल	२४२	—
मध्य प्रदेश	८४	२
मद्रास	२११	४
मैसूर	८	८
उड़ीसा	९	—
पंजाब	१३	—
राजस्थान	२४	—
उत्तर-प्रदेश	१०	१
पश्चिमी बंगाल	३११	३
संज्वाल व निकोबार द्वीप	६	—
बेहारी	१	—
हिमाचल प्रदेश	१	२
त्रिपुरा	—	—
योग	<u>१२२६</u>	<u>६३</u>

प्राप्त धाकड़ों के आधार पर यथा बलवता है कि सन् १९६० से १९६६ विचारों में जो मजबूती की हानि हुई वह १७४९१ १९० व० की तथा ३३४ विचारों में उत्पादन की हानि का अनुमान ४८६१ १२३ व० था। सन् १९६६ में ४४६ विचार ऐसे व जिनमें ४ से कम व्यक्ति सम्मिलित थे। ऐसे विचारों की संख्या जिनमें १००० से अधिक व्यक्तियों ने भाग लिया केवल १७१ थी।

सन् १९६६ में प्रति विचार सम्मिलित व्यक्तियों की औसत संख्या ६३२ थी (सन् १९५९ में ४३३ थी)। प्रत्येक विचार की औसत अवधि ६६ दिवस थी (सन् १९५९ में ८१ दिवस थी) तथा प्रति विचार वर्ष में हानि हुए कार्य दिवसों की संख्या ४९८० थी (सन् १९५९ में ३६७९ थी)। विभिन्न उद्योगों में विचारों की संख्या निम्नलिखित थी — छपि-१ व बायाग- १२९, लार्ने- १०८, औद्योगिक कारखानों- १५१ निर्माण कार्य- १९ विपत्ती ग्रँथ पानी और सफ़ाई की सेवाएँ- ७७ बाणिज्य व्यवधि व्यापार, बैंक बीमा धारि- ६८ बातायात और परिवहन- ७५, नौकरियों- ३३ विविध- ८१, योग- १५३६।

कारखानों क ६५१ विवाहों म से विभिन्न कारखानों म संख्या इस प्रकार थी — लाय उद्योग— १६१ (बीमी मिर्चों में ७), पेय पदार्थ— १ लम्बाहू— ४० (बीडी में ३२) कपड़ा व बुनाई— २६४ (मूनी कपड़ा— १७४ जूट— ४३ रेयमी कपड़ा— २४ चर्म कपड़ा— ३ अन्य— २०) लूना— ७ लकड़ी व कार्क— २५, कागज और गता— १० हवाई प्रवासन प्राधि— २४ चमड़ा— १३ खर एव खर की बस्तुएँ— १४ रसायन और रासायनिक पदार्थ— ४ पंटोल व तेन— ६, अधातिक कनिष्ठ पदार्थ — ६४ मूल बाहु उद्योग— ७५ (लोहा और इस्पात— ३५) धातिक बस्तुएँ तथा मशीनें— ७६ विद्युतीय मशीनें व सामान— २१ मातायात सामग्री— ३२ विविध— ६ मीय— ६५१। खानों में जो १०२ विवाह हुए वे उनमें से ३६ कीयमा खानों में थे। मातायात के विवाहों में से १३ रेलम में व और ३४ विवाह बन्दरगाहों में हुए व। केन्द्रीय संस्थाओं में सन् १९६० में विवाहों की संख्या २५२ थी।

सन् १९६ के विवाहों में से ३३१ प्रतिशत में तो अधिक पूर्ण सफल रहे ११० प्रतिशत में प्रातिक रूप म सफल रहे १०५ प्रतिशत म सफल रहे और २५४ प्रतिशत विवाह अनिश्चित रहे। ३११ प्रतिशत विवाह तो एक दिन की धरमि में ही समाप्त हो गए, २३६ प्रतिशत पीब दिन म कम बने। केवल ७६ प्रतिशत विवाह तीस दिन म अधिक बने। इन विवाहों म से सामांकी की संख्या ११६ थी।

धौद्योगिक विवाहों के कारण -

विवाह उत्पन्न होने क अनेक कारण हैं जिन्हें मुख्यतः धातिक व ईर-सादिक कहा जा सकता है। धातिक कारणों म मुख्यतः मजदूरी बलम पहुँचाई-भत्ता, कार्य और रोजगार की ब्याई कार्य के बच्चे निरीक्षकों तथा मध्यस्थों द्वारा दुर्भवाहार, अनुचित बर्तावतगी एक या अधिक धमिका को पुनः काम पर लवाने की मांग छुट्टियाँ व वेतन सहित धरबाय विवाहन निगम को कार्यान्वित करने में देर करना प्राधि मस्यार्थ रही हैं। इन कारणों का धात्मिक कारण भी कहा जा सकता है अर्थात् ऐसे कारण जो उद्योग धातिक और मजदूरों में मध्यस्थ होते हैं। धमिकों पर धरबाय तथा धरबायों द्वारा धमिक संघा को मायता रैम में धम्बीयार कर देना भी इन विवाहों के कारण रहे हैं। विवकीकरण की योजनाओं क लागू होने के परबान् धमिकों की धँडनी होने पर अनेक हड़तालें हुई हैं। भारत में धौद्योगिक विवाहों के इतिहास में स्पष्ट है कि देश में धनक हड़तालों क धातिक कारण ही रहे हैं। प्रथम विव युद्ध के परबान् धौद्योगिक धमाति का मुख्य कारण निर्बद्धि-अर्थ व बस्तुमा के मूल्य में वृद्धि का हाना वा जबकि मजदूरों में मूल्यों के धनुनाठ म वृद्धि नहीं हुई थी। धमिक भी पीब पंटी तर कार्य करते तथा अपने धम्बस्य और रोजगार रहन-महन और बायों की धमाओं म उत्पन्न बुराइयों के प्रति मजबूत हो उठे थे। सन् १९२२ के पबान् धमिकों की धरम्बा में हुए उभति क प्रयत्न हुए, परन्तु सन् १९२८ के परबान् धरम्बा पुन धाजनीय हा गई अर्थात् धातिक धम्बी के कारण

कर्मचारियों की छुट्टी की भी गंभीर मजबूरी मं कमी की गई थी। परिणामस्वरूप हड़तालों का ताँता सा बँध गया था। इसी प्रकार की परिस्थिति द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् भी पाई गई। निर्वाह-नर्क में वृद्धि होने के कारण धमिका ने मजबूरी मँहवाई मला व बोस धारि म वृद्धि की मांग की थीर मासिको द्वारा इनको न मानने क कारण धनेक हड़ताले हुडे। धत धमिको का धपनी धाधिक स्थिति तथा मजबूरी के प्रति धसठाप ही धबिधतर हड़तालों का कारण रहा है। सन् १९२९ मे रोसम धम धायाग ० के धनुसार सन् १९२१ धीर १९२० क बीच क काम मे ९०१ विधावा का मुख्य कारण मजबूरी या बानस की मांग थी धीर ४२१ विधावों का कारण कर्मचारियों से सम्बन्धित या जिसमे निकाले गये धमिकों को पुन रोज गार देने की मांग ही मुख्य थी। ७४ हड़तालों का सम्बन्ध धनकाध धनका कार्य के धंटों से वा धीर सेप सिधिय माँवों से सम्बन्धित थी। १९६० में भी १११६ विधावों म ११९ विधाव मजबूरी धीर धपे क धसनों से सम्बन्धित थे ११० बोस से १११ कर्मचारियों से ४ छटनी से ११ धनकाध व काम के धंटों से तथा ३०१ हड़ताले धम्य माँवों से सम्बन्धित थी। १० हड़तालों के बियम में ठीक-ठीक पता नहीं चला। धेर धाधिक कारण से होते है जिनका उद्योग व प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध नहीं होता है। इनम राजनैतिक कारण मुख्य है। कुछ वर्ष पुब तक भारत ब्रिटिश साम्राज्य के धधीन वा तथा धम धाम्बोलन का देश के राष्ट्रीय धाम्बोलन स मिफटतम सम्पक वा। १९०० में धी विमक के १ वर्ष के कारावास के बिरोध म बम्बई में ए धाम हड़ताम हुई। कई ऐसी हड़ताले खिलाफत धसहयोग व सधिनय (Civil धनका धाम्बोलन के धिनों में भी चलाई यडे। धनेक बार हड़ताले धमिकों के बिरुध धनुषासनात्मक कार्यवाही करने तथा उनको बर्बास्त करने पर हुई। धमिकों के बिरुध ऐसी कार्यवाहियाँ तक की जाती थी जबकि धमिक राज नैतिक नेताधों के मुकदमा की कार्यवाही सुनने चले जाठे थे वा बिदेसी मात को हाध लयाने से इन्कार करते थे या जब उन्होंने राजनैतिक प्रदर्शनों में भाग लिया धनका बुरोपियन मनेजरो को मार-पीटा या कार्भेन के स्वयत्तिकों के रूप में कार्य किया। नाम्यधारियों से सहानुभूति रखने वाले धमिका पर धयानकार करने के बिरुध में भी हड़तास हुई है। कई बार हड़ताले सटोर्लियों धर्माए सटु बाजों (Speculators) ने भी कवाई है वा धपने काम क लिए काम धीर उत्पादन बंध कटाकर कीमतों में वृद्धि कए देते है। इस हनु सटु बाजों ने कई बार निरपचार धक-बाहें रँलाई है तथा धमिकों को नितीम सहामया भी की है। धीर विधावों को बधामा है।

साधस यह है कि धाधिक एवं गर धाधिक दोनों ही प्रकार के कारण धौधौनिक विधावो के लिए उत्तरदायी रहे है। कुछ वर्षों से एसा बेकने में धा एह है कि मासिकों एवं धमिकों क बीच की कारि गहरी होती जा रही है धीर दोनों

* Report of the Royal Commission on Labour page 334

पक्षों में और असमताप व्याप्त है। धमिकों की मनोवृत्ति में तीव्र परिवर्तन हो गया है और वे दिन प्रतिदिन काम में से अधिक भाग प्राप्त करने की मांग कर रहे हैं। राजनैतिक परिवर्तन अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों साम्यवादी तत्त्वों का प्रसार अनिश्चित धार्मिक परिस्थिति तथा निर्बाह लक्ष्य में वृद्धि इन मनोवृत्ति के लिए उत्तरदायी हैं। इसके साथ-साथ अनेक राजनैतिक दलों के प्रचार ने भी असतोष उत्पन्न कर दिया है। अनेक राजनैतिक दलों ने कार्य में सरकार का तंग करने के लिए धामक संघों पर अधिकार कर डबतान करवायी है। परन्तु फिर भी औद्योगिक विवादों की दृष्टि से धार्मिक कारण ही सबसे प्रमुख रहे हैं। रॉयल कमिशन का मत इस बारे में महत्वपूर्ण है जो पात्र भी सत्य कहा जा सकता है। 'वाह धमिक राष्ट्रीय साम्यवादी या बाण्डियस उद्देश्यों से प्रभावित हुए हैं लेकिन फिर भी हमारा विश्वास है कि साम्य ही कोई ऐसी दृष्टिकोण हुई हो जो कि पूर्णतया या धमिकों के रूप में धार्मिक कारणों के फलस्वरूप न हुई हो'। यह सर्वविदित है कि धमिकों की निर्धनता ही साम्यवाद को जन्म देती है। हमारे धमिकों की धार्मिक शिक्षाओं में उनमें इस बात की भावना कि समाज में उनका कोई उचित स्थान नहीं है उनमें इस बात का डर कि कहीं उगरी बग-उपार्जन धार्मिक में अस्थिरता में आ जाये उनमें इस बात की आशंका कि कहीं उनकी नौकरी में एकादक न पड़ जाये धार्मिक असुरता का भार (जिससे इस बात की भावना बढ़ जाती है कि उनके साथ धम्याय हो रहा है), कार्य एवं रहन-सहन की बयनीय बगालें धार्मिक अनेक ऐसे अतिशयोक्ति कारण हैं जिनसे धमिकों के हृदय में असंतोष व्याप्त हो गया है और जिनकी अभिव्यक्ति (Expression) निरन्तर होने वाली दृष्टिकोण में मिसती है।

यहां इन बात का भी उल्लेख किया जा सकता है कि भारतवर्ष में मासिक व धमिकों के बीच जो लड़ाई उत्पन्न हो गई है उगका एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि माया जाति धार्मिक की मिश्रता होने से उनके बीच सीहार्बपूर्ण सम्बन्ध नहीं आ पाते और धामक में एक दूसरे को समझन का प्रयत्न नहीं किया जाता। धमिकों के उद्योगों का प्रबन्ध विदेशियों द्वारा होता रहा है जिनको कि भारतीय मायाओं का बहुत कम ज्ञान होता है। अतः ऐम प्रबन्धकों को मध्यस्थों के ऊपर ही निर्भर रहना पड़ा है। इन मध्यस्थों में अनेक बार धमिकों का असंतोष अथवा प्रतिनिधित्व किया है। यदि प्रबन्धक भारतीय भी होते हैं तब भी उनमें और धमिकों में जाति व परम्पराओं धार्मिक में बिभ्रता होने के कारण अन्तर-द्वन्द्व रहता है। परिणतस्वरूप बहुत से प्रबन्धक अपने कुछ अधिकारों को अपने धमिक कर्मचारियों या मध्यस्थों को सौंप देते हैं। यह मध्यस्थ विरहनीय नहीं होते और मासिक और धमिकों के बीच पारस्परिक सम्बन्ध को कठिन बना देते हैं। धमिकों और मासिकों में मिश्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने में एक अन्य कठिनाई अतिशयोक्ति धमिक संघों का प्रभाव है। बाहरी नेता भी कई बार दृष्टिकोणों के लिए उत्तरदायी होते हैं। 'प्रोमिटर साटोमीवायस' कम्पनी कम्पनी

जो १९१८ में हड़ताल हुई थी उसकी जांच से पता चलता है कि वह हड़ताल मजदूरी बोनस या किसी ऐसे ही औद्योगिक प्रश्न से सम्बन्धित नहीं थी बल्कि नेता की व्यक्तिगत बातों के कारण हड़ताल काटई गयी थी।

यहाँ इस बात का भी उल्लेख कर देना आवश्यक है कि घनेक बार ग्राम हड़तालों की होती है जिनमें युक्तियों कार्य धारि बंद हो जाते हैं। ऐसी हड़तालों में श्रमिकों की हड़तालों से भिन्न होती है। यह सरकार पक्ष या पुनित के कार्यों के प्रति विरोध प्रकट करने के लिए होती है। और इनका मासिक से कोई सम्बन्ध नहीं होता। राजनीतिक उद्योग के विनों में यह बहुत धमिक होती है। ऐसी हड़तालों में यद्यपि धर्मजीवी होती है तथापि सब बातों को देखते हुए उद्योगों और उत्पादन को इनसे काफी घाति पड़चती है।

हड़तालों का प्रभाव, हड़ताल करने का अधिकार —

धर्म हम इस बात पर विचार करते कि देश के धार्मिक जीवन पर हड़तालों का क्या प्रभाव पड़ता है। इन हड़तालों के कारण हम किस विधा में जा रहे हैं? क्या श्रमिकों को हड़ताल करने का अधिकार होना चाहिए? हड़तालों से बचने के लिए क्या उपाय करने चाहिए? तथा उनके होने पर समझौते के लिए कौनसा साधन ग्रहण करना चाहिए? इस प्रकार के घनेक प्रश्न हैं जो जनता की चिन्ता का कारण बने हुए हैं और जिनके ऊपर विचारशील लोगों में मतभेद भी है। यद्यपि हमने पाठपाठ्य वेद्यो के औद्योगिक शास्त्रों में समझ की तो नकल की है परन्तु यह वेद की बात है कि उन वेद्यो में औद्योगिक सम्बन्धों का सीद्धारपूर्ण बनाने रखने की नीति है उनका हमारे देश में सफलता के साथ उपयोग नहीं किया गया है। फलतः मा म हड़तालों का होना एक ग्राम बात ही गई है जिनका मासिकों एवं श्रमिकों पर धार्मिक दृष्टि से कुछ प्रभाव तो पड़ता ही है उनसे जनता को भी बहुत अनुविच होती है। पिछले तीस बरों में जो हड़ताल व दानाबन्दी घाति हुई है यदि उन पर दृष्टिपाठ करें तो उनका परिणाम श्रमिकों को कष्ट उत्पादन व साम में कमी सर्व साधारण को असुविधा और मासिकों व श्रमिकों में पारस्परिक मतभेद सदेह और कटुता ही माहूम देता है। इस कारण यह बहुत आवश्यक है कि ऐसे शास्त्रों पर विचार किया जाए जिनसे औद्योगिक श्रमिकों को रोका जा सके और यदि वह हों भी तो उनका सफलतापूर्वक निपटारा हो सके।

धार्मिक शास्त्रों पर हड़तालों का समर्थन नहीं किया जा सकता है। अनुभव से स्पष्ट हो जाता है कि कटु शक्तियों की प्रवेसा अंततः समझौता स्वबत्ता तथा विवाचन जैसे शास्त्रों से जिनमें पारस्परिक सीद्धारपूर्ण बातचीत व तर्क हो सकते हैं कहीं धार्मिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। जीवन के किसी भी क्षेत्र में धर्मकी द्वारा धार्मिक समय तक काम चलाना कठिन है। धर्मकी सर्वत्र विपन्न के अतिष्क को हठी बना देती है और वह एक पग धाने बड़ने को तैयार नहीं होता। औद्योगिक व्यवस्था के सम्पूर्ण हानि का अनुमान केवल कोई हुई मजदूरी और साम की कति से

अथवा कम उत्पादन से ही नहीं लगाया जा सकता है। उसके लिए हमसे जो समुविधार्य उत्पन्न हो जाती है और जनता को जो कष्ट और दुःख होते हैं, उनको भी ध्यान में रखना चाहिए, जैसे बिद्युत् व ससंपूर्ण बाढायात स्वास्थ्य व सफाई प्रादि जनउपयोगी सेवाओं में विचारों से जनता को कष्ट हुआ और समुविधा अधिक हाती है। हड़ताल तीन चारों वाला घटना है। इससे न केवल मालिकों व समाज को ही हानि होती है बरन् धर्मिकों को ही इससे सबसे अधिक तकलीफ पहुंचती है। हड़तालों से धर्मिकों को लाभ की अपेक्षा हानि ही अधिक होती है। कबी-नमी तो धर्मिकों को हड़ताल की अवधि में माटीघास एव मोलियों का भी सामना करना पड़ता है एवं तत्पश्चात् जन पर पर्याचार भी किए जाते हैं।

प्रश्न यह उठता है कि क्या धर्मिक यह सब तकलीफें बिनबाह के लिए चुनते हैं? जब उनको ज्ञात रहता है कि उनको ही सर्वाधिक हानि होगी तो फिर वे हड़ताल क्यों करते हैं? उत्तर स्पष्ट है। सामुहिक पूँजीवादी व्यवस्था की यह विशेषता है कि यदि धर्मिक मजदूरों की प्रकृति को न धनार्थ तो अनेक सम्प्राप्ति धार्मिक धर्मिकों का उपयोग करने की प्रकृति को नहीं छोड़ें और उद्योग के समस्त लाभ को अपनी ही तिजारियों में बन्द करते रहेंगे। अतः समस्या का यह समाधान नहीं है कि हड़तालों को प्रबल प्रोत्साहित कर दिया जाय अथवा धर्मिकों से हड़ताल के अधिकार को छीन लिया जाय। यह उपचार तो रोग में ही अयंकर होगा। धर्मिकों के पास मालिकों के द्वारा किए गए प्रोत्साहन का विरोध करने के लिए हड़ताल ही एक मात्र अस्त्र है। अतः हड़तालों के कुप्रकारों के दृष्टिकोण से ही हमें इस समस्या पर विचार नहीं करना चाहिए, बरन् धर्मिकों के दृष्टिकोण का भी ध्यान रखना चाहिए। समस्या का समाधान उन कारणों को जो हड़ताल को जन्म देते हैं दूर करने से ही हो सकता है। हम मालिकों व धर्मिकों के बीच अन्ध सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न करना चाहिए। हड़तालों के दोषों का विवेचन तो केवल इसलिए होता चाहिए कि औद्योगिक विचारों को रोकने और उनका निपटारा करने के साधनों पर विचार किया जा सके और अपनी महत्ता का सम्भ्रम जा सके।

भारत में आज औद्योगिक विचारों से बहुत सी हानियाँ हैं। देश प्राथमिक संघट से गुजर रहा है और बेकारी अपना रूप रूप दिखा रही है। अतः ऐस समय देश में अधिक उत्पादन तथा औद्योगिककरण की तीव्र आवश्यकता है। मुद्रास्फीति प्रकृतियों को केवल अधिक उत्पादन करके ही दूर किया जा सकता है। वास्तव में आज हमारे देश में—राजनीतिक सामाजिक एवं धार्मिक—प्रत्येक दृष्टिकोण से उत्पादन में वृद्धि की आवश्यकता है। हम के सभी राजनीतिक नेता भी उत्पादन वृद्धि को बहुत अधिक महत्त्व प्रदान कर रहे हैं। हमारे देश में इस समय पंचवर्षीय आयोजनाएँ लागू हैं तथा उनकी सफलता के लिए देश में औद्योगिक-यानि आवश्यक है। अतः राष्ट्रीय दृष्टिकोण से इस समय हड़तालों का नमर्दन नहीं किया जा सकता है। चाहे

मानिक हो, चाहे धर्मिक हो अथवा कोई भी बाह्य संस्था हो यदि वह इस समय उद्योग-व्यापि के लिए उत्तरदायी है तो उनका रेशाडोही कामों के लिए बोनी उद्धारया जा सकता है। यी खड्डमाई देसाई के अनुसार 'बमबक मताधिकार पर आधारित प्रजातन्त्र में हड़ताम और तासबन्धी न केवल असाधनिक हो गए हैं बलितु उन उद्देश्य के लिए भी विगत किए के किए जाठ हैं। पूर्णतया हानिप्रद हैं।' देश में समाजवादी ढाँचे की स्थापना के लिए उत्पन्न हो रही नवीन परिस्थितियों में हड़तामों के तासबन्धी को उचित कहना ठीक नहीं मान पड़ता। मात्र जो भी व्यक्ति हड़तामों का समर्थन करते हैं वे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अपनी राजनीतिक स्वार्थसिद्धि के लिए ऐसा करते हैं। उनका उद्देश्य समाजिक दुष्ण के वर्णन को उकसाना है। क्योंकि वह समाज के ढाँचे को समाप्त कर समाजवित साम्यवाद लाना चाहते हैं। उनका ध्यान इस ओर नहीं जाता कि इस समय हमारे देश की तत्कालीन आवश्यकताएँ क्या हैं और किसी और धार्मिक ढाँचे को प्रहस्य करने में क्या व्यावहारिक कठिनाइयाँ हैं। हमें ऐसे व्यक्तियों से मनेत्र रहना चाहिए।

यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि यद्यपि धर्मियों को हड़ताम करने के अधिकार से तो वंचित नहीं किया जा सकता परन्तु इस अधिकार का दुरुपयोग भी नहीं होना चाहिए। कई हड़तामों केवल मामूली सी बातों पर हो जाती हैं। कई बार मानिकों का अधिकार की एसी अटपटी भागों का सामना करना पड़ता है जो राजनीतिक अथवा धार्मिक आधारों की अनेका यथार्थज्ञानिक अधिक होती हैं। अनेक हड़ताम राजनीतिक दलों द्वारा अपनी स्वार्थसिद्धि के हेतु कराई जाती हैं बिनका धर्मियों के हित से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। १९२८ में 'ब्रीमियर घोटीयोबासम्प' बम्बई में जो हड़ताम व्यक्तियुक्त बातों का लेकर हुई थी उसका उदाहरण इन सम्बन्ध में दिया जा सकता है। ऐसा भी बचने में पाया है कि कभी-कभी मानिकों ने जानबूझकर हड़तामों को धर्मिक समय तक चलने दिया है ताकि वह जनसाधारण की सहायकता प्राप्त कर सकें और धर्मियों को उन्हीं के अन्त (हड़ताम) द्वारा पराजित कर दें। १९२० में बम्बई की मुली बस्न मिल की हड़ताम जो ६३ दिन तक चली इसका एक उदाहरण है। भारतीय धर्मियों में यह प्रवृत्ति देखी गई है कि यद्यपि उनमें हड़ताम या महीनों तक उठाने का साहस था कि वे बर्से हस्ता है फिर भी मुलीबत उठाने के बाद उनमें कुछ ऐसी प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न हो जाती हैं, बिनको दूर करने के लिए बहुत समय लगता है। इसका परिणाम यह होता है कि अनेक हड़ताम के पश्चात् काशी समय तक धर्मियों की ओर से एक प्रकार का सौल और कामोच बाधाबन्ध बन जाता है। इस बात से लाभ उठाकर कई बार मानिकों ने हड़तामों को दीर्घ समय तक चलने को प्रोत्साहित किया है तथा तासबन्धी भी की है क्योंकि मानिकों में प्रतीता करने की अमत्ता होती है। मानिकों को ऐसे दृष्टिकोण को अस्वीकार करनी चाहिए। इसी प्रकार ऐसी अनेक परिस्थितियाँ हो सकती हैं जबकि हड़ताम के अधिकार पर रोक अयोग्य पड़ती है। कुछ जैसी धार्मिकताम

प्रवस्थाओं में अगोपयामी सभाओं में देश के वाणिज्य विकास सम्बन्धी योजनाओं के कार्यान्वित होने की दृष्टि में अथवा जब कोई भी पक्ष अनुचित दृष्टिकोण अपनाकर सरकार का यह कर्तव्य ही जाता है कि वह हस्तक्षेप करने और हड़ताल के अधिकार को वाणिज्य सेक्टर सन्नी प्रकार क विवादों का प्रथम उपाय कर दे ।

इस सम्बन्ध में यह बात भी उल्लेखनीय है कि भारतवर्ष में अगिर्कों के हड़ताल के अधिकार को स्वीकार कर लिया गया है । यह इससे स्पष्ट हो जाता है कि भारतवर्ष के सुविधान में मजदूर व मालिक बनाने का अधिकार प्रदान किया गया है । अन्तर्राष्ट्रीय धर्म मजदूर व अधिष्णय द्वारा भी इस अधिकार की सुरक्षा होती है । फिर भी भारत में हड़ताल के इस अधिकार का प्रयोग नहीं कहा जा सकता । औद्योगिक विवाद अधिनियम व अन्तर्गत कुछ विधेय परिस्थितियों में हड़तालें प्रथम उपाय कर दी गई हैं और प्रथम अन्तर्गत म माग लेने पर हड़ की भी व्यवस्था कर दी गई है ।

भारतवर्ष में औद्योगिक विवादों को रोकने और सुसम्भाने के उपाय (Prevention and Settlement of Industrial Disputes in India)

विवादों की रोक-थाम —

उपचार से बचाव सदैव ही अच्छा होता है । इसलिए हम सर्वप्रथम उन उपायों का विवेचन करेंगे जो कि देश में होने वाले औद्योगिक विवादों की रोक-थाम कर सकें । जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है समय की तत्कालीन आवश्यकता यह है कि पूर्ण और अम के मध्य की खाई को कम किया जाए तथा मासिकों व मजदूरियों के मध्य सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने व प्रयत्न किए जाएं । मासिकों के दृष्टिकोण में न केवल परिवर्तन करने की आवश्यकता है जिससे वह मासिकों के कल्याण में निजी रूप से अधिक रुचि ले सकें वरन् इस सम्बन्ध में कई धर्म उपाय भी हैं । प्रथम उपाय तो यह है कि ऐसे रातिराती मासिक संघों का विकास हो जिसकी प्रबन्धकताओं तक पहुंच हो ।

रातिराती मासिक संघ —

मासिक संघों के धर्मार्थ में हम इस बात का उल्लेख कर चुके हैं कि रातिराती मासिक संघों द्वारा मासिकों व अधिष्णों में मजदूर सम्बन्ध बनाये रखने के क्या साधन हैं । मासिक संघ मासिकों से भीसी बातचीत कर सकते हैं और इस प्रकार हड़ताल होने के एक मुख्य कारण को दूर कर सकते हैं जो, कारण यह होता है कि घनेक बार मजदूर मासिकों के समस्त अधिष्णों का प्रतिनिधित्व उचित रूप में नहीं करते । मासिकों के लिए भी यह सम्भव नहीं होता है कि वे व्यक्तिगत रूप से प्रत्येक कर्मचारी से मिलें और उनके बच्चों का निवारण करने का प्रयत्न करें । मासिक मासिक संघों में अधिष्णों का हृदय पारसे और यदि एक बार हृदय संतुष्ट हो गया तो मासिक इस बात का विचार कर सकते हैं कि फिर निवारण का प्रयत्न न होगा । मासिकों की

यह अनुभव कर सना बाहिए कि इस बाठ के सिए कि पारस्परिक सम्बन्ध मबुर बने र्हे अमिक संघ एक प्राबन्धक और उचित साधन है ; एकठा और सामूहिक रूप से कार्य करने से अतिकों को सी साम होता है नबोकि वे मातिकों की इइ सीबाकारी छक्ति का लभ सामना कर सकते हैं और इस प्रकार मातिकों से उचित व्यवहार पा सकते हैं ; अमिकों द्वारा सामूहिक रूप से सिए गए निर्लियों की मातिकों द्वारा सरभता से उदेसा नही की जा सकती ; परन्तु प्रभावधामी होने के सिए यह प्राबन्धक है कि अमिक संघ अपने संगठन में मजबूत और प्रभे हों और अमिकों के बहुमत का प्रतिनिधित्व करते हों ; भारत के अमिक संघ आन्धोलन में कई प्रकार के मन्त्रीर होय हैं जिनका उल्लेख किया जा चुका है ; इन होयों को दूर कर देने से देय में एक सत्तिधामी अमिक संघबाद का विकास होपा और यह बाठ औद्योगिक सहाति को रोक्ने के सिए प्रभावधामी साधन सिउ होवी ।

इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि भारत के अनेक औद्योगिक केन्द्रों में अमिकों और मातिकों के बीच समझौते हुए हैं ; ऐसे समझौते औद्योगिक-सहाति के सिए अनुकूल बातावरण प्रदान करते हैं ; इनका स्वागत करना बाहिए ; यह समझौते औद्योगिक-सहाति को बनाये रखने के सिए सामूहिक सीबाकारी की महत्ता का प्रकट करते हैं और यह प्रासा की जा सकती है कि सम्पूर्ण भारत में अमिक संघों और प्रबन्धकों द्वारा ऐसे समझौते अनुकरणीय हवने ; अहमदाबाद में २७ जून १९३३ को अहमदाबाद मिल मातिक परिषद् और मुठी कपड़ा मिल मजदूर परिषद् के बीच हो सामूहिक समझौते हुए ; प्रथम समझौते का उद्देश्य पारस्परिक बाठबीत या स्वीकृत विबाधन द्वारा विबाधों का निपटाण करना है ; इसण समझौता बोगस धुमटान से सम्बन्धित है ; एक और समझौता टाटा आबल एण्ड स्टील कम्पनी (TISCO) व टाटा अमिक संघ के बीच जनवरी १९३६ में जमशेदपुर में हुआ ; यह एक व्यापक समझौता है और इसमें संघ सुरक्षा अमिक उत्पादन कार्य बेछी निर्धारण पाबि की मोबतायों में अमिकों द्वारा सहयोग देने के उपबन्ध हैं ; इसमें अनेक ऐसे उपबन्धों का भी उल्लेख है जो भारत के सिए नबीत हैं यद्यपि इसरे उन्नत औद्योगिक देशों के सिए यह कोई नई चीज नही है ; अन्य समझौते जो हुए हैं उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं — बम्बई मिल मातिक परिषद् और राष्ट्रीय मिल मजदूर संघ के मध्य अहम टेक कम्पनी व अमिक संघ के मध्य मोदीनगर में मोदी कलाई और बुनाई मिल के मजदूर और प्रबन्धकों के मध्य मंसूर कामूज मिल धशावठी के अमिक संघ और प्रबन्धकर्ताओं के मध्य और मंसूर सरकार सड़क माठापण विभाग और इसके अमिकों के मध्य मंसूर चीनी कम्पनी बंसमोर और उनके कर्मचारियों के मध्य मद्रास के बायाग के प्रबन्धकर्ताओं और वहां के अमिकों के मध्य ; इस प्रकार के समझौते अथ मध्य कई स्थानों वर भी हुए हैं और मातिकों और अमिकों के मध्य मबुर सम्बन्ध बनाये रखने में बहुत सहायक सिउ हो रहे हैं ।

औद्योगिक सहाति को बनाये रखने के सिए जो मध्य महत्वपूर्ण वन उदये

रूप हैं वह निम्नलिखित हैं — (क) प्रबन्ध में श्रमिकों का भाग (Workers Participation in Management) (ख) अनुशासन संहिता (Code of Discipline), (ग) आचरण संहिता (Code of Conduct) (घ) शिकायत निवारण क्रियाविधि (Grievance Procedure) (ङ) मूल्यांकन तथा कार्यान्विति समितियाँ तथा प्रभाग (Evaluation and Implementation Committees and Division)। इनमें से प्रथम चार का उल्लेख परिशिष्ट ग' में किया गया है।

मासिक-मजदूर समितियाँ (Works Committees)

उनके महत्त्व और कार्य —

मासिक मजदूर समितियों के कार्यों का भी इस सम्बन्ध में उल्लेख करना आवश्यक है। उद्योगों की प्रथम-प्रथम प्रत्येक सप्ताह में उद्योग-प्रशासित को रोकने के लिए यह समितियाँ बहुत उपयुक्त हैं। इनमें मासिकों और श्रमिकों दोनों के ही प्रतिनिधि होते हैं। इनका मुख्य उद्देश्य यह होता है कि कारखाने की सीमा में ही पारस्परिक सह-दृष्टि और मैत्रीपूर्ण वातावरण बनाकर दिन प्रतिदिन की समस्याओं पर विचार-विमर्श करें। इन समितियों में मासिक व श्रमिक इस प्रकार मही मिलते जिस प्रकार किसी संघर्ष के निपटाने के लिये सत्कार के सम्मुख आते हैं वरन् जो श्रमिकों की मासिक पारस्परिक विचार-विमर्श से अपने विवादों को प्रथमत्व एवं शांतिपूर्ण ढंग से निपटाने और मठमेंनों को दूर करने के लिये मिलते हैं। यह समितियाँ प्रबन्धकों और कर्मचारियों दोनों ही से सम्बन्धित दिन प्रतिदिन के पारस्परिक प्रश्नों पर विचार करती हैं। यह प्रथम उत्पादन कार्य की शिकायतों, कम्पास कार्य प्रशिक्षण मजदूरी अनुशासन बंधन सहित प्रत्येक कार्य के बन्धे, बोनस पारि उद्योग की लक्ष्य सभी बातों से सम्बन्धित होते हैं और इनका सम्बन्ध श्रमिकों के दैनिक जीवन से भी होता है। यदि इन समस्याओं का प्रारम्भिक प्रवृत्ति में लक्ष्यपूर्वक उपचार नहीं किया जाता तो यह विषय गम्भीर विवाद उत्पन्न कर सकते हैं। मासिक मजदूर समितियाँ प्रथम-प्रथम संस्थानों में इस प्रकार के प्रश्नों पर विचार-विमर्श करने में सहायक होती हैं। औद्योगिक शांति और नीव प्रत्येक संस्थान में बानी बानी चाहिए और यह नीव इस प्रकार पड़ सकती है कि दिन-प्रति दिन की समस्याओं पर प्रथम-प्रथम संस्थानों में सावधानी से विचार किया जावे। इस प्रकार औद्योगिक विवादों को रोकने में मासिक मजदूर समितियों का बहुत महत्त्व है। प्रारम्भिक प्रवृत्ति में दोनों पक्षों में समझौता करा देना जबकि किसी ने भी इसके अपने सम्मान का प्रश्न नहीं बनाया होता अपेक्षाकृत सरल होता है क्योंकि उत्पन्न सम्बन्धित पक्ष अपनी ही बात पर यह आते हैं और विवाद बड़ जाता है। इस दृष्टिकोण में भी औद्योगिक विवादों को रोकने में मासिक मजदूर समितियों की अधिक उपयुक्तता है। इन समितियों से श्रमिकों को इस बात की भी शिक्षा मिल सकती है कि वह अपने उत्तरदायित्वों को ठीक ठीक समझ सकें।

मासिक मजदूर समितियों के कार्यों में आपायें —

रॉयल यम घाबोग ने इन प्रकार की मासिक मजदूर समितियों की स्थापना करने की विचारणा की थी और कुछ समितियां बनी थीं। परन्तु ग्रहणदाबाय को छोड़कर बाही यांभी जी के प्रभाव के कारण यह समितियां सफल हो सकीं अन्य स्थानों में यह सतोपजनक प्रयत्न नहीं कर सकीं। उनके निर्माण एक कार्य-विधि में प्रत्येक कठिनाइयों का अनुभव किया गया जो कठिनाइयां घाय तक भी पाई जाती हैं। मासिक लेनी समितियों को धमिक मजो का प्रतिस्थापन (Substitute) समझते हैं, जबकि धमिक मजो के नेता इन्हें अपना प्रतिद्वन्द्वी (Rival) समझते हैं और उनके विचार से इन्हें कोई भी प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए। अतः दोनों ही पक्षों में तमतपक्षमी है। इस कारण यह धावदमक हो जाता है कि पिछली प टियों को दूर किया जाय व मासिक मजदूर समितियों की उचित रूप से स्थापना की जाय। अन्य देशों में इस प्रकार की समितियां धरमन्त सफल हुई हैं। परन्तु भारत में अब तक इनकी प्रयत्न बहुत भीमी रही है। भारतवर्ष में धमिकों की बोधपूर्ण शिक्षा ऐसी समितियों की स्थापना में एक बड़ी बाधा है। पश्चिमीय देशों में लेनी स्थिति नहीं है। इसके अतिरिक्त यह भी धावदमक है कि जहाँ धमिक सब हो बड़ा मासिक इन समितियों की स्थापना व कार्य-संभालन में इन सबो से सहयोग लें और समितियों को धमिक सबों की प्रति स्थापना न मानें। कभी कभी मासिक ऐसी समितियों में पोषित सब (Yellow Union) के प्रतिनिधियों को भी सम्मिलित कर लेते हैं जो कार्य प्रवांक्षणीय है। धमिकों के प्रतिनिधियों को पूषक पृषक व समुचित रूप से सभा करने की भी सुविधा होनी चाहिए। और प्रबन्धकों को मासिक मजदूर समितियों के विचार से सहानुभूति रखनी चाहिए। धमिकों को भी सहयोग देना चाहिए और धमिक सबों को इन समितियों को अपना प्रतिद्वन्द्वी नहीं समझना चाहिए।

भारत में मासिक मजदूर समितियां —

१९२ में भारत सरकार ने अपने छापाखानों में संयुक्त समितियों (Joint Committees) की स्थापना की थी। टाटा धारमन बर्क्स जमशेदपुर तथा कुछ रेलवे में भी ऐसी समितियों की स्थापना की गई। १९२१ की बंगाल की पौद्योगिक विचार समिति ने इस विचार का समर्थन किया। १९२२ में मद्रास की बकिजम और कर्नाटक मिस्त्र में धमिक कस्याए समिति के नाम से एक समिति की स्थापना की गई। इसने धमिकों व धमिकों के मध्य अन्धे सम्बन्ध बनाये रखने में उपयोगी कार्य किया। कुछ उद्योगों निजी उद्योगों एक रेलवे में भी इस प्रकार की समितियों की स्थापना की गई। परन्तु सब बातों को देखते हुए इनकी प्रयत्न विशेष उत्साह बर्क नहीं हुई। रॉयल यम घाबोग ने ऐसी समितियों को बड़ी धाधापूर्णे ह्दि से देखते हुए कहा था 'हमाए विरधाम है कि यदि उनको उचित उत्साह प्रदान किया जाय है और भूतकाल की त्रुटियों को दूर कर दिया जाय है तब मासिक

३८ १ करोड़ रुपए और राज्य सरकारों का व्यय १० १६ करोड़ रुपए होने का था। औद्योगिक धमिकों के मकानों को प्राथमिकता भी गई थी जिसके लिए कन्द्रीय सरकार को सहयोग देनी भी और राज्य सरकारों को इस सम्बन्ध में प्राथमिक क्षेत्रों की ओर ध्यान देना था। परन्तु औद्योगिक धमिकों के आशाम के लिए केवल १३ २६ करोड़ रुपये व्यय किये गये और प्रथम आयोजना काल में केवल ४३ ८३१ मकान बनाये जा सके थे।

प्रथम पंचवर्षीय आयोजना में औद्योगिक धमिकों के आशाम की एक योजना भी थी जिसके आशाम पर उपदान प्राप्त औद्योगिक आशाम योजना बनाई गई जो आज तक चालू है। इस योजना के अन्तर्गत ८३ प्रतिशत मकान बनाने का उत्तरदायित्व राज्य सरकारों का है (कन्द्रीय सरकार द्वारा १० प्रतिशत उपदान तथा १०% ऋण द्वारा) और १५% मकान मानिकों द्वारा बनाने की व्यवस्था है (२५ प्रतिशत उपदान और ५% ऋण द्वारा)। धर १३५ प्रतिशत मकान सहकारी समितियों द्वारा (२५ प्रतिशत आशाम और १५ प्रतिशत ऋण द्वारा) बनाये जाते हैं। इस योजना का ऊपर विस्तृत उल्लेख किया जा चुका है। मकान नियामक के लिए धन्येयों तथा सभी आशाम एजेंसियों द्वारा उनके लागू करने के कामों को समर्थित करने के लिए आयोजना में एक राष्ट्रीय मकान नियामक संघ की स्थापना की गिगरिण की गई थी जिसकी स्थापना की जा चुकी है। आयोजना में एक कन्द्रीय आशाम बोर्ड तथा एक क्षेत्रीय आशाम बोर्ड की स्थापना करने की तथा मकान नियोजन के लिए अधिनियम बनाने तथा भूमि अधिग्रहण अधिनियम में संशोधन करने की भी सिफारिश की गई थी।

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में आशाम के हतु १२ करोड़ रुपयों का आशाम-जन किया गया था जिसको निम्न प्रकार से विभाजित किया गया था — उपदान प्राप्त औद्योगिक आशाम-व्यय ४५ करोड़ रुपए, कम धाय वाले लोगों के लिये आशाम हेतु ४० करोड़ रुपये प्राथमिक आशाम १० करोड़ रुपये गरीब बस्तियों हटाने और भंगियों के लिए आशाम २० करोड़ रुपये मध्यम वर्ग के आशाम के लिए ३ करोड़ रुपये आशाम आशाम के लिए २ करोड़ रुपए। आयोजना में मंदी बस्तियों की सफाई का बहुत अधिक महत्व दिया गया है और इसके लिए सुझाव दिया गया है कि कन्द्रीय सरकार सातवां वा २५% उपदान के रूप में तथा ५० प्रतिशत ऋण के रूप में जो कि ३० वर्षों में मुक्तान किया जा सकता है परन्तु तथा सातवां का षेप २५% राज्य सरकारों द्वारा उपदान के रूप में दिया जाय। यह भी बताया गया है कि प्रथम आयोजना काल में नगरों में १३ लाख मकान बनाये गये थे जिनमें से ६ लाख निजी क्षेत्र में तथा सेन केन्द्रीय मंत्रालयों राज्यों तथा सार्वजनिक संस्थाओं द्वारा बनाये गए थे। द्वितीय आयोजना के लिए अनुमान था कि १ ३२२ करोड़ रुपए की लागत से १६ लाख मकान बनाए जायेंगे जिनमें से ८०० करोड़ रुपये की लागत के ८ लाख मकान निजी क्षेत्र में बनाए जायेंगे। आयोजना में औद्योगिक धमिकों के

घाबास के लिए सहकारी घाबास समितियों के विकास को अत्यधिक महत्व दिया गया है। १९१८-१९ में योजना की सीमा प्रगति होने के कारण स्वीकृत धन राशि १२० करोड़ रुपए से बढ़ा कर ८४ करोड़ रुपए कर दी गई थी।

तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में ९.० करोड़ रुपए का कार्यक्रम है। घाबास के लिए १४२ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इसके अतिरिक्त जीवन बीमा निगम से ९ करोड़ रुपए की राशि मकान बनाने के लिए प्राप्त होने का अनुमान है। यह कुल धन राशि निम्न प्रकार से विभाजित की गई है —

योजना	रुपय (करोड़ रुपए में)
(i) निर्माण विभास और संभरण मंत्रालय द्वारा —	
उपदान प्राप्त औद्योगिक घाबास	२९ ८
पोरी श्रमिक (Dock Labour) घाबास	२
गन्धी बस्तियों की सफाई तथा सुधार तथा राशि विभास गृह कर्म धाय वाले बरों के लिए घाबास	२८ ६
मध्य धाय वाले बरों के लिए घाबास	१५ २
मध्य धाय वाले बरों के लिए कन्द्रीय क्षेत्रों में घाबास	२ ५
शानीय घाबास	१२ ७
बागान श्रमिक घाबास	७
भूमि श्रमिकगृह तथा विकास	९ ५
घाबास सम्बन्धित अनुसन्धान प्रयोग तथा शौक्य	१
	<hr/>
योग	१२२
	<hr/>
(ii) अन्य योजनाएँ —	
राज्य सरकारों द्वारा घाबास योजनाएँ	२ ३
नगर नियोजन तथा नगर विकास योजनाएँ	५ ५
घरूटी विकास योजनाएँ	१२ ३
	<hr/>
योग	२ ०
	<hr/>
(i) तथा (ii) के अन्तर्गत योजनाओं का योग	१४२
ऐसी योजनाएँ जिनके लिए वित्तीय सहायता जीवन बीमा नियम से प्राप्त होने की आशा है	९
	<hr/>
कुल योग	२०२ ०

तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में उपदान प्राप्त घाबास योजना के अन्तर्गत ७१ हजार मकान कर्म धाय वाले बरों के लिए ७५ हजार मकान गन्धी बस्तियों की

सफाई के अन्तर्गत १०००० मकान तथा धामीएँ भाषाम के अन्तर्गत १ लाख २५ हजार मकान बनाने का कार्यक्रम है। यह अनुमान लगाया गया है कि कोमला धीर एअरक कामों की कम्पली निधिओं में से १४ करोड़ की सायत स तीसरी भाषोबना काम में १० हजार मकान बनाने लागेंगे तथा रमके व धम्य मंत्रालयों द्वारा २० करोड़ रुपये की सायत से कर्मचारियों के लिए मकान बनाने की व्यवस्था है।

उपसंहार —

इस प्रकार भाषास की समस्या सरस नहीं है धीर भौद्योगिक भूमिकों की भाषान समस्या को अतोपजनक ढंग से सुलझाने के लिए अनेक संवैधानिक बातों का ध्यान रक्षना पड़ेगा। समाजवादी विचारधारा वाले व्यक्ति सम्भवत भाषास के संबंध में राज्य द्वारा अधिक हस्तक्षेप एवं नियंत्रण पर जोर देते हैं धीर भम अनुसंधान समिति ने भी भाषास के सम्बन्ध में एकीय नियंत्रण पर जोर दिया था। प्रत्येक देश में सरकार ने जनता की सामाजिक प्रायश्चित्तताओं में अधिक से अधिक हस्तक्षेप करने की नीति को अपनाया है धीर निर्धनों के भाषास का प्रबन्ध करना भी बँसा ही प्रायश्चित्तक समझा गया है जना सरकार द्वारा विद्विना एवं धम्य सेवाओं की व्यवस्था करना है। फिर भी इस समय सरकार की कठिनाइया बहुत अधिक हैं धीर हममें अनेक है कि सरकारी कर्मचारियों द्वारा भाषास व्यवस्था का प्रबन्ध कुशलतापूर्वक किया जा सकेगा। अत वर्तमान समय में सरकार ही पूर्णतया भाषाम का उत्तर दायित्व नहीं ले सकती। भाषास पर सरकार के नियंत्रण के अन्त को हमें एक धम्य समस्या नहीं समझना चाहिये बल् राज्य द्वारा उद्योगों के नियंत्रण की सामान्य समस्या के साथ ही लेना चाहिये। यदि उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जाता है, तब समस्या पूर्णतः मित्र होगी। वर्तमान समय में हमारा विचार है कि प्रकृति भाषास व्यवस्था का उत्तरदायित्व मानिकों पर होना चाहिये। मानिकों को यह ध्यान में रखना चाहिये कि यदि वह ऐसा नहीं करते धीर सरकार हस्तक्षेप करती है तो न केवल भाषास के नियंत्रण के लिये बल् सरकार द्वारा उद्योग के नियंत्रण के लिये भी मानिक स्वयं उत्तरदायी होंगे। यह कोई गुप्त बात नहीं है कि साम्यवादी, पूँजीवादी व्यवस्था के विरुद्ध एक देते हुए, भूमिकों की शोचनीय भाषास व्यवस्था का उदाहरण देते हैं। मानिकों को इस केशावनी पर ध्यान देना चाहिये।

छाएँ में यह कहा जा सकता है कि उचित स्थानों की कमी भम धीर इमारती सामान की सायत में अत्यधिक वृद्धि दूर बने हुए उपनगरों से प्राप्त करने लिये यातायात के साधनों की कमी धीर धमके अधिक धन की कमी के भाषास की समस्या के समाधान को असाधारण रूप से अन्ध बना दिया है। इस प्रकार के सकट का धमना केवल सरकार, मानिकों भूमिकों तथा सहकारी समितियों के संयुक्त धीर एक प्रयत्नों के द्वारा ही हो सकता है। सरकार धमना उत्तरदायित्व मुक्त रूप से निभा रही है धीर अब यह धम्य पदों का कर्तव्य है कि वे पूर्णतया सहयोग दें।

हम डा० राधा कृष्ण मुखर्जी के शब्दों में कह सकते हैं कि 'भारतीय औद्योगिक श्रमिकों के रहन-सहन के स्तर, व्यवहार और नैतिकता में उन्नति करने के लिये प्रच्छेद आवास की व्यवस्था करना पहला पग है। इसके साथ साथ हम रोकी जा सकने वाली बीमारियों तथा प्रकाश मृत्यु पर भी विचार पा सकेंगे। फलान्वय उपायों में वृद्धि तथा स्वास्थ्य में उन्नति होगी। भारतीय श्रमिकों की कार्यक्षमता में वृद्धि करने और उनकी मजदूरी के लिये निःसन्देह आवास व्यवस्था ही मुख्य समस्या है। जिन लोगों का यह मत है कि भारतवर्ष औद्योगिक आवास के लिये धन व्यय नहीं कर सकता उनके लिये एक ही उत्तर है कि भारत में ऐसे व्यय को करने के लिये अब विमर्श नहीं किया जा सकता। ●

ब्रिटेन में आवास समस्या

(Housing Problem in Great Britain)

समस्या की सम्मीरता — (Magnitude of the Problem)

ब्रिटेन में १९ वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में अखण्ड नीति (Non-intervention) का सबसे प्रबल उदाहरण आवास निर्माण तथा नगर विकास के क्षेत्रों में मिलता है। औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् बरेशू उत्पादन का स्थान कारखाना उत्पादन में से मिला। इस परिवर्तन के कारण जनसंख्या औद्योगिक तथा व्यापारिक केन्द्रों में तेजी से एकत्रित होने लगी। लाखों की संख्या में लोग गाँवों और जिलों से शहरों की ओर आये और इनके रहने की कुछ न कुछ व्यवस्था भीखता से करनी पड़ी। इन वर्षों में जनसंख्या में भी अधिक वृद्धि हुई जिसके कारण आवास की आवश्यकता अधिक तीव्र हो गई। सन् १८०० से १८३१ के मध्य सकाओं की संख्या में १२ लाख से लेकर लगभग ३० लाख तक वृद्धि हुई। परन्तु न तो राज्य ने और न ही स्थानीय प्राधिकारियों ने आवास निर्माण के नियन्त्रण के लिये कोई प्रभावशाली कदम उठाया। उस समय न तो कोई आवास नियम था और न ही किसी स्तर को निर्धारित किया गया था। स्वास्थ्य तथा सफाई की दृष्टि से भी आवास निर्माण पर कोई रोक नहीं लगाई गई थी। सिविल कमिश्नरों को कुछ मामलात के अधिकार दिये गये थे परन्तु इस सम्बन्ध में उनका प्रभाव नगण्य (Negligible) था। स्थानीय प्रशासन (Local Governments) उस समय ऐसे दफ्तरवादी (Bureaucratic) बोर्डों के हाथों में था जो आवास निर्माण पर नियंत्रण लागू करना अपना कार्य नहीं मानते थे।

प्रारम्भ में आवासों का अनियोजित विकास —

परिणामस्वरूप नये शहरों का निर्माण तथा पुराने शहरों का विकास बिना किसी पद्धति के तथा बिना अधिकारी की आवश्यकताओं को ध्यान में रखा हुआ हुआ। जहाँ भी उचित स्थान मिला वही पर सबकुछ तथा मकान बना दिए गये। स्थान उचित है या नहीं इसका निर्णय बचक कारखानों को निजहता को ध्यान में रखकर किया जाता था। यातायात के साधन अप्रत्याप्त थे मर्त्ये थे। उनीमित्त लोग अपने काम करने के स्थानों के निकट रहने के लिए बाध्य थे। एकका अवगन्तव्यता (Inevitable) परिणाम यह हुआ कि भीड़-भाड़ व अस्वास्थ्यकर वातावरण अधिक बढ़ गया। शोषपूर्ण संघर्ष व्यवस्था में इस वातावरण को और भी अधिक गंभीर बना दिया।

घाबास व्यवस्था में उन्नति के लिये प्रयत्न —

१८३० व १८४ के बीच दो बार मयागक हुबे का प्रकोप हुआ बिनमें मृत्यु दर 'वाटररू' की सफाई से भी अधिक थी। परिणामस्वरूप लोगों ने बुरे घाबास के खतरों को समझा और सफ़ी स्वच्छ दशाओं की आवश्यकता अनुभव की। १८४४ में नगरों की घाबास दशा के अनुसंधान हेतु एक आयोग की नियुक्ति हुई। इसकी रिपोर्ट में कहा गया था कि साधारणतः घाबास व्यवस्था खतरा के स्वास्थ्य के लिये हानिकारक थी। पीने का जल घनेक सेत्रो में सोपपूर्ण पाया गया। साथ ही जन-जन विकास का प्रबन्ध (Sewage) भी बहुत खराब था। आयोग की नियुक्ति के चार वर्ष पश्चात् जन-स्वास्थ्य से सम्बन्धित प्रथम अधिनियम पारित हुआ।

इसके पश्चात् घाबास निर्माण के निर्माण सम्बन्धी नियमों को बनाने के लिए कुछ पय उठाये गये। देश में मोदीमरुत महामारी के समाप्त करने का प्रयत्न १८४८ का जन स्वास्थ्य अधिनियम (Public Health Act) को था। इससे जन निरकरण व्यवस्था में सुधार हुआ और अधिकारियों को बाध्य किया गया कि वे प्रब तक जले जाने वाले जल-मल विकास के तरीकों को बदल कर उचित नालियों प्रादि की व्यवस्था करें। परन्तु प्रब तक घाबास निर्माण की व्यवस्था को उन्नत करने तथा गन्दे मकानों को मष्ट करने के लिये कोई पय नहीं उठाया गया था। गन्दी बस्तियों की सफाई के लिये अधिनियम —

(Acts for Clearance of Slums)

सन् १८३१ में 'शेफ़्टेसबरी' अधिनियम (Shaftesbury Act) क अन्तर्गत नगरपालिकाओं को यह अधिकार मिल गया कि वह जन उधार लेकर भूमिकों के मल मकान बनायें। इसके पश्चात् सन् १८६३ के टॉरेन्स अधिनियम (Torrens Act) के अन्तर्गत नगरपालिकाओं को निजी गन्दे मकानों का सुधार करने प्रबता उन्हें मष्ट करने का भी अधिकार प्राप्त हो गया। सन् १८७३ क क्रॉस अधिनियम (Cross Act) क अन्तर्गत भी गन्दी बस्तियों की सफाई की प्राप्ता मिल गई। परन्तु वास्तव में इन अधिनियमों से कुछ अधिक लाभ न हो सका। बदा और भी बुरी होती गई और अधिक भीड़भाड़ वाले मकानों तथा क्षेत्रों की सफाई कई गुनी हो गई। सन् १८७३ क जन स्वास्थ्य अधिनियम (Public Health Act) से भी कुछ सुधार हुआ। इसके अन्तर्गत दो वर्ष पश्चात् ही स्थानीय सरकार बोर्ड द्वारा एक उपनियमों की आदर्श संहिता (Model Code of by-laws) प्रकाशित की गई जिसमें नए मकानों का निर्माण गलियों नालियों तथा अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्रों की सफाई के लिए उपनियमों की व्यवस्था थी। १८७३ से जन स्वास्थ्य अधिकारियों की स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा नियुक्ति अनिवार्य हो गई। १८८४ में अधिक बर्ष की घाबास व्यवस्था की जीव पद्धतान के लिये एक आयोग की नियुक्ति हुई और ९ वर्षों के पश्चात् एक व्यापक अधिक बर्ष घाबास अधिनियम (Housing of the Working Class Act) पारित हुआ।

१८६० के अधिनियम में आवास सम्बन्धी विज्ञान कानूनों को समादाहित तथा प्राथमिक विस्तृत कर दिया। अतः अधिनियम के उपरान्त ही इस नये अधिनियम में उद्यत रूप से ला गये और इसके अन्तर्गत जब स्थानीय प्राधिकारियों को नयी बस्तियों का पूर्णतया हटाने का अधिकार मिल गया। टीनेन्स अधिनियम की शर्तों को भी इस अधिनियम में दोहराया गया था। नगरपालिकाओं का छोटे-छोटे क्षेत्रों में निजी आवासों को उद्यत करने का अधिकार भी मिल गया था। यह सब बातें प्रतिवार्य रूप से लागू की गई थी। इसके साथ ही बेल्फेस्टनगरी अधिनियम की तरह स्थानीय प्राधिकारियों को अधिक रूप से आवास हेतु जमीन खरीदने और प्रेषण करने का अधिकार दिया गया। परन्तु यह केवल एक अनुमोदक (Permissive) शक्ति थी। परिल्लासस्वरूप मकान विरासे तो आवास नये परन्तु नये आवासों का निर्माण कम हुआ। इस कारण १९०६ में इस शक्ति को अनिवार्य कर दिया गया। परन्तु १९१४ से पहले मकानों की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिये नये मकानों का निर्माण बहुत कम हुआ। कुछ पूब की सार्वजनिक योजनाओं के अन्तर्गत नयी बस्तियों की सफाई के कारण विस्थापित (Displaced) हुए लोगों को फिर से बसाना एक बड़ी कठिनाई थी। विस्थापितों के लिये जो नये मकान थे उनके विरासे बहुत अधिक थे। जिन अधिकों को बेतन अर्थात् निम्नता था वे तो अल्प मकानों में चले गये परन्तु अन्य अधिकों को बटिया मकानों में ही बसाना पड़ा। इस प्रकार बितने ही स्वामी पर भीड़भाड़ और अधिक बढ़ गई।

इसमें सन्देह नहीं कि अत्यन्त नयी बस्तियों को पूर्णतः हटा देना ही सर्वोत्तम था परन्तु यह काम काफी महंगा पड़ा था। इनलिए कई नगरपालिकाओं में नयी बस्तियों का पूर्णतः नष्ट करने की धमकी छोटे-छोटे क्षेत्रों को उद्यत करने तथा मकानों की मरम्मत करने पर अधिक ध्यान दिया। नये क्षेत्रों को साफ करने के उपायों में कमी होने का एक कारण यह भी था कि राज्य में सामान्य सम्बन्धी अनुदान कम प्राप्त होता था। सन् १९११ की जनगणना में यह प्रकट हुआ कि जनसंख्या का कम से कम दसवाँ भाग भीड़भाड़ वाले आवासों में रहता था तथा सब भय पाक लाभ भोग केवल एक कमरे के मकानों में रहने थे। परन्तु वास्तव में वास्तव अतः कि इन आवासों में स्पष्ट होता है, उसमें भी अधिक प्राथमिक की क्योंकि प्रति भीड़भाड़ की परिभाषा अर्थात् बच्चों को आवा बसक मानकर एक कमरे में दो से अधिक बच्चों का होना कोई सद्योपजनक परिभाषा नहीं थी। इसी दृष्टि से भीड़भाड़ की वास्तविक स्थिति अत्यधिक प्राथमिक थी।

१९०९ का आवास तथा नगर आयोजन अधिनियम युद्धकालीन अवस्था [Housing and Town Planning Act of 1909 Conditions during the War]

यह १९१९ का आवास तथा नगर आयोजन अधिनियम विज्ञान कानूनों का पूरक था। स्थानीय प्राधिकारियों को सफाई के हेतु या भूमि लेने का अधिकार था

ही इसके प्रतिरिक्त उन्हें यह भी अधिकार दे दिया गये कि वे नगर विकास के लिये भूमि ल सकें। परिस्वामस्वरूप नगर प्रायोजन महत्वपूर्ण हो गया और लोगों ने इन बात का अनुभव कर लिया कि अनियोजित रूप से बने हुये मकान ही नहीं अपितु अनियोजित ढंग से निर्मित नगर भी दोषपूर्ण होत है। गम्भीर बस्तियां बन जाती हैं बनाई नहीं जाती। इस कारण यह समझ नहीं है कि जो भी नये मकान और बस्तियां बनें वह इस प्रकार से बनाये जाये कि वे मन्तव्य गम्भीर बस्तियां न बन सकें। १९०९ के नगर प्रायोजन अधिनियम की धाराओं के अनुसार कुछ निष्ठी संस्थानों तथा प्रागतिथीय भागिनों द्वारा अनेक प्रयोग किये गए, परन्तु कुछ के कारण वे अधिकतर सागु न किये जा सके। जितने भी मकान बनते थे मान उससे भी अधिक तीव्रता के साथ बढ़ रही थी। युद्ध के समय सड़कें का सामान बनाने वाले कार्यों के प्रतिरिक्त अन्य स्थानों पर निर्माण कार्य स्थगित कर देना पड़ा। मीडमाइ कुछ सीमा तक कुछ समय के लिये कम हो गई थी क्योंकि उन मकानों में भी लोग रहने लगे थे जो सड़कें से पहले मौजूद थे परन्तु अधिक किराओं के कारण खाली पड़े थे। एक यह कारण भी था कि सालों लोग सैन्य सेवा के लिये अपने घरों को छोड़ कर चले गये थे। परन्तु युद्ध समाप्त होने पर सैनिकों की वापसी के कारण तथा जनसंख्या की स्वाभाविक वृद्धि होने और लोग का विधियों को पराकाश करवाने के कारण मकानों का फिर प्रभाव हो गया। युद्ध के समय निर्माण कार्य का स्थगित होना भी इस प्रभाव के लिये उत्तरदायी था। सन् १९१० में १९२४ के बीच अनुमानत तीन लाख मकानों का निर्माण हुआ। परन्तु इसी समय में ऐसा कि हिसाब लगाया गया कम से कम पांच लाख मकानों की आवश्यकता उत्पन्न हो गयी थी।

१९१४-१८ के युद्ध के पश्चात् प्रावास निर्माण

इस प्रकार इंग्लैंड में भी कुछ गम्भीर प्रावास समस्याएँ रही हैं, जैसे प्रावासों की संख्या में कमी, गम्भीर बस्तियों को नष्ट करना तथा उनके स्थान पर नये मकानों का निर्माण करना आदि। मकान निर्माण की अधिक लागत, कुशल श्रमिकों का अभाव तथा किराया नियंत्रण अधिनियमों के प्रभाव से भी प्रावास सम्बन्धी कुछ समस्याएँ उत्पन्न हो गई थीं। सन् १९१४-१८ के युद्ध के पश्चात् हमारी सामान्य का भूम्य भ्रमस्थिक बढ़ गया। श्रमिकों की मजदूरी भी अधिक हो गई तथा उनके काम करने के बच्चे कम हो गये। इस कारण प्रावास निर्माण की लागत में काफी वृद्धि हो गई। एक और बड़ी समस्या यह थी कि कार्य कुशल मजदूर पुराने माथा में नहीं मिलते थे। शांती के धारण से कुशल शिल्पकारों में अभाव १ प्रतिशत की कमी आ गई थी। कुशल श्रमिकों का अभाव का कारण यह भी था कि अवन निर्माण कार्य के लिये उनकी मांग अधिक हो गई थी। जैसे जैसे समाज वाले लोगों को साफ करने तथा सामो को फिर से मकान उपलब्ध करने के अपने कर्तव्य को समझना बना उठनी ही ऐसी से कुशल श्रमिकों का अभाव बढ़ता गया।

इसके अतिरिक्त अभिभावकों (Guardians) को भवन निर्माण का व्यवसाय धपन मजूकों के लिये विशेष सतोपजनक नहीं मगता था क्योंकि इस व्यवसाय में मजदूरी अधिक नहीं मिलनी थी तथा काम भी अनियमित था। कुछ काम तथा उमरक पश्चात् को व्यवस्था के कारण भी जब मकान-निर्माण का कार्य स्थगित हो गया। दिसम्बर १९१५ में प्रथम किराया नियन्त्रण अधिनियम (Rent Restriction Act) पारित हुआ जो कि कुछ के पश्चात् भी लागू रहा। मन् १९३३ म जब तक य किराया नियन्त्रण अधिनियम बरामबर लागू रहे हैं।

सन् १९१६ तथा १९२३ की योजनाओं —

सन् १९१६ में पार्लियामेंट ने एडीसन योजना के अन्तर्गत स्थानीय प्राधिकारियों को अधिक बर्ग के आवास के निर्माण की एक योजना बनाने का कार्य सौंपा। यह आवास या तो स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा सीधे अधिकों को लगाकर प्रथम निजी निर्माताओं द्वारा या जनोपयोगी समितियों (Public Utility Societies) द्वारा बनाये जाने थे। जनोपयोगी समितियों म एम लागू हुये हैं जो निर्माण काय को मजूकारी आधार पर करना चाहते हैं या ऐम मामिक हात हैं जो धपन कर्मचारियों को आवास सुविधा प्रदान करना चाहते हैं। परन्तु राज्य का ही सामग का अधिकोस भार बहन करना होता था। राज्य द्वारा जनोपयोगी समितियों को धीर हमरे निजी व्यक्तियों को भी उपदान प्रदान करन की व्यवस्था थी। राज्य ने धपन नियोजन तथा मकानों की विनिच्छता या कुछ क मिय भी कुछ स्थूलतम धर्मो निर्धारित कर ले थीं। किन्तु एडीसन योजना काफी महती मिछ हुई धीर १९२३ में इस स्थगित कर देना पड़ा मर्घय इसी योजना क अन्तर्गत काफी मकानों का निर्माण हुआ।

सन् १९२३ में अम्बरसन योजना के नाम से एक मई आवास योजना लागू की गई। इसके अन्तर्गत सरकार निजी सम्पत्ति लगाते धामों को स्थानीय प्राधिकारियों के द्वारा २० बर्ग क मिय ६ पौंड प्रति बर्ग क हिसाब से उपदान देती थी। स्थानीय प्राधिकारी यदि चाहत तो इस महायता म कृति भी कर सकत थे। स्थानीय प्राधिकारी उन लोगों को अधम प्रदान कर सकत थे जो धामिक बर्ग क आवासों का उनके निवाम के लिये ही निर्माण करना चाहत थे। यह अधम आजार मूल्य का ६० प्रतिशत तक हो सकता था।

१९२४ का व्हीटले अधिनियम — (Wheatley Act of 1924)

सन् १९२४ म आवास नीति म एक महत्त्वपूर्ण संशोधन करन का निरन्धय किया गया। जब तक की व्यवस्था म निर्माण कार्यक्रम की गति काफी मन्द थी किराये अत्यधिक थे तथा मकानों का विज्ञ-मूल्य अधिक बर्ग की सामर्थ्य से कहीं अधिक था। धायीण दोषों म इवि कार्य करन धायों क मिय बहुत कम मकानों का निर्माण हुआ था। इन दोषों के निवारण क लिये १९२४ का व्हीटले अधिनियम

पारित हुआ। इससे अन्ततः निरन्तर १५ वर्ष का कार्यक्रम बनाया गया था। निर्माण व्यवसाय के अधिकारों तथा कर्मचारियों की एक कमेटी के कथन के अनुसार यदि अधिक मिला जाये तो इतने समय में पचीस लाख मकान बन सकते थे। प्रत्येक वर्ष कितने प्राकारों का निर्माण होता है इसके लिये एक सूची बना ली गई थी और तीसरे वर्ष अमर यह देखा जाता था कि दो वर्षों में बिलकुल मकान बने थे सूची के प्राकारों के बातिहाई कम थे तब हम भाजना का बन्द करना पड़ता था। इसी विषयपता यह भी कि अधिनियम के अन्तगत उपदान में २ वर्ष के लिये ६ पीड के खान पर ४ वर्ष के लिये २ पीड के हिसाब से वृद्धि कर दी गई थी। साथ ही यह शर्त भी थी कि प्रावास किराये पर ही रियल एस्टेट के परन्तु बिना स्वास्थ्य मंत्री की अनुमति के बेचे नहीं जा सकते थे बिना भाजना के स्वयं किरायेदार उनको किराये पर नहीं दे सकते थे और स्थानीय प्राधिकारी भी उनको बेच नहीं सकते थे। और भी अनेक शर्तें थीं जैसे प्रावासों के निर्माण में अधिकारों को उचित मजदूरी देनी चाहिये बुद्ध से पूर्व के साधारण किराये से अधिक किराये नहीं होने चाहिये तथा किराये पर देने के लिये बड़े परिवारों को प्राथमिकता देनी चाहिये प्रादि। यदि ये शर्तें नहीं मानी जाती थी तो उपदान कम होकर ६ पीड हो सकता था। यदि मकानों का निर्माण प्राथमिक क्षेत्रों में होता था तो सहायता बढ़ा दी जाती थी। सरकार ने इमारती सामान के मूल्यों को नियंत्रित करने के लिये भी विधान पारित करने का प्रयत्न किया परन्तु इसमें उसे सफलता न मिली। १९३० तथा १९३६ में भी प्रावास अधिनियम पारित हुये जिनके अनुसार स्थानीय प्राधिकारी उन परिवारों को प्रावास देने के लिये बाध्य थे जिन्हें मनी बस्तियाँ नष्ट करके बड़ा से विस्थापित कर दिया गया था। सन् १९३६ का अधिनियम अन्त अधिनियमों को समायोजित करने वाला था।

इन विभिन्न योजनाओं से काफी प्रावास का निर्माण हुआ और बुद्ध के प्रारम्भ में ही प्रावास बड़ा काशी शहरों में सुचारु गई थी। सन् १९३६ के बुद्ध से पूर्व ब्रिटेन में लगभग एक करोड़ तीस लाख मकान थे। परन्तु बुद्धकास तथा उसके पश्चात् फिर मकानों का कुछ अभाव उत्पन्न हुआ और नई समस्याएँ सामने आईं, जो कि सफलतापूर्वक सुलझाई जा रही हैं।

इंग्लैंड में प्रावास सम्बन्धी वर्तमान दशा —

इंग्लैंड की औद्योगिक प्रावास समस्या साधारण जनता की प्रावास समस्या से ही सम्बन्धित है क्योंकि इंग्लैंड एक औद्योगिक देश है तथा बड़े शहरों की अधिकतम जनता औद्योगिक जनता ही है। औद्योगिक जनता स्वार्थी भी है, धीरे धीरे और और अधिक प्रवासी नहीं है। इसलिए इंग्लैंड की औद्योगिक प्रावास समस्या पर हम साधारण प्रावास समस्या के साथ ही विचार कर सकते हैं।

ब्रिटेन में १९३६ के बुद्ध के पहले जो एक करोड़ तीस लाख मकान थे उनमें से लगभग पचास लाख मकान शहरी भाग या तो पूर्णतः नष्ट कर दिये गये

घपसा जनता इतनी हार्ति पहुँची कि वे तिबास के योग्य न रहे । कुछ हार्ति समय भारतीय भास धर्य मकानों की भी पहुँची । इसक प्रतिरिक्त मुद्रकाल में नए घाबासों का निर्माण पुगतता एक गया वा तथा भूमिकों व इमारती सामान की भी कमी थी । इन सब वानो न मिलकर इर्मीण्ड में घाबास का गम्भीर घभाव (Shortage) उत्पन्न कर दिया । मुद्र से पूब इर्मीण्ड तथा बेम्म में तीन भास दर्याजित हज़ार मकान प्रति बर्ष बनने सव व और स्टाटमैण्ड में प्रति बर्ष दरदीस हज़ार मकान बनते व । इस हिसाब स यदि देसा जाए तो मुद्रकाल में ब्रिटेन कीम साख मकानों में बचित रहे मया, क्योंकि सितम्बर १९६९ तथा मई १९४९ के बीच ब्रिटेन मकान बने वे दो साक से अधिक न वे बिनन से ३६ हज़ार स्टाटमैण्ड में व । इस प्रकार मुद्र के परबात् एक तिश्चित घाबास नीति की घाबसकटा धनुसक की गई क्योंकि मुद्र के बाद पुनर्निर्माण बोजनार्थों में भूमिकों और सामान की कमी थी और इमारती लकड़ी (शहूटीर) की भी कमी थी क्योंकि इसको डामर देकर लरीदना पड़ता था ।

घपस १९४९ में राष्ट्रीय पुनर्निर्माण घाबोजना में घाबास को प्रथम स्थान दिया गया तथा राष्ट्र के निर्मित सामनों का सगभय ९ प्रतिशत घाबास ध्यबस्था के लिए लवाया गया । मुद्र के परबात् सरकार का यही बर्दस्य रहा कि राष्ट्रीय निर्माण साकनों से बितना भी हो सके उतन घाबास बनबाये जायें । सन् १९५१ से सरकार का बहु सख्य रहा है कि प्रति बर्ष कम से कम तीन लाख मकानों का बहु निर्माण करे । सरकार की नीति भरम्मत तथा देवभास पर कम और मरे मकानों के निर्माण पर अधिक और देने की है । ऐसे भूमिकों के मकानों की और बहु बिसेप ध्यान देती है जो खानों और रूपि में काय करते हैं और बिनका राउ की उत्पति के प्रयत्नों में बड़ा हाथ है । सरकार स्वानीय प्राधिकारियों द्वारा मकान निर्माण कार्य को प्रापमिक्ता देती है । इसका धर्य यह है कि स्वानीय प्राधिकारियों द्वारा निजी स्वकिपों क मकान बनाने के लिए ठेका दिए जाने को सरकार उन्धाहित करती है । निजी लोपों की धयेसा स्वानीय प्राधिकारियों को मकानों का निर्माण करन में अधिक उपबुक्त माना गया है क्योंकि स्वानीय प्राधिकारों किरायेदारों के लिए ऐसे मकान बनबा सकटा है जिन्हें ऐसे किरायेदार भी से लकें जो मकान लरीद नहीं सकत । इसके प्रतिरिक्त स्वानीय प्राधिकारों घाबसकतानुमार किरायेदार भी छूँ सकता है । मुद्र समाप्त होने के परबात् स्वानीय प्राधिकारियों ने मुसमत इस बाठ पर ध्यान दिया कि मकानों में अधिक भीड़ को कम किया जाए और उन परिवारों को मकान किराये पर दिये जाएँ जिनके पास घपना मकान नहीं है । निजा मकानों का निर्माण केबम स्वानीय प्राधिकारियों से साइसेन्स मेकर ही हो सकटा है । निजी मकानों का लीकल १२०० बग पीट में अधिक नहीं हो सकटा है । निजी घाबास के साइसेन्स साभारण्ड उन्हीं को मिलते हैं जो मकानों में स्वयं रहना चाहते हैं उन्हीं नहीं मिलते जो किराये पर देने क लिए मकान बनाते हैं क्योंकि यह बाठ ध्यान में रखी जाती है कि मकान उन्हीं को मिलें जिन्हें वास्तव म मकान की घाबसकता है ।

परन्तु नवम्बर १९५४ में बहु साइसेन्स देने की प्रयासी समाप्त कर दी गई, ताकि मकान बनाने में निजी सम्पत्ति लवाने वालों को प्रोत्साहन मिले।

सन् १९५४ से गन्धी बस्तियों की सफाई का प्राबन्धन भी प्रारम्भ हो गया है जो कि कुछ काम में स्थगित हो गया था तथा कुछ के पश्चात् भी नए प्रावासों पर ध्यान देने के कारण कुछ समय के लिए रुक गया था। स्थानीय प्राधिकारियों को गन्धी बस्तियों की सफाई के कार्यों की स्पर्शा व गति को निर्धारित करने के लिये कहा गया है तथा इस काम को जितना दीर्घ हो सके उतनी शीघ्रता से कार्यक्रम में परिणत करने की भी आशा है की गई है। इंग्लैण्ड व स्कॉटलैण्ड में १९५४ के प्रावास मरम्मत व किराये के अधिनियम (Housing Repairs and Rents Act) पारित हुए जिनमें स्थानीय प्राधिकारियों को आवश्यकता पड़ने पर खराब प्रावासों पर अधिकार करने व उनको बन्द कर देने के अधिकार प्रदान किये गए हैं। सन् १९५६ से १९५८ तक १३८ ६२४ प्रयोग्य मकानों को इंग्लैण्ड तथा वेल्स में और ३१ मकानों को स्कॉटलैण्ड में नष्ट कर दिया गया था नष्ट करने के लिये बन्द करवा दिया गया था। इंग्लैण्ड तथा वेल्स में सन् १९५५ में निवास के प्रयोग्य ८५० तथा स्कॉटलैण्ड में १५ प्रावासों का अनुमान लगाया गया था। ऐसे मकानों के लिये जो मनुष्यों के रहने योग्य नहीं थे मरु करन पर वतिपूर्ति भी नहीं मिलती थी केवल मुसीबत को कम करने के लिये कुछ सहायता मिल जाती थी।

सन् १९५२ तथा १९५६ के बीच ब्रिटेन में बने कुल नए मकानों की संख्या ३५ लाख थी। इसके प्रतिरिक्त सपथम १६ प्रस्तावी मकान भी बनाये गए थे। सब मिलाकर इस काम में नए मकान बना कर या प्रयोग्य मकानों की मरम्मत तथा सफाई करने के पश्चात् ३५ लाख से अधिक परिवारों को फिर से बसाया गया। जो नए मकान बने उनमें से लगभग आधे मकान स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा बनाये गये थे।

इंग्लैण्ड में प्रावासों का प्रशासन —

वेल्स तथा इंग्लैण्ड में प्रावास तथा स्थानीय प्रशासन मंत्रालय (Ministry of Housing and Local Government) ही मुख्य प्रावास-नीति व प्रावास सिद्धान्तों की रचना के लिये व प्रावास कार्य-क्रम के निरीक्षण के लिये उत्तरदायी है। सन् १९५६ से मंत्रालय के उत्तरदायित्व कुछ अन्य विभागों में भी वितरित कर दिये गये हैं। इस मंत्रालय को इमारती सामान प्राधि निर्माण-मंत्रालय (Ministry of Works) और सन्भरण मंत्रालय (Ministry of Supply) से मिलता है। निर्माण-मंत्रालय इमारती सामान का उत्पादन प्राधिकारी होता है और इसके कई कार्य होते हैं वह निर्माण कार्य के अनुसंधान करने प्राधान्य निमित्त उद्योग से सम्बन्ध स्थापित करने और लाईसेंस देने की पद्धति को चलाने के लिए भी उत्तरदायी होता है। इन

कार्यों के लिये यह स्वाभाव्य प्राधिकारियों को अपने प्रतिनिधि के रूप में प्रयोग करना है। नगर तथा ग्राम नियोजन मंत्रालय (Ministry of Town and Country Planning) भी ध्यान में है जो सरकार के नियोजन को स्वीकृति देने के लिये उत्तरदायी है। यह आवासों के स्थापना का चुनने में उनको रूपरेखा निर्धारित करने में तथा उन सब प्रयत्नों का जो भूमि के प्रयोग तथा समुदाय के नियोजित वितरण को प्रभावित करते हैं महामता करता है। मन् १९४७ का एक नगर तथा ग्राम नियोजन अधिनियम (Town and Country Planning Act) भी है जो १९३३ तथा १९३४ में संशोधित किया गया। यह सारे देश में भूमि के उचित उपयोग के हेतु एक शाखा या समूह प्रस्तुत करता है। यह एक मौखिक अधिनियम है। १९४६ के नवीन नगर अधिनियम (New Towns Act) के अन्तर्गत जो १९३२ १९३३ तथा १९३५ में संशोधित हुआ सरकार को यह अधिकार दिया गया है कि जब भी जनता के लिए आवश्यक हो वह नये नगरों का निर्माण व विकास कर सकती है। जून १९३७ तक १५ नये नगरों का विकास किया जा रहा था जिन पर दो करोड़ पन्नाह लाख पाँच ध्यय करना स्वीकृत किया गया था। १९६६ में मंगलन पार्क एंड एक्यूय टु निश्चिन्ता एक (National Park and Access to the Countryside Act of 1949) में पार्कों को बनाने की भी व्यवस्था है। जून मन् १९३६ तक १० राष्ट्रीय पार्क स्थापित हो चुके थे। कृषि-संभारण को यह निश्चित करना पड़ता है कि किस भूमि का कृषि के लिये रचना चाहिए और किये आवास हेतु देना चाहिये। स्थापना बोर्ड एन्टीर का वितरण प्राधिकारी है तथा ग्राम व राष्ट्रीय सेवा संभारण सबक निर्माण उद्योग व इसके गौण व्यवसायों के लिये धन की व्यवस्था करता है। युद्ध हानिपूर्क आयोग (War Damage Commission) युद्ध में हुई हानि के लिये रचना देने की व्यवस्था की व्यवस्था करता है। विभिन्न राजकीय विभागों तथा आवास निर्माण में सम्बन्धित स्थानीय प्राधिकारियों में अत्यन्त निष्कट का सम्पर्क रहता है। इस उद्देश्य के लिये आवास संभारण समक क्षेत्रीय कार्यालय और अग्रिम आवास-अभिधारी रहता है। आवास नीति का निष्कर्षण तथा आवास मंत्रालय करता है परन्तु उनको विभिन्न क्षेत्रों में कार्यक्रम में परिणत करने का उत्तरदायित्व तथा साहस्य पद्धति को बनाने का उत्तरदायित्व स्थानीय प्राधिकारियों पर होता है। यह स्थानीय प्राधिकारी निम्नलिखित हैं — राजस्मित घोष वाइश्टीर (Council of Councils) वाउन्टी बोरोइ (County Boroughs) मेट्रोपोलिटन बोरोइ (Metropolitan Boroughs) धरबन डिस्ट्रिक्ट्स (Urban Districts) या करल डिस्ट्रिक्ट्स (Rural Districts)। इन स्थानीय प्राधिकारियों के आवास सम्बन्धी कार्य में है कि वे इस बात का ध्यान रखें कि उनके क्षेत्रों में आवास के लिये कोई कठिनाई न हो और जो भी रहने के आवास हों वे मजबूत रचना तथा आदि की युद्ध मूलक धर्मों को पूरा करने हों।

घावासों के स्तर —

स्वामीय प्राधिकारी द्वितीय महामुद्र से पहले क घावासों की घोषणा प्रब बने और प्रच्छे घावासों का निर्माण कर रहे हैं। कई केन्द्रीय विभागों ने स्वामीय प्राधिकारियों के मार्ग-दर्शन के लिये अनेक पुस्तकें प्रकाशित की हैं जिनमें विभिन्न प्रकार के घावासों के लिये स्थानों का स्तर डाँचा डिजाइन तथा सामान प्रादि की निश्चित किया गया है। साथ ही उनमें इस बात का भी विवरण है कि भूमि तथा बन की बचत करते हुये घावासों को नई संशोधित क्यरेका में रखकर किम प्रकार धारण कर दिया जा सकता है। डिजाइन निर्माण व घावास छात्रों और सामानों पर काफी अनुभवगत हो चुका है तथा हो रहा है। मकानों के विभिन्न वर्गों और भागों में समानता प्रा गई है और पुराने सामान की कमी को पूरा करने के लिये तथा कुछ कर्मचारियों के भार को हल्का करने के लिये नये सामान और नई पढतियों का निर्माण हुआ है।

इ स्लैंड में घावासों के हेतु वित्त व्यवस्था

जहाँ तक राक्षकीय महायता का प्रश्न है सरकार १९४६ के घावास (वितीय तथा विभिन्न उपबन्ध) अधिनियम [Housing (Financial and Miscellaneous Provisions) Act] के अन्तर्गत कुछ उपदान देती है। इन उपदानों के कारण स्वामीय प्राधिकारी भवन निर्माण की अंधी लागत होने पर भी उचित किरावों पर घावास प्रदान कर सकने मोक्ष हो जाते हैं। इस अधिनियम के अन्तर्गत ६० वर्षों के लिये २२ पौंड प्रति मकान प्रति वर्ष के हिसाब से एक प्रामाणिक उपदान प्रदान किया जाता है। सन् १९३६ के घावास उपदान अधिनियम (Housing Subsidies Act) में इस बात की व्यवस्था है कि धरर अधिक मीड़ को कम करने के लिये मकान बनाये जायें तो ऐसे मकानों के लिये उपदान की दर अधिक होगी (२४ पौंड प्रति घावास प्रति वर्ष)। विशेष प्रकार के घावासों के लिये विशेष उपदानों की व्यवस्था है उदाहरणतः कृषि जनसंख्या के लिये निर्जन क्षेत्रों के घावासों के लिये तथा तीन मंजिलों से अधिक के घावासों के लिये जिनमें लिफ्ट होती है। इसके अति रिक्त स्वामीय प्राधिकारियों को ऐसे मकानों के लिये जो कि स्वीडन गरीब लड़कों से बनाये जाय इस हेतु पूर्ण अनुदान की जाती है कि उनमें जो अधिक व्यय हुआ है वह पूरा हो सक। सरकार भवन-निर्माण के साधनों पर भी निगरान रखती है जिससे अनका समुचित प्रयोग किया जा सके। इसात इमारती लकड़ी तथा अन्य दुर्लभ सामग्रियों के उपयोग के लिए धावा-प्रब प्रदान किये जाते हैं। अगिकों की प्रावस्था के कारण ऐसे अगिकों को जो घृह-निर्माण का कार्य करते वे लीज में से बन्दी मुद्री दिना भी बर्ष की। भवन-निर्माण कार्यों के अनुभवी अगिकों का एक रजिस्टर तैयार किया गया है तथा उनके लिए एक विशेष प्रशिक्षण योजना की भी व्यवस्था की गई है। सन् १९४६ में एक घावाग अधिनियम (Housing Act) और

पारित हुआ जिसके अन्तर्गत स्थानीय प्राधिकारियों अथवा निजी मकान प्राधिकरों को उनके आवासों को ठीक करने व वर्तमान निवासों के सुधार के लिये सरकार द्वारा वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। इस अधिनियम में स्थानीय प्राधिकारियों व अन्य निकायों द्वारा बनाये गये होस्टलों के लिये भी उपदानों की व्यवस्था है। इनके अतिरिक्त स्थानीय प्राधिकारियों निर्माण समितियों कुछ विशेष बीमा सम्पत्तियों व अन्य वित्त-सम्बन्धी कारणों को इस बात के लिये कण्डा दिया जाता है कि वे अपने मिय कई बरों की किराया में मकान खरीद सकें। उपरोक्त तथा सुधार के लिये अनुदान सम्बन्धी को भी कानून है उनको १९२५ के एक अधिनियम द्वारा [Housing (Financial Provisions) Act] जिसका १९३९ में एक अन्य अधिनियम (House Purchase and Housing Act) द्वारा संशोधन भी हुआ है समाविष्ट कर दिया गया है।

सस्ते मकानों के लिए उठाए गए पाप —

सरकार ने एक संकल्प को ध्यान-रखते आये मकानों को बनाने का कार्यक्रम भी अपनाया हुआ है। मकानों के किराये कारखानों में बनाये जाते हैं तथा आवास बनाने के स्थान पर संयोजित कर दिये जाते हैं। ऐसे मकान स्थायी आवासों में छोटे होते हैं तथा वचन १० बरों के लिये बनाये जाते हैं परन्तु कुछ आवास लम्बे समय के लिए भी उपयोगी होते हैं। ऐसे मकानों का किराया न बहुत अधिक है और न काफी कम तथा उनमें प्राकृतिक सुविधाएँ भी प्रदान की गई हैं। इस योजना को मकानों की सहज उपलब्ध होने वाली आवश्यकता की पूर्ति के लिये अपनाया गया था। कार्य-शुभारम्भ तथा पुरातन भारतीय सामान के अभाव के कारण लम्बे स्थायी मकानों के निर्माण के लिये लक्ष्य के विरुद्ध किये गये हैं जिसमें पूँजी तथा मजदूरों की वचन होती है। इनमें कुछ इस्पात के ढाँच के कुछ पहलू बने हुए 'फ्लैट' के तथा कुछ लकड़ी के ढाँच के हैं। इनके अतिरिक्त एम्प्लोयिन्स के अंगमें भी बनाये गये हैं जो कि पूर्वोक्त पहलू से ही बने हुए होते हैं तथा आकर-व्यय के स्थान पर कुछ ही वर्षों में ओढ़ लिये जा सकते हैं। एम्प्लोयिन्स के अंगमें बनाने का कार्यक्रम प्रारम्भ में तो केवल अस्थायी मकानों के लिए था परन्तु अब आनों और दूसरे औद्योगिक क्षेत्रों में मकानों की विशेष और अधिक आवश्यकता के कारण इनके निर्माण के कार्यक्रम को स्थायी मकानों के लिए भी लागू कर दिया गया है।

किरायों पर नियन्त्रण —

किरायों में अत्यधिक वृद्धि को रोकने के लिये कानून बनाये गये हैं। सर्वप्रथम किराया नियन्त्रण अधिनियम (Rent Restrictions Act) १९१५ में पारित हुआ। इसके पश्चात् १९२० में १९३९ तक अनेक किराया तथा बँधक व्याज (नियन्त्रण) अधिनियम [Rent and Mortgage Interest (Restrictions) Act] बनाये गये जो सामान्य रहित मकानों में रहने वाले किरायेदारों को सुरक्षा प्रदान करते हैं।

इनके अन्तर्गत किरायों की सीमा निर्धारित कर दी गई है तथा जब तक किराया दिया जायेगा तब तक मकानों से किरायेदारों को निकाला नहीं जा सकता। इसी प्रकार का संरक्षण उन स्थानियों को भी दिया जाता है जो बेघर पर मकान खरीदते हैं। इसके अतिरिक्त इंग्लैंड तथा वेल्स में सामान्य संहित प्रांशों का किराया सन् १९४६ के सामान्य संहित प्रांश (किराया नियन्त्रण) अधिनियम [Furnished Houses (Rent Control) Act] द्वारा नियन्त्रित किया गया है। स्थानीय प्राधिकारियों अथवा किसी पञ्च की माप पर सामान्य संहित मकानों के किरायों को निश्चित करने के लिये स्थानीय प्राधिकरणों (Local Tribunals) की नियुक्ति की गई है। दिसम्बर १९४४ के इमारती गणना तथा प्रांश अधिनियम ने एक और सुरक्षा भी प्रदान की थी जिसका तात्पर्य यह था कि चार वर्ष तक के लिये ऐसे मकानों का किराया और विक्रय मूल्य निर्धारित कर दिया जाय जो युद्ध काल में लाइसेन्स पद्धति के अन्तर्गत बने थे। १९४९ का एक और अधिनियम भी है जिसका नाम मासिक मकान व किरायेदार (किराया नियन्त्रण) अधिनियम है। इसके अन्तर्गत किसी भी ऐसे मकान को जिसका किराया निर्धारित है किराये पर उठाने के लिये पक्की सेना गैर-कानूनी है। १९४४ के मकान सम्पत्त तथा किराया अधिनियम के अन्तर्गत मासिक-मकान कूट छत्तों के अनुसार सम्पत्त के लिये एक अधिकतम सीमा तक किराया बढ़ा सकते हैं। किराये में सन् १९२७ के किराया अधिनियम के अन्तर्गत फिर संशोधन हुआ है। माप ही सरकार ने धीरे-धीरे किराया नियन्त्रण की पद्धति को समाप्त करने की नीति अपनाते की घोषणा की है क्योंकि यह पद्धति मकानों के सर्वश्रेष्ठ उपयोग के लिये संतोषजनक सिद्ध नहीं हुई है।

स्काटलैण्ड तथा आयरलैण्ड में प्रांश योजनाएँ

स्काटलैण्ड में प्रांश योजना राज्य-सचिव (Secretary of State) का कार्य है जो प्रांश नगर तथा ग्राम्य नियोजन का अपना उत्तरदायित्व स्काटलैण्ड के स्वास्थ्य विभाग द्वारा निभाता है। 'स्काटलैण्ड की विशेष प्रांश परिपक्व' नाम की एक कानूनी संस्था भी स्थापित की गई है जो स्थानीय प्राधिकारियों की सहायता करने के हेतु बनाई गई है विशेषतः उन क्षेत्रों में जहाँ साधारण प्रांशों के निर्माण की सबसे अधिक आवश्यकता है। यह परिपक्व एक सीमित देयता वाली कम्पनी है जिसकी कोई शेयर पुरबी नहीं है और इसमें पूर्णतया सरकारी निधि से धन दिया जाता है। यह राज्य सचिव के निर्देशों के अनुसार कार्य करती है। इस परिपक्व ने सन् १९४२ से सन् १९५२ तक दो लाख बीस हजार मकानों का निर्माण किया। इंग्लैंड की ही तरह १९४६ और १९२७ के दो अधिनियमों [Housing (Financial Provisions) Act of Scotland of June 1946 and the Housing and Town Development (Scotland) Act of 1957] के अन्तर्गत उपग्राम भी प्रदान किये जाते हैं। १९४२ व १९५४ के अधिनियमों के अन्तर्गत किरायों पर भी नियन्त्रण है। प्रांशों के स्तर इंग्लैंड और वेल्स की ही तरह है। उल्टी प्रांशों

में आवास तथा नियोजन के लिए स्वास्थ्य मंत्रालय तथा स्थानीय सामन्य उत्तरदायी हैं। सन् १९४२ के आवास अधिनियम के अन्तर्गत 'उत्तरी आयरलैंड आवास ट्रस्ट' समितियों के आवास बनाने वाली एक प्रतिष्ठित एजेंसी के रूप में स्थापित हुआ है। यह आयरलैंड की विरोध आवास परिषद् की भांति एक संस्था है जिसको सरकार द्वारा बिल दिया जाता है। इसको सरकार द्वारा स्वीडन निर्माण योजनाओं के लिए भूमि देने व बचन के अधिकार हैं और यह सरकार द्वारा स्वीडन योजनाओं के अन्तर्गत मकान बनाती है। इस ट्रस्ट (न्याय) व १९६२ व १९६३ तक चौबहू हज़ार मकानों का निर्माण किया है। इनके प्रतिष्ठित इस्वीम हज़ार स्थाना मकान स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा बनाये गये हैं। आयरलैंड में उपान भी प्रदान किए जाते हैं जिसको १९३६ के 'आवास उपदान आदेश' (Housing Subsidy Order) के अन्तर्गत संशोधित किया गया है।

उपसंहार

इसमें से मकानों की उपयोगिता व्याख्या में यह पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है कि भोजन और बच्चों को छोड़कर उन देशों में मकानों के निर्माण को जीवन की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता माना जाता है और इन बातों के लिए सम्पत्ति प्रदान हुई है तथा हो रहे हैं कि रहने के लिए अच्छे व अच्छे प्रकार के मकान बनाये जाय और वर्तमान मकानों की स्थिति में सुधार किया जाय। भारतवासियों को इसमें से इस सम्बन्ध में बहुत कुछ सीखना है। जैसा कि उस देश में पाया जाता है हमें भी इस बात को समझना है कि नगर नियोजन रहने के स्थलों का निर्धारण एक स्पष्ट आवास-नीति तथा एक संयोजित कृषत आवास प्रबंध-व्यवस्था का बहुत महत्व है।

आवास व्यवस्था तथा अन्तर्राष्ट्रीय धन संगठन —

अन्तर्राष्ट्रीय धन संगठन ने आवासों की कमी आवास-नीति आवास स्तर तथा गम्भीर स्थितियों की समस्या के प्रश्नों पर काफी महत्वपूर्ण अध्ययन प्रकाशित किये हैं। सन् १९०१ व १९०४ में इस संगठन ने समितियों की आवास स्थिति को सुधारने के लिये सिफारिशें (Recommendations) की। सन् १९२० तथा १९३९ में आवास समस्या पर पुनः विचार विमर्श हुआ। आवास प्रश्नों पर जो अध्ययन प्रकाशित हो चुके हैं वह निम्नलिखित देशों के हैं — स्वीडन और ब्रिटेन (१९४४) अमेरिका (१९४२) स्पेन (१९४७) आदि। सन् १९४२ में अन्तर्राष्ट्रीय धन संगठन ने 'आवास-नीति' के नाम से एक संक्षिप्त अध्ययन पुस्तिका भी प्रकाशित की तथा १९४६ में इसने एक 'आवास तथा रोजगार' नाम की रिपोर्ट प्रकाशित की। आवासों के विभिन्न वर्गों पर विचार हेतु एक 'अन्तर्राष्ट्रीय निर्माण विवेक इकोनॉमिस्टिक तथा मार्गदर्शक कार्य समिति' की भी स्थापना की गई है। अन्तर्राष्ट्रीय धन-संगठन की कोषना-स्तानों की समिति ने भी आवास की समस्या पर अपने विचार प्रकट किये हैं। कुछ प्रकाशक एजेंसियाँ वैश्वीय सम्मेलन (जो नवम्बर १९४७ में जिन्नी में हुआ

बा) तथा तीसरा एशियाई क्षेत्रीय सम्मेलन (जो टोकियो में १९५३ में हुआ) में भी आवास सम्बन्धी प्रस्ताव पारित किये गये थे ।

इसके प्रतिरिक्त समुक्त राष्ट्र महासभा और अन्तर्राष्ट्रीय संघ की विविध एजेन्डियों जैसे युनेस्को (UNESCO) में भी आवास समस्याओं तथा नगर नियोजन विषयों में अपनी इच्छा दिखाई है और इसके सम्बन्ध में प्रस्ताव पारित किये हैं । इस प्रकार यह स्पष्ट है कि आवास समस्याएं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी विचारणीय रही हैं तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं आवास नगर तथा ग्राम नियोजन की विषय समस्याओं को सुलझाने के लिये कार्यशील हैं और रही हैं ।

श्रम कल्याण कार्य

(Labour Welfare Activities)

श्रम कल्याण की परिभाषा और क्षेत्र —

श्रम कल्याण के कई अर्थ निकल सकते हैं और विभिन्न देशों में इसकी महत्ता भी समान नहीं है। रायम श्रम आयोग के महानुसार औद्योगिक श्रमिकों से संबंधित 'कल्याण' शब्द ऐसा है जो आवश्यक रूप से सचीता रहेगा। इसका अर्थ भी एक देश से दूसरे देश में विभिन्न सामाजिक प्रथाओं औद्योगीकरण के स्तर एवं श्रमिकों के वृत्तिक विकास के अनुसार भिन्न होता है।¹ अतएव 'कल्याण कार्य' की परिभाषा करना अत्यन्त कठिन है क्योंकि यह आवश्यक रूप में सचीता शब्द है। श्री आर्बर जेम्स टॉड ने यह टीका ही कहा है कि 'औद्योगिक कल्याण कार्य' के अर्थ तथा विवेक शर्तों पर तीव्र मतभेद है।² विभिन्न व्यक्तियों ने विभिन्न प्रकार में इसकी परिभाषा की है। एक परिभाषा के अनुसार यह कल्याण कार्य वह ऐच्छिक प्रयत्न है जो कि श्रमिकों के द्वारा अपनी वैक्तिकता में काम करने वाले कर्मचारियों की समस्याओं को सुधारने के लिये किया जाता है। एक अन्य परिभाषा के अनुसार 'कल्याण कार्य' वह कार्य है जिसके अन्तर्गत कर्मचारियों के लिये उनके वेतन के अतिरिक्त उन समान कार्यों को सम्मिलित कर लिया जाता है जो उनके आराम तथा मानसिक व सामाजिक उत्थति के लिये किये जाते हैं और जो न तो कानून के द्वारा अनिवार्य हैं और न ही उद्योग के लिये आवश्यक हैं। श्रमिकों के कल्याण कार्यों की विकास सम्बन्धी सुविधाओं को उपलब्ध करने के हेतु एक रिपोर्ट³ में कहा गया है कि श्रम कल्याण का अर्थ ऐसी सुविधाओं व सेवाओं से लिया जा सकता है जो किसी मस्थान में या उसके समीप इस हेतु उपलब्ध की जायें कि उन मस्थान व कर्मचारी अपना कार्य उचित तथा स्वस्थ वातावरण में कर सकें और उनकी शारीरिक, स्वस्थ व उच्च धारणा को बनाये रखने में सम्बन्धित सुविधायें प्राप्त हो सकें। जून १९३६ में अन्तर्-राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन के १६ वें अधिवेशन में एक प्रस्ताव में इन सुविधाओं व सेवाओं का कुछ वर्णन किया गया था। इसमें निम्नलिखित सुविधायें धारती हैं (i) संस्था के समीप खाने-पीने की सुविधायें (ii) आराम एवं मनोरंजन की सुविधायें तथा

1 Report of the Royal Commission on Labour page 26

2. Quoted by the Labour Investigation Committee Report, page 345

3. Report II of the I. L. O., Asian Regional Conference page 3

(iii) काय क कारण के स्थान में घाने ज्ञान के लिये यातायात की सुविधायें जबकि साधारण मार्गजनित यातायात उपर्याप्त हो या उनके उपलब्ध करने में सुविधा न हो। भारत सरकार की श्रम अनुसंधान समिति ने कल्याण कार्य के क्षेत्र की सबसे उत्तम ढंग में व्याख्या की है। उसके अनुसार श्रम कल्याण कार्य के प्रसंगत मामलों सरकार अपना धन्य संस्कारों के द्वारा किये गए मामलों के औद्योगिक शारीरिक नैतिक व प्राथमिक विकास के कार्यों का समावेश होता चाहिये। यह कार्य ऐसी सुविधायों के प्रतिरिक्त होने चाहिये जो श्रमिक सांख्यिक (Contractual) रूप से अपने लिए मामलों में प्राप्त कर लेते हैं या जो बिजान के प्रसंगत उनको मिलती है। इस प्रकार इस परिभाषा के प्रसंगत वे सब कार्य जैसे आवास व्यवस्था चिकित्सा एवं निराश सम्बन्धी सुविधायें उत्तम भोजन (कंटीन की सुविधायों सहित) विभाम करने एवं मनोरंजन की सुविधायें सहकारी समितियाँ पर्सरी एवं सिगुड्ड, स्वास्थ्य प्रब स्थान सञ्चालन प्रकाश सामाजिक बीमा बीमारी एवं मातुल्य वित्त लाभ योजनायें प्रोवीडेंट फंड एवं वेलथ छादि कार्य चाहे वह मामलों द्वारा ऐच्छिक रूप से प्रकृते अपना श्रमिकों के सहयोग से किये जाते हैं याते हैं।* परन्तु इस प्रकार से 'कल्याण' शब्द बहुत व्यापक हो जाता है। ऊपर बणित प्रनेक समस्यायें सामाजिक बीमा योजना के प्रसंगत आ जाती हैं और आवास सम्बन्धी अंसी समस्यायें स्वयं एक प्रथम समस्या हैं। इस प्रथम में हम उन कल्याणकारी कार्यों का विस्तार से अध्ययन करेंगे जिनका धन्य नहीं उल्लेख नहीं है।

श्रम कल्याण कार्यों का वर्गीकरण --

कल्याण सम्बन्धी कार्यों का क्षेत्र काफी व्यापक है। इन कार्यों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है—(१) वैधानिक (Statutory) (२) ऐच्छिक (Voluntary) (३) पारस्परिक (Mutual)। वैधानिक कल्याण कार्यों के प्रसंगत वे कार्य जाते हैं जिनको सरकार के प्रवर्षीय अधिकारों (Coercive Power) के कारण करना अनिवार्य होता है। श्रमिकों की सुरक्षा एवं उनके स्वास्थ्य का न्यूनतम स्तर स्थिर रखने के लिये सरकार कुछ कानून बनाती है जिनका श्रमिकों को पालन करना पड़ता है। यह कार्य को यथाशो कार्य के पछे प्रकाश स्वास्थ्य एवं सफाई प्रादि से सम्बन्धित हो सकते हैं। श्रमिकों के कल्याण के लिये इस प्रकार का धन्य द्वारा हस्तगत धन प्रतिबिन्ध सब देशों में वृद्धि पर है। ऐच्छिक कल्याण काय क प्रसंगत वे कार्य जाते हैं जो कि मामिल अपने श्रमिकों के लिये सम्पादित करते हैं। प्रथम रूप से तो यह काय परीपकारी इण्डिकोण से होता है परन्तु यदि हम इसकी महत्ताई में जायें तो पता चलेगा कि इस प्रकार के कार्यों पर धन धन्य करना उद्योग में निवेश (Investment) माना जाना चाहिए क्योंकि कल्याण काय न केवल श्रमिकों की कार्य प्रमत्ता में वृद्धि करते हैं अपितु संघर्ष

उत्पन्न होने की सम्भावना को भी बहुत कम कर देता है। एम्ब्रुअल कल्याण कामें आई. एम. सी. ए. (Y. M. C. A.) जैसी कुछ सामाजिक संस्थाओं द्वारा भी किए जाते हैं। पारस्परिक कल्याण कामें धर्मियों द्वारा किए गये बहु कार्य हैं जो कि बहु परस्पर सहयोग से अपने कल्याण के लिए करते हैं। इस उद्देश्य में धर्मिक संघ धर्मियों के कल्याण के लिए अनेक कार्य करते हैं।

कल्याण कार्यों का एक अन्य बंध है जो दो शीपको में वर्गीकरण किया जा सकता है। पहल को हम अन्तर्मुखी (Intra-mural) कल्याणकारी कार्य कह सकते हैं। इनके अन्तर्गत बहु सुविधाएँ व सेवाएँ सम्मिलित की जा सकती हैं जो शहरवालों के भीतर धर्मियों को प्राप्त होती हैं। उदाहरणतः औद्योगिक बकाबट को दूर करने की व्यवस्था जैसे शान्त विराम (Rest pause) संगीत धार्मिक सामान्य हित एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी व्यवस्था जैसे स्वच्छ दद्याएँ सफ़ाई पीने के पानी की व्यवस्था धिकिरसा की सुविधाएँ कैंटीन व विभाग स्थान धार्मिक धर्मियों की सुरक्षा से सम्बन्धित सुविधाएँ जैसे धर्मियों से रक्षा करने के लिए उनको पर्याप्त रूप में ढकना तथा उनके चारों ओर राक सगाया मसीनों का उचित बंध व सगाना पर्याप्त प्रकार प्राथमिक धिकिरसा सुविधाएँ प्रायः बुजाने के मन्त्र धार्मिक तथा ऐसे कार्य जिनसे धर्मियों को सुखाने और रोडकार की दयाओं व सुखाने का तादिक धर्मिक उन्नी कार्य व तब तक जिसके लिए बहु सबस धर्मिक उपयुक्त हो। दूसरे वर्गीकरण में अन्तर्मुखी (Extra-mural) कल्याण कार्य आते हैं। इनमें वे सभी कल्याणकारी कार्य सम्मिलित किए जा सकते हैं जो कि धर्मियों को शहरवालों के बाहर उनका हित के लिए व सामान्य सुविधाएँ प्रदान करने के लिए किए जाते हैं जैसे धर्मियों की व्यवस्था धिकिरसा की सुविधा नगरेजन व गम दूर की सुविधाएँ शिक्षा ध्यास्थान बाह्य विवाद और तसब का प्रबन्ध धार्मिक। इनके अतिरिक्त बीमारी बेरोडगायी दृष्टावस्था धार्मिक में बिलीय साम तथा मिनध्यायना की धारण को प्रोत्साहन देने के लिए भी पग उद्योग जा सकते हैं।

इस प्रकार धर्म कल्याण के क्षेत्र में बहु सब कार्य जा सकते हैं जो कि धर्मियों के स्वास्थ्य सुरक्षा सामान्य भलाई और औद्योगिक धमता को बढ़ाने के उद्देश्य से किये जाते हैं। इस प्रकार कल्याणकारी कार्यों की सूची अत्यन्त भी व्यापक क्यों न हो फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि यह पूर्ण है।

कल्याणकारी कार्यों का उद्देश्य —

कल्याणकारी कार्यों का उद्देश्य धार्मिक रूप में मानवीय धार्मिक रूप में धार्मिक एवं धार्मिक रूप से नागरिक है। मानवत्व इस दृष्टिकोण से है कि यह धर्मियों को उन धर्मिक सुविधाओं को प्रदान करना व धर्मियों को स्वयं धर्मरत्ना नहीं कर सकते। धार्मिक इस दृष्टिकोण से है कि यह धर्मियों की कार्य धमता में वृद्धि करता है और धर्मिक की सम्भावनाओं का दम कर देता है और धर्मियों को मनुष्यत्व देता है। नागरिक इस दृष्टिकोण से है कि यह धर्मियों में सम्मान और

उत्तरदायित्व की भावना जागृत कर देता है और उनका अन्धे नागरिक बर्तन में सहयोग देता है।

भारत में धर्म-कल्याण कार्यों की आवश्यकता —

भारत में कल्याणकारी कार्यों की आवश्यकता का अनुमान धार्मिक वर्ग की दशाओं को देखन से ही लगाया जा सकता है। उनको अस्वच्छ वातावरण में धार्मिक चर्चों तक काम करना पड़ता है और फिर बकाबत का दूर करने का कोई साधन भी नहीं है। ग्रामीण समाज से दूर बड़े नगरों के अपरिचित एवं दूषित वातावरण में पटक दिए जाते हैं जहाँ पर बड़े मद्यपान बुद्धि और दूसरी बुराइयों के धिंकार हो जाते हैं और इस प्रकार उनका नैतिक पतन हो जाता है। भारतीय धार्मिक धार्मिक रोजगार को एक आवश्यक बुवाई समझता है और उससे बिलगी हीन सम्भव हो सके छुटकारा पाने को उत्सुक रहता है। अतः देश में उस समय तक स्थायी समुष्टि एवं कुशल अमनीय वर्ग उत्पन्न नहीं हो सकता जब तक उनके जीवन की दशाओं तथा धार्मिक केन्द्रों में कार्य की दशाओं में सुधार नहीं किया जाता। इस प्रकार पश्चिमी देशों की अपेक्षा भारत में कल्याणकारी कार्यों की महत्ता धार्मिक है। पिछला वेम दूर मनोरंजन धार्मिक कार्यों का निस्सम्बन्ध धार्मिकों की मानसिक स्थिति पर बहुत सामर्थ्य प्रभाव पड़ता है जो कि धार्मिक स्थिति स्थापित करने में बहुत सहायक सिद्ध होता है। जब धार्मिक यह अनुभव करता है कि मानसिक व सरकार उसके दिन प्रतिदिन के जीवन को हर प्रकार से सुखी बनाना चाहते हैं तो उसकी अंतर्गत और विरोध की प्रवृत्ति धीरे धीरे सुप्त हो जाती है। इसके अतिरिक्त मित्रों में किया जान वाला कल्याण कार्य मित की लौकरी को आकर्षक बना देता है और एक स्थायी धार्मिक वर्ग उत्पन्न हो जाता है। अन्धे मकान कैंटीन बीमारी साम और अन्य हितकारी कार्यों से धार्मिकों में निस्सम्बन्ध यह भावना उत्पन्न हो जाती है कि धार्मिकों के समान उद्योग में उनका भी हाथ है और इस प्रकार धार्मिकों और अनुपस्थिति काफ़ी कम हो जाती है और धार्मिकों की कार्यकुशलता बढ़ जाती है। कल्याणकारी कार्यों के सामाजिक साम भी धर्म महत्वपूर्ण हैं। कैंटीन की व्यवस्था से धार्मिकों को सस्ते दामों पर स्वच्छ एवं उत्तम भोजनार्थ वस्तुएँ प्राप्त हो सकती हैं जिससे उनके स्वास्थ्य में सुधार होगा। मनोरंजन के साधन धार्मिकों की कुप्रवृत्तियों को रोकते हैं। चिकित्सा प्रवृत्तिका एवं धिंधु कल्याण की सुविधाएँ धार्मिकों एवं उनके परिवारों के स्वास्थ्य में उत्पत्ति कर सामान्य मनु एवं धिंधु मनु हर में कमी करती हैं। पिछला की सुविधाएँ उनकी मानसिक कुशलता एवं धार्मिक उत्पादन शक्ति में वृद्धि करती हैं।

इस प्रकार कल्याणकारी कार्यों की आवश्यकता के प्रश्न पर अब कोई शक विचार नहीं है और संसार के समस्त देशों में इसकी धार्मिक प्रवृत्ति का एक धार्मिक (Integral) भाग के भाते मायता प्रदान की जा चुकी है और वह एक क प्रभाव बन चुकी है। अब कल्याणकारी कार्य केवल परोपकारी तथा सहृदय

मासिकों का एक शोक ही नहीं समझा जाता है। जब उद्योग एवं व्यापार संयोजन तथा प्रबन्ध का कल्याणकार्य एक महत्वपूर्ण ध्येय बन गये हैं। इसका कारण यह है कि जब उद्योग में प्रत्येक समस्या को मानवीय दृष्टि से देखा जाता है। यह श्रमिकों की उत्पादन शक्तियों में वृद्धि कर देता है तथा उनमें आत्मविश्वास और श्रमता की गई भावना प्रबलित करता है। श्रम कल्याण कार्य श्रमिक और मासिक दोनों के ही हृदयों में वास्तविक परिवर्तन ला देता है और उनके दृष्टिकोणों में भी परिवर्तन ला जाता है और दोनों अपने को एक ही माड़ी के दो पहिए समझने लगते हैं। भारतवर्ष में उत्पादन बढ़ाने और पञ्चवर्षीय आयोजनाओं के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए कल्याणकारी कार्यों की आवश्यकता बहुत अधिक है क्योंकि जब तक श्रमिक सब प्रकार से संतुष्ट एवं प्रसन्न न होंगे तब तक उत्पादन नहीं बढ़ सकता।

श्रम कल्याण कार्यों का उद्गम —

भारतवर्ष में श्रम कल्याण कार्यों का उद्गम (Origin) १९१४-१८ के महायुद्ध के समय में निम्नता है। उस समय तक स्वयं श्रमिकों की अज्ञानता एवं अगिणा मासिकों के लक्षणीय दृष्टिकोण सरकार की सापेक्षता तथा जनता की उदासीनता के कारण श्रम कल्याण कार्यों की ओर कोई भी ध्यान नहीं दिया गया था। परन्तु प्रथम महायुद्ध के पश्चात् से यह काम धीरे धीरे और अधिकतर ऐच्छिक आधार पर विकसित हो रहा है। श्राविक मन्दी के समय में भी इस ओर रुचि अधिक हो गई थी। सरकार और उद्योगपतियों दोनों ने ही सक्रिय रूप से कल्याण कार्यों में इसलिये रुचि ली कि उस समय देश में औद्योगिक अघाति और श्रमिकों में असन्तुष्टि बहुत फैल गई थी। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संयोजन के कार्यों से भी श्रम कल्याण व्यवस्था की ओर काफी धोर पड़ा। श्रम कल्याण कार्य की महत्ता द्वितीय विश्वयुद्ध में और भी अधिक बढ़ गई। श्रमिकों के स्वास्थ्य और कल्याण के लिए उचित पथ उठाने से जो काम होते हैं उनको स्वीकार कर लिया गया। मासिकों ने श्रमिकों के लिये अधिक सुविधायें प्रदान करने के लिये सरकार के साथ सहयोग दिया। युद्ध के दिनों में कल्याण कार्यों में जो रुचि दिखाई गई थी, वह रुचि सड़ाई के बाद भी बसती रही। भारतवर्ष में यद्यपि कल्याण कार्यों का स्तर अन्य देशों की अपेक्षा बहुत नीचा है फिर भी यह कार्य महत्वपूर्ण हो गये हैं और जाने जाने वाले रूपों में इनमें उन्नति होना अचरमम्भावी है क्योंकि भारत अब एक प्रगत राष्ट्र है तथा इसका उद्देश्य देश में समाजवादी दृष्टि के समाज का तथा कल्याणकारी राज्य को स्थापित करना है।

भारतीय सरकार द्वारा सम्पादित श्रम कल्याण कार्य —

द्वितीय महायुद्ध से पूर्व तक भारत सरकार ने श्रम कल्याण की ओर बहुत ही कम ध्यान दिया था। सन् १९२२ में बम्बई में एक प्रतिष्ठित भारतीय श्रम-कल्याण सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें कुछ महत्वपूर्ण एवं श्रेष्ठ अमन्याओं पर

विचार विनिमय किया गया था तथा समस्त कस्याण कार्यों को समन्वय करने का सुझाव दिया गया था। अन्तर्राष्ट्रीय धम सम्मेलन के एक अधिसूचना (Convention) के परिणामस्वरूप सन् १९२६ में कस्याण कार्यों की जाँच की गई तथा प्रांतीय सरकारों को उन कार्यों में सम्बन्धित सूचनाएँ एकत्रित करने का आदेश दिया गया। इस प्रकार केन्द्रीय सरकार ने बहुत समय तक धम कस्याण कार्य के हेतु धम सम्मेलन बुलाने और सुझाव देने के प्रतिरिक्त और कुछ भी नहीं किया।

परन्तु द्वितीय महायुद्ध में उत्पन्न परिस्थितियों और धातुकर्मकारों के कारण धम कस्याण से सम्बन्धित इस रुढ़िवादी नीति में परिवर्तन हुआ। युद्ध के समय में सरकार ने धमिकों को उत्पाहित करने और उनकी उत्पादन शक्ति में कृत्रिम रूप से बाधा डालने के लिए, युद्ध उत्पादन में समान उद्योगों तथा अपनी बाहर प्रायिकी संस्थितियों में धम कस्याण योजनाएँ आसू की। यह गतिविधियाँ न केवल युद्ध के समय तक चालू रहीं अपितु बाद में भी उनका और अधिक विस्तार हुआ तथा कुछ निजी व्यवसायों में भी वे विस्तृत हो गईं। सन् १९६२ में श्री चार एच जिम्बर का कन्द्रीय सरकार ने धमकस्याण समाह्वार नियुक्त किया तथा उनके अधीन अनेक सहायक धम कस्याण समाह्वार तथा धमकस्याण अधिकारी नियुक्त किये। सन् १९४४ में कोयले की खानों में काम करने वाले धमिकों को शिक्षा प्रसारण विद्यालयों और धातुकर्म व्यवस्था की सुविधा प्रदान करने के लिये कामला खान धमकस्याण निधि का निर्माण किया गया। केन्द्रीय सरकार द्वारा नियमित सभी व्यवसायों में कैंस्टीन भी जोड़ी गई विभिन्न योजनाएँ और काम होने की व्यवस्था की गई। कैंस्टीन अधिनियम में संशोधन करके मालिकों के लिये यह धमिकार्य कर लिया गया कि जहाँ २१० या उससे अधिक धमिक कार्य करते हैं वहाँ धमिकों के लिये कैंस्टीन की व्यवस्था करनी होगी। सरकार ने कोयला खान कस्याण निधि की भाँति धमिक खान कस्याण निधि का भी निर्माण किया है। यह कामला खान और धमिक खान कस्याण अधिनियम सन् १९६० के कोयला खान धमिक कस्याण अधिनियम तथा सन् १९४९ के धमिक खान धमिक कस्याण अधिनियम के अन्तर्गत स्थापित की गई हैं जिनका विस्तृत विवेचन आगामी पृष्ठों में किया जायेगा। सरकार मैगनीज खान के धमिकों के कस्याण के लिये भी इसी प्रकार के अधिनियम को पारित करने के विषय में विचार कर रही है। कुछ राज्यों में जैसे बम्बई तथा उत्तर-प्रदेश में धमिकों के कस्याण के लिये जो अधिनियम पारित हुये हैं उनका भी उत्सर्जन आगामी पृष्ठों में किया जायेगा। प्रथम पंचवर्षीय आयोजना में धम और धम कस्याण सम्बन्धी कार्यों के लिये ६०४ करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई थी। द्वितीय आयोजना में इस व्यवस्था के लिये २६ करोड़ रुपये निश्चित किये गए थे। तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में धम और धम कस्याण कार्यों के लिये ७१०८ करोड़ रुपये की व्यवस्था है।

कारखाना अधिनियमों में कल्याण सम्बन्धी उपबन्ध —

कारखाना अधिनियमों में आ समय-समय पर पारित होते रहे हैं प्रकाश संवादन मशीनों से बचाव की व्यवस्था नापकम पर नियंत्रण सुरक्षा के सामन धारि का मूलतम स्वर निश्चिन कर दिया गया है । मन् १९६८ के कारखाना धरि नियम में कल्याण कार्यों क लिये एक धन्य धर्याय बना दिया गया है बिसके धन्य गत मासिकों के लिय कुछ कल्याण काय करने धरिधाय बन दिये गये है । उदाहरण स्वकय कपडे धामे की मुबिधा प्राथमिक चिधिरता बंटीन विधाय स्यात धिधुगुह धारि । इनमे स धरिधतर ती मन् १९३६ के कारखाना धरिनियम में भी ध परन्तु इस १९४८ के धरिनियम में कल्याण सम्बन्धी बी नई बागयें बोड दी गई है । यह धारयें धरिधों के लिय बंटेने की व्यवस्था (जिनके सम्बन्ध में राज्य सरकारों को नियम बनाने का धरिधकार दिया गया है) तथा कारखानों में धरिधों को धरिधे कपडे रखने धौर पीने कपडे मुक्ताने के लिये व्यवस्था करने से सम्बन्धित है । धरि नियम क धन्यगत राज्य सरकारों को एमे नियम बनाने का धरिधकार दिया गया है जिनम इस बात की व्यवस्था हो सक कि कल्याण कार्यों क धरिध में हर कारखान में प्रबन्धकों के माध-साध धरिधों के प्रतिनिधिया का भी सहयोग हो । एक धर्य धारा धारा इस बात की व्यवस्था कर दी गई है कि हर एम कारखाने में बिसमें ३०० वा उमम धरिध धरिध काम करते हा एक कल्याण कार्य धरिधारी की त्रिभुक्ति होनी चाहिए । राज्य सरकारों को दन धरिधकारियों के कर्मस्य वाप्यधायें धौर नौबरी की धरिधों धरिध को निश्चिन करने का धरिधकार दिया गया है । इसी प्रकार के उपबन्ध मन् १९३४ क धरिध अधिनियम मन् १९३९ के बागय धरिध अधिनियम तथा १९२३ क (१९४९ म संघाधित) धारणीय धरिधारी जहाज धरिध नियम में भी है ।

धम कल्याण निधियाँ —

एक धर्य महत्वपूर्ण काय सरकार न यह किया है कि राजकीय धीधार्थिक संस्थानों में धम कल्याण निधियों की स्थापना की है । त्रिधी संस्थानों म भी एसी निधियों के बनाने का प्रस्थाध है । केन्द्रीय राज्य संस्थानों में रेक धौर बन्धरवाहों को धरिधकर धम कल्याण निधि की प्रयोधात्मक कय से स्थापना करने के सम्बन्ध में सरकार के १९४६ में कुछ धारधेग दिये । १९४८-६९ म मगमय ८ केन्द्रीय सर कारी धीधार्थिक संस्थानों म धम कल्याण निधियाँ स्थापित हा गई थी जिनकी धरिया १९३० ३१ में २२१ तक हो गई । इन निधियों में १४६,००० धरिधों का साम कर्तुधान के लिय मात भारत कपया जमा हो गया था । धरिधों क प्रतिनिधियों को भी इन निधियों के प्रबन्ध में सम्मिलित कर लिया गया है । इन निधियों में मे धरिधों के लिय कधरे क मीधर धाने एवं धरिधान में लाने जाने धाने केधों धरिधानलय पुन्धकामय मधोरधन धरिध के लिये धन धर्य किया जाता है धरिध एसी मुबिधाधों पर को

विद्यादायण और कोषीन में सहकारी साग समितियाँ तथा कमरत में एक और निधि है। प्रतिकील बन्दरगाहों पर मनोरंजन की सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं तथा कौटुंबीय प्रायः सहकारिता के माध्यम पर जमायी जाती हैं। कमरता तथा बम्बई में श्रमिकों के बच्चों के लिए प्राइमरी स्कुल तथा मद्रास में हुम-इन्डु श्रमिकों के लिए कल्याण निधि की व्यवस्था है। सरकार ने बम्बई तथा कमरते में अहाब के कर्मचारियों के लिए भी कल्याण काय किये हैं तथा उनक लिए भी चिकित्सात्मक कौन्सिल व होस्टल की व्यवस्था है। उनक लिए एक त्रिदलीय राष्ट्रीय कल्याण बोर्ड की भी स्थापना की गई है। केन्द्रीय सांख्यिक निमाण विभाग में भी प्राबिडेन्ट फंड पेंशन तथा चिकित्सा की सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं। डाक-द्वारा विभाग ने दिसम्बर १९९० तक अपने कर्मचारियों के लिए १९१ सहकारी समितियाँ ३२० कौन्सिलें २२१ खाने के कमरे ३४ चाय बुह १८ डारमेट्रीस २ ७ विभाग कक्ष ५ शककाँस बुह ११ चिकित्सालय तथा लयमब ८२१ मनोरंजन क्लबों की व्यवस्था की है। लैबरेट से पीड़ित कर्मचारियों के लिए विभिन्न सनीटोरियम में १९७ परसों की व्यवस्था है। पोरी कर्मचारियों के लिए भी उचित सामान सहित चिकित्सात्मक स्कुलों सहकारी समितियाँ कौन्सिलों तथा सेलों की व्यवस्था है।

इस प्रकार से केन्द्रीय सरकार ने कल्याण कार्यों के लिए सक्रिय पग उठाये हैं। अगस्त १९५८ में 'मूली' स्थान पर एक प्रशिक्षण केन्द्र (Training Centre) खोला गया है। इस केन्द्र में कल्याण कार्यों के संयोजन और चलाने के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रतिवर्ष १०० व्यक्तियों को प्रशिक्षण देने की योजना है। १९५७-५८ में जब सांख्यिक मन्त्रिमन्त्र बने व तब से विद्यपतया बुद्ध के परभाव से राज्य सरकारों ने भी औद्योगिक श्रमिकों के लिए कल्याणकारी कार्य करने की नीति का अनुसरण किया है।

बम्बई सरकार के कल्याण काय

बम्बई राज्य में सर्वप्रथम सन् १९३९ में कुछ श्रावर्स (Model) यम कल्याण केन्द्रों का आयोजन किया गया था और उनके लिए १२० ० रुपयों की बनपति स्वीकृत की गई थी। सन् १९४४-४५ के लिए यह राशि २५ लाख थी। मुख्यतः पुनः निर्माण कार्य हेतु प्रथम पंचवर्षीय आयोजना में श्रम कल्याण के अन्तर्गत ३ करोड़ रुपया निर्धारित किया गया था जो पाँच वर्षों के लिए था। सन् १९५३ में बम्बई सरकार ने 'श्रम कल्याण निधि अधिनियम' पारित किया और इसके अन्तर्गत स्थापित किए गए बम्बई श्रम कल्याण बोर्ड को कल्याण सम्बन्धी सभी कार्य अस्वाधारित कर दिये गये। इस बोर्ड में १४ सदस्य होते हैं जिनमें मालिकों, श्रमिकों व सरकर के व्यक्तियों एवं महिमाओं का प्रतिनिधित्व होता है। इस कल्याण निधि में बन का अन्वय प्रयोग में न आये हुये धुमनि ऐसी बनपति जिसके लिये कोई दावेदार न हो शान तथा उधार की हुई राशि आदि द्वारा होता है। कल्याण

निधि में एकत्रित की गई धनराशि का प्रयोग सामुदायिक और सामाजिक शिक्षा केन्द्रों, सामुदायिक धावरयक्तताओं खेल-कूद की सुविधाओं मनोरंजन भवकाश एवम् महिलाओं व जेरोबगार व्यक्तियों कुटीर व सहायक उद्योगों तथा ऐसे कार्यों के लिये जो कि राज्य सरकार श्रमिकों के जीवन स्तर को बढ़ाने और उनकी समस्या को सुधारने के लिये उचित समझती है किया जाता है। अर्थात् सन् १९३६ में प्रतिनियम में एक संशोधन द्वारा कल्याण बोर्ड के कुछ अधिकतर कल्याण कमिश्नरों को प्रदान कर दिये गये हैं ताकि दिन प्रतिदिन के प्रयास में कठिनाई न हो।

बोर्ड ३१ कल्याण केन्द्रों का सञ्चालन करता है जो सुविधाओं के अनुसार 'क' 'ख' 'ग' व 'घ' श्रेणियों में विभक्त किये गये हैं। 'क' श्रेणी के केन्द्र हवादार तथा विसृत भवनों में हैं। इनमें बच्चे व्यायामघासा फव्वारे के पानी से नहाने का प्रबन्ध खेल-कूद के लिये मदान तथा बच्चों के लिये खेलने के स्थान की व्यवस्था है। 'ख' श्रेणी के केन्द्रों में भी तयमय ऐसी ही सुविधाएँ हैं परन्तु वह छोटे पैमाने पर होती हैं। 'ग' श्रेणी के केन्द्र किराये के मकानों में स्थापित होते हैं और उनमें कमरे के भीतर ऐसे बाने वाले तथा थोड़ी छतया में बाहरी मनोरंजन की व्यवस्था होती है। 'घ' श्रेणी के केन्द्रों में केवल मंशान के खेलों की व्यवस्था होती है। कल्याण बोर्ड के कार्य इस प्रकार हैं। रूप की सहायता से मनोरंजन और मिमेमा मैजिक मैन्टन धारि शारीरिक निष्ठा की सुविधाएँ शिक्षा सम्बन्धी क्रिणाएँ, बयस्क शिक्षा सुविधानुसार दूसरे व्यक्तियों में प्रतिशरण देकर रोजमार पाने में सहायता करना कल्याण एक मध्य-विरोधी प्रचार, पिण्ड-गृह एवं नसरी स्त्रुम महिलाओं के लिये मिसाई-बटाई की कक्षाएँ तथा कसब प्राथमिक चिकित्सा और स्वास्त्र्य विद्यालय द्वारा निष्ठा धारि। श्रमिकों को चिकित्सा की सुविधा प्रदान करने के लिये बम्बई शहर में ३, बहमदाबाद में ३ तथा पदय में १ चिकित्सा सहायता केन्द्र है। प्रत्येक केन्द्र में एक रेडियो सेट की भी व्यवस्था है। बहमदाबाद में शरुनीकी व्यक्तियों में प्रतिशरण प्रदान करने के हेतु उचित छात्र सञ्चालन सहित एक इन्विनियोरिय कारखाने की भी स्थापना की गई है। बम्बई में सम कल्याण कर्मचारियों के प्रतिशरण हेतु एक स्त्रुम की स्थापना भी की गई है। स्त्रुम में ६ महीने का शीर्षकासीन पाठपत्रम और ३ मास के धान्यकासीन पाठपत्रम की व्यवस्था है।

बम्बई राज्य में एक और उद्योगीय कार्य यह किया है कि उसमें एक सम कल्याण संस्था के अन्तर्गत कुछ नुने हुए श्रमिकों को धमिक संयचार एवं कामरिक्तता में प्रतिशरण देने की व्यवस्था की है। बम्बई बहमदाबाद और गोलापुर में ३ स्त्रुम

* महाराष्ट्र तथा गुजरात राज्ज वने के कल्याण वर दोनों राज्यों में सम-कल्याण बोर्ड स्थापित कर दिये गये हैं। ३८ कल्याण अन्य महाराष्ट्र में ६ तथा १३ गुजरात राज्य में। इनके प्रतिनियम ११ केन्द्र और १३ क्षेत्र में, २ विभागों में तथा ८ मण्डलों में हैं। १७ १५-केन्द्रों केन्द्र भी हैं।

प्रारम्भ हो चुके हैं। यमिकों की शिक्षा के लिए एक प्रारम्भिक योजना भी शुरू कर दी गई है। विभिन्न स्थानों पर पठिभील पुस्तकालयों बाचनासमों एवं सामाजिक जिम्मा सेन्ट्रों की भी व्यवस्था है। सरकार द्वारा बम्बई सहर में २ तथा प्रहमदाबाद घोलापुर और हुमली में एक-एक प्रबकाष इह स्वापित करने का विचार किया जा रहा है जिससे कि यमिक अपनी छुट्टियां उचित बाठाकरण में व्यतीत कर सकें। इसके लिए एक विधिष् प्रबिकारी की नियुक्ति भी कर दी गई है। जो मनोरंजन कार्य प्रब तक बम्बई राज्य मद्य निषेध बोर्ड तथा सरकार के यम एवं शिक्षा विभागों द्वारा सम्पादित होते वे उनका यमकल्याण कार्य के साथ समन्वय कर दिया गया है।

उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा यम कल्याण के काय —

सन् १९३७ में उत्तर प्रदेश सरकार ने यम-कमिश्नर के निरीक्षण में एक नवीन यम-विभाग की स्थापना की और कानपुर में चार यम कल्याण केन्द्र खोले। इसके पश्चात् केन्द्रों की संख्या में वृद्धि हुई तथा प्रब एक प्रमुमबी प्रबीदाक (Superintendent) के निरीक्षण में एक पृथक कल्याण-विभाग स्थापित कर दिया गया है। महिलाओं व बालकों के हेतु कल्याण-कार्य करने के लिए एक महिला प्रबीदाक की भी व्यवस्था है। इस समय (१९३०-३१ में) कुल ६२ यम कल्याण केन्द्र हैं जिनमें ६३ तो स्थायी केन्द्र हैं और दो भीनी उद्योग के यमिकों के लिए मौसमी केन्द्र हैं। स्वामी केन्द्र राज्य के प्रत्येक मुख्य औद्योगिक नगरों में इस प्रकार स्थापित हैं — कानपुर क्षेत्र—कानपुर (१९) उर्ध्वबाबाद (१) मेरठ क्षेत्र—मेरठ (१), योबिम्बपुरी (१) गाजियाबाद (१) सहारनपुर (२) बङ्की (१) जौली (मुजफ्फर नगर) (१) हरबंशनाभा (बेहराइन) (१) चौहपुर (बेहराइन) (१) बरेली क्षेत्र—बरेली (२) मुणदाबाद (१) रामपुर (१) काशीपुर (१) हल्दानी (१) इलाहाबाद क्षेत्र—इलाहाबाद (३) बाराणसी (२) साहपुरी (बाराणसी) (१) मिर्जापुर (१) बुर्क (१) गोरखपुर क्षेत्र—गोरखपुर (२) पडरौना (१) रामकोला (बिकरिया) (१) आगरा क्षेत्र—आगरा (३) फिरोजाबाद (२) प्रलीगढ़ (२) हूपरठ (२) जौली (१) सिक्काहाबाद (१) मथुरा (१) लखनऊ क्षेत्र—लखनऊ (४) योय ६३। दो मौसमी केन्द्र बसरायपुर (गौडा) तथा राजा-का-साहसपुर (गुरादाबाद) में हैं। बेहराइन जिले के केन्द्र चाय बागान यमिकों के लिए हैं।

स्थायी केन्द्रों को उनके कार्यों के अनुसार तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है। २४ केन्द्र "क" श्रेणी के ३२ "ख" श्रेणी के तथा ७ "ग" श्रेणी के हैं। १९ केन्द्र तो कानपुर में ही हैं जिनमें ९ "क" श्रेणी के ९ "ख" श्रेणी के तथा १ "ग" श्रेणी का है। "क" श्रेणी के केन्द्रों में निम्न सुविधाओं प्रदान की जाती हैं:— एक एसेम्बलिक विक्तिनासम एक बाचनासम एवं पुस्तकालय सिमाई की कक्षाओं कमरे के भीतर वाले एवं मंत्रालय के बेल ध्यायामघामा धक्काड़े संगीत व रेडियो रंघारंग कार्यकर नाटक महिला व शिशु विभाग जिनमें शिशुओं के कल्याण के लिए और

सहितार्थों के प्रसवकाल के लिए सुविधायें हैं आदि। मनोरंजन के लिए हारमोनियम तबला डोमक आदि की भी व्यवस्था है। 'ल' श्रेणी के कर्मों में भी प्रायः ऐसी ही सुविधायें प्रदान की जाती हैं परन्तु इनमें एन्थ्रोपिक के स्थान पर होम्योपैथिक चिकित्सा लय होते हैं। "य" श्रेणी के कर्मों में क्वस पुस्तकालय व बाचनालय कमरे के भीतर बाले एवं मंदारन के क्षेत्र रेडियो तथा प्रामुखिक धमका सुनानी चिकित्सालय की व्यवस्था होती है। सार केन्द्रों में लोकप्रिय धमकियों को सुवृत्त रिकामा जाता है तथा संगीत और माटक के क्लबों की भी व्यवस्था है। तीन केन्द्रों में धमिकों के क्लबों के सिधे राशि पाठशाळाएँ खोली गई हैं तथा १० केन्द्रों में धमस्क जिम्मा कजाए है। कुछ केन्द्रों में कर्मचारियों के बालकों के लिये नृत्य कराया भी है। रोमी तथा धर्मपोषित सिधुओं को निःशुल्क दूध के बितरण की भी व्यवस्था है तथा धमिका के क्लबों व धर्मबली स्थियों के स्वास्थ्य की देखभाल के सिधे नर्म और बाइयाँ भी नियुक्त की गई हैं। पहले दो सरकारी सहायता प्राप्त केन्द्र भी ये दो मोतीसाल स्मारक समिति द्वारा बनाए जाते थे परन्तु सरकार ने इन्हें धन व्ययन हाथों में ले लिया है। सीपी प्रेस चक्री में भी एक सरकारी सहायता प्राप्त केन्द्र है। धमिक धर्म की स्थियों को धार्मिक सहायता देने के हेतु विभिन्न केन्द्रों में जरूरी कातना भी सिखाया जाता है। कल्याण कार्यों में धमिक व्यक्तिगत रूप से रुचि ले सकें इस उद्देश्य से स्कार्टिंग की व्यवस्था भी की गई है। कवि सम्मेलन कैम्पेक्षरर व्यासाम प्रदर्शन तथा कुत्तियों आदि के बीच भी समय-समय पर आयोजित किये जाते हैं। काकपुर में एक लय निवारण चिकित्सालय भी खोला गया है। श्रम कल्याण विभाग में बिदेयों से सिधा प्राप्त एक धम धमिकारी भी नियुक्त है। परन्तु यदि देखा जाय तो वर्तमान प्रबन्धकारी कर्मचारी पूर्णतः योग्य नहीं हैं तथा उनका वेतन भी कम है। मौसमी श्रम कल्याण केन्द्रों में चीनी के कारखानों में काम करने वाले कर्मचारियों के सिधे क्लब कमरे के भीतर बाले एवं मंदारन के क्षेत्र बाचनालय रेडियो हारमोनियम तथा तबला बीसी सुविधायों की व्यवस्था है। यह केन्द्र नवम्बर से मार्च तक खुलते हैं।

मार्च १९३७ में कल्याण कार्यों के सिधे राज्य के बजट में देवस १० ००० रूपयों की व्यवस्था की गई थी जो १९४६ में बढ़कर सयभय बाई लाख रूपय हो गई। इस समय विभिन्न केन्द्रों में कल्याण कार्यों पर प्रतिवर्ष सगभय १३ से २० लाख रूपये व्यय किए जाते हैं। १९३०-३१ वर्ष के सिधे श्रम कल्याण कार्यों के हेतु बजट में १८ ०० ३०० रूपयों की व्यवस्था थी। तृतीय पंचवर्षीय आयोजना काल में १३ 'क' व 'ख' श्रेणी के केन्द्र खोलने का कार्यक्रम है तथा ३ केन्द्र मातिकाँ धमिकों धमका धमिक संघों के सहयोग से खोल जायेंगे।

सरकार ने १९४६ में 'उत्तर प्रदेश कारखाना कल्याण धमिकारियों के नियम' भी बनाये थे जिन्हें १९४८ के कारखाना धमिनियम में सिधे गये कल्याण कार्य सम्बन्धी उपबन्ध तन्मिमित कर सिधे गये थे। इन नियमों को हटा कर धम १९३३ के 'उत्तर प्रदेश कारखाना कल्याण धमिकारियों के नियमों' को लागू कर दिया गया

है। इन नियमों के अनुसार उन तमाम कारखानों में जिनमें १० या इससे अधिक कर्मचारी काम करते हैं एक धम कस्यारु अधिकारी की नियुक्ति करना आवश्यक है तथा जिन कारखानों में २१०० या इससे अधिक कर्मचारी काम करते हैं उनमें एक प्रतिरिक्त धम कस्यारु अधिकारी की भी नियुक्ति आवश्यक है। इन नियमों में धम कस्यारु अधिकारी की योग्यता, वेतन, नौकरी की शर्तें तथा उसके कार्य-दायि का भी उल्लेख है। (बेहिये परिशिष्ट 'ब')। सरकार को धम कस्यारु कार्य की व्यवस्था के हेतु सलाह देने के लिए धम कस्यारु सलाहकार समितियाँ भी हैं। ऐसी एक समिति तो सम्पूर्ण राज्य के लिए है तथा १४ विभिन्न जिलों के लिये है। अगस्त १९१६ में उत्तर प्रदेश धम कस्यारु निधि अधिनियम भी पारित किया गया। इसके अन्तर्गत ऐसी मजदूरी बोनस राशि व प्रवकास प्राप्ति का धन जो मजदूरों को नहीं दिया जा सका है तथा जो मालिकों के पास बिना किसी उपयोग के पड़ा है तथा मजदूरों से भी गई जुमनि की तमाम राशि एक निधि में संचित की जाती है। यह धन ऐसे धम कस्यारु कार्यों में व्यय किया जाता है जो मालिकों द्वारा कानून के अन्तर्गत ही हुई सुविधाओं के प्रतिरिक्त हो। इस निधि का प्रबन्ध एक बोर्ड द्वारा होता है जिसमें एक अध्यक्ष तथा मालिक और कर्मचारियों के प्रतिनिधि होते हैं।

कस्यारु कार्यों के प्रशासन के लिये धम विभाग में एक कस्यारु प्रभाग है जो प्रतिरिक्त अमापुक्त (कस्यारु) के अधीन है। यह प्रभाग राज्य के धम कस्यारु क्षेत्रों के माध्यम से धम कस्यारु कार्य करने के लिये उत्तरदायी है। इस समय कानपुर, धानरा बरेली इलाहाबाद तथा मेरठ में से प्रत्येक में एक एक प्रादेशिक कार्यालय है तथा कानपुर में एक कस्यारु अधिकारी तथा अन्य क्षेत्रों में एक एक सहायक कस्यारु अधिकारी है। धम विभाग द्वारा कुछ निजी संस्थाओं को धम कस्यारु कार्यों के लिये अनुदान भी दिया जाता है परन्तु इस अनुदान की राशि बहुत कम है। १९६० में श्री मोविन्द सहाय एम एल ए की अध्यक्षता में धम कस्यारु क्षेत्रों द्वारा किये गए कार्यों का मूल्यांकन करने तथा प्रतिक्रमिक सुविधाओं उपलब्ध करने से सम्बन्धित सुझाव देने के लिए एक सब-कमेटी बनाई गई थी परन्तु इसकी रिपोर्ट के बारे में कुछ श्राव नहीं हुआ है।

उत्तर प्रदेश में शीनी-कारखानों के कर्मचारियों के लिए कस्यारु कार्य — उत्तर प्रदेश सरकार ने शीनी मिल मजदूरों को सुविधाएँ प्रदान करने के लिये भी कदम उठाये हैं। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कई कस्यारु क्षेत्र ऐसे स्थानों पर हैं जहाँ शीनी मिलें हैं। "उत्तर प्रदेश शीनी एवं शालक मद्यवार उद्योग धम कस्यारु तथा विकास निधि" (U. P. Sugar and Power Alcohol Industries Labour Welfare and Development Fund) की भी स्थापना की गई है। इस समय इस निधि में ४८ लाख रुपये ने भी अधिक की राशि है। इनको तीन विभागों में बाटा गया है — याचास सामान्य कस्यारु तथा विकास।

इस निधि में से बीनी व बालक मजदर उद्योग में लगे हुए कर्मचारियों के कल्याण हेतु बन व्यव किया जाता है। सीरे की बिल्ली पर बीनी मिलों को केवल छोड़े चार घाने प्रति मन के हिसाब से ही मूल्य मिलता है। नुमी बिल्ली द्वारा इससे अधिक जो कुछ प्राप्त होता है उसे इस निधि में दना होता है। इस प्रकार इस निधि का निर्माण सीरे की बिल्ली के साम से होता है जो प्रत्येक फँस्ट्री द्वारा कानूनन निधि में जमा किया जाता है। प्राशासकों के बारे में राज्य की ६३ मिशों में समय १५०० क्वार्टरों के निर्माण की योजना है। बीनी के ६३ कारखाने इस समय इस योजना में भाग ले रहे हैं। एक प्राशास बोर्ड भी स्थापित कर दिया गया है। इस निधि की एमि में से ६० प्रतिशत प्राशास के लिये और फवम २ प्रतिशत सामान्य कल्याण तथा विकास के लिये है। १९६० तक निधि की कुल धन राशि ४० ६० ३०० रुपए की। इस धनराशि में से ४३,३० ६६६ ४० प्राशास के लिये ३ १०,८६६ २५९ सामान्य कल्याण के लिये तथा ४० ६०३ ४ विकास के लिये निर्धारित किये गये हैं। सामान्य कल्याणकारी कार्य निम्नलिखित हैं — सफाई व स्वास्थ्य में उन्नति, बीमारी की रोकथाम चिकित्सा व मातृत्व हेतु सुविधाएँ में उन्नति व सुधार, औद्योगिक स्वास्थ्य विज्ञान व ज्ञान को बढ़ावा देना जलविद्युत व घोल की सुविधाओं की व्यवस्था पुरतकामय तथा प्रचार द्वारा शिक्षा का विकास सामाजिक दयाओं व रहन सहन क स्तर में सुधार, मनोरंजन की सुविधाएं और काम पर जान तथा बर्हों में घाने के लिये मातायात की व्यवस्था प्रादि। विकास कार्य निम्नलिखित हैं — तकनीकी शिक्षा तथा बीनी व मजदर और जससे बनने वाली धर्म वस्तुओं के बनाने का प्रशिक्षण जिसमें गन्ना पैदा करना और उसके गौण उत्पादों का उपयोग करना भी सम्मिलित है। इसके प्रतिरिक्त इसमें गन्ना उत्पादन के लिये सब प्रकार के धम्येण करने की सुविधाएं तथा मड़कें बनाने व विचारों की सुविधाएँ भी सम्मिलित हैं। इस समय तो निधि का कार्य अधिकतर फँस्ट्री कर्मचारियों के लिये मकान निर्माण करना ही है। सामान्य कल्याण निधि में से अभी तक कुछ धनराशि धरम्यय वृहों के निर्माण तथा शिक्षा चिकित्सासर्वों में बीनी मिलों के धमिनों के निय पत्रम मुर्दागत करने पर व्यय की गई है।

पश्चिमी बंगाल सरकार द्वारा धर्म-कल्याण कार्य —

सन् १९३६-४० तक बंगाल में सरकार ने धमिकों के लिये केवल निजी संस्थाओं को ही सहायता दी थी। सन् १९४० में सरकार द्वारा धर्म कल्याण केन्द्रों की स्थापना की गई जो १९४४-४७ में ४१ तक पहुँच गई। परन्तु देश के विभाजन के परभाव सारी व्यवस्था को फिर से संगठित करना पड़ा और इस समय पश्चिमी बंगाल सरकार के अधीन राज्य के विभिन्न औद्योगिक केन्द्रों में ३१ धर्म कल्याण केन्द्र हैं। इन केन्द्रों में किये जाने वाले कल्याण कार्य निम्नलिखित हैं—

प्रचार पुस्तकालय रेडियो खेल शिक्षिता के प्रबन्ध कमरे के भीतर एवं मैदान के खेल नाटक का प्रबन्ध संघीत समार्य कुस्ती सिनेमा प्रावि । बच्चों व बयस्कों को प्रारम्भिक शिक्षा देने और कर्मचारियों को श्रमिक संघनाथ तथा श्रम समस्याओं के बारे में शिक्षा देने की भी व्यवस्था है । प्रत्येक केन्द्र एक श्रम कल्याण कर्मचारी के अधीन होता है । इस कर्मचारी को एक श्रम कल्याण सहायक तथा एक महिला श्रम कल्याण कर्मचारी की सहायता प्राप्त होती है । बाबिसिम के चार बागान क्षेत्रों में महिला श्रमिकों की रक्षाओं के निरीक्षण के लिए तथा उन्हें स्वास्थ्य सफाई और बच्चों की देख रेख की शिक्षा देने के लिये तीन महिला कर्मचारियों की नियुक्ति की गई है । एक चार क्षेत्र में एक हस्पताल स्थापित किया गया है । पश्चिमी बंगाल के बागान के क्षेत्रों में स्थापित केन्द्रों की संख्या १३ है । प्रत्येक केन्द्र में शिक्षितश्रम भी है जहाँ मुफ्त शिक्षिता सहायता उपलब्ध है । तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में एक धारण श्रम-कल्याण केन्द्र प्रवकाश घुड़ प्रावि खोलने का कार्य क्रम है ।

अन्य राज्यों के श्रम कल्याण कार्य —

बिहार सरकार ने विभिन्न क्षेत्रों में १८ कल्याण केन्द्र खोले हैं तथा एक केन्द्र पल्लव चार बागान के लिये है । प्रत्येक में एक श्रम कल्याण अधिकारी की नियुक्ति की गई है । सारे राज्य की महिला श्रमिकों की देख रेख के लिये पटना में एक महिला श्रम कल्याण अधिकारी की भी नियुक्ति हुई है । ये केन्द्र श्रमिकों के लिये मनोरंजन तथा शिक्षा सम्बन्धी कार्य करते हैं । सरकार ने श्रमिकों को समाज कल्याण में प्रविष्टण प्राप्त करने के लिये कृत्तियां भी प्रदान की हैं । श्रमिकों की घनेक वस्तियों में कल्याण समितियां स्थापित की गई हैं जो कुछ और दरार के चिह्न प्रचार करती हैं तथा सफाई के लिये भी कार्य करती हैं । किशन नंज रांची और पैलंग के चार के बागान के लिये तीन कल्याण केन्द्र हैं । बिहार में ३३ ऐच्छिक रूप से बनाये गये कल्याण केन्द्र हैं जिन्हें सरकार ने १०० रुपये का अनुदान दिया है । यह राशि वस्तुओं के रूप में भी चायेगी । सरकार द्वारा श्रमिक कल्याण केन्द्र खोलने की तथा विभिन्न केन्द्रों के कार्यों को विस्तृत करने की योजना है । मध्य प्रदेश में सरकार ने घुड़ी वस्त्र मिश्रों द्वारा किये जाने वाले श्रम कल्याण कार्यों की शीघ्र के लिये सितम्बर १९४८ में एक श्रम-कल्याण शीघ्र समिति की नियुक्ति की थी तथा राज्य की पंचवर्षीय आयोजना में सम्मिलित करने के लिये एक श्रम-कल्याण योजना भी तैयार की गई थी । श्रमिक संघों द्वारा १५ श्रम-कल्याण केन्द्र चलाये जा रहे हैं जिन्हें सरकार द्वारा प्रतिवर्ष अनुदान मिलता है । सरकार ने भी विभिन्न शीघ्रोपिक क्षेत्रों में ६ कल्याण केन्द्र खोले हैं । ये निम्नलिखित हैं जो नागपुर में एक-एक घकोला बबलपुर, रावतठ राजनन्दन पाँव तथा बहुरामपुर में हैं तथा दो बहुउद्देशीय केन्द्र माणपुर में हैं । प्रत्येक केन्द्र में रेडियो कमरे के भीतर तथा मैदान के खेलों का सामान पुस्तकालय प्रादि की व्यवस्था है । मिताई के इस्तेमाल के कारणाने के श्रमिकों के लिये एक कल्याण समिति बनाई गई है । इन्डोर,

प्रातिसर, उम्बैन तथा ग्वालाम में स्वास्थ्य केन्द्र खोले गये हैं। इन्दौर में एक थमिक विद्या केन्द्र भी है। पञ्जाब सरकार ने कोयमुतूर में तीन कल्याण केन्द्रों की स्थापना करने की योजना बनाई है तथा नीमविरि में बागान के थमिकों के लिये एक थम कल्याण अधिकारी की भी नियुक्ति की है। कुम्भूर में टोकरी बनाने और दूरी के काम सिखाने के हेतु दो प्रविशाल केन्द्र हैं। पंजाब सरकार ने १९६० तक २१ थम कल्याण केन्द्र खोले हैं जिनमें कमरे के भीतर एवं भंडान के बेलों की तथा एक पुस्तकालय प्रिन्स मनोरंजन की सुविधाएँ एवं सिबाई की कलाओं की व्यवस्था की गई है। पायबपुर में भी बागान के थमिकों के लिये एक केन्द्र है।

मैसूर सरकार ने विदलीय धाबार पर एक थम कल्याण बोर्ड नियुक्त किया है इसका अध्यक्ष थम कमिश्नर होता है। इसका कार्य सरकार को थम कल्याण और थम विभाग से सम्बन्धित मामलों में सहाय देना है। १९६० में १४ थम-कल्याण केन्द्र निम्न प्रकार थे — ६ बंगलौर में १ मसमीर में ४ धारवार में १ मैसूर में तथा दो मुसर्ष में। इन केन्द्रों में बाबतामय पुस्तकालय कमरे के भीतर एवं भंडान के बेल रैडियो धाणि की सुविधाएँ हैं। एक थम थम्बेयल सस्था स्थापित करने का विचार है। केन्द्रीय बाब बोर्ड ने कोशामा बाबान में एक केन्द्र खोलने के लिये बन दिया है। तिरुवांकुर काशीन में थम विभाग द्वारा तीन कल्याण केन्द्रों का संयोजन किया गया था परन्तु मार्च १९४२ में थमिकों में उन्साहन होने के कारण वे समाप्त कर दिये गये। केरल में अब कई संस्थाओं ने बच्चों के लिये स्कूल तथा मनोरंजन केन्द्र खोले हैं। राजस्वान सरकार ने मई १९४० में थम-कल्याण कार्यों के लिये एक थम बोर्ड का निर्माण किया था और कल्याण कार्य के लिये दो लाख रत हजार रुपये प्रदान किये थे। बोर्ड द्वारा १९६० तक २४ थम-कल्याण केन्द्रों की स्थापना की जा चुकी है। हरराबाद सरकार ने थमिकों व उनके बच्चों के लिये कमरे के भीतर एवं भंडान के बेलों की सुविधाएँ प्रदान करने के लिये दो कल्याण केन्द्र कोयंबोडिसम में तथा एक धाउनाबाद में प्रारम्भ किये थे। १९४६ में एक केन्द्र बाहरीर और एक जलना में खोला गया। राजकीय थम विभाग थम मंत्रों के कार्यकर्ताओं के प्रविशाल के लिये कक्षाएँ भी बनाता है। थम में चाय बागान थमिकों के लिये कुल २० कल्याण केन्द्र सरकार द्वारा समाज तथा संस्थाओं की सहायता से बनाये जाते हैं और इनमें चाय बोर्ड भी संयोजन देता है। इन केन्द्रों में से पाँच कल्याण केन्द्र पुस्तकों के लिये तीन दिवसों के लिये तथा नौ केन्द्र चाय बागान के पुस्तक थमिकों के लिये हैं। २ थम-कल्याण प्रविशाल केन्द्र भी खोले गये हैं। राज्य में थम-कल्याण कार्यों के लिये प्रथम धायोजना में २ लाख रुपये की तथा द्वितीय धायोजना में तामीस लाख रुपये की व्यवस्था थी। उड़ीसा में १९ ऐच्छिक थमिक कल्याण केन्द्र कार्य कर रहे हैं जिन्हें सरकार धायिक सहायता दे रही है। धारवार हाउ भी ३ केन्द्र खोले जा चुके हैं। देहली सरकार ने राज्य में प्राठ कल्याण केन्द्र खोले हैं। धाय में १० कल्याण केन्द्र जानू हैं।

सरकार द्वारा किए गए कल्याण कार्यों का आलोचनात्मक मूल्यांकन —

इस प्रकार केन्द्रीय तथा विभिन्न राज्यों की सरकारें श्रम-कल्याण कार्यों में सक्रिय रूप से भाग ले रही हैं परन्तु अब भी श्रम कल्याण के सम्बन्ध में बहुत कुछ करने को बाकी है। देश में श्रमिकों की संख्या तथा औद्योगिक विकास व विस्तार को देखते हुये प्रत्येक राज्य में कल्याण केन्द्रों की संख्या अत्यधिक कम है। कल्याण केन्द्रों पर जो धन व्यय किया जाता है वह देखने में प्रथम अतिक्रम मान्य होता है कि उसमें से प्रति श्रमिक पर औद्योगिक कुछ पैसे ही व्यय हो पाते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में तथा बच्चों व मातृत्व हित कल्याण केन्द्रों के लिये अतिक्रम प्रयत्न करने की आवश्यकता है। वर्तमान समय में महिला डाक्टरों का अत्यधिक प्रभाव है। महिला श्रमिकों को 'बम्बे' की बस्तुएँ, बिलौने बटन तथा दूसरी इसी तरह की प्रतिबिल काम में घाने वाले बस्तुओं को बनाने का प्रशिक्षण दिया जा सकता है तथा शहर में एक दुकान भी खोली जा सकती है जहाँ कल्याण केन्द्रों में निर्मित बस्तुओं का विक्रय किया जा सके। महिला विभाग के कार्यों को और विस्तृत करना आवश्यक है, तथा और अधिक शिक्षार्थ मशीनों की व्यवस्था भी करनी चाहिये। महिला श्रमिक इन कल्याण केन्द्रों में कार्य करके अपने परिवार के लिये अतिरिक्त आय पैदा कर सकती हैं। प्रत्येक केन्द्र में श्रमिक संघर्ष की भी शिक्षा देनी चाहिये। श्रमिकों के बालकों की शिक्षा पर अधिक ध्यान देना आवश्यक है। यह बालक अधिकतर मारे मारे फिरते हैं तथा इनमें अनेक बुरी आदतें पड़ जाती हैं। कल्याण केन्द्रों में बालकों के लिये मनोरंजन सुविधाएँ भी अधिक होनी चाहियें। कमरे के भीतर एवं मँगान के खेलों की सुविधाएँ भी अधिक हो सकती हैं। विभिन्न खेलों की नियमित टीमों संगठित की जा सकती हैं तथा मैचों का भी प्रबन्ध हो सकता है। शारीरिक या वैसासिक खेलकूद और प्रति प्रोत्साहन करके जीतने वाले प्रतिस्पर्धियों को पारितोषिक भी दिये जाने चाहियें। चिकित्सा सुविधाओं का कार्य कर्मचारी राज्य बीमा नियम के लिये छोड़ देना चाहिये तथा कल्याण केन्द्रों में अन्य कल्याण कार्यों को विस्तृत करना चाहिये। इन केन्द्रों को चलाने में सबसे बड़ा दोष यह है कि इनके प्रबन्ध में श्रमिकों का हाथ कम होता है। यही कारण है कि इन केन्द्रों को अधिक लोकप्रियता व सफलता नहीं मिल पाई है। श्रम कल्याण केन्द्रों में श्रमिकों को समझ और सहायता देने के लिये श्रमिकों की एक समिति भी होनी चाहिये। इससे श्रमिकों का सक्रिय रूप से सहयोग मिल जायगा और श्रमिकों में यह उरसाह पा जायगा कि वे कल्याण केन्द्रों से पूर्ण लाभ उठावें। इसके अतिरिक्त कल्याण केन्द्र किसी ऐसे प्रतिशिक्षित व अनुभवी व्यक्ति के अधीन होना चाहिये जिससे समाज सेवा की भावना हो। केन्द्रों के कर्मचारियों को समुचित वेतन दिया जाना चाहिये। दफ्तरों तथा वातावरण इन केन्द्रों के कल्याण कार्यों के लिये सहायक नहीं हो सकता। निश्चय ही इस प्रकार के केन्द्रों का महत्त्व व इनकी उपयुक्तता बहुत अधिक है क्योंकि ऐसे देश में जहाँ अब भी श्रमिक अपने हितों की

स्वयं देखभाल नहीं कर सकत बहू सरकार का यह कर्तव्य ही जाता है कि उनके लिए कुछ कल्याण कार्य करे धीरे धीरे व्यवस्थित बनाये जिनके धर्मार्थ मासिकों को कल्याण कार्य करने का नियम विषय किया जा सक। धन कल्याण कर्मों की सरवा में वृद्धि करने की बहुत आवश्यकता है। प्रत्येक धर्मोपनिषद् बस्ती में सरकार द्वारा बनाया जाना चाहा एक धन-कल्याण केन्द्र होना आवश्यक है तथा उन केन्द्रों के कल्याण कार्यों को विस्तृत करने के लिये अधिक धन दिये जान की आवश्यकता है।

मासिकों द्वारा कल्याण कार्य

कल्याण कार्य इस समय मासिकों की दृष्टि पर छोड़ने के स्थान पर धार्मिक कानून के क्षेत्र में जाता जा रहा है। कौन्सिलों विद्यालय धर्म विद्युत् कानों में स्नातक आदि विभिन्न धर्मनियमों के धर्मार्थ आवश्यक कर दिये गये हैं। इसी प्रकार कर्मचारी राज्य-सेवा-योजना लागू होते ही मासिकों पर शिक्षा सहामता का उत्तरदायित्व नहीं रहेगा। उपरोक्त विवरण से यह भी स्पष्ट है कि कर्माध्ययन व राज्य सरकारों भी धर्मोपनिषद् कर्मों में कल्याण केन्द्रों की स्थापना करके कल्याण कार्यों में धार्मिक भाग ले रही हैं। परन्तु फिर भी धर्मियों को मुक्तिपार्थ व सहाय्य प्रदान करने के लिए मासिक तथा उनकी सहाय्य सभी बाकी काम कर सकती हैं। कई भागकर धार्मिक विभिन्न दण्डों में स्वयं अपनी दृष्टि से धर्मियों के लिए कल्याण कार्य करते रहे हैं उनमें से कुछ का विवरण निम्नलिखित है —

सूती मध्य उद्योग में कल्याण कार्य —

बम्बई में समय-प्रत्येक मनी मिल में चित्तिलास्य विद्युत् दूध तथा धनाज की दुकानों की मुक्तिपार्थ दी गई है। १० मिला द्वारा कौन्सिल बनाई जाता है तथा कुछ मिलों में बोर्डिंग हाऊस भी दिये गये हैं जहाँ मस्ते भाजन की व्यवस्था है। बम्बई की समय-प्रत्येक मिलों में धर्मियों के लिए सेम दूध व कनक तथा व्यायामागार बनावाई हैं। ४३ मिलों में गिरा बल के लिए कर्माध्ययन बनाई जाती है। ६६ सहकारी धारा समितियाँ हैं जिनके समय-प्रत्येक ११६ २१ सदस्य हैं। समय-प्रत्येक ४० मिलों अपने स्वयं को उत्तम व्यवस्था प्राप्त करने पर धन प्रदान करती हैं। अहमदाबाद की मिलों एक माध्यम हाऊस के धर्मियों एक चित्तिलास्य बनाती हैं तथा कुछ मिलों ने तो हाऊस की मुक्तिपार्थ भी प्रदान की है। जहाँ-जहाँ महिला धर्मिक हैं वहाँ विद्युत् की भी व्यवस्था है। कुछ मिलों में विद्युत् की दूध मच्छी का तेल तथा घातरे का रस धार्मिक देने का भी प्रवण है। धन या ठंडे पान व स्नान करने की भी व्यवस्था है। कुछ मिलों ने धर्मियों के बालों के लिए बिस्तर गान्ध धर्मियों 'माटेमरी' गिरा का भी प्रवण किया है। अनेक मिलों ने संसार में शान्त जान बाल मिलों की मुक्तिपार्थ भी प्रदान की है तथा कई मिलों में सहकारी समितियाँ भी हैं। कौन्सिलों को व्यवस्था सभी मिलों में है।

नाबपुर की धर्मिय मिल में एक उन्नतनीय धन कल्याण कार्य चल रहा है।

यहाँ चिकित्सा का प्रबन्ध प्राप्त उन्तोपजनक है। चार पूर्ण सुविधाओं से युक्त चिकित्सालय है जिनमें योग्य डाक्टर है। मुख्य तथा महिला श्रमिकों के लिए प्रत्येक प्रत्येक चिकित्सालय है और विमुक्तों की भी व्यवस्था है। क्लिबर पार्टीन व सर्वरी क्लार्क भी बनती है। श्रमिकों में सहकारिता की काफ़ी जागरूकता है और श्रमिक सहकारी शासक समितियों से चलाये जाते हैं। एक बीमारों नाम निधि भी बनाई गई है परन्तु वह श्रमिक लोकप्रिय नहीं हो पाई है। श्रमिकों को निःशुल्क दिखाने के लिए भी एक योजना बनाई गई है। श्रमिकों के लिए हिन्दी व मराठी में एक समाचार पत्र भी प्रकाशित किया जाता है जिसका नाम "एम्प्लॉय मिन पत्रिका" है। इस पत्रिका को श्रमिकों में बिना मूल्य के ही वितरित किया जाता है। पत्रिका में स्वास्थ्य स्वास्थ्य विज्ञान सम्बन्धी तथा अन्य साधारण रुचि के विषय होते हैं। कर्मचारियों को लेख भेजने के लिए उत्साहित किया जाता है। इन पर वार्षिकीक भी दिये जाते हैं। प्रोब्लेम फ़ंड के प्रतिनिधि युवावर्ग कर्मचारियों को पेशान देने की भी मिस में एक योजना चालू की है।

देहली में देहली क्लब एवं बनारस मिस में एक कर्मचारी हित निधि ट्रस्ट बनाया गया है। इसके प्रबन्ध के लिये पांच सदस्य श्रमिकों में से चुने गये हैं तथा चार सदस्यों की ओर से नियुक्त किये गये हैं। इस निधि में धन वितरित किये जाने वाले नामावली के एक विशिष्ट प्रतिष्ठित भाग से श्रमिकों पर हुए कुशल की राशि से तथा सावधि सञ्चय की राशि से संभय किया जाता है। यह ट्रस्ट वैश्विक स्वास्थ्य बीमा योजनाओं परकाश प्राप्त बन और बुढ़ावस्था की पेशान योजनाओं तथा प्रोब्लेम फ़ंड और लड़की के विवाह के लिये धन देने की योजनाओं का प्रबन्ध भी करता है। कर्मचारियों को सहसा पावसकता पड़ने पर (जैसे लष्मी बीमारी में विशेषज्ञों से इलाज के लिये तथा मृत्यु संस्कार आदि के समय) विशेष आर्थिक सहायता दी जाती है। एक कर्मचारी बँक भी है जिसमें धन जमा करने वालों की संख्या ४०० से अधिक है। प्रबन्धकों ने अपने कर्मचारियों को लष्मी बीमा पॉलिसी देने के लिये स्वयं अपनी एक बीमा कम्पनी की स्थापना की है। यहाँ एक सुविधाओं से युक्त ४ परसों वाला एक हस्पताल भी है जिसमें एक्स रे का सामान्य रक्त-चिकित्सा की बुर्सी तथा विद्युत किरणों का इलाज की भी पूर्ण व्यवस्था है। चिकित्सा सहायता निःशुल्क दी जाती है तथा एक योग्य महिला डाक्टर की भी व्यवस्था है। ट्रस्ट द्वारा जमाये जाने वाले स्कूलों में श्रमिकों के बालकों तथा बालिकाओं को निःशुल्क शिक्षा देने का प्रबन्ध है। योग्य छात्रों को छात्रवृत्ति भी प्रदान की जाती है। ट्रस्ट द्वारा एक उच्च माध्यमिक विद्यालय एक विदित स्कूल तथा एक तकनीकी स्कूल बनाये जा रहे हैं। श्रमिकों तथा उनके परिवारों के लिये बचक शिक्षा कक्षाएँ, पुस्तकालय तथा वाचनालय की भी व्यवस्था है। एक व्यायामशाला तथा बैल-कूद का भी प्रबन्ध किया गया है। श्रमिकों के अपने ही ठहरने के लक्ष्य लक्ष्य संघ आदि हैं। "डी० बी० एम० बजट" के नाम से एक साप्ताहिक समाचार-पत्र हिन्दी तथा उर्दू

में प्रकाशित किया जाता है, जिसे कर्मचारियों में बिना मूल्य के वितरित किया जाता है।

मग्रास में इन्डियन तथा कर्नाटक मिनों में एक मिल चिकित्सालय है जिनमें छः डाक्टर नियुक्त हैं जो कर्मचारियों को कमरे बरों पर भी देखने जाते हैं। एक महिला डाक्टर के अधीन भी एक चिकित्सालय है। प्रत्येक मिन के धमिक क्षेत्रों में एक चिकित्सालय होता है तथा नर्वे प्रतिदिन धमिकों के घरों पर जाती है। महिला डाक्टर तथा दो स्वास्थ्य निरीक्षक भी सप्ताह में एक या दो बार धमिक क्षेत्रों में जाती हैं। महिलाओं के लिए विधायक कक्षाएं आयोजित की जाती हैं जिनमें सफाई बच्चों का पालन-पोषण भोजन का महत्व तथा बीमारियों की रोकथाम आदि पर व्याख्यान दिये जाते हैं। महिलाओं के लिये शिक्षाई की कक्षाएँ हैं। लड़कियों को गृह-विज्ञान स्वास्थ्य विज्ञान सामान्य विज्ञान तथा वस्तुकारी धारि की शिक्षा दी जाती है। प्रत्येक भ्रम क्षेत्र में नर्तकी कक्षाएँ भी बालु की गई हैं तथा केवल घाठ घाने प्रतिमाह देने पर बालकों को हल्का नारंग व मछली का तेल दिया जाता है। ठेकेदारों द्वारा दो कैम्पीनें बनाई जाती हैं तथा कमरे के भीतर एवं मंदिर के क्षेत्रों की भी सुविधाएँ की गई हैं। मिल में एक लहकारी समिति भी है। एक बर्ष में धमिक मौकरी करने पर प्रत्येक धमिक मिन प्रोबोइन्ट फंड का सदस्य हो सकता है।

बंदसौर की ज्मी सुठी व रेणम की मिनें भी कल्याण कार्यों को संचालित रूप से कर रही हैं। एक धार्मिक दवाखाना मातृत्व हित व धान-वस्त्राण व्यवस्था चिकित्सालय तथा स्वास्थ्य निरीक्षक कर्मचारियों की व्यवस्था है। प्रत्येक बर्ष धमिकों की बस्ती में एक बाल प्रदर्शनी तथा स्वास्थ्य सप्ताह मनाया जाता है। एक मधु पी पाठ-शाला एक साम्यमिक पाठशाला व धर्म में बदस्तों के लिये कक्षाएं भी बनाई जाती हैं। दो बाबनालयों तथा एक पुस्तकालय की भी व्यवस्था है। कमरे के भीतर एक मंदिर के लक्ष्य नाटक, सभाओं आदि जैसी मनोरंजन की सुविधाएँ भी प्रदान की गई हैं। कोयमुतूर में भी प्रत्येक सुठी बस्ती जिनमें एक-एक चिकित्सालय है। कुछ मिनें हम्पवास भी बनाती हैं जिनमें विशेष रूप से मातृत्व हित व बच्चों के विभाय भी होते हैं। धारी मिनों में सिपु गृह कैम्पीन गहाने की सुविधाएँ विज्ञान स्वान तथा चिकित्सालय हैं। कई मिनों में उपदान प्राप्त कैम्पीनें हैं धीरे मनोरंजन की तथा बच्चों की शिक्षा की सुविधाएँ भी हैं।

मधुप में मधुप मिन्ध कम्पनी ने अपने कर्मचारियों की चिकित्सा के लिए बहुत ही प्रबन्ध किया है। सब सुविधाओं के मुख्य चिकित्सालयों की व्यवस्था है तथा हस्तगामी चिकित्सा के लिए एक स्थानीय हस्पताल में प्रबन्ध किया गया है जिनमें मिनों के स्वयं धनना एम के फंड लगा दिया है। मिनों में सिपु गृहों की भी व्यवस्था है। स्कुलों में बच्चों को दूध भोजन फल आदि बिना किसी मूल्य के दिये जाते हैं। मधुप मिन कर्मचारी लहकारी भण्डार भी बनाया जाता है जिसके प्रबन्ध में बच्चों का भी हाक होता है। एक कर्मचारी बचन निधि योजना भी

चाहू है जिसमें मिल मासिक भी सहायता देते हैं। तीस बयों से अधिक नौकरी करने वाले कर्मचारियों को पेंशन भी दी जाती है जो उनकी मासिक प्राय की प्राप्ति होती है इसमें १) महंगाई भत्ता और मिला दिया जाता है। भवकाय प्राप्त धन देने की भी व्यवस्था है। मकुरा मिसों द्वारा किये जाने वाले कस्याए कार्यों में एक विशेषता यह है कि वे 'मकुरा धमिक धर्म कस्याए परिपद्' को १, ०० ५० प्रति माह उपदान में देती हैं। यह परिपद् कर्मचारियों के बच्चों के लिये एक पाठ-शाला तथा पुरुष व महिला कर्मचारियों को शिक्षा देने के लिये दो बयस्क कन्द्रों को बनाती है। मिल ने धमिकों की बस्ती में भी एक स्कूल की व्यवस्था की है।

इसी प्रकार अनेक और स्वार्थों पर भी सूटी बस्त्र मिलों द्वारा धमिकों के लिये विभिन्न प्रकार के कस्याए कार्यों की सुविधाएं प्रदान की गई हैं। उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि सूटी मिल उद्योग में दी जाने वाली कस्याए सुविधाओं के स्तर विभिन्न केंद्रों में भिन्न भिन्न हैं। कुछ मासिक तो केवल कानून के अनुसार ही आवश्यक सुविधाएं देकर संतुष्ट हो गए हैं। परन्तु कुछ बड़ी मिलों ने कस्याए कार्यों को विस्तृत स्तर पर किया है तथा वे कानून द्वारा बाधित सुविधाओं से भी प्रागे बढ़ गई हैं।

बूट मिल उद्योग में कस्याए काय —

कबल "भारतीय बूट मिल परिपद्" ही एक ऐसा संघ है जिसने अपने सबसे सस्वाधो के कस्याए कार्यों को संगठित करने का प्रयत्न उत्तरदायित्व लिया है। यह परिपद् विभिन्न स्वार्थों पर पांच कस्याए केन्द्र बनाती है, जिनमें सामान्य कस्याए कार्य होते हैं। इनमें कमरे के भीतर एवं मैदान के खेलों की तथा मनोरंजन की सुविधाओं की व्यवस्था है तथा मिलों में आपस में खेल की प्रतियोगिताएं भी की जाती हैं। प्रत्येक केंद्र में एक एक रेडियो तथा बाजनालयों में समाचार पत्रों की व्यवस्था है। कुछ केंद्रों ने स्वयं अपने पुस्तकालय नाटक मण्डली तथा सजीव कक्षाएं बनाई हैं। टीटा गड बन्द में एक कंस्टीन तथा चिकित्सालय ऐसे भी हैं जिनमें मुफ्त ही बीजों व सबाएं मिलती हैं। यह परिपद् प्रत्येक केंद्र पर एक प्रारम्भिक पाठशाला बनाती है। सब कियो के हेतु पाक व सिलाई कक्षाओं की व्यवस्था भी की गई है। मिल कर्मचारियों के बच्चों को तकनीकी शिक्षा देने के लिये २) प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष के मूल्य की बत छात्रवृत्तियां प्रदान की जाती हैं। कुछ केंद्रों पर एक महिला कस्याए समिति तथा महिला क्लब भी बनाई जाती हैं। महामारी को रोकने के लिये नियमित रूप से वैचक व धम्य रोगों के टीके लगाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त मिलें अलग से भी धमिकों के लिये कस्याए कार्य करती रहती हैं। उदाहरणतः परिपद् की ५५ सबसेस्य मिलों में से जिनका पश्चिमी बंगाल सरकार द्वारा ग्य १९२७ में एक सर्वेक्षण किया गया था ७३ में चिकित्सालयों की व्यवस्था है ९ मिलें हस्पताल बनाती हैं १५ मिलों में मातृत्व द्वि चिकित्सालय हैं ७७ में कंस्टीमें हैं ६३ शिक्षा द्वि बनाती हैं ६३ में पाठशालाओं की व्यवस्था है ४१ में पुस्तकालय हैं ३४ में कमरों के भीतर के

सर्तों और ११ में मैदान के खेलों की व्यवस्था है - ८ मिला में व्यायामशालाएँ हैं तथा ४० मित्तों में समय समय पर सिनमा दिखाने की व्यवस्था है। सारी मित्तों में थम कल्याण अधिकारी नियुक्त हैं। कुछ मित्तों में उन्हें 'कामिक' या 'कल्याण अधिकारी' कहा जाता है। कुछ मित्तों की घोर म १० पर परिचयी बवाल में तथा एक उत्तर प्रदेश में बताया जा रहा है।

कानपुर में मातृकों के थम कल्याण काय —

कानपुर में ब्रिटिश इण्डिया कारपोरेशन न वा अमिक बस्तियों के लिये एक कल्याण अधीक्षक (Welfare Superintendent) की नियुक्ति की है। सड़कों तथा लड़कियों के स्कूलों जहाँ शिक्षितताओं मानुष्य हित तथा बाल-कल्याण केन्द्रों, समाजों, एक हस्पताल तथा एक विद्यालय आदि की सुविधाएँ कल्याण कायों द्वारा की गई हैं। कानपुर की बेब सटरलैंड मित्तों में बालकों तथा बयस्कों के स्कूलों, मेम के मंत्रालों कमरे के भीतर एक मंत्राल के सभों रेडियो तथा पूर्ण सुविधायुक्त सिनेमाघरों की व्यवस्था की है। कानपुर की बे० के० इन्डस्ट्रीज न भी तीन लाख रुपयों में एक ट्रस्ट की स्थापना की की जिनके धनगत कर्मचारियों के लिये कई पाठशालाएँ, एक लंदने का शास्त्र तथा कई अन्य सुविधाएँ प्रदान करने की व्यवस्था की। परन्तु इन सुविधाओं को प्रदान करने की घोर कोई वष नहीं उठाया गया है।

इन्डोनियरिंग उद्योग में कल्याण काय

इन्डोनियरिंग उद्योग में कई बड़ी सम्पत्ता न धनक प्रकार ४ थम-कल्याण काय लिये हैं जिनका एक वषस १६८८ में परिचयन बवाल में इन्डोनियरिंग अधिकारण द्वारा निय गय एक निर्णय क परचाय सामाजीकरण किया गया है। धनेक मस्बाधों में अपने कर्मचारियों के लिय शिक्षितताओं कैम्पेनियों सिखा तथा मनोरंजन की सुविधाओं प्रदान की हैं। कमरापुर की टाटा लाहा एव कम्पनी द्वारा लिय गये काय भी विशेष उन्पेगनीय है। यर कम्पनी ४१६ पनेगों बासा एक हस्पताल बनाती है। इसक धनिरिक नगर के विभिन्न भागों में घाठ औरघालय तथा एव हस्पताल सशामक बीमारियों का है। कर्मचारी तथा उनके परिवारों का इलाज निःशुल्क दिया जाता है। एक महिला शिक्षित अधिकारी के अधिन एक महिला विभाग तथा मानुष्य हित व गिः विभाग है। एक मानुष्य हित व बाल कल्याण मस्था भी है जिनके धनगत निधन धनिरों के परिवारों के लिये कई शिक्षितताओं का प्रवर्ण है। एक बार्निक स्वास्थ तथा बालरोगनेत्री का भी धायोदन किया जाता है। गिः पर बिरे-प्यान लिया जाता है। बपक गिः कथाओं के धनिरिक कम्पनी ३ हार्ड स्कूल ११ विरिन स्कूल १६ प्राथमिक पाठशालाएँ, १ एच पाठशालाएँ तथा एक उरनीरी एच पाठशाला का भी समाजी है। गिः विभाग का बार्निक बजट सगभय १८ लाख ०० का है। बच्चों के लिय कई सैन के मंत्रालों का भी प्रवर्ण है तथा कर्मचारियों के लिये कमरे व भीतर एवं मंत्राल के

क्षेत्रों की भी व्यवस्था है। नगर के विभिन्न भागों में १२ थम-कस्याण कम्पनी सोसे गये हैं जिसमें एक वाचनालय व एक पुस्तकालय कमरे के भीतर एवं भवान के खेल व्याख्यान व नाच-बिबाह प्रतियोगिताएं, संगीत व नाटक धारि की सुविधाएं धारि प्रदान की गई है। इसके अतिरिक्त विभिन्न बस्तियों में मुफ्त सिनेमा दिखाया जाता है। एक रेडियो प्रसारण की भी व्यवस्था है जिसमें से नौ साउंडस्पीकर घर घर के विभिन्न भागों में सगये गये हैं। कारखाने के अंदर कम्पनी से बड़े-बड़े होटल बसाती है तथा महिला कर्मचारियों के लिये कई विद्यालयों व बच्चों के लिये डिप्लुगृहों की व्यवस्था की गई है। अर्धपोषित बच्चों को दूध तथा बिस्कुट बिना मूल्य के दिये जाते हैं। महिलाओं को बोलने के लिये साबुन मुफ्त मिलता है। बपाल की इस्पात निबम तथा भारतीय लोहा कम्पनी ने भी अपने कर्मचारियों के कस्याण के लिये बहुत प्रयत्न प्रबन्ध किये हैं।

कागज व सीमेन्ट उद्योग में कस्याण कार्य —

कागज उद्योग में धारी मिलें चिकित्सालयों डिप्लुगृहों व कैंटीनों का प्रबन्ध करती है तथा सहकारी समितियों को प्रोत्साहन दिया जाता है। कुछ मिलों ने कर्मचारियों के बच्चों की शिक्षा का भी प्रबन्ध किया है कुछ ने 'कर्मचारी क्लब' स्थापित की है तथा कुछ में खेलों की व्यवस्था भी है। सीमेंट कारखानों ने (विशेषकर एन्डोनि को 'एडोसिमेन्ट व सीमेन्ट कम्पनी' से सम्बन्धित है) अपने कर्मचारियों के कस्याण के लिये काफी ध्यान दिया है। इनमें हस्पतालों और चिकित्सालयों (जिनमें योग्य डाक्टर हैं) संघट्टि डिप्लुगृहों कैंटीनों खेल तथा मनोरंजन के लिये क्लबों तस्ते अनाज की दुकानों तथा शिक्षा धारि की सुविधाएं प्रदान की जा रही है।

हस्पतालों चिकित्सालयों शिक्षा तथा मनोरंजन की सुविधाओं की व्यवस्था मामिकों द्वारा धान्य कई उद्योगों जैसे चीनी बमड़ा तथा चर्म रंगाई, रसायन उनी बस्त्र तेल सीमेंट, कांच सिगरेट, बतस्पति धारि उद्योगों में भी की गई है।

बागान में कस्याण कार्य —

असम तथा पश्चिमी बंगाल के चाय बागान में चिकित्सा सुविधाएं दी गई है। एक डाक्टर अथवा कम्पाउण्डर से मुक्त चिकित्सालय की भी व्यवस्था है तथा कई क्षेत्रों में नर्सों व बीमारियों के लिये बागानों में ही हस्पताल खोले गये हैं। कुछ बागान ने सामूहिक रूप से सहयोग देकर एक चिकित्सा परिषद् बनाई है जिसमें एक मुख्य चिकित्सा अधिकारी की नियुक्ति की गई है तथा चिकित्सा सम्बन्धी गम्भीर मामलें एक सामूहिक हस्पताल में भेज दिये जाते हैं। इसी प्रकार के एक सामूहिक हस्पताल की व्यवस्था अरिष्ठ भारत के चाय क्षेत्रों में भी की गई है। लक्ष्मण धारे बड़े-बड़े चाय व कहरा क्षेत्रों में हस्पतालों व चिकित्सालयों की व्यवस्था है और छोटे क्षेत्रों में कर्मचारियों की चिकित्सा के लिये स्थानीय हस्पतालों में प्रबन्ध है। कई स्थानों पर डिप्लुगृह नहीं हैं परन्तु जब मातायें काम पर जाती हैं तो उनके

बच्चों की देखभाल के लिये वृद्ध महिलाओं का प्रबन्ध किया गया है। कई क्षेत्रों में कर्मचारियों के बालकों के लिये स्कूल प्रसाधे बाँठे हैं तथा उनमें से कुछ में बच्चों के लिये रात्रि कक्षाएँ भी स्थापित की गई हैं। वृद्ध स्त्रियों को छाड़ कर अन्य स्त्रियों पर मनोरंजन की सुविधाएँ प्रदान नहीं की जाती हैं। बांग्लादेश में कर्मचारियों के लिये फ़ैन्टीनें भी बहुत कम हैं। यद्यपि एक बांग्लादेश में कर्मचारियों में बहुत ब मितव्ययता की भावना ब्रह्मण के लिये एक अन्तर्गत कर्मचारी महत्वागी बक कोमा गया है। सरकार सहकार्य विभाग द्वारा इनके प्रबन्ध में सहायता देती है तथा इसके काय के लिये १००० रुपये का एक अनुदान स्वीकृत किया गया है। बांग्लादेश में मातृत्व हित-साधक व बीमारी के लाल भी दिये गये हैं। पाँच कल्याण केन्द्र पुरुषों के लिये तथा पाँच स्त्रियों के लिये खोलने की योजना प्रथम भ्रम कल्याण बोर्ड द्वारा स्वीकृत हो चुकी है तथा महिलाओं के लिये तीन केन्द्र पहले ही स्थापित हो चुके हैं। त्रिपुरा तथा मनुष्यता में दो तथा एक कल्याण केन्द्र प्रथम जोसे गये हैं। काय बोर्ड काय क्षेत्रों के कर्मचारियों के कल्याण के लिये उच्च सरकारों को प्रपनी निधि से बन देती रही है। कहुवा तथा रबर बोर्ड भी रबर तथा कहुवा के बांग्लादेश में कर्मचारियों के कल्याण कार्यों के हेतु प्रपनी निधियों में से धन देने के लिये तैयार हो गये हैं। इसके परिचित १९६१ व बांग्लादेश अधिनियम के अन्तर्गत हस्तगत तथा चिकित्सालय प्रसाधे जाने की व्यवस्था है।

कोयले की खानों में कल्याण-काय १९४७ का कोयला-खान-भ्रम कल्याण निधि अधिनियम —

कोयला तथा धातुओं की खानों में कल्याण सुविधाएँ देने का उद्देश्य प्राप्त कर, "कोयला तथा धातुओं की खानों के भ्रम कल्याण निधियों" का है। फिर भी मानिकों द्वारा भी कुछ कल्याण सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं। उदाहरण के लिये एक रिपोर्ट के अनुसार २८ कोयला की खानों में मनोरंजन का प्रबन्ध किया है १९७ के लाल के मैदानों का २७६ में बच्चों के लिये पाठशाळाओं का तथा १३ व बच्चक शिक्षा कक्षाओं की व्यवस्था की है। यद्यपि कोयला खानों में ६ स्त्रियों पर लो ब्रह्मण के मैदानों का तथा दो स्त्रियों पर बच्चों के स्कूलों का प्रबन्ध है।

कोयले की खानों में संगठित कल्याण कार्य की आवश्यकता देखते हुए भारत सरकार ने ३१ जनवरी १९४४ को एक अध्यादेश की घोषणा की जिसका उद्देश्य एक निधि निर्मित करना था। इसे "कोयला खान भ्रम कल्याण निधि" नाम दिया गया है। अध्यादेश की तारीख १९४७ में कोयला खान-भ्रम-कल्याण निधि अधिनियम में परिवर्तित कर दिया गया जिसमें कोयला उद्योग में काम करने वाले कर्मचारियों के लिये अधिक सुधार रूप से बन देने की व्यवस्था है। यह अधिनियम सन १९४७ के लागू हुआ। इसके अन्तर्गत "कोयला खान भ्रम कल्याण तथा धातु-कल्याण निधि" नाम से एक निधि की स्थापना की गई है। इस निधि के दो भाग हैं — (१) धातु

जाता तथा (२) सामान्य कस्याए जाता । इस अधिनियम क अन्तर्गत सारे भारत में खानों से खान बान हर प्रकार के काम पर एक उपकर (Cess) लगाया गया है जो न ता बार घाने प्रति टन म कम होगा और न ही घाठ घाने प्रति टन से अधिक । इसका निर्णय केन्द्रीय सरकार समय-समय पर करेगी । इस उपकर से प्राप्त राशि को आवास खाते तथा सामान्य कस्याए खाते म अनुमात्रित कर दिया जाता है । अधिनियम में उन तयाम कार्यों का वर्णन किया गया है जिन पर प्रत्येक खाते में से रुपया व्यय किया जा सकता है । पून सन् १९४७ में खानों से जाने वाले कोयले तथा भारी काम पर ६ आना प्रति टन के हिसाब से एक उपकर लगाया गया था । जनवरी १९६१ से इस उपकर की दर ५० न पैसे प्रति टन बढ़वा ४९ २१ न० पैसे प्रति मट्टिक टन कर दी गई है । सन् १९२६-२७ तक यह उपकर ७ २ के अनुपात से 'सामान्य खाते' तथा 'आवास खाते' में विभाजित होता रहा था । सन् १९२६-२७ में आवास पर अधिक और बेने के लिये अनुपात को ६ ३१ में बदल दिया गया । तब से यह अनुपात चल रहा है । इस निधि का प्रशासन केन्द्रीय सरकार एक सलाहकार समिति क परामर्श से करती है जिसमें सरकार क कोयला खानों के मासिक तथा अमिको का प्रतिनिधित्व करने बान सदस्यों की संख्या बराबर होती है । सारे सदस्य केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किये जाते हैं, जिनमें एक महिला भी होती है । एक 'कोयला खान अमिक आवास बोर्ड' पहले से ही स्थापित किया जा चुका है । अधिनियम क अनुसार एक 'कोयला खान अम कस्याए कमिश्नर' की भी नियुक्ति हुई है जिसकी सहायता क लिये एक मुख्य कस्याए अधिकारी तीन अम कस्याए निरीक्षक तथा एक महिला कस्याए अधिकारी रखे गये हैं । कोयले की खानों के अमिकों के लिये जा कामूत बने हैं उन्हें विज्ञापित करने के लिये बिहार, बंगाल तथा मध्य प्रदेश म पांच प्रकार अधिकारी नियुक्त किये गये हैं ।

१९२०-२१ में 'कोयला खानों क कस्याए निधि नियमों' में तीन विधेय संशोधन किये गये । वे निम्नलिखित विधियों पर थे—(१) बड़े कोयला क्षेत्रों की 'कोयला क्षेत्र उपसमाप्तों' क सविधान बनाना (२) खानों से रेल के अतिरिक्त किसी और साधन से भेज जाने वाले कोयले तथा भापी कोयले पर भी उपकर लगाना तथा (३) जो खानें अपने कर्मचारियों के लिये एक निश्चित स्तर के चिकित्सालय बसाती हैं उन्हें सहायता देना । सन् १९६१-६२ में 'कोयला खान अम कस्याए निधि' की कुल आय २०१ लाख रु की जिसमें से १६ लाख रु सामान्य कस्याए और आवास पर व्यय हो जाने का अनुमान था । १९५९-६० तक सामान्य कस्याए पर ७६ ३ लाख रु तथा आवास योजनाओं पर ७३ १ लाख रु व्यय हुआ था ।

निधि के आवास सम्बन्धी काम पहले ही बढाये जा चुके हैं । (वर्षिमे पृष्ठ २३४-३६) जहाँ तक सामान्य कस्याए का प्रश्न है व्यय का एक बड़ा अंश स्वास्थ्य सुविधाओं तथा चिकित्सा सम्बन्धी देखभाल क इसाज के साधनों पर लगाया जाता है । इस समय बर्हा ८ राष्ट्रीय हस्पताल हैं जिनमें से दो-दो बिहार,

परिचरणी बंगाल और मध्य प्रदेश में हैं तथा एक कुमरो (बकारी कोयला काम) एवं एक कोरिया की कोयला खानों में कुलमिया स्थान पर है। दो चिकित्सालय भी हैं तथा दो केन्द्रीय हस्पताल भी हैं जिनमें से एक बमबार् में है और एक फ़ामलमोर में है। सरसेन प्रीत कला में दो धर्म चिकित्सालय भी सौल गये हैं। कुछ ऐतिहासिकता में खानों में काम करण वालों के लिये पर्यय सुरक्षित कर दिये गये हैं। ऐसीय हस्पतालों में तथा फ़ामलमोर मांग्या तथा हजारीबाग में खानों के स्वास्थ्य बोर्ड के द्वारा मातृत्व हित तथा गिणु कल्याण की सुविधाएँ भी प्रदात की जाती हैं। अन्य उन्नेयनीय शायों में से मुख्य ये हैं—घासतसोम का एक बैंक मनेरिया के बिरड प्रकृत मात्रा में होने बात काम दो सी० बी० फ़ानोमम प्रनेक मातृत्व हित में काम कल्याण केन्द्र घनेक मबल प्रीयफ़ालय तथा कल्लुइयाँ में संजामक हस्पताल। एक और हस्पताल नगरई में खोला गया है। १ धायुबैरिफ़ प्रीयफ़ालय घनी ह्वात में ही खोले गये हैं। खानों के काम कनधारियों के लिये इन्धन संय देन की भी व्यवस्था की गई है। नम बाग का जगय नी घनी हाल में हो किया गया है कि कोयला खाना के एन तमाम कमधारिया का जिनका मूल वेतन १०० रुपये प्रति मास में कम है नि कुम्ह चिकित्सा सुविधा प्रदान की जायेगी।

कोयला खानों में काफी मन्दा में बहूउत्पाद कल्याण केन्द्र भी हैं जिनमें गिणा बनेरजन तथा अन्य सुविधाएँ दी गई हैं। गिणो का मो प्रबन्ध है तथा सचल मिलेमाओं द्वारा कामदिन विचार्ये जाते हैं। इस प्रकार ४ ३६ केन्द्र कामू हैं। ३२ पुस्तकालयों की भी व्यवस्था है बरसक गिणा के लिये भी काम उठाये गये हैं और निधि द्वारा बरसक गिणा ४ ६ केन्द्र कामये जा रहे हैं। प्रत्येक केन्द्र में एक केंस्ट्रीन भी है। महिलाओं के लिये ३६ विद्या केन्द्र हैं जिनमें कलाई कढ़ाई गृह धर्मव्यवस्था धारि की गिणा दी जाती है। बिहार कोयला क्षेत्र में ४७ सहकारी समितियों का संघटन किया गया है। खान कर्मधारियों की ६० सरघाएँ भी हैं जिनमें से प्रत्येक में एक महिला कल्याण केन्द्र काम गिणा केन्द्र एक बरसक गिणा केन्द्र तथा एक काम उद्यान की व्यवस्था है। कनधारियों के कामरों को धनवृत्ति देने की एक योजना भी लागू कर दी गई है। फ़ाल १९३९ में निधि में १३ दिन की मातृत्व छुटन यात्रा की भी एक व्यवस्था का जो जिनमें ३०० कोयला खानों के अधिक लये थे। खानों के धर्मिका के पुन और पुत्रियों के लिये खानाम्य गिणा हेतु २० २० प्रति माह की ०३ छात्र वृत्तियाँ तथा तत्कनीकी गिणा ४ लिये ३० २० प्रति माह की ०२ छात्र वृत्तियाँ प्रदान का जाती है। बिहार में छात्रवीर स्थान पर गान धर्मियों के लिये एक सवकाय गृह भी खोला गया है।

धर्म योजनाएँ जिनके लिये नम निधि के धन दिया गया है निम्नलिखित हैं—घासत सचल दिनया जय बिहारण व्यवस्था में उभनि कुमन्ता में धर्मियों की कृष्ण पर बिचका को तथा बच्चों का जो स्कूल जाते हैं धारिदर सचलता फलवार में कुम्ह रोपिया के लिय एक बस्ती की योजना तथा धर्मिय गान धर्मियों की सहायता

करने व उन्हें किसी अन्य कार्य में प्रसिद्धि करने के लिये बनबाय हस्पताल में एक पुनर्वास केन्द्र स्थापित करने की योजना। सन् १९६६ में सार्वजनिक के अगरी परतल पर स्नान इहाँ की कुल संख्या २२१ थी। १५३ सार्वजनिक में सिधु गृहों का प्रबन्ध था। मोरबापुर धम संघटन द्वारा कोयला सार्वजनिक में जो अधिक भरती होते हैं उनके कल्याण कार्यों के लिये ३ कल्याण अधिकारियों की नियुक्ति की गई है। कोयला सार्वजनिक प्रोबिडेन्ट फंड तथा मोरबा योजना पर सामाजिक सुरक्षा के अध्याय में विचार किया गया है।

धमक की सार्वजनिक में धम-कल्याण काय १९४६ का धमक सार्वजनिक धम-कल्याण निधि अधिनियम —

सरकार ने १९४६ में धमक सार्वजनिक धम कल्याण अधिनियम की पारित किया। इस अधिनियम के अन्तर्गत एक निधि की स्थापना की गई है जिस निधि में धन मुख्य धनुषार, एक प्रायश्चित्त नियमित कर लगा कर संविद्ध किया गया है। यह कर सब समाज धमक पर जो मास से निर्यात होता है लगाया गया है। इस कर की दर ६३ प्रतिशत से अधिक नहीं हो सकती है। वर्तमान दर मुख्य धनुषार २३% है। इस निधि का उपयोग धमक सार्वजनिक में काम करने वाले अधिकों के कल्याण हेतु होता है। इस अधिनियम के अन्तर्गत सरकार ने सलाहकार समितियाँ बनाई हैं जिनमें से एक विहार के लिये एक धान्य के लिये तथा एक राजस्थान के लिये है। कोयला सार्वजनिक का कल्याण कमिश्नर ही धमक सार्वजनिक का कल्याण कमिश्नर बना दिया गया है। निधि के १९६८-६९ के बजट में १३ ८९,७६६ ४० के व्यय की व्यवस्था थी। निधि की धन २९,१९,५० ४० थी। कल्याण कार्यों से सम्बन्धित अधिकों को निम्नलिखित सुविधाएं उपलब्ध हैं चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाओं के अन्तर्गत ७ पर्सनों वाला एक केन्द्रीय हस्पताल कर्मा (विहार) में है। १२ पर्सनों वाला एक हस्पताल टीसरी (विहार) में तथा १४ पर्सनों वाला एक हस्पताल कालीबेदू (धान्य) में है। मंदापुर (राजस्थान) में ३ पर्सनों वाला एक हस्पताल तथा केन्द्रीय हस्पताल कर्मा (विहार) के साथ २० पर्सनों वाला एक टी० बी० हस्पताल बनाये जा रहे हैं। धमक सार्वजनिक के अधिकों के लिये नैनीतोर के टी० बी० हस्पताल तथा टी० बी० टी० सीनियोरियम में भी पर्सन सुविद्ध किये गये हैं। धमक सार्वजनिक के जो अधिक लक्ष रोग से पीड़ित हैं तथा इलाज कर रहे हैं उनके धमिकों के लिये २० ४ प्रति माह का निर्वाह भत्ता प्रदान किया जाता है। इनके अतिरिक्त १४ धमक चिकित्सालय हैं— (३ धान्य में ६ विहार में तथा ५ राजस्थान में) ९ धमक चिकित्सालय हैं (१ धान्य में ३ विहार में तथा ५ राजस्थान में) तथा २ मातृत्व हित तथा िधु कल्याण केन्द्र हैं, (४ धान्य में २ विहार में तथा ३ राजस्थान में)। प्रत्येक वर्ष धमक की सार्वजनिक में मनेरिया उम्भूतन कार्यवाहियाँ भी की जाती हैं। सार्वजनिक सम्बन्धी सुविधाओं के अन्तर्गत ६ बहुउद्देशीय संस्थाएं निधि द्वारा विहार में बनाई जा रही हैं। प्रत्येक में एक बस्कर सिखा केन्द्र तथा एक महिला कल्याण केन्द्र है। इनमें

मनोरंजन की तथा धिता की सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं। धितार्थ कटाई, बुनार्थ धारिक कलाधों का भी प्रबन्ध है। १६ बयस्क धिता तथा सामुदायिक केन्द्र भी हैं। (१ धाग्र में २ बिहार में तथा १३ राजस्थान में) १० प्राथमिक धीर प्राइमरी स्कूल हैं (६ धाग्र में तथा ४ राजस्थान में) धीर धी मिथिल स्कूल हैं (१ धाग्र में तथा १ राजस्थान में)। धाग्रक खानों के धमिकों के बच्चों के धिये उच धिता हेतु धाग्र धृधियाँ भी प्रदान की जाती हैं। धाग्र में स्कूल के बच्चों को धिताबे धूब धीपहर का खाना स्नेटें कपड़े बस्ते धादि भी मुक्त प्रदान धिये जाते हैं। बच्चों के धिये धी बोडिंग हाऊस भी बनाये गये हैं। मनोरंजन सुविधाधों के धन्तर्गत धाग्रक खान धमिकों के धिये ३ बस्ते धिरते धिनेमा हैं (२ बिहार में तथा १ राजस्थान में)। यह धिमिध्र धाग्रक खानों में मुधन धिनेमा धिल्लाते हैं। खानों में मनोरंजन कलध तथा रेडियो भी हैं। उपमोग की बस्तुधों के धिये एक बल दुकान धी है जिसमें सस्ते धामों पर बस्तुएँ धिल जाती हैं। धाहाठों में धाक सखी उगाने के धिये बीज भी बाँटे जाते हैं। धीने के धानी की ध्यबस्था के धिये धिधि हाथ १ धुरे बिहार में तथा ४ धाग्र में बनाये गये हैं। धाग्रक खान धामिकों को धनुमोधित धीजना के धाधार पर धुधों का धिमिग करने पर उपदान धिया जाता है। इसके धन्तर्गत ११ धुरे बिहार में तथा ८ धाग्र में बनाये गये हैं तथा ४ धुरे राजस्थान में बनाये जा रहे हैं। उन क्षेत्रों में जहाँ धानी का धमान है बहा दुकों हाथ धानी पहुँचाया जाता है। धुर्बटना से धमिक की धृधु पर उमकी धिबवा एक बच्चों को विसीय सहायता इस प्रकार की जाती है (१) धिधवा को २ बर्ष के धिये १० ६० प्रति माह का मला (२) स्कूल जाने जाने प्रत्येक बच्चे को ३ बर्ष तक १ ६० प्रति माह की धाधधृधित।

कोसार की धीने की खानों में धीर धाग्र खानों में बस्त्याण कार्य — धीधूर में कोसार की धीना धाधों में कई बर्षों से कस्त्याणकार्य एक संघठित स्तर पर हो रहा है। इसके धन्तर्गत धि-धुस्क ध्यापक स्वास्थ्य सेवायें मुक्त धातृत्व धित धूह धमान धिता ब मनोरंजन की सुविधाएँ धादि की ध्यबस्था है धिनके धिये उपदान भी प्रदान धिया जाता है। धाक सुविधाधों से धुक्त एक हृधधाम ४६ धाठधामाएँ, १३ धाध धाठधामाधयें १३ मनोरंजन के कलध धिनमें रेडियो धाधनातय ब धुस्तकासय धादि हैं एक कंस्टीन धार धातृत्व धित धूह धीन धिधुधुधों तथा ३ सहाधी मंडारों की ध्यबस्था है। कस्त्याण कार्यों को संघठित करने के धिये एक केध्रीय कस्त्याण समिति भी बना की गई है।

हठी धीना खानों में धक सुविधाधों में धुक्त एक हृधधाम एक कंस्टीन एक धमान मंडार, एक सहाधी मंडार तथा धाग धमिधयों के धिये एक दुकान की ध्यबस्था की गई है। धिधुधूह मनोरंजन की सुविधाधयें बमरे के धीधर ब मंडान के धीन धुक्त धिनेमा धादि की सुविधाधयें भी हैं। धीगधीन की ७६ खानों में धम धूरी धारा १६१७ में एक धाध की गई धी। इससे पता चलता है कि धिमिग धी

मुविषायें तो सभी मँगनीज खानों में प्रदान की जा रही है परन्तु मनोरंजन शिला व यातायात की मुविषायें केवल कुछ खानों में ही पाई जाती हैं। अधिकतर खानों में बियाम स्वयं भी पाये जाते हैं। सरकार ने अब कोयला और अभ्रक खानों की भाँति एक मँगनीज धमिक कल्याण निधि स्थापित करने के लिये विधान बनाने का निर्णय कर लिया है। परन्तु अभी इस विधान का उन समय तक के लिये स्विकृत कर दिया है जब तक कि मँगनीज का प्रभाव बढ नहीं जाता और उनके मूल्यों में स्थिरता नहीं पा जाती। कच्चे लोहे की ३९ खानों में भी एक बाँध की गई थी। इससे पता चलता है कि केवल ४ खानों में इस्पताल या चिकित्सालय हैं। ११ खानों में मनोरंजन की मुविषायें १० में शिला की मुविषाय ५ में क्वार्टीरें ११ में डिप्युट्ट तथा २३ में विधाम स्थल पाये जाते हैं। उनके के भूमिकों के लिये कल्याण मुविषायें बहुत कम हैं।

१९४६ के खान शिशुग्रह नियमों के अनुसार आ शिशुग्रह बनाये गये हैं उनकी संख्या १९४५ में कोयले की खानी को छोड़कर प्रत्ये खानों में १८३ थी। २६ और शिशुग्रह बनाये जा रहे थे। खानों में १९४४ के खान नियमों के अन्तगत पीने के पानी का प्रबन्ध प्रारम्भिक चिकित्सा महामता पीचालय विधाम इह प्रादि की व्यवस्था भी की गई है। बड़ी-बड़ी खानों में कोम्पेनें भी खोली गई हैं और कल्याण अधिकारियों की नियुक्ति भी की गई है।

मालिकों द्वारा किये गए कल्याण कार्यों का आलोचनात्मक मूल्यांकन —

यह देखा गया है कि जब तक मालिकों द्वारा किये गये कल्याण कार्य चलाने तक से तथा इस्पताल की भावना से किये गये हैं। उनके पीछे सेवा की सच्ची भावना का प्रभाव ही रहा है और जो कुछ भी कल्याण कार्य उन्होंने किये हैं वे धर्मिक से किये गये हैं। मालिकों द्वारा किये गये कल्याण कार्यों को अधिकतर धमिक दृष्टि की दृष्टि से देखते हैं। यह धँका की गई है कि यदि धमिक सभत नहीं रहेंगे तो जो भी कल्याण कार्य हो रहा है उसके बरमे उनकी मजदूरी कुछ प्रश तक कम हो जायगी। धमिक यह भी अनुभव करते हैं कि मालिक अधिकतर कल्याण कार्यों का उपयोग धमिक संघों के प्रभाव की कम करने के लिये तथा धमिकों को उनके दूर रहने के लिये करते हैं तथा ऐसे धमिकों के बिरउ जो घरों के सबस्य होते हैं, विरवाह की नीति बरतते हैं। जो कल्याण कार्य ऐसी बरमे की भावना से किए जाते हैं उनके अन्ततः फलदा ही दुरे परिणाम निकलते हैं। धम अनुसंधान समिति ने डा. बी० धार० सेट के इस सम्बन्ध में विचार उद्घुप्त किये हैं। उनके चर्चों में भारत में उद्योगपतियों की एक बड़ी संख्या धम भी कल्याण कार्यों को एक बुद्धि बसापूर्व निवेश (Wise Investment) न समझ कर निरर्थक पायित्व (Barren Liability) समझती है। १० की शिवालय ने भी ब्रिटिश एंड यूनिवर्स कांसेस के एक

प्रतिनिधि मंडल के विचार उद्धृत किये हैं जो १९२७ में भारत धारा ३० कि "जो कल्याण कार्य इस समय भारत में चल रहा है वह केवल एक भ्रम तथा जाल (Delusion and a Snare) है तथा कल्याण योजनाओं में थम मजदूरी के निर्माण को प्रसन्न कर दिया है।" थम अनुसंधान समिति ने यह भी कहा है कि मानिकों की एक बड़ी संख्या कल्याण कार्य की ओर उदासीन व अनुत्सुक व्यवहार रखती है और मानिक कहते हैं कि विधायक स्वतंत्रों की व्यवस्था हमलिये नहीं है क्योंकि कारखाने का सम्पूर्ण श्रेय ही भूमिकों का है। गीचालियों का प्रबन्ध हम कारण नहीं किया गया है क्योंकि भूमिक संघों में शील जाना भूमिक पत्रिका करते हैं और क्योंकि कैंटीनों व लेवों की सुविधाओं का भूमिक उपयोग नहीं करते इसलिये इनकी कोई धारप्रयत्न नहीं है। इसलिये समिति ने यह विचार व्यक्त किया है कि यह स्पष्ट है कि अब तक कल्याण कार्यों के बारे में मानिकों के निश्चित उल्लेखितियों को काबू टाक स्पष्ट नहीं किया जाया था तक इस प्रकार के मानिक उम मार्ग का अनुसरण नहीं करेंगे जिस पर उनके प्रयासों की ओर दूरदर्शी भाई चल रहे हैं। किन्तु यह भी उल्लेखनीय है कि कुछ जागरूक मानिकों ने कुछ बहुत प्रयत्न काय भी किये हैं। इसलिये हम धंधा का प्रमाणित होना या न होना विधिष्ठ मानिकों व परिस्थितियों पर निर्भर है। धनेज मानिकों ने यह स्वीकार कर लिया है कि कल्याण कार्य स्वयं उनके ही नाम के लिये हैं। यदि कुछ मानिकों को कल्याण कार्य लाभदायक प्रतीत होना है तो यह कोई कारण नहीं है कि भूमिक कल्याण कार्य के जापू होने पर सका प्रकट करे धनका धारण करे, विधेयकर जबकि यह योजना दोनों पक्षों के लिये सामप्रद है। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि कल्याण कार्यों के प्रशासन में समस्त अधिकार मानिकों के ही हाथ में नहीं होने चाहिये अपितु कर्मचारियों का भी पर्याप्त रूप में प्रतिनिधित्व होना चाहिये।

समाज सेवा संस्थाओं द्वारा कल्याण कार्य —

अनेक समाज सेवा संस्थाएँ भी कल्याण काम के क्षेत्र में उपयोगी कार्य कर रही हैं। वे मानिकों और भूमिकों दोनों की इस क्षेत्र में सहायता करती हैं और स्वयं भी स्वतन्त्र रूप से कार्य करती हैं। ऐसी संस्थाओं का उदाहरण निम्नलिखित हैं — बम्बई समाज सेवा मीम जो "सरवेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी (Servants of India Society) द्वारा प्रारम्भ की गई थी तथा मन्गल व बंजाल की धर्म्य इसी प्रकार की और मीम सेवासदन समितियाँ, बम्बई प्रैसीडेंसी महिला परिषद्, मादुरा हिन व बाल कल्याण परिषद्, 'वाई० एम० मी० ए०', बलिन बर्ब संघ, मित्रन समिति तथा धर्म्य का प्रचारक समितियाँ आदि। मर् १९२८ में बम्बई समाज सेवा मीम ने दो जागरूक मिल मानिकों को इस बात के लिये प्रेरित किया कि मिल के कम धारियों के लावार्ब जो दो कर्मचारों संस्थान जापू से उनका प्रबन्ध और संघटन

इस लीग को ही सौंप दिया जाये। इस बम्बई समाज सेवा लीग ने जिससे स्वर्णिय एन एम जोशी का सम्बन्ध था कई कार्यों को चलाया। उदाहरणार्थ रात्रि पाठ-शाखाओं द्वारा बनता है शिक्षा का प्रचार, अनेक पुस्तकालय तथा मैजिक लान्टेन की सहायता से व्याख्यान सत्रों के लिये स्काउटिंग जन स्वास्थ्य की वृद्धि धम-धम के लिए खेल तथा मनोरंजन धर्मिकों को बुर्बटपार्श्वों के समय अतिपूर्ति बिलाना सहाकारी धान्दोलन को विस्तृत करना आदि। बम्बई व पुना की सेवासदन समितियों ने महिलाओं व बालकों के लिये सामाजिक शैक्षिक तथा चिकित्सा सम्बन्धी कार्य किये हैं। साथ ही समाज सेवकों को प्रशिक्षण भी दिया गया है। बंगाल के 'महिला संस्थान' (Women's Institute) ने गाँवों में जाकर शिक्षा तथा जनस्वास्थ्य के कार्य को चलाये के लिए 'महिला समितियाँ' स्थापित की हैं। इन सभी संस्थाओं के कल्याण कार्यों का वास्तविक महत्त्व इस बात में है कि इनसे कार्य करने तथा रखने की परिस्थितियों के उच्च स्तर स्थापित हो जाते हैं जो प्रशिक्षित होने के पश्चात् धर्म में कानून द्वारा निर्धारित न्यूनतम स्तर को भी ऊँचा उठाने में सहायक होते हैं।

नगरपालिकाओं द्वारा श्रम कल्याण कार्य —

बुध नगरपालिकाओं द्वारा कर्मचारियों के कल्याण हेतु विशेष कदम उठाये गये हैं। कानपुर मद्रास तथा कलकत्ता नियम तथा धर्मनगरपालिका सहाकारी साक्ष समितियाँ चलाती हैं। बम्बई नियम ने एक विशेष कल्याण विभाग के गिरीजन में कल्याण कार्यों का एक आत सा फौजा रक्खा है। उसके अन्तर्गत १२ कल्याण केन्द्र हैं जो साधारणतः मित कर्मचारियों के 'बालों' में स्थित हैं। इनमें कर्मचारियों के लिए कमरे के भीतर एवं भोजन के खेल शिक्षा सुविधाएँ अशिक्षित प्रदर्शन आदि की व्यवस्था है। एक नर्सरी पाठशाला तथा एक मातृत्व हित केन्द्र भी चलाये जा रहे हैं। प्रत्येक क्षेत्र में सहाकारी समितियाँ स्थापित कर दी गई हैं। मद्रास नियम धर्म क्षेत्रों में बम्बई शिक्षा के लिये अनेक रात्रि पाठशाखाएँ चलाता है। धर्मिकों के बालकों के लिए एक धिम्बु इह भी है और नियम की कार्यशाला में एक कैंटीन भी चालू है। धिम्बु इहाँ का प्रबन्ध योग्य गर्ल तथा दो महिला सेविकाओं के हाथों में है। बालकों के लिये खेल के मैदान पालनों व सिस्त्रीयों स्नान घुँवों आदि का भी प्रबन्ध है। बच्चों को बिना भूम्य भोजन व दूध दिया जाता है तथा एक नर्सरी कक्षा का भी प्रबन्ध है। निकम की पाठशाखाओं में पढ़ने वाले निर्बल बालकों को बीपहर का भोजन मुफ्त दिया जाता है। कलकत्ता नियम भी रात्रि पाठशाखाएँ चलाता है। धर्म ही में दिल्ली में बम्बई शिक्षा की सुविधाएँ प्रारम्भ की गई हैं। नवम्बर सारी नगरपालिकाओं और निगमों में प्राथीडेन्ट फण्ड योजना चालू है। कानपुर, धर्मनगरपालिका, मद्रास कलकत्ता सन्तत तथा अहमदाबाद नगरपालिकाओं और निगमों में साधारणतः जन धर्मिकों के लिए जो प्राथीडेन्ट फण्ड योजना के सवस्त होने की गर्तें पूरी नहीं करते प्रवकाश प्राप्ति धन देने की व्यवस्था भी है।

शमिक संघों द्वारा धर्म कल्याण कार्य —

धमिक संघों द्वारा किये गये कल्याण कार्यों का वृद्धि हुए स्पष्ट बात हो जाता है कि धमिक संघों के कार्य व क्षेत्र के सीमित होने के कारण उनके कल्याण कार्यों में अनेक रूकावटें पड़ती हैं। यह समझ आता है कि धमिक सब केवल मामलों में काम देने के साधन मात्र हैं तथा परस्पर सहायता में हो सकने वाले सामुदायिक कार्यों को उपेक्षित कर सकते हैं। महाप्रशासन मूर्ती रूपका मिस मजदूर परिषद्, काणपुर की मजदूर बंधा तथा इन्दौर की मिस मजदूर भूतिघन जैसे केवल कुछ ही धमिक संघों के धर्म कल्याण कार्यों के लिए करम उठाये हैं।

महाप्रशासन की मूर्ती रूपका मिस मजदूर परिषद् कल्याण कार्यों पर अपनी धार का ६० प्रतिशत व ७० प्रतिशत तक व्यय करती है। यह राशि महत्त्व वाली सहायक रूपमें ठक होती है। इन कल्याण कार्य व अन्तर्गत तीन दिन की तथा तीन रात की पाठ्यशास्त्र धमिक रूप की महिलाओं के लिए एक धार्मिक पुस्तक बोर्डिंग हाऊस मदुर्को के लिए दो सम्पन्न कक्षा, १६ बाचनालय व पुस्तकालय २७ गारी रिक शिक्षा व समाज केन्द्र १ व्यापारशास्त्राएँ धारि बने हुये हैं। छात्रवृत्तिया भी प्रदान की जाती हैं तथा हर्षों के काम में व्यवसायिक प्रशिक्षण देन की भी योजना है। इस उद्देश्य के लिए लगभग २५ विधेय निरीक्षण तथा कुछ महिला कमचारियों की नियुक्ति की गई है। ये निरीक्षक प्रतिदिन धमिकों के सम्पर्क में आते हैं तथा उनके रहने के क्षेत्रों में जाकर उनकी कठिनाइयों को सुनकर व सहायता करते हैं और धमिकों के अंतर्गत धीरे सामाजिक स्तर को ऊपर उठाने के हेतु उनके जीवन के बहुउद्देशीय पहलुओं पर ध्यान देते हैं। १९५७ से धर्म कल्याण भी संघटित किये गये हैं जिसकी संख्या २५ है। यह परिषद् विभिन्न बस्तियों में पांच विधिविभाग चलाती है जिनमें एक एमोर्बिक, एक होम्योर्बिक व तीन धार्मिक हैं। साथ ही एक मातृत्व हित-मूह भी है। परिषद् द्वारा एक कमचारी सहायिका वक भी नियुक्त किया गया है। इस वक से ३३ धार्मिक सचिवियां १० साल समितिदा धीरे १० संभ्रमण समितिदा सम्बन्ध (Affiliated) हैं। अपने सदस्यों को परिषद् कानूनी सहायता भी देती है।

काणपुर की "मजदूर संघ" एक बाचनालय, एक पुस्तकालय तथा एक विधिविभाग धमिकों के लिए चलाती है। कुछ देसके कमचारी संघों में सहायिका समितियां तथा अनेक प्रकार की विधियां विद्यमानों के लिये स्थापित की हैं, उदाहरणार्थ कानूनी सहायता मृत्यु तथा अक्षय व समय सहायता बेरोजगारी व बीमापी लाभ तथा जीवन बीमा धारि। उत्तर प्रदेश में भारतीय धर्म संघों ने लगभग ४० वक छोले हैं जिनमें अनेक प्रकार के कल्याण कार्य शामिल हैं। कहा जाता है कि भारतीय राष्ट्रीय धमिक संघ कांग्रेस की अग्रम शाखा ने एक समाज कल्याण संस्थान धरकारी सहायता में प्रारम्भ किया है जहाँ प्रत्येक धर्म शाखा के कुछ धमिकों को नायायिक व कल्याण कार्यों में प्रशिक्षित करने की व्यवस्था है। इन्दौर

के मित मजदूर भय भय ने एक भय-कल्याण केन्द्र खोला है जो तीन विभागों में कार्य कर रहा है। बाल मन्दिर, कन्या मन्दिर तथा महिला मन्दिर। बाल मन्दिर में ४ बर्ष से लेकर ११ बर्ष की आयु तक के बालकों को लिखना पढ़ना गिनना प्राथमिक सिखाया जाता है तथा वेनों घोर शारीरिक शिक्षा पर भी ध्यान दिया जाता है। बालकों के लिये खेल का मैदान भी है। नृत्य संघीत तथा सामाजिक उत्सव भी प्रायोजित किये जाते हैं। कन्या मन्दिर में श्रमिक बर्ष के परिवारों को ऐसी लड़कियों को जिन को आयु १ से १६ बर्ष तक की होती है प्रारम्भिक शिक्षा दी जाती है तथा सिनाई, बुनाई कटाई प्राथमिक कार्य सिखाये जाते हैं। स्वास्थ्य विज्ञान व बच्चों की देखभाल का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। महिला मन्दिर में भी इसी प्रकार की शिक्षा महिला श्रमिकों को दी जाती है। इसके प्रतिरिक्त सच एक पुस्तकालय एक नाचमासय तथा रात्रि कक्षाएँ भी चलाता है घोर मजदूर क्लबों में कमरे के भीतर एवं मैदान के वेनों को भी व्यवस्था की गई है।

किन्तु छावणालय श्रमिक संघों ने कल्याण कार्यों में प्राथमिक शक्ति नहीं ली है। इन कार्यों में सबसे बड़ी बाधा यह है कि श्रम संघों के पास घन घोर शोष नेताओं का प्रभाव है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि श्रमिक संघ कल्याण कार्यों को चलायें तो वे अपनी स्थिति को विशेष रूप से दृढ़ कर सकेंगे।

कल्याण कार्यों के कुछ विशेष पहलू

कैंटीनें — (Canteens)

छारे सभार में अब इस बात को मान लिया गया है कि हर शारीरिक संस्था का कैंटीन एक आवश्यक भाग है। ये श्रमिकों के स्वास्थ्य कार्यक्षमता तथा उनके हित की दृष्टि से प्राथमिक लाभदायक होती हैं। एक शारीरिक कैंटीन के उद्देश्य हैं—श्रमिकों को प्रचुर व प्रस्तुतित आहार के स्थान पर प्रस्तुतित आहार उपलब्ध करना सस्ता तथा स्वच्छ भोजन प्रदान करना और काम करने के स्थान के निकट ही विभाम करने का व्यवहार देना कैंटीन में कई बच्चे काम करने के पश्चात् उनकी काम के स्थान से घाने जाने की कठिनाइयों को दूर करना और इस प्रकार उनके समय की बचत करना भोजन एवं लाघ सामग्री प्राप्त करने में जो कठिनाइयाँ होती हैं उनको दूर करना प्रादि। इसके प्रतिरिक्त कैंटीन हाथ एक ऐसा मिलन स्थान प्राप्त हो जाता है जिसमें कारखाने के हर विभाग के श्रमिक परस्पर मिल सकते हैं तथा जहाँ बहुत न केवल जाना जाते हैं बरन् बातचीत भी कर सकते हैं और विचार करते अपनी शिकायत दूर कर सकते हैं। इस प्रकार कैंटीन का श्रमिकों के प्रथम विश्वास तथा हीत पर शक्ति प्रभाव पड़ता है। कैंटीनों की स्थापना की घोर ध्यान देना राज्य का विशेष कार्य माना जाना चाहिये और कैंटीन का चलायाना श्रमिकों द्वारा एक राष्ट्रीय विशेष समझना चाहिये।

दोष्य और अमरीका के देशों के श्रमिकों में कैंटीनें प्राथमिक लोकप्रिय हैं

तथा ये पोपसु व घाहार विद्या पर प्रयोग करने वाली प्रयोगशालायें मानी जाती हैं। ये औद्योगिक कम्पाण के एक साधन व रूप में निरन्तर प्रगति कर रही हैं। ब्रिटेन में सन् १९३० के फ़ैक्टरी अधिनियम व अन्तर्गत मामिलों को भोजनालय व तिए स्थान देना आवश्यक है। इसके प्रतिरिक्त बड़ा फ़ैक्टरी निर्देशकों को अभी हाल ही में विद्येप कारखानों में उचित तथा अच्छी कैंटीन बनवाने की आज्ञा देन के अधिकार दिये गये हैं। किन्तु भारत में अधिकों तथा मामिलों ने कैंटीनों द्वारा की गई मूस्यवान सेवाओं को नहीं पहचाना है। अधिकों तथा मामिलों में कैंटीनों का नाम नहीं को गई है तथा जहाँ भी वे अधिकतर टेम्पेरायें द्वारा बनाई जाती हैं जो निजी पाब की दुकानों के समान भी अच्छी नहीं होती हैं। ऐसा कैंटीनों में तो सस्ता और अच्छा भोजन ही मिलता है और न ही उनका वातावरण स्वच्छ, स्वस्थ तथा आर्यक होता है। टेम्पेरायें अधिकों के हित की धनसा धपने साम की ओर अधिक ध्यान देते हैं। परिणामस्वरूप दोपहर के भोजन को अधिक धपने साथ साना अधिक उचित समझते हैं तथा कैंटीनों अधिकों में लोकप्रिय नहीं हो पाई है। अधिकों में अधिक इस बात में भी अनभिज्ञ हैं कि उचित तथा पापक घाहार का उनके स्वास्थ्य पर क्या साधप्रव प्रभाव पड़ता है। इसलिये औद्योगिक संस्थानों में अच्छी कैंटीनों लाती जानी अत्यन्त आवश्यक है।

एक कैंटीन को सफलतापूर्वक चभान के लिये कुछ विशेष बात होनी आवश्यक है। कैंटीन खुली साफ़ तथा स्वच्छ होनी चाहिए और फ़ैक्टरी के अन्दर होनी चाहिए। उसमें मित्रता का वातावरण पैदा करने के लिये पूरा प्रयत्न होना चाहिए जिससे अधिक वास्तव में शांति व विश्वास का अनुभव कर सकें। कैंटीन को साम के आहार पर नहीं चलाना चाहिए तथा जहाँ बनने वाली बस्तुएं अच्छे प्रकार की होनी चाहिए। मामिलों को उनके लिये प्रायिक सहायता लेनी चाहिए जिससे कैंटीन सस्ते मूस्य पर बस्तुएं बेच सकें। कारखाने के प्रबन्धकर्ता भवन में कुनिर्मा तथा चीनी के बर्तन आदि भी बिना मूस्य के द सकते हैं। कैंटीन मैनेजर तथा अन्य कर्मचारियों का बेहतर कारखाने के सामान्य वेतन हित में सम्मिलित किया जा सकता है। यह उम्मेदनीय है कि कुछ मामिलों ने जैम टाटा कोटा और "स्पाठ कम्पनी के देहली बपड़ा मिम्ब व बम्बई में सीकर ब्रदम के तथा "भारतीय आय बाजार विस्तार बोर्ड ने धपने कर्मचारियों के लिये बहुत अच्छी कैंटीन की व्यवस्था की है। अनुभव द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि जो कैंटीन केवल साथ धरित करने के लिये नहीं धपितु उचित मूस्यों पर स्वास्थ्यकर भाजन देने के लिये बनाई जाती है अधिक इन अच्छी कैंटीनों के उपयोग करने के विरोध में नहीं होते हैं। इसलिये मामिलों की यह धापति उचित मया है कि अधिकों में कैंटीन उपयोग करने की प्रकृति अभी विकसित नहीं हो पाई है तथा वे धपने-धपन करें से भोजन साथ साना अधिक पसन्द करण है। यह भी उम्मेदनीय है कि भारत सरकार ने औद्योगिक कैंटीनों के महत्त्व को पूरात स्वीकार कर लिया है।

१९४८ के कारखाना अधिनियम के अनुसार राज्य सरकारों को यह अधिकार दिया गया है कि वे तमाम ऐसे कारखानों में जहाँ २५० या इससे अधिक श्रमिक काम कर रहे हों कंस्टीनें स्थापित करने के नियम बना सकती हैं। इन नियमों में निम्न बातें होनी चाहियें—कंस्टीनें स्थापित करने की तिथि निर्माण स्थान मेक-कुर्सी तथा सामान का स्तर घादि भोजन व उसके मुख्य प्रबन्धकर्ता समिति का संविधान तथा इस समिति में श्रमिकों का प्रतिनिधित्व घादि। राज्य सरकारों ने इस सम्बन्ध में नियम बना दिये हैं तथा उन तमाम कारखानों में जिनमें २५ या इससे अधिक श्रमिक कार्य करत हों कंस्टीनें की स्थापना अनिवार्य कर दी गई है।

शिशुगृह — (Creches)

जहाँ तक शिशुगृहों का प्रश्न है भारत सरकार ने कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत राज्य सरकारों को कुछ नियम बनाने के अधिकार दिये हैं। राज्य सरकारें यह नियम बना सकती हैं कि ऐसे तमाम कारखानों में जहाँ २ या इससे अधिक महिलाएं काम करती हैं उनके ६ वर्ष से कम के बालकों के लिये एक प्रत्येक उचित कमरा सुरक्षित कर देना चाहिये। ऐसे कमरों के स्तर के लिये घोर बच्चों की देख रेख के लिये भी नियम बनाये जा सकते हैं। बम्बई, मध्य प्रदेश उत्तर प्रदेश मद्रास बंगाल जैसे अधिकांश राज्यों ने इस अधिकार के अन्तर्गत नियम बनाये भी हैं। उत्तर प्रदेश में मानुस हित लाभ अधिनियम के अन्तर्गत उन तमाम कारखानों में जिनमें ५० या इससे अधिक महिला श्रमिक कार्य करती हैं एक शिशुगृह स्थापना आवश्यक है। परन्तु भय अनुसंधान समिति के अनुसार केवल कुछ कारखानों को छोड़कर अधिकांश में शिशुगृह उचित प्रकार से स्थापित नहीं किये गये हैं। साधारणतः शिशुगृह कारखानों के उपेक्षित स्थानों पर होते हैं तथा कार्य करने के स्थान से भी दूर होते हैं। उनमें बालकों को बहसाने के लिय बिलीने तक नहीं होते तथा बच्चों की देख-रेख के लिय भी कोई व्यक्ति नहीं होता। यदि कोई प्राया या नम होती भी है तो वह बालकों की आवश्यकता की धोर पूर्ण रूप से ध्यान नहीं देती है। साधारणतः इस कार्य के लिये नर्सों को कम वेतन मिलता है। अिन्हे पच्छे शिशुगृह कहा जा सकता है जहाँ भी बच्चों की देख रेख मनी प्रकार नहीं होती। पालने बहुत कम होते हैं तथा बच्चे जमीन पर घुस म पड़े रहते हैं। घरर कोई अधिकारी या समिति निरीक्षण करती है तो ज़परी दिलावट ता नापी कर दी जाती है परन्तु फिर भी स्थिति सन्तोषजनक नहीं बिलाई पड़ती। इस प्रकार जहाँ नियम लागू भी किये गये हैं जहाँ यह देखा गया है कि केवल नियम क शास्त्री को निमाया गया है और उनके पीछे किसी हुई कुल बाबता की उपेक्षा की गई है। अनेक मानिक शिशुगृहों की स्थापना के उत्तर

ने के लिय यह कह देते हैं कि उनक कारखान म ऐसी स्थियां काम

में

। अधिवाहित है या बिचपा है या माता बनन क योग्य धानु मे

लये शिशुगृहों में आवश्यकता नहीं है।

बहुत अधिक

मानाओं की कार्य-सुचालना

निर्भेह इस बात पर बहुत निर्भर करती है कि उन्हें अपने बच्चों की घोर से चिन्ता न हो और यह विश्वास हो कि उनके बच्चे सुरक्षित हैं तथा उनकी उचित प्रकार से देखभाल हो रही है। जब सिधुगुह नहीं होते हैं तब स्त्रियाँ अपने पास काम के समय भी मशीनों के निकट अपने बच्चों को रखती हैं। यद्यपि हमने भी यही बात यह है कि उन्हें अधिक विमाऊर धर पर ही छोड़ देती हैं। किन्तु अब जैसा कि वस्थाएँ कार्यो के अन्तर्गत उल्लेख किया गया है अजिदाम मिमों में सिधुगुहों को व्यवस्था कर ही गई है। मधुरा मिला बलिचम एण्ड कर्नाटक मिल्स देहमी कपडा मिला आदि ऐसे कुछ स्थानों पर सिधुगुहों की अत्यन्त उन्नतपजनक व्यवस्था है। इन मिसों में बच्चों के लिये सब सुविधाओं से युक्त सिधुगुह हैं। बच्चों के लिये खेल का भी प्रबन्ध है। बानों तथा बामाम में सिधुगुहों की व्यवस्था नहीं है और कुछ स्थानों पर अत्यन्त अत्यन्तपजनक व्यवस्था है। सन् १९४८ के कारखाना अधिनियम में तथा सानों में सिधुगुहों की स्थापना के लिये कुछ निश्चित स्तर बना दिये गये हैं। यह धारा भी जाती है कि सिधुगुहों की उन्नति के लिये पर्याप्त पग उठाये जायेंगे।

मनोरंजन सुविधाएँ (Recreational Facilities)

मनोरंजन की सुविधा जैसा श्रम अनुसंधान समिति ने भी कहा है बहुत ही महत्वपूर्ण और उपयोगी होती है। प्रजाती धमिकों को मिठा व प्रविद्यण देन में भी इनका काफी महत्व है। कारखानों और तानों में अधिक घंटे काम करने में जो ऊब पकान और शारीरिक स्थािति उत्पन्न हो जाती है उनका मनोरंजन सुविधाएँ कम कर सकती हैं तथा धमिकों के जीवन में प्रसन्नता और शांति माने में सहायक सिद्ध होती हैं। साधारण धीमोगिक धमिक बूम शहर तथा गर्मी में परिपूर्ण वातावरण में कार्य करता है तथा ऐसे भीड़ भाड़ वाले अत्यन्त मनोरंजन में रहता है किन्हीं काम कोठरी कहना अति-योगिक न होना। इनका परिणाम यह होता है कि अधिकांश धमिक कई दुर्गुणों के चिकार हो जाते हैं। अब तब धमिकों को इन दुर्गुणों से दूर नहीं रखा जायगा तथा उनके मनोरंजन की व्यवस्था नहीं की जायेगी, जिससे वे अपने कामों के लिये समय को अच्छे वातावरण में व्यतीत कर सकें तब तब इन लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा करने में कोई भी युक्ति सफल नहीं हो सकती। मनोरंजन की सुविधाएँ जैसे अतिरिक्त प्रदान देखिये तब आदि इस उद्देश्य की पूर्ति में सहायक हो सकते हैं। धनक बुनू गों को जैसे शराब जुमा तथा बिपीपकर बेसाधुति को जो श्रम क्षेत्रों में स्त्री व पुराना की संस्था में सममानता हान के कारण काफी पाई जाती है दूर करने में भी मनोरंजन सुविधाएँ सहायक होती हैं। उद्योगों में अधिक संशोधन हो जाने से तथा कार्य के घंटों में बनी हो जाने से धमिकों का समय अब पत्रों को देनेगा अधिक घामो रहता है। यह बात महत्वपूर्ण है कि इस शाली समय का बिना प्रबन्ध उपयोग किया जाता है। यह कहा जाता है कि किसी भी देश की सम्पदा तथा कार्य-शक्ति की कमी नहीं है कि उस देश में शाली समय का उपयोग बिना प्रबन्ध बिना जाता है। कार्य दिन की समाप्ति पर

तथा बापहर को विधाम क बटे प्राधि में जो खाली समय रहता है उसमें मनोरंजन सुविधाओं की व्यवस्था से श्रमिकों के स्वास्थ्य में उन्नति होगी तथा उनके ज्ञान में भी वृद्धि होगी ।

१९२४ के अन्तर्राष्ट्रीय धम सम्मेलन ने श्रमिकों के प्रबन्धन के समय का उपयोग करने के हनु कुछ सुविधाओं में वृद्धि करने के सिवा एक सिफररिफ भी की । इस सिफररिफ में उल्लेख किया गया है कि "धरने प्रबन्धन के समय में श्रमिकों को अपनी व्यक्तिगत रुचि के अनुसार शारीरिक मानसिक तथा नैतिक शक्तियों का स्वतन्त्रतापूर्वक विकास करने का अवसर मिलता है । इस प्रकार का विकास सम्पत्ता की दृष्टि से पर्याप्त महत्वपूर्ण है । श्रमिकों के प्रबन्धन के समय का सबसे अच्छा उपयोग यह हो सकता है कि श्रमिक के लिये उसकी शक्तियों के अनुसार कुछ न कुछ साधनों की व्यवस्था की जाये । इस प्रकार श्रमिक पर उसके साधारण कार्य से जो मार पड़ता है उसमें भी कुछ कमी होगी और इससे उसकी उत्पादन क्षमता बढ़ जायेगी तथा उत्पादन अधिक होगा । इन प्रकार से यह सब साधन कार्य के घाट बन्दों में श्रमिक से अधिक से अधिक अच्छा कार्य देने में सहायक हो सकते हैं ।

भारत में राज्य द्वारा धरबा मामिकों द्वारा मनोरंजन सुविधाओं पर बहुत कम ध्यान दिया गया है यद्यपि जैसा कि 'मामिकों के कल्याण कार्य' के अन्तर्गत उल्लेख से स्पष्ट है कई स्थानों पर धरके कार्य भी किये गये हैं । सरकार ने भी अनेक राज्या के धम कल्याण केन्द्रों में मनोरंजन सुविधाओं की व्यवस्था की है । कुछ मामिक मिकायत करत हैं कि श्रमिकों में सब लोकप्रिय नहीं है । इसका कारण यह है कि इन केन्द्रों में या तो अच्छा प्रबन्ध नहीं होता या इनमें टैनिश डिस्प्लेज प्राधि जैसे प्राबुतिक बसों की व्यवस्था होती है जिन्हें खेतना श्रमिकों की क्षमता के बाहर है । जहाँ जहाँ भी उचित मनोरंजन की व्यवस्था है तथा प्रबन्ध ठीक है वहाँ मनोरंजन सुविधाएँ श्रमिकों तथा उनके परिवारों में बहुत लोकप्रिय सिद्ध हुई हैं । धम अनुसन्धान समिति के विचार में मनोरंजन सुविधाओं को मामिकों के एक ऐच्छिक कार्य के रूप में माना जाना चाहिये क्योंकि उनका सिवा कानून द्वारा कोई नियम बनाना कठिन है । मनोरंजन की व्यवस्था करने में अधिक साधन नहीं पातीं लेकिन श्रमिकों की कार्य-क्षमता तथा मनावृत्ति पर इसके प्रभाव बहुत अच्छे पड़ते हैं ।

बिबिस्ता सुविधाएँ — (Medical Facilities)

बिबिस्ता सुविधाओं और स्वच्छ वातावरण का जीवन में अत्यधिक महत्व है । राज्य धम प्रायोग ने इस बात पर जोर दिया था कि औद्योगिक मजदूरों के स्वास्थ्य का महत्व स्वयं उनके ही लिय नहीं है यद्यपि जगका सम्बन्ध साधारणतः औद्योगिक विकास के प्रगति में भी है । बीमारी तथा श्रमिकों की शारीरिक दुर्बलता अनेक दुराइयों का कारण बन जाती है । इसी के कारण अनुपस्थिति होती है नैतिकता गिर जाती है तथा समय भी पाबन्दी नहीं हो पाती । परिश्रामस्वरूप उत्पत्ति कम होती है काम बिबद जाता है तथा मामिक मजदूरों के सम्बन्ध खराब हो जाते हैं ।

भारत में भूमिका के स्वास्थ्य पर कई बातों का बुरा प्रभाव पड़ता है जैसे स्वास्थ्य बलबाधु में काम करना कारखानों में प्रस्वास्थ्यकर दवायों गम देगों के रोग और भूमिकों की प्रज्ञानता व निर्भरता के कारण बीमारी काम करने के अधिक घट कम मजदूरी तथा उनकी प्रज्ञानिता जिसके कारण व गाबा में घात है तथा एहदों के बीच का अपने स्वास्थ्य व लिये अनुकूल नहीं पाते भानि। इमनिय थ्रमिकों के लिये देश में चिकित्सा सुविधाओं की व्यवस्था करना एक महत्वपूर्ण कार्य है।

वहीं सुविधाएं भी अपर्याप्त हैं। यहाँ यह भी प्रश्न उठता है कि चिकित्सा सुविधाओं के लिये धन्य के बहुत करने का उत्तरदायित्व कहीं तक मानिकों पर होना चाहिये। इस बात को सब मानते हैं कि यह कृतव्य मानिकों का ही है कि वह अपने धमिकों के ऐसे धारीक कर्णों का जो प्रयत्न रूप में धौधौमिक रोजगार के कारण उत्पन्न होते हैं निवारण करें। दूसरी धोर समाज का भी यह कृतव्य है कि धौधौमिक रोजगार तथा इसके उत्पन्न हुई बुराइयों का उत्तरदायित्व कुछ अपने ऊपर भी स धीर

इस प्रकार समाज पर भी इस बात का भार होना चाहिये कि वह कुछ मोमा तक चिकित्सा सुविधाओं की लागत बहुत कने। सरकार व इस बात को माना है धीर सब कमचारी राज्य बीमा योजना सामू हाने के पदचान् चिकित्सा महायत्ना मानिकों का उत्तरदायित्व न रहेगा। परन्तु धम धनुसपान धमिनि ने कहा है कि चिकित्सा सुविधाएं प्रदान करना मुख्यतः राज्य का उत्तरदायित्व होना पर भी इनम मानिकों तथा धमिकों को स्वयं भी महायत्ना करनी चाहिये। कुछ एनी चिकित्सा सुविधाएं भी हैं जो कबल मानिका के उत्तरदायित्व में ही भाती हैं बिधपकर पुषटनायो धपरा धाकस्मिक बीमारियों के समय प्राथमिक चिकित्सा महायत्ना की व्यवस्था एम्पुनेस की व्यवस्था धौधौमिक स्वरुद्रता के स्तर को बनाये रखना धानि मानिकों का ही कार्य है। भारत में कानून द्वारा ता मानिकों पर कबल इस बात का उत्तर

धौर इसके लिय कंस्टडी में कुछ सामान रख। परन्तु यह देखा गया है कि इस सामान की उचित व्यवस्था नहीं हाठी धौर धमर सामान होता भी है तो धावदपकता पड़ने पर उसका उपपान नहीं किया जाता। धनेक स्वार्थों पर एक भी एया व्यक्ति नहीं होता जिसको इस बात का प्रतिपाल दिया गया हो कि वह घटना-स्थल पर तुरन्त प्राथमिक चिकित्सा महायत्ना के सके। इस प्रकार कानून की यह धापयें उचित प्रकार से कार्य रूप में परिणत नहीं की गई हैं। किन्तु फिर भी जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है धनेक मानिकों ने धमिकों के लिये हस्तगत तथा चिकित्सामया की व्यवस्था की है यद्यपि उनमें से धधिकीया की दया नन्तोपजनक नहीं है। स्वास्थ्य निरीक्षण तथा विकास समिति (भार समिति) की विचारियों के परिणामस्वरूप देश में चिकित्सा व्यवस्था की उपरि भी धौर कुछ पय उठान गय दे। कर्मचारी राज्य बीमा योजना में कारखाना धमिकों के लिये बीमारी में रोजगार से उत्पन्न

शक्ति में तथा प्रयत्न के समय विकिरण सुविधायें दी गई हैं। इन सुविधायों से भी शक्ति के स्वास्थ्य में उत्पत्ति होनी चाहिये। केन्द्रीय सरकार ने एक औद्योगिक स्वास्थ्य विभाग समझ (Industrial Hygiene Organisation) तथा एक केन्द्रीय धम संस्थान (Central Labour Institute) की स्थापना भी की है जिन्होंने अनेक संकटग्रस्त उद्योगों में प्रत्येकण किया है। औद्योगिक कर्मचारियों को कस्याएं स्वास्थ्य तथा सुरक्षा कार्यों की शिक्षा देने के लिये तीन दोषीय म्यूजियम या प्रदर्शन-गृह खोले जा रहे हैं जिनमें से एक कानपुर में एक कलकत्ता में तथा एक कोयमुतूर में होगा। इस बात पर भी जोर दिया जा रहा है कि देश में औद्योगिक विकिरण के लिये एक अजिन भारतीय मंत्रिकम सचिव का भी विकास होना चाहिये।

नहाने धोने की सुविधाएं — (Washing and Bathing Facilities)

कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत यह प्रावश्यक कर दिया गया है कि उस प्रत्येक कारखाने में जहाँ ऐसा कोई काम हो रहा है जिससे शक्तियों का किसी हानिप्रय या गन्धी वस्तु से सम्पर्क होता है वहाँ शक्ति को पर्याप्त मात्रा में धोने योग्य जल तथा उसके प्रयोग के लिये उचित स्नान एवं सुविधायें दी जानी चाहिए। लक्ष्यम सारे कारखाने धोने के लिये जल प्रदान करत है परन्तु छात्रुन छोडा तथा लीनिये जो कि प्रावश्यक है नहीं दिये जाते। कई स्नानों पर नली वास्तिर्यो तथा शिलमशियों की संख्या पर्याप्त नहीं है। अजिन कुछ ही स्नानों पर धोने की सुविधायें पूर्णरूप से अस्तोपजनक हैं। कारखाने के भीतर नहाने की व्यवस्था बहुत कम मामिकों ने प्रदान की है यद्यपि य सुविधायें अत्यन्त प्रावश्यक है क्योंकि बीसा कि टायल धम धायोद का कथन है कि जो शक्ति भीड़ भाड के क्षेत्रों में रहते हैं उनके प्रावासों पर भी जोल धादि की सुविधायें अपर्याप्त हैं अत स्नान की सुविधायों से उनको काफ़ी आराम मिलेगा और स्वास्थ्य तथा कार्य-कुशलता में वृद्धि होगी। जानों में जहाँ स्नान की सुविधायें अपर्याप्त प्रावश्यक है वहाँ केजम कुछ जानों के मामिकों ने ही जानों के ऊपर स्नानगृहों की व्यवस्था की है। इस सम्बन्ध में अरिया कोयला क्षेत्र में टाटा की जानों का विशेषकर उल्लेख किया जा सकता है जहाँ पर १२ शक्ति एक साथ फुम्बारो म स्नान कर सकते हैं और पुइयों तथा शिवयों के स्नानगृहों का अलग अलग प्रबन्ध है। अर्य जानों में नहाने की सुविधायें अत्यन्त अस्तोपजनक हैं यद्यपि अज कोयला ज्ञान शक्ति प्रावास तथा सामाग्य कस्यास मिशि अधिनियम के अन्तर्गत इस सम्बन्ध में कुछ सुधार हो रहे हैं।

प्रीवीडेंट फण्ड —

प्रीवीडेंट फण्ड अथवा प्राप्ति धन तथा पैन्सन धादि अभाव सुरक्षा योजना के अन्तर्गत धाते हैं जिनका अथने अर्याम में विस्तारपूर्वक अध्ययन किया गया है। इस सम्बन्ध में जो कुछ कार्य मामिकों ने किये हैं उनका अरथन ऊपर किया जा चुका है।

शिक्षा की सुविधाएँ — (Educational Facilities)

भारत जैसे प्राथमिक देश में धर्मिकों और उनके बच्चों के लिये शिक्षा सुविधाओं की व्यवस्था करना एक महत्वपूर्ण समाज सेवा है। हमारे देश की जनक कठिनाइयों का मूल कारण धर्मिकों में शिक्षा का अभाव है। शिक्षा की आवश्यकता और महत्ता औद्योगिक विकास के समय बहुत होती है। क्योंकि उद्योगों की स्थापना के समय इन्हीं व्यवसाय से उद्योगों में जाने वाले धर्मिकों की संख्या बहुत होती है और उनको औद्योगिक तकनीक और कुशलता सीखनी पड़ती है। अथवा सामान्य शिक्षा की नींव अच्छी नहीं होती तो प्रशिक्षण में व्यय अधिक होगा और कठिनाई भी अधिक होती। भारत में इस समय विभिन्न प्रकार के कुशल धर्मिकों का अभाव है। यदि शिक्षा तथा प्रशिक्षण की ओर विशेष रूप से प्रयत्न किये जायें तब ही इस अभाव की पूर्ति हो सकती है। धर्मिकों की शिक्षा का उद्देश्य केवल अधिस्ता दूर करना तथा औद्योगिक कार्यकुशलता में योग्यता प्राप्त कराना ही नहीं है। शिक्षा का तात्पर्य केवल यह नहीं है कि मनुष्य को सिखाना पढ़ना और लिखावट समझना या आये। इसका उद्देश्य जीवन की समस्त बातों को सिखाना है जिनमें औद्योगिक सामाजिक तथा व्यक्तिगत बातें भी होती हैं। सांस्कृतिक जीवन के विकास तथा रहन सहन के स्तर में उन्नति के साथ साथ धर्मिकों की विचार शक्ति का भी विकास होना चाहिये और उन्हें यह जानना चाहिये कि अपने मंगलों को किस प्रकार बनाया जाता है तथा अपनी समस्याओं का समाधान करने के स्थानों पर कल्याण सुविधाओं की व्यवस्था करना आदि पर किस प्रकार विचार तथा कार्य किया जा सकता है। धर्मिक घर अपने कल्याण कार्यों के प्रवर्धन तथा उन्नति में अधिक सक्रिय भाग ले रहे हैं परन्तु कल्याण कार्यों के कुशल प्रयत्न में लिये शिक्षित व्यक्ति होने चाहिये। यह बात भी कि धर्मिक किस सीमा तक कारणों के प्रवर्धन में भाग ले सकते हैं, तथा कार्य और रहन की दृष्टियों में किस सीमा तक उन्नति कर सकते हैं इस बात पर निर्भर है कि शिक्षा द्वारा उनकी योग्यता का कितना विकास हुआ है। औद्योगिक शक्ति के लिये धार्मिक मजदूर समितियों की सफलता भी धर्मिकों की शिक्षा पर निर्भर है। धर्मिकों के बालकों को भी उचित शिक्षा देना बहुत महत्वपूर्ण है, विशेषकर ऐसे देशों में जहाँ बाल धर्मिकों की संख्या अत्यधिक है। उपर्युक्त धर्म प्रयोग से यह निष्कर्षण की जाये कि औद्योगिक धर्मिकों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये तथा कारणों के दूर करने में धर्मिकों के बालकों की शिक्षा के विकास के लिये प्रयत्न करने चाहिये। उपर्युक्त धर्म प्रयोग के दृष्टियों में "भारत में लगभग सभी औद्योगिक धर्मिक प्रतिष्ठित हैं। यह ऐसी बात है जो किसी अन्य महत्वपूर्ण औद्योगिक देश में नहीं पाई जाती। इस अवस्था के कारण परिणाम हीरे हैं उनका वर्णन नहीं किया जा सकता। धर्मिकों का परिणाम मजदूरी में स्वास्थ्य में उत्पन्नता में मंगल में तथा धर्म कई रूपों में सामने स्पष्ट रूप से आता है। प्राथमिक शरीर उद्योग एक विशेष सीमा तक शिक्षा पर निर्भर है तथा अधिस्तित

श्रमिकों के गृहवास सं इसका निर्माण करना कठिन तथा खतरनाक है।¹ श्री हैपरड बटमर का कथन है कि "भारत के अधिकांश कारखानों में यह देखा गया है कि श्रमिक अपनी मनीनों के मासिक न होकर उनके पास बग चाते हैं। वे मशीनों को ठीक प्रकार से समझते भी नहीं और जापरबाही सं प्रयोग करने के परिणामस्वरूप उन रेशों की अपेक्षा बड़ी कर्मचारियों की मासिक रशि होती है हमारे देश की मशीनों बन्धी काराब हो जाती है।"² हमारी पंचवर्षीय आयोजनाओं की सफलता भी इस बात पर निर्भर करती है कि हमारे श्रमिक नए निर्माण के बातावरण को कहां तक समझते हैं और स्वयं को उससे अनुकूल बनाते हैं और उत्पादन बढ़ाने में कहां तक सहयोग देते हैं तथा देश की अर्थव्यवस्था में अपने स्थान को उचित प्रकार से समझते हैं। इस प्रकार श्रमिकों की शिक्षा के लिए विशेष रूप से प्रयत्न करने आवश्यक है।

इस प्रकार शिक्षा का अनेक कारणों से महत्व बहुत बढ़ जाता है। शिक्षा से ही श्रमिक अच्छे नागरिक बन सकते हैं। शिक्षा प्रसार से ही औद्योगिक सम्बन्धों में सन्तुष्टि हो सकती है तथा श्रमिक यह समझ सकते हैं कि प्राबुनिक आर्थिक समस्याएँ क्या हैं? शिक्षा से ही श्रमिकों में अनुशासन की भावना पैदा सकती है तथा उनकी विचार शक्ति तथा प्रतिक्रियत गुण विकसित हो सकते हैं। श्रम अनुसंधान समिति के विचार में शिक्षा देने का उत्तरदायित्व राज्य का होना चाहिए तथा मालिकों पर इसका उत्तरदायित्व डालने की नीति नहीं अपनानी चाहिए। यदि वास्तव में कुछ मासिक ऐसी सुविधाएँ देते भी हैं तो उसे मासिक की सहृदयता ही समझना चाहिए। परन्तु फिर भी मालिकों को अपने ही हित के लिए श्रमिकों की शिक्षा में रशि लेनी चाहिए। कम से कम रेडियो व्याख्यातों आदि के द्वारा तो वे शिक्षा दे ही सकते हैं तथा वे बयस्क शिक्षा की भी व्यवस्था कर सकते हैं। अनेक आगस्क मालिकों ने श्रमिकों तथा उनके बालकों को अच्छी शिक्षा सुविधाएँ प्रदान की हैं जिनका उल्लेख "मालिकों द्वारा कल्याण कार्य" की व्याख्या में किया जा चुका है। इस सम्बन्ध में टाटा मोटो और इस्पात कम्पनी व बकिंगम तथा कर्नाटक मिस्स विद्येपकर उल्लेखनीय हैं। किन्तु बयस्क शिक्षा की सुविधाएँ देखनी कपड़ा एवं ज्वरस मिस्स और उत्तर प्रदेश बंगाल तथा बम्बई के राजकीय श्रम कल्याण केन्द्रों को छोड़ कर और कहीं अधिक संतोषजनक नहीं हैं। धूमबाबाब सूती कपड़ा मिल मजदूर परिषद के द्वारा भी बयस्कों के लिए रात्रि पाठ्यालाएँ चलाई जाती हैं। बम्बई, उत्तर प्रदेश तथा मद्रास के श्रम कल्याण केन्द्रों में भी व्यावसायिक प्रशिक्षण की व्यवस्था है। उत्तर प्रदेश सरकार कामपुर में एक सूती बस्त्र संस्थान तथा एक जमड़े के काम का स्कूल चलाती है। अपने कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने के लिए रत्नदे के अपने असल व्यावसायिक स्कूल है। टाटा मोटो एवं इस्पात कम्पनी कुछ कर्मचारियों को उच्च तकनीकी शिक्षा देने के लिए एक तकनीकी संस्थान चलाती है। अनेक स्थानों पर

1 Report of the Royal Commission on Labour page 27

2 Harold Butler Problem of Industry in the East, page 24-25

रोजगार के पक्षों के प्रथम व्यावसायिक तथा तकनीकी प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की गई है। केन्द्रीय सलाहकार शिक्षा बोर्ड की रिपोर्ट (जो कि साज्जेंट रिपोर्ट के नाम से प्रसिद्ध है) के परिष्कारस्वरूप भारत सरकार ने सारे देश के लिये शिक्षा विकास की एक पंचवर्षीय योजना बनाई थी। केन्द्र तथा राज्यों दोनों की ही सरकारें शिक्षा सुविधाओं के पुनर्संगठन व उत्पत्ति के लिये पग उठा रही हैं। उड़ीसा तथा उत्तर प्रदेश की तरह अनेक राज्यों ने व्यवस्थापिका की योजनाएँ भी बनाई हैं। सामाजिक शिक्षा की एक योजना भी कई राज्यों में लागू है जिसका धीरोधीक मजदूरों के लिये विस्तार किया जा सकता है।

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में सम्पूर्ण देश में श्रमिकों को शिक्षा देने की एक योजना है जिसमें धमिक संघवाद और उनके ठीकों पर अधिक जोर दिया गया है। इस सिफारिश को लागू करने के लिये फोर्ड फाउण्डेशन के सहयोग से तथा कई विदेशी विशेषज्ञों की सहमति से जनवरी १९५७ में एक धमिक शिक्षा समिति की स्थापना की गई है। इस योजना के लिये एक प्रशासक (डी पी. एम. एस. कारन) की नियुक्ति की गई है। मार्च १९५७ में धमिकों की शिक्षा पर देहली में एक बाद विवाद गोष्ठी हुई और जुलाई १९५७ में भारतीय श्रम सम्मेलन के १२ वें अधिवेशन में धमिकों के शिक्षा के कार्य क्रम को लागू करने हेतु स्वीकार कर लिया गया। इस कार्य क्रम का उद्देश्य यह है कि धमिकों को अपने संगठन बनाने की तकनीक और मिश्रणों से परिचित कराया जाय ताकि वह इस योग्य हो सकें कि संघों के बनाने और उसके प्रबन्ध में बुद्धिमत्ता तथा उत्साहात्मिक की भावना से कार्य कर सकें। धमिकों की शिक्षा के कार्यक्रम का पहला चरण विद्यार्थक प्रशासकों (Teacher Administrators) का प्रशिक्षण था और यह बम्बई में मई १९५८ से प्रारम्भ हुआ। प्रथम तापिक काम में ४३ परीक्षापत्रों की भर्ती गुप्ती प्रतियोगिता से हुई तथा १४ परीक्षापत्रों को धमिकों की टीम धमिस भारतीय संघों द्वारा मनोनीत किया गया था। यह प्रशिक्षण नवम्बर १९५८ में समाप्त हुआ तथा दूसरा कोर्स नवम्बर १९५९ में कलकत्ते में प्रारम्भ किया गया। वह भी पूरा हो चुका है और अब तीसरा कोर्स भी बम्बई में प्रारम्भ कर दिया गया है। और अब विद्यार्थक प्रशासकों की १२ विभिन्न केन्द्रों में नियुक्ति कर दी गई है। यह केन्द्र एक एक देहली बलवाय इन्डोर, कानपुर, कसकता, हैदराबाद बगलौर मद्रास केरल और पटना नगर (पंजाब) में और दो केन्द्र बम्बई में हैं। अन्य राज्यों में भी केन्द्र खोले जायेंगे। हर केन्द्र में २५ परीक्षार्थी होते हैं और इनका प्रशिक्षण काल १३ मन्हाह का होता है। इन केन्द्रों में विद्यार्थक प्रशासक फिर धमिक शिक्षकों (Worker Teachers) को प्रशिक्षण देते हैं। धमिकों की शिक्षा के लिये एक कन्द्रीय बोर्ड की भी स्थापना कर दी गई है जिसको एक समिति के रूप में स्विस्टड कर दिया गया है। इन बोर्ड में केन्द्रीय और राज्य सरकारों के तथा धमिकों के संघों के प्रतिनिधि तथा विद्यार्थक होते हैं। यह बोर्ड योजना की धागे धाने वाली व्यवस्था धरणी

धमिक शिक्षक का प्रशिक्षण तथा फिर उनके द्वारा धमिकों का प्रशिक्षण करने से सम्बन्धित समस्त विषयों की देखभाल करता है। इस प्रकार धमिकों की शिक्षा का कार्य क्रम १ चरणों में होता है (१) शिक्षक प्रशासकों का सम्बन्ध (Cadre) बनाना (२) शिक्षक प्रशासकों द्वारा विभिन्न उद्योग संस्थानों से धाये हुए धमिक शिक्षकों को प्रशिक्षण देना तथा (३) धमिक शिक्षकों द्वारा धमिकों को शिक्षा देना। यह अनुमान लगाया जाता है कि दूसरी प्रायोजन काल के अन्त तक लगभग चार लाख धमिक प्रशिक्षण पा चुके होंगे। इन बातों की भी योजना है कि हर ऐसे नगर में जिनमें धमिकों की संख्या अधिक हो एक धमिक संस्थान खोला जाये। बम्बई सरकार ने धन कल्याण संस्थान के द्वारा धमिकों की शिक्षा के लिये एक धमिक योजना लागू भी कर दी है। मई — जून १९६१ में २ विधेयी विधेयकों के पारितोक्त में धमिकों में शिक्षक प्रशासकों के साथ के हेतु एक बार विचार गोष्ठी हुई थी। इसमें इस प्रकार की शिक्षा पर सोच विचार किया गया था जिससे धमिक अपनी सामाजिक और धार्मिक कठिनाइयों को दूर करके अपने कार्य करने की शक्ति में वृद्धि कर सकें। केन्द्रीय सरकार ने १९६१-६२ में १४ हजार ४ धमिकों और धमिकों की परिपदों को धमिकों की शिक्षा के हेतु अनुदान के रूप में प्रदान किये। अन्तर्राष्ट्रीय धन संगठन के एक विधेयक प्रो. आर्स्न और की सेवाओं को धमिकों की शिक्षा के कार्यक्रम में बढ़ावा देने के लिये प्राप्त कर लिया गया है। जुलाई १९६१ तक धमिकों की शिक्षा के जो १२ क्षेत्रीय कन्द्र हैं उनमें १४ शिक्षक प्रवन्धकों की नियुक्ति हो चुकी थी और उनमें द्वारा १२५ धमिक शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया जा चुका था।

इन विचारों से स्पष्ट हो जाता है कि धमिकों की शिक्षा समस्या पर ध्यान दिया जा रहा है। फिर भी शिक्षा सुविधाओं का देश में विकास करने के लिये धन भी अधिक व्यय और विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

धनाज की दुकानों की सुविधाएं --

उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त कुछ और भी कल्याण कार्य हैं जैसे धनाज की दुकानों की व्यवस्था। ऐसी दुकानें कई स्थानों पर स्थापित कर दी गई हैं। मुद्रकाल में सरकार ने अनुभव किया कि धमिकों की कार्यक्षमता तथा उत्पादों की बनावट रखना लाइसेंस के धामाज की उत्पत्ति की दृष्टि से अत्यन्त लाभप्रद है। इसलिये सरकार ने धमिकों को धनाज की दुकानें बनाने व धनाज संग्रह करने तथा उद्योग धमिकों में सावध मस्य पर या घटे धमिकों पर बेचने के लिये उत्साहित किया। इसके लिये सरकार ने मायावात की विधेय सुविधाएं भी प्रदान कीं। अनेक धमिकों ने इसका लाभ उठाया और धनाज की दुकानें खोलीं। दुकानों की धमिकों के मकानों के निकट गोमते का बहुत अधिक महत्व है क्योंकि सड़ा धनाज मोहन तथा अन्य माघ नामकी जिन्हें धमिक व उनके बच्चे पत्नी नातियों के पास बैठे हुए लीमके धमिकों से लीमके हैं व केवल उनके स्वास्थ्य को लक्ष्य करते हैं वरन् बीमारी

भी उँठाते हैं। वे मुसीबतों उम समय कई गुनी बढ़ जाती हैं जब रागनिग या मूस्य नियंत्रण हो जाता है तथा खोर बाजारी धोर मुनाफालोरी बसती है। इमसिये कर्मकारियों तथा उनके परिवारों के कल्याण के लिए इम प्रकार की बुकानों की ब्य बन्धा की जाती चाहिये जहाँ उन लोगों को उचित मूस्यो पर भोजन की पक्की सामग्री तथा प्रतिनिग के उपयोग की बस्तुएं हृमम हो सकें। इस उद्दम की पूर्ति के लिये "उपभोक्ता सहकारी मंडार की स्थापना को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये। मासिक इसमें कुछ प्रारम्भिक धन दे सकते हैं या र्जमा ऊपर बढ़ा गया है धनाज की बुकानों की सुविधाओं की ब्यबस्था कर सकते हैं।

कल्याणकारी कार्यों के सम्बन्ध में कुछ सुझाव —

धौषीक भूमिकों के जीवन पर प्रभाव डालने वाला एक महत्वपूर्ण कार्य यह है कि उनक लिये विभिन्न ऐजेंसियों द्वारा कल्याण कार्य किए जायें। इम समय कल्याण कार्यों में हर उच्च हर उद्योग धौर एब ही उद्योग के विभिन्न कारखानों में काफ़ी धस्तर पाया जाता है। इम प्रकार के कार्यों में कुछ समता तो होनी ही चाहिये धौर कल्याण का एक निश्चित ग्युनठम स्तर बनाया जाना चाहिये। इसके धतिरिक्त कल्याण सुविधाएं देना समाज का कतम्ब्य समझ जाना चाहिये धौर बानून द्वारा भी कुछ धनिकार्यना हानी धावरयक है। भारत के कारखाना अधिनियम में इमके लिये कुछ निश्चित ब्यबस्था की गई है परन्तु के उचित रूप में लागू नहीं की जाती। वर्तमान समय में इम प्रकार के कार्यों का निरीक्षण तथा निहेंशन धधिक लघोपबनक नहीं है। सध्याई ब्यबस्था के बारे में (जो बानून द्वारा लागू है) धम धनुषबान धनिति का कथन है कि जोब करते समय धनेक कारखाना में उहेंनि बहाँ का प्रबन्ध इतना धन्धा पाया कि यह बेलकर धावरय होता था कि कारखाना निरीक्षणों में इम विषय पर कोई अधिक ध्यान नहीं दिया था। यदि हम चाहते हैं कि जो भी बुधिसार्यो की जा रही हैं बह धमिकों के हितों में वृद्धि करने में सहायक हों तो यह धावरयक है कि गम्भुर्य कारखाने का ध्रेष मासान मधीन धाधि का निरीक्षण भी उचित रूप से होना चाहिये। कल्याण अधिकारियों की निपुणित करते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि बह प्रमिसाल प्राप्त तथा धनुसकी हों धौर इम कार्य के योग्य हों। कल्याण अधिकारियों का यह भी कतम्ब्य है कि बह धमिकों को मागब ठममकर उनकी समरथाओं पर ध्यान दें धौर ममस्या का मदापान भी बह सोच समझ कर उचित प्रकार से करें। धमिकों की दशाओं का उह ब्यधियत ज्ञान होना चाहिये तथा उनमे गमय-समय पर सम्पर्क बनाये रखना चाहिये।

देग में धभी लेमी धौर कल्याण निधियां स्धापित करने की धावरयबता है जैनी कि कोसले की जालों धधक गालों तथा उत्तर प्रदेस के बीनी कारखानों के धमिकों के लिये की गई हैं। यदि इम प्रकार की कल्याण निधियां स्धापित हो जायें जिनमें धन एक उपहार द्वारा जुटाया जाता है तो इमका धप यह ज्ञान कि कल्याण बुधिसार्यों का धार भीसे धौर पर मासिकों पर नहीं पड़ेगा। परिणामस्वरूप दी जाने वाली

मुविभागों की मात्रा धीरे-धीरे घटती या घुरा होगा मानिकों की सङ्ख्या पर निर्भर नहीं रहेगा और मानिक इस बात का प्रयत्न नहीं करेंगे कि वे मुविभागों में कोई कच्ची कर धीरे-धीरे न उनका यह प्रयत्न होगा कि कानून की मूल मानना की धीरे ध्यान न देकर केवल कानून के अर्थों का पालन करें। इस प्रकार की कस्याएँ निधियों में निम्न बातें अनिवार्य होनी चाहियें — उनमें जो बात राशि हो वह काम करने वाले समितियों की मूल समस्या के अनुपात में हो और उनमें जन भी इस प्रकार के साधनों से घाता चाहियें कि उन्हें एक विस्तृत मात्रा में मुविभागों प्रदान करने और मुविभागों का स्तर ऊँचा रखने में कोई कठिनाई न हो। इसके प्रतिरिक्त मानिकों द्वारा ही जाने वाली कस्याएँ मुविभागों के प्रबन्ध में स्वयं समितियों को भी भाग लेना चाहिये। इससे मानिकों द्वारा जलाने जाने वाले कस्याएँ कार्यों के सम्बन्ध में समितियों को संकल्प दूर हो जायेंगी। इस उद्देश्य के लिए यह सुझाव दिया जा सकता है कि प्रत्येक कारखाने में एक कस्याएँ समिति होनी चाहिए जिसमें कम कारियों के चुने हुए प्रतिनिधि कारखाने का धर्म कस्याएँ भविष्य की तथा मानिकों द्वारा मनोनीत एक या दो व्यक्ति होने चाहियें। इस समिति का मुख्य कार्य कस्याएँ कार्यों को प्रदान करना तथा उनका प्रबन्ध करना होना चाहिये तथा जहाँ तक हो सके इसे स्वतन्त्रतापूर्वक काम करना चाहिये। वह समिति कस्याएँ कार्यों के प्रत्येक मास के निरीक्षण तथा उनके प्रतिदिन के कार्य चलाने के लिये उप-समितियाँ नियुक्त कर सकती है — जैसे एक कम्पनी समिति धारास समिति तथा शिक्षा समिति प्रादि। इस प्रकार सम्पूर्ण समस्या पर वास्तविक रूप से विचार किया जाना चाहिये।

कस्याएँ कार्य और उसका उत्तरदायित्व —

यह समस्या भी विचारणीय है कि कस्याएँ कार्य को चलाने के लिये कौनसी एजेंसी सबसे उपयुक्त है। जैसा कि ऊपर जलाना किया जा चुका है कि कस्याएँ कार्य समितियों के स्वाभ्य तथा कार्यक्षमता पर धारणिक प्रभाव डालते हैं और वे देश में धीरोनिक घाति स्थापित करने में भी सहायक हो सकते हैं। इसलिये मानिकों को अपने ही हित में विभिन्न प्रकार के कस्याएँ कार्यों का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लेना चाहिये। यदि मानिक निष्कण्ट हृदय से कस्याएँ कार्यों को चलाने से वे मजदूरों के हृदय को जीतने में काट्टी सीमा तक सफल हो सकते हैं और इससे मानिकों और मजदूरों में एक नये प्रकार के सम्बन्ध स्थापित होंगे जो केवल धारिक तथा स्वार्थी धेरणार्थों पर धारणिक न हो कर उच्च नैतिक धारणार्थों पर निर्मित होंगे। इसके प्रतिरिक्त मानिकों का यह एक नैतिक कर्तव्य भी है कि वे मजदूरों के कस्याएँ पर ध्यान दें। यह मानिकों के लिये एक नुठी बात होगी कि वे अपने समितियों को उन्हीं धारणों में छोड़ दें जो उनके स्वाभ्य तथा सुरक्षा की दृष्टि से हानिकारक है। कुछ ऐसी विधेय कस्याएँ मुविभागों हैं जो धारणार्थों से कर्तव्य-न्याय में टोक बँटनी हैं इसलिये वे मानिकों द्वारा किये जाने वाले कस्याएँ कार्यों की नुची

में ही धानी चाहिये। उदाहरण के लिये इनमें कैंटीमें सिमुडह तथा मगोरंजन की सुविधाएं प्राप्ती हैं।

राज्य धार्मिक समय तक धर्मियों की बुरी प्रवृत्ता की घोर से घातें नहीं मूक सकता। धार्मिक धर्म समाज का एक आवश्यक प्रंग है तथा राज्य का इसकी घोर भी कुछ कलम्ब है। कुछ बिद्येय बातें ऐसी भी होती हैं जो समाज रूप से केवल राज्य द्वारा लागू की जा सकती हैं उदाहरण के लिये काम क घण्टे पर नियंत्रण महिमा तथा बालकों के कार्य पर नियंत्रण धर्मियों के स्वास्थ्य तथा सुरक्षा से सम्बन्धित व्यवस्था स्वच्छता का प्रबन्ध स्नान गृह तथा पीने के पान की सुविधाएं प्रादि। ये सब बातें सब प्रत्येक प्रगतिगीत देश के कारखाना धर्मिनियमों में सम्मिलित कर दी गई हैं। इनके प्रतिरिक्त सरकार को औद्योगिक जनता की भलाई के लिये सक्रिय रूप से धर्म कल्याण कार्यों में रुचि मनी होगी। कुछ बिद्येय धर्म कल्याण कार्यों ऐसे हैं जिनको चलाने के लिये राज्य ही सबसे उचित एजेंसी है। उदाहरणार्थ धावात शिक्षा चिकित्सा सुविधाएं, सामाजिक बीमा प्रादि जिन पर प्रत्येक व्यय होता है और केवल मानिकों द्वारा ही प्रभावकारक रूप से नहीं चलाने जा सकते। भारत जैसे देश में यह बहुत आवश्यक और महत्वपूर्ण है कि राज्य कल्याण कार्यों को अपने हाथों में ले ले क्योंकि यहां धार्मिक धर्मो इस योग्य नहीं हैं कि वे अपने हितों की रक्षा कर सकें। इसका कारण यह है कि धर्मियों में अभी गिला और दक्षिणायनी संघों का प्रभाव है। और महा पूर्व परिवर्तन और शंकाओं के कारण मानिकों तथा मजदूरों में यंत्रीपूर्ण सम्बन्ध नहीं है। सरकार को इन परिवर्तन को दूर करने व उत्पादन को निरन्तर चलाते रहने के लिये हस्तक्षेप करना ही होया। जिस देश के धार्मिक धर्म में निर्धनता भूख तथा मिरी हुई ज्ञानत समाज रूप से बाई जाती हैं ऐसे देश की एक बिद्येयगीत सरकार बिना उनकी प्रवृत्ता में सुधार किये हुये संतोष से नहीं बंठ सकती।

धर्मियों की उन्नति का कोई भी प्रयत्न तब तक मफल नहीं हो सकता जब तक कि धार्मिक धर्मने वर्तमान और धर्मिकारों से धर्मभिन्न है तथा कल्याण काय उन पर ऊपर से बोने पाते हैं। इसलिये धर्म कल्याण कार्यों को मफल बनाने में धार्मिक संघ भी महत्वपूर्ण योग दे सकते हैं। एक धार्मिक संघ का मूल उद्देश्य कार्य करने की ब्यापों को सुधारना व संभालना तथा धर्मने सदस्यों की मानसिक व दार्मिक क्षमता का बिबाध करना होना है। भारत में धार्मिक संघों ने अब तक कल्याण कार्यों में बहुत कम योग दिया है। इनके लिये यह तर्क दिया जाता है कि धर्म के धर्माव के कारण धार्मिक संघों द्वारा भारत में कल्याण कार्य करना सम्भव नहीं है। परन्तु इस बात को ध्यान में रख कर भी कि धार्मिक धर्मों की धार्मिक स्थिति में उन्नति होनी चाहिये और उनको परिवर्तनी देशों के धार्मिक धर्मों की भांति धर्मने कार्यों के रचनात्मक पहलु पर धार्मिक और देना चाहिये फिर भी कुछ ऐसे कल्याण कार्यों हैं जो स्वयं धर्मियों द्वारा ही प्रभावकारक रूप में चलाने जा सकते हैं। कई ऐसे कार्यों की

है जिनका प्राबिक भार नहीं पड़ता और जो अमिकों की बधाओं को सुधारने में काफी सहायक सिद्ध हो सकते हैं। अमिक संघ अपने अमिकों की मितव्ययता सिद्धा सहकारिता एवं स्वच्छता की धारतों के कामों को मनी प्रकार बटा सकते हैं। वे अमिकों में स्वस्थ पारिवारिक जीवन बिताने की रीतियों तथा धारतों का प्रचार कर सकते हैं और स्वयं अमिकों की सहायता से अमिक वस्तियों में स्वच्छता के नियम लागू कर सकते हैं। यदि अमिक संघ के नेताएण अपने धारियों की प्रवृत्तियों में अपने हृदय से सहयोग देना चाहते हैं तो उनके लिये यह धार्यत्व धारण्यक है कि वे अमिकों के लिये विभिन्न प्रकार के कस्याए कार्य करें।

अपसंहार —

इस प्रकार कस्याए कार्यों को प्रचार करने का उत्तरदायित्व अमिकों राज्य तथा अमिक संघों का संयुक्त रूप से होना चाहिये। अमिकों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिये इन सबको मिलकर कार्य करना चाहिये। अमिकों के कस्याए कार्य की समस्या इतनी विस्तृत व गम्भीर है कि कोई एक पक्ष इसको सफलतापूर्वक नहीं सुलभ्य सकता। सब बातों को देखते हुये यह कहा जा सकता है कि यह राज्य का उत्तरदायित्व है कि यह देखे कि अमिकों की बधाओं में उन्नति हो रही है या नहीं। यह बात संतोषजनक है कि विश्व के अधिकतर सम्भ देशों में सरकारों ने कस्याए कार्यों की महत्ता को समझ लिया है और अम कस्याए तथा सामाजिक सुरक्षा की बड़ी-बड़ी योजनाओं को उन्हीने लागू किया है। भारत में अब तक इस दिशा में केवल प्रारम्भिक पग ही उठाये गये हैं तथा देश में अमिक बर्गों के लिये कस्याए कार्यों की उन्नति करने और उनका विस्तार करने के लिये धनी बहुत कुछ करने को है। हमें उन बातों को ध्यान में रखना चाहिये जिनका देश में कस्याए योजनाओं पर प्रभाव पड़ा है या जो प्रभाव डाल सकती हैं। उदाहरणार्थ अमिकों की प्रवासिता प्रभावधाली अमिक संघों का अभाव तथा अमिक संघों में धन का अभाव अमिकों से धार्यविक प्रसिद्धा बागान के अमिकों की बड़ी संख्या (जिनके लिये कस्याए योजनाओं का एक प्रलग संगठन बनाने की धारण्यकता है) तथा अनेक सामाजिक व धारिक समस्पाएँ जो इस देश में अम्य देशों से धारिक तीव्र हैं। दूसरे देशों में ऐच्छिक रूप से बनी संस्थाएँ हैं जैसे प्रौद्योगिक क्साति (Fatigue) व स्वास्थ्य धनुसस्वांग संस्थाएँ प्रौद्योगिक स्वास्थ्य विज्ञान व मनो-बैज्ञानिक संस्थाएँ तथा कस्याए समितियाँ धारि। ये सब संस्थाएँ धारिक धार्यपण तथा प्रचार द्वारा प्रौद्योगिक कस्याए के क्षेत्र में धार्यती होकर कार्य कर रही हैं। परन्तु भारत में इन प्रकार की कोई संस्था नहीं है। हमारे देश में इस प्रकार की कठिनाइयों को दूर करने के लिये प्रयत्न होने धारण्यक है। परन्तु इन कठिनाइयों को बढाना बना कर हमें कस्याए कार्यों की धोर कम ध्यान नहीं देना चाहिये। प्रयत्न ही इन बात के होने चाहिये कि इन तमाम बातों को ध्यान में रखते हुए हम ऐसे ध्यावहारिक कचम उठाएँ जिनसे हमारी प्रौद्योगिक कगता का हित हो सके।

भारत में सामाजिक सुरक्षा

(Social Security in India)

सामाजिक सुरक्षा का अर्थ —

सामाजिक सुरक्षा एक परिवर्तनशील विचार है जो संसार के सब उद्योग क्षेत्रों में निर्बलता, बेरोजगारी तथा बीमारी को दूर करने के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम का एक आवश्यक भाग माना जाता है। साधारणतः सामाजिक-सुरक्षा औद्योगिक श्रमिकों के लिए बहुत आवश्यक समझी जाती है। परन्तु वर्तमान युग में व्यापारिक क्षेत्र का विचार विकसित हो जाने से इसका क्षेत्र भी समाज के सब वर्गों तक विकसित हो गया है। सामाजिक-सुरक्षा का तात्पर्य उस सुरक्षा में है जिसे समाज अपने सदस्यों को संकट से बचाने के लिए समुचित रूप में प्रदान करता है। ये संकट ऐसी विपत्तियाँ हैं जिनमें दिवंग व्यक्ति या व्यक्ति अपनी सुरक्षा अपने साधनों के सहयोग अथवा अपनी दूरदर्शिता से भी नहीं कर पाता। इन विपत्तियों के कारण व्यक्ति की आयलभता की दृष्टि पटुबन्धी है और वह अपना और अपने परिवारों का पोषण नहीं कर पाता। राज्य की स्थापना का उद्देश्य जनसाधारण को बचाई करना है इसलिए सामाजिक-सुरक्षा की व्यवस्था करना राज्य का ही प्रमुख कार्य है। यद्यपि राज्य की प्रत्येक नीति का सामाजिक-सुरक्षा पर कुछ न कुछ प्रभाव पड़ता ही है तथापि सामाजिक-सुरक्षा सेवाओं के अन्तर्गत केवल ऐसी योजनाएँ जाती हैं जैसे बीमारी की रोकथाम तथा उनका इलाज, रोजी कमाने योग्य न होने की व्यवस्था में व्यक्ति को सहायता देना और उसकी आजीविका उपार्जन के योग्य बनाना आदि। परन्तु यह भी कहा जा सकता है कि उसे तमाम साधनों से सुरक्षा नहीं मिल सकती क्योंकि सुरक्षा का तात्पर्य किसी प्रत्यक्ष वस्तु में ही नहीं होता बल्कि यह एक मानसिक अनुभूति भी है। सुरक्षा से तभी मात्र अनुभव हो सकता है जब सुरक्षा प्राप्त करने वाले व्यक्ति का इस बात में विश्वास हो कि उसको सम्पूर्ण मुक्तिपूर्वक सब भी उसे आश्वस्तता होगी प्राप्त हो जायेगी। यह भी आवश्यक है कि सुरक्षा प्रदान करते समय यह देखा जाना चाहिये कि सहायता और मुक्तिपूर्वक की मात्रा और दुरुपयोग न हो।

सामाजिक-सुरक्षा एक आर्थिक व्यवस्था है और इसके अन्तर्गत सामाजिक-बीमा व सामाजिक सहायता की योजनाएँ और कुछ आर्थिक (Commercial) बीमों की योजनाएँ भी आ जाती हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि इन दोनों के बीच का अन्तर स्पष्ट किया जाय एवं प्रत्येक के क्षेत्र के बारे में स्पष्ट रूप से विचार किया

भाव । साधारणतः सामाजिक-बीमा और सामाजिक-सुरक्षा शब्दों को पर्यायवाची माना जाता है । इसका कारण यह है कि सामाजिक-बीमा प्रत्येक सामाजिक-सुरक्षा योजना का सबसे महत्वपूर्ण भाग होता है ।

सामाजिक-बीमे की परिभाषा -

सामाजिक-बीमा व्यक्ति को निर्धनता और दुःख से बचाने का एक साधन है । इससे व्यक्तियों को संकट के समय सहायता मिल जाती है । बीमे से तात्पर्य यह है कि कुछ धन भण्डार से सुरक्षित रख दिया जाता है तथा विशेष संकटों में जो क्षति होती है उसकी हानिपूर्ति के लिए दिया जाता है । बीमे का मूल उद्देश्य व्यक्ति के संकट को समाप्त करना है । हानि के भार को कम करने का कार्य मुख्यतः व्यक्ति का न होकर समाज का है । हम सामाजिक-बीमे की परिभाषा इस प्रकार कर सकते हैं 'सामाजिक-बीमा एक सहायी साधन है जिसका उद्देश्य अनिर्वास्य रूप से बीमा कराने हुए व्यक्तियों को बेरोजगारी बीमारी तथा अन्य संकटों के प्रवर्तनों पर म्यूनतम रजत-सहज के स्तर को दृष्टि में रखते हुए उचित लाभ प्रदान करना है । यह लाभ धर्मियों मानिकों तथा राज्य तीनों पक्षों के प्रशासन से निर्मित निधि से दिया जाता है तथा इसको प्राप्त करने के लिए किसी प्रकार की जीविका-मापन-जाँच (Means test) नहीं होती अपितु यह साम बीमा कराने हुए व्यक्तियों का अधिकार मानकर प्रदान किया जाता है ।' सर विलियम बेंबरिज ने सामाजिक-बीमे की परिभाषा इस प्रकार की है 'सामाजिक-बीमे का तात्पर्य प्रशासन के बजट में दिये गए ऐसे नामों से है जो केवल जीविका-निर्वाह स्तर तक दिये जाते हैं और जो कि व्यक्ति को उसके अधिकार मानकर, बिना किसी जीविका-मापन-जाँच के प्रदान किये जाते हैं जिससे व्यक्ति स्वतन्त्रतापूर्वक अपनी निर्वाह कर सके । इस प्रकार सामाजिक-बीमे में जो बातें निहित हैं—प्रथम तो यह कि यह धनिकार्य है और दूसरे यह कि मनुष्य अपने साधनों के दुःख-मुद में साप बैठे हैं ।'

सामाजिक-बीमे के मुख्य सक्षम -

पहले हम सामाजिक-बीमे के सुनिश्चित तत्त्वों की ओर दृष्टिपात कर सकते हैं । सबसे प्रथम इसके अन्तर्गत एक समुक्त-जनराशि निधि की स्थापना होती है । इस निधि में सारे लाभ लक्ष्मी या जिम्मे के रूप में दिये जाते हैं । यह निधि साधारणतः धर्मियों मानिकों तथा राज्य के प्रशासन से निर्मित की जाती है । द्वितीय धर्मियों का प्रशासन केवल नाममात्र का होता है तथा जोत निम्न-स्तर पर ही रखा जाता है जिससे धर्मियों को अपनी सक्ति से अधिक न होना पड़े । राज्य तथा मानिक ही निधि का अधिकार्य भाग प्रदान करते हैं । इसका तात्पर्य यह है कि धर्मियों द्वारा दिये जाने वाला प्रशासन तथा उनको प्रदान किये जाने वाले नामों में कोई अनुपात नहीं होता । तृतीय इन नामों को एक निश्चित सीमा तक ही सीमित रखा जाता है ताकि लाभ बढाने वालों को पूर्ण या आंशिक धाय की क्षति के समय एक म्यूनतम

बीबन स्तर बने रहने का प्रावधान रहे। बहुत बड़े सहायता लाभ प्राप्त करने वालों का धार्मिकार मानकर तथा बिना बीबिका-सापन-जाप क प्रदान की जाती है जिससे उनके धार्मिकमान का कोई टेंस न पहुंचे। पंचम सामाजिक-बीमा अब अनिवार्य रूप से प्रदान किया जाता है जिससे ये लाभ समाज के उन सब प्रमीष्ट (Needy) व्यक्तियों तक पहुंच सकें जिनको इसका धरक्षण मिलना वाछनीय है। अस्त में यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि सामाजिक बीमा व्यक्ति क किसी बिधाप पटना में होने वाले कष्टों का ही निवारण करता है उन्हें रोफता नहीं। वास्तव में जब कष्टों का धररोप धमम्मब होता है तब ही सामाजिक-बीमे की धरपिक प्रावश्यकता होती है।

सामाजिक-बीमे तथा व्यवसायिक बीमे में अन्तर -

व्यवसायिक-बीमा पूर्ण रूप से ऐच्छिक होता है परन्तु सामाजिक-बीमा लावारण्य अनिवार्य होता है। व्यवसायिक-बीमे में ही हुई बीमा-विक्रयों क अनुसार ही पौमिधी-हित प्रदान किये जाते हैं परन्तु सामाजिक-बीमे में जो लाभ धमिकों को प्रदान किये जाते हैं, वे उनक धंगदान से धधिक होते हैं। इसक प्रतिरिक्त व्यवसायिक बीमे में न्यूनतम-बीबन-स्तर को बनाय रखने का उद्देश्य नहीं होगा परन्तु सामाजिक-बीमे का यह एक मुख्य उद्देश्य होता है। सामाजिक-बीम की व्यवस्था कई प्रकार की ऐसी विधियों के समय की जाती है जो विभिन्न प्रकार की होती हैं और जिनकी तीव्रता भी विभिन्न होती है। परन्तु व्यवसायिक-बीमे की व्यवस्था बस एक व्यक्तिगत संघट से सुरक्षा के लिए की जाती है।

सामाजिक-बीमा तथा सामाजिक सहायता -

सामाजिक-बीमा तथा सामाजिक-सहायता में भी कुछ अन्तर है। सामाजिक सहायता योजना बहु साधन है जिनक द्वारा राज्य अपनी ही निधि में से धमिकों क द्वारा कुछ विशेष वर्गों पुरी हो जाने पर बानूनी तीर पर लाभ प्रदान करता है। इस प्रकार सामाजिक-सहायता सामाजिक-बीमे का स्थान देने की धपेधा लगती प्रक है। दोनों ही साधन-साध बसते हैं। परन्तु अन्तर यह है कि सामाजिक-सहायता तो बुरतया सरकार का ही कार्य है जबकि सामाजिक-बीमे में राज्य द्वारा केवल धार्मिक रूप से बिल प्रदान किया जाता है। सामाजिक-बीम के लाभ बला कल्पित उठ सक्ता है जो इसमें धंगदान देता है। परन्तु सामाजिक-साधना नि-मुक्त प्रदान की जाती है। इसके प्रतिरिक्त सामाजिक-बीमे में किसी प्रकार की बीबिका सापन-जाप पर और नहीं दिया जाता और इसके बिना ही लाभ प्रदान किये जाते हैं। परन्तु सामाजिक-सहायता केवल बुरा दी हुई धमिकें पुरी होने पर ही दी जाती है। मध्य में सामाजिक-बीमे में "बीमा" धर के अन्तगत धंगदान का निजाय निरिक्त है जो कि सामाजिक-सहायता (Social Assurance) में गरी है। इसी प्रकार "सामाजिक धीर "व्यवसायिक" धर भी इनके अन्तर को स्पष्ट करत है।

यह भी स्पष्ट है कि सामाजिक-सहायता तथा व्यवसायिक-बीमे के मध्य में 'सामाजिक बीमा' पाता है। 'सामाजिक-सहायता' में राज्य वा समुदाय द्वारा प्रवीण व्यक्तिओं को निःशुल्क सहायता दी जाती है जबकि व्यवसायिक-बीमा पूर्णतः एक निजी व्यवसाय है। सामाजिक-बीमे (Social Insurance) में राज्य तथा बीमा किये हुए व्यक्ति, बीमा का भंडारण आवश्यक होता है। इसलिये यह दोनों के मध्य का मार्ग कहा जा सकता है।

सामाजिक-सुरक्षा का क्षेत्र तथा विभिन्न विधियाँ —

सामाजिक-सुरक्षा योजना के अन्तर्गत सामाजिक-बीमा और सामाजिक-सहायता दोनों आ जाती हैं। सब प्रकार के सामाजिक संकट जैसे—असमर्थता कार्य पाने की असमर्थता चिकित्सा की आवश्यकताएँ आदि—सामाजिक-बीमे धरना सामाजिक-सहायता के अन्तर्गत आ सकते हैं। किन्तु व्यावहारिक रूप में साधारणतः कुछ संकट सामाजिक-बीमा-योजना द्वारा पूरे किये जाते हैं और कुछ संकट "सहायता" द्वारा। कुछ संकटों के लिये देश की परिस्थिति के अनुसार इन दोनों में से कोई भी विधि लागू की जा सकती है। नकद लाभ तथा साधारण चिकित्सा सेवाएँ अधिकतर बीमे की विधि के अन्तर्गत प्रदान की जाती हैं। बिम्ब के रूप में दिये जाने वाले कुछ विशेष प्रकार के सामों के लिए 'सामाजिक-सहायता' को अधिक उचित समझा जाता है। सामान्यतः बीमा की विधि उस समय अपनाई जाती है जबकि इस बात पर डर होता है कि शर्तों को अधिक बढ़ा-बढ़ा कर रिखाया जायगा तथा संयुक्त निधि का दुस्प्रयोग होगा। यद्यपि बीमा विधि के अन्तर्गत सभी संकट न भी आ पायें तथापि कई बार उस समय इसको अपनाया पड़ता है जब मजदूरी में विपत्ति के कारण क्षति होती है और उनी क्षति के अनुपात से नकद लाभ देना पड़ता है। औद्योगिक दुर्घटनाओं और बीमारी के समय सामाजिक सहायता का कोई प्रश्न नहीं उठता क्योंकि इनका उत्तरदायित्व परम्परा में मालिकों पर ही रखा है। बीमारी का संकट निश्चित रूप से बीमे के अन्तर्गत आता है। पैन्शन तथा बेरोजगारी लाभ भी बीमे द्वारा ही प्रदान किये जाते हैं, यद्यपि वे कभी-कभी सामाजिक-सहायता योजनाओं के द्वारा भी दिये जाते हैं। उनके विषय में यह निर्णय अत्यन्त कठिन हो जाता है कि 'बीमा' अथवा 'सहायता' दोनों में से किसका चुनाव किया जाय। सामाजिक सहायता विशेषकर उन लक्ष्यों के क्षेत्र में सीमित रहती है जिनमें अज्ञानता का हित मुख्य होता है तथा दुस्प्रयोग के बहुत कम अवसर होते हैं। पराहुरणार्थ अन्तरिम हस्तगत पावनों के लिये हस्तगत अय-समीक्षात्मक चिकित्सात्मक बीम-सम्बन्धी बीमारियों के चिकित्सा केन्द्र प्रावृत्तित्व तथा सिधु कल्याण कम्प पाठ-शाखाओं में स्वास्थ्य सेवाएँ, पुनर्वास संस्थाएँ, कूटों तथा निवृत्त व्यक्तियों की पैन्शनें आदि भी पैन्शनें तथा बेरोजगारी सहायता आदि।

इन प्रकार किसी देश की सामाजिक-सुरक्षा योजना में सामाजिक-बीमा तथा सामाजिक-सहायता दोनों का मिश्रण होता है। अनेक परिस्थितियों में तो दोनों का

समन्वय कर दिया जाता है। व्यावहारिक रूप में सामाजिक-सुरक्षा के इन विभिन्न रूपों के बीच एक निश्चित सीमा रेखा खींचना आवश्यक नहीं है। यह भी उम्मेदवशील है कि राज्य के प्रतिरिक्त अन्य विधियों से भी विपत्तियों के समय सुरक्षा प्रदान की जा सकती है। कई देशों में अनेक अमिक-संग अपने अमिकों के लिये बीमारी बेरोजगारी तथा वृद्धावस्था की योजनाएं बनाते हैं। अनेक उद्योगपतियों ने भी अपने कर्मचारियों के लिए बचत-निधि बीमारी साम तथा वृद्धावस्था में पत्नियों की योजनाएं बनाई हैं।

सामाजिक-सुरक्षा के विचार की उत्पत्ति और विकास -

प्राचीन काल में सामाजिक संकटों से रक्षा करने के लिए जो रीति प्रचलित थी वह निबंधों की सहायता करने की एक प्रणाली पर आधारित थी। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनेक देशों में कानून बनाये गये तथा निबंधों के लिये आवास स्थापित किये गये। परन्तु निबंधों के लिये सहायता की यह छोटी प्रणाली ऐच्छिक काल पर आधारित थी। स्वामीय प्राधिकारी निबंधों की सहायता के लिये उत्तरदायी बना दिये गये थे। परन्तु यह सहायता पर्याप्त नहीं समझी गई। तीसरी ही यह अनुभव किया गया कि अमस्त व्यक्तियों के विपत्तियों को उत्पन्न-कार्य कर रहे हैं—संकटों को दूर करने का उत्तरदायित्व सारे समाज पर होना चाहिये। इनके प्रतिरिक्त 'निबंधों की सहायता योजना' में कुछ सीमा तक बेकम दृष्टि की समस्या को सुझाया जा परन्तु यह विभिन्न बहुरिक्त के शब्दों में पुनर्निर्माण की राह के पांच शब्दों में स दृष्टि (Want) केवल एक शब्द है जिस पर सबसे सरसता से ध्यान दिया जा सकता है। अन्य शब्द हैं बीमारी (Disease) अज्ञानता (Ignorance) अशुभता (Squalor) और आलस्य (Idleness)। इन प्रकार सामाजिक-बीमा तथा सामाजिक-सहायता योजनाओं का विकास हुआ।

सामाजिक-सुरक्षा के विचार का प्रारम्भ जर्मनी में हुआ जब विभिन्न प्रकार के शेष (Reichstag) (संसद) को सामाजिक बीमा योजनाओं को अपनाय के लिये प्रेरित किया। जर्मनी में विमार्क सामाजिक-बीमा के बड़े भागी समर्थक थे। फरवरी १८८३ में जर्मनी में बीमारी बीमा अधिनियम पारित हुआ अमिक की शक्तिपूर्ति के लिये अनिवार्य बीमा का कानून १८८४ में बना तथा वृद्धावस्था और निवृत्तता (Invalidity) बीमा के लिए १८८६ में कानून बना। बेरोजगारी बीमा योजना काफी समय पश्चात् १९२२ में बनाई गई। वर्तमान काल की प्रारम्भ में सामाजिक कल्याण कार्य में राज्य का हस्तक्षेप बहुत बढ़ गया जिसका कारण यह था कि अर्थव्यवस्था के शीघ्र अनुभव किये जाने गये थे। परिणामस्वरूप अनेक देशों में राज्य द्वारा कई योजनाएं प्रारम्भ की गईं जिसमें औद्योगिक-कर्मचारियों की योजना के लिए मूलतः जीवन स्तर की व्यवस्था को जा सके। औद्योगिक अमिक राज्य के हस्तक्षेप न करने के कारण काफी समय तक पूंजीपतियों के हाथों बहुत बढ़ उठती रहे।

विभिन्न देशों में सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की हाम में हुई प्रगति का मुख्य कारण अन्तर्राष्ट्रीय अथ संवत्न के प्रयत्न तथा कार्य हैं इसलिये उद्ये ही इस मुख्यकार्य का अथ विवका चाहिए। इस संयत्न ने १९५५ में विभिन्न देशों के लिये सामाजिक बीमा अधिनियमों के स्तर को निर्धारित करने के हेतु मधीरे तैयार करने का कार्य प्रारम्भ किया। इस हेतु इसने समय-समय पर अधिसमय पाठ्य क्रिये हैं, उदाहरणार्थ — १९१९ में मातृत्व हित नाम पर १९२१ १९२५ तथा १९३४ में धमिक क्षतिपूर्ति पर १९२७ तथा १९३६ में बीमारी बीमे पर १९३३ तथा १९३४ में निवृत्तता वृद्धावस्था तथा उत्तरबीमारी बीमे पर १९२८ में न्यूनतम मजदूरी पर १९३४ में बेरोजगारी बीमे पर तथा १९४४ में घाय सुरक्षा तथा चिकित्सा सुविधा पर। अनेक देशों ने इन अधिनियमों को स्वीकार कर लिया है और जिन देशों में इनको स्वीकार नहीं किया है उन्हीं भी इनको आचार मान कर कानून बनाये हैं। किसी ऐसे देश के लिये जो सामाजिक बीमा पड़नी ही बार लागू करने की इच्छा रखता है इन अधिनियमों को पूर्णतः या अंशतः आदर्श माना जा सकता है। १९४७ में नई देहली में हुये प्रारम्भिक एशियाई क्षेत्रीय अथ सम्मेलन में भी सामाजिक सुरक्षा पर एक व्यापक प्रस्ताव स्वीकार किया गया जिसमें इस बात का लिय विचारित की गई थी कि एशिया के अनेक देशों में सामाजिक सुरक्षा की योजनाओं की प्रगति में तीव्रता आनी चाहिए। १९३८ में न्यूजीलैण्ड में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सामाजिक सुरक्षा अधिनियम पाठ्य हुआ था जिसमें एक अधिकाय तथा आर्थिकीय बीमा प्रणाली की व्यवस्था की जिसके लिये वित्त-व्यवस्था एक सामाजिक सुरक्षा कर द्वारा की गई थी।

सन् १९३९-४२ के युद्ध ने सामाजिक बीमे की योजनाओं को प्रारम्भ करने या कम-अ-कम उनके प्रारम्भ करने के लिये अथन इन की आवश्यकता की ओर भी बल प्रदान किया। यह योजनाएँ दान की प्रतिरक्षा की अर्थ में वृद्धि करती हैं क्योंकि यह योजनाएँ जनमरदा के विभिन्न वर्गों को एक विधाय चर्हेख के लिये संकलित करती हैं अथवा को कम करती हैं जनता के स्वास्थ्य की रक्षा करती हैं तथा आर्थिक विवकाओं का दूर करने का भी प्रयत्न करती हैं। युद्ध परभाव जो प्रभाव हुए उनके कारण भी युद्ध सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की आवश्यकता को अनुभव किया गया क्योंकि इन प्रभावों के कारण अनेक देशों में आवश्यक वस्तुओं की दुर्लभता उत्पन्न हो गई थी और पुनर्निर्माण की अवस्थाएँ भी उत्पन्न हो गई थीं। लक्ष्य प्रत्येक औद्योगिक उन्नत देश ने अब सामाजिक बीमे के महत्व को स्वीकार कर लिया है तथा उनमें से अनेक ने सामाजिक बीमा के आयोजन की समस्या को सुमझते का प्रयत्न किया है। कई स्थानों पर तो सामाजिक बीमा योजनाएँ लिखित की जा चुकी हैं तथा उनकी कार्यान्वित भी कर दिया गया है। अमेरीका आस्ट्रेलिया कनाडा तथा न्यूजीलैण्ड जैसे देशों में सामाजिक बीमे की विस्तृत योजनाएँ बनाई गई हैं तथा लागू की गई हैं। १९४२ में सन्धन में 'ब्रिटेन के सामाजिक बीमा तथा

सम्बन्धित सेवाओं" पर बबरिज रिपोर्ट (Beveridge Report on British Social Insurance and Allied Services) प्रकाशित हुई जा संसार भर में चर्चा का विषय बन गई। अब इसका कार्यान्वित कर दिया गया है। इसके अन्तर्गत प्रत्येक प्रकार का व्यक्तिगत दरिद्रता तथा असुरक्षा के लिये पूर्ण अनिवार्य राज्य बीमा योजना की व्यवस्था है। सामाजिक बीमा योजना जिस प्रकार विभिन्न देशों में लागू की गई है उसके विस्तृत क्षेत्र का उदाहरण कनाडा में 'सामाजिक-सुरक्षा' पर मार्श की रिपोर्ट (Marsh Report) तथा अमेरिका में 'मुरे-डिंगेल विधेयक' (Murray-Dingell Bill) में मिलता है।

भारत में सामाजिक सुरक्षा के विचार को उत्पत्ति और विकास -

राष्ट्र में निर्धनों तथा घसटारों की सहायता को सर्वत्र से ही सामिक कर्तव्य माना गया है। भूतकाल में ऐसे व्यक्तियों के लिये जिनके पास जीवन निर्वाह का कोई साधन न होता या धीरे धीरे कार्य करने में भी असमर्थ होते या उन्हें कई प्रकार की संस्वाधों और रीतियों से सहायता मिल जाता करती थी जैसा संयुक्त परिवार, सामुदायिक पंचायतों अनायासक व विधवा धात्रम दान देन की रीति व्यक्तिगत दान दान सेवा की भावना आदि। परन्तु पश्चिमी विद्या तथा देश के औद्योगिकरण के प्रभाव से ये संस्वाधें मल्ट होने लगी और अब ये इस योग्य नहीं रही हैं कि परिस्थिति के अनुसार पर्याप्त सहायता दे सकें। वर्तमान समय में सामाजिक सुरक्षा प्रधान करना राज्य का ही कर्तव्य माना जाता है।

दोनों महायुद्धों के मध्यकाल की अवधि में तथा विशेषकर १९३६ से बिरोधन देशों में सामाजिक सुरक्षा का तीव्र गति में उन्नति तथा विस्तार हुआ है। किन्तु भारत में इसका लागू करने का प्रयत्न पर कुछ समय पहलु तक राज्य की ओर से कोई ध्यान नहीं दिया गया। समस्त भ्रम धावाग का भी यह मत था कि भारत में किसी राष्ट्रीय बीमा योजना का लागू करना सम्भव नहीं होगा। इसका कारण जयने यह दिया कि कोई स्थायी औद्योगिक जनमस्या न होने के कारण धीरे धीरे धमकावर्त (Labour Turnover) अधिक होने के कारण किसी भी मंडल का ठीक ठीक अनुमान लगाना कठिन था। इस प्रकार सामाजिक बीमे की समस्या को काफी समय तक केवल एक मौजानिक विषय ही समझा जाता रहा और अनेक समितियों धायोर्षों तथा अधिकारियों द्वारा दिये गये विचार सामाजिक सुरक्षा की केवल कुछ धाकाधों तक ही सीमित रहे। बबरिज रिपोर्ट के प्रकाशित होने के पश्चात् ही लोगों के विचारी तथा सेवाओं में 'सामाजिक बीमा' धार्य धाया और अब ही भारत में इसको लागू करने की सम्भावनाओं पर ध्यान दिया गया। राष्ट्रीय सरकार बन जाने के पश्चात् धमिकों में धघालि बढ़ने तथा धनक देगों में माध्यमधर लँतने से सामाजिक बीमे की समस्या अधिक महत्वपूर्ण हो गई है। अब यह अनुभव कर लिया गया है कि सामाजिक सुरक्षा की धावरचना केवल इस कारण नहीं है कि धमिकों को धारण से रहने का धाधवार है धधिनू सामाजिक दृष्टिकोण से भी 'सामाजिक

सुरक्षा' की आवश्यकता है क्योंकि जब तक शमिकों को बीमिका के अन्धे साधन नहीं प्रदान किये जायें तब तक उनकी अनेक विपत्तियों से रक्षा नहीं की जायेगी तब तक साम्यवादी विचारवाद्य को रोकना कठिन होगा। वास्तव में देश में एक सामाजिक बीमा योजना को स्थापित करने की आवश्यकता के विषय में कमी भी हो मत नहीं रहे किन्तु भारत में इसका सागु करने की सम्भावनाओं पर मतभेद रहा है।

भारत में शमिकों के लिए सामाजिक बीमे की आवश्यकता विभिन्न विपत्तियाँ —

भारत में सभी लोगों के लिए विधायक कर देश की शमिक जनता के लिए सामाजिक बीमे की आवश्यकता अत्यन्त है। यह पूर्ण सत्य है कि हमारा देश गरीब है और हमारे देश में मजदूर को मजदूरी पाठे है वह इतनी कम तथा कंजूसी से ही जाती है कि उससे निम्नतम प्राचीनिका को छोड़कर अन्य कोई भी वस्तुएँ प्राप्त नहीं की जा सकती। वास्तव में यह आश्चर्यजनक है कि शमिक इतनी अर्थात् घाय में अपनी और अपने परिवार की बीमिका कैसे जताता है। कुछ स्वामियों को छोड़कर देश के शमिक स्वामियों पर मजदूरी इतनी कम ही जाती है कि यदि कुशाग्र बुद्धि तथा इच्छा ही थी फिर भी मजदूर न्यूनतम स्तर बनाए रखने के लिए आवश्यक वस्तुएँ नहीं बुटा पाता तथा जिन परिस्थितियों में वह रहता है उनमें बुद्धि का प्रयोग भी कठिन हा जाता है। यह ही देखा गया है कि शमिक बड़ी संख्या में अणु में रहे रहते हैं और बीसतन यह अणु उनकी तीन माह की मजदूरी के बराबर होता है। यह भी देखा गया है कि मजदूर की ८ % आय भोजन आवास और वस्त्रों पर ही खप हो जाती है और कम बैठन पाने वाले मजदूर के लिए दो माह बीमिका भी बिना अणु लिए असम्भव होती है। आय इतनी कम है कि उम्रमें से बचत करने के लिए कुछ नहीं बचता और इस प्रकार जब कभी शमिकों का मासिक बजट घाट में चलता है तो उनके पास उसको पूरा करने के लिए पहले से बचाई हुई कोई भी निधि नहीं होती। बीमारी केकारी अस्थायी असमर्थता परिवार के कमाने वाले व्यक्ति को अचानक मृत्यु जैसी अनेक विपत्तियों (Contingencies) से या तो शमिक यदि संभव होता है तो अणु लेता है अथवा अपने पहल से ही बिदे हुए बीमग स्तर में वह असीम रूप में कष्ट भोगता है। इसलिए बीमग की विपत्तियों के विरुद्ध व्यवस्था करने के लिए भारत में कुछ सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की अत्यन्त आवश्यकता है क्योंकि विपत्ति पड़ने पर मजदूरों के पास अपने निर्वाह के लिए कोई संचित निधि नहीं होती।

शमिक अनेक बीमारियों के शीम स भी रहा रहता है। अत्यन्त बीड़-भाड़ वाले तथा बने बसे प्राचीनिक शिर्षों में मलेरिया हुआ तय प्लेग इन्फ्लुएन्जा जैसी बीमारियाँ अब रूप में फैल जाती हैं। ऐसी बीमारियों के कारण संकटों व्यक्ति अनेक

बस्ती से प्रतिवर्ष मृत्यु के प्रास हो जाते हैं। उस जो इनके आक्रमणों से बच भी जाते हैं उनमें दुर्बलता और अशुचिता पा जाती है। औद्योगिक क्षेत्रों में धमिकों की उचित निगरानी के लिए उनको निरन्तर धाम की मुक्ति प्रदान करने के लिए और बीमारी के परभाव उनका शीघ्र से शीघ्र पूर्णरूप से स्वस्थ करने के लिए काफ़ी समय तक कोई उचित व्यवस्था नहीं थी।

बरोड़गारी तथा इसके साथ ही मौकरी से हटा दिए जान का जब हमारे धमिकों के जीवन में एक अल्प विपदा है। वर्तमान समय की औद्योगिक सुरक्षा में से यह सबसे निकृष्ट (Worst) और विस्तृत सुराई है। इसमें निराश्रयता (Destitution) विद्या कृति बाल धम माइसा धम कम मजदूरी अमान्यता तथा मजिदरान्तर्गी सामाजिक सुरक्षा उत्पन्न हो जाती है। जो धमिक अपने गाँव वापस जा सकते हैं वे अपने संबंधियों के अल्प साधनों पर भार स्वकप हो जाते हैं और साधारणतः उनके गाँव में वापस जाने का स्वागत भी नहीं किया जाता। जो वापस नहीं जा सकते वे औद्योगिक नगरों में भूख मरते हैं और निराश्रयता का जीवन व्यतीत करते हैं।

धमिक पर उम समय भी मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ता है जब वह अस्थायी रूप से असमर्थ हो जाता है या परिवार के एक मात्र रोजी कमाने वाला भी मृत्यु हो जाती है जो अपने पीछे एक विधवा व अनाथ बच्चे अथवा अल्प धर्मियों को छोड़ जाता है जिनकी देखभाल करने वाला कोई नहीं रहता अथवा जब मजदूर पूर्णतः असमर्थ हो जाता है या अकाल्य ग्रहण कर लेता है अथवा वृद्ध हो जाता है और काम के अयोग्य हो जाता है। इन समय-समय पर पड़ने वाली विपत्तियों के लिए कोई भी बचाव का साधन नहीं है और इनके घने पर बही पुरानी कहानी दोहराई जाती है—अल्पविक्रम अल्प निम्नतम जीवन स्तर, अल्पश्रमता में दारिद्र्य तथा उत्पादन में कमी और अल्प सामाजिक सुरक्षा। इस प्रकार इस समय में पूर्ण सत्यता है कि धमिकों की निम्नता एवं सामाजिक सुरक्षा का सबसे अधिकारकारी कारण नहीं है कि उनको बीमारी और बरोड़गारी से उनकी आय में बिम्ब पड़ जाता है। ऐसी बटनाएँ भी मिलती हैं कि एक मजदूर की मृत्यु पर अथवा उसका पूर्णरूप से निम्न हो जाने पर उसकी पत्नी और बच्चियों को समाज के अर्थियों का धिक्कार होना पड़ता है और उन्हें धर्मिक जीवन व्यतीत करने के लिये बाध्य होना पड़ता है।

धमिकों को सामाजिक सुरक्षा -

इस प्रकार वर्तमान भारत में धम की अल्पविक्रम अल्पविक्रम व अनुपस्थिति की तीव्र समस्याओं से उत्पन्न हुई अल्पविक्रम सामने आती है। नगरों में निर्धन धमिकों को किसी प्रकार की कोई मुक्ति नहीं मिल पाती। अपने धम नाम मात्र का ही एक मकान होता है उनको अल्पविक्रम तथा अल्पविक्रम आवासीय में रहना पड़ता है और बीमार पड़ने पर उनकी देखभाल करने वाला भी कोई नहीं होता। मौकरी से हटा दिए जान पर उचित अल्पविक्रम करने वाला भी कोई अल्पविक्रम नहीं

होता। जब वह पूर्णतः धनवाध धरती है तो उसकी रीति-रिवाज की तरह उपेक्षा की जाती है। बूढ़ा हो जाने पर उसे बेकार वस्तुओं की तरह फेंक दिया जाता है। इस प्रकार के सारे कष्ट बुद्ध और बुद्धिमान धाने पर उसके पास धरण देने का स्वान केवल गांव रह जाता है। परन्तु गांव के साथ भी उसके सम्बन्ध टूटते जा रहे हैं क्योंकि प्राकृतिक सम्पत्ता के प्रभाव से संयुक्त परिवार तथा गांव का सामुदायिक जीवन समाप्त हो गया है और गांव में भी जीवन निर्वाह के लिये कठोर परिस्थितियां पैदा हो गई हैं।

सामाजिक बीमा व्यवस्था के लाभ —

इस बात को धरतीकार नहीं किया था सचता कि उपरोक्त विपत्तियों से बचने के लिये किसी न किसी सुरक्षा व्यवस्था की धारणिक आवश्यकता है। इसमें संदेह नहीं कि सामाजिक-बीमा व्यवस्था ही मनी प्रकार से धमिकों की जीवन क सामान्य संकटों से सुरक्षा कर सकती है। यह संकट ऐसे होते हैं जिनसे धमिक स्वयं अपने प्रयत्नों द्वारा रक्षा नहीं कर पाता। धमिकों के स्वास्थ्य तथा बीमिका की सुरक्षा के लिये जिसके वे धमिकारी हैं सामाजिक बीमा ही विशेषपूर्ण और कुशल साधन है। सामाजिक-बीमा योजना का एक नाम यह है कि इसमें धमिक का सहयोग भी होता है क्योंकि धमिकों से भी इसमें संघदान लिया जाता है। यह निश्चित धमिकारों के धाधार पर नाम प्रदान करती है तथा नाम प्राप्त करने वालों का धारणसम्मान बनाये रखती है। इसका उद्देश्य मजदूर की कोई हुई कार्य करने की लक्ष्य को धीरे से धीमे तथा पूर्णतया पूरा करना है तथा यह बीमिकों पार्षन के कार्यों क एक बाने के समय मजदूर की सहायता करता है। कोई भी धारण सम्मानित और प्रगतिशील दस अपने धमिक बर्ग को उनके ही ग्लून साधनों पर नहीं छोड़ सकता और न ही ग्याय और धीरधिय की दृष्टि से धमिकों को इस संस्था से धामों में बिलग रण सकता है। धन यह धरतबर धनुभव किया था रहा है कि कोई भी राष्ट्र दस की मानव धमिक को इस कुरी तरह से धर्य नहीं कर सकता। हर देश के लिये यह धारणस्यक है कि वह धपनी कार्य माध्य जनसंख्या की नैतिक और धारणिक धमिक में वृद्धि करे और धाने धाने वाली धीरधियों के लिये राह तैयार करे तथा उन धामों की रक्षण करे जो उत्पादक कार्यों के योग्य नहीं रहे हैं। धमिकों के ध्यक्तिगत और सामूहिक प्रयत्नों को धर्मधारणियों के ध्यक्तिगत तथा सामूहिक धानों को तथा राष्ट्र के धूपक-धूपक रूप से धिये धये धीरधनिक प्रयत्नों का संवर्धन और एकधित कर लेना धाहिये ताकि धमिक स धमिक संख्या में लीनों को धमिक ने धमिक नाम पहले। इसी प्रकार के प्रयत्न सामाजिक धीमे में धरतकाटा तक पहुंचते हैं। सामाजिक-बीमा एक धाकाश धीप है जो प्रजातन्त्र के धारण को रक्ष करता है और धमिक्य की प्रगति की राह को प्रकाशमान करता है। इसमें सामाजिक ग्याय का धारण निहित है क्योंकि बुद्धिमानों की धारण धरतकाटा धीसे संकट को धमिकों पर धरते हैं वे प्राकृतिक उद्योग के संगठन और प्रगण्य के कारण ही

उत्पन्न होते हैं। इसी कारण के समाज के सदस्यों द्वारा एक निश्चित सोचा एक सहज क्रिये जाने चाहिये। इस प्रकार की योजनाओं की व्यवस्था विरह के प्रत्येक देश की सामाजिक व सामाजिक दानि और समृद्धि के लिये प्रत्येक प्राथमिक समझी जाती चाहिये। सामाजिक सुरक्षा सेवाओं का निर्माण समाज के लिये पर्याप्त सामग्र्य होना बिनासे समाज में नैतिक सम्मान की कृति होगी। ऐसी घाटीरिक्त तथा मानसिक बीड़ाओं को भी सीधे रूप से दूर किया जा सकेगा जिनसे घण्टिकाएँ सोच दूब उठाते हैं। इन सुरक्षाओं के कारणों को दूर करने में भी सहायता मिलेगी तथा सामाजिक सुरक्षा से समाज के बाधे में भी हटाया जाएगा। सामाजिक सुरक्षा केवल इसी लिये प्राथमिक नहीं है कि श्रमिकों को भी सुख से रहने का अधिकार है अपितु वह सामाजिक दृष्टिकोण से भी प्राथमिक है क्योंकि जब तक श्रमिकों को जीविका के अन्धे साधन नहीं प्राप्त किये जायेंगे तथा अनेक विपत्तियों में उनकी रक्षा नहीं की जायगी तब तक उनमें आत्मिकारी विचारों को फैलने में रोकना कठिन होगा।

कुछ व्यक्तियों का मत है कि श्रमिकों की उत्पादन प्रेरणा पर सामाजिक सुरक्षा का प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं होगा क्योंकि सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था उत्पादकों को कम करती है जिम्मेदारता उत्पन्न करती है तथा जोखिम उठाने के साहस और इच्छा को क्षति पहुँचाती है। सामाजिक सुरक्षा को व्यापक व्यवस्था में उत्पादकों की ओर से अनुत्पादकों को सान प्रदान किया जाता है अर्थात् जो योग्य हैं और रोजगार पर लगे हैं वे उन व्यक्तियों की सहायता करते हैं जो कुछ हैं बीमार हैं और बेरोजगार हैं। परन्तु यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिये कि सामाजिक सुरक्षा द्वारा जो सहायता प्रदान की जायगी उसके कारण ऐसे बीमार और बेरोजगार व्यक्ति जो कार्य योग्य प्रायु के होते हैं, फिर वे उत्पादक बन सकते हैं। इससे प्रतिरिक्त सामाजिक सुरक्षा द्वारा उन्हें जो भी सहायता मिलेगी वह उन्हें इन योग्य भी बना देगी कि अपने रोजगार को पुनः पाने पर पहले से प्रत्यक्ष कार्य करें। इस सहायता के न होने पर कठोर समाजों के कारण उनकी कार्य क्षमता को बहुत क्षति पहुँचाती है। अर्थात् कि सर विलियम वेबेजि ने कहा है "यह प्राथमिक नहीं है कि उचित प्रकार से प्रायोजित नियमित तथा विश्व व्यवस्थित अर्थात् एक समस्त सामाजिक-सोचा व्यवस्था उत्पादन प्रेरणा पर बुरा प्रभाव डाले" बल्कि सामाजिक सुरक्षा से उत्पादन बढ़ सकता है क्योंकि अनुत्पादकों के कारण जो कुछ धन बिनाएँ और अभाव श्रमिक के जीवन में आ जाते हैं और उसको भी क्षति पहुँचाती है उस क्षति को सामाजिक सुरक्षा कम कर देती है। राज्य को सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ संवर्धित करते समय यह भी ध्यान रखना चाहिये कि सामाजिक सुरक्षा से केवल एक शून्यतम राष्ट्रीय जीवन स्तर की ही व्यवस्था होगी है तब श्रमिक व्यक्तियों को ऐच्छिक प्रयत्नों द्वारा (अपने तथा अपने परिवार के लिए इन शून्यतम स्तर से अधिक अर्जन करने के लिए) उत्साह तथा प्रयत्न प्राप्त होना रहे।

सामाजिक बीमे की विभिन्न व्यवस्थाएं —

किन्ती रेश की सामाजिक-बीमा व्यवस्था में पूर्णता आने के लिए यह आवश्यक है कि ऐसी सारी परिचित विपत्तियों से रक्षा होने की उचित व्यवस्था हो जिनसे श्रमिक या कोई भी व्यक्ति कष्ट या संकट हो सकेता है तथा जो उन्हें जीविकोपार्जन के व्यवसायों से संबंधित रख सकती है। जो संकट श्रमिकों को उनकी धनित करने की क्षमता से संबंधित रख सकते हैं, वे निम्न बातों से उत्पन्न हो सकते हैं — (क) बीमारी दुर्घटना बेरोजगारी प्रसव काल आदि के कारण जीविका कमाने की अयोग्यता (ख) स्थायी अक्षमता जैसे पूर्ण अक्षमता पुरानी निवृत्तता बृद्धावस्था आदि (ग) मृत्यु, जिससे परिवार का एकमात्र रोने कमाने वाला एक साधन समाप्त हो जाता है। इसमें हम संबंधित तथा घनाप हो जाना सम्मिलित कर सकते हैं। इस प्रकार एक पूर्ण सामाजिक-बीमा व्यवस्था क निम्नलिखित भाग कहे जा सकते हैं — (१) बीमारी तथा निवृत्तता बीमा (२) दुर्घटना बीमा (३) मातृत्व हित बीमा (४) बेरोजगारी बीमा (५) बृद्धावस्था बीमा (६) उत्तरजीवी बीमा।

भारत में सामाजिक-सुरक्षा की वर्तमान व्यवस्था -

भारत में अभी तक उल्लिखित विपत्तियों में से किसी के लिए भी पूर्णतः सामाजिक-बीमा व्यवस्थाएं लागू नहीं की गई हैं यद्यपि १९४८ के कर्मचारी राज्य-बीमा अधिनियम तथा १९३२ के कर्मचारी प्रोवीडेंट-फण्ड अधिनियम के पारित होने से इस धोरण पर उठाया जा चुका है। इन दोनों के अतिरिक्त अन्य विधियों में भारत एक पिछड़े हुए देशों में से कहा जा सकता है। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि यहाँ इन विपत्तियों से किसी भी प्रकार की सुरक्षा नहीं रही है। निश्चय ही यहाँ कुछ सुरक्षा की व्यवस्था रही है यद्यपि ऐसी सुरक्षा को सामाजिक-बीमा नहीं कहा जा सकता। श्रमिकों को दुर्घटनाओं प्रसव काल और बीमारी में सुरक्षा प्रदान करने के लिए सरकार ने अनेक अधिनियम पारित किये हैं तथा अभी हाल में ही अन्य विधियों में भी प्रयत्न किये गये हैं। एक और प्रकार की सुरक्षा जो श्रमिकों को दी गई है, वह न्याय कायों की है जिसका पिछले अध्याय में विस्तारपूर्वक उल्लेख किया जा चुका है। परंतु जो मुख्य रूप से कामूनी सुरक्षा प्रदान की गई है वह निम्न विधियों पर है — (१) औद्योगिक बीमारियों तथा दुर्घटनाओं की क्षतिपूर्ति (Compensation) के लिए, (२) स्त्री श्रमिकों के मातृत्व हित लाभ के लिए, (३) स्वास्थ्य बीमा घटनी के समय क्षतिपूर्ति तथा प्रोवीडेंट फण्ड की व्यवस्था।

भारत में श्रमिकों के लिये क्षतिपूर्ति की व्यवस्था

(Workmen's Compensation in India)

क्षतिपूर्ति की आवश्यकता —

औद्योगिक दुर्घटनाओं से जो प्रत्येक देश में होती हैं, श्रमिकों की रक्षा करना आवश्यक है। मंगलिन उद्योगों में मशीनों तथा यांत्रिक यंत्रों के बढ़ते हुए प्रयोग

के भारत में भी औद्योगिक दुर्घटनाओं की संख्या में सामान्यतः वृद्धि हो गई है। कारखाना अधिनियमों के कई सुरक्षा साधनों के सम्बन्धित उपबन्ध बनाये गये हैं जिनकी कारखानों में लागू करना अनिवार्य है। उदाहरणार्थ मशीनों के चारों ओर रोक लगायाना "पहले घपनी मुरदा" नामे इस्तहार घाम बुझाने के साधन इत्यादि। परन्तु इतना सब होने के पश्चात् भी दुर्घटनाएँ हो ही जाती हैं जिनका कारण कुछ तो खतरनाक मशिनों से मुरदा करने के पर्याप्त साधनों का अभाव होता है और कुछ अधिकियों की लापरवाही के कारण होतो हैं। यमन बिचार या निर्माण के कारण या आकरयक नाबखानी न रन सकने के कारण या मन्ने में अनभिन्न होने के कारण घपना अधिक कार्य करने के कारण भी दुर्घटनाएँ हो जाती हैं। दुर्घटनाओं की संभावना सर्वत्र रहती है क्योंकि मशीनों बहुत बिगाम और बिकट प्रकार की हो गई हैं और उत्पादन की गति अति तीव्र हो गई है। दुर्घटनाएँ होने का घप है मृत्यु घपना स्वायी या अस्वायी असह्यता और इनके कारण प्रायिक साधनों व मानव क्षमता का नाश और इसके पश्चात् अधिकों तथा उनके प्रायितों को मिलने वाले कष्ट। इस प्रकार अधिकों के लिए औद्योगिक दुर्घटनाओं की उत्तिपुति की ब्यबस्था प्रत्येक देश के घप बिगाम का आकरयक घंग हो गयी है तथा अनेक देशों में यह सामाजिक-बीमा योजनाओं के अन्तर्गत सम्मिलित कर ली गयी है।

दतिपुति प्रदान करने का अनुमोहन प्रायिक तथा मानवीय दोनों ही दृष्टियों से फिया या मकता है। दतिपुति प्रदान करना एक ओर तो मानव जीवन के मूल्य को स्वीकार करना है तथा दूसरी ओर इसके कारण अधिकों में मुरदा की भावना उत्पन्न हो जाती है। उनकी कार्य-क्षमता में वृद्धि होतो है तथा औद्योगिक कार्यों का घनाकरण कम हो जाता है। दतिपुति के उत्तरनामितिक के कारण प्रायिक दुर्घटनाओं को रोकने के लिए उचित मुरदा के मान्य प्रदान करने का भी ध्यान रखते हैं तथा इस कारण ही वे अधिकों को उचित बिकित्वा मुक्तिपूर्ण प्रदान करने के लिए प्रेरित होते हैं। यह भी स्वीकार किया गया है कि चाहे ब्यबभाव होना हो घपना बड़ा चाहे उम कार्य को उत्तरनाक ममना जाठा हो घपना कम संकल्पपूर्ण चाहे बहु कार्य औद्योगिक बाणिज्य सम्बन्धी या इति का हो चाहे घयिक का बेन नम हो या प्रायिक उमका कार्य पारोतिक हो चाहे न हो और अन्त में चाहे बहु औद्योगिक दुर्घटना का निवारण हुपा हो घपना ब्यवभावबनिन बीमापी का इन सब ब्यबस्थाओं में मजदूरों को दतिपुति का अधिचार बीसा ही रजना है।

दतिपुति के लिए कुछ प्रारम्भिक ब्यवस्थाएँ -
 यद्यपि मजदूरों द्वारा दतिपुति की मांग १८८४-१८८५ तथा १९१० में की गई थी परन्तु १९२१ में घयिक दतिपुति अधिनियम पारित होने में पूर किसी घावत घयिक के लिए जिस कार्य करते समय जो- लगी हो यह सम्भव नहीं था कि बहु कोई हजाना या दतिपुति पा सके। परन्तु कुछ समयों पर, माघारण कानून के अन्तर्गत प्रायिकों पर उमकी अगाबखानी के कारण दतिपुति देने का दायित्व का

अर्थात् एक मृतक श्रमिक के श्रावित कुछ स्थितियों में १८८३ के भारतीय श्रावक दुर्घटना अधिनियम (Indian Fatal Accidents Act) के अन्तर्गत मुआवजे का दावा कर सकते थे। परन्तु यह मुआवजा तब ही मिल सकता था जब यह प्रमाण मिल जाता था कि किसी व्यक्ति के श्रावित कार्य असावधानी या भूल के कारण ही दुर्घटना से मृत्यु हुई है। परन्तु इस अधिनियम में क्षतिपूर्ति पाने की कार्य प्रणाली इतनी कष्टप्रद थी कि यह क्षति बिलाने में श्रमिक सहायक सिद्ध न हो सकी। किन्तु १९२२ में भारतीय अधिनियम में एक बारा धीरे बोड़ भी गई थी जिसमें फ़ौजदारी न्यायालय को इस बात का अधिकार दे दिया गया था कि वे बोट पहुँचाने वाले व्यक्ति पर हुए घुमने का कुछ हिस्सा बोट वाले हुए व्यक्ति या उनके श्रावितों को देने का आदेश दे सकते हैं।

१९२३ का श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम —

१९२१ में सरकार ने जनता का मत जानने के लिए कुछ क्षतिपूर्ति के सम्बन्धित प्रस्ताव परिष्कारित किये। उन प्रस्तावों को अधिष्ठापित अनुमोदन प्राप्त हुआ जिसके फलस्वरूप मार्च १९२३ में श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम पारित किया गया और १ जुलाई १९२४ को लागू कर दिया गया। इस अधिनियम में १९२६ और १९२९ में कुछ संशोधन हुए जिनका उद्देश्य कुछ छोटे-छोटे परिवर्तन करना था और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघटन के व्यवसाय श्रमिक बीमारियों के अधिसूचक को मान्यता देनी थी और अधिनियम के कुछ शेषों को दूर करना था। शीघ्र श्रम आयोग ने अधिनियम के उपबन्धों की विस्तृत रूप से जांच के पश्चात् इनमें सुधार करने के कुछ सुझाव दिये। इन सिफारिशों के फलस्वरूप १९३३ में इस अधिनियम को पुनर्गठित व संशोधित करने वाला एक अधिनियम पारित किया गया जो जनवरी १९३४ से लागू कर दिया गया। इस अधिनियम द्वारा पहले अधिनियम का क्षेत्र और भी विस्तृत हो गया। इसके पश्चात् अधिनियम में छः और धाराओं पर अर्थात् १९३७ में १९३८ में १९३९ में १९४२ में १९४६ और १९४९ में संशोधन किया गया। इन अधिनियमों को कुछ धाराओं द्वारा भी विस्तृत रूप से साबू किया गया था। यह धाराएं १९४८ का भारतीय स्वतन्त्रता धाराएं (केन्द्रीय अधिनियम और अध्यादेशों का अनुकरण) और १९४९ का कानून का अनुकरण (Adaptation) करने के धाराएं थे। इसके अतिरिक्त कुछ के समय को और पद मुद्र के कारण जो क्षति होती थी उसके लिए सुरक्षा देने के हेतु, उभये गये। वे निम्नलिखित थे — १९४९ का मुद्र क्षति अध्यादेश और १९४९ का मुद्र क्षति (क्षतिपूर्ति बीमा) अधिनियम। इन दोनों के अन्तर्गत लड़ाई के कारण श्रावक कर्मचारियों को चिकित्सा मुआवजा तथा अन्य सहायता और क्षतिपूर्ति प्रदान की जाती थी। यह क्षतिपूर्ति भी उही सीमा तक मिसता थी जो श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम के अन्तर्गत मिलती है। श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम में सबसे महत्वपूर्ण संशोधन सन् १९४६ और १९४९ के थे। १९४६ के संशोधन के अनुसार ३० व ४० मजदूरी प्राप्त करने वाले श्रमिकों के

स्थान पर अब ४०० रु० तक प्राप्त करने वाले श्रमिक भी अधिनियम के अन्तर्गत पा गये हैं। १९२९ के संशोधित अधिनियम के अनुसार, जो माघ १९२९ में पारित हुआ और जून १९२९ से लागू हुआ है अतिपूर्ति देने के हेतु बयस्क और अल्पबयस्क का अन्तर दूर कर दिया गया है और अब कई श्रावणों में परिवर्तन किये गये हैं। अधिनियम जैसा इस समय लागू है, उगने उपर्युक्त निम्नलिखित है —

क्षेत्र —(Scope)

यह अधिनियम ऐसे-से कारखानों, शानों, बाघान, रंग से बलम वाली गाड़ियों निर्माण कार्यों तथा अन्य गकट-पूर्ण रोज़गारों में काम करने वाले छोटे श्रमिकों पर लागू होता है। जो लोग कम्पनी अथवा प्रशासन काम करते हैं या सदास्य सेवा में या शैथिलिक (Casual) काम पर हैं अथवा जिनकी मासिक आय ४०० रु० से अधिक है वे इस अधिनियम के अन्तर्गत नहीं आते। श्रावण (Seamen) और समुद्र पर काम करने वाले लोग कुछ अन्य श्रमिक जो किसी श्रमिक द्वारा चलने वाले जहाज पर काम करते हैं या १० या इससे अधिक अन्य वाले किसी जहाज पर मौकुर हैं वे भी इस अधिनियम के अन्तर्गत नहीं आते हैं। साधारणतः अधिनियम उन समस्त श्रमिकों पर लागू होता है जो संगठित उद्यमों तथा सार्वजनिक राजगारों में काम पर लिये हुए हैं। १९२९ के संशोधित अधिनियम में ऐम श्रमिका की परिभाषा और भी स्पष्ट कर दी गई है। बिजु राज्य सरकारों को यह अधिनियम है कि वे अधिनियम का विस्तृत कर अन्य प्रकार के व्यक्तियों पर भी लागू कर दें जिनके व्यवसाय सार्वजनिक समझे जाते हैं। मद्रास उत्तर प्रदेश मंडल तथा बिहार की सरकारों ने अधिनियम के क्षेत्र को उन लोगों तक विस्तृत कर दिया है जो किसी भी राज्य में चलने वाली गाड़ी में मान उठारने अथवा चढ़ाने का काम करते हैं अथवा ऐसी ही गाड़ियों में मान बा मान में जान या रखने उठाने के कार्य में लिये हुए हैं। बिहार सरकार ने ऐसे श्रमिकों के लिए भी यह अधिनियम लागू कर दिया है जो जमीन के अन्दर गहरी खुदी गलियों की सफाई का कार्य करते हैं या जल सभ निजाम की गलियों में अथवा टुकों पर कार्य करते हैं। मद्रास सरकार ने अधिनियम को विस्तृत कर कारिगार बुनने वाली पर पहनीर के बातायात में लिये हुए श्रमिकों पर, माससाधने उठारने वाली पर तथा शक्ति प्रयोग करने वाली नव संस्थाओं पर जो कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत नहीं आती है यह अधिनियम लागू कर दिया है। मंडल सरकार ने किसी भी जिला बोर्ड अथवा नगर पालिका के गुने में कार्य करने वाले कर्मचारियों पर भी यह अधिनियम लागू किया है। बम्बई सरकार ने इस अधिनियम को शानों के ऐम श्रमिकों तक विस्तृत कर दिया है जो टुकुर चलाने अथवा अन्य किसी श्रावण मापन के लिए मौकुर हैं। उन शिथिल प्रकार के श्रावणों की एक श्रुति है जिनमें काम करने वाले श्रमिकों पर यह अधिनियम लागू होता है अर्थात् जो श्रमिक निम्नलिखित कार्य करते हैं — इमारतों के निर्माण-कार्य उनकी मरम्मत अथवा ढालने में, गड़कों पुन बांध सुरंग तार, टैलीफोन या

बिजली के कामों नहूँ पाइए बिछाना जिन मज निकास के वाले रस्ती के पुस प्राव बुझाने वाले पेट्रोल विस्फोटक कार्य बिजली या गैस का कार्य प्रकाश स्वप्न चिन्तेमा बिजाना जंमसी जानवरों को पालना गोटाकोर इत्यादि इत्यादि । १९३६ के संशोधन द्वारा इस प्रकार के रोजगारों की सूची और विस्तृत कर दी गई है । यदि कोई व्यक्ति १९४८ के कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम के अन्तर्गत आता है और वह कर्मचारी राज्य बीमा निगम से प्रथमपंथा और प्राथम्यता लाभ पाने का अधिकारी है तब उसे मानिका से इस अधिनियम के अन्तर्गत क्षतिपूर्ति पाने का अधिकार नहीं है । जम्मू व काश्मीर राज्य के प्रतिरिक्त यह अधिनियम समस्त भारत में लागू होता है ।

क्षतिपूर्ति पाने का अधिकार — (Title to Compensation)

क्षतिपूर्ति मानिकों द्वारा ही जाती है और ठेके क कामियों के लिए भी क्षति पूर्ति देने का उत्तरदायित्व मुख्यतः मानिकों पर है । यह क्षतिपूर्ति उस समय ही जाती है जब अधिक को अपने रोजगार के कारण या कार्य करते समय किसी दुर्घटना से क्षति पहुंचती है । क्षतिपूर्ति उस समय नहीं दी जाती जब कोई व्यक्ति तीन दिन से अधिक अवकाश नहीं खाता या क्षति (मृत्यु न होने पर) स्वयं मजदूर की जाती है होती है उदाहरणतः जब अधिक किसी मशीनी बीज या शरण के प्रभाव में हो या उसने किसी प्राजा का जान-बूझकर उल्लंघन किया हो आदि । मृत्यु के प्रवहार पर मानिकों को प्रत्येक परिस्थिति में क्षतिपूर्ति देनी होती है ।

व्यवसाय जनित बीमारियाँ — (Occupational Diseases)

घातैरिक्त क्षतियों के प्रतिरिक्त कुछ विशिष्ट व्यवसाय जनित रोग हो जाने पर भी क्षतिपूर्ति प्रदान की जाती है । ऐसे रोगों का सम्बन्ध अधिनियम की तीसरी सूची में किया गया है उदाहरणतः सीसा बुझा फ़सफ़ोरस पारे के विष प्रयोग से ब बन्द हुआ आदि से होने वाली बीमारियाँ । राज्य की सरकारों को बीमारियों की सूची में और लाभ बढ़ाने का अधिकार है जैसा कि कुछ राज्य की सरकारों ने किया भी है । १९३६ के संशोधन अधिनियम के अनुसार उस सूची का जिसमें ऐसी बीमारियाँ और क्षतियों का सम्बन्ध है जिनके लिए क्षतिपूर्ति दी जाती है, अधिक विस्तृत तथा व्यापक कर दिया गया है और ऐसी क्षतियों की संख्या जिनके कारण स्थायी प्राणिक प्रथमपंथा हो जाती है १४ से बढ़ा कर २४ कर दी गई है ।

क्षतिपूर्ति की राशि — (Amount of Compensation)

क्षतिपूर्ति में दी जाने वाली रकम राशि और के प्रकार तथा अधिक की प्रथमपंथा मानिक मजदूरी पर निर्भर है । इस उद्देश्य से क्षतियों को तीन भागों में बाँटा गया है— (१) ऐसी क्षति जिसके कारण मृत्यु हो जाती है, (२) ऐसी क्षति जिनसे स्थायी पूर्ण या प्राणिक प्रथमपंथा हो जाती है (३) ऐसी क्षति जिनसे स्थायी प्रथमपंथा हो जाती है । बराबर और प्राण बचावों के लिए क्षतिपूर्ति की रकम पहले

निम्न की (जैसा कि आगामी तालिका से स्पष्ट हो जाएगा) परन्तु जब बयस्क और अल्पवयस्क का अन्तर १६१६ के संगोपन द्वारा समाप्त कर दिया गया है। मृत्यु हो जाने पर अधिनियम में दी हुई शक्तिपूर्ति की दरें निम्नतम वेतन बर्ग (प्रर्षात् १० रु० प्रतिमाह से कम) के व्यक्तियों पर १० रु० से लेकर, उच्चतम वेतन बर्ग (प्रर्षात् १०० रु० प्रतिमाह से अधिक) वाले व्यक्तियों पर ४१० रु० तक है। स्थायी पूर्ण असक्षमता के समय इसी प्रकार शक्तिपूर्ति की दरें वेतन के अनुसार ७०० रु० से १,१०० रु० तक है। अस्थायी असमर्थता होने पर अधिनियम के अनुसार अधिकों को प्रत्येक घाबे महीने के बाद शक्ति की राशि दी जाएगी और इस राशि की दर इस प्रकार होगी। मासिक वेतन की भांसी राशि से (उन व्यक्तियों के लिए जिनकी मजदूरी १० रु० मासिक से कम है) १० रु० तक (उन व्यक्तियों के लिए जिनकी मजदूरी १०० रु० से अधिक है)। इस प्रकार अस्थायी असमर्थता में दिए जाने के लिए अधिक से अधिक १ रु० निर्दिष्ट है। असमर्थता में प्रथम तीन दिनों के लिए कोई शक्तिपूर्ति नहीं दी जाती उसके पश्चात् ११ वें दिन से घाबे माह के वेतन के हिसाब से शक्तिपूर्ति का दिया जाना प्रारम्भ हो जाता है जो असमर्थता कास में कमता रहता है। यह शक्तिपूर्ति अधिक से अधिक पांच बर्ष तक की जा सकती है। स्थायी शारीरिक असमर्थता के समय शक्तिपूर्ति का हिसाब जनोपार्जन-व्यक्ति में शक्ति पहुचने के प्रतिपक्ष के हिसाब से समाना जाता है और इसका उन्नेत अधिनियम की प्रथम अनुसूची में दिया गया है। १६१६ के संगोपित अधिनियम के अन्तर्गत शक्तिपूर्ति प्राप्त करने के लिये जो सात दिन के प्रतीक्षा काम की व्यवस्था की उमे पडाकर १ दिन कर दिया गया है। यदि असमर्थता का समय २५ दिन या इससे अधिक है तब असमर्थ होने के दिन से ही शक्तिपूर्ति देने की व्यवस्था की गई है।

अन्ते पृष्ठ पर दी हुई तालिका में विभिन्न वेतन बर्गों की शक्तिपूर्ति की दरें दी गई हैं।

आश्रित - (Dependants)

यदि अधिक की मृत्यु हो जाती है उस समय जो आश्रित शक्तिपूर्ति के अधिकारी हैं अधिनियम में उनकी भी एक सूची दी गई है। उनको दो भागों में बांटा गया है। प्रथम वे जो बिना प्रमाण के ही आश्रित समझे जाते हैं तथा दूसरे वे जिन्हें यह प्रमाणित करना पड़ता है कि वे मृत व्यक्ति के आश्रित थे। प्रथम भाग में निम्नलिखित व्यक्ति आते हैं—विधवा अल्पवयस्क बंध-पुत्र बंध-परिवारहित पुत्री अथवा विधवा माँ। दूसरे बर्ग में निम्नलिखित व्यक्ति आते हैं—विधुर पिता विधवा माँ के अतिरिक्त माता या पिता अल्पवयस्क अर्ध-पुत्र अतिरिक्त अर्ध-पुत्री विधवा माँ या विधवा अल्पवयस्क पुत्री अल्पवयस्क माँ अतिरिक्त या विधवा अल्पवयस्क पुत्र अथवा मृत पुत्री का अल्पवयस्क बच्चा जबकि उनके माता-पिता में से कोई जीवित न हो और यदि अधिक के माता पिता जीवित नहीं हैं तो बारा और बारी।

क्षतिपूति की दरें

दुर्घटनाद्वारा क्षतिकार मासिक वेतन	क्षतिपूति की राशि				अस्थायी अक्षमता की क्षतिपूति के विषये प्रत्येक घाबे माह पर भुगतान	
	मृत्यु		स्थायी सम्पूर्ण अक्षमता		अस्थायी	अस्थायी
	अस्थायी	अस्थायी	अस्थायी	अस्थायी		
100	100	100	100	100	100	100
200	200	200	200	200	200	200
300	300	300	300	300	300	300
400	400	400	400	400	400	400
500	500	500	500	500	500	500
600	600	600	600	600	600	600
700	700	700	700	700	700	700
800	800	800	800	800	800	800
900	900	900	900	900	900	900
1000	1000	1000	1000	1000	1000	1000

क्षतिपूति का वितरण :- (Distribution of Compensation)

इन बात की भी व्यवस्था है कि समस्त घातक दुर्घटनाओं की सूचना एक क्षतिकार क्षतिपूति कमिश्नर को ही आयची घोर यदि मासिक रूपसे उत्तरदायित्व को स्वीकार करता है तब उसे कमिश्नर के पास क्षतिपूति की राशि जमा करनी होगी। वरन्तु जब मासिक रूपसे उत्तरदायित्व को नहीं स्वीकार करता तो कमिश्नर जांच करने के पश्चात् प्राप्ति को यह सूचित कर सकता है कि वे यदि वाचा करना चाहें तो कर सकते हैं तथा इन विषय में वह हर प्रकार की सूचना दे सकता है। अधिनियम

वर्धनशील क्षतिपूति अधिनियम, अर्द्ध शरीर, भाग ४। सन १९२१ से अक्षम शरीर वाले क्षतिकार का अक्षर नहीं रहा है।

में इस बात की धारणा नहीं है कि क्षतिपूर्ति के लिए मासिक और मजदूर वापस में तब झीठा कर लें। भासिकों द्वारा क्षतिपूर्ति में भ्रम केवल १०० ६० तक प्रतिम राशि की जा सकती है। कमिश्नर को यह भी अधिकार है कि वह क्षतिपूर्ति की राशि में से २५ ६० तक धरोपेस्ट किया पर अन्य कर्म दाव व्यक्तित को इन क लिए काट में। १९२६ के संशोधित अधिनियम के अन्तर्गत इस बात की भी व्यवस्था हो गई है कि समय पर क्षतिपूर्ति न देने पर बण्ड दिया जायगा।

अधिनियम का प्रशासन — (Administration of the Act)

अधिनियम का प्रशासन राज्य सरकारों द्वारा किया जाता है जिससे अधिनियम के अन्तर्गत अधिक क्षतिपूर्ति कमिश्नर की नियुक्ति की है। बिबादास्पद मामलों को तय करना किसी क्षति से मुक्त होने पर क्षतिपूर्ति दिखाना तथा सामयिक भुगतानों की जाँच करना आदि कमिश्नर के कर्तव्य हैं। अधिनियम के अनुसार सम्बन्धित प्राधिकारियों को मासिक एक रिपोर्ट देने के लिए बाध्य है जिसमें दुर्घटनाओं की संख्या क्षतिपूर्ति में दी गई राशि आदि का उल्लेख हो। १९२६ में दुर्घटनाओं की संख्या इस प्रकार की जिनसे मुक्त हुई— १०५५, जिनसे स्थायी घसमपता हुई—२०९६ जिनसे अस्थायी घसमपता हुई—७ ०६९ कुल योग ५९ ०३। वहीं वर्ष मृत्यु पर क्षतिपूर्ति में दो गई राशि २६ ३० २९२ ६ थी और स्थायी घसमपता के लिए दी गई राशि १० ३३ ४१० ६ थी। क्षतिपूर्ति के लिये दी गई राशि का कुल योग ७१ ४३ ६०४ ६ था।

भारत के क्षतिपूर्ति अधिनियम का आलोचनात्मक मूल्यांकन —

सब बातों को देखते हुए कहा जा सकता है कि अधिक क्षतिपूर्ति अधिनियम लक्ष्मणदासपूर्वक लागू किया गया है और इससे लागू करने में कोई कठिनाई भी नहीं हुई है। इसका कारण यह है कि यह अधिनियम बहुत स्पष्ट है और इसको लागू करने के लिए भी बिबाय प्रबन्ध किया गया है। अधिनियम मासिक ने इसके उपबन्धों को लागू करने के लिए अपनी महमति दिखाई है। इसके अतिरिक्त धनक बन्धों के कल्याण कर्मचारियों ने कुछ धन सभा तथा समाज संस्थाओं ने भी अधिनियम के अन्तर्गत क्षतिपूर्ति विभागे में अधिकारी को सहायता की है। उदाहरणार्थ अन्तःराज्य का कमदा मिल मजदूर परिषद बम्बई की दो बाबा विमान बापी उद्योगिक और बम्बई राष्ट्रीय मिल मजदूर सभ आदि ने अधिनियम के प्रकार तथा नियम अधिकारियों को क्षतिपूर्ति विभाग में बण्डा कार्य किया है। कई बार दधीमों ने भी बिना पीस लिए क्षतिपूर्ति के मुद्दमों का सदा है। अधिक क्षतिपूर्ति कमिश्नर का वापस भी क्षतिपूर्ति के लिए कार्यवाही पर लिये में अधिकारियों की सहायता करता है। आद्य संस्कार में मुद्दम सड़ने के लिए कई बार अधिकारियों को आर्थिक सहायता भी दी है। आरम्भ में अधिनियम में जो दोष थे वह भी कई संशोधनों द्वारा दूर हो चुके हैं।

उदाहरणार्थ १९३४ में यह व्यवस्था की गई थी कि यदि चोट घातक है तो स्वयं श्रमिक का दाये होने पर भी मालिकों को क्षतिपूर्ति देनी ही पड़ेगी। १९३८ में उद्योगजनित बीमारियों का क्षेत्र स्पष्ट कर दिया गया तथा घीघ्र एवं धीरे धीरे सपने वाली व्यवसायजनित बीमारियों के अन्तर्गत् प्रत्येक को भी स्पष्ट किया गया और साथ ही उद्योग-जनित बीमारी होने पर क्षतिपूर्ति के लिए जो ६ माह की मोकुरी की दर थी उसको प्रत्येक केवल धीरे धीरे सपने वाली बीमारियों के लिए ही रखा गया है। क्षतिपूर्ति के दाये किए जाने का समय ६ माह से बढ़ाकर १ साल कर दिया गया है। मासिक वेतन की परिभाषा को प्रत्येक स्पष्ट कर दिया गया है जिसके अन्तर्गत प्रत्येक सम्पूर्ण माह की मजदूरी भी आती है चाहे उस मजदूरी के सुगतान की प्रकृति कोई भी क्यों न हो। १९४६ के संशोधन से भी इस अधिनियम में उन्नति हुई है। १९३८ में मालिकों के दायित्व का अधिनियम (Employers Liability Act) भी पारित किया गया था। इसके अन्तर्गत इस बात की व्यवस्था कर दी गई है कि किसी श्रमिक को कोई क्षति पहुंचने पर यदि हुरजाने का दावा किया जाता है तो मालिक इस बात की बलील नहीं देखकर कि श्रमिक का रोजगार सामान्य वा अर्थात् वह कई मालिकों द्वारा काम पर लगा हुआ था। इस १९३८ के अधिनियम को बाद में १९४१ के एक संशोधन से और भी स्पष्ट कर दिया गया है।

श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम का मुख्य दाये —

क्षतिपूर्ति अधिनियम का लागू होने पर इसके कई दाये सामने आये हैं। मालिकों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि अधिनियम उनके प्रति प्रत्याय कर रहा है क्योंकि उनकी यह समझ में नहीं आता कि जिस संकट के सिधे वे व्यक्तिगत रूप से उत्तर दायी नहीं हैं उसकी क्षतिपूर्ति क्यों करें। उदाहरणार्थ चोट चोट के मामले में यदि श्रमिक की मृत्यु स्वयं उसकी ही गमती से होती है तब भी मालिक क्षतिपूर्ति के सिधे उत्तरदायी टहलवा जाता है।

इस अधिनियम का कार्यान्वित होने पर कई दाये पाये जाते हैं जो विशेषकर श्रमिकों के दृष्टिकोण से अधिक गम्भीर हैं। यह अधिनियम ठीक प्रकार से लागू नहीं होता विशेषकर उन छोटे छोटे तथा मुनश्चिन क्षेत्रों में जहाँ साधारणतः इस बात का प्रयत्न किया जाता है कि जैसे भी हो मजदूर को क्षतिपूर्ति न देनी पड़े। बड़ी बड़ी कम्पनियाँ साधारणतः अधिनियम को ठीक प्रकार से लागू करती हैं यद्यपि उनमें भी छोटी मोटी क्षतियों की रिपोर्ट नहीं की जाती। मुनश्चिन क्षेत्रों में प्रार्थनापर कामकाजी करने में बहुत देर हो जाती है क्योंकि कानूनी प्रक्रिया बजाय इसके कि अधिनियम की मूल भावना एवं तत्त्व पर ध्यान दें कानूनी प्रक्रिया (Formalities) में अधिक पड़े रहते हैं। इनके अधिकारी अर्थात् जो कमिश्नर नियुक्त किये गये हैं वे इस अधिनियम के अन्तर्गत आने वाले मामलों का धीमेता से निर्णय नहीं करते क्योंकि वे अपने काम कायों में बहुत व्यस्त रहते हैं। बीगमी कारखानों में जैसे चावल मिलों में या कपास निकासने की मिलों में दुर्घटनाएँ

प्रायः भुवनाथ सेवा की जाती है अथवा यदि ऐसा सम्भव नहीं होता तो एकमुझ राशि देकर फौसमा कर लिया जाता है और क्षतिपूर्ति की पूरी राशि नहीं रो जाती। केन्द्रीय शार्वजनिक निर्माण विभाग में भी अधिनियम संशोधनरूप से सामू नहीं होता विशेषकर टेके पर कार्य करने वाले अधिकारों के लिये। टेकरदार कभी कभी अधिनियम के अनुसार दिये जात जाती राशि के स्वाम पर कम धन देकर पूरी राशि की रमीर ले लेते हैं और कभी कभी तो क्षतिपूर्ति बिल्कुल भी नहीं दी जाती। जारों में भी यह बेघा गया है कि अधिकार कुचटनाओं की मूचना ठरू नहीं की जाती। इस समय मासिक एसी दुर्घटनाओं की मूचना देन के लिये बाध्य नहीं है जिससे मृत्यु नहीं होती बल्कि उनकी क्षतिपूर्ति भन्ने ही की जाती है। कमिश्नर यह नहीं जान पाता कि क्षतिपूर्ति अधिक रूप में दी गई है या नहीं। इसके अतिरिक्त सेवा कार्य रखने की भी कोई सामान्य व्यवस्था नहीं है। इसका परिणाम यह होता है कि जब कुचटना के परचात अधिक और उसका परिवार अपने घर जमा जाता है तब घर का पता जान न होने के कारण उसमें सम्भल करना कठिन हो जाता है। अधिक इतने समानी और अधिनियम होते हैं कि अधिकतर उन्हें इतना भी नहीं मासूम होता कि औद्योगिक कुचटनाओं के होने पर वे क्षतिपूर्ति के अधिकारी हैं। इस सम्भल में अधिकारों को सिमित करने की ओर सरकार, मासिकों और अधिक नर्षों द्वारा बहुत कम धन सठाए गए हैं। इसके अतिरिक्त कोई ऐसी सम्भल नी नहीं है जे अधिकारों को क्षतिपूर्ति प्राप्त करने के लिए कामूनी सहायता प्रदान कर सक। यदि अधिकारों को यह ज्ञात भी होता है कि वह क्षतिपूर्ति पाने का अधिकारी है तब भी उन मासिक से क्षतिपूर्ति मांगनी पड़ती है और इस प्रायना का अधिनियम परिणाम यह जाना है कि जब एक प्रायना को वापस न ले लिया जाय अथवा पारो की राशि को ही क्षतिपूर्ति की पूरी राशि के रूप में स्वीकार न कर लिया जाय, उन बर्सात करने की कमकी दे की जाती है। श्री गिबाणन का कहना है कि "एक सीमा के परचात अपने अधिकारों की पूर्ति कचना भारतीय अधिक के लिए सामान्यक नहीं दे।" अधिकारों को कई बार इस कठिन समस्या का सामना करना पड़ना है कि या तो क्षतिपूर्ति के लिए ओर आसकर अपनी नौकरी में हाथ धा से या इस आश्वासन पर कि उसकी नौकरी बनो ऐसी वह या भी मासिक के उम स्वीकार कर न। यदि मासिक क्षतिपूर्ति देना इसीबार कर देता है तो अधिकार के सामने बेचम सहायता का उस्ता ही रह जाता है जिसमें धनक कठिनारयो हैं। अधिकार का धन न तो इतना धन जाना है और न इतना परचाय ही जाना है कि वह मुनदमपारो का दोर कर सके। इसलिए अधिकारों सामनों में मुनदमा दावर ही नहीं किया जाना। दूसरी बात यह है कि मासिकों के बड़े-बड़े योग्य बर्षीमा के सामने अधिनियम कचमडा भी नगिन्य एतों है। जब जिनो अधिकार की मृत्यु हो जाती है अथवा जब वह किसी सम्भीर कुचटना का गिहार हो जाता है तब दूर जाय में गन्ने जाय उनके अधिकारों के लिए क्षतिपूर्ति का दावा करना कठिन ही जाना है। एव यही

कठिनाई नहीं है कि अधिनियम को बहुधा मालिकों द्वारा लागू नहीं किया जाता बल्कि एक घोर मुसीबत यह है कि अधिनियम में श्रमिकों के लिए दुर्बटनाघों घोर उद्योग जनित बीमारी होने पर चिकित्सा सहायता का कोई भी उपबन्ध नहीं है जो श्रमिक को सबसे बड़ी आवश्यकता है। वास्तव में उद्योग जनित बीमारियों की क्षतिपूर्ति ही नहीं जाती क्योंकि जब भी श्रमिक में किसी क्षतिपूर्ति देने वाली बीमारी का चिन्ह दिखाई देते हैं, मालिक उसको बर्करित कर देता है। इन कारणों के आधार पर सी ए एम० प्रवक्ता का यह कथन है कि श्रमिकों की क्षतिपूर्ति का अधिकार बेचन एक कामची कार्यावाही मान रखे जाता है।*

सुधार के लिए सुझाव —

इन सब दोषों को दूर किया जाना चाहिए। अधिनियम की मुख्य धारणों का भारतीय मापानों में प्रत्येक कारखानों के किसी मुख्य स्थान पर प्रदर्शन करना चाहिए, तथा जैसे ही श्रमिक नीकरी पर धाटा है उसको उसकी भाषा में अधिनियम के सारांश की एक प्रति दे देना लाभदायक होगा। श्रम कल्याण अधिकारियों एवं श्रमिक संघों को ममाघों और व्याख्यानों द्वारा इस सम्बन्ध में श्रमिकों को शिक्षित करना चाहिए। यह भी वांछनीय है कि राज्य द्वारा दुर्बटनास्त श्रमिकों को निःशुल्क वातुनी सहायता प्रदान की जाए तथा उनको निःशुल्क चिकित्सा सहायता भी दी जाए। क्षतिपूर्ति स्वतः प्राप्त हो जानी चाहिए तथा सभी प्रकार की—मृत्युजनक प्रपदा प्रत्येक दुर्बटनाघों की सूचना तत्काल ही श्रम कमिश्नर को दी जानी चाहिए और इसके बाद नीम ही एक रिपोर्ट दी जानी चाहिए जिसमें प्रत्येक दुर्बटना के लिए दी गई क्षतिपूर्ति की राशि दिखाई जानी चाहिए और जहाँ क्षतिपूर्ति देना धरतीकार कर दिया जाता है उसके सम्बन्ध में कारणों की स्पष्टीकरण भी दी जानी चाहिए। निरीक्षण कर्मचारियों को इन श्रमिकों के मामले प्रथम हाथ में लेने का अधिकार होना चाहिये किन्तु कि मालिकों द्वारा उनकी क्षतिपूर्ति नहीं दी गई है। प्रशासनिक व्यवस्था सरल होनी चाहिये तथा क्षतिपूर्ति के मामलों का घोर निबटारा किया जाना चाहिये। इन बातों की भी आवश्यकता है कि क्षतिपूर्ति श्रमिक के जीवन निर्वाह व्यय व उनके परिवार के सदस्यों की रक्षा के अनुसार दी जाए।

श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम में फिर से संशोधन करने का विचार किया जा रहा है। क्षतिपूर्ति को बरों को मृत्यु और स्थायी असमर्थता होने पर बुझा कर देने का सुझाव है। इकमुस (Lumpsum) सुगतान के स्थान पर सामयिक रूप से क्षतिपूर्ति की राशि देनी चाहिये और इन राशि का वितरण कर्मचारी राज्य बीमा नियम के द्वारा होना चाहिये। सम्पादी असमर्थता के लिये भी क्षतिपूर्ति की दर को २५% बढ़ा देने का सुझाव है और अधिनियम को ४० व ४१ के स्थान पर ३०० व पांच बाने कर्मचारियों तक लागू कर देने के सम्बन्ध में भी विचार किया जा रहा है।

धमिक क्षतिपूर्ति और बीमा —

यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है कि धमिका को क्षतिपूर्ति देने का उत्तरदायित्व मामिकों का हो अथवा इसको सामाजिक बीमा योजना के अन्तर्गत दिया जाय। भारतीय धमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम में क्षतिपूर्ति देने का पूर्ण उत्तरदायित्व मामिकों का ही है। यह एक एसी सामाजिक-बीमा व्यवस्था नहीं है जिसमें कि मामिक धमिक और राज्य मिलकर एक द्वितीय विधि बनाते हों। इस योजना के लिए व्यवसायिक बीमे के सिद्धान्त का भी अनुकरण नहीं किया गया है क्योंकि मामिक इस बात के लिये बाध्य नहीं है कि वे अपने बौद्धिक का बीमा किसी बीमा कम्पनी अथवा किसी अन्य संस्थाओं के साथ कराएँ। फिर भी मामिकों के कुछ महत्वपूर्ण संगठनों के सदस्यों ने अधिनियम के अन्तर्गत क्षतिपूर्ति में दिये जाने वाले सुगठान से बचने के लिए बीमा कराया है। उदाहरणार्थ 'बम्बई मिस मामिक परिषद्' में स्वयं 'मिस मामिक पारस्परिक बीमा परिषद्' की स्थापना की है जो अपने सदस्यों की क्षतिपूर्ति के दायित्व का बीमा करती है। भारतीय जूट मिस परिषद् के सदस्यों ने भी धमिक क्षतिपूर्ति के दायित्व से बचने के लिए बीमा कराया है।

इस प्रकार के बीमे की योजना के साम स्पष्ट है। यह सभी सम्बन्धित पक्षों के लिए सामदायक है। जब मामिक अपनी इच्छाशील मुक्त होता है तब वह धमिकों के द्वारा मांगी जाने वाली क्षतिपूर्ति का विरोध नहीं करता बल्कि वह इस बात का ध्यान रखता है कि उसके धमिकों को पर्याप्त रूप से क्षतिपूर्ति मिल जाय। इससे मामिकों और धमिकों के बीच बटुगा कम हो जाती है। यदि मामिक पहले ही बीमा करपा हुआ है और किसी समय दिवंगत हो जाता है तब भी धमिकों को अथवा अनिश्चित नहीं होगी। पर धनक राज्य सरकारों मामिकों के संगठनों और धम धनसंग्रहण समिति में सुझाव दिया है कि दुपटनाओं की क्षतिपूर्ति देने के लिए मामिकों के दायित्व का बीमा अनिवार्य रूप में किया जाना चाहिए।

अनिवार्य बीमा दो प्रकार का हो सकता है। कम्पनी बीमा और राज्य बीमा। अधिकांश राज्य बीमा का समर्थन किया जाता है क्योंकि किसी बीमा कम्पनियों में धमिकों को स्वयं ही बाधा करना पड़ता है। इसमें सर्वप्रथम और सम्बन्धित मुद्दों की सम्भावनाएँ हो सकती हैं और धमिकों को मिलने वाला लाभ स्वतः प्राप्त नहीं होगा और वर्तमान शोध भी यथावत् बने रहेंगे। देश में धमिक क्षतिपूर्ति की वर्तमान व्यवस्थाओं को सुधारने के लिए एकमात्र उपाय सामाजिक-बीमा के सिद्धान्त को अपनाना ही है। इसमें सातह तीन भागों में अर्थात् मामिकों धमिकों और राज्यों में बंट जाती है। मामिकों का वर्तमान योजना के प्रति विरोध भी दूर हो जायेगा तथा उनको क्षतिपूर्ति में देने में जो लाभ होता है वह भी प्राप्त हो जायेगा। इतर धमिकों के दृष्टिकोण में भी बहुत बड़ा लाभ होगा। जब मामिकों को धमिकों की क्षतिपूर्ति की मांग पूरा न करने में कोई लाभ नहीं होगा और इस सम्बन्ध में उनका कोई प्रत्यक्ष उत्तरदायित्व न होगा तब वे

अधिकों की राह में बाधक होने की अपेक्षा क्षतिपूर्ति दिलाने में उनके सहायक होंगे। क्षतिपूर्ति का सुप्रदान भी स्वतः ही होगा और अधिकों का दावा करने का वातावरण भी बुरा करने की आवश्यकता नहीं होगी। अधिनियम से बचने का प्रयत्न भी बहुत कम हो जायगा। वर्तमान परिस्थिति में इस सुधार की बहुत आवश्यकता है। चिकित्सा लाभों के लिए भी व्यवस्था करना सम्भव हो जायगा जो स्वास्थ्य बीमा निधि का भाग हो सकता है और अधिक को किसी भी दुर्घटना का अधिकार होने पर यह चिकित्सा-लाभ तत्काल ही निःशुल्क प्राप्त हो जायेगा। यद्यपि अधिनियम में ऐसा कोई संशोधन नहीं हुआ है जिसके अन्तर्गत क्षतिपूर्ति के लिए अधिनियम बीमा की व्यवस्था हो फिर भी 'कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम' द्वारा इस ओर कदम उठा लिया गया है। इसके अनुसार क्षतिपूर्ति देने का उत्तरदायित्व अधिनियम के अन्तर्गत स्थापित नियम का है। मालिकों का उत्तरदायित्व इस प्रकार समाप्त हो गया है। जब यह अधिनियम सारे भारतवर्ष में लागू हो जायेगा तब अधिक क्षतिपूर्ति अधिनियम की कोई आवश्यकता नहीं रह जायेगी।

भारत में मातृत्व हित लाभ (Maternity Benefits in India)

मातृत्व हित का महत्व -

भारत में कर्मचारी स्त्रियों को मातृत्व हित लाभ और विराम प्रदान करने के महत्व की ओर प्रथम बार अन्तर्राष्ट्रीय धम सम्मेलन में भारतीय जनता का ध्यान उच्च समय धारकित किया जब उसने १९१२ में एक वास-अग्रम अधिसूचना पारित किया। भारतीय सरकार इस अधिसूचना को कुछ कठिनाइयों की बावजूद से नहीं अपना सकी। वे कठिनाइयाँ यह थीं स्त्री अधिकों की प्रभाविता पत्रवर्ती होने से पूर्व घर छोड़ जाने का रिवाज तथा बीमारी का प्रमाणपत्र बनाने के लिए महिला डाक्टरों का प्रभाव धारि। इस विषय पर श्री एन० एम० बोधी ने कुछ प्रयत्न किये थे। १९२४ में विधान परिषद् के समक्ष उन्होंने एक विधेयक रखा। परन्तु उसमें वे सफल नहीं हो सके क्योंकि सरकार इस बात से सहमत नहीं थी कि इस प्रकार की व्यवस्था की आवश्यकता थी। परन्तु हमारे देश में महिला अधिकों के लिए मातृत्व हित लाभों की जरूरत बहुत आवश्यकता रखी है। भारत में लगभग सारी स्त्री अधिक विवाहित हैं और निर्धनता अज्ञानता तथा चिकित्सा सुविधाओं के अभाव के कारण यहाँ माताओं की मृत्यु संख्या अत्यधिक है। समाज-सेवकों द्वारा यह अनुमान लगाया गया है कि भारत में प्रत्येक १००० बच्चों के जन्म होने पर औसतन २५ माताओं की मृत्यु हो जाती है। इस प्रकार यह देखत हुए कि भारत में औसतन २० लाख बच्चे प्रतिवर्ष पैदा होते हैं यह कहा जा सकता है कि लगभग २२००० माताओं की मृत्यु प्रतिवर्ष हो जाती है जिनमें से अधिकांश पुत्रिमाँ होती हैं। निर्धनता के कारण अधिकतर महिलाओं को कोई न कोई नौकरी करनी पड़ती है और इसके साथ ही

उन्हें अपने घरेलू कामकाज को भी रोकना होता है। परिणामस्वरूप उन्हें अपने व्यक्तित्व को विकसित करने का कोई अवसर नहीं मिल पाता। ऐसी परिस्थितियों में पैदा होने वाले बालकों के स्वास्थ्य को भी हानि पहुँचती है और बच्चे दुर्बल पैदा होते हैं क्योंकि माताओं को गर्भावस्था और दूध देने के जगमग के परवान् पर्याप्त विराम और भोजन नहीं मिल पाता। यदि यन्त्रबन्धी माताओं की ठीक प्रकार से देखभाल नहीं की जाती है तो दूध की मात्सी संतति के स्वास्थ्य विकास पर बुरा प्रभाव पड़ता है। यह हमारे देश में मातृत्व हित साम की बहुत भाव्यमकता है।

इतना होना हुए भी भारत सरकार ने मातृत्व हित साम की महत्ता को पूर्णतया नहीं समझा और आज भी कारखानों में मातृत्व हित के लिए कोई भी अतिम भारतीय स्तर पर व्यवस्था नहीं है। अनेक राज्य सरकारों ने समय-समय पर इस विषय पर विवेकपूर्ण पाठ्य किये हैं और इस प्रकार कालों की महत्ता और-बीरे स्वीकार की जा रही है। अभी हाल ही में भारत सरकार ने १९६० का मातृत्व हित साम अधिनियम बनाया है जो अत्यन्त देश पर लागू होगा।

विभिन्न राज्यों में मातृत्व हित साम —

१९२६ में बम्बई सरकार ने प्रथम मातृत्व हित साम अधिनियम पारित किया और अगले वर्ष इसका अनुसरण करते हुए मध्यप्रान्त (अब मध्यप्रदेश) ने भी एक अधिनियम पारित किया। अगले अग्रे अयोध की विचारियों के परिणाम स्वरूप अनेक राज्यों में मातृत्व-हित साम अधिनियम पारित किये गये। स्वतन्त्रता के पचास वर्षों के पुनर्निर्माण के पचास इस सभी अधिनियमों में संशोधन हुए। कुछ को निरस्त (Repeal) कर दिया गया और कुछ राज्यों में नये अधिनियम बनाये गये। इस समय सभी राज्यों में मातृत्व हित साम अधिनियम लागू हैं और ३ केन्द्रीय अधिनियमों के अन्तर्गत भी मातृत्व-हित साम मिलता है। केन्द्रीय अधिनियम य है १९६१ का धान मातृत्व-हित साम अधिनियम १९४५ का कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम और १९५१ का बायान अधिनियम।

विभिन्न अधिनियमों की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं —

क्षेत्र — (Scope)

यहाँ तक क्षेत्र का सम्बन्ध है और बम्बई मध्य प्रदेश अजमेर, हैदराबाद पंजाब उड़ीसा राजस्थान में अधिनियम सभी नियमित कारखानों में लागू करते बानी स्त्री अधिकांश पर लागू होता है। बम्बई अधिनियम केवल कुछ विद्यय विधियों और अगस्तों तक ही सीमित है। बिहार अधिनियम पहल पर भी सभी कारखानों पर लागू होता था परन्तु १९५३ में इसमें संशोधन करते इसे कपात दूध, बेत और बीबी के कारखानों को छोड़कर सभी एक्टिव कारखानों पर लागू कर दिया गया है। अन्य राज्यों में अधिनियम केवल उन महिला अधिदों पर लागू होते हैं जो गैर-मोडर्न फैक्ट्रियों में काम करती हैं। अजमेर और केरल में

प्रधिनियमों को लागू की स्वी अभिकर्तों पर भी लागू कर दिया गया है। १९४८ में पश्चिमी बंगाल सरकार ने प्रथम से एक प्रधिनियम पारित किया जिसका नाम पश्चिमी बंगाल मातृत्व हित नाम (बाय बायान) प्रधिनियम है। इसके अन्तर्गत राज्य में बाय कारखानों और बायान में काम करने वाली स्त्रियों को भी मातृत्व हित नाम दिया जाता है। १९३० में एक संसोधन के अनुसार स्वी अभिकर्तों को प्रत्येकमास के ९ सप्ताह बाद तक किसी भी काम को करने की आज्ञा नहीं है। जिन मातृत्व-हित नाम प्रधिनियम १९२३ के भारतीय जिन प्रधिनियम के अन्तर्गत आने वाली सभी स्वी अभिकर्तों पर लागू होता है। जिन स्थानों पर कर्मचारी राज्य बीमा प्रधिनियम लागू कर दिया गया है वहां मातृत्व-हित नाम प्रधिनियम के अन्तर्गत मासिकों का स्वी अभिकर्तों को काम प्रदान करने का उत्तरदायित्व नहीं है।

काम प्राप्त करने के लिए पायता प्रबधि तथा काम राशि को दर और प्रबधि —

निम्नलिखित तालिका से विभिन्न मातृत्व-हित नाम प्रधिनियमों में काम प्राप्त करने के लिये पायता प्रबधि (Qualifying Period) नाम राशि की दर तथा काम की प्रबधि स्पष्ट हो जाएगी —

१ प्रधिनियम	२ पायता प्रबधि	३ काम-काल (सप्ताह)	४ काम राशि की दर
१ प्रथम मातृत्व हित नाम प्रधिनियम १९४४।	सूचना देने के दिन से पूर्व १२ माह की प्रबधि में १३ दिन की मौकरी। परि स्वी प्रथम में आने से पूर्व ही कर्मचारी है तब उसके लिए इस प्रकार की मौकरी की प्रबधि की बात लागू नहीं होगी।	५ सप्ताह कारखानों में और १२ सप्ताह बायान में	बायान में—११ घाने ६ पा प्रतिदिन। मोशन की रियायतें इसके अतिरिक्त प्रदान की जायेंगी। कारखानों में— प्रबधि से ४ सप्ताह पहले तथा ८ सप्ताह बाद तक पिछले १२ सप्ताह की औसतन मास परल्लु कम से कम २६० प्रति सप्ताह।
२ बिहार मातृत्व हित नाम प्रधिनियम १९४०। (१९३३ में संशोधित)	सूचना देने के दिन से पूर्व ६ माह की मौकरी।	१२	औसतन प्रतिदिन की मास या ७७ न० ५० प्रतिदिन इनमें से जो भी अधिक हो।

१	२	३	४
१ बम्बई मातृत्व हित साम धर्म नियम १९२९ (दिल्ली में भी लागू)।	सूचना देने के दिन से पूर्व ९ माह की नौकरी।	=	बम्बई और धनुमबा बाद के शहरों में = धाना प्रतिदिन और अन्य स्थानों पर प्रति दिन की औसतन धाय की दर से धपबा = धाना प्रतिदिन-दोनों म से जो कम हो।
४ हैदराबाद मातृत्व हित साम धर्म नियम १९४२। (१९४१ में संघो बित)	सूचना देने के दिन से पूर्व ९ माह की नौकरी।	१०	१२ धाना प्रतिदिन।
२. केरल मातृत्व हित साम धर्म नियम १९४७।	सूचना देने के दिन से पूर्व १२ महीनों में १५० दिन की नौकरी।	१२	२६ २५ न० व० प्रति सप्ताह धपबा दैनिक औसतन धाय का ७/१२ हिस्सा जिसे ७ से गुणा कर के सप्ताह म जो राशि धाये और इनमें से जो धर्मिक हो।
१ मध्यप्रदेश मातृत्व-हित साम धर्म नियम १९४८।	सूचना देने के दिन से पूर्व ९ माह की नौकरी।	१२	दैनिक औसतन धाय का ७/१२ हिस्सा या ७५ न० व० प्रतिदिन इनमें जो भी अधिक हो।
७ मद्रास मातृत्व हित साम धर्म नियम १९४४। (१९४८ में संघो-बित)	सूचना देने के दिन से पूर्व १ वर्ष की धर्म में २४० दिन की नौकरी।	१२	दैनिक औसतन धाय का ७/१२ हिस्सा या ७५ न० व० प्रतिदिन इनमें जो भी अधिक हो।

१	२	३	४
८ मैसूर मातृत्व-हित नाम अधिनियम १९२२।	सूचना देने के दिन से पूर्व ९ माह की नौकरी या पिछले १२ माह में निरन्तर या सकिराम १५ दिन की नौकरी।	१२	७३ न ६० प्रतिदिन घण्टा ईतिक घौसतन घाम का ७/१२ हिस्सा इनमें जो भी अधिक हो।
९ बड़ीसा मातृत्व-हित नाम अधिनियम १९२३। (१९२७ में संशोधित)	सूचना देने के दिन से पूर्व ९ महीने की नौकरी।	१२	बास्तविक ईतिक मजदूरी या वेतन जो १२ घाना प्रतिदिन से कम न हो।
१० पंजाब मातृत्व-हित नाम अधिनियम १९२३। (१९२५ में संशोधित)	प्रसव के दिन से पूर्व ९ महीने की नौकरी।	८४ दिन	ईतिक घौसतन घाम या १२ घाना प्रतिदिन जो भी अधिक हो।
११ राजस्थान मातृत्व-हित नाम अधिनियम १९२३। (१९२९ में संशोधित)	सूचना देने के दिन से पूर्व २४ दिन की नौकरी।	१२	ईतिक घौसतन घाम या १२ घाना प्रतिदिन इनमें जो भी अधिक हो।
१२ उत्तर प्रदेश मातृत्व-हित नाम अधिनियम १९२५	सूचना देने के दिन से पूर्व ९ माह की नौकरी।	८	ईतिक घौसतन घाम या ८ घाना प्रतिदिन इनमें जो भी अधिक हो।
१३ (क) बंगाल मातृत्व-हित नाम अधिनियम १९२९।	प्रसव के दिन से पूर्व ९ माह की नौकरी।	८	ईतिक घौसतन घाम या ८ घाना प्रतिदिन, इनमें जो भी अधिक हो।

१	२	३	४
(घ) पश्चिमी बंगाल मातृत्व-हित साम धनियम (नाम बामान) १९४८। (१९५९ में संशोधित)	प्रसव के सम्भावित दिन से पूर्व १२ माह में १५ दिन की लीकरी।	१२	७ रु० प्रति सप्ताह (सारा मकद रूप में या कुछ भाग मकद और कुछ जिम्मे के रूप में)
१४ वान मातृत्व हित साम धनियम १९४९।	प्रसव के दिन से पूर्व ६ माह की लीकरी।	८	१२ घाना प्रतिदिन।

इस प्रकार मिश्र-मिश्र राज्यों में साम की राशि समान-समान है। इसलिए भारत की "संयुक्त बागान मासिक परिपद्" में यह सिफारिश की गी कि इसलिए भारत के बागान क्षेत्रों में मातृत्व-हित साम की दर मोजन रियायतों सहित १२ घाना प्रति दिन होनी चाहिए और साम की प्रबधि ८ सप्ताह होनी चाहिए। ये सिफारिशें १९५७ से कार्यान्वित कर ही गई हैं।

अतिरिक्त साम — (Additional Benefits)

कुछ धनियमों में बिफिरसा बीम के रूप में अतिरिक्त साम देने की व्यवस्था है। यह साम तब दिये जाते हैं जब महिला धमिक किसी योग्य बाई धपबा धन्य प्रविशित ध्यक्तियों की सेवाओं का उपयोग करती है और मासिक धपनी घोर से किसी बाई धारि का नियुक्त प्रबन्ध नहीं करते हैं। उत्तर प्रदेश में इन प्रकार का बीम ५ रु० है गर्तों में ३ रु० है तथा कैरम मजान मध्यप्रदेश मैसूर उड़ीसा तथा राजस्थान में १ रु० है। पंजाब और बिहार में यह बीम २५ रु० निर्धारित किया गया है। धनम और पश्चिमी बंगाल धनियमों के धन्यार्थ प्रमथ नाम में बिफिरसा सहायता नियुक्त प्रदान करने की व्यवस्था है। उत्तर प्रदेश उड़ीसा और बिहार के धनियमों में यह भी व्यवस्था की गई है कि बाई ५० या इसमें धबिब लिये धियुद्धों की व्यवस्था करनी होगी तथा स्त्री धनियों के बन्धाय क लिये स्वा-रूप नियुक्तों को नियुक्त करता होगा। उन स्त्री को जिसके एक वर्ष से कम धायु का लियु है जिस समय भी वह बाड़े घाना घाना घण्टे के दो धन्यन्तर, एक बीमहर से पूर्व और एक बीमहर के बाद से मकनी है। ये धन्यन्तर उमठ एन घण्टे के सामान्य

मध्यान्तर के अतिरिक्त होंगे। यदि कारखाने में शिफ्टवृद्ध की व्यवस्था की गई है तब ऐसी मध्यान्तर पन्द्रह-पन्द्रह मिनट के होंगे। इसी प्रकार प्रत्येक ३ बच्चे के कार्य के पश्चात् दिन में दो मध्यान्तर केरम में २० मिनट का मध्यान्तर पंजाब में और १५ मिनट का मध्यान्तर महाराष्ट्र में देने की व्यवस्था है। उत्तर प्रदेश राजस्थान मैसूर और केरल के अधिनियमों में गर्मपात होने पर तीन सप्ताह की अवैतन छुट्टी की भी व्यवस्था है। पंजाब में भी अधिनियम में एक मद्योपन द्वारा गर्मपात होने की व्यवस्था में स्त्रियाँ मातृत्व-हित लाभ पाने की अधिकारिणी हो गई हैं जो १ माह काम करने के पश्चात् ४२ दिन के लिये दिया जाता है। पंजाब उड़ीसा तथा मैसूर में गर्मकाल से बीमारी के कारण स्त्री श्रमिकों की १ माह की अतिरिक्त छुट्टी मिल सकती है।

सुरक्षा और इण्ड - (Safeguards and Penalties)

मुगलान के शालिश से बचने के लिए शालिश स्त्रियों को बर्खास्त न कर दें इसके लिये अधिनियम में उनकी सुरक्षा की भी व्यवस्था की गई है। प्रसवकाल की छुट्टी में किसी भी स्त्री श्रमिक को बर्खास्त नहीं किया जा सकता। प्रसवकाल की छुट्टी में श्रमियों को काम पर लगाना कानूनम अपराध है। परन्तु इसमें अधिनियम में इस बात की व्यवस्था है कि प्रसव से ४ सप्ताह पूर्व तक उन्हें हल्के कामों पर लगाया जा सकता है। इसी प्रकार पश्चिमी बंगाल मातृत्व-हित लाभ (चाय बागान) अधिनियम में इस बात की व्यवस्था है कि यदि डाक्टरों द्वारा उन्हें स्वस्थ प्रमाणित कर दिया जाता है तो स्त्री श्रमिक को हल्के कामों पर प्रसव के ६ सप्ताह पूर्व तक लगाया जा सकता है। केरल के अधिनियम में गर्म काल में किसी भी कठिन प्रकार के कार्य पर स्त्री श्रमिक को लगाया निषेध है।

अधिनियमों का प्रभाव —

सारे राज्यों में अधिनियमों के प्रभाव के लिए कारखाना निरीक्षक उत्तरवाही हैं। कोयले की खानों की छोड़कर, जिनमें कोयला खान कल्याण कमिश्नर इसके लिए उत्तरवाही हैं अन्य खानों में इनका उत्तरवाहित्व खानों के मुख्य निरीक्षक पर है। अधिनियम में शालिशों के लिए यह धारदयक है कि वे प्रतिवर्ष शालिश विवरण प्रस्तुत करें जिसमें वर्ष भर में कितने शालिश किये गये हैं तथा कितने शालिशों का मुगलान किया गया है और फलस्वरूप कितनी बुल शालिश प्रदान की गई है इसका विवरण हो। उदाहरणार्थ १९५६ में राज्यों में ४ २ २६४ स्त्री श्रमिकों में से शालिश ४२,९०३ स्त्रियों के मातृत्व हित लाभ की मांग की ४० ७४१ स्त्रियों की शालिश में इस प्रकार के लाभ प्रदान किये गये २ ७४४ मामलों में शालिश भी प्रदान किये गये और बुल २६ २५,७०४ २० की शालिश की गई। उसी वर्ष शालिश देने वाली खानों में काम करने वाली स्त्रियों की बुल संख्या ६६,१४० की शालिश में २६७ ने शालिशों के लिए मांग की २६९ को इस प्रकार के शालिशों का मुगलान

किया गया १९६८ को बोलम प्रथम किया गया और भुगतान की कुल राशि ३१२,३८० रुपए थी।

भारत में मातृत्व हित साम अधिनियमों का आलोचनात्मक मूल्यांकन —

मातृत्व-हित साम अधिनियम कारखानों में काम करने वाली महिला श्रमिकों के लिए पर्याप्त आराम और वित्तीय सहायता प्रदान करने में सफल महत्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं। परन्तु हमारे देश में इस विधान में कुछ दोष भी हैं। अधिनियमों का मुख्य दोष यह है कि न तो यह सब स्याता पर एक समान है और न ही यह व्यापक है और कुछ व्यवहारों का छोड़कर प्रत्येक काम के समय अपने पूर्व और उसके बाद निःशुल्क शिक्षिता सहायता का भी कोई प्रदत्त नहीं है। प्रा० बी० पी० प्रदायकर न औद्योगिक श्रमिका के लिए स्वास्थ्य बोम को अपनी रिपोर्ट में इन अधिनियमों के प्रथम मंथन में धीमे धीमे दोषों की ओर संकेत किया था। उनका विचार में इन दोषों का मुख्य कारण यह है कि काम का भुगतान का उत्तरदायित्व मातृका पर डाल दिया गया है। उनका कथनानुसार जो शोध सामिका की इच्छा की मित्राणा से पंजा हो गये व उनका यद्यपि अनेक राज्य सरकारों में अधिनियमों में सशोधन करके दूर करने का प्रयत्न किया है तथापि उनमें बहुत विषय संकलन नहीं मिली है। उनसे अनुसार कानून के मुख्य दोष निम्नलिखित हैं—प्रथम तो मातृत्व हित साम अधिनियम सब स्थानों पर एक समान नहीं है और न ही यह व्यापक है जिसके कारण कुछ ऐसी श्रमिकाएँ रह गई हैं जो श्रमिकों के लिए हितकर नहीं हैं। (२) वर्तमान समय में केवल नव साम की व्यवस्था है और शिक्षिता के लिए स्त्री श्रमिकों को स्वयं अपने मापनों पर निर्भर रहना पड़ता है। (३) कानून की कुछ शून्यों व्यवस्था अन्य कारणों से इस अधिनियम में बचने का सब भी बहुत प्रयत्न किया जाता है। मातृत्व-हित साम प्राप्त करने के लिए श्रमिकों की जो धृष्ट है, उनके कारण तो मातृत्व अधिनियम से अक्षर घटना बचाव कर हो सके हैं। इसके अनिश्चित प्रथम और संघर्ष का छोड़कर नहीं ऐसी व्यवस्था नहीं है बल्कि मातृत्व स्त्री-श्रमिकों को धर्म के प्रथम श्रेणियों पर ही बलवत्त म कर सकें। इसके अनिश्चित अपनी प्रभावता के कारण या अपनी स्थानी शौकरी के छूट जाने के मय से बट्टा महिला श्रमिक मातृत्व हित साम की मांग ही नहीं करती। यद्यपि रोजगार मय आयोग ने यह डिपारिण की थी कि अधिनियम का प्रथम मंथन कारखाना निरीक्षकों को धीरे देना चाहिए परन्तु अधिकांश राज्यों में अभी तक इस प्रकार की नियुक्तियाँ नहीं की गई हैं। माघारण्य-श्रमिका मजदूर पर मातृत्वों को शोचन देन में शिक्षणनी है और उनकी समय भी बढ़ाई जानी है कि वे मातृत्व-हित साम के लिए शौकरी को यद्यपि पूरी कर पायें या प्रथम काम के बाद या दो मजदूर बाद ही अपनी शौकरी पर फिर धावा करें या कामों को प्राप्त करने के लिए बचक के मजदूर का प्रयास-पत्र में सकें। मय अनुसंधान समिति ने इस प्रकार के घनेर मामलों के छोड़कर प्रस्तुत किये हैं जिनमें अधिनियम का उल्लंघन किया जाता है। बट्टा देने मामल छोटे कारखानों के से।

जब सर्वप्रथम इस अधिनियम को लागू किया गया था उस समय बहुत से मालिकों ने अपने यहाँ से स्त्री श्रमिकों को नौकरी से निकाल दिया। कई स्वानों पर तो मालिक केवल ऐसी स्त्रियों को ही अपने यहाँ नौकरी देने में प्राथमिकता देते हैं जो या तो अधिवाहित लड़कियाँ होती हैं अथवा विधवाएँ या ऐसी स्त्रियाँ जो संतानोत्पत्ति की प्राप्ति को पार कर चुकी होती हैं। अनेक स्वानों पर लड़कियों की शादी होने के तुरन्त बाद ही उन्हें नौकरी से बर्खास्त कर दिया गया है। कभी-कभी तो काम देना इस आधार पर अस्वीकार कर दिया जाता है कि स्त्री श्रमिक काम प्राप्ति के लिए नौकरी की शर्त पूरी नहीं कर पाई है। कहीं-कहीं पर मालिक स्त्री श्रमिकों के नाम रजिस्ट्रारों में नहीं लिखते और सर्वशर्ती स्त्रियों को बर्खास्त कर देते हैं। श्री बेधपाखे ने अपनी एक रिपोर्ट में जो उन्होंने कोयला लागू उद्योग के श्रमिकों की रक्षाओं की बाब पर ही की खानों में अधिनियम की प्राप्ति का स्पष्ट उल्लंघन होने के उदाहरण दिये हैं। अनेक खानों में नौ अधिनियम का उल्लंघन होता है। कुछ खानों में स्त्री श्रमिकों की उपस्थिति का कोई लिखित प्रमाण नहीं रखा जाता और जिन शर्तों का भ्रमण भी किया जा चुका है उनका भी कोई लिखित प्रमाण नहीं मिलता। जो बलकें स्त्री श्रमिकों की हाजिरी लगाते हैं वे अक्सर काम प्राप्ति के लिए नौकरी की शर्तों को पूरा करने के लिए रिबरत लेकर हाजिरी बढ़ा देते हैं। श्रम अनुसंधान समिति ने इस बात की सिफारिश की थी कि जो नौ काम दिया जाए, वह स्त्रियों की वास्तविक क्षमता मजदूरी से कम नहीं होना चाहिए और इसका समय भी बढ़ाकर १२ सप्ताह कर देना चाहिए प्रसव से ६ सप्ताह पहले और ६ सप्ताह बाद तक। इस बात की सिफारिश अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघन के एक अधिसूचना द्वारा भी की गई है।

मानुष-हित नाम के लिए कुछ स्थूलतर स्तर निर्धारित करने के लिये तथा समानता लाने के लिये जनवरी १९४४ में भारतीय श्रम सम्मेलन ने एक समिति बनाई थी। उसके सुझावों के अनुसार केंद्रीय सरकार ने १९४३ में कुछ नियम बनाकर राज्य सरकारों को परिचायित किये और उनके आधार पर कई अधिनियमों में संशोधन किये गये। उसके पश्चात् १९६० में केंद्रीय सरकार द्वारा मानुष-हित नाम अधिनियम पारित किया गया जो समस्त संघों पर लागू होगा। इसके निम्नलिखित मुख्य उपबन्ध हैं — (क) मानुष-हित नाम अधिनियम के लिये नाम काम १२ सप्ताह निर्धारित किया गया है। नाम राशि की दर औसत दैनिक मजदूरी को कम से कम एक ६० प्रति दिन हो निर्धारित की गई है। (ख) यदि मालिक अपनी ओर से प्रसव से पहले या प्रसव के बाद किसी शर्त या शर्त का प्रबन्ध नहीं करते हैं तो २४ घण्टिका बोनस देने की व्यवस्था है। (ग) गर्भपात के समय ६ सप्ताह की छुट्टी को मानुष-हित नाम की दर के अनुसार मजदूरी सहित होगी दिये जाने की व्यवस्था है। (घ) गर्भ के कारण या प्रसव के कारण यदि स्त्री श्रमिक बीमार हो जाती है तो उसे १ माह की अनिश्चित छुट्टी मजदूरी सहित दी जायगी। इस अधिनियम का

उत्तर यह है कि राज्य अधिनियमों में जो विधिप्रदाता हैं उसको दूर करके समान मातृत्व हित साम की व्यवस्था की जाय। यह अधिनियम उन स्थानों पर लागू नहीं होगा जहाँ कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम लागू होगा है।

मातृत्व हित साम और बीमा —

यह बात भी उल्लेखनीय है कि मातृत्व हित सामों को स्वास्थ्य बीमा योजना में सम्मिलित कर लेने से बहुत साम हो जायगा। ये सुविधाएँ या साम उन्ही प्रकार से होंगे जिस प्रकार से श्रमिक क्षतिपूर्ति को सामाजिक बीमा योजना के अन्तर्गत सम्मिलित करने से होते हैं जिनका हम ऊपर बर्णन कर चुके हैं। इस सम्बन्ध में यह भी उल्लेखनीय है कि मातृत्व-हित साम की व्यवस्था १९४८ के कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम में की जा चुकी है। इनके अन्तर्गत प्रत्येक कामगार को श्रमिक जो कुछ विशेष दायें पूर्ण करती है इन सामों का प्राप्त करने की अधिकारिणी होती है। ये साम उसे ७२ न १० प्रतिशत घण्टा पूर्ण औसत दैनिक मजदूरी की दर से जो भी अधिक हो के हियाक से मिलेंगे और अधिक से अधिक १२ मन्ग्राह तक वह इन सामों को प्राप्त कर सकती है। उसको हस्तगत और चिकित्सालय में चिकित्सा सहायता पाने का अधिकार भी है। जिन स्थानों पर यह अधिनियम लागू होगा है वहाँ मातृत्व-हित साम अधिनियम के अन्तर्गत मातृत्वों को साम नहीं देने होत है। यह धारणा की जाती है कि जब यह अधिनियम सब मजदूरों पर लागू हो जायगा तब मातृत्व-हित साम विभिन्न राज्यों में एक जैसे ही हो जायेंगे और इस समय मातृत्व हित साम विधान में जो दोष या कमियाँ हैं वे सब दूर हो जायेंगी।

भारत में बीमारी-बीमा

(Sickness Insurance in India)

बीमारी-बीमा की वांछनीयता —

बीमारी भी एक महत्वपूर्ण संकट है जिससे बचने के लिए बीमे की प्राप्ति आवश्यक पड़ती है। प्रोफेसर टौमिंग (Tausung) के कथनानुसार "बीमारी के लिये बीमा करना उतना ही सरल व सम्भव है जितना कि दुर्घटनाओं का बीमा।" भारत में वहाँ दोष बहुत उभरे हुये हैं इस प्रकार के बीमे की प्राप्ति-पद्धति भी बहुत अधिक है। इनकी वांछनीयता (Desirability) पर ऊपर भी उल्लेख किया जा चुका है। (दृष्टिये पृष्ठ ११०-११)

भारत में बीमारी बीमा और उसके विचार की उत्पत्ति —

जब अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन ने उद्योग चालिग्य और इति के मजदूरों के लिये स्वास्थ्य बीमा में सम्मिलित हो अधिनियम अंगत, तब भारत सरकार का ध्यान भी १९२७ में स्वास्थ्य बीमा योजना की ओर आकृषित हुआ। उसमें श्रम विभाग के भी इस प्रसंग पर विस्तारपूर्वक विचार किया और उसने यह सिफारिश की कि

बीमारी की बटनाओं के प्रांकड़े एकत्रित करने व परचात् प्रयोज के रूप में एक स्वास्थ्य बीमा योजना बनाई जानी चाहिए। भारत सरकार इस समय ऐसी किसी भी योजना के पक्ष में नहीं थी क्योंकि प्राथमिक कठिनाइयाँ थीं और अमिकों के प्रभावितता के साथ ही साथ संघदान देने की समता की भी कमी थी। फिर भी सरकार ने इस विषय पर प्रांतीय सरकारों से लिखा पत्रों की। परन्तु उनकी धोर से इस विषय पर कोई उत्साह नहीं दिखाया गया। इस समस्या पर बन्दई सूती बस्त्र श्रम जीव समिति और १९४०, १९४१ तथा १९४२ के प्रथम तीन श्रम मंत्रियों के सम्मेलनों में भी विचार किया गया था।

प्रो० जी० पी० अहलकर की स्वास्थ्य बीमा योजना —

भारत सरकार ने प्रांतीय सरकारों से काफी विचार विमर्श और पत्र व्यवहार करने के परचात् मार्च १९४३ में एक विधेय प्रधिकारी नियुक्त किया (प्रो० बी पी अहलकर) जिसका कार्य प्राथमिक अमिकों के लिए एक स्वास्थ्य बीमा योजना बनाना था। उन्होंने अपनी रिपोर्ट अगस्त १९४४ में भारत सरकार को दी। उन्होंने निरंतर चालू कारखानों के अमिकों के लिए एक अनिवार्य तथा संघदान वाली स्वास्थ्य बीमा योजना की सिफारिश की जो तीन प्रकार के उद्योगों के लिए थी — अर्थात् सूती बस्त्र उद्योग इन्जीनियरिंग उद्योग तथा खनिज व चालू उद्योग। इस योजना में मालिकों और मजदूरों को जो संघदान देना था उसका अंश देना किया गया था तथा साथ ही राज्य द्वारा संघदान की भी सिफारिश की गई थी। योजना की कुछ प्राथमिक मागत डाई करोड़ रुपए प्रांकी गई थी। इस बात की भी व्यवस्था थी कि प्रत्येक मालिक अपने जोखिम को बिस्तृत करने के लिये बीमा पालिसी ले। मजदूरों को इसके अन्तर्गत बिक्रिता लाभ नकर लाभ तथा कुछ अतिरिक्त प्रत्य लाभ प्रदान करने का सुझाव था। मातृत्व हित लाभ तथा अमिक अतिपूति को हटाकर उनके स्थान पर एक बीमा योजना की व्यवस्था थी।

१९४२ में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय के दो विधेय (बी एम स्टेन और बी एर० राब) द्वारा इस योजना पर पुन विचार किया गया। यद्यपि वे प्रो० बी पी अहलकर के मूल सिद्धान्तों में महामत व फिर भी उन्होंने कुछ विधेय परिवर्तनों का सुझाव दिया। इन परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए भारतीय सरकार ने ६ नवम्बर १९४६ को अन्तर्गत राज्य बीमा विधेयक प्रस्तुत किया जो 'अन्तर्गामी राज्य बीमा अधिनियम' के नाम से अगस्त १९४७ में पारित किया गया। १९३१ में कुछ प्राथमिकों को समाप्त करने तथा कुछ प्रत्य व टिप्पों को पूरा करने के लिए इसमें संशोधन हुआ। प्रथम प्राथमिकों को भी सामाजिक सुरक्षा पर कुछ प्रस्ताव पारित किए। यह सम्मेलन अक्टूबर १९४७ में नई दिल्ली में हुआ। इन प्रस्तावों के कारण इन अधिनियम पर विचार-विमर्श करने और उमड़ो अन्तरी पारित करने पर अन्तर्गामी प्रयास पड़ा।

१९४८ का कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम - (The Employee's State Insurance Act 1948)

अधिनियम के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

शेष -

यह अधिनियम बीमानी कारणाओं का दायित्व प्रथम तो उन सब कारखानों पर लागू करता है जिनमें २ या इससे अधिक कर्मचारी काम करते हैं और वे कारखाने अति म चलते हैं परन्तु इसके बाद ही इसमें इस बात का भी व्यवस्था है कि अधिनियम का पूरा या आंशिक रूप से किसी भी औद्योगिक शक्तिय कृषि या अन्य किसी संस्था या संस्थानों पर लागू किया जा सकता है। इसके अन्तर्गत वे सब कर्मचारी का साथ है जिनका वेतन ४०० रु० से अधिक नहीं है - चाहे वे शारीरिक काम करने वाले हों अथवा स्वरुप का काम करने वाले और चाहे वे निरीक्षण हों अथवा तकनीकी कर्मचारी हों। परन्तु इसके अन्तर्गत शक्ति माण नहीं आता। जम्बू खानों पर राज्य की सौदेगरी यह अधिनियम लागू भारत पर लागू है। यह यात्रा अधिनियम भी है अर्थात् का कर्मचारी इसके अन्तर्गत आता है उनका बीमा हाना आरक्षण है। जो बीमाकृत व्यक्ति इस अधिनियम के अन्तर्गत आता है वह शरीर है वह उसी प्रकार के काम किसी अन्य अधिनियम के अन्तर्गत आता है सकता है।

अधिनियम का प्रशासन -

इस बीमा यात्रा के प्रशासन एक स्वायत्तगामी (Autonomous) संस्था को सौंप दिया गया है जिन 'कर्मचारी राज्य बीमा निधि' (Employee's State Insurance Corporation) का नाम दिया गया है। इसमें ३८ व्यक्ति हैं जो केंद्रीय और राज्यों की सरकारों, शक्ति और शक्ति के सभी विभागों, अथवा तथा आतिथ्यादि के संस्थानों का प्रतिनिधित्व करते हैं। केन्द्रिय धन और रोडगार के तथा इस निधि के अध्यक्ष हैं और स्वयंसेवक सभी इसके अन्तर्गत हैं। उनमें एक राष्ट्रीय संस्था निधि की कार्यकारी (Executive) के रूप में कार्य करती है। इस स्थानीय समिति (Standing Committee) कहा जाता है। इसमें निधि के सदस्यों में से चुने हुए १३ संस्था होते हैं। एक तात्कालिक संस्था भी है जिन 'चिकित्सा-लाभ परिषद्' (Medical Benefit Council) कहा जाता है। उनका कार्य यह होता है कि वह चिकित्सा लाभ के प्रदान तथा लाभ देने का निधि प्रशासनिक प्रशासन करने के सम्बन्धित मामलों में निधि को परामर्श दे। यह परिषद् में स्वयंसेवक सदस्यों के द्वाराकर बनाने (मार्ग-निर्देशक) और स्थानीय कार्यकारण बनाने (उप-मार्ग-निर्देशक) चिकित्सा अधिकार और राज्यों, शक्ति कर्मचारियों और चिकित्सा अथवा के प्रतिनिधि होते हैं। निधि का मुख्य कार्यकारी कार्यकारी कार्यकारण बनाने तथा है जिसके अन्तर्गत मुख्य कार्यकारी अधिनियम है। वे मुख्य अधिकारी हैं - बीमा कार्यकारण चिकित्सा अधिकार, मुख्य न्यायाधिकार और स्थानीय अधिकारी।

डाइरेक्टर जनरल अपना कार्य क्षेत्रीय तथा स्थानीय कार्यालयों के द्वारा करता है क्षेत्रीय कार्यालय राज्यों में भी स्थापित कर दिये गये हैं।

बिल — (Finances)

इस योजना की वित्तीय व्यवस्था कर्मचारी राज्य बीमा निधि में से की जाती है। यह निधि मासिक और अमासिक के संघदान से तथा केन्द्रीय और राज्य सरकारों, स्थानीय प्राधिकारियों किसी भी व्यक्ति या निकाय (Body) द्वारा दिये गये दान उपहार या सहायता से बनाई जाती है। इस बात की भी व्यवस्था की कि पहले पांच वर्षों में केन्द्रीय सरकार नियम को वापिक अनुदान प्रदान करेगी जिसकी राशि नियम के प्रस्तावित व्यय की $\frac{2}{3}$ भाग होगी जिसमें लाभ देने का व्यय सम्मिलित न होगा। राज्य सरकारों का भी इस योजना की वित्तीय व्यवस्था में हिस्सा है जो बीमाकृत व्यक्तियों की वेतनात्मक और चिकित्सा पर हुए व्यय का एक भाग के रूप में दिया जाता है। प्रत्येक के हिस्से का निर्णय निगम और राज्य सरकारों के बीच समझौते द्वारा होता है। यह अनुपात पहले २ : १ था। परन्तु यह बढ़ाकर ३ : १ कर दिया गया है अर्थात् निगम चिकित्सा सुविधाओं की लागत का $\frac{2}{3}$ भाग वहन करने को तैयार हो गई है और राज्य सरकारों को $\frac{1}{3}$ हिस्से के लिए यह निश्चय किया गया है कि यदि वे चाहें तो इसके लिए खर्च भी ले सकती हैं। जब यह चिकित्सा सुविधाओं को अमिक के परिवारों के लिए भी विस्तृत कर दिया गया है तब से राज्य सरकार का हिस्सा $\frac{2}{3}$ कर दिया गया है। धर्मनियम में ऐसे उद्देश्यों की एक सूची भी तैयार की गई है, जिन पर निधि में से बत व्यय किया जा सकता है।

संघदान — (Contributions)

धर्मनियम में मुख्य मासिक पर अपना तथा साथ ही अपने अमिकों के संघदान का हिस्सा देने का उत्तरदायित्व रखा गया है, अर्थात् अमिक के संघदान का अनुपात अमिक और उसके मासिक दानों के ही द्वारा किया जाता है। मजदूर का भाग मुख्य मासिक द्वारा उसकी मजदूरी से काट लिया जाता है। अमिक के साप्ताहिक संघदान का हिस्सा उसकी उत सप्ताह की औसत मजदूरी के आधार पर होता है और संघदान प्रति सप्ताह देना होता है। यदि अमिक पूरे सप्ताह काम पर रहता है तो पूरे सप्ताह का और यदि सप्ताह में कुछ दिन काम पर रहता है तो कुछ दिनों का संघदान देना होता है—अर्थात् जब भी अमिक को मजदूरी मिलती है उसे संघदान देना पड़ता है। परन्तु लंबेतरन छुट्टी बीच हड़ताल और ठाभाबन्धी के मजसूरों को छोड़कर जिन सप्ताह अमिक ने कोई काम नहीं किया है और जिसके लिए उसे कोई मजदूरी नहीं दी गई है उक्त सप्ताह उसे संघदान नहीं देना पड़ता। साप्ताहिक संघदान की दरें अपने पूरे पर दी गई तालिका के अनुसार हैं —

कर्मचारियों की श्रेणियाँ	कर्मचारी का पंघदान (मासिकों से मसूमी)	मासिक का पंघदान	मासिक और कर्मचारी का कुल पंघदान
१	२	३	४
१ कर्मचारी जिनकी पौसतन दैनिक मजदूरी १ व० प्रतिदिन से कम है।	६० भा० पा०	६० भा० पा०	६० भा० पा०
२ कर्मचारी जिनकी पौसतन दैनिक मजदूरी १ व० प्रतिदिन या इससे अधिक है परन्तु १ व० ८ भा० से कम है।	कुछ नहीं	७ . . . ७ .	
३ कर्मचारी जिनकी पौसतन दैनिक मजदूरी १ व० ८ भा० प्रतिदिन या इससे अधिक है परन्तु २ व० से कम है।	२ .	७ . . . ६ .	
४ कर्मचारी जिनकी पौसतन दैनिक मजदूरी २ व० प्रतिदिन या इससे अधिक है परन्तु ३ व० से कम है।	४ .	८ . . . १२ .	
५ कर्मचारी जिनकी पौसतन दैनिक मजदूरी ३ व० प्रतिदिन या इससे अधिक है, परन्तु ४ व० से कम है।	६ .	१२ . . . १२ .	
६ कर्मचारी जिनकी पौसतन दैनिक मजदूरी ४ व० प्रतिदिन या इससे अधिक है परन्तु ५ व० से कम है।	८ .	१ . . . १ .	
७ कर्मचारी जिनकी पौसतन दैनिक मजदूरी ५ व० प्रतिदिन या इससे अधिक है परन्तु ८ व० से कम है।	११ .	१ . . . २ .	
८ कर्मचारी जिनकी पौसतन दैनिक मजदूरी ८ व० प्रतिदिन या इससे अधिक है।	१५ .	१ . . . २ .	
९ कर्मचारी जिनकी पौसतन दैनिक मजदूरी ८ व० प्रतिदिन या इससे अधिक है।	१५ .	१ . . . १ .	

१९२१ के एक संघोचन द्वारा यह व्यवस्था की गई है कि जब सम्पूर्ण भारत में अधिनियम लागू हो तब तक मालिक उपरोक्त सूची के तीसरे खाने में दिए गए संघदानों के स्थान पर एक विशेष संघदान होंगे जिसकी दर केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्दिष्ट की जाएगी परन्तु यह दर उनके कुल बैठन बिल की २ प्रतिशत से अधिक नहीं होगी। समस्त देश में मालिकों के लिए संघदान की दर उनके कुल बैठन बिल का ३ प्रतिशत निर्दिष्ट की गई है परन्तु उन स्थानों पर जहाँ यह योजना लागू हो चुकी है और जहाँ मालिक अधिकाधिक क्षतिपूर्ति तथा मातृत्व-हित लाभ के सामिल से मुक्त हो गए हैं उन स्थानों पर मालिकों को ३ प्रतिशत संघदान और देना होना अर्थात् कुल मिलाकर १३ प्रतिशत संघदान मालिकों का देना होता है। इसके परभाव जब बीमा किये हुए धर्मिकों के परिवारों को भी चिकित्सा लाभ देने का निश्चय किया गया तब यह निर्णय हुआ कि विशेष संघदानों को ४३ प्रतिशत तक बढ़ा दिया जाए (जहाँ यह योजना लागू नहीं है वहाँ ३ प्रतिशत से बढ़ा कर १३ प्रतिशत तक और जिन क्षेत्रों में लागू है वहाँ १३ से बढ़ाकर ३३ प्रतिशत तक)। परन्तु अगस्त १९२८ में यह निश्चय किया गया है कि जब तक निगम अपना व्यव अपनी लागू धामधनी से ही पूरा करने के योग्य है तब तक दरें और न बढ़ाई जाएँ। अब जहाँ-जहाँ चिकित्सा सहायता धर्मिकों के परिवारों को दी जाने लगी है वहाँ दर बढ़ाने का निर्णय कर लिया गया है। जिन स्थानों पर अधिनियम के अन्तर्गत लाभ दिए जाते हैं वहाँ धर्मिकों को दूसरे खाने में भी नई दर के अनुसार संघदान देना होता है। परन्तु अन्य स्थानों पर वहाँ के लाभ नहीं दिए जाते वहाँ धर्मिकों को किसी भी प्रकार का संघदान नहीं देना होता है।

साम — (Benefits)

स्थिति के अनुसार अधिनियम के अन्तर्गत बीमा करण्य हुए धर्मिकों अथवा उनके धर्मिकों को निम्नलिखित लाभ उपलब्ध हैं—(१) बीमारी लाभ (२) मातृत्व हित लाभ (३) अममर्जता लाभ (४) धर्मिकों को लाभ और (५) चिकित्सा लाभ। पहले चार लाभ नकदी में दिये जाते हैं और चिकित्सा लाभ सेवा या वस्तु के रूप में प्रदान किया जाता है।

जहाँ तक बीमारी लाभ का सम्बन्ध है इसके अन्तर्गत यदि धर्मिक की बीमारी का प्रमाण-पत्र अधिभूत चिकित्सक द्वारा दे दिया जाता है तो बीमा करण्य हुए व्यक्तियों को समय-समय पर नकदी रूप में लाभ दिया जाता है। आरम्भिक प्रतीक्षा लाभ दो दिन का है अर्थात् बीमारी के पहले दो दिन कोई लाभ नहीं दिया जाता। परन्तु यदि धर्मिक १५ दिनों के बीच में ही दूसरी बार बीमार पड़ जाए तब यह छठे लागू नहीं होगी। बीमारी लाभ दिनों में ३६५ दिनों के कार्य की अवधि में धर्मिकों को अधिक से अधिक ३६ दिनों तक प्राप्त हो सकता है। बीमारी लाभ की प्रतिदिन की दर एक दिन की औसत मजदूरी की राशि में प्राप्ती होगी है

निसका उल्लेख अतिनियम में किया गया है। परन्तु अब ये लाभ बीमारी के सम्पूर्ण दिनों के लिए दिए जायेंगे जिनमें रविवार तथा छुट्टियाँ भी आ जाती हैं। यह इन लाभों की दर मजदूरी की ५२ हिस्से के समान्य होगी। जो अधिक इन लाभों को प्राप्त करता है उसकी अतिरिक्त अतिनियम के अन्तर्गत जोस गए किसी अतिरिक्तालय या हस्पताल में हानी चाहिए।

पहली दून १९३६ में नियम में यह निश्चय किया है कि बीमा कराए हुए व्यक्तियों में जो जोस दराराग स पीड़ित हैं, उन्हें और १० सप्ताह तक नकर लाभ प्रदान किया जाएगा जिसकी दर ७३ न० ५० प्रतिशत मयबा बीमारी लाभ की दर की घाटी (जो भी अधिक हो) होगी। परन्तु इन लाभ को प्राप्त करने वालों के लिए एक धरती यह भी है कि उम्मीन सपाठार हो क्यों तक काम किया हा। काड कम्सर तथा मानसिक रोगों के लिए भी और अधिक बीमारी लाभ देने का निश्चय किया गया है और ऐसे रोगियों को १ वर्ष तक काम पर लगाए रखन की व्यवस्था की गई है। १९६० से शय से पीड़ित रोगियों के लिए सहायता की प्रबन्धि १० सप्ताह स बढ़ाकर ३०९ दिवस कर दी गई है। इस प्रकार ऐसे व्यक्तियों का सब ३६ दिन के अतिरिक्त लाभ सहित ३६३ दिन सहायता मिलेगी।

मातृत्व-रहित लाभ के अन्तर्गत समय-समय पर नकर सुगतान किया जाता है, जिस की दर बीमारी लाभ की दर (प्रतिदिन की दीमत मजदूरी में घाटी) मयबा ७३ न० ५० प्रतिशत (इन दोनों में स जो अधिक हा) होगी। यह लाभ १२ सप्ताह तक दिया जाता है जिनमें अधिक स अधिक ६ सप्ताह प्रसवकाल की अनुमानित तिथि से पहले होने चाहिए। दून १९३६ स इस लाभ की दर को महिला अधिक की घोषितन पुराने दैनिक मजदूरी मयबा ७३ न० ५० जो भी अधिक हा तक बढ़ा दिया गया है।

अन्यथा लाभ काम के समय लानि पहुचने पर, निम्न दरों में दिया जाता है— (१) अस्थायी अनमर्थता — यदि अनमर्थता ७ दिन स अधिक रहती है तब अधिकों को असमयता काल में 'पूरी दर' के अनुसार नकर सुगतान दिया जाता है। (२) स्थाया आधिक अनमर्थता — इसक लिए जंसा कि अधिक अनिपुणति अतिनियम में किया गया है जीवन पदम 'पूरी दर' की प्रतिशत के हिसाब में नकर काम प्रदान किया जाता है। (३) स्थायी पूर्ण अनमर्थता — इसक लिए आजीवन 'पूरी दर' के हिसाब से नकर लाभ प्रदान किया जाता है। ('पूरी दर' की परि-माया इस प्रकार की गई है कि यह वह दर है जो सम्बन्धित व्यक्ति को उस प्रतिदिन घोषित मजदूरी की घाटी होती है जो उसे पिछम ३२ सप्ताह में मिलती रही है। यह दर इस हिसाब से मजदूरी का समान्य ५२ ही हिस्सा होती है)।

यदि किसी बीमा कराए हुए अधिक की मृत्यु काम करन समय किसी दुर्घटना के अन्तर्गत हो जाती है तो आदिनों के लाभ के अन्तर्गत उसक आदिनों को निम्न दरों के अनुसार लाभ प्रदान किए जाते हैं— (क) मयबा पत्नी की आजीवन मयबा

पुनर्निवाह तक 'पूरी घर' का रूँ भाग दिया जाता है। यदि एक से अधिक विधवा पालिसी हों तो उनमें यह बँटव बराबर बराबर बाँट दी जाती है। (ब) १५ वर्ष की आयु प्राप्त होने तक मृतक के पुत्र अथवा कोष लिए हुए पुत्र को 'पूरी घर' का रूँ भाग दिया जाता है। (ग) १५ वर्ष की आयु अथवा विवाह होने तक (इतने को भी पहले हो) प्रत्येक बँध परिवारहित पुत्री को भी पूरी घर के रूँ भाग का बँट दिया जाता है। किसी भी पुत्र या पुत्री को यह सुविधा १८ वर्ष की आयु तक प्रदान की जा सकती है यदि वह निगम की दृष्टि से शिक्षा प्राप्त करने का कार्य सन्तोषप्रद कर रहा/रही है। (घ) यदि बीमा कराया हुआ मृत व्यक्ति अपने पीछे कोई विधवा या बँध अथवा कोष लिया हुआ पुत्र नहीं छोड़ गया है, तब प्राभित लाभ या तो उसके माता पिता या दादा दादी को प्राजीवन दिया जा सकता है या उसके किसी अन्य प्राभित को कुछ सीमित काल तक दिया जा सकता है। परन्तु ऐसे व्यक्तियों के लिए घर कर्मचारी बीमा न्यायालय (Employees Insurance Court) निर्दिष्ट करता है। परन्तु ऐसे प्राभित लाभ की राशि 'पूरी घर' की राशि से अधिक नहीं हो सकती। यदि पूरी घर की राशि अधिक होने लवटी है तो प्रत्येक प्राभित का हिस्सा उसी हिस्सा से कम कर दिया जाता है ताकि कुल राशि पूरी घर की राशि से अधिक न हो सके।

एक बीमाकृत व्यक्ति को चिकित्सा लाभ उस प्रत्येक सप्ताह के लिए पाने का अधिकार होता है जिस सप्ताह के लिए वह अंशदान देता है या जिस सप्ताह के लिए वह बीमारी मातृत्व छुट और अश्रमबँटा लाभ पाने का अधिकारी हो जाता है। (बाहे वह स्त्री हो या पुरुष) कुछ विशेष परिस्थितियों में ऐसे व्यक्तियों को चिकित्सा लाभ देने की भी व्यवस्था है जिन्होंने अधिनियम के अन्तर्गत अंशदान नहीं दिया है। चिकित्सा सम्बन्धी मामों के अन्तर्गत बीमारी में काम करते समय लालि होने पर और प्रसूतिका के अक्षर पर निःशुल्क चिकित्सा की जाती है। इस प्रकार की चिकित्सा सुविधाएँ निगम औपचारिक या हस्पताल में जाहे मरती होकर या बिना मरती के मिलती हैं, या बीमा कराए हुए व्यक्तियों के बरों पर भी बीमा डाक्टरों द्वारा जाकर प्रदान की जाती है। किसी अन्य हस्पताल चिकित्सालय या अस्था के द्वारा भी यह चिकित्सा सुविधाएँ दी जा सकती हैं। यह लाभ ऐसे डाक्टरों द्वारा भी प्रदान किया जा सकता है जो निगम की सेवा में हों या उनके द्वारा भी प्रदान किया जा सकता है बिना नाम डाक्टरों की नामिका (Panel) में हो। अधिनियम में यह व्यवस्था भी की गई है कि निगम बीमा कराए हुए व्यक्तियों के परिवारों को भी चिकित्सा सम्बन्धी लाभ दे सकता है जो सुविधा अब अनेक स्थानों पर प्रदान भी की जा रही है। चिकित्सा मामों का स्तर बीरे-बीरे काशी देखा कर दिया गया है। और अब इन मामों में विधिपत्रों की सेवाएँ भी सम्मिलित कर ली गई हैं। हस्पताल की सुविधाएँ जो प्रकार से दी जा रही हैं या तो जो हस्पताल हैं। जहाँ वे बीमा कराए हुए व्यक्तियों के लिए कुछ पत्रंग सुरक्षित कर लिए जाते हैं या हस्पतालों के साथ लयी

हुई कुछ इमारतों को बनवाकर उनमें व्यवस्था कर दी जाती है। प्रत्येक स्थानों पर नये हस्पताल भी बनाये जा रहे हैं। कृत्रिम ध्रंग और बाँठ देने की भी व्यवस्था है। ऐम्बुलेंस गाड़ियाँ और घन पाठापात की मुक्तिबाएं भी निःशुल्क प्रदान की जाती हैं। बीमाकृत भूमिकों को कुछ धन्य लाभ दिये जाते हैं।

प्रधिनियम के अन्तर्गत बीमारी तथा मातृत्व-हित साम पाने के लिए कुछ विधिगत चर्चों की गई हैं। यदि कोई बीमा कर्तया हुआ भूमिक सगातार २६ सप्ताह तक अपना प्रबंधन देता है तो वह ध्यामी २६ सप्ताहों के लिए बीमारी या मातृत्व हित साम पाने का अधिकारी हो जायगा/जायगी। सगातार २६ सप्ताह प्रबंधन देने वाले समय को 'बंधन काल' कहा जाता है और जिन २६ सप्ताहों में भूमिक साम प्राप्त करता है उसे 'साम काल' कहा जाता है। 'बंधन काल' के समाप्त होने और 'साम काल' के प्रारम्भ होने में १३ सप्ताह का अन्तर होगा प्रावश्यक है। इस प्रकार कोई भी बीमा कर्तया हुआ व्यक्ति अधिनियम के अन्तर्गत जाने वाले कारखानों में मर्ती होने के दिन से लगभग २ महीने बाद बीमारी या मातृत्व हित सामों को पाने का अधिकारी होता है। अतमर्यता लाभ प्रापित साम और चिकित्सा साम के लिये प्रबंधन देने की कोई चर्च नहीं है। ये साम उसी दिन से बीमा कर्तये हुए व्यक्तियों को मिलने लगते हैं जिस दिन से यह योजना लागू हो जाती है।

इस अधिनियम के अन्तर्गत राज्य सरकारों द्वारा प्रत्येक "कर्मचारी बीमा ग्यायालय" स्थापित करने की भी व्यवस्था है जिनका काम भ्रगड़ों का निवृत्तारण करना और शर्तों का निर्णय करना है। १९५१ के संशोधित अधिनियम के द्वारा ऐसे स्थानों पर जहाँ मासिक क विधेय प्रबंधनों के सुगठन या जवाही से सम्बन्धित मामलों को निपटाने के लिए कर्मचारी बीमा ग्यायालय नहीं है वहाँ उनके स्थान पर विधेय अधिकारियों की व्यवस्था की गई है।

१. अक्टूबर १९४८ को मर्नेट-अनरस न कर्मचारी —

जुपाटन किया। नियम के अन्तर्गत १६ सरस्वा की एक स्थायी समिति का चुनाव भी किया गया। डा० सी० एन० काटियास को इस नियम का डायरेक्टर-अनरस नियुक्त किया गया। अधिनियम में योजना की कबज रूपरेखा ही रखी गई थी और इसकी विस्तृत शर्तों राष्ट्रीय सरकार, राज्य सरकार और नियम द्वारा नियम और विनियम बनाकर पूरी की गई। योजना का अनुसूच प्राप्त करने के लिये इसे सर्व-प्रथम कामपुर और केन्द्रीय गासित देहली और अजमेर के क्षेत्रों में प्रयोगी योजना के रूप में लागू करने का निर्णय किया गया। परन्तु फिर इन योजना को एक साथ ही देहली और कामपुर में लागू करने तथा देहली कामपुर और अम्बई में तीन क्षेत्रीय प्रासाधों को लाने का निर्णय किया गया। नवम्बर १९४८ में भारत सरकार ने इस

सम्बन्ध में निवम भी बनाए और कुछ सुझावों के परचाद् उन्हें प्रतिम रूप दे दिया गया । एक चिकित्सा सर्वेक्षण भी इस उद्देश्य से किया गया कि विभिन्न राज्यों में कहां-कहां चिकित्सासय घादि स्थापित किये जा सकत हैं । मई १९५१ में निगम की एक बैठक म यह निश्चय किया गया कि यद्यपि चिकित्सा की प्रणासी मुख्यतः एम्बो-पैचिक ही होगी परन्तु अमिकों द्वारा माग करने पर या कहां योग्य डाक्टर मिल सकतें हों वहां अन्य कोई चिकित्सा प्रणासी भी प्रदान की जा सकती है । यह भी निश्चय किया गया कि पूर्ण समय देने वाले डाक्टरों के साथ-साथ निजी डाक्टरों की पैगस (शामिका) प्रणासी को भी प्रयोग में माना चाहिये । इस योजना को लागू करने के लिये कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने के हेतु मासिकी और अमिकों से सहयोग की प्रार्थना की गई । मासिकों ने योजना के विभिन्न स्वरूपों का अध्ययन करने और यह देखने के लिये कि इस योजना के कारण उन्हें क्या-क्या उत्तरदायित्व निभाने पड़ेगे अनेक अधिकारियों और सहयोगियों को भेजा । इसी उद्देश्य ने अमिक संघों की ओर से भी कुछ प्रतिनिधि भेजे गये । अंशगतों के प्रमताण के लिय टिकटें भी छपवाई गई और उनको इम्पीरियल बैंक (अब स्टेट बैंक) के द्वारा बेचने की भी ध्य वस्था की गई ।

योजना लागू होने में देरी का कारण —

इस प्रकार अग्रगामी योजना का उद्घाटन बहुली कानपुर और बार में सम्भई में करने के लिये सब प्रकार की तयारियां कर ली गई थी । परन्तु अचानक ही उत्तर भारत के मासिका की परिपद् ने उत्तर प्रदेश सरकार के द्वारा यह अमिबेदन किया कि कानपुर में यह योजना नहीं चलाई जानी चाहिये । इसी प्रकार के अमिबेदन अन्य मासिकों की परिपदों द्वारा भी किये गये । जो आपत्ति उठाई गई थी यह थी कि योजना लागू करने के लिय यह उचित समय नहीं था और यदि यह योजना सब स्थानों पर एक साथ लागू नहीं होती तो कानपुर का उद्योग अन्य स्थानों के उद्योगों से प्रतिस्पर्धिता में नहीं खड़ा हो सकता । साथ ही वित्तीय कठिनाइयों के कारण राज्य सरकार म भी योजना के प्रति अमिक उल्साह नहीं पाया गया । एक और कठिनाई यह थी कि चिकित्सा सहायता प्रदान करने के लिये उचित और संतोषजनक व्यवस्था करने में काफी समय लगता था । डाक्टरों की पैगस (शामिका) प्रणासी की घटें तय करने म तथा कार्यालयों और चिकित्सासयों के लिए स्थान प्राप्त करने म भी अनेक कठिनाइयां आईं । इन कारणों ने योजना के लागू होने में देर हो गई । परन्तु फिर भी आगे और में योजना का कार्यान्वित करने की प्रार्थनाएँ और माग जारी रहीं । अतः यह उचित समझ गया कि इन कठिनाइयों को दूर करके योजना को गीअ ही लागू कर देना चाहिये । इन कारण १९५१ में एक संयोजित अधिनियम पारित किया गया जिसके अन्तर्गत यह निश्चय किया गया कि अग्रगामी योजना को केवल कुछ स्थानों पर कार्यान्वित करने के लिए और इन स्थानों को

प्रतिदोषिता को हानियों से बचाने के लिए देश भर के मासिकों से संतुष्टान लेने चाहिये। उन स्वार्थों पर जहाँ पर यह योजना लागू होगी वहाँ मासिकों की अधिक संतुष्टान देना चाहिए। (वेबिस पृष्ठ ३६०)

मासिकों की प्राप्ति पर विचार —

मासिकों में कुछ बिचिष्ट घाघाघे पर इस योजना का विशेष किया है। उनका कहना है कि 'कर्मचारी का परिभाषा बहुत विस्तृत है और मजदूरी की परिभाषा भी स्पष्ट नहीं है। मजदूरी में परिभाषा के अनुसार ता मजदूरी मिला पाइकिम मिला प्रावि भी सम्मिलित किमे जा सकते हैं। यमिक के अद्यतन की ठमाही करने का उत्तरदायिन् भी मासिकों पर लाद दिया गया है। परन्तु एमी कोई व्यवस्था नहीं की गई है जिसमें यदि मजदूर अपना अद्यतन देने में मना कर देता है ता मासिक कोई कार्यवाही कर सके। मासिक मजदूरी को अद्यतन के लिए साप्ताहिक दर का रूप देने की कठिनाइयों की ओर भी उन्होंने मकेत किया। परन्तु यह सब कठिनाइयाँ ऐसी नहीं थी जिनके कारण योजना को कार्यान्वित न किया जाना। वास्तव में मासिकों के लिए इस योजना की लागत इतनी नहीं होती जितनी कि निर्धार जाती है। ४०० ६० या इससे कम पामे वाले कर्मचारियों का अद्यतन उतनी मजदूरी का ३% से भी कम होता है। इस प्रकार मासिकों पर अद्यतन का भार उत्पादन व्यय के अन्तर १ प्रतिशत ही और अधिक होगा। परन्तु इस योजना की लागत मासिकों को वास्तव में इनमें भी कम बैठती है क्योंकि इस समय मासिकों को मातृत्व हित लाभ अधिनियम और यमिक दायिपूर्ति अधिनियम के अन्तर्गत सामों का भुगतान करना पड़ता है। यह भुगतान सब बीमा कराये हुए कर्मचारियों के लिए नियम द्वारा दिया जायेगा। योजना के कार्यान्वित होने के अन्तर्गत परचाह ही बीमा कराये हुए व्यक्तियों के लिए साम की लागत भी नियम स्वयं बहुत करेगी। इस प्रकार मासिकों के लिए वास्तविक लागत उत्पादन मूल्य के एक प्रतिशत की भी ३ भाग के समकथ बँटैगी। यह लागत इतनी भारी नहीं मासूम देती कि अद्यतन इसका भार बहुत न कर सके। लागत और अद्यतन के अन्तर्गत ही छोड़कर एक और महत्वपूर्ण अन्तर्गत यह है कि कारखानों में काम करने वाले १० लाख कर्मचारियों को किसी न किसी प्रकार की सुरक्षा कंसे अद्यतन की जाय। यह योजना यमिकों के संकट के अनेक अद्यतनों पर उनको सहायक होगी। हमने यमिकों का एक स्वयं और स्थायी बर्मे बन जाण्या जिससे स्वयंसेवक अद्यतन में वृद्धि होगी। इस योजना में जो छोटी प्रतिशत लागत प्राणी यह अधिका उत्पादन और स्वयं से संतुष्ट बनता के रूप में हमें समुह हो जायेगी।

योजना का कार्यान्वित होना —

२४ फरवरी १९३२ को काजपुर में प्रधान मंत्री पं० मेहता ने कर्मचारी राज्य बीमा योजना का अद्यतन किया। उसी दिन देरमी ने भी इसे लागू कर दिया

गया। इसके पश्चात् यह योजना ग्रन्थ स्वार्थों पर भी लागू की गई। इस समय इसके अन्तर्गत बीसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट है विभिन्न राज्यों के लगभग १७ लाख से अधिक श्रमिक घाटे हैं।

क्षेत्र	लागू होने की तिथि	योजना के अन्तर्गत घाने वाले कर्मचारियों की संख्या
१	२	३
फ़ारुखपुर	२४ फरवरी १९२२	८१
रेहमती	"	४ "
पंजाब (७ नगर समूहसर प्रन्वताला बालम्बर, बटाखा प्रन्वुलपुर, भिवाणी और लुधियाना)	१७ मई १९२१	३२
नागपुर	११ जुलाई १९२४	२२ "
बृहत्त सम्बर्ध	२ फरवरी १९२४	४२२ "
मध्य भारत (४ नगर इन्डौर, प्वालियर, उज्जैन और छत्ताम)	२३ जनवरी १९२२	२२ "
कोयमुत्तूर	"	३६ "
हैदराबाद व तिकम्बटाबाद	१ मई १९२२	१८
कलकत्ता शहर और हावड़ा जिला	१४ अगस्त १९२२	२ ३६,०००
प्रायम् (७ नगर बिधाषापतनम जिले के ३ मुष्टर जिले के २, तथा घोडावरी व इण्ड्या जिलों में से एक एक)	९ अक्टूबर १९२३	१७ "
बहाल	२० नवम्बर १९२५	५२,००
सखनठ घानरा व सहरनपुर	१५ जनवरी १९२१	२१५ "
घकोला और हिलननघाट (मध्य प्रदेश के दो नगर)	२७ मई १९२१	१०० "
बुरुहानपुर (मध्य प्रदेश)	१ सितम्बर १९२१	१८०
तिरुवाङ्कुर कोचीन (२ नगर बयूमीन घसप्पी घरनाङ्कम घलम्पा और बिङ्कुर)	१५ सितम्बर १९२१	३७ २००
मद्रास (३ नगर मद्रुवाई, घम्पाघमुट्टुम् और तुटीकोरल)	२८ अक्टूबर १९२१	३१ ०००
राजस्थान (६ नगर बयपुर, बोधपुर, बीकानेर, पामी भीमबाड़ा और लखौरी)	१ दिसम्बर १९२१	१७ ००
रमाहाबाद बाणलसी रामपुर और बल्बानपुर (उत्तर प्रदेश)	३१ मार्च १९२७	१५,२००
बबलपुर (मध्य प्रदेश)	२९ सितम्बर १९२७	४०

१	२	३
बीवार (राजस्थान)	१	समस्तिपुर
पटना कटिहार, मुपेर घोर (बिहार)	२७ अक्टूबर १९५७	४०००
सवाई-माधोपुर (राजस्थान)	१५ दिसम्बर १९५७	१६,५००
पत्तीबड़ हापरस गिकोहाबाद घोर बरेली (उत्तर प्रदेश)	१ मार्च १९५८	२,५००
बंगलौर (मैसूर)	३० मार्च १९५८	१०,५००
मिनेन्द्रम (केरल)	२६ जुलाई १९५८	५०,०००
मम (४ नगर मोहाटी डिब्रगड़)	३० अगस्त १९५८	४०००
धुबरी तिमसुलिया-मधुप (मद्रास (४ नगर तीरपपुर सुबमसपेट)	०८ नवम्बर १९५८	३७००
सलीम घोर मद्रास	३ नवम्बर १९५८	२०,०००
घी गंगानगर तथा धौलपुर जिला	२९ मार्च १९५९	२५००
शहजनबा (गोरखपुर) मिर्जापुर, गामिया	२९ मार्च १९५९	११,०००
बाय तथा मोहीनगर (उत्तर प्रदेश)		

इस प्रकार यह योजना मार्च १९५९ के अन्त तक ७९ क्षेत्रों में लागू हो चुकी थी। घोर इसके अन्तर्गत १४१४ लाख अधिक धाते थे। वर्ष के अन्त तक यह योजना ७६ क्षेत्रों पर लागू हो चुकी थी घोर इसके अन्तर्गत १४५३ अधिक धाते थे। यह निम्न तालिका से स्पष्ट हो जाएगा।

१	२	३
केरल (२ क्षेत्रों में अर्पाठ कोन्टीकोरे तथा कीरोल में)	१२ जुलाई १९५९	११,०००
बंजाब (२ क्षेत्र सामा तथा चाठीबान)	अगस्त १९५९	५,०००
मध्य प्रदेश (२ क्षेत्र नाबदा तथा मोपाल)	२६ नवम्बर १९५९	६,०००
बारबल (मद्रास)	१४ नवम्बर १९५९	५,०००

१९९ में योजना निम्नलिखित स्थाओं तक विस्तृत कर दी गई —

१	२	३
केरल (२ केन्द्र—कोई कोपिन तथा मटरबरी)	३ जनवरी १९९१	३
छद्दीसा (१ केन्द्र—रजमानपुर, बंबवार बारंब बटक धीर प्रचाराजगमर)	३ जनवरी १९९१	१८२००
महास (४ केन्द्र)	२७ फरवरी १९९१	५२०
सीरपुर (मध्य)	२७ मार्च १९९१	८१०
दाक्षामिया नगर, बंबारी तथा बापसा (बिहार)	२७ मार्च १९९०	१०
वाल्मिया पुरम (महास)	२७ मार्च १९९१	१७०
हुबसी (मैसूर)	२७ मार्च १९९१	१७५०
श्यामपुर (पश्चिमी बंगाल)	३ जून १९९१	प्राप्त नहीं
घाबोरी तथा कोकीनाहा (मध्य)	१३ अगस्त १९९१	३२५०
उदयपुर तथा भरतपुर (राजस्थान)		
बनबाद (बिहार)	२७ अगस्त १९९१	१९
राजगन्ध माँक (मध्य प्रदेश)	२६ सितम्बर १९९१	३२०
केरल (३ केन्द्र—कौनूर, तिलीचपी तथा बालीपरम)	२९ अक्टूबर १९९१	९,५०

इस प्रकार १९९१ के अन्त तक यह योजना ११२ केन्द्रों में लागू हो चुकी थी तथा इसके अन्तर्गत १५७९८ लाख व्यक्ति लाभ पाते थे। १९९१ में यह योजना धीरे-धीरे केन्द्रों में भी लागू कर दी गई है जो निम्नलिखित है—

१	२	३
राजदेसी (मैसूर)	८ जनवरी १९९१	३९००
हिसार (पंजाब)		
महास (३ केन्द्र—तिलचिटावली, रानीपठ तथा काबेरी नगर)	१९ फरवरी १९९१	प्राप्त नहीं
सोनीपठ (पंजाब)		
जलार प्रदेश (३ केन्द्र—मेरठ, मुठायाबाद तथा फिरोजाबाद)	२३ मार्च १९९१	५०
केरल (२ केन्द्र—पुमानूर तथा कोटयाम)	३० जुलाई १९९१	४४००
मंडगूर तथा देवाम (मध्य प्रदेश)	२९ अगस्त १९९१	१७३०
गठार (पंजाब)	१९ सितम्बर १९९१	१००
पडास (३ केन्द्र)	२५ अक्टूबर १९९१	२,८००
बनमोर (मध्य प्रदेश)	२८ अक्टूबर १९९१	५,८००
महास (१३ गाँवों के)		
बिजियानपरम (मध्य)	१८ नवम्बर १९९१	८००

१९६२ में भी इस योजना को धन्य केन्द्रों में लागू किया जा रहा है। १० जनवरी से यह योजना मंसूर (मंसूर) तथा मोबिन्दपड़ कपुरवला और फगवाड़ा (पंजाब) में लागू कर दी गई है। मंसूर में ६४०० और पंजाब में ६,३०० और अधिक धमिक इसके अन्तर्गत था गए हैं। ११ जनवरी १९६२ से योजना फरीदाबाद (पंजाब) में ७ हजार धमिकों पर लागू कर दी गई है। १० फरवरी १९६२ से यह उत्तर प्रदेश में ऐबेइलगर, रड़की तथा भौसी में २३०० धमिकों पर लागू कर दी गई है। इस प्रकार इस योजना के अन्तर्गत फरवरी १९६२ तक १७१०६४ धमिक था गए थे। द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना काल में इस योजना को उन समस्त केन्द्रों पर लागू करने का विचार था जहां ११०० या अधिक धमिक कार्य करते हैं। तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में यह योजना पहले तो उन १ लाख धमिकों पर लागू की जाएगी जो द्वितीय आयोजना काल में इसके अन्तर्गत आने से रह गए हैं और फिर उन समस्त केन्द्रों पर लागू की जायगी जहाँ १०० से ११०० तक धमिक ऐसे हैं जो 'कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम' के अन्तर्गत आते हैं। इस प्रकार इस योजना के अन्तर्गत ३० लाख धमिक था जायेंगे।

शिक्षित सम्बन्धी सुविधाएँ अब बीमाहित धमिकों के परिवारों को भी दी जा रही हैं। मंसूर सरकार ने सबसे पहले २६ जुलाई १९५० को मंसूर में धमिकों के परिवारों को शिक्षित सुविधाएँ प्रदान की। उसके पश्चात् अन्य राज्यों में भी धीरे-धीरे यह योजना धमिकों के परिवारों तक विस्तृत कर दी गई है। १९६०-६१ तक यह योजना १३४ लाख धमिक परिवारों पर लागू हो चुकी थी। तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में १० लाख और धमिक परिवार इस योजना के अन्तर्गत था जायेंगे।

योजना के कार्यान्वित होने के पश्चात् यह अनुभव किया गया है कि यह धमिकों में काफी लोकप्रिय हो रही है। शिक्षितान्तर्गत में आने वाले रोगियों की संख्या का प्रतिदिन बढ़ता और बीमारी व असमर्थता लोगों का अधिक संख्या में सुखदायक होना यह प्रदर्शित करता है कि यह योजना धमिकों में काफी लोकप्रिय होती जा रही है। उदाहरणतः १९५६-६० में विभिन्न राज्य बीमा प्रीपक्षालनों तथा शिक्षितान्तर्गतों और पैनल डॉक्टरों के हस्तगतों में लगभग १,५०,३६२६७ मरीजों का इलाज किया गया तथा ३३७२२ मरीजों की हस्तगत में भरती किया गया। १,००६०४ बार चरों पर मरीजों को देखा गया। १९५०-५६ तक निम्न द्वारा नववी नाम के रूप में ६५०१०००००० बीमाहित व्यक्तियों को दिए गए जो निम्नलिखित नामों के लिए दिए गए — बीमारी लाभ— ५५६,६६,००० ५०, मातृत्व हित लाभ— २१,०३,००० ५० अस्थायी असमर्थता लाभ— ६२६०००० ५० स्थायी असमर्थता लाभ— १०,०६,००० ५०, धमिकों का लाभ— ४,५६,००० ५०, धन्य लाभ— २२१००० ५०। १९५६-६० में ३०५ लाख ५० नववी नाम के रूप में दिए गए थे। १९५०-५६ के अन्त में इस योजना की निधि में कर्मचारियों का

संघदान ३८१ ११ १२ ४० वा धीर मालिकों का संघदान २,६० २४ ०८१ रुपए पहुंच गया था। अनेक मालिकों पर संघदान के न देने तथा अविनियम के अपराधों को न मानने के कारण मुकदमा भी चलाया गया। नियम की आवधिक रिपोर्ट से पता लगता है कि नियम की मांगी हानत संतोषजनक है। नियम के १९९१-९२ के बजट में ३०-९२ लाख ४० की बचत है (माय १ ९,२७८ ००० ४० धीर व्यय १० ३२१ ९० ४०)।

योजना को कार्यान्वित करने में कठिनाइयाँ —

कुछ बाधाओं के कारण अभी तक यह सम्भव नहीं हो सका है कि इस योजना को धीरे धीरे क्षेत्रों में कार्यान्वित किया जा सके। कुछ प्रापतियों के कारण जिनका अन्तर अस्तेज किया जा चुका है मालिकों की धीरे से योजना का विरोध किया गया है धीरे इसलिए उनका पूर्ण सहयोग नहीं मिल पाया है। अमिकों ने भी कुछ बाधाओं पर इस योजना पर प्रापति उठाई है। सर्वप्रथम मजदूरों की यह मांग रही है कि इस योजना में उनके परिवारों के सदस्य भी सम्मिलित कर लिये जायें धीरे कभी-कभी उन्होंने इस बात पर बहुत जोर दिया है। यह बात अब मान भी ली गई है परन्तु वितीय कठिनाइयों के कारण अब स्वानों पर अमिकों के परिवारों के लिए यह सुविधा प्रदान नहीं की जा सकी है। मजदूरों की दूसरी मांग यह है कि हस्पताल की उत्तम सुविधाएँ प्राप्त हों धीरे नियम के अपने हस्पताल चलाने से हों। नियम को अधिकतर स्वामीय हस्पतालों पर निर्भर रहना पड़ता है जिनमें बीमा कराने हुए व्यक्तियों के लिए पक्षम सुरक्षित कर दिये जाते हैं। मजदूरों की तीसरी मांग यह है कि कुछ प्रगतिशील मालिक जो उच्च स्तर की चिकित्सा सुविधाएँ देते रहे हैं उनमें योजना लागू होने के पश्चात् कटौती नहीं होनी चाहिये। इसके अतिरिक्त मजदूरों ने यह मांग भी की है कि नियम के प्रवर्ध में उनका हान भी होना चाहिए। समुत्तर, कसकता धीरे हाबड़ा जैसे कुछ स्वानों पर मजदूरों ने हड़तालें भी कीं धीरे इस बात की मांग की कि मजदूरों द्वारा बीमाविधि में किया जाने वाला संघदान उनकी मजदूरी में से नहीं काटा जाना चाहिये।

एक धीरे कठिनाई यह है कि चिकित्सा के लिए डॉक्टरों प्रादि की भी कमी है। जो डॉक्टर वैनम (नामिका) प्रणाली के अन्तर्गत कार्य करते हैं वह यह अनुभव करते हैं कि उन्हें प्राप्त होने वाला वेतन पर्याप्त नहीं है धीरे यह अधिक वेतन की मांग करते हैं। प्रतिशित कम्पाउण्डर धीरे चिकित्सासभ चलाने के लिए उचित स्वान भी काये कठिनाई से मिल पाते हैं।

एक धीरे अड़भन यह भी कि राज्य सरकारों ने इन बात की शिकायत की कि चिकित्सा सुविधाओं की लागत का जो ३ भाग उन्हें देना पड़ता था वह बहुत अधिक था। अब यह निरन्तर किया गया है कि राज्यों को चिकित्सा लागत की लागत का केवल ३ भाग बहान करना पड़ेगा। राज्य सरकारें इस बात में भी द्विष कटी है कि बीमा करण हुए मजदूरों के परिवारों को चिकित्सा लागत प्रदान करने का

उत्तरदायित्व धरने उमर में । परन्तु निगम इस बात के लिए बहुत जोर देता रहा है और इस बात तक के लिए राजी हो गया है कि जब योजना परिवारों पर भी लागू कर दी जाएगी तब राश्यों को चिकित्सा लाभों को जायज का केवल ३ मान ही देना पड़ेगा । एक अन्य कठिनाई यह है कि मासिक धरने प्रबंधन की राशि नियमित रूप से बचाना नहीं कराते और यह बात सरकारी क्षेत्र में भी पाई गई है । बकाया की प्रगाही के बिना कठोर पग उठाने का सुझाव दिया गया है ।

इसके अतिरिक्त मम मंत्रालयों के अधिकारियों और कर्मचारी राज्य बीमा निगम के अधिकारियों में सहयोग की कमी है । इसका अनुमान इस घटना से लगाया जा सकता है कि प्रारम्भ में बहुत पक्षपात कार्य करने वाले नियम के प्रथम डाइरेक्टर जनरल डा० काटियाल की कार्य प्रशंसा को बढ़ाया नहीं गया जिसका कारण यह बताया जाता है कि उनका मम मंत्रालय के अधिकारियों से कुछ मतभेद था । इसके विरोध में डा० काटियाल ने सीबी जी की समिति पर उपवास किया । उसके परभाव फर्नल सी० एम० एलबुकुर्क (Col V M. Albuquerque) निगम के डाइरेक्टर जनरल नियुक्त किए गये परन्तु उन्होंने भी मार्च १९६१ में स्वीकृत दे दिया क्योंकि उनका भी नियम के कर्मचारियों और प्रबन्धकों में आपसी सम्बन्धों के विषय में मत भेद था । यह सी बी० जी० एन राजम नियम के महा-निवेद्यक है । यदि सामाजिक सुरक्षा की किसी योजना को सफल बनाना है और उसे कार्यान्वित करने में देर नहीं करनी है तब वह बहुत आवश्यक हो जाता है कि योजना को बनाने वाले जब अधिकारी बहुत ईमानदार हों, उनमें प्रबन्ध करने की पर्याप्त क्षमता हो और वे पारस्परिक सहयोग से कार्य करें । डा० काटियाल बीसी बटनाएँ जनता के विरवास को हिला देती हैं । इस प्रकार की बटनाएँ किसी भी हालत में नहीं होनी चाहिए ।

स्वामी मम समिति की विचारियों के पत्रस्वरूप १९३६ में कर्मचारी राज्य बीमा योजना की बांध करने के लिये डा० लक्ष्मण स्वामी मूदानियर को जो मद्रास विश्वविद्यालय के उपकुलपति हैं नियुक्त किया गया । डा० मूदानियर ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी है जिस पर विचार किया जा रहा है । १ मार्च १९६१ तक जो ३ वर्ष पूरे हुए हैं उस अवधि में नियम की परिमार्पति और देयता के सम्बन्ध में मूल्यांकन के लिए बीमा निम्नरु की नियुक्ति की गई है । मार्च १९६१ में नियम के एक उपसमिति बनाई है जिसका कार्य कर्मचारी राज्यबीमा अधिनियम में संशोधन करने पर सुझाव देना है । यह सुझाव है कि अधिनियम के अन्तर्गत जो सुविधाएँ दी जा रही हैं उनकी कार्य बिधि को सरल बना दिया जाय ताकि अधिक को पक्षी सेवार्ने प्राप्त हो सके तथा इनके अन्तर्गत जाने वाले व्यक्तियों की सीमा उन धर्मियों तक भी विस्तृत कर दी जाय जिनको ३०० व० प्रति माह मिलते हैं ।

उपसंहार —

कर्मचारी राज्य बीमा योजना एतिया में अपने प्रकार की पहली ही योजना है । भारतीय जनता के लिए सामाजिक सुरक्षा की एक व्यापक योजना बनाने की

विद्या में यह पढ़ना कठिन है। इसे हम एक साहसपूर्ण और साध ही ऐसी योजना कह सकते हैं जो बहुत महत्वाकांक्षी नहीं है। परन्तु यही एक इसके अन्तर्गत बन-संस्था का एक छोटा सा ही मात्र भाग पाया है, अर्थात् केवल संघटित छात्रों के मञ्जूरों पर ही जिनकी संख्या लगभग ३६ लाख है यह योजना लागू होती है। इसके अन्तर्गत सब प्रकार के संकट और सब प्रकार के व्यक्ति विशेषकर कुपि मजदूर नहीं पाते हैं। सामाजिक सुरक्षा के दृष्टिकोण से यह एक व्यापक योजना नहीं है। परन्तु इसको एक अधिक बड़ी और साहसपूर्ण योजना को लागू करने के लिए आचारसिद्धा माना जा सकता है और यह देश की जनता के लिए व्यापक समाज सुरक्षा की योजना बनाने में मार्ग-दर्शक बन सकती है। यह धारणा की जाती है कि इस योजना को इस विश्वास के साथ कार्यान्वित किया जाएगा और इसके लागू करने में अधिकारियों में भी सेवामावना निहित रहेगी और मानिक और मजदूरों का इच्छित रूप से पूर्ण सहयोग होगा।

नाविकों के लिए सामाजिक बीमा — (Social Insurance for Seamen)

यह भी उल्लेखनीय है कि मञ्जूरों के एक अन्य वर्ग के लिये अर्थात् नाविकों के लिए भी भारत सरकार ने एक सामाजिक सुरक्षा योजना तैयार की है। इस विषय पर प्रो० बी पी अन्वयक और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघटन की डा (कुमाठी) लौरा बोडनर द्वारा तैयार की हुई एक संयुक्त रिपोर्ट पहले ही प्रकाशित की जा चुकी है। इस अन्वयक बोडनर योजना में बीमायी रोजगार, वृद्धावस्था व अन्तर बीबी बीमे और नाविकों के 'अतीका काल' के लिए बीमे की व्यवस्था की गई है। परन्तु इस योजना के निर्माणकर्ताओं के विचार में नाविकों के लिए किसी भी बीमा योजना की सफलता बहुत सीमा तक इस बात पर निर्भर करेगी कि उनकी भर्ती की स्थिति व्यवस्था है। इस व्यवस्था द्वारा समुद्री सेवा में भर्ती होने वाले अम्पिकों की संख्या कम करने तथा ऐसे नाविकों के लिए, जिनका निरन्तर रोजगार नहीं होता एक रूम चक्र (Rotation) की योजना लागू करने का सुझाव है। इस सुझाव को ध्यान में रखते हुए सरकार ने बम्बई और कलकत्ता में सरकारी रोजगार अन्तर बीमे है। नाविकों के लिए सामाजिक बीमा को प्रारम्भ करना अभी सम्भव हो सकेगा जब रोजगार के ये अन्तर अपना कार्य नरकता से और सक्रमतापूर्वक करने लयेंगे। नाविकों के लिए एक राष्ट्रीय कल्याण बोर्ड की भी स्थापना हुई है जिसने नाविकों के लिए एक सामाजिक सुरक्षा योजना के निर्माण हेतु एक उपसमिति की नियुक्ति की है।

बेरोजगारी बीमा

(Unemployment Insurance)

बेरोजगारी के मूल कारण —

सामाजिक बीमे का एक अन्य महत्त्वपूर्ण भाग अन्वयक सार्वजनिक बेरोजगारी बीमा है। इस और आधुनिक राज्यों का ध्यान भी अर्थात् रूप से आकर्षित

हमा है। बेरोजगारी का अर्थ होता है किसी योग्य व्यक्ति को रोजगार न मिल सकना। यह एक ऐसी अवस्था है जो अत्यन्त मीठी (Lazey Faire) पर आधारित आर्थिक प्रणाली में निहित है तथा इसके कारण पैदा होती है। इससे एकी अस्थिरता का पता चलता है जो मुक्त उद्यम प्रणाली (Free Enterprise) का एक आवश्यक लक्षण है और सम्भवतः यह एक ऐसा मूल्य है, जिसका बुझाना ही परेया यदि उत्पादन को दिन प्रतिदिन होने वाली नई-नई विधियों और आविष्कारों के द्वारा तथा बिना किसी नियंत्रण के घाते बढ़ाना है तथा अर्थिक से अर्थिक लाभ प्राप्त करना है। उद्योग के लिये यह हमेशा सुविधा रहती है कि कुछ मजदूर बेरोजगार रहें जिससे जब भी आवश्यकता पड़े उन्हें बुझा लिया जाय। जब व्यापार उन्नति पर होता है तब बेरोजगार मजदूरों की संख्या कम होती है परन्तु जब बन्दी का समय आता है तो संख्या बढ़ जाती है। इन निरन्तर होने वाले सामयिक उतार-चढ़ाव (Cyclical Fluctuations) के प्रतिरक्त नए आविष्कारों अथवा विदेशी व्यापार में हानि के कारण भी बड़ी-बड़ी मुनीबतें या पड़ती है जिनसे उद्योग का साथ लाना-बाना सीधे मध्य हो जाता है और मजदूरों को काफी समय तक आनन्द में समय बचाना पड़ता है। इसका अतिरिक्त कुछ उद्योगों में कार्य सामयिक होता है और कुछ कार्यों में जैसे उद्योगों द्वारा सामाजिक निर्माण कार्यों में कार्य-व्यवस्था अनिश्चित होती है। इस प्रकार के कार्यों और उद्योगों में पूर्ण रोजगार की व्यवस्था नहीं हो पाती। इस प्रकार, बेरोजगारी यह अवस्था है जो हमारे समस्त अर्थिक क्षेत्रों में आती है और यह विभिन्न देशों के मुक्त उद्यम पर आधारित आधुनिक उद्योग प्रणाली की एक निश्चित लक्षण बन चुकी है। (इसका परिचिष्ट 'अ' भी देखिये)।

बेरोजगारों को सहायता देने की आवश्यकता —

बेरोजगारी अनेक आर्थिक बुझाइयों में से एक अस्थिरताय दोष है और यह आर्थिक संयोजन के लिये एक गम्भीर घटक भी है। यदि बेरोजगारी अधिक जिनों तक फैलती है तब व्यक्ति और समाज के लिये इसके बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। इसके सामाजिक शक्ति का हानि कुछ आनन्द दृष्टता आदि अनेक सामाजिक बुझाइयों उत्पन्न हो जाती है। समाज का एक बड़ा तथा सामान्य अंतरदायित्व यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को जीविका कमाने और निर्वाह करने का उचित अवसर प्रदान करे। जैसे ए० ए० मिल के उद्योगों में "उद्यम अनिश्चय" रूप से एक अवस्था की बंध पुनर्गठन के काम में आने-बीने की सुविधायें प्रदान करता है। परन्तु यदि गरीब व्यक्तियों के लिये, जिन्होंने अवस्था नहीं किया है, ऐसा नहीं किया जाता तब स्पष्ट रूप से यह अवस्था का बढ़ावा देता।" जब अर्थिकतर उद्योगों में बेरोजगारी के समय लोगों को सहायता देने के अपने कर्तव्य को स्वीकार कर लिया है।

बेरोजगारों को सहायता के लिये कुछ योजनायें —

सन् १९०६ के पश्चात् अनेक देशों में बेरोजगारों को सहायता देने के लिये अनेक योजनायें बनाई गई थीं। कुछ योजनायों के अन्वयगत पूर्णतया

या मुस्यठवा काम देने की सुविधायें भी नहीं थीं और कुछों में तथा देने की व्यवस्था की गई थी। इनमें से कुछ योजनाओं की व्यवस्था तो किसी विशिष्ट विपत्ति का सामना करने के लिये धरुवायी थी परन्तु कुछ योजनायें स्थायी थीं। बेरोजगारी सहायता योजनायें अमरीका कनाडा स्वीडन आस्ट्रिया ब्रिटन और योरप के अधिकांश देशों में लागू रही हैं। इस प्रकार की सहायता सार्वजनिक निर्माण कार्यों में बेरोजगारों को सामान्य मजदूरी पर रोजगार प्रदान करके दी गई है। भासों मजदूरों की इस प्रकार सहायता की गई है। बेरोजगारी सहायता की प्रत्येक योजना में यह धारणक है कि प्राचीन में काम करने की योग्यता हो रोजगार हस्त में उतका नाम दर्ज हो किसी भी अपने योग्य रोजगार को स्वीकार करने की उत्तकी इच्छा हो किसी प्रतिष्ठण लेने व सहायता कार्य करने के लिये बहु तैयार रहे और उसे इस प्रकार की सहायता की धारणकता भी हो। बेरोजगारी-सहायता योजनाओं का मुख्य उद्देश्य नाम प्राप्त करने वाले मजदूर और उसके परिवारों का निर्वाह करना होता है इसलिए जो भी उच्च सहायता-रुम में दी जाती है उसका निर्णय सहायता दिए जाने वाले परिवार के आकार और सदस्यों की संख्या को देखकर किया जाता है। ब्रिटन तथा आयरलैंड जैसे कुछ देशों में बेरोजगारी-सहायता योजनाओं को केन्द्रीय सरकार ने अपने हाथों में ले लिया है और उनका साठ व्यय राष्ट्रीय करों द्वारा पूरा किया जाता है। परन्तु कुछ दूसरे देशों में सरकारें ऐच्छिक बीमा निधियों को या स्थानीय बेरोजगार निधियों को इस हेतु उपदान प्रदान करती हैं।

भारत में बेरोजगारी-सहायता प्रदान करने में कठिनाइयाँ -

बेरोजगारी-सहायता देने की जो प्रणाली अनेक देशों में चल रही है वह सम्भवतः भारत जैसे देश के लिए उपयुक्त नहीं है क्योंकि इसमें अनेक कठिनाइयाँ हैं। प्रथम तो भारत इतना बड़ा देश है और यहाँ बेकारी इतने व्यापक रूप में फैली हुई है कि वर्तमान आर्थिक दशाओं में बेरोजगारी-सहायता देने की कोई योजना बनाना असम्भव सा हो जाता है। इसके प्रतिरिक्त यदि यह सम्भव भी हो तो इस प्रकार की प्रणाली हमारे देश के लोगों को आकटी बना सकती है। योजना का लाभ छठकर अनेक बेजिम्मेदारी युक्त समय बर्बाद करने और साथ में बैठन भी पाने का एक तरीका बना सकता है। इंग्लैंड में भी ऐसे मामले हुए हैं कि अनेक युवक जो अपने माता-पिता के साथ नहीं रहते वे अन्तर्निष्ठ कुछ समय तक तो कोई काम किया फिर सुट्टियाँ मगाने के लिए उसे छोड़ दिया और सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली बेरोजगारी-सहायता लेकर बैर लर्न बनाते रहे और कुछ समय परचाड फिर कोई नौकरी कर नी। इसके प्रतिरिक्त भारत में बेरोजगार-सहायता योजना का प्रदान करने वाले अधिकारियों द्वारा अपने पद के अनेक दुरुपयोग किए जा सकते हैं अर्थात् कि कृपकों के लिए दिया जाने वाला 'सकाशी' श्रुल के सम्बन्ध में किया जाता है। भारत में एक यह भी कठिनाई है कि इस प्रकार की सहायता का विवरण किस आधारों पर किया जाय क्योंकि भारत में संयुक्त परिवार प्रणाली

है और अधिकोस बनता प्रतिष्ठित है। जनी-कमी यह तर्क भी दिया जाता है कि इस प्रकार की सहायता उन धारमसम्पत्ती लोगों की भावना को कुचस देपी जो सरकार से इस प्रकार की सहायता पाने की धनेता स्वयं कोई धकड़ी नौकरी करना अधिक पसन्द करते हैं।

बेरोजगारी-बीमा -

परन्तु बेरोजगार लोगों को बेरोजगारी-बीमा योजना के अन्तर्गत भी सहायता प्रदान की जा सकती है। यह विधि पिछले कुछ वर्षों से अनेक देशों में काफी मोह-प्रिय हो गयी है। बेरोजगारी में सहायता देना पूर्णतया सरकार का कर्तव्य है परन्तु बेरोजगारी-बीमे के अन्तर्गत एक ऐसी विधि की स्थापना की जाती है जिसका निर्माण सरकार, मासिक धौर मजदूरों के निरन्तर संघान से होता है और फिर इसमें से सहायता दी जाती है। अनिशर्त बेरोजगारी-बीमा योजनाएं अनेक देशों में लागू की जा चुकी हैं, जैसे कनाडा (१९४०) ब्रिटेन (१९३२-४०) इटली (१९३९), स्वीडन (१९३८) जार्ज (१९३९) ब्रिटेन (१९३७) और अमेरिका (१९३२-४१)।

अद्यतन अन्तर्राष्ट्रीय अम संवहन ने १९३४ के एक अधिसमय में बेरोजगारी बीमा योजनाओं की विचारिण की थी परन्तु भारत में अभी तक बेरोजगारी बीमा के लिए किसी भी विधान की व्यवस्था नहीं की गई है। रॉयस थप आयोग ने भी इस प्रणाली को भारत के लिए सम्भव नहीं समझा था। उन्होंने इस सम्बन्ध में कई कठिनाइयों की ओर संकेत किया था जैसे किसी निश्चित व स्थाई औद्योगिक जन संख्या का अभाव देय का बड़ा प्रकार तथा ऐसी योजना पर अधिक व्यय का होना। परन्तु हमारा देय बीरे-बीरे इस तथ्य के प्रति अज्ञ होता जा रहा है कि बेरोजगारी अभाव के लिए बहुत उत्तरदाक है और बेरोजगारों के लिए किसी न किसी प्रकार की सुरक्षा व्यवस्था करने में देर नहीं करनी चाहिए। देय के अमिनों के लिए इस प्रकार की योजनाओं के अभाव में जो दुःखिया उत्पन्न हो जाती हैं उनका उत्सख पहले ही किया जा चुका है। जब मजदूर बेरोजगार होता है तब अनेक सामाजिक दुःखिया उत्पन्न होने लगती हैं। अतः सामाजिक बीमा प्रणाली के अन्तर्गत ही बेरोजगारी को भी सम्मिलित करने की अति आवश्यकता है।

परन्तु यह प्रणाली उस समय तक सम्भव नहीं हो सकती जब तक कि बीमे का कोई केन्द्रीय संवहन न हो और जिसका कार्य रोजगार अन्तर्गत क माध्यम से न करवाया हो। यह अन्तर केन्द्रीय संवहन की स्थानीय एजेंसियों के रूप में कार्य कर सकते हैं। इस बात की भी आवश्यकता है कि बेरोजगारी के अनेकें एकत्रित किए जाएं और यह जाना जाय कि किन परिस्थितियों में बेरोजगारी हो सकती है क्योंकि किसी भी संकट का बीमा होने के लिए आवश्यक है कि उस संकट को कुछ सीमा तक पहले से ही जानना सम्भव हो। बेरोजगारी बीमा में भी अन्तर नाम देने के लिए अन्तर अन्त होती है। प्रायों को यह सिद्ध करना होता है कि वह जिस रोजगार की

करता रहा है वह बीमा होने योग्य है और वह सहायता के लिए एक निश्चित काल के पश्चात् ही वाचा कर रहा है तथा उसकी नौकरी कभी उसके पुर्नबहाल के कारण नहीं गई है और न ही उसने किसी औद्योगिक विवाद के परिणामस्वरूप या स्वेच्छा से अपनी नौकरी छोड़ी है। बेरोजगार व्यक्ति में किसी न किसी ऐसे कार्य करने की इच्छा और बोध्यता भी होनी चाहिए जो उसकी साधारणतया मिल सकता है यद्यपि जो उसके साधारण काम के समान होता है। इस प्रकार के कार्य को जो भी प्रचलित व्यवस्था की दर हो इस पर ही स्वीकार कर लेना चाहिए। जब तक अमिर्कों को बेरोजगारी साम भिसे तब तक उसे रोजगार के दफ्तरों में भी कभी-कभी बाते रहना चाहिए। अतः 'योग्यता काल' तथा 'प्रतीला काल' का स्पष्टीकरण किया जाना आवश्यक है और साथ ही बेरोजगारी लाभ कितने समय तक भिसे वह भी निश्चित किया जाना चाहिए। बेरोजगारी-बीमा-योजना को रोजगार दफ्तरों के निकट सहयोग से कार्य करना चाहिए। यदि योजना अनिवार्य हो तो रोजगार दफ्तर लाभ देने की व्यवस्था कर सकते हैं। इस समय हमारे देश में रोजगार दफ्तरों का हाल सा विषय गया है और सामाजिक सुरक्षा का प्रारम्भ स्वास्थ्य बीमा योजनाओं के द्वारा हो चुका है। अतः देश में बेरोजगारी बीमा लागू करने के लिए यह एक बहुत ही उपयुक्त व्यवस्था है। कम से कम कुछ क्षेत्रों में तो बेरोजगारी बीमे की योजना प्रबोधात्मक रूप से लागू की जा सकती है।

बेरोजगारी में सहायता करने के लिए कुछ सुझाव —

जब तक बेरोजगारी को सामाजिक सुरक्षा योजना के अन्तर्गत नहीं लाया जाता तब तक बेरोजगारों को सहायता देने के लिए कुछ ऐसी ऐच्छिक योजनाएं चलाई जानी चाहिए जिनमें सरकार उपदान द्वारा सहायता दे। डॉ० राजा कमल मुखर्जी के सुझाव के अनुसार, मासिकों को इस बात के लिए उत्साहित किया जाना चाहिए कि वे एक ऐसी बेरोजगारी-सहायता निधि की स्थापना करें, जिसमें से नौकरी से निकले हुए मजदूरों को उनके सेवा-काल की अवधि में रखते हुए, अवकाश प्राप्ति तक प्रदान किया जाए। इस निधि में स्थानीय सरकारों को भी संघर्षान देना चाहिए जिसकी उचित बेरोजगार और नौकरी से निकले हुए अमिर्कों को जो सहायता प्रदान की जाए, उसके बराबर हो। इसके साथ ही सरकार को ऐसी योजनाओं को बिनका पर्यय अनुदान अमिर्कों को रोजगार देना हो या तो प्रारम्भ करना चाहिए या उपदान द्वारा सहायता देनी चाहिए। जापान में सरकार द्वारा नगरपालिकाओं को यह प्रवित्त दिया हुआ है कि वे सहायता कार्यों (Relief Works) के लिए वित्त प्रदान करने के हेतु खर्च से सकते हैं। यदि किसी योजना में अनुदान अमिर्कों को सहायता देने का व्यय कुल व्यय का कम से कम १ % होता है तो उस योजना की लागत का बाका शेष सरकार अपने कोष में से उपदान के रूप में देती है। अपने देश में हम इस अनुभव से लाभ उठ सकते हैं और बेरोजगारों की सहायता के लिए उत्साह

ही कदम उठा सकते हैं। परन्तु बस्तुतः ह्याण्ड उद्देश्य रक्ष में प्रतिबन्धित बेरोजगारी बीमा योजना को कार्यान्वित करना जाना चाहिए।

हाल ही के कुछ वर्षों में हमारे देश में बेरोजगारी के खतरे के बढ़ने के साथ साथ बेरोजगारी-बीमा की समस्या का महत्त्व भी बढ़ गया है। इस बात की वस्तुस्थिति धारणकृता अनुभव की गई है कि समस्या की गम्भीरता को शीघ्र ही प्राक्काम और बेरोजगारी काल में जो प्राक्काम प्रसुरक्षा की समस्या पैदा होती है उस भी सुसम्भवा काम। इस विषय में १९५३ के 'औद्योगिक विवाद प्रविनियम' में संशोधन करके कुछ कदम उठाए गए हैं जिनके अनुसार बेरोजगारों को बेकारी के समय दत्तित पूति प्रदान करने की व्यवस्था है (पृष्ठ १६१-६४ देखें)। यह प्रविनियम इन बातों और कारखानों में लागू होता है जहाँ २० या इससे अधिक श्रमिक कार्य करते हैं। इस प्रविनियम को वर्ष १९५४ से लागू में भी लागू कर दिया गया है। मौसमी कारखाने इस प्रविनियम के अन्तर्गत नहीं आते। प्रविनियम के अन्तर्गत कर्मचारियों को बेरोजगारी और जबरी छुट्टी (Lay-off) के समय में दत्तितपूति देने की व्यवस्था है जो उनकी मूल मजदूरी और महंगाई भत्ते का २०% के हिसाब से होती है बरफी श्रमिकों के लिए यह व्यवस्था नहीं है। यह काम १२ महीनों में अधिक से अधिक ४२ दिन मिला सकता है परन्तु यदि कर्मचारी इस अवधि में एक सप्ताह से अधिक एक ही समय में जबरी छुट्टी के लिए बिचल किया जाता है तो यह काम उसे ४२ दिन के परवान् भी मिलता रहता। इस प्रकार क कर्मचारियों को प्रतिदिन अपनी हाजिरी सपबानी पड़ती है और कोई दूसरा उचित काम दिए जाने पर उन्हें उसे स्वीकार करना पड़ता है। छुट्टी की अवस्था में उन्हें या तो एक माह का लिखित मोटिच दिया जाता है अथवा उसके स्थान पर एक माह की मजदूरी दे दी जाती है। छुट्टी हुए कर्मचारी को एक साल की नोकरी पर १५ दिन की औसत मजदूरी के हिसाब से दत्तितपूति दी जाती है। ऐसी सुविधाओं को प्रदान करने का उत्तरदायित्व मालिकों पर है। ऐसी सुविधाएं कबल उही श्रमिकों को दी जाती हैं जिन्होंने निरंतर एक वर्ष या इससे अधिक कार्य किया है। जून १९५७ में प्रविनियम में एक संशोधन के अनुसार किसी भी उद्योग के उचित बन्द होने या स्वायत्त के हस्तांतरण होने पर भी छुट्टी दत्तितपूति दी जाएगी (पृष्ठ १६६ देखें)। जबरी छुट्टी तथा छुट्टी के समय इस प्रकार जो सहायता दी जाती है वह किसी बीमा योजना के अन्तर्गत तो नहीं आती परन्तु फिर भी इस प्रकार की सहायता के कारण बेरोजगारी के दिनों में श्रमिकों को अपनी कठिनाइयां कम करने में बहुत सहायता मिलती है। यह सुझाव दिया जा सकता है कि इस प्रकार के काम उन संस्थानों के श्रमिकों को भी मिलने चाहिए जिनमें २० से कम श्रमिक कार्य करते हैं।

श्रमिकों के लिए एक अन्य प्रकार की सुरक्षा १९५६ में 'कम्पनी प्रविनियम' में संशोधन द्वारा प्रदान की गई है। इन संशोधित प्रविनियम में एक उपबन्ध यह है कि यदि किसी कम्पनी का समापन (Liquidation) हो जाता है तो कम्पनी की

परिचालित (Assets) में से व्यक्तियों का बैठन आदि सर्वप्रथम किया जायगा।

१९५४ में सरकार ने एक कार्य-बल (Working Group) भी बनाया जिसमें अम, बिना आणित्य और उद्योग मंत्रालयों आयोजना आयोग और कर्मचारी राज्य बीमा निबन्ध के प्रतिनिधि थे। इस बल का कार्य इस समस्या का प्राथमिक अध्ययन करना और यह देखना था कि बेरोजगारी बीमा योजना किस प्रकार बनाई जा सकती है। कार्य-बल ने अपनी रिपोर्ट में जो १९५५ में प्रस्तुत की गई, बेरोजगारी बीमा योजना प्रारम्भ करने का सुझाव दिया है। इस योजना के लिए मासिक और मजदूर दोनों को अपने संघदान प्रीमियम के रूप में देने होंगे। इस योजना में इस बात की व्यवस्था थी कि बेरोजगारी के समय में क्षतिपूर्ति विभिन्न आकारों पर दी जाए। इस योजना के मातृ होने में औद्योगिक विचार परिचालन में जो जरूरी सुटी और छुट्टी के लिए उपबन्ध है उन्हें निरस्त (Repeal) करने का सुझाव था। रिपोर्ट में बेरोजगारी बीमे की बांझीवता तथा समाजता पर भी जोर दिया गया था। सरकार ने इस योजना को इस समय स्वीकार नहीं किया है क्योंकि वर्तमान विधान में ही जो व्यक्तियों की छुट्टी और जरूरी सुटी के काम में क्षतिपूर्ति देने से सम्बन्धित उपबन्ध हैं वे व्यक्तियों के लिये अधिक लाभप्रद हैं। परन्तु इस समस्या पर हमें विस्तृत दृष्टिकोण से विचार करना चाहिए और बेरोजगारी बीमे की एक व्यापक और अनिवार्य योजना बनाने में एक अधिक विम्वर नहीं करना चाहिए।

एक अन्य महत्वपूर्ण पय जो इस सम्बन्ध में उठाया गया है वह बेरोजगारी सहायता निधि (Unemployment Relief Fund) स्थापित करने की योजना का है। ऐसी निधि की स्थापना का सुझाव मई १९५५ में भारतीय अम सम्मेलन के १९ वें अधिवेशन में केन्द्रीय अम मंत्री द्वारा दिया गया था। औद्योगिक संस्थानों के बन्द हो जाने से जो बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न हो जाती है उसको दूर करने के लिये एक निधि की स्थापना करने का सुझाव था। इस निधि में से किसी भी औद्योगिक संस्थान के बन्द हो जाने के कारण बेरोजगार व्यक्तियों को न केवल सहायता मिल सकती है बल्कि उस औद्योगिक संस्थान को आसू रखने के लिये भी सहायता दी जा सकती है, जो औद्योगिक संस्थान अपने मुकल प्रबन्ध के लिये विख्यात है और जिसे विश्व की कठिनाइयां केवल प्रस्थापी रूप से ही है। यह वादा भी व्यक्त की गई थी कि इस निधि द्वारा कुछ औद्योगिक संस्थानों का प्रस्थापी रूप से प्रबन्ध संभाल लिया जायेगा और यदि व्यक्तियों को उठी रोजगार में सने रखने की कोई सम्भावना प्रतीत नहीं होती तो उठी प्रकार के अन्य रोजगारों में प्रसिद्ध जाने के लिये व्यक्तियों की सहायता की जायगी। इस निधि में जन सरकार, मासिक और व्यक्तियों के संघदान से संभय करने का सुझाव था। परन्तु केन्द्रीय अम मंत्रालय द्वारा जब इस योजना पर विस्तार से विचार किया गया तो निधि में जन संभय करने के उपायों पर मतभेद ही गया। व्यक्तियों ने ऐसी निधि में संघदान देने का विरोध किया। इस निधि में जन संभय करने के लिये कोई कर लगाने के सुझाव का भी स्थाप

नहीं किया गया। परिणाम यह हुआ कि फरवरी १९६० में ऐसी सामाजिक योजना को स्थापित कर दिया गया। परन्तु अब फिर बरोडवापी सहामता विधि स्थापित करने पर विचार किया जा रहा है।

वृद्धावस्था और निवृत्त सुरक्षा (Old Age and Invalidity Security)

आवश्यकता —

वृद्धावस्था एक दूरगामी औद्योगिक और सामाजिक समस्या है जिसका समाधान होना ही चाहिए। यह अत्यन्त आवश्यक है कि पैसेनों के अभाव में प्राप्त करने पर और काम के लिए अक्षम हो जाने के अभाव पर उन्हें सुरक्षा प्रदान की जाय। यदि मजदूर भी मृत्यु हो जाय तब उसके परिवारों को भी सुरक्षा की आवश्यकता होती है। इस प्रकार की सुरक्षा की व्यवस्था या तो प्रोवीडेंट फंड या अकाल प्राप्त के धन (Gratuity) की योजनाओं में अथवा वृद्धावस्था व निवृत्त पेंशन योजनाओं से हो सकती है। यह करने कुछ की बात है कि जिन व्यक्तियों ने अपने जीवन के २० या ३० वर्ष किसी कारखाने में कठोर श्रम में व्यतीत किये हों उसे उचित वृद्ध होने पर कोई भी आशय न दिया जाय। वृद्धावस्था के लिए कुछ न कुछ व्यवस्था तो करनी चाहिए क्योंकि औद्योगिक जीवन से संयुक्त परिवार प्रथा अगम्य समाप्त हो गई है और इस प्रकार वृद्ध व्यक्ति को संयुक्त परिवार से जो सहारा मिलता था वह भी समाप्त हो गया है। औद्योगिक जीवन में जाने से पहले व्यक्ति व पाठ परि पाठ में कुछ जमीन होती भी है तो अल्पकाल में व्यतीत हो जाने के बाद वह उसे भी खो बैठता है। व्यक्ति की मजदूरी कम होती है परिवार बड़ा होता है इसलिए वह वृद्धावस्था के लिये कोई बचत भी नहीं कर पाता है। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए व्यक्ति को प्रोवीडेंट फंड की सुविधा और जहाँ सम्भव हो वहाँ पेंशन भी दी जानी चाहिए, जिनसे वृद्धावस्था में अक्षम हो जाने पर और उत्पादन कार्य में बाधित दिनों तक कठोर श्रम करने के परचाद् वह अपना पैन जीवन प्राप्त से व्यतीत कर सके।

वृद्धावस्था क्या है — (What is Old Age?)

वृद्धावस्था या तो उस अवस्था को कहा जा सकता है जब मजदूर कार्य करने योग्य नहीं रहता अथवा जब मजदूर को बेतन रहित अन्तिम अवकाश दे दिया जाता है। अर्थात् वृद्धावस्था उस अवस्था को कहते हैं जब मजदूर को रोजगार से अकाल दे दिया जाता चाहिए क्योंकि वह और अधिक दिनों तक उत्पादन के कार्य में सामर्थ्य रूप से प्रभावकारक (Effective) उत्पादन नहीं है करता। आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टिकोण के आधार पर वृद्धावस्था भी निवृत्त अर्थात् पानु के करने के बाद-आप स्वास्थ्य के बिगड़ने की दशा है। इसलिये वृद्धावस्था विभिन्न व्यवस्थाओं में विभिन्न व्यक्तियों में अलग-अलग आयु पर लागू हो सकती है।

साधारणतः अधिकतर देशों में पेन्शन देने की प्रायः ६३ वर्ष निश्चित की गई है। इस उम्र को भी ध्यान में रखा गया है कि स्त्रियाँ कम आय में ही काम के योग्य हो जाती हैं इसलिये उनके लिये पेन्शन देने की प्रायः ६ वर्ष निर्धारित की गई है।

निवृत्तता क्या है ? — (What is Invalidity ?)

जब एक बीमा कटाए हुये व्यक्ति को स्वास्थ्य बीमा योजना के प्रत्यर्थ के सब नकद लाभ दिये जा सकते हैं जिनको वह पाने का अधिकारी होता है और उसके पश्चात् भी यदि वह बीमार रहता है उस वसा में उसे निवृत्त (Invalid) कहा जाता है। इसलिये निवृत्तता की परिभाषा हम इस प्रकार कर सकते हैं कि "काम करने की स्थायी अक्षमता ही निवृत्तता है।" अतः यह भी ऐसी ही अवस्था होती है जैसी वृद्धावस्था क्योंकि दोनों में व्यक्ति कार्य करने योग्य नहीं रहता।

पेन्शन की व्यवस्था :—

वृद्धावस्था और निवृत्तता की वसा में लाभ या ठी संश्रान्त वाले प्रोवीडेंट फंड के रूप में दिया जा सकता है या संश्रानतरहित पेन्शन अथवा पेन्शन अथवा पेन्शन बीमा के रूप में लाभ दिये जा सकते हैं। संश्रानतरहित पेन्शन अनेक देशों में अपनाई गई है जैसे डेनमार्क आस्ट्रेलिया कनाडा बर्लिन अफ्रीका। भारत में सरकारी कर्मचारियों को पेन्शन दी जाती है। कुछ अन्य मानिक और एजन्सियाँ भी अपने मजदूरों को निवृत्तता पेन्शन देती हैं। परन्तु साधारणतः अनेक देशों में संश्रानतरहित पेन्शन योजनाओं को सामाजिक-बीमा की योजनाओं के कार्यान्वित हो जाने के कारण अधिक महत्व नहीं दिया गया है और संश्रानतरहित योजनाओं के स्वाम पर संश्रान्त वाली योजनाओं को प्रायः किया गया है। पेन्शन-बीमा योजना के प्रत्यर्थ वृद्धावस्था और निवृत्तता धाती है। यह जर्मनी ब्रिटेन आदि अनेक देशों में लागू हो चुकी है। पेन्शन-बीमा के अन्तर्गत वृद्धावस्था और निवृत्तता व अकाउंट मरुपु भी सम्मिलित की जाती है जो ऐसी अवस्थाएँ हैं जिनके लिये व्यक्ति दायित्व के प्रत्यर्थ भी सहमत नहीं मिलती। इन सभी संकटों के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि जो लाभ और सहायता दी जाये उनका गणना वर्षों के हिसाब से की जाय। अतः इनके लिए एक सम्बन्धी नौकरी की जरूरत प्रायः की जाती है, जिसकी अवधि २० वर्ष भी हो सकती है। इस प्रकार पेन्शन-बीमा सामाजिक-बीमा का बहु अंग है जिसकी लागत सबसे अधिक होती है। सामाजिक-बीमा प्रणाली के विकास में यह काफी समय पश्चात् लागू होती है।

निवृत्तता की वसा में यह निर्णय करना बहुत कठिन हो जाता है कि कोई व्यक्ति किसी प्रकार के काम के लिये योग्य या उपयुक्त है अथवा नहीं और कितनी अव्ययता होने पर पेन्शन दी जानी चाहिए। यह निर्णय भी कठिन होता है कि किस व्यवसायों अथवा व्यवसायों की श्रेणियों के आधार पर अव्ययता की जाय की जाए।

यद्यपि ऐसी व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण इस समय भारत के औद्योगिक श्रमिकों के लिए कोई पेन्शन बीमा योजना बनाना संभव नहीं है और उस समय तक संभव भी नहीं होगा जब तक कोई ऐसी पूर्ण सामाजिक सुरक्षा योजना लागू नहीं हो जाती जिसके अन्तर्गत सारे वर्गों से सुरक्षा की व्यवस्था हो परन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारे देश में इस प्रकार की सहायता की बहुत अधिक आवश्यकता है।

वर्तमान समय में प्रोवीडेंट फण्ड, पेन्शन और अवकाश प्राप्त धन की व्यवस्था —

हमारे देश में बूढ़ावस्था के लिये किसी न किसी प्रकार की व्यवस्था की सर्वत्र ही आवश्यकता रही है। इस समस्या की ओर रामस धन धायाग और धनक भ्रम बाँध समितियों का ध्यान आकर्षित हुआ था। परन्तु इनमें से किसी ने भी बूढ़ावस्था पेन्शन बीमे की विचारणा नहीं की। १९३४ में भारत सरकार ने १९३३ के अन्तर्राष्ट्रीय काम-सम्मेलन के उस धनिसमय को मास्यता प्रदान करने में भी अपनी अक्षमता प्रकट की जो धनिसमय निवृत्तता बूढ़ावस्था बचप्य और अनाथों के धनिसर्वाय बीमे से सम्बन्धित था। सरकार के इस निर्णय का मुख्य आधार प्रदान तथा विश्व की कठिनाइयाँ थीं क्योंकि भारत जैसे देश में यदि इस प्रकार के धनिसमय को लागू कर दिया जाय तो साम प्राप्त करने वालों की संख्या लगभग ४ करोड़ होगी जिनमें बूढ़ा अक्षमर्ष विधवाएँ और अनाथ बच्चे आदि सब ही सम्मिलित होंगे।

इस समय औद्योगिक श्रमिकों के लिये सरकारी कारखानों और रेलवे में बूढ़ावस्था पेन्शन या प्रोवीडेंट फण्ड योजनाएँ लागू हैं। भारत में धनिक श्रमिकों ने भी अपने श्रमिकों की बूढ़ावस्था के लिये प्रोवीडेंट फण्ड और अवकाश प्राप्त के समय कुछ लाभों को प्रदान करने की व्यवस्था की है। इस प्रकार के प्रोवीडेंट फण्ड स्थापित करने के लिये और इनको धनिको तरह बसाते रहने के लिये करो में पूरा धनिक देकर असाहित किया जाता है परन्तु फण्ड के लिये धनिक निर्धारित धनिको पूरा करना आवश्यक होता है। १९२२ के प्रोवीडेंट फण्ड धनिकनियम जिसमें सर्वोपेध भी हो चुका है रेलवे और राजकीय प्रोवीडेंट फण्डों में लागू होता है और १९२२ का भारतीय धनिक कर धनिकनियम (Indian Income Tax Act) जिसमें भी असाधन हो चुका है उन कर्णनी धनिकियों पर लागू होता है जिनको धनिक कर से शिरोप सुन जिनकी हुई है। उनके प्रोवीडेंट फण्ड में दिये गये धनिकानों पर धनिक कर नहीं किया जाता।

लागपुर की एन्ग्रिस धनिकों में धनिकान वाली प्रोवीडेंट फण्ड योजना लागू है और इसके साथ ही एक धनिकान योजना भी है जिनके अन्तर्गत बूढ़ा अक्षमर्षों को धनिकान दी जाती है। 'दिसी बलोप एन्ड धनिकान दिसी' में भी धनिकों के लिये बूढ़ावस्था पेन्शन धनिकान धन तथा प्रोवीडेंट फण्ड योजनाएँ लागू हैं। मजदूर की

वर्षिक एक अतिरिक्त मिस्र में भी अधिक एक साल से अधिक समय तक काम करने पर प्रोबीडेन्ट फण्ड योजना का सदस्य बन सकता है। इस फण्ड में मजदूर और मासिक यहूगाई बत्ते को छोड़कर मजदूर के वेतन का ७ $\frac{1}{2}$ % संघदान के रूप में देते हैं। मजदूर की मजदुरा मिस्र कम्पनी भी अपने उन मजदूरों को जिन्होंने १० वर्ष से अधिक कार्य किया है, पेंशन देती है। इस पेंशन की राशि मजदूर के मासिक वेतन से घायी होती है और इसके साथ सामान्य रूप से १० रुपये महामार्ग भत्ता भी दिया जाता है। वे मिल धरकाश प्राप्त का बन भी देती हैं। इंडीनिफरिफ उद्योग में बिसेपकर उन फर्मों में जो भारतीय इंडीनिफरिफ परिषद की सदस्य हैं और जहाँ १०० या इससे अधिक मजदूर काम करते हैं, अनिवार्य संघदान वाली प्रोबीडेन्ट फण्ड योजना को प्रपनाया गया है। जिन फर्मों में १०० से कम मजदूर काम करते हैं, जिन्होंने धरकाश प्राप्त बन की योजना को अपने यहां लागू किया है। परिषदी बंधन की इंडीनिफरिफ फर्मों में तीं इसे एक विबाधन निर्णय द्वारा अनिवार्य भी बना दिया गया है। बिहार की टाटा की लोहा और इस्पात कम्पनी ने भी अपने मजदूरों के लिये प्रोबीडेन्ट फण्ड योजनाओं की व्यवस्था की है। प्रोबीडेन्ट फण्ड और धरकाश प्राप्त बन की योजनाएँ अनेक भागज मिनों में और समस्त सीमेंट मिनों में भी चल रही हैं।

इसके अतिरिक्त मासिक वेतन में भी स्वामी और पेंशन न पाने वाले मजदूरों के लिये प्रोबीडेन्ट फण्ड और धरकाश प्राप्त बन की व्यवस्था की गई है। केन्द्रीय सार्वजनिक निर्माण विभाग के स्वामी कर्मचारियों को पेंशन पाने का अधिकार है। वेप कर्मचारियों में से जिन्होंने बिल्टर तीन वर्ष तक कार्य किया है, उन्हें संघदान सहित प्रोबीडेन्ट फण्ड की सुविधा दी गई है। प्रत्येक कर्मचारी के लिये प्रिसका वेतन २० रु० मासिक या इससे अधिक है। इस फण्ड का सदस्य होना अनिवार्य है और जिनका वेतन १० रु० से २० रु० प्रति माह तक है, उनके लिये सदस्य बनना अनिवार्य इच्छा पर निर्भर है। प्रोबीडेन्ट फण्ड योजनाएँ नगरीय नगर पालिकाओं में भी लागू हैं। इनमें धरकाश में केवल स्वामी कर्मचारी ही प्रोबीडेन्ट फण्ड में अपना संघदान दे सकते हैं। कुछ नगरपालिकाओं में कहीं कहीं धार की शर्त भी रकनी गई है जो साधारणतया २० रु० प्रति माह है। कानपुर, बम्बे, लाकपुर, मद्रास कनकता लखनऊ और महमदाबाद की नगरपालिकाएँ या निगम साधारणतः उन लोगों को धरकाश प्राप्त का बन देती हैं जो प्रोबीडेन्ट फण्ड योजना के सदस्य नहीं बन सकते।

पुनाई १९२९ में निनाई के हिन्दुस्तान स्पात कम्पनी के अधिकारियों के लिये भी एक संघदान सहित प्रोबीडेन्ट फण्ड योजना १ अप्रैल १९२९ से लागू कर दी गई है। कम्पनी का संघदान २ $\frac{1}{2}$ % होता और अधिक घायी धार का $\frac{1}{2}$ भाग तक संघदान दे सकता है। डी० डी० टी० कारखानों में संघदान की दर २ $\frac{1}{2}$ % कर दी गई है। टेल और ग्राहकिक रंग कपीशन ने भी अपने कर्मचारियों के लिये एक

प्रोवीडेंट फण्ड योजना बनाई है।

इस प्रकार कुछ मामलों में काफी अच्छी योजनाएं शास्त्र की हैं परन्तु ऐसे मामलों की संख्या बहुत ही कम है। सामान्यतः प्रोवीडेंट फण्ड योजना ही अधिक प्रचलित है और प्रवकाश प्राप्ति धन केवल कुछ ही स्थानों पर किया जाता है। पैमाने तो बहुत कम स्थानों पर ही जाती हैं। इस प्रकार के लाभ प्राप्त करने की योग्यताएं भी विभिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न हैं। परन्तु ये सब व्यवस्थाएं मामलों की दृष्टि पर ही निर्भर करती हैं।

१९५२ का कर्मचारी प्रोवीडेंट फण्ड अधिनियम — [The Employee's Provident Fund Act 1952]

उपरोक्त व्यवस्था के होते हुए भी भारत में सर्वत्र ही औद्योगिक मजदूरों के लिये प्रतिवार्य प्रोवीडेंट फण्ड योजनाओं की आवश्यकता रही है। वीरान चमनलाल और श्री ए० एम० जोषी ने राज्य धन प्रायोग की रिपोर्ट में प्रसहमति का मोट देते हुये बताया कि औद्योगिक क्षेत्र के सामान्य संयुक्त परिवार भन्ना दूरती जा रही थी और प्रवकाश प्राप्त वृद्ध मजदूरों को सुखमयी और मृत्यु से बचाने के लिए प्रोवीडेंट फण्ड जैसी कुछ व्यवस्था करना बहुत आवश्यक था। १९३४ और १९३८ में कानपुर और बम्बई की धन प्रांच समितियों ने भी इस विचार का समर्थन किया। १९४२ के धन मन्त्री सम्मेलन में इस विषय पर पुन विचार-विमर्श किया गया। १९४७ में इस प्रश्न पर फिर से विचार किया गया और इनके पश्चात् तो भारतीय धन सम्मेलनों व स्वाधीन धन समिति और कुछ औद्योगिक समितियों ने भी धनके बार बंधा निक कप से एक प्रोवीडेंट फण्ड योजना लागू करने के लिए बोर दिया। १९४८ में एक बर सरकार की सरकार ने तो संविधान सभा (Constituent Assembly) में इस विषय पर एक विधेयक भी प्रस्तुत किया परन्तु वह सरकार के यह धारणास्तन देने के कारण वापिस ले निबा गया कि सरकार स्वयं ही इस प्रकार के काम विधेय में उठाने वाली है। इन सब बातों के परिणामस्वरूप केन्द्रीय सरकार ने १५ नवम्बर १९५१ को इन विषय पर एक अध्यादेश जारी किया। इसको मार्च १९५२ में एक कर्मचारी प्रोवीडेंट फण्ड अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया। अधिनियम के अन्तर्गत प्रोवीडेंट फण्ड योजना की रचना की गई और १ नवम्बर १९५२ से अधिनियम के अन्तर्गत जाने जाने कारणानों में प्रोवीडेंट फण्ड के लिए धन एकत्रित करना शास्त्र कर दिया गया।

सर्वप्रथम यह अधिनियम ८८ बड़े उद्योगों वर्पाइ सीमेंट, सिपरेट इन्डियन लि के उत्पादन (बिजली सम्बन्धी पत्र या सामान) मोहा और इत्याद कागज और मृत्ती बपड़ा (मण्डूली मृत्ती या बूट व मिठ के मिला कर बना हो चाहे यह प्राकृतिक हो या इत्रिम) के ऐसे कारखानों पर लागू किया गया जहाँ ३० या इनसे अधिक कर्मचारी कार्य करने हों। केन्द्रीय सरकार को यह अधिकार दे दिया गया है कि सूचना प्राप्त इस अधिनियम को वह इनके उद्योगों पर भी लागू कर सकती है और

उपरोक्त १ बड़े संघों के उन कारखानों पर भी लागू कर सकती है जहाँ काम करने वाले श्रमिकों की संख्या १० से कम है। अधिनियम को किसी भी संघ कारखाने पर लागू किया जा सकता है जहाँ मासिक घोर अधिकांश श्रमिक इस अधिनियम को प्रपनाना चाहते हों। नई व्यवसायिक संस्थाओं का कुछ दिवाबतों दे दी गई है अर्थात् १ वर्ष तक यह अधिनियम उन पर लागू नहीं होगा। जिन संस्थाओं को बने हुये तीन वर्ष से भी कम समय हुआ है उनको भी निर्धारित अवधि के पूरा होने तक छूट दे दी गई है। केन्द्रीय तथा राज्य सरकार के अथवा स्थानीय प्राधिकारियों के संस्थाओं पर भी यह योजना लागू नहीं होती थी परन्तु मई १९३८ के एक संघोपन डाटा इस उपबन्ध को समाप्त कर दिया गया और अब यह अधिनियम इन संस्थाओं पर भी लागू होता है। जम्मू और काश्मीर राज्य के प्रतिरिक्त यह अधिनियम सम्पूर्ण भारत में लागू है। दिसम्बर १९३६ के एक संघोपन के अनुसार अब सरकार इस अधिनियम को कारखानों के प्रतिरिक्त ग्राम संस्थाओं पर भी लागू कर सकती है। इस अधिनियम को समाचार पत्र संस्थाओं में जहाँ २० या उससे अधिक कर्मचारी कार्य करते हों ३१ दिसम्बर १९३६ से लागू किया जा चुका है।

कर्मचारी प्रोवीडेंट फण्ड अधिनियम में १९६ म एक महत्वपूर्ण संघोपन हुआ और संबंधित अधिनियम ३१ दिसम्बर १९६ से लागू कर दिया गया है। इस संघोपन से अब अधिनियम का दोष बिलुप्त कर दिया गया है और अब यह उन सब संस्थाओं पर लागू होता है जहाँ २० या उससे अधिक श्रमिक कार्य करते हैं। इस बात की व्यवस्था कर दी गई है कि यदि किसी संस्थान में श्रमिकों की संख्या कम हो गई है तो इस कारण प्रोवीडेंट फण्ड अधिनियम का लागू होना बन्ध नहीं किया जा सकता। अधिनियम तक ही लागू नहीं होगा जब संख्या इतनी बिर जाये कि १३ से कम श्रमिक रह जायें और यह कम संख्या निरन्तर एक वर्ष तक रहे। ऐसी संस्थाओं को जो मजदूरी समिति अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत (Registered) हैं और जिनमें ५० से कम श्रमिक कार्य करते हैं और जिनमें धन का प्रयोग नहीं होता इस अधिनियम से छूट दे दी गई है। ऐसे नव्य संघोपनों को भी जिनमें केवल २० से १० तक श्रमिक कार्य करते हैं प्रथम ५ वर्षों के लिये इस अधिनियम से छूट दे दी गई है।

अधिनियम के अन्तर्गत प्रोवीडेंट फण्ड योजना की मुख्य विशेषता यह है कि यह मजदूर और मासिक दोनों के लिये श्रमिकों है और दोनों ही वर्गों को इसमें संघदान देना होगा है। श्रमिक और मासिक में से श्रमिक को मजदूर को मिलने वाले धन का ६५ प्रतिशत अनुदान (एक रुपये में एक पाया) देना होगा। मजदूर को मिलने वाले धन का शेष मजदूर की मूल मजदूरी और बर्खास्त बतों में है। अधिनियम के अन्तर्गत इन योजना से यदि कोई ऐसी व्यवस्था की गई हो तो मजदूर श्रमिक में अधिक बड़े प्रतिदान की राशि तक संग्रहण से सकता है। वही तो मासिक धन और धन मजदूरों दोनों का संग्रहण देना और उत्तरदाय मजदूरों

में से श्रमिकों के प्रत्येक की राशि काट लेगा। फरवरी १९५६ में इस योजना में फिर संशोधन हुआ जिसके अनुसार कर्मचारी अब ८५ प्रतिशत प्रयोग करने में सक्षम हैं। यह भी निश्चय कर लिया गया है कि अधिनियम में संशोधन करके यह व्यवस्था कर दी जाये कि श्रमिक की कुल आमदनी में से ही प्रॉवीडेंट फण्ड के लिये कटौती की जाय। इसका तात्पर्य यह हुआ कि मूल मजदूरी और मरुंगाई मूल्य के प्रतिरिक्त अब कुल आय में हर प्रकार का भत्ता और बोनस राशि भी सम्मिलित कर ली जायगी।

प्रॉवीडेंट फण्ड में जो सदस्यों की राशि होती है उसको सदस्यों के मरण या किसी शक्ति के कारण कुछो से बचाने के लिये भी अधिनियम में कुछ उपबंध हैं। इस बात की भी व्यवस्था है कि मासिक भ्रमण भ्रमण देने के कारण श्रमिकों की मजदूरी में से कटौती न कर लें। बीम-बोमा पॉलिसी के मुकाम के लिये फण्ड में से धन निकाला जा सकता है। १९५६ में एक संशोधन के अनुसार श्रमिक अब अपनी या अपने परिवार के किसी सदस्य की मन्दी और गम्भीर बीमारी के लिये भी फण्ड में से रकम निकाल सकता है। धर्म १९६० से सरकार की धारा योजनाओं के अन्तर्गत महान बनाने या खरीदने के लिये भी श्रमिक फण्ड से रकम निकाल सकता है और यह रकम उसे फण्ड को वापिस भी नहीं देना पड़ता है (Non-refundable)। बिना स्थानों पर प्रॉवीडेंट फण्ड योजनाएँ पहले ही संपन्न कार्य कर रही हैं और वर्तमान योजना के समान ही या अधिक लाभदायक ढंगों प्रदान कर रही हैं वह उसी प्रकार जानू रहींगी और बहूँ यह अधिनियम लागू नहीं होगा परन्तु मजदूरों के हितार्थ ऐसे स्थानों पर कुछ ढंगों लागू कर दी गई हैं। इस प्रकार से बिना स्थानों को छूट दी गई है उनकी संख्या दिसम्बर १९६० में ८७६ थी। श्रमिकों के किसी भी ढंग को इस बात की भी सुविधा दी गई है कि अगर उस ढंग के अधिकांश व्यक्ति चाहें तो इस अधिनियम से छूट (Exemption) ले सकते हैं, यदि इनको संयुक्त या पृथक पृथक रूप से ऐसे नाम मिल रहे हों जो अधिनियम के अन्तर्गत लाभों के बराबर हैं या इससे अधिक हैं। कोई भी व्यक्ति किसी भी प्रकार के द्वारा जानू प्रॉवीडेंट फण्ड योजना का सदस्य बना रह सकता है यदि ऐसे फण्ड को भारतीय आय-कर अधिनियम द्वारा मान्यता प्राप्त है और वह कुछ धारापरक ढंगों को भी पूरा करता है।

इस योजना के अन्तर्गत के सभी कर्मचारी या जाते थे (उन उद्योगों में जहाँ यह अधिनियम लागू होता है) जिन्होंने निरन्तर एक वर्ष कार्य किया हो और जिसकी मूल मजदूरी ३०० रुपये प्रतिमाह से अधिक न हो और जो ठेकेदारों द्वारा कार्य पर न जायें गये हों अपना नाम सीलने के लिये भर्ती न किये गये हों। ३१ मई १९५७ से पाठ्य के लिये ३०० रुपये तक की सीमा बढ़ाकर ३०० रुपये प्रतिमाह कर दी गई है। १९५८ में एक दूसरे संशोधन के अनुसार जो मजदूर ठेकेदारों द्वारा किसी निर्वाह कार्य के लिये कारखाने में भर्ती किये जाते हैं वे तथा जिसकी भी

यह इन योजना के अन्तर्गत या आते हैं। इस योजना के क्षेत्र को घेर विस्तृत करके उन कर्मचारियों पर भी लागू कर दिया गया है जो उस संस्थान में वहाँ वह अधिनियम लागू होता है कार्य के लिये भौकर हो हैं परन्तु संस्थान से बाहर रहकर कार्य करते हैं। इसी प्रकार उन कर्मचारियों पर भी अधिनियम लागू हो सकता है जिनका मासिक वेतन २ • ३० प्रति माह से अधिक है परन्तु जो अपने मासिकों को अनुपस्थित से प्रोवीडेंट फण्ड के सदस्य होना चाहते हैं। संघोपन में 'निरन्तर कार्य' की भी स्पष्ट रूप से परिभाषा कर दी गई है। कोई भी मजदूर जिसने पिछले एक वर्ष में २४ दिन काम किया है प्रोवीडेंट फण्ड का सदस्य हो सकता है। महीन टूटने या कच्चे मास की कमी के कारण जब अधिक बचरी छुट्टी पर होता है और जब महिला अधिक मातृत्व छुट्टी पर होती है तब यह छुट्टी के दिन कार्य पर उपस्थिति दिन माने जायेंगे। कानूनी हस्ताक्षर अधिकृत छुट्टियाँ बीमारी दुर्घटना आदि के अवसरों को भी लीकरी में विषय पढ़ना नहीं समझा जायगा। कुछ और सूट देकर जब यह व्यवस्था कर दी है कि जिन कर्मिकों की लीकरी १ वर्ष से कम की अवधि में २४० दिन है वह भी फण्ड क सदस्य हो सकते हैं।

प्रोवीडेंट फण्ड के लिये जो अंशदान दिये जाते हैं वे एक सेरे में बसा किये जाते हैं जिसे 'प्रोवीडेंट फण्ड सेवा' कहा जाता है। ये प्रति सप्ताह केन्द्रीय सरकार की प्रतिपूर्तियों (Securities) में रिजर्व बक द्वारा निवेश (Invest) कर दिये जाते हैं। इन पर इस समय १३ प्रतिशत व्याज दिया जा रहा है। मासिकों को प्रस्तावित धन्य के लिये अंशदानों का ३ प्रतिशत और देना होता है। जिन संस्थानों को छूट दी गई है उनको भी अंशदान धन्य का ३ प्रतिशत देना होता है। १९३७ तक मासिकों के अंशदान का पूर्ण अंशदान २० वर्ष की सदस्यता के बाद ही सचवा या और २ वर्ष से कम समय तक काम करने पर मासिकों के हिस्से का भाग नहीं दिया जाता या परन्तु पेंशन के योग्य कृपावस्था हा जाने पर ये नियम लागू नहीं होते हैं। १९३७ में इस योजना में संघोपन किया गया जिसके अनुसार सदस्यता अर्थात् पर मासिकों के अंशदान की राशि मिलने की छठों को छठार कर दिया गया है। जब कोई भी अंशदान देने वाला व्यक्ति १२ वर्ष तक सदस्य रहने पर मासिकों का कुल अंशदान और उमरा व्याज वा सचेवा। यदि वह १० वर्ष से १२ वर्ष तक सदस्य रहा है तो उसे मासिकों के अंशदान का ७२ प्रतिशत भाग मिल जायगा १ साल में १० साल तक सदस्य रहने पर ७२ प्रतिशत ३ वर्ष से २ वर्ष तक सदस्य रहने पर ५० प्रतिशत और ३ वर्ष से कम समय तक सदस्य रहने पर २२ प्रतिशत भाग मिलेगा। स्वयं मजदूर का अंशदान हर हालत में व्याज सहित अधिकतम दिया जायगा। मृत्यु होने पर (अधिक के कानूनी उत्तराधिकारी को या जिसे वह नामित करे) तथा अधिक की स्थायी अगमर्दना होने पर या पूरी आयु प्राप्त होने पर या रटनी पर या दिगी अन्य संस्था में तबादला होने पर या स्थायी रूप से बचने के

भारत में सामाजिक सुरक्षा

लिये किसी अन्य देश में जाने पर या ऐसे भूमिकों को जो छय रोय या कोइ से पीड़ित हैं पूरी राशि बी जायेगी।

प्रॉवीडेंट फण्ड के कार्याग प्रबिकारी कमिश्नर होते हैं जिनमें से एक कमिश्नर नियुक्ति की गई है और उनको प्रॉवीडेंट फण्ड की सहायता से सम्बन्धित विचारों को छय करने का प्रबिकार दिया गया है। प्रसादान न अने बार्सों को दख देने के लिये निरीक्षणों की नियुक्ति की गई है। मासिकों को प्रत्येक मजदूर के लिये एक प्रसादान काई रखना होता है जिनमें प्रत्येक मजदूर का मासिक प्रसादान प्रकित किया जाता है। इस काइ का निरीक्षण कमी भी किया जा सकता है। इस समय यह योजना एक केन्द्रीय प्यासी बोर्ड (Board of Trustees) की सहायता से केन्द्रीय सरकार के निरीक्षण से चल रही है परन्तु इसके बिकेन्द्रीयकरण कर देने के प्रस्ताव पर बिचार किया जा रहा है और यह प्राया की जाती है कि कुछ ही समय के उपरांत इसका प्रसादान राज्य-सरकारों द्वारा होने लयेगा। योजना की कार्यान्विति के उद्देश्य से सारे देश को २० क्षेत्रों में बिभाजित किया गया है जिनमें क्षेत्रीय कार्यालय हैं। क्षेत्रीय समितियाँ भी बम्बई, बिहार, मद्रास मध्य प्रदेश पश्चिमी बंगाल और उत्तर प्रदेश में बनाई गई हैं। प्रपिनियम में इस बात की भी व्यवस्था है कि प्रसादान के बकाया (Arrears) की बसूली (Recovery) उसी प्रकार की जा सकती है जिस प्रकार मासपुजारी की बसूली की जाती है और बाकी-दार मासिकों से हर्जाना भी बसूल किया जा सकता है। १९६० से २० साल ६० की राशि से एक बिधेय पारित किया (Special Reserve Fund) की स्थापना की गई है। इसका उद्देश्य समय पूरा होने पर प्रसादान देना होता है जब प्रॉवीडेंट फण्ड का प्रसादान भूमिकों के बेटन से काट ता लिया जाता है परन्तु मासिकों द्वारा कुल राशि को अपने प्रसादान सहित पूर्णरूप से जमा नहीं किया जाता या केवल मासिक रूप से जमा किया जाता है। इस निधि में से इस समय भुगतान केवल उस दया में दिया जा रहा है जब भूमिक की मृत्यु हो जाती है या पूर्ण स्थायी असमर्थता होती है या जब वह अपनी नौकरी की प्रबधि पूरी कर लेता है।

प्रॉवीडेंट फण्ड योजना का विस्तार —

११ जुलाई १९५६ से यह प्रपिनियम १३ और उद्योगों पर लागू कर दिया गया और १० सितम्बर १९५६ को बार और दूसरे उद्योग भी इसके प्रसर्गत प्राये। इनम निम्नलिखित उद्योग प्रा जाते हैं— (१) रियासतगर्ह, (२) बीसी (१) प्राय (५) प्रापानामा (५) काँच (६) गान बाने टैम और चर्बी (७) रबर और रबर की चीजें (८) बिद्युत जिनमें बिजली उत्पादन प्रसारण और बितरण प्रा जाता है, (९) बिद्युत प्रौद्योगिकी के अने और भीचे तथा बाने इनपुलेटर,

(१०) पत्थर के तल (११) सफाई धीरे स्वच्छता का सामान, (१२) किरण सम्बन्धी यन्त्र (१३) सीमेंट की पट्टियाँ (१४) नील (१५) लाख जिनमें अपका भी सम्मिलित है (१६) भारी धीरे शुद्ध रसायन जिसमें धातुसीजन, एसेन्शियल धीरे कार्बन डाइ हायड्राइड जैसे भी सम्मिलित हैं परन्तु इन पर अधिनियम जुलाई १९५७ से लागू किया गया था (१७) न जाने वाले वनस्पति तैल पशुओं के तैल धीरे धीरे। १९५७ में अधिनियम को निम्न तीन कारखाना उद्योगों पर लागू कर दिया गया—(१) खनिज तैल को शुद्ध करना (२) औद्योगिक धीरे बालक मद्यसार, (३) सीमेंट की घण्टा आदरें। इस प्रकार यह अधिनियम २६ कारखाना उद्योगों पर लागू हो रहा था जिनमें पहले ६ उद्योग भी सम्मिलित थे। ३१ दिसम्बर १९५६ से इस अधिनियम को समाचार पत्र संस्थाओं पर भी लागू कर दिया गया। ३ अप्रैल १९५७ से (१) चाय (धूम को छोड़कर जहाँ राज्य सरकार का इसी प्रकार का अधिनियम पहले से ही लागू है) (२) कॉफी (३) रबर, (४) इसायनी तथा (५) काबी मिर्च के बाबत में भी जहाँ २० या इससे अधिक नर्वयारी कार्य करते हों यह अधिनियम लागू कर दिया गया है। इसके पश्चात् ३० नवम्बर १९५७ से अधिनियम चार प्रकार की खानों पश्चात् (१) घोना (२) लौहा (३) बुने का पत्थर, तथा (४) मैकनीज पर लागू हुआ धीरे इसी दिन से कॉफी साफ करने वाले संस्थानों में भी लागू कर दिया गया। ३ अप्रैल १९५८ से इस अधिनियम को बिस्कुट उद्योग पर धीरे ३ अप्रैल १९५९ से मोटर कारखानों पर भी लागू कर दिया गया है।

इस प्रकार १९५९ में यह अधिनियम ३९ उद्योगों पर लागू हो रहा था। १९६० में इस अधिनियम के अन्तर्गत ८ धीरे उद्योग घा गये पश्चात् (१) धातु के कारखाने (२) धातु की खानें (३) चीड़ की लकड़ी के कारखाने (४) मोटरों धातु की मरम्मत धीरे सफाई धातु के कारखाने (५) बीनी कारखानों द्वारा चाय नये के कार्य (६) चावल की मिर्से (७) घाटे की मिर्से (८) धातु की मिर्से।

इस प्रकार १९६० के अन्त तक यह अधिनियम ४७ उद्योगों पर लागू हो रहा था। उस समय तक इसके अन्तर्गत घाने वाली संस्थानों की संख्या ८११ थी। संघदान देने वालों की संख्या २८-१९ लाख थी। संघदानों की कुल राशि १९६४-६५ करोड़ ६० ली। १९६१ में यह अधिनियम निम्नलिखित उद्योगों तक विस्तृत कर दिया गया ३१ मई, १९६१ से वनज उद्योग (Starch Industry) पर, ३ जून १९६१ से होटल धीरे बसवान सुहों पर तथा पेट्रोल धीरे प्राइमिक जैसे उद्योग पर, जिनमें इनका इकट्ठा करना या ले जाना अथवा वितरण करने या उनके उत्पादन रोक धातु से सम्बन्धित एवं उनकी श्रुति से सम्बन्धित सभी कार्य सम्मिलित कर लिए गए हैं ३१ जुलाई १९६१ से गिनेसा उद्योग पर जिसमें पित्रम इट्रिपियो निरेवापर, विपेटर, पित्रम उत्पादन वितरण तथा विस्को के बोने धातु से संबंधित कार्य धीरे प्रयोगागारों सम्मिलित कर ली गई हैं तथा ३१ अक्टूबर १९६१ से नये धीरे नये से बने हुए सामान उद्योग पर।

राष्ट्र में सामाजिक सुरक्षा

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में कर्मचारी प्रोबीडेन्ट फण्ड धरिनिधम को उन सब उद्योगों पर लागू करने का मुद्दा चलाया गया था जिनमें दरमर में कम से कम १० हजार मजदूर कार्य करते थे। परन्तु जिन उद्योगों पर यह धरिनिधम लागू नहीं किया जा सका उन पर तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में यह धरिनिधम लागू कर दिया जायगा। प्रोबीडेन्ट फण्ड में प्रदाता की दर को १२ प्रतिशत से ८ प्रतिशत तक बढ़ा देने की समस्या पर भी विचार किया जा रहा है। इस बात में संशय प्रकट किया गया है कि यदि दर बढ़ा दी जायगी तो वे उद्योग जो इस धरिनिधम के अन्तर्गत आते हैं इस अधिक मार को बहुत कम पायेंगे या नहीं। इस बात की जांच करने के लिए मासिक मार को बहुत कर पायेंगे या नहीं। इस बात की जांच एक तकनीकी समिति बनाई गई है जिसके अध्यक्ष श्री एम० धार० महर हैं। यह समिति उन ६ उद्योगों में सर्वप्रथम जांच कर रही है जो भारत में इस धरिनिधम के अन्तर्गत आते थे। यह जांच अभी तक समाप्त नहीं हो पाई है यद्यपि समिति की स्थापना किए हुए एक बप से भी अधिक हो गया है।

प्रोबीडेन्ट फण्ड योजना का आलोचनात्मक मूल्यांकन —

इससे उद्योग पर बहुत भार पड़ेगा जिससे अन्त-उत्पत्ति की सागत बड़ जायगी साम कमजोर की प्रेरणा कम हो जायगी कीमतें बड़ जायेंगी जिनका भार उपभोक्ताओं पर पड़ेगा और इस योजना से आम की पतिनीमता बहुत कम हो जायेगी क्योंकि मजदूर को ऐसे साम प्राप्त करने का पात्र होने के लिये कम से कम १० वर्ष तक एक ही उद्योग में कार्य करना पड़ेगा। परन्तु वे प्रापितवां कुछ उचित नहीं प्रतीत होतीं। मासिकों के प्रदाता इतल अधिक नहीं हैं जिनसे उन पर बहुत बड़ा भार पड़े और उनकी साम प्रेरणा कम हो जायें। मूल्यांकन का बढ़ना भी बस्तुओं की मांग की लचक पर निर्भर करता है। यदि मजदूर एक ही उद्योग में अविश्व समय तक रकता है तब तो यह और भी लाभप्रद होयी क्योंकि इससे अधिकार कम हो जायेगा। इस योजना से तो मजदूर वर्ग में अन्तोग भी बढ़ा होगा जिससे औद्योगिक पालि होगी और औद्योगिक क्षेत्रों में स्थायी अविश्व वर्ग संघटित हो सकेगा। कुछ मजदूर, दीर्घ समय तक उत्पादन कार्य करने के पश्चात् और निरामित अमानवीय तथा कुछ क बीजन से बच जायेंगे और उनको ऐसी बलिदानों का सामना नहीं करना पड़ेगा जैसा कि पात्र हवाओं समस्य और कुछ अविश्वों को करना पड़ रहा है। परन्तु कुछ मासिकों के इस धरिनिधम के कुछ उपबन्धों का अनुचित साम उद्य कर छूट से भी है। यदि ऐसा मानने में आस है जिनमें मासिकों ने अविश्वों से जो २० वस्तु कर लिया है परन्तु छंड में जमा नहीं किया है। प्रबन्धन प्राप्ति पर अविश्वों को छंड का २० मिलन में भी बहुत बिलम्ब किया जाता है। इन सब बातों को दूर करना चाहिए और मासिकों को अपनी भलाई के लिये भी इस योजना का लागू होने में पूरा सहयोग देना चाहिये।

कोयला खानों में प्रॉबीडेन्ट फण्ड और बोनस की योजनाएँ -

भारत सरकार ने १९४८ के 'कोयला खान प्रॉबीडेन्ट फण्ड और बोनस योजनाएँ' अधिनियम के अन्तर्गत एक कोयला खान प्रॉबीडेन्ट फण्ड योजना तैयार की है। १९४० में अधिनियम में संशोधन किया गया और जम्मू व काश्मीर राज्य को छोड़ कर इस बारे में भारत में लागू कर दिया गया। १९५१ के एक और संशोधन द्वारा संसदान्त से सम्बन्धित उपबन्धों को और स्पष्ट कर दिया गया। इस अधिनियम में केन्द्रीय सरकार को कोयला खान कर्मचारियों के लिये एक प्रॉबीडेन्ट फण्ड योजना और एक बोनस योजना बनाने के अधिकार दिये गये हैं। जिन खानों पर यह योजना लागू होती है उनको राजकीय पत्र में प्रकाशित किया जाता है।

अधिनियम के अन्तर्गत बनाई गई प्रॉबीडेन्ट फण्ड योजना में सम्मिलित होने वाले सदस्यों का विस्तृत सूचीय संसदान्तों का भुगतान ब्याज की दर, लेखा-बोखा राशि का निवेश ग्यासीयों के निवृत्तीय बीडों का अधिदान धारि बातों का उल्लेख करना होता है। इसी प्रकार कोयला खान बोनस योजना के अन्तर्गत किसी कोयला खान में किसी मजदूर की उपस्थिति पर बोनस का भुगतान मात्र प्राप्त करने के पक्ष ब्यक्ति बोनस की दर, उसके भुगतान का समय और तरीका धारि बातों का सूचीय देना होता है। अधिनियम में इस बात का उल्लेख किया गया है कि यदि किसी मजदूर पर कोई ऋण या देनदारी है तो उसको धमिक के प्रॉबीडेन्ट फण्ड से नहीं बाटा जा सकता। सदस्य (धमिक) की मृत्यु होने पर प्रॉबीडेन्ट फण्ड का भुगतान उसके नामित ब्यक्ति का कर दिया जायगा। मृत मजदूर पर मृत्यु से पहले का कर्ज या देनदारी यदि हो भी नब भी उस फण्ड से स चुकाने का बाबा नहीं किया जा सकता। इस योजना के प्रयासन के लिए सरकार को निरीसकों की नियुक्ति करनी होती है। किसी भी ब्यक्ति द्वारा योजना के उपबन्धों का उल्लंघन करने पर दण्ड देने की भी व्यवस्था की गई है।

सरकार ने अपने इन अधिकारों का प्रयोग करके कुमाई १९४८ में कोयला खान बोनस योजना बनाई। इसे एक पूर्ण विधि धर्वात् २१ मई १९४० से पश्चिमी बंगाल और बिहार की समस्त कोयला खानों पर लागू कर दिया। इसके पश्चात् यह योजना हमारे राज्यों की कोयला खानों पर भी लागू कर दी गई। इस समय यह पश्चिमी बंगाल, बिहार, मध्यप्रदेश उड़ीसा और बम्बई की कोयला खानों में लागू है। इसी प्रकार की तीन और योजनाएँ धात्र राजस्थान और प्रथम की कोयला खानों में लागू कर दी गई हैं। इन योजनाओं के अन्तर्गत साधारण १,२०७ कोयला खानें, पाली है जिनमें १,२०७ खानें प्रचलित कार्य करती हैं। ये योजनाएँ १०० रुपये प्रति माह तक वाले बाने ब्यक्तियों पर लागू होती हैं। इनमें पावता की कुछ घातों तथा बोनस की दर का भी उल्लेख है। वर्तमान समय में योजना के अन्तर्गत बाने बाने मजदूरों को हर तीन महीने पश्चात् अपनी मूल मजदूरी का ३ भाग बोनस के रूप में देने का अधिकार है बर्नमें यह उपस्थिति में सम्बन्धित बुद्ध

घनों को भी पूरा करते हैं। मासिकों का बोनाम दन की तारीख के पश्चात् एक माह में श्यीठ प्रस्तुत करना होता है और यदि वे किसी हड़ताल को सर्व्व समझते हैं तो इसके निर्णय के लिये उनको ३० दिन के अन्दर ही मम-अभिलेख को प्राप्यता-मन भेज दना होता है और मम-अभिलेख का १६५० रु एक संघोषण के समुदाय हड़ताल की सर्व्ववता पर २१ दिन के अन्दर ही निलाय बना होता है।

दिसम्बर १९४० में कन्द्रीय सरकार ने एक कोयला खान प्रोबिडेन्ट फण्ड योजना बनाई और १२ मई १९४७ से उसे परिषदी बंगाल व बिहार की कोयला खानों में और १० अक्टूबर १९४७ से मध्य प्रदेश और उड़ीसा की खानों में लागू कर दिया गया। इसी प्रकार की योजनाएँ असम, बम्बई, घाँघ्र और राजस्थान की कोयला खानों में भी लागू कर दी गई हैं।

जिन कोयला खानों में यह योजना लागू है वहाँ प्रत्येक वर्ग-वर्गों को उम्र विभागी के बाद सरकार ही सरम्भ बनना पड़ता है जो विभागी कोयला खान बोनाम योजना के अन्तगत बोनाम वाले बोनाम नाम होने की विभागी के बाद जाती है। किसी भी विभागी में पावना नाम खानों के भीतर कार्य करने वाले श्रमिकों के लिए (परिषदी बंगाल और बिहार को छोड़कर सार राज्यों में) ६० दिन की अवस्थिति तथा खानों के बाहर कार्य करने वालों के लिए ६२ दिन की अवस्थिति है। बिहार तथा परिषदी बंगाल में यह अवधि ५४ और ६६ दिन है। इस योजना के अन्तगत वे श्रम-वर्गों सम्मिलित नहीं किए जाते जिनकी मूल मजदूरी ३०० रु प्रति माह से अधिक है। परन्तु यदि प्रोबिडेन्ट फण्ड का सदस्य होने के बाद उनकी मूल मजदूरी ३०० रु प्रति माह से अधिक हो जाती है तब भी वह इस फण्ड का सदस्य बना रह सकता है। इस फण्ड के लिए स्वयं मासिकों और सदस्यों दोनों के अंशदान मासिकों को ही देने होते हैं परन्तु मासिक मजदूरों के अंश का अंशदान उनकी मजदूरी से काट सकता है। सदस्यों के अंश पर अंशदान की टिकटें लगाकर फण्ड के लिए अंशदान दिए जाते हैं। मजदूरों के निधन-निधन घाम घामे वर्गों के लिए अंशदान की अंशदान-अंशदान दर अंशदान में निर्दिष्ट की गई थी और यह राशि मजदूर की मूल मजदूरी घी मजदूरी यत्त का अंशदान ६५ प्रतिशत के अंशदान जाती थी जिसमें अंशदान के लिये तकर या अस्तु के रूप में दिए गये लाभ भी आ जाते थे। अंशदान-वर्ग १९५० में कोयला अंशदान में मजदूरी पुनः निर्दिष्ट करने के पश्चात् से इस योजना में भी अंशदान कर दिया गया है। अंशदान अंशदान की ६५ प्रतिशत के अंशदान ग अंशदान की अंशदान दर निर्दिष्ट कर दी गई है। मासिक भी इसका ही अंशदान देते हैं। यदि किसी मजदूर का किसी मजदूर १ रुपये से कम मजदूरी मिलती है तब उन अंशदान नहीं देना होता।

कई ही सदस्य अंशदान फण्ड की राशि में से गाठ घन अंशदान उम्र समय विकास सकता है जब वह या तो ५० वर्ष की आयु पूरी हो जाने पर अंशदान अंशदान प्राप्त कर सके या अंशदान व पूर्ण अंशदान के अंशदान अंशदान प्राप्त कर

घबरा जब वह विवेक में स्थायी ठौर पर रहने के लिए बचा जाय। उस समय भी वह फण्ड से पूर्ण राशि निकाल सकता है जब वह किसी ऐसी कोषमा खान में काम न करे वहाँ यह योजना एक वर्ष से लागू हुई हो। वहाँ तक भूमिकों को मासिकों के प्रबंधान के मिलने का प्रबन्ध है उसके लिए जुलाई १९२६ के एक संघोपन में यह उल्लेख किया गया है कि मासिकों के प्रबंधान का भाग धीरे धीरे उस पर ध्यान निम्नलिखित प्रकार से फण्ड में ही रहेगा यदि सबस्यता का समय ३ वर्ष से कम है तो ७३ प्रतिशत ३ वर्ष से ५ वर्ष के समय के लिए २० प्रतिशत, ५ वर्ष से १० वर्ष की सबस्यता होने पर २५ प्रतिशत १ वर्ष से १५ वर्ष तक के लिए १५ प्रतिशत धीरे यदि सबस्यता का समय १५ वर्ष या इससे अधिक है तब कोई भी बचवा बचत नहीं किया जायेगा। यदि कोई सबस्य ५ वर्ष का होकर प्रबन्ध प्राप्त कर लेता है तब चाहे उसने ५ वर्ष से कम समय तक कार्य किया हो फिर भी उसे फण्ड का साध प्रयुक्त कर दिया जायगा।

इस योजना का प्रशासन एक निवासी बोर्ड (Board of Trustees) द्वारा होता है जिसके सदस्य सरकार, मासिकों और मजदूरों के बराबर संख्या में प्रतिनिधि होते हैं। इस फण्ड का केन्द्रीय कार्यालय बनबाय में है। कोवला खान प्रोवीडेंट फण्ड कमिश्नर इसका मुख्य कार्याग अधिकारी होता है। दिसम्बर १९६० के अन्त तक फण्ड की कुल राशि २१-६३ करोड़ रुपय की थीर उसके लगभग १२-८७ लाख सदस्य थे। १९३६-६ में प्रबंधान देने वालों को ३६ प्रतिशत की दर से ब्याज दिया गया। इस ब्याज की दर को बढ़ाकर १९६०-६१ से ४% कर दिया गया है।

उत्तर प्रदेश में बुढ़ावस्था पेंशन योजना —

उत्तर प्रदेश सरकार ने १ दिसम्बर १९३७ से ७० वर्ष या इससे अधिक आयु के निर्बल धीरे निराश्रित व्यक्तियों को उनकी बुढ़ावस्था में सहायता देने के लिए एक बुढ़ावस्था पेंशन योजना लागू की है। यह हमारे देश में अपनी तरह का एक प्रचलित सामाजिक कर्म है। यह केवल मजदूरों तक ही सीमित नहीं है बल्कि यह उन सब व्यक्तियों के लिए है जो यहाँ के निवासी हैं धीरे उत्तर प्रदेश में रहते हुये उन्हें एक वर्ष से अधिक समय हो गया है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य ऐसे अभीष्ट (Needy) लोगों की सहायता करना धीरे उन्हें किसी प्रकार की सामाजिक-शुल्का प्रदान करना है जिनके पास धाय का कोई सामन नहीं है धीरे जिनके सूखी में दिए हुए कुछ निश्चित प्रकार के ऐसे कोई सम्बन्धी नहीं है जिनकी आयु २० वर्ष या उससे अधिक हो या यदि है भी तो उसकी आयु ७० वर्ष से अधिक है या वह अर्ध मर्ब है या निराश्रित है। दिसम्बर १९३६ में सम्बन्धियों की इस सूची में संघोपन करके धीरे अधिक व्यक्तियों को इस योजना के अन्तर्गत ले लिया गया है। इसके अन्तर्गत सिपाही या ऐसे व्यक्ति नहीं सम्मिलित किए जाते जिनका निर्वाह निर्बल सेवा इहाँ (Poor Houses) में निशुल्क होता है। पेंशन की राशि १५ रुपये प्रति माह निश्चित कर दी गई है। पेंशन दो प्रकार की होती है (१) जीवन पेंशन को

पायीवन की जाती है और (२) सीमित पेन्शन को कुछ समय के पश्चात् समाप्त हो जाती है अर्थात् पेन्शन लेने वाले क सम्बन्धी की आयु कम २० वर्ष की हो जाती है, तब पेन्शन मिलनी बन्द हो जाती है। पेन्शन की न तो कुर्की हो सकती है और न वह परिवर्तित की जा सकती है। पेन्शन का मिलना या तो पेन्शन पाने वाले की मृत्यु के दिन से बन्द हो सकता है अथवा जब वह निराश्रित नहीं रहता तब उसकी केंचल रोक दी जाती है। थोड़े-थोड़े समय के पश्चात् ऐसे शर्तों की जाँच होती रहती है। पेन्शन पाने वाले व्यक्ति के लिए एक मुख्य शर्त यह होती है कि उसका आहार व्यवहार अच्छा होना चाहिए। यदि पेन्शन पाने वाला किसी यन्त्रीर अथवा एक के कारण अश्रित होता है तो उस दशा में पेन्शन देना बन्द भी की जा सकती है और पेन्शन वापिस भी ली जा सकती है।

पेन्शन पाने के लिए प्रार्थी को एक धर्म पर अथवा प्रार्थना-यन मेवना होता है जिसे सहस्रीसहार और जिलाधीश जाँच पढ़ताल करने के पश्चात् उत्तर प्रदेश के धर्म कमिश्नर के पास भेज देते हैं। धर्म-कमिश्नर ही पेन्शन की स्वीकृति देने वाला अधिकारी है। पेंशन की दरि मतिघाटंर से भेजी जाती है। पहले तो पेंशन हर माह की जाती थी किन्तु मार्च १९३८ से यह प्रति ३ महीने बाद दी जाती है। ३१ दिसम्बर १९६० तक पेन्शन के लिये ८८१२ प्रार्थना पत्र आये क जिनमें से ७२०२ का पेंशन देना स्वीकार किया गया। औचित पेंशन पाने वालों की संख्या ५३६६ थी जिनमें २,३१३ पुरुष थे और २८८३ महिलायें थी। सबसे बूढ़ पुरुष जिसको पेंशन मिल रही थी १२० वर्ष की आयु का था। यह इलाहाबाद जिले का रहने वाला था। नवम्बर १९६१ में औचित पेन्शन पाने वाले की संख्या ६२७७ थी। उत्तर प्रदेश में ७० वर्ष की आयु से अधिक के निराश्रितों की संख्या २००००० घांकी गई है जो कि राज्य की ७० वर्ष या इससे अधिक आयु के व्यक्तियों की जनसंख्या का लगभग ४ प्रतिशत है। मात्रास धर्म तथा वेरस में भी इन प्रकार की योजनाएं लागू की गई हैं।

उत्तरजीवी पेंशन — इनकी आवश्यकता और वांछनीयता —

उत्तरजीवी पेंशन (Survivorship Pensions) उन विधवायों और अनाथ बच्चों के लिए आवश्यक है जिनका संरक्षक मजदूर एकाएक मृत्यु का प्राप्त बन गया हो और अपने पीछे अपनी पत्नी और बच्चों को बेतुहारे और बिना किसी धाय के आश्रम के छोड़ गया हो। उत्तरजीवी पेंशन में ऐसी अनाथ पत्नियों और बालकों को अनेक कष्ट सहने पड़ते हैं और अनेक सामाजिक दुःखियों अथवा अश्रित पड़ने लगती हैं जिनका हकने देण में सामाजिक-बीमे की आवश्यकता का बर्तन करते समय उल्लेख किया है। अधिक शक्तिपूर्ति परिनिवस और बर्तवारी राज्य बीमा अधिनियम के अन्तर्गत केवल उन बर्तवारीयों के अधिकारों को मान प्रदान करने की व्यवस्था की गई है जिनकी मृत्यु काम करते समय किसी शक्ति के कारण से हुई हो अथवा ऐसे मजदूरों के उत्तरजीवियों के लिए कोई भी व्यवस्था नहीं की गई है जिनकी मृत्यु किसी अन्य कारणवश हो गई हो। इस समय इस बात की

सावधानता है कि प्रत्येक मजदूर के प्राथित्यों का साम प्रदान किए जायें जाहे उसकी मृत्यु का कोई भी कारण क्यों न रहा हो। जब मजदूर की मृत्यु हो जाती है और वह अपने पीछे घर-हाथ प्राथित्यों को छोड़ जाता है तब उन प्राथित्यों को तब तक प्राथिक सहायता दी जानी चाहिए जब तक कोई बच्चा बड़ा होकर अपने परिवार के लिए पन कमाने योग्य न हो जाये। विधवा स्त्री को भी पेंशन दी जानी चाहिए और इसके लिए जैसा कि ब्रिटेन में भी है, कोई छूट नहीं रखी जानी चाहिए, यद्यपि इस बात की भी व्यवस्था करनी चाहिए कि ऐसे साथों के पाने के लिए मरछ तुल्य व्यवस्था में विवाह न हो। प्रत्येक व्यक्ति और बालक को पेंशन मिलनी चाहिए जो १६ वर्ष तक मिलती रही चाहिए, जब तक प्रत्याव्यस्क अपनी रोजी कमाने सामक न हो जाय। यदि कोई लड़का या लड़की शिक्षा प्राप्त करते हैं तब यह पेंशन १८ वर्ष की आयु तक भी दी जा सकती है। उत्तरजीवी पेंशनों के लिए पात्रता प्राथि (Qualifying Period) २ वर्ष से ३ वर्ष तक की लौटती होगी चाहिए। उत्तर जीवी पेंशन का नाम इतना होना चाहिए जितना मजदूर को जीवित होने पर मिलता होने की व्यवस्था में दिया जाता है। प्राथित्यों के लिये लड़ी छूटें होनी चाहिए जो कमचारी राज्य बीमा प्राथिनियम में भी लई हैं। जब सरकार मुख में संशिकों की मृत्यु हो जाने पर विधवाओं को पैगान प्रदान करती है तब कोई कारण नहीं है कि इसी प्रकार की कोई योजना प्राथोदिक मजदूरों की पत्नियों और उनके बच्चों के लिये न अपनाई जा सकती हो।

इस सम्बन्ध में यह भी उल्लेखनीय है कि मजदूरों के लिए जीवन बीमा व्यवस्था करने की सम्भावना पर जाँच पड़ताल करनी चाहिए और इस जीवन बीमा की सामाजिक सुरक्षा की योजना क अन्तर्गत में प्राता चाहिए। यह उद्य है कि वर्तमान समय में कम मजदूरी मिलने के कारण मजदूर जीवन बीमा पालिसी की किरतें नहीं दे सकते और किसी भी जीवन बीमा कम्पनी ने मजदूर वर्ग के बीमे की और ध्यान नहीं दिया है। परन्तु प्रॉवीडेंट फण्ड योजना प्रारम्भ होने के पश्चात् इस समस्या का प्राधानी से समाधान हो सकता है। मजदूरों के लिए बीमा पोलिसियाँ देना अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए और किरतें मामिकों द्वारा दी जानी चाहिए। किरतों का सुगतान प्रॉवीडेंट फण्ड की राशि में न किया जा सकता है और बीमे की राशि फण्ड में सम्मिलित की जा सकती है जो मजदूरों को प्रबन्धना प्राप्त करने पर दी जा सकती है। इस मुद्दय पर सम्मीरतापूर्वक विचार किया जाना चाहिए। यह एक सम्भव और व्यवहारिक मुद्दय है। यदि किसी व्यक्ति ने बीमा कराया हुआ है और उसकी एकाएक मृत्यु हो जाती है तब घर-घर पर उसके उत्तरजीवियों को इतनी प्राथिक सुनीवतों का सामना नहीं करना पड़ेगा जितना इस समय करना पड़ता है।

उपसंहार —

भारत में सामाजिक सुरक्षा के विभिन्न पहलुओं का उल्लेख करना करने के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि हमारे देश में अभी तक इस दिशा में बहुत लोड़ी

वृद्धि हो सकी है। इस विषय पर प्रगतिशील (Progressive) विचार बनाने की आवश्यकता है जिसमें औद्योगिक मजदूरों को सामुहिक औद्योगिक जीवन व सफ़्टों से उस प्रकार की सुरक्षा मिल सके जो हमारे देशों के मजदूरों को मिल रही है। बीमारी स्वास्थ्य मातृत्व-हित और अल्पवृद्धि बच्चों को तथा प्रोबीडेन्ट फंड योजनाओं को यद्यपि प्रारम्भ कर दिया गया है परन्तु अभी तक यह केवल कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित है।

इस समय हम में विभिन्न ऐजेन्सियाँ मजदूर वर्ग के विभिन्न वर्गों को सामाजिक सुरक्षा लाभ प्रदान करती हैं। यह अनुभव किया गया है कि यदि इन ऐजेन्सियों का कार्य एक ही प्रयास के अन्तर्गत संयोजित कर दिया जाय तब मजदूरों को और अधिक लाभ प्रदान किए जा सकते और यात्रिक या मजदूर में से किसी को भी कोई अतिरिक्त लागत नहीं आएगी। इसीलिए सरकार ने एक अध्ययन दल (Study Group) भी बी० क० संन की अध्यक्षता में नियुक्त किया जिसका कार्य यह था कि यह एक पूर्ण व समन्वित (Integrated) सामाजिक सुरक्षा योजना की स्वरूपा तैयार कर जिसके अन्तर्गत ऊपर बताए सफ़्ट या जाए और यह इस बात की भी कल्पना करे कि एक उचित पेंशन योजना चलाना कितने सम्भव हो सकता है। अध्ययन दल ने जो सिफ़ारिशें कीं उन पर मई १९२८ के १५ वें तथा १९१० के १६ वें अधिनियम अन्वये अन्वये मंत्रिमंडल में विचार विमर्श किया गया। मुख्य सिफ़ारिशें निम्नलिखित विषयों के सम्बन्ध में थीं — (१) कर्मचारी राज्य बीमा और प्रोबीडेन्ट फंड योजना के प्रदानन को मिलाकर एक करना। (२) कर्मचारी राज्य बीमा योजना में मासिकों के भाग का अद्यतन बचाकर ४^३ प्रतिशत करना और अतिरिक्त लाभों के लिये होने वाले राज्य सरकार के व्यय को जब यह योजना अमलों के परिष्कारों पर भी लागू हो जाय पट्टाकर १^३ करना। (३) कर्मचारी प्रोबीडेन्ट फंड अधिनियम के अन्तर्गत मजदूरों और मासिकों दोनों की अद्यतन दरों को बढ़ाकर ८^३ प्रतिशत करना और अधिनियम को उन संस्थानों पर भी लागू करना जहाँ २० या इससे अधिक व्यक्तियों काम करते हैं। उन कर्मचारियों को भी अधिनियम के अन्तर्गत सम्मिलित करना जो बाह्यगत संस्थानों में काम करते हैं और नए स्थापित कारखानों को ३ साल तक पूरा देन की प्राप्ति को समाप्त कर देना। (४) प्रोबीडेन्ट फंड योजना को बढाकर इसे कृषावस्था निवृत्तता व उत्तरजीवी पेंशन और अक्षय वृद्धि योजना (Old Age-Invalidity and Survivorship Pension-Cum-Gratuity Scheme) का रूप देना। निवृत्तता पेंशन अधिक से अधिक पेंशन मजदूरों की ६० प्रतिशत होनी चाहिये। उत्तरजीवी लाभ विधियों के लिये पेंशन का २० प्रतिशत और अक्षय वृद्धि के लिये २० प्रतिशत होना चाहिये। अक्षय वृद्धि पेंशन का हितार्थ लाने के लिये सिफ़ारिशों में एक आधार का उल्लेख है (पिण्डे पत्र बच्चों को औद्योगिक मजदूरों को गौरी के पात्रता (Qualifying) बच्चों के १^३ भाग में मुला करके)। (५) कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम के अन्तर्गत

सामों की वृद्धि करना जैसे बीमारी क्षाम को ११ सप्ताह तक प्रदान करना और लय जैसी सन्धे समय की बीमारी होने पर १२ सप्ताह का क्षाम प्रदान करना मातृत्व हित क्षाम को पूरी प्रौद्योगिक क्षाम के बराबर देना जो १ रुपया प्रतिदिन से कम न होना चाहिये। इस बात पर भी काफ़ी जोर दिया गया कि मजदूरों के परिवारों को चिकित्सा सुविधाएँ दीय्य से दीय्य मिलनी चाहियें तथा उनको हस्तक्षेप की सुविधाएँ भी प्रदान करनी चाहियें। कर्मचारी राज्य बीमा योजना को छत्र समस्त क्षेत्रों तक विस्तृत कर देना चाहिए जहाँ बीमा योग्य श्रमिकों की संख्या १०० या उससे अधिक है।

जब ये छारी सिफ़रिखें कार्यान्वित हो जायेंगी तब मजदूरों को वर्तमान समय में मिलने वाली सुविधाओं और सामों में निश्चिन्त हो कुछ उपरति व वृद्धि होगी यद्यपि इन सुविधाओं को प्रदान करने में श्रमिकों की लागत बहुत कम का ७३% से बढ़कर ११% हो जायगी। प्रमैत्र १९९० में स्वामी श्रम समिति ने इस बात का सुझाव दिया कि बहू पूर्ण व संगठित (Integrated) सामाजिक सुरक्षा योजना तीसरी पंचवर्षीय आयोजना में लागू कर देनी चाहिये। श्रमिकों के प्रति निधियों ने इस बात की भी मांग की कि प्रौद्योगिक श्रमिकों को ऐसी जीवन बीमा पॉलिसी धनिधार्य रूप से देनी चाहिये जिनको बीमा किस्तें (Premiums) प्रॉवीडेंट फण्ड से ही आ सकती हैं। तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में राज्य कर्मचारी बीमा योजना को विस्तृत करने का सुझाव है। नवम्बर १९९० में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा एक माह का 'कोर्स' सामाजिक सुरक्षा के प्रासासन में प्रचिखण देने के लिये गई देहनी में चलाया गया। इसमें १० एशियाई देशों ने भाग लिया और २३ व्यक्तियों को प्रचिखण दिया गया।

हमारे देश की वर्तमान परिस्थितियाँ ऐसी नहीं हैं कि सामाजिक सुरक्षा की कोई एक सामान्य योजना चलाई जा सके। अनेक बीमारियों और महामारियों का फैलना प्रसूतिकाओं और बालकों की बढ़ती हुई मूल्य संख्या जीवन क्षमता में कमी पैदा करने के कारण कुछ एवं निराश्रयता जनता की परिस्थितता देश का बड़ा धाकार और इसी प्रकार के दूसरे तत्त्वों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना सरल कार्य नहीं है। जोर निश्चिन्ता और विकास की कमी को भी इन तत्त्वों में मिला जा सकता है। इसलिये इस समय तो यही उचित विचार्य देता है कि सामाजिक सुरक्षा योजना का प्रारम्भ प्रौद्योगिक मजदूरों और श्रमिकों से किया जाय और जोड़े समय परचाहू योजना की बाह्यिग्य सम्बन्धी श्रमिकों पर भी लागू कर दिया जाय। बाद में जैसे जैसे परिस्थितियाँ अनुकूल होती जाएँ जैसे-जैसे योजना का विस्तार श्रमिकों के धन्य वर्गों तक तथा स्वतंत्र जीविका उपार्जन करने वाले व्यक्तियों तक किया जा सकता है।

जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा योजना केवल प्राथमिक या बाध्यनीय ही नहीं है अपितु इसका लागू होना नम्बर

भी है। स्वस्थ और बुढ़ान पीछोगिक भूमिकों के एक ऐसे स्थायी षग के विकास के लिए, जिसकी तीव्रगति से बढ़ते हुये उद्योगों और व्यवसायों में बहुत माँग है यह आवश्यक है कि सामाजिक सुरक्षा योजना लागू की जाये। इस समय भूमिकों का संघर्षदायक जितना भी हो यथासम्भव कम होना चाहिए और सरकार व मासिक को सामाजिक सुरक्षा की मापत वा भूमिकांग भाग बहल करना चाहिए। यह भी आवश्यक है कि देश में इस प्रकार की योजना लागू करने से पूर्व मजदूरों के जोखिम के मार से सम्बन्धित धाकड़े एकत्रित करने चाहिए जिनसे यह मान्य हो सके कि ऐसी घटनाएँ भूमिक के जीवन में कितनी बार घाती हैं और वे कितनी गम्भीर होती हैं। सरकार को यह भी समझना चाहिये कि सर्वसाधारण की भलाई के लिये धासिक क्षेत्र में सामाज्य मनुष्य को भाषारभूत और मूस सुरक्षा प्रदान करने का उत्तरदायित्व जसी पर है। सरकार और उसके धमिधारियों के बतमान दृष्टिकोण में परिवर्तन होना भी बहुत धावश्यक है। यदि बही पुराना दफ्तरी व्यवहार धपनाया गया त्रिबल वास्तविकता के साथ कोई सहानुभूति नहीं होती और अनेक धमितिया व धायीय नियुक्त करने और उनकी रिपोटों को धसमायी में बन्द कर देने का बही तरीका बतला रहा तब देश में निश्चय ही कोई भी सामाजिक सुरक्षा योजना मफल नहीं हो सकती।

कुछ ध्यक्ति यह प्रश्न पूछते हैं कि क्या भारत सामाजिक सुरक्षा की सुविधाओं का ध्यय बहल कर सकता है? इस सम्बन्ध में श्री जगजीवन राम ने ब्रिटेन की सामाजिक सुरक्षा-योजना के प्रसिद्ध निर्माता सर बिनियम बेबरीज के धर्षों को रोहूठया है। बेबरीज स ऐसा ही प्रश्न पूछा गया था। इस पर उनका उत्तर बहुत ही स्पष्ट था। उन्होंने कहा "मुझसे प्राय पूछा जाता है कि क्या ब्रिटेन बेबरीज योजना का भार बहल कर भी सकेगा? मेरा उत्तर है कि यह एक ऐसा प्रश्न है जिससे ध्रय ही सकता है। इस प्रश्न में एक ऐसी बात मान ली गई है जो सत्य नहीं है, अर्थात् यह मानकर प्रश्न किया गया है कि धाय का बुद्धिमत्तापूर्ण वितरण करने में कुछ मागत घाती है। परन्तु मेरे बिचार से धाय को कम धावश्यक चीजों पर ध्यय करने से पूर्व धासिक धावश्यक धरतुधों पर ध्यय करने से कोई मापत नहीं घाती। यह तो केवल बुद्धिमत्तापूर्ण ध्यय करना है। जब सोच यह प्रश्न पूछते हैं कि क्या ब्रिटेन बेबरीज योजना के मार को बहल कर सकता है तो जँने बह यह पूछते हैं कि क्या कोई पृहली रेडियो वरीरने से पहले धपने परिवार के लिये रोटी खरीद सकती है? निश्चय ही बह खरीद सकती है और उसे खरीदनी चाहिये।" सर बिनियम ने इस बात पर भी और धिया है कि देश जितना धासिक निर्बल होता है उनके लिये सामाजिक सुरक्षा योजना की धावश्यकता भी जतनी ही धासिक होती है।

इस प्रकार इस समय हमारे देश में सामाजिक सुरक्षा योजना को लागू करने की बहुत धावश्यकता है और यह हमारे मध्मग एक गम्भीर राष्ट्रीय समस्या है।

बिच कुछ और निर्धनता की गहरी खाई में अधिक प्राब पड़ा हुआ है। उससे उसे उबारने के लिये यही एकमात्र साधन है। डा० अम्बेडकर के शब्दों में अधिकों को "रोटी मकान पर्याप्त वस्त्र शिक्षा धन्य स्वास्थ्य और इन सबसे बड़ी चीजें संसार में प्राप्तसम्मान तथा शौर्य के साथ जमाने का अधिकार देना चाहिये। जबकि हमारे देश में राष्ट्रीय सरकार है और उसका सर्वोच्च न्यायाधीश राज्य की स्थापना करता है तब हमें यह पूरी आशा है कि सामाजिक सुरक्षा के प्रश्न को अधिक जतन तक नहीं टाला जायेगा और हमारी पंचवर्षीय आयोजनाओं में इसको उचित महत्त्व दिया जायेगा। सामाजिक सुरक्षा का प्रारम्भ कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम और प्रोबिडेंट फण्ड योजना के रूप में हो चुका है। हमें आशा है कि यह प्रारम्भ यही तक ही सीमित नहीं रहेगा और भविष्य में उन सभी को सुरक्षा प्रदान की जायेगी जो उत्पादक कार्यों में लगे हुये हैं।

ग्रेट ब्रिटेन में सामाजिक सुरक्षा

(Social Security in Great Britain)

मध्यकालीन युग में निर्धन सहायता — (Poor Relief in the Middle Ages)

महारानी एलिजाबेथ के समय से ही प्रभावशाली नागरिकों की आवश्यकता को पूर्ण करना इंग्लैंड में राज्य का ही कर्तव्य रहा है। मध्यकालीन युग में निराश्रित व्यक्तियों को सहायता देने का कार्य धार्मिक मठों द्वारा किया जाता था परन्तु मठों के उन्मूलन के पश्चात् राज्य के लिए यह आवश्यक हो गया कि उनके स्वान पर कोई धर्म सहायता व्यवस्था की जाय। परिणामस्वरूप इंग्लैंड में निर्धन कानून (Poor Law) पारित किया गया। इसके अन्तर्गत सहायता के लिए जो धन जमा किया जाता था वह स्थानीय करों द्वारा होता था। निर्धन कानून जिसका नाम बाद में 'सार्वजनिक सहायता' (Public Assistance) कर लिया गया अभी तक विद्यमान है। पुरानी सेवाओं में से यही एक ऐसी सेवा है जो अभी तक बाकी है। इसका अर्थ यह है कि निराश्रित व्यक्तियों को ऐसी सहायता दी जाय जो उन्हें किसी और एजेंसी द्वारा न मिल रही हो। प्राबुद्धिक समय में सामाजिक सेवा का जो इतिहास है, वह वास्तव में निर्धन कानून के अन्तर्गत जो सेवाएं प्राप्ती थीं उनको ही अपनाते और उनके विकास का इतिहास है, यद्यपि दोनों का आधार अलग-अलग है। वर्तमान व्यवस्था में उतनी बठिन बातें नहीं हैं जो पहले थीं। निर्धन सहायता के नाम में जो एक हीनता की भावना छिपी हुई थी वह भी अब नहीं है। बित्त व्यवस्था भी निश्चय प्रकार से की जाती है।

इंग्लैंड में सामाजिक सेवाओं पर व्यय —

बीसवीं शताब्दी में सामाजिक सामाजिक सेवाओं पर व्यय इंग्लैंड में काफी बढ़ गया है। यह ब्रिटिश सामाजिक जीवन की एक मुख्य विशेषता है जो कि पीछे पीछे सम्बन्धों पर बहुत प्रभाव डाल रही है। ग्रेट ब्रिटेन में सामाजिक सेवाओं पर १८९० में कुल व्यय लगभग २३० लाख पौंड था। इसमें प्रशासन की लागत भी सम्मिलित थी। सन् १९०० में यह व्यय २९० लाख पौंड तक बढ़ गया और सन् १९२० में २०९ लाख पौंड तक और १९३५ में ४६३० लाख पौंड तक पहुँच गया। इन आँकड़ों में गमर द्वारा दी हुई राशि तथा स्थानीय सरकारों द्वारा मिला हुआ धन तथा विभिन्न प्रकार की सहाय सेवाओं के लिए प्राणियों और नर्सरियों द्वारा दी हुई धनराशि भी शामिल थी। सन् १९३५ में गमर ने जो

सहायता स्वीकृत की वह २६५० लाख पौंड से अधिक प्रचुर कुल व्यय का ३३% के लगभग थी। १९१८-१९ में सामाजिक सेवा योजनाओं पर कुल व्यय ३५२० लाख पौंड का। सन् १९५७-५८ में सरकार द्वारा सामाजिक सेवाओं एवं उपचारों पर किया गया व्यय २०१ करोड़ १० लाख पौंड तक हो गया और सार्वजनिक प्राधिकारों (Public Authorities) भी सामाजिक सेवाओं पर प्रतिवर्ष ११० करोड़ पौंड व्यय कर रहे हैं अर्थात् प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष ६१ पौंड समाज सेवाओं पर व्यय किया जाता है।

बेवरिज आयोजना (Beveridge Plan) से पूर्व इंग्लैंड में जो सामाजिक बीमा की व्यवस्था थी उसका भी वर्धन करना आवश्यक है।

बेवरिज आयोजना से पूर्व निर्धन सहायता —

इंग्लैंड में निर्धन सहायता (Poor Relief) बहुत काम से बची या रही है। सन् १९०१ से पूर्व यह माना जाता था कि स्वस्थ घरीर वाले व्यक्ति, यदि उनकी इच्छा हो तो कार्य या सकते थे अथवा उनकी निर्धनता उनके धर्मस्य की ओरक थी। इसलिए बिना किसी कार्य पर लगे हुए स्वस्थ घरीर वाले व्यक्तियों को रद्द दिया जाता था उदाहरणतः सन् १५३३ में जो भी स्वस्थ घरीर वाले पुरुष एवं स्त्रियां भील मांफटे प्रचुर बिना स्वामी रोजगार के पाये जाते थे उनको नंगा करके एक छेमे के साथ बांध दिया जाता था और उनको एक एक कोड़े लगाये जाते थे जब तक कि उनके घरीर से खून न निकलने लगे। सन् १५५७ में एक अधिनियम पारित किया गया जिसमें इन बात की व्यवस्था थी कि जो भी स्वस्थ घरीर का व्यक्ति आचार्य पाया जायगा उसके घरीर पर V चिह्न दिया जायगा और वह किसी भी मानिक का जिसको धारण करता हो वो कार्य तक हास रहेगा और उसको रोटी पानी और कच्चे मांस का भोजन मिलेगा। इन दो बर्षों में भ्रान्ते का प्रयत्न करते हुए पकड़े जाने पर उसके घरीर पर S चिह्न देने और जन्म भर की दासता का बंध दिया जाता था। उसके पश्चात् भी भागने पर मृत्यु-दण्ड नियत था।

महापत्री एलिजाबेथ के समय में सर्वप्रथम निर्धनों को सहायता देने के कार्य में प्रगति हुई। इसके लिए बहुत से अधिनियम पारित किये गये और "जस्टिसेज आफ पीस" (Justices of Peace) को पत्रिकों का बेटन निश्चित करने का अधिकार दिया गया। सन् १९०१ में निर्धन सहायता अधिनियम पारित हुआ जिसमें पुरानी धारणाएँ नीति पूर्णरूप से परिवर्तित कर दी गईं। इसके अन्तर्गत निर्धनों की सहायताएँ एक अधिचार्य नीति की अन्तर्गत गयी। अत्यन्त नगर में निर्धनों के घोषणपर नियुक्त किये गये जिनका कार्य वृद्ध पीड़ित अथवा रोजगार न होने के कारण ऐसे निर्धनों की सहायता हेतु कर उदाहता (Relief taxation) या जो बुढ़ा-वस्था और निवृत्तता के कारण कार्य नहीं कर सकते थे या वैधायक थे। कार्य करने के योग्य व्यक्तियों को कार्य करने से मना करने पर बहिष्कृत किया जाता था। सन् १९०१ का यह अधिनियम कुछ संदीपनों के पश्चात् सन् १९३४ तक सार्वजनिक

सहायता कार्यों का आधार रहा यद्यपि इस कार्य में सिर्फ धीर भी अभिनियम पारित किये गये थे ।

एक महत्वपूर्ण अभिनियम १८३४ में पारित किया गया जिसके अनुसार निर्धन कानून प्रशासन को निर्धन कानून कमिश्नरों के केन्द्रीय बोर्ड (Central Board of Poor Law Commissioners) के अन्तर्गत लाया गया । स्वस्थ शरीर वाले व्यक्तियों के लिए कार्य 'वर्क हाउस टेस्ट' (Work House Tests) की व्यवस्था की गई । 'पेरिशों' (Parishes) (कस्बा) को सभों में सम्मिलित किया गया था । प्रत्येक सभ में उपकर देने वाले व्यक्ति एक संरक्षक बोर्ड (Board of Guardians) का चुनाव करते थे । काय मूढ़ में सब स्वस्थ शरीर वाले निर्धनों को भरती करके सहायता दी जाती थी और १० वर्ष से अधिक आयु वाले एक प्रबल व्यक्ति को कार्य गृह के बाहर सहायता दी जाती थी । सन् १८४७ में निर्धन कानून बोर्ड (Poor Law Board) स्थापित हुआ और उसने सन् १८७१ तक सार्वजनिक सहायता के प्रशासन का निरीक्षण किया और तब उसकी जगह स्थानीय सरकारों के बोर्ड (Local Government Board) बनाया गया जो सन् १९१९ तक रहा । इसने उपरान्त स्वास्थ्य मन्त्रालय का निर्माण हुआ जिम्मे सार्वजनिक सहायता व प्रशासन कार्य को सम्भाला । सन् १८३४ के अधिनियम में यह सिद्धांत बना कर कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी जीविका स्वयं अपने परिश्रम से कार्य करके अर्जित करनी चाहिए, ईमानदारी से कार्य करने वालों को प्रोत्साहन दिया परन्तु इस अधिनियम में बेरोजगारों के लिये कोई व्यवस्था नहीं थी । सन् १८६१ में बेरोजगारों को कुछ सहायता 'फ्रेंडली सोसाइटीज' (Friendly Societies) द्वारा भी दी गई । सन् १९०१ में निर्धन कानून के लिए उपलब्ध कमीशन नियुक्त किया गया जिसने अपनी रिपोर्ट सन् १९०९ में दी । कमीशन ने कहा कि देश में भिक्षा-भुक्ति व्याप्त थी और उसने कार्य गृहों में बच्चों को रखने की प्रथा की निन्दा की और इस धीर भी संकेत किया कि कार्य गृह से बाहर दी जाने वाली सहायता का प्रशासन उचित प्रकार में नहीं हो रहा था ।

सन् १९२६ में एक स्थानीय सरकारी अधिनियम (Local Government Act) पारित हुआ जिसके अनुसार निर्धन कानून की एक प्रणाली नवीन प्रणाली का प्रारम्भ हुआ । निर्धन कानून के प्रशासन का कार्य काउन्टी बॉर्डों और शारद्वी बोरो कौंसिलों (County Borough Councils) को स्थानान्तरित कर दिया गया जिनको कि सार्वजनिक सहायता समितियों के द्वारा कार्य करना होता था । यह धारा व्यक्त की गई थी कि इस कानून के कारण कुछ बचत होगी व कार्य क्षमता बढ़ेगी और अन्त में निधन कानून व प्रशासन की जिम्मेदारी समस्त समाज की न होकर स्थानीय जिलों की हो जायगी ।

बेरोजगारी बीमा — (Unemployment Insurance)

इम्पेड में बेरोजगारी बीमा में भी जनता का ध्यान भरती धीर प्राप्ति किया है । जैसा कि ऊपर निर्धन कानून के अन्तर्गत बताया गया है नून काल में

बेरोजगारी को माना ही नहीं जाता था और स्वस्थ शरीर वाले बेरोजगार व्यक्तियों को शालसी मान कर रख दिया जाता था। परन्तु चीम ही इस बात का अनुभव कर लिया गया कि प्रत्येक व्यक्ति को कार्य देने की जिम्मेदारी राज्य की है और यदि वह सम्भव न हो सके तो बेरोजगारों को सहायता दी जानी चाहिये। सन् १९२१ में कुछ उद्योगों के लिए जिनमें लगभग २२१ लाख श्रमिक कार्य करते थे धनिकार्य बेरोजगारी राज्य बीमा योजना लागू की गई। यह योजना संघदान सिद्धान्त पर आधारित थी। यह संघदान मानिकों से २½ पैसे श्रमिकों से २½ पैसे और राज्य से १½ पैसे लिया जाता था। इस प्रकार प्रत्येक श्रमिक के लिए १½ पैसे कुल संघदान संबंधित होता था। साप्ताहिक सहायता ७ दिवस की जो बचकों को १२ महीने में अधिक से अधिक १५ सप्ताह तक दी जा सकती थी और १८ वर्ष से कम आयु वाले श्रमिकों को इसके प्राधा लाभ दिया जाता था। समय-समय पर इस परिचालन में परिवर्तन होते रहे। सन् १९१६ में यह योजना श्रम रोजगारों तक बढ़ा दी गई। महायुद्ध के तुरन्त बाद ही 'काम रहित व्यक्तियों के लिए एक दान (Out of Work Donations) योजना' श्रमपूर्व संनिकों जिनको कार्य नहीं मिल सका था और श्रम्य ठामम श्रमिकों के लिए लागू की गई।

सन् १९२२ में धनिकार्य राजकीय बीमा योजना को शारीरिक कार्य करने वाले श्रमिकों और उन मानसिक कार्य करने वाले श्रमिकों के लिए भी जो २५ पैसे प्रति वर्ष से अधिक नहीं कमाते थे लागू कर दिया गया। कृषि सम्बन्धित श्रमिक एवं घरेलू कार्य के श्रमिक इस योजना के अन्तर्गत नहीं आते थे। बेरोजगारों को मासिक श्रमिक एवं सरकार के संघदान (Contributions) से निमित्त निधि में से सहायता दी जाती थी। समय-समय पर संघदान की दरें और लाभ दरें को बढ़ाया भी गया। सन् १९३१ में सरकार ने राष्ट्रीय बचत अधिनियम (National Economy Act) पारित किया जिससे अन्तर्गत बेरोजगारी बीमे का संघदान तो बढ़ा दिया परन्तु लाभों में कमी कर दी गई। संघदान की दर १० पैसे प्रति बचक पुरुष श्रमिक के लिए और १ पैसे प्रति मासिक के लिए भी जबकि राज्य का संघदान ७½ पैसे ही रहा। २१ वर्ष से अधिक आयु के पुरुष व स्त्री श्रमिकों को सहायता क्रमशः १७ व १५ सि. की बगल १५ सि. १ पै. और १३ सि. ७ पै. कर दी गई। २१ वर्ष से कम आयु वाले श्रमिकों के लाभों की दर को एवं प्राधितों के लाभ को भी कम कर दिया गया और लाभ के लिये शैविका साधन जांच (Means Test) की व्यवस्था की गई। १९३४ में यह तरीका भी सम्पूर्ण कर दिया गया। बेरोजगारों और 'निर्धन सहायता' चाहने वालों का अन्तर स्पष्ट कर दिया गया और इनको दो वर्गों में बाँटा गया प्रथम-बीमे के अन्तर्गत लाभ वाले और द्वितीय-जहाँ लाभ वाले वाले। सहायता चाहने वालों की 'शैविका साधन जांच' की जाती थी। लाभ दरें जो सन् १९३१ में पूर्ण थीं उनको ही फिर से लागू कर दिया गया और सहायता का १ वर्ष तक कर दिया गया। प्राधितों को लाभ दर बढ़ाकर दो से

ग्रंट बिल में सामाजिक सुरक्षा

वीन निर्दिष्ट कर दी गई। जुलाई १९३६ में जैसे-जैसे बेरोजगारी कम हुई, धर्मियों एवं मालिकों के लिये संघदान दर ९ पैसे प्रति सप्ताह घीर स्त्री धर्मियों के लिए ५ पैसे प्रति सप्ताह कर दी गई। राज्य क संघदान का हिस्सा इस निर्धि में बराबर का होता था।

सन् १९३६ में दृष्टि-धर्मियों के लिए बेरोजगारी बीमे की एक प्रथम योजना बनाई गई। संघदान की दर मासिक धर्मिक एवं राज्य क लिए ४ ३/४ पैसे प्रति सप्ताह घीर स्त्री धर्मियों के लिये ४ पैसे प्रति सप्ताह नियत की गई। लाभ हरे पुरुषों के लिये १२ पियं, त्रिनों के लिये १० ३/४ पियं, बयस्कों के लिये ७ पियं घीर प्राभित धस्यबयस्कों के लिये ३ पियं प्रति सप्ताह निश्चित की गई। धर्मिकतम लाभ दर २६ पियं प्रति सप्ताह थी।

बेरोजगारी बीमा योजना की इस बात पर धातोरचना की गई कि इसकी लागत धर्मिक की तथा संघदान व लाभ की हरे बहुत कम थी। प्रागामी पुच्छों में वैसा कि उल्लेख किया गया है महापुच्छ के पश्चात् इस योजना के स्थान पर एक 'सामाजिक सुरक्षा योजना लागू कर दी गई।

स्वास्थ्य बीमा— (Health Insurance)

१९११ में प्रारम्भ किया गया था घीर बेरोजगारी बीमे की तरह यह भी संघदान सिद्धान्त पर प्राधारित थी। यह योजना उस मजदूर बने के समस्त धर्मियों वर लागू थी त्रिनकी धामु १६ बने से धर्मिक एवं १२ बने से कम थी घीर त्रिनकी धामिक धाम २२० पौंड से धर्मिक नहीं थी। उपलब्ध लाभों में सबसे घीर विरिहा सहायता भी सम्मिलित थी। बीमारी लाभ पुरुषों के लिए १२ पियं घीर विरिहाहित महिलाओं के लिए १२ पियं घीर विरिहाहितों के लिए १० पियं की दर पर २६ सप्ताह तक उपलब्ध होता था घीर धसमयता लाभ की दर पुरुषों के लिए ७ पियं १ पय, विरिहाहित महिलाओं के लिए ६ पियं घीर विरिहाहित महिलाओं के लिए २ पियं थी। मातृत्व-हित लाभ की दर ४० पियं थी जो किसी भी बीमाहित महिला को या बीमाहित पुरुष की पत्नी क प्रसव काम पर दिया जाता था। इन लाभों के लिये पुरुषों द्वारा ४ ३/४ पियं प्रति सप्ताह मालिकों द्वारा ४ ३/४ पियं प्रति सप्ताह घीर स्त्री धर्मियों द्वारा ४ पियं प्रति सप्ताह संघदान दिया जाता था। बीमारी के लिये प्रतीक्षा काल तीन दिन का था।

बूढ़ावस्था पेन्शनें — (Old Age Pensions)

बूढ़ावस्था पेन्शनों की योजना ब्रिटेन में १९०८ के धर्मिनियम के धर्मन्यत प्राण्य की गई घीर सामाज्य कर्तों द्वारा मर्चन निर्धि में से लाभ उपलब्ध किये जाते थे। मालिकों एवं धर्मियों को संघदान नहीं देना पड़ता था। सन् १९१४ में प्रत्येक बहू धर्मिक, त्रिनकी धामु ७० बने से धर्मिक हू घीर जो ब्रिटेन में कम से कम २० बने तक धर्मियामी रहा हा या जो कम से कम १० बने से इतने में निवास कर

रखा हो बुढ़ापेका पेंशन देने का अधिकारी हो जाता था। परन्तु यह शर्त भी थी कि उसकी वार्षिक आय ३१ पौं १ सि० से अधिक न हो और उसे निर्जन सहायता भी न मिलती हो। अधिकतम साप्ताहिक लाभ ३ सि० और न्यूनतम साप्ताहिक लाभ १ सि० था। बाद में अधिनियम को संशोधित किया गया और उसमें संसदान सिद्धान्त को लागू कर दिया गया। सन् १९२३ एवं १९२९ में पारित किये गये अधिनियमों के अन्तर्गत स्वास्थ्य बीमा प्रणाली में आने वाले सब व्यक्तियों को 'बुढ़ापेका संसदान पेंशन योजना' के अन्तर्गत सम्मिलित कर लिया गया। सन् १९३५ में संसदान की दर पुरुषों एवं स्त्रियों के बिये क्रमशः ३½ पौं० और ३ पौं० प्रति सप्ताह निर्धारित कर दी गयी। मालिकों का संसदान पुरुष एक महिला अधिकों के हेतु क्रमशः ३½ पौं० और २½ पौं० था। मालिकों एवं अधिकों द्वारा बिये गये संसदान की दर को बीरे-बीरे सन् १९३६ १९४६ और १९३६ में बढ़ाकर पुरुषों के लिये १½ सि० और स्त्रियों के लिये ७½ पौं० प्रति सप्ताह तक कर दिया गया। राज्य द्वारा भी वार्षिक अनुदान दिये जाने लगे जिसकी राशि १९४२-४६ में २ करोड़ १० लाख पौंड थी। ६३ और ७ वर्ष के बीच के बीमाहृत पुरुषों एवं स्त्रियों को १० सि० प्रति सप्ताह दिये जाते थे। १ सि० प्रति सप्ताह उन व्यक्तियों की पत्नियों को भी दिये जाते थे जो पेंशन पाने के अधिकारी थे यदि इन पत्नियों की आयु भी ६३ और ७ के बीच हो।

आश्रित पेंशनार्थ — (Dependants' Pensions)

विधवा माताओं और पनाश बच्चों को पेंशन देने की योजना को भी सन् १९२३ से संसदान के आचार पर लागू किया गया। विधवाओं को १ सि० प्रति सप्ताह की दर से पेंशन दी गयी। इसके अतिरिक्त उनको १४ वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए प्रत्येक से भत्ता दिया गया जिसकी दर सबसे बड़े बच्चे के लिये १ सि० और अन्य बच्चों के लिये ३ सि० प्रति सप्ताह थी। इस योजना के अन्तर्गत विधवा को ७ वर्ष की आयु तक पनाश उसके बुढ़ापे विवाह करने तक यह पेंशन उपलब्ध थी। परन्तु पुनर्विवाह का बालकों के भत्तों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। इस योजना के अन्तर्गत बीमाहृत मृतकों के पनाश बच्चों के लिये ७½ सि० प्रति सप्ताह प्रति बालक को १४ वर्ष की आयु तक और यदि श्रम में पड़ता हो तो १६ वर्ष की आयु तक पेंशन की व्यवस्था थी।

श्रमिक क्षतिपूर्ति — (Workmen's Compensation)

इंग्लैण्ड में प्रथम श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम सन् १९०६ में पारित हुआ। इसके अन्तर्गत मालिकों को आयु एवं शरी पुनः का खर्च किये बिना अपने अधिकों को उन समय क्षतिपूर्ति देनी पड़ती थी जब कोई श्रमिक किसी दुर्घटना या विषय लक्ष्मी श्रमिक बीमारी के कारण जो उसको रोजगार नाम में लगी हो अपनी जीवित नमाने से विधवा हो जाता था। स्वामी एवं अस्वामी अन्तर्गत में साप्ताहिक अनुदान दिया जाता था और मृत्यु पर आश्रितों को एकमुष्ट राशि दी जाती

की। मन् १९२३ में इस अधिनियम का सुदोषित किया गया जिसके अन्तर्गत शक्ति पूर्ति को राशि और उसके क्षेत्र में वृद्धि की गई और एकमुष्ट राशि देकर निबटारे की अनुमति भी मिस गई। परन्तु शक्तिपूर्ति के लिये अधिभार्य बीमे की कोई व्यवस्था नहीं थी यद्यपि बहुत से भासिक विभिन्न कम्पनियों में प्रपना बीमा करा कर अपने शक्ति से मुक्त हो गये थे।

भासिकों की लाभ योजनाएं —

सामाजिक बीमे की राज्य प्रणाली के अतिरिक्त भासिकों द्वारा भी पन्तन योजनाएं, बचत योजनाएं और बरोजगारी लाभ योजनाएं ऐच्छिक सिद्धान्त पर चालू की गई हैं। परन्तु भुगतान राशि प्रत्येक फर्म में भिन्न-भिन्न हैं। इनमें से अधिकतर व्यवस्थाएं प्रौद्योगिक कल्याण योजनाओं के अन्तर्गत पाती हैं जो कि संसद के अधिनियमों द्वारा निर्धारित की गई हैं जैसे 'जनता स्वास्थ्य अधिनियम' (Public Health Act) दुकान अधिनियम (Shops Act) फेक्ट्री अधिनियम आदि। स्वास्थ्य कल्याण और बायों के बच्चों के सम्बन्ध में भासिकों और श्रमिक श्रमों के मध्य हुए सम्झौते द्वारा भी ऐसी व्यवस्थाएं की गयी हैं और कुछ व्यवस्थाएं भासिकों के ऐच्छिक रूप से एक विशेष स्तर बनाए रखने के हेतु भी की हैं।

व्यक्तिगत आयोजना से पूर्व योजनाओं के शोध —

महापुत्र से पूर्व ब्रिटेन में सामाजिक बीमे की उपरालत प्रणाली ही प्रचलित थी परन्तु इनमें कुछ शोध भी था। योजनाओं के अन्तर्गत बहुत से श्रमीक (Needs) श्रमिक नहीं पाते थे। लाभ देने के हेतु या 'जीविका साधन जीव' की बातों की उसमें कोई समानता नहीं थी। फिर लाभ बरें बिना किमी उचित कारण के पटती बढ़ती रहती थी। बीबीसी आयोजना में इन सब शोषों को दूर करने का प्रयास किया गया।

बीबीसी आयोजना — (The Beveridge Plan)

जून मन् १९४१ में सर बिलियम बेव्रिज को सामाजिक बीम की वर्तमान राष्ट्रीय योजनाओं और सम्बन्धित श्रमियों का सर्वोत्तर करने और सुधार देने के हेतु नियुक्त किया गया। उनकी रिपोर्ट दिसम्बर मन् १९४२ में संसद के सम्मुख रखी गई। उसके पश्चात् मसौदा अधिनियमों के द्वारा इंग्लैंड में इन रिपोर्टों को कार्यान्वित कर दिया गया है।

आयोजना की मूल आधारभूत विगादताएं —

बीबीसी आयोजना का मुख्य लक्ष्य यह है कि जहां तक हो सके विभिन्न कारणों से उत्पन्न हुई आश्रयताओं की पूर्ति करने के लिए एक संगठित निर्वाह प्रणाली की व्यवस्था की जाए। सर बिलियम बेव्रिज ने अपनी योजना को एक समान दर (Uniform Rate) पर आधारित किया जिसमें विभिन्न श्रमियों का सामना करने के लिये समान दर भी पूरक के रूप में जोड़े जा सकत थे और जिसमें

घायोोजना के अन्तर्गत काम —

घायोोजना के अन्तर्गत निम्नलिखित कामों की व्यवस्था है —

गृहविधियों के लिए काम— किसी गृहणी (House-wife) को कोई संभाल नहीं देना होया परन्तु वह १ मासों की अभिकारिणी होगी (क) १ पींड तक का बिवाह हेतु अनुदान (ख) प्रसव के समय पर ४ पींड का मातृत्व हित अनुदान। यदि वह कमाने वाला रोजगार करती हा तो उसे १३ सप्ताह तक बिना संभाल लिए ३६ छि० प्रति सप्ताह का प्रतिरिक्त मातृत्व हित लाभ मिलेगा (ग) १३ सप्ताह तक वैधव्य लाभ ३६ छि० प्रति सप्ताह की दर से मिलेगा (घ) १३ सप्ताह के पश्चात् जब तक बालक प्रापित रह्ये तब २४ छि० प्रति सप्ताह अभिरक्षक (Guardian) लाभ मिलेगा और इसके प्रतिरिक्त बालकों का भत्ता भी मिलेगा। यदि उसका कोई प्रापित बालक नहीं है तब उसको प्रथिवास्तु योजना के अन्तर्गत कार्य के लिए परीक्षा पास करनी होगी और इस बीच में उसे प्रथिवास्तु लाभ मिलेगा। (च) यदि उसे बिना अपनी मसठी के तलाक मिलता हो तो उसको वैसा ही लाभ मिलेगा जैसा बिवाहा को मिलता है। (छ) बीमार पड़ने पर उसको बीमारी लाभ के रूप में सहायता उपलब्ध होगी।

बच्चों के लिए भत्ते— घायोोजना के अन्तर्गत इस बात की भी व्यवस्था है कि हर परिवार में प्रथम प्रापित बालक के प्रतिरिक्त हर बालक को ८ छि० प्रति सप्ताह भत्ता दिया जायेगा चाहे उसके माता पिता की आय न सामाजिक स्थिति कैसी भी हो। यदि माता पिता भरोपाजन करन में असमर्थ हों तो प्रथम बालक के लिए भी भत्ता की व्यवस्था है।

बेरोजगारी और बीमारी लाभ— इसके अन्तर्गत प्राधिकारित व्यक्ति को २४ छि० प्रति सप्ताह और बिवाहित दम्पति का ४० छि० प्रति सप्ताह दिया जाता है। ऐम बेरोजगार पुरुष को जिसके पत्नी न हो बच्य हों १० छि० प्रति सप्ताह मिलेगा। इस लाभ के लिए केवल यही शर्त है कि जो छः महीने से अधिक बेरोजगार रहेप उनको एक प्राधिवास्तु केन्द्र में भर्ती होना पड़ता है जहाँ कि उनको एक निर्धारित समय के लिए कार्य सिखाया जाता है और इस समय उनको एक प्राधिवास्तु लाभ मिलता है जो कि बेरोजगार लाभ की तरह होता है।

धार्मिक क्षतिपूर्ति— वैधरिक्त घायोोजना के अन्तर्गत १३ सप्ताह तक की घासमर्षता के लिए धार्मिक की बीमारी मान कर बीमारी लाभ दिया जाएगा। इसके पश्चात् साप्ताहिक प्रशापनी बढ़ाकर उसकी पहली घास के ३ भाग तक कर दी जाएगी बरन्तु यह निरिचन सामान्य दर से कम नहीं हो सक्ती। घायोोजना में क्षतिपूर्ति ने मामलों पर विचार करने के लिये साधारण न्यायालयों के स्थान पर एक विशेष व्यवस्था का आभाव है। यदि कुर्पटना पातक है तो प्रापितों की भुन भित्ता कर ३ पींड का इकनुरत अनुदान दिया जाएगा।

धायोजना में किसी बयस्क व्यक्ति की मृत्यु पर २० पौंड १० पौर २१ बर्ष के बीच के व्यक्ति की मृत्यु पर १५ पौंड ३ पौर १० बर्ष के बच्चे की मृत्यु पर १० पौंड पौर ३ बर्ष से नीचे के बच्चों के मरने पर ६ पौंड का प्रतिप संस्कार अनुदान दिए जाने की भी व्यवस्था है।

बुढ़ापस्था वेतन — पुरानों को बुढ़ापस्था वेतन १५ बर्ष पौर रिटायरों को ६० बर्ष की आयु में दी जाती है। इसकी दर प्रतिव्यक्ति के लिए ५४ सि० पौर इन्सुरि के लिए ४० सि० है। चाहे वृद्धों साक्षी की आयु कुछ भी हो।
धायोजना का प्रशासन और उत्तकी सागत —

जहाँ तक प्रशासन का प्रश्न है सर बिसियम बबरिज का सुझाव यह था कि प्रशासन के दायित्व को एक संभटित रूप देना चाहिए और एक सामाजिक बीमा नियम के साथ एक सामाजिक सुरक्षा मन्त्रालय (Ministry of Social Security) बनना चाहिए। पारम्भ में ता सरकार ने इस सुझाव को स्वीकार नहीं किया परन्तु पृथक रूप से एक राष्ट्रीय बीमा मन्त्रालय (Ministry of National Insurance) बना दिया गया है।

सन् १९४५ में योजना की लागत ६,९७० लाख पौंड सगई गई थी पौर १९६१ में ८२८ लाख पौंड (११० करोड़ रुपए) का अनुमान है। यह सब अनुमान सन् १९३८ के मूल्य स्तर से २५% ऊँचे मूल्य पर आधारित है। मूल्यों के घटने बढ़ने से साथ घोर संघर्षों की राशि भी कम या अधिक करनी पड़गी।

बबरिज धायोजना का आसोधनात्मक मूल्यांकन —

इसमें कोई संदेह नहीं कि बबरिज धायोजना एक ऐसी व्यापक योजना है जो किसी व्यक्ति का जीवन की समस्त बिपत्तियों में सहायक हो सकती है। व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु के समय तक (Cradle to the Grave) रखा होती है पौर उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके धायित्यों की भी रखा होती है। यदि धायोजना के समस्त मिडान्तों को कार्य रूप दिया जाय तो सामाजिक सहायता की दृष्टि से यह सफल एक साम्यवादी समाज को जन्म देती। फिर भी इसमें संदेह है कि कोई देय इतने उच्च स्तर की सुरक्षा की व्यवस्था कर सकता है जब तक कि उत्पादन एवं राष्ट्रीय आय को बढ़ाने में साधन न उपलब्ध जायें। यह देता गया है कि धायोजना को जब तक पूरी तरह में बाँटा नहीं जाये जब तक प्रत्येक बर्ष यह धायोजना ब्रिटेन के करदाताओं के बोझ का जो पहिले से ही धायिक है बढ़ती रहगी। एक मुरय मय यह भी है कि कहीं ऐसी योजना काय करने की प्ररक्षा को कम न कर दे। साथ ही जब तक नागरिक पूर्णतया सिगित नहीं होंगे पौर उनमें स्वास्थ्यव्यमान तथा राष्ट्र के सम्मान की आशना नहीं होगी ऐसी धायोजना सफल नहीं हो सकती। पूर्ण रोजगार के धायों का पाना भी अत्यन्त बन्दि है। धायोजना हम पूर्व चारणा पर भी आधारित है कि बेरोजगारी दर नून धायित्यों की दर ८५% होगी। यह दर कम है क्योंकि १९३९ में बेरोजगारी दर १५% थी। परन्तु

इसमें भी कोई संदिग्ध नहीं है कि ऐसी योजना से कार्यक्षमता बढ़ेगी और यह जन संख्या को कम करने की विचारधारा को रोकेगी और क्योंकि यह पूर्ण रोजगार मानकर चलती है इससे उत्पादन भी अधिक होगा।

व्यवस्थापन योजना का कार्यान्वित होना घस मान स्थिति —

बैंकरिज रिपोर्ट में लोगों में बहुत रुचि दिखाई और सरकार द्वारा भी यह सामाजिक सुरक्षा के मन्त्रियों के डबि का प्राचार मान ली गई। महानुष्ठ के परभाव कुछ ही वर्षों में बहुत से अभिनियमों द्वारा जिनको कि ३ जुलाई सन् १९४० में कार्यरूप दिया गया सामाजिक सुरक्षा की एक नवीन व्यापक प्रणाली का उद्भव हुआ। बाद के अभिनियमों द्वारा इसमें बहुत से समंजन किये गये हैं। वर्तमानकाल में पारिवारिक भत्ते राष्ट्रीय बीमा औद्योगिक कति बीमा राष्ट्रीय सहायता एवं राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा आदि मिलाकर इंग्लैण्ड में एक ऐसी सामाजिक सुरक्षा प्रणाली का निर्माण करते हैं जिसमें कि किसी व्यक्ति का जीवन स्तर एक न्यूनतम स्तर से नीचे किसी भी रसा में नहीं गिर सकता।

पारिवारिक भत्ते (Family Allowances)— प्रथम बालक को छोड़कर निर्धारित सीमा से कम आय वाले प्रत्येक बालक को यह भत्ता सरकार द्वारा दिया जाता है। यह सीमा स्कूल जाने की आय तक होती है जो साधारणतः १५ वर्ष होती है और यदि बच्चा स्कूल में हो अथवा सिधार्थी हो तो यह सीमा १० वर्ष तक की भी हो सकती है। पारिवारिक भत्ता योजना प्रथम बार ६ अगस्त सन् १९४६ में सन् १९४५ के पारिवारिक भत्ता अभिनियम के अन्तर्गत लागू की गई। भत्ते की दर ५ सि प्रति सप्ताह की परन्तु फिर उसे १९५२ के पारिवारिक भत्ता एवं राष्ट्रीय बीमा अभिनियम (Family Allowances and National Insurance Act) के अन्तर्गत बढ़ाकर ८ सि प्रति सप्ताह कर दिया गया। फिर सन् १९५६ के एक ऐसे ही अभिनियम द्वारा इस भत्ते की दर तीसरे तथा उसके बाद के बच्चों के लिये १० सि० प्रति सप्ताह कर दी गई है।

राष्ट्रीय बीमा (National Insurance) —सन् १९४६ के राष्ट्रीय बीमा अभिनियम को ३ जुलाई सन् १९४० का पूर्ण रूप से कार्यान्वित किया गया। उस से इसे कई बार अर्थात् सन् १९४६ १९५१ १९५२ १९५३ १९५४ १९५५ १९५६ १९५७ १९५८ एवं १९५९ में संशोधित किया जा चुका है। यह अधिनियम ग्रेट ब्रिटेन में स्कूल छोड़ने की आय के ऊपर आय वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिये लागू होता है। कुछ व्यक्ति, बच्चों विवाहित स्त्रियों एवं असम आय वाले व्यक्तियों के पतिरहित सबको साप्ताहिक निर्धारित अ वशान देना पड़ता है। अ वशानों को तीन वर्षों में बाँटा गया है—(१) रोजगार पर गये व्यक्ति (२) स्वयं रोजगार करने वाले व्यक्ति (३) ऐसे व्यक्ति जो रोजगार पर न गये हों। नितम्बर सन् १९५६ में अ वशान की साप्ताहिक दर अद्यतनित शक्तिका में दी गई है —

वर्ग	पुरुष (क)			महिलायें (क)		
	राष्ट्रीय बीमा (ख)	स्वास्थ्य बीमा	योग	राष्ट्रीय बीमा (घ)	स्वास्थ्य बीमा	योग
वर्ग १	रि०	प०	रि० प०	रि०	प०	रि० प०
रोजगार पर नये हुए व्यक्ति						
कर्मचारियों द्वारा संघदान	८	० ३ १	१० ३ १	६	१ १, ६	७ ३ १
मानिकों द्वारा संघदान	७	६ ३	१३ ३	८	१ ६	९ ३
योग	१५	१० २	४ १८	२ १२	१ ११	१ ० १४
वर्ग २						
स्वयं रोजगार करने वाले व्यक्तियों का संघदान	६	१० २	२ १२	०	८	४ १
वर्ग ३						
ऐसे व्यक्तियों का संघदान जो रोजगार पर नहीं लगे हैं।	७	१ २	२ ६	७	१ ११	८ ७

(क) १८ वर्षों में कम आयु के लड़के लड़कियों को कम दर से संघदान देना पड़ता है।

(घ) इसका अन्तगण्य रूप एक में औद्योगिक क्षति के लिए संघदान भी था थाते हैं। इनकी दर कर्मचारियों के लिये ८ पैसे और मानिकों के लिये ६ पैसे प्रति पुरुष है। प्रत्येक महिला के लिये संघदान को दर कर्मचारियों में १ पैसे और मानिकों से ६ पैसे है।

जहाँ तक लाभों का प्रश्न है इस योजना में बीमारी के रोजगारी मातृत्व-हित और वैधव्य लाभ परिवर्धित भला सबकाय प्राप्ति की संघन और मृत्यु अनुदान की व्यवस्था है। प्रथम वर्ग के व्यक्तियों को सब लाभ मिलते हैं द्वितीय वर्ग के व्यक्तियों को के रोजगारी एवं औद्योगिक क्षति लाभ के परिवर्धन सब लाभ उपलब्ध हैं और तृतीय वर्ग के व्यक्तियों के लिये बीमारी के रोजगारी औद्योगिक क्षति और मातृत्व-हित लाभ के परिवर्धन सब लाभ उपलब्ध है। इसका माने की बात यह है कि एक विशेष काल के लिये कम से कम कुछ संघदान लिये प्रायें परन्तु संघदान देने की यह धर्म परिवर्धकों के घटे और औद्योगिक क्षति के लिये आयु नहीं होती।

कामों की बरतों में समय-समय पर वृद्धि की गई है। १९३९ में जो बरतें थीं वह निम्नलिखित हैं —

बीमारी लाभ की निरिच्छत साप्ताहिक दर, विवाहित स्त्रियों को छोड़कर १८ वर्ष से अधिक आयु वाले स्त्री श्रम पुरुषों के नियम के अन्तर्गत है। इसका प्रतिरिक्त बचक धारित के नियम ३ सि० प्रथम बालक के लिये १५ सि० एवं प्रतिरिक्त प्रत्येक बालक के लिये ७ १/२ सि० श्रम दिया जाता है। विवाहिता स्त्री के लिये साप्ताहिक दर ३४ सि० है परन्तु यदि उनका अपने पति से सम्बन्ध विच्छेद हो गया हो प्रथम उद्योग पति निवृत्त हो तो उसे ५ सि० प्रति सप्ताह मिलता है। बेरोजगारी लाभ की बरतें बीमारी लाभ के समान हैं। प्रारम्भ में तो बेरोजगारी लाभ ३० सप्ताह के लिये दिया जाता है परन्तु बाद में यह धीरे-धीरे १९ सप्ताह तक बढ़ाया जा सकता है। मातृत्व छुट्टी लाभ की दर ५० सि० प्रति सप्ताह है जो प्रसवकाल की अनुमानित तिथि से ११ सप्ताह पहिले से प्रारम्भ कर दिया जाता है और उन महिला श्रमिकों का जो प्रसवकाल की तिथि से ११ सप्ताह पहिले से प्रारम्भ कर दिया जाता है और उन महिला श्रमिकों को प्रसवकाल में १२ वीं १ सि० का मातृत्व-छुट्टी अनुदान दिया जाता है यदि स्त्री प्रसवकाल में है। इसके प्रतिरिक्त २ वीं १ सि० का मातृत्व-छुट्टी अनुदान दिया जाता है यदि स्त्री प्रसवकाल में है। इसके प्रतिरिक्त २ वीं १ सि० का मातृत्व-छुट्टी अनुदान दिया जाता है यदि स्त्री प्रसवकाल में है। पुत्रों बच्चों के जन्म पर यदि बच्चा जन्म के १२ घंटे बाद तक जीवित रहता है तो १२ वीं १० सि० प्रति बच्चे पर प्रतिरिक्त सहायता मिलती है। विधवा लाभ की भी व्यवस्था है जिसमें पहले बालक के बाद प्रत्येक बच्चे के लिये २ सि० के संतान भत्ते के प्रतिरिक्त ७ सि० का विधवा भत्ता मिलता है। विधवा माताओं का भत्ता भी मिलता है जिसकी दर ५ सि० प्रति सप्ताह है। विधवा माताओं का भत्ता भी मिलता है जिसकी दर ५ सि० प्रति सप्ताह है। ५० सि० प्रति सप्ताह के हिसाब से विधवा भत्ता भी है परन्तु यह लाभ ५० साल से अधिक आयु वाली विधवाओं को ही कुछ शर्तों को पूरा करने पर मिलता है। २७ सि० ६ वें की धर्मरक्षण सहायता उस व्यक्ति को दी जाती है जिसके परिवार में एक ऐसा बच्चा है जिसके बीमारपन माता-पिता मर गये हों। प्रसवकाल-प्राप्त भत्ता ६५ वर्ष से ऊपर आयु वाले पुरुषों और ६ वर्ष से ऊपर आयु वाली स्त्रियों को उस दर पर दी जाती है जबकि वह निश्चित कार्य में प्रसवकाल प्रारंभ करते हैं और देय दरानों में यह आयु ७० वर्ष (पुरुषों के हेतु) और ६५ वर्ष (स्त्रियों के हेतु) है। इसके लिये निरिच्छत दर ५० सि० प्रति सप्ताह है। किसी बचक व्यक्ति की मृत्यु पर प्रतिवर्ष संस्कार के लिये २५ वीं १ सि० और बच्चों एवं बूढ़ों की मृत्यु पर इस से कुछ कम अनुदान दिया जाता है।

औद्योगिक क्षति बीमा योजना (Industrial Injuries Insurance Scheme) — इस योजना के पुनर्गठन १९४८ में श्रमिकों की दायित्व योजना का स्वरूप लिया। इसमें सम्बन्धित धर्मानियम १९४६ के सन् १९३७ तक पारित राष्ट्रीय बीमा (औद्योगिक क्षति) धर्मानियम (National Insurance Industrial Injuries

Acts) हैं। रोजगार के काम में हुई दुर्घटनाओं के कारण यदि कर्मचारी कुछ विशेष बीमारियों के मामले पर यह लाभ दिये जाते हैं। प्रति सप्ताह दर बयस्क के लिये ८३ पेंसि० प्रति सप्ताह है। यह लाभ अधिक से अधिक २६ सप्ताह तक दिया जा सकता है। इसके प्रतिरिक्त एक बयस्क आयु के लिये ३० पेंसि० प्रथम बालक के लिये १३ पेंसि० तथा दो बालकों के लिये पारिवारिक भत्तों के प्रतिरिक्त ७ पेंसि० प्रति बालक और दिया जाता है। असमयता लाभ की दर १० प्रतिशत असमयता के लिये ८३ पेंसि० से लेकर २० प्रतिशत असमयता के लिये १७ पेंसि० प्रति सप्ताह तक है। २०% से कम असमयता के लिये २०० पौंड तक की सहायता दी जाती है। असमयता की सीमा एक बिजनेस बोर्ड निर्दिष्ट करता है। यदि दुर्घटना कर्मचारी बीमारी के फलस्वरूप किसी बीमाकृत व्यक्ति की मृत्यु हो जाय तो मृत्यु लाभ प्राप्ति को दिया जाता है और लाभ की राशि मृतक व्यक्ति और उसके प्रायित्तों के बीच जो सम्बन्ध रहा हो, उसके आधार पर निर्दिष्ट होता है। परन्तु विधवाओं और बालकों को सहायता उसी प्रकार मिलती रहती है।

राष्ट्रीय सहायता (National Assistance) - सन् १९४८ के राष्ट्रीय सहायता अधिनियम ने अन्तर्गत राज्य द्वारा समीक्ष्य व्यक्तियों के लिये वित्त सहायता प्रदान करने के लिये एक संघटित व्यवस्था है। यह सुनिश्चित उन सेवाओं के स्थान पर है जो भूतकाल में राज्य और स्वामीय प्राधिकारियों द्वारा प्रदान की जाती थी। सहायता कर्मचारी मते, उन व्यक्तियों की आवश्यकता की पूर्ति करने के लिये सरकार द्वारा दिये जाते हैं जो कि अपने स्वयं की आयम रखने में असमर्थ हैं एवं जो सामाजिक सुरक्षा सेवाओं के अन्तर्गत नहीं आते। इस सहायता का उद्देश्य यह भी है कि बीमा लाभ यदि प्राप्त हो तो उसकी कमी को पूरा करें। कुछ कर्मचारी सेवाओं की भी व्यवस्था है जैसे बुढ़े और कमजोर व्यक्तियों के लिये गृह उपलब्ध करना बेधर व्यक्तियों के लिये धारण और अपाहिणों के लिये विशेष कर्मचारी सेवाओं की व्यवस्था।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा (National Health Service) - इसके अन्तर्गत ब्रिटेन के सभी नागरिकों के लिये विविध व्यवस्था की जाती है। चाहे वह राष्ट्रीय बीमा के लिये धनदान देते हों अथवा न देते हों। यह व्यवस्था हस्तगत और अन्य रूपों में भी होती है। लागू का अधिकतर भार सरकारी कोष पर ही पड़ता है। लागू तो केवल पाठी सी सेवाओं के लिये ही जाती है, जैसे १ पेंसि० प्रति मनुष्य बनाने के हेतु १ पौंड तक दन्त चिकित्सा के हेतु और दंत बनाने का धारा गर्भ और बच्चों की बीमारियों का कुछ भाग ही कर्मचारी दिया जाता है। इन लागू से कुछ विशेष परिस्थितियों में कुछ भी मिल जाती है। इन विषय में सम्बन्धित अधिनियम है वह सन् १९४४, १९४८, १९५१ और १९५२ के 'राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा अधिनियम' (National Health Service Acts) हैं।

प्रथम तीन व्यवस्थाओं के प्रशासन के लिये एक पेंशन और राष्ट्रीय बीमा विभाग (Ministry of Pensions and National Insurance) स्थापित किया

माथों की दरों में समय-समय पर वृद्धि की गई है। १९३६ में जो दरें थीं वह निम्नलिखित हैं —

बीमारी लाभ की निश्चित साप्ताहिक दर, बिवाहित स्त्रियों को छोड़कर १८ वर्ष से अधिक आयु वाले स्त्री और पुरुषों के लिये ५० पिस० है। इसके प्रतिरिक्त बचस्क प्राप्त के लिये ३० पिस० प्रथम बालक के लिये १५ पिस० एवं प्रतिरिक्त प्रत्येक बालक के लिये ७५ पिस० और दिया जाता है। बिवाहिता स्त्री के लिये साप्ताहिक दर ३४ पिस० है परन्तु यदि उसका अपने पति से सम्बन्ध विच्छेद हो गया हो अथवा उसका पति निवृत्त हो तो उसे ३० पिस० प्रति सप्ताह मिलता है। बेरोजगारी लाभ की दरें बीमारी लाभ के समान हैं। प्रारम्भ में तो बेरोजगारी लाभ ३ सप्ताह के लिये दिया जाता है परन्तु बाद में यह अधिक से अधिक १६ मास तक दिया जा सकता है। मातृत्व हित लाभ की दर ३० पिस० प्रति सप्ताह है जो प्रसवकाल की अनुमानित तिथि से ११ सप्ताह पहिले से प्रारम्भ कर दिया जाता है और उन महिषा स्त्रियों को जो प्रसवकाल की पूर्व पूरी करती हैं, १८ सप्ताह तक दिया जाता है। ग्रहणियों को प्रसवकाल में १२ पौंड १० पिस० का मातृत्व-हित अनुदान दिया जाता है। इसके प्रतिरिक्त ५ पौंड का और अनुदान दिया जाता है यदि स्त्री प्रसवकाल में पर पर हो और राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के अन्तर्गत निःशुल्क सेवा का प्रयोग न करती हो। पुद्गल बच्चों के जन्म पर यदि बच्चा जन्म के १२ घंटे बाद तक जीवित रहता है तो १२ पौंड १० पिस० प्रति बच्चे पर प्रतिरिक्त सहायता मिलती है। बिचवा लाभ की भी व्यवस्था है, जिसमें पहिले बालक के बाद अन्य प्रत्येक बच्चे के लिये २० पिस० के अंतराल भत्ते के प्रतिरिक्त ७ पिस० का बिचवा भत्ता मिलता है। बिचवा माताओं का भत्ता भी मिलता है जिसकी दर ३ पिस० प्रति सप्ताह है। ३० पिस० प्रति सप्ताह के हिसाब से बिचवा पेंशन भी है परन्तु यह लाभ ३० छास से अधिक आयु वाली बिचवाओं की ही कुछ शर्तों को पूरा करने पर मिलता है। २० पिस० १ पें० की अनिश्चित सहायता उक्त व्यक्ति को दी जाती है जिसके परिवार में एक ऐसा बच्चा हो जिसने बीवाहित माता-पिता मर बने हों। अकाल-मृत्यु पेंशन १३ वर्ष से ऊपर आयु वाले पुरुषों और १० वर्ष से ऊपर आयु वाली स्त्रियों को उक्त रकम में दी जाती है जबकि वह नियमित कार्य में अकाल प्रहण करते हैं और वेप बहालों में यह आयु ७ वर्ष (पुद्गलों के हेतु) और १३ वर्ष (स्त्रियों के हेतु) है। इनके लिये निश्चित दर ३० पिस० प्रति सप्ताह है। किसी बचस्क व्यक्ति की मृत्यु पर अस्थायी अन्वार के लिये २५ पौंड और बच्चों एवं बूढ़ों की मृत्यु पर इस से कुछ कम अनुदान दिया जाता है।

औद्योगिक क्षति बीमा योजना (Industrial Injuries Insurance Scheme)—इस योजना ने जुलाई मन् १९४८ में स्त्रियों की क्षतिपूर्ति योजना का स्थापन किया। इनसे सम्बन्धित अधिनियम १९४९ है मन् १९३७ तक पारित राष्ट्रीय बीमा (औद्योगिक क्षति) अधिनियम (National Insurance Industrial Injuries

Acts) हैं। रोजगार के काम में हुई दुर्घटनाओं के कारण लति घपबा कुछ विधेय बीमारियों के सवने पर यह काम विधे जाठे हैं। लति लाम दर बपस्क के लिये ८३ सि० प्रति सप्ताह है। यह लाम अधिक से अधिक २६ सप्ताह तक दिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त एक बपस्क प्राधित के लिये ३० सि० प्रथम बालक के लिये १३ सि० तथा सेप बालकों के लिये पारिवारिक भत्तों के अतिरिक्त ७ सि० प्रति बालक और दिया जाता है। असमर्थता लाम की दर १ प्रतिघण्ट असमर्थता के लिये ८३ सि० से लेकर २० प्रतिघण्ट असमर्थता के लिये १७ सि० प्रति सप्ताह तक है। २०% से कम असमर्थता के लिये २८ पौड तक की सहायता दी जाती है। असमर्थता की सीमा एक विद्विस्ता बोड निश्चित करता है। यदि दुर्घटना घपबा बीमारी के फल स्वरूप किसी बीमाहृत ब्यक्ति की मृत्यु हो जाय तो मृत्यु लाम प्राधितों को दिया जाता है और लाम की राशि मृतक ब्यक्ति और उसके प्राधितों के बीच जो सम्बन्ध रहा हो उसके आधार पर निश्चित होता है। परन्तु विधेयों और बालकों को सहायता लसी प्रकार मिलती रहती है।

राष्ट्रीय सहायता (National Assistance) - सन् १९४८ के राष्ट्रीय सहायता अधिनियम के अन्तर्गत राज्य द्वारा अमीष्ट ब्यक्तियों के लिये विधे सहायता प्रदान करने के लिये एक संगठित ब्यवस्था है। यह मुबिबा उन सेवाओं के स्थान पर है जो मृतकाल में राज्य और स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा प्रदान की जाती थी। सहायता घपबा भत्ते उन ब्यक्तियों की प्रावश्यकता की पूर्ति करने के लिये सरकार द्वारा दिये जाठे हैं जो कि अपने स्तर की ब्यायम रत्ने में असमर्थ हैं एवं जो सामाजिक सुरक्षा सेवाओं के अन्तर्गत नहीं जाठे। इस सहायता का उद्देश्य यह भी है कि बीमा लाम यदि अधप्राप्त हो तो उसकी बनी को पूरा करें। कुछ ब्यवस्था सेवाओं की भी ब्यवस्था है जैसे बूढ़े और कमजोर ब्यक्तियों के लिये पृथक् उपभोग करना बेघर ब्यक्तियों के लिये प्राधय और अर्पाहृतों के लिये विधेय ब्यवस्था सेवाओं की ब्यवस्था।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा (National Health Service) - इसके अन्तर्गत ब्रिटेन के सभी नागरिकों के लिये बिबिणा ब्यवस्था की जाती है जाठे बहु राष्ट्रीय बीमा के लिये अंगदान देते हैं घपबा न दते हैं। यह ब्यवस्था हस्पताल और अन्य स्थानों में भी होती है। लाम का अधिबतर भार सरकारों कीण पर ही पड़ता है। लाम तो बेबल पोड़ी सी सेवाओं के लिये भी जाती है, जैसे १ सि० प्रति मुत्ता बनाने के हेतु, १ पौड तक दन्त बिबिणा का हेतु और दाँत बनाने का प्रापा लक्ष और बच्चों की बीमरों का कुछ भाग ही बमुन किया जाता है। इस लाल में कुछ विधेय परिस्थितियों में पूरा भी मिल जाती है। इस विषय से सम्बन्धित जो अधिनियम हैं वह सन् १९४६, १९४९, १९५१ और १९५२ के 'राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा अधिनियम' (National Health Service Acts) हैं।

प्रथम तीन ब्यवस्थाओं के प्रशासन के लिये एक वेजन्त और राष्ट्रीय बीमा मंत्रालय (Ministry of Pensions and National Insurance) स्थापित किया

या है जिसका मुख्य कार्यालय लन्दन में है। इसमें १० कर्मचारी कार्य करते हैं। एक केन्द्रीय रिकार्ड कार्यालय भी जो इंग्लैंड के प्रत्येक नागरिक की रिकार्ड खास खता है स्कुकीसिस में है। इसमें सगभम ७० कर्मचारी हैं। क्षेत्रीय कार्यालयों एवं स्थानीय कार्यालयों का भी निर्माण हुआ है। राष्ट्रीय बीमा योजना के प्रयासन के लिये कुल कर्मचारियों की संख्या १३,० घोर ४०,००० के बीच में है। ये कर्मचारी बहुत कार्य बल भी है। राष्ट्रीय सहायता का प्रदासन राष्ट्रीय सहायता बोर्ड द्वारा होता है घोर राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा का प्रदासन स्वास्थ्य मंत्री द्वारा होता है।

सामाजिक कल्याण की अन्य व्यवस्था —

इस प्रकार स्पष्ट है कि ब्रिटेन में सामाजिक सुरक्षा की एक व्यापक योजना विद्यमान है। जो समाज संघर्ष को दूर करने की जा रही है। उनको भी हमें उन कई प्रकार की सेवाओं की पृष्ठभूमि को दृष्टि में रखते हुए देखना चाहिये जो सेवाओं संघर्ष के लिये एक समान उपकरण है। ऐसी संघर्ष निम्नलिखित हैं शिक्षा स्कूल में निःशुल्क भोजन स्थानीय प्राधिकारियों की भाषास योजनाएं, असमर्थ व्यक्तियों एवं पनाथों की देखभाल माताओं एवं पिताओं के लिये निःशुल्क भूख प्रसूतिका एवं बाल कल्याण केन्द्र आदि। सन् १९४८ के बालक अधिनियम के अनुसार स्थानीय प्राधिकारियों का कर्तव्य है कि वह ऐसे सब बालकों की देखभाल करें जिनकी मातु १७ वर्ष से कम हो घोर जिनके माता-पिता व अभिरक्षक भी न हों या जो परित्रयक हों या जिनके माता पिता उनकी व्यवस्था करने में असमर्थ हों। इसके परित्रयक बहुत से ऐन्ड्रिज संघर्ष भी जनता के हेतु कल्याण-कार्य कर रहे हैं। सामाजिक सेवा योजनाओं में जनका महत्वपूर्ण योग रहा है। ब्रिटेन में ऐन्ड्रिज बाल समितियों एवं संस्थाओं की संख्या हजारों में है घोर उनमें बहुत ही संस्थाओं ने धारण में मिल कुल कर घोर उसी कार्य में रत स्थानीय प्राधिकारियों से मिलकर अपने कार्य को संघर्ष किया है। इस प्रकार की समितियों के नाम ये हैं—राष्ट्रीय सामाजिक सेवा कौंसिल (National Council of Social Service), परिवार कल्याण परिषद् (Family Welfare Association) राष्ट्रीय बृद्ध कल्याण समिति, राष्ट्रीय युवक ऐन्ड्रिज संघ वा स्थायी सम्मेलन (Standing Conference of National Voluntary Youth Organization), विद्यु बहूँ की राष्ट्रीय संघर्ष कौंसिल (National Council of Association of Children's Home), राष्ट्रीय मातृत्व हित एवं विद्यु कल्याण कौंसिल धर्पणों की देखभाल के लिय केन्द्रीय कौंसिल घोर मातृत्व हित विद्यु घोर असमर्थ व्यक्तियों के कल्याण के लिय धन संस्थाएं। इसके परित्रयक ब्रिटिश रैडक्रॉस मोनायटी भी असमर्थ दुर्बल एवं बीमार व्यक्तियों के लिये धनस्य कार्य कर रही है। महायुद्ध के बाद एक नई ऐन्ड्रिज सेवा विबाह पथ प्रदर्शक कौंसिल (Marriage Guidance Council) के नाम से विबाह एवं पारिवारिक जीवन की शिक्षा का प्रचार करने के लिये बनी है। इसके

प्रतिरिक्त ब्रिटेन में बहुत से समाज सेवक संघ भी हैं जो कि ब्रिटिश समाज सेवक संघ (British Federation of Social Workers) से सम्बन्धित हैं।

उपरोक्त बातों से यह सिद्ध होता है कि इस के प्रतिरिक्त चापूर ब्रिटेन ही ऐसा देश है जहाँ कि राज्य ने जनता को सामाजिक सुरक्षा देने का पूर्ण दायित्व लिया है और जहाँ राज्य द्वारा अधिकतम सीमा तक सामाजिक सेवाएँ उपलब्ध की जाती हैं।

सोवियत इस में सामाजिक बीमा प्रणाली —

(Social Insurance System in Soviet Russia)

यहाँ सोवियत इस की सामाजिक बीमा प्रणाली का विवरण देना भी रचिबर होगा। सत्ताकण्ड होने के कुछ दिन पश्चात् १४ नवम्बर सन् १९१७ को सोवियत सरकार ने सामाजिक बीमे के सिधे प्रथम बार आदेश निकाला। इसका उद्देश्य यह था कि 'वार' के समय में जो अपर्याप्त सामाजिक बीमा प्रणाली थी उसमें क्या सम्भव उपग्रति की जाय। इसमें निम्नलिखित बातों की व्यवस्था थी— (१) नगरों के अधिकारियों एवं कर्मचारियों के सिधे बीमा योजना का विस्तार करना (२) बेरोजगारी घटाने और किसी कारणवश घायल शक्ति की हानि को पूरा करना (३) उद्योग द्वारा ही बीमा संग्रहण का व्यवधान (४) असमर्थता से पूर्ण मजदूरी देने की व्यवस्था (५) बीमाहृत व्यक्तियों द्वारा ही बीमा व्यवस्था का स्वयं प्रशासन करना।

सोवियत शासन के आरम्भ की कठिनाइयों के कारण सामाजिक बीमा योजना के मुक्त सिद्धांत बहुत सन् १९२२ में ही नई आर्थिक नीति (New Economic Policy) के अन्तर्गत कार्यन्वित किये जा सक। एक अधिक महिता भी घोषित की गयी जिसके अन्तर्गत निम्न बुद्धिवाधों को प्रदान करने की व्यवस्था की गिरीया सम्बन्धी सहायता प्रस्थापी असमर्थता के सिधे काम कुछ प्रतिरिक्त कामों का दिया जाता जैसे बच्चों के सिधे मोहन निराधितों की सहायता मृत्यु संस्कार तथा और असमर्थता बुढ़ापस्था एवं बीबिका कमाले जाने की मृत्यु होने पर देयने। इस में एक ऐसा नियम भी बना दिया गया है जो दूसरे देशों की सामाजिक बीमा योजनाधों में नहीं पाया जाता। इस नियम के अनुसार बीमा प्रीमियम केवल कार्य कर लगाने कामों के द्वारा ही देने की व्यवस्था है। यह प्रीमियम उद्योग के मजदूरी सिध की एक निरिक्त प्रणालि के अन्तर्गत रशि के अर में कार्यकर अधिक कर्षों की बीमा निधि में जमा कर दिया जाता है। इसमें बीमाहृत कर्मचारियों और अधिकारियों की मजदूरी में बार्फ कमी नहीं होती। गिरीया सम्बन्धी सहायता जो कि जिनमें से दो बातों है सामाजिक बीमा योजना के अन्तर्गत नहीं आती। परन्तु यह सामाजिक सेवाधों एवं अन्य बुद्धिधों में सम्बन्धित है। इस में सामाजिक बीमा प्रणाली केवल मजदूरी देना अधिकारियों के सिधे ही है और इस प्रकार हनि अधिकारियों को छोड़ दिया गया है। इसी रशा इनके सामूहिक अग्रधों द्वारा ही जाती है।

धम में सामाजिक बीमे के मुख्य सिद्धान्त निम्नलिखित हैं—(१) सन् १९३३ से इसका प्रशासन धमिक संघों द्वारा होता है और इसका संगठन निम्न धीरे धीरे कार्य सब धमिक संघों के हाथ में है। (२) केवल रोजगार पर भये हुए व्यक्तियों का ही सामाजिक बीमा किया जाता है। (३) सामाजिक बीमा वह बीमा है जिसमें बीमा किरा (प्रीमियम) बीमाहृत व्यक्तियों द्वारा नहीं बरत कार्य पर लगाने वालों के द्वारा दिया जाता है। यह प्रीमियम उद्योग के मजदूरी बिना के एक प्रतिशत मान के रूप में इकमुस्त दिया जाता है। वही एक कि यदि कार्य पर लगाने वालों के द्वारा प्रीमियम किसी कारणवश न दिया जा सका हो तो भी व्यक्तिगत रूप से धमिक का बीमा बना रहता है। (४) बीमा नाम का पूरा नाम उठाने के लिये धमिक संघ की सहस्यता एक घण्टे है और जो धमिक संघ क सस्य नहीं होते उनको प्राचा ही नाम मिलता है। (५) सामाजिक बीमा धमिकों को स्थायी बनाने और उत्पादन में वृद्धि करने की सरकारी मायोजना से सम्बन्धित है। धमिकताम मुपदान उनको मिलता है जिन्होंने एक ही उद्योग में धमिक से धमिक समय तक कार्य किया हो। रोजगार से बर्हास्त किये गये व्यक्तियों को धम सामाजिक सुरक्षा उपसम्भ है। (६) सन् १९३ में जब प्रथम पंचवर्षीय मायोजना के अन्तर्गत धम शक्ति की मान के बढ़ने पर बेरोजगारी ममाण्ड हा गई तो बेरोजगारी बीमा को भी समाप्त कर दिया गया।

धम धम में सामाजिक बीमे की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं— (क) प्रस्थापी रूप से अशक्त धमिकों की सहायता (ख) स्थायी धममर्षता और वृद्धावस्था में पेंशन की व्यवस्था।

प्रस्थापी रूप से अशक्त धमिकों को बिना किसी घर्ष के सहायता मिलती है और यदि यह अशक्तता रोजगार सम्बन्धित बीमारी अथवा शक्ति के कारण हुई हो तो धीरत बेतन के १ % तक सहायता मिलती है। धम्य बर्धार्थी में सहायता सेवा धमिक के प्राचार पर मिलती है जैसे ६ वर्ष धमना धमिक समय कार्य करने के पश्चात् धीरत बेतन का १०% भाग ३ से ६ वर्ष कार्य करने पर ८% २ से ३ वर्ष कार्य करने पर ६% और २ धम से कम समय कार्य करने पर २०% मान मिलता है। जो धमिक संघ के सस्य नहीं हैं उनको प्राचा भाग उपसम्भ होता है। ऐसे धमिक जो या तो कार्य से बरहास्त कर दिये गये हैं अथवा जिन्होंने अपनी शक्ति से कार्य छोड़ दिया है, प्रस्थापी धममर्षता नाम के धमिकारी लमी हो सकते हैं जबकि गये रोजगार में वह कम से कम ६ मास तक कार्य कर चुके हों।

स्थापी धममर्षता एवं वृद्धावस्था में पेंशन केवल धम प्रदान की जाती है जब यह धममर्षता रोजगार से ही सम्बन्धित बीमारी अथवा शक्ति द्वारा हुई हो और धम्य परिस्थितियों में यह पेंशन धामु एवं सेवा धमिक पर निर्भर होती है। पेंशन की राशि इस बात पर निर्भर करती है कि धमिक को शक्ति के मलय निरतन बेतन मिलता या। इस राशि की प्रतिशत मात्रा धममर्षता की मीमा के अनुसार निर्धारित होती है। धमिकताम पेंशन की राशि धमिक मजदूरी का ६६ प्रतिशत होती है।

राम में सामाजिक बीमा प्रणाली के साथ-साथ ग्राम सामाजिक सेवाओं की भी व्यवस्था है। इस व्यवस्था में वे सब प्रयत्न या जाते हैं जो जनसाधारण की बीमारी के दिनों में जीवन की सुविधाएँ उपलब्ध करने के लिये किये जाते हैं। यह निम्नलिखित है—

(१) 'जनता स्वास्थ्य व्यवस्था' के प्रस्तुत कार्य करने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए चिकित्सालयों में नि-शुल्क चिकित्सा। (२) एक ही उद्योग में काम से काम ११ माह तक निरन्तर कार्य करने के पश्चात् मजदूर को २ मण्डाह का धनकाया। (३) विधाम-नुहों और सनीटोरियम की व्यवस्था यह प्राथमिक रूप से घमिक संघों द्वारा और प्राथमिक रूप से अपने धर्मिकों के लिये प्राथमिक स्तरों द्वारा जमाये जाते हैं। इनके प्रयोग के लिए सेवा अवधि की बात भी है और उनके लिए मजदूरी के अनुसार सम्भार भी लगाया जाता है। (४) नगरों और उपनगरों में विधाम और सांस्कृतिक कार्यों के लिये पार्कों की व्यवस्था जिनमें रविवार अवकाश घण्टा मार्गजमिक छुट्टियों में सोय जाया करते हैं। (५) प्रारम्भिक शिक्षा के लिए नि-शुल्क सुविधाओं की उपलब्धि। (६) गर्भवती माताओं को और प्रसवकाल के तुरन्त बाद ही महिला धर्मिकों को मातृत्व-हित लाभ देने की व्यवस्था है जो कानूनी तौर पर कार्य पर लगाने वालों के द्वारा की जाती है।

माताओं का कस्मात् एवं उनकी रक्षा राज्य का सर्वप्रथम कार्य माना जाता है। कुछ धर्मिक अधिनियम गर्भवती माताओं के लिए बनाये गये हैं। उनके अनुसार गर्भवती माताओं को काम पर लाने का प्रावधान होता है। किसी महिला को गर्भवती होने के कारण कार्य न देने पर ६ मास का कायबन्ध अवकाश १००० इकत का दण्ड दिया जा सकता है। ऐसे ही अपराध को दोहराने पर दो वर्ष के कायबन्ध का दण्ड मिलता है। गर्भवती माता को अपनी उसी मजदूरी मिलने का भी प्रावधान होता है जो उसको गर्भवती होने से पूर्व मिलती थी और इस कारण मजदूरी में कटौती करने पर बही दण्ड दिया जाता है जो मीकरी न देने पर दिया जाता है। धर्मिकी में उसको बेतन में कटौती किये बिना हम्मा कार्य करने को दिया जाता है और धर्म के चार मास पूरे होने के पश्चात् गर्भवती स्त्री को समथोपरि (Overtime) कार्य करना बन्धित है। गर्भवती स्त्री को प्रसव के पूर्व ३२ दिन की छुट्टी एवं राज्य से अनुदान प्राप्त करने का परिचालन है। पहले कानून के अनुसार यह अनुपस्थिति धनकाया प्रसव के बाद २० दिन तक चलता था। परन्तु बुलाई सन् १९४४ में यह धनकाया बढ़ाकर ४२ दिन कर दी गई है। यह धनकाया पूरे बेतन सहित मिलता है। धमापरायण प्रसव पर इन छुट्टी की कुल धनकाया ६१ दिन तक बढ़ सकती है। कुछ काम में गर्भवती माताओं के लिए रजान की पूर्ण सुविधाएँ उपलब्ध थी। दुर्घटनों और रोगों में उनके लिये विशेष स्थानों की व्यवस्था होती है और माया के समय उनको मादर में लाकर प्रतीक्षा किये बिना ही स्थान दिया जाता है। समस्त देण में धर्मिकों के बच्चों की चिकित्सा का

ध्यान रखने वाले हवाओं केन्द्र हैं। कैंसिडियों में बच्चों को दूध पिलाने वाली माताओं के लिये पूरक कर्मी की और विशेष "रबी स्वास्थ्य विज्ञान" कर्मी की व्यवस्था है। प्रसव कास के परभाव छुटी समाप्त होने पर स्त्रियों को विशेष कार्य की सुविधाएँ दी जाती हैं। कार्य-काल में बच्चों को दूध पिलाने के लिए उन्हें अतिरिक्त अवकाश दिया जाता है। यदि दो बच्चों से कम आयु का बालक बीमार नई तो उसकी माता को विशेष छुटी प्रदान की जाती है। माता को अपने प्रथम बालक के लिये अस्वादि बनाने के लिए लक्ष्य प्रदा भी दिया जाता है।

रुस में अधिवाहित माताओं की मसाली एवं उनके बच्चों की रक्षा के लिये एक विशेष व्यवस्था है। अपने बच्चे का पालन-पोषण करने के लिए उन्हें राज्य द्वारा विशेष भत्ता मिलता है और माताओं और बच्चों की रक्षा करने की उपरोक्त सभी सुविधाएँ अधिवाहित माताओं को भी उपलब्ध होती हैं। सोवियत परिस्थितियों के अन्तर्गत एक अधिवाहित माता देश के एक अधिकांश से परिपूर्ण नागरिक है और सोवियत कानून उसका अपमान करने बाम और उसके मानुस का अपमान करने बामे को दण्ड देता है। रूस में अधिक बालकों वाली माताओं को पारितोषिक दिये जाते हैं।

समुस्त राष्ट्र अमरीका में सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था —

अमरीका में सर्वप्रथम सामाजिक सुरक्षा इस रूप में दी जाती थी कि जो भी व्यक्ति कृषि कार्य करना चाहता या उसे सरकार द्वारा १९० एकड़ भूमि तक नि-शुल्क मिल जाती थी। अमेरिका प्राकृतिक सौधनों में बहुत धनवान है। देश की धर्म व्यवस्था सब विकसित ही होती चली है। वहाँ पूर्ण रोजगार भी है और मजदूरी दर भी ऊँची है। अमरीका एक धनवान देश है। वहाँ प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति प्राय २२२३ डालर है। इसलिये प्रत्येक अमेरिकन कुछ बचत करता है, अपना जीवन बीमा करवाता है और उसके पास पनास मोटर और अन्य व्यक्तिगत सम्पत्ति होती है। उसका न केवल जीवन स्तर ही ऊँचा है बल्कि धनवान होने के कारण उसे स्वतः ही सुरक्षा मिल जाती है। परन्तु फिर भी एक ऐसे देश में जहाँ औद्योगीकरण की सीमा बहुत अधिक है व्यक्तिगत प्रयत्नों से सभी सामाजिक संकटों में पूर्ण रूप से सुरक्षा नहीं मिल जाती। इसलिये सरकार ने भी सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था के लिए कुछ पन उठाये हैं। परन्तु यह सुरक्षा कबत एक आचारधिसा का ही कार्य करती है और अपने प्रयत्नों तथा अपने माभिकों की सहायता से प्रत्येक व्यक्ति उस आचार धिसा पर अपनी सुरक्षा की विलुप्त रूप से व्यवस्था करता है।

अमरीका में सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत सभी नागरिक प्राप्त करते हैं। राष्ट्रीय स्तर पर ता इस व्यवस्था में जो कार्य कम हैं वह बुढ़ाकसा उत्तरजीवी और अमर्यता बीमे से सम्बन्धित हैं। इनके अतिरिक्त प्रत्येक राज्य (State) द्वारा अधिक सनिपूति तथा रोजगारी बीम की व्यवस्था की जाती है। सामाजिक बीमे ने कार्य कम से पूरक रूप में सीधी सरकार द्वारा राज्यों को इस हेतु अनुदान

दिया जाता है कि वे अभीष्ट व्यक्तियों के लिये बिकल्पित सुविधाओं तथा अन्य सेवाओं के लिये वित्तीय सहायता प्रदान कर सकें। इनके प्रतिरिक्त कुछ व्यावसायिक पुनर्वास की सेवाएँ भी प्रदान की जाती हैं तथा बच्चों व माताओं के लिये स्वास्थ्य और कल्याण सेवाओं के सार्वजनिक कार्य क्रम भी हैं। इनके प्रतिरिक्त बहुत सी गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा भी सामाजिक सुरक्षा के कार्य क्रम चलाये जाते हैं।

वृद्धावस्था धनकाया लाभ (Old Age Retirement Benefits) भविकों को ६५ वर्ष की आयु पर धनकाया ग्रहण करने पर प्रदान किये जाते हैं और यदि ६२ वर्ष की आयु पर धनकाया ग्रहण कर लिया जाता है तो लाभ कम दर पर दिया जाता है। कुछ प्राधितों को भी यह लाभ दिये जाते हैं जदाहरणतया यदि पत्नी या पति की आयु ६२ वर्ष से अधिक हो या १० वय से कम आयु के बच्चे हों, या १० वर्ष की आयु से पूर्व कोई धनमर्षता हा गई हो या पत्नी किसी बच्चे की देखरेख करती हो।

उत्तरजीवी लाभ (Survivors Benefits) एक बीमावृत्त भविक की मृत्यु पर प्राधितों को दिये जाते हैं। मृत्यु होने पर इकमुक्त राशि भी दी जाती है।

धनमर्षता लाभ (Disability Benefits) उन भविकों को दिया जाता है जो प्राधिकृत वा पूर्ण रूप से धनमर्ष हो गये हों और उनके बंधु प्राधितों को लाभ दिया जाता है जिनका उत्प्रेष्य वृद्धावस्था लाभ के धनमर्षत किया गया है।

यह लाभ धनमर्षत धन के धनमर्षत दिये जाते हैं और इन बात पर निर्भर नहीं करते कि धनमर्षत कितना है। उपरोक्त वृद्धावस्था उत्तरजीवी और धनमर्षता लाभ एक ही कार्य क्रम के धनमर्षत प्राधित हैं। उत्तरजीवी लाभ के लिये भविक सपत्न १ १/२ वर्ष की नौकरी के पश्चात् प्राधितारी हो जाता है। परन्तु वृद्धावस्था और धनमर्षता लाभ जाने के लिये नौकरी की प्राधित प्राधिक रखी गई है। यह लाभ उसी समय दिये जाते हैं जब भविक की आय विस्तृत बंद हो गयी हो या बहुत कम हो गई हो। इन लाभों के लिय परिवार के सदस्यों का भी ध्यान रखा जाता है। इन लाभों के लिये वित्तीय व्यवस्था पूर्ण रूप से भविकों और प्राधितों के धनमर्षत द्वारा होती है। जो व्यक्ति स्वयं रोजगार पर सजे हुए हैं और जिनका कोई प्राधित नहीं है उन्हें भी धनमर्षत देना होता है। धनमर्षत धनमर्षत निधियों (Trust Funds) में संविधत किये जाते हैं जिनका प्राधिक प्राधित और धनमर्षत के कुछ प्रतिनिधियों के बनाई गई एक धनमर्षतकार परिष्कृत द्वारा धनमर्षत पर सञ्चाल किया जाता है। धनमर्षत भविकों के पुनर्वास (Rehabilitation) के हेतु भी प्रयत्न किये जाते हैं।

भविक शक्तिपूर्ति के लिये प्रत्येक राज्य द्वारा व्यवस्था की गई है और ऐसे प्राधितों को जो कर्षीय सरकार द्वारा कार्य पर लयाये जाते हैं शक्तिपूर्ति कर्षीय विधान के धनमर्षत दी जाती है। शक्तिपूर्ति उम्र धनमर्षत की जाती है जब भविक को कार्य करते समय कुछ प्राधित पहुँचती है और प्राधित प्राधित पर परिवारों को सहायता दी जाती है। शक्तिपूर्ति विधान प्रत्येक राज्य में विभिन्न विभिन्न हैं। परन्तु सबका उद्देश्य

असमर्थ श्रमिकों को उत्कृष्ट शिक्षण सहायता तथा साप्ताहिक मकड़ी साम देना है जो श्रमिकों की समग्र दुः मजदूरी के बराबर होता है। बातक अति होने पर अन्तिम सरकार के लिए व्यय तथा उत्तर-जीवियों को मकड़ी साम दिया जाता है। अतिपूर्ति की मायत मासिकों द्वारा बहन की जाती है।

बेरोजगारी के लिए एक संघीय राज्य-बेरोजगारी बीमा योजना है जिसकी वित्त व्यवस्था मासिकों द्वारा की जाती है। इति तथा धरेसू श्रमिकों को छोड़कर तथा स्थानीय सार्वजनिक कर्मचारियों को छोड़कर यह योजना सभी श्रमिकों पर लागू होती है। साधारणतया २६ सप्ताह तक बेरोजगारी सहायता दी जाती है जो औसत साप्ताहिक मजदूरी का लगभग १ % होती है। परन्तु प्रत्येक राज्य में अधिकतम राशि भी निर्दिष्ट कर दी गई है।

अस्थायी असमर्थता होने पर भी १३ से २६ सप्ताह तक लाभ प्रदान किये जाते हैं। यह लाभ भी वितनी मजदूरी में हासिल होती है उसकी प्राची राशि के बराबर होते हैं।

असमर्थता में हम सुरक्षा के अतिरिक्त सरकार द्वारा और भी सहायता दी जाती है। उदाहरणतया—बूढ़, अन्ये पूर्णरूप से असमर्थ बेरोजगार और परिवार से पृथक् बच्चों आदि के लिये जो समाज सेवार्थ की जाती है उनमें संघ के राज्य द्वारा वित्तीय सहायता दी जाती है। बच्चों के स्वास्थ्य के कल्याण के लिये भी तथा माताओं के हित के लिये भी अनुदान दिये जाते हैं।

सामाजिक बीमा तथा सरकारी सहायता के अतिरिक्त निजी मासिकों द्वारा भी कई प्रकार की सुरक्षा प्रदान की जाती है जो मासिकों श्रमिकों या सामूहिक छोटेकारों द्वारा निर्धारित की जाती है। इनके अन्तर्गत बीमारी शिक्षण स्वास्थ्य स्वामी असमर्थता पेंशन बेरोजगारी लाभ आदि की सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं। ऐच्छिक रूप से भी कई सामाजिक संस्थाएँ इन प्रकार के लाभ प्रदान कर रही हैं।

इन प्रकार असमर्थता में सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था कई प्रकार से प्रदान की जा रही है परन्तु यह निजी बचत तथा व्यक्तिगत प्रयत्नों में केवल पूरक का कार्य करती है।

घास्ट्रेलिया में सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था —

सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था घास्ट्रेलिया की एक विशेषता है। अष्ट्रेलिया के धारण में सामाजिक सेवार्थों पर होने वाले बहुत से प्रयोगों के कारण उस संसार की सामाजिक प्रयोगशाला (Social Laboratory of the World) का नाम दिया गया था। मन् १९११ के संघीय (Federal) विधान के पूर्व भी स्वास्थ्य विभाग लैबरी कानून श्रमिक अतिपूर्ति लाभ कल्याण आदि सामाजिक कल्याण कार्य करता राज्य का ही उत्तरदायित्व था। संघीय विधान के पश्चात् से कौमनवेल्थ सरकार ने सामाजिक सेवार्थों में अधिक रुचि ली है और सरकार के कल्याण कार्यों को तीव्र के साथ ही बढ़ावा देना शुरू हुआ जो बातक में राष्ट्रीय कहा जा सकता

है। प्रथम संघीय सामाजिक सेवा (Federal Social Service) वृद्धावस्था पेंशन की थी जो सन् १९०९ में प्रारम्भ हुई थी। १९१० में घनमर्षणा पणन व्यवस्था की गई। सन् १९१२ में मातृत्व-हित भत्ता दिया जाता था। उसके पश्चात् बहुत वर्षों तक संघीय सरकार द्वारा बहुत छोटा कार्य किया गया यद्यपि बहुत से राज्यों ने सामाजिक सेवा व्यवस्था को अपनाया। सन् १९१९ में सामाजिक सेवाओं के लिए राज्य के कार्यों में बहुत वृद्धि हुई है। सन् १९४१ में यान हित योजना को भी कार्यान्वित किया गया जिसके पश्चात् सन् १९४० में संघीय पेंशन योजना लागू की गई। सन् १९४३ में एक नवीन प्रकार के मातृत्व हित भत्त का प्रारम्भ हुआ थीं मृत्यु संस्कार महापत्ता को व्यवस्था भी हुई। सन् १९४४ में राजघार और बीमारी साम धर्मियम लागू किया गया। सामाजिक सेवाओं का उत्तरदायित्व संघीय संघ एवं विभिन्न राज्य दोनों पर ही है। परन्तु सामाजिक सेवा योजनाओं के लिए कानून बनाने का अधिकार संघीय संघ के ही है और इस अधिकार को १९४६ के एक लोक मन्त्रालय प्रान्त करने के बाद गम्भीरता भी प्राप्त हो गई है।

घास्ट्रुनिया में मातृत्व हित भत्ते (Maternity Allowances) में तात्पर्य उन भुगतान में लिया जाता है जो सरकार द्वारा माताओं को बच्चे के जन्म में सम्बन्धित व्यय के लिए वित्तीय सहायता के रूप में दिया जाता है। यह भुगतान नि-मुक्त है वह एक विविधता तथा उच्च स्थान व्यवस्था के परिणाम है जो किसी माता को एक मासिक हस्तगत के अनुरोध के बाद मिलाती है और यदि बच्चा प्रारम्भ के बाद में पैदा हुआ है तो यह के लिए २० प्रतिदिन का भत्ता दिया जाता है। मातृत्व हित भत्त के लिए कोई 'जीवित मासिक' नहीं होती। जब कोई और बच्चा न हो तब १५ पौंड का महापत्ता दी जाती है और बच्चों की संख्या में वृद्धि के साथ साथ यह प्रति भी बढ़ती जाती है। पुत्रों या अधिक बच्चों होने पर एक बच्चे में अधिक प्रत्येक बच्चे के लिए ५ पौंड की वित्तीय सहायता दी जाती है। प्रत्येक की सम्मानित निधि में ४ सप्ताह पूर्व प्रायता वह रकम पर ५ पौंड का पत्नी मातृत्व हित भत्ता मिल जाता है।

घास्ट्रुनिया में बालकों के लिए सहायता (Child Endowment) की भी व्यवस्था है। कोई भी व्यक्ति जो १६ वर्ष से कम आयु वाला एक में अधिक बालकों की रकम रख करता है बच्चों के लिए सहायता की मांग कर सकता है। एक बच्चे में अधिक प्रत्येक बच्चे के लिए वह सहायता १० गि० प्रति सप्ताह है। यह भुगतान हर चार सप्ताह के बाद होता है। इसके लिए कोई जीवित मासिक नहीं होती और प्रत्येक व्यक्ति को उभरी जाति के लिए निधि देना भी है। इस लाभ को पाने का अधिकारी है।

बीमारी बीमारी के उपचार में निवृत्त आय में सम्मानित हित होने पर भी लाभ दिए जाते हैं। यह भुगतान १९ व २२ वर्ष के बीच के आयु का भुगतान

घर १६ व ६ वर्ष के बीच की धातु वाली स्त्रियों को उपलब्ध है। बीबिका सावन जाँच भी धाय के बारे में होती है, परन्तु सम्पत्ति के लिए ऐसी कोई जाँच नहीं होती। अधिकतम सहायता एक विवाहित व्यक्ति के लिए २४ सि० प्रति सप्ताह है परन्तु इसके साथ साथ उसे प्रत्येक मासिक स्त्री के लिए २० सि० और एक बच्चे के लिए २ सि० प्रति सप्ताह यानी कुल मिलाकर २० सि० प्रति सप्ताह मिल सकता है। एक अविवाहित व्यक्ति के लिए अधिकतम सहायता २३ सि० प्रति सप्ताह है और २ सि० अतिरिक्त धाय के रूप में दिये जाते हैं। जो व्यक्ति सहायता प्राप्त करने का अधिकारी है और जिसके संरक्षण में यदि १६ वर्ष से नीचे कम धाय का बच्चा है तो उसको उम्र बच्चे के लिये २ सि० प्रति सप्ताह अतिरिक्त लाभ पान का अधिकार है। बीमारी लाभ असमर्थता होने के साथ-साथ बिन से मिल सकता है, यदि लाभ की माँग बीमारी की स्थिति से ६ सप्ताह के अन्दर ही कर दी गई हो। बेरोजगारी लाभ बेरोजगार होने के सातवें दिन लाभ या बचका करने के दिन से जो भी लाभ में हो उस स्थिति से मिलता है और एक एक मिलता है जब तक व्यक्ति कोई भी उचित कार्य करने के लिए योग्य न हुआ करता है।

विधवाओं की पेन्शन भी पार्लियामेंट विभिन्न दरों पर दी जाती है। लाभ के लिए विधवाओं को ४ वर्गों में विभाजित किया गया है। ऐसी विधवा को जो १६ वर्ष से कम धाय वाले एक अथवा अधिक बच्चों की देखभाल करती हो २ पौंड ७ सि० ७ पेंस प्रति सप्ताह पेन्शन मिलती है। ऐसी विधवा को जिसकी धाय ३ वर्ष से अधिक हो और उसका कोई बालक १६ वर्ष से कम धाय का न हो १ पौंड १० सि० प्रति सप्ताह पेन्शन मिलती है। ऐसी विधवा को जिसकी धाय ६ वर्ष से कम हो और उसका कोई बालक १६ वर्ष से कम धाय का न हो परन्तु पति की मृत्यु के २६ सप्ताह से कम समय में हो अथवा की स्थिति में हो २ पौंड २६ सि० प्रति सप्ताह दिया जाता है। ऐसी स्त्री जिसका पति कम से कम ६ मास से अस्पताल में हो और जिसके १६ वर्ष से कम धाय वाला एक अथवा अधिक बालक हों अथवा जिसकी धाय ३ वर्ष से अधिक हो १ पौंड १७ सि० प्रति सप्ताह लाभ की अधिकारिणी होती है। इन प्रकार लाभ हेतु "विधवा" शब्द कबल उम्र स्त्री के लिए ही नहीं आता जिसका पति मर गया हो बल्कि इन शब्द का प्रयोग अमित्यक्त (Deserted) पत्नी उसका प्राप्त नहीं ऐसी स्त्री जिसका पति जैम या हत्यागत में हो और कुछ अन्य प्राधिकृत स्थितियों के लिए भी होता है।

पार्लियामेंट बीबिका सावन जाँच (Means-test) (जो कि धाय एवं सम्पत्ति दोनों के लिए होती है) के परभाव ६३ वर्ष के पुरुषों एवं ६० वर्ष की स्त्रियों के लिए अज्ञानस्था पैमाने की भी व्यवस्था है। अधिकतम दर ११० पौंड १० सि० प्रति वर्ष अथवा २ पौंड २६ सि० प्रति सप्ताह है। उन स्थितियों के लिए, जिसकी धाय १६ वर्ष से अधिक है और जो कार्य करने में स्यादी रूप में असमर्थ हैं अथवा जो स्यादी रूप में अयोग्य हैं, निवृत्ता पैमाने की व्यवस्था है। दरें बड़ी हैं जो कि

बृद्ध व्यक्तियों के लिए वेतन की है। घास्ट्रमिया में ऐसी निधियों के लिए भत्तों की व्यवस्था है जो कि एक निश्चय पत्रधार की परती हैं और भ्रष्ट पति व साथ ही रहनी हैं और यदि उन्हें निवृत्तता लाभ प्रदान वृद्धावस्था पत्रान नहीं मिलती है। एसी स्त्री के लिए बालकों का भत्ता भी स्वीकृत है। १० पौंड का मृत्यु संस्कार अनुदान भी एक ऐसी व्यक्ति का मिल सकता है जिनमें एक बृद्ध एक निवृत्त व्यक्ति का अन्तिम संस्कार भ्रष्टे लक्ष में दिया है।

इस प्रकार घास्ट्रमिया में भी सामाजिक महाभाषा की एक व्यापक योजना लागू है परन्तु अधिकतर लाभ प्राप्त और सम्पत्ति की जीविता साधन जीव होने पर मिलत है। प्रथम देशों में सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था और भारत में उनके लागू होने की सम्भावना —

उपरोक्त कारण से कुछ अन्य देशों की सामाजिक सुरक्षा योजनाओं पर प्रकाश पड़ता है। जब प्रश्न यह उठता है कि भारत को भी इस प्रकार की सामाजिक सेवा योजना का निर्माण करना चाहिए अथवा नहीं। जैसा कि हमने विद्वान् अध्याय में बताया है हमारे देश में एसी योजना निश्चय आवश्यक है परन्तु उमर लागू होने में कुछ विशेष कठिनाइयाँ घाटी हैं जिनको हम संबन्धित धारायोजना व धाराय पर कोई सामाजिक सुरक्षा योजना बनाने के पहले सुझाना होगा। प्रत्येक सामाजिक सुरक्षा योजना की लागत बहुत अधिक होती है और देश की अल्प राष्ट्रीय आय का हानि करने हुए भारत इतना व्यय करने नहीं कर सकता। हम पूछ कि हम और देशों के समान भ्रष्ट देश में अनेक प्रकार के सामाजिक व्यवस्था के लिए कोई योजना लागू करने के लिए पत्र उठाएँ, राष्ट्रीय आय में वृद्धि की जानी चाहिए। देश का बड़ा धाकार, अल्पविक्रम जनसंख्या और जनता की घमिणा का भी ध्यान में रखना होगा। अति निर्माण स्वयं अनुशासन धारण मध्यम एक विस्तृत दृष्टिकोण की अल्प धारणधरणा है और जब तक यह सब न होगा सुधार सम्भव नहीं है।

यह भी विचारणीय है कि सामाजिक सुरक्षा योजनाओं को धार्मिक विचारों की अन्य योजनाओं में वृष्टक रखकर कार्यान्वित नहीं किया जा सकता। इन्फंड में भी सर संबन्धित द्वारा योजना की सम्भवता के लिए यह धारणधरणा सम्भव गया था कि बालकों के भत्ता पूर्ण रोजगार एक एक धारणधरणा स्थापित तथा पहल में ही हानी चाहिए। भारत में भी सम्भवतः दो पूर्ण रोजगार की स्थिति माने का प्रयत्न करना चाहिए एवं व्यक्तियों के स्थापित एक सम्भवतः की योजनाओं की व्यवस्था करना चाहिये और एक अन्य क्षेत्रों में धारणों के विस्तृत करने पर विचार करना चाहिए। फिर भी इनका प्रारम्भ कुछ मामूली व्यक्तियों के लिए किया जा सकता है और जैसा कि बताया जा चुका है भारतीय औद्योगिक धर्मियों के लिए सामाजिक सुरक्षा योजना को लागू करना राष्ट्रीय ही नहीं सम्भव सम्भव भी है। यह प्रयत्न का विषय है कि सरकार ने इस सम्भवतः ध्यान दादिध की सम्भवतः धारण है और भारत व औद्योगिक धर्मियों के धारण और सुरक्षा की दिशा में धारण उपायें लय है और उपायें जा ११ ५ ।

कार्य की दशाएं—कार्य के घण्टे, आदि

(Working Conditions and Hours of Work Etc.)

कार्य की दशाओं की महत्ता —

मनुष्य जिन परिस्थितियों में कार्य करता है उनका उसके स्वास्थ्य कार्य-क्षमता मनोकृति तथा कार्य के गुणों पर विशेष प्रभाव पड़ता है। यह कहा जा सकता है कि वातावरण मनुष्य का निर्माता करता है यदि वातावरण में सुधार कर दिया जाय तो मनुष्य स्वयं ही सुधार जाएगा।^७ प्रत्येक दशाओं में कठिन श्रम करते रहना सम्भव नहीं है। यह सर्वविधित तथ्य है कि पत्र उदास और प्रत्यास्यकर वातावरण की अपेक्षा स्वस्थ उद्यमता और प्रेरणात्मक (Inspiring) वातावरण में मनुष्य अधिक और श्रेष्ठ कार्य कर सकता है। यदि वातावरण बुरा और कोमाहलपूर्ण है तो श्रमिक का ध्यान बँट जाता है। कार्य में एकाग्रता (Concentration) होने आवश्यक है और यह तभी सम्भव है जब बाह्य विषयों से श्रमिकों का ध्यान बँटे। बीमारों के रोग और मशीनों की शिवा तक श्रमिक की मनोकृति पर प्रभाव डालने है।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि सन्तोषप्रद कार्य करने की दशाएं केवल श्रमिकों की कार्यक्षमता को ही प्रभावित नहीं करतीं अपितु उनके चेतन प्रवर्धित और प्रीतिपूर्ण सम्बन्धों पर भी प्रभाव डालती हैं। प्रत्येक श्रमिक की कार्यक्षमता प्रत्येक रूप में उनके स्वास्थ्य तथा उनकी कार्य करने की इच्छा पर निर्भर करती है। यदि कार्य की दशाएं सन्तोषजनक हैं तो श्रमिक के शरीर व मस्तिष्क में स्वास्थ्यप्रद प्रभाव पड़ेगा। श्रमिक प्रसन्न रहेगा और उसकी कार्यक्षमता बढ़ जायेगा तथा वह अधिक होगा। इस प्रकार मानिषों को भी लाभ होगा। इसके विपरीत यदि कार्य करने की दशाएं असन्तोषजनक हैं तो श्रमिक अपने कार्य में कठिन समयके कार्य धीरे-धीरे करेगा और इसके लिए समय व्यतीत करना में कठिन ही जाएगा। सन्तोषजनक कार्य की दशाएं प्रदान कर सकने मजदूरी में वास्तविक मजदूरी के बीच की खाई को बहुत कुछ कम किया जा सकता है। यह पर कार्य का वातावरण स्वस्थ है और मानिषों के श्रमिकों के सम्बन्ध में सुनिश्चिता के लिए प्रबन्ध किया है वहाँ पर श्रमिक कम मजदूरी पर भी कार्य करने को उत्तर हो जाते हैं। इन सब बातों के प्रतिरूप श्रमिकों की प्रवर्धिता का एक मुख्य कारण यह है कि जो श्रमिक पाँच के गुन वातावरण में धावा है उसे कारखानों

^७ Environments create a man and if we improve the environment we improve the man.

एकदम भिन्न धीर समन्वयजनक परिस्थितियों में कार्य करना पड़ता है। यद्यपि वह ठक उठता है और शोभाविहीन अपने गौर वापिस लौट आने का प्रयत्न करता है। समन्वयजनक एवं स्वास्थ्यप्रद कार्य की दशाएँ धमिकों की प्रस्थिरता के इस मुख्य कारण को दूर कर सकती हैं और उनमें यथुसम्पत्ति तथा धमिजावन को भी बहुत सीमा तक कम कर सकती हैं। कार्य का उन्मत्त और स्वच्छ वातावरण यदि प्रधान क्रिया जाता है तब ऐसा वातावरण मात्तिक व मजदूर के बीच भी अथवा सम्बन्ध स्थापित करने में महायत्न होता है। समन्वयजनक वातावरण में धमिकों में यत्न और उदासी भी नहीं आती और वह अपना समय स्वयं के मंगल पर नजर न कस्यारण कार्यों में व्यतीत कर सकता है।

कार्य करने की दशाओं का क्षेत्र —

कार्य करने की दशाओं के अन्तर्गत अनेक विषय आते हैं उदाहरणतः अन्न भक्षण निकास की व्यवस्था पून और गन्दगी तापक्रम मभी संभालन कारखाने के अन्दर उचित स्थान और सुरक्षा की दृष्टि में मशीनों के चारों ओर रोक घाटि तथा अनेक कस्यागजाती सुविधाएँ जैसे कँटीक स्थानदृष्ट हाथ मुह धोने के लिए बिसम चियाँ पीने के पानी की व्यवस्था जनपान गृह कार्य के अन्दर रात्रि कार्य घाटी प्रणाली आदि। उपरोक्त विषयों में से अनेक सुविधाएँ कल्याणकारी सुविधाओं के अन्तर्गत प्रदान की जाती हैं तथा अनेक कारणाना अधिनियम व अन्तर्गत घाटी हैं। परन्तु कानून द्वारा स्तुततम कारखानेघाटी व निर्धारित होने पर भी अन्न भक्षण निकास की व्यवस्था संभालन तापक्रम प्रकाश घाटि घर्षण सामान्य वातावरण इस बात पर निर्भर करता है कि मात्तिक इसका अनुभव कर सें कि घण्टी वातावरण का धमिकों के स्वास्थ्य और कार्यकुशलता के लिए बहुत महत्व है।

कार्य करने की दशाओं के विभिन्न रूप —

अन्न भक्षण निकास की व्यवस्था (Sanitation) एवं स्वच्छता सम्बन्धता समन्वय जनक कार्य की दशाओं का सबसे दुर्य अंग है। इन में तात्पर्य कारखाने के अन्दर सफाई दीवारों पर लगेले परवा कर्त माफ और स्वच्छ घर्षणें चौकावय तथा पैगावपर का उचित प्रबन्ध पानी निशामने के माय मात्तियाँ बूझे बरकट के लिए कनलर व टीकरियों आदि से है।

कारखाने के अन्दर में धूल व गन्दगी (Dust and Dirt) दूर करने का भी उचित प्रबन्ध होना चाहिए। बहुत से कारखानों में निर्माण प्रक्रिया बुद्ध देखी होती है कि बहुत गन्दगी उत्पन्न हो जाती है। गन्दगी और धूल उत्पन्न होने का कारण यह भी है कि कारखानों के अन्दर की मदर्से कभी होती है और यदि उन पर उचित रूप से पानी नहीं छिड़का जाता या कारखाना बिन्दुम मुख्य मदर्क पर होता है तो धूल मत्त घाटी रहती है। मात्तिक की अवधानु भी एक प्रकार की है कि दीप्ति अनु में बड़ी मात्रा में धूल व गन्दगी उत्पन्न हो जाती है। धूलमत्त वातावरण में धमिक टीक प्रकार से नान भी नहीं ले सकते त्रिमने कारण अन्नक बोकारियाँ उत्पन्न हो

जाती है और उनकी धारों पर भी कुप्रभाव पड़ता है। अतः सड़कों तथा मार्गों पर पानी छिड़कने का तथा पक्के फलों और पक्के मार्गों का प्रबन्ध होना चाहिए। इसके प्रतिरुद्ध पूरा और गम्भीर दूर करने के लिए उचित रूप से हवा के धाने जाने और सफाई की व्यवस्था हानी चाहिए।

तापक्रम (Temperature) व नमी (Humidification) का भी कार्य करने की दशाओं में विशेष महत्व है। वष की जलवायु ऐसी है कि शीघ्र ऋतु में विशेष तथा गर्म तापक्रम के कारण शारीरिक कार्य अक्षम हो जाता है। उच्च तापक्रम में कमी करना या उसके प्रभाव को कम करना अत्यन्त सरल है। यद्यपि बहुत से लोग इस बात को नहीं समझते हैं। बिजली के पंखे वृष्टि वायु निकालने के पंखे अथवा की टट्टियाँ और वायु धनुष्मन यंत्र इन दशाओं में सुधार कर सकते हैं।

पर्याप्त संचालन (Ventilation) और हवा के धाने की व्यवस्था एक अन्य आवश्यकता है। यह व्यवस्था सिड़कियों तथा संचालनों द्वारा की जाती है। यह व्यवस्था कुत्रिम उपायों द्वारा भी हो सकती है जैसे मशीनों या पंखों द्वारा हवा को फेंकना। ऐसी व्यवस्था की आवश्यकता अनेक दशाओं में विशेष रूप से होती है, क्योंकि वहाँ कार्य बलवन्त व कम वायु में सम्पन्न होता है। बहुत सारे उद्योगों में धूम तथा हानिकारक गैस उत्पन्न होती है बिनाको तत्काल कारखाने से निकालने के लिए उचित संचालनों का होना आवश्यक है। उचित रूप से संचालन व्यवस्था न होने के वो हानिकारक परिणाम होते हैं वह नमी-अति शून्य है। परन्तु फिर भी भारतीय कारखानों में इस और उचित ध्यान नहीं दिया जाता।

प्रकाश (Lighting) की व्यवस्था भी बहुत आवश्यक है। कार्य करने के स्थानों पर उचित तथा पर्याप्त प्रकाश का प्रबन्ध कर्मचारियों की मेज हट्टि की रखा करता है और उत्पादन में वृद्धि करता है। प्राकृतिक प्रकाश का प्रबन्ध छतों से अथवा सिड़कियों से किया जा सकता है। कुत्रिम प्रकाश का प्रबन्ध बिजली मिट्टी के तेल या रंग की सामग्रियों द्वारा किया जा सकता है। अत्यन्तोपजनक प्राकृतिक प्रकाश प्रायः पुष्पनी अथवा इमारतों अन्य इमारतों की समीपता गम्भी सिड़कियों दीवारों व छतों के कारण होता है। भारत में अनेक कारखाना में इस प्रकार की दशाएं पाई जाती हैं। अगस्तार कुत्रिम प्रकाश का प्रयोग भी अत्यन्त उचित होता है और धारों पर कुप्रभाव डालता है। अत्यन्तोपजनक प्रकाश में कुर्बटनाएं हो जाती हैं और उत्पादन में नमी हो जाती है। कम प्रकाश से गम्भी बढ़ती है क्योंकि बहुत से लोगों को यह दिनाई नहीं देनी है। प्रकाश पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए और कार्य के ठीक स्थान पर उस प्रकाश से परछाई भी न पड़नी चाहिए। इस बात का भी प्रबन्ध होना चाहिए कि कर्मचारियों को धारों पर प्रकाश सीधा न पड़े।

कुर्बटनाओं को रोकने के लिए मशीनों के धारों और रोक लगाना (Fencing) व अगिधों की सुरक्षा के लिए पर्याप्त साधनों (Safety Provisions) का होना आवश्यक है। इन हट्टि के विभिन्न कारखाना अविधियों में उपबन्ध बनाये

गये हैं परन्तु उनको उचित रूप में लागू करना भी आवश्यक है। कारखाने ऐसी ही इमारतों में बनाने चाहिए जिनमें काफी जगह हो जिनमें कि मशीनों के साथ काफी स्थान रहे।

कारखानों के अन्दर पानी के कुछ पानी तथा आना आने के लिए भी उचित स्थान का प्रबन्ध होना आवश्यक है। बाय के घटे भा लम्ब लगी होने चाहिए तथा बीच बीच में अस्पष्टिधम का प्रबन्ध भी होना चाहिए।

सन् १९४८ का कारखाना अधिनियम—बाय की शर्तों के सम्बन्ध में इसके मुख्य उपवाच्य —

यहाँ हम १९४८ के कारखाना अधिनियम (Factories Act of 1948) के उन उपबन्धों की शर्तें करेंगे जिनका मानकों द्वारा अधिनियमों की सुरक्षा एवं स्वास्थ्य के लिए लागू करना आवश्यक है। इस प्रकार की व्यवस्था समय समय पर अनेक कारखाना अधिनियमों द्वारा की गई थी परन्तु अब उनको एक स्थान पर समायोजित कर १९४८ के अधिनियम में व्यापक रूप प्रदान कर दिया गया है।

यहाँ तक स्वच्छता (Cleanliness) का सम्बन्ध है अधिनियम के अनुसार प्रत्येक कारखाना कर्मियों या अन्य कारणों से उत्पन्न दुर्गन्ध से मुक्त रहना चाहिए। म्यूडू, धूपबा जिनकी प्रत्येक मापन द्वारा प्रतिदिन पूर्ण रूप से धोना और कर्मियों की शर्तों की शर्तों में मशीनों की रक्षा-कारण के अरु साफ़ होने चाहिए तथा उनको फेंकने की भी उचित व्यवस्था होनी चाहिए। मशीनों में कम से कम एक दिन प्रत्येक कार्य करने के करने का एक डिसिन्फेन्ट (Disinfectant) पदार्थ द्वारा धुना चाहिए। यदि निर्माण प्रक्रिया के समय धूलें पोता हा जाता है तो कर्मियों की उचित व्यवस्था करनी होगी। अन्दर का दीवारें और कमरों की ऊपर और नीचे की छतें मशीनों माथे धारि सभी पर प्रत्येक पाँच घण्टे में कम से कम एक बार पुनः रोपन या बारनित करनी होगी। प्रत्येक १४ महान में एक बार सफ़ाई करनी चाहिए। यदि रोपन धूपबा बारनित नहीं की जाती तब १४ महानों में एक बार पुनः या सफ़ाई करनी चाहिए।

यहाँ तक बूझ करण और दुष्गन्ध की निवारण (Disposal of Wastes and Effluents) का सम्बन्ध है निर्माण के समय उत्पन्न होने वाली ऐसी कचरों की निवारण के लिए राज्य सरकारों को नियम बनाने का अधिकार दिया गया है। इन नियमों के अनुसार प्रत्येक कारखाने में उचित संवाहन (Ventilation) की व्यवस्था होनी चाहिए और प्रत्येक कमरे में कुछ वायु के जाने जाने के विन्दे ऐसा तापक्रम (Temperature) जिनमें कर्मियों के स्वास्थ्य का हानि न पड़े और वह वायुमय से कार्य कर सकें रहने के लिए भी प्रभावकारक और उचित व्यवस्था होनी चाहिए। दीवारें और छतें इस प्रकार और ऐसे पदार्थों की बनानी चाहिए कि वायुमय जिनका भी सम्बन्ध है कम रखा जा सके। यदि किसी कार्य के लिए अधिक तापक्रम की आवश्यकता पड़ती है तब ऐसी व्यवस्था में जिन प्रक्रिया में अधिक

तापक्रम पँदा होता है, उसे कार्य के कमरे से या किसी अन्य साधन द्वारा पुनः करके यमिकों को बचाना चाहिए। राज्य सरकारों को पर्याप्त संवातन और उचित तापक्रम के स्तरों को निर्धारित करने का अधिकार है और राज्य सरकार किसी भी कारखाने से तापक्रम को कम करने की माँग कर सकती है, जिसके लिए कोई भी साधन अपनाया जा सकता है। अंग्रेजी बीमारों पर सफेदी करना पानी छिड़कना पंख सपाना बाहर की बीमारों कमरों और छिड़कियों पर परदे मटकाना छत को ऊँचा करना या कोई अन्य साधन।

यदि किसी कारखाने में उत्पादन के समय धूल (Dust) धुँपा (Fumes) या अन्य किसी प्रकार की गन्दगी होती है, जिससे यमिकों को हानि पहुँचती है और दुर्गन्ध उत्पन्न होती है, तब कार्य के कमरों में से इसे उत्कृष्ट निकालने और एकत्रित न होने देने की व्यवस्था होनी चाहिए। ताकि दूषित वायु में संघर्ष न ली जाए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हवा फेंकने वाले यन्त्रों का प्रयोग किया जाना चाहिए। हवा बाहर फेंकने वाले यंत्र के इन्जिन का भी धुँसी जगह में लगाना चाहिए और इस प्रकार का कोई इन्जिन किसी भी कमरे में वायु नहीं करना चाहिए, जब तक आप को एकत्रित होने से रोकने के लिए कोई व्यवस्था न कर ली जाय।

उन सभी कारखानों के सम्बन्ध में जहाँ हवा की नमी को दूषित रूप से बढ़ाया जाता है, राज्य सरकारों का यह अधिकार दिया गया है कि वह इस बात के लिए नियम बनाएँ कि नमी (Humidification) का क्या स्तर होगा और हवा की नमी का दूषित रूप से बढ़ाने के डग पर नियन्त्रण रखने और पर्याप्त संवातन और कार्य के कमरों को ठंडा रखने की व्यवस्था होगी। नमी को बढ़ाने के लिए केवल मुठ जल का ही प्रयोग करना होगा।

भीड़भाड़ को रोकने के लिए अधिनियम में यह व्यवस्था की गई है कि उन कारखानों में जो अधिनियम के अन्तर्गत होने के पूर्व न चल रहे थे, काम के प्रत्येक कमरे में प्रत्येक यमिक के लिए कम से कम ३२० घन फीट की जगह (Space) होगी तथा उन कारखानों में जो अधिनियम बनाने के बाद स्थापित हो, कम से कम प्रति यमिक ५०० घन फीट जगह होगी। कारखानों में मुख्य निरीक्षक को यह निर्धारित करने का अधिकार है कि किसी कमरे में यमिक से अधिक कितने यमिक काम कर सकते हैं।

प्रकाश के लिए अधिनियम में यह व्यवस्था है कि कारखाने के प्रत्येक भाग में जहाँ यमिक जाते जाते हैं, प्रकाश जहाँ न काम करता है, दूषित एवं प्राकृतिक प्रकाश दोनों ही प्रकार के प्रकाश (Lighting) की पर्याप्त और उचित व्यवस्था होगी। प्रत्येक यमिक के कमरे में प्रकाश रखने के लिये यदि तीव्र शक्ति छिड़कियाँ और रागनदान हों तो वे भीतर और बाहर दोनों धार में लाफ रखनी चाहिए। उनमें तापक्रम के घटाने के समय के अनिश्चित और किसी समय कोई रफाबट नहीं लेनी चाहिए। यदि किसी प्रकार के साधन से सीधे सौर पर या किसी बिजली के स्थान

से बचावहीन होती है तो उसको रोकने के लिए भी व्यवस्था करनी चाहिए। इसी प्रकार ऐसी पराश्रितों का विषय अधिकारी की धारणा पर और पन्ना ही पपवा दुर्बलता की सम्भावना है। दूर करने की व्यवस्था हानी चाहिए। विविध धर्मियों के कारखानों के लिए राज्य सरकारों की मतीयव्ययक और उपयुक्त प्रकाश के स्तर को निर्धारित करना होता है।

यह भी व्यवस्था की गई है कि प्रत्येक कारखाने में उचित और सुविधाजनक स्थानों पर पीने के पानी (Drinking Water) की पर्याप्त पूर्ति का प्रबंध करना होगा। ऐसे स्थानों पर उम्र काटा में जिसे अधिक मजदूर मकें 'पीने का पानी' लिखा जायगा। ऐसा स्थान घाने की जगह गीबामय तथा देगाबपर में कम से कम २० फुट की दूरी पर होगा। उन कारखानों में जहाँ १ या इससे अधिक अधिक अधिक कार्य करते हैं, जहाँ के जिनों में पीने के पानी को रखा करने की भी व्यवस्था करनी होगी।

अधिनियम के अनुसार विनाय प्रकार के गीबामय (Latrines) तथा देगाब पर (Urinals) भी पर्याप्त मात्रा में बनाए जायें। यह ऐम स्थानों पर होने चाहिए, जहाँ अधिक कारखाने में रहने हुए जिनो की समय मरमतापूर्वक पत्र मकें। इस प्रकार के स्थानों पर पर्याप्त प्रकाश और सवागत की व्यवस्था हानी चाहिए तथा यह हर समय स्वच्छ रहने चाहिए। नम बाय के लिए भणियों का मोहरी पर मगाना होगा। स्त्री और पुरुषों के लिए भी समय-समय व्यवस्था करनी होगी। ऐसे प्रत्येक कारखाने में जहाँ २१० या अधिक कर्मचारी कार्य करते हैं इनके फर्श और दीन-दीन पीठ तक दोबारें कमकदार टाइलों की बनानी हानी तथा मण्डाह में एक बार सबकी मूत्र मफाई की जायानुगतक पहायों में पुनर्जा होगी। राज्य सरकारों को प्रत्येक कारखाने के मुख्यालय में गीबामयों तथा देगाबपरों की मरदा के मफाई के लिए नियम बनाने का अधिकार है।

अधिनियम में इस बात का भी उल्लेख है कि प्रत्येक कारखाने में उचित स्थानों पर पीबखानों (Spittoons) की व्यवस्था की जाय और उनको स्वच्छ रखना में रखा जाय। कारखाने के पर्यटकों को भी व्यक्ति पीबखान के प्रयोग नहीं करनी चाहिए। राज्य सरकार प्रत्येक कारखाने में पीबखान की मफाई तथा उनको धाकार के रूप को निर्धारित करेगी। उम व्यक्ति पर, जो नियमों का उल्लंघन कर और नहीं सुनता है १ रुपया का जुर्माना किया जा सकता है।

अधिकारों की सुरक्षा और दुर्घटनाओं की रोकथाम (Prevention of Accidents) के लिए भी अधिनियम में उपबंध है। मजदूरों मणियों उमने प्रमने जाने मारों और पहियों के चारों और पर्याप्त रूप में मोह मगान का ध्यान है। स्थितियों मणियों को इस प्रकार में सवागत हाय जिसे कार्य दुर्घटना न हो मके। यदि जोब परमाण के हेतु या उनमें लेव टामने के लिए व्यवस्था करी जायने के लिए बननी हई मणों पर या उमने काम काम करता धाबदक भी हो ता यह बाय निर्दिष्ट विधि

प्रशिक्षित बयस्क पुरुष द्वारा किया जाना चाहिए। इस व्यक्ति के कपड़े कसे हुए होने चाहिए और उसकी किसी भी ऐसी पेटी को जिसकी चौड़ाई ६ इंच से अधिक हो चलायमान (Moving) व्यवस्था में नहीं छूना चाहिए। मशीन के उन सभी भागों के चारों ओर जिनसे अधिक का अधिक सम्पर्क हो सकता है रोक लगायी चाहिए। किसी भी कारखाने में जब मशीन चल रही हो किसी भी स्त्री या बालक को मशीन दायर करने उसमें ठेस देने प्रवृत्ति उसके किसी पुर्व भाग को लगाने के काम पर नहीं लगाया जा सकता और न उनको मशीनों के चलते हुए भागों के बीच कोई कार्य दिया जा सकता है। बिना पर्याप्त प्रशिक्षण और बिना पर्याप्त निरीक्षण व देख-रेख के कोई भी युवक यत्नरत मशीनों पर काम नहीं कर सकता। इस बात की भी व्यवस्था होनी चाहिये कि संकटकाल में चलती हुई मशीनों से जानू शक्ति (Power) को उत्काल ही बन्द कर दिया जा सके। यंत्रियों को लगाने के लिए यांत्रिक उपकरणों की व्यवस्था करना बचरी है। इस बात के बचाव की भी व्यवस्था है कि स्वयं चलने वाली मशीनों से सम्पर्क न हो पाये।

१९४८ के कारखाना अधिनियम में एक नया उपबन्ध इस बात का भी है कि औ भी नई मशीन बने उनके चारों ओर रोक होने की व्यवस्था उसके साथ ही होनी चाहिए। इसका उत्तरदायित्व कारखाने के मालिकों पर ही नहीं बरन् मशीन के बनाने वाले या मशीन को बेचने वाले ऐजन्ट के ऊपर भी है। मशीन में रुई के बाने के मार्ग के पास धौरेलों व बच्चों को काम पर लगाने की भी मनाही है। सिपट या पठाने वाले मंच के सम्बन्ध में भी उपबन्ध बनाये गये हैं। उनकी यांत्रिक रचना अच्छी होनी चाहिए, वे अच्छे पदार्थ के बने होने चाहिए मजबूत होने चाहिए, उनको उचित दशा में रचना चाहिए और उनकी आंख भी होठी रहनी चाहिए। उनके लिए दरवाजे वाली और अधिकतम बोझ भादि के सम्बन्ध में भी उपबन्ध है। इन धौर धन्व धार उठाने वाली मशीनों जूमती हुई मशीनों बचाव डालने वाली मशीनों धावे से रक्षा करने के लिए भी उपबन्ध बनाये गये हैं। इस बात की भी व्यवस्था है कि तमाम फर्श मोड़ियां और पहुंचने के मापन धन्व प्रकार के बने हुए होने धौर उनकी धन्वी हामल में रचना बायेगा। धपर फर्श में कोई गड्ढा या छिद्र होमा तो उसकी छीक प्रकार से ढकना होगा धौर उमने चारों ओर रोक मपानी होगी।

अधिनियम में व्यवस्था की गई है कि कोई भी कमचारी ऐसा बोझ न उठा मपया है न वे जा मपता है जिनमे उसे हानि होने की सम्भावना हा। उच्च मरकारों को इस बात का धयिकार है कि वह यह निर्यात कर सकें कि पुर्णों रिपों तथा बच्चों द्वारा अधिक से अधिक किलना भाग उठाया जा सकता है। उलाहन की कुछ विशेष प्रक्रियाओं में तेज रोपनी धपजा बगों में नेनों की रक्षा करने का भी उपबन्ध है। अधिनियम में विनैय हुए शीघ्र चलने वाले तथा बिस्फोटक (Explosives) पदार्थों एवं प्राण लगने पर बचाव के लिए भी व्यवस्था करने के लिए उपबन्ध है। प्रत्येक कारखाने में प्राण लमने की धवरपा में वच निरुधने के

मनेक छावनों तथा घाग बुझाने वाले यन्त्रों (Fire Extinguishers) की व्यवस्था करनी होती है। कारखाना निरीक्षक को इस बात का अभिचार है कि यदि मशीन धपका इमारत का कोई भाग मानव जीवन के लिए हानिकारक है तब वह मासिकों को इसे ठीक करने का आदेश दे सकता है। उसको इस बात का भी अभिचार है कि वह आदेश दे कि मानव जीवन की सुरक्षा के दृष्टिकोण से इमारत और मशीन के सम्बन्ध में कुछ बिशिष्ट बातों का पालन किया जाय।

इस सम्बन्ध में एक मुख्य बात यह भी है कि अधिनियम के अन्तर्गत धम कारखाने के स्वामी पर अपने कर्मचारियों की सुरक्षा का दायित्व है। कारखाना निरीक्षक (Inspector) के लिए धम यह आवश्यक नहीं रह गया है कि वह मशीनों के चारों ओर रोक रवान के लिए धपका अभिचार के स्वास्थ्य और सुरक्षा के छावनों की व्यवस्था करने के लिए आदेश दे। कपड़े धोने की सुविधा बटने की सुविधा प्राथमिक बिक्रिया उपाय (First-aid Appliances) कैंटीन बियामगृह भाजन के लिए कमरे, गियुगृह कस्याण अधिकारी धारि की भी व्यवस्था अधिनियम में की गई है। जिनका उल्लेख कस्याण धायों के अन्तर्गत किया जा चुका है। (धेणें पृष्ठ २८१)।

छारों और धामान के लिए धसग से अधिनियम है। १९३२ के भारतीय धाम अधिनियम तथा १९३१ के बागान धमिक अधिनियम के अन्तर्गत धमिकों के स्वास्थ्य और सुरक्षा की व्यवस्था उपर बताया गये १९४८ के कारखाना अधिनियम के धाधार पर ही की गई है।

विभिन्न उद्योगों में धाम की दशाएँ —

महां धम इस बात पर बिचार करेंगे कि विभिन्न उद्योगों में कार्य करने की सामान्य दशाएँ कौसी हैं और धरन बताया गये उद्योगों में ये कितने अन्तोपजनक रूप के लागू किये जाते हैं। धम धनुमधान समिति के विभिन्न उद्योगों में कार्य करने की दशाओं का बिलुत कबेराण (Survey) किया था। उम समय के प्रबिक समिति के धपनी रिपोर् की भी स्थिति में कोई बिरोध गुधार नहीं हुआ है। यह कहा जा सकता है कि बड़े कारखानों में सामान्यतः कार्य की दशाएँ अन्तोपजनक हैं परन्तु छोटे और धनियमित कारखानों में बिरोधतया उनमें जा पुरानी इमारतों में ध्यापित है ब्रवाय संकातन धारि की दृष्टि से दया धहन ही धर्मन्तोपजनक है तथा उनमें गुधार होगा धति धावरयक है। धम धनुमधान समिति के धनुमार अधिधतर मासिक बडि-नया से हो उसम अधिक बरत है जितना बामून धाय उग्रे करना पड़ता है और कनी-कनी तो बामून का धारधों में भी बबने का प्रयत किया जाता है। धुपेन्द्राधों को रोजन के लिए तथा धमिकों की धाय धुन धारि ग रजा ब मिय कोई धनिरिक व्यवस्था नहीं की जाती। अधिधतर मासिक कार्य की दशाओं के प्रति उदासीन रत है। वे बामून के धधों के धायत न ही धपने बर्तम्य की इधि-धी ममक लेते हैं और इसक बामनिक उद्देय की धौर ध्यान हा नहीं देन। बगरवधन बामून धाय निरिधत

सीमा के अन्तर्गत भी मशीनों एवं यंत्रों से सुरक्षा धारि के नियमों का सम्बन्ध किया जाता है। परन्तु देश के कुछ भागकक मालिकों ने अपने धर्मिकों की सुरक्षा के लिए पर्याप्त ध्यवस्था भी की है। उन्होंने न केवल मशीनों के गतिशील भागों से धर्मिकों को सुरक्षा की ध्यवस्था की है धर्मिकों में सुरक्षा प्रथम (Safety First) धर्मिकों को संतुष्ट की है जिससे धर्मिकों को दुर्घटनाओं के खतरों का ज्ञान कराया जा सके। यदि किसी विशेष विभाग में कोई दुर्घटना नहीं घटती है तो धर्मिकों को बोनस दिया जाता है।

यह देखा गया है कि विभिन्न स्थानों की कपड़ा मिलों की इमारतों में धाम लीर पर धर्मिकी प्रकार से राखनी का प्रबन्ध है तथा उनमें संवातन का उत्तम प्रबन्ध भी है। मशीनों का सगाया जाना भी प्रायः संतोषजनक है तथा उनके बीच धर्मिकों के जाने जाने के लिए पर्याप्त स्थान पाया जाता है। अहमदाबाद नागपुर, कोयमुतूर बैङ्की धारि की पुरानी कपड़ा मिलों तथा कसकता की पुरानी सूट मिलों में प्रकाश संवातन स्थान तथा मशीनों के लगाने की ध्यवस्था संतोषजनक है। अम्बई अहमदाबाद दोलापुर दहली मयूर मोदीनगर धारि स्थानों की कुछ कपड़ा मिलों ने काठानुसृत ध्यवस्था भी की है। अम्बई धीर अहमदाबाद की कुछ मिलों में कपास के रेशों को हटाने के लिए भी मशीनों की ध्यवस्था है। धर्मिकों पर रखाएँ धर्मिकीय है। जिससे के पर तो सामान्यतः सभी मिलों में है परन्तु सूट मिलों में गन्दी हवा को बाहर फेंकने वाले पंखों तथा लीनल यंत्रों की ध्यवस्था नहीं है। पुरानी स्थापित कपड़ा न सूट मिलों में केवल उन न्यूनतम आवश्यकताओं के जिन्हें कानूनन करता आवश्यक है स्वास्थ्य न धारण के लिए कुछ नहीं किया गया है। कार्य के समय बैठने तक की ध्यवस्था नहीं की गई है। धर्मिकों पर रेशमी तथा ऊनी कपड़ों में धीनकर के धर्मिकों जहाँ धर्मिकों में कार्य की रखाएँ साधारणतया संतोषजनक है।

धर्मिकों में संवातन तथा प्रकाश का प्रबन्ध पर्याप्त न संतोषजनक है। कसकता तथा ग्रासिधर के बीच धीर मिट्टी के बर्तन उद्योग में संवातन तथा प्रकाश की दृष्टि से बहुत कुछ सुधार होना आवश्यक है। बंगलौर के धर्मिकों सुरक्षा माधनों की नहीं ध्यवस्था नहीं है।

धर्मिकों में कार्य की रखाएँ बहुत ही संतोषजनक है। कुछ बड़े धर्मिकों को छोड़कर धर्मिकों में धर्मिकों में स्थित है जिसका निर्माण धर्मिकों की दृष्टि से किया ही नहीं गया है। कई स्थानों पर सहायता ही पुनर्दी होती है। बीमारों पर धर्मिकों की मोती तट नहीं रहती है धीर मकरी के जाने लगे रहते हैं। यह बने बने होने हैं धीर इनमें भीट भाग भी धर्मिकों रहती है। नौके के पूर्ण को जो धर्मिकों होता है निर्माण की भी धर्मिकों ध्यवस्था नहीं है। इनमें एक प्रकार की उद्योग धर्मिकों धीनकी हो जाती है। धर्मिकों धीर धर्मिकों को धर्मिकों उद्योग होने वाले खतरों का सम्बन्ध ज्ञान भी नहीं है। गन्दी हवा को बाहर फेंकने वाले पंखों धर्मिकों

मनों की भी व्यवस्था नहीं है। छापेखानों में प्रकाश का भी उचित प्रबन्ध नहीं होता है जिसके कारण कम्पोजीटर्स के नेत्रों पर बहुत जोर पड़ता है और सीध ही उनकी नेत्र-ज्याति हीन हो जाती है। तीव्र या चार छापेखानों को छोड़कर और कहीं नानुन माक करने वाले द्रव्यों का प्रयोग नहीं किया जाता है।

कांच उद्योग में पाक लगने व जम जाने जैसी छोटी-छोटी दुर्घटनाएँ बहुत अधिक संख्या में होती हैं। छोटे-छोटे कांच के कारखानों के पत्रों के अधिकतर भाग पर मट्टी बनी रहती है जहाँ पर अधिक पिघल हुए कांच को गमियों द्वारा मुह से डलाते हैं। कांच के छोटे-छोटे कण पत्र पर बिगड़ पड़े रहते हैं और जब अधिक गति पर चलता है तो वह उसकी तबका में घुस जाते हैं। कांच की गमियों को काटने के लिये बिजली के तीव्र गर्म तारों का प्रयोग किया जाता है। इसके कारण जल जाने की घटनायें बहुत हा जाती हैं। मूल में फुल मारने के कारण अधिकतर के केशों पर बहुत अधिक जोर पड़ता है और इस प्रकार केशों की बीमारियाँ प्रायः उन्हें घेर रहती हैं। कारखानों के अन्दर तापक्रम बहुत ऊँचा रहता है। अतः अधिक जल बाहर आते हैं विशेषतया सर्प में तो उन्हें दृढ़ भगने का डर रहता है। परोक्षा बार के छोटे पैमाने के चूड़ी के कारखानों में काय करने की दशाएँ बहुत ही पाचनीय हैं यद्यपि गठ कुछ वर्षों में उत्तर प्रदेश सरकार के हस्तक्षेप के कारण इनमें कुछ सुधार हुआ है। फीरोजाबाद में यह उद्योग बहुबाजार एक कमर बानी इमारतों में स्थित है जहाँ सफाई धयका प्रकाश की कोई उचित व्यवस्था नहीं है।

बीनी उद्योग में मद्रास तथा बम्बई के कारखानों में उत्तर प्रदेश तथा बिहार के कारखानों की घनेता अधिक स्वास्थ्यप्रद कार्य करने की दशाएँ हैं। उत्तर प्रदेश एवं बिहार के बीनी कारखानों में दुर्घट्य रहती है। कारखानों तथा निकटवर्ती क्षेत्रों में भी गीरा व गन्दे पानी के कारण स्वच्छता की समस्या बनी रहती है। फँसट्टी से निकले हुए गन्दे पानी को कच्चे तामाक धबका सोखने वाले गद्दों में बहने दिया जाता है। गोरगपुर के दो बीनी कारखानों में गन्दे पानी को नदी में बहा दिया जाता है। कैबल मेरठ में एक बीनी मिल ने इस कार्य के लिए पक्की नालियों की व्यवस्था की है। सोखने वाले गद्दे बिहार की एक मिल में पाय जात हैं। कच्चे तामाकों में गीरे को एब्रिन करने से घसहनीय दुर्घट्य घाती है। 'घोई' का मिल की इमारत में ही डेर लगा देत है। अनेक मिलों में पानी टूटा टूटा और गन्दा रहता है। अम धनुसंधान समिति ने यह उद्देश्य किया था कि उत्तर प्रदेश बिहार व अहमदनगर की कुछ मिलों में यह भी देता गया कि भाप की गमियों में छिद्र होने के कारण भाप बाहर निकलती रहती थी तथा मद्रास व बम्बई की कुछ मिलों में अिन गड़े और चिमलने से। गोरगपुर की दो मिलों में सफाई का अिन धीरुंगीरुंगी (Dilapidated) धबका में पाया गया। कुछ कारखानों में अनीनों तथा तीव्र दृष्टि से घुसने वाली परापी व पेटी व चारों ओर टीक प्रकार से रोक नहीं लगाई गई थी। जहाँ तक

प्रकाश और संघातन का सम्बन्ध है चीनी मिलों की रक्षा मद्रास की चीनी मिलों को छोड़कर साधारणतया संतोपजनक पाई गई थी।

कपास और कई पुनर्ले के कारखानों में प्रकाश और संघातन की व्यवस्था असंतोषजनक है। बानावरण में बूझ और कपास के रेटे रहते हैं। साधारणतया मुरजा साबनों की व्यवस्था नहीं है। मद्रास में अनेक कारखाने के कारखाने अनुपपुनत धंधेरी इमारतों में हैं जिनमें दिन में भी कृत्रिम प्रकाश की आवश्यकता पड़ती है। सप्टाई की दशाएँ शाश्वतीय हैं। बान सोनने वाले ठासार्थों के कारण बड़बू और बूझ रहती है। कुछ मिलों में सभी स्थानों पर गन्धपा पाई जाती है।

बड़ी-बड़ी अन्नक स्थानों में व्यवस्थाएँ संतोपजनक हैं परन्तु छोटे-छोटे कारखानों में अधिक पानी व्यवस्था में धंधेरे और वेहवादार कमरों में काम करते हैं। चपड़ा कैक्ट्रियों में केवल जलकलें की कुछ धक्ति प्रयोग करने वाली कैक्ट्रियों को छोड़कर अधिक कामतों का ठीक प्रकार से पालन नहीं किया जाता। ऐसे कारखानों में संघातन सप्टाई और नासियों की व्यवस्था और असंतोषजनक है।

मध्यप्रदेश और बम्बई में बड़ी कारखानों में तो दशाएँ बहुत ही खराब हैं। यमिकों को धंधेरे में या कृत्रिम प्रकाश में कार्य करना पड़ता है। स्त्री पुरुष या बच्चों को कार्य करने के लिए एक दूसरे में मटककर बैठना पड़ता है जिससे किसी अधिक के निकलने के लिए कठिनाता स ही स्थान मिलता है। यह कारखाने अनियमित कारखाने हैं और कारखाना अविनियम के अन्तर्गत नहीं आता है। इसलिये इनकी दशाएँ बहुत खोजनीय हैं। इनमें प्रकाश संघातन असमय निवास धारि का कोई प्रबन्ध नहीं है। इसी प्रकार की दशाएँ मद्रास के सिंगार के कारखानों में पाई जाती हैं।

धमिबांध जमड़ा माफ करने व रंगने के कारखानों में कार्य की दशाएँ बहुत खोजनीय हैं। यहाँ पर बड़े हुये पाने पानी को निकालने के लिये नासियों की उचित व्यवस्था नहीं है। गन्दे बरबों को और लुटों को बिना सोचे समझे कारखानों में डबल उपर डाल दिया जाता है। फर्न जेबा भीजा तथा कबा होता है। यमिकों को मुरजा के साधन भी प्रदान नहीं किये गये हैं और बातावरण धारणिक गन्ध रहता है।

स्थानों में भी कार्य की दशाएँ अधिक संतोपजनक नहीं हैं। मैगनीज की स्थानों में गियराजपुर (बम्बई) को छोड़कर शेष स्थानों में प्रकाश और संघातन का बहुत ही असंतोषजनक प्रबन्ध है। धमिबांध स्थानों में लीचालय और पैसाबचरों का सर्वथा प्रबन्ध है तथा विद्यालयों व विद्युत्घुहों का तो नाम ही नहीं है। अन्नक की पानों में से पानी को नियमित रूप से बाहर नहीं निकाला जाता है। घट यमिकों को खान के भीतर पानी में ही कार्य करना पड़ता है। कोयले की स्थानों में भी यही दशाएँ हैं। बर्ष के चिनों में पानों में पानी भर जाता है और कमी-कमी तो इसके कारण अमानक दुर्घटनाएँ भी हो जाती हैं तथा अनेक यमिकों की मृत्यु भी हो जाती है।

बागाव में भी कार्य की दशाएँ अधिक अन्धी नहीं हैं। अन्नक और बंवाल व चाय के अनेक बागाव मेनेरिफाबल क्षेत्रों में स्थित हैं। अन्नक अधिक अन्नकता से

बीमारियों के निकार हो जाते हैं। अधिक प्रायः दूरस्थ स्थानों से मर्ती किये जाते हैं। इस प्रकार बाठाबरण तथा बसवायु का उन पर दुःप्रभाव पड़ता है। इनमें खाद्य सामग्री के समान का भी उचित प्रवण्य नहीं है। स्त्री भूमिनों के लिए विद्युत्सूतों की उचित व्यवस्था नहीं है तथा कन्टीन की भी सुविधा नहीं है।

रेलवे में वेग मत को बर्ती में सम्मिलित तथा बरसाती नहीं दी जाती है। माल होने वाले बुझियों तथा कम पुर्जे ठीक करने वालों के लिए साये की व्यवस्था नहीं है। कोयलामार्गके वाले भूमिनों को यथाकदा ही अपनी छाँटों की रक्षा के प्रदान किया जाता है। बनेक स्टेजनों पर 'सिमरल मैन को बर्पा और धूप से बचाव के सिधे किसी साये की व्यवस्था नहीं होती। केबिनों में शौचालय देगाबपर और पीने के पानी की कोई व्यवस्था नहीं है। वाई काम के लगातार चर्चों की निष्कायत करते हैं। क्लबों को प्रत्यधिक काम की शिवायत है। दक्षिण भारत रेलवे के ड्राइवरों को यह निष्कायत है कि यदि वह कायल के प्रयोग में मित्रव्ययना नहीं करते तो प्रमाणन उनके बिरुद्ध कठोर पग उठाता है।

ड्राम तथा बस सेवाओं के भूमिनों के लिए भी पीने के पानी शौचालय और विधाय-बुझों की व्यवस्था नहीं है। ड्राइवरों को ड्राम तथा बस की गति का नियंत्रित करने के लिए बड़ी प्रदान नहीं की जाती। कम्पेनरों को यह निष्कायत है कि उन्हें नियमित बाय के परचात् दिन की माय का हिसाब-किताब बुनाने के सिधे दो पन्हे तक अधिक रचना पड़ता है।

कार्य की दशाओं में सुधार करने के सुझाव -

१९४६ की मम अनुसंधान समिति ने कार्य की इन दशाओं की घोर संकेत किया था जिसका ऊपर उल्लेख किया गया है। बम्बई महामन्त्रालय कानपुर धारि विभिन्न औद्योगिक केन्द्रों को व्यक्तिगत रूप से देखने पर अनुभव किया गया है कि यही एक कार्य की बेसी ही दशाएँ उपस्थित हैं। मोदीनगर में मूषी बरब मिल जैसे नये स्थापित कारखानों में व्यवस्था परबस संतोषजनक है। बम्बई के माइरिन के कारखानों में दशाएँ बहुत योग्यनीय पाई जाती हैं। अधिकांश भारतीय उद्योगों में अधिकांश के कार्य की दशाएँ बहुत ही समंतोषजनक हैं। निरीक्षण और देरामान की व्यवस्था को हड़ करना चाहिए, निरीक्षण बार-बार होना चाहिए तथा अधिक बागुनों को कठोरता के साथ धनियमित उद्योगों में लागू करना चाहिए। सभी भूमिनों की दशा में सुधार हो सकेया दुर्घटनाओं को संख्या में कमी होनी तथा अधिकांश की कार्य बुगमता भी बनी रहेगी। मम अनुसंधान समिति का यह भी मत था कि कुछ माय एक सुविधाओं को बतमान हैं। अनेका और भी अधिक बिरुद्ध आधार पर प्रदान करना चाहिए। सबसे पहली बात तो लगातार उन्पादन में संलग्न कारखानों में विधाय दिनों की है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए राज्य सरकारों ने सप्ताह में एक दिवस को—रविवार या अन्य कोई दिन—शुनी या दिन निश्चित कर दिया है।

विद्याम विधों की समस्या का विशेष 'केतन सहित छुट्टियां व प्रकाश' के अन्तर्गत लिखा जा चुका है। (पृष्ठ १८ से ७२ तक)।

शौचालय तथा पेसाबघर —(Latrines and Urinals)

शौचालयों तथा पेसाबघरों की व्यवस्था करना एक श्रेष्ठ आवश्यक सेवा है। अधिकांश नियमित कारखाने केवल कानून का प्रचरण प्राप्त करते हैं और अधिकों के अनुपात में उन्होंने इस सम्बन्ध में व्यवस्था भी की है। परन्तु इनकी उपयुक्तता तो इस बात पर निर्भर है कि शौचालय किस प्रकार से बनाये गये हैं तथा उनमें सफाई की कौसी व्यवस्था है। कसब के शौचालय कच्चे तथा खुले शौचालयों से भिन्नित रूप में श्रेष्ठ और अधिक सेवा प्रदान करने वाले होते हैं। अधिकांश स्वानों पर शौचालयों का ढांचा उनका स्थान तथा उनकी सफाई की व्यवस्था बहुत ही असन्तोषजनक है। कुछ शौचालयों में छतें नहीं हैं और कुछ में परों का भी प्रभाव है। कीटाणुनाशक पदार्थों का प्रयोग तो कभी-कभी ही किया जाता है। टूटी की नियमित रूप से थोड़े-थोड़े समय के पर्याप्त साफ नहीं किया जाता है क्योंकि अधिकों की संख्या कम होती है और निरीक्षण का भी अभाव होता है। इस कारण अधिक खुले स्थानों में ही शौच के लिये जाना अधिक प्रचलित करते हैं। शौचालयों तथा पेसाबघरों की प्रथम प्रथम व्यवस्था नहीं है। वह बहुत ही श्रेष्ठ स्वानों पर बनाये जाते हैं। अधिकांश कारखानों में तो दरारें और भी पाए जाते हैं और अधिकांश में तो शौचालय तथा मुखालय ही नहीं। इन और सफाई-व्यवस्था की तीव्र आवश्यकता है। १९४६ के कारखाना अधिनियम की प्राधियों को कठोरता से लागू करना आवश्यक है।

पीने का पानी —(Drinking Water)

पीने के पानी की व्यवस्था भी असन्तोषजनक नहीं है। अक्सर पीने के पानी की व्यवस्था की भी जाती है तो पानी बहुत कच्चा बने बर्तनों में रखा दिया जाता है। अधिकांशतर तो पानी पीने के लिए केवल बौली के जलों की व्यवस्था कर दी जाती है। जमीन के जलों में पानी टण्डा करने के लिए अथवा बर्तन के पानी की कोई व्यवस्था नहीं की जाती। पीने के पानी की उचित व्यवस्था करने की विधेयतया शीघ्र शत्रु में टण्डा पानी प्रदान करने की तीव्र आवश्यकता है।

विश्राम-स्थल —(Rest Shelters)

एक श्रेष्ठ महत्त्वपूर्ण सेवा अधिकों के लिए ऐसे विश्राम-स्थलों की है जहां का बँटवरा पाना या उन्हें अथवा कल्याण में प्राप्त कर सकें। केवल कुछ ही मिलों में प्रवृत्ति व्यवस्था है। बड़े बड़े कारखानों में तो विश्राम-स्थल अथवा भोजन के लिए मात्र की व्यवस्था की जा रही है परन्तु छोटे तथा अधिकांश कारखानों में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। जहां कहीं कुछ व्यवस्था है भी वहां सफाई असन्तोषजनक नहीं है। विश्राम-स्थल ऐसे स्थानों पर बना दिये जाते हैं जहां मासिकों की सुविधा होती है। साधारणतया सब अधिकों के लिए पर्याप्त स्थान भी नहीं होता इनका निर्माण

बिना किसी पूर्य योजना के उल्टा सोपा कर लिया जाता है। इनमें गम्भीर भी रहती है तथा इनकी मर्यादा भी नहीं की जाती। इसी कारण अधिक इनकी घड़ेगा पेड़ों का माया अधिक पसन्द करते हैं। अधिकारा स्थानों में तो बँटने की भी व्यवस्था नहीं होती और अधिकों को बरती पर बठकर ही मोहन प्रहण करता पड़ता है। स्त्री और पुरुष अधिकों के लिए धनम धनम विद्याम-स्वभा की व्यवस्था नहीं की जाती। इसलिए ऐसी परिस्थितियों में यदि अधिक विद्याम-स्वभा का उपयोग नहीं करते बसा कि कुछ मामिक निकामत करते हैं तो इसका कारण भी स्पष्ट ही है। अधिकों को पैड़ के नीचे बमीन पर पन्दपी में घपका कार्य के कमरे के घंड़े कोन में बँटकर खाना खात हुए देखकर दुःख होता है। स्त्री और पुरुष अधिकों के लिए धनम धनम विद्याम-स्वभा का प्रबन्ध होना चाहिए, जिनमें बठने की उचित व्यवस्था हो। कामून ही इस मामले में अधिकों को सहायता कर सकता है। १९४८ के कारखाना अधिनियम में छोटे विद्याम-स्वभा तथा खाना खाने के लिए कमरों की व्यवस्था की गई है। परन्तु यह उन्हा कारखानों के लिए है जहाँ १२० या उमम अधिक अधिक कार्य करते हैं।

दुपटनाओं की रोकथाम — (Prevention of Accidents)

अधिकों की सुरक्षा के लिये एक धन्य धाबदयक व्यवस्था दुर्घटनाओं की रोकथाम है। एंगो दुर्घटनाएँ प्रापुनिक औद्योगिक जीवन को सामान्य पाठे हा गर् है। औद्योगिक दुर्घटनाओं की और सब अधिक स अधिक ध्यान दिया जा रहा है। एच० ट्यू हेनरिच नामक एक औद्योगिक मनोवैज्ञानिक का अनुमान है कि ६०% औद्योगिक दुर्घटनाओं को रोक जा सकता है। ८८% दुर्घटनाएँ रोजपूरु निरोगता अधिकों का उपयोगता होन अनुपामन एकाधिकता की कमी सुरक्षा सम्बन्धी कामों की धनहेतता करन को धादतों व कार्य के लिये मानसिक व भाषीरिक धयागता व कारण होता है। १० प्रतिशत दुर्घटनाएँ रोजपूरु मतीमरी घपका कार्य की मुर्ता दशाओं के कारण होती हैं। दुर्घटनाएँ इसलिये भी होती हैं कि कुछ धनुष्यों का मना कृति ऐसी हा जाती है कि वह दुर्घटनाएँ कर ही बँटते हैं चाहे वह उमम बिना हा बचना चाहे। औद्योगिक वेस्टों में अधिकों की बलागि (Fatigue) तथा उमम मानसिक परिबलन भी दुर्घटनाओं की प्रकृतियों को बडा देने है।

कारखाना अधिनियम के धनगन उम मनी दुर्घटनाया की मुबना जियम मृपु हो जाती है घपका एनी सासेरिक चोप पहुचती है जियन अधिक ४८ घण्टा तक काम करने धीष्य नहीं रहना कारखाना म्मर्षस्टर को देनी हुमी है। को भी दुपटना 'यम्बीर' उम ममम मममो जाती है जबकि दुर्घटना के कारण अधिक २१ या अधिक दिन तक काम पर न अनुमियन हो जाता है। दुर्घटना का 'मादुमा' उम ममम बहा जाता है जब अनुमियन ४८ घण्टे में अधिक वरन्तु १ दिनों में कम होती है। दुर्घटनाओं का तीमरा बर्गीकरण 'घातक' दुर्घटनाओं का घातक जियमे परिणामररूप मृपु हो जाती है। दुर्घटनाओं के धारिक धारिक

कारखाना अधिनियम ज्ञान अधिनियम रेलवे अधिनियम तथा यात्री अधिक अधि
नियम के अन्तर्गत एकत्रित किये जाते हैं और इन अधिनियमों की वार्षिक रिपोर्टों
में प्रकाशित किये जाते हैं। १९५२ में औद्योगिक दुर्घटनाओं की संख्या निम्न प्रकार
की कारखानों में—१ १६ ६०१ (३१८ घातक तथा १ १६ ५८१ घातक) खानों
में—२८८ घातक तथा ४०८४ गम्भीर रसों में—घावागमन कार्यों में ३०१ घातक
तथा २८ ५१२ घातक तथा रेलवे कार्यखानाओं में १४ घातक तथा २२,१०६
घातक मोदी कर्मचारियों में १७ घातक तथा ३७८८ घातक। खानों में घातक
दुर्घटनाओं की संख्या अधिक है क्योंकि खानों में कार्य अंतराल होता है। १९६० में
खानों में घातक दुर्घटनाओं की कुल संख्या २६८ थी (१९५ कोयला खानों में तथा
७३ प्रम खानों में)। इन दुर्घटनाओं में ३११ व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त हुए (इनमें
स २३० व्यक्ति कोयला खानों के थे) तथा ५२ व्यक्तियों को गम्भीर प्रकार की घाति
पहुंची थी जिनमें स ३२ कोयला खानों के अधिक थे। कोयला खानों में गम्भीर
दुर्घटनाओं की संख्या ३ ३४ थी जिनमें ३०८ व्यक्तियों को गम्भीर घाति पहुंची
थी। प्रम खानों में गम्भीर दुर्घटनाओं की संख्या ७७१ थी जिनमें ७६१ व्यक्तियों
को गम्भीर घाति पहुंची। विद्यते कुछ वर्षों से माना में होम वासी दुर्घटनाएं चिन्ता
का विषय बन गई हैं। १९५१ से १९५८ तक कोयला खानों में दुर्घटनाओं की संख्या
८७५७ थी जिनमें ८५८ व्यक्ति मार गये। और ४४१८ व्यक्तियों को गम्भीर
घाति पहुंची। सरकार ने एक आपदाशील (Emergency) कब्रम के रूप में
आपकित (Apprehended) खतरों का रोकने तथा ऐसी घबस्वाओं में जा खतरे
का कारण हो पीमातिपीछ सुधार के लिए १९५५ में कायला ज्ञान (पस्थावी)
नियम जारी किये। कोयला खानों में सुरक्षा क प्रश्न पर इंग्लैंड के रायल कमीशन
क आधार पर ही उच्चस्तरीय घायोग स्थापित करने का विचार किया जा रहा है।
खानों में सुरक्षा के लिए एक भावबंधक दल की नियुक्ति भी की गई है। १९५६
में खानों से सम्बन्धित सुरक्षा पर एक सम्मेलन भी हुआ। इसमें यह सुझाव दिया गया
कि खानों में कार्य बघाएँ सुधारने क लिए सुरक्षा समितियाँ बनाई जानी चाहिएं।
परिणामस्वरूप ५ समितियाँ की स्थापना की गई है। इन समितियों का कार्य
कोयला राय सुरक्षा शिक्षा तथा प्रचार, संवाहन प्रकार अधिक स्थापित धारि स
सम्बन्धित समस्याओं पर विचार करना है। इस स खानों क दो विशेषताओं की
संवाएं भी प्राप्त की गई हैं जो सरकार को खानों में सम्बन्धित सुरक्षा के विषय पर
पठमर्ष देते हैं। अर्थात् और रागीक की कोयला खानों में "बचाव स्टेशनों"
(Rescue Stations) स्थापित किये गये हैं। इनकी १९५६ के कोयला ज्ञान
बचाव (Rescue) नियमों के अन्तर्गत स्थापित किया गया है। यह नियम १९५६
के फिर में बना लिए गए हैं और अब यह सभी कोयला खानों में लागू होत है।
"बचाव स्टेशनों" का कार्य दुर्घटना होने पर लोगों को निकालने और बचाने क कार्यों
में सहायता देना है और अब यह सभी कोयला खानों में स्थापित किये जा रहे हैं।

दुर्घटनाओं की रोकथाम के लिये मुरला घम्बन्धो अधिनियम उपरम्य कारखाना अधिनियम भारतीय खान अधिनियम तथा भारतीय गोदी अधिनियम अधिनियमों में दिये हुए हैं। कारखाना अधिनियम की प्राण १९४८ के अधिनियम में और अधिक विस्तृत कर दी गई है। प्रायः कारखाने के स्थानीय स्वामी पर ही धमिकों की मुरला का भार डाला गया है और अब इन्स्पेक्टर द्वारा पुन मूचना प्रवर्धन पेशावनी धारण्यक नहीं रह गई है। कारखानों में अधिकतर दुर्घटनाओं (विशेषतया "घातक तथा घमनीर" दुर्घटनाओं) का कारण साधारणतया मशीनों को बहा जाता है। अतः कारखाना इन्स्पेक्टरों द्वारा मशीनों के भारों और रोक लगाने पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है। पर्याप्त मात्रा में साहा उपकरण न होने के कारण उचित रोक लगाने में अक्षम पड़ती हैं और इसी कारण अधिकांश दुर्घटनाओं में सक्की की रोक लगाने की धारा दे दी गई है। कारखानों के इन्स्पेक्टर कुछ विशेष प्रकार की रोक लगाने के उपयुक्त ढंग का प्रदर्शन करते हैं। बिहार, बम्बई उत्तर प्रदेश और हैरराज्य में मुरला समितियां के संगठनों का प्रोत्साहन दिया गया है तथा 'दुर्घटना न हो घान्दासन (No Accident Campaigns) प्रकाशित किये जाते हैं। कारखानों के मुख्य समाहकार (Chief Adviser of Factories) के कार्यालय द्वारा समय समय पर मुरला और दुर्घटनाओं की रोकथाम के उपायों पर पुस्तिकाएँ पत्र तथा विज्ञापन पत्र प्रकाशित किये जाते हैं। जनवरी १९२८ में एक "घोषागिक मुरला और स्वास्थ्य पत्रिका" भी प्रकाशित की जा रही है। केन्द्रीय सरकार ने बम्बई में एक 'घोषागिक स्वास्थ्य विज्ञान संगठन' (Industrial Hygiene Organisation) तथा एक केन्द्रीय धम मुरला (Central Labour Institute) की स्थापना की है। इन दोनों संस्थाओं में लखनऊक व्यवसायों के संबंध में धमिक संवेक्षण किये हैं। कानपुर कसकला और मद्रास में घोषागिक मुरला स्वास्थ्य एवं कल्याण के तीन प्रादेशिक मुरलाओं की स्थापना भी की जा रही है। यह संस्थाएँ एक पूर्वी समामोजित मात्रा का धम है जिसका उद्देश्य मुरला स्वास्थ्य एवं कल्याण को सिखा देना है ताकि घोषागिक क्षेत्रों की विगत धारण्यकताओं की पूर्ति हो सक। बम्बई की केन्द्रीय धम मुरला इस योजना को लागू करने में केन्द्रीय संगठन का कार्य करेगी। धमिकों के कुछ संगठन अधिनियम तथा 'मुरला प्रथम परिषद' (Safety First Associations) जैसा कुछ अधिगत मुरलाओं भी घोषागिक मुरला को प्रोत्साहित कर रही हैं। अर्थात् १९४८ के अधिनियम में धमिकों की मुरला के लिए धन प्राण की हुई है परन्तु उनका कार्य कर में लागू करना धारण्यक है। मार्च १९२५ में कारखानों के मुख्य इन्स्पेक्टरों के एक सम्मेलन में दुर्घटनाओं की रोकथाम के धन पर विचार दिया गया था। इस धन पर विचार धन दिया गया था कि लखनऊक मुरलाओं में मुरला करने के हेतु कुछ मामान्य विज्ञानों की "मुरला पुस्तिकाएँ" प्रकाशित की जायें तथा मुरला पुस्तिकाओं की संघापी के लिये धन धमिकों के लक्षित करने के लिये समितियां बनाई जाय।

घबिनिधियों में दिय गये सुरक्षा सम्बन्धी उपबन्धों का भी कठोरता से पालन किया जाना चाहिये ।

जनवरी १९९ में श्रम मंत्रियों के सम्मेलन में औद्योगिक दुर्घटनाओं के विषय पर काफी विचार विमर्श किया गया था । इस सम्मेलन में कैंब्री निरीक्षण व्यवस्था का हट्ट करने छोटे-छोटे मामलों को परामर्श देने सुरक्षा उपायों में धमिकों को प्रशिक्षण देने निरन्तर प्रचार करने पारितोषिक देने सुरक्षा सम्बन्धी समस्याओं का सर्वेक्षण करण आदि के सम्बन्ध में सिफारिशों की थी ।

रिकार्ड के संगीत की व्यवस्था — (Provision of Recorded Music)

बुद्ध व्यक्तियों का यह सुझाव है कि अच्छा वातावरण बनाये रखने के लिए कार्य के बन्धों की धमिक में ही रिकार्ड के संगीत की व्यवस्था होनी चाहिए । परन्तु यह सुझाव व्यावहारिक प्रतीत नहीं होता क्योंकि बड़े पैमाने के उद्योगों में धमिकों पर इसका कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ेगा । कारखाना में मशीन का घोरगुल इतना धमिक होता है कि कार्य के समय रिकार्ड के संयोग की बात हास्यास्पद प्रतीत होती है । यदि इसकी व्यवस्था की भी जाती है तो यह धमिकों के लिए सहायक होने की अपेक्षा उनके ध्यान को बाँट देगा । सम्मान्यतर धमिकता भोजन के समय में जो रेडियो प्रेषणा रिकार्ड के संयोग में कोई धमिक नहीं हो सकती । इसकी व्यवस्था कैंब्री द्वारा सरलता से तथा बुद्धमतापूर्वक की जा सकती है धमिकता कारणाने के धमिक रिकार्ड के संगीत की व्यवस्था के सुझाव पर गम्भीरतापूर्वक ध्यान नहीं देना चाहिए । धमिकता में जहाँ कारखानों के धमिक मशीना द्वारा इतना धार पैदा नहीं होता धीरे संगीत भी मिश्र होता है इस सम्बन्ध में विचार किया जा सकता है । धमिक देशों में इस गम्भीरता म सम्मतापूर्वक बुद्ध प्रयोग भी किय गये हैं ।

उपसंहार -

देश में औद्योगिक धमिकों की कार्य की रक्षा में उन्नति करने की बहुत धमिक आवश्यकता है । किसी भी कारखाने को उस समय तक बसाने की धमिकता नहीं की जानी चाहिए, जब तक कि कारखाने के स्थान धमिक की पूर्ण स्वीकृति नगरवार द्वारा प्राप्त नहीं कर ली जाती । १९४४ के कारखाना धमिकविषय में धमिक धमिकों के स्वाम्य एवं सुरक्षा की पर्याप्त व्यवस्था है तथापि सबसे बड़ी आवश्यकता तो इस बात की है कि उन्हें उचित प्रकार से लागू किया जाय तथा उनका उचित प्रकार में निरीक्षण भी हो । धमिकविषय का धमिक धमिकविषय कारखानों धीरे छोटे छोटे संस्थानों तक भी विस्तृत होना चाहिए । ऐसे कारखानों में कार्य की रक्षाएँ धमिक धमिकीयव्यवस्था है ।

गत बुद्ध वर्षों में निरीक्षण की व्यवस्था में सुधार हुआ है तथा धमिकविषयों के धमिकता हट्ट भी धमिक दिये गए हैं । कारखाना निरीक्षणों के लिए नई विस्ती में प्रशिक्षण पद्व्यवस्था भी प्रारम्भ किये गये हैं । धमिकीय श्रम संघटन के धमिकता जनवरी १९९ में धमिकता में एक धमिकता गोष्ठी का आयोजन किया गया था ।

शोमम्बो प्रायोचना घोर अमेरिका प्रगिराण कायकर्म के अन्तगत अमन निरोसकों को प्रगिराण हुनु अन्त्य दशा में भन्ना गया है। उद्योग में तापकर्म अथवा अथवा काय के अनुपात म विद्याम अथवा का निर्धारण करने के लिय अमेरिका के एक विद्वे पत्र की सहायता म अध्ययन किया गया था जिसका उद्देश्य यह मामुन करना था कि अमिका की 'ताप सहनशीलता' कितनी है और अत्यधिक ताप और हवा की नमी का उतने स्वास्थ्य और कायकुशलता पर क्या प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार का अध्ययन अहमसाबाद की नो मूनी कपड़ा मिला म किया जा रहा है।

काय के घण्टे (Hours of Work)

काय के घण्टों को नियंत्रण करने का महत्व -

अमिकों का स्वास्थ्य एवं कायकुशलता अधिकतर इस बात पर निर्भर करती है कि उन्हें कितने घण्टे काम करना पड़ता है। अधिकांश तक काम करने में स्वभावतया अमिक को यत्न हो जाती है तथा वह अपने कार्य के प्रति निश्चिन्त भी हो जाता है। यत्न का कारण वहुधा अमिक का स्वास्थ्य गिर जाना है। इनमें उनकी कार्यकुशलता पर भी प्रभाव पड़ता है। इसके अतिरिक्त यदि कार्य के घण्टे अधिक हैं, तब अमिकों में अन्तर उदर भ्रमण और अनेक बहानों म समय लाने का प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है। भारतीय अमिकों का वहुधा यह विचारम रहनी है कि भारतीय अमिक स्थिर चित्त होकर निरन्तर काय करने में अक्षम हैं। अमिक अधिकतर अपनी मशीनों पर म अनुपस्थित पाये जाते हैं तथा उनका स्वान पर अतिरिक्त अमिकों को मनाया पड़ता है। अमिकों की इस प्रवृत्ति का मुख्य कारण भारतीय कारखानों में अनेक घण्टे काय व अधिकांश घण्टों का होना है। अधिकांश म म कर्म पारिष्क यत्न होती है वरन् अमिकों का अधिकांश समय लाने पर से बाहर भी रहना पड़ता है। इसका परिणाम यह होता है कि अमिक परेसू काम-काज तथा अपने परिवार की ओर विचार अ्यान नहीं दे पाते और म ही अपने मानसिक और पारिष्क मनोरंजन तथा सामाजिक कल्याण के लिए समय निकाल पाते हैं। भारत में काय व की स्थिति तथा कार्य की अस्वास्थ्यकर दशाओं भी वहाँ में काय व घण्टों को बढ़ाने की आवश्यकता की ओर इंगित करती है। यदि काय के घण्टे सामान्य हों जिनमें विद्याम के लिए अन्तःशिक्षण भी हो, तब अमिक अपने कर्तव्यों का कुशलता से और अक्षमतापूर्वक पालन कर सकता है। अतः भारतवर्ष में कार्य के घण्टों को कम करने का प्रयत्न भारतीय औद्योगिक अमिकों के लिए सर्व ही बड़ा महत्त्वपूर्ण रहा है वरन् म म ४८ घण्टे का लप्ताह १९४८ तक लागू नहीं किया जा सका था।

कारखाना अधिनियमों द्वारा निर्धारित काय के घण्टे -

देश में समय-समय पर विभिन्न कारखाना अधिनियमों द्वारा काय के घण्टे निर्धारित किए गये हैं। म १८८१ के प्रथम भारतीय अधिनियम के अन्तर्गत

केवल सात से बारह वर्ष तक की बालु के बालकों के कार्य के घंटे निर्धारित किए गए थे। इनके काम करने की शक्ति १ घंटे प्रतिदिन थी जिसमें प्रतिदिन एक घंटे का विश्राम और मास में बारह दिन की छुट्टियों की भी व्यवस्था थी। बच्चों के लिए कोई व्यवस्था नहीं की गई थी। सन् १८९१ के कारखाना अधिनियम द्वारा स्त्रियों के कार्य करने के घंटे प्रतिदिन ११ निर्धारित किए गये थे और १३ घंटे के विश्राम सम्प्राप्ति की भी व्यवस्था थी। १ से १४ वर्ष के बालकों के लिये कार्य करने के घंटे प्रतिदिन ७ कर दिए गये। स्त्रियों और बालकों के लिए राशि में काम करना निषिद्ध कर दिया गया। पुरुष श्रमिकों के लिए भी एक घंटे के विश्राम की व्यवस्था की गई थी। सन् १९११ के कारखाना अधिनियम में प्रथम बार बयस्क पुरुष श्रमिकों के लिए अधिकतम कार्य के घंटे प्रतिदिन १२ निर्धारित किए गये जिसमें एक घंटे के विश्राम की भी व्यवस्था थी। १९२२ के कारखाना अधिनियम द्वारा बयस्क पुरुष श्रमिकों के कार्य के घंटे बढ़ाकर प्रतिदिन ११ घण्टा ६० घंटे प्रति सप्ताह कर दिये गये। १२ से १३ वर्ष तक की बालु के बालकों के लिए कार्य के घंटे प्रतिदिन ९ निर्धारित किये गये। स्त्रियों और बालकों के लिए राशि में काम करना निषेध कर दिया गया। १९३४ के कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत मौसमी कारखानों में बयस्कों के कार्य के घंटे प्रतिदिन ११ घण्टा ६० बंटे प्रति सप्ताह तथा निरन्तर बालु कारखानों में प्रतिदिन १० घण्टा ३४ बंटे प्रति सप्ताह निर्धारित किए गये। बालकों के कार्य के घंटे बढ़ाकर प्रतिदिन ३ कर दिये गए। धम-समय-विस्तार (Spread Over) का नियम भी प्रथम बार लागू किया गया और बयस्कों के तयस्कार काम करने के घंटे १३ और बालकों के ६३ निर्धारित किये गये। समयोपरि (Overtime) के लिए यह आवश्यक कर दिया गया कि सामान्य मजदूरी से डेढ़ गुना अधिक मजदूरी ही जाय।

नवम्बर, १९४३ में साठवें धम सम्मेलन में ४६ घंटे प्रति सप्ताह के सिद्धान्त की सिफारिश की और उक्त परिणामस्वरूप १९४६ का एक संशोधित अधिनियम पारित किया गया। धम निरन्तर बालु कारखानों में कार्य के घंटे घटा कर अधिकतम प्रति सप्ताह ४८ घण्टा प्रतिदिन १ और मौसमी कारखानों में प्रति सप्ताह ३४ घण्टा प्रतिदिन १ कर दिए गये। धम-समय-विस्तार १३ घण्टों से घटाकर निरन्तर बालु कारखानों में १० $\frac{३४}{६०}$ घंटे और मौसमी कारखानों में ११ $\frac{३४}{६०}$ घंटे कर दिया गया। समयोपरि कार्य के लिये सामान्य वेतन से दुगुनी दर का मुपतान की व्यवस्था कर दी गई। इससे पश्चात् १९४८ का कारखाना अधिनियम बाला है। पहले अनुसार कार्य के घंटे पहले की ही शक्ति प्रति सप्ताह ४६ घण्टा प्रतिदिन १ है और धम-समय-विस्तार भी १० $\frac{३४}{६०}$ घंटे है। इन अधिनियम में निरन्तर बालु और मौसमी कारखानों के अन्तर को मपाठ कर दिया गया है। बालकों और जिघोरी के लिए कार्य के घंटे प्रतिदिन ४ $\frac{३४}{६०}$ निर्धारित किये गये हैं और धम-समय-विस्तार उनके लिए पांच घंटे का कर दिया गया है। प्रति ३ घंटे कार्य करने के बराबर

बयस्क श्रमिक के लिए घाम घण्टे के मध्यान्तर की व्यवस्था की गई है। एक मासाहिक छुट्टी तथा बेतन मजिद घबकाय की भी व्यवस्था है। स्त्रियों और बच्चों का रात्रि ७ बजे म बंद कर प्रात ६ बजे तक काय करना निषिद्ध है। समयोपरि के लिए सामान्य बेतन म दुगना दता होता है। कोई भी श्रमिक एक ही दिन में दो कारखानों में काम गही कर सकटा। रात्रि पारी म काय करत बामे श्रमिकों क लिए यह वाबाल्यक हो गया है कि उन्त हर मण्डाल - ४ घण्टे का निरन्तर बिदाय प्रदान किया जाय।

१९३४ में कारखाना श्रमिनियम म सुधोधन किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य कारखानों में रात्रि म काय करने वाले युवकों और स्त्री श्रमिकों क रोजगार के सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सङ्घ के श्रमिनियम को लागू करना था क्योंकि इस श्रमिनियम को भारत सरकार न अपना लिया था। इस संशोधित श्रमिनियम के अनुसार कारखानों क मुख्य निरीक्षकों को यह अधिकार दे दिया गया है कि वे श्रमिक कार्य के घण्टों की सीमा के अन्तर कारखानों को बन्द छूट दे सके ताकि पारियों के परिवर्तन करत में सुविधा हो सके। किसी भी कारखाने का किसी विशेष कारण से जब यह अनुमति भी दी जा सकती है कि ५ घण्टे लगा १२ काय करने के पश्चात् अपने श्रमिकों को घामे घण्टे का मध्यान्तर देने के स्थान पर ६ घण्टे निरन्तर काय करने के बाद मध्यान्तर प्राप्त करें। मसाधिन श्रमिनियम म शानको और श्रियोतों के काम पर लगाये जान क सम्बन्ध में कुछ और श्रमिनियम भी लगाये गये हैं। शानका तथा १७ बय म कम आयु क श्रियोतों का कारखानों म रात्रि में काम करना निषिद्ध घोषित कर दिया गया है। रात्रि की परिभाषा का अर्थ उन श्रमिक से लिया गया है जो बय से कम निरन्तर १२ घण्टों की हो और जिसमें कम से कम निरन्तर ७ घण्टा की अवधि एनी हो जो शानकों के लिए १० बजे रात्रि से प्रात ६ बजे तक और श्रियोतों क लिए १० बजे रात्रि से प्रात ७ बजे तक प्राती हो।

भारतीय उद्योगों में प्रचलित काय के घण्टे —

उपरोक्त उन्मय भारत में कार्य क घण्टे सम्बन्धी कानूनिक उद्देश्यों का है, परन्तु यह विधान क्वत नियमित उद्योगों में हो लागू होने हैं। भारतवर्ष में कारखाना उद्योग के प्राथमिक दिनों में श्रमिक घण्टों तक काम करना साधारण बात थी। १९०८ तक नूती उद्योग में सामान्य कार्य स्थित १४ से १५ घण्टों का और कमी-कमी तो १० घण्टों तक का होता था। अनेक कारखाना श्रमिनियमों द्वारा कार्य विरत का कम किया जा सता है। द्वितीय विश्व युद्ध से पूर्व कारखानों में कार्य के घण्टे १९३४ क कारखाना श्रमिनियम द्वारा नियमित किये जान थे। अम्बई और अन्य स्थानों की नूती बस्त्र मिलों म ३४ घण्टे प्रति मन्त घण्टा ६ घण्टे श्रमिनियम काम किया जाता था। मोगमी मिलों म कार्य के घण्टे और भी अधिक थे। क्पास गै बिनीमा निकालने वाली मिलों क रंगमी तथा स्त्री कपड़ा मिलों में १० घण्टे

काम होता था। कुछ उद्योग में १२ घण्टे और मीठे बनिमान धारि बनाने वाले कारखानों में १२ से १० घण्टे तक काम होता था। जनमग सभी कारखानों में नियमित मध्याह्नर और साप्ताहिक छुट्टी की जाती थी।

१९३६ म कुछ छिड़ जाने के परिणामस्वरूप उत्पादन की रैती से बढ़ाना पड़ा और सरकार ने संकटकालीन उपाय के रूप में कारखाना अधिनियमों द्वारा निर्धारित कार्य के घण्टों की बारा में कुछ डील दे दी। उदाहरणार्थ नवम्बर १९४१ में सूती बस्त्र धोर मुनाई मिलों को २४ घण्टों के स्थान पर ६० घण्टे प्रति सप्ताह काम करने की अनुमति प्रदान कर दी गई। वूट मिला क कार्य के घण्टे तो कहीं-कहीं ६६ घण्टे प्रति सप्ताह तक हा गये। यह स्थान देन योग्य बात है कि बंगाल में वूट मिलों के कार्य क घण्टों का निर्धारण कानून द्वारा निश्चित की गई सीमाओं के पन्धर ही भारतीय बूट मिल परिवर् द्वारा किया जाता है। युद्धकाल में इसका निर्धारण वूट की मांग और कारखानों को चलाने क लिए कोयला की उपलब्धि के अनुसार किया गया। धम अनुसन्धान समिति ने १९४६ में यह बताया कि अधिकांश कारखानों में कार्य क घण्टे ८ से ९ प्रतिदिन तक ब। कुछ कारखानों में कहा कि तीन परिवर् में काम होता था कार्य क घण्टे प्रतिदिन ७१ ही थे। बपड़ा धोर कालीन बनाने वाले बस्त जैसे अनियमित कारखानों में कार्य क घण्टे कभी कभी प्रतिदिन १२ तक पहुंच जाता है।

जहां तक धम-समय-विस्तार (Spread-over) का सम्बन्ध है यह स्थान स्थान पर और विभिन्न उद्योगों में जारी प्रणाली धोर मध्याह्नर की व्यवस्था के अनुसार प्रगत प्रगत है। परन्तु साधारणतया यह कारखाना अधिनियम की बाराओं के अनुसार ही है। राज्य सरकारों को कुछ विधेय अधिका के कर्मचारियों को कार्य के घण्टे धोर साप्ताहिक छुट्टी धारि सम्बन्धी अधिनियम की बाराओं स वूट देने क लिए नियम बनाने का भी अधिकार है। परन्तु जहां इस प्रकार की वूट प्रदान की जाती है जहां अधिनियम में इस बात का भी उल्लेख है कि (१) कार्य क घण्टों की कुल संख्या एक दिन में १० से अधिक न हो (२) किसी भी एक तिमाही म समवैपरि घण्टों की कुल संख्या २० न अधिक नहीं होनी चाहिए, (३) धम-समय-विस्तार एक दिन में १२ घण्टे से अधिक नहीं होना चाहिए।

यह बात भी उल्लेखनीय है कि १९४६ क संशोधित अधिनियम क पारित होने से पूर्व भी जिनमें कार्य के घण्टों की संख्या घटाकर प्रति सप्ताह ४८ कर दी गई थी अधिकांश नियमित उद्योगा म अधिक ४८ घण्टे प्रति सप्ताह ही काम करते थे। १९३८ में यह देखा गया कि भारतवर्ष के निरन्तर जारी कारखानों में कार्य करने वाले २६% दुग्ध धारि ३१% स्त्री धारि ४८ घण्टे प्रति सप्ताह म अधिक कार्य नहीं करते य तथा मौसमी उद्योगों में भी ३६ प्रतिगत पुरध धारि ४३ प्रतिगत स्त्री धारि ६८ घण्टे से अधिक काम नहीं करते ब। बिहार अधिकांश अधिनियम में भी यह उल्लेख किया जा कि अधिकांश काम के घंटे कानून

कार्य क घण्टे

हाथ निर्धारित काम क घण्टों से कम थ। १९४३ में भारत सरकार क भय विभाग हाथ की गई जोध पध्दात से भी यह ज्ञात हुआ कि इंडीनिफिरिग कच्चे लोहे चीनी कई स बिनीसा निवासने वाले कारखानों तथा ड्रामके बल सेवा घोर बन्दरगाहों में ४८ घण्टे प्रति मज्दाहू ही काम किया जाता था। सब मन्त्री प्रकार के कारखानों में १९४८ के कारखाना अधिनियम द्वारा निर्धारित ४८ घण्टे प्रति मज्दाहू कार्य किया जाता है।

सामनों में काम करने के घण्टे

जहां तक सामनों का सम्बन्ध है कार्य के घण्टे प्रथम बार १९२३ के भारतीय काम अधिनियम द्वारा निर्धारित किये गये थ। यह कान के ऊपर काम करने वाले अधिर्कों के लिए ९० घण्टे प्रति मज्दाहू घोर साम क भीतर काम करने वालों के लिए ३४ घण्टे प्रति मज्दाहू निर्धारित किये गये थ। १९२८ म सामनों म १२ घण्टे प्रतिदिन से अधिक कार्य करना निषिद्ध कर दिया गया। १९०९ के बाद से ही सामनों में संशोधन के अनुमान तो सनी स्थिया क लिए साम के अन्दर काम करने पर रोक लगा दी गई। पुनःकाल में अधिर्कों की कमी के कारण यह प्रतिबन्ध हटा दिया गया था परन्तु १९४६ में इसकी पुनः सामू कर दिया गया। भारतीय साम अधिनियम में १९३३ में संशोधन किया गया। इसक द्वारा साम क ऊपर काम करने पर रोक अधिर्कों के लिए कार्य के कच्चे प्रति मज्दाहू ३४ घण्टा प्रतिदिन १० घोर साम क अन्दर काम करने अधिर्कों के लिए ९ घण्टे प्रतिदिन निर्धारित किये गये। १३ वर्ष से कम आयु के बालकों को किसी भी साम म गीकरी पर नहीं सयाना जा सकता था घोर किमी भी अधिर्क का साम में १० घण्टे से अधिक रोक नहीं जा सकता था। एक माज्दाहूक दुम्ने की भी अधिर्कार्य रूप म बन्दगया थी। अधिर्कों की शिक्षिला सुधिया सपार्ड पक्षपुति घोर स्वास्थ्य की देरमास करने के लिए सामनों में स्वास्थ्य बोर्डों की स्थापना की गई।

फरवरी १९४२ में जो भारतीय साम अधिनियम पारित हुआ उसके अन्तर्गत साम उद्योग में रोजगार घोर कार्य की दामों के सम्बन्ध म जो विभाग से जनको उभायोत्रित करते १९४८ के कारखाना अधिनियम क अनुकूल ही बना लिया गया है। अधिनियम में साम क ऊपर घोर साम क अन्दर काम करने वाले सभी बन्दक अधिर्कों के लिए कार्य के घण्टे दण कर प्रति मज्दाहू ४८ कर दिये गये हैं तथा इस बात की भी व्यवस्था की गई है कि किमा भी अधिर्क म साम के ऊपर ९ घण्टे प्रतिदिन घोर साम के अन्दर ८ घण्टे प्रतिदिन के अधिक काम नहीं किया जा सकता। अम-जम-स-विगार साम के ऊपर कार्य करने वाले अधिर्कों के लिए १२ घण्टे घोर साम के अन्दर कार्य करने वाले अधिर्कों की कुल बिनेय म निर्णों के तिये कार्य है। साम के भीतर कार्य करने वाले अधिर्कों की कुल बिनेय म निर्णों के तिये कार्य के कच्चे प्रतिदिन ९ घण्टा प्रति मज्दाहू ३४ निर्धारित किये गये हैं। साम के ऊपर

कार्य करने वाले बयस्क श्रमिकों को ५ घण्टे कार्य करने के पश्चात् प्राचा घण्टे का मन्मन्तर मिलता है। कोई भी श्रमिक समयोपरि सहित एक दिन में १ घण्टे से अधिक कार्य नहीं कर सकता। श्रमिनियम में इस बात का भी उल्लेख किया गया है कि ज्ञान के ऊपर कार्य करने वाले श्रमिकों को समयोपरि का बेतन सामान्य बेतन का डेढ़ गुना और ज्ञान से घटकर कार्य करने वाले श्रमिकों को सामान्य बेतन का बुना दिया जायगा। श्रमिनियम में ज्ञान के घटकर कार्य करने वाले श्रमिकों की आयु की सीमा १७ से बढ़ाकर १८ वर्ष कर दी गई है। किन्तु (११ से १८ वर्ष तक की आयु वाले) से ५५ घण्टे प्रतिदिन से अधिक काम नहीं लिया जा सकता तथा ६ बजे सायंकाल से ६ बजे प्रात तक उतको काम पर भी नहीं लयाया जा सकता है। स्त्री श्रमिकों के लिये प्राण से घटकर काम करने तथा प्रति म घण्टा ७ बजे सायंकाल से ६ बजे प्रात तक काम करने पर प्रतिबन्ध लगायत बना हुआ है।

१९५१ में तान श्रमिनियम में संशोधन द्वारा ज्ञान के भीतर तथा ज्ञान के ऊपर सभी प्रकार के श्रमिकों के लिए समयोपरि के सुगठान की दर मजदूरी की सामान्य दर से दुगुनी निर्धारित की गई है। जो श्रमिक ज्ञान से भीतर काय करते हैं वे १६ दिन क कार्य पर एक दिन के हिसाब से बायिक छुट्टी सेन क अधिकारी हो जाते हैं। तथा जो श्रमिक ज्ञान के ऊपर कार्य करते हैं उनके लिये दर २० दिन क कार्य पर १ दिन है। छुट्टी ३० दिन तक एकत्रित की जा सकती है।

रैलवे में कार्य करने के घण्टे —

रैलवे में कार्य करने के घण्टे १८१ के श्रमिनियम द्वारा निर्धारित होते हैं। १९१० में इस श्रमिनियम में संशोधन किया गया था। इसके अनुसार रोजगार के घण्टों के विनियम (Hours of Employment Regulations) बनाये गये हैं। इनके अनुसार लगातार काम करने वाले कर्मचारियों के लिये कार्य के घण्टे प्रति सप्ताह ६० हैं और अंतरिम (Intermittent) कार्य करने वाले कर्मचारियों के लिये कार्य करने के घण्टों की संख्या ८४ है। व्यापिकास को छोड़कर सप्ताह में एक छुट्टी करना श्रमिचार्य कर दिया गया है। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि रोजगार के घण्टों के यह विनियम सभी मुख्य रैलवे में लागू होते हैं, परन्तु यह रैलवे कर्मचार्य में काम करने वाले कर्मचारियों पर लागू नहीं होते हैं, क्योंकि यह भारतीय अरखाना श्रमिनियम के अन्तर्गत आते हैं। प्राय रैलवे कर्मचारी भी अब ४८ घण्टे प्रति सप्ताह की तथा उन सभी सुविधाओं की मांग करने लगे हैं जो अरखाना श्रमिकों को प्राप्त होती हैं। १९११ में सरकार ने कार्य के घण्टों के सम्बन्ध में न्यायापीठ राजाध्याय के पंचाट को कार्यान्वित कर दिया है। इसका उल्लेख हम 'यातायात में श्रम विभाग' के अन्तर्गत करते हैं।

बागान में कार्य के घण्टे —

बागान में गज कुछ वर्षों तक कार्य के घण्टों के ऊपर नियन्त्रण नहीं था। अतएव भारत के बागान में श्रमिक साधारणतया प्रात ८ से २३ बजे कार्य तक

काय के घण्टे

काम करते हैं। दक्षिण भारत के बाय और कौची बायाल में काम के घण्टे छाया रखतया घणिक हैं। वहाँ पर घणिक प्रात ८ से साय २-६ बजे तक काम करते हैं जिसमें एक घण्टे का मध्यान्तर भी होता है। उसमें भी कभी-कभी काम से लिया जाता है। काम घणिक होने के समय को छोड़कर सायारखतया बाय और कौची बगीचों में खिबहार पुगी का पिल होता है। घमम के बाय बागान में बयं मर में दो तीन बैतन महित पुट्टियों की भी व्यवस्था है परन्तु प्रधिकीय बायाल में कोई बैतन सहित पुट्टी प्रदान नहीं की जाती है।

फरवृबर १९२१ में सरकार ने बगाल घणिक प्रधिनियम पारित किया, जिसमें बाय कौची गड और सिम्बोला के बागान में लये हुये घणिकों के बयं की दयाओं को बंधनिक रूप में नियन्त्रित किया गया है। प्रधिनियम में प्रत्येक बयस्क के कार्य के घण्टे २४ प्रति मण्टाह तथा बच्चा व बिनोरों के ४० प्रति मण्टाह निर्दिष्ट किये गये हैं। यदि एक मण्टाह म रोजगार की घणिक १० दिन में कम मही है तो एक साप्ताहिक पुट्टी प्रदान करने की व्यवस्था है। कोई भी घणिक बिना घण्टे घण्टे का मध्यान्तर प्राप्त किये २ घण्टे से घणिक काम नहीं कर सकता। मघपि दैनिक काम के घण्टे निर्दिष्ट नहीं किये गये हैं परन्तु घम-मम-विस्तार की घण्टे एक दिन में १२ घण्टे निर्धारित की गई है। १२ बयं में कम की घण्टे के बच्चों को कार्य पर मगाता तथा साय ७ बज से प्रात ६ बज तक किमी भी स्त्री व बच्चे को काम पर सयाता निषिद्ध कर दिया गया है। यदि कोई घणिक किमी भी दिन घाया घण्टे में घणिक बैर से घाता है तब मासिक उसको काम पर सयान से इन्कार कर सकता है। राज्य सरकारों को यह घण्टे दे दिया गया है कि वह एक साप्ताहिक पुगी प्रदान करने के लिए और साप्ताहिक पुगी के दिन घण्टे बयं किया गया ता उसके मिण भुगतान करने के लिए नियम बना सकें। घणिक पुगी के बिना भी दिन काम कर सकता है परन्तु दस दिन के काम करने के परबाय एक दिन का घाघम करना अनिवार्य है।

घणिकों की घण्टे घण्टियाँ और उनके बाय के घण्टे —
 भारत में घमकीची बयं की एक घण्टे म एही घण्टे उद्योगों दुकानों व बाणिज्य प्रतिष्ठानों में काम करने वाले बयंघण्टियों की है। उनके कार्य के घण्टे बिभिन्न राज्य के घण्टे-मघपत बिधानों द्वारा निर्धारित होते हैं। बिभिन्न राज्यों में कार्य के घण्टे निम्न प्रकार हैं —
 ममम में प्रतिदिन ६ व प्रति मण्टाह २० परिषदी बंगाल में प्रतिदिन १० व प्रति मण्टाह २६ बम्बई, बिहार, देहली उड़ीसा पंजाब राजस्थान और मध्य प्रदेश में प्रतिदिन ९ व प्रति मण्टाह ४८ मद्रास मैसूर और तथा केरल में प्रतिदिन ८ और प्रति मण्टाह ४८ तथा उत्तर प्रदेश में प्रतिदिन ८। बिधान मध्यान्तर भी बिभिन्न राज्यों में घण्टे घण्टे से १ घण्टे तक का होता है तथा घम-मम-विस्तार भी १२ से १४ घण्टे तक का है। इसी प्रकार बाणिज्य संस्थाओं के कामकाज में ममोन्जन स्थानों घण्टे में कार्य के घण्टे निर्धारित कर दिये गये हैं।

इसके प्रतिरिक्त श्रमिकों के लिये साप्ताहिक छुट्टी एवं नवोत्तम व्यवस्था की व्यवस्था भी की गई है। भारत सरकार ने १९४२ में एक 'साप्ताहिक छुट्टी अधिनियम' पारित किया था जिसके अन्तर्गत दुकानों और वाणिज्य संस्थानों में कार्य करने वाले श्रमिकों के लिये साप्ताहिक छुट्टियों तथा कार्य के घंटों को निर्धारित करने की व्यवस्था की गई थी। यह अधिनियम राज्य सरकारों को इस सम्बन्ध में नियम बनाने या अधिनियम पारित करने की शक्ति प्रदान करता था (पृष्ठ ७०-७२ भी देखिये)।

जहाँ तक इपि श्रमिकों के घरेलू शौकरों का सम्बन्ध है, भारत के किसी भी भाग में उनके शौकरों की घंटों को निर्धारित करने वाला कोई भी विधियुक्त कानून नहीं बनाया गया है। शाखागततया उनका कार्य के घण्टे अर्थात् है। उनकी सर्वोत्तम साप्ताहिक छुट्टी वाणिज्य छुट्टी और निश्चित सम्मान्यताओं की सुविधाएँ भी बहुत थोड़ी मात्रा में प्राप्त होती हैं। यह ऐसी सुविधाएँ हैं जिनको औद्योगिक क्षेत्रों में यथासंभव श्रम के श्रेष्ठतम परिणामों में मांगा जाता है। कुछ समय पूर्व देहली में घरेलू शौकरों के अपने कार्य के घंटों को नियमित करने के लिये प्रयत्न किया था। परन्तु उनके लिये कोई कानून बनाना सम्भव नहीं हो सका है।

कार्य के घंटों की आलोचनात्मक व्याख्या —

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भारत में कार्य के घण्टों को नियमित करने की पर्याप्त वैधानिक व्यवस्था है। परन्तु समय की गतने की आवश्यकता यह है कि इन कानूनों को अनियमित कारणों से इपि श्रमिकों तथा घरेलू शौकरों पर भी लागू किया जाय। हमारे विचार में इस समय १९४८ के कारखाना अधिनियम द्वारा निर्धारित ४८ घण्टे प्रति सप्ताह की व्यवस्था पर्याप्त व अत्युत्पन्नक है। इन कार्य के घंटों को अधिक नहीं बढ़ा जा सकता है, विशेषतया इस स्थिति को देखते हुए कि हमारे श्रमिकों की मनोवृत्ति ऐसी है कि वह पूर्ण रूप से एकाग्रचित्त न होकर धीरे धीरे कार्य करते हैं। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि उत्पादन पर किसी बुरे प्रभाव के परे बिना यदि सम्भव हो सके तो कार्य के घण्टे न बढ़ाये जायें। हमारे कहने का तात्पर्य यही है कि कार्य के घंटों को धीरे धीरे कम किया जा सकता है, यदि श्रम की बचत करने वाली मशीनों का प्रयोग किया जाय श्रमिकों की कार्यक्षमता में वृद्धि की जाय तथा उन पर अधिक अनुदान रखा जाय। दुर्भाग्यवश 'श्रम की बचत करने वाले उपकरण' (Labour Saving Devices) का गणत घण्टे सिद्धांत प्राप्त है। यह महत्त्व सिद्धांत है कि इनका अर्थ कुछ श्रमिकों को अर्थात् करते हुए श्रमिकों में धीरे धीरे काम सेना है। श्रम की बचत करने वाले उपकरणों पर हमें श्रमिकों के हितको ध्यान से विचार करना चाहिए। ऐसे उपकरणों से श्रमिकों के कार्य के घंटों को कम करना चाहिये किन्तु उन्हें काम ही धीरे उत्पादन भी उत्पन्न ही या इससे अधिक होता रहे। 'श्रम की बचत' का अर्थ अधिक की बचत' से नहीं है।

श्री० पीयू० क प्रमुखार, कुछ समय परवान् साधारण कार्य के बंटों से परिषदिक कार्य क घटे किनी भी उद्योग में मायु किये जाते हैं तब प्रगत इससे राष्ट्रीयतावीत (National Dividend) में बडोतरी क न्यान पर कमी हो जायवी सर्वोक्त भविष्य को प्रकाम बहुत बरु हो जातो है। घरीर विज्ञान में यह पता बसता है कि किसी भी विषये प्रवार क काय करने की कुछ प्रबन्ध के परवान् घरीर को विधाय की सावरयकता होनी है ताकि घरीर पुन-प्रपनी पूर्वावस्था में जाय। ऐसे विधाय मध्यान्तर की सावरयकता कार्य की प्रबन्ध में प्रदान नहीं किये जाते हा होने लगती है। यदि मनुष्य को पर्याप्त रूप में मध्यान्तर प्रदान नहीं किये जाते हा पीरे-पीरे उमरी पक्ति का हान हो जाता है। प्रबन्धिक कार्य करके यदि कुछ प्रबन्ध बनाकर प्रबन्ध मोहन भी किया जाता है तो मम प्रबन्धिक साम नहीं होता सर्वोक्त बनाम क कारण प्रबन्धिक मात्रण को हनन करना भी कठिन हा जाता है। काय दुगतता में जो इस प्रकार प्रयोग रूप में लति पहुचती है उमने प्रतिरित प्रत्यप्र रूप में भी हानि पहुचती है। इसका कारण यह है कि प्रवान होने में मनुष्य मनीने बन्यों का मेहन करने लगता है घरीर उमने विद्वन्साह मर्मसाह जैसी बुरी उनेत्रित भावनायें पा जाती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि प्रबन्धिक मनुष्यन होने लगता है घरीर समय का प्रबन्ध नहीं रहता तथा मात्र ही मात्र कार्य करते समय भी उसमें उत्साह कम हो जाता है घरीर कार्य में उमका मन नहीं लगता। इन दोनों कारणों में उत्साह कम हो जाता है घरीर कार्य में उमका मन नहीं लगता। परन्तु कई बातों को ध्यान में रखते हुए यह कहना कठिन है कि कार्य के बारे घरीर राष्ट्रीयतावीत में पारस्परिक तथा सम्बन्ध है। दोनों का सम्बन्ध कई कारणों में भिन्न होया। उदाहरणतया—भिन्न प्रकार की जलवायु विभिन्न बवों के प्रबन्धिक विभिन्न प्रकार के कार्य, प्राण मजदूरी प्रबन्धिक प्रपता प्रबन्धिक समय विन प्रवार व्यतीत करते हैं मजदूरी का पुगतान किम प्रकार किया जाता है घाहि-घाहि बातों पर यह सम्बन्ध निर्भर करेगा। गर्म देशों में घारे कार्य पीरे-पीरे मन्धगति में प्रबन्धिक बंटों तक किया जायगा तो इसमें उत्साह प्रबन्धिक होगा। इनके विपरीत ठडे देशों में कार्य तीब्रता में परन्तु कम घंटे करने पर उत्साह प्रबन्धिक होगा। बन्धों घरीर त्रिचों में बयस्क पुरवों की प्रपेता साधारणतया बहुत प्रबन्धिक कम होती है। यदि प्रबन्धिक बंटों तक कठिन घरीरित काम किया जायेगा या प्रबन्धिक घंटों तक ऐसा कार्य किया जायगा तिमने मानसिक बोझ बढ़ता है हा इसमें कार्यदुगतता को लति पहुचैवी। परन्तु यह बात उस मन्ध नहीं होवी जब प्रबन्धिक बंटों तक देना कार्य किया जायगा तिममें बेबल हन्ने प्रवार में देगरेय की सावरयकता पड़नी हो। इसी प्रकार यदि कोई ऐसा नियुक्त कार्य है तिममें निर्लभ घरीर समयभूक्त की सावरयकता पड़नी है तो उनके किये मनुष्य में ताजमी घरीर लुनि होनी चाहिये। इसके विपरीत प्रवार कार्य देना है तिमने मनीन की मति किया या मन्धता है तो देना कार्य बके हुरे

प्रमुख भी भली-भाँति कर सकते हैं। इसके प्रतिरिक्त ऐसे श्रमिक जिनकी श्रम अधिक है घण्टा का पौ भी सकते हैं और जिनके श्रमिकों की प्रवेक्षा अधिक समय तक कार्य कर सकते हैं। कार्य के घंटों का प्रभाव इस बात से भी निम्न होगा कि श्रमिक अपने प्रकृत श्रम कितने प्रकार व्यतीत करते हैं अर्थात् वह समय व्यर्थ गवाते हैं अथवा अपने उद्योग में परिश्रम करते हैं या भली प्रकार के मनोरंजन में व्यतीत करते हैं। आवश्यक तब यह है कि प्रत्येक उद्योग में तथा प्रत्येक श्रमिक वर्ग के लिये कार्य दिवस की कुछ निश्चित सीमा होती है जिसमें यदि अधिक कार्य किया जायगा तो राष्ट्रीय सामाजिक को हानि पहुँचेगी।

श्रमिकों पर कार्य के अधिक घंटों का प्रभाव कई बर्षों तक देखना चाहिए। श्रमिक उद्योग की कार्य प्रणाली ऐसी है कि श्रमिकों पर बहुत भार पड़ता है। कार्य के कम बड़े इस भार को हल्का कर देते हैं। कोई भी श्रमिक किसी भी कार्य को एक दिन में १२ घंटे या उससे भी अधिक तक कर सकता है परन्तु इससे उसके स्वास्थ्य को हानि होती और उसका श्रमिक जीवन उस श्रमिक की प्रवेक्षा जिसके कार्य के बड़े उचित है कम होता। शीघ्रतन कार्य के अधिक घंटे और कम श्रमिक जीवन कार्य के कम घंटे और शीर्ष श्रमिक जीवन की प्रवेक्षा कम उत्पादक होते हैं। श्रमिक की रोकथाम में श्रमिक की कार्यकुशलता बड़ जाती है। दुर्घटना और बीमारी की संभावनाएँ कम हो जाती हैं। संगठन में सुधार हो जाता है रोजगार नियमित होता जाता जाता है और श्रमिकों में मनब मष्ट करने की प्रवृत्ति दूर हो जाती है और तब श्रमिक अपने परिवार और कल्याण की ओर अधिक ध्यान दे सकता है। कम बड़े कार्य करने से श्रमिकों को रोजगार पर लगावा जा सकता है और यह तब सरसता में हो सकता है जब रेशों की तरह समानुसार कार्य होता है या जब उत्पादन मात्र कम हो जाने से कीमतेँ गिर जाती हैं और उत्पादित वस्तु की माँग बढ़ जाती है। अतः श्रमिक और सामाजिक दोनों ही दृष्टिकोणों से कार्य के अधिक घंटों की मर्त्सना करनी चाहिए।

विश्राम मध्यान्तर (Rest Intervals) और अल्प विराम (Rest Pauses) —

यहाँ विश्राम मध्यान्तर और अल्प-विराम का भी उल्लेख कर देना आवश्यक है। भारतवर्ष के संगठित उद्योगों में मुख्यतः अल्प-विरामों की तीव्र आवश्यकता है। भारत में कारखाना श्रमिकों के श्रमिकों साधारणतया एक घण्टा प्रायः घण्टे का विश्राम मध्यान्तर प्रदान किया जाता है। सामान्यतया विश्राम मध्यान्तर की व्यवस्था मानिकों को स्वेच्छा से ही की जाती है तथा इसमें श्रमिकों की आवश्यकताओं का कोई ध्यान नहीं रखा जाता। विश्राम मध्यान्तरों के प्रतिरिक्त १०-१२ मिनट के अल्प विरामों का मानिकों द्वारा कोई विशेष प्रयोजन प्रयत्न नहीं किया गया है। श्रमिकों में इस दृष्टि से लिये गये प्रयोगों में पता चलता है कि कार्य के बीच में इन प्रकार के अल्प विरामों से कार्यकुशलता बढ़ती है और उत्पादन भी अधिक होता है। भारत में ऐसे अल्प विरामों की आवश्यकता और भी अधिक है। भारत

पारी प्रणाली

की जगहायु एना है कि निरंतर कार्य करने में व्यक्ति गतिमान हो जाता है और पदान अनुभव करत लगता है। अधिक साधारणतया गाँवों में प्राये हैं जहाँ कृषि कार्य नियमित नहीं होता। परंतु उनको नियमित रूप से अपने समय पर कार्य करने की पारत नहीं होती। मान के व्यक्ति की मनाकृति परिचय के व्यक्ति को प्रयेता व्यक्ति धारत करत की है। परंतु यह सुनाय दिया जाता है कि कार्य के सामान्य वर्गों में भी बार बार पाँच पाँच घण्टों के पदबायु घण्टा बितारों की व्यवस्था संघटित रूप में करती चाहिये और इस बात पर निरत नहीं होता चाहिये कि व्यक्तियों का तेज घण्टा बिगत करके मान व्यक्ति की प्रतीता करत समय कार्य में प्रभावित होकर तथा मान ग कार्य कर सकते हैं। परंतु पाँच पाँच घण्टे का न्यायत काम करत ग यदि ग बाबा पर जानी है और उत्पादन पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। परंतु काम के घण्टों के बीच घण्टा बितारों की व्यवस्था में कार्य क्षमता की हानि पदान प्रभावधानी और दुर्बलताओं की राखयाम हो सकती और उत्पादन भी बढ़ जायगा। परंतु भारत में गठोपनिषों का जहाँ नहीं भी सम्भव हो इस निम्न में करत उठाये चाहियें। समयपरि (Overtime) को भी इस प्रकार नियमित करना चाहिये जिससे कार्य क्षमता में किसी प्रकार की हानि न हो। 1942 के काण्टाता अधिनियम में समयपरि के लिये सामान्य मजदूरी में बुजुर्गी मजदूरी देने को व्यवस्था की गई है। धारतयता इस बात को है कि समयपरि का हिसाब इस प्रकार न लगाना जाय कि बहु व्यक्तियों के हित के विरुद्ध हो।

पारी प्रणाली (Shift System)

पारी प्रणाली को प्रावश्यकता —
 विषयता बन गई है। इसकी आवश्यकता अधिक उत्पादन की माँग के कारण हुई है तथा यह प्रासुनिक औद्योगिक प्रणाली के कारण सम्भव भी हुई है। पारी प्रणाली में सबसे बड़ा लाभ यह है कि हमारे कारण मशीनों एवं यंत्रों का पूर्ण उपयोग होता है जिससे उत्पादन की क्षमता मान्य बन हा जाती है। इस प्रकार में जो काम होता है वह व्यक्तियों के कार्य दिवस में एक कम हो जाने में परि उत्पादन में कुछ हानि भी पड़ती है जो उसे पूरा कर रता है।

पारी प्रणाली के रूप — (Kinds of Shifts)

भारत के विभिन्न उद्योगों में सामान्य तीन प्रकार की पारियाँ पाई जाती हैं। पहली तो एक पारी पद्धति (Single Shift System) है। इसमें मात्राएतजना कार्य दिन में होता है और एक या दो घण्टे के विषयम मजदूर को निकाल करके 8 से 11 घण्टे तक कार्य करता पड़ता है। दूसरी तो पारी पद्धति (Double Shift System) है। इसमें एक पारी रानि के समय और एक दिन में दोपहर

जिसमें १ बच्चे का विधायक मध्याह्नक मिलाकर कार्य करने की व्यवधि ६ वा १० बच्चे या इतम भी व्यवधि होती है। तीसरी 'परस्पर व्यापी पारी पद्धति' (Multiple Shift System) है। इसमें दिन में एक सामान्य शारी के प्रतिरिक्त घाठ घाठ बच्चे की तीन पारियाँ घोर होती हैं। जिसमें सामान्य बच्चे का विधायक मध्याह्नक कभी दिया जाता है घोर कभी नहीं भी। कुछ परिस्थितियों में तीन मयाहार पारियों के प्रतिरिक्त दो सामान्य पारियाँ होती हैं। परस्पर व्यापी पारी पद्धति विभिन्न अवधियों (Duration) की भी होती है घोर परस्पर व्यापी (Overlapping) भी। परस्पर व्यापी पारियाँ — (Multiple or Overlapping Shifts)

यह कहा जाता है कि परस्पर व्यापी पारियों में उत्पादन प्रक्रिया निरन्तर चालू रहती है। इसके लिये कुछ व्यक्ति उच्च समय तक रोक लिये जाते हैं जब तक कि सामान्यतया उनके स्थान पर दूसरे व्यक्ति उन्हें धनकासा देने के लिये नहीं जा जाते। परन्तु इस प्रकार व्यक्तियों को रोकना व्यापकपण नहीं है क्योंकि निरन्तर श्रम चालू रखने के उद्देश्य की पूर्ति व्यक्तियों में ठीक समय पर घाने की आवश्यकता को प्रोत्साहित कर तथा अनुपस्थित व्यक्तियों के स्थान पर कार्य करने के लिये कुछ व्यक्ति सुरक्षित रखकर की जा सकती है। इस निरन्तर कार्य की बाढ़ म कभी कभी व्यक्तियों को व्यक्ति मण्डों तक काम करना पड़ता है तथा कारखाना निर्माणकों को इसका पता नहीं चल पाता।

इसके प्रतिरिक्त परस्पर-व्यापी-पारी-व्यवधि के घोर भी घोरक दोष है—प्रथम तो विधायक मध्याह्नक घोर लाने के समय में कोई मिस नहीं रह पाता घोर जब परिवार के विभिन्न सदस्य जिस में भिन्न भिन्न समय पर काम करते हैं, जैसे कि साधारणतया होता है, तब वह मस साथ बैठकर भोजन नहीं कर पाते। दूसरे, इस भोजन करने का कार्य बहुत कठिन हो जाता है घोर कभी कभी मासिक उन्हीं व्यक्तियों से काम लेते रहते हैं जबकि रजिस्टर में ठेके बहुत से व्यक्तियों का नाम दर्ज कर दिया जाता है जिसका वास्तव में कोई प्रतिरिक्त ही नहीं होता। इन प्रतिरिक्त तीन व्यक्तियों का बेतन तक दिया दिया जाता है जिसको कसकों मध्यस्थों तथा उन व्यक्तियों में बाँट लिया जाता है जो प्रतिरिक्त काम करते हैं। बहाँ ऐसी बाँटें पाई जाती हैं, बहाँ ईजिक काम के मध्ये कानून द्वारा निर्धारित सीमा से भी व्यक्ति बच जाते हैं। परस्पर व्यापी पारी पद्धति में इन दोषों की कारण सीमा वास्तवों के सम्बन्ध में हानि है जिसको व्यक्ति मण्डों तक काम करना पड़ता है। जिस स्थानों पर कई पारियाँ होती हैं बहाँ पर कार्य करने के व्यक्ति मण्डों व्यक्तियों के लिये कष्ट वाक्य हो जाते हैं यदि उनका रहने का प्रबन्ध करवाने से परिस्तर (Premises) में मारी होता है।

उपरोक्त घब घबोध से परस्पर-व्यापी-पारी-व्यवधि को प्रबन्ध नहीं बताया जा तथा व्यक्ति के मन्तव्यों से भी इतना घोर निरोध किया है। साधारणतया मस नहीं पता है कि बेतन विरोध प्रबन्धकों को छोड़कर परस्पर व्यापी पारी पद्धति की

प्रदूषण नहीं देनी चाहिये। यह प्रमत्ता का विषय है कि १९८० के कारखाना अधिनियम में परस्पर व्यापी पारियों को नियंत्रित कर दिया गया है। इस अधिनियम के अन्तर्गत प्रत्येक क्रिमी भी कारखाना में पानी प्रणाली ऐसी नहीं हो सकती कि एक ही समय पर मजदूर काम के लिये एक से अधिक धमिक इन कार्य करते हों। राज्य सरकारों को किसी कारखाना विधेय को विधेय परिस्थितियों में इस धारा में छूट देने का अधिकार है।

रात्रि पारियाँ — (Night Shifts)

रात्रि पारी को वांछनीयता के अर्थ में परमेश्वर है। निरन्तर उत्पादन में एक उठने वाले उद्योगों के लिए तो रात्रि पारियाँ आवश्यक हो सकती हैं परन्तु धर्म उद्योगों में इनको साधारणतया सामान्य काम में उचित नहीं समझा जाता। कुछ मामलों का कहना है कि मशीनों की कमी तथा उत्पादन की मात्रा के कारण रात्रि पारी काम करनी पड़ती है। इस सम्बन्ध में धर्म अनुसंधान समिति में प्रहमदावार विधि मानिक परिषद के मत का उद्धृत किया था। इस अनुसार रात्रि पारी में एक विशेष लाभ यह है कि इसमें बंधी सागत कम हो जाती है तथा रात्रि पारी में कार्य करने में बतमान तीव्र प्रतिस्पर्धा के गुण में उद्योगों द्वारा उत्पाद्य रूप में बड़ी हुई मात्रा की पूर्ति प्रतिदिन स्थिर पूंजी सागत बिना की जा सकती है। इस प्रकार प्रहमदावार का एक विश्व मानिक का अनुसंधानकार रात्रि पारी पद्धति में कार्य करने की प्रेरणा रात्रि पारी में कार्य करने की प्रकृति अधिक हो गई है क्योंकि कामदिनका यह है कि दिन प्रतिदिन लचील प्राविष्टार होते जा रहे हैं और मशीनों सहयोगी हानी जा रही हैं। इसलिए इन मशीनों पर ध्यान और मुख्य रूप से ध्येय का पूरा करने के लिए उत्पादन एक निरिच्छित समय में करना पड़ता है जो कि रात्रि पारी में कार्य द्वारा ही सम्भव है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि रात्रि पारी में बंधी सागत में बंधी जा जाती है। बचक काम का तीव्रतापूर्वक उपसाम हो जाता है तथा उत्पादन सागत घट जाती है। परन्तु रात्रि में कार्य करने में धमिकों के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है तथा रात्रि में धमिकों द्वारा जो उत्पादन होता है उसकी मात्रा भी कम होती है तथा यह हमला प्रभाव भी नहीं होता। कुछ मानिका की धारणा है कि रात्रि पारियों में धमिक का स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव नहीं पड़ता। परन्तु विद्वानों की मता यह है कि रात्रि पारी में काम करना असाहज है तथा इससे धमिकों के स्वास्थ्य और कार्य कुशलता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। धमिक स्वास्थ्य सुव्यवस्था भी नहीं हो पाता है क्योंकि दिन के समय कामकाय पूर्ण और भीड़भाड़ के बाजारों में उनकी अपनी भी-पूरण करना सम्भव नहीं होता। फिर रात्रि में काम करने और दिन में धमिकों की अपनी मोशन समय प्रत्यक्ष करना पड़ता है। शिवाय कारखाने में कारखाने मानिक प्रभाव हो जाती है और उनका स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। रात्रि पारियों

से दिन की पारियों की अपेक्षा निश्चित रूप से काम कम होता है तथा उत्पादन उतना उतना भी नहीं हो पाता। रात्रि पारी में प्रकाश की काम के ऊँचे स्तर को ध्यान में रखते हुए प्रकाश नहीं होता है। रात्रि पारियों में अनुपस्थितता अधिक होने के कारण उत्पादन की मात्रा भी कम होती है। रात्रि में प्रभावकारक रूप से निरीक्षण करना भी बहुत कठिन हो जाता है। रात्रि में कार्य करते रहने पर प्रातःकाल के बच्चों में स्वाभाविक थकान या आती है। अधिक संततों द्वारा भी रात्रि पारियों का विरोध किया जाता है। प्रहमदाबाद कपड़ा मिल मजदूर परिषद का मत है "रात्रि में काम करने में अधिकों का स्वास्थ्य को हानि पहुँचती है, अनुपस्थित बच जाती है तथा सामाजिक जीवन में उच्च धरतियों के जाने में बाधा उत्पन्न हो जाती है।

साधारणतया यह सुझाव दिया जाता है कि रात्रि पारी में कार्य सभी किया जाना चाहिए, जबकि इसके बिना कार्य चले ही न सके। घट यह धारणक है कि रात्रि में कार्य करने वाले अधिकों की कठिनाइयों को कार्य के बन्ध हीमित करके एवं अन्य सुविधाएँ प्रदान करके रात्रि पारी के कुरे प्रभावों को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए। कोई भी कारखाना रात्रि के १ बजे के पश्चात् चालू नहीं रहना चाहिए। रात्रि पारी का प्रबन्ध इस प्रकार होना चाहिए कि समस्त मिल घट रात्रि के पश्चात् बन्द हो जाएँ। कम पातायात का भी पर्याप्त प्रबन्ध होना चाहिए, जिससे अधिक शीघ्र ही अपने निवास स्थानों को पहुँच सकें। रात्रि के समय अधिकों के लिए सैन्टीन पीने के पानी की सुविधा निःशुल्क रूप प्राप्ति की व्यवस्था होनी चाहिए। बीमारी तथा एम् बारसानो में जिनमें कार्य निरन्तर रूप से चलाना आवश्यक होता है रात्रि के समय भी कार्य चालू रखना आवश्यक हो जाता है, परन्तु इसके बाड़े बाड़े समय बाद अधिकों का परस्पर परिवर्तन करने की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। उदाहरणतः प्रतिमास रात्रि पारी एवं दिन की पारी के अधिकों की परस्पर घबन घबन होती रहनी चाहिए। रात्रि पारियों को पूर्णतया समाप्त कर देना कठिन है क्योंकि इसमें बेपी मागत में कमी हो जाती है और उद्योगों के लिए बिना परिवर्तित मशीनें आदि लगाए हुए माँग का पूरा करना सम्भव हो जाता है। अब अनुसंधान समिति का कथन है कि यदि इस विषय पर कोई राष्ट्रीय प्रबन्ध अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन हो तो भी रात्रि पारी का प्रभावपूर्ण तरीके में नियन्त्रित किया जा सकता है।

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है, घबन कारखाना अधिनियमों में विद्यमान एक बन्ध के रात्रि में काम करने पर रोक लगा दी गई है। यह धारणत सराईनीय रूप है। विद्यमान एक बालक घबनमें काम करने के लिये पारोरेक इष्टि न धर्मिय होने हैं। दूसरे भारत में रात्रि के समय कार्य करने में विद्यमान की घबनक शैतिक एक सामाजिक बन्ध का रूप रहना है। रात्रि में काम करने में बालकों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है और काम करने समय उन्हें नींद या जाना

धम-समय-विस्तार

स्वाभाविक है। यह यह सब मानत है कि स्त्रियों व बासकों के लिए रात्रि काय पर रात्रि सपानो आवश्यक है।

धम - समय विस्तार - (Spread-Over)
कार्य के घण्टा घोर पार्टी प्रणाली के साथ हा

भी बहुत महत्वपूर्ण है। इसका ध्य उम प्रबधि म है किन प्रन्ड काय व अधिकतम घण्टा का विस्तार किया जा सकता है। यह बात स्पष्ट है कि यदि यह प्रबधि का अनुचित रूप से विस्तार किया जाता है तो हममे ममी भगिया क धमियों को उचित में प्रारण करने में घोर कुछ मनोरंजन करने म विरोधता घन पारिवारिक जीवन में घोर स्त्रियों का घने घरेसू बर्तव्या को निबाहने म बाधा पड़गी। मापारणताय धम-समय विस्तार की प्रबधि कार्य करने के अधिकतम घण्टा के ही बराबर होती है। इसम एक या बाधा घने का विधाय मन्गलतर भी प्रा जाता है। परन्तु कुछ परिस्थितियों में काय करने के अधिकतम घण्टे को दो भागों म बांट दिया जाता है घोर बीच में एक सप्ता मन्गलतर हा जाता है। बायाव जैसे प्रक उद्योग में धम-समय-विस्तार का प्रयन ही नहीं उठता क्यकि यहा मन्गलतर के विधाय को छोड़कर जो घोर उद्योगों की प्रयेदा सप्ता होगा है काय नर नर होता रहता है जब तक वह सप्ता नहीं हो जाता। परन्तु प्रय बागान म भी १९५१ व धर्मियम द्वारा धम-समय-विस्तार की सीमा १० घण्ट प्रतिदिन पर दी गई है। परन्तु यह ममस्या लानों में विनायतया लानों व भीतर कार्य करने काय क प्रन्ड काय क घण्टा ही सम्भर रही है। १९३५ व गान धर्मियम ने गान क प्रन्ड काय क घण्टा की सप्ता प्रतिदिन ९ निरिबन कर दी थी मार इसम धम-समय-विस्तार के काय को बढ़ी सीमा तक दूर किया जा सता था। १९४० व माग्रीय गान धर्मियम में धम-समय-विस्तार की सीमा गान व प्रन्ड काय करने काय धर्मिया क लिए क लिए प्रतिदिन ८ घण्ट घोर गान क ऊपर नाम करने काय धर्मिया क लिए प्रतिदिन १० घण्टे निर्धारित की गई है। बाखाना म धम-समय-विस्तार का ममस्या ता घोर भी जटिल है क्यकि यहाँ पर बहुत रात्र तन नाम को बढ़ाया जा सकता है। जहाँ परन्पर-ध्यायी-गरी प्रणालियाँ है वहाँ पर गारिया व बीच मन्गलतर अधिक हान है घोर इस प्रकार धम-समय-विस्तार सम्झा ना सीमित १९३४ के काखाना धर्मियम द्वारा प्रथम बार म धम-समय-विस्तार का निर्धारण किया गया था घोर उसके प्रसंगत बखरों व गगाडार प्रतिदिन १० घण्टे निर्धारित कर दिया गया था घोर बाद में १९४८ व काखाना धर्मियम द्वारा मम्या घोर भी सीमित कर प्रतिदिन १० घण्टे प्रतिदिन कर दिया गया है। यदि दूर भी दी जाती है तो धम-समय-विस्तार ११ घण्टे प्रतिदिन कर दिया हो सकता। हमारे विचार में यह सीमा उचित है। दुगत लय धर्मियम सप्ताय धर्मियमों द्वारा भी विभिन्न समयों म धम-समय-विस्तार क घने निर्धारण कर दिया गया है।

रोजगार की कुछ बर्तानें

(Some Employment Conditions)

विक्षम पुष्टों में भरती अनुपस्थिति अधिवाहकें बेतन मङ्गित प्रवकाश स्थायी धारण धारि समस्याओं पर विचार किया जा चुका है। अब हम भारतीय उद्योगों में रोजगार से सम्बन्धित कुछ धीर बर्तानें का बखान करके विनया श्रमिक के स्वास्थ्य तथा कार्यकुशलता पर प्रभाव पड़ता है धीर जो धर्म न्याय समाज सुरक्षा तथा काय धीर रोजगार की समस्याओं से सम्बन्धित है।

श्रमिकों की श्रेणियाँ (Hands of Workers) —

श्रमिकों का वर्गीकरण स्थायी प्रस्थापी बहनी नैमित्तिक (Casual) तथा परसाधीन (Probationers) धीर शिष्याधीन (Apprentices) वर्गों में किया गया है। फिर भी यह वर्गीकरण उद्योग उद्योग धीर क्षेत्र क्षेत्र में भिन्न होता है। मुख्यतः तो श्रमिकों का वर्गीकरण प्रविष्टार उद्योगों में स्थायी प्रस्थापी धीर बहनी वर्गों में किया गया है तथा कुछ में उक्त वर्गीकरण स्थायी प्रस्थापी व नैमित्तिक श्रमिकों में हुआ है। श्रमिकों की श्रेणियों संख्या स्थायी बन की है। फिर भी उनके विधेया श्रमिकों की परिभाषा नहीं की गई है। साधारणतया उनको यह श्रेणिकार है कि बर्तानधीन के समय उन्हें १४ दिन या एक माह की मूचना या उसके बहसे में एक माह का वेतन मिले धीर उन्हें प्राकृतिक पुष्टी विधेया पुष्टी प्रविष्टार पुष्ट या प्रवकाश प्राप्त बन की मुविषा प्रणय पने का श्रमिकार, सेवा मार्टिफिकेट पने का श्रमिकार तथा कुछ धीर मुविषाएँ, जैसे धनाक के कामों में कटौती धारि के विनय श्रमिकार विधेया जाते हैं। प्रस्थापी श्रमिक प्रविष्टार मौसमी व धर्मनित्तिक श्रमिकों में पाए जाते हैं। यह वह श्रमिक है जो प्रस्थापी प्रकार के कामों पर गया जाता है धीर इनकी संख्या समय समय पर एक कार्य की मात्रा के अनुसार पड़ती बहती रहती है। बहुत से उद्योगों में प्रस्थापी श्रमिकों को भी विविध प्रकार की पुष्टियों की मुविषायें उपलब्ध हैं परन्तु इनके लिए पुष्टियों की प्रवधि कम होती है। साधारणतया उनको प्रविष्टार पुष्ट की मुविषा तो नहीं दी जाती परन्तु कुछ स्थानों पर बोलन व ने हिस्सा पाने का श्रमिकार दिया जाता है। बहनी श्रमिकों को एक प्रार्थित (Reserve) धर्म शक्ति कहा जा सकता है जो उन स्थायी व प्रस्थापी श्रमिकों को बहसने के विधेया रने जाते हैं या बीमारी प्रवकाश प्रवकाश श्रमिकों में अनुपस्थित हो जाता है। बहनी श्रमिक रक्षण की प्रवका में बहुत से श्रेण हैं जैसे धारि उनको हड़ताल प्रवका ठाना बहनी के समय में प्रवका धारिगत महामक समयमें है धीर कभी कभी तो बहनी श्रमिकों को रोजगार देने के कारण स्थायी श्रमिकों का बहनी पुष्टी लेन को बाध करते हैं। एने श्रमिकों को मध्यम की अनुचित रूप में बर्तानें हैं। फिर भी कुछ बर्तानें श्रमिकों की प्रवकाशता तो एक कारण होती ही है कि अनुपस्थिति के समय प्रवकाश मानी न रहे। परन्तु इस

राजगार की बग़ाय

प्रथा का नियन्त्रित करने की आवश्यकता है। बम्बई गागापुर, महमदाबाद तथा स्वम्बेतूर की बग़ाय मिनों में ता पहल से ही बम्बई नियन्त्रण प्रथा अपना ल्यायी करण (Decasualisation) योजनाएँ सामू कर रक्की है जो कि "अभिकों की भरती" की समस्याओं का प्रणाय म बनई जा चुकी है (रक्षिय पृष्ठ २६ तथा २६-४१) अन्य उद्योगों में भी बरसी नियन्त्रण प्रथा का किम्बूत बनना आवश्यक है। भौतिक या फ़ायतू भूमिक बर है जो कि कमी कमी हुए बिना प्रतिगिक काय को पूरा करने व निर काम पर लगा जात है। वह किसी सुविधा प्रयवा विद्याभिकार क प्रतिबारी नहीं हाउ और उनका समय समय पर प्रदानगा कर बी जाती है। कमी कमी भूमिकों का बर्षिकरण परीक्षक (Supervisory) कर्मक साधारण भूमिक क ठके के भूमिकों में भी किया जाता है।

सेवा कास - (Length of Service)

रोजगार की बग़ायों की एक और समस्या यह है कि कर्मचारी कितन समय तक नौकरी पर लग रहते हैं और उनकी नौकरी निरन्तर रहती है या नहीं। केवल सरकारी और अन्य सरकारी संस्थाओं और नगरपालिकाओं में ही प्रतिबारा भूमिक की सेवा कास कास पाय जात है। इसका कारण यह है कि इन संस्थाओं में भूमिकों की नौकरी भूमिक सुरक्षण हाती है। इंडीनिफ़ायल बाग़र गागा मोल का बानों छापागालों यादि जैसे मुहक रूप में स्थायि उद्योगों में दीर्घ सेवा कास के भूमिक प्रोबिडेन्ट फ़ंड यादि की सुविधाओं के कारण भूमिक पाय जात है। एक और कारण यह भी है कि उनमें बुग़ाल भूमिक कार्य करत है जो भूमिक स्थायी हुन है। जहाँ भी भूमिकों का हुए साम प्रदान किया जाते हैं वहाँ भूमिकों का कार्य पर स्थायी रूप में सय रहने की प्रकृति पाई जाता है। नौकरी पर निरन्तर सये रहने की बाँझनीयता सभी जगह बिग़ारतया मौसमी कारगालों में है। कोई भी भूमिक जो कि मौसमी कारगालों में एक मौसम में काम कर सता है यदि वह समन मौसम क प्रारम्भ में या जाए तो उस पुन काय पर लगा सता चाहिए और उनको उस बात में भी जब कँकरी का मौसम नहीं होना बात का एक बिदाय रिदा या सचना है। इस बात का भी बहन बाबरपत्रता है कि भूमिक का नौकरी सुरक्षण रहे और उनको किसी प्रयाचार का सय न हा। यह समस्या राजगार पर सभने में पहिन ही नौकरी को गालों यादि का स्पष्ट रूप में ब्याख्या करत है इस हा सभने है और यह बात स्थायी प्रान्तों हाउ की जा सक्ती है जिनका उल्लेख औद्योगिक बिबाद के प्रणाय में किया जा चुका है (पृष्ठ १४०-१४२)। एगिनाली भूमिक संघ भी समुचित बर्गान्भूमिकों और प्रयाचारों में भूमिकों की रता कर सक्ते हैं और सम्भवतः परी सभनेय उन्म है।

राजगार की रक्षा

श्रमिकों में अनुशासन-हीनता के घनेक कारण है उदाहरणार्थ श्रमिक संघों में पारंपरिक रूप से श्रमिकों में प्रज्ञानता तथा प्रसिद्धा बाहरी भादमियों द्वारा श्रमिकों का भड़काना और गलत राह पर ले जाना तथा श्रमिकों में मय की मनोवृत्ति पारि। इसलिए इस श्रमिक संघ श्रमिक प्रबन्धन मध्यम और उद्योगों में मानवीय सम्बन्धों (Human Relations) पर बल देने से ही श्रमिकों में अनुशासन का लक्ष्य है। परन्तु उद्योग में श्रमिकों के लिए अनुशासन व्यवस्था तथा दण्ड व्यवस्था का प्रथम एक मय समस्या है। सामान्यतया अनुशासनहीनता घबरा बुझबहार के मामलों में श्रमिकों को या तो बलात्क घबरा मुपलस कर दिया जाता है या जबही पुनो बुझाया या और किसी तरीके से दण्ड दिया जाता है। माबालगत अनुशासनहीनता के मामले कार्यमाला के फोर्मेन द्वारा घबरा मापमिक सर्वेक्षण कार्यकारियों द्वारा प्रबन्धक घबरा व्यवस्थाक श्रमिकता (Managing Agents) को प्रस्तुत किये जाते हैं जो उनके बारे में बिचार करते हैं। बन्नास्तनी घबरा प्रसहरी के मामलों में श्रमिकों पर मरमता में प्रत्याहार किया जा सकता है और इस प्रकार का दण्ड माधा रण्य श्रमिक संघ की बायबाहियों में भाग मन बाय श्रमिकों का दिया जाता है। बर्नास्तनी श्रमिकों में मयस्यां का श्रमिकों का टगने का मीका मिलता है। बर्नास्तनी (Dismissal) प्रसहरी (Discharge) की प्रपथा दण्ड का उच रूप है क्योंकि प्रसहरी में बहल की उत्तनी माबना मही हानी और पुन नोरी निमने में बटिनाई मही हानी। श्रमिकों को कार्य ममान होन के बार भी हटा दिया जाता है परन्तु बरमालगी में बहने की माबना घा जानी है और श्रमिक का रिकाई बोबारा मीकरी के समय उमक बिन्ध प्रयोग में लाया जा सकता है। इस कारण इस प्रकार का दण्ड बहल पार दुष्बंहार क समय ही देना चाहिए। प्रनेक बार बर्नास्तनी के कारण ही प्रनेक गम्भीर औद्योगिक रिबार हुए हैं और इसल मनी श्रमिकों में मन बुटाक उत्पन्न हो जाता है। बर्नास्तनी या प्रसहरी के लिए उचित नोमि प्रपथा इतक बहन बेमन देने की प्रया सामान्यतया प्रविष मही पाई जानी। पहिन तो लम (Suspend) करने की प्रया सामान्यतया दोबारा करता है ता उन बर्नास्त केनाबनी की जानी है और यदि श्रमिक प्रपथा दोबारा करता है ता उन बर्नास्त कर दिया जाता है। फिर भा इस प्रकार के दण्ड के लिए मुपलनी की प्रपथ नियम कर दी जानी चाहिए और बहु परिस्थितियों जिनमें कि मुपलनी की या मकरी है स्पष्ट मालों में दी जानी चाहिए। उन मकरी उन्मा तपानी प्रपथों (Standing Orders) में किया जा सकता है। जहाँ तक कुर्माओं का प्रदन है मकरी प्रपथों के प्रदेम मुमति बरन तथा उमकी बन्नी के मयम में श्रमिकों को न के हुए उपबन्ध है। रिनेन प्रपथा के परिचिन या जब तक व्यवहार का मीका देन का प्रबन्ध न दिया जाए, किसी मामले में

धुमना नहीं किया जा सकता और बुमनि की यह राशि मजदूरी में सही नए जैसे प्रति रूप स अधिक नहीं है। मजदूरी। यह धुमना ६० दिन के अन्दर बसूत कर लिया जाना चाहिए तथा एक रजिस्टर में दर्ज कर लिया जाना चाहिए और इसकी राशि धर्म क्रम्याण कार्यों के हेतु काम में लानी चाहिए। एम उपबन्ध यद्यपि संतोषजनक है, किन्तु बहुत स एसे उदाहरण हैं जहाँ बुमनि के रजिस्ट्रों की व्यवस्था नहीं की गई है और बसूत किया हुआ धर्म भी धर्म क्रम्याण कार्यों में नहीं लगाया गया है। इस दोष को फ़ैक्टरी निरीक्षकों के कठोर निरीक्षण द्वारा दूर किया जा सकता है। धर्मियों को दण्ड देने की और भी विधियाँ हैं जैसे बेतन बरों में कमी ब्रेड का पटाया इत्यादि। ऐसी कटौती मजदूरी प्रशासनी प्रविधिनियम क अन्तर्गत प्रवेश है, परन्तु इस धर्मिनियम को कठोरता से कार्यान्वित करने की आवश्यकता है।

यह भी राष्ट्रीय और ध्यान देने योग्य बात है कि अनुशासनात्मक कार्योंवाही में धर्मिक को कोई ऐसा दण्ड न मिले जिससे उसका रोजगार पाने की संभावना में कोई कमी हो जाये। दण्ड भी सिद्ध अपराध के लिए ही होना चाहिए और वह नियमानुसार ही मिलना चाहिए। यह तो बहुत ही अच्छा होगा यदि धर्मियों तथा व्यवस्थापकों में आपसी सहयोग तथा आपसी सहायता की भावना पैदा करके अनुशासन रखा जा सके। यदि अनुशासनीय पग मना आवश्यक हो जाये तो दूसरा अच्छा उपाय यह है कि दण्ड व्यवस्था धर्मिक द्वारा किये गये अपराध के अनुसार ही हो। जहाँ तक हो सके वर्गस्थानी प्रवृत्ति मुद्रतमी का दण्ड नहीं दिया जाना चाहिए। इन विषय में यह बात अत्यन्त ही है कि भारतीय-शांति-नियम धर्मियों के सेवा-कार्य की व्यवस्था करती है। यह प्रथा धर्मिक स्वानों पर भी प्रयोजनीय है। प्रत्येक धर्मिक के पास एक कार्ड रहता है जिस पर उसका नाम धरती बेतन दर धारि मिले होते हैं। उसकी दूसरी ओर अच्छे प्रवृत्ति बुरे व्यवहार के उल्लेख के हेतु स्वान छोड़ दिया जाता है। यदि धर्मिक कोई अपराध करता है चाहे वह अनुशासन न सम्बन्धित हो या धर्मिक द्वारा काम में हीन शान्ति के कारण हो प्रवृत्ति और किसी प्रकार का अपराध हो तो उस विभाग अध्यक्ष के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है। यदि उसका अपराध सिद्ध हो जाये तो उस सचेत कर दिया जाता है और उसके सेवा-कार्य पर इस प्रकार की नजारा की विवरण मिल दिया जाता है। दूसरी बार उसा प्रकार के अपराध करने पर उस पूर्ण सचेत कर दिया जाता है और सेवा-कार्य पर नोट दे दिया जाता है तीसरी बार उसी प्रकार के अपराध करने पर उस तुरन्त वर्गस्थानी दर दिया जाता है। स्वतः या रजिस्ट्रि कार्ड की यह प्रणाली बहुत लाभकारी है। ऐसे कार्ड व्यवस्थापकों को परोपति और वर्गस्थानी की बातों को तब करने में तथा धर्मियों की ईमानदारी तथा नियमिता के मार्ग पर चलाने में सहायक होते हैं। यह किसी धर्म तुरन्त पात्रता के हेतु धर्मिक एकत्रित करने में भी बहुत सहायक होते हैं और इन दृष्टिकोण में रोजगार दफ्तरों के लिए भी लाभदायक है। धर्मियों के बारे में नाम धारु ज्ञानि पने इत्यादि जैसी प्रवृत्ति की और व्यवस्था

बिबेकीकरण

परिचलन बताने उपयुक्तियुक्त धनकाय घटुगामनात्मक बायबाही क्षतिपूर्ति धारि जेमी बरतती हुई प्रकृति की ममी प्रकार की गूबनाएँ इनमे नोट कर ही जाती हैं। यदि कोय उघायां ले यह सेवा-बाएँ प्रणाली धपना भी है धौर यह धाबरयक है कि इनम कम ले कम बुछ स्पूततम मूबना क बिपय म समानता हो धौर बुछ बैबानिक म्यबन्धा भी इन उद्देश्य के लिए हानी बाणि।

बिबेकीकरण (Rationalization)

परिभाषा —

एक धन्य महत्वपूर्ण समस्या जिमको हाम ही क बुछ बयों म महत्ता दी गई है भारतीय उद्योगों में बैबानिक प्रबन्ध धपबा बिबेकीकरण की है। हय बिबेकीकरण की परिभाषा इस प्रकार कर सकत है बिबेकीकरण का तात्पर्य उद्योग मे उन तकनीक धौर संगठन की पद्धति से है जो इसलिए धपनाई जाती है कि धमिकों के प्रयत्नों धौर मास में कम मे कम धपधय (Waste) हो। इस प्रकार इसके धन्तर्गत धम का बैबानिक रूप म संगठन कच्चे मास एवं उत्पादन का समानोकरण प्रक्रियाओं की सरलता तथा बिबय एवं यातायात क माधनों म सुधार करना धारि बातें धा जाती है।¹⁰ सारांग म यह मूल्प मे कमी करल की बैबानिक योजना है। इसका धर्थ उत्पादन में तर्क धौर साधारण बुद्धि का उपयोग करना तथा उत्पादन क उपभोग में नियमित एवं बैबानिक रूप म सामायोजना लागू है। बिबेकीकरण का मुख्य उद्देश्य उत्पादन क प्राचीन तथा धन्ये एव परम्परागत तरीकों के स्थान पर बैबानिक साधनों का प्रयोग करना है। १९३७ में धन्तर्जातीय धम संघटन है जिमक धन्तर्गत सत्ताहकार समिति ने बताया धा कि बिबेकीकरण एव ऐसा सुधार है जिमक धन्तर्गत बलाहन की प्राचीन एवं परम्परागत प्रणालियों के स्थान पर तर्कगत की प्रबन्ध पर प्रणालियों को काम मे लाया जाता है। संकुचित रूप मे बिबेकीकरण का धर्थ तीन सुधारों मे लिया जा सकता है जो किमी संस्था धपनाम मन्वन्धी धपबा धन्य कार्बेजिनिक धा जिमी धनाधों म बिबे की संस्था धपनाम मन्वन्धी धपबा धन्य सुधारों मे भी लिया जा सकता है जो ध्याबसायिक संस्थाधों के एक समूह में उनकी दवाई मानकर, बिबे जाते हैं धा बड़े धारिक धा सामाजिक समूह में होते हैं। इन रूप से कार्य करने धौर बैबानिक तरीकों का प्रयोग करल इन सुधारों मे धनियमित प्रक्रियोजिता के कारण जो धान्य तथा हानि होती है उनको कम बिबा जा सकता है।

बिबेकीकरण में दो महत्वपूर्ण तकनीकी कर्म हैं (क) केन्द्रीय नियन्त्रण (Centralised Control) एवं मशीनकरण (Mechanisation) (ग) धाधुनीकरण (Modernisation) एवं समानोकरण (Standardisation)। इनके उद्देश्य उत्पादन

का बढ़ाना एवं उत्पादन मूल्य को बढ़ाना दोनों ही हैं। केन्द्रीय नियन्त्रण में उत्पादक इकाइयों का निकट सामंजस्य (Co-ordination) होता है। बेरोजीगी को कम करने तथा बड़े पैमाने के उद्योग की मितव्ययताओं (Economics) को प्राप्त करने के लिए इन इकाइयों का विलीनीकरण (Amalgamation) भी हो सकता है। जो इकाइयाँ अधिक कमजोर हैं वह समाप्त हो जाती हैं। यन्त्रीकरण का प्रश्न है श्रमिकों का मशीनों द्वारा प्रतिस्थापन। प्राबुद्धिकीकरण में समस्त बिजली पिटी तथा पुरानी मशीनों को फेंक दिया जाता है तथा प्रत्येक इकाई में प्राबुद्धिक मशीनें तथा उसके साथ की अन्य चीजें और यन्त्र पूर्ण रूप से मगाए जाते हैं जिससे उद्योग की प्रत्येक मशीन और सामान सर्वव्यय रहे। समानीकरण सामान तथा उत्पादन की रीतियों का होना है। मानव साधन को प्रबन्धीय श्रमिक को वैज्ञानिक व्यवस्था द्वारा नियंत्रित किया जाता है। विश्लेषण में 'समय अध्ययन' (Time Study) 'गति अध्ययन' (Motion Study) एवं 'शक्ति अध्ययन' (Fatigue Study) किया जाता है। इसका उद्देश्य यह है कि किसी भी काम को करने में गति की संख्या न्यूनतम हो और समय भी कम लगे तथा श्रमिकों पर कम से कम बोझ पड़े।

सर्वप्रथम विश्लेषणीकरण राज्य का प्रयोग जर्मनी में १९१४-१८ के महायुद्ध के पश्चात् के वर्षों में हुआ जब वहाँ मुद्रा स्थिति (Inflation) एवं वार्षिक अध्ययनवादी फैली हुई थी। जब इसको संयुक्त राज्य अमेरिका जर्मनी जापान एवं इंग्लैंड में प्रतिक्रिया प्रस्तुत रूप से अपनाया गया है। अन्य देश भी १९२९ की आर्थिक मन्दी के पश्चात् इसके बारे में विचार करने लगे हैं और भारत में भी इस ओर कुछ प्रयत्न किये गये हैं। विश्लेषणीकरण की योजना में उत्पादन क्षमता में कमी की जाती है। इसके लिए धम को बचाने का उपाय अपनाया जाता है तथा उत्पादन को उपभोग के अनुकूल समायोजित किया जाता है तथा श्रमिकों की कुशलता एवं बलात्ता में वृद्धि की जाती है। यह बातें प्रति उत्पादन तथा अध्ययन को दूर करने तथा मूल्यों में कमी करने के लिए नितांत आवश्यक हैं। विश्लेषणीकरण के द्वारा कमजोर इकाइयाँ समाप्त हो जाती हैं तथा अक्षमतापूर्ण इकाइयों का विलयन करके विद्यालय एवं कुशल इकाइयों का निर्माण किया जाता है। इस प्रकार सम्पूर्ण व्यवस्था को नये प्रकार की मशीनों धम बचत उपायों एवं वैज्ञानिक प्रयोगों से तथा व्यापार, उद्योग वैज्ञानिक वित्त व्यवस्था एवं राज्य के बीच सहयोग से और समस्त उद्योगों को एक कार्यकुशल संयुक्त के अन्तर्गत साकर वित्तना प्रतिक्रिया से प्रतिक्रियात्मक होता है कुशल बना दिया जाता है। बिजली भी उद्योग में विश्लेषणीकरण को लागू करने से पूर्व एक निश्चित आयोजना बनानी पड़ती है। विश्लेषणीकरण एक व्यापक व्यवस्था है जो उद्योग में केवल आर्थिक दृष्टि से ही नहीं परन्तु वैज्ञानिक प्रवृत्तियों द्वारा तकनीकी संयोजन की दृष्टि से भी उन्नति करने पर बल देता है।

बिबेकीकरण

बिबेकीकरण के गुण एवं ब्योप —

बिबेकीकरण से सम्पूर्ण धार्मिक समूह में अधिकतम कार्यक्षमता या जाती है। इससे उत्पादन की मात्रा कम हो जाती है और साथ ही उत्पादन भी घटित होने लगता है। धर्मिक की कार्यक्षमता बढ़ जाती है किन्ती प्रकार का अपव्यय नहीं होता तथा मुख्य की कम हो जाते हैं। इस प्रकार मांग भी बढ़ती है तथा बाजार का विस्तार होता है। बिबेकीकरण से उद्योग एवं धामु अधिकतम मशीनों का प्रयोग एवं बस्तुओं का पुनियुक्त पुनरावृत्ति से उद्योग एवं धामु कम समय में श्रेष्ठ एवं प्रभावित बस्तुओं का उत्पादन कर लेते हैं। धर्म के दुरुपयोग को रोकने के लिए धर्मियों को तकनीकी एवं धार्मिक प्रशिक्षण दिया जाता है। धर्मियों से उनकी योग्यता का अनुमान ही कार्य लिया जाता है तथा जो धर्मिक जिस कार्य के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हुआ है उसको बड़ी भाग सौंपा जाता है। मशीनों में इनसे न्यूनतम प्रयत्नों में अधिकतम कार्यक्षमता एवं अधिकतम उत्पादन की प्राप्ति होती है और उद्योग की प्रतिस्पर्धा धार्मिक निम्ननिमित्त प्रस्ताव पारित किया धार्मिक सम्मेलन में बिबेकीकरण से सम्बन्धित धर्मिक की बधाओं में सुधार करने या 'इस सम्मेलन में बिबेकीकरण से सम्बन्धित धर्मिक की बधाओं में सुधार करने और उत्पादन मात्रा को कम करने का एक मुख्य माधन यह है कि उत्पादन और बितरण की व्यवस्था को बिबेकीकरण से उद्भव निम्ननिमित्त प्रस्ताव पारित किया में इस प्रकार के बिबेकीकरण का उद्भव निम्ननिमित्त बातों में है जो सब बातें एक साथ लागू होती चाहियें (१) न्यूनतम प्रयत्नों द्वारा धर्मियों को अधिकतम कार्यक्षमता प्राप्त करना (२) जहाँ बस्तु के निम्न प्रकार का बाजार में कोई साम न हो वहाँ बाजारों में मिश्रता को कम करना तथा समान प्रकार के भागों को एक दूसरे से हस्तांतरित करके उनके निर्माण उपयोग तथा विनाश करने में सहायता देना (३) कच्चे साम और धार्मिक के उपयोग से अपव्यय को दूर करना (४) धर्मियों को बितरण व्यवस्था को सरल बनाना तथा (५) बितरण व्यवस्था में प्रभावपूर्ण विनाश सम्भार तथा धार्मिक के मध्यमों धार्मिक को दूर करना।" इस बात का भी उल्लेख किया गया था कि बिबेकीकरण को बुद्धिमता से तथा निरन्तर रूप से लागू करने में निम्ननिमित्त साम होंगे "(i) समान के लिए कम भीमनें होंगी तथा धार्मिकतानुसार बस्तुएँ उचित रूप से बनाई जाएंगी तथा (ii) उत्पादन में मूल्य विधिगत बातों को धार्मिक तथा निम्ननिमित्त रूप में पारिशीलक सिधेता मिलना उनमें समान रूप से बितरण भी होगा।" इस बात पर भी जोर दिया गया था कि बिबेकीकरण के लिए धर्मियों का सहयोग तथा धार्मिक एवं धार्मिक संगठन को और वैज्ञानिक तथा तकनीकी बिबेकीकरण की सहायता धार्मिक है बिबेकीकरण को लागू करने चाहिए ताकि धर्मियों के हितों को धार्मिक पुनर्प्रे।

इसमें विवेकीकरण की महत्ता धीरे-धीरे स्पष्ट हो जायेगी। परन्तु विवेकीकरण में प्रत्येक कठिनाई का उपाय ही है। इस योजना का उद्देश्य मात्र विरोध नहीं है, बल्कि कमजोर होते-होते धीरे-धीरे समाज में विवेकीकरण की योजना लागू हो जाने पर अन्ततः ही समाज ही जाने का भय रहता है। दूसरी कठिनाई यह है कि विवेकीकरण की योजना के लिए पर्याप्त पूंजी एवं व्यापार-विवेक उपाय प्राप्त नहीं हो पाते। क्योंकि यह विवेकीकरण को लागू करने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। विवेकीकरण के अन्तर्गत उत्पादक शक्ति में संगठित होकर उपभोक्ताओं से अनुचित रूप से उच्च मूल्य वसूल कर सकते हैं। इसलिए विवेकीकरण सर्वत्र सामंजस्य नहीं होता। सब बातों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि विवेकीकरण का प्रभाव उस समय इतना बुरा नहीं होता जब औद्योगिक समृद्धि (Prosperity) के दिनों में श्रमिकों को दूसरे उद्योगों में लाना जा सकता है। परन्तु सामान्यतया विवेकीकरण किसी विशेष उद्योग या धार्मिक मन्त्री के दिनों में ही अपनाया जाता है ताकि उत्पादन लागत कम हो सके।

धार्मिक विवेकीकरण का विरोध करते हैं क्योंकि इसे यह कार्य की तीव्रता (Intensification) एवं श्रमिकों के शोषण का साधन समझते हैं। प्रथम विवेकीकरण की शक्ति लागू करने का तात्पर्य यह हो जाता है कि श्रम बचत उपायों तथा नवीनतम मशीनों की व्यवस्था कर श्रमिकों को सुरक्षा कम कर दी जाय। इसके फलस्वरूप बेरोजगारी बढ़ती है। दूसरे, व्यावहारिक रूप में विवेकीकरण कार्य तीव्रता का रूप ले लेता है क्योंकि वस्तुतः होता यह है कि श्रम मूल्य का कम करने के हेतु धार्मिक कार्य की शक्तों को कम करने का प्रयत्न किया जाता है। इस प्रकार विवेकीकरण से श्रमिकों पर अत्यधिक भार पड़ जाता है। तीसरे, धार्मिक यह सिद्ध करते हैं कि विवेकीकरण द्वारा होने वाले अत्यन्त लाभों को श्रमिकों को प्राप्त होना चाहिए और श्रमिकों पर अत्यधिक भार पड़ना है। उन्हें बहुत कम भुगतान भी नहीं मिलता।

विवेकीकरण की किसी भी योजना के अन्तर्गत होने के लिये यह आवश्यक है कि इन शक्तियों का समाधान किया जाये। विवेकीकरण की योजना ऐसी होनी चाहिये जिससे श्रम मूल्य पर अत्यधिक उत्पादन हो सके तथा उद्योग के विस्तृत होने के साथ-साथ श्रमिकों को अन्तर्गत करने की संवेधा और धार्मिक शक्तियों को कार्य कर लाना हो सके। अतः विवेकीकरण को अतिविकृत एवं निर्धारित रूप से लागू करना चाहिये जिससे बेरोजगारी अत्यन्त न हो और यदि हो भी तो बेरोजगारी न्यूनतम हो जाय। योजना पहले से ही तैयार रहनी चाहिये। विवेकीकरण की किसी भी योजना को अत्यन्त करने से पूर्व कार्य को अत्यन्त तीव्रता तथा अत्यन्त प्रकार से 'अत्यन्त अत्यन्त' अति अत्यन्त तथा 'अत्यन्त अत्यन्त' धार्मिक निर्धारित कर लेना चाहिये। श्रमिकों की कार्य की शक्तों को कम करने, धार्मिक शक्ति

बिबेकीकरण

गुजार करवा चाहिये एक श्रमिकों के कल्याण के विभिन्न कार्य भी करने चाहिये। इसके साथ ही बिबेकीकरण के परमस्वरूप होन वाले प्रथक लाभ में से श्रमिकों का उचित भाग मिलना चाहिये। बिबेकीकरण में जो लाभ होते हैं उनमें मजदूरी को पयाण मजदूरी (Living Wage) के स्तर तक बढ़ाया जाना चाहिये। इसके अनतिरिक्त बिबेकीकरण के परमस्वरूप प्रथक कार्यकुशल व्यवस्था एक खेद संगठन बना चाहिये और इसका परिणामस्वरूप श्रमिकों एवं श्रमिकों के बीच मोहार्थपूर्ण सम्बन्ध स्थापित होने चाहिये।

भारतीय उद्योगों में बिबेकीकरण —

संसार के विभिन्न औद्योगिक देशों की भांति बिबेकीकरण का भारत में भी प्राथिक मण्डली के समय कुछ सीमित रूप तक अपनाया गया था। इसका कारण यह था कि इन बात की आवश्यकता अनुभव की गई कि श्रम बचन उपाया तथा बन्धुओं और उत्तरादन में समानीकरण द्वारा श्रमिकों की बाधकुशलता और कृता को बढ़ाया जाय और एक प्रकार से बचन की जाय। उदाहरण के लिये समुद्र मिल पर के सर प्रेसिडेंट स्टाक ने १९२० में बम्बई की कुछ बपडा मिला में बिबेकीकरण को कार्यरूप दिया। उसी में भारत के सबसे प्राथिक गान्धियासी एक प्रतिनिधि प्रथक संगठन शर्मान् बहुमदाकार बपडा मिल मजदूर परिषद में बिबेकीकरण योजना का विरोध किया है तथा भारतीय उद्योगों के विभिन्न क्षेत्र में बिबेकीकरण के लागू होने में जो धर्मीर श्रमिकों एवं श्रमिकों को उन पर प्रकाश डाला है। डा० एषाबमस मुजुर्जी ने बपडा इंजीनियरिंग एवं लम्बाकु उद्योगों में बिबेकीकरण की समस्या की प्रती प्रति समाजाचना की है तथा उन मुरसारतक उपायों को भी बताया है जिसका बिबेकीकरण की किसी भी योजना को लागू करने में पूर्व अपनाया जाना आवश्यक है ताकि श्रमिकों के उचित हितों को जानि न पडुवे।

बपडा उद्योग के सम्बन्ध में १९२७ में टैरिफ बोर्ड ने भारत में प्रति प्रथिक उपादन बढ़ान एवं कार्यकुशलता में गुजार की आवश्यकता पर बल दिया था। उनमें बताया था कि बाला में प्रति प्रथिक द्वारा निर्मित किये जाने वाले ठगुओं की संख्या २४० इंग्लैंड में ६० एवं संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में ११२० की, जबकि भारत में इनकी संख्या केवल १०० ठगु प्रति प्रथिक ही थी। भारत में एक बुनकर द्वारा रोगमान किये जाने वाले कपड़ों की संख्या ७ थी जबकि अमेरिका में ६ एवं इंग्लैंड में ४ में ६ तक थी। बाला में एक बुनकर सरकारी ६ कपड़ों की रोगमान रखायी में गुजर होना चाहिये तथा वैज्ञानिक प्रथक अपनाया चाहिये। इसके लिये मन्वेष्ट नहीं कि विभिन्न देशों के श्रमिकों की कुशलता की तुलना भारतीय श्रमिकों पर बनबायु के प्रभाव एवं रहने की प्रकृतियजनक बलाओं को दृष्टि में रख कर ही

करना चाहिए। परन्तु इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि कार्यकुशलता में वैज्ञानिक प्रबन्ध द्वारा उत्पत्ति हो सकती है। विवेकीकरण से न केवल मिस के विभिन्न विभागों में कार्यकुशलता बढ़ेगी बल्कि इससे उत्तम सामंजस्यता (Coordination) एवं सर्वोत्तम में भी वृद्धि होगी। यदि भारतीय सूती मिल उद्योग को इंग्लैंड एवं जापान से गणसतापूर्वक प्रतिस्पर्धा करनी है तो विवेकीकरण की नितांत आवश्यकता है। अभी तक विवेकीकरण बम्बई एवं घड़मवाबाद में लागू किया गया है जहाँ १९३२ में अमिकों एवं मासिकों के बीच समझौते के पश्चात् कार्यकुशलता के उपाय (Efficiency Methods) अपनाये गये थे। रिय कटाई एवं बुनाई के विभाग को हमसे अत्यधिक लाभ हुआ है। बम्बई की कपड़ा मिस के कपड़ा विभाग में भी काफी उत्पत्ति हुई है। यहाँ २२६ बुनकर ३ तथा २७२६ बुनकर ४ एवं ६०१ बुनकर ६ करके प्रति बुनकर जमाते हैं। प्रबिकॉस कटाई करने वाले ४० तट्टूए प्रथम इससे भी अधिक प्रति अमिक देखाया कर लेते हैं। घड़मवाबाद में कपड़ा मिस मजदूर परिषद द्वारा किये गये विरोध के कारण इस क्षेत्र में अधिक उत्पत्ति नहीं हो सकी है। सोलापुर में विवेकीकरण बहुत कम हुआ है और यह केवल रिय कटाई के विभाग तक ही सीमित है। यहाँ ११२ अमिक बुनकर कार्य प्रणाली (Double Side System) पर कार्य करते हैं। अन्य कर्माचारियों पर कपड़ा मिसों में उत्पत्ति मशीनों एवं स्वचालित (Automatic) करणों के कारण अमिकों की कार्यकुशलता में वृद्धि होने के प्रतिष्ठित और कोई सुधार नहीं हुआ है। कानपुर में मशीनों की गति में वृद्धि की गई है। परन्तु यह वास्तव में विवेकीकरण न होकर कार्य की तीव्रता है।

फिर भी इनमें संदेह नहीं कि भारतीय उद्योगों में विवेकीकरण सूती बस्त्र सूट मिस एवं कोयला खान उद्योगों में विवेकीकरण अत्यधिक आवश्यक है। हमारे महा युद्ध के पश्चात् भारतीय सूती बस्त्र उद्योग का उत्पादन सामान्यतया २० से ३० प्रतिशत तक घट गया है जबकि जापान इंग्लैंड एवं अमेरिका जैसे सूती कपड़े के प्रमुख उत्पादक देशों के उत्पादन में वृद्धि हुई है। भारत का पिछड़ना इस बात से स्पष्ट है कि इस समय भी भारतीय सूती उद्योग का एक कर्मचारी औद्योगिक २०० रिय काम उद्योगों की देखभाल करता है जबकि इंग्लैंड में एक कर्मचारी ८०० उद्योगों एवं अमेरिका में एक अमिक १२०० उद्योगों की देखभाल करता है। इसी प्रकार एक भारतीय अमिक औद्योगिक २२ साधारण करणों पर कार्य करता है जबकि इंग्लैंड में ३ साधारण करणों तथा अमेरिका में ३३ स्वचालित करणों एक अमिक द्वारा निपटाये जाते हैं। इसके प्रतिष्ठित अतिवादी भारतीय मिसों में मशीन एवं सामग्री अभावपूर्ण पुरानी है। यह अनुमान लगाया गया है कि ४९ प्रतिशत करके ३९ प्रतिशत 'इस्टर एम्स' ३१ प्रतिशत 'ड्राईंग एम्स' २७ प्रतिशत 'स्तेबर एवं रोविंग एम्स' एवं १७ प्रतिशत 'बार्स रिय' और 'बैप' रिय एम्स लगायत ४४ वर्ष से भी अधिक पुराने हैं। बम्बई मिस मासिकों द्वारा सूती बस्त्र उद्योग के कार्यरत (Working Party) को प्रस्तुत किए गए परिपत्र (Memorandum) के

बिबेकीकरण

धनुसार नम्बई मिला में ६० प्रतिशत मशीनों २२ बय मे घणिक पुरानी है। तेसी मशीनों जिनमे दूसरे महापुत्र म परस्पर ब्यापी परिचो (Multiple Shifts) में कार्य किया गया था तथा जो १९१० से पहले लगाई गई थी पुरानी घोर बेकार हो गई है। संभव से एक बार भी टी० टी० इण्डुमाचारी ने कहा था कि समय ६३ मशीनों को पुरानी एव पिरी पिटी मशीनों के कारण बन्द होने की नीवत था गई थी। स्वचासित करवों का प्रतिगत कुल करवों के धनुषान में जनवरी १९२८ में भारत में ६८ वा जबकि यह धनुषान घण्य देगो म इन प्रकार था घमरीका में १०० फ्रांस में २२ इटली में २०२ मोबियन सघ म ४०४ परिचमी जमनी में २८२ पाकिस्तान म २६ जापान में १७६ इगलड में १५ चीन चीन म ११७। यह बिबेकी प्रतिस्पर्धा का सामना करने घोर निर्घात बाजार को व्यवस्थित करने के हेतु भारतीय कपड़ा उद्योग में बिबेकीकरण घायत घाबरक है। इट मिन उद्योग में भी तेसी ही दशा है। इट मिन उद्योग में ब्योकि घारोपीय एक इरी के घनेक प्रति घाबरकता घोर भी घणिक हा गई है ब्योकि घारोपीय एक इरी के घनेक प्रति स्थिधियों मे घपनी उत्पादन सागत को कम करने के लिए घपनी मशीनों एव घमना का घाबुनिकीकरण करने पर बहुत बड़ी मात्रा मे पुजी सघाई है। इनमे सभार में भारतीय इट मिन उद्योग के एकाधिकार (Monopoly) को एक घटून घमनी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है। पाकिस्तान बाजोम तथा निरिषात्म मे नबीन प्रकार की मशीनों मे नई इट मिसों की स्थापना की है घोर के इट मे बनी बन्धुघों को कम कीमत पर देने में समर्थ हो सक्ते हैं। १९२४ में इट घांघ घाघोय की रिपोर्ट में भी इट मिसों में तत्कास बिबेकीकरण साधु करने की घाबरकता पर बहुत कम किया गया था। १९२१ में कोयला उद्योग पर कार्यरत की रिपोर्ट में भी कोयला घान उद्योग के लिये घाबुनिकीकरण तथा बिबेकीकरण की योजनाएँ साधु करने की निघारिवा की गई थी ताकि मशीनों की उत्पादन ताकि बड़ सके तथा उनकी उत्पादन सागत कम हो सके।

घणिकतर राग्यों की कपड़ा मिसों में बिबेकीकरण की योजनाओं को कार्य क्य में बरलित कर दिया गया है तथा भारतीय घम मन्मेसन हाघ निनुक की गई इट उद्योग पर भीतनीय घोघोविक समिति की निघारिगों के परिणामस्वरुप इट मिसों में भी बिबेकीकरण योजनाएँ साधु कर दी गई है। बिबेकीकरण के सम्बन्ध में मालिनों का मार्ग प्ररान करने के लिए भारतीय घम मन्मेसन ने एक घारतों समन्वोडा भी बनाया है त्रिमको बेन्नीय घम तथा रोत्रवार संघासय हाघ परिचालित किया गया है। बरन्नु बिबेकीकरण की योजनाओं का घणिक संघों हाघ बहुत बिरोध हुआ है।

भारत में बिबेकीकरण के सतरे —
 भारत में घणिकतर यह देया गया है कि घूरत नई मशीनों को लगाने की घनेता पुरानी मशीनों को ही फिर से नया कर दिया बना है तथा मशीनों की घनि

काली बड़ा ही जाती है और उन्नत मशीनों की व्यवस्था बचवा उन्नत कार्य नियोजन वस्तुओं का समानीकरण बचवा सुधार एवं बचवा सर्वेक्षण धारि कुछ नहीं किया जाता। केवल काम करने की गति में वृद्धि होती है जिसको काम की तीव्रता या धमिकता ही कहा जा सकता है। इस प्रकार भारत में कार्यशीलता (Intensification) बियेकीकरण के रूप में घा रही है। यद्यपि कपड़ा मिलों की मशीनों में सुधार किया गया है परन्तु इसके साथ ही के कुल एवं मजदूरी में सुधार नहीं हुआ है। मशीनों की गति प्रहमबाबाद एवं बम्बई की कपड़ा मिलों में अमेरिका से नी धमिक है, परन्तु इसके धमिकों के स्वास्थ्य को हानि पहुँचती है बुद्धताओं की सख्या बड़ जाती है बाये धमिक टूटने लगते हैं एवं धमिकों पर धमिक नार परता है। इसके धठिरिष्ठ भारत में यंत्रीकरण के साथ साथ बहूबा घटनाएँ एव तीव्रता दोनों ही हाते हैं जिनसे धठिरिष्ठासी धमिक सगठन के धमाक के कारण धमिक धपनी रसा नहीं कर पाते। फिर कारणाने में बाठावरण की दशाओं क सुधार की धोर नियोजित प्रयत्न बहुत कम होता है जिनमे सुधार होने से धमिकों की कार्यगति खुस्ती एवं कार्यकुमसता पर बहुत धमिक प्रभाव पन्ता है। धरय देशों में धठिरिष्ठासी धमिक सभों के कारण धमिक बियेकीकरण द्वारा उद्योग के बड़े हुए सामों में से उचित भाग पाने से बंथित नहीं हुए हैं। परन्तु भारत में प्रहमबाबाद के धठिरिष्ठ बहू धमिक सभ धठिरिष्ठासी हैं यह बात नहीं धीर नहीं पाई जाती। बम्बई में बियेकीकरण क धठिरिष्ठासवकूप धठिरिष्ठास कायों में जो मजदूरी की जाती है इसमें ३३ प्रतिशत से ३२ प्रतिशत तक वृद्धि हुई है। परन्तु धमिक इन बात की बहूबा धठिरिष्ठास करते हैं कि उन पर धठिरिष्ठास नार पड़ा है तथा कच्चे मास एव कार्य की दशाओं में सुधार किए बिना ही धमकी संरथा पटा की गई है। साथ ही उन रोजगारों में बहू बियेकीकरण योजनानों को लागू किया गया है धमिकों की धाय में पर्वण्य वृद्धि नहीं हुई है। बियेकीकरण के होने पर बेरोजगारी का भय भी सबा ही बना रहता है।

प्रहमबाबाद में धठिरिष्ठासी धम सगठन के कारण कार्यकुमसता प्रणाली (Efficiency System) सतोपपूर्वक कार्य कर रही है, परन्तु धाय स्थानों में बियेध वर इधीनियरिष्ठ उद्योग में धठिरिष्ठास बियेकीकरण के कारण धमेक धोप धठिरिष्ठा हो पये हैं। उदाहरणार्थ अमयेरपुर के मोहा एवं इस्पात कारखानों के धठिरिष्ठास यंत्रों एवं धियानों में उत्सादन धठिरिष्ठास इबाई बड़ा ता है, परन्तु धमिकों की संख्या बहूध पटा की गई है धीर उनकी मजदूरी क कोर् उचित वृद्धि नहीं की गई है। यह स्थिति सगधरय सघरय इधीनियरिष्ठ धिमो में बहू बियेकीकरण के साथ-साथ धमिकों की संख्या बढाई गई है या कार्य तीव्रता पाई जाती है ध्याप्य है। भारतीय टिन प्लेट क० में भी ऐसी ही दशाएँ पाई जाती हैं। लाहे के धार उद्योग में कायतीव्रता की ती सीमा ही पहुँच चुकी है। दली प्रकार की बिना उचित बेतन वृद्धि के कार्यशीलता की समस्या धिप ध उद्योग में भी है जहाँ कि धारधम में धम नक नकन धठिरिष्ठास धठिरिष्ठास के

बिबकीकरण

हानी है। कार्यगत म वृद्धि एवं धर्मिकों की सरया म कमी दोनों ही धर्मिकों म घोर
पर्यन्त एव हृदयों क कारण बन है।
सुनाद —

इसतिथ धर्मिक कार्यधता घोर महत क कारण उत्पादन तथा मजदूरी
म वृद्धि काय गति में वृद्धि पालि उचित धर्म्य विगमा की प्राबल्यता मजोता
की समान एव दाय दगा म सुचारु बिबकीकरण क कारण उरोजपाटी घादि गर्भी
महत्त्वपूर्ण प्रस्तां का समी दृष्टिबोरो स धर्मसोकन करला प्राबल्यक है। बिबकी
करण की किसी प्राबता को मुचसता एव गणनतापुनक बसान क तिये पूजी क
धर्मिकों के हितों म मायबल्य साता प्राबल्यक है। यह भी प्राबल्यक है कि बिबकी
करण को कार्यागित करन म पूर कयहुनमता के समी उदायों का धर्मिकों क
मनित्त में कुत्र तकतीनियों को बिबकीकरण क मय में होना चाहिय जिसम कार्य की
कायों का तथा धर्मिकों घोर प्रबल्यका म बिबकीकरण क साम का किस प्रकार म
बितरित किया जाय दाना का निखय हो मरु। धर्म धर्मिका की छटनी की जाती है
ता उन्हे दानिपूनि दो जाना चाहिये तथा उनका धर्ममन्मथ धीप्र ही पुन तोररी
पर लगामा जाना चाहिये। प्राबल्यक के महग समय म उत्पादन सामन तथा मूम्या म
कमी की धर्म्यल्य प्राबल्यता है घोर हमना बिबकीकरण क द्वारा ही किया जा
सकता है। कम मूम्या के कारण माग बढ़ती घोर उदायों का बिलार घोर बिबकी
हो सकता तथा धर्मिक उत्पादन क कारण निबान रूप धर्मिका का पुन लीकरी मिल
नवगी। इन प्रकार बिबकीकरण के धीपकानीन प्रनाय यह हाव कि ममता उत्पादन
हाला धर्मिक उपमां एवं धर्मिक राजगार होगा घोर बिबकीकरण तथा जाय ता
प्रकार म कार्यागित किया जाय घोर पर्यन्त रूप म इत पर नियन्त्रण तथा जाय ता
इसत धन में वृद्धि हागा एवं सामान्य जीवन स्तर म उन्नति हो सकनी।
किर भी डा० मुन्शी ने धन म तावधानी बरतन को बजावनी दी है। भारत
क बिबकीकरण इस समय कबम पूजीनियों क हित म धर्मिक साम क हित हा
किया जाना है घोर हमने छटना दाय लीकना काय स्तर का दित्ता घोर मजदूरी
म कमी एवं हानामा का एव वृद्धि काय सामू हा जाना है। धन पूजी एव धम
पालि का धर्म्यय हागा है घोर उदाग म समी धर्मिकता घोर धर्मिक एवं धर्मिक
के बीच समी बहूत वीग हो जाती है कि धर्मिक म काया समय तक इन प्राबता
को धर्मिकतापुनक कार्यागित करना धर्म्य मही हा पटा।
परन्तु जैसा कि उपर बटा जा चुका है भारत क धर्मिक उदाग में बिबकी
करण को निजाल्य प्राबल्यता घोर प्राबल्यता रूप म धर्मिक नही है। हमना धन
धर्म्यय होता है तथा सामन भी धर्मिकता रूप म धर्मिक नही है। हमना धन
निक प्रबल्यता धर्मिक सामन नही हा कम म कम धर्मिकता धर्मिकता का सामन है।
इतिथ यह भी स्पष्ट ही है कि धर्मिकता समय क बड़े उदाग का घोर उदाग

को जो निकट अविद्य म स्थापित हाने मान है दोनों को ही वह अधिक समज तक एक पक्षी प्रकार स भाव रहता है तो घामे पीछे की सभी बातों को नेतर बनना होगा। वर्तमान समय में प्रत्येक धीघोमिक इकाई तत्कालिक दिनचर्या में व्यस्त तथा मात्र कामों के हतु मासायित रहती है ताकि नेमरधारियों को प्रमथ रखा जा सके। इस प्रकार बहु बड़ी समस्याओं का जिन पर कि उसका घपना अस्तित्व निरर होता है मुना बँटती है। एक बहु समय घा गया है कि जो भोग इस समय उद्योगों को नियमित करते हैं, उनका तत्कालिक बाठावरण से घामे की सोचनी चाहिये तथा घपने अविद्यतत संकुचित इच्छित्तियों को त्याग कर घपने घोर सार्वजनिक मात्र के लिये राष्ट्रीय स्तर पर समष्टि रूप से कार्य करना चाहिए।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि १९५१ म आयोजना आयोग के तत्वाधान में घायो जित का उद्योग विकास समिति की एक उप-समिति की बैठक नई दिल्ली में हुई थी उसने धीघोमिक विवेकीकरण के परिणामस्वरूप होने वाली बेरोजगारी को कम करने के लिये उद्योगों को पूर्णस्वायत्त करण एक उन्हे निर्बाह भत्ता देने का सुझाव दिया था। जुलाई १९५७ में भारतीय भ्रम सम्मेलन द्वारा विवेकीकरण क सम्बन्ध में मामिकों का मार्ग प्रदर्शन करने के लिये एक धार्य समझौता बनाया गया था। इन समझौते के अनुसार विवेकीकरण की योजनाओं को लागू करने म निम्नलिखित बातों का ध्यान रचना आवश्यक है (क) वर्तमान मामिकों की कोई छुट्टी नहीं होने चाहिए घोर न ही उनकी घाय में कमी होनी चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि वर्तमान व्यवस्था बनाय रगनी चाहिये—बहुस उन मामिकों को छोड़कर जिनमें स्वाभाविक रूप से अक्षमता ही जाती है (ख) विवेकीकरण म जो लागू होते हैं उनका समया मामिक तथा मामिकों के बीच समान रूप से वितरण होना चाहिये तथा (ग) पारस्परिक सहमति से विवेकीकरण द्वारा कार्यभार को उचित प्रकार से निर्धारण करना चाहिये तथा कार्य की बजायो में भी उचित प्रकार से सुधार होना चाहिये।

उत्तर प्रदेश क उद्योगों में विवेकीकरण —

सन् १९३० म डा० राजेश्वर प्रसाद की अध्यक्षता म बनाई गई यम बाबू समिति के समग्र कार्य म सरकार द्वारा कानपुर की कपड़ा मिलों म विवेकीकरण का प्रथम प्रयत्न किया गया था। यह समिति विवेकीकरण योजना को इसी धर्त पर लागू करने को तैयार थी कि मामिकों के हित सुरक्षित रहे घौर उद्योग का विकास इस प्रकार हो कि विवेकीकरण द्वारा छुट्टी किए गये मामिकों को पुनः कार्य पर लगाया जा सके। यही प्रथम निम्नकार्य यम समिति (१९४६) के समुद्य प्रस्तुत किया गया था एवं अक्टूरी १९४६ के विदेशीय सम्मेलन में भी इस प्रथम पर विचार किया गया था। निम्नकार्य सन् १९५२ में नैनीताल में आयोजित उच्च विदेशीय यम सम्मेलन में भी कपड़ा एवं चीनी उद्योगों में विवेकीकरण के प्रथम पर विचार हुआ। नानेपन म विवेकीकरण के विविध महत्वपूर्ण पहलुओं पर भी विचार किया गया।

एक नुमर पर यमीर धाराए मयाए गब गीर बानीं ही पनीं को इसम काफ़ी कठिनाई वा सामना करना पडा । मारा बिबाध मुख्यत एक बात पर ही कन्द्रित बा कि हम योजना का कार्य बिबेकीकरण है मबबा कार्यान्वीयता । सरकार ने नैनीताल सम्मेलन में हम बिदे गये मित्रात्मों से पीछे इत्न से इन्कार कर दिया गीर धमिकों से इन प्रश्न पर फिर से बिचार करने की मांग की । प्रश्न में सरकार ने प्रगल्भ १९५३ में एक समिति की स्थापना की बिनाक अध्यक्ष इसाहाबाद उच्च म्वायालय क प्रबन्धका प्राण्ट म्वायाभीष थी बी बी प्रमाण ये । इन समिति का कार्य नैनीताल बिबेकीय सम्मेलन क निर्णयों पर बिलुत रूप से बिचार करना गीर इनके प्राचार पर कानपुर की छात्र कपण मिमा म धमम-धमम बिबेकीकरण को लागू करना बा । समिति न सितम्बर १९३६ में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की गीर बताया कि कठिनी ची हम को कष्ट पहुँचावे बिना किस प्रकार कानपुर की कपडा मिनों में बिबेकीकरण लागू किया जा सकता बा । यह भी अनुभव किया गया कि नैनीताल सम्मेलन में अपनावे गये मित्रात्मों को प्रम्य नीन कपण मिनों में भी लागू करना चाहिए । समिति थी बी बी प्रमाण की एक 'एक-गण्य-समिति' प्रम्य मिनों क विषय में मिचारिका करने के हेतु बनाई गई जिसका पत्रवरी १९३० में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की । बी बी० प्रसाद समिति की रिपोर्ट पर जून १९३३ में मनीमेठ में हुए विन्तीय सम्मेलन में बिचार किया गया । इसका पुरान्त बाद ही जुलाई १९३० में बिबेकीकरण के लिए भारतीय धम सम्मेलन में एक प्राण्ट समझौते का मुझब दिया । जिसका ऊपर उल्लेख किया जा चुका है । यह रिपोर्ट गीर भारतीय धम सम्मेलन की बिबेकीकरण क सम्बन्धित निष्परिण शस्य सरकार क बिचारानीय है । बिबेकीकरण गीर बायबुद्धता उगाया पर प्रम्यपण जारी है । 'म सम्मूलात्मक का बिबेकीकरण की योजनाओं को कानपुर की मनी मिनों से लागू करने के हेतु बिबाधक बिमुक्त किया गया है ।

उपसंहार -

कानपुर की हकनाम का परिणाम यह हुआ कि उद्योग में बिबेकीकरण क लागू करने के प्रश्न पर काफी बाद-बिबाध प्रारम्भ हो गया । भारत में इसका नाम हाजि सतरा एव 'यम मुरदा के न्पायो का ऊपर उल्लेख किया जा चुका है । मबबा म्बनाम मी बिचार है कि बिबेकीकरण योजनाया के परिणामस्वरुप बेरोजगारी एक धमिका की उत्पनी गीर उन्हें कष्ट नहीं हुना चाहिए । सरकार का दृष्टिकाल तो १ सितम्बर, मन् १९३४ में लोक म्बा द्वारा स्वीकृत बिबेकीकरण क सम्बन्धित प्रस्ताव से स्पष्ट हो जाता है जो हम प्रकार है - 'संगद का बिचार है कि यहाँ हम क दिन में प्राबन्धक है। यहाँ मया एव पूट उद्योगों में बिबेकीकरण को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए । यन्तु हम प्रकार की योजना एमे रूप से कार्यान्वित की जानी चाहिए कि धमिकों का बिष्पापन कम से कम हो । बिष्पापित धमिकों के रोडगार के लिए भी उचित मुबियाएँ प्रदान करनी चाहिए ।' 'सत्कामीन धम मंत्री

विश्वकीकरण

। गणतन्त्र बसाइ नई १९१२ म बन्दई म हूण धम सम्पन्न म बहा या
 विश्वकीकरण स्वयं मे घति प्रबन्ध हा सक्ता है। परन्तु अंस ब्रिटेन वाला भूष मे
 मोहित मनुष्य के लिए बिय बन सकता है बंसे हा यदि विश्वकीकरण म बरोजगारी
 में वृद्धि होती है तब यह उद्योग बन उरना। व लिए बहुत गतरलाब उपहार हा
 मक्ता है। बिदेपत धम बहत उपाया म विपय म हम अधिक आयधा रहता
 बाहिए। येमे उपाय भूमिओं को मनीनों को पनी पर विविदान कर बन है। प०
 मरु ने भी कहा या विश्वकीकरण एक प्रबन्ध बाज है परन्तु हम अधिक बाय
 कृपसता क लिए भी मानव क कुल पौर पोडा का सहन नहीं कर सकत। उत्तर
 ब्रह्म क लक्ष्मीन मुख्य मंत्री डा० सम्पूर्णानन्द ने स्पष्ट धरदो म कहा या
 बैनी प्राबन्ध हमारे रञ्जितिस मान बिहण पर बिबि मिश्रिया है उनका
 हेतु हूए बिदेसीकरण का तात्पर केबन यही हा मक्ता है कि इनम बस क वर्तमान
 मानवों का पुण्यत साम उगया या सके नया बिदेसीकरण के कारण बरोजगारी
 न हा।" उनका यह भी कथन या कि मानिसा न भी बिना बिषय क इन बात को
 स्वीकार कर लिया है। उनके अनुसार यदि विश्वकीकरण योजना कायमिन्न म हुई
 तो समाज म म हृदार धमिक बरोजगार हा जायत स्थानि बनपन क फपडा
 उद्योग कानपुर में मरुदुरी को उँषा न शोन क बाग धय स्थाना म प्रनिम्पय म हुई
 कर मक्ता घोर बिना बिदेसीकरण के धमिबा का औद्योगिक बिबाध (मयाधित)
 धमिनियम क मन्तव्यत घतिपूति कर छली बन बी गन्दाबा हा मक्ती है।
 भी टी० टी० इण्ड्यामाधारी ने भी कहा या कि बहुत समय धा गया है बबिन बिदेसी
 करण की नीति का धपनाला बाहिए। नका कायकन म गरमता म साथ या
 मक्ता है घोर धमिन को यह विरवाम रिनाया जा सक्ता है कि इनमे उट्टे हाति
 न होयी। बिना कष्ट क बिदेसीकरण (Rationalization Without Tears)
 एक नया नारा या जा उरले धामापनों का मुभाया घोर जिसमें उरले इस बात
 पर बोर दिया है कि बिदेसीकरण म धमिबा को कोई हाति न होयी बरोजगार
 धमिक गतिवीस हों तो राजगार क नये रोशों का निमाण हो सक्ता है।
 फिर भी मक्ती घोर करनी म बहुत धगर होता है घोर यही बर-बिबाध
 घोर मजमेद का कारण है। नरसोय प० हुगिर नय धास्त्री न कहा या "बिदेसी
 करण का बिभिन्न उद्योगा मे जिस प्रकार माणु बिबा नया है वह मानवीय मरकार
 हाग धपन उम हृ धारवागत व डिम्पुन विपरीत हुया है जो धामागत मरकार
 न उद्योगों की स्वीकृति न दिया या। यह बड़ दुग का विषय है कि धमनी नीति
 को माणु कले क लिए तथा धनुबित घोर लापरवीय रूप मे छली को को बि दस
 मे जारी है रोजन क लिए मरकार म धमी लक बाँ धामाधिक या नहीं उटाया है।"
 डा० सम्पूर्णानन्द न भी उत समय धर कहा या कि निम्ने ३ धमों मे १२००० धमिबां
 की छली हुई थी यद्यपि उता लर्न यह या कि दस ६९०० धमिबां का बबान
 के लिए बिदेसीकरण यात्रता को बर्नका देना बाहिए। परन्तु उपादन में वृद्धि मे

स्पष्ट है कि विवेकीकरण के रूप में कार्यशीलता हो रही है और इसका ठप धमिकों के ऊपर कुछ प्रभाव पड़ रहा है। धमिक प्रतिनिधियों द्वारा यह भी बताया गया है कि १९३९ एवं १९३१ के बीच में जबकि मित्तों ठकुओं एवं करणों की संख्या में कपड़ा उद्योग में वृद्धि हुई है वास्तव में धमि शक्ति में कमी हुई है। १९३९ में जब १८९ मित्तों की एक करोड़ ठकुएं प ठवा दो लाख करणों के तब इनमें ४४१ ९४९ धमिक कार्य पर सगे थे। परन्तु १९३२ में कपड़ा धर्म्ययन दल के अनुसार ४४३ मित्तों की १ १२,०० ००० ठकुएं एवं २ ०१ ००० करणों प परन्तु धमिकों की संख्या केवल ४ २२,०३२ थी। राजकीय धर्म ध्यूरी के विवेचन के अनुसार भी यद्यपि धमिकों की घास बढ़ गई है परन्तु महापुत्र से पूर्व के मूखों की देखते हुए वास्तविक मजदूरी प्रब भी कम है। अतस्त १९१ में संसद में एक प्रश्न का उत्तर देते समय यह बताया गया कि बांग्र प्रदेश की सूजी कपड़ा मित्तों में विवेकीकरण के कारण ४०१ धमिकों को अपनी मीकरी से ह्रास होना पड़ा था।

इसलिए धमिक नेताओं एवं मध्य वर्गों के बलाघों द्वारा विवेकीकरण को नार्थी का विरोध किया जाता है। भारत में विवेकीकरण के सतरों का उल्लेख ऊपर के पृष्ठों में किया जा चुका है। परन्तु साब ही यह भी बताया जा चुका है कि विवेकीकरण की वांछनीयता बहुत है और इसका बिना हमार उद्योग विवेककर कपड़ा एवं बूट उद्योग संसार के उद्योगों के सम्मुख नहीं टिक सकते। इसलिए वर्तमान समय में विवेकीकरण योजनाओं को बहुत सावधानी और देख-रेक के के साथ कार्यान्वित करने के प्रतिरिक्त और कोई रास्ता इच्छिगाचर नहीं होता। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि मासिक उत्पादन के समस्त क्षेत्रों में विवेकीकरण योजनाओं को लागू न करके और कबल धर्म बचत उपायों को ही धपनाकर, विवेकीकरण से अनुचित लाभ न उठाएं। यदि धमिकों को ऐसा करने से महीं रोका जा सकता तब धार्मिक उन्नति की बेरी पर मानव कल्याण की प्राहुति नहीं ही जानी चाहिए। महात्मा गांधी द्वारा धर्म बचत-उपायों के विरुद्ध दिये गए प्रवचनों को हमें इतना धीम नहीं भूतना चाहिए। जब तक हमार उद्योगपतिया म देश प्रेम की भावना उत्पन्न नहीं हो जाती और सरकार इस भावना में कोई कठार पग उठाने की परिस्थिति में नहीं हो पाती हम विवेकीकरण योजनाओं को चाहे जतनी वांछनीयता एवं धाब-मकता किन्तनी ही धधिक हो धीर-धीरे ही लागू करना चाहिए।

जाता है। "समयानुसार मजदूरी" में धमिक अपना काय धीमी गति किन्तु कुशलता पूर्वक करता है और उसकी धाय काफी सीमा तक नियमित हो जाती है। यह पद्धति विस्तृत सरण है और इस धन्तगत धमिकों में परस्पर स्पर्धा भी नहीं होती। मानिक ऐसी मजदूरी तक रति है जब काय का समानीकरण सरलता से नहीं हो सकता जबका कार्य का निरीक्षण सम्भव नहीं होता या कार्य धन्ताभाविक (Unusual) प्रकार का होता है तथा जब काय के गुण को कार्य की मात्रा से धमिक मूल्य दिया जाता है। समयानुसार मजदूरी को उच्च समय भी तरबीह (Preference) की जाती है जब कार्य में सावधानी एवं उचित ध्यान देने की आवश्यकता होती है तथा जब महुंगी सामग्री एवं नाजुक प्रकार की मशीनरी का प्रयोग होता है। हाँ हाँ धमिक ध्यक्तियों के संयुक्त उत्पादन में भी समयानुसार मजदूरी रना धमिक उत्तम है। धमानी तक भी छीक है जब धमिक को कोई गलती न होने पर भी कार्य में धिन्न पड़ जाता है जैसे सेती में मीनम बदलने के कारण धिन्न पड़ जाता है। परन्तु समयानुसार मजदूरी में यह हो सकता है कि धमिक धमिक कार्य न करे। इस पद्धति में धमिक कार्यकुशल ध्यक्ति को धमिक कार्य करने का प्रोत्साहन भी नहीं मिलता और कुल उत्पादन में कमी हो जाती है। इस ध्यनस्था में धमिक सर्वोत्तम की भी आवश्यकता होती है। इसके विपरीत 'कार्यानुसार मजदूरी' के धन्तागत प्रत्येक धमिक को कार्य की मात्रानुसार धदायगी की जाती है बाहू बहु इसे करने में कठिना ही समय लगाए। 'कार्यानुसार मजदूरी' को अभी तरबीह दी जाती है जब कार्य का समानीकरण तथा माप सरलतापूर्वक हाँ छदता है तथा मानिक बने ध्यय को धटाकर धमिक उत्पादन जाता है। "स ध्यनस्था के धन्तागत धमिक उत्पादन के गुण पर ध्यान दिये बिना ही धमिक से धमिक उत्पादन करना चाहता है। कभी-कभी धमिक धमिक उत्पादन करके धमिक धाय प्राप्त करना चाहते हैं। इन रगाधों में मानिक मजदूरी की दर धटाने की धेप्टा करता है जिसका धन्तागत परिणाम यह होता है कि धमिक की कार्यकुशलता घट जाती है। इसके धन्तागत संतोषजनक उभरछ दर निश्चित करना भी कठिन है। इस प्रकार समय समय पर मजदूरी की रोगों पद्धतियों की र्जानिक प्ररूप के विभिन्न रिधधधों द्वारा धानोपना हुई है।

इस बात के प्रयत्न दिये गए हैं कि मजदूरी देने में उपरोक्त रोगों पद्धतियों को धिया धिया जाए। धनधरूप "मारोही मजदूरी की र्जानी र्जान पद्धतियों" (Progressive Wage Systems of Premium Bonus Methods) धयनाई गई है। इन्हें कभी कभी मजदूरी धदायगी की प्ररणात्मक प्रणाली (Incentive Systems of Wage Payments) भी कहा जाता है। इसकी गणना कई प्रकार में की जाती है। एक पद्धति 'हेल्से र्जानी प्रणाली' (Halsey Premium System) या 'वेयर' (Weir) प्रणाली कहलाती है। इस पद्धति में यह धयन दिया गया है कि धमानी धीर उभरण धाना के सामों का गमन्ध्व कर दिया जाय तथा उनकी धानियों को दूर रिया जाए। इसके धनुसार कार्य की एक निश्चित

घोटीदारक मन्दिर्को को मन्डूरी

मात्रा मानक उत्पादन (Standard Output) के रूप में निर्धारित कर दी जाती है या एक निश्चित समय में पूरा हो जाती चाहिए। यदि कोई व्यक्ति इस प्रकार के परिणाम प्राप्त कर लेता है तो उस समय का अन्तर के लिए भी मन्डूरी का एक भाग प्रतिदिन के सामान्य वेतन के प्रतिनिधित्व में होता है। उदाहरणतः यदि निश्चित समय १० घण्टे है तथा वाय ६ घण्टे में पूरा हो जाता है तब व्यक्ति का ६ घण्टे की घण्टा की घोर मन्डूरी का एक भाग (मान मा ५०) ४ घण्टे अन्तर के लिए दिया जाता है। इस प्रकार यदि घण्टा १ घण्टे प्रति घण्टा है तो घण्टा (Premium) $= 2(6 \times \text{बचाया हुआ समय}) (६ घण्टे के लिए) - २ (मिटा गया समय) \times ६$ होयी। घण्टे व्यक्ति को कुल मिलाकर ६ घण्टे - २ (मिटा गया समय) $\times ६$ बचाए हुए घण्टे बड़ीयी। घण्टा ८० घण्टे - २ (मिटा गया समय) $\times ६$ । इस प्रकार भी व्यक्ति का के लिए निश्चित दर पर एक बोन्स दिया जाता है। इस प्रकार भी व्यक्ति का समयानुसार मन्डूरी का भरण होता है। माघ समय मासिक को उपा मन्डूरी नहीं देनी पड़ती। किन्तु इस व्यवस्था का दोष यह है कि वाय का स्तर कमी नहीं रहता अर्थात् निश्चित कर दिया जाता है कि उस प्रकार के व्यक्ति को बर्तनाई होती है।

एक अन्य तरीका राशन बड़ीया प्रणाली (Ration Premium System) है। इसका अन्तर्गत व्यक्ति को समयानुसार कम से कम मन्डूरी का प्राप्तिमान दिया जाता है। इसका अन्तर्गत व्यक्ति को पूरा करने का एक मानक समय निश्चित किया जाता है और यदि वह उस निश्चित समय में कम से कम पूरा कर लेता है तो पूरा समय एवं बचाए गए समय में समानुपात के अनुसार बोन्स मिलता है। उदाहरणतः यदि कार्य १० घण्टे में करना है और वाय ६ घण्टे में हो जाता है तो बचा हुआ समय ४ घण्टे है घण्टा निश्चित समय के ६ व भाग के आधार पर बोन्स दिया जाएगा। इस प्रकार यदि समय की दर १० घण्टे प्रति घण्टा है तो "रोशन प्रणाली" के अनुसार बड़ीयी $= \text{बचाया हुआ समय} \times \text{मिटा गया समय} \times \text{दर घण्टा}^{-१}$ निश्चित समय $= ४ \times ६ \times १० = २४०$ घण्टा व्यक्ति को कुल मिलाकर ६ घण्टे $+ २४० = २४६$ घण्टे मिलेंगे। इस प्रकार इस प्रणाली में हैम प्रणाली की घण्टा अधिक बोन्स प्राप्त होता है। किन्तु राशन प्रणाली द्वारा व्यक्ति बड़ीयी कमी मिलता है जब बचाया हुआ समय निश्चित समय के २०% से कम हो। २०% पर रोशन ठका हैम प्रणाली दोनों में समान बोन्स प्राप्त होता है और यदि बचाया हुआ समय निश्चित समय के २०% से अधिक हो तो राशन प्रणाली की घण्टा हैम प्रणाली में बड़ीयी

मन्डूरी प्रणाली को एक अन्य पद्धति भी है जिसे निम्न-वर्ण-मन्डूरी (Task Wages) कहा है। इसके अन्तर्गत व्यक्ति को एक निश्चित कार्य के लिए दिया जाता है। इस कार्य को उसे एक निश्चित पद्धति के अनुसार तथा एक विशेष

के सर्वोत्तर में एक निश्चित समय में पूरा करना होता है। विशेषतः जितने समय की अनुमति देता है यदि उसी समय में कार्य पूरा कर लिया जाता है और निर्धारित स्तर के अनुसार ही होता है तो अधिक को अपने ईनिक वेतन के प्रतिरिक्त कुछ धन लाभ भी दिया जाता है। यह लाभ साधारणतया अनुमोदित समयानुसार वेतन का २०% से ३०% तक होता है। यदि कार्य अनुमोदित समय में पूरा नहीं होता या निर्धारित गुण के स्तर को नहीं पहुँचता तो अधिक को केवल उक्त दिन का वेतन ही मिलता है।

फिर एक 'टेसर प्रणाली' (Taylor System) भी है जिसके अन्तर्गत प्रथम य मी के अधिकों का छीम परीक्षण ही जाती है यदि वे अपना कार्य निर्धारित समय ही पहिने कर लेते हैं। घट कभी-कभी ता एक समयानुसार मूल मजदूरी तय कर दी जाती है जिसके साथ-साथ उत्पादन के अनुसार उन्नत भी दी जाती है और कभी कभी प्रतिरिक्त कार्य के लिए बोनस भी दिया जाता है।

मजदूरी 'समाहित मजदूरी मान' (Sliding Scale System of Wages) की प्रणाली से भी निश्चित की जा सकती है। इसके अन्तर्गत मजदूरी को उत्पादन वस्तुओं के मुख्य बीजन निर्वाह के व्यय तथा लाभ के अनुसार बढ़ाया जाता है। मासिक इस प्रणाली को कभी अक्षय समझते हैं जब उत्पादित वस्तु के मुख्य बट्टे बढ़ते रहते हैं। परन्तु इस प्रणाली में काफी दोष हैं। विभिन्न कारणों से मूल्यों के परिवर्तित होने से गलती करना बहुत बठिन हो जाता है तथा अधिक से घाटा नहीं भी जा सकती कि वह बाजार के बोझ में माग लेया। बढमान प्रतिफल (Increasing Returns) के नियम के अन्तर्गत मुख्य गिन सघटे हैं किन्तु लाभ बढ़ जाते हैं। इसके प्रतिरिक्त मालिक तथा अधिक धन लाभ के हेतु मूल्य में परिवर्तन लाने का प्रयत्न कर सकते हैं। कुछ मालिक अपने कर्मचारियों का पूर्ण सहयोग तथा सहानुभूति प्राप्त करने के सिधे लाभ सहभागन (Profit Sharing) योजना को अपना लेते हैं। कुछ स्थानों में मजदूरी कानून द्वारा नियमित होती है और कुछ स्थानों में स्थूलतम मजदूरी निश्चित कर दी जाती है। कभी-कभी 'कार्यकुशलता अनुसार मजदूरी' (Efficiency Wages) की प्रणाली भी लागू की जाती है जितने अधिक की समस्त मजदूरी ही नहीं बरतू मूल मजदूरी भी कार्यकुशलता के अनुसार परिवर्तित होनी रहती है अर्थात् एक व्यक्ति जितना अधिक उत्पादन करता है उसे उतनी ही कार्यानुसार अधिक मजदूरी मिलती है और जितना कम उत्पादन करता है उतनी ही कम कार्यानुसार मजदूरी मिलती है अथवा जैसा टेसर प्रणाली के अन्तर्गत होता है प्रथम अंशों के अधिकों को छीम परीक्षणों की जाती है। कार्यकुशलता अनुसार मजदूरी मालिकों के लिए लाभप्रद है। यद्यपि मालिकों को अधिक उत्पादन के लिए अधिक धन देना पड़ता है तथापि अंधी जागत में बचत हो जाती है। किन्तु इसके अन्तर्गत कभी-कभी अत्यंत योग्यता के अधिक को अपने निर्वाह के लिए अर्थात् मजदूरी भी नहीं मिल पाती। घट कार्यकुशलतानुसार मजदूरी प्रणाली स्थूलतम मजदूरी का आरक्षण देने के परचात् ही अपनाई जानी चाहिये।

घोषोपेक्षित धर्मियों की मजदूरी

संश्लेष रूप में मजदूरी देने की विभिन्न पद्धतियों का उपरोक्त उल्लेख हम विनिये किया गया है क्योंकि यह पद्धतियाँ धर्मियों की कुल पाय उनकी कार्यक्षमता तथा राष्ट्रीय साम्राज्य तथा धार्मिक कल्याण पर प्रभाव डालती हैं। सामान्य रूप में यह कहा जा सकता है कि मजदूरी प्रदायणी की बाधु पद्धति द्वारा परिमाण या उत्पादन के अनुसार जितनी धर्मिक मजदूरी की प्रदायणी का संयोजन (Adjustment) होता है उतना ही धर्मिक धर्मिक द्वारा उत्पादन होता है। इसलिये जो पीयू के अनुसार 'राष्ट्रीय साम्राज्य और उनके द्वारा धार्मिक कल्याण में तनी उपति हो सकती है जब तकाम पाठितौयिक का जितना भी सम्भव हो तत्काम उत्पादन में समझ कर दिया जाय। सामान्यतया प्रभावार्थक रूप में यह तभी हो सकता है जब कार्य नुसार मजदूरी दी जाय जिन पर सामूहिक योजनाकारी द्वारा नियंत्रण किया जाता हो।"*

मजदूरी के सिद्धान्त — (Theories of Wages)

व्यापित भारत में मजदूरी की समस्याओं का विवेचन करने में पूर्व मजदूरी के सिद्धान्तों का भी उल्लेख करना आवश्यक नहीं होगा। हम मजदूरी की समस्याओं को दो भागों में बाँट सकते हैं अर्थात् सामान्य मजदूरी (General Wages) की समस्या तथा सापेक्ष मजदूरी (Relative Wages) की समस्या। सामान्य मजदूरी की समस्या यह है कि धर्मियों का राष्ट्रीय साम्राज्य में से अपना भाग जिन साधारण वर मिलता है। सापेक्ष मजदूरी की समस्या यह है कि विभिन्न स्वतंत्रों तथा विभिन्न समर्थों पर एक अर्थात् दूसरी अर्थात् धर्मियों में मजदूरी की दर किस साधारण पर निर्धारित होती है। सामान्य मजदूरी को नियंत्रित करने के विभिन्न तर्कों को 'मजदूरी के सिद्धान्त' कहते हैं। इन संशोधन में ही इन सिद्धान्तों का वर्णन करते क्योंकि यह 'धर्मसास्त्र के सिद्धान्त का विषय है जिनके प्रमाणित तथा विचार के अध्ययन करना चाहिए।

मजदूरी का जीवन निर्वाह सिद्धान्त — (Subsistence Theory of Wages)

मजदूरी को निश्चित करने के लिए एक सिद्धान्त "मजदूरी का निर्वाह सिद्धान्त" है जिसका धार्मिक (Origin) फिजियोक्रेटिक (Physiocratic) धर्मिय प्रकृतिवादी विचारपाठ के प्रथमिनी धर्मसास्त्रियों द्वारा हुआ जो १९ वीं शताब्दी में साधारणतः मान्य था। जर्मनी का धर्मशास्त्री सागाने (Lassalle) इस मजदूरी का 'मौद्र सिद्धान्त (Iron Law of Wages) कहा था। हालतमार्थ के अपने 'योग्य सिद्धान्त' का साधारण भी इसी सिद्धान्त को बनाया था। विचारों का

* "The interest of the national dividend and through that economic welfare will be best promoted when immediate reward is adjusted as closely as possible to immediate results and this can in general be done most effectively by piece wage scales controlled by collective bargaining"

— Pigou — Economics of Welfare

नाम भी इस सिद्धान्त से सम्बन्धित है यद्यपि बड़ इसमें पूर्णतया सहमत नहीं था। इस सिद्धान्तानुसार मजदूरी धमिक और उसके परिवार के न्यूनतम जीवन-निर्वाह के स्तर अनुसार निर्धारित हो जाती है। यदि मजदूरी इस स्तर से अधिक बढ़ती है तो धमिकों में बिबाह अधिक होने लगत है और परिवार के सदस्यों की संख्या बढ़ जाती है। स्वभावतः धमिकों की पुति बढ़ती है और परिणामस्वरूप मजदूरी फिर बढ़कर जीवन निर्वाह के स्तर पर आ जाती है। दूसरी ओर यदि मजदूरी इस स्तर से नीचे गिरती है तो बिबाह और मृत्यु दर बढ़ती कम हो जाते हैं। कम पोषण से मृत्यु दर तेजी से बढ़ती है और अन्त में धन की पुति घट जाती है और मजदूरी जीवन-निर्वाह के स्तर पर आ जाती है।

यह सिद्धान्त अत्यन्त निष्ठावादी है और मार्क्स के जनसंख्या सिद्धान्त पर आधारित है। कभी-कभी यह भारत जैसे विद्युद् देश पर लागू हो जाता है जहाँ धमिक प्रति निर्यात और अल्पव्ययी पूँजीपतियों के अल्पता माग करने में अत्यन्त रहते हैं और उन्हें मजदूरी जीवन निर्वाह के स्तर पर ही जाती है। जिन्हु अल्प उद्योग देशों में धमिक अधिक मजदूरी पाते हैं। वहाँ मजदूरी में वृद्धि जीवन स्तर को उँचा करती है जिन्हु अल्प दर को नहीं बढ़ाती अतः यह सिद्धान्त उन देशों पर लागू नहीं होता। यह सिद्धान्त विभिन्न रोटगार की विभिन्न मजदूरी के अन्तर को भी स्पष्ट नहीं करता जबकि जीवन-निर्वाह-स्तर केवल कुछ अल्पवर्गों को छोड़कर अल्पमग सभी धमिक वर्गों के लिए एक जैसा ही होता है। यह सिद्धान्त धमिकों की पुति पर अधिक धन देता है तथा माँग के प्रभाव पर विचार नहीं करता जो मजदूरी के निर्धारण में समाज महत्वपूर्ण है।

मजदूरी का जीवन-स्तर सिद्धान्त -- (The Standard of Living Theory of Wages)

१६ श्री शान्सी के अन्त म कुछ भेगकों में जीवन-निर्वाह सिद्धान्त का अन्वयण करके एक अन्य सिद्धान्त दिया जिसको 'मजदूरी का जीवन-स्तर सिद्धान्त' कहा जा सकता है। इस सिद्धान्त के अनुसार मजदूरी का निर्धारण जीवन-निर्वाह के स्तर से न होकर धमिकों के उच्च जीवन-स्तर से होता है जिसके अन्वयण हो जाते हैं। इस अन्वयणित सिद्धान्त में कुछ मायता भी है क्योंकि धमिक अपने जीवन-स्तर से नीचे तो मजदूरी स्वीकार नहीं करते। हमारे अनिश्चित उँचा जीवन-स्तर उनकी कार्यकुशलता को भी बढ़ा देता है अतः मजदूरी भी बढ़ जाती है। अनेक देशों में धमिक अपने मजदूरी के उच्च अपनी पुति पर राक रखते हैं जिससे मजदूरी उनके जीवन-स्तर से नीचे न गिर जाय। तथापि जीवन-स्तर का मजदूरी पर केवल अल्पप्रभाव प्रभाव होता है क्योंकि केवल जीवन-स्तर बढ़ाने से ही धमिक मजदूरी नहीं मिल सकती जब तक सीमांत उत्पादकता भी न बढ़े। यह सिद्धान्त मजदूरी पर माँग के प्रभाव का भी विचार नहीं करता।

मजदूरी का दोषाधिकारी सिद्धान्त — (The Recidual Claimant Theory of Wages)

धर्मवीरन धर्मदासजी बॉकर (Walker) ने एक धर्म सिद्धान्त "मजदूरी का दोषाधिकारी सिद्धान्त" के नाम से दिया है। इस सिद्धान्तानुसार उत्पादन के दोषाधिकारी (Factors of Production) को मजदूर व्याज तथा लाभ का मुग्तान करने के परवाह को कुछ बच जाता है वही मजदूरी के रूप में मिलता है। बॉकर के अनुसार मजदूर व्याज एवं लाभ निश्चित नियमों में निर्धारित हान है। परन्तु बर्षोक्ति मजदूरी को निर्धारित करने का कोई विशेष नियम नहीं है धर्म धर्मियों को मजदूर व्याज तथा लाभ के मुग्तान के परवाह को बच जाता है वही मिलता है। अतः यदि धर्मिक कार्यकुशलता से राष्ट्रीय आय बढ़ जाए तभी मजदूरी भी बढ़ सकती है।

इस सिद्धान्त में कुछ स्पष्ट दोष हैं। यह इस बात को स्पष्ट नहीं करता कि धर्मिक संघों द्वारा मजदूरी कैसे बढ़ा सी जाती है। यह सिद्धान्त मजदूरी पर पूर्ण के प्रभाव का भी विचार नहीं करता। इसके धर्मिक मजदूरी उत्पादन में पूरा ही व्यय कर दी जाती है अतः बचे भाग का धर्मिकारी धर्मिक नहीं बल्कि उद्यमकर्ता होता है। और फिर यदि जैसा बॉकर कहते हैं मजदूर व्याज एवं लाभ की निश्चित नियमों द्वारा धर्मिका की जा सकती है तो कोई कारण नहीं है कि मजदूरी निर्धारण की भी धर्मिका उसी प्रकार न हो सके।

मजदूरी निधि सिद्धान्त — (Wages Fund Theory)

मजदूरी का एक धर्म सिद्धान्त "मजदूरी निधि सिद्धान्त" कहलाता है। इस सिद्धान्त का उल्लेख एडम स्मिथ ने भी किया था किन्तु यह "ए० एम० स्मिथ" के नाम से सम्बन्धित है। स्मिथ (1776) के अनुसार मजदूरी उद्यमकर्ता और पूँजी के अनुपात पर निर्भर करती है। यहाँ पर उद्यमकर्ता के धर्म धर्मियों की उद्यम संस्था में है जो मजदूरी पर कार्य करने को प्रस्तुत है और पूँजी में उद्यम के वेतन कम पूँजी में है और इनमें भी समान पूँजी से नहीं बल्कि उद्यम पूँजी से है जो धर्म के सीधे धर्म के लिए व्यय की जाती है। अतः इस सिद्धान्तानुसार मजदूरी दो बर्गों पर निर्भर करती है। प्रथम मजदूरी निधि धर्मिका बच पूँजी पर जो धर्म के व्यय के हेतु धर्मिका रख दी जाती है। द्वितीय उद्यमकर्ता द्वारा धर्म धर्मियों की संस्था पर। अतः मजदूरी तक तक नहीं बढ़ सकती जब तक या तो मजदूरी निधि न बढ़े या धर्मिकारी की संस्था में कमी न हो। बर्षोक्ति यह सिद्धान्त मजदूरी निधि को निश्चित मानता है अतः मजदूरी के कुछ वेतन धर्मिकों की संस्था में कमी होने पर ही बढ़ सकती है। इसलिए यदि धर्मिक धर्मिका रखा है उद्यमिक धर्मिका धर्मिका है तो उद्यमिक धर्मिका धर्मिका पर रोक लगानी होगी। इस प्रकार यदि धर्मिकों का कोई धर्म धर्मिक मजदूरी धर्मिका करने में लगन हा जाता है तो उद्यमिक धर्मिका धर्मिका धर्मिका कि धर्म धर्मिकों को कम मजदूरी मिलेगी।

इस सिद्धान्त की प्रालोचना पौर्नटम ब्रैन्स और अन्य संबंधितियों ने की है। वे० एस० मिस ने स्वयं दूसरे संस्करण में इस सिद्धान्त में संशोधन किया था। इन सिद्धान्त की सबसे अधिक प्रालोचना इस बात पर की गई है कि मजदूरी निधि केवल धन्यकारीय प्रवृत्ति को छोड़कर निश्चित और पूर्व निर्धारित नहीं होती। निधि का विचार ही अर्थशास्त्रिक है। राष्ट्रीय सामाजिक निधि न होकर एक बहाव है तथा मजदूरी की प्रदायणी किसी ऐसी निधि में से नहीं होती जो मजदूरी सुपटान के लिए प्रसंग रखी हो, बल्कि राष्ट्रीय भांडाई से की जाती है। यह सिद्धान्त विभिन्न व्यवस्थाओं में विभिन्न मजदूरी के स्तर को भी स्पष्ट नहीं करता। इसके प्रतिरिक्त यह सिद्धान्त धर्मियों की एकता मान लेता है जो वास्तव में नहीं होती। वास्तविक जीवन में मजदूरी श्रमिक सबों की कार्यवाही के प्रत्यक्ष मूल्य की बह जाती है और यह कहना प्रसंग है कि यदि एक उद्योग के धर्मियों की मजदूरी बढ़ा दी जाय तो अन्य उद्योग के धर्मियों को हानि होगी। इन सिद्धान्त का विवेचन प्रत्येक प्राथमिक धर्म शास्त्रियों जैसे टॉसिन और प्रॉडि ने भी किया है। यद्यपि यह वास्तविक जीवन में मजदूरी निर्धारित करने वाला सिद्धान्त नहीं माना जा सकता।

मजदूरी का सीमांत उत्पादकता सिद्धान्त —

(Marginal Productivity Theory of Wages)

मजदूरी का अन्य महत्वपूर्ण सिद्धान्त "मजदूरी का सीमांत उत्पादकता का सिद्धान्त" है। इन सिद्धान्तानुसार श्रमिक के लिए श्रम की एक इकाई की जो सीमांत उत्पादकता होती है उसी के अनुसार मजदूरी निर्धारित हो जाती है। एक स्वतंत्र धर्मव्यवस्था में मजदूरी ऐसे श्रमिक के निबन्ध (Net) उत्पादन के बराबर होती है जिस श्रमिक का रोजगार सीमांत बहा जाता है। निबन्ध उत्पादन से धर्म शुद्ध उत्पादन के मूल्य में उस प्रतिरिक्त निबन्ध योग्य से है जो किसी भी एक उत्पादन को प्रतिरिक्त रूप में बनाने में होती है यद्यपि यह सीमांत उत्पादकता पर निर्भर करती है। अन्य धर्मों में यदि हम यह मान लें कि वस्तुओं की पूर्ति तथा उत्पादित वस्तुओं का मूल्य स्थिर है तो श्रमिक की इकाई जिसकी श्रमिक संस्था में एक उद्योग में प्रदायी जाएगी उसी ही उक्त इकाइयों द्वारा बहती दर से उत्पादन होगा। श्रमिक उस समय तक श्रमिक की इकाई बढ़ाता जाएगा जब तक श्रमिक द्वारा निबन्ध उत्पादन मजदूरी की दर से अधिक है। किन्तु एक स्थिति ऐसी भी प्राण्यी जब श्रमिक की इकाई को रोजगार में समाप्त जाने से जो उत्पादन में कृषि होगी वह श्रमिक को ही नहीं मजदूर के बराबर होगी। श्रमिक की इन इकाई को सीमांत श्रमिक बहा जाएगा तथा प्रत्येक अन्य श्रमिक की मजदूरी की दर इस श्रमिक को ही नहीं मजदूरी की दर पर निर्भर होगी। श्रम धर्मों में श्रमिक उस समय तक धर्मियों को रोजगार देता रहेगा जब तक धर्मियों को ही नहीं मजदूरी उत्पादित वस्तुओं के मूल्य से कम रहती है। यदि मजदूरी सीमांत निबन्ध उत्पादन से अधिक है तो श्रमिक धर्मियों के रोजगार में कमी कर देगा और यदि मजदूरी

मीमान्त निबल उत्पादन में कम है तो वह प्रथम धर्मिकों की रोजगार देकर अपने काम को बढ़ाएगा। अन्य धर्मों में मासिक धर्मिक की मीमान्त उत्पादनता में प्रथम मजदूरी उसको नहीं देगा। यह भी नहीं समझना चाहिए कि मीमान्त धर्मिक न्यूनतम कार्यकुशलता का धर्मिक हाता है बल्कि वह भी माघारण कार्यकुशलता का धर्मिक होता है। वह इस धर्म में मीमान्त है कि बर्तमान मूल्य तथा मजदूरी को देखने हुए उसको रोजगार देने के पश्चात् मासिक के लिए धर्म की पूर्ण पूर्ण हो जानी है।

यह विज्ञान भी कई धर्मों पर ध्यायचित हुआ है। यह धर्मिकों की पूर्ण पर जिन धर्मों का प्रभाव पड़ता है उन पर विचार नहीं करता। मजदूरी केवल एक उत्पादन के लिए दिया गया मूल्य ही नहीं है बल्कि वह एक धर्मिक की प्राय भी है तथा इनका प्रभाव धर्मिक की कार्यकुशलता पर पड़ता है। मजदूरी केवल धर्मिक की मीमान्त उत्पादनता के बराबर ही नहीं होनी चाहिए बल्कि उसके जीवन-स्तर को बनाए रखने के लिए पर्याप्त होनी चाहिए। यदि मजदूरी धर्मिकों के जीवन-स्तर को दृष्टि में धर्मिक नहीं है तो या तो जीवन-स्तर गिर जाएगा अथवा उनकी कार्यकुशलता पर बाधों या जम दर में कमी हो जाएगी। एसी परिस्थिति में धर्म की पूर्ण कम होगी और मजदूरी बढ़ जाएगी। इसके धर्मिक पर विज्ञान पूर्ण प्रतिक्रिया की परिस्थितियों मान मता है यद्यपि वास्तविक जीवन में कई बार धर्मिक परस्पर संगठित होकर धर्मिक धर्मों के द्वारा धर्म की पूर्ण पर नियंत्रण कर अपनी मजदूरी बढ़वा लेते हैं। वास्तविक जीवन में मजदूरी को नियंत्रण करने में मानवीय धारणाएँ भी कार्य करती हैं। इसके धर्मिक मीमान्त उत्पादनता विज्ञान यह मानकर समझता है कि वह अनुपात जिनमें उत्पादन के विभिन्न उत्पादन रोजगार पर भयाए जाते हैं स्वतन्त्रतापूर्वक बढ़ने जा सकते हैं। धर्म यदि धर्म में धर्म पूर्यो नहीं हो तो यह विज्ञान साम्य नहीं होगा यद्यपि अपने समय में यह बात सम्भव नहीं है। यह विज्ञान यह भी मान मता है कि किसी एक उत्पादन में परिवर्तन किया जा सकता है जबकि अन्य उत्पादन एक में रहेंगे परन्तु वास्तविक जीवन में ऐसा नहीं होता क्योंकि धर्मिक की एक इकाई में परिवर्तन करने के साथ ही अन्य उत्पादकों को भी घटाना बढ़ाना आवश्यक हो जाता है। इसके धर्मिक पर विज्ञान धर्म की इकाइयों (धर्मिकों) की कार्यकुशलता समान मान मता है क्योंकि यदि धर्मिक एक जैसे नहीं होते तो धर्मिक की मीमान्त उत्पादनता भी नहीं बतायी जा सकती। परन्तु एक धर्म में एक ही धारणा में जैसे विभिन्न कार्यकुशलता के धर्मिक एक दूसरे के बहिष्कृत होते हैं। फिर यह मानना संभव नहीं है कि प्रत्येक घौडोगिक इकाई धर्मिक धर्म सम्यक करने के लिए कार्य करती है।

इस प्रकार इस मीमान्त उत्पादनता के विज्ञान के विरुद्ध विभिन्न धर्मिकों की गई है किन्तु उनमें से धर्मिक केवल वास्तविक है। इस विज्ञान की मुख्य धारणा यह है कि यह विज्ञान मजदूरी निर्धारण करने में धर्मिकों की पूर्ण तथा

उसके जीवन स्तर का विचार नहीं करता तथा पूर्ण प्रतिपेक्षिता की स्थिति को मान लेता है जो सदैव नहीं पाई जाती।

टोसिंग का मजदूरी सिद्धान्त — (Tosing's Theory of Wages)

डॉ० टोसिंग ने सीमांत उत्पादनता के सिद्धान्त की व्याख्यान करते हुए अपना सिद्धांत भी दिया है कि मजदूरी धनिक के उत्पादन की सीमान्त "मितीकाटा" (Marginal Discounted Product of Labour) को बताती है। इनका विचार है कि धनिक को सीमान्त उत्पादनता की पूर्ण रचि नहीं मिल सकती क्योंकि उत्पादन में समय लगता है और धनिक का धनियम पूर्ण उत्पादन मुरन्त शक्त नहीं किया जा सकता। किन्तु इन समय में धनिकों को निर्बाह के लिए सहायता मिलनी चाहिए। यह सहायता प्रतीपति मानिक द्वारा ही जाती है। मानिक धनिक की आशासिक्त (Expected) सीमांत उत्पादनता के अनुसार पूर्ण रचि नहीं देता। यह जो धनियम रचि देने में कोसिक्त उद्यता है उसकी हानि-पूर्ति के लिए वह धनियम उत्पाति में से कुछ प्रतिशत रचि की कटौती कर लेता है। टोसिंग के कथनानुसार यह कटौती ध्याज की बामु दर पर होती है। इन प्रकार जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है मजदूरी धनिक के कुल उत्पादन में से मितीकाटा (Discounts) को रचि घटाकर होती है। यत यह सिद्धान्त इस बात पर आधारित है कि धनिक तथा प्रोपी में सहयोग के कारण तथा संयुक्त उत्पादन होता है तथा इन दोनों के योगदान को पूरक-पूरक करना आवश्यक बालि है। क्योंकि धनिक को संयुक्त उत्पादन के बने से पूर्व ही सहायता करनी पड़ती है। उनको यह जुगतान बामु ध्याज की दर पर कुछ रचि काटकर किया जाता है। यत मजदूरी धनिक के उत्पादन के सीमांत मितीकाटा का प्रतिरूप है।

टोसिंग का यह सिद्धान्त बहुत उलम्ब हुआ है और "वास्तविक जीवन की समस्या से दूर, ध्याकहार्तिक तथा धस्याट" है। इनके धरिरेरिक्त यह सिद्धान्त धन की पूर्ति का ध्यान भी नहीं रखता। यह धन की पूर्ति को निरिक्त मान लेता है और तब सीमांत उत्पादन पर विचार करता है। यत यह सिद्धांत भी मजदूरी का शेषाधिकारी सिद्धान्त (Residual Claimant Theory) जैसा ही है क्योंकि यह यही बताता है कि मजदूरी समस्त उत्पादन में से उत्पादन के अन्य उत्पादकों के लिए जुगतान को घटाकर बची हुई रचि रचि है। इस प्रकार इस सिद्धान्त में भी शेषाधिकारी सिद्धान्त के सभी शेष शये जाते हैं।

मजदूरी का मांग तथा पूर्ति सिद्धान्त — (Demand and Supply Theory of Wages)

जैसा डॉ० मार्शल ने बताया है वास्तविक जीवन में मजदूरी विभिन्न देशों की विभिन्न परिस्थितियों के अनुसार धनिक की मांग तथा पूर्ति दोनों के ही द्वारा निर्धारित होती है। बात यत में मानिक धनिक को सीमांत उत्पादनता के अनुसार मजदूरी देता है। सीमान्त उत्पादनता धनिक की उन शवाई की उत्पादनता को

रहते हैं जिस इकाई को मासिक हाथ बिछप मजदूरी दर पर तथा उत्पादन के तत्कालीन मूल्य पर रोजगार में समाना सामदायक होता है। यह स्वतन्त्र प्रतिनोदितों के मातृगत निर्धारित मजदूरी की उच्चतम सीमा है। पूर्ण पत्र में धमिक एक विशेष जीवन-स्तर पर अपने तथा अपने परिवार के जीवन-निर्वाह के लिए पर्याप्त राशि से कम मजदूरी स्वीकार नहीं करते। यह विगत जीवन-स्तर धमिकों को मगठन शक्ति एवं मासिकों से सौदाकारी शक्ति और इस म धमिकों की समस्या पर निर्भर करता है। यदि पूर्ण पर कोई रोक न हो तो धमिक समगठित हू तो मजदूरी निर्वाह-स्तर तक, जो न्यूनतम सीमा है गिर जाती है। जहां भी धमिक सर्वा त है धमिका उनकी पूर्ण सीमित है वहां जीवन स्तर उच्चतम स्तर पर निश्चित किया जा सकता है। पर मासिक सौनागठ उत्पादकता से परिद मजदूरी न तो द सरते हैं और न ही देते हैं। हुनरी और धमिक धरने बतमान जीवन-स्तर को बनाये रखने के हेतु धामायक मजदूरी से कभी कम स्वीकार नहीं करते। इन दोनों सीमाओं के मध्य में धमिक की मांग तथा पूर्ण एवं प्रत्येक दम को तुलनात्मक शक्ति के अनुसार मजदूरी तन होती है। यदि धमिक की धमिक मांग है या धमिक पूर्ण रूप से समगठित है तो मजदूरी बढ़ जाती है और यदि उनकी पूर्ण धमिक है और धमिक समगठित नहीं है तो मजदूरी गिर जाती है। पहिले अध्याय में जना कि बलाया जा चुका है धम की विशेषताएं धमिकों की शक्ति पर बहुत प्रभाव डालता है और मासिकों की धमिका उनकी शक्ति कम हो जाती है। धम की मांग तथा पूर्ण की शमाया पर भी एक विशेषताओं का नमुचित प्रभाव पड़ता है।

मजदूरी के सिद्धांतों का उल्लेख मगिण बर्गम देन का मन्व्य इस बात की धार ध्यान धारणित करना है कि धमी तक मजदूरी का बाई पूर्ण और स्पष्ट सिद्धांत नहीं बन पाया है। इस कारण किसी भी दम में मजदूरी नीति निर्धारण में धनेक कठिनाइयां धती है। धमिकों का धम उत्पादन का एक उत्पादन मात्र नहीं समझा जाता और इस बात का नहीं माना जाता कि उनका मूल्य भी मांग और पूर्ण की शक्तियों द्वारा निर्धारित किया जा सकता है। राजभार की शक्ति व स्थान पर धम मास्केरी की मंजिन का महत्व बनना जा रहा *। धमिक की उत्पादकता धमिकों की सौदाकारी की समता मरकार के विधान तथा मरकार का हस्तगत धारिक विधाम की तीव्रता जीवन-निर्वाह सामन उद्योग की कुशलता धमका सामा जिक स्वाय की धाम-जहाई धमि-धमि धम गभी देगा म मजदूरी नीति निर्धारण पर प्रभाव डाल रही है। भारत कम देन म जहा धमिक विकास हो रहा * एक टिम और शक्ति मजदूरी नीति व निर्धारण को एक मन्वीर ममका है।

भारत में मजदूरी समस्या का महत्व —

मजदूरी की समस्या इनकी महत्वपूर्ण है कि मन्व्य दगा व शिबेधवार शक्तिधों का ध्यान मईक इसरी और धारणित गया *। धम समस्या माग में धन धान मन्व्य के धमिक शक्ति तथा दृष्टि ना गई * और मन्व्य सीध मन्व्य-धन धामा

बाहिए। इस मस्य का भी कोई बस्तीकार नहीं कर सकता कि मजदूरी बड़ घुरी है जिस पर अधिकतम कम समस्याएं घूमती हैं। 10 प्रौद्योगिक संघर्षों का मजदूरी ही मुख्य कारण है। यह भूमि की प्राय का मुख्य श्रोत है। उसका तथा उसके परिवार का जीवन-निर्वाह उनकी प्राप्त मजदूरी पर निर्भर करता है। अन्य लोगों को कोई प्राय यदि हसी भी है ता घरघस्त गीमित हाती है। घत मजदूरी अधिक न लिए सबन अधिक महत्वपुल है। अधिक का कस्याण तथा कार्यकुशलता उसकी प्राय की रक्ति पर निर्भर करती है। घपर खेतीहर अधिक को भी से लिया प्राय तो यह कहा का सकता है कि जनसभ्या का अधिकतम भाग भूमिर्ता का है। घत समाज का कस्याण अधिक के कस्याण स घनिष्ठ रूप स सम्बन्धित है। यह ही मजदूरी की समस्या का सबसे अधिक महत्व है।

यह भी उल्लेखनीय है कि उक्त समय मजदूरी की समस्या इतनी घम्भीर नहीं थी जब अधिकतम अधिक घामी से कृषि श्रुतु के घतिरिक्त जामी समय में घपनी प्राय बढ़ाने प्रौद्योगिक क्षेत्रों में घा जाते घ घोर कम मजदूरी स्वीकार कर लते ब। अधिकतर अधिक घपने परिवार को प्राय घ ही छोड़ घाते ब जहाँ इनका निर्वाह कृषि-बन्धे से होता घा। किन्तु वर्तमान समय में घूमि पर जनसभ्या का बंधन बढ़ने में कृषि घम्पा इतना सामग्र्य नहीं रहा है घौर प्रौद्योगिक अधिक को घब तक स्वाधी नहीं ब अधिकतमिक स्वाधी होते ब रहे हैं। मधुक्त परिवार व्यवस्था भी इतल घति में घृष्टती जा रही है तथा घब अधिक अधिकतर घपनी ही प्राय पर निर्भर है। घत मजदूरी की समस्या घोर अधिक महत्वपुल हा गई है।

इसल घतिरिक्त अधिक साधारणतया घज्ञानी तथा घघिहित होते हैं घौर अधिकतम घपने अधिकतर तथा नर्तम्य समसन में घसमर्य होते हैं। घम की विशेष लघों के कारण मासिकों की घघेधा अधिक की गीशकारी घक्ति कम हाती है। अधिकों का संगठन घभी भी बहुत दुर्बल है। इसका परिणाम यह है कि मासिकों द्वारा अधिक का करलना न सापण होता है तथा उनको घरघस्त कम मजदूरी की जाती है। घन घमनीय इष्टिकोण में भी मजदूरी की समस्या का घीघ समाधान घाबदयक है। मरकार के लिए भी मजदूरी समस्या महत्वपुल है क्योंकि यह वेन के समस्त बघों के लिए स्वाय का मापदण्ड है। मासिकों के इष्टिकोण में भी मजदूरी महत्वपुल है क्योंकि मजदूरी उत्पादन मुख्य का एक मुख्य घघयक (Component) है।

मजदूरी समस्या का महरय इन लघ्य में भी है कि अधिकतर कारखानों में घगलित मजदूरी की बरें एवं घर्बतामिक घन्तर पाए जाते हैं तथा विभिन्न मजदूरी की दरों में घन्तर निर्धारित करने के हेतु भी किसी योजना का घभाव है। प्रत्येक कारणान में बबन कार्य का विभाजन कर लिया है घौर विभिन्न भ रियायें बनाली है। उन्होंने इन भ रियों की घघाबनी का भी स्वयं निर्माण किया है। विभिन्न बघीयों

Wages form the pivot round which most labour problems revolve.

पर प्राप्त हुआ जाये। यह मजदूरी यणना ४४ मुख्य उद्योगों में हो रही है, जिनमें धानियों का ८२% धमिक कारखानों के ७६ प्रतिशत धमिक घीर बाजार के सननम नमस्त धमिक धा जाते हैं। मजदूरी यणना द्वितीय पंचवर्षीय योजना की सिफारिशों के अनुसार हो रही है और इसका प्रारम्भिक कार्य पूरा हो चुका है।

भारत का औद्योगिक धमिकों की मजदूरी इस में सर्वेप कम रही है। १९२१ में बम्बई का धमिक परिवार बच्चों की भी फिख्त सिराब हाप की गई जाब से पला पसता है कि औद्योगिक धमिक यद्यपि प्रकाल संरता (Famine Code) में निर्धारित धमिकतम मनाज का हा उपमोय करत से किन्तु उनका साहार बम्बई जल संघटा के धगुर्वत केरियों को दिये नये साहार से कम बा। १९३२ में बम्बई सरकार द्वारा की गई मजदूरी यणना से यह बिरित हुआ कि सुठी कपड़ा मिलों में धमिकों की मायिक धाय इस प्रकार थी गोकक में १८% धमिकों की ३ सि० से २ सि० तक घालापूर में ३२% धमिका की ७ २ सि० से १२ सि० तक बम्बई घहर में २०% धमिकों की २२ २ सि० से कम तथा ३२% धमिकों की २२ सि० से ३० सि० तक। बम्बई सरकार के धम विभाग द्वारा की गई जाब का धनुमार भी संघटित उद्योगों में धमिका का प्रत्येक परिवार की धीसतन धाम मुड से पूर्व बम्बई में २० रुपए, महामराजाब में ४६ रुपए, घोसापुर में ४० रुपए तथा मद्रास में ३७ रुपए प्रति माह थी। घनगठित उद्योगों में धाय २ रुपए से २७ रुपए प्रति माह तक थी। डा० बी० क० धार बी० राब हाप १९३१-३२ की राष्ट्रीय धाय की जाब का धनुमार धीमत बायिक मजदूरी बिहार तथा उड़ीसा में ४२३ रुप० पंचाब घीर उत्तरी पश्चिमी सीमांत प्रान्त में ४३४ रुप० मद्रास में ३०२ रुप० बम्बई में २६२ रुप० बयास में १६४ रुप० मध्य प्रदेश में १८७ रुप० उत्तर प्रदेश में १२६ रुप० एब धगम में ६३ रुपए थी। रुपए धम धायोग में धमिक सति पूरि धधि नियम का धमर्षत धाने बासे मामलों के साबार पर मजदूरी के धाकड़े एबधित किए थे। इसका धनुमार भी बिभिन्न प्रान्तों में कम मजदूरी दी जाती थी। धायोग में यह भी बसापा कि जहां तक धनुघल धमिकों का सम्बन्ध है वे धीसत संख्या के परिवार का धामन ठक तक नहीं कर सकते जब तक परिवार में एक से धधिक मजदूरी कमाने बासे न हो।

इस प्रकार मुड से पहिले मजदूरी बहुत कम थी और यद्यपि मुड काम में तथा उतके परचात् मजदूरी स्तर में धधिनतर वृद्धि हुई है किन्तु मुख्य वृद्धि को बिचार में रराते हुए यह वृद्धि धधिक प्रतीत नहीं होती। बी० बी० बी० विपी न भी धपनी धंपजी की पुरतक "भाष्ट्रीय उद्योग की धम समस्याएँ" में हंमिध किया है "यद्यपि औद्योगिक धधिकरणों एवं बिबाधकों के प्रपलों के फलस्वरुप तथा न्यूनतम मजदूरी धधिनियम के लागू होने के परचात् बहुत से उद्योगों में मल बवों में मजदूरी की दर में वृद्धि हुई है तथापि इस बात में इम्बार नहीं किया जा सकता कि न भी धमिकों की धधिक संख्या केवल निर्वाह मात्र मजदूरी प्राप्त कर रही है

घोर कई स्थानों पर घसस मजदूरी या तो सेंसी ही है, जैसी मुझ से पूर्व या मा कही कही लघम भी कम है। घसस मजदूरी क सामान्य स्तर को ऊंचा करने के हेतु जहाँ कहीं मजदूरी घब भी कम है घोर धमिक तथा उनके परिवार का निर्वाह नहीं हा पाता वहाँ मजदूरी बढ़ाने का समर्पित रूप से प्रयास किया जाना चाहिए।

फवटरी उद्योगों में मजदूरी एवं धाय —

धमिकों की मसतत धाय मूस मजदूरी महगाई भसा तथा बोनम को मिसा कर होती है। महगाई भसा समान मही मिसठा क्योंकि इसका सम्बाध बिभिन्न घोषोगिक केन्द्रों के निर्वाह लायत मूषकाओं से है। इसी प्रकार योनस समान मही है क्योंकि यह प्रत्येक उद्योग द्वारा घोषित माम पर निर्भर करता है। मूस मजदूरी की हरे बिभिन्न बिबाधकों तथा घोषोगिक प्रबिधरणों क पंचाट (Awards) द्वारा निश्चित की गमी है तथा मूसतम मजदूरी की दर १९४८ के मूसतम मजदूरी धधि नियम के घससतत निर्धारित की गई है। निवन्तीय मजदूरी बोर्डों की स्थापना भी कुछ उद्योगों के लिए की गई है जिससे मामिक ब मजदूर स्वयं मिसतर मजदूरी निर्धारित कर सकें। कई उद्योगों के सम्बाध म इन मजदूरी बोर्डों की रिपोर्ट प्रकाशित भी हो चुकी है घोर उनकी सिफारिशों को मागू भी किया जा चुका है। १९४९ में ध्यौरा देने बान कारखानों म धमिकों की धोसत प्रतिदिन मंध्या १८ १० ६३६ थी तथा १९४८ में इसकी मंध्या १७ ८० ३३८ थी। १९४९ में दी गई कुस मजदूरी मगभग २६३ करोड़ रुपए थी तथा १९४८ मे मगभग २६० करोड़ रुपए थी। निम्नमिसित तालिका देसब कारखानों म सग धमिकों का धोड़कर धन्य ध्यौरा देने बानी कंधारियों क मय कर्मधारियों की जो २०० ४० से कम वेतन पाते हैं धोसत धापिक धाब को प्रबट करती है —

धम	कुस धाय (१००० रुपयों में)			प्रत्येक धमिक की धोसत धापिक धाय (६० में)		
	१९४७	१९४८	१९४९	१९४७	१९४८	१९४९
धम	२	३	४	५	६	७
धाप्र	८१,८११	७८ ६६८	८६ ५६७	१ ०३०८	७०८ १	४८३ १
धमम	२० १०७	२१ १७७	४७ ३६४	१ ०३३४	१ २२३ ०	१,६०७ ३
बिहार	१ ७३ ४४८	१ ६७ ८९३	१ ७८ २०२	१,२६६ २	१ २८३ २	१ १३८ ६
बम्बई	११,११ १४७	११,१२,८३३	११ ६६ ०१४	४४२ ६	१ ४४८ ०	१ ४४६ ८
केरल	४८ १८७	—	२८ ०२	८०२ ०	—	१ ६६३ २
मध्य प्रांत	१० ०८०	९४,८७२	२६,०४४	१ ११८ ७	१ २१७ १	१ २११ ४
बंगाल	२,६० १११	—	—	६७८ ६	—	—
मंसर	१४ ८३०	—	—	—	—	—

१	२	३	४	५	६	७
उड़ीसा	१००८६	१८२४४	२१००७	६२६८	६८१०१	७६६४
पंजाब	६६६	७१३०५	४३३६३	६४५३	१२१२०	७७६२
घाजस्थान	१५,७७४	२००४३	१७६०४	६७१	६४४१	६१२३
उत्तर प्रदेश	२३६,१८६	२३६,०५४	२२६०७	१०७७३	१२१३४	११४०
पश्चिमी						
बंगाल	६,६०१६८	६३६,६६३	६५६,३५६	११७३६	१६८६१	२२३६
महाराष्ट्र एवं						
निकोबार द्वीप	१८४३	१३२६	१६६३	६२७	१०१७	६८२३
देहली	७२२६८	६८३३३	७३,१२०	१४६३४	३२६७३	३४३४
त्रिपुरा	५५३	५६२	३८४	६३३	११४७	१,१४३१
कुल प्रदेश	२८६१६७१	२६,०५४२२	२६,३६,१४६	१२३३६	१२६३२	१३०६६

द्वारा दिये जाने वाले कारखानों में ऐसे कर्मचारियों की जो ४०० रु० से कम वेतन पाते हैं पीसल नाविक धाय निम्नलिखित थी —

प्रदेश	कुल धाय (१०० रु० ध)	प्रत्येक शक्ति की औसत नाविक धाय (६० ध)	प्रत्येक शक्ति की औसत शक्ति धाय (६० ध)	प्रत्येक शक्ति की औसत शक्ति धाय (६० ध)
उड़ीसा	१००८६	१८२४६	१६६३	१६६३
पंजाब	६६६	७१३०५	४३३६३	६४५३
घाजस्थान	१५,७७४	२००४३	१७६०४	६७१
उत्तर प्रदेश	२३६,१८६	२३६,०५४	२२६०७	१०७७३
पश्चिमी				
बंगाल	६,६०१६८	६३६,६६३	६५६,३५६	११७३६
महाराष्ट्र एवं				
निकोबार द्वीप	१८४३	१३२६	१६६३	६२७
देहली	७२२६८	६८३३३	७३,१२०	१४६३४
त्रिपुरा	५५३	५६२	३८४	६३३
कुल प्रदेश	२८६१६७१	२६,०५४२२	२६,३६,१४६	१२३३६

निम्न तालिका सूची कपड़ा मिलों में मूल्यतम मूल मजदूरी प्रतिमाह तथा नीचे दर्शाई भत्ता के विषय में बताती है —

ग्राम या प्रदेश	मूल्यतम मूल मजदूरी (₹० म)	महगाई भत्ता (₹० में)	
		दिसम्बर १९६१	मार्च १९६०
बम्बई	३० ००	६३ ७०	८६ २५
महाराष्ट्र	३६ ०	८८ ४१	८७ ८१
पंजाब	३२ ०	६६ ८२	६० २८
बड़ीया	३४ ००	७६ ६१	७६ ००
इन्दौर	३६ ००	६४ ६६	६३ ७०
नामपुर	३२ ००	६४ ८६	६६ ८६
बारा	३४ ००	७६ ६७	६८ ३३
जाजपुर	३६ ००	—	६६ ६६
पश्चिमी बंगाल	३४ ६७	६८ ८६	३२ ३०

इसके अतिरिक्त विभिन्न क्षेत्रों में उद्योगों की बड़ी इकाइयों में वार्षिक लाभ बोनस देने की प्रवृत्ति प्रचलित है। यह बोनस मूल धारक का पार पर अनुमानित किया जाता है किन्तु इसके लिए कुछ गणने के अंश उपस्थिति के अनुसार हस्ताक्षरों में भाग न लेता यदि यदि।

मजदूरी तथा धार के अंकड़े मजदूरी अदायगी अधिनियम के अन्तर्गत प्रस्तुत किए गये व्योक्तों में प्राप्य है। सभी प्रदेशों में सूची बन्ध उद्योग में प्रति धमिक वार्षिक धार १९५६ में १४७७४ ₹० १९५८ में १४३५८ ₹० १९६० में १३६३२ ₹० तथा १९६६ में १३६० ₹० थी। १९६६ में यह वार्षिक धार देहली में १६७१ ₹० बम्बई में १४६६ ₹० बारा में १३३२ ₹० उत्तर प्रदेश में १०६६ ₹० मध्य प्रदेश में ८७६ ₹० तथा पश्चिमी बंगाल में ८३४ ₹० थी। सूची कपड़ा उद्योग के लिए जो मार्च १९६७ में मजदूरी बोर्ड बना या उसकी रिपोर्टें दिसम्बर १९६६ में प्रकाशित हुईं। इस बोर्ड ने यह सिफारिश की है कि ८ ₹० प्रति माह प्रति धमिक धीरे-धीरे दर के हिसाब से जब सभी धमिकों के वेतन में वृद्धि कर देनी चाहिए जो धमिक वर्ग (I) की मिलों में कार्य करते हैं (ऐसी वर्ग (I) की मिलें निम्नलिखित स्थानों की मिलें हैं बम्बई नगर तथा द्वीप महाराष्ट्र बड़ीया बिक्रोमोरा नवमारी नादिया मूल्य कपड़ा हिस र देहली मोदीनगर, बलरत्ता नगर, बारा राज्य तथा बंगलौर)। यह ८ ₹० की वृद्धि देहली बंगलौर १९६० से लिए जाने की सिफारिश की गई है तथा बंगलौर १९६३ से ३ ₹० प्रति धमिक धीरे-धीरे दर के मजदूरी में वृद्धि करने की सिफारिश है। मध्य प्रदेश के (वर्ग II की मिलें) धमिकों के लिए देहली बंगलौर ६ ₹० प्रति

माह की वेतन व वृद्धि पहिली जनवरी १९६१ से मीर २० प्रति माह की वृद्धि पहिली जनवरी १९६२ से हो जाने की सिफारिश है। महंगाई भत्ता समस्त क्षेत्रों में निर्वाह लक्ष्य सूचकांक से सम्बन्ध करने की सिफारिश है। सरकार ने इन सिफारिशों को मान लिया है मीर अधिकतर सूती वपड़ा मिलों में यह लागू भी हो चुकी है। (नवम्बर १९६१ तक ऐसी मिलों की संख्या जहाँ वेतन वृद्धि की सिफारिशें लागू कर दी गई हैं ४१६ में से ३६३ की)। केन्द्रीय श्रम ब्यूरो के एक अध्ययन के अनुसार १९५१ से १९५६ की अवधि में सूती वस्त्र उद्योग में श्रमिकों की मजदूरी में जो वृद्धि हुई है वह इस प्रकार है बम्बई में ३४ प्रतिशत अहमदाबाद तथा बड़ौदा में १० प्रतिशत इन्डौर में २० प्रतिशत नागपुर में ३ प्रतिशत मद्रास में २५ प्रतिशत कानपुर में ४ प्रतिशत तथा पश्चिमी बंगाल में २१ प्रतिशत। इसके परवाएँ सूती वस्त्र मजदूरी बोर्ड की सिफारिशों के परिणामस्वरूप पाठ साल श्रमिकों के वेतन में ५-६ प्रतिशत के २१ प्रतिशत तक वृद्धि हुई है।

जूट वस्त्र उद्योग के प्रति श्रमिक बाणिज्य प्राय सभी राज्यों में १९५६ में १०३७३६० १९५७ में १०४५२४६ १९५७ में १०३७४६० तथा १९५६ में १०३३६० की। १९५६ में विभिन्न राज्यों में प्राय निम्न प्रकार की। पश्चिमी बंगाल १०४६६ प्राय ६२३६० बिहार ६०३६० तथा उत्तर प्रदेश ५४४६०। प्रति माह मूल मजदूरी पश्चिमी बंगाल में ३४/१०/६० प्राय में २३६० बिहार में २४/६/०६० तथा कानपुर में १२६० की। जूट बोर्ड के सिद्ध की केन्द्रीय मजदूरी बोर्ड अगस्त १९६० में स्थापित किया गया था उसने अपनी अन्तिम रिपोर्ट प्रस्तुत करने तक यह सिफारिश की है कि जूट मिलों के समस्त श्रमिकों को अंतरिम (Interim) सहायता के रूप में पहिली मजदूरी १९६० से ३१ दिसम्बर १९६० तक की अवधि में २-५३६० प्रति मास प्रति श्रमिक की दर से वृद्धि की जाए तथा पहिली जनवरी १९६१ के ३-४२६० की दर से सहायता दी जाए। कठिनाई की जूट मिलों के सिद्ध इस सहायता की दर पहिली दिसम्बर १९६१ से ३-४२६० होनी चाहिए। सरकार ने जनवरी १९६१ में इन सिफारिशों को स्वीकार कर लिया था मीर अधिकतर जूट मिलों ने इनको लागू कर दिया है (दिसम्बर १९६१ तक ऐसी जूट मिलों की संख्या ५० में से ४३ की) केन्द्रीय श्रम ब्यूरो के अध्ययन के अनुसार विद्येन इस वर्षों में जूट वस्त्र उद्योग में प्राय प्रदेश में मजदूरी में १०० प्रतिशत वृद्धि हुई है तथा अन्वयेन में मजदूरी में २४ प्रतिशत वृद्धि हुई है। बिहार में मजदूरी स्थिर रही है। मजदूरी बोर्ड के अंतरिम सहायता पंचाट (Award) के परिणामस्वरूप जूट उद्योग के २-५ प्राय श्रमिकों की मजदूरी में ३ प्रतिशत वृद्धि हुई है।

उनी वस्त्र उद्योग में प्रति श्रमिक बाणिज्य प्राय सभी राज्यों में १९५६ में १०५६६० १९५७ में १०५०३६० १९५७ में १०५६६० तथा १९५६ में १०५३६० की। १९५६ में विभिन्न राज्यों में प्राय इस प्रकार की—बम्बई

१ १६६ रु०, उत्तर प्रदेश १ ०७२ रु० पंजाब १६८ रु० तथा पश्चिमी बंगाल ६८८ रु० । मूल मजदूरी विविध राज्यों में मिश्र २ थी ।

रेयमी बस्त्र उद्योग में प्रति धमिक वार्षिक धाय १६४६ में १ १४६ ० रु० १६४८ में १ ३१० ६ रु० १६४७ में १ २१२ ७ रु० तथा १६४६ में १ २१८ रु० थी । १६४६ में विविध राज्यों में धाय इस प्रकार थी । बम्बई १ ३१७ रु० देहली १ १७२ रु० पंजाब १ ०२३ रु० उत्तर प्रदेश ६४६ रु० पश्चिमी बंगाल ६६६ रु० तथा बिहार २१२ रु० । १६४६-४७ में बम्बई की लीन रेयमी बस्त्र मिलों में बोनस का सुगठान भी किया गया ।

सोहा व इस्पात उद्योग में प्रति धमिक वार्षिक धाय १६४६ में १ ११२ ७ रु०, १६४८ में २ १११ ६ रु० १६४७ में १ ६२ ६ रु० तथा १६४६ में १ ३१८ रु० थी । विविध राज्यों में १६४६ में धाय निम्न प्रकार थी बिहार में १ ६६ रु० बम्बई में १ ४०६ रु० तथा पश्चिमी बंगाल में १ ६८ रु० मध्य प्रदेश में १ १४२ रु० पंजाब में १,०४४ रु० तथा देहली में १ ० ७ रु० । नवम्बर १६४७ में जमशेदपुर की टाटा सोहा व इस्पात कम्पनी में मूल मजदूरी में वृद्धि की गई (१ रु० में १ रु० ४ धा उन धमिकों के लिए जिनकी मजदूरी ३६ प्रतिदिन से कम है तथा ६-८-० रु० वार्षिक आधार पर मजदूरी वाले बात उन धमिकों के लिए जिनकी मजदूरी ७४ रु० प्रतिमाह से कम है) मसूर के सोहा व इस्पात कारखाने में बयस्क पुराने धमिक की श्रुमत्वम मजदूरी १ रु० प्रतिदिन निर्दिष्ट की गई है तथा पांच वर्ष तक बोनस सुगठान के लिए समझौता किया गया है । टाटा साहा व इस्पात कम्पनी (TISCO) के धमिकों को कम्पनी की साम सहभाजन योजना क एम्प्लोई कम्पनी के निवस वार्षिक लाभ में २७.३% भाग मिलता है ।

मुद्रण प्रकाशन एवं सहायक उद्योगों में प्रति धमिक वार्षिक धाय १६४६ में १ ३१४८ रु० १६४८ में १ २०६७ रु० १६४७ में १ २१७ ४ रु० तथा १६४६ में १,१८६ रु० थी । १६४६ में विविध राज्यों पर यह धाय इस प्रकार थी—देहली १ ८४३ रु० पश्चिमी बंगाल १ ४२६ रु० बम्बई १ २७० रु० धारम १ १४७ रु० तथा पंजाब १ ०३८ रु० । असम के धारमियों में श्रुमत्वम मूल मजदूरी ३४ रु० प्रतिमाह निर्धारित की गई थी । १६४६-४७ में विविध राज्यों में बोनस भी दिया गया ।

बायन मिलों में प्रति धमिक वार्षिक धाय १६४६ में १ ४१० ३ रु० १६४८ में १ ३३० ८ रु० १६४७ में १ २१२ ८ रु० तथा १६४६ में १ ०२६ रु० थी । यह धाय १६४६ में पंजाब में १ २४६ रु० पश्चिमी बंगाल में १ १३० रु० उड़ीसा में १ १०१ रु० तथा उत्तर प्रदेश में १ ००२ रु० थी । १६४६-४७ में बम्बई पंजाब व उत्तर प्रदेश में बोनस का सुगठान भी किया गया ।

पीनी उद्योग में सभी राज्यों में १६४६ में प्रति धमिक वार्षिक धाय ६३२ रु० थी । विविध प्रदेशों में यह धाय इस प्रकार थी—पंजाब १,२२२ रु०

पश्चिमी बंगाल १३१० रु० मद्रास १७७ रु० उत्तर प्रदेश १२४ रु० तथा बिहार ११८ रु० । उत्तर प्रदेश तथा बिहार की चीनी मिलों में श्रमिकों को कुल मजदूरी १४ रु० प्रति माह मिलती है । परन्तु कुछ मामलों में कुल मजदूरी में मूल मजदूरी व मत्ता प्रसंग-प्रसंग सम्मिलित होते हैं । १९३७ में बिहार की २२ चीनी मिलों में बोनस का भुगतान भी किया ।

चीनी उद्योग के लिए केन्द्रीय मजदूरी बोर्ड ने १ जनवरी १९३९ से १४० चीनी कारखानों में निम्नलिखित अन्तर्लिप्त सहायता देने की सिफारिश की थी—
उन श्रमिकों के लिए दिनकी कुल मिलाकर मजदूरी १०० रु० प्रति माह तक है—
३% परन्तु न्यूनतम ३ रु० १०० रु० से ७०० रु० तक ४% परन्तु न्यूनतम ५ रु० २० रु० से १००० रु० तक ३% परन्तु न्यूनतम ८ रु० ३०० रु० से १००० रु० तक २% परन्तु न्यूनतम १२० । दिसम्बर १९६० में चीनी मजदूर बोर्ड ने अपनी दक्षिण रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसकी सिफारिशों को स्वीकार करने की घोषणा सरकार ने करवरी १९६१ में की । बोर्ड ने यह सिफारिश की है कि चीनी मिलों में मजदूरी निर्धारण के हेतु देश को चार बिभागों में बाँट दिया जाए । अर्थात् उत्तर, मध्य महाराष्ट्र तथा दक्षिण । बोर्ड के अनुसार कम न्यूनतम मजदूरी तो आवश्यक रूप से प्रवेश प्रवेश में विन्म होगी परन्तु ६० १६३ रु० की मूल न्यूनतम मजदूरी सभी स्थानों पर होनी चाहिए और इसके परिवर्द्ध को कुछ दिने वह प्रत्येक प्रदेश के लिए महंगाई मत्ता जाना जाना चाहिए । उन सिफारिशों को पहिली नवम्बर १९६० में लागू करने की सिफारिश की गई है । विभिन्न वर्गों के कर्मचारियों के लिए पर क्रमानुसार बेटन और श्रमिकों के लिए महंगाई मत्ता और अवकाश प्राप्त धन देने की भी सिफारिश है । उत्तर प्रदेश में इन सिफारिशों को लागू करने के लिए सरकार द्वारा आदेश दिए गए हैं और भारतीय चीनी मिल परिषद् ने भी अपनी सदस्य बिनों को इन सिफारिशों को लागू करने के लिए बड़ा है । यू० पी० में लगभग ८० हजार श्रमिकों के मासिक बेटन में १५ रु० की दर से वृद्धि हो जायेगी । अथ यूरो के सम्बन्ध के अनुसार १९३१ से १९३९ की अवधि में चीनी मिल मजदूरों की घाव में विभिन्न राज्यों में निम्नलिखित वृद्धि हुई— पश्चिमी बंगाल में ३३ प्रतिशत आन्ध्र प्रदेश में १७ प्रतिशत बिहार में ७ प्रतिशत और उत्तर-प्रदेश में ५ प्रतिशत । चीनी उद्योग में सप्लाय हो लागू श्रमिक कार्य पर लगे हुए हैं । मजदूरी बोर्ड की सिफारिश के अनुसार देश के विभिन्न क्षेत्रों में इन श्रमिकों की मजदूरी में ५ प्रतिशत से ११० ५ प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है ।

सीमेंट उद्योग में १९३६ में प्रति व्यक्ति औसत वार्षिक घाव १२०३ रु० थी । यह घाव बिहार में १४७३ रु० बम्बई में १३३२ रु० उत्तर-प्रदेश में १३१५ रु० मद्रास में १२०८ रु० उड़ीसा में ११७० रु० तथा पंजाब में ११३३ रु० थी । ए० सी० सी० के सम्बन्ध में घाने जाने ६ सीमेंट कारखानों में १९३७ में मजदूरी व मत्ता के लिए एक विधायी समझौता हुआ । मार्च १९६० में सरकार

ने सीमित मजदूरी बोर्ड की सिफारिशों को स्वीकार कर लिया। यह सिफारिश इस प्रकार है। सीराट्ट व गुजरात को छोड़कर सभी राज्यों में न्यूनतम मजदूरी १४ ६० प्रति माह निर्धारित की जाय। इनमें से ३ ०० धर्मियों द्वारा प्रदान की जाने वाली सुविधाओं के मूल्य के रूप में कट जायेंगे अर्थात् धर्मियों को कुल मजदूरी मजदूरी ११ ६० मिलेगी। ११ ६० में से मूल मजदूरी १२ ६० महंगाई भत्ता ३१ ५० व० तथा भ्रमण खिटाया भत्ता ७ ५० ६० होगा। गुजरात व सीराट्ट के धर्मियों का न्यूनतम मजदूरी १० १ ५० प्रति माह मिलेगी अर्थात् इन्हें महंगाई भत्ते के ७ ५० अधिक मिलेंगे।

१९३६ में प्रति धर्मिक शीमल बायिन प्रायः ५५५ रुए उद्योगों में इस प्रकार की। बमबहा मफार्ड एव ग्माई करने के कारणाने व बमडे के कारणानों में ७=३ २ ६० इतिम साद १,३६१ ३ ६० भारी रमायत उद्योग १ ३३५ ७ ५० नियामताई १ ३६६ ६ ६० बाहु की वस्तुए शीर इस्तात के टुक १ १३४ ५ ५० बरहा मनीन व महायक मनीन १,३०३ ८ ५० पोल निर्माण व मरम्मत १ १०० ० ५०।

सालों में मजदूरी तथा प्राय —

कोयला सालों में मजदूरी के प्रायः शान के मुख्य निरीक्षण द्वारा एकीकृत शीर प्रस्तुत किए जाते हैं। पश्चिमी बंगाल तथा बिहार में मुक्त बाह की सिफारिशों के परिणामस्वरूप तथा अन्य प्रदेशों जहाँमा एवं प्रथम में बन्धुविक्रम प्रायः शीर समिति की सिफारिशों के परिणामस्वरूप तथा अन्धक की सालों में प्रौद्योगिक परिवर्तन की सिफारिशों के परिणामस्वरूप विद्युत् रुए बर्षों में सालों में मजदूरी प्रायः में सामान्य परिषतन हुए हैं।

कोयला सालों में विगम्बर १९३६ में धर्मियों की साम्प्रतिक शीमल प्रायः प्रति धर्मिक इस प्रकार की प्रायः २२-३७ ६० प्रथम- १६-८७ ६० बिहार (भरिया)- २०-७३ ६० बिहार (राजीव)- २०-६३ ६० इन्डर- १६-६४ ६० अन्य प्रदेश- २१ २१ ६० उड़ीसा- १६-८४ ६० राजस्थान- १७-६३ ६० पश्चिमी बंगाल (राजीव)- २१ ६३ ६० मजदूर भारत- २२ ०२ ६०। सालों के शीर कार्य करने वाले तथा कोयला खाने वाले धर्मियों की शीमल साम्प्रतिक प्रायः निम्न प्रकार की सालों के शीर कार्य करने वालों की- २२-७७ ६० न्यून में काम करने वालों की २० ६४ ६०। सालों के ऊपर कार्य करने वाले धर्मियों की साम्प्रतिक प्रायः इस प्रकार की प्रायः- १६-४६ ६० शिवा १६ १७ ६०। इन्डर १९६१ में शान के अन्धर कार्य करने वाले धर्मियों तथा कोयला खाने वाले धर्मियों की साम्प्रतिक शीमल प्रायः इस प्रकार की भरिया- मूल मजदूरी ६ ११ ६० महंगाई भत्ता १२-०० ६० अन्य मजदूर पदावली २-८३ ६० योग २३ ६० ६० राजीव- मूल मजदूरी ८-२६ ६० महंगाई भत्ता ११ ६० ६० अन्य मजदूर पदावली २ ६१ ६० योग २३-४६ ६०।

कोयला खान प्रॉबीहेन्ट एंड एन बोन्स योजना अधिनियम १९४८ (विधि संख्या ३६—१२) के अन्तर्गत जो कोयला खान बोन्स योजना बनाई गई थी उसके अनुसार भाग्य प्रदेश असम बिहार मध्य प्रदेश उड़ीसा राजस्थान तथा पश्चिमी बंगाल की धारों में उन मयरात धमिकों को जिनकी मूल मजदूरी ३०० रु० प्रति माह से कम है अपनी मूल मजदूरी का ३ भाग वार्षिक बोन्स के रूप में लेने का अधिकार है यद्यपि वह उपरिपरि से सम्बन्धित कुछ धारों को भी पूरा करते हैं। असम में साप्ताहिक मजदूरी पाने वाले धमिकों को साप्ताहिक धाबार पर घोर मासिक मजदूरी पाने वाले धमिकों को मासिक धाबार पर बोन्स दिया जाता है।

कोयला धारों को छोड़कर अन्य धारों में मजदूरों की औसत दैनिक मजदूरी विमम्बर १९३८ में इस प्रकार थी अन्नक—भाग्य प्रदेश १६२ रु० बिहार २०६ रु० राजस्थान १२६ रु०। मैसूर—बम्बई १८६ रु० मध्य प्रदेश २०१ रु० उड़ीसा १८१ रु०। करवा लोहा—बिहार, २२५ रु० उड़ीसा १९१ रु० लावा—बिहार, ११६ रु०। सोना—मैसूर, ४२५ रु०। गुना पत्थर—बिहार, २०२ रु० मध्य प्रदेश १६४ रु०। खीरी मिट्टी—बिहार, १२४ रु०। पावर—बिहार, १९० रु०। कई धमिकों की धारों में लाभ बोन्स उपस्थिति बोन्स तथा सेवा बोन्स भी दिया जाता है।

बागान में मजदूरी तथा धाय —

बागान में श्रमिकों का धाय समेक्षण की विचारियों के परिणामस्वरूप धमिक १९४८ से मजदूरी में वृद्धि हो गई है। असम के धाय बागान में १९४८—४९ में मजदूरी की औसत दर पुरुषों के लिए ४५-४७ रु० प्रति मास स्त्रियों के लिए ३८-४६ रु० प्रति मास तथा बालकों के लिए २३-२५ रु० प्रति मास थी। ब्रिटेन बागान के धाय बागान में मजदूरी की दर पुरुषों स्त्रियों तथा बालकों के लिए क्रमशः १-५३ रु०, १६६ रु० तथा ०-७५ रु० प्रतिदिन है। गुर्ग के बहवा बागान में मजदूरी की दर पुरुषों के लिए १२० रु० स्त्रियों के लिए ११२ रु० तथा बालकों के लिए ०-७५ रु० प्रतिदिन है। मैसूर काँधी बागान में पुरुष स्त्री तथा बालकों के लिए वर्तमान दर क्रमशः १४० रु० १०६ रु० तथा ०-७० रु० प्रतिदिन है।

रबर के बागान में दैनिक मजदूरी की अधिकतम दर पुरुषों स्त्रियों तथा बालकों के लिए क्रमशः १३२ रु० १२५ रु० व ०-७० रु० है। नीलमिठी के धाय बागान में मजदूरी की दर पुरुष तथा स्त्रियों के लिए क्रमशः १६० रु० धाने ३ पाई तथा १४ धाने ३ पाई है। घोर काँधी बागान में मजदूरी की दर पुरुषों के लिए १६० रु० धाने ६ पाई एवं स्त्रियों के लिए १४ धाने ३ पाई प्रतिदिन है। असम तथा पश्चिमी बंगाल के धाय बागान में अनाज कम कीमत की दरों पर प्रदान किया जाता है। १९३९ में पश्चिमी बंगाल के धाय बागान के धमिकों की प्रति मासिक मासिक धाय ४८४-२४ रु० थी।

८ जनवरी १९२६ को एक समझौते के अनुसार (जो नई देहली में हुआ) प्रथम, बरिचमी बंगाल तथा त्रिपुरा के बाय हागान के समितियों को १९२३-२६ के वर्षों के लिए बोनस दिया गया। १९२७ के परचात बोनस देने के लिए बायान की औद्योगिक समिति ने एक बोनस उप-समिति स्थापित की। इस समिति ने यह सिद्धारिण की कि जब कोई ग्राम्य समझौता नहीं है तब देहली समझौते के अनुसार ही १९२७ और १९२८ के वर्षों के लिए बोनस देना चाहिए। परन्तु प्रथम तथा बरिचमी बंगाल में १९२७ और १९२८ के वर्षों के लिए बोनस के भुगतान के लिए बृहत् समझौते हो गए। उप समिति द्वारा प्रयत्न वर्षों के लिए बोनस भुगतान के प्रश्न पर विचार किया जा रहा है। बाय कांड़ी और रबर के हागान के लिए हात ही में केन्द्रीय मजदूरी बोर्डों की स्थापना हुई है।

बरिचमन एवं सवाबलमन में समितियों की मजदूरी तथा प्राय —

रेलवे में मजदूर ८० प्रतिशत कर्मचारी अनुपुर्ण वर्ष के हैं तथा प्राय वर्ष समितियों की मातहत तथा मजदूर स्टॉक के भाग में रखा गया है। अनुपुर्ण वर्गीय कर्मचारियों के लिए चार वेतन दरें निर्धारित हैं ३०-२-१२ ६० ३२-१-६० ३२-१-६० ६० तथा ४०-१-६०-२-६० ६०। अनुपुर्ण कर्मचारियों को निम्नतम वेतन दर में रखा गया है तथा अर्ध-पूरा तथा कुशल कर्मचारियों को ग्राम्य वेतन दर दिये जाते हैं। इसके अतिरिक्त की ग्राम्य वेतन दर है ३२-१-६० कु० रो० २-६० ६० वेतन दर व्यापार सम्बन्धित कर्मचारी तथा अर्ध-पूरा कारीबतों को दिया जाता है। दूसरी वेतन दर ३२-३-८२-४-२३ कु० रो० ४-१२२-१-१३० ६० की है जो कुशल कारीबतों को काम की प्रवृत्ति के अनुसार दी जाती है। केन्द्रीय वेतन प्रायोग ने प्रसिद्ध भारतीय निर्वाह मासिक सूचकांक से सम्बन्धित एक महंगाई घटे की सिद्धारिण की थी जिसमें २० ६० पाने जाने व्यक्तियों को २२ ६० प्रता देने की व्यवस्था थी। किन्तु भारत सरकार ने २२० ६० तक पाने जाने व्यक्तियों के लिए १० ६० अतिरिक्त भत्ता की स्वीकृति दी। इस समय महंगाई प्रता २० ६० प्रति माह तक वेतन पाने वालों के लिए ४० ६० है और ७२१ ६० से १००० ६० पाने वालों के लिए उनके वेतनानुसार १०० ६० तक है। ऐसे व्यक्तियों के लिए, जो अनाथ भुगतान की सुविधायें चाहते हैं महंगाई प्रता की विभिन्न दरें निरिच्छ की गई हैं। यह दर वेतन का १०३% तथा ६ ६० प्रति माह है। परन्तु बृहत् निम्नतम प्राय प्रथम मिलनी चाहिए। रेल में साथ चलने वाले कर्मचारियों की मजदूरी तथा महंगाई प्रता के अतिरिक्त ग्राम्य प्रता भी दिया जाता है। एक विभागीय समिति की सिद्धारिणों के परचात देने कर्मचारियों के वेतन की मूल दरों में सरकार द्वारा पुनःप्राप्ति कर दी गई है। "ज" वर्ग के चालकों (हारबतों) की प्रथम वेतन २६०-१२-३२० ६० तथा ४ ६० प्रति माह की मूल वेतन के साथ जाने का प्रता मिलता है तथा "ए" वर्ग के चालकों को १२०-३-१८२-८-२ २ ६० वेतन एवं २ ६० प्रति

की पील रेल के साथ जाने का मत्ता मिलता है। "बी" तथा "सी" वर्ग के बाइबरी को क्रमशः १९०-१०-१०० रु० एवं ८०-२-११० रु० री० ८-१७० रु० वेतन मिलता है। "बी" तथा "सी" वर्ग के गाड़ों को क्रमशः १००-२-१२२-१-१२२ रु० री० ९-१८२ रु० तथा १०-४-१२० रु० री० ४-१२० रु० वेतन दिया जाता है। १९२८-२९ में सरकारी रेलवे कर्मचारियों की वार्षिक औसत घाय इस प्रकार की वर्ग III के कर्मचारी—बर्कघाप के कर्मचारी तथा काटीगर १८३० रु० घाय कर्मचारी २११९ रु०। वर्ग IV के कर्मचारी—बर्कघाप के कर्मचारी तथा काटीगर, १०३२ रु० घाय १०२२ रु०। फरवरी १९२७ में 'गान पयेटेड' वर्ग के रेलवे कर्मचारियों के (जिनमें स्टेचन मास्टर, प्रमिस्टैंट स्टेचन मास्टर ड्राइवर, मार्ब क्लरगर्मेन तथा बसक वर्ग भी सम्मिलित हैं) वेतन दोहराए गये और अब उनको पहले से अधिक बजट वेतन तथा पब्लिसिटी के बजट प्रदान किए गए हैं। इस योजना को पहिली अप्रैल १९२९ में लागू किया गया है और इनके बजट एक लाख सतर हजार कर्मचारियों को लाभ पहुंचा है। वेतन धायोम की सिफारिशों के अनुसार पहिली नवम्बर १९२९ से रेलवे कर्मचारियों के वेतन में फिर संशोधन हुआ है। लगभग पाँच लाख कर्मचारियों की जिनको सबसे कम वेतन मिलता है अब कुल औसत घाय ७८ रु० से बढ़कर ९९ रु० प्रति माह हो गई है। घाय तीसरी तथा चौथी पेंसियों के कर्मचारियों को भी कई प्रकार के लाभ पहुंचे हैं।

डाक तथा तार विभाग में मजदूरी की हरे केन्द्रीय वेतन धायोम की सिफारिशों द्वारा निर्धारित की गई हैं तथा वर्तमान समय में डाकिये ३२-१-२० रु० प्रति माह पा रहे हैं। वे बहुतों बर्षों कर्मचारियों के धर्मार्थ घाते हैं। रेलवे के मजदूर इनकी मजूर्वाई मत्ता भी मिलता है। पार्सल बनाने वाले कुली तथा चपरासी २०-२-३२ रु० वेतन पाते हैं।

बाइरगाहों तथा नगरपालिकाओं आदि में मजदूरी तथा घाय —

कनकता के पठिरिक्त सभी बड़े बाइरगाहों के अनुसृत धमिकों की मूल मजदूरी १ रु० २ घाने ६ पाई प्रति दिन या ३० रु० प्रति माह है। कनकता में वह मजदूरी २९ रु० प्रति माह है। धमिक विभिन्न व्यवस्थों में विजाभिन किये गए हैं और प्रत्येक व्यवस्था में निम्न-निम्न षट के अनुसार वेतन दर है। केन्द्रीय वेतन धायोम ने जिन मजूर्वाई मत्तों की रेलवे कर्मचारियों के लिए सिफारिश की थी वही मजूर्वाई मत्ता बाइरगाहों के लिए निश्चिन कर दिया गया है। बाइरगाह में विभिन्न प्रकार के धमिकों को घाय बजट में १२ रु० से ८० रु० तक मजदूर में १२ रु० से ८० रु० तक तथा कनकता में ११ रु० से ८२ रु० तक है। वर्ष १९४९ से बजट बाइरगाह ट्रस्ट ने सामान होने तथा उतारने वाले धमिकों को 'अइनाइव' (Incentive) बोना देने की योजना भी लागू कर दी है।

बम्बई नगर में घोड़ी कर्मचारियों के लिए वेंनीय क्षेत्र धारण की विधियाँ के अनुसार न्यूनतम मूल मजदूरी ३० ६० प्रति मास निर्धारित कर दी गई है। अन्य स्थानों पर अधिकतरों द्वारा मजदूरी १ ८० २ घाने ६ पाई प्रतिदिन से १ ६० ६ घाने प्रतिदिन तक निर्धारित की गई है। बंगाल में मजदूरी ३० २० प्रति मास और बिनासापत्नम में १ ६० २ घाने प्रतिदिन है। बम्बई में महुंवाई मत्ता केन्द्रीय क्षेत्र धारण द्वारा निर्धारित दर के हिसाब म और कसकता व बिनासापत्नम में सेट के हिसाबानुसार दिया जाता है। घोड़ी कर्मचारियों को बोनस भी विभिन्न दरों पर दिया गया है। १९२८ २९ में घोड़ी कर्मचारियों की मौलिक मासिक धारण प्रति धर्मिक इस प्रकार की बम्बई में १०६ ९१ ८० तथा बंगाल में विभिन्न वर्गों के अनुसार ६६ २३ ६ से १०२ ०० ६० तक। बिनासापत्नम में सबसे कम बोनस देने वाले धर्मिकों की धारण ७३ ६ प्रति मास की जिसमें से ३० २० मजदूरी २० २० महुंवाई क्षेत्र तथा २३ २० महुंवाई मत्ता था। कोचीन में मजदूरी की मासिक दर धर्मिकों के विभिन्न वर्गों के अनुसार ३ ६० से ९० ६० तक है। तृतीय तथा चतुर्थ वर्ग के घोड़ी कर्मचारियों के लिए मजदूरी से एक निर्दिष्ट नियुक्त की भी नियमों रिपोर्ट्सून १९६९ में प्रकाशित हुई है। इनके अनुसार लक्ष्यम ७३ हजार पाटी धर्मिक और महुंवाई के धर्मिकों की मात्र पहुंचेवा।

एनिस क्षेत्र उद्योग में १९२४ में अथ वेंनीय धर्मिकों के बचाव के अनुसार विभिन्न धर्मिकों के धर्मिकों की मूल न्यूनतम मजदूरी १ २० ७ घाने से २-२० ६० प्रतिदिन तक निर्दिष्ट की गई है। महुंवाई मत्ता तथा बोनस मूल क्षेत्र के आधार पर प्रदान किये जाते हैं।

नगरपालिकाओं में १९४४ में मूल मजदूरी बढ़ गई है किन्तु धर्मिकों तक सेट के विभिन्न भागों में मजदूरी में धर्मिक पाया जाता है। बम्बई तथा बंगाल में न्यूनतम मासिक मजदूरी १३ २० तक है जबकि दूसरी धर्मिक बम्बई में ३३ २० है। महुंवाई मत्ता की दरों में भी बहुत विभिन्नता है। मापासतन विभिन्न धारण वर्गों के अनुसार धारणी दर (Graduated rate) पर महुंवाई मत्ता दिया जाता है। सबसे कम क्षेत्र देने वाले वर्ग के धर्मिकों की जो न्यूनतम महुंवाई मत्ता दिया है वह लक्ष्यम तथा कानपुर में ६ २३ २० प्रतिमास से बम्बई में ३६ ६० प्रतिमास तक है। इनके धर्मिकों को बंगाल-विभाग में मजदूरी-विभाग मत्ता धर्मिक धर्मिक महुंवाई मत्ता भी देनी है। धर्मिकों वाले वाले धर्मिकों की न्यूनतम धर्मिक धारण बंगाल में २० ७३ ६० से बम्बई में ७७ २० तक है।

केन्द्रीय नार्वेजियन कार्य विभाग में शिवाय द्वारा मजदूरी धर्मिक ३० २० प्रतिमास मूल न्यूनतम मजदूरी पाते हैं। टैनेदारी द्वारा मजदूरी धर्मिक विभिन्न धर्मिकों में ० ८१ २० से ६ १२ २० तक पाते हैं। बिनासापत्नम धर्मिक धर्मिकों से धर्मिक महुंवाई मत्ता देने के भी धर्मिकों हैं जो न्यूनतम ३३ २० प्रतिमास है। उद्योगों में नार्वेजियन कार्य विभागों में मजदूरी की दरें धर्मिकों से धर्मिकों के धर्मिकों में ० ६ २०

से २-३० ४० तक विभिन्न-विभिन्न हैं। केवल मासिक वेतन पाने वाले कर्मचारियों को विभिन्न दरों पर महंगाई भत्ता दिया जाता है। स्त्रियों की मजदूरी कम है।

गावियों की मजदूरी विभिन्न श्रेणियों के लिए विभिन्न-विभिन्न है। कलकत्ता में इनकी मजदूरी दर १० ४० से ३९० ४० प्रतिमाह तक है, बम्बई में मजदूरी दर १०० ४० से १९० ४० प्रतिमाह तक है। कुछ पूर्व मजदूरी-दर की श्रेणियाँ इन स्थितियों की प्रायः सब पाँच मुनी शक्ति हैं।

ऊपर भारत के विभिन्न उद्योग तथा विभिन्न राज्यों में प्रचलित मजदूरी दर का केवल एक संक्षिप्त रूप में उल्लेख किया गया है। इन शक्तियों को ध्यान में रखकर हम भारत में मजदूरी से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण समस्याओं का विवेचन कर सकते हैं।

न्यूनतम मजदूरी—इसकी वांछनीयता

(Minimum Wages—and its Desirability)

सबसे महत्वपूर्ण समस्या भारत में औद्योगिक शक्तियों की कम मजदूरी की तथा शक्तियों की न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने की आवश्यकता है। ऊपर दिए गए आँकड़ों से यह स्पष्ट है कि शक्तियों की प्रायः पर्याप्त नहीं है। यदि कुछ मुद्दार हुआ भी है तो वह कुछ कुछ शर्तों से ही हुआ है। वर्तमान समय में देश की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता शक्तियों को न्यूनतम मजदूरी प्रदान करना है। भारत के अधिकतर शक्ति पर्यटित हैं, पर शक्तियों द्वारा उत्पन्नतापूर्वक उनका शोषण किया जाता है। शक्ति इन्हें कम से कम मजदूरी देते हैं। वह भी अनुमान लगाया गया है कि देश के बड़ी औद्योगिक शक्तियों की श्रेणियाँ अधिक बुनियादी तथा अधिक प्राथमिक प्रायः हैं। शक्तियों को स्वतंत्र प्रतिरोधिता में अपनी छोटा करने की दुर्बल स्थिति तथा धन की धर्म विपरीतताओं के कारण शक्तिवासी पूँजीपतियों के समय अपनी स्थिति सुधारने का कोई अवसर नहीं मिल जाता। शक्ति की हीनता उत्पादनता वृद्धि की उत्पादनता से मँदब बन जाती है। पर शक्ति को कम प्रतिफल मिलता है। तथापि शक्ति मानव है और मानवीय दृष्टिकोण से उतकी रखा हीना चाहिए। शक्तियों के लिए सभी देशों में एक न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने की समस्या उत्पन्न हो गई है। यह मजदूरी केवल उनकी कार्यक्षमता के अनुसार ही न होकर इनकी पर्याप्त होनी चाहिए कि शक्ति अपनी आवश्यकताओं के अनुसार अपना निर्वाह कर सके। पर १९२६ में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन में न्यूनतम मजदूरी दर एक अनिश्चित वा मनोरा तैयार किया गया था। इसके अनुसार सब आवश्यकताओं को एक ठोड़ी व्यवस्था का निर्वाह करने और बनाए रखने के लिए कहा गया किन्तु केवल कुछ विशेष व्यवस्थाओं में ही शक्ति में लगे शक्तियों के लिए न्यूनतम मजदूरी की दरें निर्धारित की जा सकें। इन विशेष व्यवस्थाओं में शामिल होने वाली शक्तियों से है किन्तु सामूहिक मजदूरी या अन्य किसी प्रकार के प्रयासापक रूप में मजदूरी निर्धारित करने की कोई व्यवस्था नहीं है और किन्तु मजदूरी की बहुत कम है।

१९५२ में इन श्रमिसमय को भारत सरकार द्वारा अपना लिया गया है।

अपने लिए गए मजदूरी के शोककों से प्रकट है कि भारत में मजदूरी समाधारण रूप से कम है यद्यपि कम मजदूरी की अपायता इतनी स्पष्ट है कि इसके लिए विस्तृत खोज प्रयत्न शोककों के संकलन की कोई विद्युत आवश्यकता नहीं है। औद्योगिक विवाद निम्न जीवन स्तर, श्रमिक की कार्य प्रवृत्तमता उसकी श्रुण-प्रसन्नता प्रादि जैसी अनेक समस्याएँ कम मजदूरी की समस्या से सम्बन्धित हैं। सामाजिक दृष्टिकोण से भी यह अनुभव किया जाना चाहिए कि यदि हम समाज में स्थिरता चाहते हैं तो श्रमिक के लिए पर्याप्त निर्वाहिका (Living Wage) अत्यन्त आवश्यक है। श्रमिकों की निर्धनता ही साम्यवाद का उत्पत्ति घोट रही जाती है। यदि हम क्रांतिकारी विचारों को फैलाने से रोकना चाहते हैं तो सभी श्रमिकों को मूलतम मजदूरी का प्रास्तावक मिलना चाहिए। औद्योगिक हड़ताला के दायों का कम करने तथा श्रमिकों एवं श्रमिकों के बीच सम्बन्धना एवं विश्वास उत्पन्न करने के लिए मूलतम मजदूरी का होना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त यह भी ध्यान में रगना चाहिए कि श्रमिक को मूलतम मजदूरी देना कोई दान का कार्य नहीं है। उद्योग के साम में श्रमिक का अधिकारपूर्ण (Rightful) माग होना चाहिए जो वर्तमान समय में श्रमिक की दुर्बल औद्योगिकी सामर्थ्य के कारण उसे नहीं दिया जाता। अतः औद्योगिक श्रमिकों की मूलतम मजदूरी उनके औद्योगिक जीवन उनके स्वास्थ्य शक्ति तथा नैतिकता के लिए बहुत अधिक महत्व रखती है। हमल श्रमिक की वायकुशलता बढ़ जाणी उत्पादन भी अधिक होगा तथा अनेक औद्योगिक समस्याएँ स्वयं हम ही जायेंगी।

मूलतम मजदूरी के उद्देश्य —

मूलतम मजदूरी के उद्देश्य विभिन्न हैं। मजदूरी दर निर्दिष्ट करने का प्रकार तथा इसके लिए प्रस्तावित व्यवस्था भी अलग-अलग उद्देश्य के अनुसार भिन्न भिन्न होते हैं। इनका एक मुख्य उद्देश्य उद्योग में शोषण को रोकना है। इसका तात्पर्य यह है कि उन उद्योगों में मजदूरी को बढ़ाया जाय जहाँ मजदूरी अनुचित रूप से कम है। कम मजदूरी के कारण प्रादिक मन्दी सम्बन्धित समस्त श्रमिकों की कार्य-प्रवृत्तमता घटकर श्रमिकों का शोषण प्रादि हो शक है। यदि किसी उद्योग में स्थायी रूप से मन्दी की परिस्थिति है तथा वह उद्योग रोजगार गोरन काम सभी श्रमिकों को उचित मजदूरी देने में असमर्थ है तो अन्य उद्योगों में मूलतम मजदूरी अतिरिक्त रूप पर निर्धारित होने से सब उद्योगों में सामान एक मात्रान हो जायगी तथा विभिन्न उद्योगों में श्रमिकों का समान वितरण भी हो जायगा। यदि कार्य प्रवृत्तमता के कारण मजदूरी कम है तो मूलतम मजदूरी में जीवन स्तर में अर्पण होगी अतः कार्य प्रवृत्तमता में भी सुधार हो जायगा। फिर मूलतम मजदूरी व्यवस्था का उद्देश्य शोषण रोकना भी है तथा श्रमिक की उत्पादक क्षमता के अनुसार जो कार्य होता है उन कार्य के मूल्यानुसार मजदूरी दिवधाना भी है। उन दृष्टिकोण से यह उद्देश्यनीय है कि श्रमिकों का हित इनमें नहीं है कि हमल उद्योगों के लिए एक सामान्य

स्युनतम दर निर्धारित कर दी जाय बल्कि इसमें है कि विभिन्न वर्गों के धर्मियों के लिए मजदूरी की स्युनतम दर निश्चित की जाय। यद्यपि यह समस्या मजदूरी समानी करण की समस्या से सम्बन्धित है अर्थात् प्रत्येक वर्ग के धर्मियों के लिए स्युनतम मजदूरी निश्चित होनी चाहिए। स्युनतम मजदूरी का उद्देश्य उन धर्मियों की रक्षा करना है जो असमर्थ हैं और सामूहिक समझौतों द्वारा अपनी मजदूरी बढ़ाने में असमर्थ हैं। स्युनतम मजदूरी से धर्मियों के संगठन में सुधार होगा यद्यपि यह स्युनतम मजदूरी विधान का प्रयत्न उद्देश्य नहीं है। तीसरा उद्देश्य देश की औद्योगिक शक्ति को बचाए रखना है। जहाँ मानिकों तथा धर्मियों के अहितवादी संघर्ष हैं वहाँ मजदूरी साधारणतः सामूहिक समझौतों से नियमित होती है। किन्तु समझौते सदा सम्भव नहीं हैं तथा कई बार ऐसे झगड़े लड़े हो जाते हैं जो धार्मिक जीवन को असह्यबन्धित कर देने हैं। इन झगड़ों से बचने का एक उपाय यह भी है कि अनेक हड़तालें तथा लाभा-वन्दियों को घेरकालूनी कोषित कर दिया जाए। किन्तु इससे पूर्व कि सरकार इन नीतियों को अपनाए उसे मजदूरी नियमन की अन्तःपञ्चक प्रणाली की व्यवस्था कर लेनी चाहिए। जहाँ विवाचन व्यवस्था भी है वहाँ भी मजदूरी सम्बन्धी झगड़े इस आशयवत्ता की ओर संकेत करते हैं कि विभिन्न वर्गों के धर्मियों के लिए स्युनतम मजदूरी निश्चित कर लेनी चाहिए।

स्युनतम मजदूरी निश्चित करने में कठिनाईयाँ —

किन्तु स्युनतम मजदूरी निश्चित करने का प्रश्न इतना सरल नहीं है जितना यह देखने में प्रतीत होता है। स्युनतम मजदूरी क्या है? विभिन्न उद्योगों तथा क्षेत्रों में इसे कैसे निर्धारित किया जाना चाहिए? इसे लागू करने के हेतु कौसी व्यवस्था की स्थापना करनी चाहिए? क्या पुराने तथा नवी धर्मियों के लिए असम-असम स्युनतम मजदूरी होनी चाहिए? इस प्रकार के कई प्रश्न हैं जो इस समस्या के विवेचन में उठते हैं। यद्यपि हम स्युनतम मजदूरी के निर्धारण पर पहुँचने से पूर्व कुछ सिद्धान्तों का अनुसरण करना होगा।

धर्मियों में सर्वत्र भाव की है कि स्युनतम मजदूरी राष्ट्रीय जीवन स्तर पर आधारित होनी चाहिए किन्तु दूसरी ओर मानिकों में सर्वत्र मजदूरी के विभिन्न सिद्धान्तों की ओर संकेत किया है तथा जारा उठाया है कि मजदूरी उद्योग की गुणानुसार के अनुसार की जानी चाहिए। यद्यपि इस विषय में कि स्युनतम मजदूरी निश्चित करने का क्या उद्देश्य होना चाहिए कई कठिनाईयाँ घाटी हैं। सामान्य में उद्देश्य यह होना चाहिये कि धर्मियों का जीवन निर्वाह के लिए ऐसी मजदूरी प्रदान की जाए जो स्वायत्तपूर्ण तथा उचित हो। किन्तु प्रश्न उठता है कि स्वायत्तपूर्ण तथा उचित मजदूरी क्या है? म्याप की परिभाषा करना सम्भव नहीं है। ('जीयिन्टारिन्स' के दृष्टान्त पर भी म्याप क्या है स्वयं ईसा मसीह भी चुप रह गए थे)। इस क्षेत्र में सापेक्ष (Relative) दृष्टिकोण से यह सच है कि क्या स्वायत्तपूर्ण है एवं क्या स्वायत्तपूर्ण नहीं है। इसी प्रकार स्युनतम मजदूरी विभिन्न स्थानों की परिस्थितियों

पर निर्भर करता तथा एसी कोई सामा नहीं हा सकती जिनका एक निश्चित न्याय-पूर्ण मजूरी कहा जा सक। यह स्थानीय परिस्थितियां कमबानू फैशन तथा व्यक्तियों की धारण भादि के अनुसार स्वान-स्वान पर भिन्न हानी। साधारणतया हम कह सकते हैं कि न्यूनतम मजूरी का उद्देश्य सभी ममी भाति प्राप्त् हो सकता है जब सबसे पहिल मानव के भोजन वस्त्र तथा आवास की न्यूनतम आवश्यकताओं के आधार पर उन निर्धारित किया जाए, तत्परन्तान् विभिन्न रोजगारों बरों तथा स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार इसे निश्चित किया जा सकता है। मान्य निया में न्यूनतम मजूरी की परिभाषा इस प्रकार की गई है "क्षीनत वय के व्यक्ति के साधारण उत्तरदायित्वा का प्पान रखत हुए धमिक को उचित मुक्त में रहने योग्य या पर्वोत्त मजूरी मिलती है उद् न्यूनतम मजूरी कहा ज सकता है।"

इनके धर्निरिक्त यह भी उ नेतनीय है कि न्यूनतम मजूरी क निर्धारण का आधार कवल धमिक के निर्वाह क उद्देश्य म ही नहीं बरन् उनके ममत्त परिवार के निर्वाह के उद्देश्य से होना चाहिए। धमिक तथा उनरु परिवार को मन्व जीवन का एक उचित स्तर भी प्रदान करना चाहिए। इस सम्बन्ध म क्षीनत परिवार का आधार निर्धारित करने में कठिनाई आती है। भारत म इन पांच सदस्या का क्षीनत परिवार मान सकते हैं।

जहाँ तक न्यूनतम आवास्यताका का सम्बन्ध है इसके लिए विभिन्न अनुमान लिए गए हैं। डा० एडोड का विश्वास है कि एक साधारण धमिक को भोजन की २६०० कैलोरी की प्रतिदिन आवश्यकता होती है। डा. आर० के० मुन्शी ने इस अनुमान को कम माना है तथा एक औद्योगिक धमिक के लिए ३,००० से ३३०० कैलोरी भोजन प्रतिदिन की आवश्यकता का सुझाव दिया है। डा० परबर्धन का यह सुझाव कि धमिक के लिए २,७०० कैलोरी भोजन प्रतिदिन की साधारण आवश्यकता है, इन सम्बन्ध में मजुता के लिए आधार माना जा सकता है। आवास के विषय म यह सुझाव दिया गया था कि इन के माप १०० बय बीट रहन के लिए न्यूनतम स्थान होना चाहिए। वस्त्र के विषय में यह सुझाव था कि एक वयस्क धमिक के लिए प्रति बर्ष ४२ बय कपड़ा जमा चाहिए। मुक्त में मुक्त की कीमता वर आरत का के आवास्यताए ही प्रति व्यक्ति २० रु० से २२ रु० तक स्थापन की जानी थी और यह ता कीमते तथा विषय बहुत ऊँचे ही गए हैं।

न्यूनतम मजूरी का निर्धारण करने में एक अन्य विचारगार विषय बायनों को प्पान में रतन हुए निर्वाह मादन की निर्धारित करना है। निर्वाह मादन सूचकांक (Cost of Living Index Numbers) समय-समय पर बनाना बहुत ही क्षीनत न्यूनतम मजूरी का इस सूचकांक अनुसार समजन (Adjustment) करना होगा है।

एक अन्य समस्या यह है कि मजूरी निर्धारण करने क लिए एक कुशल व्यवस्था (Efficient Machinery) ऐसी चाहिए। किन्तु इस उम्मा है कि क्या यह

व्यवस्था केन्द्रीय प्रदेशीय प्रथम स्थानीय स्तर पर हो ? सबसे अधिक उचित तो यह होगा कि केन्द्रीय सरकार मुख्य सिद्धान्त निर्धारित कर दे और प्रदेशीय सरकारें स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार इस व्यवस्था की अन्य विस्तृत बातें निर्धारित करें।

भारत में धर्मियों की स्मृततम मजदूरी उसकी समस्याएँ -

यद्यपि हम यहाँ स्मृततम मजदूरी निश्चित करने के आन्दोलन तथा सन् १९४८ के स्मृततम मजदूरी अधिनियम का उल्लेख कर सकते हैं। यद्यपि धर्म धायोप में यह मुख्य विषय था कि इस बात की बाध की बाध कि स्मृततम मजदूरी निर्धारित करने वाली कोई व्यवस्था हो सकती है या नहीं ! किन्तु उस समय कुछ कठिनाइयों की घोर संकेत किया गया और यह सुधार १९४८ तक नहीं किया जा सका। यद्यपि धर्म धायोप में स्वयं स्मृततम मजदूरी लागू करने के लिए उचित व्यवस्था स्थापित करने की कठिनाइयों का उल्लेख किया है। धर्मों के स्मृततम मजदूरी निश्चित करने से सम्बन्धित कुछ समस्याओं का पहलू ही ऊपर उल्लेख किया जा चुका है। कानपुर धर्म बांध अधिनियम के अधीन में इन कठिनाइयों को संक्षेप में बताया जा सकता है। 'स्मृततम मजदूरी निश्चित करने में हमें निर्वाह सागत का ध्यान रखना होगा। मजदूरी स्तर भी निर्धारित करना पड़ेगा। यह सरल कार्य नहीं है। समस्या के मनो-वैज्ञानिक सामाजिक तथा बातावरण सम्बन्धित तत्त्वों की छायाकीपूर्वक बांध करनी होगी तथा बांधने एवम् उचित करने होंगे। परिवार के बजट प्राप्त करने होंगे तथा उनका अध्ययन और विश्लेषण करना होगा। धारम्यक धर्मों की सावधानी से छांटना होगा तथा उनकी गुण तथा मात्रा दोनों रूप से सभी बांधि मद्दुर्भावित करना होगा। यह सब बट्टिन कार्य हैं जिनके लिए धर्म और धर्मपरा की धारम्यकता होगी तथा उन धर्मों को उचित रूप से समझना होगा जिनकी निर्वाह सागत निर्धारित की जा रही है। परिवार इकाई की भी परिभाषा उचित प्रकार से करनी पड़ेगी तथा उस निर्धारित करना होगा। भारतीय सामाजिक पद्धति में यह सब बट्टिन कार्य हैं। धर्मियों की धर्मपराएँ तथा सामाजिक धारम्यकों को भी ध्यान में रखना होगा तथा इनका समुचित मूल्यांकन करना पड़ेगा।'

यह भी उल्लेखनीय है कि धर्मियों में भारत की विषय परिस्थितियों की रूढ़िगत करने मजदूरी में बुद्धि के विरुद्ध तर्क प्रस्तुत किए हैं। प्रायः यह कहा जाता है कि मजदूरी में बुद्धि होने से धर्मिक या ती मरिदा पर धर्मिक धर्म करने लगे या धर्मिक धारम्यकी हो जायेंगे। धर्म में धर्म धारम्यक बुद्धि हो जाणगी तो उसका बुद्धिमत्तापूर्ण धर्म नहीं हो सकेगा। इसके अतिरिक्त धर्मिक की बुद्धि की धर्म की बुद्धि के साथ बनेगी। यह भी कहा गया है कि मजदूरी में बुद्धि के प्रभाव निर्वाह सागत में बुद्धि होने में समाप्त हो जायेंगे क्योंकि बुद्धि हुई मजदूरी मुक्त-स्वीति उत्पन्न करेगी। परन्तु यह समझ तर्क एक धारम्यकी है और हम पहले ही धारम्यके स्मृततम मजदूरी की बांधनीयता का उल्लेख कर चुके हैं। मजदूरी निश्चित करने में की

कठिनाईयाँ घायी हैं वेकम उन्ही को ध्यान में रचना है तथा उम्ह सावधानी पूरक हन करना है ।

सन १९४८ का न्यूनतम मजदूरी धर्मिनियम

(Minimum Wages Act of 1948) —

भारत में विधानीय मजदूरी निर्धारण व्यवस्था को स्थापना करने के प्रयत्न पर सन् १९४३ में त्रिपरीय मजदूर की स्वामी धर्म समिति के तीसरे सम्मेलन में विचार विमर्श हुआ तथा त्रिपरीय धर्म समिति क १९४३ १९४४ तथा १९४५ के धर्म विधानों में इस पर विचार किया गया । इनमें से अन्तिम धर्मविधान में इस विधान को स्वीकार कर लिया गया कि न्यूनतम मजदूरी विधान बनाया जाना चाहिए । ११ अगस्त सन् १९४६ को डा० बी० धार० धम्मदकर में जो उस समय के भारतीय सरकार के धर्म मंत्री थे न्यूनतम मजदूरी विधेयक प्रस्तुत किया । किन्तु भारत में संवैधानिक परिवर्तन होने के कारण विधेयक के पास होने में कुछ विमम्भ हो गया । माघ १९४८ में फिर यह न्यूनतम मजदूरी धर्मिनियम के नाम में पारित हुआ । इस धर्मिनियम का धर्मिद्वार उन कुछ उद्योगों में न्यूनतम मजदूरी निर्धारण करना है जिनमें धर्मियों में बहुत परिधम लिया जाता है अथवा जहाँ धर्मिक के योग्य की धर्मिक सम्पादना है । धर्मिनियम क मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित है—

धर्मिनियम में केन्द्रीय अथवा प्रदेशीय सरकारों को एक निर्धारित समय में विधायक मूर्ची में दिए गए उद्योगों में सवे कर्मकों महिन कर्मचारियों की मजदूरी को न्यूनतम हरे निर्धारण करने का धर्मिकार दिया गया है । कर्मचारियों की परिभाषा के धर्मार्थन बहु धर्मिता धर्मों हैं जो कृषाल या धनुषाल धारिणिक या निर्धिक का कोई भी धर्म धारिणिक का क्षेत्र पर करते हैं । धर्मिनियम में सभी धनुषुधी में इन उद्योगों का उध्मेय कर दिया गया है । यह इस प्रकार है—ऊनी कान्ठी बनाने या धान बुनने धान व्यवसाय तम्बाकू एक बीड़ी बनाने धाने व्यवसाय धारण धिस धात्र धिस धाम धिस धेन धिस धाधान धिसो स्वानीय धारिणिकी के धन्तधन्त उद्योग, मद्रक निर्धारण या इमारत बनाना पम्बर लीढ़ना या बुटना धाम उद्योग धधक धर्म धर्मिधनिक मीटर धानायात्र धमझा रंपन एव गाद करन तथा धमके की धीरे बनाने क धारणाने तथा धीनी । धर्मिधन सरकारों को धर्मिनियम को धिसी धी लेम उद्योग पर लागू करने का धर्मिकार भी दिया गया है जहाँ सरकार के धिधर में न्यूनतम मजदूरी कानूनी हन में निर्धारण हो जानी चाहिए । न्यूनतम मजदूरी धिसी लेम उद्योग में निर्धारण नहीं की जायेगी धिसय मजदूर धाम में १००० में धम धर्मधारी है ।

धर्मिनियम में निम्नलिखित धर्मों को निर्धारण करने की व्यवस्था है —

- (ध) न्यूनतम उद्योग-धर. (Piece rate) (ध) न्यूनतम धमानी धर. (Time rate)
- (ध) धारण्टी-धुध धमानी-धर. (ध) धमधारि धर (Overtime rate) धी स्वानी, धधकधानी धम तथा धमिक को धर्मिधन धे धिनी तथा धधधो धिनीधे धारण्टी धीर धिधारिधन के धिर धर्मिधन धमधी धध । एध न्यूनतम धर में धिधधर्मिधन

बाने सम्मिलित हानी बाह्य (क) मजदूरी की मूल दर (Basic rate) एवं निर्बाह लागत (Cost of Living) भत्ता प्रवधा (ख) निर्बाह लागत भत्त के साथ या उसके बिना मूल मजदूरी दरें तथा कम दरों पर आवश्यक वस्तुओं को प्रदान करने वाली मुविबाधों की न्यूनतम कीमत प्रवधा (ग) सब सम्मिलित (All Inclusive) दर। अधिनियम के अनुसार मजदूरी मकड़ी में ही बानी बाहिये यद्यपि उपयुक्त सरकारें न्यूनतम मजदूरी का पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से जिम्मे में प्रदायनी करने का अधिकार दे सकती हैं। उपयुक्त सरकार बांध करने तथा न्यूनतम मजदूरी की दरें निर्दिष्ट करने के लिए परामर्श देने के लिए समितियाँ नियुक्त कर सकती हैं। इन दरों में परिवर्तन के लिए समाहकार समितियाँ भी नियुक्त की जा सकती हैं। समाहकार समितियों के कार्यों का समन्वय करने तथा सरकार को मजदूरी की न्यूनतम दरों के निर्दिष्ट करने तथा पुनः प्रवक्तोक्त की मताह देने के लिए एक समाहकार बोर्ड नियुक्त करने की व्यवस्था है। केन्द्रीय तथा प्रदेशीय सरकारों को समाह देने तथा प्रदेशीय समाहकार बोर्डों के कार्यों का समन्वय करने के लिए एक केन्द्रीय समाहकार बोर्ड की स्थापना भी केन्द्रीय सरकार कर सकती है। ये स्थापने मानिक तथा धर्मियों के प्रतिनिधियों की समान संख्या से तथा कुल सदस्यों के एक तिहाई से कम स्वतन्त्र व्यक्तियों से निर्मित होनी। उपयुक्त सरकारें अधिनियम के अन्तर्गत पुकी में संश्लिष्ट योजनाओं में कार्य के वैदिक घटे भी निर्दिष्ट कर सकती हैं। एक साप्ताहिक अवकाश दे सकती हैं, तथा समवोपरि मजदूरी की प्रदायनी का नियम बना सकती हैं। इस अधिनियम के अनुसार उचित रेकार्ड भी रखने होंगे। मजदूरी की न्यूनतम दरों से कम प्रदायनी के कारण उत्पन्न बाधा को आंखे नुमने तथा निर्दिष्ट करने के लिए निरीतक तथा अधिवादी नियुक्त किए जा सकते हैं तथा पारराधियों के दण्ड की भी व्यवस्था की गई है।

न्यूनतम मजदूरी अधिनियम में संशोधन—

इस अधिनियम के अनुसार इपि योजनाओं में (अधिनियम से लयी अनुसूची भाग २) अधिनियम तीन बयों में तथा अन्य योजनाओं में (अनुसूची भाग १) अधिनियम दो बयों में न्यूनतम मजदूरी निर्दिष्ट करनी होगी। निर्दिष्ट न्यूनतम मजदूरी दरों में समय-समय पर, परन्तु अधिनियम से अधिनियम २ बयों में संशोधन किया जा सकता है। केन्द्रीय सरकार ने १९४६ के कुछ नियम भी बनाए तथा प्रदेशीय सरकारों ने इन नियमों का परिपालन किया तथा उनको १२ मार्च १९४० से पूर्व न्यूनतम मजदूरी निर्दिष्ट करने की प्रारम्भ की। एक केन्द्रीय समाहकार बोर्ड तथा प्रदेशों में क्षेत्रीय अधिवाधियों की नियुक्ति भी कर दी गई। परन्तु तब भी निर्धारित समय में न्यूनतम मजदूरी निर्दिष्ट करने में विमर्श हुआ तथा सरकार ने एक सम्प्रदाय तथा बाद में संश्लिष्ट अधिनियम द्वारा न्यूनतम मजदूरी निर्दिष्ट करने की तिथि १२ मार्च १९४१ तक बढ़ा दी। यह तिथि फिर ३१ मार्च १९४२ तक बढ़ा दी गई। ऐतिहासिक धर्मियों की निर्दिष्ट करनी विषय सम्प्रदाय है। न्यूनतम मजदूरी निर्दिष्ट करने के

होटलों तथा बसपान एहों छापाखानों और कई पुनर्ने तथा पुनी बनाने क कारखानों में एवं बुकान व वाणिज्य सस्थाओं में मध्यप्रदेश में छीमेंट, काँच चीनी के बर्तन व छापाखानों आदि में धरमौर (राजस्थान) में कपड़ा उद्योगों, जन की पुनी बनान तथा जन की सधार्ई के कारखानों तथा छापाखानों व गोटा किलारी उद्योगों में; हैदराबाद में कई के कारखानों में पंजाब में कपड़ा उद्योग में मैसूर में रेखायी उद्योग व उड़ीसा में मुड़का बनाने में केरल में सन उद्योग और इसाइली बागान में तथा कई बरेछों में धरम कई उद्योगों में जहाँ धर्मियों को कम बेतन मिसता था इस धर्मिनियम को लागू किया गया है। जहाँ तक धर्मिनियम के परिधिष्ठ II का सम्बन्ध है जिसमें केहीहर रोजवार का उल्लेख है धर्मिकतर एग्यों ने समस्त राज्य के या केवल कुछ निर्धारित क्षेत्रों क केहीहर धर्मियों क लिए मजदूरी निश्चित कर दी है। केन्द्रीय सभाकार बोर्ड की भी १९४६ में स्थापना कर की गई थी और नवम्बर १९३२ में इस बोर्ड का पुनर्रचना हुआ है। इस बोर्ड में धरम धनुमुषित रोजपारों के धर्मियों और माधियों के प्रत्येक ६ प्रतिनिधि होते हैं तथा राज्य सरकारों के भी प्रतिनिधि हैं। केन्द्रीय रोजवार व धरम मन्त्रालय क संयुक्त सचिव इसके प्रधान हैं। एक धरम मन्त्रालयों पर जो इस सम्बन्ध में उठाया गया है वह विभिन्न उद्योगों के लिए मजदूरी बाधों की स्थापना है। मजदूरी बोर्ड १९५७ से कई उद्योगों के लिए स्थापित कर लिए गए हैं और इन्होंने भी न्यूनतम मजदूरी निश्चित की है।

मह भी उल्लेखनीय है कि कुछ प्रदेशों के विभिन्न उद्योगों में औद्योगिक धर्मिकरणों के पंचाट हाथ धरमवा विभिन्न समितियों की सिफारिशों पर न्यूनतम मजदूरी भी निश्चित की गई है। उदाहरणतया-उत्तर प्रदेश तथा बिहार जैसी कैंटरी धर्मिक (मजदूरी) काँच समिति की सिफारिशों पर प्र० प्र० में चीनी उद्योग के लिए एक न्यूनतम दण्टी मजदूरी १९४६ में ३६ व० प्रतिमाह निश्चित की गई जो १९४७-४८ में ४२ व० प्रतिमाह तक बढ़ा दी गई तथा पुन १९४८-४९ में ५२ व० प्रतिमाह कर दी गई जो धरम तक लागू है। धनुमुषी भाग १ में दिए गए इस उद्योगों में भी न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी गई है। कुछ मुख्य उद्योगों में जैसे कपाम तथा ऊनी कपड़ा उद्योग विद्यत व्यवसाय कालपुर का ३ धर्मिनियम उद्योग बरेली की पश्चिमी भारत दियाराहाई कम्पनी सहारनपुर की स्टार कागज जिस मोहीनगर के सामने बस देहउदुन के चाय बागान आदि में भी उत्तर प्रदेश सरकार ने न्यूनतम मजदूरी निश्चित कर दी है। मजदूरी का प्रश्न मध्य-समय पर प्रत्येक समितियों को विचार विचार के लिए दिया जा चुका है तथा न्यूनतम मजदूरी निश्चित करने का धाम्योनन एही बढ़ बढ़ चुका है।

धर्मिनियम का धामोचनार्थक धर्म्याकम —

इस विषय में कोई मतभेद नहीं हो सकता है कि देश में न्यूनतम मजदूरी विधान बालि करने की बहुत आवश्यकता है किन्तु जैसा कि पहले भी उल्लेख किया जा चुका है कि इन सम्बन्ध में कुछ सिद्धान्तों को हर्द ह में रचना होना तथा बटिनाइयों

का मयाबाध करना होना। न्यूनतम मजदूरी इतनी धार्मिक भी निश्चित नहीं कर देनी चाहिए जिसे उद्योग बंद न कर सकें और कुछ उद्योगों को अपना व्यवसाय ही छोड़ना पड़े जिसके कारण बरोजगारी बढ़े। यहां बानपुर बपड़ा मिलों का उदाहरण लिया जा सकता है जहां उत्तर प्रदेश सरकार ने मज १९६१ में न्यूनतम मजदूरी १२० पैसे प्रति माह निश्चित कर दी थी इस धारणा को वापिस लेना पड़ा था। १९४८ का न्यूनतम मजदूरी अधिनियम का अन्त भी बहुत मरुभूमि प्रतीत होता है। इनमें अनेक नियमित तथा अनियमित उद्योग नहीं आते जिनमें मजदूरी बहुत कम है तथा जहां धर्मियों से धार्मिक परिष्कार लिया जाता है जैसे सन एक बटाई उत्पादन कारखाने बनाना चीनी के बर्तन बूझी बनाना इत्यादि। कुछ धर्म पैकिंग भी है जैसे बूट, कपाम पेसना तथा सूती बनाना ये सब क्षेत्रों में आज धार्मिक जहां मजदूरी न्यूनतम नहीं है किन्तु अधिनियम बनाना भी कोई उद्देश्य नहीं करता। यह उचित होगा कि अधिनियम समस्त उद्योगों में लागू कर दिया जाय।

न्यूनतम मजदूरी अधिनियम की धारणा अभी यह है कि जब तक किसी उद्योग में एक उद्योग में १००० कामगारों से ज़्यादा न्यूनतम मजदूरी निश्चित नहीं की जा सकती। अनेक प्रदेशों में बहुत से ऐसे उद्योग हैं जहां धर्मियों की संख्या १००० से कम है। अतः छोटे तथा अनियमित उद्योगों की एक बड़ी संख्या पर यह अधिनियम लागू नहीं होता। इन उद्योगों में भी न्यूनतम मजदूरी निश्चित करने की बहुत धार्मिक आवश्यकता है। अधिनियम के अंतर्गत की गई न्यूनतम मजदूरी की व्यवस्था पूर्ण संतोषजनक भी नहीं है। एक स्थायी बोर्ड होना चाहिए अथवा अल्पेक उद्योग में मजदूरी पर निश्चित करने तथा दोहराने के लिए एक समिति होनी चाहिए। अतः, १९४४ में स्थायी धर्म समिति ने भी निश्चित की थी कि न्यूनतम मजदूरी निश्चित करने वाली व्यवस्था की तत्काल स्थापना होनी चाहिए। यह अधिनियम न्यूनतम मजदूरी की परिभाषा भी नहीं करता जिसके मुख्य विद्यमान सभी धर्म निश्चित हो जाने चाहिए।

इसके अतिरिक्त यह भी उल्लेखनीय है कि अधिनियम को लागू करने की धार्मिक बार-बार बढ़ते से अनेक वर्षों तक अनेक धर्मियों की न्यूनतम मजदूरी नहीं दी गई जिसके परिणामस्वरूप उन्हें धार्मिक शक्ति पहुंची। एक समान राष्ट्रीय न्यूनतम मजदूरी निश्चित करने की आवश्यकता है तथा केन्द्रीय उत्पादक बोर्ड ने भी निश्चित की है कि सम्पूर्ण भारत में राष्ट्रीय न्यूनतम मजदूरी ११३ पैसे से २५० प्रतिदिन तक होनी चाहिए। निम्ने कुछ वर्षों में बहंगाई बंद का एक साथ बूट मजदूरी में बिलाने की धारणा की गई है क्योंकि पूर्ण मुक्त बाजार पर धर्मियों के धारणा की कोई सम्भावना नहीं है। केन्द्रीय सरकार कहते ही इस दिशा में कुछ धर्म बंद नहीं है तथा धारणा की जाती है कि किसी धर्म में भी इनका अनुकरण बिना आवश्यक।

न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने के लिये आदर्श सिद्धान्त (Norma) —

न्यूनतम मजदूरी महाद्वार समिति की सिफारिशों पर तथा औद्योगिक अधिकारियों के विभिन्न निर्णयों को देखते हुए सरकार ने न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अन्तर्गत मजदूरी निर्धारित करने के लिए कुछ सामान्य सिद्धान्त बनाये हैं। इनमें एक मुख्य सिद्धान्त यह है कि न्यूनतम मजदूरी केवल जीवन निर्वाह के लिये ही पर्याप्त नहीं होनी चाहिये बल्कि इतनी होनी चाहिये कि अधिक शिक्षा चिकित्सा और अन्य सुविधाओं का दायर अपनी कार्य कुशलता बनाये रख सके। इसके अतिरिक्त न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करते समय मानवीय आवश्यकताओं परिवार के औद्योगिकीकरण करने वाले मजदूरों की मज्जा निर्वाह एवं प्रशिक्षित मजदूरी का धारि का भी ध्यान रखना चाहिये और हमसे श्रेष्ठ की प्रशिक्षित मजदूरी में कोई विघ्न नहीं पड़ना चाहिये। एक बयान अधिक की मजदूरी सामान्यतया ₹ १२.६० से लेकर २६० प्रतिदिन तक होनी चाहिये। यह मजदूरी सब सम्मिलित दर के हिसाब में होनी चाहिये जिसमें मंहगाई भत्ता धारि भी सम्मिलित होना चाहिये। न्यूनतम मजदूरी कुलम घड़-कुलम और अनुपात सभी प्रकार के व्यक्तियों के लिए प्रत्येक क्षेत्र में निर्धारित होनी चाहिये।

भागीय धन सम्मेलन के १४वें अधिवेशन में आ नई देहली में जुलाई १९४७ में हुआ एक बहुलपूर्ण प्रस्ताव पारित किया गया। इस प्रस्ताव द्वारा यह प्रथम बार स्पष्ट किया गया कि न्यूनतम मजदूरी का आधार 'आवश्यकता' होना चाहिए और मजदूरी इतनी होनी चाहिए कि औद्योगिक अधिक को न्यूनतम मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति का धारवाहन रहे। मजदूरी निर्धारित करने वाले प्राधिकारियों के मार्ग निर्देश के लिये जिनमें मजदूरी समितियाँ मजदूरी बोर्ड विभाजन धारि सम्मिलित हैं सम्मिलित धारि नियम निर्धारित लिये लये हैं—

(i) न्यूनतम मजदूरी की गणना करते समय एक सामान्य अधिक परिवार में एक बनो-वर्जन करने लान व्यक्त पर निर्भर तीन ऐसे मजदूर माने जाने चाहिये जिनको उपभोगता इकाई (Consumption Units) कहा जा सकता है। इस सम्बन्ध में लिये बर्षों और लिये द्वारा यदि कोई धार होती है तो उसे सम्मिलित नहीं करता चाहिए।

(ii) न्यूनतम जीवन की आवश्यकताओं की गणना के लिए एक सामान्य धार करने वाले औद्योगिक व्यक्त भारतीय के लिए बर्षों की मात्रा का आधार नहीं माना जाना चाहिये जिसका अनुमान दायर एचोड में किया जा (₹ २६०० बर्षों प्रतिदिन)।

(iii) बर्षों की आवश्यकता की गणना एक आधार पर की जानी चाहिए कि प्रति बर्ष प्रति व्यक्ति १८ घण्टा बर्षा चाहिये। इस आधार पर धार सर्वोच्च माने औद्योगिक परिवार के लिए कुल ७२ मजदूर बर्षों की प्रतिबर्ष आवश्यकता जानी जानी चाहिए।

(iv) मकानों के सम्बन्ध में यह कहा गया कि न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करते समय उन किराये को ध्यान में रखना चाहिये जो सरकार के शौचोपेक्ष धारण योजना के अन्तर्गत न्यूनतम धन के लिए निर्धारित किया जाता है।

(v) ईश्वर रोगनी घोर घम्य विभिन्न मसों पर ध्य के लिए नून न्यूनतम मजदूरी का २० प्रतिशत माता जाता चाहिये। प्रस्ताव में यह भी कहा गया था कि यदि वहाँ भी न्यूनतम मजदूरी ऊपर लिखे धारण विधानों के हिसाब में कम निर्दिष्ट की जाये तो मजदूरी निर्दिष्ट करने वाली व्यवस्था का यह बर्तव्य होगा कि वह उन व्यवस्थाओं को व्यापकित मिश्र करे जिनका कारण वह उपरोक्त धारण नियमों का धारण करने में अक्षमता है। उचित मजदूरी के सम्बन्ध में यह सुझाव दिया गया कि उचित मजदूरी समिति की रिपोर्ट की सिफारिशों को धारण मानकर मजदूरी बौदों को प्रत्येक उद्योग की सभी शाखाओं को विस्तार रूप में देयता चाहिये। उन प्रस्ताव को बहुत महत्वपूर्ण माना गया है क्योंकि उनके प्रथम बार न्यूनतम मजदूरी के सम्बन्ध विचार को एक ठोस धारण प्रदान किया है। मजदूरी बोर्ड धारण सिफारिशों करते समय प्रस्ताव में लिखे गये धारण नियमों को ध्यान में रखते हैं।

कृषि धर्मियों के लिये न्यूनतम मजदूरी—इसकी बाधाएँ —

अधिनियम की धनुषी भाग II में ही उचित धर्मियों के सम्बन्धित है। किन्तु मेनीटर धर्मियों की न्यूनतम मजदूरी निर्दिष्ट करने की सम्बन्धित धर्मियों के धर्मियों की न्यूनतम मजदूरी निर्दिष्ट करने में अधिक अटल है। हमें देश के विभिन्न भागों में मेनीटर मजदूरी के बहुत कम धाँके उल्लेख है। इसका अनिश्चित कृषि धर्मियों में कार्य दिवस के बाव धर्मियों का निर्दिष्ट करना सरल कार्य नहीं है। मेनीटर धर्मियों का कार्य ऐसा है कि वह नियमित कर में नहीं किया जा सकता तथा मापानुसृतता एक ही धर्मिक मेनी की विभिन्न धियाओं में मिल-मिल कर करता है। इनके अधिनियम धर्मों में अधिनियम मजदूरी धर्म में ही जाती है जिसका मुख्य मजदूरी में निर्धारित करना कठिन हो जाता है। फिर छोटे-छोटे जमीदारों की बहुत अधिक संख्या है जिन्हें इन अधिनियम को बाधित करना होगा। छोटे-छोटे जमीदारों को धारणिक सख्या ऐसे विधायक अधिनियम को लागू करने में बहुत अधिक बर्तव्य उल्लेख करती है। भारत में कृषकों का अधिनियम तथा मेनीटर धर्मों का न तो कोई धारण ही होगा है न ही इन सम्बन्ध में कोई रवि होगी है। उचित यह धारण तथा रवि अधिनियम को लागू करने के लिए धारण धारणक है। धारण यह उचित था कि न्यूनतम मजदूरी निर्दिष्ट करने का धारण उन मजदूर तक स्थानिक कर दिया जाय जब तक कि पूर्ण जांच न कर ली जाये तथा कृषि धर्मियों में अधिनियम मजदूरी तथा उनही धारणों के धारण में धाँके एकरित न कर लिये जायें। धारण इन विषय में एक अधिनियम धारणिक कृषि धर्मिक धारण १९२०-२१ में की गई। इन धारण की रिपोर्ट भी अधिनियम ही गई है तथा धारण १९२१ में एक दूसरी अधिनियम धारणिक कृषि धर्मिक धारण धारण की गई थी जो धारण ही धारण है। (देखिये-कृषि धर्मिक का अधिनियम) धारण धारण उल्लेख ही

बुका है कि न्यूनतम मजदूरी निश्चित करने की तिथि ११ दिसम्बर १९२६ तक बढ़ा दी गई थी। अब इस विषय में प्रदेश सरकारों को छूट दे दी गई है कि वे प्राथमिकता मुसार न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर सकती हैं।

सततम समस्त प्रदेशों में कृषि श्रमिकों के हेतु न्यूनतम मजदूरी की दरें निश्चित कर दी गई हैं। यद्यपि अधिकतर प्रदेशों में इसके लिए कुछ विशेष लोच ही लिए गये हैं। उदाहरणतया केरल उड़ीसा पंजाब राजस्थान वेहली और त्रिपुरा में न्यूनतम प्रदेश में कृषि श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी गई है तथा समस्त प्रदेश में कृषि श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी गई है तथा समस्त प्रदेश में कृषि श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी गई है तथा परिचामी बंगाल म राज्य के कुछ निश्चित क्षेत्रों में ही कृषि श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी निर्धारित की गई है। उत्तर प्रदेश में १९२१ में एक समिति की सिफारिशों के अनुसार कृषक श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी १२ पूर्वी जिलों (जिन जिलों को कम मजदूरी वाले जिले कहा जाता है) के २० एकड़ या उससे अधिक के क्षेत्रों में कार्य करने वाले श्रमिकों के लिए निर्धारित कर दी गई थी। उत्तर प्रदेश के सभी क्षेत्रों के श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी गई है। उत्तर प्रदेश के अन्य जिलों में २० एकड़ या उससे अधिक के क्षेत्रों में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी गई परन्तु ४ पहाड़ी जिलों को छोड़ दिया गया। मजदूरी की दरें निम्नलिखित हैं — बपल्सों के लिए १६ प्रतिदिन यथा २६ व० प्रति माह तथा १८ बर्ष की धातु से कम के व्यक्तियों के लिए १२ व० प्रतिदिन यथा २६ व० प्रति माह। इसके परचात सब जिलों और पार्यों में न्यूनतम दरों को लागू कर दिया गया है। बातकों के लिए दर १२ व० प्रतिदिन यथा २६ व० प्रति माह निर्धारित की गई है। यथा १९२८ से न्यूनतम जिन के ठहराई और मानर लोग के २० एकड़ या अधिक की सभी संगठित कृषि पार्यों पर भी न्यूनतम मजदूरी की उपरोक्त दर लागू कर दी गई है। दिसम्बर १९२० से अन्य पहाड़ी जिलों में भी न्यूनतम मजदूरी इसी दर से निर्धारित कर दी गई है। न्यूनतम मजदूरी करनी या जिन या दोनों में भी लागू करनी है।

अब इस प्रकार भारत में श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी निश्चित करने की दिशा में कार्य प्रारम्भ हो गया है। यह पूरा रूप से प्राया की जाती है कि मजदूरी निश्चित करने की व्यवस्था करने करने मुश्किली तथा एक समान मूल मजदूरी दर का प्रायुं भाव होगा और उमका कार्यान्वित होगा भी सम्भव होगा।

न्यूनतम मजदूरी के प्रश्न से सम्बन्धित मजदूरी के सामाजिककरण की समस्या है तथा "उचित मजदूरी" की परिभाषा देने तथा उसे लागू करने की समस्या भी है। सबसे पुराने हम "उचित मजदूरी" के प्रश्न पर विचार करते हैं।

उचित मजदूरी की समस्या (The Problem of a Fair Wage) —

उचित मजदूरी की समस्या एक महत्वपूर्ण समस्या है। प्रत्येक देश में वर्षानिश्चयों में इस समस्या पर विचार किया है। मुझ के परचात उपादान में वृद्धि करने

के लिए ऐसी सभी सम्भावनाओं पर विचार किया गया है जिनसे देश में धमिकों तथा प्रबन्धकों के सम्बन्धों में सुधार हो सके। यह सब ही मांगते हैं कि धमिकों तथा प्रबन्धकों के व्यवहार तथा दृष्टिकोण में केवल तत्कालीन परिवर्तन ही नहीं होना चाहिए बरन् कुछ ऐसे स्पष्ट प्रमाण भी प्रस्तुत किए जाने चाहिये जिनसे ऐसा प्रतीत हो कि मालिक तथा उद्योगों के प्रबन्धक धमिकों के प्रति उचित व्यवहार रखते हैं। इस प्रकार ही धमिकों के मूल कार्यों को दूर किया जा सकता है। इन सम्बन्ध में सबसे महत्वपूर्ण समस्याएँ लाभ-सहभाजन तथा उचित मजदूरी का है। यह सम्बन्धों १९४० के उद्योग-सम्मेलन में उस समय प्रधान में प्राचीन समय औद्योगिक विद्यमान सन्धि प्रस्ताव पारित हुआ था। इस सम्मेलन में यह प्रस्ताव पारित किया गया था कि पूँजी के प्रतिफल तथा धमिक के पारिधमिक देने की प्रणाली की इस प्रकार व्यवस्था की जानी चाहिए कि पूँजीपति तथा धमिक दोनों को ही अपने मनुक्त प्रबल में लिए गए उत्पादन में उचित भाग मिलता रहे। उद्योगकारों तथा मूल उद्योगियों के हित को ध्यान में रखते हुए, कर लगाकर एवं अन्य तरीकों द्वारा धमिकों नाम पर रोकबाम लगाई जा सकती है। धमिक को उचित मजदूरी मिलने की व्यवस्था भी इसके मात ही होनी चाहिए। उद्योग में मापू पूँजी पर उचित प्रतिफल मिलने तथा व्यवसाय को विस्तृत करने व उसे कायम रखने के लिए समुचित धारित्त (Reserve Fund) की भी व्यवस्था होनी चाहिए। १ अप्रैल १९४० को केन्द्रीय सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति के बन्दस्य में इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया था। लाभ-सहभाजन की समस्या की जांच करने के लिए एक समिति भी नियुक्त की गई थी। इस समिति ने १९४० में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी थी। केन्द्रीय उत्पादक परिषद ने एक 'उचित मजदूरी समिति' भी नियुक्त की जिसकी रिपोर्ट १९४१ में प्रकाशित हुई। जून १९४० में इसकी सिफारिशों के आधार पर एक विधेयक का मसौदा तैयार करके संसद में प्रस्तुत किया गया। परन्तु यह विधेयक स्वीकृत न हो गया और व्यपगत (Lapse) हो गया। तद्विधान में इन बात का उल्लेख है कि राज्य को इन बात का प्रमाण करना होगा कि समस्त धमिकों को वर्तमान मजदूरी मिलती रहे।

उचित मजदूरी क्या है ? इसके बारे में विभिन्न विचार —

उचित मजदूरी समिति की रिपोर्ट में उचित मजदूरी पर विभिन्न दृष्टिकोणों ने बड़ा तीव्र ध्यान दिया गया है। समिति के दायें में 'साम्यवाद' काय की स्थिति को मजदूरी की समस्या में सबसे अधिक सम्बन्ध (Relevant) कहा जा सकता है क्योंकि निजी भी मजदूरी नीति को उस समय तक व्यापक और धीरे धीरे दृष्टि में रखा नहीं गया था मरणा कर तक उन नीति द्वारा राष्ट्रीय धाय में कृत्रिम नहीं होती और उन दृष्टि में वे धमिकों को बंध धरना उचित भाग नहीं मिलता।" अथवा तो यही बात मानने वाला है कि 'उचित मजदूरी क्या है ? उचित मजदूरी की परिभाषा कीधी एवं मरणा काय में देना बहुत कठिन है। उचित मजदूरी को निर्दिष्ट करने में देय

की विभिन्न परिस्थितियों और देश के विभिन्न उद्योगों एवं क्षेत्रों की परिस्थितियों की दृष्टि में रचना आवश्यक है। "एलमानहोल्टेरीयिया ऑफ मोसल लाइव्लेड" नामक पुस्तक के अनुसार उचित मजदूरी धर्मियों द्वारा प्राप्त उन मजदूरी को कहते हैं जो उनको एक न्यूनतम (Equal) कुशल कठिन और पर्येषक कार्य करने के लिए मिलनी है। किन्तु यह परिभाषा इस बात को मानकर चलती है कि देश की आर्थिक स्थिति की दृष्टि में किसी भी विशेष औद्योगिक संस्था में एक ऐसे धारक स्तर बनाने की आवश्यकता है जिस स्तर के अनुसार एक सप्ताह तथा एक ही स्थिति के उद्योगों में मजदूरी निश्चित की जा सके। अन्तर्जातीय धन संघ ने "म्यूनतम मजदूरी निश्चय करने की व्यवस्था" (Minimum Wage Fixing Machinery) के नाम से एक विधायिका की थी। इसमें भी म्यूनतम मजदूरी को निश्चित करने के लिए न्यूनतम इमी प्रकार की गठनी का सुझाव है। परन्तु उनमें एक अन्य सुझाव यह भी है कि जो भी उद्योग इस क्षेत्र में आता है कि उसके आकार पर म्यूनतम मजदूरी का स्तर हमारे उद्योगों तथा व्यवसायों के लिए बनाया जा सके वह उद्योग ऐसा होना चाहिए जिसमें धर्मिक वर्णित रूप से अनिष्ट हों और जिसमें सामूहिक न्यूनतम प्रभावकारी हों। यदि ऐसा स्तर निर्धारित करने वाला उद्योग न मिल तो देश में प्रथम मायाग्य मजदूरी धर्मियों को विशेष रूप से मजदूरी को म्यूनतम मजदूरी निश्चय करने के लिए स्तर मात्र देना चाहिए।

1. यदि हम इन विषय पर धर्मशास्त्र सम्बन्धी साहित्य पर दृष्टिगत करें तो ज्ञान होता है कि धर्मशास्त्रियों ने भी किसी विशेष उद्योग में ही एक धारक या स्तर की मानकर 'उचित मजदूरी' की परिभाषा देना ठीक समझ है। 'मार्मस के अनुसार किसी व्यवसाय में मजदूरी की प्रथम दर को उस समय ही उचित मजदूरी कहा जा सकता है जब यह मजदूरी सबसे कम मजदूरी के स्तर पर हो जो धर्म व्यवसायों में उन कार्यों के करने के लिए प्रयोग रूप से ही जाती है जो कार्य एक ही व्यक्ति एवं एक-ही धर्म के हों तथा जो एक-ही दुर्लभ प्राकृतिक शोषण (Equally Rare Natural Abilities) नाम कार्य हों यद्यपि जिसमें एक-ही साधन वाले प्रसिद्धि की आवश्यकता हो। प्रो० 'पीट्रू' ने भी उचित मजदूरी की विलुप्त, एवं संतुष्टि दोनों दृष्टि में परिभाषा की है। संतुष्टि दृष्टि में मजदूरी दर को उस समय उचित कहा जाएगा जब मजदूरी उस काम दर के बराबर हो जो एक ही प्रकार के धर्मियों को देने ही व्यवसाय में तथा धर्म-धर्म के क्षेत्रों में मिलनी है। विलुप्त दृष्टिकोण से अनुसार मजदूरी उचित तभी होगी जब मजदूरी दर सम्पूर्ण देश में एवं धर्मिक व्यवसायों में एक जैसे कार्य के लिए जो अधिकतर प्रथम दर हो इसके बराबर ही।

परिणत, म्यूनतम एवं उचित मजदूरी —

उचित मजदूरी पर प्रथम विचारों का ठीक प्रकार से समझने के लिए परिणत एवं म्यूनतम मजदूरी के बीच अंतर देना आवश्यक है। म्यूनतम मजदूरी

की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है "स्युनतम मजदूरी वह मजदूरी है जो पक्षम निर्वाह के लिए ही पर्याप्त हो कर उनमें कुछ अधिक भी हो। समिति का कहना है कि 'हमारे विचार में स्युनतम मजदूरी न केवल निर्वाह के लिए पर्याप्त होनी चाहिए बल्कि धर्मिक कार्य-सुरक्षा की कायम रखने के लिए भी पर्याप्त होनी चाहिए। इस उद्देश्य में स्युनतम मजदूरी इतनी अवश्य होनी चाहिए कि हमने जिसका आवश्यक विचिन्ना एवं कुछ सुविधायाँ की व्यवस्था भी की जा सके। यह प्रश्न यह उठता है कि पर्याप्त मजदूरी क्या है ? इसका स्तर स्युनतम मजदूरी के स्तर से ऊँचा होना चाहिए। समिति के दृष्टि में 'एक बात में सब सहमत हैं कि स्युनतम मजदूरी इतनी होनी चाहिए कि पुरुष धर्मिक को अपने व अपने परिवार के लिए न केवल आवश्यक भोजन वस्त्र एवं आवास ही प्राप्त हो सके बल्कि यह मजदूरी इतनी अवश्य हो कि धर्मिक पर्याप्त मुक्त में जीवन व्यतीत कर सकें अपने बच्चों को शिक्षा प्रदान कर सकें स्वास्थ्यका एक समय उपचार कर सकें अपनी सामाजिक आवश्यकताएँ भी पूरी हो सकें तथा बुढ़ापे एक प्रत्य महत्त्वपूर्ण मजदूरी के लिए बीमा प्रादि की व्यवस्था भी की जा सके।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर अब हम उचित मजदूरी के प्रश्न पर पुनः विचार कर सकते हैं। समिति के अधिकांश सदस्यों का मतानुसार उचित मजदूरी पर्याप्त मजदूरी और स्युनतम मजदूरी के मध्य किसी दिग्गु पर निर्दिष्ट होनी चाहिए। फिर भी समिति के कुछ सदस्य स्युनतम मजदूरी की सीमा में घाटे बढ़ने को तैयार नहीं हैं और कुछ सदस्य पर्याप्त मजदूरी में कम किसी भी मजदूरी को उचित मजदूरी मानने के लिए तैयार नहीं हैं। समिति के अधिकांश सदस्यों का यह विचार कि उचित मजदूरी स्युनतम मजदूरी में तनिक अधिक और पर्याप्त मजदूरी में तनिक कम होनी चाहिए ऐसा ही विचार का अनुमोदन है जो प्रायः अन्य क्षेत्रों में भी प्रचलित है। भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कायम का विचार है कि 'उचित मजदूरी पर्याप्त मजदूरी को छोड़े बिना प्राप्त करने की धोरण उठा हुआ एक वचन है।' उचित मजदूरी के प्रश्न पर कम्बर्द मजदूर के विचार भी उन्मत्तनीय हैं 'यदि प्रति औद्योगिक (Competitive) परिस्थितियों में कोई भी उचित पर्याप्त मजदूरी दे सकने में असमर्थ हो सकता है तो पर्याप्त मजदूरी में कम कोई भी मजदूरी उचित नहीं हो सकती। स्युनतम मजदूरी तो ऐसा स्तर निर्धारित कर देनी है जिसमें कम ता मजदूरी हो ही नहीं सकती पर्याप्त मजदूरी तक लेनी स्युनतम सीमा बना देनी है जिसमें कम मजदूरी किसी धर्मिक को नहीं दी जाती चाहिए। उचित मजदूरी स्युनतम मजदूरी के ऊपर निर्दिष्ट की जाती है और पर्याप्त मजदूरी को पाने के लिए जिस क्रिया (Process) का होना आवश्यक है उसका लिए हमारे महत्त्वपूर्ण धर्म धाना जा सकता है।

उचित मजदूरी कैसे निर्दिष्ट की जाय ?

उचित मजदूरी का धर्म नवम्ब मेने के परचाय इस बात पर विचार करता

आवश्यक हो जाता है कि उचित मजदूरी को कार्यान्वित करने के लिए कौन-कौन व्यावहारिक प्रणाली अपनाई जाए। समिति के विचारानुसार उचित मजदूरी की कम से कम सीमा तो न्यूनतम मजदूरी द्वारा निश्चित हो जाती है किन्तु उच्चतम सीमा उद्योग की भुगतान क्षमता द्वारा निर्धारित होती है। यह न्यूनतम क्षमता निम्नलिखित बातों पर निर्भर करती है — (i) धमिकों की उत्पादकता (ii) मजदूरी को प्रचलित दर, (iii) राष्ट्रीय आय का स्तर तथा उसका वितरण (iv) देश की वार्षिक व्यवस्था में उच्च उद्योग का स्थान। न्यूनतम मजदूरी का विस्तृत विवरण ऊपर दिया जा चुका है। अब हम उद्योग की भुगतान क्षमता की समस्या का विश्लेषण करते क्योंकि हम अंतरपूर्वक समस्या पर भी माबधानीपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है।

उद्योग की भुगतान क्षमता (Capacity of Industry to Pay) —

किसी उद्योग की उत्पादकता ही एक ऐसा घटक है जिससे मजदूरी ही बानी है। न तो वित्तमानी धमिक मर्चों के बहाव में घोर न ही राज्य की किसी व्यवस्था द्वारा कुछ हेरफेर करके घमम मजदूरी को उद्योग की भुगतान क्षमता से अधिक बढ़ाया जा सकता है। यह केवल घमभावी रूप से साम्य हो सके बरना यदि मजदूरी को उद्योग की भुगतान क्षमता से अधिक बढ़ाने के प्रयत्न किए जायेंगे तो वैरोजपाटी, मुद्रास्फीति (Inflation) आदि जैसे कुछ दुःखदायी परिणाम प्रकट हो जायेंगे। यदि किसी समय एक उद्योग में मजदूरी इतनी अधिक बढ़ा ली जाय कि उच्च उद्योग में मजदूरी के टूट-फूट जाने पर भी उच्च पूर्वस्वरूप में बरना न जा सके, तब इसका परिणाम यह होगा कि उत्पादन कम हो जायगा और इसके कमस्वरूप अधिक में मजदूरी निर आएगी। कोई भी उद्योग अपनी भुगतान क्षमता से अधिक मजदूरी नहीं दे सकता है जब उच्च उद्योग को सरकार द्वारा उपदान (Subsidy) दिया जाता हो परन्तु इसका अर्थ यह होगा कि उच्च उद्योगों की भुगतान क्षमता को प्रयत्न वा अत्यन्त रूप में कम कर दिया जाता है। यह भी सम्भव है कि यदि कोई उद्योग किसी ऐसी कठिनाई में घम हो जिससे उच्च छूटकारा मिलने की शीघ्र ही सम्भावना हो तब घमभावी काम के लिए वह अपनी भुगतान क्षमता से अधिक मजदूरी देने के लिए तैयार हो जाय।

धमिकों द्वारा जब भी ऊँचे दर पर मजदूरी की मांग की जाती है तभी वार्षिक पर तर्क प्रस्तुत करने हैं कि उद्योग ऊँची मजदूरी देने की परिस्थितियों में नहीं है। हमारे घोर धमिक यह तर्क देते हैं कि ऊँची दर से मजदूरी देने में 'बचन' होगी है। धमिक बतते हैं कि अधिक मजदूरी बागल में कम मजदूरी है। ऊँची दर से मजदूरी देने में बचन होगी है, इन बचन का आकार यह है कि मजदूरी किसी ऊँची होगी उद्योग की भुगतान क्षमता उतनी ही अधिक होगी क्योंकि ऊँची मजदूरी के नाब-नाब धमिकों की कार्य-भुगतान में भी वृद्धि होगी और वार्षिक प्रति उत्पाद उत्पादन मात्रा भी बढ़ेगी। घम उनके परिणामस्वरूप उत्पादन की उच्चतम पद्धतियों

की भी आनामा जा सकता। साथ ही साथ सुस्त-से न भी कभी होगा। बन्धुता की भाँव बढ़ेगी बाजार विस्तृत होने और इसमें उत्पादन में पुनः वृद्धि होगी। यह बात इस ही प्रकार समझा रहेगा और धन्य में इन सब बातों के फलस्वरूप मामिकों का पचाह साध होगा। इस प्रकार उद्योग की सुगमता क्षमता भी अधिक न अधिक होगी।

उद्योग की सुगमता क्षमता क्या है यह निश्चय करने में धन्य कृष्ण बाण भी ध्यान में रखनी चाहिए। कम धाय जाने धर्मियों की मजदूरी तब ही बढ़ाई जा सकती है जब तक धर्मियों की मजदूरी का पुनः विस्तारण कर दिया जाय जिससे कि न्यूनतम धाय जाने धर्मियों को अधिक मजदूरी मिले तब तब अधिकतम धाय जाये। धर्मियों की मजदूरी कम हो जाए। परन्तु ऐसा ठीकी सम्भव है जबकि सुगम धर्मियों की मजदूरी बहुत अधिक हो और उममे कुछ कमी करने की सम्भावना है। इसके प्रतिरुद्ध यह सम्झना भी उठनी है कि सुगमता-क्षमता का निश्चय उद्योग की विम प्रचार की पत्र के अनुसार किया जाता चाहिए। डा० मागास का "प्रतिनिधि कम (Representative Firm) का विचार भी इस मामले में कुछ धर्मिक महामक नहीं है। क्योंकि यह बात उठना है कि यह प्रतिनिधि कम किसी फर्म के बाजार का प्रतिनिधित्व करती है या उसकी लागत का। जब लागत का प्रश्न उठता है तो लागत की समस्या सामने आ जाती है जिसका समाधान आवश्यक है। मामिक ता महा सामान्य लागत पर आरंभ में और अधिक उमका मईक विचार करना। एक प्रश्न यह भी उठता है कि उद्योग की सुगमता-क्षमता का क्या किसी विधाय उद्योग बढ़ाई की सुगमता क्षमता में है प्रत्येक किसी विधाय सम्पूर्ण उद्योग की सुगमता क्षमता से है प्रत्येक देश के सम्पूर्ण उद्योगों की सुगमता क्षमता में है। उद्योग की सुगमता-क्षमता के प्रश्न को तब करने में पुनः इन सब ही बर्तमानों को ध्यान में रखना होगा।

इस सम्झना पर उचित मजदूरी निर्दिष्ट में प्रदान विचार करना रूप में धन्य लिए है। उमके धरदा में हमारा विचार यह है कि उद्योग की सुगमता-क्षमता का निश्चय करत समय किसी विधाय उद्योग बढ़ाई या देश के सम्पूर्ण उद्योगों का सुगमता क्षमता को मना धन्य होगा। इसका उचित धायार तो कि जो विधायित्व लेके के किसी विधाय उद्योग की सुगमता-क्षमता जानी चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो उम देश के उम उद्योग की सम्पूर्ण बढ़ावा में एक समान मजदूरी निर्धारित होगी चाहिए। मजदूरी निर्धारण करने वाले बोर्ड के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह प्रत्येक देश के किसी उद्योग की उद्योग बढ़ाई की सुगमता क्षमता का बारे में व्यावहारिक रूप में उठी उचित है कि उम उद्योग का एक उचित बाधक मजदूरी निर्धारित की जाये। बन्धु फिर यह प्रश्न उठता है कि उम उद्योग क्षमता की मात्रा कितनी जाए? इस सम्झना के यह सुझाव दिया गया है कि सुगमता-क्षमता के दो धायार हैं (क) पृथी पर उचित उद्योग और प्रत्येक-वर्गों की उचित धार्मिक (घ) उद्योग की स्थाप

दगा म रत्नने क लिए धारलित निधि तथा मुम्बहास (Depreciation) के लिए वन की उचित ध्यवस्था । समिति के बिचार से एक महत्वपूर्ण निष्ठात जिमका मजदूरी का स्तर निर्धारित करने के सम्बन्ध में पालन किया जाना चाहिए यह है कि मजदूरी स्तर ऐसा हो जिमसे कि उद्योग धमिक उद्योगों के सके और दलता-सुबंक उत्पादन को बाधन रख सके । किमी बिरोध उद्योग में मजदूरी निरिधत करन के लिए इस मुम्ब हा मी ध्यान रखना चाहिए कि लमी मजदूरी उत क्षेत्र के धम्य उद्योगों में प्रचलित मजदूरी में बहुत मिश्र न हो । मजदूरी की समस्या में अन्तिम निष्कर्ष यही निकलता है कि धमिका की मजदूरी राष्ट्रीय धाय स्तर और इस धाय के बिभाजन पर निर्भर करती है । तद्वानि यह ती एक साधारण नियम है कि ध्यवहार में धमिकों की मजदूरी प्रत्येक उद्योग बिरोध की परिस्थितियों के अनुसार तथा उत उद्योग का देस की धर्म ध्यवस्था में क्या स्थान है इस बात पर निर्भर होनी चाहिए ।

उत्पादकता तथा साधत से सम्बन्धित मजदूरी की समस्या —

एव हमारे सम्मुख यह समस्या धायी है कि मजदूरी का उत्पादन साधत में क्या सम्बन्ध है । मजदूरी एवं साधत का सम्बन्ध ध्यावहारिक रूप में अत्यन्त महत्व पूर्ण है । धमिका के पध्यागो यह तर्क देते हैं कि ऊंची मजदूरी से उत्पादकता बढ़ती है और परिणाम-सम्बन्ध साधत बढ़ जाती है । दूसरी धौर साधित यह कहते हैं कि मजदूरी में बढोत्तरी में उत्पादन की साधत बढ़ती है । समस्या यह है कि ऊंची मजदूरी में कार्य-सुधमता बढ़ती है या नहीं तथा ऊंची मजदूरी के साध-साध उत्पादकता बिम मीमा एक प्य किस मति में बढ़ती है ? यह बात इस पर निर्भर करेगी कि जिम वर्ग में धमिक सम्बन्धित है उन वर्ग के ध्यक्तिया का धारस जीवन स्तर होगा है । धारस जीवन-स्तर की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है कि वह वह स्तर है जिमसे पसम्बन्ध धमिकतम कार्य-सुधमता एवं ध्युततम साधत प्राप्त होती है । परन्तु यह कहना बटिन है कि ऐसा स्तर क्या होगा ? यह स्तर अतथासु जीवन के संन्यागो जिमको सामाजिक परध्यागधों ध्यामिक एवं नैतिक बिचारों द्वारा बिर्धागित होता है । इन धारस जीवन-स्तरों का अन्तर ही बिबिन्न देगों में समाने कार्य-सुधमता के होन रूप में बिबिन्न मजदूरी दरों के प्रचलित होने का कारण है । जिमी भी देस में ऊंची मजदूरी धमिक कार्य-सुधमता सा मकती है परन्तु एक की कार्य-सुधमता होन पर या एक की साधत धाने पर भी यह धाबरयन नहीं है कि बिबिन्न देगों में या बिबिन्न वर्गों को एक की ही ऊंची मजदूरी की धाय । इससे धानैरिक्त उत कार्य-सुधमता की भी एक मीमा है जो मजदूरी में कृडि करन में प्राय की जा सकती है । मजदूरी को धमौधित प्रकार में बढ़ाने में साधन धमौधित रूप में नहीं बढ़ाई जा सकती । इन सम्बन्ध में भी एक इष्टतम बिन्दु (Optimum Point) होगा है जो कुछ बिन्ध परिस्थितियों के धमर्धत उष्णतम जीवन-स्तर इन्धन करता है । परन्तु यह बिन्दु भी जीवन को सुधमय बनाने के लु बिन्ध नये नये ध्याविकाओं के साध-साध धारे बढ़ करना है । इसके धनिरिक्त यदि धमिक दलनी कम मजदूरी

प्रमाणित कर रहा है कि उनका जीवन का महत्त्वपूर्ण अंश स्वस्थताय भाग्यवश ही नहीं मिलेगा। परन्तु यदि मजदूरी पहिले से ही इतनी है कि अधिकांश का न कठम अस्वास्थ्य करने मुक्तमय जीवन भी उपलब्ध है तो मजदूरी में वृद्धि होने से बाप सुखमता में पहलन नहीं बढ़ोतरी नहीं होगी। इन कारणों से का अधिकांश मजदूरी में सामान्य अधिकांश घट सकती है परन्तु कुछ समय पश्चात् सामान्य भी-भी गति में ही चल सकता है।

यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि मजदूरी बढ़ने का मूल्य सादन का घटना आवश्यक नहीं है। मजदूरी को अधिकांश के उच्च जीवन-स्तर में ऊँचा उठाने में अधिकांश घन को ध्यान में रखना है। कुछ समय तक है। यदि जीवन-स्तर को ऊँचा कर भी निया जाय तो भी अधिकांश के स्वास्थ्य पर साधारण बुद्धिमत्ता से साधारण में कुछ समय लगेगा। साधारण ऊँची मजदूरी के पक्षधर बनने भी हो सकती है। इन बातों पर भी विचार किया जाता है कि एक अधिकांश का अर्थ ही बाप में रहित बर्तमानों का सामना करना पड़ता है। मजदूरी में बढ़ाव को जीवन-स्तर पर परिवार के साधारण और सम्बन्धों की मर्यादा के अनुसार पूरक-पूर्व प्रभाव होना। मजदूरी में वृद्धि का सामना करने में बुद्धिमत्ता का स्तर एक गिना इत्यादि भी विभिन्न साधनों में मिल-जुल है और यह आवश्यक नहीं है कि मजदूरी वृद्धि में सब पर एक-सा ही प्रभाव पड़े। फिर अधिकांश उद्योग में मजदूरी का कुछ सामान्य का उद्योग में बाप ही है किन्तु यह भी उद्योग की प्रकृति पर निर्भर करता है। अर्थात् बाप उद्योग छोड़ा है या विधान उच्च उद्योग को अधिकांश कुशल अधिकांश का साधारणता है या नहीं। अर्थात् उद्योग की सामान्य न कठम बर्तमान उद्योग (Factors) की बाप सुखमता पर बन्द सुखम सम्मिलन (Combination) और सम्मिलन (Coordination) पर भी निर्भर है। इन बातों के कारण यह कहना सम्भव नहीं है कि मजदूरी और सामान्य में क्या सम्बन्ध है। फिर भी साधारण मजदूरी का सामान्य पर प्रभाव प्रभाव कम हो परन्तु सम्मिलन प्रभाव बल अधिकांश होता है। वृद्धि का वृद्धि देने में मजदूरी के सामान्य स्तर में प्रभावित नहीं है। इन कारणों से जाना जा रहा है कि यह सम्मिलन सामान्य का वृद्धि में सम्मिलन ही यह सम्मिलन विधान जा सकता है कि ऊँची मजदूरी में सादन कम हो जाय है किन्तु यह नहीं होता है जब मजदूरी की बाप-सुखमता बढ़े। या मजदूरी उद्योगों में अधिकांश बनने की विधि साधारण में ही हो सकती है।

उच्च मजदूरी और साधारण वेत (Pay Rise) की समस्या —

उच्च मजदूरी को निर्धारण करने में साधारण वेत का सम्बन्ध का भी सम्मिलन करना पड़ता है। इन कारणों का सम्बन्ध है कि १९३६ में १९६८ तक के सम्मिलन के बीच कोई बड़े साधारण वेत नहीं जाना जाना चाहिए। बजाय उच्च वेत के सम्मिलन अधिकांश परिवर्धित है। उच्च मजदूरी निर्धारण के विधान के अनुसार कठोर वेत साधारण द्वारा निर्धारित साधारण का स्वीकार कर लिया जाना चाहिए। मजदूरी का यह वृद्धि कि १९३६ के निर्धारण सादन सुखमता का १०० सम्मिलन, १९० में १०५

तः निर्वाह साधन मूककार्का के आधार पर मूल मजदूरी निश्चित की जानी चाहिये। किन्तु जब प्रश्न यह उठता है कि क्या महंगाई मत्ता घटाना करना जानूँ रखा जाय ? जब तक कि निर्वाह साधन १६ से १७२ के स्तर तक न गिर जाय तब तक जो निर्वाह साधन में वृद्धि को धार्मिक या पूरे तौर पर पूरा करने के लिए महंगाई मत्ता दिया ही जाना चाहिये। यह भी प्रश्न उठता है कि विभिन्न वर्गों के धर्मिकों को कितनी प्रतिपूर्ति हो चाय ? मजिस्त्र के विचार से निम्नतम वर्गों के धर्मिकों के लिए १००% प्रतिपूर्ति होनी चाहिये। परन्तु ऊँची मजदूरी पाने वाले धर्मिक वर्गों के लिए प्रतिपूर्ति की दर कम होनी चाहिये। इस प्रतिपूर्ति की सीमा भी बेतन दर धारि पर आधारित होनी चाहिये।

उचित मजदूरी निश्चित करने की व्यवस्था—

जहाँ तक उचित मजदूरी निश्चित करने की व्यवस्था स्थापित करने का सम्बन्ध है मजिस्त्र इसके लिए मजदूरी बोर्डों (Wage Boards) की स्थापित करने का मत है। प्रत्येक राज्य के लिए एक प्रदेशीय बोर्ड होना चाहिए जिसमें स्वतन्त्र सदस्य एवं बराबर संख्या में मजिस्त्रों व धर्मिकों के प्रतिनिधि हों। प्रदेशीय बोर्ड के प्रतिनिधन प्रत्येक ऐसे उद्योग में जो कि मजदूरी निश्चित करने के लिए चुना गया हो क्षेत्रीय बोर्ड होना चाहिए। क्षेत्रीय बोर्ड के कार्य का भी प्रदेशीय बोर्ड द्वारा सम्बन्ध दिया जाना चाहिए। प्रत्येक एक क्षेत्रीय क्षेत्रीय बोर्ड होना चाहिए जिसके सम्पूर्ण मजदूरी बोर्ड द्वारा किए गए निर्णयों की प्रतीति की जा सके।

सन् १९२० का उचित मजदूरी विधेयक (Fair Wages Bill of 1920)—

यहाँ यह उल्लेख किया जा सकता है कि उचित मजदूरी समिति की सिफारिशों के आधार पर एक विधेयक तैयार करके सन् १९२० में विधान सभा के सभ्य प्रस्तुत किया गया था। किन्तु जब यह बिल (Lapse) हो गया है। तबसे प्रत्येक ता एक विधेयक में कंपनी एवं कार्यों में समे धर्मिकों की उचित मजदूरी निर्धारित करने की व्यवस्था थी। इस विधेयक में ही कई उचित मजदूरी में एक मूल दर तथा निर्वाह साधन जल का प्रायोजन या किन्तु यह प्रायोजन सभी तक था जब तक निर्वाह साधन मूककार्क १८२ से २०० तक की स्थिर सीमा तक धार्मिक रहे। (१९२६ के निर्वाह साधन मूककार्क का १०० मानकर) निर्वाह मत्ता समय समय पर विच्छिन्न राज्य सरकारों द्वारा निर्धारित धाराही स्तरों (Graduated Scale) के अनुसार निश्चित होना था। विधेयक में मजदूरी घातों का निश्चित करने के लिए, समयोपरि की गठाना के लिए, मूल्य एवं मजिस्त्रों का समान मजदूरी देने के निर्णय को निश्चित करने के लिए और समय समय पर उचित मजदूरी का दोहराने के लिए व्यवस्था थी। उचित मजदूरी का निर्धारण करने की व्यवस्था उचित मजदूरी समिति की सिफारिशों के अनुसार ही निश्चित की गई थी। बर्तमानियों के लिए मजदूरी में उचित दर दिखी भी समिति में १९४८ के अनुक्रम मजदूरी विधेयक के धारा १९ की गई मजदूरी की अनुक्रम दरों से कम नहीं हो सकती थी। अनुक्रम मजदूरी

की परिभाषा उपा प्रकार की पर्य की त्रिम प्रकार कि उचित मजदूरी समिति के की थी। उचित मजदूरी की परिभाषा एक उद्योग की मजदूरों के समान व प्रदान की उद्योग प्रकार लिए गए के त्रिम प्रकार कि समिति के नियमित हो था। मजदूरी की उचित दर भी उस उचित कार्य की मात्रा से सम्बन्धित की गई था त्रिमता करने की शक्ति के धारण की जाती थी। मजदूरी कार्य की मात्रा के अनुसार निश्चित हो जाने का व्यवस्था की और समय धार्मिक निर्धारित मनुष्य कार्य भार सम्मानन से सम्बन्धित पर तो उचित धारण पर बहु दरमान्य किया जा सकता था। उक्त उचित मजदूरी देने का विषय बोर्ड के विचारणीय ही उस समय हुआम करने तथा सामग्री धारित करने पर रोक लगानी गई थी।

एक सरकार पुन उचित मजदूरी विचारक का समर्थित करने तथा उस प्रस्तुत करने के विषय पर विचार कर रही है। मूलतः मजदूरी अधिनियम को पर्याप्त की सम्मान प्राप्त क्योंकि बहु उन बड़े उद्योगों का प्रदान धन से सम्बन्धित नहीं करना त्रिम मजदूरी सम्बन्धी विवाद भा अन्य साधारण औद्योगिक विवाद के समान समझ लिए जाते हैं। फिर भी उद्योगों का मजदूर विवाद किया है और बननी हुई साधन की आवश्यकता है। यह कहा जाता है कि मूलतः मजदूरी का लागू करने से भी रुकित हुई है और एक उचित मजदूरी निर्धारण करना या एक हास्यास्पद या कम जाना। परन्तु उक्त मजदूरी निर्धारण करने की बाधनीयता इनकी अधिक है कि हम कार्य का एक अधिक समय के लिए स्थिति नहीं करता जाति। मजदूरी बोर्डों की नियुक्ति करने मजदूर सरकार से उचित मजदूरी समिति की स्थापना की और विचारण के ध्यान रिमाया है ताकि मजदूरी निर्धारण करने समय एक रिपोर्ट में दिए गए सिद्धांतों का ध्यान रखा जाय। इसके अतिरिक्त सरकार के मजदूरी निर्धारण से निम्नलिखित बातों पर विचार करने के लिए कहा है —

- (क) विकासोन्मुख आर्थिक व्यवस्था (Developing Economy) में उद्योग की आवश्यकताएँ।
- (ख) आर्थिक विकास की मांग।
- (ग) मजदूरी प्रणाली का समन्वय एक प्रकार से हो कि अधिको की प्रवृत्ति कुशलता बढान में प्रभावित दिव।

संबन्धीय धारणाएँ तथा मजदूरी —

प्रथम संबंधीय धारणा में मजदूरी समिति की शक्ति पर मनुष्य का एक ध्यान तथा का परन्तु धारणा मुद्रा-नीति का ध्यान से बना थी। इन कारण धारणा धारण के विचारणुक्त मजदूरी के प्रति बंधन धारणाएँ का न बन धारण करने उद्योगों के अतिरिक्त अधिक सम्मान से भी ताकि उक्त प्रकार उद्योग के लिए और साधारण रूप स्तर पर करना। एक तरह के विचारण पर एक मजदूर के साथ-साथ मजदूरी का श्रेष्ठ मजदूर का भी ध्यान किया गया। धारणा के बहु भी निर्धारण की कि मजदूरी एक निजी उद्योग में मजदूरों सम्मान नहीं की गई विचारण धारणा पर बने स्वामी मजदूरी बोर्ड होने जाति, मजदूरी की सम्मानण पर की जाती गई और मजदूरी का सम्मानण होना जाति तथा मूलतः

तक निर्वाह लागत नृचर्चाओं के आधार पर मूल मजदूरी निश्चित की जानी चाहिये। किन्तु अब प्रश्न यह उठता है कि क्या महंगाई भत्ता प्रदान करना जानू रखा जाय ? अब तक कि निर्वाह लागत १६ से १७२ के स्तर तक न फिर। चाय तक तक जो निर्वाह लागत में बुद्धि को धार्मिक या पूने तीर पर पूरा करने के लिए महंगाई भत्ता दिया ही जाना चाहिये। यह भी प्रश्न उठता है कि विभिन्न वर्गों के श्रमिकों को कितनी क्षतिपूर्ति दी जाय ? श्रमिकों के विचार से निम्नतम वर्गों के श्रमिकों के लिए १००% क्षतिपूर्ति होनी चाहिए। परन्तु ऊँची मजदूरी पाने वाले श्रमिक वर्गों के लिए क्षतिपूर्ति की दर कम होनी चाहिए। इस क्षतिपूर्ति की सीमा भी केवल दर धारि पर आधारित होनी चाहिए।

उचित मजदूरी निश्चित करने की व्यवस्था —

यहाँ तक उचित मजदूरी निश्चित करने की व्यवस्था स्थापित करने का सम्बन्ध है श्रमिकों के लिए मजदूरी बोर्डों (Wage Boards) को स्थापित करने का प्रश्न है। प्रत्येक राज्य के लिए एक प्रदेसीय बोर्ड होना चाहिए जिसमें स्वतन्त्र सदस्य एवं बरतार सभ्यता में श्रमिकों के प्रतिनिधि हों। प्रदेसीय बोर्ड के प्रतिनिधि प्रत्येक एक उद्योग में जो कि मजदूरी नियन्त्रित करने के लिए चुना गया हो टीभीय बाइ होना चाहिए। क्षेत्रीय बोर्ड के कार्य का भी प्रदेसीय बाइ द्वारा सम्बन्ध दिया जाना चाहिए। अन्त में एक कर्माध्ययनीय बोर्ड होना चाहिए जिसके सम्पूर्ण मजदूरी बोर्ड द्वारा विण गण निर्णयों की शीला की जा सके।

सन् १९५० का उचित मजदूरी विधेयक (Fair Wages Bill of 1950)—

यहाँ यह उल्लेख किया जा सकता है कि उचित मजदूरी समिति की विचारों के आधार पर एक विधेयक तैयार करके अगस्त १९५० में विधान सभा के समक्ष प्रस्तुत किया गया था। किन्तु अब यह व्यरगत (Lapsed) हो गया है। सबसे प्रथम ती ५० विधेयक में टीकी एवं तानों में श्रमिकों की उचित मजदूरी निर्धारित करने की व्यवस्था थी। इस विधेयक में ही कई उचित मजदूरी में एक मूल दर तथा निर्वाह लागत भत्ते का धारोदन था किन्तु यह धारोदन तभी तक था जब तक निर्वाह लागत नृचर्चाएं १०२ से ०० तक की स्तर तीमा से अधिक रहे। (१९३९ के निर्वाह लागत नृचर्चाएं का १०० मानकर) निर्वाह भत्ता समय समय पर विधिगत राज्य सरकारों द्वारा निर्धारित धारोदी स्तरों (Graduated Scale) के अनुसार निश्चित होता था। विधेयक में मजदूरी अन्तों का निश्चित करने के लिए, लवोलीर की गणना के लिए, नृचय एवं श्रमिकों को समान मजदूरी देने के निर्णय को निश्चित करने के लिए धोर मजदूरी पर उचित मजदूरी का टीहणन के लिए व्यवस्था थी। उचित मजदूरी का निर्धारण करने की व्यवस्था उचित मजदूरी समिति को विचारों के अनुसार ही निश्चित की गई थी। बर्जचारियों के लिए मजदूरी को उचित दर शिमी भी स्थिति में १९५० के मूलतम मजदूरी श्रमिकों के धारो दी गई मजदूरी की मूलतम बरों में कम नहीं हो सकती थी। मूलतम मजदूरी

की परिभाषा उनी प्रकार की गई थी जिस प्रकार कि उचित मजदूरी समिति में हो
 की। उचित मजदूरी की परिभाषा एवं उद्योग की भुगतान क्षमता के प्रश्न भी उसी
 प्रकार लिए गए थे जिस प्रकार कि समिति में निष्पत्ति की थी। मजदूरी की उचित
 दर भी उस उचित कार्य की मात्रा में सम्बन्धित की गई था जिसको करने की धर्मिकों
 से मांगा की जाती थी। मजदूरी कार्य की मात्रा के अनुसार निश्चित की जाने की
 व्यवस्था की और प्रत्येक धर्मिक निर्धारित समुचित कार्य मार मसाजम में प्रसफल
 रह तो उनका आधार पर वह दरकास्त किया जा सकता था। जब उचित मजदूरी
 देने का विषय बोर्ड के विचारार्थीन हो उस समय हड़ताल करने तथा तात्कालिक घोषित
 करने पर रोक लगायी गई थी।

अब सरकार पूरा उचित मजदूरी विवेक का समुचित करने तथा उस
 प्रस्तुत करने के विषय पर विचार कर रही है। न्यूनतम मजदूरी अधिनियम को पर्याप्त
 नहीं समझा जाता क्योंकि वह उन बड़े उद्योगों को प्रदान क्षेत्र में सम्बन्धित नहीं
 करता जिनमें मजदूरी सम्बन्धी विचार भी अन्य साधारण औद्योगिक विचारों के
 समान समझ लिए जाने हैं। फिर भी उद्योगपतियों ने इसका विरोध किया है और
 बहुतों हुई मांग की घोषणा उठाई है। यह कहा जाता है कि न्यूनतम मजदूरी का
 लागू करने में भी वज्रिाई हुई है और अब उचित मजदूरी निश्चित करना तो एक
 हस्यास्तर का प्रश्न होया। परन्तु उचित मजदूरी निश्चित करने की वांछनीयता इसनी
 अधिक है कि इस कार्य का अब अधिक समय के लिये स्थगित नहीं करना चाहिए।
 मजदूरी बोर्डों की नियुक्ति करते समय सरकार में उचित मजदूरी समिति को रिपोर्ट
 की घोर विवेक रूप में ध्यान विभागा है, ताकि मजदूरी निर्धारण करने समय इस
 रिपोर्ट में दिए गए निष्ठाओं का ध्यान रखा जाए। इसके प्रतिरिक्त सरकार में
 मजदूरी निर्धारण में निम्नलिखित बातों का विचार करने के लिए कहा है —
 (क) विकासोन्मुख आर्थिक व्यवस्था (Developing Economy) में उद्योग की
 आवश्यकताएँ। (ख) सामाजिक न्याय की मांग। (ग) मजदूरी व्यक्तियों का सर्वोच्च
 एक प्रकार में ही कि व्यक्तियों की अपनी सुरक्षा बनाते में प्रोत्साहन मिले।
 पञ्चवर्षीय आयोजनाएँ तथा मजदूरी —

प्रथम पञ्चवर्षीय आयोजना में मजदूरी नीति की महत्ता पर समुचित रूप में
 ध्यान दिया गया था परन्तु आयोजना मुद्रा-स्थैरिणता बालाकारण में खली थी। इस कारण
 आयोजना प्रारम्भ के विचारानुसार मजदूरी में वृद्धि केवल प्रसाधारण रूप से कम
 उच्च जाने उद्योगों के अनिश्चित आर्थिक सहायता में भी क्योंकि उनका प्रभाव अत्यन्त
 न्यून और साधारण मूल्य स्तर पर बढ़ना। धन-साधन के विवरण पर एक सलसं
 के माद-माद मजदूरी पर रोक लगाने का भी प्रश्न किया गया। आयोजना में बहुत
 निर्धारित थी कि दरवाही एवं निम्नी उद्योगों में मजदूरी बमान रहनी चाहिये
 रिश्वतीय प्रारम्भ पर बने एकापी मजदूरी बोर्ड होने चाहिये, मजदूरी की प्रसमाकताएँ
 पूरे की जानी चाहिये और मजदूरी का तत्कालीनकरण होना चाहिये तथा न्यूनतम

मजदूरी विधान का प्रभावात्मक रूप से कार्यान्वित किया जाना चाहिए।

तथापि वास्तव में तो मजदूरी पर धीरे-धीरे ही सार्वभौम पर रोक बनायी गयी थी। अधिकांश सिफारिशें तो कर्मचारी वर्ग पर ही मिलीं रह गयीं। प्रथम द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस बात पर बल दिया गया कि मजदूरी सम्बन्धी ऐसी नीति बनायी जानी चाहिए जो गम स्तर की स्थापना करे जिसका उद्देश्य वास्तविक मजदूरी में वृद्धि करना हो। कमिश्नरों ने उचित मजदूरी पाने के अधिकार को सम्पन्न ही नहीं किया। किन्तु उगका व्यवहारिक रूप में साने के किसी स्थायी नियम को नहीं बनाया जा सका था। मजदूरी स्तर निर्धारित करने में एक बड़ी कठिनाई यह आयी है कि मजदूरी वृद्धि में सीमास्थ इकाइयाँ इकाइयों उत्पन्न कर देती हैं। यदि मजदूरी निश्चित करने का आधार प्रत्येक कर्म की घण्टा इकाई की प्राथमिक स्थिति को लिया जाये तो उचित मजदूरी को प्राप्त करने की घोर अधिक सीमाता से उभरती हो सकती है किन्तु सीमास्थ इकाइयों को उद्योग में बनाये रखने के लिए कुछ पग उठाने जान आवश्यक है। इस कार्य का करण की एक पद्धति यह है कि इन सीमास्थ इकाइयों को मिलाकर एक बड़ी इकाई में परिवर्तित कर दिया जाय। इस बात पर भी बल दिया गया था कि मजदूरी में सुधार मुख्यतः उत्पादकता में वृद्धि द्वारा ही हो सकती है और इसके लिए विभिन्न पग उठाने जाने चाहिए। जो भी काम हो उसमें कमिश्नरों को बराबर के भाग का प्रावधान दिया जाने चाहिए। समाज की समाजकारी व्यवस्था के ध्येय की पूर्ति के लिए एक सम्पूर्ण मजदूरी नीति का निर्माण करने के हेतु एक मजदूरी आयोग की नियुक्ति करने की भी सिफारिश की गई थी परन्तु इसके पूर्व मजदूरी के अधिकारों को बरतना करने का सुझाव था। इस बीच मजदूरी सम्बन्धी विचारों का निबटाने के लिए विद्वतीय मजदूरी बोर्ड स्थापित किए जाने चाहिए।

इन सिफारिशों को कार्यान्वित करने के लिए चीनी (दिसम्बर १९५७) एवं सोवियत (अप्रैल १९५६) उद्योगों में विद्वतीय मजदूरी बोर्डों का निर्माण किया गया। मूनी कर्मचारी उद्योग के लिए मजदूरी बोर्ड पहला ही स्थापित किया जा चुका था। (मार्च १९५७)। १९५५ में धर्मजीवी पत्रकारों के हेतु एक मजदूरी बोर्ड भी स्थापित किया गया था। इसके पश्चात् अन्य अनेक उद्योगों के लिए मजदूरी बोर्डों की स्थापना हो चुकी है। उदाहरणतः—रूढ़ उद्योग के लिए (अप्रैल १९६०) चाय बागान के लिए (दिसम्बर १९६०) बॉयली धीरे-धीरे रबर बागान के लिए (जुलाई १९६१) तथा लौहा तथा इस्पात उद्योग के लिए (जनवरी १९६२)। इन बोर्डों को उन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर मजदूरी निर्धारित करने को कहा गया है जिसका उद्देश्य उचित मजदूरी नीति की स्थापना में दिया गया है। मूनी कर्मचारी उद्योग सीमेन्ट उद्योग धीरे-धीरे चीनी उद्योग के मजदूरी बोर्डों की सिफारिशें धीरे-धीरे धर्म पर सरकार का नियुक्त प्रकाशित कर दिए गए हैं। पूर उद्योग के मजदूरी बोर्ड की प्रतिक्रिया निष्कर्षों का रूप उल्लेख किया जा चुका है। यह विद्वतीय मजदूरी बोर्ड मजदूरी निर्धारित करने के लिए

बायी सौजन्य हो गए है। अन्य उद्योगों के लिए भी एम बाइको की मांग की जा रही है। ऐसे मजदूरी बोर्डों के लिए कानून बनाने का बिचार भी किया जा रहा था किन्तु इनकी विचारियों को बौध्दिक समर्थन प्राप्त हो सके परन्तु स्थायी सम समिति इसके पक्ष में नहीं है और उमर अनुसार विभिन्न हथों को स्वयं ही मजदूरी बाइको के नियमों को लागू करना चाहिए। परन्तु मजदूरी बोर्डों की विचारियों को उद्योग की कई इकाइयों में लागू नहीं किया है। इस कारण सरकार मजदूरी बोर्डों की विचारियों को बौध्दिक मान्यता देने के लिए कानून बनाने के लिए पक्ष नहीं रही है।

बैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है १४ मुख्य उद्योगों में जो कार पाना, बाबात और लानों में सम्मिलित है एक मजदूरी कण्ठा (Wage Census) की गई है। इसका उद्देश्य व्यावसायिक मजदूरी के शिखरमतीय पारखे एकत्रित करना है। इस कण्ठा का क्षेत्रीय कार्य अप्रैल १९३६ में पूरा कर लिया गया था। इसके सम्मिलन ३७ कारखानों पार पानो और तीन बाबात में २६८० मजदूरों में जाय की गई। इन कारखानों में सम्मिलित किये गये पैसा का जा रही है।

इसके अनिश्चित मजदूरी से सम्मिलित एक 'स्टीयरिंग कमिटी' की भी स्थापना की गई है जिसमें केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों द्वारा नियुक्त व्यक्तियों तथा पब्लिक एवं प्रायिवटों के प्रतिनिधि हैं। यह कमिटी उपायम एवं मुख्य सम्मिलन प्रकृतियाँ का अध्ययन करेगा तथा यह कमिटी भारत में उद्योग और तीन के अनुसार एक मजदूरी का कण्ठा बनाने के लिए ऐम बाइको प्रस्तावित करेगा किन्तु मजदूरी निर्दिष्ट करने के लिए मुख्य सिद्धान्त बनाने जा सके और प्राविश्यागिया को मजदूरी निर्धारित करने में महत्त्वता प्राप्त सव। इस स्टीयरिंग कमिटी बहुत ही समर्थ हो चुकी है।

एक और महत्त्वपूर्ण कार्य यह है कि भारत सरकार द्वारा ६ मदद्यों के एक पारक प्रायोग की नियुक्ति की गई है। जा कि कर्मीय सरकारों के वेतन, बाइको एक नौकरी की दृष्टियों और अन्य हथों प्रकार के बिचारों में सम्मिलित है। इस प्रायोग में कुछ अंतरिम मुद्दों को घोरण्डा दिनांक १९३७ में की थी। कर्मीय वेतन प्रायोग की रिपोर्ट भी अप्रैल १९३६ में प्रस्तुत कर दी गई थी और सरकार ने इसकी विचारियों का स्वीकार कर लिया है। एक और महत्त्वपूर्ण कण्ठा माच १९३८ में यह हुई कि उद्योगम व्यावसाय के अध्ययनी पत्रकारों के लिए कानून बोर्डों के नियमों को इन बाबात पर परीक्षा कर दिया कि वे परकानूनो में। अगस्त में दून १९३८ में एक अध्याय निकाला गया। इस अध्याय में एक समिति के निर्माण की व्यवस्था को किन्तु मजदूरों के केन्द्रीय सरकार अध्ययनी पत्रकारों के लिए कानून की कण्ठा की निर्दिष्ट कर सके। यह अध्याय दिनांक १९३८ के एक अधिनियम द्वारा प्रति स्थापित कर दिया गया। एक समिति भी स्थापित कर दी गई है। इनके अन्तर्गत विचारियों की प्रस्तुत कर दी है किन्तु सरकार ने कुछ कमापनों के बाद स्वीकार कर लिया है।

यह भी उल्लेखनीय है कि पब्लिक संघों के हथ अधिनियमों की मजदूरी में २३

प्रतिष्ठित वृद्धि की माप की है जबकि मालिकों के संघों में मजदूरी कम करने की तथा मजदूरी को उत्पादकता से सम्बन्धित करने की मांग की है। 'मजदूरी दरों को बड़ करने (Wage Freeze) के विषय में भी कुछ घाबारा उठाई गई है परन्तु ऐसी बड़ता को व्यावहारिक रूप नहीं दिया जा सकता। विभिन्न प्रकार के नियंत्रणों को घपनाये बिना विशेषकर आवश्यक वस्तुओं के मूल्यों पर नियंत्रण किये बिना मजदूरी बड़ नहीं की जा सकती। यह घाबारा भी जाती है कि मजदूरी निर्दिष्ट करके समस्त मजदूरी बोर्ड उचित मजदूरी समिति की रिपोर्ट पर भी ध्यान देने और साब-साब एक एसी मजदूरी नीति का निर्माण करने को कि देश के साधनों का इष्टतम उपयोग करने तथा प्रादिक उपरि करने में सहायक होगी और समाज के समाजवादी व्यवस्था के ध्येय के अनुकूल होगी। कुछ मजदूरी बोर्डों ने इस सम्बन्ध में सराहनीय कार्य किए हैं।

तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में यह उल्लेख किया गया है कि कुछ उद्योगों और श्रमिकों में जहां श्रमिकों की प्रादिक स्थिति गिरी हुई है सरकार ने न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करके सुरक्षा प्रदान करन का उल्लेख किया है। परन्तु न्यूनतम मजदूरी अधिनियम कई स्थानों में प्रादिक प्रभावशाली नहीं सिद्ध हुआ है। इस अधिनियम को पहले में प्रादिक प्रणाली तरह लागू करने के लिए हमें निरीक्षण व्यवस्था को और प्रबल बनाना होगा। बड़े-बड़े उद्योगों में न्यूनतम मजदूरी का निर्धारण सामूहिक बोधकारी समझौता और विचारन द्वारा किया जाना चाहिए। जैसे-जैसे उद्योग हा, मजदूरी बोर्डों को घण्ट उद्योगों में भी स्थापित करना चाहिए। तृतीय आयोजना रिपोर्ट में इन धार भी संकेत किया गया है कि उचित मजदूरी समिति और भारतीय श्रम सम्मेलन में मजदूरी सम्बन्धी को मिडान्त व धारमें निर्धारित किये गए हैं उन्हें ध्यान में रखना चाहिए। न केवल न्यूनतम मजदूरी ही निर्धारित की जानी चाहिए बल्कि मजदूरी इनकी उचित होनी चाहिए कि इनके कार्यकुशलता को बढ़ाने और उत्पादन की मात्रा और गुण में उन्नति करने के लिये प्रोत्साहन लिये। इन धार भी संकेत किया गया है कि श्रमिका को मजदूरी और उच्च प्रवृत्तियों के बनने में बहुत प्रादिक प्रवृत्तता है। श्रम सम्बन्धी दावों और बोलन की प्रशयपी के लिए निर्देशक मिडान्त और धारमें निर्धारित करने की समस्याओं का अध्ययन करन के लिए एक धारों की निर्गुलित करन की निर्धारित है।

मजदूरी अन्तर (Wage Differentials) और मजदूरी का समानीकरण (Standardization) —

भारत में मजदूरी में ही सम्बन्धित एक घण्ट समस्या मजदूरी-अन्तर और मजदूरी का समानीकरण है। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि मजदूरी राज्य-राज्य में उद्योग उद्योग में और व्यवसाय-व्यवसाय में भिन्न है तथा वर्ग-वर्ग में बरसनी भी रहती है। मजदूरी स्तर का जाटोल विवेचन भी इन बात को स्पष्ट करता है। यह देना गया है कि मजदूरी दर घण्ट राज्यों की प्रवेसा देहनी महाराज्य विहार, उ प्र०

घौर परिषदी बंगाल में ऊँची है जबकि घमम घौर उड़ीसा में नीची है। निरन्तर काबू उद्योगों में घौमत बाषिक घाय महाराष्ट्र बिहार देहली उ० प्र० व घमम में धी ऊँची है जबकि मझम घौर उड़ीसा में घ्येसाकृत कम है। उद्योगों में धमिक पर धिये गये ध्यय को घ्यान में रखते हुए वह कहा जा सकता है कि घौमत मजदूरी बर्गों में भिन्नता होने के कारण धम साधन भी भिन्न हो जाते हैं। प्रति धमिक पर प्रतिदिन साधन महाराष्ट्र पश्चिमी बंगाल मझम उ० प्र० बिहार तथा माघे घालन में घमम ३ ६६ ६० ० ६६ ६० ० ०६६ ६० ० ६६ ६० ६ ७२ ६० तथा ३ १६ ६० अनुमान की गयी है। प्रत्येक राज्य के प्रत्येक उद्योग में मजदूरी दरों में अन्तर पाया जाता है परन्तु राष्ट्रीय अन्तर धमिक स्पष्ट है। कुछ धमिक बर्गों की स्थूलतम मूल मजदूरी दरें बेगने में आन होता है कि धम्य तब धेधो की घ्येसा जहाँ मूली उद्योग फँसे हुये हैं बम्बई की मूल, जिन्हीं में मजदूरी दरें धमिक हैं। उदाहरणार्थ एक घुनने बाने को बम्बई में ३ ६० प्रतिमास मिलने हैं मयुरा में ० ७ २० घौर बंगाल में ० ० रुपये मिलन है। घमाली तथा उजरन की दरों में धी अन्तर-अन्तर में अन्तर है जिमक कारण एही घौर घुणों की निबल (Net) घाय में धी अन्तर पाया जाता है। कुमम अन्त-कुमम तथा अदुमम धमिकों की मजदूरियों में धी भिन्नता पाई जाती है घौर इनकी मजदूरी में अन्तर धम्य देगों की घ्येसा भारत में धमिक है।

अहंगाई मला भी स्वातन्त्र्यपर पर भिन्न है क्योंकि उमको बेने का घाघार भी घनय-घनम स्वात पर निघ्न-निघ्न होता है। कुछ स्वातों में तो अहंगाई मला निर्वात बर्ष में मन्व-घन है तथा इमकी दर बिभिन्न धमिक बर्गों के लिये घुण-घुणक है। कुछ घालनों में अहंगाई मला मघान है जबकि धम्य स्वातों में अहंगाई मला घाय के समानुपात में घटना-बढ़ता है। यह बन्धी-बन्धी धमिकों के लक्षों द्वारा भी निर्धारित किया जाता है घौर कैचम उर्री उद्योगों में लागू होता है जिमक साधिक रूप के घनम है। यह समय-समय पर घौघोगिक धमिकरणों के संघाटों द्वारा भी निर्धारित किया गया है। इन सब परिस्थितियों का सम्मिलित प्रभाव यह हुआ है कि मजदूरी में बिभिन्न धेधों में बहुत धमिक घनमानता पा गई है।

धमिकों की घौमत बाषिक घाय धी राज्य-राज्य में घुणक-घुणक है। कुछ उद्योग में मूल-मजदूरी दर परिषदी बंगाल में मर्वाषित है जब कि उत्तर प्रदेश की कुछ धमिकों के धमिकों की घौमत घाय बेनम मिलने के कारण धमिक है। बिहार एवं मझम की कुछ धमिकों के धमिकों की घाय कम है। पश्चिमी बंगाल के घन-धेधो के बन्वरी १६६० में दिग माघ बन्वध के अनुसार घाय के बालन में धमिक की १-६४ लये धेधे निर्धारित मिलन है। कुछ उद्योग में ६७ १० रुपये प्रति माघ मजदूरी है। ईजिप्टिया उद्योग में ७१ रुपये प्रति माघ मजदूरी है परन्तु बम्बई की बन्वरी धमिकों में अहंगाई बर्गों के धमिकों की धमिक को १०२ रुपये प्रति माघ मिलने है। धम्य उद्योगों में धी मजदूरी दरों की घनमानता एही प्रकार अन्वित है। धमिकों में

मजदूरी दरों में इतनी अधिक प्रमत्तता नहीं है जितनी कि फौजारी की मजदूरी दरों में है किन्तु भी विभिन्न गणों और विभिन्न क्षेत्रों में मूल मजदूरी तथा अधिक मात्र में घटता है। बाजार में भी मजदूरी में काफी अन्तर पाया जाता है। यह भी देखा गया है कि महापुत्र के परवान् घौसत मजदूरी म बायी बड़ोतरी हुई है किन्तु यह बड़ोतरी भी ममान रूप में नहीं हुई है।

मजदूरी के समानीकरण की आवश्यकता—

मजदूरी दरों में अन्तर किमी वैज्ञानिक मिथ्या पर आधारित नहीं है। प्रत्येक फौजारी में अपना अलग-अलग कार्य-विभाजन विभिन्न रूपों में किया है तथा प्रत्येक रूप की अपनी विशेष व्यवस्था बना भी गई है। विभिन्न उद्योगों में उत्पादन शुद्ध विभिन्न कार्य प्रणालियाँ अपनाई जाती हैं और विभिन्न प्रकार की मशीनों कार्य में लाई जाती हैं। इस प्रकार बहुत सा समय बच तथा धर्म व्यर्थ जाता है क्योंकि अधिकतर श्रमिका के साथ अधिकतर प्रथम कार्य के लिए पुरुष-पुरुष आधार पर व्यवहार करना पड़ता है। उद्योग-उद्योग में एक उद्योग की फौजारी-फौजारी में तथा स्थान-स्थान में मजदूरी दरों के वैज्ञानिक अन्तर के कारण श्रमिकों का एक फौजारी म दूसरी फौजारी में प्रथम होता रहता है। कमी-कमी मजदूरी के मह अन्तर औद्योगिक प्रमत्तोप और विचार के कारण बन जाते हैं। अधिकतर श्रमिक उत्तम मजदूरी देने वाले उद्योगों की ओर आकर्षित होते हैं तथा कम मजदूरी देने वाले उद्योगों में श्रमिक मजदूरी में कृषि की मांग करते हैं। यदि यह मांग पूर्ण नहीं की जाती है तो इतना धारि वा अचानक लिया जाता है, जिसके फलस्वरूप उद्योग धारि भंग हो जाती है जिसका परिणाम यह होता है कि उत्पादन तथा लाभ में कमी हो जाती है। इस प्रकार यदि मजदूरी की विभिन्न दरें प्रचलित होती हैं तो अनेक कारण प्रत्येक फौजारी एवं उद्योग में न केवल अधिक समय धर्म एवं कष्टकारी लगाने पड़ते हैं बल्कि विभिन्न दरें श्रमिकों में प्रमत्तोप तथा श्रमिकों एवं मास्त्रिकों में विचार वा कारण बन जाती है क्योंकि या ही श्रमिकों का अर्थार्ण एवं पगुल मजदूरी की जाती है अथवा श्रमिक विभिन्न दरों के कारण उत्तम कठिना को समझ नहीं पाते।

अतः श्रमिकों एवं मास्त्रिकों दोनों की ही ओर से मजदूरी के समानीकरण की बहुत मांग की गई है। समानीकरण का अर्थ हीर पर धर्म उद्योग में समान कार्य धर्म के लिए मजदूरी के एक समान स्तर को निर्धारित करना है। इसका अर्थ यह नहीं है कि सब श्रमिकों को एक समान मजदूरी दी जाय। समान स्तर की मजदूरी का अर्थ अधिकतर मजदूरी निर्दिष्ट करना भी नहीं है बल्कि एक ही उचित एवं उचित पगुल मजदूरी निर्दिष्ट करना है जो व्यवहार में एक समान हो। समान स्तर की मजदूरी अथवा तथा अन्तर के अनुसार भी हो सकती है। समानी दर की मजदूरी वा समानीकरण निर्दिष्ट करना अब मरत प्रतीय होता है जब धनुषत, सर्वदुषत दुषत एवं बहूत दुषत श्रमिकों की अनुमत्त मजदूरी निर्दिष्ट हो और वह मजदूरी उद्योग के विभिन्न व्यवस्थाओं में समानीकरण दुषतता के अनुसार तथा श्रमिक के अनुभव के अनुसार दी

पानी हो। उज्जल (कार्पातुसार मजदूरी)के समानीकरण में हम प्रकार की कोई कठिनाई नहीं होनी क्योंकि एक अनेकानुसंध अधिक उद्यम शक्ति मजदूरी के कारण अधिक मजदूरी पाया है किन्तु इस उज्जल मजदूरी देने से सम्बन्धित मजदूरी अधिक तर तकनीकी है। कार्य के प्रकार पद्धति तथा उत्पादक बस्तुओं में अनेक विभिन्नताएँ होती हैं। अतः उन विभागों में जहाँ उज्जल मजदूरी दी जा रही हो समानीकरण योजना का कार्य बन देने में काफी तकनीकी ज्ञान होना आवश्यक है। फिर भी विभिन्न शक्तियों में अंतरों को समन्वित करने औद्योगिक विभागों को कम करने तथा शक्तियों एवं शक्तियों दोनों को ही कार्यकुशलता को बढ़ाने में मजदूरी का समानीकरण बहुत अधिक उपयोगी सिद्ध होगा।

मजदूरी समानीकरण का प्रथम विशेषकर बम्बई के मुंबी मिल उद्योग में बहुत समय से विचार विमर्श का विषय रहा है। १९२२ की बम्बई औद्योगिक विचार समिति द्वारा भी इस पर विचार किया गया था और १९२७ में बपसा टैरिफ बोर्ड ने इस पर पुनः विचार किया था। सन् १९२८ में एक योजना भी बनाई गई परन्तु उस कार्यक्रम में देखा जा सका। हम प्रथम में संघर्ष कम आयोग का आगम भी अपनी धोरण धारणित किया था। उसके अन्तर्गत "जहाँ तक कुछ विषय प्रमुख उद्योगों में कार्यरत शक्तियों का सम्बन्ध है यहाँ मुख्य आवश्यकता एक संघर्ष कार्य करने का अधिक शक्तियों के लिए मजदूरी के एक समान स्तर की है। हम इन बातों से सम्बन्धित है कि कुछ उद्योगों में उनकी आर्थिक स्थिति को विषय हासिल पड़नासे बिना समान स्तर के मजदूरी दी जा सकती है। साथ ही साथ कम मजदूरी देने का अधिक शक्तियों को एक प्रकार से मजदूरी स्तर भी प्रदान किया जा सकता है।" अतः अनुसंधान समिति ने भी भारतीय उद्योगों में अर्थगतिक मजदूरी स्तरों का अन्वेषण किया था और अनुसंधान विभाग का कि विभिन्न उद्योगों तथा उद्योग के समान शक्तियों की इकाइयों में अन्वेषणों के माध्यम से मजदूरी के समानीकरण की समस्या अन्वेषणपूर्वक अनुसंधान करना चाहिए।

मुंबी मिल उद्योग आदि में मजदूरी का समानीकरण—

कैमल मुंबी मिल उद्योगों में मजदूरी के समानीकरण में कुछ प्रवृत्ति हुई है। बम्बई औद्योगिक न्यायालय के संघर्ष ने बम्बई तथा उनके अन्तर्गत के मुंबी मिल उद्योगों के विषय में १९४७ में एक अन्वेषण योजना बनाने की आवश्यकता की भी विचार निरीक्षण इसी कार्य हेतु अन्वेषण एक समानीकरण समिति द्वारा किया गया था। बम्बई औद्योगिक न्यायालय द्वारा विभिन्न शक्तियों के लिए मजदूरी की समानीकरण दरें अहमदाबाद एवं कोलकाता की शक्ति शक्तियों के लिए निर्दिष्ट की गई हैं। सन् १९४९ के औद्योगिक सम्बन्धी अधिनियम के अन्तर्गत अनेक बपसा एक स्तर की शक्तियों में मजदूरी निर्दिष्ट करने के लिए मजदूरी बोर्ड बना दिया गया है। अन्तः संघर्ष के राज्य की अन्वेषण शक्ति शक्तियों के लिए समानीकरण दरें बनाने के हेतु एक मजदूरी बोर्ड तथा समानीकरण समिति नियुक्त करने का सुझाव दिया था।

उसके द्वारा सुझाई गई योजना को कार्यान्वित कर दिया गया है। बंगाल के औद्योगिक न्यायालय के पंचाट ने विभिन्न व्यवसायों में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर दी थी किन्तु कुछ व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण समानीकरण योजना नहीं बनाई जा सकी। इन्हीं में विभिन्न धमिक वर्गों के लिए मजदूरी दरों का समानीकरण कर दिया गया है। मध्य प्रदेश की सूती काड़ा मिलों में भी औद्योगिक अधिकारण तथा समानीकरण समिति के सुझावों के आधार पर मजदूरी तथा कार्य-वार का समानीकरण कर दिया गया है। जैसा ऊपर उल्लेख किया जा चुका है द्वितीय पंचवर्षीय धाबोजना की सिफारिशों पर सूती कपड़ा सीमेंट चीनी बालान तथा लोह्य व इस्पात उद्योगों के लिए धीरे धीरे पत्रकारों के लिए मजदूरी बोर्डों की स्थापना की गई है। इनका कार्य उचित मजदूरी के सिद्धान्तों पर आधारित मजदूरी कांचा बनाना तथा उद्योग एवं सामाजिक न्याय की ध्यान में रखकर मजदूरी के घन्टों को इस प्रकार दूर करना जिससे कि धमिकों का अपनी कुशलता में वृद्धि करने का प्रोत्साहन मिले तथा पत्र के अनुसार मजदूरी देने की प्रणाली की बाधनीयता के घन्ट पर सिफारिश करना है। ऐसे मजदूरी बोर्ड क्षेत्रीय मजदूरी घन्टों में ध्यानहीन कर सकते हैं धीरे धीरे तक सम्भव हो सके घन्टधर्मिय समानता माने के लिए आवश्यक पत्र उद्योग सकते हैं। एक सुझाव यह भी हो सकता है कि विभिन्न उद्योगों के विभिन्न मजदूरी बोर्डों के कार्यों का समन्वय करने के लिए एक अखिल भारतीय वेतन बोर्ड होना चाहिए जो कि विभिन्न बोर्डों के नियमों का समन्वय कर सके तथा मजदूरी के समानीकरण में सहायता दे सके।

१९४६-४८ की ३० प्र० यम पांच समिति ने भी मजदूरी दरों के समानीकरण की एक योजना बनाई थी जिसकी केवल तीन उद्योगों धर्मि'भूटी चीनी एवं दिवनी में लागू करने की सिफारिश की थी। १९६० में चीनी उद्योग में मजदूरी समानीकरण के लिए भी एक समिति नियुक्त की गई थी परन्तु इस विषय में यह तक कोई विषय प्रगति नहीं हुई है। इस समय सरकार में मजदूरी समानीकरण का उत्साह प्रतीत होता है। यह इस बात से प्रकट है कि भारतीय उद्योगों में न्यूनतम एवं उचित मजदूरी तथा मजदूरी बोर्डों की स्थापित करने के लिए सरकार ने कुछ कानूनी एवं प्रशासनीय पत्र बढ़ाए हैं।

समान बाय के लिए समान मजदूरी — (Equal Pay for Equal Work)

यह भी उल्लेखनीय है कि "समान कार्य के लिए समान मजदूरी का सिद्धान्त घन्टे विशेषी सिद्धान्त "समान कार्य के लिए समान मजदूरी" के साथ-साथ मजदूरी की एक महत्वपूर्ण सजाया है। फिर भी "समान कार्य के लिए समान मजदूरी" का धर्म एक जैसे कार्य के लिए बराबर मजदूरी देना है और इनका धर्म यह नहीं है कि लकी प्रकार के धमिकों को एकही ही मजदूरी दी जाए। यह भी नहीं सोचना चाहिए कि इसका यह धर्म है कि एकमे उदाहरण के लिए या एकमे उदाहरण एवं परिषद के लिए समान मजदूरी दी जाए क्योंकि दोनों वर्गों में उदाहरण के

स्तर या प्रयत्नों एवं परिश्रम की मात्रा को मापना बठिक है और इसलिए उस सिद्धान्त पर मजदूरी निश्चित करने में बहुत ध्यान बढिनाई होगी। जो सचता है कि बहुत से व्यक्ति एक सा कार्य करते हैं अर्थात् उनके कार्य की दशा, मात्र कष्टता मात्र धारि एक से हैं तथा उत्पादित वस्तुएँ भी समान हैं फिर भी उनकी कार्य बुद्धिमत्ता एवं अनुभव में काफी अंतर हो सकता है। अतः उनके उत्पादन की मात्रा एक गुण में भी अंतर हो सकता है। इसलिए विभिन्न रोजगारों में विभिन्न स्थानों पर अर्थात् ही विभिन्न मजदूरी रहेगी और समानताकरण का अर्थ यह नहीं है कि सब स्थानों पर मजदूरी को समान कर दिया जाए। इसका अर्थ तो केवल यह हो सकता है कि वैज्ञानिक आधार पर मजदूरी निश्चित करने का समान स्तर मानू कर दिया जाए और मजदूरी में जो असमानता है उसे हम प्रचार कम कर दिया जाए कि उत्पादनका और बुद्धिमत्ता बढ़ाने में जो प्रोत्साहन मिलता है वह बना रहे। मजदूरी विभिन्न रोजगारों व्यवसायों और स्थानों में समय-समय होती है। इसके अनेक कारण होते हैं जैसे किसी रोजगार के कार्य में रुचि या अरुचि होना बीमारी का स्थायी और अस्थायी होना पदोन्नति की सम्भावना उत्तम वेतन-भरण, घर का सम्मान अतिरिक्त धन के साधनों की सम्भावना बच-बचाव, अतिरिक्त सुविधाएँ जैसे बिना किछप के आवास आदि रोजगार सीधे में बढिनाई उत्पादि। इन सब कारणों से ही कुछ रोजगारों में मजदूरी कम है और कुछ में अधिक। इसके अतिरिक्त मूल्यों में अंतर, विभिन्न स्थानों के निर्वाह खर्च में अंतर तथा उद्योग की दशाओं में अंतर आदि भी मजदूरी में अंतर उत्पन्न कर देते हैं। अतः कि प्रत्येक संवर्धनीय आयोगना में उल्लेख किया गया है, मजदूरी में विभिन्नता निम्नलिखित कारणों से होती है (i) बुद्धिमत्ता धमियों को धारणरूपता के अनुसार (ii) कार्य में धार तथा प्रयत्न के अनुसार (iii) प्रगतिशील और अनुभव के अनुसार (iv) उत्तर उत्पन्न की सीमा के अनुसार (v) कार्य के लिए उचित वास्तविक तथा धारीरिक धारणरूपताओं के अनुसार (vi) कार्य की अरुचि के अनुसार (vii) कार्य में निहित बीमारी के अनुसार। इन अनेक कारणों को संवर्धनीय आयोगनाओं में आवाधिक बहूतों की शक्ति के अनुसार मानक (Standard) मजदूरी निश्चित करने समय ध्यान में लेना चाहिये।

पुरुषों एवं स्त्रियों की मजदूरी —

अरुचि में ही समान कार्य के लिए स्त्री धमियों को पुरुष धमियों की अपेक्षा कम मजदूरी देने की प्रवृत्ति रही है। स्त्रियों प्रवृत्ति में ही पुरुषों के अन्तर्गत धारीरिक कार्य में बुद्धिमत्ता नहीं होती तथा वे अधिक समय तक कार्य नहीं कर सकती। स्त्रियों धरिभार की धार में बढि करने के लिए ही कार्य करनी है और उन पर पुरुषों के अन्तर्गत कोई उत्तरदायित्व भी नहीं होता। स्त्रियाँ करने कार्य को अत्यन्त-बलि नहीं समझती और धार ही धरिबालि स्त्रियाँ विनाह के धारण कार्य छोड़ देती हैं। स्त्री धारण धमियों अरुचि को धरिबालि अर्थ में अत्यन्त नहीं कर जानी तथा अनुभव प्रयत्नों द्वारा

अंधी मजदूरी प्राप्त नहीं कर पाती। मासिक को इसके लिए घनेक प्रकार के हित देने पड़ते हैं तथा बहुत सी सुविधाएँ उपलब्ध करनी पड़ती हैं और मासिक पुरुष श्रमिकों के समान उनके साथ व्यवहार नहीं कर सकते। उन कार्यों में जिनमें स्त्रियाँ कार्य कर सकती हैं, स्त्रियों की वृत्ति भी अधिक होती है अतः उनको मजदूरी भी कम मिलती है।

आधुनिक प्रगति और स्त्रियों की धार्मिक शिक्षा के साथ-साथ स्त्री एवं पुरुषों के लिए समान मजदूरी की मांग बढ़ रही है क्योंकि स्त्रियाँ अपने को पुरुषों से हीन नहीं समझतीं। भारतीय संविधान का एक नीति-निर्देशक सिद्धान्त यह भी है कि "स्त्री एवं पुरुषों को समान कार्य के लिए समान मजदूरी दी जाए"। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघटन ने भी इस विषय पर एक अधिसूचना पारित किया है जिसको भारत ने भी अपना लिया है। परन्तु हमारा यह विचार है कि व्यावहारिक रूप से यह सिद्धान्त उचित नहीं है। अगर दिए गए कारणों के परिणामस्वरूप मासिक को सदा स्त्रियों को काम में भयाने में हानि होती है अतः स्वाभाविक ही है कि वह उनको कम मजदूरी देता है। निस्संदेह सामाजिक जीवन में स्त्री एवं पुरुष दोनों से समान स्तर पर ही व्यवहार व्यवस्था किया जाना चाहिए, परन्तु हम सिद्धान्त को औद्योगिक मजदूरी पर लागू करने का अर्थ केवल स्त्रियों के रोजगार में कमी करना होगा। अब से स्त्री एवं पुरुषों को समान मजदूरी देने का सिद्धान्त लागू किया गया है तथा वे वास्तव में स्त्रियों के रोजगार में कमी हो गई है। अनेक उद्योगों में स्त्री श्रमिकों को पुरुष श्रमिकों द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया है और जब पुरुष श्रमिकों की वृत्ति अधिक होने के कारण स्त्रियों की भर्ती बन्द हो गई है। अतः यह देखा गया है कि न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अन्तर्गत भी अनेक उद्योगों में स्त्रियों एवं पुरुषों के लिए भिन्न-भिन्न मजदूरी की दरें निर्दिष्ट की गई हैं। सरकार ने भी अब इस बात का अनुभव कर लिया है कि ऐसे उद्योगों में जिनमें महिला धार्मिक कम कार्यबुधन हैं यदि पुरुष व स्त्रियों के लिए समान मजदूरी निर्धारित की जायेगी तो इसका परिणाम यह होगा कि स्त्रियों की रोजगार मिलना धीरे-धीरे समाप्त हो जायगा।

मजदूरी और निर्बाह दर (Wages and Cost of Living)—

संशोधन में यह उल्लेख किया जा सकता है कि मजदूरी की समस्या पर विचार करते समय निर्बाह दर का भी ध्यान रतना चाहिए, क्योंकि धार्मिक की धार्मिक स्थिति का अनुमान भयाने के लिए हमें जगदी नकर मजदूरी की अनेक अलग मजदूरी की देना चाहिए; इस ही के अर्थ में मजदूरी में वृद्धि हुई है अतः श्रमिकों की धार्मिक स्थिति में कोई सुधार नहीं दिखाई देता जिसका कारण श्रमियों में प्रति वृद्धि तथा मास ही निर्बाह दर की वृद्धि है। जाने की हुई तासिका से यह बात स्पष्ट हो जायेगी। १० (पृष्ठ ४५२ २० भी देखें)

वर्ष	घाव के समान मूषकांक	घसित भारतीय उपमोक्ष मूषकांक	घसित घाव के मूषकांक
	(साधारण वर्ष १९१६ = १००)		
१९१६	१०००	१००	१०००
१९१७	१०११	६७	१०८६
१९१८	२०१२	२६६	७४६
१९१९	२२१२	३२१	७८४
१९२०	३०४०	३६०	८४४
१९२१	३४०१	३७१	९१७
१९२२	३३४२	३७१	९०१
१९२३	३३६८	३८७	९२७
१९२४	३८२७	३७६	१०१८
१९२५	३८४६	३८४	९९९
१९२६	३८१७	३७१	१०२७
	साधारण वर्ष १९२७ = १००		
१९२७	१२२	१२२	१२२
१९२८	१२२	११६	१११
१९२९	१२६	१६०	१४२
१९३०	१६१	१२६	१३२
१९३१	१७०	१२८	१३४
१९३२	१६८	१३४	१२९

मजदूरी बहायगी का तरीका (Manner of Payment of Wages) :—

जब हम मजदूरी की दूरी समस्या पर मजदूरी बहायगी की रीति और स्वरूप तथा मजदूरी में से की जाने वाली कमीशनों का विचार करते हैं, मजदूरी का प्रकार तथा मजदूरी में से तथा उन श्रमिकों को, जो उन्हें पत्रित करते हैं, प्रत्यक्ष का से ही जाती है तथा बहायगी का उत्तरदायित्व श्रमिकों या उनके उत्तरदायी अधिकारियों पर होता है। एक ही विधि-विधियों में मजदूरी सुधार का साधारण विधि-विधियों होता है। साधारणतया मजदूरी बहायगी में मजदूरी सुधार का समय एक मास होता है परन्तु अहमदाबाद में यह समय 'मास' होता है जो १५ से १६ दिनों का होता है। परिषदी बंधन में मजदूरी बहायगी एक मास होता है परन्तु जब यह साधारणतया एक मास का कर दिया गया है। ऊनी बहायगी में श्रमिकों के स्वार्थों में मजदूरी मासिक ही जाती है परन्तु बंगाल की श्रमिकों तथा मजदूरों को एक मास में श्रमिकों को मजदूरी मासिक ही जाती है। श्रमिकों के श्रमिकों में मजदूरी साधारणतया प्रति सप्ताह ही जाती है। श्रमिकों की श्रमिकों में श्रमिकों को मजदूरी दैनिक साधारण पर मिलती है। अथवा काल-काल में मजदूरी साधारणतया जमा कर कर मजदूरी जाती है परन्तु अहमदाबाद में श्रमिकों को श्रमिकों की मजदूरी बहायगी पर देने वाले हैं। अथवा भारत के बंधन में मजदूरी

समय साधारणतया एक सप्ताह है। ब्रिटेन भारत में १९१६ के मजदूरी घरायशी अधिनियम के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रों में मजदूरी समय साधारणतया एक माह है परन्तु अन्य क्षेत्रों में व्यक्तिगत शक्ति की हुई मजदूरी के आधार पर प्रति सप्ताह अर्ध-राशि से लेते हैं तथा एकत्रित सेवक को 'हिस्सा बंटाना' साफ करने के समय या उस अधिनियम अन्तर्गत की संस्थापित पर से लेते हैं जिसके लिए वह कार्य कर लगाये जाते हैं। कैरल के कुछ भागों में मजदूरी साप्ताहिक ही जाती है। मद्रास और कुर्ण के अधिकांश जहाँ मजदूरी घरायशी अधिनियम लागू है, अधिकतर बालान उद्योग में मजदूरी घरायशी की अधिनियम-रीति-रिवाजों द्वारा निर्धारित होती है। अधिकतर कारखानों में घमांगी दरें हैं परन्तु उच्चतर कार्य भी बहुत से कारखानों में पाया जाता है, विशेषतया सूती उद्योग के कानवे और बुनने से सम्बन्धित विभागों में। तमिल कारखानों में लगभग १५१% श्रमिकों को साप्ताहिक आधार पर, ३७% को वार्षिक आधार पर और ८१२% को मासिक आधार पर मजदूरी दी जाती है।

भारत में मजदूरी निर्धारण के आधार में कोई भी सामान्य रीति लागू नहीं की जाती है तथा उद्योग क्षेत्र व कार्य की प्रकृति के अनुसार मजदूरी पृथक-पृथक है। मजदूरी भुगतान की रीति का प्रश्न भारत में विशेष महत्त्व का है क्योंकि यहाँ अग्रतम घरायशी (इसमें जिस प्रणाली प्रकृति भी सम्मिलित है जिसका धर्म श्रमिक को बस्तुओं के रूप में मजदूरी का भुगतान करना है) मजदूरी भुगतान में हैरी अनुचित-युक्ति और मजदूरियों में से कटौती घाति बँधी जाते बहुत नाभारण रही है तथा अब तक कुछ सीमा तक प्रचलित है, यद्यपि १९१६ के मजदूरी घरायशी अधिनियम के पारित हो जाने से स्थिति में बहुत कुछ सुधार हुआ है।

१९३६ का मजदूरी घरायशी अधिनियम —

(Payment of Wages Act 1936)

सन् १९१६ से पूर्व १९६० के मासिक तथा वार्षिक विवाद अधिनियम के अधिकांश श्रमिकों की मजदूरी घरायशी को नियन्त्रित करने वाला अन्य कोई कानून नहीं था। सन् १९२५ में एक नई-सरकारी संस्था द्वारा इस विषय पर एक कमेटी प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया था परन्तु सरकार के इस धारणापर पर कि वह स्वयं दस और काम चलाएँ इसको वापिस ले लिया गया था। संयुक्त श्रम घासों के मुजराओं के परिणामस्वरूप जिसने मजदूरी घरायशी की प्रणाली के दोषों पर काफी प्रकाश डाला था, सरकार ने १९१३ में एक विधेयक प्रस्तुत किया जो कि १९१६ में "मजदूरी भुगतान अधिनियम" के नाम से पारित हुआ। यह अधिनियम मार्च १९३० के लागू हुआ। इसमें १९३७ तथा १९२७ में संशोधन भी किए गए। अनेक राष्ट्रीय सरकारी ने भी अपने-अपने प्रदेशों में अधिनियम लागू करने के लिए इसमें संशोधन किए हैं। जम्मू और काश्मीर राज्य को छोड़कर वह अधिनियम लगभग भारत में लागू होना है।

अधिनियम के मुख्य उपबन्ध —

यह अधिनियम प्रत्येक कारखाने और प्रत्येक रेलवे के उन धर्मियों पर लागू होता है जो कि ४००) ६० प्रतिमाह से कम मजदूरी और बतन प्राप्त करते हैं। पहले यह सीमा २००) ६० की परन्तु १९२७ से यह सीमा बढ़ाकर ४००) ६० कर दी गई है। अधिनियम को १९४८ में कोयले की धारों पर तथा १९२१ में तमाम धारों पर और १९२७ में निर्माण उद्योग पर लागू कर दिया गया। उपर्युक्त सरकारों अधिनियम के उपबन्धों को इससे अन्तर्गत की गई व्याख्या के अनुसार किसी भी औद्योगिक संस्थान में लागू कर सकती है। अधिनियम में दी गई व्याख्या के अनुसार मजदूरी उस तमाम मेहनताने को कहते हैं जिसे द्रव्य के रूप में प्रदर्शित किया जा सकता हो तथा जो रोजगार में लागे हुए धर्मियों को दिया जाता हो। इसमें बोनस व अन्य सभी प्रकार का पारिवारिक भी सम्मिलित होता है परन्तु इसमें आवाज की बुनियाद, रोस्तकी वाली व चिकित्सा भाग या यात्रा भत्ता घरकाजोखण्डन धन पेंशन, प्रोविडेंट फण्ड अंतर्गत धारि नौसी जीवन की अन्य सुविधाओं का समावेश नहीं होता है। १९२७ में किए गए संशोधन के अनुसार मजदूरी में वह सब मेहनताना भी सम्मिलित कर लिया गया है जो किसी पंचाट, समझौते अथवा न्यायालय के आदेशों के परिणामस्वरूप दिया जाता है। अधिनियम के अन्तर्गत यह धारण्यक है कि मजदूरी की अवधि निरिक्त कर दी जाए परन्तु यह अवधि एक माह से अधिक न हो। उन संस्थाओं में जो १००० से कम व्यक्तियों को रोजगार देते हैं मजदूरी अन्तर्गामी मजदूरी अवधि के समाप्त होने के ७ दिन के अन्दर ही हो जानी चाहिए तथा अन्य संस्थाओं में अवधि समाप्त के दस दिन के भीतर भीतर मजदूरी दे देनी चाहिए। हटाए गए धर्मिक को दूसरे दिन के समाप्त होने से पहले अर्थात् जिस दिन से उस धर्मिक का रोजगार समाप्त हुआ है उसके दूसरे दिन उसको मजदूरी का भुगतान कर दिया जाना चाहिए। मजदूरी की सब प्रकार की अन्तर्गामी अवधि नानुनी धार्य मुद्रा (Current Legal Tender) में तथा कार्य के दिन ही होनी चाहिए। १९२७ में किए गए संशोधन द्वारा धर्मियों को यह अधिकार है कि वह "हार्जि" हटाने की स्थिति में मजदूरी को रोक सकते हैं।

मजदूरी में से कटौतियाँ — (Deductions from the Wages)

अधिनियम के अन्तर्गत मजदूरी में से केवल कुछ निम्नलिखित प्रकार की कटौतियाँ की जा सकती हैं। उदाहरणार्थ (क) पुर्पति (ग) कार्य से अनुत्थिति पर कटौती (घ) हानि या क्षति के कारण कटौती, (ङ) धार्मिक द्वारा प्रदान की गई आवास सुविधाओं और सेवाओं के लिए कटौती (च) अधिम रजि को अन्तर्गामी के लिए या मजदूरी की अवधि अन्तर्गामी को छोड़ करके के लिए कटौती, (ज) धार्य कर के लिए या प्रोविडेंट फण्ड में अंतर्गत के लिए और उसमें से ली गई अधिम रजि को वृत्त करने के लिए या कृषाधी अवधि को अन्तर्गामी के लिए या राष्ट्र-सीमा के अन्तर्गत में बीम की किराओं के लिए कटौति (झ) १९२७ में किए गए संशोधन के अन्तर्गत

बीमा किरतों और मकान के किराए के लिए, यदि कर्मचारी टाउ लिखकर दे दिया जाए, या सरकार की प्रतिभूतियों (Securities) के लिए। अन्दा या रोजगार निबन्धों के अन्तर्गत लगाए गए जुर्मानों के कारण भी हुई कटौतियाँ अधिकृत (Authorized) मानी गई हैं।

इन कटौतियों के विरुद्ध कुछ रसात्मक उपायों की भी व्यवस्था की गई है। पुनर्निवेश (क) विधेय कार्यों तथा मुक्तों के लिए किए जा सकते हैं जो कि किसी अधिकृत सत्ता (Competent Authority) द्वारा सूचना पत्र में अनुमोदित कर दिए गए हों (ख) पुनर्निवेश की कुल राशि किसी भी मजदूरी काल में प्राप्त होने वाली मजदूरी से ३ भएँ वैसे प्रति रुपए से अधिक नहीं हो सकती। सब पुनर्निवेश विधेय विस्तार में दर्ज होने चाहिए तथा एक जुर्माना विधि में समा किए जाने चाहिए। इन पुनर्निवेश विधियों द्वारा प्राप्त धन अधिकों के ऐसे लाभ के लिए व्यव की जा सकती है जो अधिकृत सत्ता द्वारा अनुमोदित कर दिए गए हों। काय से अनुव्यवस्था के लिए कटौती इस राशि से अधिक नहीं होनी चाहिए जो राशि अधिक को मजदूरी के रूप में यदि वह अनुव्यवस्था न होता मिलती। इति या अति के लिए कटौती केवल तब ही की जा सकती है जबकि वह अधिक की मापराबाही के कारण हुई हो तथा इस प्रकार की कटौती की राशि अधिक को हुई इति या अति की मात्रा से अधिक नहीं होनी चाहिए। इन सब बातों का अन्तर्गत एक विस्तार में किया जाना चाहिए। धारा ३ तथा अन्य मुविधियों के लिए भी कटौती इन सेवाओं के मुख्य से अधिक नहीं बढ़नी चाहिए और यह तब ही की जा सकती है जबकि अधिक ने इस प्रकार की मुविधा या सेवाओं को स्वीकार कर लिया हो।

अधिनियम का प्रशासन और विस्तार —

केन्द्रीय सरकार की एक विधेय द्वारा अधिनियम का राज १५ जनवरी १९४८ में सब राज्यों के अधिकारों के लिए जो कोयले की खानों में काम करते हैं तथा १९४९ के अन्य खानों तक विस्तृत कर दिया गया है। महात्त कुर्म प्रत्य, मैसूर और पंजाब में सामान उद्योग पर कुछ राज्यों में किराये की मोटरों और ट्राम्पे सेवा पर बिहार में अन्तर्देशीय जल यातायात पर, बम्बई में गोरी कर्मचारियों तथा कुकान व बालिभ्य संस्थानों पर उत्तर प्रदेश में छापाखानों पर व अन्य प्रदेश में अधिनियमित कारखानों प्रादि तक भी इसको विस्तृत कर दिया गया है। अधिनियम का प्रशासन का उत्तरदायित्व राज्य सरकारों पर है और इसका भार कारखाना निरीक्षकों को भी दिया जाता है। कोयले की खानों तथा रेलवे के सम्बन्ध में प्रशासन भार मुख्य रूप धारण कर होता है। राज्य सरकारों के राज्यों को मुक्त तथा पंजाब देने के लिए, जो कि मजदूरी में कटौती तथा मजदूरी परामर्षी में देरी के कारण पैदा होने हैं प्राधिकारियों की नियुक्ति की है। कश्मिरी अन्तर्गत में कोयले की खानों के लिए भारत सरकार ने प्राधिकार प्राधिकारियों की नियुक्ति की है। १९४० में किए गए अधिनियम के अनुसार राज्यों को रद्द करने की धारा के विरुद्ध अन्तर्गत करने का अधिकार

धर्मियों को र दिया गया है। प्राधिकारियों को यह भी धर्मितार है कि यदि यह मय हो कि मञ्जूरी का मुगताम नहीं किया जावेया या किसी व्यवसाय के सम्भ्र होने पर मञ्जूरी मुगताम को प्राधिकारिता नहीं ही जावेगी तो वह मानिष की या मञ्जूरी का मुगताम करने के लिए उत्तरदायी धर्मियों की सम्पत्ति को समर्थ नुकर्न करा सकते हैं। बम्बई में १९१४ में एक संशोधन क समुहार उय नियम के अन्तर्गत यदि कोई प्राधि बाकी रह जाती है तो उसकी उगाही उमी प्रकार की जा सकनी है जंम मान पुनायी के बकाया को उगाही होती है।

अधिनियम के कार्यान्वित होन का मूल्यांकन —

विभिन्न राज्यों द्वारा इस अधिनियम पर प्रस्तुत की जान वाली वार्षिक रिपोर्टों से यह पता चलता है कि अधिनियम के उपरम्य उचित रूप से लागू किए जा रहे हैं वरन्तु कुछ राज्यों में धर्मितागामी तथा उत्तरदायी धर्मिण सुषों को कमी क वारण धर्मिक इससे साम उठाने म असहन रहे हैं। मुख्य धम प्रायुक्त के द्वारा अधिनियम के प्रतिपालन (Observance) का कुछ धर्मिनितठाषों (Irregularities) की रिपोर्ट की गई है। १९१८-१९ म रैलों में धर्मिनितठाषों क १७ ११६ मामले पाए गए। इनमें से ६१ २% तो देर से धर्दापयी करने या धर्दापयी न करने के मामले म। १९१८ में धर्मो म धर्मिनितठाषों के १ १८० मामल पाए गए जिनमें से ३१८% तो उचित प्रकार से रजिस्टर न रखने के वी और २१ १% देर से धर्दापयी करने के वे। १९१९ में अधिनियम के अन्तगत जो धर्मिनितठाषा बाई पर धर्मो मुक्त संख्या ११ १६१ की और यह निम्नलिखित बातों म सम्बन्धित थी — धर्दापयी की तिथि और धम्य धर्मियों का नाटिम न समाने के सम्बन्धित—२ ८६१ रजिस्टरों का न रखना—२,०११ रजिस्टरों का उचित प्रकार से न रखना—१४२१ मञ्जूरी की देर से धर्दापयी—१९४६, मञ्जूरी को धर्दापयी न करना—१८७ धर्मिनित कटौतिपा—११६, पुमनि—६८ हानि तथा धनि के लिए कटौतिपा—११८ धर्मिण प्राधि की धर्दागी ११४ धर्म्य—१२११। परन्तु सब बातों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि धर्मियों को इस अधिनियम में बहुत लाभ हुआ है।

धम अनुसन्धान समिति के कथनानुसार यद्यपि अधिर्दाय बड़े-बड़ मसयना द्वारा अधिनियम का टीक पालन किया गया है तथापि टैके के धर्मियों के सम्भ्रम में तथा धर्दे-धर्दे संख्याओं में, यहाँ पर किसी प्रकार का कोई रिवाइ तथा उचित रजिस्टर प्राधि नहीं हो जाते इन अधिनियम में बचने का काफी प्रयत्न किया जाता है। अधिक्तर मामलों में यह पाया गया है कि कटौती समशोर्ति मञ्जूरी का रिवाइ मञ्जूरी की समशानुसार धर्दापयी कोनम मरगाई भला प्राधि में सम्बन्धित अधिनियम के धर्दाप्यों का टीक प्रकार म पालन नहीं किया जाता है तथा रजिस्टर भी टीक-टीक नहीं रहे जाते हैं। रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि यद्यपि अधिनियम के धर्मिनित धर्मियों की मात्रा बहुत कम है तथापि धनेक धर्मिक धर्मियों को एक या धाये दिन के लिए मुगताम कर देने के और उनको मञ्जूरी में से कटौती कर देने के। समिति के

नुसार रेलवे में अधिनियम के कार्यक्रम के विषय में यह एक बहुत मज्जीर सिकावत है। बीड़ी तथा चपड़ा जैसे कुछ कारखानों में दाम असन्तोषजनक कार्य प्रादि के लिए मजदूरी से घनाधिकृत कटीती की प्रथा भी प्रचलित है। हानि या क्षति के लिए कटीती का जो उपबन्ध है वह श्रमिकों के विरुद्ध बाटा है क्योंकि मजदूरी की परायणी को इस व्यापार पर रोक सिया जाता है कि प्रीजार तथा परार्थ पटाव हो गए हैं। बहुत से मामलों में यह देखा गया है कि मजदूरी परायणी में देरी की जाती है। तबही अधिक हानि ठेके के श्रमिकों को पटाणी पड़ती है तथा उनके मामले में अधिनियम के उपबन्धों से बचने का प्रयत्न भी किया जाता है। उनका कोई भी रिफार्ड नहीं रखा जाता और निरीक्षकों के लिए अधिनियम को लागू करना कठिन हो जाता है। समिति ने बहुत से मामलों में यह पाया कि पुर्नाना नियम में बहुत बड़ी-बड़ी क्षति एकत्रित हो गई थी तथा उम शक्ति को कर्मचारियों के साज के लिए उपयोग में नहीं लाया जा रहा था। बनेक मामलों में जो पुर्नाना नियमों ही नहीं बनाई गई थीं। अधिनियम में इस निधि को किसी निदिष्ट समय के धम्बर ही श्रमिकों के साज के लिए श्रम करने का बन्धन शालिकों पर नहीं लगाया गया है। इन बापों और श्रमिकों के कारण ही सरकार ने १९२७ में इस अधिनियम में संशोधन किया जिसका उत्प्रेक्ष्य उम्बर किया जा चुका है। उसमें १९२७ के संशोधित अधिनियम के मुख्य उपबन्ध इस प्रकार हैं: (i) मजदूरी सीमा को २०० ६० से बढ़ाकर ४०० ६० कर दिया गया है (ii) अधिनियम को निर्माण उद्योग तक विस्तृत कर दिया गया है (iii) मजदूरी की परिमाणा में संशोधन किया गया है, (iv) बीमा किल्लों मकान का निर्माण सरकारी प्रतिशुनियों के लिए श्रम तथा शैश नियमों के अन्तर्गत सगाए गए पुर्नानों प्रादि के लिए कटीती को अधिकृत रूप दे दिया गया है, (v) शकों को रद्द कर देने के विरुद्ध शरीत करने और श्रमिकों के हिन की सुरक्षा के लिए शालिकों को सम्पत्ति को बुर्क कराने की व्यवस्था भी की गई है। इस बात का सुझाव दिया गया है कि इस अधिनियम में फिर संशोधन किया जाए ताकि पुर्नाने मजदूरी और कटीतियों का रजिस्टर न रखने पर और मजदूरी का उचित समय पर पुनतान न करने पर या शर्त दिवस के प्रतिरिक्त दिवस पर पुनतान करने पर शालिकों पर मुकदमा चलाया जा सके और शालिक इस अधिनियम से अनुचित साज पटाकर और ही परायणी न कर सकें। मजदूरी न देने पर क्षतिपूर्ति की दर बढ़ाने का भी सुझाव है।

बोनस परदायणी (Bonus Payment).—

यह इन बोनस परदायणी तथा साज सहसाजन की समस्या का उत्प्रेक्ष्य करे। भारतीय श्रमिकों की धाय पूर्ण रूप से उनकी मजदूरी धाय से ही नहीं मानी जा सकती क्योंकि उनकी परस्पर परेक प्रकार के बोनस तथा रिपायमें प्रादि भी ही जाती है। बोनस सापारलुनया विनी विधेय या प्रतिरिक्त तथा के लिए परदायणी है तथा सापारलुनया रजक परेक परेक विधि में नियमितता लाया न विधेय प्रकार के धम्बे

कार्यों को प्रोत्साहन देना है। इस प्रकार बानस बहु नफ़्त प्रदायणी है जो कि मजदूरी के प्रतिरिक्त धर्मिका के धर्मिक प्रयत्नों को प्रोत्साहन देने के लिए की जाती है। परन्तु यह परिचाया 'प्रोत्साहन बोनस' की ओर सनेत करती है अर्थात् जब धर्मिक प्रयत्नों के लिए बोनस का सुगमता किया जाता है। पर बानस राज्य ने एक दूसरा प्रबंध प्रहूण कर लिया है—अर्थात् साम म धर्मिकों का धर्मिकारपूण भाग। बोनस धर्मिक-मजदूर सम्बन्धों का एक मुख्य प्रत्न बन गया है।

जैसा कि मजदूरी स्तर के प्रन्तगत उत्तेज किया जा चुका है, बानस बहुत से प्रयोगों में नियमित रूप से दिया जाता है। धारणतया बोनस उद्योग के भाग में से करा किया जाता है तथा धन बहु धर्मिकों की मजदूरी का ही भाग समझा जाता है। इस कारण बोनस प्रदायणी का प्रदन बहुत से औद्योगिक विवाधों का विषय रहा है। ऐसे धनेक विवाध समय-समय पर औद्योगिक विवाध धर्मिनियम के प्रन्तर्वत की गई मुतह कररखा की सीधे जात है। धन यह मुन्धक दिया गया है कि धर्मिकों को बोनस देने के लिए कुछ निरिक्त विज्ञान तथा स्तर होने चाहिये। इनको बनाने के लिए बोनस को प्रवृत्ति से सम्बन्धित बहुत सा बातां की जांच धारणक होगी। यह निरूप करना होमा कि (क) क्या बोनस धनुषहूर्बक की गई प्रदायणी (*Ex-gratia pay*) प्रत्त है जो पूर्ण रूप से धर्मिकों की इच्छा पर निर्भर करती है तथा क्या इतकी उस समय तक कानूनी धर्मिकार के रूप में मही मांया जा सकता जब तक कि यह रोजगार की मबिदा में सम्मिलित न हो, या (ख) बानस सुगमता को गई मजदूरी तथा बोनस निर्वाह मजदूरी स्तर के प्रन्तर को कम करने के लिए, धर्मिकों को ही जाने वाली स्वमित मजदूरी है, या (ग) बोनस साम में से एक भाग है जिनका धारा धर्मिक एक धर्मिकार के रूप में कर सकते हैं जवाकि साम, धन और पूजी धनों के ही संयुक्त प्रयत्नों का परिणाम होता है तथा किसी भी एक पक्ष को दूसरे पक्ष की उद्वेग करते इनको पूर्ण रूप से प्राप्त करने का धर्मिकार मही होना चाहिये।

इन विवाधों में से प्रथम विवाध अर्थात् बोनस धनुषहूर्बक की गई धाराणी है, धर्मिकारियों द्वारा स्वीकार मही किया जाता है। धौदायिक धर्मिकारणों द्वारा दिए गए निर्णयों से भी मही बान धर्मिकारण हाती है। विवाधकों के ज्ञान ही के निर्णयों से भी मही बान स्पष्ट है कि बोनस धनुषहूर्बक की गई प्रदायणी मही है और इसको धर्मिकों द्वारा धर्मिकार के रूप में मांया जा सकता है। १९२४ में इमाहारा उच्च न्यायालय के धनुमार "इसमें कोई सन्देह मही कि धापुरिक समय में 'बोनस' को रण्य रूप में देनी स्वदिन मजदूरी मात्र म्मा है या धर्मिकों की धारा की जाती है तथा जो धर्मिकों के द्वारा रोजगार की धनों व धनुमार धर्मिकार के रूप में मांयी जा सकती है। जिन धाराओं के धाधीन धर्ममान उद्योग कारं करता है, उनमें बोनस धर्मिकों का एक धर्मिकार समझा जाने म्मा है जिनको कि बहु कुछ परिधिर्बन्धों में धर्मिकों के धारे के रूप में मांद करने है।" इस प्रकार धर्मिकों के इस बोनस प्रदायणी के धने में कानूनी मांया प्रन्त कर ली है। पर हमारे संविधान में दिग् दर धायायिक

घोर धार्मिक म्वाय पर आधारित है। बोनस का देना कोई बात का काम नहीं है। यह ही धर्मियों का लाभ में धर्मिकारणुर्ण भाव समझ जाता है जो मात्र धर्मियों के सहयोग और सहायता से ही कमाया जाता है।

धर्मियों को बोनस की प्रदायगी की भाषा कियनी हो इसका निर्णय करने के लिए हमें मासिकों के पास प्राप्त बेची राशि की भाषा को देखना होगा। इस बेची राशि को निश्चित करने के लिए वाम शपीलीय धर्मिकरण (Labour Appellate Tribunal) के एक सिद्धान्त प्रस्तुत किया था। यह सिद्धान्त उद्योग द्वारा कियी एक निश्चित साल के कुल लाभ की भाषा को सता है तथा यह बताता है कि निम्न बातों को कुल लाभ में से सबसे पहले घटाय कर देना चाहिए मूल्य ह्रास (Depreciation) की व्यवस्था पुर्नबाध के लिए कुछ धारकित निधि कुकती पूजी पर १% का व्याज कार्यशील पूजी पर कम दर पर व्याज और धायकर प्रदायगी के लिए व्यवस्था। रोप धन की उस बर्ष क लिए प्राप्त बेची राशि (Surplus) मात्र लेना चाहिए जिसमें से धर्मिक धपने लिए उचित भाग के मांगने का धर्मिकारी है। यह सिद्धान्त को कि सर्वोच्च म्यायालय (Supreme Court) द्वारा मान्य है, एक सारे देश में धर्मियों के बोनस के दावों का निर्णय करने के लिए औद्योगिक विवाधकों के लिए एक आकार बन गया है। यह भी माना गया है कि धर्मियों क बोनस दावों को मान्यता देने से पूर्व निम्नलिखित बातों का होना आवश्यक है। (i) जबकि नवभूरी जीवन स्तर से कम है। (ii) जबकि उद्योग की अत्यधिक लाभ होते हैं जिनका धर्मिक भाग धर्मियों के सहयोग द्वारा बढ़ाए गए उत्पादन के कारण ही संभव होता है।

मार्च १९६० में स्थायी मय समिति ने एक 'बोनस धायोग की स्थापना की विधायित की। इस धायोग का कार्य यह होगा कि नकदी या धन्य रूप में बोनस की प्रदायगी के लिए कुछ सिद्धान्त बना दे। ऐसे सिद्धान्त बोनस के म्वाकों को निबटाने में बहुत सहायक होंगे। केन्द्रीय मय मंत्री की मन्दा ने इस बात की घोषणा की कर दी है कि ऐसे बोनस धायोग के कार्य धन को बढ़ा दिया जायेगा और यह बोनस से सम्बन्धित धन्य प्रश्नों पर भी विचार करेगा 'उदाहरणतः' नवभूरी निर्धारण मूल्यों की स्थिरता निर्बाह एवं तथा उत्साहकता प्रादि जिनका बोनस के प्रश्न से सम्बन्ध है। मासिकों के प्रतिनिधियों ने ऐसे धायोग का विरोध किया है। उनका कहना है कि जब सर्वोच्च म्यायालय ने बोनस से सम्बन्धित निश्चित सिद्धान्त बना दिये हैं ता ऐसे धायोग की कोई आवश्यकता नहीं है। परन्तु हमारे विचार में बोनस के विषय पर धायोग द्वारा विचार किए जाने में कोई हानि नहीं है। धी एस० धार० मिहिर की अध्यक्षता में बोनस नमीयान की नियुक्ति हो चुकी है। यह त्रिदलीय नमीयान है।

हमारे सामने यह प्रश्न उठता है कि कुल लाभ में से धर्मियों का भाग कितना हो? इसी हमारा ध्यान लाभ सहभाजन की ओर जाता है। लाभ सहभाजन का प्रश्न अभी तक भारत में बाध-विबाध का विषय बना हुआ है। विनी की प्रकार के बंधा निरु नियमों के अन्तर्ग में लाभ सहभाजन और बोनस योजना ऐच्छिक या विवाधकों

क पंचाट क परिष्कारस्वरूप निर्धारित की गई है। परन्तु इनक प्रतिरिक्त बेची राशि की पहलना के लिए कोई समान या निर्धारित नियम नहीं है और न ही यह स्पष्ट किया गया है कि धर्मियों को इसमें से कितना भाग भिषना चाहिए। धर्मियों तथा धर्मिकों, दोनों ही के लक्षों के बिबाधों द्वारा प्रपत्राये गए स्तरों की अनेक आपारों पर प्राप्ति-बना की है तथा यही बात अनेक बार बिबाधों और हड़ताली का कारण बनी है। इसलिए यह बांधनीय ही है कि बोनस की प्रवृत्ति तथा लाभ न हदका सम्बन्ध अरु व्ययों का निकालकर कुल लाभ में से देनी लाभ को पहलना बोनस तथा लाभ के लिए धारण स्तर प्रादि प्रदनों पर किसी बिगपत्र ममिनि द्वारा सावधानीपूर्वक बिचार किया जाना चाहिए और जो भी निर्णय ही उसे बैधानिक रूप से लागू करना चाहिए। बोनस कमीशन की नियुक्ति तो ही चुकी है परन्तु लाभ सहभाजन के प्रबन पर अभी तक कोई निर्णय नहीं किया गया है।

भारत में लाभ सहभाजन योजना

(Profit-sharing Scheme in India)

राज की औद्योगिक प्रणाली में धर्मियों की मुख्य निष्ठापन यह है कि न तो उनका उद्योग के प्रबन्ध में सहयोग लिया जाता है और न ही उन्हें उन व्यवसाय के लाभ में वहाँ बड़ा भाग करते हैं कोई भाग प्राप्त होता है। इस धारणा का दूर करने के लिए उत्तार के मुख्य औद्योगिक क्षेत्रों में सह-साझेदारी (Cpartnership) तथा लाभ सहभाजन की योजनाएँ लागू की गई हैं। कुछ देशों में सह-साझेदारी तथा लाभ सहभाजन दोनों ही को साथ-साथ लागू किया गया है। परन्तु हमारे कुछ देशों में उद्योगपति लाभ का केवल कुछ भाग ही धर्मियों को देने को तैयार हुए हैं ताकि धर्मिक मनुष्य यह समझें। धन-साधारण लाभ सहभाजन से निकर पूर्ण सह-साझेदारी तक की अनेक योजनाएँ ही चलती हैं।

लाभ सहभाजन का अर्थ—

लाभ सहभाजन का अर्थ ऐसी व्यवस्था में है जिसके अन्तर्गत धर्मिक कर्मचारियों को मजदूरी के प्रतिरिक्त व्यवसाय में हुए बेची लाभ में से कुछ भाग दे देते हैं। इसका अर्थ यह भी है कि धर्मिक तथा कर्मचारियों के मध्य इस भाग को प्राप्त करने के लिए समझौता होता है। अतः लाभ सहभाजन तथा कानन के सुगठन में अन्तर है। बोनस के सुगठन के पीछे बार्ड बाधुनी भाग्यता नहीं होती है और यह भाग धर्मियों की सहभागिता का प्रतिफल के पंचाट पर निर्भर करता है। इनके बिना ही लाभ सहभाजन एक ऐसे निश्चित समझौते पर आधारित होता है जो कि धर्मिक तथा कर्मचारियों के मध्य होता है। धारणन लाभ तथा मजदूरी की एक साथ कानन की प्रवृत्ति हो गई है तथा यह समझा जाता है कि धर्मियों का मजदूरी के साथ ही लाभ में भी हिस्सा पाने का अधिकार है। कर्मों के इस विज्ञान को कि लाभ शैली की हुई मजदूरी है अरु कोई मह्यन नहीं दिया जाता क्योंकि लाभ शैली कि प्रणाली का एक आवश्यक भाग कर्मका अन्त है। अर्थ के धोरण की सुधारों

को दूर करने के लिए साम सहमाजन की योजना का सुझाव दिया गया है और कोई भी व्यक्ति काम को पूर्णतया समाप्त कर देने के बारे में सम्मोचना से नहीं सोचता है।

साम सहमाजन की बाधनीयता—

साम सहमाजन के पक्ष में सबसे महत्वपूर्ण तर्क सामाजिक न्याय का है। यह सर्वविधित ही है कि कम उत्पत्ति का मूल उत्पादन है तथा यदि अधिक कार्य न करें तो साम का होना सम्भव है। यह व्यक्ति ही तो है जिसके कारण साम उत्पन्न होता है तथा यह बहुत ही ध्वन्यात्मपूर्ण होगा यदि उसको साम में से कोई भाग न दिया जाय। यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि पूजीपति वर्ग द्वारा धर्म साम का स्वाम्य अधिकारण (Appropriation) धर्म और पूँजी में तीव्र मत-भेद उत्पन्न कर देता है जिसका परिणाम धोखाधिक रूपसे उत्पादन में कमी और उत्पादनों के उत्पादनों का सम्भव होता है। वर्तमान समय में धर्म साम व्यवस्था ही हूँ बाधे हैं लेकिन यदि वह अपने साम का एक भाग धर्मियों को उनकी मजदूरी के प्रतिरिक्त दे दें तो यह धर्म को बाध सकती है कि कम धर्म पूँजी के बीच संघर्ष कम हो जायेंगे जिसके परिणामस्वरूप उत्पादन भी सम्भव होने संकेप। साम सहमाजन धर्म और पूँजी के सामान्य हितों को सुदृढ़ कर देता है। इससे धर्मियों में स्वामी रूप से एक स्वाम पर कार्य करते रहने की प्रवृत्ति भी पा जायगी तथा निरन्तर धर्मिकावर्तन का श्रेय दूर हो जायेंगे। इसके प्रतिरिक्त वह धर्मिक दिवह साम में हिम्सा प्राप्त होता है बहुत सावधानी तथा परिश्रम न करना कार्य करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि व्यक्ति मात्र का सामान्य रूप करते हैं तथा मशीन का उत्पादन के प्रोत्साहनों का विशेष ध्यान रखते हैं। उत्पादन की क्षमता बढ़ जाती है जिसका प्रत्यक्ष परिणाम धर्मिकाधिक साम होता है। रोबर्ट घोबन के बारे में कहा जाता है कि जब एक बार एक मिनट कालिक ने अपने कहा कि 'यदि मेरे व्यक्ति चाहें तो वह प्रथम कार्य करके तथा धर्मधर्मता को दूर करके मेरे १००० वीं प्रतिधर्म तथा सकते हैं, तो घोबन ने प्रत्युत्तर में कहा कि 'तब धर्म उनको २००० वीं प्रतिधर्म इन कार्य के लिये क्यों नहीं दे देते हैं।' धर्म सहमाजन का एक और लाभ यह होता है कि उच्च योग्यता वाले धर्मिक साम सहमाजन साम संस्थाओं की धर्म प्राकृषित होते हैं और इनसे उत्पादन क्षमता धर्म भी बढ़ जाती है।

साम सहमाजन योजना में बाधार्थ —

साम सहमाजन योजना की व्यवस्था से जहाँ लाभ है वहाँ धर्मिक श्रेय तथा धर्मिता भी है। यह योजना धर्मिक श्रेयों द्वारा धर्मिक नहीं की गई है क्योंकि धर्मिक द्वारा धर्मिक धर्म धर्मिक धर्मों को निर्वास कराने का धर्मिक दूधने है और धर्मिकों की धर्मिक संस्थाओं पर निर्भर होने के स्वाम्य धर्म धर्मिक उपर धर्मिक कर देने हैं। साम सहमाजन में कमी कमी धर्मिक धर्मिक सामान्य से धर्मिक काम करने हैं। धर्मिक धर्मिक परिणाम धर्मिक मजदूरी होता है। धर्मिक धर्म धर्मिकों का धर्म साम में धर्मिक धर्मिक है धर्मिक नहीं होता है और धर्मिक धर्म साम को बाधने

में मामियों की ईमानदारी और मज्बूती में संशय करता है। इन अमिष्ठ साम सहकारकों की योजनाओं में अमिष्ठ रूचि नहीं लेते हैं। भारत में इन प्रकार की संस्था अमिष्ठ है क्योंकि जब अनुरूप नीति बनने के बाद ये प्रायः अमिष्ठारियों तक को चकमा दे सकते हैं। जब उनके लिए बेकारे निर्धन और अमिष्ठित यमियों को बोला देना तो बहुत ही सरल है। इनके अतिरिक्त जब यह व्यवस्था प्रारम्भ की जाती है तो मामिष्ठ और अमिष्ठ दोनों ही यह निम्नाने का प्रयत्न करते हैं कि लाभ में जो वृद्धि हुई है वह वेबल उनके बनने ही प्रदत्ता का परिणामस्वरूप हुई है। अमिष्ठ यह सोचते हैं कि क्योंकि उन्होंने मन लगाकर तथा अमिष्ठ उत्साह से कार्य किया है इसलिए लाभ बियेदकर जहाँ के प्रदत्तों द्वारा हुआ है परन्तु मामिष्ठ इन बात को स्वीकार नहीं करते। परिणामस्वरूप विवाद उत्पन्न होने लगते हैं।

साम सहकारकों योजना के विरुद्ध अनेक आशयों का भी है। यह बताया जा चुका है कि निम्न साम का ठीक ठीक विभाज्य लगाना अमिष्ठ है क्योंकि द्रव्य ज्ञान करमात्र (Taxation), आरक्षित धन (Reserves) चुकानी पूँजी पर लाभ पादि एमी अनेक बातें हैं जिनके बारे में निम्न लाभ (Net Profits) के निर्दिष्ट करने में बहुत अमिष्ठ कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इनके अतिरिक्त मामिष्ठ मता यह कहते हैं कि यदि अमिष्ठ साम में बनने का भाग का दावा करते हैं तो क्या व्यवसाय में हानि होने पर उस हानि का एक भाग देने को तैयार होंगे? दूसरे दायों में क्या अमिष्ठ व्यवसाय की अमिष्ठित को उनी अनुदान से बहुत करने को तैयार है जिस अनुदान में वह लाभ में हिसाब आते हैं? साम सहकारकों से अमिष्ठ आनवी भी हो सकते हैं और इन कारण अन्ततः बचाने बढ़ने को यह संभव है।

अपसंहार -

एक प्रो० टात्रिण का कथन है "यह घोषणा किन्तु नहीं की जा सकती कि साम सहकारकों विरुद्धारी रूप प्रयोग कर सगा। इनके विरुद्ध रूप में आकारे जाने की आशाएँ भी बहुत कम हैं।" जब भी अनेक ऐसे अमिष्ठारणी हैं जिनका विचारण है कि साम सहकारकों ही अमिष्ठ बर्तनी बुद्धि का एकमात्र मार्ग है। इसमें तो कोई संशय नहीं कि साम सहकारकों योजनाओं में अमिष्ठों में अमिष्ठित बलवत् होती और यह अन्ततः बनने की अमिष्ठ प्रकार से अमिष्ठ परन्तु अमिष्ठ। इन अमिष्ठ मताओं की आशयित करने में अनेक बाधाएँ हैं। जब जब कि मामिष्ठों और अमिष्ठों के मध्य आन्तरिक विरोध तथा आन्तरिक सौहार्द का आभाव उत्पन्न नहीं होता ऐसी योजनाएँ अमिष्ठ भी संभवता प्राप्त नहीं कर सकती। यह सोचना भी अमिष्ठ अमिष्ठ आन्तरिक ही जाना होता कि साम सहकारकों योजनाएँ औद्योगिक विवादों को समाप्त कर देंगी। अतः मैं अमिष्ठ यह बात या संभव है कि ऐसी योजनाओं में विवाद कम हो जाय।

धमिक सह-साझेदारी (Labour Co-partnership) —

भारतवर्ष में साम सहभाजन की प्रस्तावित योजना पर विचार करने से पूर्व इस बात का उल्लेख किया जा सकता है कि व्यवसाय के प्रबन्ध और निर्वहन में किसी भी प्रकार के अधिकार के बिना धमिकों का लाभ में से भाग लेना लाभ सहभाजन का एक घातकिक दोष है। इस दोष को दूर करने के लिए बहुत से देशों में धमिकों को प्रबन्धक मण्डल में प्रतिनिधित्व देने के प्रयत्न किए गए हैं। इसको सह-साझेदारी के नाम से जाना जाता है। इसका क्षेत्र साम सहभाजन के क्षेत्र में अधिक विस्तृत है। बाल्जब में इसमें तान सहभाजन और प्रबन्ध में भाग दोनों ही का समावेश हो जाता है और इसमें घन म धमिक पूंजी में हिस्सेदार होने के भी श्रेय ही पाने हैं। भारत में धमिक सह-साझेदारी को सहकारिता का ही एक रूप समझा जाता था। इस ओर रोबर्ट मोहन द्वारा प्रयत्न किए गए थे। यह प्रयत्न असफल रहे क्योंकि सहकारिता प्रणाली बड़े पैमाने की उत्पत्ति के अनुकूल नहीं है। रोबर्ट मोहन की धारणा बहुत ही ऊँच थी कि जिसको प्राप्त करना बहुत कठिन था। परन्तु यह एक न्यूनक प्रदान है जिसका अध्ययन 'धन और सहकारिता' के अध्याय में किया जाएगा।

सामान्य सह-साझेदारी उन योजनाओं में होती है जो पूंजीबारी प्रवृत्ति की होती हैं तथा इनमें जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है लाभ सहभाजन व धमिकों का प्रबन्ध में नियंत्रण की योजनाएँ भी सम्मिलित होती हैं। व्यवसाय का नियन्त्रण प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि या तो वेयर बुजी प्राप्त की जाए और इस प्रकार से वेयरपार्टी के माध्यम से अधिकार तथा उत्तरदायित्व प्राप्त कर लिए जाएँ या धमिकों की एक सह-साझेदारी समिति बना ली जाए जिसकी घातकिक प्रबन्ध में कुछ मुनबार्ड हो। जहाँ तक वेयर पूंजी प्राप्त करने का सम्बन्ध है हम भारतीय धमिकों में जनकी निर्यतता तथा कम मजदूरी के कारण इसकी धारणा नहीं कर सकते। इन कारण इन प्रयत्न पर विचार करना कोई विवेक सामन्दायक नहीं है। सह-साझेदारी समिति का निर्माण निःसन्देह उपयोगी हो सकता है। हमने धमिक घातकिक प्रबन्ध में भी ध्यान हाथ रख सकते हैं। परन्तु यह भी धमिकों की शिक्षा उनकी बुद्धिमत्ता तथा मानिकों को उन पर दितना विद्यमान है इन बातों पर निर्भर करती है। जब तक देश में एक सन्निवृत्त धमिक गण व्यवसाय न हो इस प्रकार की समितियाँ न तो बनाई जा सकती हैं और न ही सफल हो सकती हैं। फिर भी यदि इस प्रकार की समितियाँ बनाई गईं तो समिति के सदस्यों को व्यवसाय की कुछ बातें नहीं बर्बाद जाएँगी तथा मुख्य मुख्य देशवासियों के बावों का नाम इनको नहीं दिया जाएगा। यह भी बहुत कुछ सम्भव है कि धमिक अपने सह-धमिकों की धारणाओं का पालन भी न करें। इसमें भी सन्देह है कि सह-साझेदारी की कोई भी योजना विद्या सन्निवृत्त धमिक वर्गों के सफल हो सकेगी। धन और प्रबन्ध में धमिक सहयोग देने के लिए द्वितीय संवर्षीय धायोजना में भी धोर दिया गया है जिससे उन्मान्य धमिक हो सके तथा धी-धी-धी-धी धमिक वर्गों की जा सकें। धमिकों को प्रबन्ध में भी कुछ हिस्सा

रेने की ओर टाटा जैसे कुछ जायज उद्योगियों द्वारा एक उद्योग था है। प्रथम में श्रम के माप सेने की माजनाए कई मस्बाओं म लागू की गई है। (देगिये परिगणित पं) भारत में साम सहभाजन के विचार का विकास —

पश्चु उपराएन बानें साम सहभाजन कायमा के विषय म लागू नहीं होती। इनके लिए तो देग में एक काकिनामी आन्दापन लागू है और इसका भाग नरकार की श्रम नीति में भी बहुत महत्व है। दिसम्बर १९४३ में तात्कालीन ब्रिडमंभी पी० एनुमुकन ब्रैट्टी ने शरिष बजट पर बहस के समय यह बनाया था कि सरकार उद्योग में साम सहभाजन की माजनाया का सम्भावनाओं पर विचार कर रही थी तिसन शक्तियों की शक्ति उपादन करन का पर्याज प्रोत्साहन मिल सके। उभी समय नरकार ने एक उद्योग सम्मनन बुलाया जिसम प्रांतीय और देगो राज्य सरकारों के प्रतिनिधि अनेक महत्वपूर्ण आगारी तथा उद्योगानि एव शक्ति श्रम के नेताओं ने भाग लिया। औद्योगिक श्रम प्रस्ताव (Industrial Trade Resolution) इसी सम्मनन में पारित किया गया था। इसम यह बनाया गया कि शक्तियों को बेसी साम में से उचित भाग दिया जाये। सन् १९४८ म नरकार द्वारा औद्योगिक श्रम की बोपगा में यह प्रस्ताव शर्कार कर लिया गया। प्रांतीय श्रम शक्तियों का एक सम्मनन कई बैठनी में यह समाज रेने क लिए हुआ था कि पूंजी का क्या उचित शरिषयिक होना चाहिए तथा श्रम पूंजी के बीच मान का बितरण किस प्रकार हो। इस सम्मनन के निष्पत्त के परिणामस्वरूप एक बिन्दुय साम सहभाजन शक्ति विदुस की गई। इस शक्ति ने दिसम्बर १९४८ में शरती रिगाने प्रस्तुत की।

सन् १९४८ की साम सहभाजन शक्ति —

इस शक्ति के मुख्य निष्कर्ष सनन में निम्न प्रकार है —

इस शक्ति के सम्बन्धित अनेक परमुक्तों की बिस्तारपूर्वक शोध करने के बरबानु यह परिणाम निकाला कि साम सहभाजन की ऐसी प्रणाली का निर्धारण करना सम्भव नहीं है जिसमें कि शक्तियों के साम का पूरा उपयोग के अनुरानुसार निर्दिष्ट किया जा सके। शक्ति के ९ उद्योगों में ३ श्रम के लिए साम सहभाजन की योजना का प्रयोगात्मक दृष्टि में लागू करने का सुझाव दिया। उद्योगों के श्रम निम्न विगित है — कुनी श्रम उद्योग, इर श्रम शीमेंट, टाटों का उद्योग और शिपिंग उद्योग। शक्ति ने बताया कि उद्योग के द्वारा प्राप्त किया गया साम श्रम के शक्ति लिए और श्रम म शक्तियों पर निर्भर करता है। श्रम श्रम शक्ति के शक्ति की कोई शारीरिक मान नहीं की जा सकती। इनके शक्तिगत उद्योग उद्योग में और हर उद्योग की इकाई इकाई में उपयोग बिम्न होगा है। इनके शक्तिगत श्रम की उपलब्धता कम बहूत भी शक्तों का निर्भर करती है जैसे सामन विम प्रकार का है और श्रम शक्ति के शक्तिगत शक्ति प्रकार में हो गया है का नहीं शक्ति। इस शक्ति इस शक्ति साम पर पट्टी कि देगी साम में शक्ति का माप केरन एक शक्ति विम (Arbitrary Way) गरी निर्धार किया जा सकता है। यदि एक शक्ति शक्ति का पूरा श्रम नहीं

साम में से निरिक्त हो जाए तब उसे व्यक्तिगत समिती के मध्य किसी एक पिछले समय में जमकी प्राप्त कुल धन्य के अनुपात में वितरित किया जाना चाहिए। इस प्रकार की पद्धति से व्यक्तिगत पारिवारिक व्यक्तिगत प्रयत्नों के अनुसार कुछ सीमा तक सम्बन्ध हो जाएगा।

समिति ने यह बताया कि साम सहभाजन पर विचार विमर्श अत्यंत हीन मुख्य दृष्टिकोणों की ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। साम सहभाजन उत्पादन को प्रोत्साहन देने के लिए होना चाहिए या साम सहभाजन औद्योगिक शांति को प्राप्त करने के लिये होना चाहिये या साम सहभाजन समिती को प्रबन्ध में भाग देने के उद्देश्य के होना चाहिये। प्रथम बात पर, अर्थात् साम सहभाजन उत्पादन को प्रोत्साहन देने के लिये होना चाहिये समिति का मत यह था कि यदि पिछली अवधि की कुल धन्य के अनुपात में धन के उत्पादन का भाग व्यक्तिगत रूप से वितरित कर दिया जाए तब उत्पादन अधिक करने में इससे व्यक्तिगत रूप से प्रोत्साहन मिलेगा। समिति ने जिस कारण साम सहभाजन को लागू करने की विषयविषय की बहुमुखता यह था कि इससे औद्योगिक शांति को प्रोत्साहन मिलेगा। इस उद्देश्य को दृष्टि में रखते हुए उन्होंने यह सुझाव दिया कि किसी ऐसे वर्ग में जब समिक या समिती के वर्ग अपसुक्त प्राधिकारियों द्वारा घोषित अवधि हड़ताल में भाग लेते हैं साम का सहभाजन पूर्ण रूपका आर्थिक रूप से रोक रोकना चाहिये। इसी प्रकार यदि कोई अवधि तामा-बन्दी है तो वैसी साम की गणना इस प्रकार साम सहभाजन के लिये की जानी चाहिए जैसे तामो कोई तामाबन्दी हुई न हो।

पूँजी पर वार्षिक प्रतिफल क्या होना चाहिए, इस प्रश्न को लेकर सीमित नै पूँजी की व्याख्या की है। पूँजी को चुकती पूँजी माना है और इसके छात्र-छात्र सारे सैबायों के गुणगान के लिये राशि के साम उस आरक्षित निधि (Reserve Fund) को भी से लिया है जो व्यवसाय के लिए सुरक्षित रखी जाती है। आरक्षित निधि में मुख्य हान राशि को वित्तियत नहीं किया जाएगा बल्कि सिर्फ उसी आरक्षित राशि को लिया जाएगा जो साम में से ली जाती है और जिसके उपर करों का गुणगान भी किया जाता है। समिति की राय में कुल साम में से सबसे प्रथम तो मुख्य-हान के लिये निधि निकाल देनी चाहिए और निम्न साम में से सबसे पहले आरक्षित निधि निकाल लेनी चाहिए। निम्न साम के अर्थ यह लिए गए हैं कि कुल साम में से मुख्य-हान राशि व्यवसायक एजेंटों (Managing Agents) को प्रदायनी और करों को गुणगान राशि निकाल देने के बाद भी कुछ रह जाता है वह निम्न साम है। पूँजी के वार्षिक प्रतिफल के प्रश्न पर समिति इस परिस्थान पर पहुँची कि स्थापित बचौकी में जिनके लिए साम सहभाजन योजना का सुझाव दिया गया था पूँजी का उचित प्रतिफल कम से कम रहना होना चाहिए जिनसे प्रोत्साहन निम्ने और निवेश (Investment) भी करें। तब परिस्थितियों को देखते हुए समिति के विचार में वर्गवार परिस्थितियों में पूँजी पर उचित प्रतिफल की दर चुकती पूँजी पर १०%

होगी चाहिए और इसके साथ-साथ यह सब धारित निधि भी से लेगी चाहिए जो व्यवसाय के लिए सुरक्षित रखी जाए। उस उद्योगों की इकाइयों में जो मजदूरी के बुने से घाटीसत निधि की सीमा की प्राप्ति करने के पर्याप्त समित्त इस निष्पत्ति पर पहुँची कि जो भी वृद्धि समाई जाती है उस पर यदि १० प्रतिशत मिल जाए और बेटी नाम में से २०% मिल जाए तो उद्योग उचित सामाजिक धार्मिक धर्मन में समर्थ हो सकता है।

बेटी नाम में से धर्म का भाग कितना हो इस बारे में मजदूरी के निर्णय दिया कि वह व्यवसाय के बेटी नाम का ३० प्रतिशत होना चाहिए। प्रत्येक धर्मिक का भाग उद्योगी निधन १२ महीनों की कुल धर्म के अनुपात में होना चाहिए। परन्तु इस धर्म में महंगाई मना या धर्म कोई बोझ जो उसके द्वारा प्राप्त किया गया हो सम्मिलित नहीं होना चाहिए। यह सुझान यदि कोई नाम सहभाजन बोझ लिया जा रहा हो उसके बरत में होना चाहिए। यदि किसी धर्मिक का भाग उद्योगी मुक्त मजदूरी के २३ प्रतिशत में बढ़ जाता है तब तबत सुझान उद्योगी मुक्त मजदूरी के २३ प्रतिशत तक सीमित होना चाहिए तथा वेप रचित उनके प्रोबिडेन्ट फंड या धर्म किसी हितार्थ में रनी जानी चाहिए।

प्रत्येक व्यवसाय या प्रत्येक उद्योग या धर्म विधेय में किसी उद्योग द्वारा धर्म के भाग का वितरण किस प्रकार हो—इसके कुछ एवं लोगों तथा कठिनायों पर विचार करने के पश्चात् समिति ने यह बताया कि आपाएतया नाम सहभाजन का आधार उद्योग की इकाई ही होना चाहिए। लेकिन कुछ विधेय गिद्योन्वों में हमका आधार एक उद्योग बरबा होना भी हो सकता है। समिति के विचार में धारम में उद्योग के धर्म के आधार को बरबाई सहस्यवाद और सोनापुर के मुनी बरत उद्योग में लागू करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए और मुनी बरत उद्योग में धर्म रवानों कर हमने विचार पर सरकार द्वारा बाद में विचार किया जा सकता है। इन स्थितियों में हर इकाई के बगी नाम को इस उद्योग से पूरा (Pool) कर लेना चाहिए कि उन धर्म के उद्योग के धर्मियों को नाम सहभाजन बोझ कितना मिलना चाहिए। यह धर्मिक प्रत्येक इकाई द्वारा धर्म धर्मियों को दिया नाम का विचार करे हुए एक सुनतम सुनतम के रूप में देना चाहिए। परन्तु उन इकाइयों में जहाँ बेटी नाम का धर्म नाम (धर्मिक बह रचित जो धर्मियों में बाँटी जानी चाहिए) उस बोझ में जो कि धर्म से धर्म धर्म करना है वह जाता है तब वह धर्म नहीं रचित भी उन इकाई के धर्मियों को ही देना ही जानी चाहिए। इसका प्रभाव यह होगा कि उन धर्म की धर्मिक इकाई में लगे हुए धर्मियों को एक सुनतम धर्म मिल जाएगा। यह भाग उस धर्म में लगी जाती इकाइयों के कुल धर्म नाम की धर्म रचित के आधार पर निर्धारित किया जाना चाहिए यदि उन इकाइयों में बेटी नाम होता हो। इसी प्रणाली द्वारा नाम सहभाजन का आधारभूत उद्योग को धर्म दिया जा सकता है। धर्मिक यह है कि धर्मिक धर्म व्यवसाय में धर्म करने है उनके धर्म में धर्म प्रयत्न

रूप से देखें हो। इकाई अनुसार लाभ के विवरण की नीति का निश्चित रूप से नहीं दर्श है कि धर्मियों को उन इकाइयों में जो लाभ उत्पन्न नहीं करती कोई भाग का भाग नहीं मिल सकता। इन प्रकार विभिन्न इकाइयों में धर्मियों के पारिधमिक में भिन्नता आ जायेगी। कार्यकुशल धर्मिक को जो कि कुर्माध्यमस एक ऐसे व्यवसाय में काम है जो लाभ नहीं कमा रहा है, केवल अपनी मूल मजदूरी पर संतोष करना रहेगा जबकि यदि एक अनुसूचित धर्मिक काम कमाने वाले व्यवसाय में काम है तब वह लाभ भी प्राप्त कर सकेगा। परन्तु यह कठिनाई दूर की जा सकती है यदि लाभ सहभाजन को उद्योग व क्षेत्र के आधार पर लागू किया जाये। मेडिकल मामलिक मुसल इस प्रकार लाभ को मिलाने का विरोध करते हैं क्योंकि उनके अनुसार इसका अर्थ यह होगा कि उद्योग में धर्मिक योग्य इकाइयों को धर्मोप्य इकाइयों की मदद करनी पड़ेगी। मामलिकों द्वारा उद्योग आधार पर लाभ सहभाजन के विरोध के कारण ही समिति ने कुछ विशिष्ट स्थितियों को छोड़कर सेप में लाभ सहभाजन का आचार इकाई ही रखा है।

लाभ सहभाजन का आलोचनात्मक मूल्यांकन—

लाभ सहभाजन समिति की यह रिपोर्ट एक मठ नहीं थी। मामलिकों तथा धर्मियों दोनों ही के द्वारा विभिन्न कारणों तथा विभिन्न आधारों पर अनेक प्रापतियाँ उठाई गईं। केन्द्रीय मसाहकार परिषद जिसने इस रिपोर्ट पर विचार किया किन्ती भी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकी। अक्टूबर व नवम्बर १९५१ तथा जून १९५२ में यह मामला बार-बार संयुक्त मसाहकार मंडल की सभाओं में विचारार्थ आया। औद्योगिक विकास समिति द्वारा स्थापित संयुक्त मसाहकार मंडल के प्रधान की भुजगारीमान मन्दा ने विचार प्रकट किया कि लाभ सहभाजन तथा बोनस जैसी समस्याओं की जटिलता को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि अमेरिका इंग्लैंड, जर्मनी आउस्ट्रेलियाई धर्मिक संघ एवं भारतवर्ष के विशेषज्ञों की सहायता से कुछ निदान आदर्श और स्तर बनाए जायें। प्रथम पंचवर्षीय आयोजना में आयोजना आयोग ने भी उल्लेख किया था कि लाभ सहभाजन तथा बोनस के प्रश्नों के लिए विशेष अध्ययन की आवश्यकता है तथा नवम्बर के रूप में बोनस की घोषणा की सीमित होती चाहिए तथा योग्य धर्मिकों की वृद्धि में काम कर देनी चाहिए। द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में भी यह उल्लेख किया गया था कि इससे पूर्व कि कोई योजना मब पत्रों को मान्य हो यह आवश्यक है कि लाभ सहभाजन तथा बोनस सम्बन्धी विद्वानों का धीरे धीरे अध्ययन कर लिया जाए। तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में बोनस के सम्बन्ध में एक आयोग की नियुक्ति की निपटारिण है (जिसकी नियुक्ति की जा चुकी है) परन्तु लाभ सहभाजन के बारे में कोई उल्लेख नहीं है।

इन प्रकार लाभ सहभाजन योजना को वैधानिक रूप से लागू करने का प्रयत्न लगातार इन वर्षों से सरकार के विचारार्थ है। मामलिकों ने जैसा कि आया भी ही इन योजना का पूर्ण रूप से विरोध किया है। कुछ मामलिकों ने इसकी विन्तुन सभाजन

कहाया है। यह तर्क दिया गया है कि इतमान समय में जबकि पूँजी तथा निवेश बाजारों में विश्वास स्थापित करने में बहुत कठिनाई है उस प्रकार न प्रयोग तो विशेषतया जोखिमपूर्ण हैं। यह भी कहा गया है कि धमियों को पुराने और अनुभव विद्वत् उत्पादन योजना की पद्धति से कहीं अधिक लाभ हो सकता है और लाभ सह भाजन के इस नये प्रयोग से जो इतना घस्पष्ट है, न धमियों को और न ही पूँजी को लाभ होया।

परन्तु क्योंकि लाभ सहभाजन योजना को लागू नहीं किया गया है अतः इस नये प्रस्ताव की उपयुक्तता प्रथम व्यावहारिकता पर कोई धर्मिय निर्णय नहीं दिया जा सकता। धर्म दैर्घ्य में भी लाभ सहभाजन सम्बन्धी प्रयोग असाहसिक विद्वत् नहीं हुए हैं वरन् इससे मासिकों और धमियों में अविश्वास पैदा हो गया है। हमारे विश्वास में नारतवर्ष में वर्तमान परिस्थितियों में लाभ सहभाजन योजना को लागू करना उचित हो होगा। देश और धौद्योगिक क्षमता से पीड़ित है और उद्योग में क्षति स्थापित करने की अत्यन्त क्षमता है। यह सब ही हो सकता है जब धमिय नरमकर्मा (Entrepreneur) पूँजीपति के साथ ही बराबर का भागी हो। इसलिए ऐसा प्रयोग प्रचलित करना चाहिए क्योंकि प्रयोग और श्रमियों के आधार पर ही लाभ सहभाजन तथा अधिक सह-भागेदारी का ऐसा व्यावहारिक सिद्धान्त बनाया जा सकता है जिससे राष्ट्रीय सृष्टि में वृद्धि हो। यह स्वीकार करना पड़ेगा कि उद्योगपति धर्मियित समय तक धमियों का धोपण नहीं कर सकते। जब समय आ गया है जबकि उन्हें उद्योग में लगे अपने निर्यन साधियों को अपनी आय का कुछ भाग स्वेच्छा से देना चाहिए। यदि वह इच्छा से ऐसा नहीं करते हैं, तब सामाजिक उत्तरिनी उनको पूर्ण भाग देने के लिए बाध्य कर सकती हैं। देश परिवर्तन कास से जुबर रहा है तथा पञ्चवर्षीय आयोजनायें देश में लागू हैं। अधिक और अधिक उत्पादन वर्तमान युग की अवधि बड़ी मांग है। हमें अधिक उत्पादन के द्वित में धमियों को संशुष्ट रखना पड़ेगा। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हमें अच्छा और कोई मार्ग नहीं हो सकता कि धमियों को भी उद्योग के लाभ में सामीप्यर बना दिया जाये।

औद्योगिक श्रमिकों की ऋण-श्रस्तता

(Indebtedness of Industrial Workers)

भारत के औद्योगिक श्रमिकों के विशेषकर कारखानों में कार्यरत श्रमिकों के अधिक जीवन का एक विशेष संसर्ग यह है कि वह अधिकतर ऋण से ही ऋण प्रस्त होते हैं, ऋण में ही रहते हैं तथा ऋण में ही मरते हैं। रॉयल कमिशन ऑफ इंडस्ट्रियल श्रमिकों के निम्न जीवन-स्तर के उत्तरदायी कारखानों में श्रमिकों की उच्च स्थिति का प्राप्ति चाहिए।" प्रायोग का यह भी कथन है कि "अधिकांश श्रमिक तो वास्तव में ही गरीब होते हैं। इन बातों से हृदय में दुःख भी होता है और प्रयत्न मात्र ही प्राप्ति है कि प्रत्येक पुत्र वापारखाने अपने पिता के ऋण का उत्तरदायित्व न लेता। यह एक ऐसा उत्तरदायित्व होता है जो कानूनी प्रायश्चित्तों की अपेक्षा श्रमिक एवं सामाजिक कारणों पर अधिक आधारित है।" १ "अतः प्रायोग के अनुसार औद्योगिक श्रमिकों की एक बड़ी संख्या अपने श्रमिक जीवन के अधिकांश समय में ऋण प्रस्त ही रहती है।

ऋण प्रस्तता की व्यापकता — (Extent of Indebtedness)

यह अनुमान लगाया गया है कि अधिकतर औद्योगिक क्षेत्रों में कम से कम दो तिहाई श्रमिक ऋण-ग्रस्त हैं और ऋण की राशि तीन माह के वेतन से भी अधिक है। यद्यपि इस सूचना को अधिक विश्वसनीय नहीं कहा जा सकता क्योंकि प्रायोगिक श्रमिकों को श्रमिक अपनी प्रायोगिक स्थिति बताने में लकोच करता है फिर भी इस ही की कुछ प्रायोगिकों द्वारा श्रमिक वर्ग की ऋण-प्रस्तता की व्यापकता ज्ञात होती है। २ श्रमिकों को भी कई बार प्रायोगिक ऋण की व्यापकता का पूर्ण ज्ञान नहीं होता। इसके अतिरिक्त रॉयल कमिशन तथा सन् १९४६ की कमिशन ऑफ इंडस्ट्रियल श्रमिकों के प्रश्न पर विस्तारपूर्वक विचार किया जा। ऋण के विषय में होने वाले ऐसी रिपोर्टों द्वारा भी प्रायोगिकों को ज्ञान होता है जो रिपोर्टों में प्रायोगिक श्रमिकों की हैं जो कि सन् १९४१-४२ में भारत सरकार की "निर्वाह एवं मूल्यांकन" को संसार करने की योजना के अन्तर्गत की गई थीं। इस विषय पर भारतीय श्रम शक्ति पुस्तिका १९४७-४८ (Indian Labour Year Book, 1947-48) के पृष्ठ १६३ पर दिए गए प्रायोगिकों के निम्नलिखित आंकड़ों में उद्धृत है —

1 Report of the Royal Commission on Labour P 274.

2 Labour Bulletin (U P) June 1955 Report by Dr Vidya Dhar Agarwal.

औद्योगिक धमिका में अग्र प्रस्तता

१	२	३	४	५
क्षेत्र	सर्वोच्च परिवारों की संख्या	अग्र-प्रस्त परिवारों की संख्या	अग्र प्रस्त परिवारों का प्रतिशत मान	अग्र-प्रस्त परिवारों का प्रति परिवार औसत अग्र
१ महाराष्ट्र				१० घात पाई
(क) महाराष्ट्र	१०१०	११०६	६४१	१२१ १४ ७
(ख) जलवाँस	१११	७४	६७	२७ ० ०
(ग) पोलापुर	७७८	६६७	८२७	घातके नहीं मिले
२ पश्चिमी बंगाल				
(क) कसकता	२७०७	११४	४१२	११७ ६ १
(ख) हाबड़ा व बाली	१४३३	१००८	७०२	घातके नहीं मिले
३ बिहार				
(क) देहली और लोन	२११	१२६	४८०	११७ ० ०
(ख) जमशेदपुर	६६१	४१०	६२२	२१४ ११ ८
(ग) भद्रिया	६६६	४३	२२३	२८ ८ ६
(घ) मुंजूर व जमानपुर	१७८	४७६	७१७	२०३ १० ७
४ छत्तस				
(क) मोहारी	२४१	३२	१६३	१६७ १ ४
(ख) तिमनूरिया	१८३	२२	११६	७० ० ०
५ मध्य प्रदेश व उत्तर				
(क) मकोना	६१३	२१८	८१६	६६ ११ १
६ पूर्वी पंजाब				
(क) मुपियाला	२११	६६	३२४	११० ८ ४
७ उत्तरा				
(क) बहरामपुर	१११	७३	३६४	१६१ १२ ११
(ख) कटक	१६८	३२	३१०	१६६ ० ०
८ आंध्र				
१ आंध्र				
(क) मडाल	२७६	१६८	७७३	७६ ० ०
(ख) कोपीन	२०	१७	८४८	३१ ० ०
२ कोपी				
(क) मडाल व मुंजूर	१२२	८७	७१३	घातके नहीं मिले
(ख) कोपीन	१२	१२	१०००	७६ ७ ८
३ तम्र				
(क) मडाल व मुंजूर	११	१४	६१३	४८ ३ ३
(ख) कोपीन	११	११	७१३	४४ १६ १

मिन्न मिन्न औद्योगिक क्षेत्रों में श्रम प्रस्तुता —

यम अनुसंधान समिति ने मिन्न-मिन्न कर्मों तथा मिन्न-मिन्न उद्योगों में श्रम प्रस्तुता की व्यापकता पर एक विस्तृत रिपोर्ट की थी। बम्बई शहर में श्रम की मात्रा १०६० से ७००६ तक है। यहमशाबाद में २७% श्रमिक परिवार श्रम प्रस्तुत से और प्रीसत श्रम प्रति परिवार २६६२०६० था। गोतापुर में प्रीसत श्रम प्रति परिवार २३४६० था। नाकपुर में प्रांतीय सरकार द्वारा १९६१-४२ में की गई जांच से ज्ञात हुआ कि ८२% से अधिक परिवार श्रम-प्रस्तुत से और कुल प्रीसत श्रम ११९६० था जो कि प्रीसत मासिक आय का शीघ्रता था। यममेर ही जहाँ कि अधिकतर जनसंख्या रेलवे उद्योग में कार्यरत है। माउन्टबे में एक ऐसा क्षेत्र था जहाँ श्रम प्रस्तुत परिवारों की प्रतिगत संख्या सबसे कम थी। पारिवारिक बजट जांच के अनुसार वहाँ केवल ८७० प्रतिगत परिवार श्रम-प्रस्तुत से और प्रीसत श्रम प्रति परिवार लगभग २७१६ था। मद्रास में सन् १९३५ की पारिवारिक बजट जांच से ज्ञात हुआ है कि ९०% परिवार श्रम-प्रस्तुत से और प्रीसत श्रम प्रति परिवार लगभग २६२६० था। मिर्जापुर में कमीन उद्योग में ७०% श्रमिक श्रम-प्रस्तुत पाए गए और प्रीसत श्रम प्रति श्रमिक लगभग ११४६० था। यीनवर के कालीन कुलने के प्रथम में ८२% श्रमिक तथा समूहतर में ६०% से अधिक श्रमिक श्रम-प्रस्तुत पाए गए। कलकत्ता कानपुर व मद्रास के श्रम उद्योग व यमका रंगने के उद्योगों में श्रम प्रस्तुत श्रमिकों की प्रतिगत संख्या क्रमशः १०६९३ तथा ६६४ थी। विभिन्न शराबों के छानेखानों में श्रम प्रस्तुत श्रमिकों की प्रतिगत संख्या देहली और रसाहाबाद में क्रमशः ११३ और ८०२ पाई गई। बम्बई के छोटी उद्योगों में प्रत्येक श्रमिक श्रम प्रस्तुत पाया गया और श्रम प्रस्तुता की प्रीसत प्रति ३००६० पाई गई। बीबी उद्योग में श्रम प्रस्तुत श्रमिकों की प्रतिगत संख्या मरठ, मोरखपुर, व मद्रास में क्रमशः ७८५, ८० व ७४ प्रतिगत थी तथा प्रीसत श्रम प्रति श्रमिक क्रमशः ३९०६०, १९१७ व १४१६ था। अनुसंधान समिति द्वारा इसी प्रकार यमका उद्योग यमका मिलों यमका यमका की मिलों मिन्न मिन्न यमका ट्रामवेज व यमका सेवाओं में श्रम प्रस्तुता अधिक पाई गई है। कुछ प्रांतों में औद्योगिक श्रमिकों की पारिवारिक बजट जांच द्वारा भी अधिक श्रम प्रस्तुता का पाया जाता है।

बानपुर में डा. धनिहात्री द्वारा की गई जांच के आधार पर जो तिहाई श्रमिक परिवार श्रम प्रस्तुत हैं जिनका प्रीसत श्रम प्रति परिवार ११३८७६० है और निषेधात्मक (Prohibitory) कानून के होने हुए भी व्याज की दर अधिक है। व्याज की दर १९ व ३०% प्रतिवर्ष तक है। यमका महाजनो की यमका यमका महाजनो न मे ली है जो कि यमका व्याज की दरें कम करती हैं। उपार देने वाली यमका यमका यमका द्वारा लिए गए श्रमों का प्रतिगत मात्र इस प्रकार है — विष तथा यमका—४०.०% यमका तथा महाजन—३८.७% लहू कारी यमका—३.०% यमका एवं यमका—२.१% यमका यमका—३.३%

बंबाई—४६% मध्य २६% । विभिन्न बहु रूपों के लिए अणु का प्रतिगत मान इस प्रकार है—रहन-महन रथ—४२ १ सामाजिक उत्पन्न—३३० बोमारी—१४४ सम्पत्ति-मध्य २६ तथा अणु की प्रदायगी—४६ ।

अणुप्रस्तता के कारण

घोषोदिक धमिकों की अणुप्रस्तता का अत्यंत विचित्र वनकी गिरी हुई प्रादिक घबरावा की दुखपूर्ण कहानी है—इस अत्यधिक अणुप्रस्तता के घने वन कारण है । अधिकांश पुरुष अपने पिता के अणु को वैतृक सम्पत्ति के रूप में ग्रहण करता है । परन्तु अणुप्रस्तता का सबसे प्रमुख कारण समय-समय पर विवाहोत्सव मृत्यु संस्कार, वर्षे तथा वार्षिक उत्सव प्रादि हैं । धमिकों की प्रवासिता भी उनकी अणु प्रस्तता का एक महत्वपूर्ण कारण है । जब कोई प्रामाण्य प्रथम बार बाहर में पहुंचता है तो उसके साथ एक प्रामाण्य गैरिहर की प्रवेसाहन प्रादिक सीमित होते हैं । प्रारम्भिक बृत्त के लिए व पहिले बृत्त मत्ताहों में (जिनमें कि प्रादिक उमे कोई बेतन नहीं देता) वर्षे हनु उमे किछा भी रात पर अणु लेने में सकोच नहीं होता । बट्टपा किछी बग्नक रली जाने सायक कोई बरतु न होने के कारण धमिक एक ऐसे प्रमेग पर पन के लिए हस्ताधार कर देता है (जो धन सम्भवत प्राम में उमे कभी न पिच्छा) जिसमें लिखी बातों का प्रकार उमे प्रात भी नहीं होता । फिर इन बुराई का एक घोर कारण प्रजात विपत्तियों का प्रकायक सामना करने के लिए किमी भी संशित रायि का न होना है । प्रात्य में मजदूर का बेतन-अंतर प्रात्य शून्य है घोर इस कारण बचन भी कम ही हो सकनी है । यद्वि सरकारी प्रादिकारिक बग्न सांच से बहु प्रात होता है कि धन बेतन ही अणुप्रस्तता का प्रबमान कारण नहीं है क्योंकि अधिकांश बेतन पाने जाने प्रादिक धन्य बेतन पाने बाशों में यद्वि अणुप्रस्तत है । फिर भी हय बहु बहु सकते हैं कि शून्य बेतन धमिकों की अणुप्रस्तता का एक महत्वपूर्ण कारण है । निश्चिन्ता कभी ही अणुप्रस्तता का कारण बन जाती है कभी प्रवरा परिणाम होती है घोर कभी दोनी ही है । यह मान्य है कि कण-प्रस्तता का मुख्य कारण सामाजिक रीतियों पर धमिकों द्वारा विधा गया धन्य है । इन धन्य की सापारलताया धन्यधन्य समझ जाना है परन्तु बहु स्मरण रगत प्रादिक कि धमिक सामाजिक संघटन का एक प्रग है यत इस भी बृत्त सामाजिक कार्य एक निश्चिन्त स्वर पर पूर्ण करन होते हैं । इन मामलों में धन्य प्रायः प्रकटाय होता है क्योंकि धन्य धनुर्बपाल संभित के राशों में "भारत धन्य देस में रीति-रिवाज बेबल प्रायक ही नहीं बरन् प्रायन्त निर्दोषी सामक है ।"०

यह कहा जा सकता है कि घोषोदिक धमिक की अणुप्रस्तता का एक मुख्य कारण यह है कि उनका धन्य अधिकांश घोर प्राय कम है । बृद्धोपार्थक प्रायों कीयत के कारण उमे अत्यंत बेतन मिमता है घोर इसी कारण उनकी धन्य भी

* In a country like India custom is not only a king but a part of

कम है। सवा के पालनवासी समझ न होने के कारण अशिक्षित अधिकांश मजदूरी पाने में असमर्थ रहता है। जब अधिकांश का अपने-ब-अपने परिवार को पालने के लिए पर्याप्त धन प्राप्त नहीं होता तो उनके लिए, यदि मिले तो केवल अल्प लेने का मार्ग ही गुमा रह जाता है। उनका अल्प अधिकांश होता है क्योंकि उसे सामाजिक उत्सर्गों पर व्यय करना पड़ता है और यदि ऐसे व्यय को त्याग भी जा सकता हो तो भी अधिकांश अपनी परिस्थिति के कारण नहीं त्याग पाता है। फिर सराब व पुषा भी अल्प-प्रसूता के लिए उत्तरदायी है। अधिकांश को परिवार में बीमारी बेरोजगारी बरबाद-स्तमी हड़ताल धनबातासाक्षरी के समय में भी अल्प लेना पड़ता है। सामाजिक उत्सर्गों पर विद्यार्थी विद्यालयों पर व्यय अल्पप्रसूता का प्रमुख कारण पाया गया है और अल्पप्रसूता में सामाजिक उत्सर्गों पर व्यय का अनुपात जमशेदपुर में ३२.८% विहार की कोयला खानों में ३८.२% तथा कानपुर में ३३% पाया गया है। विभिन्न स्त्रियों में विवाह के कारण लिए गए अल्प का प्रतिशत मात्र ३० व ४० प्रतिशत के बीच है।

अल्पप्रसूता का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि अधिकांश को अल्प प्रसूता से मिल जाता है। अधिकांश को नगर में महाजन द्वारा जो कि अधिकांश मारवाड़ी पठान अथवा पंजाबी होता है अल्प आसानी से मिल जाता है। बहुधा यह भी देखा गया है कि किसी अथवा मध्यम भी अल्प देने का बन्धा करते हैं। अधिकांश क्षेत्रों में परचुनिए भी अल्प देते हैं और अल्प जिस अथवा सामग्री के रूप में भी दिया जाता है। दुर्भाग्यवश उपार पर मोजन एवं महिर भी देते हैं। बाराक में यह देखा गया है कि कोई भी व्यक्ति, जिसके पास अधिक भी होती बन हा अथवा बर पर अल्प देने के विषय में सोचने लगता है। बहुधा छोटे मोटे कसके विद्यार्थी अधिकांश को विद्यार्थी, अथवा बरपाए इस प्रकार से अल्पिक व्याज की बरों पर (जो १२० से १०% तक होती है) उपार देकर अपनी धाय में वृद्धि कर लेती हैं। व्याज की बरें बहुत अथवा होती हैं क्योंकि अधिकांश के पास अपनी अमानत के परिचित कोई अमानत नहीं होती और उनकी प्रभाविता के कारण उनकी अल्प देने में बहुत योग्य भी होता है। अधिकांश अधिकांश महाजनों के अल्प में अल्प ही जाता है और कभी-कभी धान नीच मिश्रों के बहरान से भी जो बहुधा महाजन के अल्प ही होते हैं उधार धन लेने के लिए तयार हो जाता है। अधिकांश अधिकांश अधिकांश के अल्प का निदान प्रोबोट पर से लिया जाता है और इसमें योग्य की सुधारण बहुत अधिकांश होती है। यदि विभिन्न अल्प न भी हो तब भी अधिकांश में पठान महाजन की धाय को दुर्भाग्य का साहज नहीं जाता। यह पठान बहुत अथवा बरों पर व्याज अल्प करते हैं और यदि अधिकांश अल्प बुझाने में कुछ धानाधानी करे तो धार्मिक धार्मिक प्रयास करने का अल्प दिलाकर अल्प मात्र देतन का अधिकांश अल्प व्याज के रूप में ही ले लेते हैं।

श्रमप्रस्तता क दुप्परिणाम —

सरसता से बिना हुषा श्रमिक के लिए सबसे बड़ा धमिगप साबित हुषा है और इस रीति का सबसे दुनदायी बाण यह है कि एष बड़े-बड़े श्रम भी धाकानी से मिस जात है जिनको धर्मिक कमी भी चुकान की पाता नही कर सकते । उनकी परिदितता उनमें ब्यावसायिक समझ और दूरदर्शिता पैदा करने मे बाधक सिद्ध होती है और उनकी हिसाब सयाने की धममर्षणा क कारण उठ इन बात के लिए बिबाण होना पड़ता है कि महाजनो के द्वारा ही श्रम की राशि धर्मिक या कम जितनी भी बढाया जाए, उसे हरीकार कर स । धर्मिकतर महाजनो को पूरा ब्याज सगाठार नही मिलता और इसलिये इन बढाया ब्याज को भी वह मूस धन मे जोड देत है । मूस ही बचो में यह मूस श्रम बहुत बडे क स्थायी श्रम में परिवर्तित हो जाता है । बहुत बार तो महाजन बेतन मिलते का न चिन ही धर्मिक तब उनक सम्पूर्ण परिवार का कुस बेतन स सठे है और उनको कपम जीवन निर्वाह हनु धन दे दन है । बहुत से परिधमी धर्मिक काम ब्याज दन ही क लिये धान जीवन की धावरप्यताधो का धोहन पर बिबाण हो जाते है और मूस श्रम कुकान का ना उग मोटा हा नही मिस पाता । इसलिये श्रमप्रस्तता कार्य कुपसता की शृष्टि म बाधक है । श्रमप्रण धर्मिक जो कुछ धनिरिक्त प्रयत्न करते है उनका लाभ बेबम महाजन का ही जाता है और श्रमप्रण धर्मिक सदा परेधान रहता है । इस प्रसार श्रम की उरुध्वता धर्मिको के धामममान के लिये एक धमिधाव सिद्ध हु है और उनको कायकुपसता का ह्याम करती है । ०

श्रमप्रस्तता की समस्या की कुसप्ताने के उपाय —

श्रमप्रस्तता के उपरोक्त दुप्परिणामा क पतम्पण सदन धम धायोण न धनक उपाय मुमाय है । उनमे प्रमुय यह है कि धमिना की श्रम प्राप्त करन की मुबिका को कम रिया जाय और महाजन के लिये धमिका का लक्षि क बाहर श्रम दना धमम्भव बना रिया जाय । श्रमप्रस्तता का समस्या को सुपमान हनु लक्षित लक्ष केन्द्रोप सरकारो द्वारा जो वर्तमान रूपांतरि धन उगाए गए है क सदन धम धायोण की निवारणो क परिणामम्भव ही है ।

मजदूरी को कुको के विरुद्ध लिए गए पा —
(Measures against Attachment of Wages)

धायोण मे पहन मजदूरी की कुको क प्रान पर बिबाण रिया । उन पता बना कि धरि म १६ क क मरुति दन मरिना (Civil Procedure Code) के धमर्यन धमिका क पने मीररो का मजदूरा की कुको मरी हा नकती परणु कीड या मरिना के उरुध्व ठेय क कि बजन मे मरुति उदोधा क धमिक मरिना मे हो लई धमिक की रतिकारा म नही पाते थ । दन धरि रिया दन मरिना क धमर्यन मरा धमो का दन बात की पाता की कि हर कु कर्ग के धमिको क लिये (दोने देमरे

"The State is liable to make the employer to measure his economy"

कर्मचारी तथा स्थानीय शासन कर्मचारी) मामलों द्वारा ज़रूर बमूल करने में सहायता न सकते थे और वेतन कुर्की के सिव्य आजा पत्र प्राप्त कर सकते थे। कानून द्वारा महाजनों को ही गयी इस सुविधा एवं मुरदा को दूर करने के लिये धायोग ने मिफारिख की कि "प्रत्येक एम धमिक की मजदूरी जिनका वेतन २००) २० से कम हो कुर्की की सम्भावना में मुक्त कर ही जानी चाहिये।"

इस मिफारिख को कार्यान्वित करने के लिये माछीय सरकार ने सन् १९०४ में नागरिक दण्ड अधिनियम (Civil Procedure Act) को संशोधित किया। इस संशोधित अधिनियम के अन्तर्गत उन धमिकों का वेतन जिनको १००) २० प्रति मास से कम मिलता है और सरकारी कर्मचारी के वेतन के पहिले ही रुपये और छेप के आधे मात्र को कानूनी कुर्की से छूट दे दी गई है। यह अधिनियम निरन्तर कुर्की की धमिक को भी सीमित करता है और इसमें इस बात की एक धारा है कि यदि किसी धमिक का २४ माह का वेतन कुर्क कर दिया गया है तो फिर कुर्की से उसे एक वर्ष तक छूट रखी। अक्टूबर सन् १९२० के अधिमूचना द्वारा भारतीय सरकार ने निर्बाह लार्ड बोमन और अन्य प्रकार के जत्तों को भी कानूनी कुर्की से मुक्त कर दिया है।

अज्ञ हेतु कारावास के विरुद्ध उपाय —

आयाम की एक अन्य मिफारिख ज़रूर हेतु कारावास के दण्ड में सम्बन्धित थी। धायोग की रिपोर्ट देने के समय जैसा कि कानून या इसके अनुसार किसी भी ज़रूरी पुरष को २० ६ म अधिक राशि की डिक्ती (Decree) के निष्पादन (Execution) के हेतु गिरफ्तार किया जा सकता था और ६ माह का कारावास दिया जा सकता था। यदि ज़रूर की राशि कुछ कम होती थी तो ६ हफ्ते का कारावास की व्यवस्था थी। धायोग ने यह भी बताया कि सबसे इन बात की समझी ही कि ज़रूर न पदा करने पर ज़रूरी को कारावास कराया जा सकता था ज़रूरदाता के हाथ में एक अधिकाराली हथियार था यद्यपि धायोग की मूचना के अनुसार यह भी पता लगा कि व्याधामय साधारणतया कारावास का दण्ड देने के पक्ष में न थे और ज़रूरदाता भी ऐसे व्यक्ति को जिनके पास रुपया न हो कारावास दिनांक के पक्ष में न थे क्योंकि उन्हें कारावास काल में ज़रूरी के लाने पीन की व्यवस्था करनी पड़नी थी। इसलिए धायोग ने मिफारिख की कि उनके दिवार में ज़रूरियों के लिए कारावास का दण्ड न्यायोचित नहीं था और कम से कम उन औद्योगिक धमिकों के लिए जिनका मासिक वेतन १००) २० से कम हो ज़रूर के कारण पढ़े जान के नियम को तथा कारावास के दण्ड को समाप्त कर देना चाहिए जब तक कि यह न निश्चय हो जाय कि ज़रूर पदा गयी की रिश्त में होने हुए भी ज़रूर का मुपान नही कर रहा है।

पंजाब सरकार ने १९२४ में पंजाब ज़रूरदामना महायन्त्र अधिनियम (Punjab Relief of Indebtedness Act) पारित किया जिनके अन्तर्गत किसी भी ज़रूरी को उस समय तक कारावास नहीं हो सकता था जब तक कि वह अपनी किसी ऐसी बाय दार ने जो डिक्ती के निष्पादन के लिए कुर्की की जा सकती हो ज़रूर की राशि देने से

प्रहण करने की शोभा धमिकों पर भयट पड़ते हैं और हिसारामय उपायों पर निर्भर रहते हैं। उनके लिए साठे ही एक ऐसी व्यवस्था है जहाँ बंद धरियन करते हैं और बंदन बाने दिन कारखानों के फाटक पर श्रमियों के बाहर घाते ही उन पर तरकाल भयट पड़ने के लिए प्रतीक्षा करते हुए दिखाई पड़ते हैं। इसलिए साहूकारों के लोभ कायों को रोकने के लिए प्रायण न विकारियन वा नि श्रण बगुनी के लिए धीधोषिक मस्बानों को करना फीबरायी व प्रवेय (Cozizable) भपठप बना लेना चाहिए।

फिर भी भारत सरकार द्वारा इन निष्कारियन पर कोई पय नहीं उठया गया है। परन्तु बंगाल सरकार ने १९३४ में बंगाल धमिक संरक्षण अधिनियम (Bengal Workmen's Protection Act) पारित किया जिसके अनुसार यदि कोई व्यक्ति कारखानों कार्यक्षालाया आदि में कार्य करने बासीं व अपने श्रण बगुन करने की दृष्टि से उनक समीप बरकर कायता हुआ पाया जायया तो उमको जुधमि का दण्ड भपया काठकाम का पड जो कि ३ माह हु। मरुता है भबवा दोनों ही दण्ड लिए जा गयते हैं। धारम्भ में ता एक अधिनियम का दोन केवल कमवता एवं निष्कवर्ती तीन शानों तक ही सीमित था परन्तु सरकार का इन अधिनियम के शत्रु को घोर भी अधिक विस्तृत कर देने का अधिचार था। अधिनियम व उपबन्धा को अधिक स्पष्ट करन के लिए तथा स्थानीय सम्बन्धों जनोपयोनी मेबाधों व समुद्री क्यचारिधों तक विस्तार करने के लिए इन अधिनियम में १९४६ में संशोधन किया गया। मध्य प्रवेश सरकार ने भी १९३३ में मध्य प्रान्त श्रणी संरक्षण अधिनियम पारित किया जो बंगाल के अधिनियम पर ही अधिकतर आधारित था परन्तु उमका विस्तार कुछ अधिक था। मद्रास सरकार ने भी मद्रास शहर में पठन साहूकारों की निर्दयता को रोकने के लिए १९४१ में मद्रास धमिक संरक्षण अधिनियम पारित किया। १९४६ का बिहार धमिक संरक्षण अधिनियम भी धमिकों के कार्य स्थानों को भपया धमिकों की बंदन प्राप्ति भी जगहों को पर कर श्रण बगुनी की रीति को रोकने का प्रयत्न करता है और लेने अधिका को महाजनो के द्वारा लग दिय जाने भपया दण्ड उमनाए जाने से बचाता है। ऐम स्थाना पर श्रण बगुनी का दृष्टि में भय दानन पर जुमाना भबवा ६ माह के बाराकाग का दण्ड भबवा दाना ही दिय जा गयत है। उ० प्र सरकार भी इन प्रकार का विधान बनाने का विचार कर रही है।

अधिनियमों का मूल्यांकन —

श्रम अनुमदान गमिनि की रिपोर्ट में पडू जान होगा है कि धोषायिक धमिकों की श्रणदयता के विषय में सम्बन्धित अधिनियमों में बहुत अधिक माय महीं हुआ है। फिर भी अधिनियम के पर निराश्रमि की है कि इन प्रकार के ही कानून धम्य प्रवेधीय सरकारों द्वारा भी बननाए जान चाहिए। गमिनि के विचार के अनुसार इन प्रकार के अधिनियमों की स्थिति में बासी मुबार हा मानता है क्योंकि उनके बन्ध बहुत सीमा तक श्रणदयता के कारण ही है।

दान (Grants-in-aid) के रूप में वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। परन्तु यह क्षेत्र की बात है कि अभी तक अमिकों के लिए सहकारी साख्त समितियों की स्थापना की ओर उद्योग प्यान नहीं किया गया है अितना दिया जाना चाहिए। इस ओर मामिक पधरी कवम उठा सकते हैं तथा ऐसी समितियों की स्थापना एवं व्यवस्था कर सकते हैं। मामिकों द्वारा खोपम घबका प्रोविडेंट फण्ड में से सकट कास में धन देने की सुविधा भी की जा सकती है। यह धन अमिक की मजदूरी में से छोटी छोटी किस्तों में काटा जा सकता है।

इन सब बातों पर विचार करने के पश्चात यह कहा जा सकता है कि मजदूरी समानीकरण स्तुतक मजदूरी का आस्वासन माप्ताहिक अबावगी सहकारी धान्दो-सन का विस्तार सामाजिक बीमा योजनाओं अली अमिकों की सुरक्षा के लिए कानून एवं अण का अपाकरण (Liquidation) तथा निष्कमला (Redemption) इन सब की व्यवस्था करने पर ही अमिकों की आर्थिक दशा में सुधार हो सकता और तब ही अणद्वस्तता की समस्या का भी समाधान हो सकता है।

जीवन स्तर (The Standard of Living)

जीवन स्तर की परिभाषा एवं उसका अर्थ —

'जीवन स्तर' एक सर्वांगीण वाक्यांश है। इस बात की व्याख्या करना कि जीवन स्तर क्या है, बतलाना या बताना बहुत ही कठिन है क्योंकि यह व्यक्ति व्यक्ति का वर्ग-वर्ग का और देश-देश का भिन्न होता है। किसी के जीवन स्तर को मापने के लिए कोई विशेष नियम नहीं है। जीवन स्तर को निर्धारित करने वाले तन्त्र भी निर्दिष्ट नहीं हैं। अतः ऐसी रीति में किसी निर्दिष्ट परिणाम पर पहुँचना बहुत ही नहीं सुभाष्य भी है। कभी कभी यह कहने का मुता आता है कि तुमनाटक हट्ट में भारत की घोषणा संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में जीवन स्तर बहुत ऊँचा है। इस बात में सम्पूर्ण समाज के स्तर का बोध होता है। सामान्यतः जीवन स्तर किसी देश के "प्राकृतिक" पक्ष लोगों की कार्य बुद्धिमत्ता और उनका संस्कार तथा देश की औद्योगिक प्रवृत्ति पर आधारित होता है। कभी-कभी यह कहने में आता है कि किसी बुद्धि बारीगर की घोषणा शास्त्र का जीवन स्तर उच्च है और बुद्धि बारीगर का स्तर सामान्य मनुष्य के जीवन स्तर में उच्च है। इस समय में समाज में स्थित विभिन्न-विभिन्न वर्गों के जीवन स्तर का बताना सपना है और यह जीवन स्तर अधिस्तर इस बात पर निर्भर होता है कि सामाजिक आय में वे प्रत्येक वर्ग प्रतिशतित्व द्वारा अपना हिस्सा पाता है। फिर भी अब तब कि हमके विषय में विशेष रूप से कुछ कहा जाये, 'जीवन स्तर' शब्द का प्रयोग प्रायः बारी विशेष के लिए ही किया जाता है।

यद्यपि जीवन स्तर शब्द की परिभाषा करने में कई कठिनाइयों हैं तथापि जीवन स्तर को सामान्य रूप में सामूहिक किया जा सकता है। जीवन स्तर का अर्थ यह कहकर नहीं प्रचार स्थल किया जा सकता है कि जीवन स्तर एक वा सामान्य परिवार्य धारण और विभाजित की बातुओं की उम्र मात्रा में है किन्तु कि व्यक्ति उपयोग करता है। इस प्रकार आवश्यकता धारण और विभाजित सम्बन्धी सम्पूर्ण विचार स्थिति जीवन में सम्मिलित हो जाता है उक्त जीवन स्तर नियम करती है। परन्तु आवश्यकता धारण और विभाजित मातृश स्तर है और स्वयं बात तथा स्थिति के अनुसार उनमें विभक्तता बारी जाती है इसलिये व्यक्ति का सामाजिक स्तर, सामाजिक वातावरण तथा जनमानस की रीति बारी बारी उनके जीवन स्तर को बाधित करने में सक्षम पड़ती है।

इस बात में अन्तर है कि जीवन स्तर वास्तव में क्या है और क्या होता

काहिए घोर कौनमा स्तर ऐसा हो मजता है जिनमें आरामबायक घोर स्वास्म्यकर रीति में रहने के लिए सब बस्तुएं प्राप्त हो सकें; वर्तमान काम में कुछ ही लोग इस बात को धत्वीकार कर सकते हैं कि म्युत्तम जीवन स्तर औबिका निर्वाह के स्तर से स्पष्ट रूप से ऊंचा होना चाहिए। यहाँ यह बात विशेष ध्यातव्य है कि जीवन स्तर का उच्च घोर निम्न होना व्यक्ति की धारतों पर धबसम्बित होता है घोर धारतें सीध नहीं बदला करती हैं। इसी प्रकार जीवन स्तर का परिवर्तित करने में समय लगता है। फिर भी सब तो यह है कि जीवन स्तर को गिराने की धोखा बड़ी सुयमता से ऊंचा उठाया जा सकता है बशकि उच्च स्तर से धर्मिप्राय यह है कि धर्मिक से धर्मिक धावद्वकताओं की मनुष्टि की जाए। इसके धोखा कि एक मनुष्य ऐसी धावद्वकताओं को जितना कि बहु धम्यगत हो गया है कम करे उसके लिए नई नई धाव ध्यरताओं घोर नई नई रथिया को धपना मना धायान होता है।

जीवन स्तर को निर्धारित करन धासे सत्य —

कुछ तरह ऐसे भी हैं जिनके द्वारा वेग में जीवन स्तर निर्धारित होता है। मनुष्य के ध्यवित्तत्व के विधान में उसके धाताकरण का बड़ा प्रभाव पड़ता है। जो धाबमाण उमक वर्ष में होती है बही उमम धा जाती है। धर्व के प्रभाव के ध्यतिरिक्त जीवन स्तर निर्धारित करने में धक्ति की धाय का भी बड़ा महत्वपूर्ण योग है। सब धक्ति उमकी ह्यध्याओं की माभा घोर मुक्तों को निरिधन करती है। इन प्रकार जीवन स्तर धाय द्वारा निर्धारित होता है। माधंस के धम्यो में "गणमता के मोधान पर ध्यक्ति जिनना ही ऊंचा बड़ता है उनना ह्यध्यायोग उठना ही विस्तृत घोर ध्यापक होता है। जितना बहु देनने की बय्या करता है उममें उठनी ही बू दने की प्रभृति की बूढि होती है।" दूसरा तत्व है—सम्यता की प्रपति। सम्यता का ध्यो धनी विधान होता है घोर ध्यक्ति धपने उममोक की धधिक से धधिक बस्तुएं प्राप्त करता है उनकी धिन्ताएं भी बड़ती जाती हैं। परन्तु उममें जीवन स्तर का उठवान भी होता है, बाहे उममें धनियधिनता के सधनन भी ही ह्यध्यायोग ह्यो। उममें मनुष्य की ध्यक्तिगत धिसिधताएं उमकी धारतों गिता घोर ह्यध्यायोग तथा उमके धन ध्यय करने का ह्ये धारि को भी मम्मिधित बन मना उधिन है। मनुष्य की धाय धधिक भी हो गतनी है। परन्तु धदि उममें घृही धारतें पड़ जाती हैं घोर बहु धपना धन ध्यर्ष ही मय्य करता है तो उनके जीवन स्तर में जिनो प्रकार भी प्रपति नहीं हो सकती। धिनध्यवी ध्यतिध जीवन के धाराम घोर मुनिध्याओं पर धधिक ध्यय नहीं करना। परिणाम यह हाता है कि उनका जीवन स्तर धोखाधुन ऊंचा नहीं हो पाता।

जीवन के जनि ह्यध्यायोग का—धर्मान जिनो मनुष्य का धौतिक उममि में निरधान है या ध्यध्यामिध उममि में—भी जीवन स्तर पर बड़ा बह्यधुन प्रभाव पड़ता है। बहून में मनुष्य माग जीवन तथा उच्च निधार के धनुधावी है घोर धधनि मुनिध्यान उममर बनने को उनकी धिधि भी होती है तब भी बहून में जीवन के

मानवों से वे अपने धाय को बँचित रखते हैं। डाक्टर मागस के शब्दों में "जीवन स्तर को उठाने के लिए यह आवश्यक है कि बुद्धिमत्ता कम और धारम-अम्मान में बुद्धि हो क्योंकि इन्हीं बातों में व्यय करने में मनुष्य उचित निर्णय और यत्न कर सकता है और ऐसे ज्ञान प्राप्त करने में दूर रह सकता है जिससे भ्रम की वृद्धि तो हो जाती है लेकिन कोई व्यक्ति प्राप्त नहीं होती। बड़ उम्र वालों में भी दूर रह सकता है जो पारिरीक और वैज्ञानिक दृष्टि में बुरी है।" इसके प्रतिरिक्त रीति-रिवाज और ईमान की भी जीवन स्तर पर बड़ी प्रभावशाली प्रतिश्रया होती है। क्या चाहिए, क्या नहीं चाहिए—इस प्रकार की स्थिति की आवश्यकताएँ मनुष्य के जीवन स्थिति करने के उम्र बंध पर निर्भर करती हैं जिसमें कि बड़ समाज में प्रचलित रीति रिवाजों और ईमान के अनुसार अपने धायको ज्ञान मत्ता है। यदि डाक्टर और दूकानदार को एक ही धाय भी हो तब भी उनके रहन-सहन का स्तर बिम्ब ही होगा। डाक्टर अपनी बचत सूया घण्टी बनाकर खेगा मुन्बर और स्वच्छ महान में अपने रहने की व्यवस्था करेगा स्वास्थ्यकर भोजन खाएँ पर अधिक धन व्यय करेगा जबकि दूकानदार अपने धायिक में अधिक समय धन और धर्म को अपने व्यापार सम्बन्धी कार्यों के प्रसार में लगाएगा बड़े बचत पत्रन कर और सभी सभी मामूली खाना खाकर साधारण जीवन स्थिति करेगा। सभी जानते हैं कि दूकानदार धर्म के लोभ जिनका भारत में एक विषय बनें होगा है महान बनवान और विवाहादि के अवसरों पर समाधारण रूप में व्यय करते हैं, धर्मशा बड़ मात्रा जीवन ही स्थिति करते हैं।

हिन्दी देस की सामाजिक और धार्मिक संस्थाओं का भी धायिक कार्यों और जीवन स्तर पर महत्त्व प्रभाव पड़ता है। उदाहरणार्थ जति-जाति प्रथा में भारत में जनता के एक विशेष वर्ग को निम्न स्तर की कोटि में पढ़ाया गया है और उनकी धाय चाहे कुछ भी हो वह बढ़ना भी नहीं की जा सकती कि हिन्दी मेहनत क पर में मोरामेण या रेडियो भी हो सकता है। सामाजिक प्रथाएँ, जैसे विवाह जन्म मरण के समय धर्मोपनिषद् गतराज धादि पर धार्मिक व्यय धादि मनुष्य की धाय का एक बहुत बड़ा घटक मं लती है और इसमें उमरा जीवन निम्न कोटि की स्थिति में जा जाता है। म दुकान बरिबार प्रणामी भी मनुष्य की धाय को धर्म मनुष्यों में शिथिल कर देती है। इसमें काम-विवाह और जन्ममृत्यु म बलि को प्रोत्साहन मिलता है और इस प्रकार जीवन स्तर नीचा होना जाता जाता है। इस प्रकार यह बात भी कि बरि बार में बिनने मरान्य है या बिनने धाधिन है जिनका एक स्थिति को धामन-बोधन करता है जीवन स्तर पर प्रभाव डालती है। इसके प्रतिरिक्त बीमारी और निर्जन्म गर्भ का भी रहन-सहन के स्तर पर बड़ा प्रभाव पड़ता है क्योंकि यह बच्चों कुमवामक रूप में मनुष्य की धमन बजबूरी और नवर बजबूरी में बर डाम देती है।

इस प्रकार, ऐसे घनेज लभ है जिनको हिन्दी देस के या हिन्दी भी बम या

समुदाय से सांबन्धित लोगों के जीवन स्तर की समझा की बिबरना करने समय ध्यान में रखा पड़ता है।

जीवन स्तर किस प्रकार मात होता है —

जीवन स्तर को मात करने की एक बिबरपरिच्छत बिधि है—घाय घीर स्वय की मर्कों का समुचित मात प्राप्त करना। इसका धनिस्राय है—परिवार बजट निर्मास घीर उसके बिस्तेपण की बिधि को धपना मना। इस धाकार पर कोई भी ध्यक्ति बड़ी धाछानी से यह निर्णय कर सकता है कि कितनी धाबसधर्याओं धाठम घीर बिगामितापूर्ण बस्तुओं का कोई समुप्य उपभोग कर रहा है। इससे बिस्तेपण के उपरान्ठ जीवन स्तर उच्छ कोटि का है वा निम्न कोटि का यह ज्ञात पिया जा सकता है। इसलिय हम पहले माण्ठीय धीधोगिक धमिकों के परिवार बजटों का धध्ययन करते।

परिवार बजट सम्बन्धी पूछताछ (Family Budget Enquiries) —

धीधोगिक धमिकों म सम्बन्धित कुछ परिवार बजट सम्बन्धी पूछताछ मन् १९२१-२२ में बम्बई में की गई थी। परन्तु इससे भी अधिक ध्यापक धांकड़े उस परिवार बजट पूछताछ के परिणामस्वरुप मिलते हैं। वो भारतीय सरकार ने मन् १९४३-४५ में निर्बाह-दर्शन-सूचकांक बनाने की धोजना के धनगत की थी। २० केन्द्रों में ध्यापक परिवार बजटों के बारे में माधूम किया गया था। इनमें साजम २७००० बजट एकलित निग गण घीर उनका बिस्लेषण किया गया। मन् २० केन्द्रों में से ६ धब पाकिठान में धने पाए हैं और माजम में २२ केन्द्रों में म २० की रिपोर्टे प्रकासित की जा चुकी है। इसी प्रकार की पूछताछ मन् १९९० में धमम बंगाल घीर बधिम माठ के जुने हुग बापान में भी की गई थी घीर इस पूछताछ पर धाधारित रिपोर्ट भी प्रकासित कर दी मई है। मन् १९४५ में भारत सरकार के धारिक मन्त्रालय के धारणिय ने भी केण्ठीय सरकार के मध्य धम के धर्मधारियों के धारि धारिक बजटों की पूछताछ की थी। इसका उद्देश्य यह था कि इस पूछताछ के धाधार पर निर्बाह दर्शन-सूचकांक बनाए जाएं। इसकी रिपोर्ट भी प्रकासित कर दी गयी है। भारतीय गन्धिरी गन्धान बम्बई ने भी बम्बई नगर के मध्यम धरणी के धरिधारियों के सम्बन्धित स्वास्थ्य घीर धाधार तर्बेणग पर धपनी रिपोर्ट प्रकासित की है। १९९० के म्जलम मन्त्राली धरिधियम को सागू करने समय भी धनेरु प्रदेसीय सरकारों और धमिक ध्युरो म कुछ महत्त्वपूर्ण धीधोगिक केन्द्रों में धारिधारिक बजट सम्बन्धी पूछताछ धारम्भ कर दी है। घीर कुछ के परिणाम प्रकासित भी निग पा चुके हैं। इस प्रकार की पूछताछ धमिक ध्युरो के निर्देगक ने मन् १९४६ घीर १९२० में धाणन में भी की थी। धाट में धमिक ध्युरो ने ध्याधर धाणन गपना धुपे घीर बिस्व धरेग धारि म भी परिवार बजट सम्बन्धी पूछताछ की। निगुठ क धाध धपान में धाय करने धाने धर्मधारियों के लिए म्जलम मन्त्राली निर्धारित करने के हेतु सन् १९२९ में पाणिगारिध धजट सम्बन्धी एक धाध की गई।

रा० बी० धर्मिहोत्री ने सन् १९३० में बानपुर के १०० धर्मिक परिवारों में पारिवारिक बजट पुरदाय की थी। धार्योजना धार्योम की अनुसन्धान कार्य समिति ने भी परिवार बजट पुरदाय के सम्बन्ध में कई योजनाओं की रबीरूति दी है। १९३९ में बम्बई सरकार ने ८ पारिवारिक सर्वेक्षण विधे और औद्योगिक धर्मियों के परिवार बजटों की भी पुरदाय की। मगधोर में औद्योगिक धर्मियों के ८० परिवार बजटों की मसूर सरकार ने पुरदाय की है। बाघ में ६ बजटों में इस प्रकार की पुरदाय की गई है। और पश्चिमी बंगाल के बांगाल में भी परिवार बजट पुरदाय की गई है। गिनम्बर सन् १९३८ में भारत सरकार ने पंकिट्टन। गाना और बांगाल के ३० बजटों में धर्मियों के परिवारों के रहत-महत का सर्वेक्षण आरम्भ किया है। इस सर्वेक्षण का उद्देश्य विभिन्न वेगों पर और गाने भारतवर्ष के लिए समान रूप में लगे धार्ये प्राप्त करना है जिनके आधार पर धर्मियों के उद्योगों में सुधार के लिए योजना जा सके और धर्मियों के जीवन स्तर का अध्ययन भी हो सके। ऐसा सर्वेक्षण करने समय धर्मियों के कृषि परिवारों को छोड़ कर-परिवार का आधार धार्य उपयोग विभिन्न सर्वे करम्भय जम्भ मरण बीमारि मिस्रा बुद्धि तबनीकी मिस्रा और इन्धियात बार्स करने की द्वाारा महारतों की मिस्रि मय मिस्रात के मुख्य उद्योगों का ज्ञान परि मर्षित और देवता धारि में मर्षा जल धारसा को मसून के तीर पर भी लखित किया गया है। जो धार्ये एखति हुए हैं उतरी जाय पूरी हो चुकी है। मार्यिजों तथा मिसोटों को धर्मि मय मिस्रा जा रहा है। ये सर्वेक्षण द्वाामी बनों में धर्मियों की धार्यिक मसम्भारों को हन करत में बने मसापक मिस्र होंगे। कृषि धर्मियों के सम्बन्ध में जो बाध की गई है उतमे कृषि धर्मियों की धार्यिक मिस्रि के विषय में बरी मसम्भार मूखना प्राप्त हुई हैं। (कृषि धर्मियों का अध्ययन देखें)।

पुरदाय के समय उत्पन्न होने वाली कठिनाइयाँ —

सर्वेक्षण और पुरदाय में देग के औद्योगिक धर्मियों के जीवन स्तर मसुदी मसाध धार्ये प्राप्त हो जाने हैं परन्तु धार्ये केर और धार्येक उदाय में बार्स और मखुरी की द्वाओं में धार्ये होने के कारण धार्ये में औद्योगिक धर्मियों के मसम्भार स्तर और निर्वाह-मय के विषय में पूर्ण रूप में परिचय प्राप्त करना सम्भव नहीं है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि पारिवारिक बजटों को तैयार करना बार्स करत बार्स नहीं है। भारतीय जनता अधिभार धर्मि मय है और परिमसक पूरा रूप धार्ये का उत्तर दीर दीर नहीं दे पाती। कर्मि मसम्भारों को लगे-लगे मसम सोधमस धार्ये मिस्रात धार्ये मसक बुराकर पुरदाय कीरु, विमय विर्यी धार्ये के मसम का मसाध कककने की मसम्भारता में रह। धर्मियों के मसम इस प्रकार पुरदाय कीरु कि उतमे बुग भी न लगे और मसम ही उतमे मिस्रात की धार्यता भी जाहूत हो। कभी-कभी तो वे धार्यी धर्मि मय के कारण मसम म मसम धार्ये का भी उत्तर नहीं दे सके बार्स उतरे धार्यी मसम धार्ये के कारण म लगे मिस्रात ही द्वाया है और न मिस्रात मसका। धार्येका परिवार बजट मसका की पुरदाय गोष-विचार कर करती धार्ये।

पारिवारिक बजटों के अध्ययन करने में सर्वप्रथम परिवार का आकार धर्मोत्तरसर्वों की संख्या जानना आवश्यक है। यह भी देखा जाता है कि कितने सदस्य कमाने वाले हैं और कितने धारित हैं। भारत में यह प्रश्न बड़ा पैनीबा है क्योंकि सब बात तो यह है कि परिवार में सबसे पति पत्नी और अधिकाधिक बच्चे ही नहीं परन्तु निकटतम सम्बन्धियों के परिवार भी सम्मिलित होते हैं। दूसरी बात यह है कि परिवार की आय जिसका तात्पर्य धर्मिक की मजदूरी और धर्मिकी से है स्थान स्थान पर और उद्योग-उद्योग में भिन्न होती है। इसके अतिरिक्त पारिवारिक बजट में धर्म की विभिन्न मरों का विभिन्न-विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत उल्लेख किया जाना चाहिए।

पूछताछ के निष्कर्ष —

सन् १९४१-४४ में की गई परिवार बजट सम्बन्धी पूछताछ के जो परिणाम प्रकाशित हुए हैं उनमें धर्मिकों के जीवन-स्तर का ज्ञान होता है। इनके बाद जो पूछताछ हुई है उनमें भी हमें औद्योगिक धर्मिकों के निम्न जीवन स्तर का पता चलता है। यह भी ज्ञात हुआ है कि धर्मिक परिवारों का औसत आकार दिल्ली में ३.५० का और मुंबई और जयपुर में ६.०० तक था। अनुसूचित जातियों की संख्या आसमेर में ०.०३ थी और जयपुर में २.९४ तक थी। परिवार में कमाने वालों की औसत संख्या प्रति परिवार के सदस्यों की तुलना में धर्मिक नहीं थी। साधारणतः कमाने वालों की संख्या कुल सदस्यों की संख्या से घाटी जाती थी। प्रत्येक परिवार की औसत आय विभिन्न क्षेत्रों में लगभग २० रु० से लेकर १२० रु० तक पाई गई। विभिन्न-विभिन्न भागों में भी प्रत्येक परिवार की औसत वार्षिक संख्या घमम में लगभग ४.१२ और महाम में ३.०० थी। इनकी आय भी ५ रु० से लेकर १३ रु० प्रति सप्ताह तक जाती थी।

धर्म की विभिन्न मरों —

पनेर पूछताछ में जो धर्म की मरें मासूम हुई हैं उनमें पता चलता है कि आय का ६ % से लेकर ३०% तक भाग बेहम मोहन पर धर्म हो जाता है। इसका धर्मिण्य यह हुआ कि धर्मिक वर्ग के परिवार बजट में कुल धर्म का धर्म के धर्मिक धर्म मोहन-मासमी पर हो जाता है। ऐशियन के मुद्रित-विद्वान्त के अनुसार इन ऊंची प्रतिष्ठत दर से यह पता चलता है कि औद्योगिक धर्मिक वर्ग के धर्म का स्तर बहुत निम्न है।

धर्मिकों के आर्थिक जीवन करने से ज्ञात होता है कि उनका जीवन में कुछ और माता बेटों ही की बहुत बनी है। कम्बई एक कार्यालय में तो एक बार धर्म निराय निवासों का कि औद्योगिक धर्मिक जा भी धर्म माता से यह धर्मिक मरिणा में लिए हुए धर्म के बगल तो ज्ञाना या परन्तु कम्बई कारागार धर्म में जो धर्मिक की माता निराय की गई है ज्ञान यह धर्म रूप ही होगा या। अन्तर्राष्ट्रीय धर्म कालर कपरा धर्म मरिणा हा० रागातमन मुन्नी धर्म रागातम धर्मक रागातम मुन्नी

घाटि में भी भारतीय छाहार स्तर की समस्याओं का अध्ययन करने पर यह ही निष्पत्ति निकाला कि भारतीय धमियों का छाहार पर्याप्त मात्रा में प्राप्त नहीं होता है और इसमें कैमोरीज की मात्रा बहुत कम होती है। टास्टर मुक्जों के अनुसार धमिया का छाहार में कैमोरीज की मात्रा अधिकतर प्रमात्र घोर हाथों में ही मिलती है पर्याप्त मात्रा में ७३% कार्बोहाइड्रेट्स में प्राप्त होता है। घोर जिन्गी कैमोरीज खासि, उनमें से मुक्तिफल में १०% प्रोटीन में प्राप्त होती है। प्रतिदिन घोजन ३००० कैमोरीज की आवश्यकता होती है परन्तु भारत में अधिकतर धमियों के छाहार में यह मात्रा नहीं पायी जाती। इस प्रकार अधिकतर धमियों को पर्याप्त मात्रा में मिलना घोर बहु धनेक सामानियों के सरसता में सिद्ध हो जाता है। छाहार में कमी इस बात में भी स्पष्ट हो जाती है कि एक घोर ताब प्रमात्र का धमियिक उपभोग करने है घोर दूसरी घोर मांस माछी घोर दूध घाटि पदार्थों का बहुत ही कम सेवन करते हैं। साधारण मात्रा में अनुपातिक रूप से सभी आवश्यक तत्वों का समान होना चाहिए घोर छाहार अनुचित होता चाहिए। धमियिक भोजन का घोर घोर मस्तिष्क पर बुरा प्रभाव पड़ता है घोर वायु-दाबता में भी कमी हो जाती है।

भोजन के बाद दूध का सेवन आवश्यकता बंधे का है। कठ घोर दूध पर प्रति दिन ब्यय विभिन्न तत्वों में ३ में १८ तक घाता है। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि धमिक बंधों पर विद्युत्त ध्यान बनी दे पा। भारत की जनबाधु की दशाओं के अनुसार भी अनुपातिक रूप में बंधों पर ब्यय इतना अधिक नहीं है जिन्ना योरोपीय देशों में होता है। यहा पुण्य करने घोर के निश्चये मात्रा में बानी मुषो तथा पायत्रामा पहिन्त है घोर निश्चये वेगोराल या माछी जिन्ने उनका महत्त्व घोरि इक जाता है। घोर के ऊपरी भाग में निम्न घोर बनिवाण बमीज, काला या बंधी घोर बाहर घाटि बंधा का प्रवाण करत है घोर निश्चये बोपी या घाटि पहिन्तो है। बहुत स घुण तदियों को छारकर घण मात्रा में घाने घोरि के ऊपरी भाग पर कोई बंधा नहीं पहिन्त। घोरों में अधिकतर दूध का संशुद्ध बनने है परन्तु फिर भी बहुत स घुण घोर निश्चये मधे घोरों ही घुण है। ऊ की मात्रा बान बंध के लोड बंधों घोर दूधों पर धमिक ब्यय करते है। उनके ब्यय की प्रतिघात इन बंधों पर प्रभाव तक नी ही रहती है बंधाति उन् एक अनुभव जीवन बनाने लगता पड़ता है। परन्तु निम्न मात्रा बंधों के लोडों का प्रतिघात ब्यय परभाव इन बंधों पर धमिक हो जाती है। यो० राधाकमल मुक्जों के अनुसार बंधों की अनुभव आवश्यकता प्रति अनुभव प्रति बंध ४३ तक बनी जा सकती है।

बन्धन के सिद्धांत पर धमिक या पन ब्यय करत है उनकी प्रतिघात महत्त्व ४ में ६ घाती है घोर बमी-बमी बंध बंध घाती १ तक भी हो जाती है। मन्धनों की दशाओं का पूर्ण विवरण एक पुस्तक ध्याय में दिया जा चुका है जिन्ने दना

पसता है कि हमारे औद्योगिक धमिब बहुत हो राष्ट्रीय बचा में घोर मन्वे स्थानों में रहते हैं।

धूम की एक घोर मर ईधन घोर प्रकाश की है। भारतीय धमिब भोजन पचाने के लिए सक्की का प्रयोग करता है। प्रकाश के लिए मिट्टी का तल या धूम दिवली बनस्पति तेल का प्रयोग किया जाता है। बिजली या वेंच ला धमिकों के मकान में बहुत ही कम पाई जाती है। दोनों ही बचाया में जीवन स्तर बहुत ही निम्न प्येणो का है। इस मर पर ही कभी-कभी धूम का प्रतिपात १२ एक पहुंच जाता है। एखिस के मिट्टान्त क धनुमार इससे निम्न प्रकार के जीवन स्तर का पता चलता है।

एक घोर मर बिस्तर घोर धनीधर जैसी कुछ धूम घरेलू धनुषों की है, बिजली जीवन की आवश्यकताएं माना जा सकता है। इन पर धूम मुरिकल त १% या २% होता है। बिस्तर धादि पूर्णतया धनवान्त हैं। धमिकों में प्रायः बिस्तर का प्रयोग ही नहीं होता घोर सधियों म भी रातें धमिकोंघत एक सामारण मी बाहर में ध्यतीक कर दी जाती हैं। धमिब क पाठ धर्नन भी पूरे नहीं होते। जो होते भी हैं कनीस होत हैं।

धाय का २० प्रतिशत म धधिक कबल भोजन घोर धावस्थक धनुषों पर ही ध्य हो जाता है। इसलिये कई मी मनुष्य धामाभो से यह पता चलता है कि धमिकों के पाग स्वास्थ्य धिद्या घोर धनन तथा धनन परिवार क मधोरंजन के लिए बहुत कम बचन रह जाती है। घुटकर ध्ययो का धनुषात २ % म कम ही होता है। परन्तु यह घुटकर ध्यय धधिवत्तर मधिरा घोर सामाजिक रीति रिवाजों पर होता है घोर गिरा घोर मधोरंजन के लिए मगमम कुछ भी रोप नहीं रह जाता।

मधिरा पर किण मध ध्यय क निरिचत धाकड़े देना तो मग्मब नहीं है, क्योंकि का धमिक धाराब पीता है वह धमिकोंघत मर बनाने के लिए रंमार नहीं जाता कि वह धाराब पीता ही है या पीता है तो कितनी धाराब पीता है। फिर भी धनुषधान से ज्ञात हुआ है कि धमिकों के कुल ध्यय का १०% कबल धाराब घोर धूम्य माधक पदाधों पर होता है। धाराब पर धाय का धोगत ध्यय धनम म १२ प्रतिशत घोर धंमाम में ११.६ प्रतिशत जाता है। यह भी पता सका कि धमिकों क परिवारों में से ७२.०० बम्बई में ४३% सोमनापुर में घोर २६% धूमराबाद में धाराब पीते से। कहा जाता है कि धमिक धाराब पीकर कठिन परिधम के मार को हल्का करता है क्योंकि जीवन की घोर कोई सुविधाएँ उम प्राप्त नहीं होती। धनरु धरेतों घोर धीधायिक मगरा में-बहोपनया मगाम बम्बई घोर बाठगुर में मध्यात निधिध कर दिया गया है। परन्तु इस बाध की धालधीन धावस्थक है कि इस मध निधेध स धर्बध मम में कितनी धाराब लीधी जाती है घोर इसक कारण धर्बध मम में क्य करने में धमिक का धितता ध्यय बढ़ गया है।

धायध के मम में हम उम ध्यय को लेते हैं या धीधायियों घोर धिधिया कर होता है। कुछ स्थानों पर धामिक धनन धर्बधायियों के लिए ही नहीं धमिनु धनके

परिवार के सदस्यों के लिए भी गन्तव्य महायत्ना की व्यवस्था करा है । इस गिनत के अन्तर्गत कुछ विधायक स्तानों पर हा कुछ व्यय होता है । अन्तः घबराहट पर धर्मिक को अपने परिवार के सदस्यों के लिए खिजिल्या महायत्ना की बड़ी धारणा-यत्ना लेना है । मन्दिन उम्हें कष्ट भोगना ही पड़ता है क्योंकि दातन की पीग देने के लिए और दपानवी धार्मिक धरीदन के लिए उनका पाम पन नहीं होता ।

गिनात के सम्बन्ध में यह रता गया है कि बच्चा का रूम भजने का व्यय बचन कुछ ही पारिवारिक बजटा में पाया जाता है । प्रायः ये परिवार ही गिनात पर कुछ व्यय करते हैं जिन्की प्रायः ३० के प्रतिशत में धर्मिक होती है । बच्चिकात में १२% से २०% धर्मिक परिवार बच्चा का रूम भजने पर व्यय करते हैं । गिनात पर व्यय इसलिए अधिक नहीं होता क्योंकि धर्मिकों के पाम उनके लिए कुछ बचता ही नहीं ।

इसी प्रकार मन्तारजत पर भी व्यय बहुत कम होता है । इगता कागता पर है कि धर्मिक को प्रायः कम होती है और मन्तारजत की मुक्तिपापा का धर्मात जाता है । मन्तारजत के लिए कल्याण पावों के धर्मिस्थित धर्मि वार्ध प्रायः गन्त मुक्तिपापा जगमज्ज है ता यह केवल गिनता है । गग पर धर्मिक कुछ धन व्यय करते हुए पात पानत है ।

पान तम्बाकू और बीनी धार्मिक भी कुछ छोटी उपायगाय वस्तुएं हैं जिन् पर धर्मिक कुछ धन व्यय करते हैं । धर्मिता और उनका परिवार की एक बहुत बड़ी मन्त्या मगजग ७०% से ८०% तक लेती जाती है । ता पात बाड़ी और गाने का तम्बाकू की धर्मितात जाती है । धर्मिक बचन में बचत दर्श विमार्गिता को वास्तुर् बनी जा करती है और इन पर प्रतिशत व्यय कभी-कभी २ प्रतिशत से ३ प्रतिशत तक हो जाता है ।

कुत्तर व्यय के अन्तर्गत एक और व्यय की मन्त दाता का है । धर्मिता में धर्मिकों प्रशान्ति हात है गन्तित धर्म म कम गात में एक बार के धर्मात पर जान का धर्मिक प्रदान करते हैं । परन्तु दाता पर जिना गया प्रतिशत व्यय धर्मिक कम है यह तम्ब भी गिदरी है दाता और दिम्न बोटि के रफ्त-मन्त का धर्म प्रशत करता है ।

इसके धर्मिकता धर्मिक का लिए एक प्रग पर ध्यात न का म भी कुछ न कुछ देना पड़ता है । यह अन्त उगता मन्तारिक धर्मि गिनात और गात काय रीग बीमारो बराज्जारी हातनय धर्मा में व्यय करने के लिए पाता पड़ता है । रीका हि रफ्त है धर्मिक का प्रायः का धर्मिकता भात बीरन की धारणा-यत्ना कर लर्ष हो जाता है और इसीलिए मन्तारिक कायन्त-पा को मन्तन करते के लिए उगते काग जिनों प्रशान्त की धारणाएँ दिदि नहीं होती । इस मन्त पर उमका व्यय धर्मिक हो जाता है और जो धन का व्यय करता है धारणाएँ ग दर् मन्तारिक ग अन्त के धन में निदा हुआ धन होता है । अन्त-धर्मिता की धर्म मन्तारा गिदरी धर्मिकात के

बतायी जा चुकी है। यहाँ केवल इतना ही कहना पर्याप्त है कि भ्रष्ट-व्यवस्था का धर्मियों के जीवन स्तर पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है और उनकी कार्य कुशलता भी कम हो जाती है।

उपसंहार —

धर्मियों के व्यव करने की मर्तों का अधिष्ठत अवलोकन करने में यह निष्कर्ष निश्चयता है कि औद्योगिक धर्मियों का जीवन स्तर बढ़ी निम्न धरणी का है। यह भी देखने में आता है कि भारतीय धर्मिक का जीवन ऐसा नहीं होता जिसे प्राथमिक सम्य संसार में एक अच्छा और आरामप्रद जीवन कहा जा सके; न तो धर्मिक का पर्याप्त भोजन मिलता है और न कपड़ा। मकानों की बसा ऐसी होती है कि स्वयंता भी नहीं की जा सकती कि ऐम बातावरण में भी मनुष्य रह सकते हैं।

निम्न जीवन स्तर के कारण —

औद्योगिक धर्मियों का निम्न जीवन स्तर होने के प्रमेक कारण है। मुख्य कारण वास्तव में यह है कि धर्मिक की आय कम होती है और निर्वाह-सब धर्मिक होता है। भारत में धर्मिकों को पर्याप्त मजदूरी नहीं दी जाती यह बात भारतीय मजदूरी-निरंतर का अध्ययन करने में मनी प्रति स्पष्ट हो जाती है। यद्यपि मजदूरी में वृद्धि का समय और बाद में भी कुछ सुधार किए गए हैं तथापि मृत्यु की वृद्धि के कारण निर्वाह-सर्व धर्मिक हा गया है। सन् १९४७ में भी सी० डी० देवमुन ने कहा था “भारत इस समय एक मजदूरी-मुम्न-बहु से पीड़ित है। जैसे ही धर्मिकों को धर्मिक मजदूरी दी जाती है उनका साथ निर्वाह-सर्व के धर्मिक बढ़ जाने से धर्मिक धर्म समाप्त हो जाता है।” (पृष्ठ ४८८-८९ और पृष्ठ २३१ भी देखिए) मुद्र के परधान् परिणाम के कुछ देशों में धर्मिकारण अनुपात में निर्वाह-सर्व में वृद्धि हुई है परन्तु धर्मिकारण पश्चिमी देशों में इतनी वृद्धि नहीं हुई है। यह बात निम्न तालिका से स्पष्ट हो जाती है।

निर्वाह-सब सूचकांक
(साधारण वर्ष १९१७=१००)

वर्ष	नतीज	अमेरिका	जनादा	भारत (अंशक)
१९१९	१०१	९७	१००	१०
१९२२	११२	१२२	११८	१२२
१९२८	१२८	११७	१२१	२४१
१९२९	१११	११७	१२९	२९

*See "A Survey of Labour in India by V. R. K. Tilak Chapter III and Reserve Bank of India Reports.

१९२६ में जीतत सूचकांक
(मापार वर्ष १९२२=१००)

देश	जीवन सूच्य	निवाह वर्ष
भारत	१६	१८
कनाडा	१०४	१०६
ब्रिष	११०	१०६
जापान	१०१	१०४
बेल्जियम	१०६	१११
स्वीडन	१०२	११४
स्वीटजरलैण्ड	१००	१०३
डचमंड	१०६	११२
अमेरीका	१००	१०६

भारत के धर्मिक बय का निर्वाह-रूप और उमरी बाल्यविक घाय का मुननात्मक बिबेधन करने में यह निश्च होना है कि धर्मिका का जीवन स्तर निर न्या है। यह किम सामा ठक विर न्या है यह मजदूरी की कृति और सूचकांक का कृति में विम्वता में जान हो जाता है। यह बात भी पर २१ पर दो र्द सामिका में स्पष्ट हो जाणा। जो मर्गाई मला निवा जाणा है का अर्थात् होता है और वह सामान्य सूच्य स्तर और निर्वाह-वर्ष में जो कृति र्द है उमरी धर्मिक करने में धर्मिक है। धर्म सूच्य में कृति का गारा भार धर्मिकों के जीवन स्तर पर पड़ता है। १०

जीवन स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयत्न

यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि बेरोज मजदूरी समजन (Adjustment) कर इन का मर्गाई मला के भुदान क्रानि में ही मर्ग्या का मर्गायन मरी हो जाता। हमारे सामने वर्तमान जीवन स्तर को बनाए रखने की ही मर्ग्या मरी है धर्मिक हमको हमका ऊँचा उठाना है कि धर्मिक मर्गाई मला धर्मिक निर्वाह कर गये। हमनिज उठा ठक मर्ग्यर ही धर्मिका को उनी में उमरी पर्याप्त मजदूरी देना कर्ति और हम बीच में धर्मिक धर्मिकों की मुननम मजदूरी और उमरी मजदूरी निर्वाह करने में विम्वर मरी बनना चाहिए। भारतीय उद्योगों की मजदूरी का दावा बिद्वानुषक (Judicial) मर्ग्यर बनाना कर्ति कि धर्मिक बय का धर्मिक कर्माणा भी हो कर और न तो मुन मर्ग्यर (Price Equilibrium) में विम्वी

० निर्वाह-वर्ष के सूचकांक (Cost of Living Index Numbers) क निर, जो यह 'उद्योगिक सूचकांक' (Consumer Price Index) कर्ता है परिचित 'क' देगा।

प्रकार का विषय परे धीरे न ही दस क प्राथमिक विभाग में बनाया था। धर्मिक क लिए जब तक पर्याप्त धाय की व्यवस्था नहीं की जाती हम उसका जीवन स्तर ऊँचा नहीं उठा सकते। उत्तर प्रदेश धर्म आंच समिति ने दायों में यह बात स्वयं सिद्ध है कि मजदूरी एक पत्र (Pivot) है जिसके चारों ओर धर्मिकों की अधिकांश सामान्य धार्मिक धमका उनकी सापस हुआमला धर्म की मागत धादि सभी बातें हमी समस्या के घलगत घाती है।

धर्मिका के जीवन स्तर को ऊँचा करने का एक धम्य उपाय यह है कि उनके लिए पर्याप्त मासा में कल्याण दायों की सामाजिक सुरक्षा के साधन उपलब्ध किए जाएं। पृथक-पृथक धम्याया में इस बात का पहल ही उल्लेख किया जा चुका है और धर्मिकों के स्वास्थ्य कार्य हुआमला एवं जीवन स्तर को उन्नत करने के लिए उनका महत्व भी बताया जा चुका है। हमी प्रकार धावाम धरण-धस्तता काम करने की परिस्थितियों की कार्य हुआमला पर प्रतिक्रिया धादि दूसरी समस्याओं पर भी बिस्तार पृथक प्रमाण डाला जा चुका है।

पुष्प धन्य सुझाव —

यह कहा जा सकता है कि जीवन स्तर एक हमी समस्या है जो धर्मिकों के सुधार सम्बन्धी सभी उपाया में सम्मिलित है। गप ता यह है कि हमारी सभी धार्मिक प्रतियाओं का सत्य धावक्यताओं की पूर्ति है और इतलिए धर्मिकों के कल्याण के लिये जो भी रय उठाया जाय उसमें उनके जीवन स्तर में उन्नति होनी चाहिए धम्याया ऐस पय उगन के लिए धोपना भी नहीं चाहिए।

एक विषय में एक धम्य महत्वपूर्ण समस्या भारतीय सामाजिक रीति रिवाजों में यथासम्भव सुधार करने की है। धर्मिकों को उचित रूप में धिरा की जानी चाहिए, जितम कि है सामाजिक और धार्मिक अनुष्ठानों तथा त्योहारों पर ध्यर्क ध्यय न कर। धनेक सामाजिक उत्तरदायिन्व लेमे होते हैं जिन पर धर्मिक को धन ध्यय करना पड़ता है यद्यपि बहु यह बर्मीजानि धनुमव भी करता है कि उसरी रिपति ऐसी नहीं है कि धपने धन का बहु रण प्रचार ध्यय कर। उदाहरणार्थ पुषी या बहुम के बिबाह में धर्मिक को धाठी दहेज दना पड़ना है।

यहके धर्तितिक धर्मिकों को बड़े परिवार की हुमिधा में भी धवगत कराना चाहिए। बिस्तृत इतिहास में भी धर्तितिक धर्मिकों को बड़े परिवार की हुमिधा में भी धवगत कराना बड़ी धावक्यता है। ताप समस्या का समाधान तब तक नहीं किया जा सकता जब तक उलादन में धृष्टि के साप-नाय बलगध्या की धृष्टि में रोक नहीं किया जा सकता जब धाधुनिक समय में धनमध्या हम प्रकार बढ रही है कि निधनों में बंध धर्मिक होते हैं। हमीलिए परिवार का धाकार धर्मिक बगों में धनेधायुत बढा होता है। धनेक बार यह बात धाधने आई है कि जयनी तीमिज धाव के कारण जब धर्मिक को धपन परिवार का धरण-धायण करना और धपन धीरे धीरे धात्मा को उन्नत बनाए

रचना भी बट्टिन होता है तब दग प्राड़े समय म उरुकर परिवार म कोई नया बच्चा बन्म म सेता है। एम प्रकसरों पर उरुकर समदा दसक प्रतिरिक्त कोई धर्म उपाय नहीं रहता कि वह महाजनो क पाम जाए और उनम श्रम म। प्रणाम्यता की बुरादासो पहन ही बताई जा चुकी हैं। "मनिए परिवार नियोजन के प्रकार की बहुत धारण्यवता है। धमिक बग को इग दात को मुविषासो प्रदान करनी चाहिए कि वे अपने परिवार में कम दर को कम कर सक। एधम टनक जीवन स्तर पर बहुत प्रकष्य प्रभाव पड़ेगा।

इसक प्रतिरिक्त धमिको का उधिम रीति ग धन को ध्यय करने का इंध भी बताया जाना चाहिए। धधिकांग धमिको को तो दह भी गान नहीं होता कि वे कितना कमाते हैं और कितना उपभोग करत हैं। धनपउ धमिकों के इस बात की प्राया नहीं की जा सक्ती कि वे अपना बजट ठीक प्रकार में बनायेंगे और धपन धन को सम-सीमाय्य सुट्टीकरण नियम (Law of Equi-marginal Utility) के अनुसार ध्यय करके। इग समस्या का समाधान तो कबाल धधिक प्रकार गिता समन्धी मुविषासो क प्रसार और धमिक बग की महिसासो के गिणा क विनाम ग हा हो गयता है।

इसके प्रतिरिक्त जीवन स्तर का उंधा उधान म एट्टिया गजत धककाम तथा मनोरजन की मुविषाधा के महत्व को भा ध्यान म रखना चाहिए। इनकी मूठा का पूर्व धध्यासो म उन्नेय किया जा चुका है।

धीर्घाविक धधिका की काय सुगमता पर जीवन स्तर का भी बडा प्रभाव पड़ता है। उन धधिका से जा निधनता धरवण भाजन कपड क प्रभाव बेरोक पाये बीमारी धोर श्रम-वस्तता के कालाकरण म पत कर वर हावे हैं धधक काम को घाला नहीं की जा सक्ती। धमिको को धपने कर्मधारिया की धनुगलता की गिकायन रहती है। वे उस बात का धनुधन म्हा करते कि जय तक धधिकों के जीवन स्तर में सुधार नहीं हो जागा उनमे काम म सुगमता की धाग करना ध्यर्थ है। कर्मधान समय म धारीरिक्त नैतिक धोर धानिक धार बहन करने में धधिक धधमर्ष हैं धोर इन्कोनिए क धधिक परिधम नहीं कर पत।

उपसंहार—

दगम कोई सशह नहीं कि धधिका क जीवन स्तर को उधा उधान क प्रल कर बिचार करन क पूव धनेक धधक सुपाध की धारण्यवता है। "ग० रागासम मुक्ती क गला मे म्हा निरुध विनाता जा गयता है कि 'उधम' म सब ताक म धार्ति स्थावित्र हो गक्ती है म प्रगति धा गक्ती है जय तक धधिकों का बेहन उधाएन का साधन न माककर धधिकु उरु धनुधय धधमकर उनका धूय धारण्यवताया की समुट नहीं किया जागा। धीर्घाविक धधिक धोर प्रगति का काल धधिक धर्म की धार्धनुपयता उधम जीवन स्तर समन्धिक सुगमता तथा धधम उधता मे धध गलि क उधिक विवरता पर हा धाधारिउ होती है।"

प्रकार का विघ्न पक्ष धीरे से ही दवा के औद्योगिक विनाम में बाया प्राय । यमिक के लिए जब तक पर्याप्त प्राय की व्यवस्था नहीं की जाती तब उद्योग जीवन स्तर ऊंचा नहीं चला सकत । उत्तर प्राय धर्म प्राय समिति के शब्दों में 'यह बात स्वयं सिद्ध है कि मजदूरी एक पक्ष (Point) है जिसके कारण धर्मियों की अधिकांश समस्याएँ पुनर्ती रहती हैं ।' इस प्रकार की न स्तर से सम्बन्धित प्रश्न यमिक की सामान्य प्रायिक धर्मता उन्की सापस सुसलता धर्म की लागत प्रादि सभी बातें इसी समस्या के अन्तर्गत आती हैं ।

यमिका के जीवन स्तर को ऊंचा करने का एक अन्य उपाय यह है कि उनके लिए पर्याप्त मात्रा में कल्याण कार्यों की सामाजिक गुणों से साधन उपलब्ध किए जाएँ । पूषक-सूषक अध्यायो से इन बातों का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है और धर्मियों के स्वास्थ्य काय सुसलता एवं जीवन स्तर को उन्नत करने के लिए उनका महत्व भी बताया जा चुका है । इसी प्रकार आशा है कि उद्योग-प्रस्था काम करने की परिस्थितियों की कार्य कुशलता पर प्रतिक्रिया प्रादि दूसरी समस्याओं पर भी विस्तार पूषक मात्रा डाला जा चुका है ।

कुछ अन्य सुझाव —

यह कहा जा सकता है कि जीवन स्तर एक ठीकी समस्या है जो धर्मियों के सुधार सम्बन्धी सभी उपायों से सम्बन्धित है । सच तो यह है कि हमारी सभी प्रायिक प्रस्थियों का सत्य प्रायिकताओं की पूर्ति है और इसलिए धर्मियों के कल्याण के लिये जो भी नम उद्योग प्राय उद्योग उनके जीवन स्तर में उन्नति होनी चाहिए अन्वेषण ऐम पम उद्योग के लिए सोचना भी नहीं चाहिए ।

इस विषय में एक अन्य महत्वपूर्ण समस्या भारतीय सामाजिक रीति-रिवाजों में धर्मसम्बन्ध सुधार करने की है । धर्मियों को उन्नित रूप से सिखा दी जानी चाहिए, जिसमें कि वे सामाजिक और प्रायिक अनुप्यक्तों तथा त्यौहारों पर धर्म व्यय न करें । अनेक सामाजिक उत्तरदायित्व ठेके होते हैं जिन्हें धर्मियों को पग व्यय करना पड़ता है यद्यपि यह धर्मोपनि धनुष भी करता है कि उसकी रिपति ठेकी नहीं है कि अपने धन का वह इस प्रकार व्यय करे । उदाहरणार्थ पुत्री या बहन के विवाह में धर्मियों को भारी खर्च करना पड़ता है ।

अनेक प्रायिक धर्मियों को बड़े परिवार की दायित्वों में भी धर्मसत् करना चाहिए । विस्तृत दृष्टिकाल में भी वर्तमान समय में जनसंख्या की रोकथाम सबसे बड़ी प्रायिकता है । प्राय समस्या का समाधान तब तक नहीं किया जा सकता जब तक उत्पादन में वृद्धि के साधन-साधन बनगव्या की पूर्ति में रोक नहीं लगाई जाती । प्रायिक समय में जनसंख्या इस प्रकार बढ़ रही है कि निर्धनों में वृद्धि प्रायिक होती है । इसीलिए परिवार का प्राकार धर्मियों में अत्यन्त बड़ा होता है । अनेक बार यह बात सामने आई है कि अपनी सीमित प्राय के कारण जब धर्मियों को अपने परिवार का भरण-पोषण करना और अपने शरीर और प्रायों को सबत बनाए

प्रकार का विघ्न पड़े और न ही दया के घोषाधिक विनाश में बाधा पाय । धर्मिक के लिए जब तक पर्याप्त धाय की व्यवस्था नहीं की जाती हम उसका जीवन स्तर ऊँचा नहीं उठा सकते । उत्तर प्रदेश धर्म आचमिति के दायों में यह बात स्वयं सिद्ध है कि मजदूरी एक पत्र (Pivot) है जिसके चारों ओर धर्मिकों की अधिकांश समस्याएँ घुमती रहती हैं । इस प्रकार जो न स्तर से सम्बन्धित प्रश्न धर्मिक की सामान्य धार्मिक समता उनकी साधन कुशलता धर्म की साधन आदि सभी बातें इसी समस्या के अन्तर्गत आती हैं ।

धर्मिकों के जीवन स्तर को ऊँचा करने का एक अन्य उपाय यह है कि उनके लिए पर्याप्त मात्रा में कल्याण कार्यों और सामाजिक सुरक्षा के साधन उपलब्ध किए जाएँ । पुष्क-गृहक धर्मियों में इन बातों का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है और धर्मिकों के स्वास्थ्य कार्य कुशलता एवं जीवन स्तर को उन्नत करने के लिए उनका महत्व भी बताया जा चुका है । इसी प्रकार आवागमन-श्रद्धा काम करने की परिस्थितियों की कार्य कुशलता पर प्रतिक्रिया आदि दूसरी समस्याओं पर भी विस्तार पूर्वक प्रकाश डाला जा चुका है ।

कुछ अन्य सुझाव —

यह कहा जा सकता है कि जीवन स्तर एक ऐसी समस्या है जो धर्मिकों के सुधार सम्बन्धी सभी उपायों में सम्बन्धित है । जब तो यह है कि हमारी सभी धार्मिक प्रक्रियाओं का समय आवश्यकताओं की पूर्ति है और इसलिए धर्मिकों के कल्याण के लिये जो भी उपाय उठाया जाय उसमें उनके जीवन स्तर में उपलब्धि होनी चाहिए अन्यथा ऐसे उपाय उठाने के लिए शोचनीय भी नहीं चाहिए ।

इस विषय में एक अन्य महत्वपूर्ण समस्या भारतीय सामाजिक रीति-रिवाजों में यथामन्त्र मुद्दा करने की है । धर्मिकों को उचित रूप से शिक्षा भी जानी चाहिए, जिससे कि वे सामाजिक और धार्मिक अनुष्ठानों तथा त्यौहारों पर धर्म व्यय न करें । अनेक सामाजिक उत्तरदायित्व एग होते हैं जिन पर धर्मिक को धन व्यय करना पड़ता है यद्यपि यह धर्म समीक्षा अनुभव भी करता है कि उसकी स्थिति ऐसी नहीं है कि अपने धन को वह इन प्रकार व्यय करे । उदाहरणार्थ पुत्री या बहिन के विवाह में धर्मिक को भारी दहेज देना पड़ता है ।

दूसरे परिचित धर्मिकों का बड़े परिवार की हानियों में भी अलग-अलग कराना चाहिए । बिरुद्ध दृष्टिकोण में भी वर्तमान समय में जनसंख्या की रोकथाम सबसे बड़ी आवश्यकता है । पाठ समस्या का समाधान तब तक नहीं किया जा सकता जब तक उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ जनसंख्या की वृद्धि में रोक नहीं लगाई जाती । धार्मिक समय में जनसंख्या इन प्रकार बढ़ रही है कि नियंत्रण में कठिन धर्मिक होते हैं । इसीलिए परिवार का धार्मिक धर्मियों में धार्मिक बड़ा होता है । अनेक बार यह बात सामने आई है कि अपनी सीमित धाय के कारण जब धर्मिक को अपने परिवार का भरण-पोषण करना और अपने शरीर और आत्मा को सबल बनाए

औद्योगिक श्रमिकों का स्वास्थ्य और उनकी कार्यकुशलता

(Health and Efficiency of Industrial Workers)

श्रमिकों के स्वास्थ्य की समस्या—

औद्योगिक श्रमिकों की स्वास्थ्य समस्या का दो पहलुओं से अध्ययन किया जा सकता है। प्रथम स्वास्थ्य की दृष्टि से जो सभी नागरिकों के लिए स्वाभाविक है और द्वितीय व्यवसायजनित स्वास्थ्य संकट की दृष्टि से जिनका कुछ उद्योगों में औद्योगिक श्रमिकों के लिए भय रहता है। औद्योगिक श्रमिक भी एक नागरिक होता है इसलिए प्रथम नागरिकों के समान उस पर आने वाले स्वास्थ्य संकट उसको भी भेदने पड़ते हैं। नागरिक होने के नाते श्रमिक की आवश्यकताओं की पूर्ति सामान्य स्वास्थ्य सेवाओं द्वारा जो समाज में सब के लिए उपलब्ध है होनी चाहिए। परन्तु औद्योगिक श्रमिक के रूप में उसके व्यवसायजनित संकट जिनका उस भय रहता है संबंधित रीति से निर्मित औद्योगिक श्रम स्वास्थ्य सेवा द्वारा ही दूर किए जा सकते हैं। ऐसी सेवाएँ काम करने के स्थान के बाजारद्वारा ही सम्भवि्यत जन बाधों की रोकथाम करने की व्यवस्था करती हैं जो श्रमिक के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालती हैं। (पृष्ठ ३१२ १४ भी देखिए)

असन्तोषजनक स्वास्थ्य पर कुछ रिपोर्टें—

हमारे देश के लोगों का असन्तोषजनक स्वास्थ्य इस बात से चिह्नित होता है कि यहाँ के जीवन की औसत आयु पर्ययाकृत रूप है। अनुमान किया गया है कि भारत में यह औसत आयु केवल ३२ वर्ष रही है यद्यपि हाल ही में कुछ वर्षों में औसत आयु का अनुमान ४० वर्ष लगाया गया है। यह आयु आस्ट्रेलिया में ६३ वर्ष ईंग्लैंड और वेल्स में ३६ वर्ष जर्मनी में ६० वर्ष और जापान में ८२ वर्ष है। भारत में यद्यपि श्रमिकों के स्वास्थ्य सम्बन्धी घोर दुःखपूर्ण उपलब्ध नहीं हैं तथापि सामान्य स्वास्थ्य की दृष्टियों के विवरण भारत के अनेकानेक प्रकाशनों [जैसे स्वास्थ्य महोत्सव और विज्ञान समिति रिपोर्ट (भारत समिति) भारत सरकार के मार्शजितक स्वास्थ्य प्रायुक्त की वार्षिक रिपोर्टें आदि] में मिलते हैं। पञ्चवर्षीय आयोजना में आयोजना प्राथमिक ने सम्पूर्ण देश में बार्ड जाने वाली स्वास्थ्य विषयक परिस्थितियों का विश्लेषण किया है। कर्मचारी राज्य बीमा विधम की वार्षिक रिपोर्टों से भी श्रमिकों की बीमारी के कुछ घोरके प्राय होते हैं।

श्रीर. मन्त्रिष्ठ ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि भारत में औद्योगिक घमिर्को के स्वास्थ्य सम्बन्धी कोई प्रायः ध्यान करने की घमिर्को तक कोई उचित ध्यान नहीं है। बहुत से कारखानों में तो औद्योगिक ही नहीं होते। यही कारण है कि सभी औद्योगिक घमिर्को का कोई विश्वमनीय अभिलेख (Record) नहीं रखा जा सकता। उनके अनिश्चित जिन औद्योगिक मरणात्में हृत्पट्टाम और औद्योगिक होने हैं उनसे भी पूरी सूचनाएँ नहीं मिल जाती। औद्योगिक बीमारियों (Industrial Diseases) से सम्बन्धित विवरण भी पूर्णतया प्रायः नहीं होता है। कबन कुछ ही प्रतियोगी औद्योगिक मरणात्में म बीमारी और अनुपस्थिति के घमिर्को एकत्रित किए जाते हैं। टाटा उद्योग क औद्योगिक स्वास्थ्य विभाग म टाटा की मित्त के विभिन्न औद्योगिक मरणात्में में हो रहे उपचार के घमिर्को प्रस्तुत किये हैं। अनुपस्थिति सम्बन्धी घमिर्को को देखने में प्रतीत होता है कि बीमारी के कारण होने वाली अनुपस्थिति की प्रतिष्ठन दर काफी घमिर्को है। (देखें पृष्ठ ६३) १९२० में २० मिल उत्पाद में ६४ प्रतिशत दर १२ २७ थी। १९२० २६ म कर्मचारी टाटा बीमा निगम की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार वर्ष में १२,८७ ०० बीमाजन कर्मचारियों में म १० ८० ४६० धमिर्को बीमार हुए थे तथा बीमारी क मिला कुल ७ २७ ६६ ००० १० कर्म मार के रूप में किये गए थे।

श्री० बी० पी० सादारकर ने औद्योगिक घमिर्को के लिए स्वास्थ्य बीमा पर अपनी रिपोर्ट देने के मध्यम में जो घमिर्को एकत्रित किए थे उनमें तथा बताया है कि बीमारी की अपेक्षित दर १६ प्रतिशत प्रति धमिर्को प्रति वर्ष है। मद्र १९४६ में प्रकाशित की और रिपोर्टों में भी धमिर्को की स्वास्थ्य-सहायकों का वर्णन मिलता है। इनमें से एक रिपोर्ट तो स्वास्थ्य सहायक मिति की है और दूसरी औद्योगिक घमिर्को के स्वास्थ्य पर भारत सरकार की डॉ० रामस बेन्पोट द्वारा की गई रिपोर्ट है। दोनों रिपोर्टों में यह कहा जाता है कि औद्योगिक कर्मचारियों के रहने और काम करने की सहायकों कायदा में संशोधन नहीं है। काम करने की सहायकों का अध्ययन करने पर यह बात कही है कि कुछ घमिर्को ही सहायकों सम्बन्धित और प्रायः इन से बने हुए हैं। अधिकांश कारखानों की सहायता दो-तुर्ग है और उनमें धमिर्को के घमिर्को के लिए कोई ध्यान नहीं रखा जाता है। साधारणतया उनका उपचार अल्प होता है और कभी भी बहुत होती है। प्रभाव का अध्ययन भी धीरे से नहीं होता और कुल उद्योग नहीं है। धमिर्को के पत्तर उद्योग-उद्योग कर चारों धार किये हैं। इस प्रकार औद्योगिक मरणात्में को कम करने की कोई ध्यान नहीं होता। दुर्पटना और बीमारी के सम्बन्धित घमिर्को तो घमिर्को पूर्णतया अनजान नहीं है तथा साधारणतया धीरे अनजान कहा है कि कर्मचारी देनी की सहायता मार में दुर्पटनाओं और बीमारी की दर घमिर्को है। डॉ० बेन्पोट ने इस बात पर भी ध्यान दिया है कि कहीं कहीं घमिर्को का धमिर्को मरणात्में कर्मचारी द्वारा कर्मचारी और कुल मरणात्में में सभी को धमिर्को की सहायता नहीं है।

औद्योगिक श्रमिकों का स्वास्थ्य और उनकी कार्यकुशलता

(Health and Efficiency of Industrial Workers)

श्रमिकों के स्वास्थ्य की समस्या—

औद्योगिक श्रमिकों की स्वास्थ्य समस्या का जो पहलुओं से अध्ययन किया जा सकता है। प्रथम, स्वास्थ्य की दृष्टि से जो सभी श्रमिकों के लिए सामान्य है और द्वितीय व्यवसायजनित स्वास्थ्य संकट की दृष्टि से श्रमिकों के लिए कुछ उद्योगों में औद्योगिक श्रमिकों के लिए भय रहता है। औद्योगिक श्रमिक भी एक शारीरिक होता है, इसलिए अन्य शारीरिकों के समान समय पर जाने वाले स्वास्थ्य संकट उद्योगों भी भेजने पड़ते हैं। शारीरिक होने के नाते श्रमिक की व्यावसायिकताओं की पूर्ति सामान्य स्वास्थ्य सेवाओं द्वारा जो समाज में सब के लिए उपलब्ध है होनी चाहिए। परन्तु औद्योगिक श्रमिक के रूप में उनके व्यवसायजनित संकट जिनका उद्योग भय रहता है अतिरिक्त शक्ति से निहित औद्योगिक श्रम स्वास्थ्य सेवा द्वारा ही दूर किए जा सकते हैं। ऐसी सेवाएँ काम करने के स्थान के वातावरण से सम्बन्धित उन बातों की रोकथाम करने की व्यवस्था करती हैं जो श्रमिक के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालती हैं। (पृष्ठ ११२ १४ भी देखिए)

प्रसंगोपजनक स्वास्थ्य पर कुछ रिपोर्टें—

हमारे देश के लोगों का प्रसंगोपजनक स्वास्थ्य इस बात से विदित होता है कि यहाँ के जीवन की औसत आयु अपेक्षाकृत कम है। अनुमान किया गया है कि भारत में यह औसत आयु केवल ३२ वर्ष रही है यद्यपि हाल ही के कुछ वर्षों में औसत आयु का अनुमान ४० वर्ष लगाया गया है। यह आयु घाट्टलिया में ६३ वर्ष इंग्लैंड और ईश्वर में ५६ वर्ष जर्मनी में ६० वर्ष और जापान में ४२ वर्ष है। भारत में यद्यपि श्रमिकों के स्वास्थ्य सम्बन्धी चीन्हे पूर्णतया उपलब्ध नहीं हैं तथापि सामान्य स्वास्थ्य की दृष्टियों से विचारत भारत के प्रत्येक प्रजातों [जैसे स्वास्थ्य सर्वेक्षण और विकास समिति रिपोर्ट (भारत समिति) भारत सरकार के तार्विक स्वास्थ्य आयुष्य की वार्षिक रिपोर्टें आदि] में मिलत हैं। परन्तु सामान्य आयुष्य में औद्योगिक श्रमिकों के स्वास्थ्य के सर्वेक्षणों में कई बुरे कामों का स्वास्थ्य विषयक परिस्थितियों का विचारत किया है। कर्मचारी उच्च बीमा नियम की वार्षिक रिपोर्टों से भी श्रमिकों की बीमारी के कुछ चीन्हे ज्ञान होते हैं।

की परिस्थितियों का सम्बन्ध है दोनों ही रिपोर्टों ने औद्योगिक क्षेत्रों में फैली हुई अस्वच्छता और जीव माइ तथा धमियों के अर्थात् पीपल की घोर व्यापकता का कथित किया है ।

प्रथम पंचवर्षीय आयोजना में आयोजना आयोग ने इस बात पर विशेष बल दिया था कि औद्योगिक धमिक के काम करने की दशाएं ऐसी होनी चाहिए जिनसे धमिकों के स्वास्थ्य की भी रक्षा हो और व्यवसायजनित रकटों से भी उनका बचाव हो सके । इस आवश्यकता की पूर्ति के निमित्त आयोजना आयोग ने अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित सिद्धारितों की भी (१) औद्योगिक स्वास्थ्य सुरक्षा और कल्याण के लिए एक राष्ट्रीय संघामय की स्थापना (२) कैंट्रियों के निरीक्षण मण्डल में पूर्ण कामिक शिक्षिता निरीक्षकों की नियुक्ति (३) पैंक्टियों में पर्याप्त वाटरटैंट और शिक्षिता निरीक्षकों के लिए औद्योगिक स्वास्थ्य सम्बन्धी छोटे-छोटे विद्या पाठ्यक्रम की व्यवस्था (४) व्यवसायजनित बीमारियों धम्य स्वास्थ्य समस्यार्णों तथा औद्योगिक प्रतिक्रियाओं के सम्भाव्य (Potential) रकटों को धमिकों और उनका सम्पूर्ण करने के उद्देश्य को दृष्टिकोण में रखकर सूचना प्राप्त करने के हेतु धनु गणनाओं और सर्वेक्षणों का आयोजना । आयोजना आयोग ने सम्पूर्ण देता की स्वास्थ्य सम्बन्धी सामान्य परिस्थितियों को विवेचना करत हुए यह बताया है कि स्वास्थ्य की दशा अत्यन्त जोखनीय है और स्वास्थ्य उन्नति का सम्पूर्ण कार्य-क्रम समाज सुधार की विरलूत योजनाओं से सम्बद्ध है ।

राज्यों और प्रांतों में धमिकों का स्वास्थ्य —

कोयले की राज्यों में धमिकों के अस्तोपजनक स्वास्थ्य के महत्वपूर्ण कारणों में मनेरिया सबसे बड़ा कारण है । काम करत ही अस्तोपजनक परिस्थितियों का भी स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है । अनेक राज्यों में काम में लगी होती है और जहां पर सुरक्षित जगहें जाती हैं बहा की दशा में घुमा भर जाता है । बड़ी-बड़ी कोयले की राज्यों में प्रांतों की बीमारियां विशेषतः रत का अत्यापन बर्नकारियों में बहुधा पाया जाता है । दमा और निमाधिया र्भमी बीमारियां भी देखने में आती हैं । अतः रत की अनेक अनेक निराम की व्यवस्था के अभाव में अंतुप इमि (Hookworm) की बीमारी भी देखने में आती है । राज्यों के क्षेत्रों में क्षेत्रीय अस्तोपजनक प्रकृति तथा धिनु कल्याण केन्द्रों तथा औद्योगिकों की स्थापना की जा चुकी है । (दिन पृष्ठ १००-१०१)

रा० ई० सायद राजा द्वारा प्रथम अंश और दक्षिण भारत के बाव बागान में की गई नव १९४७ की पुस्तक में बागान कर्मचारियों के स्वास्थ्य सम्बन्धी कुछ चीजें उल्लेख की हैं । रा० जोय ने अनुभव किया कि प्रथम में धमिकों के स्वास्थ्य की दशा बड़ी जोखनीय है और उनमें अ अधिवात अर्थात् पीपल व सामान्य दुर्बलता और जीव-मिक के प्रभाव में पीड़ित है । लोगों के आहार की कुछ अष्टी दशा होने के कारण अंतः में स्वास्थ्य की दशा अत्यन्त की अर्थात् अधि अष्टी

वर्ष के बिप का सुम्भोजन । कुछ उद्योगों जैसे सोडा उद्योग इन्धोनिमरिब घोर कपडा उद्योग में इतना अधिक घोरपुल होता है कि अन्त में ममिकों की कार्यकुशलता घोर उनके सुम्भे की अति पर बुरा प्रभाव पड़ता है । बिषय-बिषय परिस्थितियों में पहले घोरपुल के मध्य घोर उसके बाद शान्त बाठाकरण में काम करते हुए अनेक ममिकों की सूट के कारणों में डाक्टरी परीक्षा की गई । प्राथमिक परिणामों से यह सिद्ध होता है कि घोरपुल जब कम होता है तब कार्यकुशलता में अलगम २-१० प्रतिशत वृद्धि हो जाती है । कमकता के निकट बाटा सु कम्पनी में इडुपटनाओं के कारण बीमार होने से अनुपस्थिति के बिषय में भी अनुसंधान किए जा रहे हैं । अन्य महत्व पूर्ण अनुसंधान भी किए गए हैं उनका सम्बन्ध समय और कपडा मिलों के ममिकों की क्साति (Fatigue) तथा कार्यकुशलता में है । इसके अतिरिक्त बाठाबात की इडुपटनाओं और ककता के मम तथा टाम भागकों का इडुपटनाओं के रोहनान (Proneness) से सम्बन्धित अनुसंधान भी हुए हैं । मीन सम्बन्धी रोहों के पीडित रोमियों का भी सर्वेक्षण किया गया था । हमसे यह स्पष्ट हो गया कि बिषय होटर परिचारों में ककन रहने का कारण इस प्रकार की बीमारियाँ ममिकों में बहुत पाई जाती थीं । सूट के कारणों में बहियाँ ममिकों के बिषय में यह देखा गया कि उनके ११ इनिशत मर्म मिर जात हैं ।

इसके अतिरिक्त भारत सरकार ने औद्योगिक स्वास्थ्य में प्रविशण देने के हेतु सुविधायें प्रदान की हैं । औद्योगिक ममिकों के स्वास्थ्य और सुरता से सम्बन्धित एक पब्लिक का नियमित रूप से प्रकाशित हो रहा है । जो भी किमिस्ट्रिक या किमिस्ट्री से सम्बन्धित कर्मचारी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इन उद्योगों से सम्बन्धित हैं उनके प्रविशण के हेतु ककता में अतिम भारतीय स्वास्थ्य विज्ञान तथा तांत्रिक स्वास्थ्य मीकाग (All India Institute of Public Health) में एक बिषय औद्योगिक स्वास्थ्य विज्ञान पाठ्यक्रम का आयोजन किया गया है । कारणों के मुख्य समाह्वार ने राज्य के कारणों के निरीक्षकों को औद्योगिक स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधायें भी प्रदान की हैं । अनेक प्रदेशों में किमिस्ट्रिक निरीक्षकों की नियुक्ति की गई है । ममिकों व ममिकों में सुरता सम्बन्धी बिचारों को उत्पन्न करने के लिए एक स्वास्थ्य सप्टर्ड व सुरता परिषद की भी स्थापना बम्बई में की गई है । राज्य के कारणों में ममिकों के काम करने की परिस्थितियों और उनका सामान्य स्वास्थ्य में अनुसंधान और सुधार करने के उद्देश्य को इष्टि में रगकर उत्तर प्रदेश की सरकार ने एक औद्योगिक स्वास्थ्य मंत्रालय की स्थापना की है । इसके अतिरिक्त भारत सरकार की एक प्रायंता के प्रायुत्तर में अमरीका की सरकार ने तकनीकी सहयोग कार्यक्रम (Technical Cooperation Programme) के अन्तर्गत एक औद्योगिक स्वास्थ्य विज्ञान मर्म की भी सेवायें उपलब्ध कर दी हैं । कुछ उद्योगों में स्वास्थ्य संरक्षक और म्भवभावजनित रोगों के प्ररन कर भी बिरोधकों के रूप में अनुसंधान कार्य किया है । मैदूर में कामाड की गानों और अमक की गानों के धेनों का पहले ही सर्वेक्षण

दिया जा चुका था और उनकी गियोटों में दो मई विचारितों विचारोपीत है। सरकार ने एक श्रीलोकिक स्वास्थ्य विज्ञान संघटन की भी स्थापना की है जिसने बनेक संघटन के अन्तर्गतों के संघोतन किए हैं। इसके अतिरिक्त एक केन्द्रीय स्वास्थ्य विज्ञान संघोतन भी है जिसका कार्य स्वास्थ्य प्रचार और स्वास्थ्य विज्ञान कार्य में सम्मिलित है। लैमे म्यूरों की स्थापना राज्यों में भी की जा रही है। बम्बई में एक केन्द्रीय धर्म संस्थान (Central Labour Institute) की स्थापना की जा रही है। इनमें श्रीलोकिक स्वास्थ्य सुरक्षा तथा अभ्यास का राष्ट्रीय मन्त्रालय श्रीलोकिक स्वास्थ्य विज्ञान प्रयोगशाला प्रविद्यालय केन्द्र तथा पुस्तकालय तथा मृतक केन्द्र धर्म भी सम्मिलित हैं। बानपुर बमकला और को-मुक्त में भी तीन प्राथमिक मन्त्रालयों की स्थापना की जा रही है।

एक भारतीय श्रीलोकिक विज्ञाना सभिक को मुखावृत्त में विविध करने और बसाने के उपर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है। (द्वितीय पृष्ठ ३१४)। समुक्त राज्य प्रभारिता के विषयों की महत्ता में इन बात का ध्यान रखने के लिए कि समियों में समी को रहने करने की समता समी की प्रकल्पना का प्रभाव और वायु में समी का उनका स्वास्थ्य तथा उनकी वायुशुद्धता पर क्या प्रभाव पड़ता है एक अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन में उद्योग में धर्म बान-बगल और कार्य में सम्मिलित विज्ञान को निर्धारित करने की बातों को दिया गया है। इस प्रकार का अध्ययन महत्ताका की है बपड़ा मिलों में किया जा रहा है। दून १९३६ के द.० ए० एन० मुरासिपर की अध्यक्षता में एक स्वास्थ्य सर्वेक्षण व जायजता समिति की स्थापना की गई है। इस समिति का कार्य स्वास्थ्य सर्वेक्षण व विज्ञाना मुविधायी का प्रबन्धन करना तथा विद्यमानों करना है।

निम्न पञ्चवर्षीय धायोजना के अनुसार स्वास्थ्य कार्यक्रमों का उद्देश्य यह है कि वर्तमान स्वास्थ्य सेवाओं में विचार दिया जाय ताकि सभी लोग उन सेवाओं में लाभ उठा सकें और राष्ट्रीय स्वास्थ्य के स्तर में भी प्रगतिशील सुधार हो। इनके अतिरिक्त उद्देश्य निम्नलिखित हैं : (१) हृत्पान धादि बंधी संघोतनों की स्थापना (२) मजदूरी धर्म शक्ति का विकास और प्रविधित धर्मियों का रोडदार पर लगना (३) मजदूर कीधारियों की रोडदार के लिए धरणा करना (४) जायजगल धनुहुम स्वास्थ्य विज्ञान धामोक्तन और (५) परिवार नियोजन तथा धर्म सम्मिलित सहायता। द्वितीय धायोजना नाम में स्वास्थ्य कार्यक्रमों पर २५ करोड़ रुपया व्यय करने की धरणा की। प्रथम धायोजना में १६ धर्म १६० करोड़ रुपये का।

तीसरी धायोजना में स्वास्थ्य और परिवार नियोजन कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य स्वास्थ्य सेवाओं का विचार करना है और उनका के स्वास्थ्य में होने की सुधार करना है। निरोधक जन स्वास्थ्य सेवाओं पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। दूसरी धायोजना की तरह तीसरी धायोजना में धर्मों के धार की धर्म विचार धर्मों और धर्मों के धरणा की धर्म सहाय रोडों के धारण, स्वास्थ्य सेवाओं की धर-

रक्षा के लिए संस्थाओं द्वारा की जाने वाली मुक्ति का संगठन और स्वास्थ्य और चिकित्सा सम्बन्धी कर्मचारियों के प्रशिक्षण और रक्षा-रक्षा के स्वास्थ्य की सम्बन्ध स्वास्थ्य विद्या और पीठिका ग्राहण जैसी सेवाओं की व्यवस्था के लिए विद्यमान कार्यक्रम बनाए गए हैं। तृतीय प्रायोजन में परिवार नियोजन को भी विशेष प्राथमिकता दी गई है। तृतीय प्रायोजन कास में स्वास्थ्य कार्यक्रमों पर १४२ करोड़ रुपये खर्च किये जायेंगे।

सुझाव —

सरकार के यह प्रयत्न वास्तव में प्रशंसनीय हैं। श्रम समिति के कथन के अनुसार स्वास्थ्य का प्रश्न यह नहीं है कि किसी व्यक्ति को कोई रोग नहीं है या वह बीमार नहीं है बल्कि इसका तात्पर्य यह स्थिति से है जिसमें शरीर और मस्तिष्क एक साथ सुचारु रूप से कार्य करते रहें, ताकि मनुष्य अपने भौतिक व सामाजिक जीवन में पूर्ण लाभ और आनन्द उठा सके और उत्पादन क्षमता के अधिकतम बिन्दु तक पहुँच सके। बीमारी की रोकथाम व स्वास्थ्य का बने रहना अधिकतर हम आसानी से पर निर्भर करता है जिसमें मनुष्य पैदा होते हैं पढ़ते लिखते हैं गाते-पीते हैं, खसते फिरते हैं काम करते हैं और आराम करते हैं। इसलिए जब तक जीवन स्तर में सुधार नहीं होता और खूब-खूब की समुचित व्यवस्था नहीं की जाती तब तक औद्योगिक धमिक के स्वास्थ्य में सुधार करना सम्भव नहीं है। पर्याप्त भोजन और रहने की पन्दी व्यवस्थाएँ ही औद्योगिक स्वास्थ्य का मुख्य कारण हैं और सर्वप्रथम इन्हीं को सुधारने का प्रयत्न करना चाहिए। केवल डाक्यूरी मुक्तिवाचों में सुधार करना ही पर्याप्त नहीं है।

व्यवसायजनित रोग (Occupational Diseases) —

जहाँ तक व्यवसायजनित रोगों का सम्बन्ध है, इनका धमिकों को शक्तिपूर्ति के सम्बन्ध में पहले ही उल्लेख किया जा चुका है। जैसा कि बताया जा चुका है, नासिक व्यवसायजनित रोगों की रिपोर्ट नहीं है और अनेक बार जबकि धमिकों को शक्तिपूर्ति मिलनी चाहिए उन्हें शक्तिपूर्ति नहीं दी जाती क्योंकि इस बात की उचित रूप से ध्यान नहीं हो पाती कि किसी मनुष्य या बसवर्धता का कारण व्यवसायजनित बीमारी ही है। सन् १९४० में लंदनी अधिवेशन के सम्बन्ध में लंदनी के प्रकाशकों के लिये यह बात धमिकार्थ कर दी गई है कि यदि इनका कोई कर्मचारी किसी व्यवसायजनित रोग से ग्रस्त हो जाता है तो उसकी मूचना बँ। चिकित्सकों के लिये भी यह धमिकार्थ है कि यदि कोई ऐसा रोगी उनके पास इलाज के लिये आता है तो उसकी मूचना मुख्य निरी प्रक की बँ। इन ज्ञानुनी व्यवस्था से अब व्यवसायजनित रोगों के सम्बन्ध में ठीक बरार से रिपोर्ट होने लगेगी। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है, भारतीय मनुष्यवाज निधि परिषद् के औद्योगिक स्वास्थ्य अनुसंधान विभाग ने व्यवसायजनित रोगों के विवेकना छापागानों में भीसे और औद्योगिक वर्ग से उत्पन्न हुई विभिन्न रोगों के कारण बीमार्थियों के, सम्बन्ध में सर्वेक्षण किया है। सर्वे में इन वर्गों के

लिये एक अनुसंधानशाखा की पहले ही स्थापना की जा चुकी है। अतिल भारतीय स्वास्थ्य विज्ञान और सांख्यिक स्वास्थ्य संस्था ने भी एक पुस्तक तैयार की है जिसका नाम 'भारत में स्वास्थ्ययिक स्वास्थ्य अनुसंधान संस्था' है। इसमें अनेक अनेकलों और बच्चों का सार्वजनिक निवास किया है। सरकार ने स्वास्थ्ययिक रोगों की दूरी को बढ़ाने और उनमें बढि करने का परामर्श देने के लिये १२ सदस्यों की एक तकनीकी समिति नियुक्त की है। अतिरिक्त के प्रधान सलाहकार का कार्यलय वृहत् विविध अर्थियों में स्वास्थ्ययिक स्वास्थ्य सबट निर्धारित करने के लिए संस्था का कार्य करता है। इसके द्वारा ही कई रिपोर्टें भी जारी की गई हैं। स्वास्थ्ययिक रोग औद्योगिक अधिषो के विरुद्ध स्वास्थ्य के महत्वपूर्ण बाधा है। इनके लिए अधिषो को पर्याप्त अतिवृत्ति मिलनी चाहिये। जो अधिषो इन प्रकार के रोगों से बचत हो जाते हैं उन्हें नियुक्त विविधता की सुविधाये देने की भी व्यवस्था होनी चाहिये।

यहाँ तक किया सम्बन्धी सुविधाओं और उनके महत्व का सम्बन्ध है उनको अत्यायु बाय क अत्यायु-वृष्ट ११२-११८ में विवेचना की गई है। औद्योगिक सुरक्षा नामों और उनको रोकने की व्यवस्था का उद्योग बाय की दृष्टियों के अन्तर्गत वृष्ट ४१०-४४० पर किया गया है।

अधिक की कार्यकुशलता (Efficiency of Labour) और उसका अर्थ—

अधिक की कार्यकुशलता में हवाय अधिषोय बाय के उन स्तर और बाय की उच्च मात्रा से है, जो किसी निर्धारित अवधि में कोई अधिषो करता है। हमारे अर्थों में कार्य-कुशलता अर्थ का अन्तर्गत किसी निर्धारित अवधि में किसी अधिषो के अधिषो और अर्थ बाय करने की उद्योग से है। इसलिये अन्तर्गत के किसी भी उपकरण की कार्यकुशलता का अन्तर्गत पद की कुल मात्रा पर बहुत प्रभाव पड़ता है। अतिल यह बात विशेष अर्थव्यवस्था है कि कार्यकुशलता एक अन्तर्गत पद है। इसका किसी समय में अन्तर्गत के अन्तर्गत द्वारा लिए गए बाय का मात्रा और स्तर से ही अन्तर्गत नहीं है अतिल यह बात यह भी है कि बाय लेने बाय को उच्च अन्तर्गत की जो मात्रा पायी है उसकी मात्रा में अन्तर्गत बाय होता है। यदि यह उच्च बाय निर्धारित अर्थव्यवस्था में तो निर्धारित समय में किसी अर्थ अधिषो की अन्तर्गत यदि एक अधिषो अन्तर्गत और अधिषो बाय करता है तो वह अधिषो कार्यकुशल है। अतिल यदि पदका अधिषो बहुत अधिषो अन्तर्गत मात्रा है, अन्तर्गत अन्तर्गत करता अन्तर्गत के लिए सामर्थ्य नहीं है तो ऐसी परिस्थिति में अन्तर्गत के अन्तर्गत में पदका अधिषो अन्तर्गत नहीं होगा अन्तर्गत कि हमारा अधिषो जो कि कम अन्तर्गत मात्रा है। अन्तर्गत निर्धारित अर्थव्यवस्था में यह हम कार्यकुशलता के अर्थ में बाय करते हैं तो वह बाय की मात्रा अन्तर्गत और उच्च और अन्तर्गत समय में बाय हुआ अन्तर्गत बाय देने से और अन्तर्गत अर्थव्यवस्था में वह बाय की देने से कि अधिषो द्वारा बाय की गई अन्तर्गत मात्रा है। -

धमिक की कार्यकुशलता पर प्रभाव डालने वाले तत्व:-

कार्यकुशलता धमिक के स्वास्थ्य और चर्चित तथा उसके प्रतिभाव पर मूलतः निर्भर होती है। परन्तु धमिक के स्वास्थ्य और चर्चित पर प्रभाव डालने वाले बहुत से तत्व होते हैं।

पहला तत्व ती बंशानुगत गुण है। वैदिक प्रमाओं की सुममता से व्याख्या करना सरल नहीं है, परन्तु इनका कार्यकुशलता पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। प्रत्येक समाज में कुछ ऐसी आदिवासी हानी हैं, जिनके सदस्य किसी विशेष काम को करने में धम्य आदिवासी की अपेक्षा धमिक बरा होते हैं। उदाहरणतः पठान धमिक उत्तर प्रदेश प्रचका बंशानुगत के धमिकों की अपेक्षा धमिक बलवान होते हैं। यह बात उनकी शिष्टा, प्रविष्टाण या धम्य मुविष्टाओं में किसी प्रकार के धम्यर के कारण नहीं है अपितु वैदिक युगों के कारण है। कभी-कभी युवाओं या बच्चों के मरुके ऐसी योग्यता प्राप्त कर लेते हैं, जो सामान्यतया हमों में नहीं पायी जाती। दूसरा तत्व जलवायु का है। गर्म और नम जलवायु धारीरिक बल और चर्चित के विकास के लिए उपयुक्त नहीं है जबकि ठण्डी और शुष्क जलवायु का मनुष्य के स्वास्थ्य पर सामान्यक प्रभाव पड़ता है। गर्म देशों की जलवायु का धारीरिक चर्चितों पर कोई धम्य प्रभाव नहीं पड़ता। साथ ही जहाँ कहीं गर्मी के साथ नमी का संयोग ही जाता है तो वह प्रदेश बहुत अस्वास्थ्यक हो जाता है। जहाँ तक धारीरिक कार्य-कुशलता पर प्रभाव का सम्बन्ध है, गर्म देश की जलवायु की अपेक्षा समशीतोष्ण (Temperate) जलवायु निश्चय ही अच्छी है। परन्तु नम जलवायु का ही धमिक की कार्यकुशलता पर प्रभाव नहीं पड़ता कुछ धम्य बातें भी हैं जिनसे जलवायु के धम्य प्रभाव दूर हो सकते हैं। इसके धम्यरिक्त वैज्ञानिक धमिक के द्वारा भी जलवायु के प्रभाव को दूर किया जा सकता है।

एक और महत्वपूर्ण तत्व जिसका कार्यकुशलता पर प्रभाव पड़ता है, जीवन स्तर है। पर्याप्त भोजन धम्ये धामाओं की अस्वस्था पर्याप्त दम्य धाम्य और विनाशिता की बन्तुओं धमिक भी अस्वस्था के स्वास्थ्य पर धम्य प्रभाव डालती है और इनमें जमनी कायकुशलता में भी कृषि हो जाती है। किसी मनुष्य की धमिक यह बन्तुओं धाम्य नहीं है तो वह काम में धम्य मन नहीं लगा पाता और उसके काम करने रहने की धम्य का धम्य हो जाता है। एक और तत्व जिसका कार्यकुशलता पर प्रभाव पड़ता है वह धमिकों की मजदूरी है। मजदूरी का धम्य रहने-रहने के स्तर पर ही प्रभाव नहीं पड़ता बल्कि हमकी धमिक के धमिक या नम काम करने की योग्यता पर भी मनोवैज्ञानिक धमिकिया हीनी है। धम्य मजदूरी पाने वाला धमिक सामान्यतया धम्ये जीवन में मनुष्य होता है और धमिकी यह मन लगाकर नमी धमिक काम करना है बिनापर उम देश में धमिक उमे धमिक और निधमिध धम्य के मजदूरी धमिकी है। साम्ये धमिकीय में भी धमिक के लिए धमिक की धम्य कुशलता उनकी मजदूरी पर भी निर्भर करती है।

इसके प्रतिरिक्त सामान्य धीरे तकनीकी, दार्शनिक प्रकार की विद्याया वा भी व्यक्तुनमता पर प्रभाव पड़ता है। विद्या क विना न ता मनुष्य निगर पाता है धीरे न अपने बाताबरण क प्रति उसम रचि उत्पन्न हा पाती है। इस बात म लनिक भी मंरेह नही है कि विविध भूमि क प्रपशाहृत अधिक बुद्धिमान होता है धीरे अपने उत्तर दामित्व को अविधित भूमिको की अपेक्षा अधिक प्रच्छी तरह समझता है। तकनीकी प्रधिप्रण पाये हुये कर्मचारी निरक्षर हा अधिक वायकुमान हात है। काम करने वा परिस्थितियों का भी वायकुनामता पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। प्रकाश की सामुचित ध्यवस्था मंवातन स्वच्छता प्रकल की वसात्मक प्रावृति गाम्भ्य धीरे सुन्दर वातावरण प्रादि का भी मनार्थजनिक प्रभाव पड़ता है धीरे प्रच्छ वातावरण में ही मनुष्य दक्षिण होकर अपने काम में मन लगाकर उत्पादन म श्रुति कर सकता है। कार्य बुद्धिमता इस बात पर भी निर्भर करती है कि कार्य करने क पन्टे कितन हैं। यदि कार्य के पन्टे लम्बे ही धीरे अल्प बिराम या विभाम वा मनोरजन के समय की व्यवस्था न हा ता कार्यबुद्धिमता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। यदि कार्य विषय कम समय का नियत किया जाता है धीरे वाय समय म बीच बीच में अल्प बिराम दे दिने जाते हैं ता अधिक अपने कार्य को धीरे प्रच्छी प्रकार कर सकता है।

वारिचारिक जीवन वा भी भूमि क वायकुनामता पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। घर के जिन बाताबरण म अस्वित वा वासन-योग्य हाता है धीरे जिन वारिचारिक जीवन को अस्वित को अस्विताना पड़ता है। इसका भी अस्विक पर मनार्थजनिक प्रभाव होता है। इसका कारण यह है कि घर म हा अस्वित वा वासि मिलती है धीरे यह अस्विक अस्वित काय करने क लिए अपनी वासिओं का पुन अस्वित कर लेता है। अस्विक पर माना का भी अस्विक प्रभाव हाता है। इसके प्रतिरिक्त बाई वा अस्विक विनों के लिए नैर सपाट भी अस्विक के दृष्टिकोण का विस्तृत कर देते हैं धीरे उसकी वायकुनमता असाहृत बड जाती है। जीवन के प्रति अस्विक के सामान्य दृष्टिगत की भी कार्य की मात्रा पर बड़े प्रभावगामो प्रतिबिम्बा डाली है। कुछ लोग अस्विक से ही भाव्यवारी होते हैं। वे यह समझते हैं कि उनके कारण कुछ नहीं होता। जो कुछ होता है, सब भाग्य से ही होता है। वे अपने प्रयत्नों से अपनी बर्धितियों पर नियंत्रण प्राप्त करने की स्वयं कमी बेठा नहीं करते। इस प्रकार के दृष्टिकोण से अस्विक में उपरति करने की भावना कभी उत्पन्न नहीं हो पाती। धर्म की लक्ष्य प्रकार के लक्ष्यने वा भी इस श्रुति से अस्विक सम्बन्ध है। जीवन सामाजिक धीरे राजनैतिक तत्व भी जीवन के प्रति इन अस्विकता के लिए उत्तरदायी है। उदाहरण के लिये देस की जातीयता सामाजिक अस्विकता धीरे राजनैतिक अस्विकता धीरे भी बहुत समय तक भारत के अस्विकता लोका के दृष्टिकोण का विस्तृत करने के अनुकूल नहीं थी।

इसके प्रतिरिक्त किनो अस्विक की वायकुनमता इस बात पर भी निर्भर करती है कि उन अस्विक की कार्य करने में रचि मा दृष्ट्या है वा नहीं पड़ता यह

जीवन में तथा रोजगार में उपस्थित करने की प्रार्थना कर सकता है या नहीं तथा उसे स्वतन्त्र रूप से कार्य करने में कोई बाधा तो नहीं है। स्वतन्त्र व्यक्ति की तुलना में परतन्त्र व्यक्ति कभी अधिक कार्यकुशल नहीं हो सकता। इसके प्रतिरिक्त व्यक्ति का व्यक्ति ईमानदारी नियमितता धार्मिकविश्वास धार्मिकसम्मान कठिन परिश्रम की भावना तथा अन्य वैदिक गुणों से भी कार्यकुशलता में वृद्धि होती है। हीन बुद्धि वाले व्यक्ति की प्रवृत्ति बुद्धिमान व्यक्ति नहीं अधिक कार्यकुशल होता है। एक अन्य महत्वपूर्ण तत्व शिक्षा व्यक्ति की कार्यकुशलता पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। उद्योग का संघटन और उसके कार्य की सामग्री है। किसी व्यक्ति को उसी काम पर मजाना चाहिए जिसके लिए वह उपयुक्त है। इसके साथ ही साथ उसे काम के लिए सही प्रकार की मशीन और उपकरण दिए जाने चाहिये। एक कम बुद्धिमान व्यक्ति को पुरानी मशीन और रूढ़ी सामान का प्रयोग करना है कभी उत्तम मशीन का उत्पादन नहीं कर सकता। इस प्रकार व्यक्ति की कार्य कुशलता प्रवृत्ति की योग्यता और बुद्धि तथा कार्यव्ययन और मशीन व्यवस्था की प्राथमिक तकनीकी पद्धति धनाने पर भी निर्भर होती है। मजदूरी वितरित करने की प्रणाली यदि जैसे परिमाण के अनुसार मजदूरी देने की विधि से भी कार्यकुशलता में वृद्धि होती है। "नये अनिश्चित व्यक्ति संघटन से भी व्यक्तियों की कार्यकुशलता में उपस्थिति होती है। जब व्यक्ति सचित रूप से व्यक्ति संघ में संगठित होता है तब उसे स्वयं में व्यक्ति धार्मिकविश्वास हो जाता है और उसमें व्यक्ति काम करने की समता उत्पन्न हो जाती है। न्यायपूर्ण कार्य भी प्रामोद प्रमोद और मनोरंजन की व्यवस्था करके व्यक्तियों की कार्यकुशलता पर बड़ा प्रभाव डालते हैं जिससे वे अपनी क्षमता पुनः प्रकट कर लेते हैं।

इस प्रकार व्यक्ति की कार्यकुशलता प्रवृत्ति परिस्थितियों पर निर्भर होती है और यह बहुत बड़ा ही कठिन है कि किसी एक देश के व्यक्ति किसी अन्य देश के व्यक्तियों की तुलना में अधिक कार्यकुशल है या नहीं। किसी सामान्य निष्कर्ष पर पहुँचने में पहुँचते हैं इस सभी तथ्यों को ध्यान में रखना चाहिए।

कार्यकुशल व्यक्तियों के साम —

यह बात विचार्य अन्वयनीय है कि किसी देश की कार्यकुशल धर्म-व्यक्ति उक्त देश के लिए बहुत बड़ा बरदान होती है और देश के व्यक्ति जीवन में उपस्थित करने के लिए और देश के व्यक्ति विचार के लिए भी यह एक क्षमतामयी उपकरण है। कार्य कुशल व्यक्तियों के लिए व्यक्ति पर्यवेक्षण की आवश्यकता नहीं होती। न तो वे व्यक्ति सामग्री बना करते हैं और न ही मशीनों का कोई हानि पहुँचाते हैं। वे अपना काम बड़ी अनुशासन से करते हैं और उनके कार्य से बराबर और उत्तरदायित्व का बोध होता है। इस प्रकार के उद्योग में स्वदेशानुशासनीय व्यक्ति देने में लक्ष्य हो पाते हैं। जब चारों ओर वैधीगुण महयोग का वातावरण होता है तो देश के उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हो पाती है।

भारतीय धर्मियों की कार्यकुशलता—

भारतीय धर्मिक प्रत्यक्ष-रेशा के धर्मियों की अपेक्षा सामान्यतया कम कार्य कुशल समझा जाता है। यदि हम बातें हैं हम यह धर्म लें कि यारौनियन धर्मिक भारतीय धर्मिक से किसी निर्धारित समय में धर्मिक उत्पादन करने में समर्थ होता है तो इस प्रकार के बक्ष्य का विशेष करना सम्भव नहीं है। टैरिफ बोर्ड ने सन् १९२७ में यह कहा था कि भारत में प्रत्येक धर्मिक केवल १०० लघुओं की देगमान करता था जबकि यह संख्या जापान में २४० इंग्लैंड में २४० में ६०० तक और अमेरिका में ११२० थी। एक बुनकर जिन्स करपों पर काम करता है जब करपों की संख्या औसत रूप से जापान में २११ इंग्लैंड में ४ में ६ तक और लघुकराम्य में ६ थी जबकि भारत में यही संख्या साधारणतया लगभग २ थी। बालपुर धर्म जांच समिति ने भी कहा था कि जापान में प्रत्येक एक हजार लघुओं के लिए ९१ धर्मिक हैं जबकि भारत में १३ हैं। इसका तात्पर्य यह है कि भारत में एक धर्मिक बतार्न के बरत के एक घोर ही ध्यान देना है जबकि जापान में एक लघु धर्मिक तीनों घोर ध्यान देती है जापान में एक लघु धर्मिक ६ करपों की देग मान करती है जबकि हमारे यहाँ का बुनकर लगभग ६१ करपा की ही देगमान करता है। सर अलेक्जेंडर रीकरार्ड ने औद्योगिक धर्मियों के समय यह कहा था कि प्रत्येक धर्मिक भारतीय धर्मिक की अपेक्षा ३२ या चार गुना धर्मिक कार्यकुशल है। सर वनमेट सिम्पसन को गणना के अनुसार भारतीय बतारन की बतार्न ४ गुनाई धर्मिक के १५७ धर्मिक लघुगायन की धर्मिक के एक धर्मिक के समान है।

बल्कि इस प्रकार के विवरण में यह स्पष्ट नहीं हो सकता कि भारतीय धर्मियों में कोई सहायक शक्ति हीनता है। भारत में प्रत्येक भाग पर धर्मिक धर्मिक इन धर्मिक लघुओं के लिए धर्मिक मन्ने हैं और मन्ने नहीं हैं। इन्टरनेट में मन्ने की अपेक्षा धर्मिक है और इन्टरनेट धर्मिक की बतारन करना आवश्यक हो जाता है। भारत में प्रत्येक धर्मिक द्वारा कम उत्पादन होने का कारण केवल धर्मियों की कम कार्य कुशलता पर ही पूर्णतया लागू नहीं किया जा सकता। प्रत्येक की कुशलता बतारन मान की बतारन किन्तु धर्मिक की बतारन और उत्पादन किया में धर्मिक लघुओं की बतारन के कारण ही उत्पादन कम होता है। इनके परिचित भारत में काम करने के धर्मिक और लघुओं की बतारन है। साथ ही धर्मिक की परिचित धर्मिक की लघुओं है। इन विभिन्न देशों के धर्मिक की कार्यकुशलता की तुलना करने समय हम भारतीय धर्मिक की कुशलता के सम्बन्ध में बिना सीधे समझे कोई निर्णय नहीं दे सकते।

निम्न वर्तमान समय में जो परिचित है उनमें यह विचार हुआ है कि भारतीय धर्मिक इनका कार्यकुशल नहीं है किन्तु 'ने' होना चाहिए। बतारन में लघु बतारन है किन्तु हमारे धर्मियों की कुशलता बतारन है और लघु बतारन के कारण में हमें यह दखना है कि धर्मियों की कुशलता सम्बन्ध है या धर्मियों द्वारा बतारन

बडा कर कही जाती है क्योंकि मानक प्रकृतता की दुहाई देकर मजबूरी कम देने का एक सहानुभूति बना लेते हैं।

भारतीय धर्मिक की अनुदासता का कारण —

प्रथम तो हमारे देश की जनबायु कुसल कार्य के अनुकूल नहीं है। भारतीय जनबायु गर्म है और कठोर तथा सुस्तिर कार्य करने के लिए इतना प्रकृत प्रमाण नहीं पड़ता है बिसेपतया गर्मी की जलु में जन्तों बैठकर निरन्तर काम करना सम्भव नहीं हो पाता। मस्तिष्क जैसा कि संकेत किया जा चुका है, कारखाने में तापक्रम को नियंत्रित करने जनबायु की परिस्थितियों पर निरन्तर हो सकता है और कठोर परिश्रम के लिये उपयुक्त वातावरण का निर्माण किया जा सकता है। कार्य की दवाओं के प्रत्यक्ष यह उल्लेख किया गया है कि मानक तापमान पर निरन्तर रखने की भार बहुत ही कम प्रमाण देते हैं। इसलिये कठोर और निरन्तर कार्य धर्मिक के लिए बड़ा बटन हो जाता है और वह अपनी प्रकृत मिटाने के लिए कुछ न कुछ समय प्रत्यक्ष नष्ट करता है।

इसके प्रतिरिक्त जैसा कि विद्यार्थक सुविधाओं के प्रत्यक्ष उल्लेख किया जा चुका है भारतीय धर्मिक में प्रविष्टिता धर्मिक पाई जाती है। इसके प्रतिरिक्त उसे मशीनों का प्रयोगपूर्वक संज्ञान करने के लिए समुचित प्रविष्टता भी नहीं दिया जाता। रॉयल मम प्रायम और मिस्टर हेराल्ड बटसर ने इस विषय में अपने विचार जोरदार शब्दों में प्रकृत किए हैं (वेबिए पृष् ३१३-३१५)। काम में प्रविष्ट प्रविष्टता प्राप्त करने के लिए धर्मिकों को न तो समय और न ही संज्ञानों में सुप्रबसर प्राप्त हो पाते हैं। इसलिये यह कहना नितांत अनुचित है कि धर्मिक भारतीय धर्मिक विद्यार्थक के प्रविष्ट धर्मिक की प्रेषा कम बुद्धिमान है। वास्तविकता यह है कि धर्मिक की मानसिक प्रविष्टता के प्रभाव में विविष्ट नहीं हो पाती है।

कम मजबूरी और निम्न कोटि का जीवन स्तर सम्भवतया भारतीय धर्मिकों को कार्य अनुकूलता का सबसे महत्वपूर्ण कारण है। धर्मिकों को मजबूरी इतनी कम मिलती है कि यह धारणा नहीं की जा सकती कि धर्मिक कुछ प्रगति कर सकेंगे या अपने जीवन स्तर को ऊँचा उठ सकेंगे। धर्मिकों को प्रत्यासन्न प्रकृत भोजन तथा पहनने के लिए पैसे पुराने प्रपण्य कपड़े ही मिल पाते हैं और दिन मकानों में बह रहते हैं उनकी भी दया प्रत्यक्ष प्रकृत होती है। इन सबका विद्यार्थक पृष्ठों में विस्तृत वर्णन किया जा चुका है। निम्न कोटि के जीवनस्तर के कारण धर्मिकों की प्रकृत विविष्ट जाती है और उनके रहने का वातावरण भी विविष्ट हो जाता है। प्रत्यासन्न प्रकृत के प्रकृत बीमारियों के विकार हो जाते हैं और उनकी कार्य-शक्ति तथा कार्यकुशलता का हास हो जाता है। इसके प्रतिरिक्त काम करने की परिस्थितियाँ भी प्रत्यक्ष विविष्ट हैं तथा कारखानों का वातावरण भी संतोषजनक नहीं होता है। ऐसी प्रकृत परिस्थितियों के होते हुए वह यह कहे प्रकृत कर सकते हैं कि धर्मिक अपना कार्य परिश्रम में तथा नष्ट तथा कर कर रहे हैं।

ममिना की प्रभावशक्ति भी उनकी कार्यकुशलता पर प्रभाव डालती है। प्रभावशक्ति के कारण न केवल उनके स्वास्थ्य पर कुछ प्रभाव पड़ता है बल्कि उन्हें सही जीवन में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसके परिणाम ममिना की मरिचक पान की आग भी उगरी कार्य कुशलता के लिए उत्तरदायी है। अस्तु हम विषय में साधारणतया यही कहा जाता है कि ममिना अपने कठोर परिश्रम की क्षमताओं को जिनके के लिए हो मरिचक का महाराज मठा है और मरिचक पीकर वह अपने जीवन की कठिनाइयों को भूलने का प्रयत्न करता है। जब ममिना के लिए अच्छे गुण बुद्धिपूर्ण उपचार नहीं है और उन उचित चिन्ता करने की भी आवश्यकता नहीं है तब वह कोई आश्चर्य का बात नहीं है कि उनमें मत्तपान तथा केवलमन जैसी बुरी आदतें पड़ जाती हैं। विशेषतः उनके स्वास्थ्य और कार्यकुशलता पर कुछ प्रभाव पड़ता है। ममिना की कुशलरक्षण भी उनकी कार्य कुशलता के लिए कुछ सीमा तक उत्तरदायी है।

काय कुशलता का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण कारणों में अस्मिता व्यवस्था का समावेश है। ममिना पर प्रत्येक कारणों की ओर अनुभव दृश्य होता है। न तो ममिना अस्मिता होती है और न ही काम करने के लिए ममिना का अस्मिता सामान दिया जाता है। यद्यपि यह स्वाभाविक है कि पुरानी व अस्मिता ममिना को अस्मिता प्रकार के कष्ट मान के कारण ममिना अस्मिता उत्पन्न नहीं कर पाता है। निरीक्षण कमकारी कार्य की इतना प्रशिक्षण नहीं दिया जाता कि वे ममिना का उचित प्रकार से निर्देशन कर सकें। उत्पादनका बढ़ाने के लिए आधुनिक तकनीक का भी ममिना अपनाना जाता।

क्या भारतीय ममिना भारत में कार्य-कुशलता है ? —

जैसा कि पिछले पृष्ठों में उल्लेख किया जा चुका है ममिना की रूढ़-मान्य और कार्य करने की लोचनीय क्षमता ही उनकी कार्य-कुशलता का प्रमुख कारण है। यदि भारत का भारतीय ममिना इतना ममिना कार्यकुशल नहीं है जितना कि ममिना के अन्य महत्वपूर्ण लोगों के ममिना है तो इसका कारण यह नहीं है कि भारतीय ममिना में अस्मिता कार्यकुशल होने की क्षमता का अभाव है। यदि ममिना की लोचनीय क्षमताओं को देखा जाए तो उस पर यह दोष नहीं लगना या ममिना कि वह अपने कार्य में रुचि नहीं लेता। ममिना के कारण अपने परिवार और घरों का आभार से दूर होता है तथा ममिना की ओर लगे अस्मिता में हम अपना पड़ता है। उनके कार्य भी अस्मिता पाये तब कुशल और सुन्दर से धरे आभार से करता पड़ता है। उसे उचित प्रकार से निर्देशन करने के लिए कर्मचारी ममिना की नहीं मिलती है। महामन्त्र की द्वारा अस्मिता एवं अस्मिता पर अस्मिता से अस्मिता से अस्मिता अस्मिता अस्मिता है। ऐसी परिस्थितियों के कारण अस्मिता है कि ममिना कुशलतापूर्वक कार्य कर सके। यदि हमारे देश में भी वह सब परिस्थितियाँ का जाए जितना ममिना की कार्यकुशलता करती है। और जितना अस्मिता हम अस्मिता के अस्मिता में दिया जा चुका है तो भारतीय ममिना

भी बोड़े ही समय में धारणव्यवस्था रूप से उन्नति कर लेता। भारतीय धर्मिक की यह विशेषता है कि वह कठिन और प्रयास्य (Trying) परिस्थितियों में भी कुशलता पूर्वक कार्य कर लेता है और परिचित परिस्थितियों के अनुकूल अपने धर्म को बड़ी शीघ्रता से डाल लेता है।

धर्म अनुसंधान समिति के वर्षों में 'हमें जो भी प्रकाशित प्रमाण मिले हैं और अपनी जाति-व्यवस्था की दृष्टि में हम जो भी सुचनाएँ एकत्रित कर सके हैं उन से यह स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि भारतीय धर्मिक की उपायवित् कार्यकुशलता एक कोरी कल्पना है। यदि हम अपने धर्मिकों को बँते ही कार्य करने की बजाएँ मजदूरी उचित व्यवस्था मचीनें और अन्य धारि प्रदान करें जो दूसरे देशों में धर्मिकों को मिलती है तो भारतीय धर्मिकों की कार्यकुशलता भी अन्य देशों के धर्मिकों से कम न होगी। यही नहीं बल्कि जिस कार्य में भी धार्मिक सामान और संभल की व्यवस्था सम्योपग्रह नहीं होती वहाँ भारतीय धर्मिक ने दूसरे देश के अपने धर्मियों की अपेक्षा धर्मिक कार्यकुशलता का प्रमाण दिया है।'

द्वैती निम्न में भी भारतीय उद्योगों की तकनीकी कार्यकुशलता पर अपनी रिपोर्ट में इसी प्रकार का विचार व्यक्त किया था। कुछ वर्ष पूर्व बम्बई में जनरल मोटर्स लिमिटेड के जनरल मैनेजर ने भी यह कहा था कि यदि भारतीय धर्मिक को प्राथमिक प्रशिक्षण प्राप्त हो जाए तो वह व्यतिरिक्त रूप से उतना ही कार्यकुशल होगा जितना कि एक साधारण अमेरिकन धर्मिक होता है। सन् १९१२ में जब सर जामस हाउस ने दक्षिणी भारत के चम्पा उद्योग के विकास का कार्य अपने हाथ में लिया था तो सबसे पहले उन्होंने भारतीय धर्मिकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की थी। उस समय उन्हें यह देख कर धारण्य हुआ था और साथ ही प्रसन्नता भी हुई थी कि उत्साह की मचीन प्रशिक्षणों को भारतीय धर्मिक ने बहुत जल्दी सीख लिया था। टाटा के लोहे और इस्पात के बड़े-बड़े कारखानों में भारतीय धर्मिकों को कुशलता पूर्वक कार्य करता देखकर अनेक योरोपियन व्यक्तियों ने भी इसी प्रकार धारण्य प्रकट किया है। टाटा की सारी कम्पनियाँ भारतीय धर्म और भारतीय प्रवृत्त से चलती हैं। पि० टी० डब्ल्यू० कैंसे ने भी यह कहा है कि भारतीय धर्मिक प्रवृत्त धर्म के विरुद्ध हैं। वे संसार के किसी भी देश के धर्मिकों से होड़ में लगे हैं। पिछले महायुद्ध में सार्द सोरने नाम भारतीय धर्मिक और इजिप्शियनों ने धिम्न-निम्न स्थानों पर किए गए धारण्यव्यवस्था बाबों से अपनी जिस शोभता का प्रमाण प्रस्तुत किया था उसकी मकने सराहना की है।

यह कुछ वर्षों में औद्योगिक धर्मिकों की कार्यकुशलता में तीव्र प्रति से वृद्धि हुई है। यह बात हमसे स्पष्ट है कि महायुद्ध की कुछ वर्षों के युवाई से धर्मिकों की धर्मिकी समय से कार्य कर रहे हैं और कार्य की बजाएँ अपेक्षाकृत भारतीय धर्मिक होते हुए भी प्रत्येक धर्मिक का औद्योगिक उत्पादन संकायपर के धर्मिक के उत्पादन के ८२% तक पहुंच गया है। इजिप्शियन और विद्यतीय इजिप्शियन विभागों में

भी बुझा और घट्ट बुझा भारतीय धमिक कठिन काय भी बँसी ही रचि से करते हैं जैसा कि धम्य देशों में इ त्रिनियमित विभाग के धमिक कार्य करते हैं। यह भी सर्वविदित है कि भारतीय शिष्ठी अपनी कसालतक कृतियों क लिए सक्षार में प्रस्तात है। सक्षार का कोई भी विस्वकार भारतीय विस्वकार की कवरायी की बायीकी और शिषकारी की शिगमता की न तो कटाकयी कर तथा है और न मुकाबला ही कर पाया है।

धतएव जैसा कि भम अनुसधान समिति ने कहा है 'यदि यह देश काय कि इस देश में कार्य के पन्टे बहुत सन्धे हैं धम्य विराम (Rest Pauses) बहुत कम है प्रसिधाल और श्रमिदाशियो क लिए बहुत कम सुविधाएँ हैं घाटार का स्तर और कल्यास सम्बन्धी सुविधाओं का स्तर बहुत निम्न है तथा धम्य देशों की धम्येता मजदूरी भी बहुत कम है तो धमिकों की कवार्कचित कार्य धनुसलता का कारण यह नहीं हो सकता कि हमारे देश के लोगों की बुद्धिमता म बुद्ध कयी है या हमारे धमिकों में कार्य करने की रचि नहीं है। धमिकों की कार्य धनुसलता का कारण बैमानिक प्रकल्प का धमाक सम्बन्ध में उच्चतम नतिक स्तरों का धमाक बातावरण में गर्मी और नमी तथा धमिकों की निधनता धादि बुद्ध ऐसी परिस्थितियाँ हैं जिनक लिए धमिकों को उत्तरदायी नहीं टहूपाया जा सकता। इसमिण धमिका के स्तर को उँचा उठाने के लिए, उनके काम करने और रहने की धपड़ी बनाएँ उतमल्प करने के लिए तथा उनको धमिक प्रसिधाल की सुविधाएँ देने के लिए यदि निरन्तर प्रयत्न किए जाएँ तो यह दिन दूर नहीं होगा जब भारतीय धमिक यदि धमिक नहीं तो धम्य देशों के धमिकों के समान ही कार्यबुझा हो पायगा। इन विषयों में यदि उनके लिए सरकार द्वारा धाधरदक पव उठाएँ जाएँ तो भारतीय धमिक बहुत तीघ धपने में सुधार कर सया कवार्क उगमें सीधने और उन्मति करने की बहुत शकता है। भारतीय धमिक में सुमत कोई कभी नहीं है और कोई कारण नहीं है कि भारत के निवासी इस सम्बन्ध में किनी प्रचार की हीनता का धनुभव करें।

यत धपों में काय धनुसलता की निधापनों के कारण —

यन बुद्ध कपों से धमिकों की काय-नुसलता में कमी हा जान की निधापन सुनने में धाली है। यह कहा जाना है कि धम धमिक धपने धपिधारा के प्रति तो कल्प नत्रन हो गया है और धमिक में धमिक मजदूरी माँगने गया है परन्तु यह धपन कनधयो को धून गया है और काय करने में रचि नहीं मिला है। मन् १९४१ में टाटा माइल और इराण की कवरी के धपणा में कविधरानक क धमगर कर यह कहा जा कि इराण का धोमन उन्मालन मन् १९३१-३० में प्रति कर्मकारी २४-३९ टन का जो मन् १९४०-४१ में किर कर १९ ३० टन रह गया। उन्मने इन काय की भी शिधापन की दि बुद्ध विधाओं में धमिक धमिकतर धमकी धातविक शकता में धाया का एव निहाई काय कर रहे थे। धमिक ठेका कपों करने हे इसका कारण है इने के लिए हमें दूर नहीं जाना कनेसा। देश की परिधतित शान्तिधिक परिस्थितियाँ, धम धान्तेनन की

भी बोझे ही समय में घासबजलक रूप से उमलति कर लेगा। भारतीय श्रमिक की यह विसमता है कि वह कठिन और प्रयास्य (Trying) परिस्थितियों में भी कुशलता पूर्वक काम कर लेता है और परिवर्तित परिस्थितियों के अनुकूल अपने धाप को बड़ी योग्यता से ढाल लेता है।

श्रम अनुसंधान समिति के चर्चों में 'हमें जो भी प्रस्तावित प्रमाण मिले हैं और अपनी जाँच-पड़ताल की प्रशंसि में हम जो भी सूचनाएँ एकत्रित कर सके हैं उन से यह स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि भारतीय श्रमिक की उत्पादित कार्यकुशलता एक कोटी कल्पना है। यदि हम अपने श्रमिकों को बँधे ही कार्य करने की बजाएँ मजदूरी उचित व्यवस्था मशीनें और बन्ध आदि प्रदान करें जो दूसरे देशों में श्रमिकों को मिलती है तो भारतीय श्रमिकों की कार्यकुशलता भी अन्य देशों के श्रमिकों से कम न होगी। यही नहीं बल्कि बिना कामों में भी यांत्रिक सामान और संभलन की व्यवस्था समतोपप्रद नहीं होती वहाँ भारतीय श्रमिक ने दूसरे देश के अपने साथियों की अपेक्षा अधिक कार्यकुशलता का प्रमाण दिया है।

देखी विधान में भी भारतीय उद्योगों की तकनीकी कार्यकुशलता पर अपनी रिपोर्ट में इसी प्रकार का विचार व्यक्त किया था। कुछ वर्ष पूर्व बम्बई में जनरल मोटर्स लिमिटेड के जनरल मैनेजर ने भी यह कहा था कि यदि भारतीय श्रमिक को प्राथमिक प्रशिक्षण प्राप्त हो जाए तो वह व्यक्तिगत रूप से उतना ही कार्यकुशल होगा जितना कि एक साधारण अमेरिकन श्रमिक होता है। सन् १९१३ में जब सर चार्ल्स हार्मंड ने ब्रिटीश भारत के जमना उद्योग के विचार का कार्य अपने हाथ में लिया था तो सबसे पहले उन्होंने भारतीय श्रमिकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की थी। उस समय उन्हें यह देख कर अत्यन्त आश्चर्य हुआ था और साथ ही प्रसन्नता भी हुई थी कि उत्पादन की नवीन प्रणालियों को भारतीय श्रमिक ने बहुत जल्दी सीख लिया था। टाटा के सोह्रे और इत्याद के बड़े-बड़े कारखानों में भारतीय श्रमिकों को कुशलता पूर्वक कार्य करता देखाकर अनेक योरोपियन व्यक्तियों ने भी इसी प्रकार आश्चर्य प्रकट किया है। टाटा की सारी कम्पनियाँ भारतीय श्रम और भारतीय प्रबन्ध से चलती हैं। मि० सी० डब्ल्यू० कैटे ने भी यह कहा है कि भारतीय श्रमिक प्रबन्ध यत्नी के मित्र हैं। वे संसार के किसी भी देश के श्रमिकों से होड़ में सफ़ले हैं। गुजरात महापुत्र में गार्ड लोहेने नाम भारतीय श्रमिक और इंजिनियरों ने मिन्-बिम्ब स्थानों पर किए गए आश्चर्यजनक कार्यों से अपनी जिम योग्यता का प्रमाण प्रस्तुत किया था उसकी गबन सचहना की है।

जब कुछ वर्षों में औद्योगिक श्रमिकों की कार्यकुशलता में तीव्र गति में वृद्धि हुई है। यह बात हमें स्पष्ट है कि महाराष्ट्र की कुछ मिनी के पुनाहे एफ़ एच बरपो बर वाली समय से कार्य कर रहे हैं और कार्य की बजाएँ अनेकायुत समतोप बनक होते हुए भी प्रत्येक श्रमिक का पीछत उत्पादन लंकासावर के श्रमिक के उत्पादन के २५% तक बढ़क गया है। इंजिनियरिंग और विद्युतीय इंजिनियरिंग विभागों में

भी कुशल और अथ कुशल भारतीय धमिक कठिन कार्य भी बैसी ही रचि से करते हैं जैसा कि ग्रन्थ देवों में इ विनियारिण विभाय के धमिक कार्य करते हैं। यह भी सर्वविदित है कि भारतीय धिस्मी अपनी कसालमक कृतियों के लिए संसार में प्रख्यात हैं। संसार का कोई भी धिस्पर्कार भारतीय धिस्पर्कार की नककाशी की बारीकी और चिन्तकारी की स्मिग्धता की न तो बराबरी कर सका है और न मुकाबला ही कर पाया है।

अतएव जैसा कि धम अनुसंधान समिति ने कहा है 'यदि यह देखा जाय कि इस देश में कार्य के घन्टे बहुत सन्धे हैं धस्य बिराम (Rest Pauses) बहुत कम हैं अधिधरुण और अधिज्ञापियों के लिए बहुत कम सुविधाएं हैं आहार का स्तर और कस्याण सन्ध भी सुविधाओं का स्तर बहुत निम्न है तथा धन्य देवों की धवेला मजदूरी भी बहुत कम है तो धमिकों की तथाकथित कार्य प्रकुशलता का कारण यह नहीं हो सकता कि हमारे देश के लोगों की बुद्धिमता में कुछ कमी है या हमारे धमिकों में कार्य करने की रचि नहीं है। धमिकों की कार्य प्रकुशलता का कारण बैज्ञानिक प्रबन्ध का अभाव अथवाय में उच्चतम नैतिक स्तरों का अभाव बातावरण में गर्मी और नमी तथा धमिकों की निर्धनता आदि कुछ ऐसी परिस्थितियां हैं जिनके लिए धमिकों को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। इसलिए धमिकों के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए, उनके काम करने और रहने की प्रबन्धी दवाएं उपसन्ध करने के लिए तथा उनको अधित अधिधरुण की सुविधाएं देने के लिए यदि निरन्तर प्रयत्न किए जाए तो वह दिन दूर नहीं होगा जब भारतीय धमिक यदि अधिक नहीं तो धन्य देवों के धमिकों के समान ही कार्यकुशल हो जाएंगे। इन विषयों में यदि उनके लिए सरकार द्वारा आबन्धक पम उठाए जाएं तो भारतीय धमिक बहुत धीघ्र धपने में सुधार कर लेगा क्योंकि उसमें सीखने और उन्नति करने की बहुत समता है। भारतीय धमिक में मूलत कोई कमी नहीं है और कोई कारण नहीं है कि भारत के निवासी इस सन्धध में किसी प्रकार की हीनता का अनुभव करें।

गत धवों में कार्य प्रकुशलता की शिकायतों के कारण —

गत कुछ धवों स धमिकों की काय-कुशलता में कमी हो जाने की शिकायतें मुकने में आती हैं। यह कहा जाता है कि धम धमिक धपने अधिकारों के प्रति तो बहुत सन्ध हो गया है और अधिक से अधिक मजदूरी मांगने लगा है परन्तु वह धपन कर्त्तव्यों को भूल गया है और काम करने में रचि नहीं लेता है। सन् १९४९ में टाटा नादा और इत्यात की कम्पनी के अधिधरुण ने आधिकारिक के अन्तर पर यह कहा था कि इत्यात का धीमत अत्याधन सन् १९३९-४० में प्रति कम्पनी २४३९ टन था जो सन् १९४०-४९ में फिर कर १९३० टन रह गया। उन्होंने इस बात की भी शिकायत की कि कुछ विभागों में धमिक अधिधरुण धपनी बास्तविक समता स धाधा या एक तिहाई काम कर रहे थे। धमिक ऐसा क्यों करते हैं इसका कारण दू ठने के लिए हमें दूर नहीं जाना पड़ेगा। देश की परिवर्धित राजनैतिक परिस्थितियां धम धाम्बोसन की

बढ़ती हुई गति निर्यात लक्ष्य में कुछ कुछ राजनीतिक दलों का प्रयुक्त प्रचार, यदि सभी बातों में मिला कर धमिका में प्रस्ताव की भाषना उत्पन्न कर दी है और वे अपनी परिस्थितियों में उत्कास सुधार की मांग करने लगे हैं। प्रथम में जो परम्परागत प्रणालियाँ चली आ रही हैं उनमें भी वह समुष्ट नहीं है और कठोर अनुमान की वह प्रवृत्तता करने लगे हैं। विवकीकरण और कार्य तीव्रता की बाजनाओं में भी व्यक्तियों में बराजगारी का भय उत्पन्न कर दिया है और उनमें यह धारणा उत्पन्न हो गई है कि यदि वह अधिक कार्य करेंगे तो उनमें से कुछ व्यक्तियों की छुट्टी हो जाएगी। इसलिए अधिक कार्य करके रोजगार का काम करने की प्रवृत्तता वे अपने महयोगियों के साथ मिला कर कार्य करना चाहते हैं। परन्तु मजदूरी के ह्रास में किसी प्रकार का परिवर्तन न होने के कारण और कार्य करने के तथा रहने की बाजनाओं में किसी उल्लेखनीय सुधार के प्रभाव में व्यक्तियों करने की प्रवृत्तता भाव अधिक प्रमत्त है।

उत्पादकता (Productivity) —

भारत में व्यक्तियों की उत्पादकता बचाने का बहुत महत्व है बिनापर जब देश में अधिक विकास के लिए पंच-वर्षीय प्रयोजनमें लागू की गई है। भी मुलबाटी माल मन्दा का कथन है "व्यावहारिक रूप में उत्पादकता प्रगति का पर्यायवाची है। हमारे लिए इसका अर्थ केवल प्रगति ही नहीं बल्कि जीवन है। "संसार की वर्तमान प्रतियोगी अर्थ व्यवस्था को देखते हुए यह बहुत आवश्यक है कि हम अपने देश के माल को अधिक अच्छे प्रकार का बनाएँ उत्पादन सामर्थ्य को कम करें और कीमतों का बढ़ाएँ। इस प्रकार ही हम विदेश बाजार में अपने देश के माल के लिए स्थान बना सकते हैं तथा अपने देश के भीतर भी बाजार को बिलुप्त कर सकते हैं। यदि हम विदेश बाजार में परमतापूर्वक स्पर्धा करना चाहते हैं तो व्यक्तियों की उत्पादकता बढ़ाने की ओर हम उत्तम प्रयत्न हैं। अधिक उत्पादकता से जो लाभ हमें वह सभी वर्गों का उपलब्ध है। बाजारों के बिलुप्त होना से उत्पादन सामर्थ्य भी बढ़ेगा और उद्योग को भी प्रोत्साहन पहुँचेगा। उत्पादन लागत बढ़ने से मूल्य में कमी हो जायेगी अधिक अच्छे प्रकार का माल तैयार होगा और उपभोक्ताओं को भी लाभ होगा। अधिक उत्पादकता के कारण व्यक्तियों को भी अधिक मजदूरी मिलेगी और उनका जीवन स्तर ऊँचा हो जाएगा। उद्योग की उत्पादकता ही वह स्रोत है जिसमें से ऊँची मजदूरी का भुगतान किया जाता है। किसी प्रकार का किसी भी धोरण को भी बचाव उद्योग की प्रोत्साहन सामर्थ्य से अधिक मजदूरी दिलाने में समर्थ नहीं हो सकता क्योंकि यदि ऐसा किया जाएगा तो बेरोजगारी व मुद्रा प्रसार जैसी दुर्भावनी स्थितियों का सामना करना पड़ेगा। इनके प्रतिरुद्ध उत्पादकता बढ़ने से देश के प्रत्येक प्राथमिक साधन से अधिक उत्पादन उत्पन्न होगा कुल उत्पादन बढ़ जाएगा और परिणामस्वरूप राष्ट्रीय आय में कुछ होगी निर्यात भी अधिक होगा रोजगार अधिक मिलेगा तथा जीवन स्तर भी ऊँचा हो जाएगा। उत्पादकता बढ़ाने का उद्देश्य यह है कि प्राप्य (Available) सामर्थ्य हाएँ

अधिकतम उत्पादन हो और किसी भी प्रकार की सामाजिक या धार्मिक विपत्ति (Distress) का सामना न करना पड़े। ऐसे उचित वातावरण बनाने के लिए जिसमें मानिक व मजदूरों के सम्बन्ध सौहार्दपूर्ण हों तथा धमिकों की कार्यकुशलता अधिक हो और उनका जीवन स्तर ऊँचा हो, उत्पादकता धान्दोसन की ओर अच्छी प्रकार से ध्यान देना चाहिए तथा उसे प्रोत्साहन मिलना चाहिए।

यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि यद्यपि अधिक उत्पादकता से अधिक उत्पादन होता है तथापि इसका अर्थ यह नहीं है कि यदि उत्पादन में वृद्धि होती है तो आवश्यक रूप से उत्पादकता में भी वृद्धि होती है। हम उत्पादन में दो प्रकार से वृद्धि कर सकते हैं—प्रथम तो अधिक साधन और उपादानों को समाकर उत्पादन बढ़ाया जा सकता है और द्वितीय उत्पादन में वृद्धि प्रत्येक धमिक प्रत्येक घण्टे प्रत्येक दिन या प्रत्येक वर्ष उत्पादन बढ़ाकर की जा सकती है। उत्पादकता में वृद्धि का अर्थ द्वितीय प्रकार की वृद्धि से लिया जाता है। किसी भी संस्था में एक ही समान मात्रा और विविध गुण वाला उत्पादन एक निश्चित समय में यदि १० व्यक्तियों द्वारा किया जाता है और दूसरी संस्था में उसी समान मात्रा और गुण वाला उत्पादन करने ही समय में १२ व्यक्तियों द्वारा किया जाता है तो 'उत्पादन' तो बराबर होगा परन्तु पहली संस्था में 'उत्पादकता' अधिक होगी।

अम उत्पादकता की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है कि अम समय के अनुपात में प्रत्येक इकाई में कितना निपज (Output) होता है उसे अम उत्पादकता कहते हैं। अम धूरो द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार अम उत्पादकता का अर्थ भौतिक उत्पादन या निपज के उस अनुपात से है जो उद्योग में अम निवेश (Input) की मात्रा से प्राप्त होता है। परन्तु यह एक बहुत विस्तृत परिभाषा है। अम के निपज और उद्योग में अम के निवेश की मात्रा को किस प्रकार मापा जाता है उसके अनुसार इसके कई अर्थ हो सकते हैं। इस प्रकार से अम उत्पादकता अम की आंतरिक कार्यक्षमता से हुए परिवर्तनों को स्पष्ट नहीं करती बल्कि उस परिवर्तनहीन प्रभाव को प्रकट करती है जिसमें अम का अम साधनों के साथ प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार अम उत्पादकता पर अनेक बातों का प्रभाव पड़ता है। परन्तु इससे बड़ी संस्था में अम-अमग परन्तु फिर भी एक दूसरे में आपस में सम्बन्धित साधनों का सम्मिश्रित प्रभाव होना प्रकट होता है 'उदाहरणतः' लकड़ीकी मुष्ण उत्पादन की गति उत्पादन की विभिन्न प्रक्रियाओं में प्राप्त की गई कार्यक्षमता की मात्रा सामग्री की उपलब्ध मात्रा आदि के प्राप्त होने की प्रति मानिक-मजदूर सम्बन्ध धमिकों की कुशलता और उनके प्रयत्न प्रबन्ध की कार्यक्षमता आदि प्रादि। उत्पादन के सभी उपादानों की उत्पादक कार्यक्षमता में परिवर्तन और उपादानों के स्थानापत्ति के कारण वास्तविक अम मापन में जो अक्षय प्राप्त होती है अथवा उसमें जो अक्षय होता है उससे अम उत्पादकता के परिवर्तनों का पता लग सकता है। भौतिक निपज से सम्बन्धित प्रदनों के अध्ययन के लिए अम निवेश को ही उपयुक्त ममम्ह कहा है

क्योंकि धन निवेश धन्य उपादानों के निवेश की अपेक्षा उत्पत्ता से मापा जा सकता है। इसके प्रतिरिक्त धन निवेश में एक ऐसी समानता होती है जो सामान उद्योगों प्रक्रियाओं और मशीनों में पाई जाती है। लेकिन यदि प्राथमिक हो तो किसी भी उपादान की उत्पादकता का अध्ययन करने के लिए उस उपादान की एक इकाई की उत्पत्ति को लिया जा सकता है।

सूत्रों से जो भी अध्ययन किया है उसमें धन निपज और धन निवेश को दो अर्थों में लिया है। निपज के जो दो अर्थ लिए हैं वह हैं 'स्मिर मूव्यों पर 'कुल (Gross) निपज' और 'निबल (Net) निपज'। कुल निपज उद्योग की प्रतिवर्ष निपज को बताती है। विनिर्माण प्रक्रियाओं द्वारा जो सामग्री निवेश में मूल्य (Value) बढ़ जाता है निबल निपज उस घोर संवेत करती है। कुल निपज में साधारणतया सामग्री की सामत का अधिक समानुपात होता है। इस कारण धन निवेश में परिवर्तन होने से इस पर कम प्रभाव पड़ता है। परन्तु क्योंकि निबल निपज जो भी सामग्री का प्रयोग किया जाता है और जो मूल्य प्राप्त होता है उसे कुल मागत में से घटा कर घाती है इस कारण धन निवेश के परिवर्तनों का इस पर अधिक प्रभाव पड़ता है। धन निवेश को धन बचों और धन बचों में मापा जाता है। इन अर्थों के आधार पर धन उत्पादकता को चार प्रकार से मापा जा सकता है —

- (क) प्रति धमिक कुल निपज $= \frac{\text{कुल निपज}}{\text{रोजमर पर लगे धमिक}}$
- (ख) प्रति धम बटे कुल निपज $= \frac{\text{कुल निपज}}{\text{जितने धम बटे काम हुआ}}$
- (ग) प्रति धमिक निबल निपज $= \frac{\text{निबल निपज}}{\text{रोजमर पर लगे धमिक}}$
- (घ) प्रति धम बटे निबल निपज $= \frac{\text{निबल निपज}}{\text{जितने धम बटे काम हुआ}}$

बिना किसी विवेक उद्देश्य के लिए उत्पादकता सूचकांक की प्राथमिकता होती है उसी दृष्टि से इन चारों प्रकार के सूचकांकों का समतल-समय प्रयोग हो सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय धन संगठन के प्रकाशन के अनुसार [[विनिर्माण उद्योगों में अधिक उत्पादकता (Higher Productivity in Manufacturing Industries)] ऐसे उद्योगों की जिनका उत्पादकता पर प्रभाव पड़ता है, तीन मुख्य अंशों में बाँटा जा सकता है (१) मशीन यन्त्र व सामग्री (२) संगठन और उत्पादन पर नियन्त्रण (३) कार्मिक नीति (Personnel Policy)। प्रथम अंश के अन्तर्गत निम्नलिखित बातें घाती हैं प्रत्येक धमिक के लिए अधिक पूंजी देना उत्पादन की पद्धति ऐसी लागू करना जिसमें अधिक पूंजी हो मात्र और सामग्री का अधिक उचित प्रकार से उपयोग करना और प्रयोग करना, कम लागत वाले सामान उत्पादकता शक्ति द्वारा

चाहूँ धीजाएँ घासि का प्रयोग करना मशीनों की मशीन-भाँति देखभाल रखना और मशीनों को अच्छे ढंग से समाना । समयठन और उत्पादन के नियन्त्रण के अन्तर्गत निम्न निम्नित बातें घाटी हैं अधिक अथवा प्रबन्ध व प्रसासन उत्पादन आयोजन तथा नियन्त्रण सायत और बजट नियन्त्रण सरस विधि समानीकरण तथा विधिपटीकरण कम लागत वाले डिजाइन, कार्यविधि अध्ययन कार्य का मापदण्ड मूल्य नीति तथा बिक्री कार्य । कामिक नीति में निम्ननिम्नित बातें घाटी हैं अधिक-प्रबन्धक सहयोग विवेकपूर्ण योजना नीति, उचित प्रकार से श्रमिकों का जुनाब और उन्हें कार्य पर समाना विभिन्न स्तरों पर व्यवसाय सम्बन्धी प्रशिक्षण प्रागमिक (Inductive) पाठ्य-क्रम परोक्षतः तथा स्तर उन्नति कुशल पर्यवेक्षण कार्य सन्तुष्टि, निपुण श्रमिकों को कार्य पर समाना विवेकपूर्ण मजदूरी नीति उचित पारियाँ तथा उचित कार्य के घंटे कार्य की दशाओं और कस्याण सुविधाओं में उन्नति उद्योग में स्वास्थ्य और सुरक्षा नीति तथा अनुपस्थिति और श्रमिकावर्त में कमी ।

इंग्लैण्ड की 'इम्पीरियल कैमीकल इन्डस्ट्रीज' के मि० रसल क्यूरी (Mr. Russel Currie) ने उत्पादकता की सरस दार्श्यों में व्याख्या की है । उनके अनुसार "किसी भी उस्थान की उत्पादकता का धर्म उस अनुपात से होता है जो उत्पादित मात्र और सेवाओं तथा उपयोग में जाए गए साधनों के बीच में घाटा है । उत्पादकता को प्राप्त करने के लिए सबसे अच्छी विधि यह है कि वर्तमान साधनों का अधिक अच्छे ढंग से प्रयोग किया जाय तथा समस्त साधनों से और समस्त रूप से इन साधनों का विकास करके और प्रयोग करके कम विवेक से अधिक मात्रा में मात्र का उत्पादन किया जाय ।" इसको प्राप्त करने के लिए उन्होंने प्रबन्ध तकनीक के रूप में कार्य अध्ययन योजनाओं को लागू करने पर बल दिया है ।

उपरोक्त विवेचन से यह भ्रम हो सकता है कि उत्पादकता का विचार बहुत ही अधिक तकनीकी है और बिना अधिक तकनीकी ज्ञान व बुद्धिमत्ता के हमारे जैसे देश में उत्पादकता बढ़ाना कठिन होगा । परन्तु ऐसा नहीं है । उत्पादकता का धर्म विवेकीकरण से नहीं सेवा चाहिए । विवेकीकरण (Rationalization) में (क) केन्द्रीय नियन्त्रण एवं यन्त्रीकरण तथा (ख) प्राप्तिनीकरण एवं समानीकरण आते हैं । विवेकीकरण का श्रमिकों द्वारा विरोध हुआ है क्योंकि इसके कारण कई स्थानों पर कार्यों में तीव्रता लाकर श्रमिकों को निष्क्रिय दिया गया है । उत्पादकता आन्दोलन में इस प्रकार का कोई भय नहीं होना चाहिए । द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में यह कहा गया है । "उत्पादकता में वृद्धि करने से यह तात्पर्य नहीं है कि नई मशीनों को समाना ही बाय प्रयत्न श्रमिकों को अधिक भार उठाना पड़े । मशीनों को उचित प्रकार से समाना, काम की दशाओं में उपरति करना और श्रमिकों को प्रशिक्षण देना ऐसे पण हैं—जिनसे श्रमिकों पर बिना अधिक भार डाले उत्पादन में वृद्धि हो सकती है और कुछ परिस्थितियों में तो भार को कम करके भी उत्पादन में वृद्धि हो सकती है ।" पन्त राष्ट्रीय श्रम संघटन का जो उत्पादकता सम्बन्धी दल (Productivity Mission)

धारा या उसने भी इस धोर संकेत किया था कि उत्पादकता का धर्म मन्त्रीकरण ही नहीं है। इसका धर्म यह है कि प्रबन्धकों और श्रमिकों में ऐसे वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास किया जाय जिससे वैज्ञानिक सिद्धान्तों और उचित तकनीक द्वारा वर्तमान माचनों का प्रचण्डी प्रकार से प्रयोग हो सके।

उत्पादकता के विचार का हमें कार्यकुशलता के विचार के साथ ही सम्बन्धन करना चाहिए। कार्य-कुशलता का विचार बहुत पुराना है। उत्पादकता के विचार में हमें केवल उत्पादन या निपज पर ही बल नहीं देना चाहिए बल्कि प्रचण्डी निपज पर धोर देना चाहिए। इसका धर्म यह है कि हमें उत्पादन की मात्रा के साथ साथ उसके गुण का भी ध्यान रचना चाहिए।

उत्पादकता और कार्य कुशलता पर श्रमिकों के सामाजिक जीवन का भी प्रभाव पड़ता है। धरेसू बाठाबरण जिसमें व्यक्ति का पालन पोषण होता है और पारिवारिक जीवन को व्यक्ति व्यतीत करता है उसका श्रमिक पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव मड़ता है। यदि कोई श्रमिक घर में धप्रभी पत्नी से मगड़ा करने फँकड़ी में कार्य करने धाता है तो वह कुशलतापूर्वक कार्य नहीं कर सचता। इसमिए हमें उन तत्त्वों में जिनका प्रभाव उत्पादकता पर पड़ता है सामाजिक तथा संस्थावाची (Institutional) तत्व भी सम्मिलित कर लेना चाहिए।

इसके अतिरिक्त जैसा अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के श्रम का कथन है, जिन बातों से उत्पादकता में वृद्धि होती है वह बातें सभी धा सकती हैं बबकि उद्योग में मानवीय सम्बन्ध पारस्परिक मान्यताधों पर धाधारित हों और इस बात का विश्वास हो कि परिवर्तित धोर नवीन पद्धतियों से न केवल सभी धर्मों को लाभ होया बल्कि धाय तथा कार्य करने की बसाधो में भी उन्नति होगी और रोजगार के धवसरों में वृद्धि होगी। यह बहुत धावश्यक है कि उद्योग में श्रमिक धोर मासिकों के ध्रापसी सम्बन्ध गीहार्दपूर्ण और रचनात्मक धंग के हों। श्रमिक संघ श्रमिकों को समझने और इस बात का विश्वास दिमाने में कि धधिक उत्पादकता से उनको भी लाभ होगा बहुत महत्वपूर्ण कार्य कर सकते हैं। मासिकों में भी विश्वास उत्पन्न करने की बहुत धावश्यकता है और समाजवाध या पूंजीवाध के विचारों को समाप्त कर देना चाहिए। मासिकों और श्रमिकों के बीच जो ध्रापसी सन्धेह का बाठाबरण है उसे दूर करना होया और धधिक उत्पादकता लाभ के लिए दोनों का सहयोग बहुत धावश्यक है। मासिकों को चाहिए कि धधिक उत्पादकता से जो लाभ हों उनसे श्रमिकों को बंधित रखने का प्रयत्न न करें।

यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि धधिक उत्पादकता का बाठाबरण बनाने के लिए श्रम सम्बन्धी धधिनियमों को पूर्ण और प्रभावान्मक रूप से लागू करना चाहिए। यदि किसी धधिनियम में कोई दोष है तो उसे धधिनियम में संशोधन कर देना चाहिए या उसे परिवर्तित कर देना चाहिए। परन्तु धब तक धधिनियम लागू हैं। इसके उपबन्धों से बचने का कोई प्रयत्न नहीं करना चाहिए और न ही उसकी धधिनियों

से अनुचित नाम उठना चाहिए।

भारत में शक्तियों की उत्पादकता के अध्ययन का प्रारम्भ अभी हाल ही में हुआ है। २२ जनवरी १९५२ के एक सम्मेलन के परिणामस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय मन्त्र संघटन ने इससे पहले के पांच प्रमुख विषयों के एक दल को दिसम्बर १९५२ में भारत भेजा था। इस दल का कार्य यह बताना था कि कार्य-अध्ययन की प्राकृतिक तकनीकी प्रणालियों से शैक्षिक संघटन से तथा उत्पादन के अनुसार गुणवत्ता करने की पद्धति से क्या शैक्षिक इन्वैनिमेंट उद्योगों के शक्तियों की उत्पादकता और मात्रा में किस प्रकार वृद्धि की जा सकती है। अन्तर्राष्ट्रीय मन्त्र संघटन का एक अन्य दल १९५४ में आया। इस दल के इन्वैनिमेंट उद्योग में तथा महामात्र और शैक्षिक शक्तियों के दल में इन दोनों ने सराहनीय कार्य किया। उद्योग मन्त्र व सामग्री और उद्योग कर्मचारियों के होते हुए इस दल ने उत्पादकता की तकनीकी बातों में बहुत ज्ञान कर दी। इस निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुँचा है—

(१) भारत में कार्य-अध्ययन की तकनीक को लागू किया जा सकता है और इससे उत्पादन बढ़ाने में बहुत सफलता मिलेगी। (२) अन्तर्राष्ट्रीय मन्त्र संघटन से लागू की जाय तो कार्य-अध्ययन की तकनीक शैक्षिक सम्बन्धों में सुधार कर सकती है। (३) पूँजी के निवेश के बिना भी उत्पादकता में पर्याप्त वृद्धि हो सकती है। (४) कार्य करने की दशाओं में सुधार करना भी एक ऐसा अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व है जिससे उत्पादकता में वृद्धि हो सकती है। (५) कार्य करने की दशाओं में सुधार करके शैक्षिक मन्त्र को कम करके और उत्पादन तथा मजदूरी में वृद्धि करके कार्य-अध्ययन पद्धति शक्तियों को लाभ पहुँचा सकती है।

इन सुझावों के परिणामस्वरूप अक्टूबर १९५४ में सरकार ने शैक्षिक मन्त्रों के राष्ट्रीय मन्त्र संघटन, के एक भाग के रूप में एक 'राष्ट्रीय उत्पादकता केन्द्र' की स्थापना की। अभी से कुछ कार्य-अध्ययन की व्यापक प्रायोजनाओं को विभिन्न केन्द्रों में प्रारम्भ कर दिया गया है। पूना के निकट दापोरी नामक स्थान पर शैक्षिक उद्योग की मातामह-कार्यशाला में एक कार्य-अध्ययन सुधार प्रायोजना शुरू की गई। दिल्ली और बीनगर में भी मातामह कार्यशालाओं में कार्य-अध्ययन प्रायोजनाओं को कार्य-अध्ययन किया जा चुका है। पर्यवेक्षकों के लिए एक 'अन्तर्कार्य प्रशिक्षण केन्द्र' की भी व्यवस्था की गई है। (देखिए परिशिष्ट 'ग')। मई १९५७ में अन्तर्राष्ट्रीय मन्त्र संघटन की सहायता से उत्पादकता दल ने मद्रास और कोयमुतूर के उद्योगों में तथा कसकता की इन्वैनिमेंट परिषद के कारखानों में भी उत्पादकता प्रायोजनाएँ शुरू की थीं। मद्रास प्रायोजना की रिपोर्ट प्रकाशित कर दी गई है। १९५८-५९ में शैक्षिक मन्त्रों के कार्य-अध्ययन कार्यक्रमों का आयोजन किया गया था, तथा कसकता में एक विश्व प्रसिद्ध-शैक्षणिक उत्पादकता प्रदर्शनी, आदि की भी व्यवस्था की गई। अक्टूबर १९५८ में कसकता में भी एक विश्व प्रसिद्ध शैक्षणिक प्रायोजना किया गया। राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद तथा अन्तर्राष्ट्रीय मन्त्र संघटन ने संयुक्त रूप से अक्टूबर १९६०

से कमतर में एक उच्च प्रवृत्त प्रायोजन प्रारम्भ की है। 'धन स्यूरो' में फूट बरत मोड़ा व इत्यादि चीनी सूती बरत काच सीमेंट कागज, माचिस तथा ऊनी बरत उद्योगों में जिन उद्योगों की संख्या १ है, उत्पादकता सूचकांक बनाने के लिए प्रायोजनार्थें शुरू की हैं। इनमें से कुछ उद्योगों की रिपोर्टों को प्रतिम रम दिया जा रहा है। यह वार्षिक सूचकांक १९४८ से १९५१ तक के वर्षों के पैयार किए पायेंगे और इनके लिए १९४७ को आधार वर्ष माना गया है।

उत्पादकता समिपान में एक महत्वपूर्ण पग को उठाया गया है वह राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद् (National Productivity Council) की स्थापना का है। परिषद् की रजिस्ट्री करवरी १९५८ में हुई थी। ऐसी परिषद् की स्थापना का विचार सर्वप्रथम भारतीय उत्पादकता प्रतिनिधि मंडल द्वारा सुझाया गया था। यह मंडल फरवरी १९५१ में इस उद्देश्य से जापान गया था कि उस देश में उत्पादकता को बढ़ाने का प्रयत्न करे। नवम्बर १९५७ में एक उत्पादकता सेमिनार में इस की रिपोर्ट पर विचार किया गया। इस सेमिनार की सिफारिशों के परिणामस्वरूप राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद् की स्थापना करवरी १९५८ में की गई जिससे उत्पादकता की विशेष समस्याओं पर अनुसंधान किया जा सके और उत्पादकता सम्बन्धी सूचनाओं का प्रसार हो सके। यह परिषद् एक स्वायत्त (Autonomous) संस्था है। परिषद् का उद्देश्य उन्नत पद्धतियों साधनों के उचित प्रयोग उच्च जीवन स्तर और उन्नत कार्य दशाओं के द्वारा उत्पादकता में वृद्धि का आन्वेषण करना है। इस परिषद् में मामिकों और समिकों के राष्ट्रीय संघों के सरकार के तथा अन्य हितों वसि तकनीकी व्यक्ति समाहकार, छोटे उद्योग व विद्वानों आदि के प्रतिनिधि अवस्थ हैं जिनकी संख्या लगभग १० है। डा पी० एस० मोहनान को इस परिषद् का अध्यक्ष नियुक्त किया गया है। राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद् ने देश भर में विभिन्न उत्पादकता तकनीक सम्बन्धी अनेक पाठ्यक्रमों का आयोजन किया है। परिषद् औद्योगिक व विनियमित औद्योगिक प्रवृत्त और औद्योगिक सम्बन्धों में प्रसिद्धि के लिए प्रशिक्षणों को विशेष धी भेजती है। परिषद् ने उत्पादकता बढ़ाने गहन कार्य प्रयत्न और उद्योग के मन्दर ही तकनीकी ज्ञान विनिमय के लिए देश भर में उत्पादकता दलों का भी आयोजन किया है। कार्य-क्रम में सहायता देने के लिए आयु सम्मेलन बार-बार मोटियों आदि का भी आयोजन करती रहती है। पांच क्षेत्रीय उत्पादकता निदेशालय तथा स्थानीय उत्पादकता परिषदों की स्थापना भी की गई है। ४४ स्थानीय उत्पादकता परिषदों की स्थापना की जा चुकी है और सभी मुख्य मुख्य औद्योगिक क्षेत्रों में भी ऐसी परिषदों की स्थापना की जा चुकी है। इन स्थानीय परिषदों में मामिक प्रमिक राज्य सरकार और अन्य हितों के प्रतिनिधि होते हैं। इन परिषदों में मामिक और समिक दोनों मिलकर अधिक उत्पादकता के ल्ये को प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं। इन परिषदों के माध्यम से ही अधिक उत्पादकता समिपान को औद्योगिक इकाइयों तक पहुंचाया जाता है।

के अन्तर्गत काम करने वाले सभी श्रमिक—०.४० टन ।

कुछ उद्योगों में उत्पादकता और धाय के सम्बन्ध में जो परिवर्तन हुए उनके अध्ययन की रिपोर्ट १९२२ में प्रकाशित हुई थी। इसके यह पता चलता है कि (१) कोयला खान उद्योग में श्रमिक और डोने वारों की उत्पादकता में १९२१ और १९२४ के मध्य वृद्धि की दर ०.७६ प्रति माह थी। परन्तु उनकी औसत दैनिक मजदूरी धाय की वृद्धि की दर ०.२६ थी। (२) कायल उद्योग में १९४८ तथा १९२३ के बीच श्रमिकों की औसत धाय तो बढ़ गई थी परन्तु उनकी उत्पादकता बढ़ोत्तरी का कोई प्रमाण नहीं मिलता था। (३) बूट कपड़ा उद्योग में उत्पादकता में वृद्धि की दर १९४८ और १९२३ के मध्य २.६ प्रति वर्ष की और धाय में वृद्धि की दर ३.७ थी तथा (४) सूती कपड़ा उद्योग में १९४८ और १९२३ के मध्य उत्पादकता में वार्षिक वृद्धि की दर २.२८ थी तथा धाय में वृद्धि की दर १.१४ थी।

१९२२ में कारखाना श्रमिकों की उत्पादकता के सूचकांक और वास्तविक धाय के सूचकांक के सम्बन्धों का अध्ययन किया गया था और इसके जो परिणाम निकले वह निम्न तालिका से स्पष्ट हो जायेंगे * (पृष्ठ २३१ पर भी श्रमिकों की शक्ति)

(धायार वर्ष—१९२६=१००)

वर्ष	वास्तविक धाय सूचकांक	रोजगार सूचकांक	उत्पादन सूचकांक	उत्पादकता सूचकांक
१९२६	१००.०	१००	१००	१००.०
१९४०	१०५.६	१०४	१०४	१०४.२
१९४३	७४.६	१४१	११२	७६.३
१९४७	७८.४	१३७	६६	७२.३
१९४८	७४.४	१४१	११२	७६.४
१९४९	६१.७	१४३	१०८	७२.६
१९२०	६०.१	१३६.०	१०७.२	७५.८
१९२१	६२.२	१३३.७	१२०.४	८८.७
१९२२	१०१.८	१३६.७	१३३.२	९७.४
१९२३	६६.६	१३३.१	१४०.८	१०३.८
१९२४	१०२.७	१३३.६	१३३.६	१११.०

सुझाव —

कार्यकुशलता में उन्नति करने के हेतु यह नितांत आवश्यक ही गया है कि श्रमिकों के उत्पादन के विवेक और उत्पादन की वैज्ञानिक प्रणालियों को लागू करने के लिए एक व्यापक कार्यक्रम को अपनाया जाय। तकनीकी और सामान्य शिक्षा का धार्मिक के अधिक विस्तार, मजदूरी में उपयुक्त स्तर तक वृद्धि काय करने के बलों में

कमी रहने-सहन और काम करने की दशाओं में आवश्यक सुधार, आदि से निरक्षय ही श्रमिकों की कार्यकुशलता पर अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। हमारे श्रावणों में श्रावण परि वर्तन की भी बड़ी आवश्यकता है। जब तक श्रमिक के मन में असुरक्षा की भावना तथा बेरोजगारी का भय रहता है, और श्रमिक यह अनुभव करता है कि वह दूसरों के लिये कार्य कर रहा है, तब तक उसकी कार्य-कुशलता में उच्चतम धीमा तक कमी भी बृद्धि नहीं हो सकती और वह कम से कम कार्य करने तथा श्रमिक से श्रमिक मजदूरी पाने का प्रयत्न करता रहेगा। उसे इस बात का अनुभव करा दिया जाना चाहिए कि उसके कार्य से किसी सामाजिक सध्य की भी पूर्ति होती है। साथ ही उसे अपनी आवश्यकताओं के पूर्ण होने और किसी भी प्रकार का भय न होने का पूरा-पूरा आश्वासन मिलना चाहिए। इसी प्रकार श्रमिकों में उचित प्रकार की नैतिकता का विकास हो सकता है। यह बड़े दुःख का विषय है कि जब हमारे श्रमिकों में श्रमिक से श्रमिक और श्रमिक से श्रमिक काम करने की क्षमता है, तो भी परिस्थितियों ने उन्हें इस बात के लिये विवश कर दिया है कि वे अपने कर्तव्यों की ओर से उदासीन हो जाएं तथा वेस के उत्पादन को इस प्रकार बर्बाद पहुंचाएं जिस प्रकार वह श्रावण कर रहे हैं। हम यह धारा करते हैं कि समस्या पर उचित प्रकार से विचार किया जाए और श्रमिकों की कार्य-कुशलता के प्रश्न को केवल एक साधारण समस्या नहीं समझा जाए। यह हर्ष का विषय है कि तृतीय पञ्चवर्षीय योजना में सुझाव के अनुसार भारतीय श्रम सम्मेलन ने श्रम कार्यकुशलता और कल्याण-संधिता बनाने के कार्य को अपने हाथ में ले लिया है।



भारत तथा अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन

(India and the International Labour Organisation)

बिना निराशावादियों को इस बात का विश्वास नहीं होता कि अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग से बहुत व्यावहारिक काम हो सकते हैं और जो अपनी इस विचारधारा का प्रमाण संयुक्तराष्ट्र संघ के बंदू-बाह-विवादों से देते हैं उनको अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ के उच्च कार्य-से प्रोत्साहन प्राप्त हो सकता है जो कार्य यह संगठन ४३ वर्षों से शान्त माह से और बृहत्पाप करता चला आ रहा है। प्रथम तो यह 'श्रीम भॉफ़ नेशनल' (राष्ट्र संघ) के एक संघ की भांति कार्य करता रहा और अब कुछ वर्षों से यह संयुक्त राष्ट्र संघ की एक विशेषज्ञ संस्था की भांति कार्य कर रहा है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का प्रारम्भ—

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना प्रथम महायुद्ध के अन्त में 'वर्साइल' की सन्धि (Treaty of Versailles) के परिणामस्वरूप हुई। इस सन्धि का प्राथमिक उद्देश्य शान्ति बनाए रखना था, परन्तु यह अनुभव किया गया कि "शान्ति केवल उसी बला में स्थापित हो सकती है जबकि यह सामाजिक न्याय पर आधारित हो।" इसलिए यह विचार किया गया कि औद्योगिक परिस्थितियों के लिए कुछ अन्तर्राष्ट्रीय नियमों का होना आवश्यक है। साथ ही श्रमिकों में शान्ति बनाए रखने के उद्देश्य की पूर्ति के लिए भी किसी अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा की व्यवस्था करना नितांत आवश्यक है। अतः २४ जून १९१९ को "उच्च कोटि के सम्झौता करने वाले बड़े देश" (High Contracting Parties) श्रमिकों की बराबरी में सुधार करने के निमित्त किसी स्थायी संघटन की स्थापना करने पर सहमत हो गये। यह सुधार विभिन्न उपायों द्वारा किया जा सकता था जैसे "कार्य के बर्षों का नियमन और साथ ही साथ श्रमिक से श्रमिक कार्य दिवस और छुट्टाह की निश्चित कर देना श्रम सम्भरण (Supply) का नियमन बेरोजगारी की रोकथाम विवाह के लिए पर्याप्त न्यूनरी रोजगार से उत्पन्न होने वाली बीमारियाँ रोग और अति से श्रमिकों की सुरक्षा बालकों, किशोरों और स्त्रियों की सुरक्षा बुढ़ापेवाला और अति धादि के लिए प्रवृत्त अपने देश से बाहर जब श्रमिक दूसरे देशों में रोजगार पर लय जाते हैं तब उनके हितों की सुरक्षा संघ बनाने की स्वतन्त्रता के सिद्धान्त की मात्तता न्यायतायिक तथा तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था तथा अन्य साधन।" अतः राष्ट्र संघ के एक प्रथम महत्वपूर्ण संघ के रूप में 'अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन' का निर्माण हुआ।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के आधारभूत (Fundamental) सिद्धान्त —

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का आधार ऐसे ही आधारभूत सिद्धान्तों पर है

को कि एक 'थ्रिफ्ट पाटर्न' प्रथम श्रमिकों की 'स्वतन्त्रता क पाटर्न' में बिगा गए हैं। राष्ट्र सच के प्रत्येक सदस्य को इन सिद्धान्तों को स्वीकार करना होता है। यह सिद्धान्त निम्नलिखित हैं (१) मार्मवर्षिक सिद्धान्त यह होना कि श्रम को केवल पदार्थ प्रथम बाणिज्य की वस्तु नहीं समझ जाना चाहिए। (२) भासिक और कर्मचारियों के सभी प्रकार के वैज्ञानिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सच बमान के अधिकारों को मान्यता प्रदान की जानी चाहिए। (३) बेस और समय के अनुसार उचित प्रकार के जीवन-स्तर को बनाये रखने के लिए कर्मचारियों को पर्याप्त मजदूरी के भुगतान की व्यवस्था होनी चाहिए। (४) दिन में ८ घण्टे के काम और सप्ताह में ४८ घण्टे के काम के सिद्धान्त को उन सभी स्थानों पर लागू कर देना चाहिए जहाँ अब तक लागू नहीं है। (५) सप्ताह में कम से कम २४ घण्टे का अवकाश मिलना चाहिए और जहाँ भी सम्भव हो यह अवकाश रविवार को होना चाहिए। (६) कामों से काम सेना बन्द कर देना चाहिए और किशोरों के रोजगार पर भी रोक-थाम होनी चाहिए, ताकि उनकी शिक्षा के कामू रहने के साथ साथ उन्हें उचित रीति व चारी रिक विकास का भी अवसर प्राप्त हो सके। (७) यह सिद्धान्त लागू करना चाहिए कि समान मूल्य के समान कार्यों के लिए स्त्री गुरुयों का समान पारिश्रमिक मिले। (८) श्रमिकों के लिए किसी बेस में जो भी कानून बनाए जाएँ उनमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सभी श्रमिकों को चाहे वे बेगवासी हों प्रथम विदेशी परावर का प्राथिक व्यवहार मिले। (९) प्रत्येक राज्य को निरीक्षण को एसी पद्धति अपनानी चाहिए, जिसमें स्थानों भी जाग ले सकें ताकि कर्मचारियों की सुरक्षा के लिए जो भी नियम प्रबन्ध विधान बनें, उन्हें उचित रीति व लागू किया जा सके।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना से पूव श्रमिकों की दशाओं के लिए अन्तर्राष्ट्रीय नियमन —

पचास १९१६ में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का जन्म हो चुका था तथापि अन्तर्राष्ट्रीय सचिद्वारा श्रमिकों की दशाओं को नियमित करने का विचार प्राचीन काम से लोगों के मस्तिष्क में घूम रहा था। इंग्लैण्ड के लार्ड औरन तथा फ्रांस के कुछ अर्थशास्त्रियों ने श्रमिकों के लिए कुछ अन्तर्राष्ट्रीय नियमन (Regulations) क बनाने पर सर्वेस स बल दिया था। इसी विषय को लेकर जर्मन सरकार द्वारा आयोजित १८६० में प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ और १८६७ में ब्रमसम में एक प्रथम सम्मेलन हुआ। सन् १९०० में श्रम विभाग के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् का निर्माण किया गया। इस परिषद् की १५ राज्यों में प्रतिनिधियों की और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के प्रथम निदेशक एलबर्ट बोमन इस परिषद् की काम की समिति के सदस्य थे। १९०२ तथा एन् १९०६ में 'बन नामक स्थान पर दो अधिष्ठातिक (Office) श्रम सम्मेलनों का आयोजन किया गया। इनमें दो अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिकसमव पारित किये गए, जिनमें से एक में स्त्री श्रमिकों पर लाप म काम करना तथा दूसरे में दिवांगमशायों के निर्माण में छोटे-छोटे कामों का प्रयोग करना

निपिष्ट कर दिया गया।

यहाँ इस बात का भी उल्लेख किया जा सकता है कि सन् १८०-१० के बीच धर्मियों की सुरक्षा के सम्बन्ध में पाँच प्रस्तावों पर समाज रूप से सभी ने अपनी सहमति प्रकट की थी। यह प्रस्ताव निम्नलिखित हैं (क) औद्योगिक रोजगार में बाधकों के लिए कम से कम १४ वर्ष की धातु निर्धारित की जाए, (ख) काम करने के घंटों का नियमन (ग) साप्ताहिक अवकाश (घ) किशोरों तथा स्त्रियों के लिए रात्रि में काम करने पर निषेध तथा (ङ) व्यवसाय सम्बन्धी संकटों से धर्मियों की सुरक्षा।

सन् १८१० और १८२० की अवधि में अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन के समर्पक इस धर्म्य सिद्धान्तों पर सहमत हो गये। यह सिद्धान्त निम्नलिखित हैं (१) धर्म विज्ञान से सम्बन्धित तथ्यों का अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विनिमय (२) फ्लोरेंस से सम्बन्धित विषयों से सुरक्षा (३) सीते से सम्बन्धित विषयों से सुरक्षा (४) धर्म्य व्यावसायिक विषयों और रोगों से सुरक्षा (५) सामाजिक बीमों में विक्षेपतया प्रत्येक देश के दुर्घटना बीमा नियमों में वैसावासी और विधेयियों के लिए समान व्यवहार के सिद्धान्त को अपनाया (६) क्रमबद्ध निरीक्षण तथा काम का नियमन (७) स्त्रियों और किशोरों के लिए कार्य विषय की सीमा का निर्धारण करना (८) बेरोजगारी की समस्या (९) प्रसव से पहले या बाद में स्त्रियों को रोजगार पर न लयाना तथा (१०) समुदाय कर्मचारियों की सुरक्षा।

इस प्रकार हमें ज्ञात होता है कि अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन की स्थापना से पहले भी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा पर अनेक धर्म समस्याओं पर विचार-विनिमय किया गया था। कुछ ही ही अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन की स्थापना से पहली बार एक नियमित अन्तर्राष्ट्रीय भाषा पर अन्तर्राष्ट्रीय धर्म समस्याओं को रक्खा तभी से यह सभी देशों के धर्मियों की समिति के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर स्थापित करने में बहुत ही उपयोगी कार्य कर रहा है। सन् १८२० से आज तक अनेकानेक धर्मसमयों के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन ने इन सभी बातों को निपका जल्द किया था कुछ है तथा धर्म्य कई बातों को अपना लिया है।

अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन का सचिवालय —

अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन के अनेक देश सदस्य हैं। १९१२ में इनकी कुल संख्या १०० थी। इस प्रकार सरकारों द्वारा वित्त-व्यय (Financed) यह राष्ट्रों का परिवार है और धर्म संघटनों धर्मियों तथा सरकारों के प्रतिनिधि इस पर प्रभावशाली रूप में नियंत्रण रखते हैं। इसका उद्देश्य संसार के सभी देशों में सामाजिक न्याय की प्रतिष्ठा करना है और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह धर्मियों और उनकी सामाजिक परिस्थितियों से सम्बन्धित तथ्यों का एकत्रण करती है उनके लिये न्यूनतम अन्तर्राष्ट्रीय स्तर निर्धारित करती है और उनके प्रत्येक देश में लागू होने का पर्यवेक्षण करती है। भारत इस संघटन का प्राग्भ्य से ही सक्रिय सदस्य रहा है और संसार के साथ

महत्वपूर्ण औद्योगिक देशों में इसकी पहना होती रही है। संगठन की कुल आय का लगभग ३ से ७ प्रतिशत तक भारत ने वार्षिक प्रदान दिया है। सन् १९६१ में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के बजट का कुल व्यय १०,४१४,२७० डालर या जबकि १९६० में यह व्यय ९,१६०,००२ डालर था। १९६१ में कुल बजट में भारत का प्रदान ३२३,३१३ अमरीकी डालर या (१,५३०,९६६ ८८ ६० अर्थात् ३२८ प्रतिशत)। बजट में प्रदान के दृष्टिकोण से भारत का स्थान अमेरिका ब्रिटेन रूस, फ्रांस जर्मन गणराज्य व कनाडा के बाद आता है अर्थात् भारत का स्थान सातवा है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन तीन प्रधान धर्मों के माध्यम से कार्य करता है (क) अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय जो इसका स्थायी सचिवालय है (ख) अंतरंग सभा (Governing Body) जो इसकी कार्यय (Executive) है तथा (ग) अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय (International Labour Office) —

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय एक सचिवालय एक सार सुचना केन्द्र तथा एक प्रकाशन ग्रह के रूप में कार्य करता है। यह श्रम सम्बन्धी समस्याओं पर अनुसंधान और अध्ययन करने के कार्यों में निरन्तर व्यस्त रहता है। निम्न निम्न दशों के विशेषज्ञ इसमें कार्य करते हैं जिनके ज्ञान अनुभव और परामर्श सभी सदस्य राष्ट्रों के लिए उपलब्ध है। एक महा निदेशक (Director General) इस कार्यालय का मुख्य कार्यय अधिकारी है। अनेक देशों में इसकी शाखाएँ खुली हुई हैं तथा उनमें इसके सम्बाधता भी रहते हैं। सन् १९६१ में इसके कर्मचारियों की कुल संख्या ९१४ थी। इनमें से ३४४ अधिकारी तो 'मेम्बर ऑफ डिबिजिन' अथवा इससे ऊपर के पद ले वे। जेनेवा में इसके कार्यालय में अने भारतीय कर्मचारियों की संख्या १२ थी और इनमें से १४ अधिकारी 'मेम्बर ऑफ डिबिजिन' अथवा इससे ऊपर के पदाधिकारी थे। इसमें एक भारतीय अधिकारी सहायक डायरेक्टर जनरल के पद पर आसीन है एक सहायकार है एक सदस्य विभाग का अध्यक्ष है तथा एक महानिदेशक के कार्यालय में कार्याय सहायक है। यह कार्यालय 'इंटरनेशनल मेबर रिज्यू' के नाम से एक मासिक पत्रिका 'इन्डस्ट्री एण्ड मेबर' के नाम से एक 'मासिक पत्रिका' तथा कई अन्य पत्र-पत्रिकाओं का भी प्रकाशन करता है। भारत सहित ६ देशों में इसकी शाखाएँ खुली हुई हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की भारतीय शाखा देहली में है जिसके कर्मचारियों में एक डायरेक्टर भी थी. के. धार. मंदम के प्रतिरिक्त अन्य पांच अधिकारी भी हैं। इस देहली शाखा की स्थापना सन् १९२० में की गयी थी। यह अन्तर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय भारत सरकार, मानिकों एवं धर्मियों के संगठनों के माध्यम से सम्पर्क बनाए रखती है और यह श्रम सम्बन्धी सूचनाओं को देने के लिए एक समा चौकन ग्रह (Clearing House) का कार्य करती है। यह भारत में सामाजिक व धार्मिक प्रगति से सम्बन्धित सभी सूचनाएँ अपने मुख्य कार्यालय की देती रहती है। इसने श्रम

तथा अन्तर्राष्ट्रीय अम संगठन के कार्यों से सम्बन्धित उपबोगी साहित्य का भी प्रकाशन किया है। परन्तु यह कहा जा सकता है कि अन्तर्राष्ट्रीय अम संगठन के कर्मचारियों में भारतीयों की संख्या घटती है।

अंतरंग सभा (Governing Body) —

अन्तर्राष्ट्रीय अम संगठन की अंतरंग सभा इस संगठन की कार्याय परिषद् है। यह कार्यालय के कार्य का सामान्य पर्यवेक्षण करती है इसके बजटों का निर्माण करती है और प्रशासनिक कार्यक्रमों के लिए नीति बनाने और औद्योगिक विधेयम समितियों आदि की स्थापना करने का भी इस पर उत्तरदायित्व है। वर्ष में इसकी बैठकें साधारणतया तीन बार होती हैं तथा अध्यक्ष व उपाध्यक्ष का चुनाव हर वर्ष होता है। प्रारम्भ में इसके ३२ सदस्य थे जिनमें १६ सरकारों के प्रतिनिधि थे, ८ मासिकों के तथा ८ अमिकों के। सरकार के सदस्यों में से ८ स्थायी स्थायी रूप से ८ औद्योगिक महत्व के सदस्य बैठकों के लिए सुरक्षित कर दिये गये थे। मई सन् १९५४ में अन्तर्राष्ट्रीय अम संगठन की इस अंतरंग सभा में इस जापान और पश्चिमी जर्मनी का सम्मिलित कर लिया गया और प्रमुख औद्योगिक देशों के रूप में उनको कार्याय में स्थायी स्थान दे दिया गया। स्थायी स्थानों की संख्या को बढ़ाकर ८ से १० कर दिया गया और इसमें से जातीय को स्थायी स्थान से निकाल दिया गया। इस प्रकार अंतरंग सभा में अब ४ सदस्य सम्मिलित हैं जिनमें २० सरकारों के १० मासिकों के और १० अमिकों के प्रतिनिधि होते हैं। कनाडा चीन फ्रांस भारत इटली जापान सोवियत संघ इण्डो संयुक्त राज्य अमेरिका तथा पश्चिमी जर्मनी १० स्थायी सदस्य हैं। इस प्रकार प्रारम्भ से ही भारत को अंतरंग सभा में एक स्थायी स्थान प्राप्त है। सरकार के स्थान के अतिरिक्त भारत के दो अन्य सदस्य भी अंतरंग सभा में इस समय हैं जो भारतीय मासिकों और अमिकों का प्रतिनिधित्व करते हैं। जनवरी सन् १९५० में इस अंतरंग सभा का ११ वाँ अधिवेशन मैसूर में हुआ था। भारत के प्रतिनिधि श्री० एस० मास इसके अध्यक्ष थे। १९६१ ६२ के लिए इस अंतरंग सभा का अध्यक्ष भारतीय सरकार के प्रतिनिधि डा० एस० टी० मरुती को चुना गया। १९६१ तक इसके १५ अधिवेशन हो चुके थे।

अन्तर्राष्ट्रीय अम सम्मेलन (International Labour Conference)

अन्तर्राष्ट्रीय अम सम्मेलन अमिकों और उनके सामाजिक प्रश्नों के लिए एक विश्व मंच का कार्य करता है। इस सम्मेलन में जो साधारणतया प्रतिवर्ष होता है प्रत्येक सदस्य राष्ट्र चार प्रतिनिधियों का एक प्रतिनिधि-मण्डल भेजता है। इनमें से दो प्रतिनिधि सरकार के एक प्रतिनिधि संगठित मासिकों का तथा एक प्रतिनिधि संगठित अमिकों का होता है। इसमें अनेक उपायकार भी सम्मिलित होते हैं जिनकी संख्या सम्मेलन की कार्यवाही के प्रत्येक प्रकरण के सिद्धे हो सके नहीं हो सकती। सरकारों मासिकों और अमिकों के प्रतिनिधि स्वतंत्रता पूर्वक अपने विचार प्रकट करते हैं और अपना मत देते हैं, ताकि सभी प्रकार के

दृष्टिकोणों की पूरा रूप से अभिव्यक्ति हो सक। यह सम्मेलन अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन की नीति निर्धारण संस्था के रूप में काम करता है। सम्मेलन का मुख्य काम यह है कि अभिसमय और सिफारिशों के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक स्तर स्थापित हो सके।

सम्मेलन के अभिसमय (Conventions) और उनकी सिफारिशों (Recommendations) —

प्रतिनिधियों के दो-तिहाई मतों के बहुमत से सम्मेलन इस बात का निर्णय करता है कि जो भी सुझाव है, उसका रूप निम्नलिखित दो बातों में से कौन सा होना चाहिए, (क) एक सिफारिश का रूप जो सदस्यों के सामने इस हेतु प्रस्तुत की जाए कि वह इस पर विचार करके अपने राष्ट्रीय विधान द्वारा अपना किसी अन्य प्रकार से इसे कार्यान्वित करें। (ख) एक अन्तर्राष्ट्रीय 'अभिसमय' के मसौदे का रूप जिसको सदस्यों द्वारा अपनाया जाए। इन दो में चाह कोई भी रूप हो यह प्रत्येक राष्ट्र के प्रतिनिधि के लिए अनिवार्य है कि वह जो भी विषय हो, उस सम्मेलन के अधिवेशन के समाप्त होने पर १८ महीनों की अवधि के भीतर अपने देश की संसद के सम्मुख अपना किसी अन्य उचित अधिकारी संस्था के सम्मुख प्रस्तुत करे जो इसके लिए विधान बनाए अपना इसको कोई और कार्य रूप दें। यदि यह अभिसमय संसद द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है तब यह कहा जाता है कि इसे अपना (Ratified) लिया गया है। इसके बाद इसका सांगू करना पड़ता है। अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन के संविधान में इस बात का उल्लेख किया गया है कि प्रत्येक राष्ट्र सदस्य को इस सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय धर्म कार्यालय को एक वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करनी होगी कि उसने किसी ऐसे अभिसमय को जिसको पारित करने में उसका भी हाथ या कार्यान्वित करने में क्या-क्या पग उठाया है। जब कोई राज्य सदस्य किसी अभिसमय को अपना लेता है तो उसे उसकी सरकार को सांगू करना पड़ता है। यदि अपनाए गए अभिसमय को सांगू नहीं किया जाता है अपना किसी ऐम अभिसमय को जिसको पारित करने में राज्य सन्ध्य का हाथ होता है मान्यता नहीं की जाती है तो उसके विरुद्ध मातृकों या धर्मिकों द्वारा शिकायत की जा सकती है। इस प्रकार प्रत्येक राज्य सदस्य को अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन के अभिसमयों को अपनाया या स्वीकार करने के पूरे पूरे अधिकार प्राप्त हैं।

यह प्रस्ताव या अभिसमय (Conventions) और सिफारिशों (Recommendations) धर्म विधान बनाने तथा धर्म सम्बन्धी अन्य पग उठान के लिए मूलतम अन्तर्राष्ट्रीय स्तर निर्धारित करती हैं। यह अभिसमय और सिफारिशों यत्नपूर्वक की पयी कौनों और बाद-विवादों पर आधारित होती हैं और एक प्रकार से यह अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संहिता का निर्माण करती हैं। क्योंकि सम्मेलन के दो-तिहाई बहुमत से इनको अपनाया जाना आवश्यक होता है, इसलिए इनमें इस बात की धोर भी संकेत मिल जाता है कि विरुद्ध के सम्मददार व्यक्ति इनमें दी गई बातों से सहमत

है। सन् १९१९ में हुए प्रथम सम्मेलन से लेकर सन् १९६२ तक इस सम्मेलन में अपने ४६ अधिवेशनों में ११८ अधिसूचक और ११७ सिफारिशें अपनाई हैं। इन अधिसूचक और सिफारिशों में काम करने के इच्छीं उद्योगतन्त्रियों विद्यार्थियों के कार्य बन्धों की मुद्रा औद्योगिक दुर्घटनाओं की रोकथाम और उनकी लक्ष्मण बेरोजगारी बीमारी बुढ़ावस्था तथा मृत्यु आदि में बीमा न्यूनतम मजदूरी, उपनिवेशों की धर्म समस्याएँ समुदाय कर्मचारियों और मछेरों की रक्षायें आदि जैसे प्रश्नों का विवेचन किया गया है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है सम्मेलन के निर्णय प्राप्त से प्राप्त सदस्यों के लिए धनिकार्य नहीं हो जाते परन्तु सबस्य देशों की सरकारों का कर्तव्य है कि वे इन अधिसूचकों को अपने-अपने राष्ट्रीय विधानों के समक्ष प्रस्तुत करें। यदि विधान में इन अधिसूचकों को स्वीकार कर लिया जाता है तब सरकार को इन्हें धनिकार्य रूप से लागू करना पड़ता है।

किसी भी अधिसूचक को या तो अस्वीकार स्वीकार करना होता है अथवा एकत्रय अस्वीकार। परन्तु किसी सिफारिश को पूर्णतया लागू करना आवश्यक नहीं है। यह तो राष्ट्रीय कार्यक्रम के लिए पथ प्रदर्शन मात्र है। सबस्य राष्ट्र सिफारिशों को अपने देश की परिस्थितियों के अनुसार कार्यरूप दे सकते हैं। भारत में अब तक २७ अधिसूचक अपनाए हैं जिनमें से २३ लागू हैं लेकिन इसके साथ ही साथ भारत में अन्य अधिसूचकों के आवश्यक तत्वों को भी अपने राष्ट्रीय विधान में सम्मिलित कर लिया है।

फिलाडेल्फिया की घोषणा (Declaration of Philadelphia) —

सन् १९६९ में मुंबई जाने के उपरान्त अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन के कार्यालय को अनेका से हटाकर कनाडा में 'मांट्रियल' नामक स्थान पर ले जाया गया था। यद्यपि सीन ब्रॉक नेग्रो (राष्ट्रसंघ) इस समय अधिक क्रियाशील नहीं रहा था तथापि अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन ने मांट्रियल में अपना कार्य जारी रखा। मई सन् १९४४ में फिलाडेल्फिया की घोषणा में अन्तर्राष्ट्रीय धर्म सम्मेलन में अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन के जर्नेरों और सदस्यों की फिर से व्याख्या की गई। यह घोषणा अन्तर्राष्ट्रीय नीति में सामाजिक सदस्यों को शामिल करने वाली है और इस दृष्टि से इन परिस्थितियों की भी व्याख्या करती है जिनमें कि सभी मनुष्यों की जाते बहु किसी भी जाति या धर्म के हों अथवा स्त्री या पुरुष हों इस बात का अधिकार हो कि वह अपने मौलिक कल्याण और आध्यात्मिक विकास के लिये स्वतन्त्र रूप से और धारण-सम्मान से कार्य कर सकें और उन्हें धार्मिक मुद्रा तथा समान व्यवहार आदि प्राप्त हो सकें।

यह घोषणा कई बातों पर बल देती है जैसे पूर्ण रोजगार, जीवन स्तर को ऊँचा करना धर्मिकों को प्रशिक्षण के लिए सुविधाएँ देना मजदूरी और धर्म से सम्बन्धित नीति अपनाते काम करने की परिस्थितियों और समय में सुधार करना सामूहिक लक्ष्यकारी के अधिकार को मान्यता देना धर्मिकों और धर्मिकों के मध्य सहयोग स्थापित करना सामाजिक मुद्रा सबको का विस्तार करना, कल्याण

कर्म चिन्तात्मक और व्यावसायिक प्रश्नमण्डों में समानता प्रदान करना आदि आदि। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के आचारभूत सिद्धान्तों को चिन्ताबेसफिया की शोषणा में निम्नलिखित एम्बों में फिर से दोहराया गया है—

“(क) श्रम कोई पराधीन नहीं है। (ख) व्यक्ति (Expression) तथा साहचर्य (Association) की स्वतन्त्रता निरन्तर प्रगति के लिए बहुत आवश्यक है। (ग) यदि किसी स्थान पर भी निर्धनता होती है तो उसके कारण हर स्थान पर सम्पत्ता को बहुत उत्पन्न हो जाता है। (घ) वृद्धि और अभाव के विरुद्ध युद्ध करने के लिए प्रत्येक देश में पूर्ण रूप से एकजुट सजानी होगी। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि निरन्तर तथा पूर्ण रूप से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ही प्रयत्न किए जाएं। ऐसे प्रयत्न इस प्रकार हों कि मानिकों और श्रमिकों के प्रतिनिधि सरकार के प्रतिनिधियों के साथ समान प्रतिष्ठा से स्वतन्त्र रूप से बात बिबाद कर सकें तथा अपने सम्मान को बढ़ाने तथा कल्याण के लिए लोक-उत्प्रात्मक नियुक्त कर सकें”।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन तथा संयुक्त राष्ट्र संघ—(I.L.O. and U.N.O)

संयुक्त राष्ट्र संघ के बनने के पश्चात् इस बात की व्यवस्था की गई कि संयुक्त राष्ट्र संघ और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के मध्य नियमित सम्पर्क और सहयोग बना रहे। एक समझौते द्वारा जिसको प्रथम तो अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के माद्रियस सम्मेलन में अपनाया गया तत्पश्चात् राष्ट्रीय संघ की सामान्य सभा में भी अपनाया गया, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन अब राष्ट्रीय संघ से एक विधेयक ऐजेंसी के रूप में सम्बन्धित हो गया है। सन् १९४३ के पेरिस सम्मेलन तथा सन् १९४६ के माद्रियस सम्मेलन में इस विषय में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के संविधान में संशोधन करने की व्यवस्था पर प्रस्ताव भी पारित कर दिए गए थे।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की विभिन्न समितियाँ —

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का कार्य औद्योगिक समितियों विशेषज्ञ समितियों तथा पत्र-सम्बन्धकार समितियों प्रादेशिक समितियों और अन्य विशेष समार्षों तथा सम्मेलनों द्वारा भी सम्पादित होता है। श्रम संगठन द्वारा स्थापित औद्योगिक समितियाँ निम्नलिखित ही उद्योगों के लिये हैं — कोयला खान अन्तर्देशीय यातायात, लौहा और इस्पात बाहु का व्यापार, कपड़ा उद्योग भवन निर्माण सिविल इन्जिनियरिंग तथा सार्वजनिक कार्य पैट्रोस का उत्पादन तथा उनका विद्युतीकरण सामाजिक उद्योग तथा श्रमिक। यह समितियाँ त्रिदलीय होती हैं। इन समितियों में प्रत्येक सदस्य राष्ट्र से २ सरकार के २ मानिकों के और २ श्रमिकों के प्रतिनिधि होते हैं। भारत पैट्रोस के उत्पादन और विद्युतीकरण के उद्योग की योजनाकर मध्य मंत्री औद्योगिक समितियों का सदस्य रहा है और इन्होंने उनकी कार्यवाहियों में सक्रिय भाग लिया है। नवम्बर १९५६ से यह पैट्रोस समिति का भी सदस्य हो गया है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने कृषि सामाजिक बीमा दुर्घटनाओं की शोषण औद्योगिक स्वास्थ्य विज्ञान स्त्रियों का कार्य बान श्रमिक प्रशिक्षण

घौर सांख्यिकी बीसी समस्याओं के लिए विशेषज्ञ समितियों तथा पत्र व्यवहार समितियों की भी स्थापना की है। भारत अन्तर्राष्ट्रीय यम संघन की इन समितियों घौर सम्मेलनों में सक्रिय भाग लेता है। भारत ने बेनेवा में 'कोन्सेलेट जनरल प्राफ शिबिया' के कार्यालय में एक यम अधिकारी की नियुक्ति की है जिससे वह अन्तर्राष्ट्रीय यम संघन की कार्यवाहियों के साथ निकट सम्पर्क रख सके। यह विभिन्न समितियों घौर सम्मेलनों में भारत का प्रतिनिधित्व करता है। इसका परनाम अब अन्तर्राष्ट्रीय यम सहायकार (International Labour Adviser) कर दिया गया है।

अन्तर्राष्ट्रीय यम संघन के प्रादेशिक यम सम्मेलन तथा एशियाई कार्य—
(Regional Labour Conferences and Asian Activities of I. L. O.)

अन्तर्राष्ट्रीय यम सम्मेलन का एक अन्य महत्वपूर्ण काय प्रादेशिक सम्मेलनों की व्यवस्था करना है। यह सम्मेलन सभी एशियाई देशों के लिए, जिनमें भारत भी है, बड़ा महत्व रखते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय यम संघन के संविधान में यह बात भी हुई है कि प्रसिध्दय अवका शिफारिशों का निर्मास करते समय उन देशों का भी उचित रूप से ध्यान रचना चाहिये जिनमें जनबाधु, औद्योगिक विकास की अपूर्णता या किन्हीं प्राय विशेष परिस्थितियों के कारण औद्योगिक अवस्थाओं में बहुत मिश्रता पाई जाती है तथा सम्मेलन को इन देशों के लिए सुधार के सुझाव देने चाहिए। अन्तर्राष्ट्रीय यम संघन के विचार में इस उद्देश्य की पूर्ति का सबसे प्रच्छ मार्ग यही था कि सदस्य राज्यों के प्रादेशिक यम सम्मेलनों की व्यवस्था की जाए। इसीलिए १९३१ और १९३९ के अन्तर्राष्ट्रीय यम संघन ने अमेरिकन राज्यों में प्रथम तथा द्वितीय प्रादेशिक यम सम्मेलनों का आयोजन किया। उक्त समय पर एशियाई देशों के लिये भी इस प्रकार के सम्मेलनों का सुझाव दिया गया। सन् १९२७-२८ में जापान के प्रतिनिधि तथा सन् १९३० में भारत के श्री एस० सी० बोसी ने अन्तर्राष्ट्रीय यम संघन को इस बात के लिए प्रोत्साहित करने का प्रयास किया कि वह एक त्रिबलीय एशियाई यम सम्मेलन को बुलाए। श्री बोसी ने इन उद्देश्य की पूर्ति के लिये एक प्रस्ताव का मसौदा रखा जिसे 'कोरम' के प्रभाव में अस्वीकार कर दिया गया। लेकिन सन् १९३१ में जब इसी प्रस्ताव को भारत के श्री धार धार० बालने द्वारा पुनः रखा गया तो यह विविरोध स्वीकार कर लिया गया। परन्तु फिर भी अनेक कारणों से एशियाई सम्मेलन की व्यवस्था करना तो सम्भव नहीं हो सका मद्यपि अंतरम राजा ने इसके महत्व का अनुभव अवश्य कर लिया था। १९३५ तथा १९३९ के इस बात के लिये प्रस्ताव पारित किये गये कि अन्तर्राष्ट्रीय यम संघन के अन्तर्गत ही एक एशियाई समिति की स्थापना की जाय जो समिति प्रत्येक वर्ष के बार अपनी समा किसी एशियाई देश में करे।

परन्तु यह सन् १९५५ में ही सम्भव हो सका कि फिलाडेल्फिया में हुए

२६वें अधिवेशन में एक प्रस्ताव पारित किया गया जिसमें इस बात की सिफारिश की गई कि यदि सम्भव हो तो एशियाई प्रादेशिक सम्मेलन की व्यवस्था घोषातिथीघ्न की जाय ताकि एशियाई देशों की विशिष्ट समस्याओं पर उचित रूप से विचार विनिमय किया जा सके। भारत सरकार ने भारत में एशियाई प्रादेशिक सम्मेलन का आयोजन करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय धर्म-संगठन को आमन्त्रित किया और इस आमन्त्रण को स्वीकार भी कर लिया गया। सन् १९४७ में २७ दिसम्बर से लेकर ८ नवम्बर तक एक प्राथमिक एशियाई प्रादेशिक सम्मेलन नई दिल्ली में हुआ। सम्मेलन में अनेक देशों के प्रतिनिधि-मण्डलों ने भाग लिया था। इनमें निम्नलिखित देश थे — अफगानिस्तान, आस्ट्रेलिया, बर्मा, सऊदी अरब, चीन, जापान, चीन, फ्रांस, भारत में फ्रांस की बस्तियाँ, इंग्लैंड, मलाया, हिंदी, मेलदरस, न्यूजीलैंड, स्पेन, सिंगापुर, भारत और पाकिस्तान। इस सम्मेलन में पर्यवेक्षण प्रतिनिधि मण्डल अमेरिका और नैपास से भी आये तथा अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन की अंतरंग सभा का भी एक प्रतिनिधि मण्डल था। अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन की अंतरंग सभा के अध्यक्ष श्री जी० एम० ईबाम्स ने इस सम्मेलन का उद्घाटन किया। इस अवसर पर पं० नेहरू ने इस बात की घोषणा प्रकट की कि सम्मेलन एशिया के सामान्य व्यक्ति को दृष्टिकोण में रखकर सभी समस्याओं पर विचार करेगा ताकि केवल यह नहीं कि "इस या उस देश में जीवन-स्तर ऊँचा हो बल्कि प्रत्येक स्थान पर जीवन-स्तर ऊँचा हो सके। भारत सरकार के तत्कालीन धर्म मंत्री श्री जयजीवन राम को इस सम्मेलन का सर्व सम्मति से अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। अपने अध्यक्ष पद से बोसते हुए उन्होंने कहा था कि एशियाई प्रादेशिक धर्म सम्मेलनों का कार्य इस विषय पर विचार करना होना चाहिए कि आर्थिक विकास की मात्री योजनाओं में हम कैसे सहयोग हैं और इस प्रकार के विकास से जो राष्ट्रीय सम्पत्ति में वृद्धि हो उसका समय-समय पर कैसे मूल्यांकन करें तथा व्यापक आधार पर इस सम्पत्ति के वितरण करने की योजनाओं का कैसे निर्माण करें। इस सम्मेलन में २३ प्रस्ताव पारित किए गये।—इनमें से महत्वपूर्ण प्रस्ताव निम्नलिखित विषयों से सम्बन्धित थे सामाजिक सुरक्षा, धर्म नीति उत्पादन कार्यकुशलता कृषि उत्पादन तथा सहकारिता पद्धति का महत्व, रोजगार सेवाएँ, पारिवारिक बजट पुष्टताएँ कार्य बाही का कार्यक्रम अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन के एशियाई कार्य में तीव्रता जापान और अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन की त्रिदलीय व्यवस्था तथा धर्म संगठन के सामाजिक उद्देश्य।

उसी समय से एशिया में प्रादेशिक सम्मेलन नियमित रूप से होने लगे हैं और अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन एशिया और उसकी समस्याओं में अधिक रति प्रकट कर रहा है। अंतरंग सभा के १११ वें अधिवेशन ने एशियाई समस्याओं तथा समान समस्याओं के एशियाई पहलुओं पर अंतरंग सभा को परामर्श देने के लिए त्रिदलीय आधार पर एक एशियाई मनाहवार समिति की स्थापना करने का निर्णय लिया।

२५ जून सन् १९२० को वेनेजा में इस समिति की प्रथम सभा का आयोजन किया गया। तब से नवम्बर १९९१ तक इस एशियाई समाहकार समिति के प्यारू ग्रवि बैठान हो चुके हैं। अन्तर्राष्ट्रीय धम संघटन का द्वितीय एशियाई प्रादेशिक सम्मेलन जनवरी सन् १९५० में श्रीमका में गुमाण इलियो नामक स्थान पर हुआ। भारत ने इस सम्मेलन में एक निवसीय प्रतिनिधित्व भेजा था। इस सम्मेलन में १९ प्रस्ताव स्वीकार किए गए जो निम्नलिखित विषयों से सम्बन्धित थे:—अन्तर्राष्ट्रीय धम संघटन के एशियाई कार्यों में तीव्रता लाना अंतरंग सभा में एशियाई प्रतिनिधित्व एशियाई समुद्री कर्मचारी तकनीकी सहायता धम निरीक्षण सहाकारिता आन्दोलन धमिक कल्याण व्यावसायिक तथा तकनीकी प्रशिक्षण कृषि कर्मचारी और जनकी मजदूरी धम धक्ति का उचित संगठन आदि। तीसरा एशियाई प्रादेशिक सम्मेलन सितम्बर, सन् १९५३ में जापान में टोकियो में हुआ। सम्मेलन में पहले की भांति अन्तर्राष्ट्रीय धम संघटन के डाइरेक्टर जनरल की रिपोर्ट पर विचार विनिमय हुआ। इस सम्मेलन ने बहुत तर्क विर्तक के उपरान्त तीन मुख्य विषयों पर प्रस्ताव पारित किए,—एशियाई देशों में मजदूरी की समस्याओं की नीति धमिकों के मकानों की समस्याएँ तथा किछों की सुरक्षा।

अन्तर्राष्ट्रीय धम संघटन के एशियाई प्रादेशिक सम्मेलन का चौथा अधिवेशन नवम्बर, सन् १९२७ ई में मई विस्नी में हुआ। इसकी कार्यवाही में डाइरेक्टर जनरल की रिपोर्ट के अतिरिक्त निम्नलिखित विषय से (१) एशियाई देशों में छोटे पैमाने के दस्तकारी उद्योगों में धम और सामाजिक समस्याएँ (२) इति में कार्य करने वाले स्वतन्त्र और मजदूर-स्वतन्त्र वर्गों के धमिकों जैसे बटाई पर कार्य करने वाले और आसामी कृषक, के जीवन और कार्य की दायरे तथा (३) धमिक और प्रबन्धकों के पारस्परिक सम्बन्ध। इस सम्मेलन का अङ्गठन एवं बैठक ने किया था। उन्होंने धमिकों के प्रबन्ध में भाग लेने पर विदेय बन दिया। केन्द्रीय धम तथा आयोजना मंत्री श्री मुत्तजारौलाल तन्दा इस सम्मेलन के अध्यक्ष थे।

इसके अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय धम संघटन ने भारत तथा विभिन्न एशियाई देशों में सम्मेलनों के लिये सामग्री एकत्रित करने सहाकारिता आन्दोलन का अध्ययन करने सामाजिक सुरक्षा पर उलाह देने धम धक्ति के क्षेत्र में तकनीकी सहायता की आवश्यकताओं की जांच करने उत्पादकता और प्रशिक्षण आदि के लिए धमिक मिदान भेजे हैं। इसने एशियाई देशों में केवल धमके विधेयक ही नहीं भेजे हैं बलित्नु एशियाई देशों के नागरिकों के लिए अधिधायकतियों और धमिकताओं की प्रदान की हैं। सन् १९५६ में वेनेजा में हुये अन्तर्राष्ट्रीय धम संघटन के ५४ वें अधिवेशन में भारत और अमेरिका ने संयुक्त रूप से यह प्रस्ताव रखा कि अन्तर्राष्ट्रीय धम संघटन की क्षेत्रीय कार्यवाहियों पर विधेयक ध्यान दिया जाना चाहिये। एशियन समाहकार समिति के आचार पर ही अन्तर्राष्ट्रीय धम संघटन की एक विधेयक

अफीकन सनाहकार समिति बनाई गई है। दिसम्बर १९६० में लागोस (Lagos) नामक स्थान (नाइजीरिया) में पहला अफीकन प्रादेशिक सम्मेलन हुआ जिसमें अफीका के ३० राज्यों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में अफीका में व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण तथा भासिक-मजदूर सम्बन्धों पर विचार विमर्श हुआ।

। यहाँ यह बात भी विशेष उल्लेखनीय है कि अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघटन ने एशियाई अर्थिकों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम भी प्रारम्भ किए हैं। इस कार्यक्रम के अनुसार पहला प्रादेशिक कार्यालय सन् १९४९ में बना जबकि बयसीर में एशियाई श्रमशक्ति फील्ड कार्यालय (Asian Manpower Field Office) के नाम से एक संस्था की स्थापना हुई। इसका उद्देश्य यह था कि संसार की श्रम-शक्ति का बंठन कार्यों में भी उचित प्रकार से उपयोग हो सके। यह कार्यालय एशियाई तथा सुदूर पूर्व के देशों को उनके तकनीकी प्रशिक्षण कार्यक्रम में सुधार करने के लिए तकनीकी सहायता प्रदान करता है। यह तकनीकी प्रशिक्षण में एक प्रादेशिक अनुभवधान तथा सूचना केन्द्र के रूप में भी कार्य करता है। भारतीयों के लिए अन्तर-कार्य प्रशिक्षण कार्यक्रम के दो अभियोग्य पहले ही हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघटन के अर्द्ध-विकसित देशों के लिए 'तकनीकी सहायता कार्यों' के अन्तर्गत २९ अप्रैल सन् १९४१ के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के साथ किये गये समझौते पर भारत सरकार ने हस्ताक्षर किये। यह शक्ति पर दिसम्बर, १९४१ में नई दिल्ली में बरखाना विरीक्षण पर फरवरी १९४२ में कसकले में पर्यवेक्षण प्रशिक्षण पर अगस्त १९४० में सिगापुर में और व्यावसायिक मार्ग प्रदर्शन तथा रोजगार सम्बन्धी परामर्श पर नवम्बर १९४० में नई दिल्ली में प्रादेशिक गोष्ठियों का आयोजन किया गया। एशियाई देशों के नागरिकों के लिए सहायता पर १९४२ में कोपेनहेगन १९४३ तथा १९४४ में साहौर, १९४४ में बाहुङ्गा, १९४६ में मैसूर तथा १९४० में श्री लंका में प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की गयी। भारत सरकार में अनेक समस्याओं पर तकनीकी परामर्श और सहायता की प्रार्थना की है। सन् १९४३ की शरद ऋतु में कमचारी 'उच्च श्रेणी योजना' के अंतर्गत तथा बिस्मिता साम के लिए डाक्टरों की सूची प्रणाली पर परामर्श देने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघटन के तीन विशेषज्ञों की सेवास्य भारत द्वारा प्राप्त की गई। दिसम्बर, १९४२ में परिणाम बेसकर भूतान करने की पद्धति पर अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघटन के पांच विशेषज्ञ भारत में आये। इन्हीं बपड़ा तथा इजीनियरिंग उद्योगों में इन विशेषज्ञों पर तकनीकी सहायता प्रदान की। फरवरी १९४३ में बांग्लादेश कार्यकारिणों को श्रम्य रोजगार प्राप्त करने के सम्बन्ध में परामर्श देने के निमित्त एक बांग्लादेशी व्यावसायिक प्रशिक्षण के विशेषज्ञ की सेवास्य अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघटन के द्वारा प्राप्त की गयी। फरवरी १९४३ में 'अन्तर-कार्य प्रशिक्षण तकनीक' को प्रसार और बढ़ावा देने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघटन के एक विशेषज्ञ की सेवास्य भी प्राप्त की गयी। १९४४ में एक श्रम्य विशेषज्ञ आये। जून १९४६ में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघटन ने दो प्रचार गिज्ञान मने प्रिनमें से एक तो इजीनियरिंग और उसमें सम्बन्ध

व्यवसायों के लिए वा तथा दूसरा मशीनों को बाधू रखने का विशेषज्ञ था । भारत ने सन् १९१० तथा १९१८ में भी उत्पादकता रोजगार सुधता नैत्र हीनों के लिए व्यावसायिक शिक्षा व्यावसायिक विद्वेषण तथा सुरक्षा धारि के क्षेत्रों में विशेषज्ञों की सेवार्थे प्राप्त की । १९१८ में औद्योगिक सम्बन्धों के विटिष विद्वेषज्ञ प्रो० वे० एच० रिचर्डसन की सेवार्थे प्राप्त की गई । १९२९ में भी विशेषज्ञों की सेवार्थे बाधू रहीं । प्रशिषण और धमिक शिक्षा के लिए भी विशेषज्ञ धा चुके हैं । धधिक संघबाध, धम प्रधासन सामाजिक सुरक्षा धमिक शिक्षा सुरक्षा निरीक्षण धारि के प्रशिषण के लिए ५० प्रशिषार्थियों को विभिन्न देशों में भेजा गया । अन्तर्राष्ट्रीय यम संगठन की धानधुति लिए हुए विदेशिया बाइसेंड धीसंका ब धीट के बाध धार्थों ने भारत में प्रशिषण पाया है । १९९० में उत्पादकता तथा धानों की सुरक्षा पर तीन विशेषज्ञ धाय । इनके धठिरिक्त इ जीनियरिष वर एक धन्य विशेषज्ञ धार्थ करता र्हा । साठ भारतीयों को विभिन्न विषयों पर प्रशिषण के लिए दूसरे देशों में भेजा गया तथा ईरक ब धर्मा से बाध ध्यक्ति प्रशिषण हेतु धाये । अन्तर्राष्ट्रीय धम संघटन के विशेषज्ञों के रूप में दो भारतीयों को विदेशों में भेजा गया है जिनमें से एक बुटीर धयोयों के क्षेत्र में सहायता देने के लिए धर्मा गया है तथा दूसरा सहाकारिता के क्षेत्र में सहायता देने के लिए विजीपाइस धया है । कुछ धन्य विशेषज्ञों को भी भारत से बुलाया गया है । १९१९ के अन्त तक साठ भारतीय विशेषज्ञों के रूप में दूसरे देशों में धार्थ कर र्हे थे । नवम्बर १९९० में नई बिस्नी में एक 'अन्तर्राष्ट्रीय यम संगठन का एधियाई प्रादेशिक सामाजिक सुरक्षा में प्रशिषण पाठ्यक्रम' का भारत सरकार तथा अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा परिषद के सहधोम से धायोजन किया गया । इठयें विभिन्न एधियाई देशों के तीस ध्यक्तियों ने धाय लिया ।

प्रादेशिक सम्मेलनों का महत्व तथा उनसे लाभ —

प्रादेशिक यम सम्मेलनों के धनेक लाभ हैं और यहि स्थानीय धावस्थधार्थों को ध्यान में रखना है ता ऐसे सम्मेलनों की बहुत प्रावधकता है । एधिया की धम धक्ति की कुछ धयनी विशेषधायें हैं जो परिषनी औद्योगिक उधत देशों में नहीं पाई जाती । एधियाई देशों में यहि जाबना बहुत दिनों से धनी धा र्ही है कि अन्तर्राष्ट्रीय यम संघटन के प्राय सम्मेलनों में उनके विशेष सामाजिक तथा धारिक धमस्वार्थों पर धर्थाय धम से ध्यान नहीं किया जाता क्योंकि इन सम्मेलनों में परिषनी देश परिषधर धण हुए हैं । इस प्रकार के प्रादेशिक सम्मेलन होने से ऐसी शिक्षायें बुरे हो धायेंगी । भारत और धन्य एधियाई देश धर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में बिन प्रशिषिण धयना महत्त्वपूर्ण स्थान ग्रहण करते जा र्हे हैं । धत यहि स्वाभाबिक ही है कि ये धम प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय यम सम्मेलनों के केवल प्रविधक (Observers) धाय न र्हे धरिनु उनमें धधिक से धधिक सधिम भाग लें । अन्तर्राष्ट्रीय यम संघटन की धर स्वाधमा हुई भी तब परिषनी देशों ने औद्योगिक विकास में परिषधता प्राप्त कर नी थी और उनकी मुख्य धमस्वार्थें पूजी तथा धम में समधीता धधिकों की परि

स्थितियों में सुधार तथा सामाजिक सुरक्षा प्रादि थीं। यह समस्याएँ एशिया के लिये भी बहुत महत्वपूर्ण हैं लेकिन जैसा कि १९४७ में एशियाई अम सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए प० नेहरू ने अपने भाषण में कहा था कि एशियाई देशों की मुख्य प्राधिक और अम समस्याएँ ऐसी हैं जिनके अन्तर्गत हमें यह देखना है कि मध्यकालीन कृषि धर्म व्यवस्था को बदल कर धातुनिक वैज्ञानिक कृषि और औद्योगिक धर्म व्यवस्था में कैसे लाया जाये। अन्तर्राष्ट्रीय अम संगठन ने इन समस्याओं पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया था। प्रादेशिक सम्मेलन अब इन दोषों को दूर कर देंगे। इन सम्मेलनों के उपरान्त अब इस बात का अनुभव कर लिया गया है और इस बात पर और भी दिया जा रहा है कि प्राधिक विकसित देशों द्वारा अज्ञ-विकसित देशों को तकनीकी और प्राधिक सहायता मिलाने की आवश्यकता है। अन्तर्राष्ट्रीय अम संगठन अब एशियाई देशों की ओर भी प्राधिक ध्यान दे रहा है।

इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि एशियाई समस्याओं के लिए प्रादेशिक रूप से जो प्रयत्न किये जा रहे हैं वह सहायनीय हैं। परन्तु इसके साथ ही हमें अंतरम सत्ता के अध्ययन की इस चेतावनी को भी ध्यान में रखना चाहिए कि अन्तर्राष्ट्रीय अम संगठन के मूल प्राधारों में जो सामान्य आदर्श और सामान्य जीवन स्तर का प्राधार है उसमें किसी प्रकार की रुकावट नहीं पड़नी चाहिए। एशिया के प्राधिक पिछड़ेपन को केवल एक दसवायी प्रयोगवादी समझना चाहिये और जितनी जल्दी सम्भव हो इसके समाप्त कर देने के प्रयत्न करने चाहिये। यदि प्रादेशिक सम्मेलनों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इस पिछड़ेपन को स्थिर रखने की ओर संकेत मिलता है और यह एशिया को एक हीन प्राधिक इकाई के रूप में मानकर चलते हैं तो इससे लाभ के स्थान पर हानि ही होगी। प्रादेशिक अम सम्मेलनों को एशिया के प्राधिक पिछड़ेपन को दूर करने की भावना से ही कार्य करना चाहिये जिससे इन देशों के प्राचीण और एहरी प्राधिक उसी प्रकार का जीवन स्तर अपना सकें और सामाजिक कुराहियों से अपनी उसी प्रकार रक्षा कर सकें जिस प्रकार कि प्रायतिनील देशों के प्राधिक करते हैं। इसके साथ ही जो भी प्रादेशिक कार्य होते हैं उनको अन्तर्राष्ट्रीय ढांचे में ही करना चाहिये क्योंकि निर्भरता और अभाव की समस्याओं के समाधान के लिए केवल उन्हीं लोगों का सहयोग नहीं चाहिये जो उनसे पीड़ित हैं बल्कि सभी लोगों के सहयोग की आवश्यकता है।

भारत द्वारा अपनाए गए अन्तर्राष्ट्रीय अम संगठन के अभिसमय —

अब इन अन्तर्राष्ट्रीय अम संगठन के उन अभिसमयों की विवेचना करते जिन्हें भारत ने अपना लिया है। अन्तर्राष्ट्रीय अम सम्मेलन ने जून १९६२ तक ११० अभिसमय और ११७ मिश्रितियों पारित की हैं जिनमें से केवल २७ अभिसमय भारत द्वारा अपनाए गए हैं। इनमें से दो अभिसमय अब प्रचलन में नहीं हैं। यह अभिसमय निम्नलिखित हैं—

(१) बाय के पत्रों (उद्योग) में सम्बन्ध मन् १९१९ वा अभिसमय न० १—

यह प्रतिष्ठमय औद्योगिक व्यवसायों में काम करने के घटों को एक दिन में ८ घोंर सप्ताह में ४८ तक सीमित करने के सम्बन्ध में है। इस प्रतिष्ठमय को भारत ने अपने लिए पारित किए गए कुछ विशेष नियमों के आधार पर १४ जुलाई १९२१ को अपनाया था। यह आधार यह था कि ब्रिटिश भारत में उन समस्त श्रमिकों के लिए जो कारखाना प्रतिष्ठमय के प्रसारण वाले वाले उद्योगों में काम करते हैं या जहाँ में काम करते हैं या ऐसी कार्य के उन विभागों में कार्य करते हैं जो किसी उचित प्राधिकारी द्वारा निरिक्त कर दी गई है '६० बटे प्रति सप्ताह' का सिद्धान्त लागू किया जाए।

(२) बेरोजगारी से सम्बन्ध १९१९ का प्रतिष्ठमय न० २—इस प्रतिष्ठमय को अपनाया तो गया था परन्तु १९३८ में समाप्त दिया गया।

(३) श्रमिकों के लिये राशि में काम करने से सम्बन्ध १९१९ का प्रतिष्ठमय न० ४—यह प्रतिष्ठमय राशि में श्रमिकों को कार्य पर लगाना निषेध करता है। भारत सरकार ने एक विशेष नियम के आधार पर १४ जुलाई १९२१ को इसे अपनाया था। इस विशेष नियम के अनुसार भारत सरकार को यह अधिकार है कि किसी भी औद्योगिक व्यवसाय के सम्बन्ध में इस प्रतिष्ठमय को निलम्बित (Suspend) कर सकती है।

(४) श्रमिकों का राशि में काम करने से सम्बन्ध १९१९ का प्रतिष्ठमय न० ६—इस प्रस्ताव में उद्योगों में लगे हुए श्रमिकों को राशि में रोजगार पर लगाना निषिद्ध है। एक विशेष नियम के आधार पर १४ जुलाई १९२१ को इसे अपनाया गया था। अर्थात् भारतीय कारखाना प्रतिष्ठमय द्वारा परिभाषित कारखानों में १४ वर्ष से कम आयु के बालकों को राशि के समय कार्य पर नहीं लगाया जा सकता।

(५) कृषि कर्मचारियों के संगठन और समुदाय बनाने के अधिकार में सम्बन्ध १९२१ का प्रतिष्ठमय न० ११—यह ११ मई १९२३ को अपनाया गया।

(६) साप्ताहिक अवकाश (उद्योग) प्रतिष्ठमय नामक १९२१ का प्रतिष्ठमय न० १४—यह प्रतिष्ठमय औद्योगिक व्यवसायों में कर्मचारियों के लिये सप्ताह में २४ बटे के अवकाश की व्यवस्था करता है। इसे ११ मई १९२३ को अपनाया गया।

(७) जून १९२१ का प्रतिष्ठमय न० १२—ट्रीमर या स्टोकरस का कार्य करने वाले श्रमिकों को रोजगार पर लगाने की न्यूनतम आयु इस प्रतिष्ठमय द्वारा निर्धारित की गई है। यह प्रतिष्ठमय २० नवम्बर १९२२ को भारत द्वारा अपनाया गया।

(८) समुद्र में रोजगार पर लगे हुए श्रमिकों और बालकों के लिये प्रतिष्ठमय विधियाँ जोष उपलब्ध करने से सम्बन्ध १९२१ का प्रतिष्ठमय न० १६—यह प्रतिष्ठमय २ नवम्बर १९२२ को अपनाया गया।

(९) व्यवसायबन्धित लोगों में श्रमिकों की राशि पूर्ति की व्यवस्था करने से

सम्बद्ध १९२५ का अधिसूचना नं० १८—३० सितम्बर १९२७ को भारत ने इसे अपनाया।

(१०) दुर्घटनाओं में श्रमिकों को क्षतिपूर्ति देने के विषय में देण्डिय और दिवेदीय कर्मचारियों में समान व्यवहार करने से सम्बद्ध १९२४ का अधिसूचना नं० १९—यह भी ३० सितम्बर १९२७ को अपनाया गया।

(११) १९२६ का अधिसूचना नं० २१—इस अधिसूचना में बहाने पर पहुँचे हुए उपप्रवासियों के निरीक्षण को सरल करने के नियमों का उल्लेख किया गया है। इसमें इस बात की व्यवस्था है कि इस प्रकार का निरीक्षण एक से अधिक सरकारों द्वारा करेगी और उपप्रवासियों (Emigrants) के सरकारी निरीक्षक की नियुक्ति उस देश की सरकार करेगी जिस देश का उस बहाने पर भ्रमण लक्ष्य रहा होगा। १४ जनवरी सन् १९२८ को भारत ने यह अधिसूचना अपनाया।

(१२) सन् १९२६ का अधिसूचना नं० २२—इस अधिसूचना में बहाने के मामलों और उनके समुद्री कर्मचारियों के मध्य सम्झौते के अंतर्निर्णयों की व्यवस्था की गई है। बहाने के मामलों और समुद्री कर्मचारियों-बोनों को ही सम्झौते के अंतर्निर्णयों पर हस्ताक्षर करने होंगे। साथ ही सम्झौते पर हस्ताक्षर करने से पूर्व अंतर्निर्णयों की जाँच करने की सुविधाएँ भी प्रदान की जायगी। भारत ने यह अधिसूचना ११ दिसम्बर १९२७ को अपनाया।

(१३) १९२९ का अधिसूचना नं० २७—इस अधिसूचना में जहाजों द्वारा बातायात किये गये भारी भारी वस्तुओं पर भार का चिन्ह लगाने की व्यवस्था की गई है। भारत ने यह अधिसूचना ७ सितम्बर १९३१ को अपनाया।

(१४) जहाजों पर मास बढ़ाने और उतारने में होम बॉडी दुर्घटनाओं से श्रमिकों की सुरक्षा की व्यवस्था से सम्बद्ध १९३२ का अधिसूचना नं० ३२—यह अधिसूचना १९३४ के भारतीय गोरी कर्मचारी अधिनियम का कार्यान्वित करने करारी १९४८ को अपनाया गया।

(१५) शक्ति के समय स्थियों को रोजगार पर न लगाने से सम्बद्ध १९३४ का अधिसूचना नं० ४१—भारत में २२ नवम्बर १९३२ को यह अधिसूचना उसी प्रकार अपनाया था जिस प्रकार १९१९ का अधिसूचना नं० ४ अपनाया गया था। १९३४ का यह अधिसूचना संशोधित अधिसूचना था। इसमें एक नया उपबंध इस विषय में था कि जो स्थियाँ प्रयासन में उत्तरदायी-पत्रों पर धारित हैं और जो साधारण तथा सामान्य कार्य नहीं करती हैं उन पर १९१९ का मूल अधिसूचना लागू नहीं होगा। लेकिन यह अधिसूचना अब प्रचलन में नहीं रहा है क्योंकि इसी विषय में सम्बन्धित नवीनतम अधिसूचना नं० ८९ को भारत ने अपना लिया है।

(१६) १९३५ का अधिसूचना नं० ४५—यह अधिसूचना किसी भी तान के भीतर स्थियों को काम पर न लगाने से सम्बन्ध में था। इस २५ मार्च १९३८ को अपनाया गया।

(१०) १९४६ का अधिसूचना नं० ८०—इसको "अंतिम घटनियम संशोधित अधिसूचना" (Final Articles Revision Convention) भी कहा जाता है। यह अन्तर्राष्ट्रीय थम संगठन के सचिवालय में परिवर्तन करने से सम्बद्ध है। भारत ने यह अधिसूचना १७ नवम्बर १९४० को अपनाया।

(११) १९४७ का अधिसूचना नं० ८१—इसको थम निरीक्षण अधिसूचना भी कहा जाता है। यह अधिसूचना उद्योग और वाणिज्य में थमियों के निरीक्षण के सम्बन्ध में है। ७ अप्रैल १९४९ को यह अपनाया गया।

(१२) उद्योग में काम पर लगी हुई स्त्रियों को राशि में रोजगार देने से सम्बद्ध १९४८ का अधिसूचना नं० ८२—यह एक संशोधित अधिसूचना का। २ मार्च १९४० को यह भारत द्वारा अपनाया गया।

(१३) १९४८ का अधिसूचना नं० ८३—उद्योग में रोजगार पर लगे हुए शिशुओं का रोजगार में काम करने से सम्बद्ध यह एक संशोधित अधिसूचना का। २७ फरवरी १९४० को यह भारत द्वारा अपनाया गया।

(१४) १९४० का अधिसूचना नं० २२—यह अधिसूचना सभी प्रकार की बेमार को समाप्त करने के सम्बन्ध में है। भारत में यह अधिसूचना ३० नवम्बर १९४४ को अपनाया गया।

(१५) १९२८ का अधिसूचना नं० २६—इसके अन्तर्गत इस बात की व्यवस्था है कि कुछ व्यवसायों में एक न्यूनतम मजदूरी निर्धारित की जाए। भारत ने यह अधिसूचना १० जनवरी १९२३ को अपनाया। १९४८ के न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अन्तर्गत इस प्रकार की व्यवस्था पहले ही से कर दी गई थी।

(१६) न्यूनतम धानु (उद्योग) कानून १९१९ का अधिसूचना नं० ३—इसे भारत में ९ सितम्बर १९२३ में अपनाया।

(१७) पुरुषों और स्त्रियों के लिये समान मूल्य के समान कार्यों के लिये समान पारिश्रमिक से सम्बद्ध १९२१ का अधिसूचना नं० १००—भारत ने यह अधिसूचना २३ सितम्बर १९२८ को अपनाया।

(१८) १९४७ का स्वतन्त्र देशों की राष्ट्रीय व साम्य आदिप तथा धर्म आदिप आतियों की सुरक्षा तथा संगठन से सम्बन्धित अधिसूचना नं० १०७—भारत ने यह अधिसूचना २९ सितम्बर १९४८ को अपनाया।

(१९) १९४८ का रोजगार सेवा संरक्षण सम्बन्धी अधिसूचना नं० ८४—भारत ने इसे २४ जून १९४९ को अपनाया।

(२०) १९२४ का अधिसूचना नं० १११—यह रोजगार और व्यवसाय में धैर भाव करने से सम्बन्धित है। भारत ने इसे ३ जून १९२६ को अपनाया।

इन अधिसूचनाओं के अपनाए जाने से विभिन्न कारणोंवाले अधिनियमों में संशोधन किए गए हैं। यह संशोधन ऐसे अधिसूचनाओं को कार्यान्वित करने के लिए किए गए हैं जो काम करने के बंदों स्त्रियों का रोजगार में काम करने अत्याधिक अवकाश आदि से

सम्बन्धित है तथा कई अन्य अधिनियमों में जैसे भारत सान अधिनियम ऐसे अधिनियम अमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम आदि में संशोधन हुए हैं। इनके अन्य अधिसूचनों को सरकारी अधिसूचना द्वारा अपनाया गया है। १०

१९२४ में सरकार ने ३ सदस्यों की एक विधायी समिति अन्तर्राष्ट्रीय धम संगठन के ऐसे अधिसूचनों और सिफारिशों पर विचार करने के लिए बनाई जो भारत में नहीं अपनाए जा सकें। इस समिति की सिफारिशों के परिणामस्वरूप ही अक्टूबर १७ अधिसूचना जिनका ऊपर उल्लेख किया जा चुका है भारत द्वारा अपनाया गया है। कुछ अन्य अधिसूचनों को भी अपनाने का मुझसे विचार मया है। उदाहरणरूप अन्तर्राष्ट्रीय अन्वेषण विभागों में अमिकों को क्षतिपूर्ति देने से सम्बन्ध १९२४ का अधिसूचना न० ४२ काम करने के अर्थों तथा मजदूरी के अर्थों से सम्बन्ध १९२८ का अधिसूचना न० ६३ तथा रूपि में न्यूनतम मजदूरी की व्यवस्था करने से सम्बन्ध १९२९ का अधिसूचना न० ९९।

अन्य अधिसूचनों का प्रभाव —

इसके अतिरिक्त भारत में विभिन्न अधिसूचनों के अनेक आदेशक भागों को अपने राष्ट्रीय विभाग में सम्मिलित कर लिया है। उदाहरणरूप १९१९ के प्रथम काम से सम्बन्ध अधिसूचना न० ३ की धाराओं विभिन्न मातृत्व-हित-साम अधिनियमों में आ गई है। १९२६ के अन्तर्गत छुट्टियों से सम्बन्ध अधिसूचना के परिणामस्वरूप ही अनेक राज्यों में अमिकों को छुट्टियाँ देने के लिए पग उठाय गए हैं आदि आदि।

भारत में अधिक अधिसूचना न अपनाये जाने के कारण —

साधारणतया यह सिद्धांत ही जाती है कि भारत द्वारा अपनाये गये अधिसूचना की संख्या बहुत कम है। अन्तर्राष्ट्रीय धम संगठन के १९८ अधिसूचना से भारत में अब तक केवल २७ अधिसूचना अपनाये हैं जिनमें से केवल २५ लागू हैं। परन्तु यह यह है कि इन अधिसूचनाओं के न अपनाये जाने का कारण यह नहीं है कि इनमें जो आदेशक अन्वेषण विभागों में उल्लेखित हैं उनको मान्यता नहीं दी गई है। बल्कि इसका कारण अन्तर्राष्ट्रीय धम संगठन का वह नियम है जिसके अनुसार यह अनिवार्य है कि प्रत्येक अधिसूचना को बिना किसी परिवर्तन या संशोधन के अपनाया जाय। अतः या तो किसी भी अधिसूचना का पूर्ण रूप से स्वीकार करना होता है अथवा अस्वीकार करना पड़ता है। भारत में अनेक अधिसूचना कुछ अर्थों के अनुसार ही अपनाये जा सकते थे परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय धम संगठन के नियमों ने इस बात की अनुमति नहीं

० अधिसूचना न० ० (१९१९ का वैद्यकीय अधिसूचना) को भारत में अपनाया था परन्तु सन् १९३८ में इसे त्याग दिया। १९३४ का अधिसूचना न० ४२ भी अब प्रचलन में नहीं है क्योंकि इसके स्थान पर अब १९४८ के अधिसूचना न० ४२ को अपना लिया गया है।

वी। अतः इत विषय में संशोधन की आवश्यकता है जिससे कुछ विद्यार्थी अभिसमयों को यदि पूर्ण रूप से सम्भव न हो सके तो उन्हें अपने ध्येयताया जा सके।
 अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन का धर्म विधान पर प्रभाव —

इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन न भारतीय धर्म विधान की प्रगति को धार्मिक माना में प्रभावित किया है। जैसा कि ऊपर संकेत किया गया है भारत में धर्मिक महत्वपूर्ण अभिसमय ध्येयताएँ हैं जिनको देश के धर्म विधान में सम्मिलित कर लिया गया है। अन्य अभिसमयों का भी धर्मिक अभिसमयों की प्रगति पर प्रभाव पड़ा है। इसके परिणामित इस बात को भी धर्मीकार नहीं किया जा सका कि भारतीय विधान तथा द्वारा कई अभिसमयों पर विचार-विनिमय करने के फलस्वरूप सामाजिक प्रगति को एक नई श्रेणी मिली है, जिस पर विविध धर्म के लोगों द्वारा भी शक्यत प्रकट किया गया है। किसी अभिसमय पर बाद-विचार करने से ही धर्मिक धर्म समस्याएँ प्रकट हो जा सकती हैं। 'सर एमड्यू क्लोव' ने जो किसी समय भारत सरकार के सदस्य थे एक बार कहा था कि अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संगठन धर्मिकों की धर्मसमस्याओं में जनता की रुचि को उभारने का सामन रहा है। कभी कभी तो इस संगठन ने धर्मिकों के हित के लिये ऐसे पत्र उठाने के लिए प्रोत्साहित किया है जो संगठन के धर्माध्यक्ष कभी सम्भव न हो पाते। परसेस या अपरोसेस रूप से भारतीय धर्म सुधार कार्यों में जो भी प्रगति हुई है उसके लिए सर्वप्रथम धर्म ध्येयता ने भी अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन के प्रयत्नों की प्रशंसा की है। मानिक भी उन धर्मिकों को स्वीकार करते हैं जिन्हें ह्युयार देश अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन से सम्बन्धित होने के नाते प्राप्त कर रहा है। परन्तु मानिकों को यह भी ज्ञान रहा है कि अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन प्रत्यक्ष रूप से प्रयत्न किए बिना भी देश में धर्म विधान की प्रगति में ही प्रगति न ला दे।

इसके परिणामित अनुभव न भी यह सिद्ध कर दिया है कि यदि कुछ धर्मिक धर्म किसी देश में ध्येयता नहीं भी जाते फिर भी उनसे एक निश्चित सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति होती है। धर्मिक धर्म ठीका होता है कि यदि संसार के प्रमुख देश किसी अभिसमय की ध्येयता लेते हैं तब इसी कारण सामान्य रूप से अभिसमयों का साम्यता प्राप्त हो जाती है चाहे कई देशों में उनको धर्मिक रूप से न भी ध्येयताया गया हो। यही कारण है कि अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन के प्रस्ताव या तो धर्मिक व्यावहारिक अनुभव पर आधारित हैं या धर्म से धर्म धर्मिक देशों में जो एक निश्चित सामाजिक आवश्यकता अनुभव होती है उस पर आधारित हैं। परिणाम स्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय धर्म सम्मेलन द्वारा पारित अभिसमय सामान्यतया ऐसे व्यवहार के स्तर धर्म धर्म हैं जिनको सब स्वीकार कर लेते हैं। ऐसे स्तर को विच्छेद हुए देश धर्मिक-धर्मिक धर्मिकों का प्रयत्न करते रहते हैं। इस प्रकार कई बार किसी अभिसमय में निश्चित सामाजिक सुधारों का धर्मिक सामान्यतया उन देशों के राष्ट्रीय विधान में भी सम्मिलित कर लिया जाता है जो किसी तकनीकी प्रश्न या धर्मिक धर्मिकों से

अभिसमय को अपनाते में कठिनता अनुभव करते हैं। सन् १९१६ के प्रथम काल अभिसमय का उदाहरण दिया जा सकता है। यह अभिसमय भारत में अनेक मातृत्व हित लाभ अधिनियमों के अन्तर्गत आ जाता है। यद्यपि अनेक उद्योगों में स्त्री श्रमिकों की अधिकार संस्था इन अभिसमयों में दिये गए सामो का उपभोग कर रही है तथापि भारत की उन दशों में गणना होती है जिन्होंने अभी तक इस अभिसमय को नहीं अपनाया है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का श्रम आन्दोलन पर प्रभाव —

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने देखा कि श्रम आन्दोलन को भी पर्याप्त मात्रा में प्रभावित किया है। श्रम आन्दोलन का प्रारम्भ अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना के साथ ही साथ हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने श्रमिकों में पारस्परिक एकता की भावना को जन्म दिया है और उनमें जो असह-अलग रहने की भावना थी उसको दूर किया है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने श्रमिकों में उनके अधिकारों और विशेषाधिकारों के प्रति जागृति उत्पन्न कर दी है। इसके अतिरिक्त विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं अथवा सम्बन्धी रिपोर्ट्स आदि के माध्यम से समय-समय पर श्रमिकों को असूक्ष्म सूचनाएँ भी दी हैं। श्रमिकों के प्रतिनिधि अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलनों में सम्मिलित होते हैं, और भारत में श्रमिक संघों के प्रारम्भ के संगमो की इसलिये स्थापना हुई थी कि सम्मेलनों के लिए प्रतिनिधि चुनकर भेजने की आवश्यकता अनुभव की गई थी। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के प्रभाव में भारतीय श्रम आन्दोलन की सम्भवतया इतनी जल्दी और इतने अल्पकाल की अवधि में प्रगति न हो पाती और श्रम विधान की शक्ति में भी इतनी तीव्रता न आ पाती।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के कार्यों का मूल्यांकन —

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के कार्यों का यद्यपि प्रचार अधिक नहीं हुआ है परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं है कि सरकारों मासिकों और श्रमिकों के प्रतिनिधि इस संस्था में सहयोग देकर सामाजिक न्याय को बढ़ा रहे हैं और इस प्रकार स्थायी और अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति की स्थापना में योग दे रहे हैं। यदि हम इन संस्था से ऐसे रिकार्डों का जो निरन्तर ही बहुत तकनीकी है अध्ययन करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि यह संस्था श्रमिकों की दशाओं में उन्नति करने उनके जीवन स्तर को ऊँचा उठाने और आर्थिक तथा सामाजिक स्थिरता को बढ़ाने के लिए एक अद्वितीय और विशेष कार्य कर रही है। यद्यपि यह सत्य है कि यह सभी उद्देश्य जिनका १९१६ में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के ४० वें अधिवेशन में श्री० मुत्तारजी माल मन्दा ने भी उल्लेख किया था अभी तक पूरे नहीं हो पाया है फिर भी अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन मेदा मन्दा को इस सम्बन्ध में बेताबनी देना रहता है कि सरकारों और जनता का सब बहन यह आवश्यक कार्य है कि इस सम्बन्ध में जो भी उन्नति की जा रही है, उसमें तीव्रता लाई जाए। वास्तविकता यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के कार्यों के बिना करोड़ों श्रमिकों की दशा बेसी बुरा है, उन्हे भी बुरी होनी और कई सरकारों मासिकों

उनको ध्यान में रखकर देखा जाए तो भारत के वे सभी प्रयत्न जो सामाजिक उत्पत्ति के लिए किए जा रहे हैं बहुत उत्साहपूर्ण प्रतीत होते हैं। यदि अपने देश की निरिच्छित उत्पत्ति की ओर ध्यान दिया जाए या समस्त संसार की ओर भी देखा जाए तो इस उत्पत्ति का उचित प्रकार से मूल्यांकन करने में यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अन्तर्राष्ट्रीय सम सभ्यता पर अब तक जितना भी ध्यान दिया गया है, उससे अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि मानवीय भय को वीर्य और स्वतन्त्रता प्रदान करने में अन्तर्राष्ट्रीय सम सभ्यता का प्रभाव भारत में अत्यधिक रहा है।

भारत में श्रम विधान (Labour Legislation in India)

श्रम विधान का सामान्य सर्वेक्षण—इतिहास —

ब्रिटीश राजावदी के उत्तरार्ध में भारत में उद्योग वर्गों के धारण होने के समय की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि पूर्वीपति इस बात के लिए बहुत उत्सुक रहते थे कि उन्हें शीघ्र और अधिकतम साम हो। मासिक कम मजदूरी पर अधिक समय तक काम करने वाले प्रत्यक्ष और निर्धन श्रमिकों को काम पर लवाने का प्रयत्न न छोड़ सकें वे और उन्होंने पुरुषों स्त्रियों तथा बच्चों से कठोर परिश्रम करा कर और कम वेतन देकर अत्यधिक लाभ उठाया। उस समय सरकार की नीति श्रमिकों से सामाजिक प्रणाली की रक्षा करने की थी न कि सामाजिक प्रणाली से श्रमिकों की रक्षा की। सन् १८२६ और १८६० में जो विधान बनाए गए— सन् १८२६ का श्रमिकों का संविदा की शर्तों को संघ करने का अधिनियम और १८६० का मासिक व श्रमिक (विवाद) अधिनियम—वह श्रमिका की शर्तों को संघ करने वाले अध्याधी श्रमिकों को दण्ड देने के हेतु बनाए गए थे। ऐसे अध्याधी को कौशरीय अध्याध मान लिया गया था। प्रारम्भ में जो भी श्रम विधान बनाए गए वह औद्योगिक श्रमिकों के सामान्य हर्ष से सम्बन्धित न होकर उद्योग विशेष से सम्बन्धित होते थे। भारतवर्ष में पहला संगठित उद्योग जिसके कारण श्रमिक नियंत्रण हुआ, प्रसम का बागाम उद्योग था। वहाँ श्रमिकों की भयंती की शीघ्रपूर्ण प्रणाली के कारण शर्तों को नियंत्रित करने के लिए बंगाल तथा केन्द्रीय सरकार ने कुछ श्रमिक कदम उठाए, जिनको प्रसम श्रमिक अधिनियमों के नाम से पुकारा गया। प्रथम कारखाना अधिनियम तथा ज्ञान अधिनियम क्रमशः १८८१ तथा १९०१ में पारित किए गए। कारखाना अधिनियम १८८१ तथा १९११ में भी पारित किए गए। इस प्रकार प्रथम महायुद्ध से पूर्व श्रमिक शक्तिपुति श्रमिक संघ व्यावसायिक विवाद प्रादि से सम्बन्धित औद्योगिक श्रमिकों के सामान्य हर्ष के लिए कोई विधान नहीं था।

प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् श्रम विधान —

प्रथम विश्वयुद्ध के अनुभवों के कारण धर्म के प्रति सरकार और मासिकों के दृष्टिकोण में काफी परिवर्तन आया। राज्य के हस्तक्षेप के सिद्धान्त को औद्योगिक श्रमिकों में और भी बिलुप्त रूप से मान्य कर दिया गया। एक संतुष्ट श्रमजीवी वर्ग की आवश्यकता का तीव्रता से अनुभव किया जाने लगा तथा मासिकों और श्रमिकों के

द्वारा सामूहिक कार्यवाही के मामलों की धोर भी व्याप्त गया। युद्ध के पश्चात् श्रमिकों में बेतला शक्ति या यई तथा श्रमिक संघों का भी विकास हुआ और साथ ही औद्योगिक सघान्ति भी बढ़ी। (पृष्ठ ८४-८६)। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संरक्षण की स्थापना से भारत में श्रम विधान को काफी प्रोत्साहन मिला क्योंकि इसने अनेक श्रमसमय और शिफ्टरिश्तों पारित की तथा श्रम के उन्नाय के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों को निर्धारित किया।

१९२२ के पश्चात् भारत में श्रम विधान बनाने की धोर तीव्र गति से प्रगति हुई। कारखानों से सम्बन्धित कानूनों को १९२२ के कारखाना अधिनियम में समायोजित कर दिया गया। अनेक नवीन धोर महत्त्वपूर्ण अधिनियम भी पारित किए गए। उदाहरणार्थ १९२३ का भारतीय ज्ञान अधिनियम १९२३ का श्रमिक शक्ति पूर्व अधिनियम १९२६ का भारतीय श्रमिक सभ अधिनियम तथा १९२६ का व्यापार विबाध अधिनियम। भारतीय व्यापारिक अज्ञानकारी अधिनियम १९२६ में पारित किया गया। १९२७ के रैमने अधिनियम में कार्य के घण्टों को नियमित करने के लिए १९२७ में सघोचन किया गया। १९२९ में भारतवर्ष में रॉयल श्रम धायोग की नियुक्ति की गई बिना सपनी रिपोर्ट १९३१ में प्रस्तुत की। इस रिपोर्ट में श्रम समस्याओं के सभी पहलुओं पर तथा श्रम कानूनों को बनाने धोर उनके प्रघासन के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण शिफ्टरिश्तों की गई थी। इसके परिणामस्वरूप अनेक शैथानिक कदम उठाए गए। १९३२ में श्राय लोभ प्रवासी श्रमिक अधिनियम पारित किया गया। १९३४ में कारखाना अधिनियम को पूर्णतया रोहछया गया। व्यापार विबाध अधिनियम में संघोचन किया गया तथा १९३४ में इसे शैथानिक पुस्तिका में स्थाई स्थान दे दिया गया। १९३६ में मजदूरी सघायपी अधिनियम पारित किया गया। १९३६ में श्रम (श्रम अनुबंध) अधिनियम तथा १९३४ में राष्ट्रीय बोरी श्रमिक अधिनियम पारित हुए। श्रमिक संघोपुति अधिनियम के सम्बन्ध में रॉयल श्रम धायोग की अधिकांश शिफ्टरिश्तों को इस समय लागू किया गया तथा १९३४ में ज्ञान अधिनियम में भी संघोचन किया गया। किन्ती भी कम्पनी अधात् समवाय को श्रमिकों के रहने के लिए सफल बनाने तथा असेसे सम्बन्धित सुविधाओं की व्यवस्था करने के हेतु श्रमिधायि सप से श्रमि प्राप्त करने के लिए १९२४ के श्रमि अधिनियम अधिनियम में १९३३ में संघोचन हुआ। धायोग की रिपोर्ट के प्रकाशित होने से पूर्व मानूत्क-हित नाम अधिनियम केवल बन्दई तथा श्रम्य प्रवैध में लागू था। श्रम्य प्रवेधों में भी इती प्रकार के विधान बनाए गए। कन्नीय सरकार ने भी सभी ज्ञान उद्योगों के लिए १९४१ में ज्ञान मानूत्क-हित नाम अधिनियम पारित किया।

प्रान्तों में श्रम विधान —

१९३२ के भारत सरकार अधिनियम में पूर्व श्रम के क्षेत्र में अघापि कन्नीय धोर प्रान्तीय सरकारों के विधान बनाने के अधिकांश अनुक्त से तथापि प्रान्तों ने इत धोर महत्त्व कम पत्र उठाए थे। कुन्वयत प्रान्तों के अधिनियम निम्नलिखित थे— बन्दई

(१९२९), सी० पी० (१९३०) और मद्रास (१९३३) के मातृत्व-हित-साम
प्रबन्धन-विधायक १९३४ का सम्बन्धी औद्योगिक विवाद सुसह प्रबन्धन-विधायक १९३३ का
बंगाल धमिक संरक्षण प्रबन्धन-विधायक १९३६ का केन्द्रीय प्रायः औद्योगिक धमिक प्रबन्धन
समन्वय एवम् अन्वय प्रबन्धन-विधायक १९३७ का सी० पी० प्रबन्धन-विधायक कारखाना
प्रबन्धन-विधायक और १९३७ का सी० पी० श्रमिक संरक्षण प्रबन्धन-विधायक ।

१९३७ में प्रांतीय स्वायत्तता के पश्चात् जनप्रिय सरकारों ने और धमिक
उत्साह के साथ धम विधान बनाए, प्रांतों में कांग्रेस मंत्री समुदाय ने कांग्रेस की धम
नीति को ही धामने रखा। कांग्रेस की धम नीति यह थी कि "जहां तक देश की
धार्मिक स्थिति बहुत कर सकती हो जहां तक औद्योगिक धमिकों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय
स्तर के अनुकूल रहन-सहन के स्तर, कार्य के बन्धों तथा रोजगार की दशाओं को प्राप्त
करना चाहिए तथा धमिकों और धमिकों के बीच विवादों को सुलझाने की उचित
स्यवस्था करनी चाहिए तथा बुढ़ावस्था बीमारी और बेरोजगारी के धार्मिक दुष्परि-
सर्थात् से रक्षा होनी चाहिए तथा धमिकों को धम बनाने और अपने हितों की रक्षा के
लिए हड़ताल करने का धमिकार भी होना चाहिए।" सम्बन्धी, सी० पी० यू पी०
तथा बिहार की सरकारों ने धम दशाओं का अध्ययन करने के लिए समितियां नियुक्त
कीं। इससे पूर्व कि इन समितियों की रिपोर्टों को पूर्णतया कार्यान्वित किया
जा सकता कांग्रेस सरकारों ने नवम्बर, १९३९ में धम-धम दे दिया। परन्तु नैर-
कांग्रेस सरकारों ने भी धम समस्याओं में बहुत रचि ली। अपने प्रांतों में अपने
अपने क्षेत्र की धम समस्याओं के लिए धम कमिश्नरों धर्मात् धमिकों की नियुक्तियां
कीं। कमिश्नरों का यह पद धम तब चला आ रहा है। इस धमिक में प्रांतीय धम
विधान का सबसे महत्वपूर्ण धमिकनियम १९३८ का 'सम्बन्धी औद्योगिक विवाद
प्रबन्धन-विधायक' था। प्रांतीय क्षेत्र में धमिकी प्रकार का यह एकमात्र ऐसा विधान था
जिसमें औद्योगिक विवादों को धमिकीपूर्ण ण से सुलझाने की स्यवस्था की गई थी।
एक अन्य महत्वपूर्ण धम विधान १९३९ का दुकान तथा सत्यान धमिकनियम था।
इसके धमिकरिक्त बंगाल यू० पी० पंजाब, धम और सिंध में मातृत्व-हित-साम
धमिकनियम बंगाल और सिंध में दुकान और सत्यान धमिकनियम तथा पंजाब में
धमिकनियम धमिकी धमिकनियम धमिक धम दशाओं को उन्नत करने के लिए जनप्रिय
सरकारों के उत्साह के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

हाल के वर्षों में धम विधान —

इसकी प्रगति होने पर भी इन विधानों में समावोधना का धमाल था तथा
इसके प्रगासन में कुछ कमियां रह गई थीं। इन दोषों को दूर करने के लिए भारत
सरकार १९४० से धम धमिकों के सम्मेलन का आयोजन करती आ रही है।
सरकार की धम समस्याओं पर उत्साह देने के लिए १९४२ में विद्वतीय धम सम्मेलन
की स्थापना की गई। १९४३ में इसकी धमिकियों के परिणामस्वरूप सी० डी० सी०
टीने की धमिकता में एक धम अनुसंधान धमिकि की नियुक्ति की गई। अपने धमिकी

रिपोर्ट १९४६ में प्रस्तुत की। विभिन्न यम समस्याओं पर इस समिति ने व्यापक रूप से सिफारिशें कीं। एक स्थायी यम समिति की भी स्थापना की गई। इस त्रिदलीय व्यवस्था से सरकार और अधिकों के प्रतिनिधियों के बीच नियमित रूप से समतल समतल विचार विमर्श का जो प्रथम प्राप्त हुआ सबसे यम की मुख्य समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित होने में सहायता मिली। १९४२ और १९४८ के मध्य वर्षों में यम विभाग के क्षेत्र और विषयों का काफी विस्तार हुआ। देश की स्वतन्त्रता के पश्चात् तथा सरकार द्वारा यम की रक्षाओं को सुधारने और उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता का और अधिक अनुभव करने के कारण देश में यम विभाग की प्रति और तीव्रतर हो गई।

हाल ही के वर्षों में अधिकों की रक्षा व कल्याण के हेतु अनेक विभाग पारित किए गए हैं। इनमें मुख्य निम्नलिखित अधिनियम हैं १९४६ में कारखाना अधिनियम में संशोधन १९४८ का कारखाना अधिनियम जिसमें १९३४ में संशोधन हुआ। गोदी कर्मचारी (रोजगार का नियमन) अधिनियम १९४८ कोयला खान अधिक कल्याण निधि अधिनियम १९४७ १९३२ का शालों का बंधन व सुरक्षा अधिनियम आन्ध्रक ज्ञान यमिक कल्याण निधि अधिनियम १९४६ १९३० का उत्तर प्रदेश बीमा एवं आत्मक मत्तार उद्योग यम कल्याण एवं विकास निधि अधिनियम बम्बई (१९३३) तथा उत्तर प्रदेश (१९३६) में यमिक कल्याण निधि अधिनियम झूततम मजदूरी अधिनियम १९४८ यमिक संघ (संशोधन) अधिनियम १९४६, १९४७ और १९६० औद्योगिक रोजगार (स्थावी धारक) अधिनियम १९४६, (१९६१ में संशोधन) कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम १९४८ कोयला खान प्रोडिक्ट कम्प तथा बेमल योजना अधिनियम १९४८ औद्योगिक विवाद अधिनियम १९४७ बम्बई औद्योगिक सम्बन्ध अधिनियम १९४६ मध्य प्रदेश (उत्कामीन सी० सी०) औद्योगिक विवाद निवृत्त अधिनियम १९४७ उत्तर प्रदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम १९४७ औद्योगिक विवाद (अपीलीय अधिकार) अधिनियम १९३० १९३३ १९३६-३७ में औद्योगिक विवाद संशोधित अधिनियम कर्मचारी प्रोडिक्ट कम्प अधिनियम १९३९ (१९६० में संशोधन) बालाग यमिक अधिनियम १९३१ (१९६० में संशोधन) भारतीय खान अधिनियम १९३२ (१९३६ में इसमें संशोधन हुआ) बम्बई (१९४८) मैत्र (१९४६) मध्य प्रदेश (१९३०) हरियाणा (१९३२) उत्तर प्रदेश (१९३३) और पंजाब (१९३३) में धाबाध अधिनियम यम बीबी नगराट (काम की शर्तें एवं विविध उपकरण) अधिनियम १९३३ तथा यमबीबी पत्रकार (वेतन की शर्तें का निर्धारण) अधिनियम १९३८ मद्रास और केरल में औद्योगिक संस्थान (राष्ट्रीय व स्थानीय झूट्टी) अधिनियम १९३८ मद्रास (१९३८) तथा केरल (१९३६) में 'बीबी' अधिकों के लिए अधिनियम रोजगार कर्तार (रिक्त स्थानों की अधिपत्य सूचना) अधिनियम १९३६ मोटर गाठायत यमिक अधिनियम १९६१ बागुल-हित-नाम अधिनियम १९६१ विमृता (Apprenticeship)

प्रधिनियम १९६१ कच्चा मोहा तान शक्ति कम्पस ए उपकर (Cess) प्रधिनियम १९६१ तथा अनेक राज्यों में हुकूमत तथा वास्तुज्य संस्थान प्रधिनियम । केन्द्रीय और प्रदेसी सरकारों ने समय समय पर विभिन्न प्रधिनियमों में संशोधन भी किये हैं । उदाहरणतः मजदूरी धरामयी प्रधिनियम में १९५७ में तथा शक्ति सतिपूर्ति प्रधिनियम में १९५६ में संघापन किये गए । इस प्रकार यह स्पष्ट है कि पिछले कुछ वर्षों में अथ विधान बनाने की गति बहुत तीव्र रही है ।

भारतवर्ष में कारखाना विधान (Factory Legislation in India) प्रारम्भिक प्रयत्न —

भारत में प्राधुनिक उद्योगों के विकास के पश्चात् से शक्तियों को बहुत दिनों तक इस बात की स्वतंत्रता रही कि वह अपने शक्तियों से किसी भी प्रकार से असा भी चाहे कार्य लेते रहें । और उन पर किसी भी कारखाना कानून का बन्धन नहीं था । अतस्वरूप कार्य के बन्दे बहुत अधिक हो गये थे । धम का विशेषतया महिला एवं बालकों का शोषण होने लगा और कारखानों में कार्य की दशाएँ अमानवीय तथा असहनीय हो गईं । कारखानों में मशीनों के चारों ओर कोई घेराव होने के कारण शक्तियों को बहुत बाल अवती भी परन्तु उनको सतिपूर्ति मिलने की कोई व्यवस्था न थी । इस प्रकार भारत में मिस-शक्ति धम देशों के उद्योगधर्मियों की तुलना में, नाम में रहते थे क्योंकि धम देशों में अनेक धम विधान थे ।

प्रारम्भ में भारतीय कारखाना शक्तियों की अवस्थाओं में अथ लेते का कारण यह नहीं था कि कुछ जायक शक्तियों, राजनीतियों अथवा औद्योगिक बयों में रहने वाले कुछ भाषिकों में इपसोड के भाषिकों की तरह कुछ दया भावना या गई थी वरन् इसका कारण यह था कि बम्बई में सूती कपड़ा मिस उद्योग की सन् १८७० में स्थापना सफाघामर के कपड़ा उद्योगधर्मियों एवं श्यापारिकों की घोर शिता का विषय बन गया था । धम देशों की तुलना में भारत के उद्योगधर्मियों को कुछ विशेष सुविधाएँ थीं । उनके शक्ति कथ मजदूरी पर उपभन्ध हो पाते थे । इससे सफाघामर के उद्योगधर्मियों को डोष होने लगा तथा यह भारतीय कपड़ा मिस उद्योग के विकास में दूर सम्भव अड़चने डालने का प्रयत्न करने लगे । मैग्नीटर के बीम्बर पाक कामर्स ने सन् १८७६ में भारतीय राज्य सचिव के पास अपना एक प्रतिनिधि संघ बनाने तथा प्रार्थना की कि भारतीय शक्तियों पर भी वे समस्त कारखाना विधान लागू कर देने चाहिएँ जो इपसोड के कारखानों पर लागू होते थे । परिस्थामत्वरूप भारत में धम विधान की आवश्यकता की ओर के लिए सन् १८७५ में एक धायोव नियुक्त किया गया । इस धायोव की रिपोर्ट के अनुसार उस समय भारतीय कारखाने यूरोप के सूर्यास्त तक कार्य करते थे और शक्तियों को कठोर परिश्रम करना पड़ता था । उनको साप्ताहिक अवकाश भी प्रदान नहीं किया जाता था तथा साप्ताहिक साठ-घाट बर्ष के बन्दे तक भी शक्तियों के रूप में कार्य करते थे । धायोव ने इन दोषों के निवारणार्थ यह सुझाव दिया कि एक ठेका साधारण प्रधिनियम पारित किया

जाए जिसके अनुसार कार्य के घण्टों की सीमा १० हो जाए, बालकों की एक म्युनिसिपल प्रायु निर्धारित कर दी जाए तथा जिसमें एक साप्ताहिक छुट्टी संवातन मशीनों से मुक्तता आदि के भी उपबन्ध हों। परन्तु सरकार ने तत्काल इस धोर कोई ध्यान न दिया। बस कि अधिक सब के अध्याय में बताया जा चुका है, धमिकों की इयत्तीय बदा बेखबर कुछ जन-सेवी उद्योग दूरियों में सहानुभूति समझी और धमिकों की रक्षा के हेतु कुछ अधिमिक नियम बनाने के लिए भारत और इंग्लैंड में प्रबोधन चसता रहा। इन सबके परिणामस्वरूप १८८१ में प्रथम कारखाना अधिनियम पारित किया गया।

१८८१ का प्रथम कारखाना अधिनियम —

(First Factories Act of 1881)

१८८१ का कारखाना अधिनियम ऐसे धमी संस्थानों पर लागू होता था जिनमें १०० या १०० से अधिक धमिक कार्य करते थे और जिनमें वर्ष में चार माह से अधिक कार्य होता था। इसके द्वारा ७ वर्ष से कम प्रायु के बच्चों को कार्य पर लाना तथा ७ से लेकर १२ वर्ष तक की प्रायु के बच्चों से ६ घण्टे से अधिक कार्य लेना निषिद्ध कर दिया गया। उनके लिए दिन में एक घण्टे का विश्राम तथा मास में ४ दिन की छुट्टियों की भी व्यवस्था थी। अतःनाक मशीनों के चारों ओर वेरा लपाने की तथा दुर्घटनाओं की घुबना देने की भी व्यवस्था की गई। इन मुबार्तों को कार्यान्वित करने के लिए कारखाना निरीक्षकों की नियुक्ति का भी आयोजन था। अधिनियम में स्त्री और पुरुष बयस्क धमिकों को कोई मुक्तता प्रदान नहीं की गई थी और उन्हें पूर्णतया मालिकों की इच्छा धयवा दया पर छोड़ दिया गया था।

१८८१ का कारखाना अधिनियम —

१८८१ के अधिनियम ने धमिकों, उनके साथ सहानुभूति रखने वाले व्यक्तिओं और यहां तक की विविध उत्पादकों तक को संतुष्टि नहीं हुई। सब यह चाहते थे कि अधिक कठोर पन उठाए जाएं। अधिनियम के बनते ही उसमें संशोधन करने की मांग की जाने लगी। भारत राज्य अधिब से पुन प्रार्थना की गई जिसके परिणामस्वरूप १८८४ में बम्बई सरकार ने एक और कारखाना प्रायोज की नियुक्ति की। इस प्रायोज ने बालकों और स्त्रियों की रक्षार्थ विभाग बनाने की विचारित की, परन्तु इनका परिणाम कुछ भी नहीं निकला। १८८० में बर्मिंघम में एक अन्तर्राष्ट्रीय धम सम्मेलन हुआ। इसकी विचारितों को इंग्लैंड ने स्वीकार कर लिया और यह भी वांछनीय समझ गया कि इनको भारत में भी कार्यान्वित किया जाए। अतः भारत सरकार ने १८८० में एक कारखाना प्रायोज की नियुक्ति की और इसकी विचारितों के आधार पर १८८१ में दूसरा कारखाना अधिनियम पारित किया। यह अधिनियम १० या अधिक धमिकों को कार्य पर लपाने वाले तथा यक्ति वा प्रयोज करने वाले धमी संस्थानों पर लागू होता था। स्थानीय सरकारों

को यह अधिकार था कि यदि वह चाहें तो इसको २० या अधिक श्रमिकों को कार्य पर लगाने वाले कारखानों पर लागू कर सकती थी। ६ वर्ष से कम आयु के बच्चों को कार्य पर लगाना निषिद्ध कर दिया गया तथा ६ से १४ वर्ष तक के बच्चों से प्रतिदिन ७ घंटे से अधिक काम नहीं लिया जा सकता था। स्त्रियों एवं बच्चों को रात्रि ८ बजे से प्रातः ५ बजे के बीच काम पर नहीं लगाया जा सकता था। स्त्रियों से ११ घंटों से अधिक काम नहीं लिया जा सकता था तथा उनको दिन में कुम मिलाकर १½ घण्टे का विराम देने की भी व्यवस्था की गई थी। प्रत्येक श्रेणी के श्रमिकों को एक साप्ताहिक अवकाश देने की व्यवस्था थी तथा पुरुष श्रमिकों को दोपहर १२ बजे से लेकर २ बजे के भीतर प्राण घण्टे का विराम समय देना अनिवार्य कर दिया गया था। कारखानों के निरीक्षण संवातन और सफाई धातु के सम्बन्ध में भी इस अधिनियम में विस्तृत उपबंध थे।

१९११ का कारखाना अधिनियम —

१८९१ के कारखाना अधिनियम पारित हो जाने के पश्चात् प्रागामी २० वर्षों तक कारखाना विभाग के बारे में कोई पग नहीं उठाया गया। सन् १९०२ में बम्बई की मिलों में बिद्युत प्रकाश के आ जाने से सूती बस्त्र मिलों के लिए रात्रि में भी कार्य करना सम्भव हो गया और इस प्रकार से कार्य के घण्टे प्रायः अधिक करने लगे। कसकते की फूट मिलों में भी कार्य के घण्टे अधिक होने की शिकायतें आने लगीं। इसके परिणामस्वरूप सकाघामर के उत्पादकों में पुनः आन्दोलन शुरू कर दिया। इसी समय देश में समाचार पत्रों तथा समाज सेवकों ने श्रम श्रेणियों की आलोचना शुरू कर दी तथा उन्होंने मांग की कि श्रमजीवी वर्ग को और अधिक रियायतें तथा सुविधायें प्रदान की जाए। परिणामस्वरूप एक श्रम आयोग की फिर नियुक्ति की गई जिसने १९०८ में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इसकी शिफारिशों के फलस्वरूप १९११ में तीसरा कारखाना अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम में कारखाने की परिभाषा बही रही जो १८९१ के अधिनियम में थी। इसके द्वारा प्रथम बार पुरुष श्रमिकों के कार्य के अधिकतम घंटे प्रतिदिन १२ निर्दिष्ट कर दिए गए जिसमें बीच में १ घण्टे का विराम समय भी था। स्त्रियों की स्वीकृत प्रणाली को छोड़कर कोई भी श्रमिक किसी भी कारखाने में रात्रि ७ बजे से प्रातः ५ बजे के बीच काम नहीं कर सकता था। बच्चों के लिए सूती बस्त्र मिलों में कार्य के अधिकतम घण्टे प्रतिदिन ९ निर्दिष्ट कर दिए गए तथा उनका रात्रि में कार्य करना निषेध कर दिया गया। स्त्रियों के कार्य के घण्टे ११ ही रहे परन्तु उनका विराम समय घटा कर एक घण्टा कर दिया गया। उनके लिए रात्रि में कार्य भी निषिद्ध कर दिया गया। मौसमी कारखानों को भी अधिनियम के नियन्त्रण में ले आया गया। बच्चों के लिए आयु का प्रमाण-पत्र रखना आवश्यक कर दिया गया। श्रमिकों के स्वास्थ्य और मुरादा के लिए तथा निरीक्षण को और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए अधिनियम में अनेक नए उपबंध भी थे।

१९२२ का कारखाना अधिनियम —

सन् १९१४ २० का महामुख शुरु हो गया। इससे देश में औद्योगिक से प्रौद्योगिक विकास हुआ। साथ ही साथ धमिक वर्ग भी अपने अधिकारों के प्रति बाल-रक होता गया। बन्दुओं के मूसरों में वृद्धि हो जाने से प्रयोगपरियों के लाभ अधिक बढ़ गए थे परन्तु धमिकों की मजदूरी में वृद्धि मूसर-वृद्धि की अपेक्षा कम हुई। १९२० के परचात् देश में प्रौद्योगिक बिबाद बहुत सामान्य हो गए। १९२० में अन्तर्राष्ट्रीय धम संघटन की स्थापना के परिणाम-स्वरूप कारखाना अधिनियम में संशोधन करना अधिवाह सा हो गया। फलतः बन्दु कारखाना अधिनियम सन् १९२२ में पारित किया गया। इस अधिनियम के अन्तर्गत बहु सत्री कारखाने या नए जितमें शक्ति का प्रयोग होता या तथा जितमें २० या इससे अधिक धमिकों को कार्य पर लवाया जाता था। स्थानीय सरकारों को यह अधिकार प्रदान कर दिए गए कि यदि वह चाहें तो इस अधिनियम को १० या उससे अधिक धमिकों को कार्य पर लगाने वाले कारखानों पर भी लागू कर सकती थी। बन्दु धमिकों के लिए अधिकतम कार्य के घंटे प्रतिदिन ११ तथा प्रति सप्ताह ६० निर्दिष्ट कर दिए गए। सभी प्रकार के कारखानों में बालकों के कार्य के घंटे घटाकर प्रतिदिन ६ कर दिए गए। बालकों के लिए रोजगार पर सक्ने की न्यूनतम आयु ६ वर्ष से बढ़ाकर १२ वर्ष कर दी गई तथा कामबिरता की अल्प सीमा १२ वर्ष से बढ़ाकर १५ वर्ष कर दी गई। महिलाओं और बालकों को रात्रि के ७ बजे के परचात् तथा प्रातः २-३० से पूर्व कार्य पर लवाना निषिद्ध कर दिया गया। बन्दुओं के लिए प्रति चार घंटे कार्य करने के परचात् घाने बन्दे का बिषाम-समय अधिवाह कर दिया गया। रात्रि या अन्य किसी दिन एक छुट्टी की भी व्यवस्था थी। सभी धमिकों को कार्य प्रवधि ६ बन्दे से अधिक हो जाने पर एक घंटे का बिषाम-समय देना आवश्यक था। धमिकों की सुरक्षा स्वास्थ्य आदि के उपबन्धों को भी विस्तृत कर दिया गया। धमिकों के स्वास्थ्य की हानि को रोकने के लिए प्रांतीय सरकारों को संघटन नवी प्रादि के उद्योगों को निर्धारित करने का अधिकार दिया गया। निरीक्षण की व्यवस्था में और अधिक सुधार किया गया।

घात्याहिक धमकाय से सम्बन्धित बाध में एक छुट्टे से दोष की दूर करने के लिए १९२२ के अधिनियम में १९२१ में संशोधन किया गया। इस अधिनियम में सन् १९२६ में पुनः संशोधन हुआ जिसके अनुसार ऐसे स्थानों में जो दो दिन में २५ बंदों से अधिक कार्य नहीं करते वे घाने पंटे का बिषाम समय देवे की व्यवस्था की गई। प्रांतीय सरकारों को यह अधिकार दिया गया कि वह दुर्घटनाओं की मुक्ता देने की व्यवस्था में और अधिक सुधार करें तथा जित समय मधीन प्रादि गति में हों उनकी संधार करने को निषेध कर दें। किसी भी बालक की एक ही दिन में दो या अधिक मिलों में कार्य करने की अनुमति देना पिता या संरक्षक के लिए अपराध बना दिया गया। नपिदा नवी मर्गों को सोड़ने पर दण्ड देने के लिए

१८१६ और १८६० में जो कानून बनाए गए वे वह १९२६ और १९३१ में निरस्त (Repeal) कर दिए गए।

१९३४ का कारखाना अधिनियम —

१९२८ में रॉयल अम आयोग की नियुक्ति की गई। आयोग ने अपनी रिपोर्ट १९३१ में प्रस्तुत की और इसके परिणामस्वरूप १९३४ का कारखाना अधिनियम पारित हुआ। अधिनियम के अन्तर्गत कारखानों को दो श्रेणियों में विभाजित किया गया था—मौसमी (Seasonal) तथा निरन्तर बाधू (Perennial) कारखाने। मौसमी कारखानों की श्रेणी में वह सब कारखाने सम्मिलित किए गए जिनमें वर्ष में १८० दिन से कम कार्य होता था। निरन्तर बाधू कारखानों की श्रेणी में वह सब ही संस्थान या चाते थे जिनमें वर्ष में ६ माह से अधिक कार्य होता था। निरन्तर बाधू कारखानों में बच्चों के लिए कार्य के अधिकतम घंटे प्रतिदिन १० तथा सप्ताह में ३४ निर्दिष्ट किए गए। मौसमी कारखानों में यह प्रतिदिन ११ तथा सप्ताह में ६० घंटे थे। बालकों के लिए कार्य के घंटे बढ़ाकर प्रतिदिन ३ कर दिए गए। समय विस्तार (Spread Over) का सिद्धान्त प्रथम बार इस अधिनियम के अन्तर्गत लागू किया गया तथा लगातार कार्य के घंटे बच्चों के लिए १३ तथा बालकों के लिए ६½ निर्दिष्ट किए गए। समयोपरि के लिए मजदूरी सामान्य मजदूरी से १½ गुना निर्धारित की गई। इस अधिनियम के अनुसार श्रमिका का एक नया बग बनाया गया जिसे किशोर (Adolescents) बग का नाम दिया गया। इसके अन्तर्गत १५ से १७ वर्ष के युवक सम्मिलित किए गए। किशोरों को तब तक कामकाज से माया गया था जब तक की उन्हें बच्चों का काम करने योग्य होने का ठाकुरी प्रमाण-पत्र नहीं प्राप्त होता था। कारखाने की परिभाषा १९२२ के अधिनियम जैसी ही रही। कल्याण कार्यों, मशीनों की पट्टेबाजी सुरक्षा साबनों सभी आदि के लिए भी अनेक उपबन्ध बनाए गए। अधिनियम के प्रयासन का धार प्रांतीय सरकारों को सौंप दिया गया। इन सरकारों ने इस उद्देश्य के लिये कारखानों में निरीक्षकों और मुख्य निरीक्षकों की नियुक्ति की।

१९४६ में कारखाना अधिनियम में संशोधन —

१९३४ के अधिनियम में १९३६ १९४० १९४१ १९४४ १९४५, १९४६, तथा १९४७ में सात बार संशोधन किए गए। अन्त में इसे पूर्ण रूप में मंगोचित और परिष्कृत करके १९४८ के कारखाना अधिनियम द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया। १९४६ का संशोधन बहुत महत्वपूर्ण था। नवम्बर १९४२ में सातवें अम सम्मेलन में ४८ घंटे कार्य करने के सिद्धान्त को मान लिया गया था। इस आधार पर सरकार ने १९४६ में एक कारखाना अधिनियम पारित किया। इसके अनुसार निरन्तर बाधू कारखानों में कार्य के घंटे ४८ प्रति सप्ताह तथा प्रतिदिन ६ निर्दिष्ट कर लिये गए। मौसमी कारखानों में कार्य के घंटे प्रतिदिन १० तथा प्रति सप्ताह ३४ निर्दिष्ट कर दिए गए। समय विस्तार निरन्तर बाधू कारखानों में १३ घंटों में बढ़ाकर १०½ घंटे

तथा मीसरी कारखानों में ११३ बंटे निर्धारित कर दिया गया। समसोपारि क लिये सामान्य मजदूरी से दुमनी मजदूरी निर्धारित की गई। सन् १९४७ के कारखाना अधिनियम में संशोधन द्वारा २३० या उससे अधिक धमिकों को कार्य पर लगाने वाले कारखानों में कंस्टीन की व्यवस्था करना अनिवार्य कर दिया गया।

१९४८ का कारखाना अधिनियम (Factories Act of 1948) —

१९१४ के कारखाना अधिनियम में इतन संशोधन हो जाने के पश्चात् भी यह अनुभव किया गया कि इसके प्रभावपूर्ण ढंग से प्रशासन में अब भी अनेक बाधाएँ थीं। धमिकों की सुरक्षा स्वास्थ्य और कल्याण के लिये जो उपबन्ध बनाये गये वे बहु अपर्याप्त और असंतोषजनक थे। इसके अतिरिक्त अधिनियम द्वारा प्रदान की गई इस प्रकार की सुरक्षा बहुत से छोटे छोटे संस्थानों में काम करने वाले धमिकों की एक बड़ी संख्या को प्राप्त नहीं थी। अतः यह आवश्यक समझा गया कि इस अधिनियम में सुलक्ष्ण परिवर्तन करने में विलम्ब नहीं करना चाहिये। अतः नवम्बर १९४७ में इस विषय पर एक विशेषक प्रकाशित किया गया जो संसद में चौथे संशोधन के पश्चात् २३ सितम्बर १९४८ से कानून बना दिया गया तथा १ अप्रैल १९४९ से लागू कर दिया गया। यह १९४८ का भारतीय कारखाना अधिनियम के नाम से जाना जाता है। इस अधिनियम में और सन् १९३४ के अधिनियम से बहुत अन्तर है। इसके अन्तर्गत अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन किये गये हैं तथा यह एक व्यापक अधिनियम है। इस अधिनियम में १९३४ में संशोधन हुआ। इस संशोधन का उद्देश्य उन कठिनाइयों को दूर करना था जो अनेकतन प्रवक्तास की यत्ना में उत्पन्न होती थीं। इसके अतिरिक्त स्त्री व बच्चों को कारखानों में रात्रि में रोजगार पर लगाने के उपबन्धों को उस अन्तर्राष्ट्रीय धम संगठन के अधिनियम के अनुकूल बनाना था जिसे भारत सरकार ने अपना लिया था। अधिनियम में कुछ और संशोधन करने के विषय में विचार विमर्श मार्च १९३३ में राज्यों के मुख्य कारखाना निरीक्षकों के सम्मेलन में हुआ। कारखानों के मुख्य सलाहकार द्वारा इस सम्बन्ध में जांच की जा रही है।

१९४८ के कारखाना अधिनियम के मुख्य मुख्य उपबन्ध —

अधिनियम के मुख्य मुख्य उपबन्ध निम्न प्रकार हैं: (पृष्ठ ७२ २८१ ४२७-३१ ४४१ ४५ भी देखिये) —

जहाँ तक श्रम का सम्बन्ध है १९३४ का अधिनियम शक्ति का प्रयोग करने वाले तथा २० या उन्त अधिक धमिकों को कार्य पर लगाने वाले कारखानों पर लागू होता था। १९४८ का अधिनियम शक्ति प्रयोग करने वाले उन सभी कारखानों पर लागू होता है जिनमें १ या अधिक धमिक कार्य करते हैं। जिन कारखानों में शक्ति का प्रयोग नहीं होता वहाँ २ धमिकों के होने पर यह अधिनियम लागू हो जाता है। १९३४ के अधिनियम के अन्तर्गत प्रांतीय सरकारों को यह अधिकार प्रदान किये गये थे कि यदि वे चाहें तो इसको १० या उससे अधिक धमिकों को कार्य पर लगाने

बामे तथा शक्ति का प्रयोग करने बाम किसी भी कारखाना पर लागू कर सकती थी। १९४८ के अधिनियम के अन्तर्गत राज्य सरकारों के इस अधिकार पर कोई बन्दन नहीं लगाया गया है और उनको यह अधिकार प्रदान कर दिया गया है कि यदि वे चाहें तो इस अधिनियम को निर्माण कार्य करने बामे किसी भी स्थान पर लागू कर सकती हैं चाहे उसमें कितने ही श्रमिक कार्य करत हों तथा चाहे उसमें शक्ति का प्रयोग होता हो या न होता हो। परन्तु यह उन स्थानों पर लागू नहीं होगा जहाँ कार्य केवल परिवार के सदस्यों की सहायता से किया जाता है। इस अधिनियम द्वारा मीठमी एवं निरन्तर काम कारखानों के अन्तर्गत को भी समाप्त कर दिया गया है। यह अधिनियम जम्मू व काश्मीर राज्य को छोड़कर सारे भारत में लागू होता है।

स्वास्थ्य सुरक्षा और कल्याण के सम्बन्ध में जो १९३४ के अधिनियम में उपबन्ध वे वह सामान्य प्रकार के वे और यह प्रांतीय सरकारों का काम था कि वह नियम बनाकर इस सम्बन्ध में ठीक ठीक आवश्यकताओं का उत्सर्ज कर दें। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रांतों द्वारा निर्धारित स्तरों में भिन्नता आ गई। इस दोष को दूर करने के लिए १९४८ के अधिनियम में विस्तृत उपबन्ध दिए गये हैं तथा इन विषयों के लिए स्पष्ट और ठीक ठीक प्रांतों में आवश्यकताओं का उत्सर्ज किया गया है। सफाई प्रकाश संवातन आदि के उपबन्धों के अतिरिक्त जिनका उत्प्रेषण १९३४ के अधिनियम में भी किया गया था १९४८ के अधिनियम में निरवकाश और श्रेष्ठ पदार्थों को फेंकन भूल और धुएँ को समाप्त करने भूलवानों की व्यवस्था करना, तापक्रम को नियंत्रित करने शीतल काल में पीन के लिए ठण्ड पानी की व्यवस्था करने तथा पानी रकने के स्थान को साफ करन के लिए नौकर लगाने की भी व्यवस्था की गई है। भीड़भाड़ को समाप्त करने के लिए उन तमाम कारखानों में जो इस अधिनियम के लागू होने के पश्चात् बने यह बात अनिवार्य कर दी गई है कि प्रत्येक श्रमिक के लिए कम से कम ५०० घन फीट का स्थान होना चाहिए। अन्य कारखानों में प्रत्येक श्रमिक के लिए कम से कम ३२० घन फीट स्थान की व्यवस्था की गई है।

अधिनियम में इन आवश्यकतियों का भी विस्तृत रूप से उल्लेख किया गया है जिनको श्रमिकों की सुरक्षा के लिए लागू करना आवश्यक है। इनका उन्मत्त कार्य भी दशाओं वाले अध्याय में किया जा चुका है। कुछ नए उपबन्ध जो इस सम्बन्ध में इस अधिनियम में बनाए गए हैं वह निम्नलिखित बातों के लिए हैं नई मशीनों के स्थान की व्यवस्था शक्ति को उत्कृष्ट बन्द करन की व्यवस्था तथा पानी ऊपर फेंकन के यन्त्र व निपट क्लेन व दुमरे बोम्ब उठाव बामे यन्त्र प्रयोग मशीनों आदि की सुरक्षा गतरनाक यंत्रों व विस्फोटक तथा धातु पकड़न बाण यंत्रों से सुरक्षा आदि। अधिनियम में इस बात की व्यवस्था भी है कि कोई भी श्रमिक न तो इतना बोम्ब उठाएया और न से जाएया जिससे उसे क्षति पहुँचने की

संज्ञा बना हो। प्रदेशीय सरकारों को यह अधिकार है कि वह स्त्री पुस्त्यों तथा बच्चों काट उठाए जाने पर्यन्त ले जाने वाले बौद्ध की अधिकतम सीमा निर्धारित करे।

प्रधिनियम में बालों की सुविधाओं प्राथमिक शिक्षा साधनों केन्द्रिय विभाग स्वार्थों तथा सिधु बहू धारि जैसे कल्याण कार्यों के लिए एक समय प्रथम है। इनमें से अधिकतर तो १९३४ के कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत बनाए गए नियमों में आ जाते हैं। १९४० के अधिनियम में जो नए कल्याणकारी उपबन्ध और जोड़े गए हैं जो अधिकांश के बच्चों की व्यवस्था से सम्बन्धित हैं और प्रदेशीय सरकारों को यह अधिकार दिया गया है कि वे कारखानों में ऐसे उपयुक्त स्थान बनाने के लिए निवस बनाए बहू धार्मिक अपने कपड़े रख सकें और गौरी कपड़ों को सुखा सकें। अधिनियम में प्रदेशीय सरकारों को यह भी अधिकार प्रदान किया गया है कि वह ऐसे निवस बना दें जिनके अनुसार इस बात की व्यवस्था हो कि अधिकांश के प्रतिनिधि भी कल्याण कार्यों के प्रबन्ध में हाथ बटा सकें। अधिनियम के एक अन्य उपबन्ध के अनुसार प्रत्येक ऐसे कारखाने के मासिक को बहू २०० या इससे अधिक धार्मिक काम करते हैं कल्याण अधिकारियों की नियुक्ति करनी होगी। उनके कार्य श्रेयताएँ धारि प्रदेशीय सरकारें निश्चित करेंगी। जिन कारखानों में २२० या अधिक धार्मिक रोजगार में आते हैं बहू केंद्रीय की तथा जिन कारखानों में १२० से अधिक धार्मिक काम करते हैं बहू योजना कल की तथा बहू १० या अधिक स्त्री धार्मिक कार्य करती हैं बहू सिधु बहू की व्यवस्था करने के लिए भी उपबन्ध है।

बालों और किशोरों के रोजगार के सम्बन्ध में १९३४ के अधिनियम के अन्तर्गत तो बालकों की न्यूनतम आयु १२ वर्ष निर्धारित की गई थी तथा १२ से १७ वर्ष के व्यक्तियों को भी तब तक बालक ही माना गया था जब तक की उन्हें बच्चों का काम करने के श्रेय होने का प्रमाण-पत्र नहीं है दिया जाता था। १९४० के अधिनियम के अनुसार १४ वर्ष से कम आयु के बालकों का रोजगार पर लक्ष्य निषिद्ध है तथा १५ से १८ वर्ष के धार्मिकों को किशोर माना गया है। १९३४ के अधिनियम की धारि १९४० के अधिनियम में भी बालकों और किशोरों को रोजगार पर लक्ष्य से पूर्व उनकी डाकटरी परीक्षा करने और प्रमाण-पत्र लेने की व्यवस्था है परन्तु इस प्रकार का प्रमाण-पत्र केवल १२ वाह तक ही बंध माना जाएगा। कुछ सार्वजनिक व्यवसायों में सिधियों और बालकों के रोजगार पर निवन्धन भी लगाए गए हैं।

बहू तक कार्य के बच्चों का सम्बन्ध है बहू १९४० के अधिनियम के अन्तर्गत बच्चक अधिकांशों के लिए ४० प्रति सप्ताह तथा प्रतिदिन २ घण्टे हैं एवं समय विस्तार प्रतिदिन १०३ घण्टे हैं। बालकों और किशोरों के कार्य के घण्टे ३ सप्ताह प्रतिदिन ४३ निर्धारित किए गए हैं तथा समय विस्तार २ घण्टे निश्चित किया गया है। किसी भी बच्चक धार्मिक को ४ घण्टे से अधिक कार्य करने की तब तक अनुमति तक कि उसे विभाग के लिए कम से कम घाबे घण्टे का सम्बन्ध न

मिस जाए। अधिनियम के अन्तर्गत प्रवेसीय सरकारों को यह अधिकार दिया गया है कि वह कुछ विशेष परिस्थितियों में कुछ व्यक्तियों को कार्य के बन्टों सप्ताहिक छुट्टी आदि से सम्बन्धित अधिनियम की धारा से छूट प्रदान कर सकते हैं। परन्तु वहाँ भी ऐसी छूट प्रदान की जाए वहाँ अधिनियम में यह शर्त है कि (१) किसी भी दिन कार्य के बन्टों की कुल संख्या १० से अधिक न हो, (२) किसी भी तिमाही में सम्योपरि बन्टों की कुल संख्या २० से अधिक न हो (३) कम समय विस्तार किसी भी दिन १२ घण्टे से अधिक न हो। स्त्रियों को रात्रि ७ बजे से प्रातः ६ बजे तक रोबमार पर समयाना निरोध है तथा बालकों और १७ वर्ष से कम आयु के किशोरों को रात्रि में काम पर नहीं भेजा जा सकता। सम्योपरि काम के लिए अधिकों को सामान्य वेतन से दुमनी मजदूरी दिए जाने की व्यवस्था है। (१९२४ के संशोधन के लिए पृष्ठ ४४३ देखें)।

वहाँ तक सर्वोत्तम व्यवस्था का प्रश्न है अधिनियम में यह व्यवस्था की गई है कि प्रत्येक अधिक सप्ताहिक छुट्टी के प्रतिरिक्त निरन्तर १२ माह का सेवा काल (जिसका अर्थ एक वर्ष में २४० दिन होते हैं) पूरा हो जाने के पश्चात् निम्नलिखित हिसाब से सर्वोत्तम व्यवस्था प्राप्त करने का अधिकारी होगा बस एक अधिक—२० दिन कार्य करने के पश्चात् एक दिन का सर्वोत्तम व्यवस्था तथा वर्ष में कम से कम १० दिन का सर्वोत्तम व्यवस्था। बालक—१५ दिन कार्य करने के पश्चात् १ दिन का तथा वर्ष में कम से कम १४ दिन का सर्वोत्तम व्यवस्था। यदि कोई अधिक अपने अर्जित व्यवस्था का लाभ प्राप्त किए बिना नौकरी से निकाल दिया जाय है या नौकरी छोड़ जाता है तो ऐसी दशा में मालिकों को उस उन दिनों का वेतन देना होगा। बस एक अधिक छुट्टियों को ३० दिन तक तथा बालक ४० दिन तक एकत्रित कर सकते हैं। (संशोधन के लिए पृष्ठ ७२ देखें)।

व्यवसायजनित बीमारियों के सम्बन्ध में भी अधिनियम में व्यवस्था की गई है। कारखानों के प्रबन्धकों के लिए यह अनिवार्य है कि ऐसी सभी विशेष दुर्घटनाओं की सूचना है जिनके कारण अधिकों की मृत्यु हो गई हो अथवा उन्हें गम्भीर शारीरिक चोट पहुंची हो अथवा अधिकों का कोई व्यवसायजनित बीमारी मग गई हो। व्यवसायजनित बीमारियों के रोगियों की चिकित्सा करने वाले डाक्टरों के लिए यह आवश्यक है कि वह भी एष रोगियों की सूचना कारखाना के मुख्य निरीक्षक को दें। अधिनियम के अन्तर्गत कारखाना निरीक्षकों को यह अधिकार है कि वे उत्पादन प्रक्रिया में प्रयोग होने वाले पदार्थों का नमूना ले सकें जिससे यह पता चल सके कि उनका प्रयोग अधिनियम के उपबन्धों के प्रतिबन्धित नहीं हो रहा है या कमसे अधिकों को कोई शारीरिक चोट या उनका स्वास्थ्य को कोई हानि तो नहीं पहुंच रही है। प्रवेसीय सरकारों को यह अधिकार है कि वह किसी भी दुर्घटना के कारणों अथवा व्यवसायजनित बीमारी के किसी भी कारण की जांच के लिए उपयुक्त व्यक्तियों को नियुक्त कर सकें।

संभावना ही। प्रदेशीय सरकारों को यह अधिकार है कि वह स्त्री पुस्तकों तथा बच्चों का पठनाएँ जाने अपना से जाने जाने बोम्ब की अधिकतम सीमा निर्धारित कर दें।

अधिनियम में बोलने की सुविधाओं प्राथमिक शिक्षिता साधनों केन्द्रिय विभाग स्वतंत्रों तथा विद्यु पृष्ठ प्राथि जैसे कम्पाण कार्यों के लिए एक समय सम्भाव्य है। इसमें से अधिकतर तो १९३४ के कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत बनाए गए नियमों में आ जाते हैं। १९४० के अधिनियम में जो नए कम्पाणकारी उपबन्ध और बोलें गए हैं जो अधिकांश के बँटने की व्यवस्था से सम्बन्धित हैं और प्रदेशीय सरकारों को यह अधिकार दिया गया है कि वे कारखानों में ऐसे उपयुक्त स्थान बनाने के लिए नियम बनाए जहाँ अधिक उपयुक्त कपड़े रख सकें और जीते कपड़ों को मुक्त सकें। अधिनियम में प्रदेशीय सरकारों को यह भी अधिकार प्रदान किया गया है कि वह ऐसे विभाग बना दें जिनके अनुसार इस बात की व्यवस्था की अधिकों के प्रतिनिधि भी कम्पाण कार्यों के अन्तर्गत में हाथ बटा सकें। अधिनियम के एक अन्य उपबन्ध के अनुसार प्रत्येक ऐसे कारखाने के मालिक को जहाँ ३०० या इससे अधिक अधिक काम करते हैं कम्पाण अधिकारियों की नियुक्ति करनी होगी। इनके कार्य बोम्बटाएँ यदि प्रदेशीय सरकारें निश्चित करेंगी। जिन कारखानों में २३० वा अधिक अधिक रोजगार में मने हैं वहाँ केन्द्रिय की तथा जिन कारखानों में १३० से अधिक अधिक काम करते हैं वहाँ जीवन कम की तथा जहाँ ३० या अधिक स्त्री अधिक कार्य करती हैं वहाँ विद्यु नुहों की व्यवस्था करने के लिए भी उपबन्ध है।

बालकों और किशोरों के रोजगार के सम्बन्ध में १९३४ के अधिनियम के अन्तर्गत ही बालकों की न्यूनतम आयु १२ वर्ष निर्धारित की गई थी तथा १५ से १७ वर्ष के बच्चियों को भी तब तक बालक ही माना गया था जब तक की उन्हें अस्कों का काम करने के बोम्ब होने का प्रमाण-पत्र नहीं दे दिया जाता था। १९४० के अधिनियम के अनुसार १४ वर्ष से कम आयु के बालकों को रोजगार पर लपाना निषिद्ध है तथा १३ से १५ वर्ष के अधिकांशों को किशोर माना गया है। १९३४ के अधिनियम की भाँति ही १९४० के अधिनियम में भी बालकों और किशोरों को रोजगार पर लगाने से पूर्व उनकी डाक्टरों की परीक्षा करने और प्रमाण-पत्र देने की व्यवस्था है परन्तु दण प्रकार का प्रमाण-पत्र केवल १२ माह तक ही वैध माना जाएगा। कुछ सारनाक व्यवसायों में स्त्रियों और बालकों के रोजगार पर नियन्त्रण भी लगाए गए हैं।

जहाँ तक कार्यों के बच्चों का सम्बन्ध है यह १९४० के अधिनियम के अन्तर्गत बालक अधिनियमों के लिए ४० प्रति सप्ताह तथा प्रतिदिन २ घण्टे हैं एवं समक विस्तार प्रतिदिन १०३ घण्टे हैं। बालकों और किशोरों के कार्य के घण्टे २ से बढ़ाकर प्रतिदिन ४३ निर्धारित किए गए हैं तथा घण्टे समय विस्तार ३ घण्टे निर्धारित किया गया है। किसी भी व्यवसाय अधिक को ३ घण्टे से अधिक कार्य करने की तब तक अनुमति नहीं है जब तक कि उक्त विभाग के लिए कम से कम घण्टे का सम्बन्ध न

मित जाए। प्रतिनिधिम के अन्तर्गत प्रबन्धीय सरकारों को यह अधिकार दिया गया है कि वह कुछ विशेष परिस्थितियों में कुछ व्यक्तियों को कार्य के बन्तों सप्ताहिक छुट्टी आदि से सम्बन्धित प्रतिनिधिम की श्राव्य छुट्ट प्रदान कर सकते हैं। परन्तु जहाँ भी ऐसी छुट्ट प्रदान की जाए वहाँ प्रतिनिधिम में यह सर्त है कि (१) किसी भी दिन कार्य के बन्तों की कुल संख्या १० से अधिक न हो, (२) किसी भी तिमाही में समवोपरि बन्तों की कुल संख्या ३० से अधिक न हो, (३) दम समय विस्तार किसी भी दिन १२ बन्त से अधिक न हो। स्त्रियों का रात्रि ७ बजे से प्रातः ६ बजे तक रोजगार कर सनाता नियम है तथा बालकों और १० वर्ष से कम आयु के किशोरों को रात्रि में काम पर नहीं लगाया जा सकता। समवोपरि काम के लिए श्रमिकों को सामान्य बतन से दुबनी मजदूरी दिए जाने की व्यवस्था है। (१९१४ के संशोधन के लिए शृणु ४४१ देखें)।

जहाँ तक सवेतन अवकाश का प्रश्न है प्रतिनिधिम में यह व्यवस्था की गई है कि प्रत्येक श्रमिक सप्ताहिक छुट्टी के अतिरिक्त निरन्तर १२ माह का सेवा काम (विशेषकर श्रम एक वर्ष में २४० दिन होना है) पूरा हो जाने के पश्चात् निम्नलिखित हिसाब से सवेतन अवकाश प्राप्त करने का अधिकार होगा—बसक श्रमिक—२० दिन काम करने के पश्चात् एक दिन का सवेतन अवकाश तथा वर्ष में कम से कम १० दिन का सवेतन अवकाश। बालक—१२ दिन काम करने के पश्चात् १ दिन का तथा वर्ष में कम से कम १४ दिन का सवेतन अवकाश। यदि कोई श्रमिक अपने अतिरिक्त अवकाश का साम प्राप्त किए बिना नौकरी से निकाल दिया जाता है या नौकरी छोड़ जाता है तो ऐसी दशा में श्रमिकों को उन उन दिनों का वेतन देना होगा। बसक श्रमिक छुट्टी का ३० दिन तक तथा बालक ४० दिन तक एकत्रित कर सकते हैं। (संशोधन के लिए शृणु ७० देखें)।

व्यवसायजनित बीमारियों के सम्बन्ध में भी प्रतिनिधिम में व्यवस्था की गई है। कारखानों के प्रबन्धकों के लिए यह अधिकार है कि ऐसी सभी विशेष दुर्घटनाओं की सूचना है जिनके कारण श्रमिकों की मृत्यु हो गई हो अथवा उन्हें गम्भीर शारीरिक चोट पहुँची हो अथवा श्रमिकों का कोई व्यवसायजनित बीमारी सम गई हो। व्यवसायजनित बीमारियों के रोमिया का चिकित्सा करने के लिए श्रमिकों के लिए यह आवश्यक है कि वह भी उस रोमिया की सूचना कारखानों के मुख्य निरीक्षक को दें। प्रतिनिधिम के अन्तर्गत कारखाना निरीक्षकों का यह अधिकार है कि वे उत्पादन प्रक्रिया में प्रयोग होने वाले पदार्थों का नमूना ले सकें जिनमें यह शक्य है कि उनका प्रयोग प्रतिनिधिम के उपबन्धों के अतिक्रमण से नहीं हो रहा है या श्रमिकों को कोई शारीरिक चोट या उनका स्वास्थ्य का कोई क्षति हो नहीं पहुँच रही है। प्रबन्धीय सरकारों का यह अधिकार है कि वह किसी भी दुर्घटना के कारणों अथवा व्यवसायजनित बीमारी के किसी भी कारण की जांच के लिए उपयुक्त व्यक्तियों को नियुक्त कर सकें।

वहाँ तक काबू के प्रभासन तथा मादू करने का सम्बन्ध है १९४८ के अधिनियम ने पूर्व के अधिनियमों द्वारा की गई व्यवस्था में कोई परिवर्तन नहीं किया है। परन्तु अधिनियम के विस्तार और निरस्त क्षेत्र के कारण प्रदेशीय सरकारों के लिए यह आवश्यक हो गया है कि वह कारखाना निरीक्षकों की संख्या में वृद्धि करें। इस कारण अनेक प्रदेशीय सरकारों ने कारखाना निरीक्षकों की संख्या में वृद्धि की है। यद्यपि अधिनियम के प्रभासन के लिए केन्द्रीय सरकार का कोई अंतराधिनियम नहीं है तथापि उसने एक समाहकारी संगठन की स्थापना की है। इसको कारखानों के मुख्य सलाहकार के कार्यालय के मात सं पाला जाता है। यह संगठन श्रम सूचनाओं के विषय में एक प्रकार से निकासी सूत्र का काम करता है तथा सुरक्षा/कमाल व ऐसे ही सम्बन्धित विषयों में कामियों और अधियों की कामकाजी हेतु छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ पोस्टर आदि प्रकाशित करता है। इसने कारखाना निरीक्षकों के हेतु कुछ प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों की भी व्यवस्था की है। प्रदेशीय सरकारों द्वारा नियुक्त किए गए कारखानों के मुख्य निरीक्षक अधिनियम के प्रभासन के लिए उत्तरदायी हैं। उनसे अर्थात् अनेक निरीक्षक होते हैं। अनेक राज्यों में कारखानों की बढ़ती हुई संख्या को देखते हुए (वैल्यू पृष्ठ ९) निरीक्षकों की संख्या बहुत घटायी है। इस कारण सन १९ से २ प्रतिष्ठत कारखाने प्रतिवर्ष बिना निरीक्षण के रह जाते हैं। १९४१ के श्रम अधिनियम के सम्मेलन में यह सुझाव दिया गया था कि राज्यों में प्रति २५० कारखानों के लिए कम से कम एक निरीक्षक प्रचलन होना चाहिए। १९४२ में श्रम निरीक्षकों के एक सेमिनार का आयोजन किया गया था। अनेक निरीक्षकों को विदेश भी भेजा गया है। (वैल्यू पृष्ठ ४३९-४०)। 'श्रमिक कारखाना' और 'उत्पादन प्रक्रिया' आदि शब्दों की स्पष्ट व्याख्या करने के लिए सरकार अधिनियम में संशोधन करने के प्रस्ताव पर विचार कर रही है। अधिनियम में निम्नलिखित शब्द संशोधन की सरकार के विचारधीन हैं — (क) कारखाना निरीक्षकों द्वारा सम्बन्धी दुर्घटनाओं की जांच करना ताकि इन दुर्घटनाओं के कारणों का पता लग सके तथा उनको दूर करने के लिए और बच्य की व्यवस्था करने के लिए उचित बच उपाय का धर्क। (ख) निरीक्षकसामग्री तथा कारखानों में सुरक्षा अधिकारियों (Safety Officers) की नियुक्ति। (ग) कारखानों में सुरक्षा तथा व्यवसाय सम्बन्धी स्वास्थ्य सेवाओं का मादू करना। (घ) ऐसे अधियों के लिए जो बतली हुई मशीन पर या उसके समीप कार्य करते हैं अधिक सुरक्षा साधन प्रदान करना।

औद्योगिक विकास वाले भूतपूर्व भारतीय राज्यों में भी कुछ कारखाना अधिनियम पारित किए थे जो अल्पमय १९३४ के अधिनियम जैसे ही थे। १९४८ के भारतीय कारखाना अधिनियम के परिणामस्वरूप उनमें संशोधन भी किए गए। परन्तु १९४१ के भाग 'ब' राज्य अधिनियम के पारित हो जाने के परिणामस्वरूप इन राज्य-अधिनियमों को निरस्त कर दिया गया और अन्त में काश्मीर राज्य को

जोड़कर केन्द्रीय कारखाना अधिनियम अब समस्त बेस में लागू होता है। जनवरी १९१७ में जम्मू और काश्मीर में केन्द्रीय अधिनियम के आचार पर एक नया कारखाना अधिनियम पारित किया गया है। अन्तर बेस इतना ही है कि कारखानों में कैम्प्टन सिगु-यूह और कस्याए अधिकारियों की दृष्टि से धमिकों की संख्या कम से १०० २५ तथा २० निर्धारित की गई है। १९४८ के कारखाना अधिनियम में संशोधन करके उड़ीसा में यह व्यवस्था की गई है कि यदि कोई धमिक अपना काम समाप्त होने के पश्चात् भी स्वेच्छा से या किसी अन्य कारण से कारखाने के अन्दर ठहरता है तो समयोपरि काम के लिए यह समय कार्य के घंटे माने जाएंगे। अनियन्त्रित कारखानों अथवा कारखानाओं के सम्बन्ध में विधान —

अनियन्त्रित (Unregulated) कारखानों अथवा कार्यवासाओं (Work shops) के सम्बन्ध में विधान मध्यप्रदेश तथा मद्रास में पारित हुए हैं। भारत में रॉयल अम धायोम ने अपनी जांच के समय अनियन्त्रित कारखानों में अनेक दोष पाए तथा उनको दूर करने की अनेक सिफारिशें कीं। धायोम का मुख्य दाय कि अधिनियम की कुछ धाराओं को शक्ति प्रयोग करने वाले तथा १० से २० धमिकों को कार्य पर लगाने वाले छोटे कारखानों तक विस्तृत कर देना चाहिए। उन्होंने यह भी सिफारिश की कि शक्ति का प्रयोग न करने वाले कारखानों में कार्य को धाराओं को अनियन्त्रित करने के लिए एक साधारण-सा अलग या अधिनियम भी बनाना चाहिए।

शक्ति का प्रयोग करने वाले कारखानों के सम्बन्ध में १९४० में कारखाना अधिनियम में संशोधन करके धायोम की सिफारिशों को काम रूप दे दिया गया था परन्तु शक्ति का प्रयोग न करने वाले कारखानों के सम्बन्ध में उनकी सिफारिशों को कार्य रूप देने के लिए कोई अधिनियम भारतीय पक्ष नहीं उठाया गया। केवल कारखाना (संशोधन) अधिनियम १९४०, में "छोटे कारखाने" (Small Factories) नामक एक और अध्याय जोड़ दिया गया था। यह अध्याय शक्ति का प्रयोग करने वाले तथा १० से १९ व्यक्तियों का रोजगार पर लगाने वाले छोटे छोटे औद्योगिक संस्थानों में आसकों के घोषण तथा उन्हें अस्वास्थ्यकर एवं तटलनाक धाराओं में रोजगार पर लगाने के बिना सुरक्षा प्रदान करता था। प्रदेशीय सरकारों को यह अधिकार था कि जहाँ आसक कार्य करते हों ऐसे किसी भी संस्थान को "छोटा कारखाना" घोषित कर सकती थीं याह धमिकों की संख्या १० से भी कम क्यों न हो।

जहाँ तक शक्ति का प्रयोग न करने वाले कारखानों का सम्बन्ध है मध्य प्रदेश सरकार ने सबसे पहले १९१७ में 'सी० पी० अनियन्त्रित कारखाना अधिनियम' पारित किया। इस अधिनियम के अन्तर्गत अनियन्त्रित कारखाने की परिभाषा किमी भी ऐसे संस्थान से की गई थी जहाँ कारखाना अधिनियम लागू नहीं होता था तथा १० या इससे अधिक धमिक कार्य करते थे तथा जहाँ बीड़ी बनाने अथवा उत्पादन

करने व बमझा रंगने व साफ करने का काम होता था। अधिनियम के द्वारा वैयक्तिक कार्य के घंटे पुष्टियों के लिए १० दिनों के लिए २ तथा बालकों के लिए ७ निर्धारित किए गए थे तथा २ घंटे कार्य करने के परभाव कम से कम घाब घंटे के विषय में सम्मान की व्यवस्था थी। अधिनियम के अन्तर्गत १४ वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों को बालक माना गया था। किसी भी बालक को उस समय तक काम पर नहीं भेजा जा सकता था जब तक कि उसके १० वर्ष की अवस्था पार कर ली हो तथा किसी भी प्रामाणिक शिक्षितक द्वारा कार्य करने के लिए योग्य होने का उसे प्रमाण पत्र न दिया गया हो। अधिनियम में दिनों और बालकों को कार्य अधि को भी नियमित करने की व्यवस्था थी। अधिनियम में साप्ताहिक छुट्टी के भी उपबन्ध थे। इस अधिनियम के अतिरिक्त बड़ी कारखानों की दशाओं को नियन्त्रित करने के लिए मध्य प्रदेश सरकार द्वारा १९४१ और १९४८ में मध्य प्रदेश नगरपालिका अधिनियम के अन्तर्गत भी अनेक उपनियम बनाए गए थे। १९४७ में इस अधिनियम के अन्तर्गत आने वाले कारखानों की कुल संख्या १३६ थी। यम अनुसंधान समिति की जांच के अनुसार इन दोनों अधिनियमों से कोई अधिक सफलता प्राप्त नहीं हुई है।

मद्रास में १९४७ में मद्रास गैर-शक्ति कारखाना अधिनियम (Madras Non-power Factories Act) पारित किया गया। मध्य प्रदेश के अधिनियम की भाँति इस अधिनियम में भी उन संस्थानों के अधिकारियों की कार्य की दशाओं को नियन्त्रित करने का प्रयत्न किया गया था जो कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत नहीं आते हैं। परन्तु इस अधिनियम का विस्तार और क्षेत्र अधिक था। प्रारम्भ में यह अधिनियम २३ ऐसे विविध उद्योगों और बस्तकापी में लागू किया गया जहाँ १० या अधिक अधिक कार्य करते थे परन्तु सरकार को यह अधिकार था कि वह रोजगार के अतिरिक्त में अतिरिक्त कर सड़ती थी तथा अधिनियम को ऐसे स्थानों पर लागू करने में भी लागू कर सकती थी जहाँ १० से कम अधिक कार्य करते हों। अधिनियम के अन्तर्गत आने वाले अनेक गैर-शक्ति कारखाने के स्वामी को कारखाना बनाने के लिए साक्षरता देना होता था। रोजगार के लिए न्यूनतम आयु १४ वर्ष निर्धारित कर दी गई थी। १४ से १७ वर्ष तक के अधिकारियों को कार्य करने के योग्य होने का आन्वय प्रमाण-पत्र देना पड़ता है। काम के घंटे प्रतिदिन ६ घण्टा प्रति सप्ताह ४८ निर्धारित किए गए थे और श्रम समय-विस्तार की सीमा प्रतिदिन १० घंटे निर्धारित की गई थी। एक साप्ताहिक छुट्टी की भी व्यवस्था की गई थी। अनेक वर्ष की नींदरी पर १२ बीमापी की छुट्टियों तथा मजदूरी लक्षित १२ आकस्मिक छुट्टियों के लिए भी उपबन्ध थे। मौसमी कारखानों में अवकाश की अवधि का निर्धारण अधिक हाथ किए गए कर्म दिनों के अनुसार होता था। स्वाम्य और मुद्रा सम्बन्धी उपबन्ध १९३४ के कारखाना अधिनियम जैसे ही थे। किसी भी अधिक को, बिना कपातार ६ मास तक काम किया ही बिना कोई अनुपुल

करण बताए प्रदत्त एक माह का वेतन या इसके बराबर में एक माह का नोटिस दिए बिना बर्खास्त नहीं किया जा सकता था।

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है अनियमित कारखाने अधिनियम १९४८ के कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत भी आते हैं। इसके अन्तर्गत प्रदेशीय सरकारों को यह अधिकार दिया गया है कि वह स्वाम्य सुरक्षा कल्याण कार्य के दृष्टे रोजगार के लिए कम से कम मासु का निर्धारण आदि से सम्बन्धित अधिनियम के कुछ उपबन्धों को किसी भी कारखाने पर लागू कर सकती हैं चाहे उनमें कितने ही अधिक कार्य करते हों या शक्ति का प्रयोग होता हो प्रकृत नहीं। सी० पी० (मध्य प्रदेश) अनियमित कारखाना अधिनियम को जुलाई १९५२ में १९५२ क मध्य प्रदेश अधिनियम VII तथा मद्रास शैर-शक्ति कारखाना अधिनियम को मई १९५१ में १९५१ के मद्रास अधिनियम XIV द्वारा निरस्त कर दिया गया। मद्रास सरकार ने एक अधिसूचना द्वारा १९४८ के कारखाना अधिनियम को उन सभी शर्तों पर लागू कर दिया है जहाँ (क) बिना शक्ति की सहायता के उत्पादन प्रक्रियाएँ होती हैं या साधारणतया शक्ति का उपयोग नहीं किया जाता तथा (ख) १० या अधिक परन्तु २० से कम शक्ति कार्य करते हैं।

१९५८ में मद्रास सरकार ने मद्रास बीड़ी औद्योगिक स्थान (कार्य की शर्तों का विनियमन) अधिनियम [Madras Beedi Industrial Premises (Regulation of Conditions of Work) Act] भी पारित किया। इसके अन्तर्गत १९५१ में नियम बनाए गए और लागू कर दिए गए हैं। अधिनियम में बीड़ी औद्योगिक संस्थानों के लिए साइवेल में निरीक्षकों की नियुक्ति और उनके अधिकारों का निर्धारण करने स्वच्छता और सवातन के स्तर को निर्धारित करने बीड़ी उद्योग के स्थानों में भीड़भाड़ को रोकने; पीने के पानी की व्यवस्था करने तथा सवातन और श्रमण घने की सुविधाएँ धिसु-गृह प्राथमिक चिकित्सा अधिकारों के लिए कैंटीन कार्य के दृष्टे आराम समय साप्ताहिक छुट्टियाँ सवेतन वार्षिक सुट्टी समयोपरि काम के लिए मजदूरी बातों को रोजगार पर सदाने की रोक आदि के उपबन्ध हैं। इसी प्रकार के उपबन्ध केरल व मसूर में भी "बीड़ी व सिगार औद्योगिक (कार्य की शर्तों का विनियमन) अधिनियम १९५६" नामक अधिनियमों में भी हैं।

भारत में कारखाना विभाग का आसोचनात्मक मूल्यांकन —

१९४६ की शम अनुसन्धान समिति ने कारखाना अधिनियमों के अनेक दोषों की ओर संकेत किया था। इनमें से कुछ का उल्लेख तो कार्य की शर्तों वाले अध्याय में किया जा चुका है। यह दोष सभी तक पाए जाते हैं। बड़े बड़े औद्योगिक संस्थानों में तो प्रायः ही अधिनियम के उपबन्धों का संतोषजनक रूप से पालन किया जाता है परन्तु छोटे तथा मीमबी शरणागतों में अधिनियम के उपबन्धों से— विशेषतया कार्य के दृष्टे समयोपरि बातों को काम पर सदाने सुरक्षा स्वास्थ्य लघार्थ आदि के उपबन्धों से—बचने का प्रयत्न किया जाता है। कभी-कभी

मुफ़्तिसम स्थानों में छोटे छोटे कारखानों के प्रबन्धक श्रमिकों से अधिक काम देने के लिए बड़ी बड़ी मशीनों को घाने पीछे कर देते हैं। कारखानों के निरीक्षण और यहाँ तक कि वकायफ जांच करने से भी कोई विशेष लाभ नहीं होता क्योंकि साधारणतया प्रबन्धकों को कारखाना निरीक्षकों के घाने की सूचना पहले ही मिल जाती है। जहाँ परस्पर ब्यापी पारियों में काम होता या जहाँ पर श्रमिकों से अधिक कार्य लिया जाता या तथा कारखाना निरीक्षकों के लिए इसे रोकना बहुत कठिन था। अनेक कारखानों में समयोपरि काम के लिए अधिनियम के उपबन्धों के अनुसार मुमकिन नहीं किया जाता है। कुछ मामलों में यह भी देखा गया है कि प्रबन्धक को प्रकार के रजिस्टर रखते हैं एक तो कारखाना निरीक्षक को दिखाने के लिए और दूसरा अपने लिए। काम श्रमिकों का अधिमिश्रित कारखानों में विशेषतया बहुत ही अधिक सोपण होता है। अक्सर कामकों को निर्धारित धातु से कम धातु पर ही रोजगार पर सजा सिया जाता है और इस हेतु उनके लिए झूठे प्रमाण-पत्र प्राप्त कर लिए जाते हैं। स्वास्थ्य और सुरक्षा के उपबन्धों से भी बचा जाता है। इनका उन्मुख कार्य की बसार्धों वाले अध्याय में किया जा चुका है।

अधिनियम के अपवर्जन (Evasion) का एक मुख्य कारण यह है कि विभिन्न राज्यों में कारखाना निरीक्षकों की संख्या बहुत कम है। बम्बई और मद्रास के प्रतिरिक्त और कहीं कहीं निरीक्षकों की नियुक्ति नहीं की गई है, मद्यपि रॉयल भ्रम आयोग ने इस सम्बन्ध में सिफ़ारिश की थी। अधिकतर राज्यों में इस बात की प्रकृति पाई जाती है कि निरीक्षक हम को महत्वपूर्ण औद्योगिक क्षेत्रों में नियुक्त करने के स्थान पर केन्द्रीय या प्रचाल कार्यालय में ही नियुक्त कर दिया जाता है। बहुधा कारखाना निरीक्षक रोजगार, कार्य के बंटे, कार्य की बसार्धों धारि जैसे मानवीय पहलुओं पर कम ध्यान देते हैं और कारखाना निरीक्षण के तकनीकी पहलुओं पर ही अपना ध्यान एकत्रित करते हैं।

अधिनियम से अपवर्जन का एक कारण यह भी है कि नियम भंग करने वालों को विशेषतया मुफ़्तिसम ब्यायालयों द्वारा बहुत कम दण्ड दिया जाता है। इस सम्बन्ध में रॉयल भ्रम आयोग के छव्यों में कहा जा सकता है कि 'अधिकार प्राप्तों में ऐसे अनेक मामले मिलते हैं जिनमें बहुत कम जुर्माना किया गया है विशेषतया ऐसे मामलों में जहाँ नियम बार बार भंग किए गए हों। नियम भंग से अपराधी को जो लाभ होता है उसकी अपेक्षा जुर्माना बहुधा कम किया जाता है। रॉयल भ्रम आयोग की रिपोर्ट के समय के बाद से इस अवस्था में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ है। हस्ता दण्ड देने का परिणाम यह होता है कि इसकी अपेक्षा कि अपराधियों पर प्रबन्ध प्रभाव पड़े उन्हें अपराध के लिए प्रोत्साहन मिलता है। अधिनियम के अन्तर्गत प्रवेणीय सरकारों को अनेक झूठे प्रदान करने का अधिकार है। परन्तु ऐसी झूठे सब जगह एक समान नहीं हैं और अनेक मामलों में तो वे ब्यायोचित भी नहीं होतीं।

कारखाना विधान का एक प्रमुख शोध यह रहा है कि १९४८ के कारखाना अधिनियम से पूर्व संस्थानों की एक बड़ी संख्या पर कोई कानून लागू नहीं होता था। १९४८ का कारखाना अधिनियम भी उन संस्थानों पर लागू नहीं होता जो शक्ति का प्रयोग नहीं करते तथा जहाँ २० से कम श्रमिक काम करते हैं। यद्यपि राज्य सरकारों को यह अधिकार है कि वह अधिनियम को यदि चाहें तो ऐसे संस्थानों पर भी लागू कर सकती हैं। बीड़ी धूम्रक तपड़ा कासीम बुनने जमने को देनी विधि से साफ करने उन साफ करने पटाई बुनने हस्तकारी धादि जैसे अनियंत्रित उद्योगों में औद्योगिक श्रमिकों को सबसे कम सुरक्षा प्रदान की गई है और मद्रास तथा मध्य प्रदेश को छोड़कर इनके ऊपर कोई विधान लागू नहीं होता है। ऐसे उद्योगों को 'सोपित उद्योग' (Sweated Trades) कहा जाता है। इस बात की बहुत अधिक आवश्यकता है कि विधान को इन उद्योगों तक विस्तृत किया जाय। ऐसे उद्योगों में कार्य की दशाएं अत्यन्त शोचनीय हैं श्रमिकों को बहुत कम मजदूरी दी जाती है तथा श्रम श्रमिकों का बुरा शोषण किया जाता है। शिशुओं को विविध प्रकार के सभी काम करने पड़ते हैं यहाँ तक कि मातृकों का परन्तु कार्य भी करना पड़ता है। इस प्रकार उन्हें कार्य सीखना बहुत महंगा पड़ता है। केन्द्रीय सरकार को उनके लिए प्रथम से विधान बनाना चाहिये और इस विषय को प्रदेशीय सरकारों पर ही नहीं छोड़ देना चाहिये। देश में कारखाना अधिनियम को सफलता पूर्वक कार्यान्वित करने के लिए यह आवश्यक है कि अधिनियम को हड़तापूर्वक लागू किया जाय निरीलाक दल की संख्या में वृद्धि की जाय विभिन्न राज्यों के कानूनों में समानता लाई जाय तथा अधिनियम को अनियंत्रित कारखानों तक विस्तृत कर दिया जाय। जहाँ तक अधिनियम के उपबन्धों का सम्बन्ध है वह जिस उद्देश्य से अधिनियम बनाया गया है उसके लिए पर्याप्त प्रतीत होता है।

खानों में श्रम विधान

(Mining Legislation)

१९२३ का भारतीय खान अधिनियम (The Indian Mines Act, 1923) -

कोयले की खानों में श्रमिकों के रोजगार की दशाओं को विनियमित करने के हेतु सबसे प्रथम प्रयास १८६४ में किया गया था जब खानों के एक निरीलाक की नियुक्ति की गई थी। यह नियुक्ति १८६० में बर्लिन में हुए एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के फलस्वरूप हुई थी। परन्तु खानों में कार्य दशाओं को विनियमित करने वाला प्रथम भारतीय खान अधिनियम १९०१ में पारित हुआ। इसके अन्तर्गत निरीलाकों की नियुक्ति की व्यवस्था की गई थी। इस अधिनियम में अनेक शोध प तथा कई बार संशोधन के परचात् इस अधिनियम को पूर्णतः परिवर्तित कर दिया गया और इसके स्थान पर १९२३ का अधिक व्यापक "भारतीय खान अधिनियम" पारित किया गया। इस अधिनियम में १९२८ में संशोधन हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन द्वारा १९३१ में पारित एक अधिसूचना के मसौदे के परिणामस्वरूप जो अधिनियम कोयले की

खानों में कार्य के घंटों के सम्बन्ध में वा तथा रोजगार श्रम शान्ति की सिद्धान्तों के अनुसार इस अधिनियम में १९३३ में किए संशोधन हुआ जिसके अन्तर्गत इसमें कुछ प्रमुख परिवर्तन किए गए। इस अधिनियम में इसके अन्तर्गत भी १९३६, १९३७, १९४० तथा १९४६ में संशोधन हुए तथा अन्त में इसके अन्तर्गत १९४२ का भारतीय श्रम अधिनियम पारित किया गया।

१९३२ में पूर्ण संशोधित १९२३ के भारतीय श्रम अधिनियम के मुख्य उप-बन्धों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है —

यह अधिनियम समस्त शान्तों पर लागू होता था। श्रम की परिभाषा इस प्रकार की गई थी 'कोई कुदाई जहाँ कतिपय पदार्थों को प्राप्त करने वा उनको शोध करने के हेतु कार्य किया जाता है या किया जा रहा है।' इस अधिनियम में श्रम के अन्तर्गत कार्य में लागू हुए व्यक्तियों के लिए कार्य के घंटे प्रतिदिन १० निर्धारित किए गए थे और अधिकतम श्रम समय विस्तार भी १२ घंटे निर्धारित कर दिया था जिसमें प्रत्येक ६ घंटे कार्य के पश्चात् १ घंटे के विराम मर्यादा की भी व्यवस्था थी। श्रम के भीतर रोजगार में लगे व्यक्तियों के लिए ईशिक कार्य समय तथा श्रम समय विस्तार २ घंटे निर्धारित किया गया था। समस्त कर्मचारियों के लिए साप्ताहिक कार्य घंटे ४४ निर्धारित किये गए थे। किसी भी व्यक्ति को श्रम में साप्ताहिक के ६ दिन से ज्यादा कार्य करने की अनुमति नहीं थी। निर्दिष्ट तथा इच्छा करने वाले कर्मचारी इन उपबन्धों के अन्तर्गत नहीं आते थे। १३ वर्ष की आयु से कम के बालकों को रोजगार में लगाना निषेध था तथा १७ वर्ष से कम आयु वाले व्यक्तियों को श्रम के भीतर कार्य करने की तब तक अनुमति नहीं थी जब तक वे इसके योग्य होने का इच्छारी प्रमाण-पत्र न दें।

अधिनियम में पर्याप्त पीने के पानी का प्रबन्ध, विच्छिन्नक शान्तों की व्यवस्था तथा संचित रूप से जल-मल निकास के प्रबन्ध की व्यवस्था भी की गई थी। १९४६ के संशोधित अधिनियम द्वारा इस कानून की भी व्यवस्था कर दी गई थी कि शान्तों के अन्तर्गत वा उनमें समीप स्त्री और पुत्रों के लिए अलग-अलग ऐसे स्नानगृह बनाने चाहिए जो बन्द हों और जिनमें पम्पावे से स्नान करने की व्यवस्था हो। १९४२ में श्रम (संशोधित) अध्यादेश द्वारा शान्तों में मिसुनूहों की व्यवस्था की गई थी। १९४७ में इस अध्यादेश को निरस्त कर दिया गया। किन्तु इसके उपबन्धों का अधिनियम न अन्तर्गत कर दिया गया। श्रम में कार्य करने वाली की सुरक्षा के लिए अधिनियम भी बनाए गये। इनके अन्तर्गत बहुसंख्यक श्रम क्षेत्रों में ऐसे श्रम बोरों के निर्माण की व्यवस्था थी जिनमें मासिकों, कर्मचारियों तथा सरकार के प्रतिनिधि हों। ऐसे बोरों का कार्य सरकार के अधिनियम के अन्तर्गत नियम बनाने में सहायता करना था। उत्साहन रोजगार, पानिनी की श्रम कार्य के घंटे आदि के विषय में प्राक्कृत्य एकत्रित करने के हेतु सरकार न कोमला श्रम विधियों में संशोधन भी किया। यह अधिनियम शिमाचल प्रदेश तथा मध्य प्रदेश में कुछ अन्तर्गत राज्यों में भी लागू होता था

तथा तिस्ताङ्कुर व मैसूर की खानों के लिए अलग अधिनियम थे। अधिनियम के प्रशासन का उत्तरदायित्व भारत सरकार का था तथा इस अधिनियम का प्रशासन करते तथा उसे लागू करने के लिए खानों का एक मुख्य निरीक्षक नियुक्त किया गया था।

खानों में रोजगार की शर्तों का विनियमन खान अधिनियम के अतिरिक्त खानों में स्वास्थ्य बोर्डों की स्थापना करके भी किया गया है। ये बोर्ड अधिष्ठाता के स्वास्थ्य की देखभाल करते हैं। इन बोर्डों को यह अधिकार दिया गया है कि वह खानों के मालिकों को इस बात के लिए बाध्य करें कि वे खानों के क्षेत्र में आश्रय बन सफाई की सुविधाएँ एवं शिक्षित सहायता की व्यवस्था करें।

यहां तक खान के भीतर कार्य करने वाली स्त्रियों के रोजगार का सम्बन्ध है वर्ष १९२६ में ऐसे विनियम बनाए गए थे। जिनसे पहले १० वर्षों में अर्थात् १९३६ तक स्त्रियों का खान के भीतर कार्य करना पीरे-पीरे समाप्त कर दिया जाए। परन्तु १९३७ में एक अधिसूचना द्वारा स्त्रियों का खान के भीतर कार्य करना निषेध कर दिया गया। कुछ काल में अमिर्कों की कमी के कारण १९४३ में यह रोक हटा दी गई थी किन्तु पुनः १९४६ में यह रोक लगा दी गई।

१९५२ का भारतीय खान अधिनियम —

(The Indian Mines Act of 1952)

खानों के श्रमिक सम्बन्धी विधान को कारखानों के श्रमिक सम्बन्धी विधान के समान करने के लिए भारतीय सरकार ने सोकसमा में १० दिसम्बर १९४६ को एक विधेयक प्रस्तुत किया जो १५ फरवरी १९५२ को पारित हुआ। इसकी १९५२ का 'भारतीय खान अधिनियम' कहा जाता है। यह अधिनियम पिछले सभी ऐसे अधिनियमों को निरस्त करके उनका सम्बन्ध करता है जो खानों में सुरक्षा तथा श्रमिकों के विनियमन से सम्बन्धित थे। यह अधिनियम अन्य बातों के अतिरिक्त कम कार्य घंटे समयोपरि बैठन तथा बैठन सङ्घित छुट्टियों की भी व्यवस्था करता है तथा सुरक्षा व स्वास्थ्य सम्बन्धी उपबन्धों को दृढ़ बनाता है। अधिनियम के मुख्य उपबन्ध निम्नलिखित हैं —

(क) यह अधिनियम उन समस्त व्यक्तियों पर लागू होता है जो खान के कार्यों में या उनसे सम्बन्धित किसी भी कार्य में सने होते हैं। जम्मू व काश्मीर के अतिरिक्त समस्त भारत पर यह लागू होता है और इसमें आम की परिभाषा अधिक स्पष्ट व विस्तृत कर दी गई है। खानों के अन्तर्गत खानों में सम्बन्धित अन्य कार्य तथा स्थापना वही भी अधिक कार्य करते हैं सम्मिलित कर लिए गए हैं। उदाहरणतया 'बेचोब', ड्रॉमवाड़िया कार्य आलावे दिखसी पर, ड्रॉम वाड़ियों आदि के ठहराने के स्थान, अग्नि परावर्त और कोयला खाने के स्थापना आदि। (ख) यह अधिनियम खान के अन्दर तथा खान के भीतर कार्य करने वाले समस्त बयस्क श्रमिकों के कार्य घंटे बढ़ाकर प्रति सप्ताह ४८ कर देता है तथा इनमें यह भी व्यवस्था है कि खान के अन्दर

प्रतिदिन ८ घण्टे से अधिक एवं घान के ऊपर प्रतिदिन ६ घण्टे से अधिक किसी भी प्रकार के कार्य करने की अनुमति नहीं होगी। काम करने के प्रत्येक पांच बच्चों के परचाय पात्रे बच्चे का एक विद्यालय मध्याह्नक बना होना और कोई भी श्रमिक 'सप्ताह' में ६ दिन से अधिक कार्य नहीं करेगा। १९२९ के अधिनियम ने समवोपरि देने की दर निर्दिष्ट नहीं की थी किंतु १९३२ के अधिनियम ने यह व्यवस्था है कि लान के ऊपर कार्य करने वाले श्रमिकों की मजदूरी की साधारण दरों में १३ गुनी दरों पर समवोपरि दी जाएगी तथा लान के भीतर कार्य करने वाले श्रमिकों को मजदूरी की साधारण दर से दुगुनी दर पर समवोपरि दी जाएगी परन्तु कोई भी श्रमिक समवोपरि सहित एक दिन में १ बच्चों से अधिक कार्य नहीं कर सकता। कार्य का अधिकतम समय विस्तार घान के ऊपर कार्य करने वाले श्रमिकों के लिए १२ घण्टे तथा लान के भीतर कार्य करने वालों के लिए ८ घण्टे निर्दिष्ट किया गया है। (ग) अधिनियम के अंतर्गत लान के अन्तर् रोजगार में ससे श्रमिकों की धामु-सीमा बढ़ा कर १७ से १८ कर दी गई है तथा किमोर (अर्थात् १५ से १८ वर्ष की आयु के बीच के व्यक्ति) श्रमिकों के लिए प्रतिदिन ४३ घण्टे कार्य की सीमा निर्धारित कर दी गई है। (घ) लान के अन्तर् रोजगार पर समाज का प्रतिबन्ध इस अधिनियम में भी है तथा इन बातों की व्यवस्था है कि लान के ऊपर किसी भी रेली को प्रातः ६ बजे से बंम्पा ७ बजे के अतिरिक्त कार्य करने की अनुमति नहीं दी जाएगी। प्रवेशीय सरकार इन सीमाओं को कम या अधिक कर सकती है किन्तु १० बजे राति से १ बजे प्रातः के बीच कार्य करने की अनुमति नहीं दे सकती। (ङ) यह अधिनियम एक साप्ताहिक विद्यालय शिक्षण के अतिरिक्त श्रमिकों को बेतन सहित छुट्टियाँ तथा ऐकबी छुट्टियों को प्रदान करने की व्यवस्था करता है। श्रमिक १२ याह की निरन्तर नौकरी पूर्ण करने के परचाय निम्न दरों पर छुट्टी ले सकते हैं (i) मासिक बेतन पान वाले श्रमिक—१४ दिन (ii) साप्ताहिक मजदूरी पाने वाले श्रमिक अथवा सामान बढ़ाने वाले या लान के भीतर उबरत पर कार्य करने वाले श्रमिक—७ दिन। मासिक मजदूरी पाने वाले श्रमिक २८ दिन तक छुट्टियाँ एकत्रित कर सकते हैं। (च) १९४८ के फेकरी अधिनियम के अन्तर् पर इस अधिनियम में ईशास्य सुरक्षा तथा कल्याण सम्बन्धी पर्यन्त उपबन्ध भी बनाए गए हैं। कल्याण अधिकारी को नियुक्ति प्राथमिक ज्ञान का सामान विद्युत्, विद्यालय लान के ऊपर स्नानघर, कबाब करने वाले केन्द्रीय स्थान केन्द्रीय एम्बुलंस तथा टोपी को ले जाने वाले स्ट्रेचर ठंडा और सूख पीने का जल शीतलपय मुक्तकय पारि की अधिनियम में व्यवस्था है। (छ) अधिनियम के उपबन्धों का पालन करने वालों का समुचित दण्ड देने की भी व्यवस्था है, यह दण्ड काठवास या पुर्णमा या दोनों के रूप में दिया जा सकता है। (ज) प्रशासन के हेतु अधिनियम में लानों के मुख्य निरीक्षक की नियुक्ति की व्यवस्था है मुख्य निरीक्षक को महापता लानों के निरीक्षक तथा बिनाधीन करने। निरीक्षक ऐसे औपचारिक कार्यों को करने की प्राप्ता दे सकते हैं जो श्रमिकों की सुरक्षा के लिए आवश्यक हों।

१९५२ के भारतीय खान अधिनियम में १९३९ के खान (संशोधन) अधिनियम द्वारा संशोधन किया गया है। यह संशोधित अधिनियम १६ जनवरी १९६० को लागू किया गया। संशोधित अधिनियम की कुछ मुख्य धारों में निम्नलिखित हैं—'खान' शब्द की परिभाषा को और अधिक स्पष्ट कर दिया गया है और अब इसके अन्तर्गत पत्थर की खानों, निजी रेलों मास में जाने के लिए लगाए हुए रास्ते तथा पाइपों तथा समस्त स्थान जो खानों के समीप या खानों से सम्बन्धित हैं और जिनमें खानों से सम्बन्धित कार्य होते हैं खान के अन्तर्गत आ जाते हैं। संशोधित अधिनियम में यह व्यवस्था भी है कि जिन खानों में १५० या उनसे अधिक श्रमिक कार्य करते हैं वहाँ प्राथमिक उपचार के लिए प्रयत्न कभरे होने चाहिए। १९५२ के अधिनियम में इसके लिए २०० श्रमिकों की छत थी। अधिनियम में यह भी धारा है कि उस खान में श्रमिकों को रोजगार पर नहीं लगाया जा सकता जिसका मासिक खान निरीक्षक की वेतानबनी पर भी ऐसी बातों को ठीक नहीं करता जिनसे मानव जीवन को घातों की घबराहट या सुख को घटा हो। इस अधिनियम में खान के अन्दर और खान के ऊपर दोनों ही स्थानों पर किए जाने वाले समस्योपरि काम के लिए साधारण मजदूरी से दुगुनी मजदूरी देने की व्यवस्था की गई है। १९५२ के अधिनियम में खान के अन्दर समस्योपरि काम के लिए दुगुनी और खान के बाहर डेढ़ गुनी मजदूरी देने की व्यवस्था भी। संशोधित अधिनियम में यह भी व्यवस्था की गई है कि खान के अन्दर काम करने वाले श्रमिकों को प्रति २० दिन काम के उपरान्त एक सप्तेक छुट्टी दी जाएगी। इस प्रकार की छुट्टियाँ ३० दिन तक एकत्रित की जा सकती हैं। अधिनियम के उपबन्धों का उल्लंघन करने पर और अधिक दण्ड देने की व्यवस्था है।

खानों के लिए अन्य विधायन —

१९४७ का कोयला खान श्रम कल्याण निधि अधिनियम तथा १९४६ का श्रमिक खान श्रम कल्याण निधि अधिनियम भी सरकार द्वारा पारित किए गए हैं। पिछले पृष्ठों में कल्याण कार्यों के अन्तर्गत (देखिए पृष्ठ २६९-३०३) इन अधिनियमों का उल्लेख किया जा चुका है। सरकार ने १९४८ का कोयला खान प्रोवीडेंट फण्ड एवं बोनस योजना अधिनियम भी पारित किया है जिसका सामाजिक सुरक्षा के अन्तर्गत पृष्ठ (३६०-६२ पर) उल्लेख किया जा चुका है तथा सरकार ने खान मातृत्व-हित-नाम अधिनियम भी पारित कर दिया है (देखिए पृष्ठ ३४८ व ३५१)। खानों में दुर्घटनाओं की रोकथाम के लिए १९५३ में कोयला खान (प्रत्यापी) अधिनियम भी सरकार ने घोषित किए, (देखिए पृष्ठ ६३८)। अक्टूबर १९५० से कोयला खानों के लिए विनियमों (Regulations) को एक पूर्ण संशोधित संविधा लागू कर दी गई है और अब तक जो भी विनियम थे वह समाप्त कर दिए गए हैं। यह विनियम इस बात की व्यवस्था करते हैं कि खनने वाली तथा जड़नीनी मैसों भूल खानों में पानी भर जाने या प्रायः लग जाने या तापक्रम अचानक से बढ़ जाने

घाटि ने खान के भीतर कार्य करने वाले धमिधों की प्रजावारणक रन से सुरक्षा हो सके । खानों में धिशुद्धों के लिए भी १९४९ में नियम बनाए गए थे तथा १९५९ में यह नियम फिर से बनाए गए और इनमें १९६१ में संशोधन भी किया गया । कच्चे कोड़े की खानों के लिए भी १९६१ में एक भम कस्यास उपकर अधिनियम पारित किया गया है । इस प्रकार खान धमिधों की सुरक्षा तथा धमिधों के स्वास्थ्य तथा घाबाध रक्षामों को सुधारने के लिए सरकार ने उपयोगी विमान बनाए हैं ।

सम् १९३९ का कोयला खान सुरक्षा (उचित व्यवस्था) अधिनियम:—

[The Coal Mines Safety (Stowing) Act 1939]

यह अधिनियम कोयला ठिकाने से रखने के कार्यों में सहायता करने के लिए एक निधि की स्थापना करने की व्यवस्था करता था । अधिनियम के अनुसार इस निधि का धन एक उत्पादन कर द्वारा संचित किया जाने की व्यवस्था थी तथा उसका प्रशासन एक कोयला खान स्टोर्डिंग बोर्ड को सौंपा गया था जिसमें ६ व्यक्ति थे । इस अधिनियम के अन्तर्गत खानों के निरीक्षकों तथा मुख्य निरीक्षक को यह अधिकार दिया गया था कि वे खानों के मालिकों, धमिकर्ताओं अथवा प्रबन्धकों को खानों के धमिधों के लिए आवश्यक सुरक्षारमक कार्य करने को बाध्य करें । किन्तु बीसा कि १९४९ में कोयला खानों में भम की रक्षामों की जांच से स्पष्ट है कुछ खानों ने ही इस अधिनियम का लाभ उठाया । १९४५ की भारतीय कोयला खान समिति ने यह जांच की थी कि यह अधिनियम किस प्रकार लागू किया जा रहा था । इस समिति की कुछ सिफारिशों को लागू भी किया गया । अन्त में इस अधिनियम के स्थान पर १९५२ का निम्नलिखित अधिनियम पारित किया गया ।

१९५२ का कोयला खान (बचत तथा सुरक्षा) अधिनियम —

[The Coal Mines (Conservation and Safety) Act, 1952]

यह अधिनियम जो बन्धु व कारनीर राज्य को छोड़कर अल्पत वेध में लागू होता है, केन्द्रीय सरकार को ऐसे कार्य धनधाने का अधिकार देता है जिन्हे सरकार कोयला बचत के लिए या कोयला खानों में सुरक्षा व्यवस्था बनाए रखने के लिए धारणक समझे । सरकार कोयले की टांक कम करने के लिए कोयला खान की घाबाध से उन्नी है तथा कोयला बचत के लिए धमिधों को कोयला ठिकाने से रखने को कह सकती है । इस अधिनियम में एक कोयला बोर्ड तथा सलाहकार समितियों के निर्माण की व्यवस्था भी है । सरकार की कोयला ठिकाने से रखने में सहायता देने के हेतु कोयले पर उत्पादन कर लगाने का भी अधिकार दिया गया है । उत्पादन कर की दर एक रुपये प्रति टन कोयले से अधिक नहीं बढ़ाई जा सकती । सरकार जब कोयले पर एक अतिरिक्त उत्पादन कर भी लगा सकती है जिसकी दर पहल को पुने हुए (क) (ख) वेध के लिए ५ रुपये प्रति टन तथा धम्य वेध (i) के लिए दो रुपये प्रति टन से अधिक नहीं हो सकती । दर में प्रत्येक बल बोर्ड

का दिया जाएगा तथा 'कायमा खान बचत तथा सुरक्षा निधि' में जमा हा जाएगा। यह निधि अधिनियम के अन्तर्गत बनाई गई है। इस निधि का उपयोग अधिनियम के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए तथा खानों में सुरक्षा से सम्बन्धित सुरक्षा कार्य के अनुसन्धान के लिए किया जा सकता है। मुख्य निरीक्षक तथा अन्य निरीक्षकों को यह अधिकार है कि वह कायमा ठिकाने में रखने के लिए, या अन्य किसी भी कार्य के लिए जिसे वह सुरक्षा के लिए आवश्यक समझते हों खानों के मालिक प्रबंधक या अधिकर्ता को धाक्का दे सकते हैं।

बागान भ्रम विधान

(Plantation Labour Legislation)

बागान में श्रमिक —

बड़े मयनों के कारखाना श्रमिकों की भांति बागान के श्रमिक न तो इतने बाधास (Vocal) हैं ना ही जनता इन्हें इतना अधिक जानती है। फिर भी अपनी सैबा के कारण धीरे-धीरे श्रम-संबन्धिता में महत्वपूर्ण मांग करने के कारण उनका महत्व कम नहीं है यद्यपि इस महत्व का जनता को बहुत कम ज्ञान कराया जाता है। बागान श्रमिकों को रोजगार दत्त है तथा निर्यात व्यापार में इनका महत्व पूर्ण योगदान है। बागान श्रमिकों की अपनी विशेष प्रकार की समस्याएँ हैं। अधिकतर श्रमिक दूर-दूर जगहों से भर्ती किये जाते हैं तथा इनमें प्रवासिता पाई जाती है। बागान में कार्य भी साधारणतया मौसमी होता है। अन्य कारखानों की तुलना में बागान के श्रमिकों की आय भी कम होती है। बागान में शिक्षा तथा निष्ठा की सुविधाओं का अभाव है और कल्याण सुविधाएँ भी अपर्याप्त हैं। ममेरिया सुधार आम बात है तथा श्रमिकों का स्वास्थ्य साधारणतः अत्यन्त खराब रहता है। बागान की बंधाओं में भी काफी सुधार की आवश्यकता है। ये समस्याएँ बताती हैं कि बागान के श्रमिकों के जीवन के सब पहलुओं पर ध्यान देने वाले एक व्यापक विधान की बहुत अधिक आवश्यकता रही है। परन्तु १९४१ तक इस निष्ठा में कोई पग नहीं उठया था। १९३१ में ही एक पृथक बागान श्रमिक अधिनियम पारित किया गया परन्तु इसको भी अक्टूबर १९४४ तक लागू नहीं किया गया।

प्रारम्भ में उठाये गए कुछ पग —

भारतीय श्रम विधान के अतिहास में प्रारम्भ में उठाने गए वैधानिक पग बागान में कार्य पर लगे हुए श्रमिकों से सम्बन्धित थे। प्रथम के बागान अधिनियम का अन्तर्गत के प्रारम्भिक चरणों में श्रमिकों की कमी की समस्या का सामना करना पड़ा था। श्रमिकों को दूर-दूर से तथा अन्य राज्यों में श्रमिक भर्ती करने पड़ते थे जिसके कारण अनेक बहिष्कारों तथा समस्याएँ उत्पन्न हो गई थीं। इन बहिष्कारों को हल करने के लिए १९११ में १९०१ तक अनेक अधिनियम पारित किये गये थे। जिनमें पाँच बंगाल में थे तथा एक मद्रास में था। इन अधिनियमों में भर्ती करने वालों

के साहस्य पण्डानी (Emigrants) श्रमिकों की रजिस्ट्री यात्रा में स्वास्थ्य सम्बन्धी सावधानियाँ श्रमिकों के मुंबिया की ३ से ३ साल तक की अवधि तथा मजदूरी निर्धारण आदि की व्यवस्था की गई थी। मालिकों को यह अधिकार दे दिया जा कि भागे हुए श्रमिकों को गिरफ्तार कर लें। मुंबिया भ्रम करना एक कानूनी अपराध बना दिया गया था। किन्तु इन सब व्यवस्थाओं ने अनुबन्ध श्रम (Indentured Labour) पद्धति को जन्म दे दिया। इस पद्धति ने श्रमिकों की पर्याप्त रूप से पूर्ति की समस्या को हल करने के स्थान पर नवीन कठिनाइयाँ उत्पन्न कर दीं। सन् १९१५ में प्रथम श्रम तथा परावासी श्रमनियम पारित किया गया। १९०८ में तथा १९१५ में दो संशोधित श्रमनियम पारित किए गए, जिन्होंने अनुबन्ध श्रम पद्धति समाप्त कर दी तथा मालिकों द्वारा श्रमिकों को निजी रूप से गिरफ्तार कर लेने के अधिकार को वापिस ले लिया। तथापि यह श्रमनियम श्रमिकों की समस्याओं को हल करने में असफल रहा। १९२६ तथा १९३२ में १९३६ एक १९६० के श्रम नियम निरस्त कर दिए गए। भारत में रोजगार श्रम आयोग ने इन सब प्रश्नों पर विचार में विचार किया था तथा प्रत्येक सिफारिशों भी की थी। इन सिफारिशों के आधार पर ही चाय क्षेत्र परावासी श्रमिक श्रमनियम १९३२ में पारित किया गया जो अक्टूबर १९३३ में लागू कर दिया गया।

१९३२ का चाय क्षेत्र परावासी श्रमिक श्रमनियम —

(The Tea Districts Emigrant Labour Act, 1932)

यह श्रमनियम अन्तर्गत कारखानों के प्रतिरिक्त समस्त भारत पर लागू होगा है। यह श्रमनियम मुख्यतया प्रथम क चाय बागान के श्रमिकों की भर्ती पर नियंत्रण लागू करने में सम्बन्धित है और इस बात की व्यवस्था करता है कि भोजन स और कुशलता श्रमिकों की भर्ती न की जा सके तथा प्रथम तक मात्रा के लिए उचित मुंबियाएँ प्रदान की जाएँ। यह श्रमनियम केंद्रीय सरकार के नियंत्रण में प्रवेसीय सरकारों को यह अधिकार देता है कि राज्य के किसी क्षेत्र को नियमित परावासी क्षेत्र घोषित कर दें तथा किसी व्यक्ति को मालिक प्रथम मालिकों की ओर से चाय भ्रमण चाय स्थानीय श्रमिकता (Agent) का कार्य करने का साहस्य दे दें। नियमित परावासी क्षेत्रों से भर्ती किए हुए श्रमिक साइलेंट-मुक्त स्थानीय श्रमिकता द्वारा तथा निर्धारित मार्गों से ही प्रथम क्षेत्र जा सकते हैं तथा उनके भेजे जाने के मार्ग में भोजन तथा ट्यूरे के श्रमिकताओं द्वारा प्रकाश होता है। प्रवेसीय सरकारों केंद्रीय सरकार की अनुमति से किसी नियमित परावासी क्षेत्र या उसके किसी भाग को सीमित (Restricted) भर्ती क्षेत्र भी घोषित कर सकती हैं। ऐसी स्थिति में साहस्य-मुक्त चाय क्षेत्रों वाले श्रमिकता के या साहस्य-मुक्त भर्ती करने वाले के पत्रों को किसी ऐसे मामले सरकार के प्रतिरिक्त जो चाय बागान के मालिक या प्रत्येक का प्रस्ताव-प्रस्ताव देता हो चाय कोई व्यक्ति किसी भी व्यक्ति को उद्घाटन प्राप्त परावासी के रूप में प्रथम जाने में सहायता नहीं दे सकता।

अधिनियम १६ बच की धाम्यु से कम क बालकों का धनम जान क लिए सहमता करने पर रोक लगाता है जब तक कि बालक अपने माता-पिता या एम बयलर रिश्तेदारों के साथ न हो जिन पर वे धायित हों । इसी प्रकार किसी विवाहित स्त्री को भी जो अपने पति क साथ रहती हो बिना उसके पति की अनुमति के धनम जाने के लिए सहायता नहीं दी जा सकती है । इसके अतिरिक्त धनम में प्रवेश करने की तिथि से तीन बच की अवधि समाप्त होन पर, या कुछ विधाय परिस्थितियों म इसके पूर्व समय में भी प्रत्येक पराबामी तथा उसके परिवार का स्वदेग सौदन का अधिकार है । इस प्रकार धायिम सौन्दे का ध्यय भी मामिकों का बहन करना पड़ता है । अधिनियम के अनुसार मामिक का यात्रा क लिए बखम किराया ही नहीं देना हाता है बरन् यात्रा की अवधि म निर्वाह भसा भी देना पड़ता है तथा धमिकों के लिए अचित स्वामों पर विधाय छुहों की भी व्यवस्था करनी पड़ती है ।

अधिनियम एक पराबामी धमिक के नियन्त्रक (Controller) तथा एक या अधिक उपनियन्त्रकों की नियुक्ति की व्यवस्था करता है जिन्हें अधिनियम में दिए गए कारों तथा कर्तव्यों का पालन करना हाता है । नियन्त्रक तथा उनके मिहबंदी (Establishment) क ध्यय को बहन करन क लिए अधिनियम म मामिकों पर एक उप-कर लगान की व्यवस्था है । उस उप-कर का दर धनम म प्रेषण करन वान प्रत्येक सहायता प्राप्त पराबामी धमिक के हिमाब स ६ रुपय तक हो सकती है और यह दर प्रत्येक वर्ष निर्धारित की जा सकती है । १९५६ क लिए सरकार न उप कर की दर ५ र० निर्दिष्ट की थी । १९५८ मे इस दर को बढ़ाकर ८ र० कर दिया गया और १९६१ में भी ८ र० की दर थी । १९६२ में यह दर ९ र० कर दी गई । पराबामी धमिक का नियन्त्रक इस अधिनियम के प्रशासन की धायिक रिपोर्टें भी तैयार करता है ।

अधिनियम क अन्तर्गत बनाए गए नियमों की १९ ५ म लागू किया धमों । इन नियमों में १९५४ में मसौदन भी हुआ । उस मसौदन के अनुसार धनम जान जाने धमिक कबल उम रेमके माग से ही जा सकते हैं जो माग भारत में पड़न है । इसके अतिरिक्त जो धमिक धनम में बचपन मे ही या याग म उन्हें भी प्रात परों को धायिम सौन्दे का अधिकार द दिया गया है । गणन मूचना दन का मध्यम्यों के लिए दण्ड की व्यवस्था भी की गई है । धायिम भत्र गा धमिका की कदा भामे हुए धमिकों की मुचनारें देना मामिकों क लिए अतिबाध कर दिया गया है । १९५६ में एक मसौदन क अनुसार राज्य में पड़न वान दिया म ग १० बच तक क बन्धा के लिए भी १० छटाक रूप प्रतिदिन दन की व्यवस्था कर दी गई है । २ गाग मे बच के बन्धों को जो रूप दिया जाता था उसकी मात्रा ६ छटाक म बढ़ाकर १२ छटाक कर दी गई है ।

बहु अधिनियम बेबल धमिकों की भर्ती तथा भर्ती हुए धमिकों को धनम भजने तथा उनके स्वदेग सौन्दे को विधायित करता है । किन्तु बाद शासन म

धर्मिकों की कार्यें दशाधर्मों का विनियमित नहीं करता है। कबल कोचीन राज्य में मई १९१७ में बनाए गए कुछ नियमों के अन्तर्गत बागान धर्मिकों की कार्यें दशाधर्मों को विनियमित करने की व्यवस्था थी। १९२५ में इस अधिनियम के अन्तर्गत बनाए गए नियमों को उद्दीघा में भी लागू कर दिया गया था।

१९५१ का बागान धर्मिक अधिनियम —

(The Plantation Labour Act of 1951)

। बागान धर्मिक कार्यें दशाधर्मों को विनियमित करने के पूर्ण अन्तर्गत पर अथ अनुसंधान समिति (१९४६) ने अपने विचार प्रकट किए थे तथा बागान के लिए एक पुस्तक अधिनियम बनाने की सिफारिश की थी। १९४७ में बागान के लिए एक औद्योगिक समिति की नियुक्ति की गई तथा भारत सरकार ने प्रदेसीय सरकारों या मिकों तथा धर्मिकों के प्रतिनिधियों का बागान उद्योग की समस्याओं पर विचार करने के लिए एक सम्मेलन बुलाया। औद्योगिक समिति ने सिफारिश की कि उपयुक्त मजदूरी निश्चित करने के लिए बागान में धर्मिकों के जीवन स्तर तथा निर्बाह मागत की जांच की जानी चाहिए। यह कार्य अथ म्यूरो के निदेशक को सौंपा गया। सम्मेलन में यह भी ठम हुआ कि बागान में बाकटी सहायता के बतमान स्तर का अध्ययन करने तथा उसमें सुधार के लिए सुझाव देने के हेतु एक चिकित्सक विषयज्ञ नियुक्त किया जाय। यह कार्य स्वास्थ्य सेवाओं (धार्मिक बीमा) के उप-अध्यक्षिक मेजर इ० लायड बोन्स को सौंपा गया था। मार्च १९४८ में इन सबकी रिपोर्टों पर औद्योगिक समिति द्वारा विचार किया गया। इस समिति ने सिफारिश की कि बागान में १२ वर्ष से कम आयु वाल बालकों को रोजगार देने पर रोक लगा देनी चाहिए तथा बाकटी सहायता का स्तर कामून द्वारा निर्धारित कर दिया जाना चाहिए तथा बागान में कार्यें की दशाधर्मों में भी सुधार होना चाहिए। इन सबके परिणामस्वरूप अक्टूबर १९५१ में सरकार ने बागान धर्मिक अधिनियम पारित किया। किन्तु बागान में मंदी आने के कारण इसे लागू करने में विफल हो गया। अगस्त १९५४ में यह अधिनियम लागू किया गया। १९६० में इसमें एक संशोधन किया गया। अधिनियम के मुख्य उपबन्ध निम्न प्रकार हैं—

(१) यह अधिनियम उन समस्त आय कर्मि रजर तथा मिनकोना बागान में लागू होता है जिनका २५ एकड़ या अधिक क्षेत्र हो तथा जो १० या अधिक व्यक्तियों को रोजगार में लगाए हों। केन्द्रीय सरकार की अनुमति से किसी भी प्रदेसीय सरकार द्वारा यह अधिनियम अन्य बागान पर भी लागू किया जा सकता है। यह अधिनियम जम्मू तथा काश्मीर के अतिरिक्त समस्त भारत में लागू होता है।

(२) यह अधिनियम बागान के लिए निरीक्षक कर्मचायी-वर्ग की प्रदेसीय सरकार द्वारा नियुक्ति की व्यवस्था करता है। इसके अन्तर्गत बागान का एक मुख्य निरीक्षक तथा इसके अधीन अन्य निरीक्षक नियुक्त किए जाते हैं। इन निरीक्षकों के अधिकारों तथा कार्यों को स्पष्ट कर दिया गया है।

(१) अधिनियम क अन्तयत मामिकों से यह कहा गया है कि ब पीने क स्वच्छ पानी की व्यवस्था करें, स्त्री तथा पुरवों क लिए पर्याप्त मात्रा म शौचालयों एवं मूत्रालयों की व्यवस्था करें तथा उचित डाक्यूरी सुविधाएँ भी दें। यदि कोई मासिक इन सुविधाओं को प्रदान करने में असफल रह ता मुख्य निरीक्षक इन सुविधाओं को प्रदान कर सकता है तथा मासिकी से इनका व्यय बमूस कर सकता है।

(४) बागान धमिकों के कल्याण के लिए भी अधिनियम म उपबन्ध हैं जैसे प्रत्येक उस बागान म जिसमें १२० या अधिक धमिक रोजगार म लग हों एक कैन्टीन स्थापित करने की व्यवस्था है तथा उन बागान म जहाँ ३० या अधिक स्त्री धमिक रोजगार में लगी हैं वहाँ विविध प्रकार क छिपुछुहों क बनाने की व्यवस्था है। धमिक तथा उनके बालकों के लिए मनोरंजन तथा शिक्षा की सुविधाएँ प्रदान करने की व्यवस्था भी है। प्रदेशीय सरकारों द्वारा निर्धारित किए गए नियमों क अनुसार बीमारी क मानूख हित साम भले भी दिए जायेंगे। प्रत्येक धमिक तथा उनके परिवार को आवश्यक आवास सुविधा देने का उत्तरदायित्व भी मासिक का है तथा प्रदेशीय सरकारों कानों की विद्यमानों एवं स्तर तथा किराये के लिए नियम बना सकती हैं। इसके अतिरिक्त प्रदेशीय सरकार मासिका द्वारा धमिकों क लिए पीने के पानी की सुविधा शौचालय मूत्रालय तथा छतरी कम्बल बरसाती पारि बैठी बस्तुएँ प्रदान करने क लिए नियम बना सकती हैं जिससे धमिकों का सर्वा तथा छोट से बचाव हो सके। प्रत्येक उन बागान में कल्याण अधिकारी भी नियुक्त करने की व्यवस्था है जहाँ ३०० या इससे अधिक धमिक साधारणतया रोजगार में लग हों।

(३) अधिनियम क्यम्क धमिकों क लिए प्रति सप्ताह २४ घण्टे तथा शिगोरों (१२ से १८ वर्ष की आयु के धमिक) एक बालकों (१२ म १४ वर्ष की आयु के धमिक) के लिए प्रति सप्ताह ४० घण्टे काय समय निर्धारित करता है। अधिनियम कार्य के दैनिक घण्टे तो निर्धारित नहीं करता किन्तु यह निर्धारित करता है कि कोई भी धमिक घाबे घण्टे के विधाम मध्यान्तर क बिना ३ घंटे से अधिक काय नहीं करेगा। धम समय विस्तार प्रतिदिन १२ घंटे निश्चित किया गया है। प्रदेशीय सरकारों को यह अधिकार है कि वह विधाम के एक मासाहिक दिन की व्यवस्था के लिए नियम बनाएँ तथा यदि मासाहिक छुट्टी के दिन काम कराया जाता है तो उसका मुपत्ताम कर्म किया जाए इसके लिए भी नियम बनाएँ। यदि कोई धमिक दैनिक काम के लिए निश्चित समय से काय घंटे क अन्दर नहीं आता ता बासिक उस रोजगार में लगान म मना कर सकता है। १२ बय से कम के बालक बागान में काम नहीं कर सकते तथा ७ बय आयु से ९ बय आयु के बीच का रात्रि कार्य शिगोरों तथा बालकों के लिए निषेध कर दिया गया है। मजदूर बालकों एवं शिगोरों को अच्छे स्वास्थ्य का प्रमाण-पत्र देना होता है तथा उनकी प्रमाणित (Certified) सर्वम द्वारा जांच की जा सकती है।

(१) प्रत्येक थर्मिक को सचेतन अवकाश निम्नलिखित दर पर दिए जान की व्यवस्था है (क) यदि थर्मिक बमरक है तो कार्य के प्रत्येक २० दिनों पर एक दिन का अवकाश (ख) यदि बिद्योर है तो कार्य के प्रत्येक १५ दिनों पर एक दिन का अवकाश। छुट्टियां ३० दिन तक एकत्रित की जा सकती हैं।

(३) अधिनियम के उपबन्धों का उल्लंघन करने पर अवकाश कार्य योग्यता का भूटा प्रमाण-पत्र देने पर दण्ड भी निर्धारित कर दिए गए हैं।

अधिनियम के अन्तर्गत नियम बनाकर अनेक राज्यों में लागू भी कर दिए गए हैं। परन्तु अनेक राज्य ऐसे हैं जिन्होंने नियमों को अभी तक पूर्ण रूप से लागू नहीं किया है। अद्य पश्चिमी बंगाल एवं केरल में मातृत्व हित-लाभ अधिनियमों के अन्तर्गत कामान की स्त्री थर्मिकों का मातृत्व-हित-लाभ प्रदान किए जाते हैं। (देखिए पृष्ठ ३४७-४८)।

बागान थर्मिक अधिनियम को १९६० में संशोधित किया गया और संशोधित अधिनियम २१ नवम्बर १९६० से लागू कर दिया गया है। इस संशोधित अधिनियम का उद्देश्य यह है कि इस बात को रोका जाए कि मालिक १९५१ के अधिनियम से बचने के लिए अपने बागान को छोटे-छोटे टुकड़ों में न बाँटे क्योंकि मालिकों ने ऐसा करना प्रारम्भ कर दिया था। संशोधित अधिनियम के मुख्य उपबन्ध इस प्रकार हैं—(क) प्रदेशीय सरकारों को इस बात का अधिकार दे दिया गया है कि वह अधिनियम के सभी या किसी भी उपबन्ध का जिया भी ऐसा बागान में लागू कर सकते हैं जिसका वज्र १० ११७ हेक्टर (२५ एकड़) से कम है या जिसमें ३० से कम थर्मिक कार्य करते हैं। परन्तु वह बात उक्त कामान पर लागू नहीं होगी जो अधिनियम के लागू होने से पहिले ही मौजूद थे। (ख) बिद्योगी मुक्तिवापों को थर्मिकों के परिवारों तक विस्तृत कर देने का उपबन्ध है। (ग) नौकरी समाप्ति की वधा में थर्मिक को अति छुट्टी प्रदान करने या उसके बचने में मजबूरी देने की व्यवस्था है। (घ) छुट्टी के दिनों में जो मजबूरी थी जाए उसकी गणना किंच प्रकार हो इसका भी उपबन्ध है।

यातायात थर्म विधान (Transport Labour Legislation)

रेलवे थर्म विधान —

भारत में यातायात के थर्मिकों के लिए जो विधान बन हैं उनमें सबसे महत्वपूर्ण विधान रेलवे थर्मिकों के लिए है। रेलवे कारखाने या अर्थात् तो केंद्रीय अधिनियम के अन्तर्गत था जारी है, परन्तु रेलवे के अन्य थर्मिकों के लिए १९३० तक कोई अधिनियम पुराना नहीं था। १९३० में १८९० के भारतीय रेलवे अधिनियम में संशोधन किया गया और इस अधिनियम में एक नया अध्याय VI (A) जोड़ दिया गया। यह उन कर्मचारियों के लिए कार्य के बंदे तथा विधान अर्थात् की व्यवस्था करना है जो कारखाना अधिनियम तान अधिनियम तथा भारतीय व्यापारिक जहाज अधिनियम के अन्तर्गत नहीं आते हैं। अधिनियम में १९५९ में भी संशोधन हुआ।

१९३० में संशोधित १८६० का भारतीय रेलवे अधिनियम —

भारतीय रेलवे अधिनियम के अन्तर्गत जो 'धमिक' नहीं घात न उनका दो बर्षों में विनाशित किया गया था। 'निरन्तर कार्य करने वाल धमिक' तथा 'आवश्यक रूप से अचिराम (Intermittent) धमिक'। अधिनियम के अनुसार एक महीने में औसत कार्य घण्टे अचिराम धमिकों के लिए प्रति सप्ताह ८४ तथा निरन्तर कार्य करने वाले धमिकों के लिए प्रति सप्ताह ६० निश्चित हुए थे। समस्त रेलवे कर्मचारियों को रविवार से आरम्भ होने वाले प्रत्येक सप्ताह में कम से कम २४ घण्टे का विधाम देना आवश्यक था। परन्तु यह विधाम उस समय देना आवश्यक नहीं था जब काम का अधिक आर हो या रेलवे सेवा में बिना घाने जैसी कोई अवसमात आवश्यकता आ जाए। ऐसी स्थिति में धमिकों को अपनी छुट्टी छोड़ने पर अतिपूर्ति मिलती थी। समयोपरि काम के लिए गुप्तान की दर साधारण मजदूरी से १ ३/४ गुनी निर्धारित की गई थी। अधिनियम के अन्तर्गत सरकार को यह अधिकार भी था कि अधिनियम में दी हुई कुछ विधाय बाठों के लिए सरकार नियम बनाए। इस प्रकार के बनाये गए नियमों को रेलवे कर्मचारियों के (रोजगार के बँटों से सम्बन्धित) नियम कहा जाता रहा है। परन्तु अधिनियम तथा नियम दोनों को साधारणतया 'रोजगार घटों के विनियम (Hours of Employment Regulations)' कहा जाता है।

१९५६ का भारतीय रेलवे (संशोधन) अधिनियम —

(Indian Railways (Amendment) Act, 1956)

यम अनुसंधान समिति की रिपोर्ट तथा रोजगार घटा के विनियमों के कार्य पर वार्षिक रिपोर्टों में अधिनियम के उपबन्धों की नम निर स जाच करने की आवश्यकता की ओर संकेत किया गया था। मई १९६७ में म्यायाधीश राजाध्याय के विवाचन निगम में भी (जिसका नीचे उल्लेख किया गया है) नियमों के दाहराने की सिफारिश की गई थी। नियमों में संशोधन कर दिए गये थे। परन्तु सरकार न यही उचित समझा कि अधिनियम के अध्याय VI (A) में संशोधन कर दिया जाय जिससे विवाचकों के विवाचन निगमों को अमानिक मान्यता मिल सके। परिणाम तौर पर भारतीय रेलवे (संशोधन) अधिनियम १९५६ के द्वारा इस अध्याय में संशोधन कर दिया गया यद्यपि विवाचन निगम १९५१ तक धीरे-धीरे सभी रेलवे पर लागू हो गया था। म्यायाधीश राजाध्याय के विवाचन निरुंय में रेलवे कर्मचारियों के वर्गीकरण काम के बँटे और विधाय अचिराम आदि के विषय में जो सिफारिशें की गई थी, संशोधित अधिनियम उन्हीं से सम्बन्धित है। सभी रेलवे कर्मचारियों को कम ग कम २४ घंटे का समातार विधाम देना होगा जो रविवार को आरम्भ होगा। आपत काम अथवा काम की असाधारण अतिवृत्ता के समय अधिनियम के अनुसार उपयुक्त अधिकारियों को यह भी अधिकार है कि वह काम के घण्टे और विधाय समय के

जपानों से बर्खास्त रूप से छूट रहे हैं। समबोपरि काम के लिए साधारण मजदूरों की अपेक्षा कम से कम डेढ़ पुनी मजदूरी देने की व्यवस्था है।

न्यायाधीश राजाध्यायस का बिबाचन निम्न —
(Justice Rajadhyaksha Award)

१९४६ में अखिल भारतीय रेलवे कर्मचारी संघ में रेलवे कर्मचारियों की कुछ शर्तों के सम्बन्ध में भारत सरकार से एक बिबाचक नियुक्त करने की प्रार्थना की, तथा अप्रैल १९४६ में भारत सरकार द्वारा लव मबीस भी बी० एच राजाध्यायस बिबाचक नियुक्त किए गए। बिबाच के नियम बैनिक मजदूरी पर कार्य करने वाले एवं प्रबन्ध (Inferior) वर्ग के कर्मचारियों की निम्नलिखित शर्तों से सम्बन्धित थे :
काम के बड़े, प्रबन्ध परभाव बिभाम व्यवस्था प्रबन्धक बदली अधिक प्रबन्धक के निम्न सुदृष्टियों की सुविधाएँ प्राप्ति। बिबाचक ने अपना पंचाट सरकार को मई १९४७ में प्रस्तुत किया तथा रोजगार शर्तों के विनियमों के क्षेत्र का विस्तार करने की सिफारिश की ताकि प्रबन्धक बिना बिनिश्चय प्रत्येक वर्षों को सम्मिलित नहीं किया जाता या उन्हें भी सम्मिलित कर लिया जाय। पंचाट में शर्मिकों के निम्न शर्तों के बनान का सुझाव दिया गया — (क) कम प्रबन्ध (Intensive) प्रबन्ध के अधिक या ऐसा कार्य करते हैं जो कठोर प्रकार का है और जिसमें निरन्तर ध्यान प्रबन्ध कर्तव्य शारीरिक परिश्रम की आवश्यकता होती है। इनके कार्य के बड़े महीने में प्रोत्तम प्रति सप्ताह ४२ घंटे चाहिये और इन्हें प्रत्येक सप्ताह १० बड़े की लगातार बिभाम प्रबन्ध मिलनी चाहिये। (ख) निरन्तर (Continuous) — इस प्रकार के शर्मिकों के कार्य के बड़े महीने में प्रोत्तम प्रति सप्ताह ३४ घंटे चाहिये और प्रत्येक सप्ताह में ३० बड़े की लगातार बिभाम प्रबन्ध मिलनी चाहिये। (ग) प्रावस्थक रूप से अतिरिक्त शर्मिक (Essentially Intermittent) — प्रबन्ध के शर्मिक बिना के शर्मिक कार्य शर्तों में कुछ ऐसी प्रबन्ध प्राप्ति है जब उन्हें कोई कार्य नहीं करना पड़ता। इनके सप्ताहिक बड़े ७४ होते चाहिये और साव-साव एक पूर्ण राशि महीने प्रति सप्ताह २४ बंटों की लगातार बिभाम प्रबन्ध मिलनी चाहिये। (घ) इनके अतिरिक्त (Excluded) — इनमें राशि-कार्य पर लगे हुए कुछ अतुर्बन्ध वर्षीय कर्मचारी होते हैं जैसे मजदूर परिपालक (Attendant) नेट कीपर प्राप्ति तथा विस्वसनीय कार्यों में लग श्वलित पर्यवेक्षक कर्मचारी तथा स्वाभ्य एवं शिफ्टमा सञ्चाली कर्मचारी। इन कर्मचारियों को एक महीने में कम से कम ४८ बंटों की एक लगातार बिभाम प्रबन्ध प्रबन्ध प्राप्त प्रत्येक पत्रवादे में २४ बंटों की एक लगातार बिभाम प्रबन्ध प्राप्ति होनी चाहिये। गाड़ी पर चलने वाले कर्मचारियों के लिए बिबाचक ने सिफारिश की थी कि इनका एक बार में कार्य का समय १० बड़े ल प्रबन्ध नहीं होना चाहिये, तथा उनके लिए बिभाम समय एक माह में ३० निरन्तर शर्तों की बार प्रबन्धों का प्रबन्ध २२ निरन्तर शर्तों की पाँच प्रबन्धों का होना चाहिये। बिबाचक ने सुदृष्टियों ने

दस्य कर्मचारियों को लगाने, संवेतन प्रवकाश तथा छुट्टियों के सम्बन्ध में भी कुछ निश्चयों की थी ।

भारत सरकार ने कार्य के बड़े विभाग प्रबन्धि तथा छुट्टियाँ लेने पर दस्य कर्मचारियों के लगाने के विषय में पंचाट को स्वीकार कर लिया तथा एक प्रादेश द्वारा जून १९४८ में इस पंचाट को तीन वर्ष की अवधि के लिए रेलवे प्रशासन पर लागू शोधित कर दिया । प्रवकाश नियमों तथा छुट्टी की सुविधाओं के सम्बन्ध में निसंय स्वयित कर दिया गया था । जुलाई १९४८ में तथा पुनः फरवरी १९५० में रेलवे मन्त्रालय ने निर्धारित तिथियों में तथा विभिन्न चरणों में पंचाट को लागू करने की आज्ञायें दीं । १९३१ के रेलवे कर्मचारी (रोजगार के बड़े) के जो नियम वे उत्तरो विभाषक की तिथारियों का समावेश करते १९३१ के नवीन नियमों द्वारा स्थानान्तरित कर दिया गया । ३१ मार्च १९३१ तक पंचाट समस्त रेलवे में लागू कर दिया गया था । जैसा ऊपर कहा जा चुका है सरकार ने नियमों को कानूनी मान्यता देन क हतु १९३६ में इस अधिनियम में संशोधन किया । राजपार बण्टों के इन विनियमों का प्रशासन मुख्य श्रम आयुक्त (केन्द्रीय) का उत्तरदायित्व है पक्षि प्रशासन का वास्तु विषय कार्य प्रत्येक रेलवे क्षेत्र में नियुक्त केन्द्रीय क्षेत्रीय श्रम कमिश्नरों सुमह अधिका रियों तथा श्रम निरीक्षकों के द्वारा किया जाता है । १९३६-६० में इन विनियमों के पन्तर्गत घाने जाने वाले रेलवे कर्मचारियों की संख्या १२ २५,६४१ थी । काय की प्रवृत्ति के अनुसार इनका वर्गीकरण इस प्रकार था — श्रम प्रपाण २२०६ (०.३३%) निरन्तर ७,४८,२७७ (६०.६६%) अधिपाम १२० ६३२ (१.८६%) अधिरिक्त ३,३४ २२६ (२८.१०%) ।

जहाज सम्बन्धी श्रम विधाम —

जहाजों में रोजगार पर सभे किछोरे तथा बालकों के कार्यों के विनियमन का महत्व सर्वप्रथम भारत सरकार के समस्त अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन द्वारा लाया गया जिसने १९२० में नाविकों की श्रमरतन धायु से सम्बन्धित एक अधिसूचय का संशोषा पारित किया था । यह अधिसूचय भारत सरकार ने उम समय नहीं अपनाया । परन्तु १९२१ में अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन ने जब दो और अधिसूचय पारित किए तो भारत सरकार ने इन्हें स्वीकार कर लिया । १९२३ में भारतीय व्यापारी जहाज अधि नियम पारित किया गया जिसमें भारतीय नाविकों के रोजगार की दशायों का विनियमन हो सके । अधिनियम बनने के परचाए इमें घनेक अवसरों पर संशोधन किया गया है । १९४६ का संशोधन नाविकों के लिए रोजगार इन्तर कोतने की व्यवस्था करता है तथा १९५१ का संशोधन नाविकों की शक्यी शिष की व्यवस्था करता है । १९५८ में एक नया अधिनियम 'व्यापारी जहाज अधिनियम' पारित किया जा चुका है ।

तथा उसकी मजदूरी बन्द की जा सकती है। यदि भारत के बाहर वह बहाब से भागे तो उसे १२ सप्ताह तक का कारावास भी दिया जा सकता है। कार्य करने से मना करने पर प्रथम प्रथम बहाब पर समय पर लौकरी पर न पाने पर या बिना पर्याप्त कारणों के बगैर छुट्टी अनुपस्थित होने पर नाबिक को बन्द किए जाने की व्यवस्था है। १९२३ का श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम कुछ परिवर्तनों के साथ किसी शक्ति से बनने वाले बहाब पर प्रथम १० या अधिक टन वाले बहाब पर सने मास्टर तथा नाबिकों पर लागू होता है। १९३६ एवं १९४२ के युद्ध-काल में बनाए गए कुछ विशेष कानूनों के अन्तर्गत युद्ध में भाग्य होने पर नाबिकों को क्षति-पूर्ति तथा भत्ता भी दिया जाता था।

अधिनियम का प्रकाशन बहाबी मास्टरों द्वारा प्रथम कुछ कार्यालयों जैसे सीमा-कर (Customs) कार्यालय द्वारा होता है। यह बहाबी मास्टरों का कर्तव्य है कि वे अधिनियम द्वारा निर्धारित ढंग में नाबिकों को हटाने तथा मगाने के कार्य में सुविधाएं दें और देखभाल करें तथा उपयुक्त समय पर नाबिकों की उपस्थिति प्रमाण करने के साधनों की व्यवस्था करें।

१९५८ का व्यापारी बहाब अधिनियम —

(The Merchant Shipping Act, 1958)

१९५८ में एक नया अधिनियम १९५८ का व्यापारी बहाब अधिनियम' पारित किया गया। इसके लागू होने के पश्चात् १९२३ के बहाब अधिनियम को निरस्त कर दिया गया है। नए अधिनियम में व्यापारी बहाब से सम्बन्धित कानूनों में संशोधन किया गया है और उन्हें समायोजित भी किया गया है जिससे भारतीय समुद्री व्यापार यातायात में और अधिक सुसज्जता प्राप्त हो पाय। यह नवीन अधिनियम निम्नलिखित बातों में सम्बन्धित है एक राष्ट्रीय बहाबी बोर्ड की स्थापना और उसके कार्य सामान्य प्रशासन एक बहाबी विकास विधि की स्थापना भारतीय बहाबों का एजिस्ट्रेशन बहाब के अधिकारियों द्वारा सामर्थ्य के प्रमाण-पत्र समुद्री नेवा के लिए नाबिकों और शिक्षाविदों का वर्गीकरण यानी बहाबों का सर्वोत्तम सुरक्षा पोत के दूत जान और बहाब को डूबने से बचाना एवं पवारला बन्द होने की व्यवस्था कार्य विधि पारि। केंद्रीय सरकार को इस अधिनियम के अन्तर्गत नाबिकों के रोजगार स्थल स्थापित करने का अधिकार दे दिया गया है ताकि नाबिकों के रोजगार पर नियन्त्रण और विनियमन किया जा सके। जहाँ नहीं ऐसे स्थल स्थापित हो पाते हैं वहाँ किसी भी बहाब पर कोई भी नाबिक केवल इन स्थलों के द्वारा ही 'मर्ली' किया जा सकता है। प्रत्येक नाबिक के पास परतहवली का एक प्रमाण-पत्र होना आवश्यक है। १९७३ के अधिनियम के समान ही प्रत्येक 'राष्ट्रीय बहाब' के 'मास्टर' को (२) टन से कम के देशीय व्यापार बहाबों को छोड़कर) एक कठोर करना होता है। बन्दों को रोजगार पर लगाने की शक्ति बहाबों को दी गई है। एक राष्ट्रीय बहाबी बोर्ड जिसमें ९ सदस्य हैं तथा १५ सदस्य के राष्ट्रीय नरकार,

बहाब मामिकों और नाबिकों के प्रतिनिधि के रूप में हैं, सरकार को इस अधिनियम से सम्बन्धित सभी बातों पर सलाह देने के लिए बनाया गया है। बहाबी विधान निधि में सरकार द्वारा उपदान और ऋण के रूप में बन दिया जायेगा और सरकार द्वारा नियुक्त की गई एक ९ सदस्यों की समिति द्वारा इसका प्रशासन होगा। सरकार द्वारा बनाई हुई शर्तों के अनुसार इस निधि में से कुछ विधिष्ठ व्यक्तियों को भ्रष्ट तथा विरथीय सहायता प्रदान की जाएगी। अधिनियम के अन्य उपबन्ध उची प्रकार के हैं जैसे १९४९ और १९५१ में संशोधित १९२३ के अधिनियम के हैं। इस अधिनियम का प्रशासन बहाबों के महा निदेशक द्वारा किया जाएगा।

गोबी शमिक विधान — (Dock Labour Legislation)

यातायात शमिकों का धर्म्य वर्ष जिस वैधानिक सुरक्षा की आवश्यकता है गोदी या बन्दरगाहों पर रोजगार म लगे शमिकों का है। विभिन्न समितियों धारि ने बिन्ही गोबी शमिकों की शघाओं का सर्वेक्षण किया पा यह सिफारिश की थी कि रोजगार में शकस्मिकता के कारण उत्पन्न कठिनाइयों को कम करने की हृष्टि स गोदी शमिकों के स्वायीकरण (Decasualisation) की नीति अपनाई जाए। भारत सरकार द्वारा स्वायीकरण की ऐशिक्षक प्रायोबनाओं को लागू करने के प्रयत्न किए गए थे किन्तु इन प्रयाओं का कोई परिणाम नहीं निकला। काय की शकस्मिक प्रकृति के कारण गोदी कर्मचारियों की जो कठिनाइयां होती थीं उनको दूर करने के लिए सरकार ने मार्च १९४८ में 'गोबी शमिक (रोजगार विनियमन) अधिनियम' पारित किया।

भारत में उठाए गए कुछ पग —

१९२२ तथा १९३१ में संघापित १९०८ का भारतीय बन्दरगाह अधिनियम स्थानीय सरकारों द्वारा ऐसे नियम बनाए जाने की व्यवस्था करता है, जिनक अन्तगत ऐसे बन्दरगाहों में, जहां अधिनियम लागू होता है कहीं भी १२ वष में कम के बालकों द्वारा सामान जान या ले जाने के कार्य को नियेब कर दिया जाय। इनके प्रतिरिण १९२९ में अन्तर्राष्ट्रीय धम सम्मेलन के एक अधिसमय के मनीवे तथा रॉयल धम भावोग की सिफारिशों के परिणामरूप १९३४ का भारतीय गोदी शमिक अधिनियम पारित किया गया। किन्तु इसको १० फरवरी १९४८ तक लागू नहीं किया जा सका। अधिनियम जहाजों में ममान बन्ने तथा उठारने के कार्य में लगे गोबी शमिकों की सुरक्षा के लिए सरकार की विनियम बनान का अधिचार देना है। सरकार ने जनवरी १९४८ में विनियमन बनाए जो गोबी शमिकों की उन शर्तों या शर्तों से रसा करने की व्यवस्था करते हैं जिन शर्तों की उन्हें सम्भावना है। उदाहरणतया कार्य स्थानों की सुरक्षा एवं कार्य स्थानों पर पहुचने के रास्त में सुरक्षा, प्रजाय बाड़ (Fence) धारि का प्रबन्ध जहाजों पर पहुचने और धाने जाने के मापन एवं यातायात मधीनों के चारों ओर घेरा तथा धर्म्य कई सुरक्षात्मक व्यवस्थाएँ प्राथमिक उपचार के यत्न, दूबते हुये व्यक्ति की शीबन रसा का मापन धारि। अधिनियम को

लाभ करने के लिए विभिन्न बन्दरगाहों में गोबी सुरक्षा निरीक्षक नियुक्त किए गए हैं। १९४२ के संशोधन द्वारा दुर्घटनाओं की सूचना का उत्तरदायित्व पूर्णरूप से मास्किंग का कर दिया गया है। अधिनियम का प्रघातन कारखानों के मुख्य सप्ताहकार का उत्तरदायित्व है।

१९४८ का गोबी अधिनियम (रोजगार विनियमन) अधिनियम —

[The Dock Workers (Regulation of Employment) Act 1940]

यह अधिनियम इ मनेड में एक ऐसे ही अधिनियम के सामान्य सिद्धांतों का अनुकरण करता है। अधिनियम मुख्य बन्दरगाहों के लिए केंद्रीय सरकार को अधिकार देता है तथा अन्य बन्दरगाहों के सम्बन्ध में प्रवेष्टीय सरकारों को अधिकार देता है कि वे गोबी धमिकों की रजिस्ट्री की योजना बनायें जिससे उनके रोजगार में अधिक नियमितता या रुके तथा गोबी धमिकों के बाहे के पंजीकृत हों या न हों रोजगार को एवं किसी भी बन्दरगाह में ऐसे रोजगार की बधाओं तथा शर्तों को विनियमित किया जा सके। योजना में निम्नलिखित बातें विशेष रूप से होनी चाहियें (क) गोबी कर्मचारियों की शर्तों का विनियमन तथा उनका पंजीकरण (ख) रोजगार की बधाओं एवं शर्तों का विनियमन जैसे मजदूरी दर, कार्य के घंटे सबेसत घबकास धारि (ग) उन गोबी कर्मचारियों के रोजगार पर, जिन पर योजना लागू नहीं होती नियन्त्रण रोक या प्रतिबन्ध लगाना (घ) गोबी कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण एवं कल्याणकार्य (ङ) ऐसे स्वामों में जहां गोबी कर्मचारी कार्य पर लगे हैं जहां उनके स्वास्थ्य एवं सुरक्षा की व्यवस्था (च) ऐसी धबधि में जब योजना के अन्तर्गत धार्य हुए गोबी कर्मचारियों को रोजगार या पूर्ण रोजगार प्राप्त न हो, उनको एक न्यूनतम वेतन की मरामगी।

अधिनियम में इस बात की भी व्यवस्था की गई है कि एक ऐसी सप्ताहकार समिति बनाई जाय जो इस अधिनियम के प्रघातन या योजना से सम्बन्धित अन्य विषयों पर सरकार को परामर्श दे। इस समिति में १२ से अधिक सदस्य नहीं होंगे और ये सदस्य बन्दर की संख्या में सरकार, अधिनियम और मास्किंग के प्रतिनिधि होंगे और सरकार द्वारा मनोनीत एक अध्यक्ष होगा। निरीक्षकों की नियुक्ति की व्यवस्था भी कर दी गई है। जून १९४६ में केंद्रीय सरकार ने निम्न बनाये तथा करारी १९४० में इस अधिनियम से एक सप्ताहकार समिति की स्थापना की है। इसके अतिरिक्त बन्दर में गोबी कर्मचारियों तथा उनके मास्किंग में हुये धापसी नमप्रीठे के धाबार पर भारत सरकार ने एक समिति इस हेतु नियुक्त की कि ग्रेबडोर धमिकों का पंजीकरण करने, उनकी मजदूरी निश्चित करने तथा धारी-धारी में उन्हें रोजगार पर लपाने के सम्बन्ध में एक ध्यापक योजना बनाये। यह योजना जिसे बन्दर गोबी कर्मचारी (रोजगार विनियमन) योजना कहते हैं १९४१ में बनाई गई थी। इस योजना के प्रघातन के लिये बन्दर गोबी अधिनियम की स्थापना की व्यवस्था है तथा प्रतिदिन के प्रघातन के लिए बन्दर ग्रेबडोर मंच की नियुक्ति की

धमबस्था है। अनुशासनात्मक बिषयों के लिए एक विशेष अधिकारी और धपीसों को मुक्त के लिए धपीसीय अधिकरण भी नियुक्त किमे गए हैं। राजमा में मामिकों के लिए एक रजिस्टर, एक संरक्षित पुस रजिस्टर तथा एक मासिक रजिस्टर बनाने की भी धमबस्था है। जिन धमिकों को जिस मासिक के साथ काम करना होता है वे उसके प्रतिरिक्त किसी धन्य मासिक के साथ कार्य नहीं कर सकते और न ही बहु मासिक पबीकृत धमिकों के प्रतिरिक्त किसी धन्य को धपने यहां कार्य पर लगा सकता है। अप्रैल १९२१ में १२ सरस्यों के बम्बई गोदी धमिक बोर्ड की स्थापना हुई। इसी प्रकार की योजनाओं के अन्तर्गत ही कलकता (सितम्बर १९२२) मद्रास (जुलाई १९२३) कोचीन (जुलाई १९२६) तथा बिद्यासापतन (नवम्बर १९२६) में विदेशीय गोदी धमिक बोर्डों की स्थापना हो गई है। (बेसिए पृष्ठ ३५-३६)। इन योजनाओं को जनवरी १९२५ में सरकार द्वारा नियुक्त मागी कर्मचारी धमक समिति की रिपोर्टों के आधार पर १९२६ में दोहराया भी गया है। (बेसिए पृष्ठ ३६) तथा १९६१ में इनमें फिर सधोधन किया गया है। १९५० में एक धन्य योजना जिसको धपबीकृत गोदी कर्मचारी (रोजगार का बिनियमन) योजना [Un-registered Dock Workers (Regulation of Employment) Scheme] कहते हैं, बम्बई, कलकता व मद्रास में नये बर्य के गोदी धमिकों के लिए लागू की गई है।

१९५८ के गोदी कर्मचारी (रोजगार बिनियमन) अधिनियम को संशोधित करम व लिए मसब के सामने एक बिधेयक प्रस्तुत किया जा चुका है। इसके द्वारा केन्द्रीय सरकार को यह धधिकार होगा कि यदि गोदी धमिक बोर्ड धपने कार्य में सफलता कीवाही (Default) कर रहे हैं तो सरकार उन्हें धपने नियन्त्रण में ले सकती है।

मोटर मातायात के धमिकों के लिए बिधान —

१९३६ का मोटर गाडी अधिनियम (Motor Vehicles Act of 1939) मोटर वाहनकों के रोजगार की न्यूनतम धायु, बर्य के घंटे व बिधान धमधि को नियमित करता है। अधिनियम द्वारा १८ बर्य से कम की धायु के किसी भी ध्यक्ति को मोटर गाडी के वाहनक के रूप में तथा २० बर्य से कम के किसी भी ध्यक्ति को मातायात गाडी के वाहनक के रूप में नियुक्त करना निषेध है। परन्तु यह बात केन्द्रीय सरकार के रोजगारों पर लागू नहीं होगी और वहां पर न्यूनतम धायु १८ बर्य है। अधिनियम द्वारा मातायात धमिकों के कार्य के घण्टों को प्रतिदिन ६ घण्टा प्रति सप्ताह ५४ निर्धारित किया गया है तथा इन्हें पांच घण्टे सगातार काम के पन्चात् कम से कम धाया घण्टे का बिधाम देने की धमबस्था है। परन्तु इस अधिनियम में केवल वाहनकों के घण्टे निर्धारित किए गए हैं और परिचारक (Attendant), कंडक्टर (मन्बाहक) क्लीनर और निरीक्षणों धादि धम्य धमिकों को छोड़ दिया गया है। इनके रोजगार, बर्य और धमजूरी के लिए कोई पृथक बिधान धमी तक नहीं था।

मार्च १९५३ में देहली में प्रथम धमिय भारतीय राज्य मातायात धमिक

समय हुआ। इसने यातायात समितियों के कार्य की दशाओं के विनियमन के लिए एक केंद्रीय विधान बनाने की सिफारिश की। अप्रैल १९२६ में स्थायी भम समिति के १२वें प्रतिवेदन में इस प्रश्न पर विचार किया गया। इसके परिणामस्वरूप मोटर यातायात समितियों के लिए एक विधान की रूप-रेखा बनाने के लिए एक निवृत्तीय समिति की स्थापना की गई थी जिसके अध्यक्ष कारखानों के मुख्य समाह्वार थे। इस समिति ने फरवरी १९२८ में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की परन्तु यह कार्य के घटे भम समय विस्तार और समयोपरि से सम्बन्धित प्रश्नों पर एकमत नहीं थी। जनवरी १९२८ में स्थायी भम समिति के १७वें प्रतिवेदन के सम्बन्ध यह प्रश्न फिर उठका गया। इस समिति ने यह सिफारिश की कि विधान बनाने से पूर्व इस प्रश्न की पांच केंद्रीय और प्रदेशीय सरकारों द्वारा होनी चाहिए। अतः अप्रैल १९२८ में मोटर यातायात समितियों के लिए एक केंद्रीय विधान बनाने के लिए एक केंद्रीय विधेयक प्रस्तुत किया गया जो १९२९ में प्रतिनियमन के रूप में पारित हुआ।

१९२९ का मोटर यातायात समितियों के लिए नियम —
(The Motor Transport Workers Act, 1961)

इस विधान में मोटर यातायात संस्थानों में समितियों के लिए कार्य करने नियमन करने की व्यवस्था है। यह प्रतिनियमन उन समस्त मोटर यातायात संस्थानों में लागू होता है जहाँ पांच या उससे अधिक समितियों के कार्य करते हैं। प्रदेशीय सरकारें उनको ऐसे मोटर यातायात संस्थानों पर भी लागू कर सकती हैं जहाँ पांच से कम व्यक्तित्व कार्य करते हैं। बाजारों को रोजगार पर लाना नियंत्रित कर दिया गया है। किछोर भी तभी कार्य कर सकते हैं जब उनकी कार्य करने की सम्बन्धता प्रमाण-पत्र प्राप्त जाए। व्यक्त समितियों के कार्य के घटे प्रतिदिन ८ तथा प्रति सप्ताह ४८ निर्धारित किए गए हैं। लंबे सप्ताह पर और विशेष अवसरों पर कार्य के घटे कुछ अधिक हो सकते हैं। किछोरों के लिए कार्य के घटे प्रतिदिन ६ निर्धारित किए गए हैं और उनको १० बजे रात्रि से ६ बजे प्रातः तक कार्य पर नहीं लयाया जा सकता। भम समय विस्तार बयानों के लिए प्रतिदिन १२ घंटे व किछोरों के लिए प्रतिदिन ८ घंटे निर्धारित किया गया है। समयोपरि कार्य के लिए लोगों को ही दुगुनी दर में मजदूरी देने की व्यवस्था है। समस्त सुविधों की व्यवस्था इस प्रकार है: १ जनवरी वर्ष में २४० दिनों की उपस्थिति के परचाय व्यक्तों के लिए २० दिन के कार्य पर १ दिन की छुट्टी और किछोरों के लिए १२ दिन के कार्य पर एक दिन की छुट्टी।

अथ भम विधान
अथ भम विधान का वर्णन जो देश में पारित हो चुके हैं पिछले पृष्ठों में किया जा चुका है। इतना ही और अधिक संस्थानों में काम करने वाले समितियों के लिए भी वैधानिक रूप उठाए गए हैं। भारत सरकार ने सबसे पहले

अन्तर्राष्ट्रीय अम सगठन क १९३० के एक अधिसूचना का अन्वय के सम्बन्ध में दुकानों और वाणिज्य मस्जानों में काम करन वाल अधियों को सुरक्षा प्रदान करने के प्रश्न पर विचार किया जा परन्तु अधिसूचना को अन्वय ही नहीं गया। इस विषय में बम्बई सरकार ने सर्वप्रथम नवम्बर १९४० में एक अधिनियम पारित किया। इसके पश्चात् इसी प्रकार के अधिनियम अन्य सरकारों द्वारा भी पारित किये गए। राज्या के पुनर्गठन से पूर्व २५ राज्यों में ऐसे अधिनियम लागू थे। इस समय ऐसे अधिनियम सभी राज्यों में लागू हैं (देखिए पृष्ठ ७०-७१)। १९४२ का साप्ताहिक छुट्टी अधिनियम तथा १९४६ का अखेरतन छुट्टी अधिनियम नाम के दो केन्द्रीय अधिनियम भी पारित किए गए थे (देखिए पृष्ठ ७१-७२)। जहाँ तक प्रवेशीय अधिनियमों के क्षेत्रों का सम्बन्ध है यह विधिपुस्तक में दुकानों और वाणिज्य संस्थानों के काम और बीमा फर्मों, मोटरगाड़ियों, बिजली के सिनेमा जैसे मनोरंजन के स्थानों पर लागू होते हैं। सरकार को इनके क्षेत्रों को विन्यून करन का अधिकार है।

जहाँ तक कार्य के क्षेत्रों का सम्बन्ध है यह विभिन्न राज्यों में भिन्न भिन्न है। (देखें पृष्ठ ४८७-४८) अधिनियमों में मस्जानों के छोड़ने और बन्द करन के अन्तर् विधायक मध्यान्तर, समय-विस्तार, समयोपरि इत आदि के सम्बन्ध में भी उपबन्ध दिए हुए हैं। छुट्टी और अन्वय के सम्बन्ध में उपबन्धों का अन्वय पृष्ठ ७०-७२ पर किया गया है। जहाँ तक किसानों और श्रमिकों के रोजगार की न्यूनतम धारु का सम्बन्ध है यह धारु उत्तर प्रदेश, पंजाब व मद्रास को छोड़कर (जहाँ १८ बर्ष हैं) सब राज्यों में १२ बर्ष हैं। केरल में १७ बर्ष हैं। उनके लिए रात्रि में कार्य करना निषेध है। बासकों और कियोरीयों के कार्य के अन्तर् घांग्र, मद्रास, मैसूर और पश्चिमी बंगाल में प्रतिदिन ७ हैं तथा महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश तथा देहली में प्रतिदिन ६ हैं और बिहार, उड़ीसा, पंजाब में प्रतिदिन ५ हैं। मध्य प्रांश में प्रतिदिन ५ हैं। राजस्थान में प्रतिदिन ५ हैं। इनमें अधिकतर स्थानों में एक या धारा अन्तर् का विधायक समय भी सम्मिलित है। बिहार में कार्य के यह अन्तर् बालकों के लिए प्रतिदिन ५ तथा कियोरीयों के लिए प्रतिदिन ७ हैं। बंगाल में बालकों के रोजगार के अन्तर् कोई उपबन्ध नहीं है।

इसके अतिरिक्त सभी अधिनियमों में अधिकांश की मजदूरी की अन्वय का नियमित करन बाल उपबन्ध है। उत्तर प्रदेश, घांग्र, मद्रास, पंजाब, बिहार, केरल व देहली में मजदूरी समय एक माह से अधिक नहीं होना चाहिए। समय में यह अन्वय एक माह है। मजदूरी अन्वय के समाप्त होने के पश्चात् मजदूरी का अन्वय बंगाल और अन्वय में १० दिन के अन्तर्, उत्तर प्रदेश व देहली में ७ दिन के अन्तर्, मद्रास व घांग्र में ५ दिन के अन्तर् तथा पंजाब में मांगने पर अन्वय ही हो जाना चाहिए। समयोपरि काम तथा कटौती और पुनर्गठनों के लिए भी उपबन्ध बनाए गए हैं। अधिनियम अधिनियमों में यह व्यवस्था की गई है कि नौकरी समाप्ति की अवस्था

में या तो एक माह का नोटिस देना चाहिए अथवा इसके स्थान पर एक माह का वेतन देना चाहिए। पश्चिमी बंगाल उत्तर प्रदेश आन्ध्र घोर पञ्जाब में अधिनियमों के प्रघासन के लिए हुकानों और बाणिज्य संस्थानों के मुख्य निरीक्षक नियुक्त किए गए हैं। कुछ राज्यों में इस कार्य के लिए कारखाना निरीक्षकों की ही नियुक्त कर दी गई है। उत्तर प्रदेश बिहार, मध्य प्रदेश राजस्थान तथा देहली के अधिनियमों में यह भी व्यवस्था की गई है कि धमिक कतिपय अधिनियम के उपबन्ध हुकानों और बाणिज्य संस्थानों के अधिकों पर भी लागू होंगे। बम्बई, मध्य प्रदेश व राजस्थान के अधिनियमों में प्रबन्धीय सरकारों को इस बात के अधिकार हैं कि वह मजदूरी धरायगी अधिनियम के उपबन्धों को किसी भी संस्थान अथवा सब संस्थानों अथवा अधिकों के बर्ष या बर्षों पर लागू कर सकते हैं। मध्य प्रदेश के अधिनियम में प्रोविडेंट फण्ड के सम्बन्ध में भी उपबन्ध हैं। उड़ीसा और राजस्थान के अधिनियम मातृत्व-हित-भारत की भी व्यवस्था करते हैं। कुछ प्रदेशों के अधिनियमों में सफाई संवाहन प्रकाश, सुरक्षा धारि से सम्बन्धित उपबन्ध भी हैं।

विभिन्न राज्यों में अधिनियमों की कार्यावधि स पता चलता है कि निरीक्षक दल की उपर्युक्तता के कारण जनता उचित रूप से वास्तव नहीं किया जाता है। छुट्टी धारि के सम्बन्ध म अधिनियम के उपबन्धों को साधारणतया माना ही नहीं जाता है। उत्तर प्रदेश और मद्रास जैसे कुछ राज्यों में जहां अधिनियमों को ज्ञान ही में मानू किया है, अधिकों और मासिकों को अधिनियम के उपबन्धों के विषय में पूर्ण ज्ञान भी नहीं है। बहुधा देखा गया है कि अधिकों को साप्ताहिक छुट्टियों के दिन भी काम पर बुसाया जाता है समयोपरि की धरायगी नहीं की जाती कोई ब्यौरा नहीं रखा जाता तथा मजदूरी की धरायगी नियमित रूप से नहीं की जाती। अतः इन अधिनियमों को हड़ रूप से लागू करने की आवश्यकता है। यह भी सुझाव है कि हुकानों और बाणिज्य संस्थानों के लिए केन्द्रीय अधिनियम बनाया जाए तथा कुछ ऐसे स्तर निर्धारित कर दिए जाए जिनका राज्य अनुसरण करें।

इन धर्म्याय में धर्म विधान का उत्पन्न कारखाना ज्ञान बागान याठायत तथा हुकान व बाणिज्य संस्थान वर्गों के अन्तर्गत किया गया है। धर्म विधान का निम्नलिखित धीयों के अन्तर्गत भी उल्लेख किया जा सकता है। अधिकों की सुरक्षा के अन्तर्गत जो अधिनियम पारित हुए हैं वह निम्नलिखित हैं १९१८ का भारतीय नारी धमिक अधिनियम १९१९ का कोयला खान सुरक्षा अधिनियम १९२२ का कोयला खान (बच्चत और सुरक्षा) अधिनियम। इनका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। कल्याण के सम्बन्ध म सरकार ने निम्नलिखित अधिनियम पारित किए हैं १९४० का कोयला खान धमिक कल्याण निधि अधिनियम १९४६ का धमिक खान धमिक कल्याण निधि अधिनियम १९४९ का उत्तर प्रदेश कीनी एवं जालक मद्यसार सद्योव धर्म कल्याण एवं विक्राम निधि अधिनियम, १९४६ का उत्तर प्रदेश धर्म कल्याण निधि अधिनियम तथा बम्बई धर्म कल्याण अधिनियम। इन सबका उल्लेख

'धर्म कल्याण कार्य' के अध्याय ११ में किया गया है। जहाँ तक मजदूरी का सम्बन्ध है सरकार ने १९३६ का मजदूरी प्रदायगी अधिनियम और १९४८ का न्यूनतम मजदूरी अधिनियम पारित किए हैं। इनका उल्लेख औद्योगिक धर्मियों की मजदूरी अध्याय ११ में किया गया है। सामाजिक सुरक्षा के मुख्य अधिनियम निम्नलिखित हैं १९२३ का धर्मिक क्षति पूर्ति अधिनियम १९४८ का कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम १९४८ का नोयसा खान प्रोविडेंट फण्ड और बोनस योजना अधिनियम धर्मिक मातृत्व-हित-साम अधिनियम तथा १९३२ का धर्मिक प्रोविडेंट फण्ड अधिनियम। इन सबका उल्लेख 'भारत में सामाजिक सुरक्षा' वाले अध्याय १२ में किया जा चुका है। औद्योगिक सम्बन्धों के विषय में निम्न अधिनियम पारित किए गए हैं १९४७ का औद्योगिक विवाद अधिनियम १९४६ का बम्बई औद्योगिक सम्बन्ध अधिनियम १९४७ का उत्तर प्रदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम और १९५० का औद्योगिक विवाद (प्रौद्योगिक अधिकरण) अधिनियम। इन सबका विस्तृत वर्णन औद्योगिक विवाद नाम अध्याय ७ में औद्योगिक विवाद विधान के अन्तर्गत किया जा चुका है। उही अध्याय में १९४६ के औद्योगिक राजगार (स्वामी प्रादेश) अधिनियम का भी उल्लेख किया गया है। १९२६ के भारतीय धर्मिक संघ अधिनियम जिसमें १९४७ तथा १९६० में संशोधन किया गया का उल्लेख भी धर्मिक संघ अधिनियम अध्याय १ में किया जा चुका है। श्रमप्रस्तता के सम्बन्ध में विधान का उल्लेख सोमहर्षे अध्याय में किया गया है। आवास के सम्बन्ध में वैधानिक उपबन्धों का उल्लेख अध्याय ९ में किया गया है। काम धर्मियों के सम्बन्ध में १९३३ का बाल (धर्म अनुबन्ध) अधिनियम तथा १९३८ का बाल धर्मिक रोजगार अधिनियम पारित किए जा चुके हैं। इनका वर्णन 'बाल और स्त्री धर्मियों' के अध्याय में किया जाएगा। राजगार कानून (रिक्त स्थानों की प्रतिवार्य मूचना) अधिनियम का उल्लेख धर्मियों के अध्याय ३ में किया जा चुका है। धर्म सम्बन्धी कुछ अन्य अधिनियम निम्न लिखित हैं —

१९४२ का औद्योगिक सांख्यिकी अधिनियम —

(Industrial Statistics Act, 1942)

१९४२ में सरकार ने औद्योगिक सांख्यिकी अधिनियम पारित किया जिसमें निम्नलिखित विषया से सम्बन्धित प्रावधानों को एकत्रित करने का उद्देश्य है (क) कारखानों से सम्बन्धित कोई भी विषय (ख) वस्तुओं के मूल्य उपस्थिति आकाम और रहने की दगायें श्रमप्रस्तता मकानों का किराया मजदूरी और कानून प्रोविडेंट तथा धर्म्य विधियाँ साम के मुविषाण कार्य के घण्टे, रोजगार और बरोजगारी तथा औद्योगिक व धर्मिक विवाद आदि धर्म धर्म बगायों और कल्याण से सम्बन्धित विषय। अधिनियम राज्य सरकारों द्वारा नियुक्त सांख्यिकी प्राधिकारियों को यह अधिकार देता है कि वह आवश्यक व्यौरों की मांग कर सकें तथा सम्बन्धित कायद-पत्रों की जांच पड़ताम कर सकें। मूचना देने से मना करने अथवा अनन्य

सूचना देने पर दण्ड की व्यवस्था भी की गई थी। अधिनियम को लागू करने के विषय में केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रदेशीय सरकारों को निर्देश देने की व्यवस्था भी।

१९४२ में प्रदेशीय सरकारों से २६ उद्योगों की सूची उत्पादन लागत और उत्पादन मात्रा के सम्बन्ध में सूचना एकत्रित करने को कहा गया। बाद में ३४ और उद्योगों को सम्मिलित कर लिया गया था। परन्तु यह अनुभव किया गया कि अधिनियम और अधीन देने के धर्म सरस होते हुए भी ध्यौर संठापकमक रूप से नहीं लिए गए। सरकार ने यह निर्णय किया कि इस योजना को अन्य उद्योगों तक विस्तृत कर दिया जाय तथा औद्योगिक विद्यार्थों व अन्य भागों के सम्बन्ध में भी सूचना एकत्रित की जाए। सरकार ने १९५१ में मसूने के तौर पर कुछ नियमों के मसौदे तैयार किए और इनमें प्रदेशीय सरकारों को धनाने के लिए भेजा। इन नियमों को औद्योगिक सांख्यिकी अधिनियम के नाम से जाना जाता है। इनके आधार पर अनेक प्रदेशीय सरकारें नियम बनाकर प्रकाशित कर चुकी हैं।

१९५३ का सांख्यिकी को एकत्रित करने का अधिनियम -

(The Collection of Statistics Act, 1953)

१९४२ के औद्योगिक सांख्यिकी अधिनियम को निरस्त कर दिया गया और अब उसके स्थान पर अपेक्षाकृत अधिक व्यापक १९५३ का सांख्यिकी एकत्रित करने का अधिनियम पारित किया गया है। इस अधिनियम का उद्देश्य उद्योग व्यापार और वाणिज्य के सम्बन्ध में विविध प्रकार की सांख्यिकी को एकत्रित करना है। सांख्यिकी के एकत्रित करने के सम्बन्ध में इसके उपबन्ध लगभग वैसे ही हैं जैसे १९४२ के अधिनियम में थे। परन्तु नये अधिनियम में सांख्यिकी एकत्रित की जाने वाली इकाइयों की संख्या बढ़ा दी गई है। सूची में अधिकावर्त और धनिक संघों के विषयों को भी जोड़ दिया गया है। केन्द्रीय सरकार स्वयं भी यदि चाहे तो सांख्यिकी एकत्रित कर सकती है। जम्मू व काश्मीर राज्य को छोड़कर अधिनियम सारे भारत में लागू होता है। अधिनियम १० नवम्बर १९५३ से लागू किया गया है और इसके अन्तर्गत नियम भी बना दिये गए हैं।

अमजीबी पत्रकार (नीकरी की शर्तों व विविध उपबन्ध) अधिनियम १९५५ - [The Working Journalist's (Conditions of Service and Miscellaneous Provisions) Act, 1955]

यह अधिनियम २ दिसम्बर १९५५ में लागू हुआ। अधिनियम के महत्वपूर्ण उपबन्ध बैठन बोर्डों की नियुक्ति उनका निर्माण और अधिकारों से सम्बन्धित हैं। अमजीबी पत्रकारों के लिए बैठन की शर्तों को निर्धारित करते समय बोर्ड को इस बात का ध्यान रखकर चलना होगा कि अन्य तुलनात्मक शौकियों में निर्वाह लागत और मजदूरी विलम्बी है। बिना समय तक बैठन बोर्ड की रिपोर्ट प्रकाशित न हो उच्च समय तक सरकार को बैठन की अन्तिम शर्तें निर्धारित करने का अधिकार है। यदि

छुटनी करनी है तो यह आवश्यक है कि मासिक सम्पादन का ९ माह का तथा अन्य अमजीबी पत्रकारों को ३ माह का पूर्ण मोटिस दें। मृत्यु अवकाश प्राप्ति त्याग पत्र और सेवा समाप्ति के मामलों में मासिकों को निर्धारित दर पर अवकाश प्राप्ति बन देना होगा। उन सभी समाचार पत्र संस्थानों में जहाँ २० या अधिक अमजीबी पत्रकार कार्य करते हैं १९५२ के धमिक प्रोविडेंट फण्ड अधिनियम तथा १९४६ के औद्योगिक राजस्व (स्वायी प्रादेश) अधिनियम को लागू कर दिया गया है। अधिनियम में यह व्यवस्था है कि अगर सगाठार सप्ताहों में किसी पत्रकार से अधिक से अधिक १४४ घंटे काम लिया जा सकता है। अधिनियम में पत्रकारों के लिए साप्ताहिक छुट्टी धार्मिक छुट्टी अतिरिक्त छुट्टी और बीमारी की छुट्टी प्रदान करने की भी व्यवस्था है। यदि मासिक पर धमिक के किसी अन की रोगाण्टी है तो उसकी उजाही उसी प्रकार से हो सकती है जैसे मासगुजारी के बकाया की होती है। १९५३ के अमजीबी पत्रकार (औद्योगिक विवाद) अधिनियम को निरस्त कर दिया गया है और इसके उपबन्धों को नए अधिनियम में समायोजित कर लिया गया है। अप्रैल १९५६ से अधिनियम के प्रयासन का शक्ति सूचना एक प्रसार मन्त्रालय से हटाकर पत्र मन्त्रालय को स्वामान्तरित कर दिया गया है। मई १९५६ में अमजीबी पत्रकारों के सिने बेटन दरों का निर्धारण करने के हेतु एक बतन बोर्ड बनाया गया। परन्तु बेटन बोर्ड के निर्णयों को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 'अर्थ और मुख्य जोषित कर दिया गया। इसके परिणामस्वरूप जून १९५८ में पहले एक सम्पादन जारी किया गया और फिर इसके स्थान पर सितम्बर १९५८ में अमजीबी पत्रकार (बेटन दरों का निर्धारण) अधिनियम पारित किया गया। अधिनियम में कर्णीय सरकार द्वारा अमजीबी पत्रकारों के लिए बेटन दरों का निर्धारण करने के हेतु एक समिति बनाने की व्यवस्था की (देखिए पृष्ठ ३२३)। यह समिति स्थापित की गई और इसने अपनी सिफारिशों भी प्रस्तुत कर दीं। सरकार ने इन सिफारिशों को कुछ स्वीकारण के पश्चात् स्वीकार कर लिया है। अमजीबी पत्रकारों के लिए फिर से बेटन बोर्ड नियुक्त करने की माँग की जा रही है।

गिरुता अधिनियम १९६१ (The Apprenticeship Act, 1961) —

इस अधिनियम का उद्देश्य यह है कि विभिन्न व्यवसायों में गिरुतों को प्रशिक्षण तथा उनमें सम्मिलित अन्य बातों पर नियन्त्रण किया जाय। इस अधिनियम के मुख्य उपबन्ध गिरुता की योग्यताओं गिरुता के संबन्ध (Contract) गिरुता की अवधि गिरुता संबन्ध की समाप्ति गिरुता संबन्ध का नवीनीकरण (Novation) गिरुतों का प्रशिक्षण आदि के नियम निर्धारित करने के सम्बन्ध में हैं। केन्द्रीय गिरुता परिषद् (Central Apprenticeship Council) की सहाय से कर्णीय सरकार यह निर्धारित कर सकती है कि विद्यार्थी व्यवसायों में कृत धर्मियों में से (जिनमें अकुशल (Unskilled) धर्मिक सम्मिलित नहीं होंगे) गिरुतों का प्रयुक्त क्या होगा। जिन किमी मस्थान में ३०० से कम धमिक मासिकों द्वारा रोजगार पर

का वर्णन एक घण्टा अध्यास में किया जाएगा। निर्माण उद्योग में लगे धर्मिकों के लिए विद्यालय बनाने के विचार को अब रसायन दिया गया था क्योंकि ऐसी धर्मिक ग्रन्थ विभिन्न कानूनों के अन्तर्गत आ जाते हैं। परन्तु सरकार अब फिर इनके लिए घण्टा से विद्यालय बनाने के सुझाव पर विचार कर रही है। कुछ बड़े सड़कों में बरेलू नौकरों के स्वयं को संरक्षित कर लिया है और अब अपने लिए कुछ वैधानिक सुरक्षा पाने के लिए आन्दोलन कर रहे हैं। देहली में बरेलू नौकरों की समस्या का समाधान करने के लिए एक समिति की नियुक्ति की गई है।

सुझाव और उपसंहार —

धर्म विधान के सम्बन्ध में सबसे पहली आवश्यकता यह है कि विभिन्न राज्यों के अनेक धर्मनियमों को समायोजित किया जाय विधान की धर्मिकों के कुछ ग्रन्थ बनाएँ तक विस्तृत किया जाय तथा धर्मिकों को और अधिक सुरक्षा प्रदान की जाय। अब तक देश के धर्म कानूनों में समानता नहीं है। इसका कारण यह है कि धर्म संविधान को केन्द्रीय राज्य और समबर्ती दोनों ही सूत्रियों में रक्त दिया गया है जिसके परिणामस्वरूप विधान बनाने में मिश्रता आ जाती है। इन असमायोजित धर्म कानूनों और धर्मनियमों का दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम यह हुआ है कि उद्योग एक स्थान से दूसरे और दूसरे से तीसरे स्थान में प्रवचन कर जाते हैं और उद्योगों का विकास ऐसे क्षेत्रों में हो जाता है जो कि सामान्यतः उनके लिए उपयुक्त नहीं होते परन्तु वहाँ धर्म कानून कम होने के कारण उद्योग स्थापित हो जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि देश के औद्योगिक छात्रों का बड़ा अंशमान और अनुपयुक्त विकास होता है। धर्म की प्रकृति भी एक स्थान से दूसरे स्थान में प्रवास करने की हो जाती है और इसका प्रभाव यह होता है कि देश में धर्मिकों की अवस्था में सुधार होने की संभावना दबाने और भी अधिक शोचनीय हो जाती है।

वही नहीं बल्कि धर्म कानूनों के प्रशासन में भी समानता होनी चाहिए। कुछ राज्यों में तो कानूनों का कठोरता से पालन किया जाता है और कुछ में इस सम्बन्ध में अविश्वसनीयता पाई जाती है। इसके कारण प्रभावितता के अन्तर्गत ही परिणाम प्रकट होने लगते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन के संविधान की दृष्टिकोण से उल्लेख है कि "किन्नी भी राष्ट्र की धर्म के लिए मानवोपयुक्त अवस्थाओं को अपनाते हैं अथवा उद्योग धर्म राज्यों के मार्ग में भी बाधा बन जाती है जो अपने देश में अर्थों को सुधारना चाहते हैं।" अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अब धर्म विधान में समानता की इतनी आवश्यकता है कि भारत जैसे देश में भी समानता की और भी अधिक आवश्यकता है।

इन सम्बन्ध में श्री ए० बी० बसा का कथन है कि "धर्मिक वर्ग को किस भीता तक मुक्त प्रदान की जाती है यह इस बात से प्रमाणित नहीं होती कि उनके लिए बनाए गए धर्म कानूनों की संख्या कितनी है बल्कि यह इस बात पर निर्भर है कि ऐसे विस्तृत विधान हैं जिनका उचित प्रकार से प्रशासन किया जाता है तथा किन्हीं भीता तक उनके उपबन्धों की जाहू किया जाता है।" यह उभर बताया था कि

कि अधिकांश उद्योगों में मासिकों द्वारा अधिकांश थम कानूनों का किस प्रकार अपबन्धन किया जाता है। प्रशासन के लिए उत्तरदायी अधिकारियों द्वारा भी अधिकांश थम कानूनों को उचित प्रकार से लागू नहीं किया जाता है। अधिनियमों को लागू करने की व्यवस्था में न केवल सुधार किया जाना चाहिए बल्कि इनका विस्तार करना भी आवश्यक है। इसके अतिरिक्त प्रशासन अधिकारियों से अधिनियम के उन दोषों व कमियों को जानने के लिए परामर्श लिया जाना चाहिए जिनके कारण मासिक कानून से बचने के लिए साध उठाते हैं और फिर अधिनियम में इन दोषों को दूर करने के लिए संशोधन कर देना चाहिए। बंगाल में १९३१ के अधिनियम के दायित्व से बचने के लिए मासिकों द्वारा अनेक बागों का विभाजन किया जा रहा है। हुकान अधिनियम में थमिकों की नौकरी की सुरक्षा की कोई व्यवस्था नहीं है और इसके कारण थमिक मासिकों के विरुद्ध गवाही देने में हिचकते हैं। कानून का अपबन्धन के लिए प्रबन्ध उसे टासने के लिए कठोर दण्ड दिया जाना चाहिए। अब एक कम्पनी म्यूचुअल तथा कार्याभिति प्रभाव की व्यवस्था केन्द्र और राज्यों में कर भी गई है जिसका उद्देश्य यह है कि थम विधान विभाजन निर्णय संपत्ता नियमों मासिक मजदूर करार आदि के कार्याभिति की ओर ध्यान रखा जाय। (दिसिमे पृष्ठ १७४)

एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह ध्यान में रखनी चाहिए कि बीवामिक उपबन्ध थमिकों की रक्षि और घादतों को ध्यान में रखते हुए बनाए जाए। उदाहरण के लिए कोयला खानों में थमिकों के लिए खानों के ऊपर स्नानगृहों की व्यवस्था है। परन्तु अनेक स्थानों पर उनका निर्माण योरोपियन ढंग से किया गया है जिसके कारण थमिकों में बह सोचप्रिय नहीं हो पाये हैं। ऐसे बागों को दूर करना चाहिए।

स्वतंत्रता प्राप्ति और जनप्रिय उत्तरदायी सरकार की स्थापना के पश्चात् थम समस्याओं के प्रति सरकार का दृष्टिकोण अधिक सहानुभूतिपूर्ण हो गया है। थमिकों के जीवन स्तर को ऊँचा करने तथा सामाजिक न्याय की प्राप्ति के लिए जो पय उठाए जाने आवश्यक हैं उनके लिए सरकार ने अपने उत्तरदायित्व को भलीभाँति अनुभव कर लिया है। थमिकों को साम्यता देने में एक नए प्रकार की यह भावना धा गई है कि थमिक उद्योग में एक अवर (Junior) साथी नहीं है जिसे केवल निर्वाह मजदूरी ही मिलनी चाहिए बल्कि उत्पादन में उसका स्थान पूर्यीपदियों के साथ बराबर का है और वह उद्योग के लाभ में बराबर का हिस्सा पाने का अधिकारी है। सरकार के इन उत्तरदायित्व का भारत के संविधान में भी उल्लेख किया गया है। इन धायामी बगों में यह धायामी की जा सकती है कि गिस्पी और इपि थमिकों जैसे थमिक बगों तक कानूनी सुरक्षा का विस्तार धीरे धीरे कर दिया जाएगा तथा रोजगार में सपी हुई जनसंख्या के सभी महत्वपूर्ण ढग सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र के अन्तर्गत धीरे धीरे धा जायेगे और नियमित रूप में थम सुरक्षा के स्तरों को ऊँचा उठा कर देव के थम विधान को अन्तर्राष्ट्रीय थम गतिता के उपबन्धों के अनुभव बना दिया जाएगा।

ब्रिटेन में श्रम विधान

(Labour Legislation in Britain)

प्रारम्भिक इतिहास और अधिनियम—

इप्लैन्ड में औद्योगिक क्रांति के पश्चात् कारखाना प्रणाली का प्रादुर्भाव हुआ। इससे पूर्व संरक्षकों वर्षों तक इप्लैन्ड में श्रम की बजाए प्रारम्भ में स्थानीय और फिर बाद में राष्ट्रीय कानूनों द्वारा विनियमित होती थी। कुछ सीमा तक शक्ति बर्न की बजाए चीति-रिबानों द्वारा भी निर्धारित होती थी जिनका प्रभाव कानून बँसा ही था। मध्य युग में भी उद्योगों पर राज्य का बोझ बहुत निरीक्षण और नियंत्रण था। १३६१ के श्रमिक विधान (Statute of Labourers) द्वारा मजदूरी को विनियमित करने का प्रयत्न किया गया था। १३८८ में 'जस्टिसेज आफ पीस' (Justices of Peace) को अपने-अपने जिलों में मजदूरी निर्धारित करने का अधिकार दे दिया गया था। सोलहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में विशेष उद्योगों से सम्बन्धित अनेक कानून पारित किये गये परन्तु वे निष्क्रिय ही रहे। कुछ कानून स्वतन्त्रता के अर्थियों के प्रयासों से सम्बन्धित थे। १५३७ में एक विधान पारित किया गया जिसके अन्तर्गत स्वतन्त्रता के अर्थियों (Craft Guilds) के लिए यह आवश्यक हो गया कि वह अपने नियमों को अनुमोदन हेतु 'जस्टिसेज आफ पीस' के सम्मुख प्रस्तुत करें। १५६४ में इन अर्थियों को न्यायाधीशों के सम्मुख अपने नियमों को प्रस्तुत करने का आदेश दिया गया। न्यायाधीशों को यह अधिकार था कि वह किसी भी ऐसे नियम को रद्द कर सकते थे जिस पर उन्हें आपत्ति हो।

१५६३ में एक महत्वपूर्ण विधान 'शिल्पकारों का विधान' (Statute of Artificers) जिसे 'शिषुओं का विधान' (Statute of Apprentices) भी कहा जाता था पारित किया गया। इसका उद्देश्य यह था कि श्रमिक शिल्पियों के लिए कृषक शिक्षा की व्यवस्था की जा सके। इसी श्रमिक परम्परा में उपलब्ध होते रहे मजदूरी की दर नियमित हो जाय और समय के विचारों और आवश्यकताओं के अनुसार एक पूर्ण औद्योगिक संस्था बनाई जाए। १२ से १० वर्ष तक की आयु के सब शारीरिक रूप से योग्य (समर्थ) व्यक्तियों को इसी कार्य पर लगाया जा सकता था यदि वह किसी अन्य व्यवसाय में नहीं जाये हुए होते थे या उनके पास एक निर्धारित मात्रा में सम्पत्ति नहीं होती थी। इस उद्देश्य से कि उद्योग निरन्तर रहे यह व्यवस्था की गई थी कि उद्योग व्यवसायों में एक साल से कम

की प्रवृत्ति के लिए किसी को मजदूरी पर नहीं लगाया जा सकता और नौकरी को समाप्त करने के लिए तीन माह का नोटिस देना होगा। उचित प्रकार का प्रशिक्षण देने के लिए तमाम व्यवसायों में सात सात की प्रवृत्ति तक प्रत्येक श्रमिक के लिए सिमु के रूप में कार्य करना अनिवार्य कर दिया गया। परन्तु यह प्रवृत्ति २१ वर्ष की आयु से पूर्व ही हो सकती थी। व्यवसाय का छूटाव भी कुछ हद तक सीमित था। कुछ व्यवसाय धनी प्रवृत्ति उच्च स्तर के परिवारों के युवकों के लिए सुरक्षित थे। जहाँ तक मजदूरी का सम्बन्ध है 'जस्टिसेज आफ पीस' को मजदूरी दरों को निर्धारित करने का अधिकार दिया गया था। इनके निर्णयों को मामिकों और श्रमिकों दोनों को ही मानना पड़ता था।

कारखानों में घोर शोचनीय दशाएँ —

जार्ज तृतीय के समय तक उद्योग संघों पर दस्तकारी श्रमियों का नियंत्रण समाप्त हो चुका था और शिशुओं प्रवृत्ति शिल्पकारों के विधान को भी लागू नहीं किया जाता था। प्रवृत्ति नीति के सिद्धान्त को साधारणतया स्वीकार कर लिया गया था और इस बात में पूर्ण रूप से विश्वास किया जाता था कि वर्ग-वर्ष में और हर वर्ग के व्यक्तियों के बीच में पूर्णरूप से स्वतन्त्र प्रतिस्पर्धा होने के अनेक लाभ थे। १८वीं शताब्दी के मध्य तक मजदूरी का निर्धारण एक घटीत की बात बन चुकी थी। संसद द्वारा १८१३ में मजदूरी के निर्धारण सम्बन्धी विधान के उपबन्धों को तथा १८१४ में शिशुओं की प्रावणकता सम्बन्धी विधान के उपबन्धों को निरस्त कर दिया गया। देश में बड़े पैमाने के कारखानों की स्थापना हो रही थी। कारखानों के निर्माण और सामान के सम्बन्ध में कोई भी राज्य का बन्धन प्रवृत्ति नियंत्रण लागू करने का प्रयत्न नहीं किया गया था। बहुत से कारखाने ऐसी इमारतों (भवनों) में बनाए गये थे जो इस उद्देश्य के लिए नहीं बनाई गई थीं और इनकी दशाएँ बहुत ही असंतोषजनक थीं। कारखानों का निर्माण विधेयतया इस प्रकार किया जाता था कि उनके मामिकों को अधिकतम लाभ हो और श्रमिकों के स्वास्थ्य, प्राणम मुक्ति और सुरक्षा पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। यदि प्राथमिक स्तरों से देखा जाए तो ऐसी इमारतें बहुत ही अपर्याप्त रोगानी वाली संघातनहीन गन्दी और भीड़ भाड़ वाली होती थीं। छतरलाक मशीनों के चारों ओर घेरा नहीं लगाया जाता था। गन्भीर और घातक दुर्घटनाओं का होना साधारण सी बात थी।

बास श्रमिक और उनकी दयनीय स्थिति —

कारखानों के मामिकों ने ही यह अनुभव किया कि स्त्रियों और बालकों में अधिकतम कार्य लिया जा सकता था और यह पुरुष श्रमिकों की प्रवेदा सस्ते पड़ते थे। १९०१ के निर्धन कानून (Poor Law) द्वारा यह प्रादेश दिया गया कि भिसमये बालकों को किसी व्यवसाय में शिशुओं के रूप में लगा देना चाहिए। प्रवृत्ति श्रमिकों के लिए यह साधारण बात हो गई कि वह कार्य भवनों (Work Houses) में जाने से और भिगवने बालकों की टोमियाँ की टोमियाँ शिशुओं के रूप में भंगी कर

ब्रिटेन में श्रम विधान (Labour Legislation in Britain)

प्रारम्भिक इतिहास और अधिनियम—

इ गल्लिय में औद्योगिक क्रांति के पश्चात् कारखाना प्रणाली का प्रादुर्भाव हुआ। इससे पूर्व संकरीं वर्षों तक इ गल्लिय में श्रम की दशाएँ प्रारम्भ में स्थानीय और फिर बाद में राष्ट्रीय कानूनों द्वारा विनियमित होती थीं। कुछ चीजाँ तक श्रमिक वर्ग की दशाएँ रीति-रिवाजों द्वारा भी निर्धारित होती रहीं जिनका प्रभाव कानून जैसा ही था। मध्य युग में भी उद्योगों पर राज्य का थोड़ा बहुत नियंत्रण और नियंत्रण था। १३५१ के श्रमिक विधान (Statute of Labourers) द्वारा मजदूरी को विनियमित करने का प्रयत्न किया गया था। १३८८ में 'जस्टिसेज आफ पीस' (Justices of Peace) को अपने-अपने जिलों में मजदूरी निर्धारित करने का अधिकार दे दिया गया था। सोसहरी शताब्दी के प्रारम्भ में विशेष उद्योगों से सम्बन्धित अनेक कानून पारित किये गये परन्तु वे निष्क्रिय ही रहे। कुछ कानून दस्तकारी श्रमियों के प्रदायन अधिकारों से सम्बन्धित थे। १४३७ में एक विधान पारित किया गया जिसके अन्तर्गत दस्तकारी श्रमियों (Craft Guilds) के लिए यह आवश्यक हो गया कि वह अपने दिवनों को अनुमोदन हेतु 'जस्टिसेज आफ पीस' के समक्ष प्रस्तुत करें। १५०४ में इन श्रमियों को न्यायाधीशों के सम्मिलित अपने नियमों को प्रस्तुत करने का आदेश दिया गया। न्यायाधीशों को यह अधिकार था कि वह किसी भी ऐसे नियम को रद्द कर सकते थे जिस पर उन्हें आपत्ति हो।

१५६३ में एक महत्वपूर्ण विधान 'शिल्पकारों का विधान' (Statute of Artificers) जिसे 'शिमुनों का विधान' (Statute of Apprentices) भी कहा जाता था पारित किया गया। इसका उद्देश्य यह था कि ग्रामीण शिल्पियों के लिए कुशल गिरावट की व्यवस्था की जा सके, कृपि श्रमिक पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते रहें, मजदूरी को दर नियमित हो जाय और समय के विचारों और आवश्यकताओं के अनुकूल एक पूर्ण औद्योगिक संविदा बनाई जाय। १२ से १० वर्ष तक की आयु के सब शारीरिक रूप से योग्य (समर्थ) व्यक्तियों को कृपि कार्य पर लगाया जा सकता था यदि वह किसी ग्राम्य व्यवसाय में नहीं जाने हुए होते थे या उनके पास एक निर्धारित मात्रा में सम्पत्ति नहीं होती थी। इस उद्देश्य से कि रोजगार निरन्तर रहे यह व्यवस्था की गई थी कि सब व्यवसायों में एक साल के कम

की प्रवृत्ति के लिए किसी को मजदूरी पर नहीं लगाया जा सकता और नौकरी को समाप्त करने के लिए तीन माह का नोटिस देना होगा। उचित प्रकार का प्रशिक्षण देने के लिए उच्चम व्यवसायों में साठ साल की प्रवृत्ति तक प्रत्येक व्यक्ति के लिए शिक्षु के रूप में कार्य करना अनिवार्य कर दिया गया। परन्तु यह प्रवृत्ति २१ वर्ष की आयु से पूर्व ही हो सकती थी। व्यवसाय का छूटाना भी कुछ हद तक सीमित था। कुछ व्यवसाय धनी प्रवृत्ति उच्च स्तर के परिवारों के युवकों के लिए मुरतित थे। वहाँ तक मजदूरी का सम्बन्ध है 'बस्टिन्ज प्राफ पीस' को मजदूरी दरों को निर्धारित करने का अधिकार दिया गया था। इनके निर्णयों को मासिकों और श्रमिकों दोनों को ही मानना पड़ता था।

कारखानों में घोर शोचनीय दशाएँ —

वर्ष तृतीय के समय तक उद्योग धर्मों पर दम्नकारी शक्तियों का नियंत्रण समाप्त हो चुका था और शिक्षुओं प्रवृत्ति विधायकों के विधान को भी सामु नहीं किया जाता था। प्रवृत्ति नीति के सिद्धान्त को साधारणतया स्वीकार कर लिया गया था और इस बात में पूर्ण रूप से विद्वान्त किया जाता था कि वर्ग-वर्ग में घोर हद वर्ग के व्यक्तियों के बीच में पूर्णरूप से स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा होने के अनेक लाभ थे। १८वीं शताब्दी के मध्य तक मजदूरी का निर्धारण एक शर्तित की बात बन चुकी थी। सन १८१३ में मजदूरी के निर्धारण सम्बन्धी विधान के उपबन्धों को तथा १८१४ में शिक्षुओं की प्रावण्यता सम्बन्धी विधान के उपबन्धों को निरस्त कर दिया गया। देश में बड़े पैमाने के कारखानों की स्थापना हो रही थी। कारखानों के निर्माण और सामान के सम्बन्ध में कोई भी राज्य का दम्न प्रवृत्ति नियंत्रण लागू करने का प्रयत्न नहीं किया गया था। बहुत से कारखाने एसी इमारतों (मकनों) में बनाए गये थे जो इस उद्देश्य के लिए नहीं बनाई गई थीं और इनकी दशाएँ बहुत ही शर्तितोषजनक थीं। कारखानों का निर्माण विशेषतया इस प्रकार किया जाता था कि उनका मासिकों को अधिकतम लाभ हो और श्रमिकों के स्वास्थ्य प्रायम मुक्ति और सुरक्षा पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। यदि प्राबुनिक स्थलों से देखा जाए तो ऐसी इमारतें बहुत ही अपर्याप्त रोमनी वाली सजावतहीन गन्दी और नौद मरुद वाली होती थीं। रात-रात मशीनों के चारों ओर घेर नहीं लगाया जाता था। गम्भीर और पावन दुर्घटनाओं का होना साधारण सी बात थी।

बाल श्रमिक और उनकी शयनीय स्थिति —

कारखानों के मासिकों ने शीघ्र ही यह अनुभव किया कि शिशुओं और बालकों में प्रतिक्रम कार्य लिया जा सकता था और यह पुराने श्रमिकों की प्रवृत्ति सस्ते पड़ते थे। १६०१ के निर्धन कानून (Poor Law) द्वारा यह धारित किया गया कि मिश्रममे बालकों को किसी व्यवसाय में शिक्षुओं के रूप में सजा देना चाहिए। प्रवृत्ति श्रमिकों के लिए यह साधारण बात हो गई कि वह कर्म मकनों (Work Houses) में जाने थे और मिश्रममे बालकों की टोलियाँ की टोलियाँ शिक्षुओं के रूप में प्रवृत्ति कर

सिंते थे। इन बालकों को कारखानों में से बाया जाता था और इनसे दिन में १२ से १६ बच्चों तक का काम लिया जाता था। उनको रविवार तक की छुट्टी नहीं दी जाती थी और इस दिन उन्हें साधारणतया विमनियों को साफ करना पड़ता था। कई बार विमनी के नीचे प्राण बला भी जाती थी ताकि बालक उपद्रव के लिए विमनी के ऊपर तक बढ़ जायें। पुत्र के कारण बहुत से बालकों की मृत्यु हो जाती थी। बालकों के लिए कारखानों के मालिकों की ओर से मोजन रुपये और रहने की व्यवस्था तो होती थी परन्तु कुछ मालिकों को छोड़कर अधिकतर मालिक बाल श्रमिक प्रणाली को साम का ही साधन समझते थे। बालकों को कार्य के लिए घोबरसिपरी के घसीम समायोजित किया था। इन घोबरसिपरी का वेतन बालकों से लिए गए काम की मात्रा पर निर्भर होता था। घट- बालकों को छोड़े लगाए जाते थे बेहियां बांधी जाती थीं और सजाया जाता था। साधारणतया उनका हर प्रकार से दमन होता था और उनके साथ क्रूर व्यवहार किया जाता था। उनकी व्यवस्था अमरीका में उन दिनों के वास प्रयास वाले राज्यों से भी अधिक खराब थी।

कारखानों में काम करने वाले बाल श्रमिकों की दयनीय दशा की वास्तविकता की ओर जनसाधारण का ध्यान नहीं गया था। जब इनके विषय में जनता को बात भी हुआ तब भी इस बात से उन्हें कोई चिन्ता नहीं हुई कि १, ६ या ७ वर्ष की आयु के बालक कारखानों में काम करते थे। यह विचार तो प्राथमिक समय में ही आया है कि श्रमिक वर्ग के बालकों को १४-१५ वर्ष की आयु तक पीबिकोपार्जन के कार्य में नहीं लगाया जाहिए और तब तक उनका समय खेल पढ़ाई व मनोरंजन में ही व्यतीत होना चाहिए। कारखाना प्रणाली के पूर्व भी बाल श्रमिक पाए जाते थे। तीन-तीन बार-बार वर्ष के सामूहिक बच्चों तक से यह धारणा की जाती थी कि वह कपड़ा बुनने के कार्य तथा कुटीर नमोनों की सरल प्रक्रियाओं में मदद देंगे। घट कारखानों में बाल श्रमिकों को कार्य पर लगाना कुछ नहीं समझा जाता था।

बैधानिक सुरक्षा प्रदान करने के विचार का विकास —

फिर भी जैसे-जैसे समय बीता और कारखानों में कार्य करने वाले बाल श्रमिकों की दयनीय व्यवस्था का पता चला जनसाधारण की सहानुभूति इन बालकों की ओर जागृत हो गई। उधार हृदय पुरुषों और स्त्रियों को यह ध्यान आया कि यदि बालकों को काम पर लगाया भी जाता था फिर भी उन पर प्रत्याचार करने कम प्रयत्न करने और लम्बे बच्चों तक काम करने का तो कोई व्यापारिक धारणा नहीं थी। परन्तु ऐसे धर्मशास्त्री व राजनीतिक जो धर्मशास्त्री के सिद्धान्त में विरवास रखते थे राज्य शासक को प्रवृत्त समझते थे और जाहते थे कि उद्योगों को स्वतन्त्र छोड़ दिया गया। परन्तु पीछे ही इन बात को मान लिया गया कि यह बात धर्मशास्त्री के प्रतिबन्ध नहीं होती कि सरकार हस्तक्षेप करे और इन लोगों की सहायता करे जो उचित रूप से अपने लिए मोटा करने की परिस्थिति में नहीं थे क्योंकि इस एक

गायबान बस्तु है और धर्मिक प्रतीक्षा नहीं कर सकते और भासिकों से समान स्तर पर सीना करने की परिस्थिति में नहीं होते ।

मैनचेस्टर में १७८४ में न्यायाधीशों के एक प्रस्ताव में सकायावर के कारखानों में व्याप्त बुराईयों की और ध्यान आकषिप्त किया गया । कारखानों में काम करने वाले बाल धमिकों की अवस्थाओं की जांच करने के लिए १७६५ में मैनचेस्टर में एक स्वास्थ्य बोर्ड की स्थापना की गई । इसने अपनी रिपोर्ट में यह बताया कि प्रचलित दवायों बालकों के सामान्य स्वास्थ्य के लिए हानिकारक थीं और बालकों को न तो किसी प्रकार की शिक्षा मिलती थी और न ही नतिक व धार्मिक उपदेश लिए जाते थे तथा उनसे सम्बन्धों तक काम लिया जाता था ।

१६वीं शताब्दी में धनेन कारखाना अधिनियम पारित किए गए । उनका उद्देश्य केवल उन व्यक्तियों को ही सरक्षण प्रदान करना था जिनको रोजगार की दवायों की व्यवस्था करने में सहायता और सरक्षण की आवश्यकता होती थी । प्रथम प्रारम्भ में कानून केवल शिशुओं पर ही लागू होता था और यह १६वीं शताब्दी के मध्य तक धनुमब नहीं किया गया कि बच्चों को भी सरक्षण की आवश्यकता थी ।

१८०२ का प्रथम कारखाना अधिनियम —

१८०२ में प्रथम कारखाना अधिनियम पारित किया गया । यह शिशुओं के स्वास्थ्य और चरित्र अधिनियम (Health and Morals of Apprentices Act) के नाम से जाना जाता था और केवल मूठी व ऊनी कारखानों के शिशुओं में सम्बन्धित था । उनके कार्य के घंटों को प्रतिदिन १२ तक सीमित कर दिया गया और उनको रात्रि में ६ बजे के पश्चात् कार्य पर रोका भी नहीं जा सकता था । ६ वर्ष से कम आयु के बालकों का कारखानों में काम करना निषेध कर दिया गया । जिन कारखानों में बालक कार्य करते थे उनकी दीवारों पर सफेदी करानी आवश्यक थी और इमारत में पर्याप्त हवा और प्रकाश की व्यवस्था करनी होती थी । बाल धमिकों को प्रारम्भिक और धार्मिक शिक्षा की सुविधायें भी प्रदान करनी होती थीं । कारखानों का निरीक्षण करने और अधिनियमों का उन्मूलन करने की रिपोर्ट देने के लिए निरीक्षक नियुक्ति किए गए थे ।

१८०२ का अधिनियम द्वारा समस्या का केवल छोर ही पकड़ा जा सका था और यह अधिनियम बहुत अधिक प्रभावकारक नहीं था । बल्कि धमिकों के बेटन होने कम थे कि उन्हें मजबूर होकर अपने बालकों को रोजगार पर लगाना पड़ता था । यदि बालकों से सम्बन्धों तक काम लिया जाता था और उनका साथ क्रूर व्यवहार भी किया जाता था तो भी माता पिता विरोध करने का साहस नहीं कर सकते थे कि नहीं उन्हीं की नजरों मुभीबत में न पड़ पाए । हाउस ऑफ़ बामन्स में सर रोबर्ट पीन ने बालकों की दशा से सम्बन्धित एक विधेयक प्रस्तुत किया और उनकी अवस्थाओं की जांच करने के लिए एक समिति की भी नियुक्ति की गई ।

रोबर्ट घोबन ने भी समस्त कारखानों पर ब्रुद्ध निरिषिक्त बच्चनों को लागू करने पर जोर दिया। रोबर्ट घोबन का म्यू मेमार्क में स्वयं का कारखाना एक आदर्श माना जाता था जिसमें १० वर्ष से कम का कोई बालक रोजगार पर नहीं लगाया जाता था और जिसमें कार्य के घंटे भी उचित थे।

१८१६ का कारखाना विनियम अधिनियम —

१८१६ में कारखाना विनियम अधिनियम पारित किया गया। सूती उद्योग में इस अधिनियम द्वारा ६ वर्ष से कम आयु के बालकों को लगाया निषेध कर दिया गया। ६ वर्ष से लेकर ११ वर्ष तक की आयु के बच्चनों को दिन में १२ घंटे से अधिक या रात्रि ८ बजे से प्रातः ५ बजे तक किसी भी समय रोजगार पर नहीं लगाया जा सकता था। भोजन के लिए १३ बजे के मध्याह्नर की व्यवस्था भी की गई थी।

यह अधिनियम भी अप्रत्याप्त र्थ से लागू किया गया और इसका उरमता में उत्सव मन किया जा सकता था। कारखाना विधान के विरोधियों ने यह ठर्क प्रस्तुत किया कि बालकों को काम पर लगाने से रोकना बड़ी निर्बयथापूर्ण बात होगी क्योंकि यदि उन्हें काम करने की छात्रा न दी गई तो वह घूसे मर जायेंगे। उन्होंने यह भी ठर्क दिया कि यह बालकों के लिए अरघ्य ही था कि उन्हें काम पर लगाया जाता था और इस प्रकार उन्हें गम्भीर रूपित आरतों से दूर रखा जा सकता था।

१८२० और १६०० के बीच कारखाना अधिनियम —

कारखाना विधान बनाने के लिए आन्दोलन जारी रखा और १८२०, १८२५ तथा १८३० के अधिनियमों से कानून की क्रमशः विसृष्ट बाधधों में संशोधन हुआ। अतः १८३१ के अधिनियम द्वारा इस अधिनियम को निरस्त कर दिया गया। १८३१ के अधिनियम द्वारा सूती कपड़ा कारखानों में काम करने वाले १२ वर्ष से कम आयु के बालकों के कार्य के घंटे प्रतिदिन १२ और रविवार को ६ घंटे निर्धारित किए गए। २१ वर्ष से कम आयु के बालकों के लिए रात्रि-कार्य निषेध कर दिया गया। यह अधिनियम केवल सूती वस्त्र कारखानों पर ही लागू होता था और अधिक प्रभावशाली मित नहीं हुआ।

एक अन्य महत्वपूर्ण अधिनियम १८३३ का कारखाना अधिनियम था। यह पहला प्रभावशालक अधिनियम था जिसमें इसके उपबन्धों को लागू करने के लिए निरीक्षकों की व्यवस्था की गई थी। ऐसे निरीक्षक सरकार द्वारा नियुक्त किए जाते थे और उन्हें वेतन भी सरकार द्वारा ही मिलता था। रेसमी वस्त्र मिलों को छोड़कर यह अधिनियम सभी कपड़ा मिलों पर लागू होता था। ६ वर्ष से कम की आयु के बालकों को रोजगार पर लगाना इस अधिनियम द्वारा निषेध कर दिया गया। १३ वर्ष से कम आयु के बालकों के अधिकतम कार्य घंटे प्रतिदिन ६ एवं प्रति सप्ताह ४८ तथा १८ वर्ष से कम आयु के बालकों के प्रतिदिन १२ एवं प्रति सप्ताह ५६

निर्धारित किए गए। १८ वर्ष से कम की आयु के श्रमिकों को प्रति ८-१० बजे से प्रातः १-३० तक काम पर लगाना निषेध था। बास श्रमिकों को दिन में कम से कम दो बड़े स्कूंस खाना पड़ता था। एक साल में दो पूरी घोर घाठ घाबी छुट्टियाँ उन्हें ही जाती थीं। अधिनियम में चार कारखाना निरीक्षकों की नियुक्ति की व्यवस्था थी। जिन शोर्षों में कारखाने स्थापित होते थे उसी श्रेण के निवासी निरीक्षक नहीं रखे जाते थे। कानून का उल्लंघन करने वाले मासिकों पर यह निरीक्षक जुर्माना कर सकते थे। १८३३ के अधिनियम में जिन सिद्धान्तों को धपनाया गया था के काफी समय तक कारखाना अधिनियमों का आधार रहे। यही नहीं इनकी मकम भी दूसरे देशों ने की।

परन्तु १८३३ के अधिनियम में भी कुछ दोष थे और १८८६ में दूसरा कारखाना अधिनियम पारित किया गया। यह उन सभी कपड़ा मिलों पर लागू होता था जहाँ मशीनों का प्रयोग होता था। परन्तु यह अधिनियम इस दृष्टि से प्रतिकारी था कि इसमें बासकों के रोजगार की स्थूलतम आयु ८ वर्ष कर दी गई जबकि पहले अधिनियमों में यह ९ वर्ष थी। बासकों किशोरों और स्त्री श्रमिकों की शरणों को भी नियमित किया गया। ८ से १३ वर्ष तक की आयु के बासकों को प्रतिदिन ६½ घण्टे से अधिक कार्य पर नहीं लगाया जा सकता था और उन्हें ३ घण्टे स्कूल भी खाना पड़ता था। १३ से १८ वर्ष तक के किशोरों के कार्य के अधिकतम घण्टे प्रतिदिन १२ व प्रति सप्ताह ६९ निर्दिष्ट किए गए। स्त्री श्रमिकों के कार्य के अधिकतम घण्टे बुबकों के समान कर दिए गए। अठरनाक मशीनों के चारों घोर घण्टे समाना होता था तथा दुर्घटनाओं की सूचना निरीक्षकों को देनी होती थी। बिना बेरे वाली मशीनों से होने वाली दुर्घटनाओं घबवा चोटों के लिए अतिपूर्ति देनी होती थी। यद्यपि कारखाना निरीक्षकों के अधिकारों में वृद्धि कर दी गई थी परन्तु उनको जुर्माना करने के अधिकार से वञ्चित कर दिया गया। नियम मंजूर करने वाले मासिकों पर स्थानीय न्यायाधीशों के सम्मुख मुकदमा खसामा जाता था।

इस घण्टे का कार्य दिन लागू करने के लिए प्राप्तात्म घब भी बनता रहा। इसके परिणामस्वरूप १८४७ में एक कारखाना अधिनियम पारित किया गया। इसको १८४७ का इस कार्य घण्टे का कानून (Ten Hour Law) कहत थे। इस अधिनियम के अन्तर्गत कपड़ा मिलों में कार्य करने वाले किशोरों और स्त्री श्रमिकों के कार्य के घण्टे प्रति सप्ताह १८ तथा प्रतिदिन १० निर्धारित किए गए जब परिवार को आर्थिक छुट्टी ही जाती थी। परन्तु अधिनियम का निर्माण इस प्रकार के हुआ कि इसके द्वारा टोसी (Relay) प्रणाली को पुनः लागू करना सम्भव हो गया और पारी प्रणाली का प्रयोग करने वाले कारखानों में प्रातः ३½ से सायं ८½ तक काम होने लगा यद्यपि कार्य-दिन बढ़कर १५ घण्टे का हो गया। इसमें यह विरूप करना कठिन हो गया कि कानून का पालन किया भी जाता था घबवा नहीं। वास्तविकता यह थी कि घनेक कारखानों में इस अधिनियम का बचने का प्रयत्न किया जाता था। फलतः

१८१० में एक अन्य अधिनियम पारित किया गया। इनके द्वारा १८४७ के अधिनियम के अन्तर्गत धाने काय मनी अधिनियमों के कार्य के लिये प्रीम्प में प्राय ६ से कार्य ६ तक घोर घात में प्राय ७ के कार्य ७ तक निर्धारित कर दिए गए। इस अधिनियम द्वारा स्त्रियों एवं किशोरों के काम-काजों को भी निर्धारित कर दिया गया। १८३३ में विनियमों का कामकाज तक विस्तृत कर दिया गया। १८३० में इस अधिनियम के पारित होने का यह प्रभाव हुआ कि बपड़ा दिनों के सम्बन्ध में जो प्रबंध नीति का विद्वान् मानू किया जा रहा था वह समझम समाप्त हो गया।

उनके परवान् अनेक वर्षों तक कोई नया विधान नहीं बनाया गया। परन्तु मास्तरों द्वारा कारखाना कामगारों को निरस्त करने के प्रयत्न प्रचल जा रही रहे। नव जाल का भी अनुभव किया गया कि अन्य कारखानों में भी यम बजायों को विनियमित किया जाय। १८४३ में छोट (कपडा) के कारखानों में यम की बजायों को विनियमित करने के लिए एक अधिनियम पारित किया गया। १८६० और १८७० में बपड़े की रंगाई बुनाई और छपाई वाले कारखानों में भी यम की बजायों का विनियमित करने के लिए अधिनियम पारित किए गए। १८६२-६६ में एक रॉयल कमीशन ने पारित के अधिनियमों का प्रयोग न करने वाले बरत उद्योगों और गैर-बरत उद्योगों में यम बजायों की बाध की। इनके इन उद्योगों में काम अधिक लम्बे कार्य बटे व अस्वास्थ्यजनक अवस्थाओं की घोर संकेत किया। इन उद्योगों को दूर करने के लिए विधान बनाया गया। १८६६ में भी एक कारखाना अधिनियम पारित किया गया जिसके द्वारा अनेक गैर-बरत कारखानों का भी विनियमन कर दिया गया।

१८६७ में दो महत्वपूर्ण अधिनियम पारित किए गए—एक तो कारखाना अधिनियमों के विस्तार का अधिनियम तथा दूसरा कार्यमात्रा विनियमन अधिनियम। परन्तु अधिनियम द्वारा प्रचलित कामगारों को अनेक अन्य उद्योगों पर भी लागू कर दिया गया व इनके अधिनियम द्वारा कारखाना व कार्यमात्रा के बीच घात किया गया। कार्यमात्रा की परिभाषा के अन्तर्गत कारखानों को छोड़कर ऐसे अन्य स्थान होते व जहाँ कामकाज घोर अथवा स्त्री अधिक द्वारा हस्तकला का कार्य किया जाता था और जहाँ अधिक न केवल स्वयं पहुंचते व बरत प्रयोग नियन्त्रण भी रखते थे। इन कार्यमात्राओं के लिए भी कारखानों जैसे ही विनियमन बनाये गए। परन्तु कार्यमात्राओं के विनियम केवल उन स्थानों पर लागू होते थे जहाँ १० से कम अधिक कार्य करते थे या जो कारखानों की परिभाषा के अन्तर्गत नहीं आते थे।

बपड़ा उद्योग के लिए १८७४ के कारखाना अधिनियम में कुछ परिवर्तन किये गये। किशोरों और स्त्री अधिकों के कार्य दिनों को घटाकर प्रतिदिन १० तथा प्रति सप्ताह २६½ कर दिया गया। नमोपारि को निषेध कर दिया गया। कारखाना विधान के अनेक बार विस्तार के कारण इनको महिमावद्ध करने की मांग हुई। १८७८ के कारखाना व कार्यमात्रा अधिनियम द्वारा इन और भी प्रयोग किया गया।

औद्योगिक संस्थानों का निम्न ५ श्रेणियों में विभाजित किया गया । (१) कपाड़ा कारखाना (२) गर-कपड़ा कारखाना (३) कायगालाय (४) यह कायगालायें जहां न बालक और न किशोर श्रमिक रोजगार पर लगाय जाय व तथा (५) परसू काय गालायें जिनमें केवल परिवार के सदस्य ही काम करते थे । कारखाना और कायगाला के बीच अन्तर इस आधार पर नहीं रखा कि उनमें कितने श्रमिक काम करते थे बल्कि शक्ति-आसित मशीनों के प्रयोग करने अथवा न प्रयोग करने पर यह अन्तर आधारित कर दिया गया ।

इस समय से लेकर १९१४ तक इंग्लैंड में धम विधान के दो महत्वपूर्ण पहलू सामने आए । प्रथम ता सामंजसक व्यवसायों में सब श्रमिकों के लिए राज्य सरकारण जारी रखा और दूसरे अंतरराज्य व्यवसायों में धम दंगाया को विनियमित करने के लिए विशेष पय उठाए गए । १८८३ में कारखाना अधिनियम के अन्तगत कुछ अन्य प्रकार के श्रमिकों के लिए भी नियम बनाये गए । उदाहरणतः सप्लेश में सम्बन्धित काम करने बाल और नानबाई का काम करने बाल श्रमिका के लिए नियम बनाय गए । १८८६ में सूती बस्त्र मिलों में नमी को नियंत्रित करने के लिए भी उपबन्ध बनाए गए । १८८६ में चियटन मशीन-जन में सब बालका की सुरक्षा हेतु इन अधिनियम का विस्तार कर दिया गया । १८९१ में कारखाना व कायगाला नाम का एक महत्वपूर्ण अधिनियम पारित किया गया और इसमें सम्बन्धित विषय को पूर्णतया रोहराया गया । कारखानों में काम करने के लिए बालका की न्युनतम आयु बढ़ाकर ११ वर्ष कर दी गई । अन्न-भण्ड निकाल की व्यवस्था का निरीक्षण स्थानीय प्राधिकारियों के निरीक्षणों को स्थानांतरित कर दिया गया । १८९५ में कामकाज काय-बन्धे २० प्रति सप्ताह तक सीमित कर दिए गए । १८९५ में धम धानु बाल बालकों के लिए रात्रि-काय निषेध कर दिया गया । १८९६ में यह व्यवस्था की गई कि व्यवसाय-बन्धित बीमारियों की सूचना कारखाना निरीक्षणों को दनी होगी ।

१९०१ का कारखाना और कायगाला अधिनियम —

सुदृढाबद्ध करने का एक और प्रयत्न १९०१ में कारखाना व कायगाला अधिनियम में किया गया । यह काफी समय तक इंग्लैंड में कारखाना विधान का आधार रहा । श्रमिकों की धानु तथा सारारिज मायदा कार्य के अन्त में सर्व दुर्घटना आदि स सुरक्षा आदि के विषय में इस अधिनियम में बिरतुत उपबन्ध थे । संस्थानों का दो वर्गों में बांटा दिया गया—कारखाना व कायगालायें । कारखाने का परिभाषा के अन्तगत यह स्थान आते थे जहां उत्पादन प्रक्रिया में यांत्रिक शक्ति का प्रयोग किया जाता था तथा कायगाला के अन्तगत यह स्थान आते थे जहां यांत्रिक शक्ति का प्रयोग नहीं होता था । यह अधिनियम रमा तथा २० पाट में अधिब गहरी धानों पर लागू नहीं होता था । इसके लिए अलग में अधिनियम बनाए गए थे । इस अधिनियम में १२ वर्ष से कम धानु के कामकाज का विमी भी कारखाना व काय गाला में शौकरी पर लगाया निषिद्ध कर दिया गया । १६ वर्ष से कम धानु

के धमिकों के लिए शारीरिक योग्यता का प्रमाण-पत्र देना अनिवार्य कर दिया गया। और-अन्य उद्योगों में प्रतिदिन १० बजे काम लिया जाता था। श्रम-समय विस्तार के लिए भी उपबन्ध का परन्तु सुट्टियों के लिए कोई व्यवस्था नहीं थी। इन अधिनियमों के अन्तर्गत जो विनियम बनाये गए वे बड़े १२ से १४ वर्ष के बालकों १४ से १८ वर्ष के किशोरों तथा १८ वर्ष से अधिक की स्त्री धमिकों पर भी लागू होते थे। परन्तु सफाई और सुरक्षा के उपबन्ध सभी धमिकों पर लागू होते थे।

१९३७ का कारखाना अधिनियम —

इसके पश्चात् १९३७ का कारखाना अधिनियम पारित हुआ जो पहली सुलाई १९३८ में लागू किया गया। इसमें अब तक के सभी कानूनों का समावोधन कर दिया गया। स्त्री और युवक धमिका के कार्य के बड़े प्रतिदिन ९ घण्टा प्रति सप्ताह ४८ निर्धारित कर दिए गए। कुल कार्य-घंटे भोजन के समय को मिलाकर प्रतिदिन ११ से अधिक नहीं हो सकते थे और इनको प्रत्य ७ बजे से सायं ८ बजे के बीच में ही नियत करना होता था। यह भी व्यवस्था की गई कि रविवार को पूरे दिन तथा शनिवार को १ बजे के पश्चात् कोई कार्य नहीं होगा, तथा प्राचा बटे का विभाग का भोजन के लिए मध्याह्नर दिए बिना ४५ बजे से अधिक समाप्त काम नहीं होना चाहिये। कार्य की अधिकता के समय समयोपरि को अनुमति दी थी परन्तु फिर भी वास्तविक कार्य-घंटे प्रतिदिन १० से अधिक नहीं हो सकते थे। १६ वर्ष से कम आयु के धमिकों को सायं ६ बजे तक अपना कार्य बन्द कर देना होता था और अब तक यह-अधिक ४८ कार्य-घंटों की विशेष अनुमति न दे वे सामान्यतः उनसे प्रति सप्ताह ४४ घंटों से अधिक कार्य नहीं लिया जा सकता था। समयोपरि का पाठ के कार्य के लिए भी उन्हें नहीं मनावा जा सकता था। दुर्भाग्य पर कार्य करने वाले किशोरों के लिए कार्य के सामान्य बन्दे १९३४ के दुकान अधिनियम द्वारा प्रति सप्ताह ४८ निर्दिष्ट किए गए थे तथा इनके लिये समयोपरि को भी नियमित कर दिया गया था।

१९४८ का कारखाना अधिनियम (Factories Act of 1948) —

यद्यपि ब्रिटिश सरकार न कार्य बटों से सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अधिनियम को स्वीकार नहीं किया था तथापि १९३६ ४७ के युद्ध से पूर्व ब्रिटिश उद्योगों में सामान्यतः प्रति सप्ताह ४४ बड़े कार्य किया जाता था। १९४८ के कारखाना अधिनियम द्वारा १९३७ के कारखाना अधिनियम में कुछ परिवर्तन किए गए तथा उस न उपबन्धों का अधिन ६६ बना दिया गया। यह १९४८ का अधिनियम इन समय लागू है। इसके उपबन्ध निम्नलिखित हैं —

इस १९४८ के कारखाना अधिनियम में एक अन्तर्देशीय से अधिक से बने या रहे कारखाना विभागों का समावोधन और संशोधन किया गया है। विशेषतया सामान्य बन्दे से सम्बन्धित इसमें अनेक नए उपबन्ध भी हैं। यह अधिनियम ७० लाख धमिकों को कार्य पर लाने वाले ७॥ लाख औद्योगिक संस्थानों पर लागू होता

हैं जिनमें कारखाने, बन्दरगाह तथा निर्माण कार्य आदि सभी आ जाते हैं। अधिनियम के प्रयासन का अधिकार श्रम मंत्रालय के कारखाना विभाग तथा राष्ट्रीय सेवा कार्यालय को दिया गया है। यह देखने का उत्तरदायित्व कि अधिनियम के उपबन्धों को ठीक प्रकार से लागू किया जा रहा है तथा सुरक्षा स्वास्थ्य व कल्याण के ऊँच धादशों को कायम रक्खा जा रहा है कारखाना निरीक्षकों का है। यह निरीक्षक कारखाना विभाग के अन्तर्गत आते हैं।

मुख्य रूप से अधिनियम में जो सुरक्षा के हेतु विनियम बनाए गए हैं वह निम्नलिखित बिन्दुओं से सम्बन्धित हैं मशीनों की उचित प्रकार से देखभाल और उनके चारों ओर रोक बोन या सामान उठाव वाले यंत्र भाग के बॉयसर्स तथा दबाव आदि से सम्बन्धित यंत्र काम के स्थान पर सुरक्षापूर्वक पहुँचने की व्यवस्था बिस्फोट होने तथा प्राण लाने पर रोकबाम और नियन्त्रण आदि। यदि किसी बिस्फेय प्रक्रिया या मशीन से सम्बन्धित किसी विद्युत लठरे का भय हो तो उनके लिए इन नियमों के अनुपूरण या संशोधन के लिए विनियम संहिताय भी बनाई जा सकती हैं। सुरक्षा पर्यवेक्षण के लिए भी उपबन्ध बनाए गए हैं। साधारणतया तो फर्म स्वयं ही इस प्रकार की व्यवस्था कर लेती है और सुरक्षा अधिकारी अथवा सुरक्षा समिति नियुक्त कर लेती हैं। अधिनियम में इस बात की व्यवस्था की गई है कि सभी प्रकार की दुर्घटनाओं की सूचना चाहे वह गम्भीर हों अथवा न हों परन्तु जिनमें श्रमिक कम से कम तीन दिन कार्य करने में अक्षम हो जाय कारखाना निरीक्षकों को दनी होगी। मासिक और जगती सुरक्षा व्यवस्था से कारखाना निरीक्षक दुर्घटनाओं की रोकबाम के साधन अपनाये क लिए कह सकते हैं।

स्वच्छता प्रति श्रमिक घन स्थान तापक्रम संवातन ब्रूस और धुएँ को दूर करने की व्यवस्था प्रकाश माने की सुविधायें कपड़े साबुस प्राथमिक उपचार व पीने के पानी की व्यवस्था आदि के सम्बन्ध में भी अधिनियम में व्यवस्था की गई है। १६ से १८ वर्ष की आयु के किशोरों तथा स्त्रियों के कार्य घटे भी नियमित किए गए हैं। १६ वर्ष से कम आयु बालों के लिए कार्य-घंटे प्रति सप्ताह ८८ निर्दिष्ट किए गए हैं। मोजन मध्याह्नरी रात्रि मध्याह्नरी व एक निमित्त साप्ताहिक विधाम रिन की भी व्यवस्था करने के उपबन्ध हैं। स्त्रियों और किशोरों व लिए समयोपरि कार्य को सीमित कर दिया गया है तथा १६ वर्ष से कम आयु के बालका के लिए समयोपरि काम निषिद्ध है। इन उपबन्धों से तथा बालका व स्त्रियों के रात्रि काय पर विशेष सगाने के उपबन्ध से कुछ छूट देने की भी व्यवस्था की गई है क्योंकि कार्य-घंटों को कुछ अक्षर के साथ साबु करने की आवश्यकता अनुभव की गई थी ताकि बिजली की शक्ति से एक ही समय कार्य सने के स्थान पर इसके भार का विस्तार हो सके।

अधिनियम में यह व्यवस्था भी की गई है कि १६ वर्ष से कम आयु के सभी श्रमिकों की कारखानों के मुख्य निरीक्षक द्वारा नियुक्त सर्वेणों द्वारा शक्यता परीणा

के अधिको क लिए घाटीरिक् योम्यठा का प्रमाण-पत्र दना अनिवाय कर दिया गया। मर-बस्त्र उद्योगों में प्रतिदिन १० घंटे काम लिया जाता था। धम-समय बिस्तार के लिए भी उपबन्ध का परन्तु घुट्टियों के लिए कोई व्यवस्था नहीं थी। इन अधिनियमों के अन्तर्गत जो विनियम बनाये गए थे वही १२ से १४ वर्ष के बालकों १४ से १८ वर्ष के किशोरों तथा १८ वर्ष से अधिक की स्त्री अधिकों पर भी लागू होते थे। परन्तु सफाई और सुरक्षा के उपबन्ध सभी अधिकों पर लागू होते थे।

१९३७ का कारखाना अधिनियम —

इसके पश्चात् १९३७ का कारखाना अधिनियम पारित हुआ जो पहली बुलाई १९३८ से लागू किया गया। इसमें अब तक के सभी कानूनों का समावोधन कर दिया गया। स्त्री और युवक अधिकों के कार्य के घंटे प्रतिदिन ९ घण्टा प्रति सप्ताह ४८ निर्धारित कर दिए गए। कुल कार्य-घंटे भोजन के समय को मिलाकर प्रतिदिन ११ से अधिक नहीं हो सकते थे और इनको प्रातः ७ बजे से सायं ८ बजे के बीच में ही नियत करना होता था। यह भी व्यवस्था की गई कि रजिस्टर को पूरे दिन तथा अनिवार को १ बजे के पश्चात् कोई कार्य नहीं होना तथा घाटा बने का विधायक या भोजन के लिए सप्ताहान्तर दिए बिना ४५ घंटे से अधिक लगातार कार्य नहीं होना चाहिये। कार्य की अधिकता के समय समयोपरि की अनुमति तो थी परन्तु फिर भी वास्तविक कार्य-घंटे प्रतिदिन १० से अधिक नहीं हो सकते थे। १६ वर्ष से कम आयु के अधिकों को सायं ९ बजे तक अपना कार्य बन्द कर देना होता था और जब तक वह-सबिब ४८ कार्य-घंटा की विशेष अनुमति न दे दे लाजावत जनसं प्रति सप्ताह ४४ घंटों से अधिक काम नहीं लिया जा सकता था। समयोपरि या पाटी के कार्य के लिए भी उन्हें नहीं लगाया जा सकता था। दुकानों पर कार्य करने वाले किसानों के लिए कार्य के सामान्य पत्र १९३४ के दुकान अधिनियम द्वारा प्रति सप्ताह ४८ निर्दिष्ट किए गए थे तथा इनके लिए समयोपरि को भी नियमित कर दिया गया था।

१९४८ का कारखाना अधिनियम (Factories Act of 1948) —

वद्यपि ब्रिटिश सरकार न कार्य बर्ने से सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय धम संवहन के अधिनियम को स्वीकार नहीं किया था तथापि १९३९ ४३ के कुछ से पूर्व ब्रिटिश उद्योगों में सामान्यतः प्रति सप्ताह ४४ घंटे कार्य किया जाता था। १९४८ के कारखाना अधिनियम द्वारा १९३७ के कारखाना अधिनियम में कुछ परिवर्तन किए गए तथा उस के उद्देश्यों को अधिक दृढ़ बना दिया गया। यह १९४८ का अधिनियम इस समय लागू है। इसके उपबन्ध निम्नलिखित हैं —

इस १९४८ के कारखाना अधिनियम में एक अंशान्ती से अधिक से बने घाटे कारखाना विभागों का समावोधन और संशोधन किया गया है। विशेषतया सामान्य कल्याण से सम्बन्धित इसमें अनेक नए उपबन्ध भी हैं। यह अधिनियम ७० लाख अधिकों को कार्य पर लगाने वाले ७॥ लाख औद्योगिक संस्थानों पर लागू होता

है जिनमें कारखाने, बन्दरगाह तथा निर्माण काम आदि सभी आ जाते हैं। अधिनियम के प्रकाशन का अधिकार श्रम मंत्रालय के कारखाना विभाग तथा राष्ट्रीय सेवा कार्यालय को दिया गया है। यह देखने का उत्तरदायित्व कि अधिनियम ने उपबन्धों को ठीक प्रकार से लागू किया जा रहा है तथा सुरक्षा, स्वास्थ्य व कल्याण के उच्च धारकों को कायम रखा जा रहा है कारखाना निरीक्षकों का है। यह निरीक्षक कारखाना विभाग के प्रान्तगत होते हैं।

मुख्य रूप से अधिनियम में जो सुरक्षा के हेतु विनियम बनाए गए हैं वह निम्नलिखित विषयों से सम्बन्धित हैं मशीनों की उचित प्रकार से देखभाल और उनके चारों ओर रोक बोक या सामान उठाने वाले यंत्र भाग व बॉयलरों तथा इबाब आदि से सम्बन्धित यंत्र काम के स्थान पर सुरक्षापूर्वक पहुँचने की व्यवस्था बिस्फोट होने तथा भाग लगने पर रोकथाम और नियंत्रण आदि। यदि किसी विशेष प्रक्रिया या मशीन से सम्बन्धित किसी विषय उत्तरे का भय हो तो उनके लिए इन नियमों का अनुपूरण या संशोधन के लिए विनियम यहूत्यों भी बनाई जा सकती हैं। सुरक्षा पर्यवेक्षण के लिए भी उपबन्ध बनाए गए हैं। साधारणतया ता फर्म स्वयं ही इस प्रकार की व्यवस्था कर लेती हैं और सुरक्षा अधिकारी प्रकवा सुरक्षा समिति नियुक्त कर देती हैं। अधिनियम में इस बात की व्यवस्था की गई है कि सभी प्रकार की दुर्घटनाओं की सूचना, चाहे वह गम्भीर हों प्रकवा न हों परन्तु जिनमें श्रमिक कम से कम तीन दिन कार्य करने में असमर्थ हो जाय कारखाना निरीक्षकों को देनी होगी। मामिलाओं और उनकी सुरक्षा व्यवस्था से कारखाना निरीक्षक दुर्घटनाओं की रोकथाम के साधन उपनाने के लिए कह सकते हैं।

स्वच्छता प्रति श्रमिक पर स्थान तापक्रम सजातन धूम और धुएँ का दूर करन की व्यवस्था, प्रकाश देने की सुविधाओं कपड़ें लाकन प्राथमिक उपचार व पीने के पानी की व्यवस्था आदि के सम्बन्ध में भी अधिनियम में व्यवस्था की गई है। १६ से १८ वर्ष की आयु के किशोरा तथा स्त्रियों के कार्य बंधे नी नियमित किए गए हैं। १६ वर्ष से कम आयु वालों के लिये काम-बन्धे प्रति सप्ताह ८८ निश्चित किए गए हैं। श्रावण मध्याह्नमें रात्रि मध्याह्नमें व एक निश्चित साप्ताहिक विधाम दिन की भी व्यवस्था करने के उपबन्ध हैं। स्त्रियों और किशोरों के लिए समकोपरि कार्य को सीमित कर दिया गया है तथा १६ वर्ष से कम आयु व बालिका के लिए समकोपरि कार्य निषिद्ध है। इन उपबन्धों व तथा बालकों व स्त्रियों के रात्रि काम पर निषेध लगाने के उपबन्ध में कुछ कुछ इन की भी व्यवस्था की गई है क्योंकि कार्य-घण्टों को कुछ घन्टार के साथ लागू करने की आवश्यकता अनुभव की गई थी ताकि बिजनी की शक्ति से एक ही समय कार्य सने के स्थान पर इसका भार वा विभार हो सके।

अधिनियम में यह व्यवस्था भी की गई है कि १६ वर्ष से कम आयु व सभी श्रमिकों की कार्यघण्टों के मुख्य नियोजक द्वारा नियुक्त सर्वेक्षकों द्वारा रोजगारी परीक्षा

की जाए और यह देखा जाए कि वह कार्य करने के योग्य हैं भयभीत नहीं। कुछ विशेष उद्योगों व प्रक्रियाओं के लिए कुछ विशेष विनियम बनाए गए हैं। इनका उद्देश्य यह है कि व्यक्तियों का हानिकारक एवाचों तथा अन्य विधेय प्रकार के सतर्कों से बचाव किया जाए तथा उनकी सज्जनों द्वारा समय-समय पर डाक्टरी परीक्षा भी की जाए ताकि व्यवसायबन्धित बीमारियां भी रोकनाम हो सके और उन पर काबू पाया जा सके। कारखानों के कुछ विशेष भागों के लिए या किसी विशेष कारखाने के लिए कुछ विशेष मामला में डाक्टरी पर्यवेक्षण के हेतु विनियम बनाने की व्यवस्था भी की गई है। सुरक्षा पर्यवेक्षण की भांति ऐसी व्यवस्था को ऐच्छिक रूप से प्रयोजन के लिए मामलों से भी कहा गया है।

१९२९ का कारखाना अधिनियम जब सुरक्षा स्वास्थ्य और कस्बाएँ कार्यों की मूखता एकत्रित करते तथा इन से सम्बन्धित विषयों का प्रचार करके उन्हें उन्नत करने का तथा सुरक्षा स्वास्थ्य और कस्बाएँ समस्याओं से सम्बन्धित विषयों पर धनसम्भार करने का उत्तरदायित्व धम व राष्ट्रीय सेवा के मन्त्री पर डालता है। यह कार्य इस मन्त्रालय द्वारा १९२९ के अधिनियम से पूर्व भी किए जा रहे थे। जब इस अधिनियम में इन्हें वैधानिक रूप दे दिया है।

प्रतिरक्षा विनियमों के धनसंग्रह जारी किए गए १९४३ के कारखाना (कंस्टीन) धाराओं के प्रतिरिक्त कारखानों के मुख्य निरीक्षक को भी यह अधिकार दिया गया है कि उन मामलों में जहाँ २१० या इससे अधिक धमिक कार्य करते हैं ऐसी कंस्टीन की स्थापना का आदेश दे सकें जिनसे गर्म-गर्म जोखन ली जा सके।

खानों के सम्बन्ध में विधान —

ब्रिटेन में खानों के लिए काफी समय से 'खान विनियम अधिनियम (Mines Regulation Act) बलमें आ रहे हैं। उदाहरणतः १८४२ में शिफ्टों व १० बर्ष से कम आयु के बालकों को काम पर लगाना निषिद्ध कर दिया गया था। खानों में कार्य-बर्तों को नियमित करने के लिए १८६० १९०२ १८८१ तथा १८९६ में विनियम बनाए गए। १८९० में कारखानों के निरीक्षण की भी व्यवस्था की गई थी। १९११ में कोबला खानों से सम्बन्धित सभी खानों का 'कायला खान विनियम अधिनियम' में संश्लिष्ट-बद्ध कर दिया गया। १९२४ का कोबला और परवर की खानों का अधिनियम (Mines and Quarries Act of 1924) सबसे धनसंग्रह विधान है। यह अधिनियम एक व्यापक वैधानिक सुरक्षा संश्लिष्ट का आधार है। इस संश्लिष्ट में खान के भीतर काम करने वाले व्यक्तियों के विषय में कई नियम हैं। उदाहरणतः संवाहन खान के भीतर भाग की उचित प्रकार से सुरक्षा परिवहन व गलियाँ विकस्य द्वारा विस्फोट का संकट सुरक्षा वस एवं प्राथमिक उपचार प्रादि। इनके प्रतिरिक्त प्रबन्धक संचालक और निरीक्षण की योग्यता की परीक्षा और खानों में कार्य-नीति प्रादि के सम्बन्ध में भी उप-धम हैं। १८४२ से ही शिफ्टों व बालकों को खानों के भीतर रोजगार पर लगाना निषिद्ध है। बालकों की न्यूनतम आयु को भी समय-समय पर बढ़ाया गया है। खानों

क नीचे अधिनियमों के कार्य करते १९१९ में एक अधिनियम द्वारा प्रति पारी ७ और १९४० में कोयला काम अधिनियम द्वारा प्रति पारी ७ में निर्धारित किए गए थे। १९४६ में कोयला राष्ट्रीयकरण अधिनियम द्वारा राष्ट्रीय कोयला बोर्ड की स्थापना की गई और इसे अधिनियमों की सुरक्षा स्वास्थ्य और कस्माएँ को उन्नत करने का उत्तरदायित्व सौंपा गया। इसने १ जनवरी १९४७ से इस उद्योग के निर्देशन के काम को सम्भाल लिया है। कोयला व परिवार की शान अधिनियमों के प्रकाशन तथा राष्ट्रीय कोयला बोर्ड के ऋण स्तरों को बनाये रखने में सहायता देने का उत्तरदायित्व ई वन तथा सशित मंत्रालय के कोयला व परिवार की शानों के विभाग पर है। कार्याङ्ग उत्तर दायित्व कोयला व परिवार की शानों के निरीक्षण दल पर है। यह दल विभाग का ही एक घन होता है।

जन स्वास्थ्य अधिनियम (Public Health Acts) —

इससे पहले में जन स्वास्थ्य अधिनियम भी बनाये गए हैं। इनके अन्तर्गत स्थानीय प्राधिकारियों को मकानों तथा कार्य करने के स्थानों में सफाई की व्यवस्था का विनियमन करने का अधिकार दिया गया है और गंदे हानिकारक बे-हवादार अपवा प्रति भीड़ बाह्य कार्य के स्थानों को परेशान करने वाले स्थान (Nuisance) घोषित करके इनकी दुपहियों को दूर करने के नियमों को लागू करने का अधिकार भी दे दिया गया है।

दुकान अधिनियम (Shops Acts) —

इससे पहले में दुकान अधिनियमों को १९१० के दुकान अधिनियम में समायाजित कर दिया गया है। इसके अन्तर्गत स्थानीय प्राधिकारियों को अधिकार है कि वह यह देखें कि उनके क्षेत्र में घाने वाली सभी दुकान उचित मन्तव्य तापक्रम प्रकाश सफाई और धोने की सुविधाओं के उपकरणों को लागू करती हैं तथा दुकान बन्द करने के घंटों के विषय में अधिनियम के उपकरणों का उचित प्रकार से पालन किया जाता है। जब तक विशेष सूचना प्रदान की गई हो सभी दुकानों को रविवार के दिन तथा सप्ताह में एक दिन एक बजे एक दोप दिन ८ बजे सायं बन्द करने का प्रावधान है परन्तु एक दिन दुकानें ९ बजे बन्द की जा सकती हैं। १९ वर्ष से कम आयु के धर्मियों के लिए कार्य के घंटे प्रति सप्ताह ४४ तथा १६ से १८ वर्ष की आयु के धर्मियों के लिए प्रति सप्ताह ४८ निर्धारित किये गए हैं।

बासकों के सम्बन्ध में विधान —

१९२० एवं १९२८ में बासक एवं विचार अधिनियमों का १९३१ एवं १९३८ के अधिनियमों तथा १९४४ से १९४८ तक के शिक्षा अधिनियमों द्वारा विकरण (Modified) किया गया। अधिनियम के अन्तर्गत १३ वर्ष से कम आयु के बासकों का काम पर मगाना निषिद्ध है। १५ वर्ष से कम आयु के बासकों को स्कूल के दिनों में स्कूल के समय के प्रतिरिक्त केवल दो घंटे के लिये काम पर मगाना जा सकता है

घरों वही भी प्रातः ६ बजे से रात्रि के आठ बजे के समय के बीच में। परन्तु स्थानीय अधिकाारी बासकों के रोजगार व कार्य के बन्तों और दशाओं को नियमित कर सकते हैं। ऐसे बासकों को जो कारखाना खान भयवा रुकान अधिनियम के अन्तर्गत नहीं आते १९३८ के एक अन्य अधिनियम द्वारा (Young Persons Employment Act, 1938) मुख्यतः प्रचल की गई है और इस अधिनियम के अन्तर्गत इनके कार्य के बन्त निर्धारित कर दिये गये हैं—(१८ वर्ष से कम आयु के बासकों के लिए प्रति सप्ताह ४८ तथा १६ वर्ष से कम आयु के बासकों के लिए प्रति सप्ताह ४८)

मजदूरी विनियमन अधिनियम (Wage Regulation Acts) —

इस सम्बन्ध में पहला अधिनियम १९०६ का व्यापार बोर्ड अधिनियम (Trade Boards Act) का। इसके पश्चात् १९१२ का कोयला खान (मूलतः मजदूरी) अधिनियम पारित किया गया। १९०६ के अधिनियम के अन्तर्गत व्यापार बोर्ड को (१९१० के पश्चात् ये यम मंत्रालय को) यह अधिकार था कि ऐसे किसी भी व्यापार के लिए जिसमें अन्य व्यवसायों की अपेक्षा मजदूरी बहुत ही कम है मूलतः मजदूरी निर्धारित करने के लिए एक बोर्ड की नियुक्ति करे। भारत में तो यह अधिनियम ऐसे व्यवसायों में लागू होता था जो कि अल्पसंख्यक वर्गों के परन्तु १९१४ तक यह अधिनियम अल्पसंख्यक व्यवसायों पर लागू हो गया था जिनमें लगभग ३ लाख अधिक काम करते थे। १९१८ के उद्योग अधिनियम में यम मंत्रालय को यह अधिकार दे दिया गया कि वह ऐसे व्यवसायों के लिए जिनमें मजदूरी को नियमित करने की कोई व्यवस्था नहीं थी व्यापार बोर्डों की नियुक्ति कर सकें। इस अधिनियम में मजदूरी को नियमित करने की किसी उचित व्यवस्था का प्रभाव को धोर ध्यान आकर्षित किया गया था।

इसके पश्चात् इन्डस्ट्रियल में मजदूरी नियमित करने की वैधानिक व्यवस्था का विकास हुआ। इस समय मजदूरी कौंसिल 'कॉन्ट्रिय मजदूरी बोर्ड' और 'कृषि मजदूरी बोर्ड' पाए जाते हैं जो ऐसे उद्योगों के लिए हैं जिनमें महिलाओं व अधिकाओं के सतर्कों के प्रभाव के कारण रोजगार की घटती और बर्बादों पर प्रभावपूर्ण समझौता करने के लिए कोई ऐच्छिक रूप से बाध्यता करने की व्यवस्था नहीं है, और यदि है भी तो इतनी पर्याप्त नहीं है कि ऐच्छिक रूप से समझौतों का पालन तमाम उद्योगों में करा सकें। मजदूरी कौंसिल तथा मजदूरी बोर्डों में उद्योग से सम्बन्धित अधिकों व अधिकों का प्रतिनिधि होते हैं। इनमें कुछ स्वतन्त्र सदस्य भी होते हैं। इनको यह अधिकार है कि वह मूलतः दशाओं और शर्तों के लिए सम्बन्धित मशीनों को जो सामान्यतः धर्म मंत्री होता है प्रस्ताव प्रस्तुत कर सकें। इन प्रस्तावों को बाद में वैधानिक रूप से दिया जाता है। मध्यम २० से ३० लाख अधिक आयी रोजगार की शर्तों को ऐसी वैधानिक व्यवस्था द्वारा निर्धारित करने में सक्षम हुए हैं। वैधिक आधार पर मजदूरी वाले बास अधिकों के लिए उचित दर की व्यवस्था की गई है। समयांतरि मजदूरी को भी निर्दिष्ट कर दिया गया है। १९४३ में एक मजदूरी

कौंसिल अधिनियम पारित किया गया जिसके अन्तर्गत एच ममी बोर्डों तथा कौंसिलों को वैधानिक मान्यता प्रदान कर दी गई है तथा श्रम मंत्री को यह अधिकार दिया गया है कि वह इनक निर्णयों को कानूनी रूप से लागू कर सके ।

कृषि के लिए भी न्यूनतम मजदूरी विधान पारित किया गया है । १९१७ के अनाज उत्पादन अधिनियम (Corn Production Act) के अन्तर्गत कृषि श्रमिकों की न्यूनतम मजदूरी २५ पेंसिंग प्रति सप्ताह निर्धारित की गई थी । परन्तु इस अधिनियम को १९२१ में निरस्त कर दिया गया और मजदूरी बोर्डों के स्थान पर एग्जिक्युटिव सुनह समितियों की स्थापना की गई । यह समितियाँ प्रत्येक क्षेत्र के लिए मजदूरी की न्यूनतम दरें निर्धारित करती थी और यदि इन दरों से कृषि मंत्री सहमत हो जाता था तो इनका मानना अधिभार्य हो जाता था । परन्तु इन समितियों को सफलता प्राप्त नहीं हुई । अगस्त १९२४ में कृषि मजदूरी अधिनियम पारित किया गया जो अभी तक बला में रहा है । १९४० में इसमें कृषि मजदूरी (अधिनियम) अधिनियम द्वारा संशोधन किया गया था । अधिनियम के अन्तर्गत कृषि एवं मत्स्य (Fisheries) मंत्री को प्रत्येक प्रदेश में कृषि मजदूरी समितियों की स्थापना करने का प्रावधान किया गया है । यह समितियाँ कृषि श्रमिकों के कार्य के बच्चे तथा मजदूरी की न्यूनतम दरें निर्धारित करती हैं । यदि इन दरों को केन्द्रीय कृषि मजदूरी बोर्ड की स्वीकृति प्राप्त हो जाती है तो इन्हें वैधानिक रूप प्रदान कर दिया जाता है । इसके अतिरिक्त इंग्लैंड में न्यूनतम मजदूरी को निर्धारित करने वाले अनेक और अधिनियम हैं । उदाहरण के लिए १९१२ का कोयला खान न्यूनतम मजदूरी अधिनियम १९३८ का सड़क परिवहन अधिनियम (Road Haulage Wages Act) १९४३ का कैटेरिंग मजदूरी अधिनियम (Catering Wages Act) आदि । १९३८ के सबसेतम छुट्टी अधिनियम के अन्तर्गत सब वैधानिक मजदूरी निर्धारित करने वाली संस्थाएँ इस बात की भी सिफारिश कर सकती हैं कि ६ नियमित मार्वजनिक छुट्टियों के अतिरिक्त वर्ष में सात दिन की सबसेतम छुट्टियाँ भी प्रदान की जायँ ।

श्रम विधान —

यहाँ तक इंग्लैंड में श्रमिक संघों के विधान का सम्बन्ध है इसका विषय में अध्याय ६ में विवेचन किया जा चुका है । औद्योगिक सम्बन्धों के विषय में विधान का उत्पन्न अध्याय ८ में, सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के सम्बन्ध में अध्याय १२ में तथा आवाग के सम्बन्ध में अध्याय १० में उल्लेख किया जा चुका है । कृषि श्रमिकों के लिए १९३२ व १९३६ में दो अधिनियम बनाए गए हैं ताकि उनकी कृषि में रसायन के उपयोग से जो हानि पहुँचती है उनमें सुरक्षा की जा सके ।

ऐच्छिक समझौते तथा प्रयत्न (Voluntary Agreements and Efforts) —
यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि वैधानिक उपबन्धों के अतिरिक्त श्रमिकों की सुरक्षा बरखाएँ और कार्य शर्तों के सम्बन्ध में ऐच्छिक समझौतों और ऐच्छिक संघटनों द्वारा भी अनेक पथ उद्घाटन हुए हैं । इनके द्वारा स्थापित किए गए स्तर नहीं

कही ता कानून द्वारा निर्धारित स्तरों से भी ऊंचे हैं। ऐच्छिक समझौतों द्वारा निर्धारित किए गए कार्य-बन्धे घौसतन प्रति सप्ताह ४६ ३ हैं। अर्थात् वैधानिक रूप से निर्धारित किए गए अधिकतम घण्टों से भी दो घण्टे कम हैं। अधिकतम घण्टों को सार्वजनिक छुट्टियों के प्रतिरिक्त दो सप्ताह की सवेतन छुट्टी प्रदान की जाती है। शारीरिक परिश्रम करने वाले घण्टों को भी ६ वैधानिक सार्वजनिक छुट्टियों के प्रतिरिक्त एक सप्ताह की बेतन सहित छुट्टी प्रदान की जाती है। जहां तक सुरक्षा का सम्बन्ध है, कारखाना जाल तथा पत्थर की जालों के निरीक्षकों द्वारा दुर्घटना निरोध आन्वेषण का बौरदार समर्पन किया जाता है। जो एक ऐच्छिक मिभाप्रद अभिमान है। सुरक्षा समस्याओं के सम्बन्ध में अन्वेषण किए जाते हैं। सुरक्षा अधिकारियों एवं दुर्घटना निरोध समितियों की भी स्थापना की गई है। जहां तक स्वास्थ्य व कस्याए का सम्बन्ध है अधिकतर कारखाने पुरा समय के लिए या आंशिक समय के लिए डाक्टर एवं धौद्योगिक तर्ज गर्व भाजन के लिए कंस्टीम धादि की व्यवस्था करते हैं। क्लब तथा लेस के स्वर्गों का पुरा धपवा आंशिक ध्यय भाजिकों द्वारा दिया जाता है। मासिक राज्य बीमा योजना के धनुधुरक के रूप में प्रकाश प्राप्ति तथा बीमापि बीमों की व्यवस्था करते हैं। अधिभण और शिक्षा की सुविधायें भी कारखानों द्वारा प्रदान की जाती हैं। कुछ कारखानों में स्वयं कठिन होम व पुर्नवास केन्द्र भी हैं। कुछ कारखाने तो घण्टों व बच्चों के लिए ज्ञान कृति भी प्रदान करते हैं तथा घण्टों के लिए स्कूलों प्रकाश क्रांतियों की व्यवस्था भी करते हैं। सभी कोयला जालों व जालों के ऊपर ज्वाल-शुद्धी की व्यवस्था है। कस्याए धौर सुरक्षा व सामाजिक धौर गणोर्वज्ञानिक पहलुधो पर अधिक बौर दिया जाता है।

उपसंहार —

इतमैष्ट म अघपि धम विभाज से यह प्रबट हो जाता है कि उधाप मं राम्य न कित सीमा तथा हस्तघेप किया है परन्तु घण्टों की कार्य की बर्तावें गुरक्षा और कस्याए के लिए हमें विभाज के उपबन्धों पर ही इच्छिपाठ नहीं करना चाहिए बरन् घण्टों के कस्याए व स्वास्थ्य व हनु ऐच्छिक समझौतों और ऐच्छिक उधापों की धौर भी ध्यान देना चाहिए। भारत घेंट ब्रिटेन के धनुधर्गों से बहुत साम उठा सजता है। परन्तु जब तक घण्टों के संघटन एकिभासी नहीं हो जाने धौर मासिक ऐच्छिक रूप से घण्टों के लिए घण्टी काय की बधाधों धौर कस्याए साधनों में उन्नति नहीं करते हमें घण्टों की बधा सुधारने के लिए राज्य पर निर्भर रहना पड़ेगा।

बाल तथा स्त्री श्रमिक (Child and Woman Labour)

बालकों को रोजगार पर लगाने की समस्या —

आधुनिक औद्योगिककरण के आगमन के साथ बालकों में यह प्रवृत्ति उत्पन्न हो गई कि कम लागत समाकर अधिक लाभ प्राप्त किया जाय। अतः प्रत्येक देश में बालकों को अधिक संख्या में कारखानों में रोजगार पर लगाया गया। इन बालकों को बहुत कम मजदूरी दी जाती थी और उन्हे अत्यधिक समय तक कार्य कराया जाता था। यह बालक अत्यन्त कष्टप्रद परिस्थितियों में कार्य करते थे। पिछले अष्टमाय में अंग्रेजों में औद्योगिक क्रांति के प्रारम्भ में बालकों की दशा का वर्णन किया जा चुका है। भारत में भी औद्योगिककरण के साथ बालकों की अधिक संख्या में कारखानों में रोजगार पर लगाया गया। कुछ उद्योगों में इनको अब भी रोजगार पर लगाया जाता है, यद्यपि इनकी आयु, कार्य-घण्टे आदि के लिए कुछ विशेष कानूनी उपकरण बना दिये गये हैं। अम अनुसंधान समिति ने अर्थों में कुछ उद्योगों में अभी तक बालकों को रोजगार से रोकना भारत की अम दशाओं पर एक कामा बन्ना है।”

कृषि, व्यापार, उद्योग, खान तथा माटापात में काम करने वाले बालकों की संख्या के निश्चित और विस्तृत आँकड़े प्राप्य नहीं हैं। किन्तु यह साधारण ज्ञान का विषय है कि देश के बालकों की एक बड़ी संख्या शीबिकोपार्जन में व्यस्त है जबकि उन्हें सामान्य एवं व्यावसायिक शिक्षा मिलनी चाहिये जो उनके मातापिता जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। भारत में मुख्यतः कृषि व्यापार, अनिर्दिष्ट कार्यगानाओं बागान और कारखानों में भी बालकों को रोजगार पर लगाया जाता है।

बालकों को रोजगार पर लगाने के कारण —

बालकों को रोजगार पर लगाने के मुख्य कारणों में से एक कारण तो यह है कि बालक श्रमिकों की आय बहुत कम है। इसके अतिरिक्त भारत में राज्य द्वारा अनामिद किसी पारिवारिक भले की ऐसी योजना का अभाव है जिसके द्वारा निर्धन माता-पिता अपने बालकों को पर्याप्त एवं संतुलित आहार और रहने योग्य उचित परिस्थितियाँ दे सकें। किसी ऐसी सामान्य शिक्षा योजना का भी अभाव है जिसमें निर्धारित न्यूनतम आयु वाले बालकों को स्कूलों में पढ़ा पाना अनिवार्य हो। अंग्रेजों के अम विधान का भी देश में अभाव बिलस हुआ है और ऐसा विधान कृषि और छोटे पैमाने के उद्योग जैसे अनेक महत्वपूर्ण उद्योगों पर अब तक लागू नहीं

One black spot of labour conditions in India is the illegal employment of children in certain industries.

होता। बालकों की सुरक्षा के लिए जो वर्तमान कानून हैं उनका भी अयत्न होना है क्योंकि राज्य की निरीक्षण व्यवस्था पर्याप्त नहीं है। वे समस्त परिस्थितियाँ इंगित करती हैं कि शिक्षाकर्मियों को न जाने कितने बालकों की अधिकांश संख्या अपने माता-पिता की अल्प आय की कमी-पूरति हेतु कार्य करने के लिए भेजी जाती है।

बागान में बाल श्रमिक —

बागान के क्षेत्रों में बालकों की अधिक संख्या मुख्यतः चाय एवं कॉफी की उपज में लगी है। बागान में बालक ६ या ७ वर्ष की आयु से ही कार्य करना प्रारम्भ कर बैठे हैं। श्रम अनुसंधान समिति के अनुसार समस्त श्रमिकों में से १४ वर्ष की आयु से कम के बालकों की प्रतिशत संख्या इस प्रकार की संघान के 'डार्लिंग' नामक क्षेत्र में २३.७% दार्जिलिंग में २१% असम की तराई में १४.५% सुरमा बाटी में १९% बंकिणी भारत के चाय एवं कॉफी के वायान में ११% और खबर क बपीचों में ४१%। बागान में सगे बालकों के विस्तृत आँकड़े कबल असम के चाय बागान में प्राप्त हैं। चाय क्षेत्र परावर्ती श्रमिक नियंत्रिक की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार १९३८-३९ में रजिस्टर में लिखित बालकों की संख्या इस प्रकार की बसे हुए बाल श्रमिक ८१ ६९८ और फ़सलु बाल श्रमिक ९,९८०। १९४४-४५ में बसे हुए बाल श्रमिकों की संख्या ६ ६३५ की और फ़सलु बाल श्रमिकों की संख्या ९,०२५ थी। १९३०-३१ में बसे हुए बाल श्रमिक ७३ ७७६ और फ़सलु बाल श्रमिक ९ १९८ थे। १९३३ में चाय के बागान में रोजगार पर सगे बालकों की संख्या १३९ २६४ थी अर्थात् श्रमिकों की दैनिक औसत संख्या में से १३ ६% बालक थे। १९३४ में यह प्रतिशत बढ़ कर १० रू गई थी। अन्य बागान के विषय में आँकड़े प्राप्त नहीं हैं, किन्तु श्री पी एस. गणपतिमहून के मतानुसार अन्य बागान में बालकों की कुल संख्या ६५,००० हो सकती है। अतः बागान में कार्य करने वाले बालकों की कुल संख्या लगभग २ लाख से अधिक अनुमानित की जा सकती है। १९४८ से १२ वर्ष की आयु से कम के बालक बागान में रोजगार पर नहीं लगाए जा सकते तथा १९३३ के बागान श्रम अधिनियम ने बालकों की आयु १२ एवं किशोरों की आयु १३ से १८ वर्ष तक निर्धारित कर दी है।

कारखानों में बाल श्रमिक —

केन्द्रीय श्रम मंत्रालय के द्युतो द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण की रिपोर्ट ने जो १९३४ में प्रकाशित हुई थी विभिन्न उद्योगों में बालकों के रोजगार की दशाओं पर काफी प्रकाश डाला है। कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत प्राप्त विवरण से ज्ञात होता है कि कारखाना उद्योगों में लगे बालकों की संख्या बीरे-बीरे कम होती जा रही है।

इनके सम्बन्ध में आंकड़े निम्न प्रकार हैं —

वर्ष	रोजगार में सगे बासकों की संख्या	कुल श्रमिक संख्या में से बासकों का प्रतिशत
१८९२	१८ ८८८	५९
१९२३	७४ ६२०	५३
१९२३	१९,०९१	१४
१९४३	१२ ४८४	० ५
१९४८	११ ४४४	० ६८
१९५०	७ ७६६	० ३१
१९५१	६ ८५३	० २७
१९५२	६,१५९	० २५
१९५३	५ ०५६	० २०
१९५४	४ ६९५	० १८
१९५५	४ ९७५	० १९

परन्तु इन आंकड़ों से वास्तविक स्थिति का पता नहीं चलता। बहुत से स्थानों पर बासकों को यह सिखा दिया जाता है कि वे अपनी आयु १८ वर्ष बता दें। अधिकतर यह भी देखा गया है कि कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत जो आयु के प्रमाण पत्र लिये जाते हैं वह भी ठीक नहीं होते। श्रम ब्यूरो की रिपोर्ट के अर्थों में 'इसमें अन्वेषण है कि कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत प्राप्त विवरण से बास श्रमिकों के विषय में जो आंकड़े मिलते हैं उनसे वास्तविक स्थिति का पता चलता है क्योंकि कार्य-क्षेत्रों की जाँच में सगे हुए अधिकारी तथा कारखाना निरीक्षकों का प्रायः यह अनुभव है कि जैसे ही वे फॅक्टरियों में पहुँचते हैं वैसे ही बासकों की एक बड़ी संख्या कारखानों से भाग जाती है। वे प्रायः रोजगार के लिए निर्धारित न्यूनतम आयु से कम आयु के बासक होते हैं। श्रम अनुसंधान समिति ने भी यह बताया था कि कई उद्योगों में बासकों को रोजगार पर लगाने के प्रतिबन्ध की अज्ञानता की जाती है और प्रत्येक स्थान पर १२ वर्ष से कम आयु के बासक रोजगार में सगे हुए पाए जाते हैं। १९५३ में बरिणी भारत के कानून उद्योग में श्रम दशाओं की एक जाँच की रिपोर्ट में इस सम्बन्ध में कुछ अल्प बहुत महत्वपूर्ण हैं तथा दूसरे उद्योगों पर भी लागू हो सकते हैं। रिपोर्ट में कहा गया है "प्रबन्धकों के पास ऐसे समस्त बासकों की आयु का प्रमाण-पत्र मौजूद होता है जो उनके द्वारा कार्य पर लगाए जाते हैं। परन्तु वे प्रमाण-पत्र किसी को धोखा नहीं दे सकते। अनेक उद्योगों में ऐसे बासकों को जो कठिनाई से ८ या १० वर्ष के हैं इस बात का प्रमाण-पत्र दे दिया जाता है कि उन्होंने १५ वर्ष की आयु पूरी कर ली है। वास्तविक स्थानों पर गुप्त खोजों ने सात ठोस है कि आयु के प्रमाण-पत्र प्रत्येक बासक पर २ या ३ ४० देकर प्राप्त किए जा सकते हैं।'

१९५२ में धन व्यूरो की बीब के अनुसार कारखानों में बालकों की संख्या ६,१३६ घाटी वी और किछोरों की संख्या १८,१६२ थी। कारखानों में बाल धमिकों में अधिक संख्या लड़कों की थी जिसकी प्रतिशत ७४ थी। किछोरों में लड़कों की प्रतिशत ८४ थी। सामाजिक रीतियाँ जैसे धीम्र विवाह लड़कियों को कारखानों में काम पर भेजने के विषय में विरोधात्मक कारणों परों का रिवाज आदि के कारण ही लड़कियों को कारखानों में काम पर बहुत कम लगाया जाता है।

धन व्यूरो के अनुसार बाल धमिक मद्रास असम बिहार तथा प० बंगाल में अधिक हैं। बालकों की अधिक संख्या में लगाने वाले औद्योगिक वर्ग निम्नलिखित हैं — रसायन रसायन पदार्थ चाय प्रधातु खनिज पदार्थ तथा तम्बाकू। रसायन वर्ग में विप्लसलाई फेक्टरियाँ चाय में भाय फेक्टरियाँ खनिज उत्पादन में धातुक फेक्टरियाँ तथा तम्बाकू में बीड़ी कारखाने ऐसे मुख्य उद्योग हैं जहाँ बालक धमिकेक रूप से लगाये जाते हैं। १९४५ में राज्यानुसार धमिके निम्न प्रकार थे —

कारखानों में रोजगार पर लगे धमिकों की औसत वनिक संख्या

राज्य	रोजगार में लगे कुल धमिक	बालक		किछोर	बालक
		पुरुष	स्त्री		
आन्ध्र	१ १३ ४६८	६४ ७३६	४८ २००	२६८	२४१
असम	६८ ३३०	३७ ६६६	८ ३३३	१ ८१३	७१४
बिहार	१ ६४ १०३	१,५२ ६०६	१० ०४२	१, ८७	६६८
बम्बई	८ ३८ २८३	७ ७६, ८८२	७२ ३१२	१ २४७	१४४
मध्य प्रदेश	१ ३० ३७६	१०० ०३३	३० ०३	४६१	४२
मद्रास	३ २७ ६२६	२ ३८ ५२	६२ ३२२	४ ४०८	२ ६७६
उड़ीसा	२० ३१६	१७ १४२	२ ७५२	४११	१४
पंजाब	६३, ३८६	६० २ ७	२, ७३८	२११	१८३
उत्तर प्रदेश	२ ४३ २७६	२ ४२, ११२	२ ४६१	३३१	७३
प० बंगाल	६ १६ ७३६	३, ७३ ४३४	४१ ४३३	१ ६६१	१६६
धमौर	१४ ६०६	१ ३ ७६७	८०३	७	—
दुर्ग	४३६	१३८	२८१	—	—
बहुली	४७, २३२	६६ ३६४	७४१	१०१	४६
संयुक्त एवं निकोबार द्वीप	१ ६२८	१ ६०३	१४	११	—
योग (१९५३)	२ ६७२ ८६२ (१०००)	२ ३६५, १०३ (८८४६)	२८६, १८३ (१०, ४३)	१३ ०२६ (०, ४६)	४ ६७६ (० १६)
योग (१९५४)	२ ३६४ ३३४ (१००००)	२ २६८, ०३४ (८८, ४४)	२७६, ३७६ (१ ६०)	१२ २२६ (०, ४४)	४ ६६३ (० १४)

इससे स्पष्ट है कि मद्रास की फ़ैक्टरियों में सबसे अधिक सख्या में बासक तथा क्रिपोर रोजगार में लगे हैं।

खानों में बास अमिक —

जहाँ तक खानों का सम्बन्ध है सन् १९२३ के खान अधिनियम के पारित होने से पूर्व अनेक खानों में १२ बर्ष से कम आयु के बासक रोजगार में लगाये जाते थे। सन् १९२५ में समस्त खानों में रोजगार पर लगे हुए बासकों की कुल सख्या ४१३५ थी। इनमें से ४६१ प्रतिशत बासक अन्नक की खानों में २६३ प्रतिशत कोयले की खानों में ११२ प्रतिशत लूने के पत्थर की खानों में तथा १०४ प्रतिशत अन्य खानों में रोजगार पर लगे हुए थे। सन् १९३५ में बासकों के लिए खानों में रोजगार पर लगाने की न्यूनतम आयु बढ़ाकर १५ बर्ष कर दी गई थी, जो आज तक बनी जाती है। मैकिन् बिहार, मद्रास तथा राजपूताना की अन्नक की खानों में अधिकतम बासक खानों के भीतर कार्य करत हुए पाये जाते हैं। अम अनुसंधान समिति के अनुमान के अनुसार केवल बिहार में अन्नक की खानों में लगभग १२५० बासक कार्य करते हैं और मद्रास तथा राजपूताना की अन्नक की खानों में ५,००० बासक रोजगार पर लगे हैं।

अनियमित कारखानों आदि में बास अमिक—

बास अमिकों को रोजगार पर लगाने के सबसे बुरे दोष अनियमित कारखानों और कार्यशालाओं में पाये जाते हैं। इनमें से कुछ ही कारखाने ऐसे हैं जो यांत्रिक शक्ति का उपयोग तो करते हैं परन्तु दस से कम यमिकों को ही रोजगार पर लगाते हैं। मैकिन् अधिकतम कारखाने ऐसे हैं जो किसी यांत्रिक शक्ति का उपयोग नहीं करते मैकिन् अधिक सख्या में अमिकों को रोजगार पर लगाते हैं। जैसा कि कारखाना विभाग के अन्तर्गत उल्लेख किया जा चुका है कि यह कारखाने और कार्यशालाएँ न तो कारखाना अधिनियमों के ही अन्तर्गत आते हैं और न ही मद्रास तथा मध्य प्रदेश के अतिरिक्त इनके लिए कहीं किसी पृथक विधान की व्यवस्था की गई है। ऐसे उद्योग निम्नलिखित हैं — बीड़ी चपड़ा अन्नक डूटना वालीन कुमना कोष की बुढ़िया बनाना तथा अन्य छोटे बंधाने के उद्योग आदि। दक्षिण भारत के रियासतों उद्योग तथा राजपूताना के इसी प्रकार के उद्योगों में भी बास अमिकों को अधिक सख्या में रोजगार पर लगाया जाता है। उदाहरण के लिए सन् १९५२ में मद्रास राज्य के छोटे बंधाने के रियासतों उद्योग में ४१२ बासक रोजगार में लगे थे जिनमें ११० मढ़के व तथा ३०२ मढ़कियाँ थीं। बीड़ी बनाने के लक्ष्ये अधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र मध्य प्रदेश, मद्रास तथा बंगाल में पाये जाते हैं और लगभग इन सभी क्षेत्रों में ३ बर्ष से लेकर १२ बर्ष के मध्य की आयु के बासकों को अधिकतर पतिर्मा काटने तथा बीड़ियाँ सपेटने के कार्य पर नियुक्त किया जाता है। अम अनुसंधान समिति ने इन बात का उल्लेख किया था कि इन बीड़ी के कारखानों

में धमिकों की कुल संख्या में से २१ प्रतिशत बैलौर (मद्रास) में १८% मद्रास नगर में २१.४८% छोटापुर में ७.१५% बम्बई नगर में तथा ७% मध्य प्रदेश में बालकों की थी। कारखानों के रजिस्टर्ड में इन बालकों का प्रथम नाम नहीं लिखा जाता। इन बालकों के मां बाप या पड़ोसी अपने काम में सहायता देने के लिये इन्हें भाते हैं। सन् १९१२ में विभिन्न राज्यों में बोड़ी उद्योग में रोजगार पर लगे हुए बालकों की जो संख्या अनुमानित की गई थी वह निम्नलिखित है— प्रसम—१८० बिहार १००० पश्चिमी बंगाल—१०० हैदराबाद—४९७ ट्रान्समौर—कोचीन—१,४०० जोधपूर—११५० सिन्ध प्रदेश—१००००। इसके अतिरिक्त मद्रास राज्य राजस्थान तथा सौराष्ट्र के छोटे-छोटे बोड़ी के कारखानों में बालकों की एक अनिश्चित संख्या रोजगार पर लगी हुई थी। धर्म अनुसंधान समिति के अनुसार अधक के विनिर्माण में काम का कुल धाम उत्संभल करते हुए ६ वर्ष से लेकर १२ वर्ष के मध्य की आयु के बालकों को इसी धमिक संख्या में रोजगार पर लगाया जाता है कि बेचकर आत्मर्ष होता है। समिति ने बड़े विस्मय से इस बात का भी उल्लेख किया है कि बिहार में पंचमा नामक स्थान पर सरकारी कारखानों में भी बाल धमिक रोजगार पर लगे थे। समिति ने अधक उद्योग में रोजगार पर लगे हुए बालकों की कुल संख्या लगभग १२००० अनुमानित की है। युद्ध-काल में धमिकों की कमी के कारण बालकों को कुले धाम रोजगार पर लगाया गया था और कोई इसका विरोध भी नहीं करता था। बिहार, मध्य-प्रदेश तथा बंगाल के बपड़ा उद्योग में लगभग ३५२ कारखानों में से केवल १८ कारखाने ही कारखाना अधिनियम के लोकाधिकार या मध्य-प्रदेश के अधिनियमित कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत आते हैं। यहाँ भी बालकों के रोजगार के सम्बन्ध में विधान व्यवस्था की कुले रूप से उल्लेख की जाती है और १४ वर्ष से कम आयु के बालकों को धमिक संख्या में रोजगार पर लगाया जाता है। बपड़ा उद्योग में रोजगार पर लगे हुए बालकों की संख्या लगभग १८०० अनुमानित की जा सकती है। पत्नी हाथ ही में हुए एक सर्वेक्षण के अनुसार केरम की कापू निकालने की प्रक्रियाओं के कारखानों में ६००० में भी धमिक धाम धमिक कार्य पर लगे हुए हैं।

एक धर्म अपने ही प्रकार का कारखाना उद्योग जिसमें बालकों को रोजगार पर लगाया जाता है उत्तर-प्रदेश में किरोवाबाद ना कांथ की बुड़ियों का उद्योग है। इन उद्योग में ६००० धमिकों की कुल संख्या में से २१ प्रतिशत धमिक १४ वर्ष से कम आयु के बालक हैं। कामीय बुड़ने के उद्योग में उन बुड़ने तथा उसके नाम करने में बपड़ों की बुनाई, धाई तथा रंगाई करने में बपड़ा रंगने तथा साबुन बनाने में तथा छपि एवं ब्यापार में बालकों को अधिष्ठार रोजगार पर लगाया जाता है। बुकानों पर मीठों के रूप में भी इन बालकों को धमिक संख्या में कार्य करने हुए पाया जाता है। यह बात कभी भी बाजार में जाकर देखी जा सकती है। पेटिन गैरे बाल धमिकों के अभी तक कोई विरचनीय धमिके उपसम्भ नहीं किए

जा सके हैं। परन्तु विभिन्न राज्यों में हुकाम एवं बाणिज्य संस्वान अधिनियमों द्वारा उनको कुछ सुरक्षा प्रदान की गई है (देखिये पृष्ठ १६०-१६२) परेसू नीचरो के रूप में रोजगार पर सगे हुये अगणित बालकों का भी उल्लेख किया जा सकता है। इनके लिये न तो कोई अधिकारी ही प्राप्त किये गए हैं और न ही इनको बालन द्वारा कोई सुरक्षा प्रदान की गई है। नगर-पालिकाओं तथा सार्वजनिक निर्माण कार्यों में भी बाल धमिक पाये जाते हैं। सन् १९५७ में विभिन्न राज्यों की नगर-पालिकाओं में रोजगार पर सगे हुये बालकों की कुल संख्या ५७१ थी। केन्द्रीय सार्वजनिक निर्माण कार्यों में १७२ बालक प्रत्यक्ष रूप से तथा ४२० बालक ठेके के धमिकों के रूप में रोजगार पर सगे थे। राज्य के सार्वजनिक निर्माण कार्यों में और मुख्य प्रायोजकों में बालकों की संख्या इस प्रकार थी प्रत्यक्ष धमिक ६,४१६ ठेके के धमिक ९,४७३।

कृषि में बाल धमिक —

गाँवों में बालक बचपन से ही बेटों में अपने माता पिता की सहायता करना आरम्भ कर देते हैं और साधारणतया उनका स्कूल जाना एक अपवाद माना जा सकता है। अम मनासय की प्रथम कृषि धमिक पृष्ठपात्र के अनुसार कुल कृषि धमिकों में से लगभग ४६ प्रतिशत १५ वर्ष से कम आयु के बालक हैं। इस प्रकार कृषि में बाल धमिकों की संख्या लगभग २० साल १९१०-११ में घाटी थी। उ्ठीय कृषि धमिक पृष्ठपात्र के अनुसार बाल धमिकों की संख्या १९१६-१७ में ३० साल (९%) थी। इन बालकों से अनेक कार्य कराये जाते हैं जिनमें पशु पालना बेटों की रक्षायी करना रोपाई करना फसलें इकट्ठी करना तथा बोझ सादना आदि मुख्य हैं। यह बालक केवल बेटों में ही अपने माता पिता की सहायता नहीं करते अपितु मजदूरी पर भी कार्य करते हैं तथा ऐसे पारिवारिक धमिक के रूप में कार्य करते हैं जिनको कोई मजदूरी नहीं दी जाती। गाँवों में लगभग ७ वर्ष से लेकर ९ वर्ष तक की आयु के बालकों को बेटों में कार्य करते हुये देखा जा सकता है।

बाल धमिकों के काम करने की बजाए तथा उनकी मजदूरी —

इन सब बातों से यह ज्ञात होता है कि भारत के विभिन्न उद्योगों में बालकों को एक बड़ी संख्या रोजगार में सगी हुई है। उनके कार्य करने की बजाए अनियमित कारखानों में विशेष रूप से बहुत ही अमृतोपजनक हैं। इन अनियमित कारखानों में बाल धमिक बे-हवादार, कम प्रकाश तथा भीड़-भाड़ वाले और अत्यन्त दूने बाठावरण में कार्य करते हैं। शिशुओं को सभी प्रकार के घुटकर कार्य करने पड़ते हैं जिनमें अनेक कार्य भी सम्मिलित होता है। इन प्रकार कार्य सीपने के लिए उन्हें प्रायः बहुत भारी सूक्ष्म कुकाना पड़ता है। इन बाल धमिकों को केवल घुने घाम गालियाँ ही नहीं दी जाती अपितु उनके मासिक उन्हें कई बार मार भी बँटते हैं। बाल धमिकों की मजदूरी भी बहुत कम होती है। यह मजदूरी सामान्यतया वयस्क धमिकों की मजदूरी का ३० प्रतिशत से लेकर ५० प्रतिशत तक होती है।

धम समस्याएँ एवं समाज कल्याण

काय बापाल में बालकों की दैनिक मजदूरी मसय में ३७ न० व० से लेकर ३० न० व० तक रही है और दक्षिण राज्य में ३० न० व० से लेकर १२ न० व० तक है। 'कॉपी' बापाल में प्रब बालकों की दैनिक मजदूरी १० न० व० नियत कर दी गई है, इससे पूर्व उनकी मजदूरी केवल २३ न० व० प्रतिदिन थी। मीरुर के कॉपी बापाल में बालकों को ४८ न० व० प्रतिदिन के हिसाब से मजदूरी मिलती है और एबड़ के बापाल में दैनिक मजदूरी ३७ न० व० से ४२ न० व० तक है। दैनिक मजदूरी की दर बढ़ा प्रयोग में ३० न० व० तथा बीड़ी प्रयोग में केवल १६ न० व० से ३७ न० व० तक है। इन माँकों से यह ज्ञात होता है कि बालकों को बहुत का मजदूरी दी जाती है। (मजदूरी का मध्याय भी देखिये)।

बालकों की प्रायु तथा उनके कार्य करने के घण्टे —
 कारखानों जारों यातायात बापाल तथा दुकान धारि में बालकों की प्रायु तथा उनके कार्य करने के घण्टों से सम्बन्धित विभाग का अन्वेषण मध्याय १० तथा १० में पहले किया जा चुका है। बालकों के कार्य करने के घण्टे सीमित हैं उनका रात्रि में काम करना निषिद्ध कर दिया गया है, उन्हें साप्ताहिक छुट्टियाँ देने की भी व्यवस्था की गई है तथा समय-समय पर उनकी प्रायु भी निर्धारित कर दी गई है। सन् १९४८ के अधिनियम के अनुसार बालकों की प्रायु १२ वर्ष से बढ़ाकर १४ वर्ष कर दी गई है। किशोरों की प्रायु को १३ से लेकर १७ वर्ष तक की प्रब एक वर्ष और बढ़ा दी गई है अर्थात् १७ वर्ष से १८ वर्ष कर दी गई है। इस अधिनियम में बालकों तथा किशोरों को रोजगार देने से पूर्व उनकी डाक्टरी परीक्षा तथा प्रायु का प्रमाणीकरण भी अनिवार्य कर दिया गया है। उनके प्रतिदिन कार्य करने के घण्टे ३ से घटाकर ४ घंटे कर दिए गए हैं। धम समय विस्तार ३ घण्टे निर्धारित कर दिया गया है। १२ महीने निरन्तर लीकरी करने के उपरान्त बालकों को कम से कम ४ दिन की सवेतन छुट्टी मिलने की व्यवस्था है जो प्रत्येक १३ दिन के कार्य पर एक दिन की छुट्टी की दर से मिल सकती है। जारों में भी १३ वर्ष से कम प्रायु के बालकों को रोजगार पर सत्राता निषिद्ध कर दिया गया है। कार्य-समर्पता का डाक्टरी प्रमाण-पत्र के बवरे १५ वर्ष से कम प्रायु के किसी भी बालक को जारों के भीतर कार्य करने की अनुमति नहीं है। सन् १९४८ से तथा सन् १९३९ के बापाल धम अधिनियम के अन्वयगत १२ वर्ष से कम प्रायु के बालकों को बापाल में कार्य करने की अनुमति नहीं है। इन बालकों के कार्य घण्टे भी प्रति सप्ताह ४० निर्धारित कर दिए गए हैं। मध्य प्रदेश के निर्यमित कारखानों में बालकों के कार्य-घण्टे प्रतिदिन ७ नियत किए गए हैं और बालकों की बवरे करने की प्रायु १० वर्ष से बढ़ाकर १४ वर्ष कर दी गई है। मद्रास में दक्षिण से म बतने वाले कारखानों में बालकों के रोजगार की न्यूनतम प्रायु १४ वर्ष नियत की गई है। १४ वर्ष से लेकर १७ वर्ष के मध्य की प्रायु के किशोरों को तो केवल जरी रजा में रोजगार पर तयाता जा सकता है जबकि के कार्य-समर्पता का डाक्टरी प्रमाण-पत्र है। परन्तु बालकों के कार्य करने के घण्टों

घौर उनकी श्रायु से सम्बन्धित दोनों नियमों का समी स्वार्थ पर उत्सर्जन किया जाता है। बालकों के श्रम में काम करना प्रत्येक स्थान पर निषिद्ध हो गया है घौर इस सम्बन्ध में सन् १९५४ में कारखाना अधिनियम में संशोधन किया गया था (दिए गए पृष्ठ ४४३)।

सन् १९३३ का बाल (श्रम अनुबंध) अधिनियम —

[The Children (Pledging of Labour) Act, 1933]

भारत सरकार ने बाल श्रमिकों से सम्बन्धित दो विधायक अधिनियम पारित किए हैं, जो अब जम्मू घौर काश्मीर के प्रतिरिक्त सम्पूर्ण भारत में लागू हैं। इनमें एक तो १९३३ का बाल (श्रम अनुबंध) अधिनियम है। यह अधिनियम रॉयल श्रम प्रायोग की सिफारिशों के परिणाम-स्वरूप पारित किया गया था। रॉयल श्रम प्रायोग ने अपनी शीर्ष में यह देखा कि अनेक उद्योगों में विद्यपत्तया कालीन बुजुर्ग तथा बीड़ी उद्योग में माता-पिता या सरलक अपने छोटे-छोटे बालकों को उनके श्रम का अनुबंधन करके मासिकों के पास कार्य के लिए छोड़ देते थे। श्रम प्रायोग के अनुसार यह प्रथा बंधक श्रमिकों (Indentured Labour) की प्रथा से भी अधिक बुरी थी। इस प्रथा के अन्तर्गत किसी अधिम जन या ऋण के हेतु एक अनिदिष्ट अवधि के लिए श्रमिकों को अनुबंध कर दिया जाता था। इसलिये प्रायोग ने बड़े जोरदार शर्तों में इस बात की सिफारिश की थी कि श्रम अनुबंधन को एक इन्डोनीय प्रथा बनाने के लिए पत्र उठाए जाए। फलस्वरूप फरवरी १९३३ में इस विषय पर एक अधि नियम पारित किया गया। इस अधिनियम के अनुसार कोई भी ऐसा समझौता पाह वह लिखित हो या अलिखित, प्रबंध हो गया है जिसके अन्तर्गत किसी बालक क माता-पिता या उसके संरक्षक किसी नाम या धन के बदले उस बालक की सेवाओं को किसी भी उद्योग में उपयोग करने की अनुमति देकर उसके श्रम को अनुबंधित कर देते हैं। परन्तु इस अधिनियम के अन्तर्गत ऐसा कोई समझौता प्रबंध नहीं है जिसके अनुसार बालकों की सेवाओं के बदले केवल मजदूरी के प्रतिरिक्त अन्य कोई नाम नहीं लिया जाता है घौर जो बालकों के हित के विरुद्ध नहीं है घौर जिसे एक सप्ताह की सूचना पर समाप्त किया जा सकता है। इस अधिनियम के अन्तर्गत १५ वर्ष से कम श्रायु के बालकों को बालक माना जाता है। इस काम का उत्सर्जन करने पर मासिकों पर २०० इ० तक जुमाने की तथा मां बाप पर ५० इ० तक जुमाने की व्यवस्था की गई है। यह अधिनियम जम्मू व काश्मीर को छोड़कर समस्त भारत में लागू होता है।

बाल श्रमिकों की अनुबन्धन के सम्बन्ध में स्थिति —

श्रम अनुबंधन समिति के अनुसार उनकी शीर्ष के समय बहिए भारत तथा मैसूर राज्य के बीड़ी उद्योग के प्रतिरिक्त वेप किसी भी उद्योग में बाल श्रमिकों को अनुबंधन जैसी बुराई नहीं पाई गई। बीड़ी बुरट, मुबनी लम्बाजू साक करो तथा बमड़ा रंपने के उद्योगों में सप हुए श्रमिकों की सेवाओं के विषय में पूछनाछ

करने के लिए सन् १९४६ में मद्रास सरकार द्वारा नियुक्त किए गये एक बांच समामासय ने इस बात की भी रिपोर्ट की थी कि मद्रास के बीड़ी उद्योग में छोटे-छोटे बालकों की सेवाओं की अनुबन्धन की प्रस्तावी पाई जाती थी। मद्रास में यह बुराई हमलिए अभी या रही है कि वहाँ के धमिक बहुत निर्धन हैं। बीड़ी उद्योगों में प्रचर धमिक अपने बालकों या सहायक लड़कों को कुस्र प्रथिम बन देते रहते हैं। यह बालक बीड़े तो इस कर्म को चुकाने के लिए स्वतन्त्र होते हैं और कहीं भी जाकर अपने लिए नोकरी ढूँढ सकते हैं, परन्तु वास्तविक जीवन में इस कर्म के कारण यह बालक इन विधेय धमिकों से बच पाते हैं। धम्री हाम ही में मद्रास सरकार ने इस अधिनियम को हड़ कम से लागू करने के लिए प्रादेश जारी किए हैं। मंसूर धम धानुबउ द्वारा ही यह सूचनाओं से भी यह बात होता है कि मंसूर के कृषि धमिकों की दक्षिण जातियों में बाल धमिकों के अनुबन्धन की प्रथा भव भी पाई जाती है। सरकार इस बुराई को सीध्रातिधीघ समाप्त करने पर विचार कर रही है।

सन् १९३८ का बास अधिक रोजगार अधिनियम —

(The Employment of Children Act 1938)

एक धम अधिनियम सन् १९३८ का बास अधिक रोजगार अधिनियम है। इस अधिनियम के अनुसार उन समस्त व्यवसायों में १३ वर्ष से कम आयु के बालकों को कार्य पर लपाना निषिद्ध कर दिया गया है जो रेलवे यातायात द्वारा स जाए गए यात्रियों सामान या वाक से सम्बन्धित हैं या जिनका सम्बन्ध भारतीय बन्दरगाह अधिनियम के द्वारा विनियमित बन्दरगाहों में सामान लड़ाने उठारने से है। इस १९३८ के अधिनियम के अनुसार उपयुक्त व्यवसायों में, शिशुओं को छोड़कर धम १३ वर्ष से लेकर १७ वर्ष के मध्य की धानु के बालकों को एक दिन में निरन्तर १२ घंटे का धवकास भिगत चाहिए। इनमें से ७ घंटे रात्रि के १० बज से लेकर प्रातःकाल के ७ बजे तक होने चाहिए। बीड़ी बनाने कालीन बनाने सीमेंट बनाने तथा उसे बोरियों में भरने कपड़े की छपाई, रंभाई तथा बुनाई करनै दिवानसाइया बनाने विस्फोटक तथा प्राविन्नबाजी का सामान लँवार करने धमक काटने तथा जने कूटने अपड़ा बनाने सायुन बनाने जमड़ा रंगने तथा ऊन साफ करने से सम्बद्ध कारखानों में १२ वर्ष से कम आयु के बालकों का रोजगार पर लपाना निषिद्ध करने के लिए सन् १९३९ में इस अधिनियम में संशोधन किया गया। क्योंकि सन् १९४८ के फेस्टरी अधिनियम द्वारा बालकों के रोजगार पर लगने की न्यूनतम आयु १२ वर्ष से १४ वर्ष कर दी गई थी इसलिए सन् १९४८ में उपयुक्त कारखानों में बालकों के रोजगार की न्यूनतम आयु १२ वर्ष से १४ वर्ष करने के लिए इस अधिनियम में नून संशोधन किया गया। सन् १९४९ के निरसन तथा संशोधन अधिनियम द्वारा इस अधिनियम में कुछ छोटे-छोटे परिवर्तन भी किए गए, जिनके धमार्थ बालकों की धानु के सत्यापन (Verification) के सम्बन्ध में धमिकों कीट निरीक्षणों के बीच हुए मधेद धीर विवाद के निबटारे की भी व्यवस्था की गई है।

राज्य सरकारों को इस अधिनियम में संशोधन करने या इसके अन्तर्गत का विस्तार करने के अधिकार दिए गए हैं। सन् १९४७ में मद्रास सरकार ने मोटर यातायात कम्पनियों से सम्बन्ध कारखानों में सफाई करने वाले बाल धमिकों पर भी इस अधिनियम को लागू कर दिया। प्रसक्त सन् १९४८ में पीतल के बर्तनों तथा काँच की बूझियों के उद्योगों में रोजगार पर सने हुए बाल धमिकों के लिए उत्तर प्रदेश सरकार ने इस अधिनियम का विस्तार किया। किद्योनों के राजि में काम करने से सम्बन्ध पर्यटन राष्ट्रीय धम संगठन के अधिसूचन को कार्यान्वित करने के लिए सन् १९५१ में इस अधिनियम में पुन संशोधन किया गया। इस संशोधन के अन्तर्गत रेलवे तथा बन्दरगाह के प्राधिकारियों द्वारा ऐसे रजिस्टर रतना धमिधार्य कर दिया गया है जिनमें १७ वर्ष से कम आयु के बालकों के नाम अन्तर्लिखित तथा उनके विधायक मद्रासियों के धारि का विवरण हो। इसके साथ ही १५ से लेकर १७ वर्ष के मध्य की आयु के किशोरों को रेलवे और बन्दरगाहों में राजि में कार्य पर अगाना निषेध कर दिया गया है। इस अधिनियम का अन्वयन करने पर १ मास के कारावास या ५०० रु० के जुर्माने के अन्तर्गत या दोनों की व्यवस्था है। यह अधिनियम राज्यों में मुख्य कारखाना निरीक्षक, तथा केन्द्रीय व्यवसायो में मुख्य धम आयुक्त द्वारा प्रशासित किया जाता है। रेलवे में इस अधिनियम का प्रशासन मुख्य धम आयुक्त, प्रादेशिक धम आयुक्त तथा धम निरीक्षक द्वारा होता है। बन्दरगाहों में धम निरीक्षक इस अधिनियम का प्रशासन करते हैं।

रिपाटों से यह ज्ञात होता है कि केवल ठेकेदारों के धमिकों को छोड़कर रेलवे में इस अधिनियम को उचित रूप से लागू किया जाता है। धम अनुसन्धान समिति ने इस धोर ध्यान दिलाया था कि कई उद्योगों में—जैसे बधिरा भारत के बीड़ी तथा रिपासलाई के कारखानों में इस अधिनियम को पर्याप्त रूप से लागू नहीं किया जा रहा था। बीड़ी की कर्मचारियों में इस अधिनियम के लागू होने में सबसे बड़ी कठिनाई यह रही है कि इन छोटे-छाटे कारखानों के धमिक अपने कार्य स्थानों में निरय परिवर्तन करते रहते हैं। जब मद्रास सरकार ने बीड़ी औद्योगिक संस्थान (कार्य की शर्तों का विनियमन) नाम का १९१८ में एक अधिनियम बना दिया है जिसके अन्तर्गत बीड़ी के कारखानों को लाइसेंस लेना पड़ता है तथा पंजीकृत करना पड़ता है। ऐसे ही अधिनियम १९५६ में केरल तथा मैसूर में भी पारित कर दिए गए हैं। (रेलिय पृष्ठ ११०)।

निष्कर्ष तथा सुझाव—

संशय में कहा जा सकता है कि इन अधिनियमों से कोई बिगन महापदा नहीं मिल सकी है। इसका कारण यह है कि लोग सामान्यतया इन कानूनों से बचने की श्रम करते हैं। इसके अतिरिक्त धमि व्यवसायों में तथा घरेलू शीकरों के रूप में रोजगार पर सने हुए बालकों के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। अतः बाल धमिकों के रोजगार से सम्बन्ध बुराइयों को रोकने के लिए पय उठाए जाने निताम आवश्यक,

६। एक सुचारु जिसको तत्काल किया जाना चाहिए, वह धर्म निरीक्षण को बढ़ करने की व्यवस्था करना है ताकि कानून की बाधाओं का उल्लंघन न किया जा सके। मासिक प्रायः यह तर्क देते हैं कि वे बालकों को रोजगार पर लगाकर भूमिकों की पारि वारिक धाम को जो बहुत कम है बढ़ाते हैं और इस प्रकार, जब शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओं का अभाव है बालकों को रोजगार देकर उनको बुरी धारतों और बाधकत्व में पड़ने से बचा लिया जाता है। परन्तु इस प्रकार के तर्कों में कोई विशेष बल नहीं है। कोई भी राष्ट्र अपने बालकों को उपाय नहीं कर सकता क्योंकि यही बालक तो राष्ट्र के मायी धमिक और नागरिक बनते हैं। केवल बालकों को रोजगार देने पर नियंत्रण ममाने से ही काम नहीं आयेगा अपितु आवश्यक यह है कि औद्योगिक रोजगारों से बाल भूमिकों को हटाने के लिए ठोस कदम उठाए जाएँ। जैसा कि धर्म अनुसंधान समिति ने कहा था "भूमिकों की मायी संरक्षण की ओर ध्यान देना सरकार का कर्तव्य है और सरकार को इस ओर ध्यान देना चाहिए कि कहीं बालकों का बचपन स्कूलों में पढ़ने विद्युत्सुओं में पाषाण-नोपिठ होने और बेरोजगारी के संशय में बेतने के स्थान पर कार्य सामाजिक और फेडरटिवों के बन्धे स्पर्शों में ही मल्ट नहीं हो रहा है।" इसमें सन्देह नहीं है कि सरकार इस ओर अब ध्यान दे रही है और बालकों के हित की नीति को अपना लिया गया है परन्तु इस नीति को पूर्णतया से लागू करने की आवश्यकता है, यह तभी हो सकता है जब उचित प्रकार के निरीक्षण और भूमिकों के बच्चों के लिए शिक्षा और भूमिक सुविधाओं की व्यवस्था की जाए। इसके प्रतिरिक्त जैसा की नी नी निरि ने मुद्दा दिया है बालकों के रोजगार की धामु बढ़ाकर १६ वर्ष कर दी जानी चाहिए तथा इस धामु तक बालकों को नि-मुक्त तथा अनिर्वास्य से शिक्षा मिलनी चाहिए।

यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि बाल भूमिकों को समस्या सभी बयस्क कमान बालों के लिए पर्याप्त मजदूरी की समस्या से सम्बन्धित है। बयस्क कमाने बालों को जो बहुत कम मजदूरी मिलती है उसी कारण वे अपने बालकों को काम पर भेजने के लिए विवश हो जाते हैं और कानून के अक्षयधन में मासिकों से मिल जाते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघन न बालकों तथा किशोरों की सुरक्षा पर अपनी रिपोर्ट में इस बात पर ठीक ही बल दिया है कि बाल भूमिकों को कार्य में ममाना निषिद्ध कर देने की जो समस्या है वह आवश्यक रूप से इस समस्या से संबंधित है कि बालकों का निर्वाह किस प्रकार से हो और रोजगार पर लग हुए सभी भूमिकों को इतनी पर्याप्त मजदूरी मिले कि वे अपने परिवार का एक उचित स्तर पर निर्वाह कर सकें। औद्योगिक भूमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी तथा उचित मजदूरी का निर्धारण तथा उनके लिए सामाजिक बीमा की योजनाएँ ही बहुत सीमा तक इस समस्या का समाधान कर सकती हैं। समाज को इस बात का उत्तरदायित्व देना चाहिए कि वह बालकों के निर्वाह और उनकी शिक्षा का प्रबन्ध करे ताकि बालकों को इस बात का पूरा अक्षर मिले कि उनकी मानसिक नैतिक और धार्मिक

श्रमिकों का बिकास हो सक। इस प्रकार जब वे बढ़े होंगे तो धन और समाज क हित के लिए कार्यकुशल श्रमिक, बुद्धिमान नागरिक और ऐसे स्त्री और पुरुष बन सकेंगे, जो धन उतारवायित्व समझे हों। भारत क संविधान में भी इस बात का उल्लेख है कि १४ वर्ष से कम आयु का कोई भी बालक किसी भी कारखाने, छान या अन्य किसी खतरे वाले कार्य में रोजगार पर नहीं लगाया जा सकता और यह राज्य का कर्तव्य होगा कि वह यह देखे कि सुकुमार आयु के बालकों से अनुचित लाभ नहीं उठाया जाता तथा संघर्षकास व मुनाफ़ाकास का शोषण नहीं होता है और उनकी निर्भरता और नैतिक पतन के गर्त में नहीं गिरने दिया जाता है।

उद्योगों में स्त्री श्रमिक

(Woman Labour in Industries)

भारत के औद्योगिक व्यवसायों में स्त्री श्रमिकों की संख्या भी काफी अधिक है। राष्ट्रीय सर्वेक्षण-व्यवस्था में जिन क्षेत्रों में स्त्री श्रमिकों की अधिक संख्या में कार्य पर लगाया जाता है, वह निम्नलिखित हैं (१) कृषि (२) बागान (३) छाने (४) कारखाना उद्योग (५) सज्ज उद्योग धन्धे (६) समाज सेवा क कार्य (७) स्पेशल पास नौकरियाँ (White-Collar Jobs)। अन्य संगठित उद्योगों की धरणा बागान में स्त्रियों को रोजगार पर अधिक लगाया जाता है। सन् १९५७ में उनकी संख्या कुल श्रमिकों में से कारखानों में १०.२ प्रतिशत थी जबकि यही संख्या खानों में १६.३ प्रतिशत तथा बागान में ४७.६ प्रतिशत थी। ऐसे कारखाना उद्योग जिनमें अधिकतर स्त्रियों को रोजगार पर लगाया जाता है, निम्नलिखित हैं खाद्य तथाकथित में से विनीस निकालने तथा उसे बचाने की फैक्ट्रियाँ, चाय की फैक्ट्रियाँ, तम्बाकू अथवा सुन्धी तनिज उत्पादन, कायज और कागज से बनी हुई चीजें रसायन तथा रसायनिक पदार्थों का उत्पादन मकड़ी तथा डाट कपड़ा, पटसन रेशम उच्च आबधमिर्ले बालमिसें धाद्यतेस काजू, कौंधी के कारखाने तथा और रियासलाई और कुछ धन्धे असंगठित उद्योग जैसे बीड़ी बनाना धारि। सभी फैक्ट्रियों में रोजगार पर लगी हुई स्त्रियों की कुल संख्या में से समय धायी स्त्रियाँ तो केवल कपास तथा जूट के कारखानों में ही लगी हुई हैं। सन् १९५७ में विभिन्न राज्यों की फैक्ट्रियों में रोजगार पर लगी हुई स्त्रियों की कुल संख्या ३००.१५२ थी। मद्रास में सबसे अधिक संख्या में स्त्रियाँ रोजगार पर लगीं जाती हैं। इसके बाद महाराष्ट्र आता है। जिन अन्य राज्यों में स्त्रियों का अधिक संख्या में रोजगार पर लगाया जाता है व पश्चिमी बंगाल तथा मध्य प्रदेश हैं। सन् १९५६ में छानों के भीतर काम करने वाली स्त्रियों की संख्या २४०८६ थी। इसके बरवान् खानों के भीतर काम करना उनके लिए निषिद्ध कर दिया गया। सकिन कुछ काम में यह प्रतिबन्ध हटा लिया गया था और सन् १९५२ में खानों के भीतर कार्य करने वाली स्त्रियों की संख्या २२.२१७ तक पहुच गई थी। सन् १९५६ में यह संख्या बढ़कर केवल १०,७८२ रह गई थी। उसी समय से खानों के भीतर स्त्रियों को कार्य में लगाना फिर से निषेध कर दिया गया है। सन् १९५८ में ७२,०४४

है। एक मुबार बिद्यको ठाकास किया जाना चाहिए, वह श्रम निरीक्षण को हट करने की व्यवस्था करना है ताकि कामून की शारतों का उल्लंघन न किया जा सके। मासिक प्रायः यह एक दैते हैं कि वे बालकों को रोजगार पर लगाकर श्रमिकों की पारि वारिक धार को जो बहुत कम है बढ़ाते हैं और इस प्रकार, जब शिक्षा सम्बन्धी मुविधानों का ध्यान है, बालकों को रोजगार लेकर उनको बुरी शारतों और शारत में पढ़ने से बचा किया जाता है। परन्तु इस प्रकार के शर्तों में कोई विद्येय बन नहीं है। कोई भी राष्ट्र अपने बालकों को उपेक्षा नहीं कर सकता क्योंकि वही बालक जो राष्ट्र के शारी श्रमिक और नागरिक बनते हैं। केवल बालकों को रोजगार देने पर विद्येय लगाने से ही काम नहीं चलेगा। श्रमिणु धारस्यक यह है कि प्रौद्योगिक रोजगारों से बाल श्रमिकों को हटाने के लिए ठोस कदम उठाए जाएँ। जैसा कि श्रम धनुसंबान समिति ने कहा था "श्रमिकों की शारी संतान की शरी ध्यान देना सरकार का कर्तव्य है और सरकार को इस शरी ध्यान देना चाहिए कि कहीं बालकों का बचपन स्कूलों में पढ़ने, शिषुगृहों में पालित-श्रीयित होने और शैलों के शंशन में खेलने के स्वाम पर कार्य धालाओं और फंडरियों के शये स्वामों में ही गप्ट नहीं हो रहा है।" इसमें शर्कह नहीं है कि सरकार इस शरी धार ध्यान दे रही है और बालकों के हित की नीति को धपना किया गया है परन्तु इस नीति को पूर्णरूप से लागू करने की धारस्यकता है, यह शरी हो सकता है जब उचित प्रकार के निरीक्षण और श्रमिकों के बच्चों के लिए शिशा और श्रमिक मुविधानों की व्यवस्था की जाए। इसके श्रितिरिक्त जैसा श्री बी० बी० निरि ने मुझक शिवा है, बालकों के रोजगार की धानु बढ़ाकर १९ वर्ष कर दी जानी चाहिए, तथा इस धानु तक बालकों को निशुक्त तथा श्रमिधार्क रूप से शिशा मिलनी चाहिए।

यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि बाल श्रमिकों को समस्या शरी बयस्क कमाने बालों के लिए पर्याप्त मजदूरी की समस्या से सम्बन्धित है। बयस्क कमाने बालों को जो बहुत कम मजदूरी मिलती है उसी कारण से अपने बालकों को काम पर लेजने के लिए विद्येय हो जाते हैं और कामून के धपबंधन में पालिकों से मिल जाते हैं। शरतरीय श्रम संतान में बालकों तथा श्रिधोरों की सुरक्षा पर धपनी रिपॉर्में में इस बात पर शीक ही बन शिवा है कि बाल श्रमिकों को कार्य में लगाना निषिध कर देने की को समस्या है। यह धारस्यक रूप से इस समस्या से संबंधित है कि बालकों का निर्वाह किस प्रकार में हो और रोजगार पर सने हुए श्रमी श्रमिकों को शरती पर्याप्त मजदूरी मिले कि वे अपने परिवार का एक उचित शर पर निर्वाह कर सकें। प्रौद्योगिक श्रमिकों के लिए श्रुतक मजदूरी तथा उचित मजदूरी का निर्धारण तथा उनक लिए सामाजिक शीमा की योजनार्थ ही बहुत सीमा तक इस समस्या का समाधान कर सकती है। समाज को इस बात का उतरदायित्व लेना चाहिए कि वह बालकों के निर्वाह और धपकी शिधा का प्रबन्ध करे ताकि बालकों को इस बात का पूर धपसर मिले कि उनको माशरिध श्रितिक, और धारध्याशिक

वस्तुओं का बिकास हो सक। इस प्रकार अब वे बड़े होम तो अपने और समाज के हित के लिए कार्यकुशल श्रमिक, बुद्धिमान नागरिक और ऐसे स्त्री और पुरुष बन रहे, जो अपना उत्तरदायित्व समझते हों। भारत के संविधान में भी इस बात का उल्लेख है कि १४ वर्ष से कम आयु का कोई भी बालक किसी भी कारखाने, शान या अन्य किसी खतरे वाले कार्य में रोजगार पर नहीं लगाया जा सकता और यह राज्य का कर्तव्य होगा कि वह यह देखे कि सुकुमार आयु के बालकों से अनुचित लाभ नहीं उठया जाता तथा श्रमिकों का श्रमिकता का शोषण नहीं होता है और उनकी निर्धनता और नैतिक पतन के गर्त में नहीं गिरने दिया जाता है।

उद्योगों में स्त्री श्रमिक

(Woman Labour in Industries)

भारत के औद्योगिक व्यवसायों में स्त्री श्रमिकों की संख्या भी काफी अधिक है। राष्ट्रीय सर्वेक्षणों में जिन क्षेत्रों में स्त्री श्रमिकों को अधिक संख्या में कार्य पर लगाया जाता है, वह निम्नलिखित हैं (१) कृषि, (२) बागान (३) शालें (४) कारखाना उद्योग, (५) मनु उद्योग अन्य (६) समाज सेवा के कार्य (७) सफेद पाय नौकरियां (White-Collar Jobs)। अन्य संगठित उद्योगों की अपेक्षा बागान में स्त्रियों को रोजगार पर अधिक लगाया जाता है। सन् १९५७ में उनकी संख्या कुल श्रमिकों में से कारखानों में १०.२ प्रतिशत थी जबकि यही संख्या शालों में १९.३ प्रतिशत तथा बागान में ४७.६ प्रतिशत थी। ऐसे कारखाना उद्योग जिनमें अधिकतर स्त्रियों को रोजगार पर लगाया जाता है, निम्नलिखित हैं। चाय बपान में से बिनीसे निकालने तथा उसे दबाने की फैक्ट्रियां, चाय की फैक्ट्रियां, तम्बाकू धपातु सम्बन्धी खनिज उत्पादन, कायज और कामज से बनी हुई चीजें, रसायन तथा रासायनिक पदार्थों का उत्पादन सफ़ाई तथा डाट, कपड़ा, पटसन, रेडम, ऊन, चाबस मिस्रे, शाल मिस्रे, शालम, काजू, कौड़ी के कारखाने, शाल, और बियासलाई और कुछ अन्य असंगठित उद्योग जैसे बीड़ी बनाना आदि। सभी फैक्ट्रियों में रोजगार पर लगी हुई स्त्रियों की कुल संख्या में से लगभग धांधी स्त्रियां तो केवल कपास तथा जूट के कारखानों में ही लगी हुई हैं। सन् १९५७ में विभिन्न राज्यों की फैक्ट्रियों में रोजगार पर लगी हुई स्त्रियों की कुल संख्या ३००,१५२ थी। मद्रास में सबसे अधिक संख्या में स्त्रियां रोजगार पर लगी जाती हैं। इसके बाद महाराष्ट्र आता है। जिन अन्य राज्यों में स्त्रियों को अधिक संख्या में रोजगार पर लगाया जाता है, वे पश्चिमी बंगाल तथा मध्य प्रदेश हैं। सन् १९२९ में शालों के भीतर काम करने वाली स्त्रियों की संख्या २४,०८९ थी। इसके बरबाद शालों के भीतर काम करना उनके लिए निषिद्ध कर दिया गया। लेकिन कुछ काल में यह प्रतिबन्ध हटा लिया गया था और सन् १९५५ में शालों के भीतर कार्य करने वाली स्त्रियों की संख्या २२,५१७ तक पहुच गई थी। सन् १९५६ में यह संख्या बढ़कर केवल १०,७८२ रह गई थी। उसी समय से शालों के भीतर स्त्रियों को कार्य में लगाया फिर से निषेध कर दिया गया है। सन् १९५८ में ७२,०५४

स्त्री श्रमिक शानों के बाहर खुले में कार्य करती थी। ४२ ७६६ स्त्री श्रमिक जाल के ज्वर कार्य करती थीं। इस प्रकार स्त्री श्रमिकों की कुल संख्या ११७ ८४० थी। विभिन्न शानों में स्त्री श्रमिकों की कुल संख्या इस प्रकार थी। कोयला ४१,१६०, पत्थर २,७४२ मैपेनीज २४ २८६ कच्चा लोहा १३ २४२ सोना ७४२, चूना १२,३७२, धान्य १२ ६४६। सन् १९२०-२१ में प्रथम के चाय बागान में घोषित स्त्री श्रमिकों की कुल संख्या रजिस्ट्रारों के अनुसार २,०४ ४४६ थी तथा फलतः वर्ग की स्त्री श्रमिकों की संख्या ४३,१३८ थी। सन् १९२६-२७ में चाय बागान में रोजगार पर लगी हुई स्त्रियों की संख्या लगभग १ ९६,२९२ थी अर्थात् घासतण बैनिक कार्य पर लगे हुए श्रमिकों में से ४७ ६ प्रतिशत स्त्रियाँ थी। प्रथम के चाय बागान में यदि स्त्री घोर बाल श्रमिकों की संख्या को एक घाब जोड़ दिया जाय तो वह संख्या पुरुष श्रमिकों की संख्या से अधिक हो जाती है।

घरक उद्योग में स्त्री श्रमिकों की संख्या १ ६०० अर्थात् कुल श्रमिकों का १७ प्रतिशत अनुमानित की गई है। चपड़ा तथा बौड़ी उद्योगों में भी घबिक संख्या में स्त्रियों को रोजगार पर लगाया जाता है। धन्य उद्योग विभिन्न स्त्रियों को रोजगार पर घबिक लगाया जाता है, वह चावल की मिलें हैं। यह मिलें बंगाल विहार तथा मद्रास में घबिक पाई जाती हैं। इन मिलों में स्त्रियों को चावल सुकाने फैसान तथा उन्हें जलटने-मसटने के काम पर लगाया जाता है। यह स्त्रियाँ बान में से चावल निकालने तथा झुड़ी घाबि के फटकने का भी काम करती हैं। इन स्त्रियों को घपने पैरा या करघुने से चावल फैसाने तथा उन्हें जलट-मसट करने के लिए घापन में बच्चों कड़ी रूप में इजद-जबर बमना पड़ता है। नगर-पालिकाओं तथा सार्वजनिक कार्यों में भी स्त्री श्रमिकों को रोजगार पर लगाया जाता है। सन् १९२७ में विभिन्न राज्यों की नगर-पालिकाओं में रोजगार पर लगी हुई स्त्रियों की कुल संख्या ११ ७७६ थी तथा सार्वजनिक कार्यों में सीधे रूप से लगी हुई स्त्रियों की संख्या केन्द्र में ७७ थी तथा राज्यों में ६ ६१७ थी। ज्हेबारों द्वारा मवाई हुई स्त्री श्रमिकों की संख्या केन्द्र में ४ ३१२ थी तथा राज्यों में २४ ७६७ थी। मार्च सन् १९३० में सरकारी रेलवे में १० ४६० स्त्रियाँ रोजगार पर लगी हुई थी तथा रेलवे बाईं घोर कार्यालयों में रोजगार पर लगी हुई स्त्रियों की संख्या ३६ थी। इन श्रमिकों से स्त्रियों का रोजगार पूर्णतया ज्ञात नहीं होता क्योंकि सूचना सीमित रूप से ही प्राप्त हो पाती है। कृषि में स्त्री श्रमिका की संख्या कृषि-मम-बाब के अनुसार १९२०-२१ में एक करोड़ चामीस लाख थी तथा १९२६-२७ में एक करोड़ बीस लाख थी। स्त्री श्रमिकों के रोजगार की समस्या हाम में हुए एक सर्वेक्षण के निष्कर्ष —

सन् १९०१-२१ की ३० वर्ष की अवधि में कृषि-रोजगारों की घोषणा वर कृषि रोजगारों में स्त्रियों के लिए कार्य करने के अवसरों में बहुत कमी घा गई थी। यह निष्कर्ष उक्त अध्ययन से ज्ञात होता है, जो भारतीय सरकार के मम स्रोत तथा

घायोजना धामाग क भम तथा रोजगार विभाग ने मिसकर १९२८ म किया बा और जिसका चक्ष्य यह बा कि १९०१ से स्त्रियों के लिए जो रोजगार में कमी बा प्रतिक्रिया बा गई थी उसका अध्ययन किया जाए। इस अध्ययन स यह ज्ञात होता है कि स्त्री धर्मिकों की संख्या १९११ में ४३००० साख से १९२१ में घटकर ४००७० साख रह गई थी, जबकि उसी अवधि में स्त्रियों की जनसंख्या १४६०६० साख से बढ़कर १७१०४० साख हो गई थी। दूसरे चर्चों में स्त्री धर्मिकों की संख्या २०३० साख के लगभग घट गई थी जबकि स्त्रियों की जनसंख्या २३०५० साख बढ़ गई थी।

सन् १९०१-५१ की अवधि में, सन् १९३१ के वर्ष को छोड़कर, स्त्रियों का अपने तथा दूसरे के चेतों में कृषि कार्यों में भाग लेना निर्वह दृष्टि से पर्याप्त मात्रा में बढ़ गया बा। सन् १९३१ में जो धर्मिके एकत्रित किए गए थे, वे ठीक नहीं ब क्योंकि जन-गणना के धर्मिकों के धर्मगत बरेसू महिलाओं को बरेसू नौकरों की तरह मान लिया गया बा। यदि स्त्रियों का रोजगार स्त्री और पुरुष दोनों की कुल जनसंख्या को मिलाकर १०००० में स सापेक्ष दृष्टिकोण लिया जाए तो इस अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि कृषि कार्यों में स्त्रियों के भाग लेने में तथा कृषि धर्मिकों के रूप में उनके रोजगार में अधिक परिवर्तन नहीं हुआ बा यद्यपि एक दशती (Decade) से दूसरे दशती में कुछ भिन्नता अवश्य बा गई थी। परन्तु इस अवधि में ऐसी स्त्रियों को जो लगान प्राप्त करने वाले वर्ष के धर्मगत प्राप्ती हैं काफ़ी दक्षि पहुँची। इस अध्ययन से यह भी ज्ञात हुआ है कि कृषि, वाणिज्य तथा अन्य सेवाओं और विविध कार्यों पर सगी हुई स्त्रियों की संख्या म निर्वह तथा सापेक्ष दोनों दृष्टि कोणों से कमी बा गई थी। परन्तु परिवहन क कार्यों में स्त्रियों क रोजगार में वृद्धि हुई थी।

इस पचास वर्ष की अवधि में स्त्रियों क रोजगार में निम्नलिखित उद्योगों म वृद्धि हुई थी कोयले की खानें तम्बाकू सोहा तथा इस्पात तथा मोहा-विमान सम्बन्धी धातु उद्योग परिवहन सामग्री, इट खपरैस तथा मिट्टी के धन्य रचनात्मक उत्पादन, फर्नीचर तथा उसके सगाने का सामान बागवत तथा कायज के उत्पादन छापाई तथा उसके साथ क धन्य उद्योग शिक्षात्मक सेवाएँ तथा धर्म्येपख नगर पालिकाएँ तथा स्थानीय बोर्डें होटल भोजनालय तथा चाय-गृहों और धन्य कानून सम्बन्धी सेवाएँ प्रादि। सक्रिय विविध साध उद्योगों अनाजों तथा दानों प्रधातु सम्बन्धी सनिज उत्पादनों ईंधन के कुन्कर ब्यापारी सफ़ाई के कार्यों तथा धन्य सेवाओं और कपड़ा बाने तथा कपड़ा पाने की सेवाया क कार्यों में इन स्त्रियों के रोजगार में कमी हो गई थी।

संगठित रोजगारों स सम्बद्ध धर्मिक मूखत्वाएं सन् १९२६ तक की थी और इनको भी इस अध्ययन मे सम्मिलित कर लिया गया है। सन् १९२०-२६ की ६ वर्ष की अवधि में विभिन्न औद्योगिक समूहों में स्त्रियों के रोजगार की अवस्था एक

समान नहीं थी। उम्बाऊ उद्योगों तथा रसायन पेशाओं तथा रासायनिक उत्पादनों में तो स्त्रियों के रोजगार में वृद्धि हुई थी परन्तु मकड़ी तथा फरनीयर उद्योगों, कानज तथा कामज के उत्पादनां कपड़ा मिलों तथा धान्य मूलभूत वस्तु उद्योगों में स्त्रियों के रोजगारों में कमी हो गई थी। धर्म औद्योगिक समूहों जैसे कृषि सम्बन्धी प्रक्रियाओं, गाबरक पेशों के प्रतिरिक्त साध तथा प्रकृत सम्बन्धी खनिज उत्पादनों में स्त्रियों का रोजगार कुछ अधिक स्थिर था। कपड़ा मिलों तथा बूट उद्योगों में जहाँ तक स्त्रियों के रोजगार का प्रश्न था सन् १९२० में स्त्रियों की संख्या १७००० से घटकर सन् १९२६ में २१००० रह गयी थी। बीड़ी तथा धियासलाई उद्योगों में रोजगार की स्थिति अच्छी थी। काजू के उद्योग तथा चाय की फैक्ट्रियों में स्त्रियों के रोजगार में अत्यन्त महत्वपूर्ण कमी आ गई थी। जहाँ तक खानों का सम्बन्ध है मैगनीज तथा कच्चे लोहे की खानों में स्त्रियों के रोजगार में अधिक वृद्धि हुई थी। लेकिन इसके साथ ही कोयला तथा प्रचक की खानों में उनका रोजगार अधिकतरवा कम हो गया। चाय बागान में स्त्रियों का रोजगार सन् १९२०-२१ में २४८ लाख से घटकर सन् १९२६-२७ में १६६ लाख रह गया था लेकिन स्त्री तथा पुरुष दोनों प्रकार के व्यस्क श्रमिकों की कुल संख्या में जो कमी हुई थी, स्त्रियों के रोजगार में यह कमी जसी अनुपात से हुई थी। जहाँ तक कारखाना उद्योगों का प्रश्न है उनमें स्त्रियों का कुल रोजगार १९२१ में २३१ लाख से बढ़कर १९२७ में २२२ लाख हो गया था। परन्तु स्त्री श्रमिकों की संख्या इस अवधि में २१ लाख से घट कर ४६६ लाख रह गई थी।

इस अव्ययन के अनुसार देख में जैसे-जैसे औद्योगीकरण में वृद्धि होती जायेगी जैसे-जैसे स्त्री श्रमिकों की संख्या में भी वृद्धि होती जायेगी और इस संख्या में तृतीय वर्ग की धर्म-व्यवस्था के अन्तर्गत विशेष रूप से वृद्धि होगी।

ऐसी अनेक महत्वपूर्ण बातें हैं, जो स्त्री श्रमिकों के रोजगार की कमी के लिए उत्तरदायी हैं। यह बातें तकनीकी वैज्ञानिक तथा धार्मिक हैं। एक महत्वपूर्ण कारण तो यह है कि प्राचीन काल में जो कार्य स्त्रियां अपने हाथों से किया करती थी उनके स्थान पर अब कई मशीनों का प्रचलन हो गया है। कारण यह भी है कि स्त्रियों के लिये खानों के भीतर कार्य करना तथा अब उद्योगों में रात्रि में कार्य करना वैज्ञानिक रूप से निषेध कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त स्त्रियों से सम्बद्ध विभिन्न धर्म कानूनों के अन्तर्गत शक्तियों पर जो अधिक वितीय भार पड़ा है उनके कारण भी स्त्री श्रमिकों को रोजगार देने में कमी हो गई है। ऐसे वैज्ञानिक निषेध विभिन्नविध हैं—कानून-हित-साम की धरायनी, धिनु-पहों की व्यवस्था समाज धर्म के लिये समान वेतन का विधान तथा मजदूरी समानीकरण प्रकृती का मानू करना आदि।

१९२६ में पश्चिमी बंगाल में स्त्रियों की बेरोजगारी की समस्या पर एक

प्रथमतः से भी यह बात होता है कि स्त्रियों के रोजगार में पिछनी कई दशियों (Decades) से कमी होती आ रही है।

स्त्री शक्तियों के कार्य की प्रकृति—

इन प्रांकों से यह स्पष्ट हो जाता है कि देश में शान शक्तियों को रोजगार पर लगाने के समान ही स्त्रियों की रोजगार पर लगाना एक प्राथमिक बात है। वास्तविकता भी यह है कि यदि स्त्रियों के कार्य करने की दशाओं को उचित रूप से विनियमित कर दिया जाए तो वे भी उत्पादन के क्षेत्र में अत्यन्त महत्वपूर्ण योग दे सकती हैं। कुटीर उद्योगों में पारिवारिक कर्तव्यों की पूर्ति के साथ-साथ स्त्रियाँ कातने और बुनने जैसे व्यवसायों में भी पुरुषों की सहायता करती हैं। कृषि में भी स्त्रियाँ खेतों में पुरुषों की बड़ी सहायता करती हैं। परन्तु बड़े पैमाने के उद्योगों में स्त्रियों को रोजगार देना कुछ वर्षों से ही धारम्भ हुआ है। अधिकांश स्त्री शक्ति पुरुष शक्तियों के परिवारों में ही सम्बद्ध होती हैं और वे प्रायः अपने परिवारों की आय के अनुपूरण के हेतु ही कार्य करती हैं। कारखानों में रोजगार पर सभी हुई ऐसी बहुत कम स्त्रियाँ हैं, जो कृषि पुरुष पर आश्रित नहीं हैं। विभिन्न उद्योगों में उनके कार्यों की प्रकृति भी भिन्न भिन्न होती है। संगठित तथा निरन्तर शान कपास और सूट आदि जैसे कारखानों में स्त्रियाँ सामान्यतया कुतियों के रूप में धाँसी सपेटने तथा बटन करने के विभागों में अधिक संख्या में रोजगार पर लगाई जाती हैं। मौसमी कारखानों में विशेषतया कपास में वे विशेष निवासने और उसे बसाने तथा शान के कारखानों में स्त्रियों को साधारण कुतियों के रूप में रोजगार पर लगाया जाता है। बागान में भी अधिक संख्या में स्त्री शक्ति पाई जाती है, क्योंकि बागान में कार्य करने की पद्धति पारिवारिक आधार पर है और बहुत बेलन छोटे-छोटे बच्चों और अल्पक प्राणियों को छोड़कर परिवार के दोप सभी सक्षम कार्य करते हैं। प्रायः यह देखा गया है कि प्रथम में बागान शक्तियों के परिवार में औसतन लगभग ४-१२ व्यक्ति होते हैं जिनमें से कम से कम २-४ व्यक्ति जमाने शान होते हैं। इनमें १-२ पुरुष • १-१ स्त्रियाँ तथा • १-१ शानक होते हैं। खानों में विशेषतया कोयले की खानों में स्त्रियों को आभास्यतया बोझ होने या टेला सादने के कार्य पर नियुक्त किया जाता है यद्यपि कुछ विशेष परिस्थितियों में उन्हें ट्रामें चलाते हुये भी देखा जाता है।

स्त्री शक्तियों की मजदूरी तथा उनको आय —

स्त्रियों की मजदूरी तथा उनकी आय के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि जब स्त्रियों को उसी या उसी प्रकार के व्यवसायों पर भी नियुक्त किया जाता है जिनमें पुरुष कार्य करते हैं, तो भी उनकी मजदूरी घनेताहत पुरुषों से कुछ कम ही होती है। कपड़ा मिल उद्योगों के अनेक क्षेत्रों में स्त्रियों की आय दो भागों पर निर्भर करती है (क) कार्य की उपलब्धता तथा (ग) उनको बिटने बच्चों के लिये खर्च पर लगाया जाता है क्योंकि स्त्रियों के लिए नियमानुसार कार्य के घंटे कई बार प्राप्त नहीं किये जाते जिनका कारण यह है कि उन्हें परेसू कर्तव्यों का भी पालन

करना पड़ता है। कुछ रिपोर्टों से यह भी ज्ञात हुआ है कि कोयले की खानों तथा बायल में कुछ कार्यों में स्त्रियाँ उतनी ही कार्यकुशल पाई गई हैं जितने कि पुरुष यद्यपि उनकी मजदूरी में थोड़ा अंतर है। जहाँ तक भारतीय संगठित उद्योगों में स्त्री श्रमिकों का सम्बन्ध है सन् १९४८ के प्रथम मजदूरी अधिनियम में समान कार्य के लिये समान वेतन का विद्यमान स्वीकार कर लिया गया है। परन्तु इस विद्यमान के अन्वये जाये के कारण अनेक स्थानों पर स्त्री श्रमिकों को रोजगार पर लगाना कठिन कर दिया गया है क्योंकि जैसा कि मजदूरी के अध्याय में उल्लेख किया गया है। श्रमिकों को स्त्रियों को नौकरी देने में हानि उठानी पड़ती है। इसका कारण यह है कि इन स्त्रियों को उन्हें बहुत से लाभ देने पड़ते हैं और स्त्रियाँ बहुत कम तक नौकरी पर टिकती भी नहीं हैं। इसलिए श्रमिक उन्हें केवल कम मजदूरी पर ही नौकरी देते हैं (देखिये पृष्ठ ५२६-२७)।

स्त्री श्रमिकों के लिये लाभ —

स्त्री श्रमिक के लिये मातृत्व-हित-लाभ अधिनियम अब अधिकांश राज्यों में प्रचलित है इनका उल्लेख सामाजिक सुरक्षा के अध्याय में विस्तृत रूप से किया जा चुका है। सन् १९४८ के कारखाना अधिनियम और १९४२ के ज्ञान अधिनियम के अनुसार जहाँ भी ५० स्त्री श्रमिकों से अधिक स्त्रियाँ कार्य करती हैं, वहाँ धिम्बुपूर्वों की व्यवस्था कर दी गई है। सन् १९४७ के अधिनियम के अन्तर्गत स्थापित कोयला खान धम कल्याण निधि भी एक विशेष शाखा भी स्त्रियों तथा बालकों के हितों की रक्षण करने के लिये खानों में प्रारम्भ कर दी गई है। सभी उद्योगों में स्त्रियों के लिये रात्रि में काम करना निषिद्ध कर दिया गया है। मातृत्व-हित लाभ तथा रात्रि में काम करने पर निषेध के अतिरिक्त अन्तिम कारखाना अधिनियम में कार्य करने के बच्चों अथवा गर्भवती तथा कुट्टियों आदि के सम्बन्ध में स्त्री श्रमिकों को कोई अन्य विशेष अधिकार नहीं दिए गए हैं, यद्यपि अब कारखाना विभाग बने के लिये प्रारम्भ में स्त्रियों तथा बालकों के ही कार्य करने के बच्चे विनियमित किए गए थे।

स्त्रियों के लिये खानों के भीतर कार्य करने की समस्या —

स्त्रियों के खानों के भीतर कार्य करने पर रोक लगाने से भी कई विशेष प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं। इस प्रकार के कार्यों को निषिद्ध करने की सलाह बहुत आवश्यकता रही है और कोई भी सम्बन्ध इस बात की सहज नहीं कर सकता कि उनके देश में महिलाओं को जो सामान्यतया घरेलू से अलग कोमल होती हैं ऐसे अस्वास्थ्यकर वातावरण में खानों के भीतर कार्य करने की अनुमति दी जाए। इसके अतिरिक्त यह बात भी विशेष ध्यान देने योग्य है कि यदि स्त्रियाँ खानों के भीतर आकर पुरुषों के साथ कार्य करें तो इससे कई सामाजिक और नैतिक दोष पैदा हो सकते हैं। जैसा कि खान विभाग के अन्तर्गत उल्लेख किया है सन् १९२६ में इस बात के लिये विनियम बनाए गए थे कि १० वर्ष की अवधि के भीतर, अर्थात् १९१६ तक स्त्रियों का खान के भीतर कार्य करना बीरे-बीरे विन्यक्त नगण्य

कर दिया जाए। लेकिन सन् १९३७ में एक अधिसूचना के द्वारा स्त्रियों के लिए खानों के भीतर कार्य करना निषिद्ध कर दिया गया। परन्तु युद्ध की आवश्यकताओं के कारण सन् १९४३ में यह प्रतिबन्ध उठा लिया गया था। लेकिन सन् १९४६ में इसे पुनः लागू कर दिया गया और तब से आज तक यह प्रतिबन्ध लागू है। इस प्रकार वर्तमान समय में स्थिति यह है कि स्त्रियों को खानों के भीतर रोजगार पर नहीं भेजा जाता।

डा० धार० के० मुकुर्जी ने कुछ ऐसी कुराहियों का उल्लेख किया है, जो स्त्रियों को खानों के भीतर कार्य करने पर प्रतिबन्ध लगाने से घा गई है। यह प्रतिबन्ध लगाने के बाद कोयसे की खानों से अधिकांश स्त्रियाँ गाँव वापिस चली गईं और उसके बाद उनका गाँवों से साना भी बन्द हो गया। केवल बड़ी-बड़ी खानों में ही स्त्री धमिकों को खानों के ऊपर कुछ कार्य देना सम्भव हो सना और उनमें से बहुत सी स्त्रियों को टेला साबुन सड़कें तथा नालियाँ बनाने और उनकी मरम्मत करने बत्तियों को साफ करने राजगीरों के सान कार्य करने तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी सामान्य दसार्थों में सुधार करने के कार्यों पर रोजगार मिला गया। परन्तु इन सब बातों के देखते हुए ऐसी स्त्रियों की, जो खानों के भीतर कार्य करती थीं एक बहुत बड़ी प्रतिशत अर्थात् कठिनाई से १० प्रतिशत ही खान के ऊपर विभिन्न प्रकार के कार्यों में रोजगार पा सहीं। इसके पूर्व जब खानों के भीतर पति-पत्नि दोनों मिलकर कार्य करते थे, तो कोयसा काटने तथा कोयसा सावने में यह दम्पति बड़ी सुगमता से कोयसे की कम से कम तीन भाँवें भर लिया करते थे अर्थात् उनकी कुल आय १५ घाना प्रतिदिन थी। परन्तु स्त्री धमिकों को रोजगार पर न भेजा जाने के बाद से पुरुष धमिक अकेले प्रतिदिन कोयसा काटकर एक भाँव से अधिक नहीं भर सकता अर्थात् उसकी आय अटकर ५ घाना प्रतिदिन रह गई है। यदि कोई दम्पती उसकी पत्नी को खान के ऊपर रोजगार पर भेजा भी जाती है तो भी उसे ४ घाना या ३ घाना प्रतिदिन के हिसाब से मजदूरी ही जाती है और यदि वह टेकेदारों के नियम धाकस्मिक रूप से कार्य करती है तो भी उसे दो घाना से ५ घाने प्रतिदिन तक ही मजदूरी मिल जाती है। इस प्रकार पति और पत्नी दोनों की कुल आय कम हो गई है और उनका जीवन-स्तर गिर गया है। अधिकांश स्त्रियाँ तथा विधवाओं की स्थिति तो और भी खराब हो गई है क्योंकि स्त्रियों को नियम खानों के ऊपर बहुत ही कम भोजनियाँ उपलब्ध होती हैं। प्रबन्धनकर्ता खानों में कार्य करने वाले धमिकों की पत्नियों को ही रोजगार पर लगाने में प्राथमिकता देते हैं और असम्बद्ध (Unattached) स्त्रियों को ठेकेदारों द्वारा भ्रमण से कोई कार्य मिला जाय इस बात पर निर्भर रहना पड़ता है।

सर्वप्रथम प्रायोग में यह धारणा व्यक्त की थी कि यदि स्त्रियों को खानों के भीतर काम करने में मना कर दिया जाय तो हमसे कोयसा की खानों में कार्य करने वाले धमिकों के जीवन की दशाओं में सुधार हो जाएगा तथा उनकी कार्य-सुव्यवस्था

में भी बृद्धि होगी। इस कारण यदि पारिवारिक आय में कुछ कमी भी हो तो बचपनी क्षतिपूर्ति इस सुधार द्वारा ही आयपी। परन्तु प्रतिबन्ध लगाने में पत्न्याएँ से आर्गों में कार्य करने वाले व्यक्तियों के जीवन की दशाओं में कुछ धार्मिक सुधार नहीं हुआ है। इसलिये जब स्त्रियों का आय अर्जन के योग्य नहीं रही है तो आन धार्मिक अपनी स्त्रियों को आर्गों के क्षेत्र में लाते ही नहीं हैं। इस प्रकार स्त्रियों की संख्या पुरुषों के अनुपात में बहुत कम हो गई है और इस कारण पुरुषों में अनुपस्थिति अधिक बढ़ गई है। स्थानीय आन धार्मिक अपने परिवारों को देखने के लिए आय मिला ही अपने घर आया करते हैं। इसी कारण विनाशपूर्ण तथा संकट के व्यक्तियों की संख्या आर्गों में कम हो गई है, क्योंकि यह लोग अपनी स्त्रियों को बाँटों में छोड़ना पसन्द नहीं करते। स्त्री पुरुषों की संख्या में समान अनुपात न रहने के कारण कोयला आन क्षेत्रों में नैतिक पतन बहुत हो गया है। पहले पति और पत्नी दोनों ही आर्गों के भीतर साथ-साथ जा सकते थे और हर समय पत्नी को अपने पति का संरक्षण मिलता रहता था। लेकिन अब जब धार्मिक आर्गों के भीतर कार्य करते आते हैं तो वे अपनी मुखा परिवारों या मुखा पुत्रियों को पीछे छोड़ने में संकट अनुभव करते हैं।

परन्तु इस समस्या का समाधान यह नहीं है कि स्त्रियों को पुनः आर्गों के भीतर कार्य करने की अनुमति दे दी जाय। डा० मुकुर्मी ने यह सुझाव दिया है कि व्यक्तियों को अपने परिवारों को साथ आने के लिए कुछ बुद्धिवाएँ तथा धार्मिक देने चाहिए ताकि बर्तमान कुराहियों को दूर किया जा सके। आन के ऊपर यदि कोई नीकटि आनी होती है तो वहाँ तक सम्भव हो उक्त स्त्री धार्मिक को देना चाहिए, तथा उनके लिए सह्यमक उद्योगों की स्थापना की सम्भावना पर भी ध्यान देना चाहिए। इन सह्यमक उद्योगों में कौतार तथा कोयले के धर्म गीष्ठा उत्पादनों का उपयोग हो सकता है। इसके प्रतिरिक्त मकानों तथा जल-मज निकाल व्यवस्था में सुधार करने के लिए नियमित रूप से प्रबन्धकों द्वारा प्रयत्न किए जाने चाहिए, ताकि आन व्यक्तियों की अपनी स्त्रियों को आन क्षेत्रों में आने के लिए प्रेरित किया जा सके। अन्त में यह कहा जा सकता है कि आन व्यक्तियों की शीतल आय तथा कार्य कुशलता में बृद्धि किए बिना उनकी पारिवारिक आय में भी बतमान हानि हुई है, जवका न तो कितनी प्रकार प्रतिबन्ध ही किया जा सकता है और न ही उनके जीवन-स्तर की उंचा उठया जा सकता है। गतवर्षों में कोयला आन धर्म कल्याण निधि तथा धर्मक आन धर्म कल्याण निधि की स्थापना से और न्यूनतम मजदूरी के निर्धारण से आर्गों में कार्य करने वाले व्यक्तियों की स्थिति में सुधार हुआ है और स्त्रियों का आर्गों के भीतर कार्य करना नियोजन करने से जो आय की हानि हुई है वह इन व्यक्तियों को स्वाभ्यन्तर तथा बहुत पारिवारिक जीवन व्यतीत करने की बुद्धिवाएँ देकर तथा स्त्री व्यक्तियों के स्वाभ्यन्तर तथा उनकी कार्यकुशलता में सुधार करके पूरी की जा सकती है।

स्त्री धर्मिक तथा सामाजिक वातावरण —

स्त्रियों के रोजगार से सम्बन्धित एक धर्म्य समस्या जिसकी धीरे ध्यान प्राकृतिक करना आवश्यक है वह स्त्रियों को रोजगार पर मगाने से जो सामाजिक वातावरण पैदा हो जाता है और रोजगार पर लगी स्त्रियों को जो सामाजिक स्तर दिया जाता है, उस नियम की समस्या है। यह तो एक साधारण ज्ञान की बात है कि हमारे देश में स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा हीन सम्मान जाता रहा है और यह पुरानी कठिनाई विचार-विचार सब भी प्रचलित है। इसका परिणाम यह हुआ है कि धार्मिक सम्मान, प्रतिष्ठा तथा धार्मिक-विश्वास की जो भावना हमें पश्चिमी देशों की स्त्रियों में मिलती है वह हमारे देश की स्त्रियों में सब तक विकसित नहीं हो सकी है। मजदूर वर्ग की स्त्रियों को उन वर्गों के बड़े सामाजिक दायरों में भी सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता जहाँ से वे कार्य करने जाती हैं। यह भी सभी जानते हैं कि हमारे औद्योगिक क्षेत्रों में अधिकतर स्त्री धर्मिकों को ऐसे मध्यस्थों तथा धर्म्य पुराचारों धर्मिकों द्वारा धार्मिक जीवन व्यतीत करने के लिए विवश कर दिया जाता है जो औद्योगिक क्षेत्रों में अधिकतर पाए जाते हैं। कभी-कभी तो धार्मिक भी औद्योगिक क्षेत्रों में इन स्त्रियों के पठन के लिए उत्तरदायी होते हैं। वर्गों में जो धार्मिक, सामाजिक तथा धार्मिक प्रतिबन्ध होते हैं वे मगरों में नहीं पाए जाते। यम प्रायोग्य और संज्ञा में डॉ० कर्जस द्वारा कुछ ऐसे उदाहरण इकट्ठे किए गए हैं जिनसे यह ज्ञात होता है कि कुछ संस्था ऐसी विचार-विचारों और परिणामों स्त्रियों की पाई जाती हैं, जो दिन में कारखानों से होने वाली धार्मिक के धार्मिक रूढ़ि में कुछ पुरुषों से प्रत्यापी सम्मान बनाए रखकर या विद्यार्थी का पया धनदाकर अपनी धार्मिक में बुद्धि करती हैं। ऐसी स्त्रियों के बच्चे भी होते हैं, जिनका पालन-पोषण करना पड़ता है।

यह सामाजिक तथा धार्मिक समस्या दिन पर दिन प्रबल होती जा रही है। फिर भी, जैसा कि श्री पनास्कीकर ने उल्लेख किया है धार्मिक तक इस समस्या की धीरे ध्यान नहीं दिया गया है। यम प्रायोग ने भी इस समस्या पर अपने विचार प्रकट नहीं किए; यहाँ तक कि धर्म अनुसंधान समिति ने भी इस समस्या की धीरे ध्यान नहीं दिया। इसलिए इस बात की बहुत आवश्यकता है कि इस समस्या की उचित प्रकार से धार्मिक की जाए तथा इन स्त्रियों का उत्थान करने तथा इनकी सहायता करने के लिए धर्म से धर्म प्रकार के साधन अपनाए जाएं। औद्योगिक क्षेत्रों में सम्पूर्ण वातावरण कुछ इस प्रकार का है कि जिन स्त्रियों में कुछ सम्मान तथा प्रतिष्ठा की भावना होती है, वे कार्य करना ही बसन्ध नहीं करती और जिन स्त्रियों को विवश होकर मौजूद करनी पड़ती है वे मगरों में प्रचलित इन पुराचारों की बड़ी मुग्यता से विचार हो जाती हैं। हम सभी लोग यह बात जानते हैं इसका धनुष्य भी करते हैं फिर भी सरकार ने इस सामाजिक समस्या की धीरे धार्मिक तक ध्यान नहीं दिया है।

स्त्री अधिक तथा संघ —

यहां एक शक्ति संघों तथा स्त्री अधिकों की समस्या का सम्बन्ध है, देश में स्त्रियों के किसी पृथक् अधिक संघ का विकास नहीं हुआ है। स्त्री अधिकों को अपने कुछ पारिवारिक कर्तव्यों का भी पालन करना पड़ता है और इस प्रकार अपने संयोजन में सक्रिय रूप से बचि लेने के लिए उनके पास कोई समय नहीं बच पाता। वे स्थायी रूप से कोई नौकरी भी नहीं कर पातीं और न ही उनमें उत्साह तथा संयोजन बनाने की क्षमता होती है। देश में कुछ ऐसी परम्पराएं पड़ गई हैं, जिन्होंने स्त्रियों को तथा पुरुषों के ऊपर घावित रखा है और धनपड़ स्त्री अधिक तो कोई पृथक् संयोजन बनाने की क्षमता भी नहीं कर सकतीं। वास्तविकता तो यह है कि जब पुरुषों के ही अधिक संघ हड़ और घक्तिशाली नहीं हैं, तो यदि स्त्री अधिकों के अपने संघों के प्रति अधिक ध्यान नहीं दिया है, तो उन्हें इस सम्बन्ध में अधिक होती नहीं उद्योग का सकता। लेकिन इसका परिणाम यह नहीं है कि स्त्रियों ने देश के धर्म धान्धोलन में कोई बचि नहीं ली है। इस बात का प्रमाण मिलता है कि सन् १८६० में श्री लोबाष्ट्रे द्वारा धान्धोलन की गई सभा में दो स्त्री अधिकों ने भाग ले लिया था। (रेडिए पृष्ठ २३)। अधिक संघों में स्त्रियों की संख्या में भी वृद्धि हुई है और सन् १९२६ में स्त्री अधिकों की संख्या ३८४२ से बढ़कर सन् १९४९-४७ में ६४,७६८ हो गई थी और सन् १९३८-३९ में यही संख्या ३६२ ३४४ हो गई थी जो कुल संख्या का १०% प्रतिशत थी। (रेडिए पृष्ठ २३)। कारखानों, धानों तथा बागान में कुल स्त्री अधिकों की संख्या १७ प्रतिशत स्त्रियां पेशीकृत अधिक संघों की संख्या है। इस बात से यह विदित होता है कि स्त्री अधिकों की अधिक संघों में बचि रही है, यद्यपि अधिक संघों में स्त्री अधिक धर्म और अधिक कार्य कर सकती हैं। कपड़ा मिल उद्योगों में स्त्री अधिकों के अधिक संघों की संघ संघ अधिक प्रवृत्ति हुई है। बम्बई और मद्रास का इस सम्बन्ध में विशेष रूप से उल्लेख किया जा सकता है।

उपसंहार —

इस प्रकार हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि भारत के उद्योगों में स्त्रियां अब स्थिर रूप से रोजगार पाने लगी हैं। उद्योगों में स्त्रियों द्वारा काम पाने के सम्बन्ध में जो परम्परागत विचार थे वह उपसंहार संघ में और भारत में भी समाप्त होते जा रहे हैं। भारत के उद्योगों में भी इस बात का उल्लेख किया गया है कि "उद्योग धर्म नीति द्वारा इस और ध्यान देना कि प्रत्येक नागरिक को, चाहे वह पुरुष हो या स्त्री इस बात का समान अधिकार हो कि वह अपनी पर्याप्त रूप से जीविका अर्जित कर सके और स्त्री तथा पुरुष दोनों को समान कार्य के लिए समान वेतन मिले तथा स्त्री व पुरुष अधिकों की अर्जित और स्वास्थ्य का और बालकों की कोषक धानु का अनुचित लाभ न उठाना जाय और नागरिकों को आर्थिक आनन्दकामों के कारण ऐसा रोजगार धनाने के लिए विवश न होना पड़े जो

उनकी आयु और शक्ति के अनुसार अनुपयुक्त हो।" परन्तु सभी देशों में इस बात को स्वीकार किया गया है कि स्त्रियों के साथ विशेष प्रकार के व्यवहार की आवश्यकता है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघटन ने भी स्त्री अधिकों की समस्याओं पर एक पुस्तक २७ सदस्यों की परामर्श देने बासों की नामिका (Panel) बनाई है। भारत में भी हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि स्त्रियों में कोमलता और मायुक्तता होती है और परिवार पर तथा देश की मायी सन्तति के पालन में उनका बहुत प्रभाव होता है। हमें यह भी बिस्मरण नहीं करना चाहिए कि "जो हाथ पालना पुमाते हैं वही संसार पर शासन करते हैं।" अतः स्त्रियों को एक विशेष प्रकार की सुरक्षा की आवश्यकता है। भारत में स्त्री अधिकों की शिक्षा, स्वास्थ्य तथा कल्याण के लिए विशेष पय उठाए जाने चाहियें। इनके सामाजिक स्तर को भी ऊंचा उठाने का प्रयत्न करना चाहिए, ताकि वे पुरुषों के साथ बराबर के मायी बनकर कार्य कर सकें।

भारतीय कृषि श्रमिक

(Agricultural Labour in India)

कृषि श्रमिकों की संख्या —

साठ सौ बर से एक कृषि प्रदान हो रहा है। सन् १९२१ की जनगणना के अनुसार कृषि २४९,१२२ ४४९ व्यक्तियों की बीडिका का मुख्य साधन है, यद्यपि लगभग १९% प्रतिघट जनसंख्या कृषि पर ही निर्भर है। इस कृषि जनसंख्या के निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जाता है —

	पुरुष	स्त्रियाँ	योग
(क) कृषक जिनकी अपनी भूमि भी है	८२,११५,४४९	८२,२३१,०२२	१६४,३४६,४७१
(ख) कृषक जिनकी अपनी भूमि नहीं है	१६,२२६,१९३	१५,३८३,३२४	३१,६०९,५१७
(ग) कृषि श्रमिक	२२,३९५,८३२	२२,४१६,०७६	४४,८११,९०८
(घ) अलग-अलग भू-स्वामी	२,४३८,१९०	२,८८६,१११	५,३२४,३०१
योग	१२३,२०५,६८६	१२२,९१६,५३३	२४६,१२२,२१९

यहां इस बात का उल्लेख किया जा सकता है कि सन् १९२१ में कृषि श्रमिकों की संख्या २ करोड़ १५ लाख तथा सन् १९३१ में ३ करोड़ ३० लाख अनुमानित की गयी थी। प्रथम तथा द्वितीय कृषि श्रमिक पुच्छावृत्त के अनुसार १९२०-२१ में देश में लगभग ३३ करोड़ कृषि श्रमिक थे जिनमें से १ करोड़ ९० लाख पुरुष १ करोड़ ४० लाख स्त्रियाँ तथा २० लाख बालक थे। १९२६-२७ में कृषि श्रमिकों की अनुमानित संख्या ३ करोड़ ३० लाख थी जिनमें से १ करोड़ ८० लाख पुरुष १ करोड़ २० लाख स्त्रियाँ तथा ३० लाख बालक थे। १९२६-२७ में कृषि श्रमिक परिवारों की अनुमानित संख्या १ करोड़ ६३ लाख थी और १९५-२१ में यह संख्या १ करोड़ ७६ लाख थी। ३७% १९२६-२७ में तथा २०% १९२०-२१ में भूमिहीन श्रमिक थे। सन् १९२१ की जनगणना के अनुसार कृषि श्रमिकों की संख्या लगभग ४ करोड़ ४ लाख है। इस सम्बन्ध में यह भी उल्लेखनीय है कि सन् १९८२ में कृषि श्रमिकों की कुल संख्या केवल ७५ लाख थी। इस प्रकार यह १

मा ७० वर्षों में उनकी संख्या में बढ़ा तीस प्रति से वृद्धि हुई है। इसका कारण भी स्पष्ट है। डा० रामाकृष्ण मुकुर्जी के शब्दों में 'ऐसी प्रत्यक्ष परिस्थिति ने जिसने छोटे-छोटे फार्मकारों की श्रमिक दशा को विरामा है कृषि श्रमिकों के सम्भरण (Supply) में वृद्धि की है। उदाहरणार्थ ग्रामीण पर्व-व्यवस्था में सामान्य श्रमिकारों का नष्ट हो जाना बोटों का उपविभाजन सामूहिक उद्यम (Collective Enterprise) का प्रचलित न रहना, मगान प्राप्त-कर्ताओं की संख्या में बढ़ोतरी बिना किसी रोक के भूमि का हस्तांतरण तथा बन्धक रचना घोर कुटीर उद्योगों का पतन।' इसके प्रतिरिक्त जनसंख्या में निरपेक्ष वृद्धि जमींदारी घोर जागीरदारी प्रथाओं के उन्मूलन जैसे भूमि सुधार के कार्य (बिनाक कारण व्यक्तिगत कृषि और कृषि बंधीकरण में वृद्धि हुई है), छोटे-छोटे फार्मकारों द्वारा भूमि का विक्रय, प्रादि प्रादि भी कृषि श्रमिक-वर्ग की संख्या में वृद्धि का कारण बने हैं।

कृषि श्रमिकों के प्रकार :- (Kinds of Agricultural Workers)

सामान्य रूप से यह कहा जा सकता है कि भारत में कृषि श्रमिक निम्नलिखित परिवारों से प्राप्त होते हैं—(१) भूमिहीन ग्रामीण श्रमिक परिवारों से, (२) महा कालिक रूपक परिवारों से तथा (३) संघकालिक सिस्टरकारों यथा ग्रामीण धनुषारों के परिवारों से। इस प्रकार कृषि श्रमिकों को तीन भागों में विभाजित किया गया है—(१) जेठों में कार्य करने वाले श्रमिक जैसे कटाई करने वाले, हल चलाने वाले इत्यादि। (२) साधारण श्रमिक जैसे, कुशा खादन वाले और विभिन्न कार्य करने वाले व्यक्ति, इत्यादि। (३) कुशल श्रमिक जैसे रात भरकी बर्तन इत्यादि। कृषि श्रमिकों की संख्या में उपरोक्त वर्ग किस अनुपात से होते हैं वह बात एक समय नहीं पारि जाती बरम्बे क्षेत्र-क्षेत्र में भिन्न होती है। वेत पाठने वाले श्रमिक (Self Labour) का भी देश के कुछ भागों में प्रचलन है। वास्तव में श्रमिकता में श्रम-व्यवस्था में फल जान के कारण होती है। श्रमिक साधारणतया कुछ सामाजिक या श्रमिक शक्ति का सम्पन्न करने के लिये ही जमींदार से श्रम लेता है। श्रम के बदले में उन श्रम का सुपत्ता करने तक काम करने की सहमति देनी पड़ती है। लेकिन यह श्रम बदले की अपेक्षा बहुत ही कम जाता है। कभी-कभी तो केवल श्रमिक ही नहीं, धनिक उसका परिवार भी जीवन भर के लिए हम दासता में बंध जाता है। ऐसे श्रमिकों के रत्न और कार्य करने की दृष्टि भी बड़ी शीघ्रनीय होती है। इस प्रकार के श्रम बहुधा श्रमिक जातियों और श्रमिक जातियों के हैं और विभिन्न राज्यों में इन्हें निम्न-निम्न नामों से पुकारा जाता है। उदाहरणतया इन्हें बम्बई में 'जोनीज' और 'हानीज', मद्रास में 'पुनियान' बिहार में 'जाम्पा', उड़ीसा में 'जाकर' मध्य प्रदेश में 'शालकारी' और उत्तर प्रदेश में 'जोबरी' कहते हैं।

यहां यह बात भी विशेष ध्यान है कि कृषि श्रमिक उद्यम के सम्बन्ध में सभी व्यक्तिगत या जाते हैं, जो नकद या भिक्ष के रूप में मजदूरी लेकर कृषि कार्य करते हैं। ऐसे श्रमिकों की अपनी भूमि होती भी है, और नहीं भी होती। शिथिल

पंचवर्षीय आयोजना के अनुसार कृषि श्रमिकों की परिभाषा में ऐसे व्यक्तियों का लें सकते हैं जो वर्ष में जितने दिनों वास्तव में कार्य करते हैं उनमें से घाबे से अधिक दिनों कृषि श्रमिक का कार्य करते हैं। इस भाधार पर, प्रथम कृषि श्रमिक पृच्छासूत्र के अनुसार ज़ामीण परिवारों में से ३०-४ प्रतिशत कृषि श्रमिक से जिनमें से घाबे व्यक्तियों के पास भूमि भी नहीं थी। श्रमिक स्पष्ट शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि कृषि श्रमिकों की परिभाषा में निम्नलिखित व्यक्ति आते हैं—कृषक, कृषक की कटाई करने वाले, बीज की बुवाई करने वाले, निरवाई करने वाले और रोपाई करने वाले आदि। यह भी विशेष उल्लेखनीय है कि खेतिहर श्रमिकों की संख्या में स्त्री तथा बाल श्रमिकों की प्रतिशत संख्या काफी अधिक है। कृषि कार्य जैसे निरवाई करना, सींचाई करना फटकोरना आदि हासला, कसलों की देखभाल करना आदि बहुधा स्त्रियों और बाल श्रमिकों द्वारा किए जाते हैं। बंगाल के कुछ जिलों की संवत्स जाति में यह बात अधिक पाई जाती है। उक्त यह है कि संवत्स जाति की स्त्रियाँ खेतिहर कार्यों और कृषि कार्यों में अपने पुत्रों की प्रेरणा कई बातों में अधिक श्रेष्ठ होती है। बाल श्रमिकों को, जो निर्बल माता-पिता के यहाँ जन्म लेते हैं और कई बारी रीति-रिवाजों में जिनका पालन-पोषण होता है, परामर्श कोमल धारु में ही कृषि कार्यों पर लगा दिया जाता है। मुख्यतया बाल श्रमिक कार्य इसलिये करते हैं कि अपने परिवार की आय में जो पहिले ही बहुत कम होती है, कुछ उपग्रति कर सकें या कम से कम मासिक से खाना या जिन्य के रूप में मजदूरी लेकर परिवार का भार हल्का कर सकें। देश के लगभग सभी प्रदेशों में इन अल्प-वयस्क श्रमिकों का अत्यधिक शोषण किया जाता है। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे कृषि श्रमिक भी हैं, जो भूमि पर कार्य करते हैं और कुल उपज का एक निश्चित भाग उन्हें मजदूरी के रूप में दे दिया जाता है। यह श्रमिक बटाई पर कार्य करते हैं और सामान्यतया बड़े-बड़े जमींदारों से पट्टे पर जमीन ले लेते हैं। ऐसे श्रमिकों की दसा अल्प श्रमिकों की प्रवेसा अधिक अच्छी होती है। इसका कारण यह है कि उनके पास कुछ अपनी पृथी होती है और उनमें उद्यम करने का उत्साह भी होता है।

कृषि कार्यों की प्रकृति तथा रोजगार —

(Nature of Agricultural Work and Employment)

कृषि रोजगार बहुधा मौसमी और अनिश्चित प्रकृति का होता है। इसलिये कुशलता के अनुसार श्रमिकों का बर्तीकरण नहीं किया जा सकता और यह बर्तीकरण केवल रोजगार की अवधि के आधार पर किया जा सकता है। कृषि श्रमिकों को कृषि मौसम में या तो अंतरात्मिक आधार पर स्थायी रूप से नियुक्त किया जाता है या कार्य की सांक्रामिक आवश्यकताओं के अनुसार उन्हें नैमित्तिक रूप से रोजगार पर लगाया जाता है। रोजगार की अवधि फसल की फल तथा कृषि की उक्त बढ़ति पर निर्भर होती है जो सामान्यतया अस्थायी जाती है। उदाहरणार्थ गहर द्वारा विहित उत्तर अफ्रीकी प्रदेश के मूख्यों में तथा उत्तर प्रदेश के केन्द्रीय तथा

बत्तर परिवर्षी क्षत्रों क उन मूलधरों में बहरी नेहूँ पंचा हांता है, रोजगार की अधिकतम अवधि, जिसके लिए धमिकों को कृषि कार्य पर लगाया जाता है, वर्ष में लगभग ६ महीने प्राणी है। पूर्वी प्रदेश के उन मूलधरों में वहाँ नेहूँ पंचा नहीं होता वही अवधि वर्ष में कबल चार माह की होती है। सन् १९४६-४१ की कृषि धमिक पूछताछ के अनुसार यह अनुमान किया गया है कि रोजगार की अवधि वर्ष में केवल २१५ दिन है। इनमें से १०६ दिन धमिक कृषि कार्य धीर सेप २६ दिन पर-कृषि कार्य करते हैं। इस प्रकार कृषि धमिक साधारणतया दो प्रकार के होते हैं सम्बद्ध (Attached) तथा 'नैमित्तिक' (Casual)। सम्बद्ध धमिक के धमिक होते हैं जो एक ही बार में एक या एक से अधिक महीनों के लिए काम पर नियुक्त किये जाते हैं। ऐसे धमिक समय निरन्तर कार्य में सये रहते हैं धीर उनका मासिकों से किसी न किसी प्रकार का संबंध (Contract) भी होता है। नैमित्तिक धमिकों को समय समय पर कार्य की आवश्यकताओं के अनुसार रोजगार दिया जाता है। सम्बद्ध धमिकों की संख्या कृषि धमिकों की कुल संख्या का लगभग १० प्रतिशत से १२ प्रतिशत तक होती है। कृषि धमिक पूछताछ के अनुसार नैमित्तिक धमिक पुरुष धमिक को १९५०-५१ में औसत रूप से वर्ष में २०० दिन रोजगार मिलता था। धीर १९५६-५७ में केवल १९७ दिन रोजगार मिलता था। १९५०-५१ में ७५ दिन धीर १९५६-५७ में ५० दिन के स्वयं के कार्य पर सगे रहते थे। १९५०-५१ में ६० दिन तथा १९५६-५७ में १२० दिन के बेरोजगार रहते थे।

कृषि धमिकों की बर्णना—

देश के अधिकांश कृषि धमिक निरान्त कुली हैं। उनकी सोचनीय अवस्था के विषय में भी सभी सामते हैं। उनका रोजगार स्थायी नहीं होता है, धीर वे बार बार अनेक प्रकार की सामाजिक कठिनाइयों में फंस जाते हैं। यह कठिनाइयाँ उनकी दुर्बलता का प्रतीक कारण बन जाती हैं धीर वर्तमान कृषि पद्धति में अस्थिरता था जाती है। श्री जगजीवनराम ने इन धमिकों को धमिकों का अपने एक लेख में बड़ा ही मार्मिकी विवरण किया है। यह धमिक बहुधा धन भी धामे पट धाजन करके ही अपना जीवन व्यतीत करते हैं। उनकी धाय इतनी भी नहीं होती कि वे दो समय ढंग से भोजन भी कर सकें। किसी धारामदायक या सुख की वस्तु का ता उनके लिए प्रश्न ही नहीं उत्पन्न हाता। जिन धमिकों धीर धमिकों में यह धमिक रहते हैं, वे अनुप्य के आवास के लिए अथवा अनुपपुरुष होते हैं। कृषि धमिकों का वर्ग देश की अनेक अवस्था का सबसे धमिक दुर्बल वर्ग है धीर इन्होंने सदा बड़ी-बड़ी आपत्तियों धीर कष्ट सह है। अनेक मूर्खों धीर बलुपा के धमाक के भी सबसे धमिक धीर लोभ विकार होते हैं। सन् १९४२ में अकास धमिक धमिकों ने बताया था कि बंगाल के अकास में मूक से मरने वालों की सबसे धमिक संख्या कृषि धमिकों की ही थी। इति में चाहे निम्ने सुधार किये जावें, लेकिन धाघ के उत्पादन में तब तक वृद्धि नहीं हा सकती जब तक कि प्राथमिक उत्पादकों धमिकों भूमि को जोतने वालों का

मृतम घाय की सुरक्षा का साक्षात्कर्म नहीं दिया जाता और उनके देहमास की समुचित व्यवस्था नहीं की जाती ।

कार्य करने के घटे —

दृष्टि धर्मिकों के कार्य बच्चे किसी धर्म विद्वान द्वारा नियमित नहीं किये गये हैं । इनके काय-बच्चे स्वाम-स्वाम पर, मौसम-मौसम में, तथा फसल-फसल में भिन्न भिन्न होते हैं । सामान्यतया दृष्टि में कार्य करने के बच्चे सुबोध से लेकर सूर्यास्त तक होते हैं जबकि कारखानों में कृत्रिम प्रकाश की सहायता से किसी भी समय काम किया जा सकता है । दृष्टि के कुछ विशिष्ट कार्यों में जैसे हम बचाने सिखाई तथा कटाई करने में कार्य-बच्चे भिन्न भी होते हैं । कमी-कमी प्रातःकाल की ठंडी-ठंडी वायु के समय तथा पराकथा चांदनी रातों में भी डेकनी से सिखाई और फटकारने धारि जैसे कार्य कर सिये जाते हैं । हमबाहे या तो मध्याह्नक से लेकर लवाहार कार्य करते हैं या फिर दो पारियों में कार्य करते हैं जिनमें से एक पारी प्रातःकाल की होती है तथा दूसरी संध्या को । दोनों पारियों के मध्य में साधारणतया ४ से लेकर ६ बच्चे तक कार्य मही होता । डेकनी से सिखाई करने वाले धर्मिक एक समय में एक या दो बच्चे की पारियों में कार्य करते हैं । इस कार्य के लिये साधारणतया धर्मिकों को दो टोसियों में काम पर लगाया जाता है । इनमें से एक टोसी पानी निकालने का काम करती है तथा दूसरी नाकियों के माध्यम से इस पानी को बेटों में पहुँचाने की व्यवस्था करती है । धर्मिकों की अपेक्षा छोटे-छोटे काष्ठकार और उनकी पत्नियाँ लवाहार कई बच्चों तक धर्मिक कार्य कर लेते हैं और मजदूरी पर लगाये गये ऐसे धर्मिकों को वे पसन्द नहीं करते या कार्य के बच्चों में कमी और धर्मिक मजदूरी की माग करते हैं । यदि धर्मिकों को मजदूरी कार्य के अनुसार या परिणाम के अनुसार मिसली है तो वह धर्मिक बच्चों तक कार्य करने में आपत्ति नहीं करते । जब तो वह है कि यदि उन्हें इस प्रकार मजदूरी दी जाती है तो फसल की कटाई के समय वे धर्मिक धर्म करने को तैयार हो जाते हैं, परन्तु यह बात बर्ष में कुछ ही दिनों के लिये लागू होती है । इस बात को देखते हुये कि दृष्टि में कार्य इतना बर्काने जाता नहीं होता जितना कारखानों में होता है, यह कहा जा सकता है कि दृष्टि में कार्य के बच्चे धर्मिक नहीं हैं । धर्मिक सामान्यतया दैनिक मजदूरी पर दिन में लगभग ८ बच्चे कार्य करते हैं और दोपहर में उन्हें दो बच्चे का मध्याह्नक भी मिल जाता है । सामान्यतया कार्य की प्राकृतिक प्रकृति के कारण धर्मिकों को बर्ष के कुछ दिनों में बहुत धर्मिक बच्चों तक कार्य करना पड़ता है जबकि धर्म दिनों में वे प्रायः बेकार ही रहते हैं । खरस पर कार्य करने वाले धर्मिक प्रायः धर्मिकों की अपेक्षा बहुधा कम बच्चे कार्य करते हैं परन्तु उनकी आय धर्मिक हो जाती है ।

भारत की वर्तमान दशाओं में कार्य के बच्चों से सम्बन्धित कोई भी विनियमन दृष्टि में लागू करना सरल नहीं है । इसका कारण यह है कि भारत में क्षेत्र बहुत छोटे छोटे हैं और प्रायः टुकड़ों में बटे हुए हैं । अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन भी प्रायः एक दृष्टि

श्रमिकों के लिए उनके कार्य करने के षष्टों से सम्बद्ध कोई अभिसमय पारित नहीं कर सका है। कुछ देशों में बर्ष भर के तथा दिन भर के कार्य करने के षष्टों को निवृत्त करने के लिये विधान बनाए गए हैं। परन्तु इन विधानों में स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार कार्य के षष्टे नियमित करने के लिए छूट देनी पड़ी है। श्रमिकों को केवल अति-श्रम करने के बिना कुछ सुरक्षा प्रदान की गई है।

कृषि में अपूर्ण रोजगार — (Under Employment)

कृषि श्रमिकों की एक प्रम्य महत्वपूर्ण समस्या मौसमी और सबिद्यमान प्रकृति के रोजगार की है। यह समस्या औद्योगिक संस्थाओं में नहीं पाई जाती क्योंकि कारखानों में श्रमिकों को सम्पूर्ण बर्ष के लिए काम पर लगाया जाता है। श्रम मन्त्रालय ने कुछ राज्यों के बोर्डों से माँगीं में पारिवारिक गहन सर्वेक्षण किए थे। पश्चिमी बंगाल के एक गाँव में सर्वेक्षण करने पर ज्ञात हुआ कि कृषि श्रमिक बर्ष में औसतन केवल २२० दिन कार्य करते हैं। इनमें से १६६ दिन वे कृषि कार्य करते थे और शेष ५४ दिन घरे-कृषि कार्य। मद्रास के एक प्रम्य गाँव में सर्वेक्षण करने पर ज्ञात हुआ कि कृषि श्रमिकों को बर्ष में २०० दिन रोजगार मिलता है। इसी प्रकार बिहार में १२१ दिन, और मैसूर में १२१ दिन बर्ष भर में कार्य मिल पाता है। प्रम्य पृष्ठताओं से भी यह पता चलता है कि मद्रास में जहाँ एक तिहाई भाग में जल को बेटी की जाती है यदि एक फसल हो तो बर्ष में केवल १० सप्ताह कार्य मिलता है और यदि दो फसलें हों तो बर्ष में लगभग १६ सप्ताह कार्य मिलता है। बाजरा और विमहन आदि के लिए सूखी भूमि पर रोती करने से भी बर्ष में केवल तीन या चार सप्ताह ही कार्य मिलता है। पंजाब में मि० कंसवर्ट ने अनुमान लगाया था कि कृषि में प्रति बर्ष केवल २०० दिन ही कार्य मिल पाता है। जस्ता कि ऊपर उल्लेख किया गया है कृषि श्रमिक पृष्ठताओं के अनुसार भी यह ज्ञात होता है कि कृषि श्रमिकों का रोजगार बहुत अपूर्ण है। इन सब बातों से यह ज्ञात होता है कि कृषि श्रमिकों को बर्ष में अधिक से अधिक ६ माह के लिए ही मजदूरी पर रोजगार मिल पाता है। बर्ष के शेष भाग में वे या तो कोई हस्तकारी का कार्य करते हैं या फिर किसी प्रम्य प्रकार के कार्य, जैसे बैलगाड़ी पर सामान ढोने का खाई खोदने का और सड़क बनाने का कार्य बैनिक मजदूरी पर करते हैं। परन्तु ऐसे रोजगार उनकी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में पर्याप्त नहीं होते।

कृषि श्रमिकों की मजदूरी —

केवल यही समस्या नहीं है कि कृषि श्रमिकों को सम्पूर्ण बर्ष के लिए लाभदायक रोजगार नहीं मिलता अपितु वह मजदूरी भी जो उन्हें कृषि कार्य के लिए मिलती है, औद्योगिक श्रमिकों की मजदूरी की अपेक्षा बहुत कम होती है तथा ऐसे श्रमिकों की मजदूरी से भी कम होती है जो जमीन क्षेत्र में सपथम उन्नी प्रकार के घरे-कृषि व्यवसायों में कार्य करते हैं। कृषि मजदूरी और जलकी घटावगी की पड़ति में भी बहुत कम समानता पाई जाती है। मजदूरी और उसकी घटावगी की पड़ति

केवल राज्य-राज्य में ही भिन्न नहीं होती, प्रयितु हर राज्य के प्रत्येक जिले और जिले के हर उपसेवा में भी भिन्न होती है। एक ही प्रकार के कार्य के लिए भी निम्न जाति के धर्मिकों विधियों और बालकों को उच्च जाति के धर्मिकों और पुरुषों की अपेक्षा प्रायः कम मजदूरी दी जाती है। कुछ व्यवहारों में स्त्री धर्मिकों को रोजमर्रा पर तो तबामा जाता है परन्तु उनकी मजदूरी पुरुषों की मजदूरी की अपेक्षा कम होती है यद्यपि यह भी सत्य है कि वे पुरुषों की अपेक्षा निश्चय ही कहीं अधिक कार्य कुशल होती हैं।

मजदूरी की प्रदायणी की व्यवस्थाओं में भी अधिक भिन्नता पाई जाती है। कुछ राज्यों के कुछ भागों में नकर रूप से प्रदायणी करने की प्रथा है और कुछ राज्यों में केवल बिम्ब के रूप में ही प्रदायणी की जाती है, तथा कुछ राज्यों में बिम्ब और मकरी दोनों रूप में मजदूरी दी जाती है। इसके अतिरिक्त कुछ कृषि कार्यों के लिये बीसे कटाई करने तथा फलदारने धारि के लिये, मजदूरी की प्रदायणी उबरत के रूप में की जाती है। कृषि धर्मिकों के पारिधमिक कमी-कमी विभिन्न रीतियों से नियत किये जाते हैं, बीसे जोत के लिए भूमि देना कपड़ा और धनराज देना मकरी देना भोजन और मकान की व्यवस्था कर देना धारि। इस प्रकार बतकी वितीव क्षमता का मुत्यांकन करना सरल नहीं है। यद्यपि नकर रूप में प्रथम मजदूरी की व्यवस्था करने का धर्मिक प्रचलन हो गया है तथापि बिम्ब के रूप में मजदूरी देना प्रथम भी काय्य प्रचलित है विशेषतया कृषि अनुचरों को बिम्ब के रूप में ही मजदूरी मिलती है।

कृषि धर्मिकों के लिए मजदूरी की दरों का अनुमान करने के हेतु विभिन्न राज्यों में पृच्छात्र की गई है। बम्बई में सन् १९४१-४० के सेतिहर धर्मिकों के लिये प्रतिदिन मजदूरी की दरें लगभग १ ४० २ आने से लेकर १ ८० ५ पा० तक अनुमानित की गई थीं। अनुमान धर्मिकों के लिए यही दरें १ ४० ६ पा० १ पा० और १ ८० १ पा० १ पा० के मध्य अनुमानित की गई थी। इसके अतिरिक्त कुछ धर्मिकों के लिये यह दरें २ ४० ७ पा० और ३ ४० ६ आने ६ पा० के मध्य थीं। बिहार में बिम्ब के रूप में अदायगी करने की प्रथा प्रथम भी प्रचलित है, यद्यपि कुछ स्वामी में नकर रूप में भी मजदूरी दी जाती है। प्रगत सन् १९३१ में पुरुष सेतिहर धर्मिकों की मजदूरी १ ४० २ पा० ६ पा० तथा १ ४० १० आने के मध्य और स्त्री धर्मिकों की मजदूरी १२ पा० तथा १ ८० ५ पा० ४ पा० के मध्य थी। उत्तरी बिहार में बंजली बिहार की अपेक्षा कम मजदूरी दी जाती है। 'सम्बद्ध' धर्मिका को सामान्यतया १ २ सर बाल और ६ छतक बका हुमा बाल प्रतिदिन दिया जाता है, जिसकी मात्रा ११ पा० ६ पा० प्रतिदिन पाती है। प्रत्येक जिलों में मजदूरी बहुत कम पाई जाती है। पश्चिमी बंगाल के विभिन्न भागों में प्रत्येक पृच्छार्थ की पत्नी है, जिनमें यह बात हुमा है कि दैनिक मजदूरी विभिन्न स्वामी पर १ ४० ५ पा० से लेकर २ ४० १२ पा० तक है।

उत्तर प्रदेश के चार गांवों में ग्रामीण मजदूरी के विषय में पूछताछ की गयी थी। इनमें से दो गांव मेरठ जिले में और दो गांव मंडी जिले में थे। मेरठ जिले के एक गांव में पूछताछ करने से यह ज्ञात हुआ कि 'सम्बद्ध' धर्मिकों को हल आदि बसाने के लिये एक रुपया प्रतिदिन दिया जाता था और साब ही ४ छटांक घाटा और २ छटांक बुड़ भी दिया जाता था। नैमित्तिक हलवाहों को दो रुपया प्रतिदिन मजदूरी दी जाती थी। मेरठ के एक ग्राम्य गांव में नकद रूप में मजदूरी दिये जाने का प्रचलन था। सम्बद्ध हलवाहों को २० ६० मासिक मजदूरी के प्रतिरिक्त ३ छटांक घाटा भी प्रतिदिन दिया जाता था। जिन धर्मिकों को निरवाई तथा कटाई आदि कामों में उबरत दर पर नियुक्त किया जाता था उन्हें बिना किसी अन्य साब के घाट घाना प्रति बीघा के हिसाब से मजदूरी दी जाती थी। कटाई के लिये पुरुष धर्मिकों को ३ सेर और स्त्री धर्मिकों को ३ सेर कटा हुआ घनाज प्रतिरिक्त उबरत के रूप में दिया जाता था। मंडी के एक गांव में खेतिहर अनुज्यों को हल बसाने और हठी बसाने आदि कामों के लिये प्रतिदिन घाट घाना मजदूरी दी जाती थी। कटाई के लिये मजदूरी जिस के रूप में दी जाती थी। यह जिस २ सेर ८ छटांक बुड़ या घनाज के रूप में होती थी। नैमित्तिक धर्मिकों को १२ घा० प्रतिदिन मजदूरी दी जाती थी। मंडी के ग्राम्य गांवों में स्थायी खेतिहर अनुज्यों को १६ ६० मासिक तो मिलता ही था इसके प्रतिरिक्त उन्हें चार रोटियां भी प्रतिदिन दी जाती थीं। दो बीघा भूमि भी उन्हें प्रदान की जाती थी जिस पर उन्हें किसी प्रकार का सगान नहीं देना पड़ता था। इसके प्रतिरिक्त निरवाई के लिये उन्हें १० घाना प्रतिदिन के हिसाब से मजदूरी दी जाती थी और कटाई के लिये उन्हें तीन भर घनाज मिलता था। निरवाई और कटाई के लिये स्त्रियों को भी नैमित्तिक धर्मिकों के रूप में रोजगार पर लगाया जाता था। निरवाई की दर घाट घाना प्रतिदिन थी। कटाई के लिये काटे गये घनाज का २ सेर ८ छटांक घनाज मजदूरी के रूप में दिया जाता था। इस गांव के हलवाहे दिन में १० घण्टे कार्य करते थे जबकि ग्राम्य बावों में सय हुये धर्मिक दिन में केवल ८ घण्टे ही कार्य करते थे। आजमगढ़ जिले के एक ग्राम्य पाँचवें गांव में की गई पूछताछ से यह ज्ञात हुआ है कि नैमित्तिक कृषि धर्मिकों को चार घाने तक लेकर घाट घाने तक प्रतिदिन मजदूरी दी जाती थी और २ घान प्रतिदिन इसके प्रतिरिक्त मिलते थे। सम्बद्ध धर्मिकों को दो रुपया प्रतिमाह इस मजदूरी में ऊपर मिलते थे या उनको बिना लगान की एक बीघा भूमि तथा ४ रुपया प्रतिवर्ष इसके प्रतिरिक्त मिलता था।

पश्चिम में कृषि धर्मिकों की दैनिक मजदूरी पुराना के लिय १२० ४ घा० स्त्रियों के लिय १० घा० तथा बालकों के लिय ८ घा० है। कुर्म में मजदूरी की दरें सामान्यतया पुरानों के लिये १ ६० १२ घा० स्त्रियों के लिये १ ६० ८ घा तथा बालकों के लिए १ ६० है। हैदराबाद में मजदूरी सामान्यतया पुरानों के लिये १ ६० से लेकर १ ६० ८ घा० तक स्त्रियों के लिए ४ घा० ४ लेकर १२ घा० तक तथा

केवल राज्य-राज्य में ही भिन्न नहीं होती अपितु हर राज्य के प्रत्येक जिले और जिले के हर उपरोह में भी भिन्न होती है। एक ही प्रकार के काम के लिए भी निम्न जाति के धर्मियों, स्त्रियों और बालकों को उच्च जाति के धर्मियों और पुरुषों की अपेक्षा प्रायः कम मजदूरी दी जाती है। कुछ व्यवहारों में स्त्री धर्मियों को रोजगार पर तो लगाया जाता है परन्तु उनकी मजदूरी पुरुषों की मजदूरी की अपेक्षा कम होती है, यद्यपि यह भी सत्य है कि वे पुरुषों की अपेक्षा निश्चय ही कहीं अधिक कार्य कुशल होती हैं।

मजदूरी की प्रणाली की पद्धतियों में भी अधिक मिलावट पाई जाती है। कुछ राज्यों के कुछ गाँवों में नकर रूप से प्रणाली करने की प्रथा है और कुछ राज्यों में केवल जिल्द के रूप में ही प्रणाली की जाती है, तथा कुछ राज्यों में बिम्ब और नकरी दोनों रूप में मजदूरी दी जाती है। इसके अतिरिक्त कुछ कृषि कार्यों के लिये जैसे कटाई करने तथा फलकौले धारि के लिये, मजदूरी की प्रणाली उच्चरत के रूप में की जाती है। कृषि धर्मियों के पारिभक्तिक कमी-कमी विभिन्न रीतियों से नियत किये जाते हैं, जैसे जोत के लिए भूमि देना कपड़ा और घनाम देना नकरी देना भोजन और मकान की व्यवस्था कर देना आदि। इस प्रकार उनकी वितीव सामग्री का मुत्सार्जन करना सरल नहीं है। यद्यपि नकर रूप में अब मजदूरी की प्रणाली करने का अधिक प्रचलन हो गया है, तथापि जिल्द के रूप में मजदूरी देना अब भी काफी प्रचलित है विशेषतया कृषि अनुष्ठानों को जिल्द के रूप में ही मजदूरी मिलती है।

कृषि धर्मियों के लिए मजदूरी की दरों का अनुमान करने के हेतु विभिन्न राज्यों में पूछताछ की गई है। बम्बई में सन् १९४६-४७ के लेटिहर धर्मियों के लिये प्रतिदिन मजदूरी की दरें लगभग १ रु० २ आने से लेकर १ रु० ८ पा० ५ पा० तक अनुमानित की गई थीं। अनुष्ठान धर्मियों के लिए यही दरें १ रु० ६ पा० १ पा० और १ रु० ६ पा० १ पा० के मध्य अनुमानित की गई थीं। इसके अतिरिक्त कुशल धर्मियों के लिये यह दरें २ रु० ७ पा० और ३ रु० ६ पा० के मध्य थीं। बिहार में जिल्द के रूप में प्रणाली करने की प्रथा अब भी प्रचलित है, यद्यपि कुछ स्थानों में नकर रूप में भी मजदूरी दी जाती है। अगस्त सन् १९३१ में कुछ लेटिहर धर्मियों की मजदूरी १ रु० २ पा० ६ पा० तथा १ रु० १० पा० के मध्य और स्त्री धर्मियों की मजदूरी १२ पा० तथा १ रु० ८ पा० ४ पा० के मध्य थी। उत्तरी बिहार में दक्षिणी बिहार की अपेक्षा कम मजदूरी दी जाती है। 'सम्बल' धर्मियों को सामान्यतया १ १/२ सेर चान और ६ छट्ठीक चना हुआ चावल प्रतिदिन दिया जाता है, जिसकी लागत ११ पा० ६ पा० प्रतिदिन जाती है। अनेक जिलों में मजदूरी बहुत कम पाई जाती है। पश्चिमी बंगाल के विभिन्न गाँवों में अनेक पूछताछ की गयी हैं, जिनमें यह बात हुआ है कि दैनिक मजदूरी विभिन्न स्थानों पर १ रु० ८ पा० से लेकर २ रु० १२ पा० तक है।

उत्तर प्रदेश के चार गांवों में ग्रामीण मजदूरी के विषय में पूछताछ की गयी थी। इनमें से दो गांव मेरठ जिले में और दो गांव अलीगढ़ जिले में थे। मेरठ जिले के एक गांव में पूछताछ करने से यह ज्ञात हुआ कि 'सम्बद्ध' धमिकों को इस धारि चलाने के लिये एक स्वयं प्रतिदिन दिया जाता था और साप ही ४ छटाक घाटा और २ छटाक मुड़ भी दिया जाता था। नैमित्तिक हस्तकारों को दो स्वयं प्रतिदिन मजदूरी दी जाती थी। मेरठ के एक अन्य गांव में नकर रूप में मजदूरी दिये जाने का प्रचलन था। सम्बद्ध हस्तकारों को २० ६० मासिक मजदूरी के प्रतिरिक्त ३ छटाक घाटा भी प्रतिदिन दिया जाता था। जिन धमिकों को निराई तथा कटाई धारि के कार्यों में उबरत दर पर नियुक्त किया जाता था उन्हें बिना किसी अन्य साम के घाट प्रमा प्रति बीघा के हिसाब से मजदूरी दी जाती थी। कटाई के लिये पुष्प धमिकों को ३ सेर और स्त्री धमिकों को ३ सेर कटा हुआ घनाज प्रतिरिक्त उबरत के रूप में दिया जाता था। अलीगढ़ के एक गांव में सठिहर अनुषंगों को हल चलाने और हंगी चलाने धारि कार्यों के लिये प्रतिदिन घाट प्रमा मजदूरी दी जाती थी। कटाई के लिये मजदूरी जिसके रूप में दी जाती थी। यह जिसमें २ सेर ८ छटाक गेहूँ या घनाज के रूप में होती थी। नैमित्तिक धमिकों को १२ घा० प्रतिदिन मजदूरी दी जाती थी। अलीगढ़ के अन्य गांवों में स्वामी केडिहर अनुषंग को १६ ६० मासिक तो मिलता ही था इसके प्रतिरिक्त उन्हें चार रोटियाँ भी प्रतिदिन दी जाती थी। दो बीघा भूमि भी उन्हें प्रदान की जाती थी, जिस पर उन्हें किसी प्रकार का सवान नहीं देना पड़ता था। इसके प्रतिरिक्त निराई के लिये उन्हें १० घामा प्रतिदिन के हिसाब से मजदूरी दी जाती थी और कटाई के लिये उन्हें तीन सेर घनाज मिलता था। निराई और कटाई के लिये स्त्रियों को भी नैमित्तिक धमिकों के रूप में रोजगार पर लगाया जाता था। निराई की दर घाट प्रमा प्रतिदिन थी। कटाई के लिये काटे वय घनाज का २ सेर ८ छटाक घनाज मजदूरी के रूप में दिया जाता था। इस गांव के हस्तकारों के लिये १० घण्टे कार्य करते थे, जबकि अन्य कार्यों में लग हुए धमिक दिन में केवल ८ घण्टे ही कार्य करते थे। धात्रमण्डल जिले के एक अन्य गांव में भी यह पूछताछ से यह ज्ञात हुआ है कि नैमित्तिक कृषि धमिकों को चार घाने से लेकर घाट घाने तक प्रतिदिन मजदूरी दी जाती थी और २ घान प्रतिदिन इसके प्रतिरिक्त मिलते थे। 'सम्बद्ध' धमिकों को दो स्वयं प्रतिमाह इस मजदूरी से उबर मिलते थे या उनको बिना सवान को एक बीघा भूमि तथा ४ दरया प्रतिवर्ष इसके प्रतिरिक्त मिलता था।

धमिकों में कृषि धमिकों की दैनिक मजदूरी पुरुषों के लिये १ ६० ४ घा०, स्त्रियों के लिये १० घा० तथा बालकों के लिये ८ घा० है। कुर्ब में मजदूरी की दरें ताबान्यतया पुरुषों के लिये १ ६० १२ घा०, स्त्रियों के लिये १ ६० ८ घा० तथा बालकों के लिये १ ६० ६० है। हैदराबाद में मजदूरी सामान्यतया पुरुषों के लिये १ ६० के लेकर १ ६० ८ घा० तक, स्त्रियों के लिये ४ घा० से लेकर १२ घा० तक तथा

बालकों के लिये ३ घा० से लेकर १२ घा० तक होती है। सन् १९२१ में मद्रास में प्रतिदिन मजदूरी सामान्यतया बच्चों के लिये १० घा० ६ पा० से लेकर २६० = घा० तक तथा किशोरों के लिये ८ घा० से लेकर १६० १४ घा० तक थी। यह पुढोपरान्त बढ़ी हुई मजदूरी की दर थी। सन् १९४१ में तो यह मजदूरी और भी कम थी। पुरुषों को ४ घा० २ पाई तथा किशोरों को ३ घा० २ पाई प्रतिदिन के हिसाब से मजदूरी दी जाती थी। मद्रास के गाँवों में भी नई पुस्तकालय से भी यह पता चलता है कि 'बम्बई' श्रमिकों को ८६० प्रतिमाह मजदूरी दी जाती थी। इसके प्रतिरिक्त उन्हें कुछ कपड़े भी दिए जाते थे और बोपटूर में 'कॉरी' भी मिलती थी। मध्य प्रदेश में समी प्रकार के कृषि श्रमिकों की सामान्य मजदूरी १६० से लेकर १६० ४ घा० तक थी। कुछ स्थानों पर बड़े-बड़े जमींदार भवजन ७० ६० से लेकर ८० ६० तक तथा ३ जन्मी प्यार से लेकर ४ जन्मी प्यार तक वार्षिक मजदूरी देते थे (एक जन्मी = २० मन)। सन् १९४८-४९ में प्यार का मूल्य ६० ६० प्रति जन्मी था। प्रतापगढ़ में प्रतिदिन पुरुषों की कुल प्रायः भवजन २३ ६० प्रति माह जाती थी। मध्य प्रदेश में नैमित्तिक श्रमिकों को १६० ४ घा० प्रतिदिन मजदूरी मिलती थी जबकि नैमित्तिक स्त्री श्रमिकों और बाल श्रमिकों को ६ घा० से लेकर ८ घा० तक प्रतिदिन मजदूरी दी जाती थी। कृषि श्रमिक पुस्तकालय के अनुसार कृषि श्रमिक परिवार की वार्षिक औसत प्रायः सन् १९३०-३१ में ४४७७ ८० तथा सन् १९३६-३७ में ४३७७ ६ थी और न्यून नैमित्तिक श्रमिकों की औसत वार्षिक मजदूरी सन् १९३०-३१ में १०९ नये पैसे तथा सन् १९३६-३७ में ९६ नये पैसे थी। स्त्री श्रमिकों की वार्षिक मजदूरी सन् १९३०-३१ में ६८ नये पैसे तथा सन् १९३६-३७ में ३९ नये पैसे थी। बाल श्रमिकों की औसत वार्षिक मजदूरी सन् १९३०-३१ में ७० नये पैसे और सन् १९३६-३७ में ३३ नये पैसे थी। कृषि श्रमिकों और औद्योगिक श्रमिकों की मजदूरी का अन्तर भी बहुत अधिक है। कृषि श्रमिकों की प्रति व्यक्ति वार्षिक आय औद्योगिक श्रमिकों की अपेक्षा इस प्रकार है बंगाल में १६० ६०, (औद्योगिक श्रमिकों की २६८ ६०) बिहार में ११९ ६० (औद्योगिक श्रमिकों की ३३२ ६०), उड़ीसा में ७९ ६० (औद्योगिक श्रमिकों की १४३ ६०) मध्य प्रदेश में ८७ ६० (औद्योगिक श्रमिकों की २६२ ६०) पंजाब में १३१ ६० (औद्योगिक श्रमिकों की ३१६ ६०) बम्बई में ८८ ६० (औद्योगिक श्रमिकों की ३६८ ६०)।

कृषि श्रमिकों का जीवन-स्तर —

कृषि श्रमिकों की यह स्थूल मजदूरी ही इस बात के लिए उत्तरदायी है कि उनका जीवन-स्तर मानवीय-स्तर से भी नीचा होता है। वर्ष में सगभ्र ६ माह कृषि कार्य करके श्रमिकों की गई इन पौड़ी ही मजदूरी से कृषि श्रमिकों के लिए निर्वाह करना असम्भव हो जाता है क्योंकि दोष समय उनके पास कोई अन्य उपाय भी नहीं होता। इनका परिणाम यह निकलता है कि वे प्रायः प्रायः पेट भुजे रहते हैं। स्त्री प्यार के कृषि कार्यों की उचित रीति से करने के लिये भी उनमें पर्याप्त शारीरिक

बन नहीं होता। उनके पारिवारिक बजटों में सबा चाटे का ही रोना रहता है।

कृषि श्रमिकों के पारिवारिक बजटों का बिस्लेषण करने से यह भी ज्ञात होता है कि कृषि श्रमिक का माहार, स्तर और मात्रा दोनों ही रूप में असतोपजनक होता है। भोजन पर सबसे अधिक व्यय होता है जिस पर कृषि श्रमिकों के परिवार की कुल आय की ७० प्रतिशत से लेकर ८४ प्रतिशत राशि व्यय हो जाती है। सामान्यतया कुल व्यय का ८५ प्रतिशत तो भोजन सामग्री पर तथा १५ प्रतिशत शीनी और साग-सब्जियों पर और २४ प्रतिशत केबल नमक और मसालों पर होता है। अन्य आवश्यक भोजन सम्बन्धी वस्तुयें जैसे दूध तथा पी आदि का तो कभी-कभी ही प्रयोग किया जाता है। जहाँ तक मांस का प्रश्न है, यह केबल बिसेप सामाजिक श्रेणियों पर ही खाया जाता है। २२ प्रतिशत वार्षिक व्यय ईंधन प्रकाश और मकान के किराये आदि पर होता है। पान-मुपारी तम्बाकू और मद्य पान तथा अन्य विविध मयों पर ८३ प्रतिशत व्यय होता है। कृषि श्रमिक पुष्पाद्यों के अनुसार ग्रामीण परिवारों का उपभोग वस्तुओं पर वार्षिक व्यय १९५०-५१ में ४६१ रु० या और यह बढ़कर १९५६-५७ में ६१७ रु० हो गया था। १९५६-५७ में प्रतिशत व्यय निम्न प्रकार था (१९५०-५१ के आंकड़े कोष्ठक में दिए हुए हैं)।
 माहार—७७ ३ (८५ ३) कपड़ा और जूते—६१ (६३) ईंधन व प्रकाश—
 ७६ (११) विविध मयें तथा सेवायें—८७ (७३)।

इस प्रकार श्रमिक के पास किसी धारण या विसासिता की वस्तु पर व्यय करने के लिये कुछ नहीं बच पाता और न ही वह कुछ बचत कर सकता है। इस का परिणाम यह होता है कि आन्तरिक संकट या सामाजिक उल्लंघनों तथा आर्थिक लोहायों के प्रवृत्तियों आदि पर वह बल अभाव लेने के लिये विवश हो जाता है। क्योंकि श्रमिकों का भोजन बड़ा असतोपजनक होता है इसलिये वे सामान्यतया बड़ी मात्रा में अनेक प्रकार के रोगों का शिकार हो जाते हैं और इसका उनके स्वास्थ्य तथा उनकी कार्यक्षमता पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। कभी-कभी एक छोटी सी महामारी भी श्रमिक वर्ग के असंख्य प्राणियों का संहार कर देती है।

केबल मजदूरी की दरों से ही हमें कृषि श्रमिकों के जीवन स्तर का ज्ञान नहीं हो सकता, अपितु उनके रोजमर्रा की मौसमी प्रवृत्ति का भी विचार करना होगा। जैसा मिसेज होबर्क ने अपनी पुस्तक 'कृषि में श्रमिक' (Labour in Agriculture) में लिखा है "श्रमिकों की सबसे बड़ी समस्या यह नहीं है कि उनकी मजदूरी की दर कितनी मितली है अपितु यह है कि उन्हें काम मिलता भी है या नहीं। इस प्रकार समस्या यह नहीं है कि वह मितली कितने हैं अपितु यह है कि उन्हें कामने का अवसर भी मितला है या नहीं।" भारत के ऐसे भूखण्डों में, जहाँ सिंचाई की व्यवस्था नहीं होती कृषि श्रमिकतर वर्ग पर निर्भर रहती है। यह वर्ग कृषि के लिए एक युवा है। यदि वर्षा हो पपी तो तेजी घण्टी हो जाती है अथवा पमल गहरा हो जाती है। जब मानसून नहीं पानी, तो श्रमिकों को प्रायः बेकार रहना पड़ता

है। ऐसी स्थिति में अपने जीवन-निर्वाह के लिये वे बहुत घट्ट मजदूरी पर कार्य करने के लिये बाध्य हो जाते हैं। घट्ट रोजगार इस बात पर धनिक निर्भर करता है कि भूमि में सिंचाई की व्यवस्था है, या नहीं। कितनी कमसे-बोई जाती है तथा परिवार के जितने सदस्य कृषि कार्य में लगे हुये हैं।

कृषि धमिकों की श्लेषप्रस्तता —

कृषि धमिकों के जीवन में एक प्रम्य बाधा यह भी है कि वे निरन्तर श्लेष से लगे रहते हैं। एक बार श्लेषप्रस्त होने के उपरान्त वे प्राचीन जसते अपना उधार नहीं कर पाते। प्राचीन श्लेष की समस्या ने समय-समय पर अनेक प्रवेशीय सरकारों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है और देश में श्लेषप्रस्तता कितनी है, इस विषय में अनेक अनुमान लगाये गये हैं। सन् १८२७ के 'ब्रिटीश ईस्ट इंडिया कम्पनी' के अनुसार सरकारी भूमि के बोतने वालों में से एक तिहाई श्लेषप्रस्त से ओर अपना श्लेष मातनुबारी से १८ गुना था। सन् १८८० के अकाल आयोग ने यह निष्कर्ष निकाला था कि भारत में कृषक वर्ग का एक तिहाई नाम भुरी तरह श्लेष में अकड़ा हुआ था। सन् १९०१ का अकाल आयोग इस परिणाम पर पहुँचा था कि श्लेष के कारण अकाल के २३ प्रतिशत किमान अपनी भूमि से बेवकाल कर दिये गये थे। सन् १९११ में सर एडवर्ड मैकसेगन ने ब्रिटिश भारत में कुल प्राचीन श्लेष ३०० करोड़ रुपये अनुमानित किया था। श्री एच० एन० ब्रिड्ज ने सन् १९१८ में यही श्लेष ६० करोड़ रुपये आँका था। सन् १९१० में भारतीय कृषि बँकिंग प्रोत्साहन समिति ने इस श्लेष को १०० करोड़ रुपये बताया था। उत्तर प्रवेशीय 'श्लेष सहायता समिति' तथा नेपाल के प्राचिक प्रोत्साहन बोर्ड ने भी कृषक वर्ग की श्लेषप्रस्तता का अस्सेस किया था। दुध-आम में सन् १९४२ के अकाल आयोग के अनुसार नुस्वी में बृद्धि और कृषि के धमिकों के कारण प्राचीन श्लेष की मात्रा में बहुत धनिक कमी हो गयी थी। 'रिजर्व बैंक ऑफ इन्डिया' की रिपोर्ट में भी इस बात की ओर संकेत किया गया था कि प्राचिक प्राचीन श्लेष दुध-आम में घटा कर दिये गये थे।

परन्तु जो भी अनुमान लगाए गये थे वे सम्पूर्ण कृषक वर्ग के लिए थे। वहाँ तक कृषि धमिक का सम्बन्ध है, इस विषय में यही सूचनाएँ मिली हैं कि वह मात्र भी श्लेष के बोझ से पीड़ित है। श्री बी० बी० नारायणस्वामी ने अकाल में प्राचीन श्लेषप्रस्तता से सम्बन्ध अनुसंधान किये थे। इसके उपरान्त उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला था कि दुध-आम में भूमि-हीन धमिकों की श्लेषप्रस्तता में लगभग ४२ ६ प्रतिशत बृद्धि हुई थी। कुल श्लेषप्रस्तता में जो कमी आयी थी है उसका नाम भी भूमिधर कृषक वर्ग को ही मिला है। भूमि-हीन धमिकों का श्लेष २७ ४० से बढ़ कर ८१ ८० प्रतिशत हो गया है। कृषि धमिक प्रोत्साहन के अनुसार जो कृषि धमिकों का कुल श्लेष १९२०-२१ में ८० करोड़ रुपये और १९२६-२७ में १४३ करोड़ रुपये था। श्लेष की घीघट राशि प्रति परिवार १९२०-२१ में १०२ ४ और १९२६-२७ में ११८ ८० आयी थी तथा १९२०-२१ में ४२ प्रतिशत तथा १९२६-२७ में ६४

रक्षित परिवार अणुप्रस्त थे। इस प्रकार मूल्यों में वृद्धि होने से कृषि धमिकों को अधिक लाभ नहीं हुआ है क्योंकि सभी अनुपात में उनकी मजदूरी में बढ़ि नहीं हो पायी है। इसके अतिरिक्त कृषि व्यवसाय में जो लाभ हुये हैं उनमें से भी उन्हें अधिक भाग नहीं मिल पाया है परन्तु उनके निर्वाह-खर्च में वृद्धि हो गयी है।

कृषि धमिक को उपभोग के लिये तथा सामाजिक दायित्वों को सम्पन्न करने के लिये प्रायः बन उधार लेना पड़ता है। यह अणु स्थायी होता है और कभी-कभी तैरुक सम्पत्ति के रूप में इसका भार पुनः को बहन करना पड़ता है। बन उधार देने की प्रणाली भी बढ़ी दोषपूर्ण रही है और ऐसे अणुओं पर सामान्यतया ब्याज की बहुत ऊँची दर ली जाती है। कृषि धमिकों के पास भूमि भी नहीं होती जिसकी जमानत पर वह बन उधार ले सकें। इसके अतिरिक्त वह अणु भी सामान्यतया उन्हीं बर्मीदारों से लेते हैं जिनके वहाँ वह कार्य करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि धमिक की अणुप्रस्तता का अनुचित लाभ उठकर उसका घोपण किया जाता है और उसे बहुत न्यून मजदूरी पर कार्य करने के लिये बाध्य कर दिया जाता है। अपने दिन प्रतिदिन के व्ययों को पूर्ण करने के लिये यदि वह अणु न सठा तो निश्चय ही इस मजदूरी से नहीं धमिक मजदूरी वह पा सकता था। जैसा कि पहल ही संकेत किया जा चुका है इस अणुप्रस्तता ने ही दाम-धमिक की प्रथा को जन्म दिया है अर्थात् अब तक अणु की प्रथायगी नहीं हो पायी धमिक अणुप्रस्तता ने यहाँ कार्य करने के लिये विवश होकर बंध जाता है।

कृषि धमिकों के मकानों की बर्शाएँ —

इस रूप में कोई प्रतिगयोक्ति नहीं है कि कृषि धमिकों के मकानों की बर्शाएँ अत्यन्त घोचनीय हैं। वे पाँकों के सबसे बुरे मकानों या भ्रष्टाचारियों में रहते हैं। सामान्यतया उनके पास अपनी कोई भूमि भी नहीं होती। इसका परिणाम यह होता है कि छोटे-छोटे मकान बनाने के लिये भी भूमि के निम्न उन्हें बर्मीदारों की दया पर आश्रित रहना पड़ता है। यदि मकानों के लिये भूमि मिल भी जाती है तो बेपार के रूप में धमिक को बहुत ही निम्न मजदूरी पर अपनी सेवाएँ धरित करनी पड़ती हैं। उनके मकानों में स्वच्छता का पूर्णतया अभाव होता है। सब बात तो यह है कि पुरवों और पशुओं दोनों को एक ही छत के नीचे रहना और मोता पड़ता है। इसलिये यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि कृषि धमिक-बर्ष में बीमारियाँ अधिक पायी जाती हैं। बर्षा ऋतु तथा पीठकाल के महीनों में मकानों की बुरी बर्शा होने के कारण धमिक को बहुत बुरा भोगना पड़ता है।

कृषि धमिकों के मकानों की बर्शाओं में सुधार करने के लिये कुछ न कुछ पय उपाये जाना अत्यन्त आवश्यक है। ताहरी मकानों के सम्बन्ध में तो हम बहुत कुछ सुझते हैं अब वह समय था गया है कि आभीर मकानों की ओर भी कुछ ध्यान दिया जाय बिदेयतया भूमिहीन कृषि धमिक के मकानों की ओर ध्यान देना आवश्यक है। यदि मकानों के लिये भूमि उपलब्ध कर ली जाती है और मस्ती दरों पर मामान की

व्यवस्था कर ही जाती है तो धमिक को अपने ही धम से मिट्टी या फूस के स्वच्छ मकानों का निर्माण करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। केंद्रीय सरकार ने एक ग्रामीण आवास प्रायोजना बनाई है और द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में ग्रामीण मकानों के लिये १० करोड़ ६० की व्यवस्था की है तथा तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में ग्रामीण आवास के लिए १२७ करोड़ ६० की व्यवस्था है। इस योजना के अन्तर्गत सरकार द्वारा मकान बनाने के लक्ष्य का दो-तिहाई भाग जल के रूप में दिया जाता है जो २० वार्षिक किस्तों में देना किया जा सकता है। सामुदायिक विकास ऋणों में लगभग ५ हजार गांवों में आवास प्रायोजनाएं प्रारम्भ की गई हैं और विभिन्न राज्यों में ग्रामीण आवास विभाग खोले गए हैं। सामुदायिक योजना के अन्तर्गत भी गांवों में नए मकान बनाए गए हैं और पुराने मकानों की मरम्मत की गई है। कुछ प्रवेसीय सरकारों ने भी कृषि धमिकों को मकान सम्बन्धी सुविधायें प्रदान करने के हेतु पग उठाए हैं। प्रधान मंत्री सरकार ने हरिजनों के लिए बिना मूल्य के मकानों की व्यवस्था करने के हेतु १० लाख ६० की एक विशेष निधि बनाई है। यह हरिजन बहुधा कृषि धमिक ही होते हैं। बिहार सरकार ने भूमिहीन और गृह-हीन हरिजनों के लिए भ्रष्टाचारियों के निर्माण की योजना बनाई है। इस योजना में प्रति भ्रष्टाचारी ७६८ ६० की लागत का अनुमान किया गया है। भारत का १० प्रतिशत सरकार भ्रष्टाचार के रूप में देती। मध्य प्रदेश में कृषि कारीबों या धमिकों को बिना किराया लिए मकान बनाने के लिए भूमि प्रदान कर दी गई है। मद्रास के हरिजनों के लिए भी, जो प्रायः कृषि धमिक ही होते हैं वही व्यवस्था की गयी है। उत्तर प्रदेश में भूमिहीन धमिकों को मकान बनाने के लिए आबादी में भूमि निर्दिष्ट करने में प्राथमिकता दी गई है। केरल में कृषि धमिकों के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में १०० मकानों का निर्माण करने के लिए आवास बोर्ड की स्थापना की गई है और हरिजनों के मकानों के लिए १३० लाख ६० की व्यवस्था की गई है। मद्रास में हरिजनों के आवास के लिए ३४०५४ लाख ६० की व्यवस्था की गई है। अन्धश्रमि योजनाओं के अन्तर्गत भी पंजाब तथा देहली जैसे कुछ राज्यों में हरिजनों और कृषि धमिकों के रहने के लिए मकान बनाने के लिए भूमि प्रदान की गई है।

कृषि धमिकों का संगठन—

यह भी देखने में आता है कि कृषि धमिकों का औद्योगिक धमिकों जैसा कोई संगठन नहीं है। औद्योगिक धमिक तो संघों के माध्यम से अपने हितों की रक्षा कर लेते हैं लेकिन कृषि धमिक अभी तक अपने आपकी संबन्धित नहीं कर पाए हैं। इसका कारण यह है कि वे दूर तथा असंग असंग गांवों में रहते हैं। जैसा कि श्री जगजीवन राम ने सुझाव दिया है, कृषि धमिकों को संगठित करने का सबसे अच्छा उपाय सहकारी समितियाँ ही हैं। उन्हें सहकारी समितियों का सदस्य बनने का प्रयत्न देना चाहिए, जिसके लिए यदि आवश्यक हो तो समितियों के निर्माण को सरल कर देना चाहिए। इन समितियों की पंचायतों में भी कृषि धमिकों का विशेष रूप से प्रति-

निश्चित होना चाहिए। उनके लिए पृथक समितियों का भी निर्माण किया जा सकता है। यदि वे एक बार किसी तरह संगठित हो गए, तो अपनी बेखर्मास करने में स्वयं समर्थ हो पायेंगे। इसके अतिरिक्त ऐसी समितियाँ कामकायक कार्य भी कर सकती हैं जैसे गौख व्यवसायों का संचालन करना, ग्रामीण मकानों की दशा में उन्नति करना, कृषि श्रमिकों द्वारा उत्पादित सामान की बिक्री की व्यवस्था करना, व्याज की कम दरों पर कृषि श्रमिकों को ऋण बिलाना तथा उनमें मितव्ययिता की भावत शासना प्रादि। यहाँ यह बात विशेष उल्लेखनीय है कि भारतीय राष्ट्रीय श्रमिक संघ का प्रसंग में कृषि श्रमिकों के क्षेत्र में स्वयं कार्य करने का निश्चय किया है और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वह कुछ श्रमिकों को प्रशिक्षण भी दे रही है।

कृषि भूमि सुधार —

यहाँ इस बात का उल्लेख किया जा सकता है कि यह कुछ वर्षों से कृषक वर्ग की उन्नति के लिए कई विधान बनाए गए हैं। भारत सरकार ने कृषि सम्बन्धी विचारों को रोकने तथा समाज उपकर और इसी प्रकार के सम्बन्धित विषयों में विधान तथा प्रासामियों को तरकास सहायता देने के लिए सन् १९४९ में प्रथम बार कृषि सहायता अध्यादेश जारी किया। बिहार, उत्तर प्रदेश तथा मद्रास प्रादि में जमींदारी अधूनन अधिनियम पारित किए गए हैं और जनमग सभी राज्यों में भूमि सुधार के लिए पथ उठाए गए हैं। लेकिन यह विधान कृषानों की कृषि उपज में से संबंधित भाग दिला देने के सम्बन्ध में तथा भूधृति अर्थात् पट्टेदारी पद्धति में सुधार करने के हेतु ही बनाए गए हैं। कृषि श्रमिकों की समस्याओं पर तो बहुत ही कम ध्यान दिया गया है।

कृषि श्रमिकों के लिए स्तूततम मजदूरी —

एक अन्य पक्ष जो कृषि श्रमिकों के हित के लिए उठाया गया है वह १९४८ का स्तूततम मजदूरी अधिनियम है। इसमें कुछ निश्चित कृषि रोजगारों में स्तूततम मजदूरी निर्धारित करने की व्यवस्था की गयी है। इस अधिनियम के अन्तगत राज्य सरकारों को कृषि श्रमिकों के लिए तीन वर्ष के अन्दर-अन्दर स्तूततम मजदूरी निर्धारित करनी थी। इसमें इस बात की भी व्यवस्था है कि मजदूरी की दरों का समय-समय पर परन्तु १ वर्ष के भीतर ही पुनरावलोकन किया जाए। अधिनियम की द्वितीय अनुसूची में कृषि श्रमिकों का विवेचन है। यह अधिनियम कृषि में रोजगार की निम्नलिखित व्याख्या करता है — “कृषि में रोजगार से तात्पर्य यह है कि किसी भी प्रकार की धेती में श्रमिक तथा हो अर्थात् इसमें भूमि की जुताई और बुवाई भी आ जाती है और अन्य कार्य भी सम्मिलित हो जाते हैं जैसे कुप्यासा उद्योग कृषि या उद्यान से संबंधित किसी भी बस्तु का उत्पादन देती, बुवाई और बटाई पशु पालन मधुमक्खनी या मुर्खों पालन और अपनी गेठी के कापों के हाप-हाप या उनसे संबंधित विधान द्वारा कई अन्य कार्य (इसमें वन सम्बन्धी कार्य, जैसे सट्टोर कान्ना, बाजार

में अनाज से खाने की सैपारी तथा व्यवस्था करना, अनाज को मोदाम में बदवाना या बेचना या अनाज को बाजार तक ले जाने के लिए गाड़ी बसाना आदि) की सम्मिलित हैं।”

न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने की कार्य प्रणाली निम्नलिखित है। प्रवेसीय सरकारें यह जांच करने के लिए कि मजदूरी कितनी ही बाय या तो कितनी समिति की नियुक्ति करती हैं या फिर कितनी सरकारी मजद में अपने प्रस्तावों को प्रकाशित करती हैं और उन प्रस्तावों को कार्य-क्रम में परिचित करने से पूर्व उन पर बाद विचार करने के लिए कुछ समय देती हैं। इसके पश्चात् न्यूनतम मजदूरी की बातों को प्रकाशित करना होता है, जो तीन महीने के बाद लागू हो सकती है। इन सभी न्यूनतम मजदूरी के प्रस्तावों का पुनरावलोकन करने के लिए प्रत्येक राज्य में एक समाहकार बोर्ड स्थापित करने की व्यवस्था है। इसके अतिरिक्त एक केन्द्रीय समाहकार बोर्ड स्थापित करने की भी व्यवस्था है जो विभिन्न विभागों में सामंजस्य कर सके। वहाँ कहीं आवश्यक हो वहाँ समाहकार समितियाँ भी नियुक्त की जा सकती हैं। इस अधिनियम में यह व्यवस्था की गई है कि मजदूरी नकर क्रम में ही जानी जाहिए, लेकिन यदि सरकार से अनुमति प्राप्त हो गई है तो अद्ययपी नियम के क्रम में भी की जा सकती है। समयोपरि के लिए भी अद्ययपी की व्यवस्था की गई है और यह अधिनियम कार्य के सामान्य बर्णों तथा अवकाश के दिनों की भी व्यवस्था करता है।

सन् १९४६ में केन्द्रीय सरकार ने इस सम्बन्ध में नियम बनाए और उन्हें राज्य सरकारों में परिचालित किया तथा घोषित किया कि वे १५ मार्च, सन् १९५० से पूर्व न्यूनतम मजदूरी नियत करने के सम्बन्ध में कार्यवाही करें। लेकिन इस योजना को कार्य-क्रम में परिचित करने में कुछ विलम्ब हो गया और सरकार ने इस अधिनियम में विभिन्न संशोधन करके इसकी तारीख बढ़ा दी। पहले यह तारीख १५ मार्च सन् १९५१ तक थी, इसके बाद ११ मार्च सन् १९५२ कर दी गई तत्पश्चात् इसे बढ़ाकर ११ दिसम्बर, सन् १९५४ कर दिया गया। ऊपर अधिकाँकों के लिए न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने के लिए एक अतिरिक्त बर्ण और दिया गया। फिर दिसम्बर, सन् १९५६ से एक अन्य संशोधन के अनुसार न्यूनतम मजदूरी नियत करने की अवधि बढ़ाकर ११ दिसम्बर, सन् १९५६ कर दी गई परन्तु सभी राज्यों में इस तिथि तक भी न्यूनतम मजदूरी निर्धारित नहीं की जा सकी। सन् १९६१ में सरकार ने फिर एक संशोधित अधिनियम पारित किया जिसके अन्तर्गत अब प्रवेसीय सरकारों को पूट दे दी गई है कि वे आवश्यकतानुसार न्यूनतम मजदूरी कितनी भी समय निर्धारित कर सकती हैं। (वेबिए पृष्ठ ५०७ तथा ५११-१२)।

इस अधिकाँकों के लिए न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने की कठिनाइयों का मजदूरी के अध्याय पृष्ठ ५११-१२ पर पहले ही उल्लेख किया जा चुका है। उदाहरणार्थ यह कठिनाइयाँ निम्नलिखित हैं। सांख्यिकीय सूचनाओं का ठीक-ठीक प्राप्त

न होना कृषि का मौसमी और सबिचम प्रकृति का रोजगार, कृषि में विभिन्न प्रकार की अशापणियों की प्रथा विधेयकर जिन्स के रूप में प्रदायणी करना तथा छोटे-छोटे जमीदारों द्वारा रिवाई तथा रजिस्टर रखने की कठिनाई, आदि ।

न्यूनतम मजदूरी का निर्धारण —

संगमम सभी राज्यों में कृषि धमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी की दरें निर्धारित कर दी गई हैं । अधिकांश राज्यों के कुछ विधिष्ट क्षेत्रों में ही यह दरें नियत की जा सकी हैं । (देखिए पृष्ठ १११-१२) । कुछ मुख्य राज्यों में बयस्क पुरुष नैमित्तिक कृषि धमिकों के लिए ३१ डिसेम्बर, १९१० तक न्यूनतम मजदूरी की दैनिक दरें इस प्रकार थीं केन्द्रीय सरकार—१२३ द० से २२३ द० तक धारम—०७३ से १२० द० तक असम—१०० से १२३ द० तक पाँच बल्के कार्य के लिए तथा १२० द० = बल्के कार्य के लिए बम्बई—०६२ र० से १०० द० तक बिहार में मजदूरी जिन्स में निर्धारित की गई है करम—१२० द० से १६० द० तक मध्य प्रदेश—०१० द० से १३३ द० तक मगस—०७३ द० से १२३ द० तक मसूर—१०० से १७३ द० तक उड़ीसा—०८७ द० से १७३ द० तक, पंजाब—१०० द० से २०० द० तक (भोजन सहित) या १२३ द० से २३० द० तक बिना भोजन के राजस्थान—०७३ द० से १२३ द० तक उधर प्रदेश—१०० द० (या २६ द० प्रति माह) पश्चिमी बंगाल—१२० द० से २२३ द० तक देहली—१२० द० से २०० द० तक त्रिपुरा—२०० द० हिमाचल प्रदेश—१२० द० ।

सरकार द्वारा की गई कृषि धमिक पुष्टताद्य —

केन्द्रीय धम मंत्रालय ने इस बात का अनुभव किया कि कृषि धमिकों की रहन-सहन की दशाओं के सम्बन्ध में बिना पुष्टताद्य किए न्यूनतम मजदूरी अधिनियम को कार्य-रूप में परिणित करना कठिन होता तथा कृषि धमिकों के लिए कोई भी कस्याण कार्य करना कठिन हो जायेगा । इसलिये १९३०-३१ में एक ऐसी जाँच आरम्भ की गई जिसको सामाजिक तथा धार्मिक मजदूरों में सबसे बड़ा मान सकते हैं । यह जाँच प्रदेशीय सरकारों के सहयोग से धम मंत्रालय द्वारा पूर्ण की गई और उसके निष्कर्ष १९३४-३३ में प्रकाशित किए गए ।

इस पुष्टताद्य का उद्देश्य रोजगार, प्राय निर्वाह-सर्ब तथा जीवन स्तर और कृषि धमिकों की अल्पवस्तता से सम्बन्धित झोकड़े एकत्रित करना था । यह पुष्टताद्य इस बात की दृष्टि में सरकर की गई थी कि न्यूनतम मजदूरी अधिनियम के अन्तगत न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने के कठिन धमिकों की दशाओं में सुधार करने के लिए क्या-क्या सुरक्षात्मक तथा सुधारत्मक पग उठाए जाने चाहियें । भारत के सभी राज्यों में तथा जम्मू और काश्मीर में भी यह पुष्टताद्य की गई थी । क्योंकि अधिस भारतीय आचार पर हमने पूर्ण कृषि धमिकों की दशाओं के सम्बन्ध में अभी तक कोई पुष्टताद्य नहीं की गई थी इसलिये यह कृषि धमिक पुष्टताद्य पीरे-पीरे

विभिन्न चरणों में की गई। जो पहला चरण था उसमें सन् १९४९ में जून से लेकर नवम्बर तक २७ गांवों में प्रारम्भिक पुच्छतास की गई। इनमें से एक गांव मैसूर में, दो-दो प्रथम उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश में तीन प्रशास में, चार बिहार में पांच परिवर्तनी बंगाल में तथा आठ उत्तर प्रदेश में थे। इन गांवों की रिपोर्टों को प्रकाशित किया जा चुका है।

कार्यकर्तव्यों का धीरे-धीरे समय के सीमित होने के कारण यह सम्भव नहीं था कि देश के सभी १६०,००० गांवों में पुच्छतास की जाय। प्रथम नमूने के तौर पर ८१२ गांवों को बांध के सिधे छोट लिया जा। पुच्छतास की प्रथम एक वर्ष की धीरे-धीरे पुच्छतास द्वारा एकत्रित किए गए आंकड़े भी इसी प्रथम से सम्बन्ध थे। यह पुच्छतास तीन विभिन्न अनुसूचियों (कार्य-क्रम) के माध्यम से तीन विभिन्न चरणों में की गयी। पहले दो चरणों का मुख्य उद्देश्य सामान्य आर्थिक रसायनों तथा गांवों में रोजगार के बांधों और इन परिवारों के आकारों के सम्बन्ध में विचार करना था जिन्हें परिवारिक गहन सर्वेक्षण (Intensive Family Survey) के हेतु कृषि आर्थिक परिवार माना जाता था। यह परिवारिक गहन सर्वेक्षण बांध का तीसरा चरण था। कृषि आर्थिक परिवार इस परिवार को माना गया जिसके सबसे बड़े सदस्य (शुद्धिया) का या दोजी कमाने वालों में से १० प्रतिशत या उससे अधिक सदस्यों का मुख्य रोजगार कृषि था। इस प्रकार कृषि परिवार की निर्धारित करके ऐसे परिवारों में से 'रेडम' आधार पर कुछ विधाय परिवारों को नमूने के तौर पर तीसरे चरण के लिए चुन लिया गया। इस प्रकार पुच्छतास के प्रथम दो चरणों के नमूने की इकाई बांध थे तथा तृतीय चरण की इकाई कृषि आर्थिक परिवार थे।

प्रदेशीय सरकारों अर्थशास्त्रियों और विद्वानों के परामर्श से इस विषय पर एक स्थापक प्रस्तावना का निर्माण किया गया। यह प्रस्तावना तीन भागों में विभाजित की गयी थी। प्रथम भाग में सामान्य ग्राम कार्यक्रम (General Village Schedule) दिया गया था। इसके अन्तर्गत ग्रामों की सामान्य आर्थिक रसायनों, भूमि पट्टा पत्रिकाओं, परिवारों के रोजगार के बांधों भूमि के उपयोगों प्रचलित मजदूरी की दरों मजदूरी आयायी की पत्रिकाओं उपयोग की मुख्य मुख्य वस्तुओं के मूल्य तथा कुम्हार मूल्यों तथा अर्थशास्त्रिक और बाहर से आए हुए आर्थिक यदि हों तो इनके विषय में सूचनाएं एकत्रित करना था। एकत्रित किए गए आंकड़े चुन हुए ८१२ गांवों के स्थानीय अधिकारियों के रिकार्डों पर आधारित थे।

द्वितीय भाग में सामान्य परिवारिक कार्यक्रम (General Family Schedule) था। इसके अन्तर्गत रोजगार, चुने हुए गांवों के परिवारों के आकार तथा इनकी आय धर्म की समता आबात ओतों के आकार, मजदूरी पर सधे अधिकों के रोजगार की सीमा पगुवों तथा कृषि उपकरणों आदि के सम्बन्ध में आंकड़े एकत्रित करना था। इन चरण में बांध गांवों द्वारा १०४,००० आधीस परिवारों का सर्वेक्षण किया गया।

तृतीय भाग गृहण पारिवारिक काय-क्रम का था। इसका अन्तगत सबसे कुछ चुन हुए कृषि शक्तियों के ऐसे परिवारों को लिया गया था, जिनको प्रतिनिधि रूप में माना जा सकता था। इन परिवारों को 'रेग्जम' आधार पर चुना गया था। इस भाग में रोजगारी तथा बरोजगारी से सम्बद्ध सूचना, कुस धाय तथा निबस धाय, धर्नश्र्दिक धम कृषि शक्ति परिवारों के निर्वाह-सर्च तथा जीवन स्तर और श्रृण प्रस्तुता से सम्बन्धित धांकड़े एकत्रित किए गये थे। इस गृहण पारिवारिक सर्वेक्षण कार्य के लिए देश को ६ क्षेत्रों में विभक्त किया गया था। इस सर्वेक्षण से सम्बद्ध सात रिपोर्टें भी प्रकाशित की जा चुकी हैं। इनमें से एक रिपोर्ट सम्पूर्ण भारत तथा दोष ६ रिपोर्टें प्रत्येक राज से सम्बन्धित हैं।

इस सर्वेक्षण के तीनों चरणों क कार्य क्रम से जो धांकड़े एकत्रित किए गए, वे इस प्रकार से प्रपत्र III 'क' में मासिक धांकड़े प इनमें स ८१९ सामान्य गाँव से १०४, ०० सामान्य परिवार से और १६१००० गृहण परिवार से सम्बन्धित प। प्रपत्र III 'ख' में वार्षिक धांकड़े प जो १३००० गृहण परिवार काय-क्रम से सम्बन्धित थे। प्रपत्र III 'ग' म वनिक धांकड़े थे जो २१००० गृहण परिवार कार्य-क्रम से सम्बन्धित थे। इन कार्य-क्रमों द्वारा जो धांकड़े प्राप्त हुए उनकी बड़ी सावधानी से जाँच की गयी। इसक पश्चात् उन्हें धम मभासय क मासिकीय विभाग में भसी माँति जाँच-पड़तास करने के बाद सारिणी-बद्ध कर दिया गया। प्रत्येक क्षेत्र तथा प्रत्येक राज्य के लिए कुस १६ क्षेत्रीय तथा १६ राजकीय सारिणिया बनाई गई थी। म्यूनठम मञ्जदूरी निर्धारित करने क लिए प्रेनीय सरकारों का नन धाँकड़ों को उपसन्ध कर दिया गया था।

पहली पुछताछ की रिपोर्ट 'भारत में कृषि मन्धगी मञ्जदूरी' (Agricultural Wages in India) नामक धयजी पुनिका-भाग १ तथा भाग २—में प्रकाशित की गई है। दूसरी पुछताछ की रिपोर्ट 'धामीग धम मन्ध तथा म्याबमाधिय धाकार' (Rural Manpower and Occupational Structure) नामक पुनिका में की गई है। पुछताछ के इन तीनों चरणों के परिणामों का सारण "कृषि शक्ति—बह कँधे कार्य करत हैं और कँध रहे हैं" (Agricultural Labour—How They Work and Live) नामक एक प्रकाशन में दिया गया है। धय इन पुछताछ की सभी रिपोर्टें प्रकाशित की जा चुकी हैं। पुछताछ म नन् १९४९ म सन् १९३१ तक की धयधि सी गई है।

धायोजना धायोग का सिधरिणों क फलस्वरूप धम क रोजगार मंत्रानय ने केन्द्राय संस्थान मंस्था तथा राष्ट्रीय सेमन्ध सर्वे निग्गालय तथा भारतीय मरवान संस्थान क महवाग से १९३६ ३७ म द्वितीय कृषि शक्ति पुछताछ धारम्भ की। यह पुछताछ ६ ६०० गाँवों में की गई जिनकी 'रेग्जम' आधार पर छाँटा गया था और १० मास की धयधि में इनमें पुछताछ की गई थी। नमूने क तीर पर छाँटे हुए इन गाँवों में से २८ ३६० कृषि शक्ति परिवारों से (बिगटे नमूने के तीर पर छाँड दिया

यथा वा) रोजगार, बरोजगारी मजदूरी भाय ध्यय तथा श्रुणु-व्यस्तता से सम्बन्धित धाँकड़े एकत्रित किए गए थे। इस द्वितीय पूछताछ का एक मुख्य उद्देश्य यह था कि १९३०-३१ तथा १९३६-३७ के मध्य में जो प्रथम पंचवर्षीय आयोजना की विकास योजनाओं से उत्पत्ति हुई है उसका प्रभाव कृषि धमिकों पर कितना हुआ है—इस बात को धाँका बाध। परन्तु धाँक में इस बात का उल्लेख किया गया है कि इस प्रकार की दुकना पूर्ण रूप से सही नहीं हो सकती क्योंकि दोनों धाँकों में परिभाषाओं प्रत्यय (Concept) तथा पद्धतियों में भिन्नता था। द्वितीय पूछताछ की रिपोर्ट १९६० में प्रकाशित हुई। द्वितीय पूछताछ के निष्कर्ष प्रथम पूछताछ की दुकना में निम्न लिखित हैं—

व्यावसायिक ढाँचा —(Occupational Structure)

(१) कृषि धमिक परिवारों की औसत संख्या १९३६-३७ में १ करोड़ ६३ लाख थी तथा १९३०-३१ में यह संख्या १ करोड़ ७९ लाख थी। इस प्रकार संख्या १६ लाख कम हो गई थी। यह कमी इस कारण हो सकती है कि दोनों पूछताछों में "कृषि धमिक परिवार" की परिभाषा में कुछ भिन्नता थी।

(२) भूमिहीन कृषि धमिक परिवार १९३६-३७ में २७ प्रतिशत व तथा १९३०-३१ में कुल संख्या का ३० प्रतिशत थे।

(३) १९३०-३१ की पूछताछ के अनुसार सम्बन्ध धीरे धमिक कृषि धमिक परिवारों का अनुपात १० : ९० था। १९३६-३७ की धाँक के अनुसार २७ प्रतिशत तो सम्बन्ध धमिक परिवार थे तथा शेष नैमित्तिक धम परिवार थे।

(४) कृषि धमिक परिवारों का औसत धाकार १९३०-३१ में ४-३० वा धीरे यह बढ़कर १९३६-३७ में ४-४० हुआ गया था। १९३६-३७ में धनीभाजन करने वाले घरानों की संख्या प्रति परिवार २०-३ थी जिनमें से ११३ पुरुष ७७४ महिलाएँ ०-१६ बालक थे। १९३०-३१ में ऐसे घरानों की संख्या २० थी जिनमें से ११० महिलाएँ तथा ०-१ बालक थे।

(५) १९३६-३७ में कृषि धमिकों की अनुमानित संख्या ३ करोड़ ३० लाख जिनमें से १ करोड़ ८० लाख पुरुष १ करोड़ २० लाख महिलाएँ तथा ३० लाख बालक थे। १९३०-३१ में कृषि धमिकों की संख्या ३ करोड़ ३० लाख थी जिनमें से १ करोड़ ९० लाख पुरुष १ करोड़ ४० लाख महिलाएँ तथा २० लाख बालक थे।

रजगार तथा बेरोजगारी —(Employment and Unemployment)

(१) नैमित्तिक ध्यस्क पुरुष धमिकों को औसत रूप से १९३०-३१ में वर्ष में ०० दिन तथा १९३६-३७ में १९७ दिन मजदूरी पर रजगार मिलता था। १९३०-३१ में ७३ दिन तथा १९३६-३७ में ४० दिन से स्वयं के रजगार पर लगे रहते थे।

(२) नैमित्तिक ध्यस्क महिला धमिकों को १९३०-३१ में १३८ दिन तथा १९३६-३७ में १४९ दिन मजदूरी पर रजगार मिलता था।

(३) बालकों के रोजगार दिवस की संख्या १९५०-५१ में वष में १६१ थी और १९५६-५७ में २०४ थी।

(४) नैमित्तिक बयस्क पुरुष श्रमिक १९५६-५७ में १२८ दिन तथा १९५०-५१ में ८० दिन बेरोजगार रहते थे।

दोनों पुरुषांशों में रोजगार सम्बन्धी आंकड़े एकत्रित करने में कुछ भिन्नता थी। प्रथम पुरुषांश में रोजगार सम्बन्धी आंकड़े पूर्णरूप से एकत्रित नहीं किए गए थे तथा स्वयं के रोजगार के आंकड़े भी पृथक रूप से एकत्रित नहीं किए गए थे वरन्, उनका अनुमान लगा लिया गया था। कार्य की गहनता के सम्बन्ध में भी भिन्नता पाई जाती थी।

मजदूरी —(Wages)—

(१) कृषि श्रमिक परिवारों की कृषि कार्यों तथा गैर कृषि कार्यों से औसत आय १९५०-५१ में ७६% थी तथा १९५६-५७ में ८१% थी। १९५०-५१ में ३६% तथा १९५६-५७ में ४२.७% कार्य दिनों के लिए मकड़ी में मुग्तान किया गया था। जिसमें पूर्णरूप से अदायगी १९५०-५१ में ३१.३ प्रतिशत तथा १९५६-५७ में ४.२% कार्य दिनों के लिए की गई थी। १९५०-५१ में ६८% तथा १९५६-५७ में १०.८% कार्य दिनों के लिए मुग्तान जिसमें और मकड़ी दोनों के रूप में किया गया था।

(२) बयस्क पुरुष श्रमिक की औसत दैनिक मजदूरी १९५०-५१ में १.० रुपये थी जो वितरकर १९५६-५७ में ६६ न.० पं० रह गई थी। बयस्क महिला श्रमिकों की भी औसत दैनिक मजदूरी १९५०-५१ में ६२ न.० पं० थी और १९५६-५७ में ५६ न.० पं० रह गई थी। बाल श्रमिकों की औसत दैनिक मजदूरी १९५०-५१ में ७० न.० पं० तथा १९५६-५७ में ५३ न.० पं० थी।

(३) दोनों पुरुषांशों में औसत मजदूरी की तुलना करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि मुग्तान पद्धतियों जिसमें और मकड़ी में अदायगी की महत्ता धारि में भिन्नता थी तथा जिसमें अदायगी का मूल्यांकन १९५६-५७ में तो शोक कीमतों के अनुसार किया गया था तथा १९५०-५१ में वृद्ध कीमतों के अनुसार किया गया था।

(४) कृषि में कुल मजदूरी का अनुमान १९५६-५७ में लगभग ३२० करोड़ रु० का और १९५०-५१ में ५०० करोड़ रु० था। इस वृद्धि का कारण यह था कि १९५६-५७ में सम्बन्ध श्रमिक परिवारों का औसत (लगभग २७ प्रतिशत) १९५०-५१ के औसत (लगभग १० प्रतिशत) से अधिक था और सम्बन्ध श्रमिक परिवारों की वार्षिक औसत आय १९५६-५७ में १९५०-५१ की अनेक अधिक थी।

वार्षिक आय —(Household Income)

(१) कृषि श्रमिक परिवार की वार्षिक औसत आय १९५०-५१ में ४४७ रु० थी और १९५६-५७ में ४१७ रु० थी।

(२) विभिन्न स्रोतों से कृषि श्रमिक परिवारों को दोनों पूछताछों की प्रक्रिया में जो औसत आय हुई वह निम्न प्रकार थी (कोष्ठक में दिए गये धाँकड़े तमाम स्रोतों से जो आय हुई उसका प्रतिशत बताते हैं)

धाय का स्रोत	१९५१-५२ (₹०)	१९५६-५७ (₹०)
(क) भूमि की बूटाई से	५६६० (१३.४६)	३००७ (६.८७)
(ख) कृषि धर्म से	२८६६० (६४.२०)	३१६५५ (७३.५)
(ग) गैर-कृषि धर्म से	५३१६ (११.६०)	३४६४ (७.६६)
(घ) अन्य	४६६४ (१०.५१)	५२६१ (१२.१०)

घटों की बूटाई से तथा गैर-कृषि धर्म से तो धाय १९५६-५७ में कम हो गई थी परन्तु कृषि धर्म से धाय बढ़ गई थी।

उपभोग तथा निर्वाह लागत व्यय — (Consumption and Cost of Living)

(१) कृषि श्रमिक परिवार का मासिक औसत उपभोग व्यय १९५१-५२ में ₹६१ रु. था जो बढ़कर १९५६-५७ में ₹१७ रु. हो गया। विभिन्न स्रोतों पर दोनों वर्षों में प्रतिशत व्यय निम्न प्रकार था —

	१९५०-५१	१९५६-५७
भोजन	८३.३	७७.३
कपड़ा तथा बूटा	६.३	६.१
ईंधन व प्रकाश	१.१	७.६
विभिन्न मह तथा सेवार्थ	७.३	८.७

(२) १९५६-५७ में प्रति परिवार औसत धाय ४३७ रु. थी परन्तु औसत उपभोग व्यय ₹१७ रु. था। इस प्रकार ₹२० रु. का घाटा था। इस घाटे की पूर्ति पिछली वर्षों से जमापति का कम बचत संचयनों से धर्म की प्राप्ति तथा ऋण लेकर की गई थी।

ऋणप्रसूता :—(Indebtedness)

(१) १९५६-५७ में ६४% और १९५०-५१ में ६२% कृषि श्रमिक परिवार ऋण-ग्रस्त थे। १९५०-५१ में प्रति परिवार ऋण की औसत मात्रा ४७ रुपये थी और १९५६-५७ में ८८ रु. थी।

(२) प्रति ऋणग्रस्त परिवार का औसत ऋण भी १९५०-५१ में ₹०.५ रु. से बढ़कर १९५६-५७ में ₹३.८ रुपये हो गया था।

(३) कृषि श्रमिक परिवारों का कुल अनुमानित ऋण १९५६-५७ में ₹४३ रु. था तथा १९५०-५१ में ८० करोड़ रु. था।

(४) कुल ऋण में स समयम ४९% ऋण तो उपभोग व्यय क लिए लिया गया था। सामाजिक कार्यों क लिए ऋण का प्रतिघट २४ तथा उत्पादन कार्यों के लिए १६ था। घप ११% ऋण विविध मर्जों पर व्यय करने क लिए लिया गया था।

(५) कुल ऋण में से ३४% महाजग स ४४% मित्रों व सम्बन्धियों से, १२% भातिकों से, ५% दुकानदारों से तथा १% सहकारी छात्र समितियों स लिया गया था।

बेगार की समस्या — (Problem of Forced Labour)

बेगार या अधिचार्य धम से उस काय या सेवा से धमिप्राय है जिनके सिध चाहे मजदूरी धरा की जाती हो या न की जाती हो परन्तु जो किमी व्यक्ति से उसकी इच्छा के विरुध बसपूर्वक कर्वाई जाती है। यह बेगार की समस्या एक गम्भीर सामाजिक बुराई है और यह बुराई धामीण भारत के धनेक भागों में पाई जाती है। बीसा कि उपर संकेत किया गया है कृषि धमिक पूछताछ ने कुछ पिछड़े हुमे गांवों में इस बासता की प्रथा के पाए जाने की धोर संकेत किया है। धन्तर्राष्ट्रीय धम सगठन क सन् १९३० के बेगार से सम्बन्धित धमिसमय के परिणामस्वरूप सन् १९३१ में भारतीय बिधान ने एक प्रस्ताव पारित किया था जिसमें भारत सरकार से यह मांग की गयी थी कि वह इस बेगार की बुराई का दर करने के लिये कुछ धावश्यक कार्यवाही करे। फलस्वरूप भारत सरकार ने प्रांतीय सरकारों को यह धादेश दिया कि वे उन बिभिन्न अधिनियमों की जांच करें जिनके धमसगत बेगार ली जाती थी। ऐसे अधिनियम सपराधी प्रकृति की बातियों से धोर धरुद्धा ब्यवहार करने वाले कर्दियों को छाड़ने के सम्बन्ध में थे। इसी प्रकार के कुछ धग्य सामाजिक बिधान भी थे। राज्य सरकारों को यह भी धादेश दिया गया कि वे यथासम्भव धीमातिधोध इस बेगार की प्रथा को समाप्त कर दें। इसके धतिरिक्त भारत सरकार ने केन्द्रीय अधिनियमों की भी जांच की। जमींदार या धम्य लोग बधकित्तक रूप से बेगार न से सके इसके लिये सन् १८०६ के बंगाल बिधियमन अधिनियम में तथा मासबुधारी के कुछ अधिनियमों में संधोधन किए गए। कुछ प्रांतीय सरकारों ने बीरा करने वाले अधिकाधियों द्वारा इस बेगार लेने की प्रथा को राने क लिये प्रजाधमिक धादेश भी जारी किए। धनक बेसी राज्यों ने भी बेगार के बिधम पर बिधान बनाए थ।

परन्तु इस प्रथा में धमिक परिवर्तन नहीं हो सका। इसलिये सन् १९४० में भारत सरकार ने केन्द्रीय प्रांतीय तथा भारतीय राज्यों के बिभिन्न अधिनियमों तथा बेगार पर उपलब्ध सम्पूर्ण साहित्य का धधयन करने के लिए एक बिधान बिबिधारी नियुक्त किया। इस अधिधारी को इस बिधय पर रिपोर्ट देनी थी कि तत्कालीन बिधान किस सीमा तक बेगार को रोजने में समर्थ था तथा भबिधय में दम बेगार को रोजने के लिये क्या करना धावश्यक था। यह रिपोर्टें जो प्रस्तुत की जा चुकी है कई स्थानों पर बेगार की बुराधियों की धोर संकेत करती है तथा बेगार करने वाले धमिधों के प्रकर धादि के सम्बन्ध में ब्यापक सूचनाए देती है।

निम्नलिखित तीन शीर्षकों के अन्तर्गत बेमार का बर्गीकरण किया जा सकता है—(१) सार्वजनिक कार्यों के लिए सरकार द्वारा रॉय रूप से सी नहीं प्रविष्टि (Requisitioned) बेमार। (२) जमींदारों या अछूत-दाताओं द्वारा बलापूर्वक ली गई बेमार, तथा (३) पीछे-रिबाओं के अन्तर्गत ली जाने वाली बेमार, जो निजी व्यक्तियों द्वारा ली जाती है।

अपने कर्तव्य पालन में सार्वजनिक अधिकारियों द्वारा अनिवार्य भ्रम, या बेमार, सार्वजनिक कार्यों के लिए, सभी वर्गों के व्यक्तियों से ली जाती है। उदाहरणार्थ लोगों को अनिवार्य रूप से कुछ कार्य करने पड़ते हैं, जैसे पुलिस या मजिस्ट्रेट को किसी अपराध की सूचना देना किसी घपरापी को पकड़ना, किसी सार्वजनिक अधिकारी को उसके कर्तव्य-पालन में सहायता देना सार्वजनिक सम्पत्ति की सफाई या देखरेख करना प्रायः बाढ़, महामारी प्रायः जैसे संकटों में सहायता देना और सार्वजनिक हित के कार्य करना प्रायः। यह भी देखा गया है कि कुछ अनिवार्यों में ऐसे अपराध हैं जिनके अन्तर्गत कुछ विशेष कार्यों के लिए बेमार की अनुमति या मुविधा है। भारत सरकार इन अनिवार्यों में संशोधन करने का विचार कर रही है।

अन्य प्रकार की एक और बेमार भी है। यह बेमार जमींदार अपने प्रासामियों तथा गांव के अन्य निवासियों से अपने स्वामित्व के बस पर लेते रहे हैं। वास्तव में इन जमींदारों को अपने प्रासामियों से अमान लेने के अतिरिक्त और कुछ प्राप्त करने का अधिकार नहीं होता है। सभी प्रदेशीय सरकारों ने अपने रैयतदारी विभाग में एही व्यवस्था की है, जिसके अन्तर्गत प्रासामियों से अनिवार्य रूप से बेमारें या सवायें बना एक बख्शीय अपराध कोषित कर दिया गया है। लेकिन इन सब बातों के होते हुए भी मालिक वर्ग में कई बार प्रासामियों को बिना मजदूरी दिए या जोड़ी सी मजदूरी देकर अपने खेतों पर कार्य करने के लिए विवश कर देते हैं। कमी-कमी यह जमींदार गांव के कुछ निवासियों को मकानों के लिये या खेती के लिये भूमि देते हैं, जिसका समान उन्हें या तो नकद रूप में धरा करना पड़ता है या फिर उपज के कुछ भाग के रूप में। ऐसे प्रासामी को प्रायः या तो अपने जमींदार के खेतों में कार्य करना पड़ता है या फिर उसके कुछ बरेदू कार्य करने पड़ते हैं। अनेक बार तो उसने परिवार के सदस्यों को भी जमींदार के लिये कार्य करना पड़ता है, जिसके लिए प्रायः उन्हें कोई मजदूरी नहीं दी जाती और यदि दी भी जाती है तो वह बहुत कम मना ही कर सकते हैं और न मजदूरी ही के लिये किसी प्रकार का मोल मांग कर सकते हैं क्योंकि उन्हें इस बात का भय होता है कि कहीं ऐसा न हो कि उन्हें उनके खेतों या मकान की भूमि से निकाल दिया जाय। गांव में अनेक प्रासामी खेतों में बेमार लिए जाने के विषय में साधारणतया यही बातें अधिक पाई गई हैं। इसके अतिरिक्त एक और बेमार है। यह बेमार अछूत-दाता लेते हैं। बास

शक्तिों का बर्धन करत समय इस बेगार का अन्तर्गत किया जा चुका है। कमी-कमी जमींदार अपने प्रादायियों को ऋण देते हैं, तथा मकानों के सिधे भूमि देते हैं और इस प्रकार सब के लिए उन्हें अपने यहाँ नौकरी करने के बन्धन में बाध कर लेते हैं। यह प्रथा प्राचीन भारत के अनेक भागों में प्रचलित है। इस प्रथा को मिश्र-मिश्र नाम भी दिए गए हैं। उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश बिहार तथा मध्य भारत के कुछ भागों में इस प्रथा को 'हरषाही' पद्धति कहते हैं। यही प्रथा बिहार के मध्य भागों में 'कैमुती', उड़ीसा तथा मद्रास के कुछ भागों में 'गोटी', मद्रास के कुछ मध्य भागों में 'बप' तथा पुन्नरत प्रादि में 'हामी' कहलाती है। ऋण के सेने-सेने में कानूनी शक्ति कबल इतना ही होता है कि ऋण को व्याज सहित चुका दिया जाए। लेकिन इस प्रथा के अन्तर्गत जब तक ऋण को प्रदायमी नहीं हो जाती देनदार को अपने ऋणदाता के लिए शारीरिक श्रम करना पड़ता है। यह ऋण यथार्थ में घटने की प्रेरणा बढ़ता ही जाता जाता है। एसा भी होता है कि देनदार तथा कमी-कमी उसके परिवार के सदस्य भी प्राजीवन के लिए इस बन्धन में बंध जाते हैं और देनदार की मृत्यु के बाद भी उसका पुत्र या पौत्रक सम्पत्ति के रूप में अपने पिता के सभी अधिकारों तथा शक्तियों का भार बहन करता पड़ता है। अनेक प्रदेशीय सरकारों ने इस कुराई को दूर करने के सिधे पय उठाए हैं। सन् १९१० में बिहार तथा उड़ीसा सरकार ने इस कुराई को जड़ से दूर करने के लिए "बिहार तथा उड़ीसा कैमुती सम्प्रदाय प्राधिनियम पारित किया। मद्रास सरकार ने सन् १९४० में "मद्रास प्राधिकरण ऋण दासत्व उन्मुक्त विनियमन (Madras Agency Debt Bondage Abolition Regulation) पारित किया। उड़ीसा सरकार ने सन् १९४८ में उड़ीसा ऋण दासत्व उन्मुक्त विनियमन बनाया। अन्य प्रदेशीय सरकारों के ऋण विधान ने भी कुछ सीमा तक इस प्रथा की कुराई को कम करने में सहायता की है।

इसके अतिरिक्त प्राचीन शर्तों में परम्परागत बेगार भी पाई जाती है। जमारों कुम्हारों नारियों तथा बोलियों प्रादि द्वारा अन्य वर्गों के व्यक्तियों के प्रति की गयी व्यावसायिक सेवायें इसी बेगार के अन्तर्गत आती हैं। इन सेवाओं के लिए पारिश्रमिक या तो कटाई के समय कृषि की कुछ उपज के रूप में या उपजों या रथीहारों के अक्षर पर भोजन तथा वपशों के कुछ उपहारों के रूप में दिया जाता है। इस प्रकार की बेगार सामान्यतया दोनों पक्षों के लिए साहजिक समझी जाती है। लेकिन इन पद्धति में भी शोषण का अक्षर रहता है। प्राजबल प्राधुनिक विज्ञान के प्रभाव तथा शर्तों की पृथक्ता समाप्त हो जाने के कारण इस प्रकार की सेवायें अल्प प्रचलित नहीं हैं और ऐस लोग जो इस प्रकार की सेवायें करते हैं अब सामान्यतया मजदूर के रूप में सम्भार मजदूरी की प्रदायगी की माँग करते हैं।

इन सब बातों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि किसी भी प्रकार की बेगार लेना अशुभ नहीं है। इस प्रकार की बेगार जानबी सम्मान के सर्वदा विरुद्ध

उपसंहार —

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि कृषि धमिकों की समस्याओं को हल करने का प्रश्न वर्तमान समय का अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न है। कृषि धमिकों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। प्रत्येक ऐसी परिस्थिति जिसके कारण छोटे-छोटे नासठकारों की आर्थिक दशा बुखस हो जाती है कृषि धमिकों की संख्या में वृद्धि कर देती है। इसके फलस्वरूप उनकी मजदूरी की दरें बहुत कम हो गई हैं। मूख्यों में वृद्धि होने का नाश भूमिधर कृषक वर्ग को ही मिला है। इसके साथ ही निर्यात व्यय में वृद्धि होने से कृषि धमिकों पर अत्यन्त भार भी बढ़ गया है। भूमि की माँग के बढ़ जाने के कारण गाँवों में बरामाह समाप्त होते जा रहे हैं। इसलिये कृषि धमिक अपनी धार की कमी को पूरा करने के लिये बुखसारी पशुओं को भी नहीं पास पाते। पशुओं में जो विकेकीकरण किया जा रहा है उसका प्रभाव भी कृषि धमिकों पर पड़ेगा क्योंकि कृषि व्यवसाय पर भार अधिक हो जायेगा। कृषि में मध्यस्थों की प्रथा के समाप्त हो जाने से भी भूमिधर किसान और कृषि धमिकों के मध्य आपसी सम्बन्ध अच्छे नहीं रहे हैं। छोटे-छोटे ऐम जमींदार भी जो विभिन्न राज्यों में अनेक जमींदारी उन्मुक्त अभिनियमों के सागु हो जाने से समाप्त हो गये हैं इस कृषि धमिक वर्ग की संख्या में वृद्धि कर रहे हैं। इस प्रकार कृषि धमिकों की वर्तमान दशाएँ बहुत ही असन्तोषजनक हैं। "उन्हें वर्ष में केवल ६ महीने के लिये रोजगार मिलता है औषधों और पशुओं के साथ एक ही मकान में रहना पड़ता है तथा भोजन भी उन्हें बहुत बुरा भावे पेट ही मिलता है। परिणाम यह होता है कि वे बड़ी आसानी से महामारियों और साहूकारों के लिकार हो जाते हैं और बहुत ही कम मजदूरी पर उन्हें बेकार करती पड़ जाती है।" जनसंख्या में वृद्धि से तथा बेरोजगारी और अपूर्ण रोजगार में कोई विशेष अन्तर न होने की कठिनाई से यह समस्या और भी अटिप्त हो गयी है। जमींदारी प्रथा के उन्मुक्त से कृषि धमिकों ने जमींदारों का परम्परागत संरक्षण भी खो दिया है। गाँवों में अब जो नये स्वामी और नया बने हैं, उनका इन धमिकों के प्रति व्यवहार और भी बुरा है।

कृषि धमिकों की बचावों में सुधार करने के लिए सर्वांगीण प्रयत्नों की बड़ी आवश्यकता है। यह समस्या कृषि में सामान्य सुधार तथा परती भूमि के पुनरुद्धार तथा अन्य ऐसे विषयों से सम्बन्धित है जैसे प्राचीण आवास स्वच्छता तथा स्वास्थ्य योजनाएँ, बयस्क शाला, धमिकों की अल्पसंख्यता में निवृत्ति बहुरंगीय सहकारी गतिविधियों की स्थापना, धाम पंचायतों का निर्माण, आदि। अनेक प्रदेशों में सरकारें कृषि धमिकों के कल्याण के लिए इन विषयों पर पहले ही कुछ पग चला चुकी हैं। प्रथम पंचवर्षीय आयोजना में भी भूमिहीन धमिकों तथा पाए की जोतों के मासिकों को भूमि देने की नीति पर अधिक बल दिया गया है। अभी हम ही में पुनरुद्धार की सभी भूमि तथा ऐसी भूमि जो अब तक बरामाह पड़ी हुई थी उनका लिए पहल ही समय का ही मर्म है। हम उद्देश्य की पूर्ति के लिए २ करोड़ रुपये की पत्र राशि

है। जिस व्यक्ति से भी बिना किसी काम के लिये कहा जाय है, वह साधारणतया बुरी तरह कुछ खाता है, चाहे वह काम सार्वजनिक हित के लिये ही क्यों न हो। अतः भारतीय संविधान के अनुच्छेद २३ के अन्तर्गत मनुष्य जाति का पण्डित तथा हर प्रकार की बेकार को निषेध कर दिया गया है। परन्तु सार्वजनिक कार्यों के लिए राज्य द्वारा कुछ अनिवार्य सेवायें बलपूर्वक ली जा सकती हैं। भारतीय दण्ड विभाग की द्वारा ३७४ में भी इस बात की व्यवस्था की गयी है कि जो लोग धर्म रूप से बेकार होते हैं उन्हें या तो काठबास का दण्ड दिया जा सकता है या उन पर कुछ पुनर्जात किया जा सकता है। सन् १९२४ के अग्रवासी जाति अधिनियम में कुछ सीमा तक बेकार होने की अनुमति दी गई थी परन्तु इस अधिनियम को १९२९ में निरस्त कर दिया गया। १९३७ में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन के ४० वें अधिवेशन में बेकार उन्मुक्तन पर एक अधिसूचना (अधिसूचना न० १०३) अपनाया गया। यह अधिसूचना इस बात की सिफारिश करता है कि समस्त सदस्य राष्ट्रों को तत्काल और पूर्णरूप से बेकार या अनिवार्य धन समस्त करने के लिए प्रशासनिक पथ उठाने चाहिए। यह अधिसूचना जनवरी १९३२ से लागू करने की सिफारिश थी। भारत ने इस अधिसूचना को अभी तक नहीं अपनाया है।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन तथा कृषि अधिका -

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन अब कुछ समय से कृषि अधिकों में रूचि में रहा है। विभिन्न समाहकार कृषि समिति का प्रथम अधिवेशन सन् १९२३ में किया गया था और इसके पश्चात् कुछ श्रावण होने से पूर्व इस समिति के नियमित रूप से बैठकें सम्पन्न हुईं। इसके पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने अपनी एक स्थायी कृषि समिति बनायी। यह समिति कुछ-कास के उपरान्त पुनर्निर्मित की गयी। भारत में इस समिति के विचार-विमर्श में सक्रिय भाग लिया है। सन् १९४७ में दिल्ली में उठा जनवरी सन् १९३० में 'भाबरा ईजिया' (श्री लंका) में किये गये एशियायी प्रादेशिक सम्मेलनों में कृषि रोजगार में मजदूरी के विनियमन के प्रश्न पर विचार किया गया था और सन् १९३० में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन के ३३ वें अधिवेशन के कार्यक्रम में कृषि में न्यूनतम मजदूरी निर्धारित करने की व्यवस्था तथा 'कृषि में श्रम समन्वय' नामक विषय विचार-विमर्श के लिए रखे गए थे। सन् १९४१ में सम्मेलन के ३४ वें अधिवेशन तथा सन् १९४२ के ३५ वें अधिवेशन में 'कृषि में उद्योग सुदृढीकरण के विषय पर विचार किया गया। 'कृषि में व्यावसायिक प्रशिक्षण' तथा 'कृषि में कियोरी तथा बालकों के रोजगार' में सम्बन्ध प्रस्तावों को स्थायी कृषि समिति द्वारा पारित किया गया था। सन् १९४५ में सम्मेलन के ३८ वें अधिवेशन में 'कृषि में व्यावसायिक प्रशिक्षण' पर विचार हुआ। स्थायी कृषि समिति तथा अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की एशियायी समाहकार समिति ने भी समय-समय पर कृषि अधिकों की विभिन्न समस्याओं पर विचार-विमर्श किया है।

उपसंहार —

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि कृषि धमिकों की समस्याओं को हल करने का प्रस्तुत वर्तमान समय का अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रस्ताव है। कृषि धमिकों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। प्रत्येक ऐसी परिस्थिति जिसके कारण छोटे-छोटे काबजदारों की धार्मिक दया कुर्बान हो जाती है कृषि धमिकों की संख्या में वृद्धि कर देती है। इसके फलस्वरूप उनकी मजदूरी की दरें बहुत कम हो गई हैं। मूल्यों में वृद्धि होने का नाम भूमिधर कृषक वर्ग को ही मिला है। इसके साथ ही निर्बाह खर्च में वृद्धि होने से कृषि धमिकों पर ऋण का भार और भी बढ़ गया है। भूमि की मूल्य के बढ़ जाने के कारण गांवों में बरामाह समाप्त होते जा रहे हैं। इसलिये कृषि धमिक अपनी धार्य की कमी को पूरा करने के लिये दुर्गम पशुओं को भी नहीं पाल पाते। बाजारों में जो बिबेकीकरण किया जा रहा है उसका प्रभाव भी कृषि धमिकों पर पड़ेगा क्योंकि कृषि व्यवसाय पर भार अधिक हो जायेगा। कृषि में मध्यमियों की प्रथा के समाप्त हो जाने से भी भूमिधर किसान और कृषि धमिकों के मध्य घापटी सम्बन्ध प्रकट नहीं रहे हैं। छोटे-छोटे ऐम जमींदार भी जो विभिन्न राज्यों में अनेक 'जमींदारी उन्मुक्त अधिनियमों' के लागू हो जाने से समाप्त हो गए हैं, इस कृषि धमिक वर्ग की संख्या में वृद्धि कर रहे हैं। इस प्रकार कृषि धमिकों की वर्तमान दशाएं बहुत ही असन्तोषजनक हैं। "उन्हें वर्ष में कबल ६ महीने के लिये रोजगार मिलता है, बीमारों और पशुओं के साथ एक ही मकान में रहना पड़ता है तथा जीवन भी उन्हें बहुधा आगे पेट ही मिलता है। परिणाम यह होता है कि वे बड़ी आमाशी से महामारियों और साहूकारों के पिकार हो जाते हैं और बहुत ही कम मजदूरी पर उन्हें बेमार करनी पड़ जाती है।" जनसंख्या में वृद्धि से तथा बरोजगारी और अपूर्ण रोजगार में कोई बिरोध प्रकट न होने की कठिनाई से यह समस्या और भी बढ़ित हो गयी है। जमींदारी प्रथा के उन्मुक्त से कृषि धमिकों ने जमींदारों का परम्परागत संरक्षण भी खो दिया है। गांवों में अब जो नये स्वामी और भेता बने हैं, उनका इन धमिकों के प्रति व्यवहार और भी बुरा है।

कृषि धमिकों की दशाओं में सुधार करने के लिए सर्वांगीण प्रयत्नों की बड़ी आवश्यकता है। यह समस्या कृषि में सामान्य सुधार तथा परती भूमि के पुनरुद्धार तथा अन्य ऐसे विषयों से सम्बन्धित है जमे ग्रामीण आबाग स्वच्छता तथा स्वास्थ्य योजनाएँ, बयस्क शिक्षा, धमिकों की ऋणमुक्तता न निवृत्ति बहुदलीय सहकारी समितियों की स्थापना, ग्राम पंचायतों का निर्माण आदि। अनेक प्रयोगीय सरकारों कृषि धमिकों के बस्याग के लिए इन विषयों पर पहले ही कुछ पय उठा चुकी है। प्रथम पंचवर्षीय आयोजना में भी भूमिहीन धमिकों तथा पाटे की जोगों के धमिकों को भूमि देन की नीति पर अधिक बल दिया गया है। अभी हात ही में पुनरुद्धारित की गयी भूमि तथा ऐसी भूमि जो अब तक बेकार पड़ी हुई थी उनसे लिए पहले ही धन्य कर दी गई है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए २ करोड़ रुपये की धन राशि

निश्चित की गई थी। एक करोड़ रुपये भूमिहीन श्रमिकों के पुनर्वास के लिए व्यय किए गए थे। द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में यह सुझाव दिया गया था कि भूमिहीन श्रमिकों की भूमि पर फिर से बसाने के लिए व्यापक योजनाएँ तयार की जाएँ तथा इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए बोर्ड बनाए जाएँ। श्रमिक सहकारी उत्पादन समितियों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए तथा कृषि श्रमिकों को मजदूर बनाने के लिए भूमि भी बिना सागत के उपलब्ध होनी चाहिए। द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में १ करोड़ रुपये की लागत से २० हजार भूमिहीन श्रमिक परिवारों को १ लाख एकड़ भूमि पर बसाने की योजना की तथा ऐसे श्रमिकों की कठिनाइयों को कम करने के लिए निम्नलिखित ४ सुझाव दिए गए थे—(१) कृषि उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि करने और पशु पालन के लिए पत बढाने चाहिए। (२) कृषि कार्यों और ग्रामीण ब कुटीर उद्योग वर्गों का विस्तृत रूप से विकास करके ग्रामीण धर्म-व्यवस्था में ही रोजगार के व्यवहार प्रदान करने चाहिए। (३) भूमि का पुनर्वितरण करके तथा शिक्षा की सुविधाओं को विस्तृत करके हीन कृषि श्रमिकों को सामाजिक स्तर, कार्य बुद्धिसत्ता उत्पाद तथा योग्यता में वृद्धि करनी चाहिए। (४) ग्रामीण क्षेत्र में जो विकास सम्बन्धी व्यवहार हो रहा है उसमें के अधिकांश व्यय कृषि श्रमिकों की रहन की बधाओं को समर्थन करने पर होना चाहिए। तृतीय पंचवर्षीय आयोजना में सहकारी श्रम समितियाँ बनाने तथा गाँवों में संकाय परियोजनाओं (Works Programmes) पर बल दिया गया है ताकि ग्रामीण क्षेत्र में जो मानव शक्ति है उसका पूर्ण रूप से उपयोग हो सके और देशाती धर्म-व्यवस्था का जो बाधा बड़ा करन का प्रयत्न किया जा रहा है उसमें बेतीहर मजदूर पूरी तरह और बराबरी के साधारण पर माग से बड़े और उसका सामाजिक और सामाजिक स्तर बेवहाती बनता के बराबर हो जाए।

इस सम्बन्ध में श्री विनोबा भावे के सुझाव साम्बोहन का भी उल्लेख किया जा सकता है। इस साम्बोहन का उद्देश्य बड़े-बड़े जमींदारों में शान्तीसता की प्रवृत्ति को उभार कर भूमिहीन श्रमिकों को भूमि बिसाया है। इस साम्बोहन की सहायता के लिए उत्तर प्रदेश में सुझाव योजना अधिनियम भी पारित किया जा चुका है। सामुदायिक योजना और राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अन्तर्गत भी कृषि श्रमिकों के कल्याण कार्यों पर बल दिया जा रहा है। परिगणित और पिछड़ी हुई जाति के वर्गों के लिए, जो अधिकांश भूमिहीन श्रमिक वर्ग के होते हैं, सब शिक्षा के लिए बज्जीके, नि-पुस्तक पढ़ाई पुस्तकों के लिए अनुदान छात्रावास की सुविधाएँ सादि प्रदान की जा रही हैं। श्रम पंचायतों की भूमिहीन श्रमिकों के लिए कल्याण कार्य करती हैं। इन सब बातों से यह प्रकट होता है कि कृषि श्रमिकों की समस्याओं पर सरकार तथा जनता द्वारा बहुत ही गम्भीर रूप से ध्यान दिया जा रहा है। फिर भी कृषि श्रमिकों की समस्याओं को मान्यता देने की और इन समस्याओं का समाधान रूप से समाधान करने की बहुत आवश्यकता है।

यह बात भी विद्येय ध्यान देने योग्य है कि जब तक कृषि भूमि निर्यात और सन्तुष्ट रहते हैं वे खाद्य उत्पादन की वृद्धि में दक्षिण होकर योग नहीं दे सकते। सर्वत्र खाद्य की कमी के परिणामस्वरूप अधिक लाभ पर प्रनाज का बहुत मात्रा में आयात करना पड़ता है। देश में जो सामान्य भाषिक तथी है उससे भी इस बात की आवश्यकता प्रतीत होती है कि खाद्य के उत्पादन में व्यापक रूप से वृद्धि की जाए ताकि अनाजों की आपूर्ति में आजादीत कमी की जा सके। परन्तु कितने बेद की बात है कि प्रति वर्ष सातों टन प्रनाज की हमारे देश में हानि हो रही है। इसका कारण यह है कि कृषि भूमि को अच्छी मजदूरी नहीं दी जाती भूमि पर उनका कोई अधिकार नहीं होता और वे काम करने में कोई रुचि नहीं लेते। श्री जगजीवन राम के शब्दों में "यह कभी नहीं भ्रमना चाहिए कि यदि किसी भी स्थान पर निर्धनता होमी तो उससे कारण हर स्थान पर सम्पन्नता को सतत उत्पन्न हो जाएगा। जो व्यक्ति कृषि वस्तुओं का उत्पादन कर रहे हैं उनकी निधनता और मलिनता से उत्पादन पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है। उत्पादन के लिए जो मानवी साधन आवश्यक होता है उसकी यदि हम उपेक्षा करेंगे तो जमम सारे राष्ट्र को मकट पैदा हो जाएगा। प्रतीत काम से उपेक्षित तथा बुरी तरह घोषित कृषि भूमि वर्तमान समाज के अत्यन्त ही मामिक घंग हैं। अव्यवस्था और अजाति पैसाने वाले लोगों के यह बड़ी अस्वी सिकार हो जाते हैं। अतः इस सतरे को पूर करने के लिए यह आवश्यक है कि निधन परिधमी भूमिओं के साथ सद्मानुभूति का व्यवहार किया जाए। प्रत्येक विचारशील प्राणी को यह अनुभव करना चाहिए कि इस समस्या का गीघ्रासिघीघ्र समाधान होगा आवश्यक है। यदि इस समस्या की अपिक विनों तक बेपेला की गई तो इसका सम्मालना कठिन हो जाएगा और फिर यह इतनी गम्भीर बन जाएगी कि इससे सामाजिक द्वेष को न बेबन बनना ही पड़वेगा बरन् उसके नष्ट होने का भय उत्पन्न हो पायगा।" हमें धारणा है कि भारत सरकार द्वारा पारित मूलतम मजदूरी अधिनियम कृषि भूमि पृच्छनाछ, राज्य सरकारों की विभिन्न योजनाएं और पंचवर्षीय आयोजनाओं के मुताब मत्री कृषि भूमिों की समस्या का समाधान करने में सहायक होंगे।

श्रम और सहकारिता

(Labour and Co-operation)

सहकारिता का अर्थ और उसके सिद्धान्त—

सहकारिता व्यक्तियों के उस सामुदायिक यावना को कहते हैं जिसका उद्देश्य उचित साधनों द्वारा सामान्य आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त करना है। विभिन्न भेदकों से सहकारिता को अनेक प्रकार से व्याख्या की है जिनका विस्तृत उल्लेख करना यहां आवश्यक नहीं है। यहां इतना ही कहना पर्याप्त है कि जब व्यक्ति यह अनुभव करते हैं कि उनका किसी बर्ष द्वारा हीनपण बिना का रहा है तब वह उम बर्ष से कुछकारण बाने के लिये स्वयं ही कार्य को अपने हाथ में ले लेते हैं। सहकारिता को अनेक ऐसी विशेषताओं में जिनके कारण एक सहकारी समिति और श्रमिक संघ जैसे अल्प संगठनों में अन्तर् होता है। सहकारिता एक ऐसा संघटन है जिसमें पारस्परिक आर्थिक हित सम्पादन के लिए व्यक्ति समानता के आधार पर ऐच्छिक रूप से संगठित होते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि व्यक्ति मानव शाली के रूप में न कि पूंजीपति के रूप में संगठित होते हैं। यह सहकारिता का प्रथम सिद्धान्त है। दूसरे, सब सदस्य समानता के आधार पर संगठित होते हैं और आवश्यकताओं की दृष्टि के अर्थ से उनके बीच कोई अन्तर नहीं होता। तीसरा सिद्धान्त यह है कि संगठित होने का कार्य ऐच्छिक होता है और उसमें कोई बाधन नहीं होता। चौथे सदस्य केवल स्वयं के हितों का सम्पादन करने के हेतु संगठित होते हैं और जो सदस्य नहीं हैं उनमें उनका सम्बन्ध नहीं होता। यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि सहकारिता व्यवसाय संघटन का ही एक प्रकार है। अतः यह एक व्यवसाय संस्था भी है। सहकारी संघटन में भाग वा अर्थस्व भी हो सकता है परन्तु इस प्रकार के भाग को स्वयं सदस्यों में बाँट लिया जाता है जो आर्थिक व कर्मचारी दोनों स्वयं ही होते हैं। सहकारिता का आधार पारस्परिक सहायता है अर्थात् अत्येक सदस्य सबके लिए और सब अत्येक सदस्य के लिए कार्य करते हैं। (All for each and each for all)

संगठन के अन्य प्रकार तथा सहकारिता —

सहकारिता पूंजीवादी व्यवस्था से भिन्न है। सहकारिता का उद्देश्य सदस्यों को आर्थिक स्थिति को सुधारना ही नहीं है बल्कि उनके भौतिक स्तर को भी उन्नत करना है। यह समाजवाद से भी भिन्न है क्योंकि यह व्यक्ति की स्वतन्त्रता का समर्थक है। इसका उद्देश्य यह है कि व्यक्ति भूमि और पूंजी का स्वामी बना रहे। सहकारिता राज्य के स्वामित्व का अन्वर्तन नहीं करती। सहकारिता वर्तमान प्रणाली का ही एक

प्रब है और इसका उद्देश्य सामाजिक व्यवस्था और वर्तमान धार्मिक व्यवस्था को दबाकर फेंकना नहीं है। इसका उद्देश्य यह है कि पाठि बनी रहे और भगवान् न हो तथा व्यक्ति निस्वार्थ हों और केवल स्वयं का ही भय न देखें।

सहकारिता मिथित पूंजी कम्पनियों से भी भिन्न होती है क्योंकि वह कम्पनियाँ पूंजी की संस्था होती हैं। सहकारिता व्यक्तियों की एक संस्था है। मिथित पूंजी कम्पनियों (Joint Stock Companies) में मत का अधिकार व्यक्ति द्वारा शून्य किए गए शेयरों के आधार पर होता है, और इस प्रकार एक व्यक्ति एक से अधिक मत दे सकता है। सहकारिता 'एक व्यक्ति एक मत' के सिद्धांत पर आधारित होती है। इसमें इस बात का विचार नहीं किया जाता कि एक व्यक्ति के पास कितने शेयर हैं या उसका पूंजी में किसना अंशदान है। सहकारिता में मनुष्य प्रधान है पूंजी नहीं। इसका आधार केवल भौतिक ही नहीं है बल्कि सामाजिक और नैतिक भी है।

सहकारिता धार्मिक संघों से भी भिन्न होती है। धार्मिक मठ धर्मियों के ऐसे संगठन होते हैं जो सामूहिक सौदागरी और सामूहिक कायबारी के द्वारा अपने रहन सहन और कार्य की दशाओं को सुधारने तथा मजबूती में वृद्धि करने के लिए बनाए जाते हैं। इस प्रकार धार्मिक संघ मजबूती प्रणाली को मानकर चलते हैं और मासिकों से शोका करते हैं। सहकारिता के अन्तर्गत किसी मजबूती प्रणाली या मासिकों का प्रश्न ही पैदा नहीं होता प्रत्येक व्यक्ति स्वयं ही मासिक और धार्मिक होता है। धार्मिक संघ धर्मियों के संगठन मात्र हैं जबकि सहकारिता एक व्यावसायिक संगठन का रूप है। धार्मिक संघ राजनैतिक गतिविधियों में भी भाग लेते हैं। सहकारी समितियों का ऐसा कोई उद्देश्य नहीं होता है।

सहकारिता के विचार का विकास —

समाज में निर्धनता व शोषण के होने से तथा उनका दुष्परिणामों से बचने की आवश्यकता के कारण सहकारिता का प्रभुत्व हुआ। जब पूंजीवाद और स्वतंत्र प्रतियोगिता के दोष बहुत गम्भीर हो गए तब ऐसे व्यक्तियों ने जो राज्य के हस्तगत में विश्वास नहीं करते थे, शोषक बर्ग से बचने के लिए विभिन्न ढाँचों को अपनी ही भलाई के लिए स्वयं ही करना शुरू कर दिया। सहकारिता को इस प्रकार हम पूंजीवाद एवं समाजवाद के बीच एक समझौता कह सकते हैं।

सहकारिता के अनेक प्रकार विभिन्न देशों में सहकारिता आन्दोलन—

सहकारिता को आर्थिक गतिविधि के विषय में प्रारम्भ किया जा सकता है। समाज में अनेक प्रकार की सहकारी समितियाँ पाई जाती हैं। सहकारिता के विचार का जन्म संसत् में उस समय हुआ जब औद्योगिक क्रान्ति के दोषों के कारण धर्मशीली-बर्ग के हितों का हनन होने लगा था तथा मध्यमों के द्वारा उन्मोक्तियों का शासन होता था। इस आन्दोलन के नेता रोबर्ट ओबन व क्रिस्चियन मैकार्थर हैं जहाँ इनका दारुणात्मा था धर्मियों की एक बस्ती का निर्माण किया।

उन्होंने श्रमिकों को व्यवसाय के प्रबन्ध में यथासम्भव भाग देने की व्यवस्था की। काम श्रम को समाप्त करने काम के बने पटाने तथा जुमलि को समाप्त करने जैसे महत्वपूर्ण सुधार भी रोबर्ट ओबन ने किए और श्रमिकों के लिए अनेक कल्याण कार्य भी किए। ओबन चाहते थे कि सहकारिता के माध्यम पर श्रमिकों को स्वयं ही प्रबंध का उत्तरदायित्व सौंपा जाय। उन्होंने निर्धन प्रसहाय एवं बेकारों के लिए सहकारी गार्डों अथवा सहकारी बस्तियों के निर्माण का समर्पण किया जहाँ श्रमिकों को काम दिया जा सके और इस प्रकार उन्हें धार्य-निर्धर बनाया जा सके। सन् १८५२ में ओबन के अनुशंसियों ने एक सहकारी समिति National Equitable Labour Exchange के नाम से स्थापित की। इस समिति में सब कारखानों के मजदूर ही थे जो काम बनाते भी थे और खरीदते भी थे। वस्तुओं का मूल्य मुद्रा में नहीं बरत् उन घंटों में नियत किया जाता था जो हर वस्तु के बनाने में लगते थे। इस प्रकार 'पाम' का विचार ही समाप्त कर दिया गया था। रोबर्ट ओबन को अपने प्रयत्नों में विशेष उपलब्धि न मिली क्योंकि इसल वनता क सामने ऐसे उच्च पादर्श रखने से श्रमिकों को व्यावहारिक रूप में प्राप्त करना कठिन था।

विभिन्न देशों में सहकारी आंदोलन के उत्पन्न और उनके इतिहास का यहाँ विस्तृत रूप से उल्लेख करना आवश्यक नहीं है। यहाँ इतना उल्लेख करना ही पर्याप्त होगा कि श्रमिकों द्वारा श्रमिकों का छोपण करने के कारण ही श्रमिक सहकारी उत्पादन समितियों अथवा उत्पादक सहकारी समितियों का जन्म हुआ। इन समितियों में श्रमिक स्वयं ही विभिन्न कार्यों के प्रबन्धक बन जाते हैं और विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन करते हैं। इस प्रकार की सहकारी समितियों में कोई शक्तिशाली पक्ष या कोई शक्तिशाली शक्ति नहीं होता। इस विचार का जन्म रोबर्ट ओबन द्वारा इंग्लैण्ड में हुमा और फ्रांस में भी फैला जहाँ यह कुछ सीमा तक सफल रहा। मन्सर्वों द्वारा उपभोक्ताओं का छोपण होने से इंग्लैण्ड में राकडैल के पयोगामियों (Rochdale Pioneers) द्वारा विस्तृत सहकारिता अथवा उपभोक्ता सहकारी समितियों की स्थापना की गई जो बाद की घन्य देशों में भी फैल गयी। महाजन द्वारा अली के छोपण के कारण जर्मनी में 'रेफिजन' और 'सूसजे' के तथा इटली में 'सीनौर सज्जटाई' के प्रयत्नों के द्वारा सहकारी शक्ति समितियों की स्थापना हुई जो अन्य देशों में भी मोटाप्रस हो गयी। दीर्घ ही सहकारी आन्दोलन शक्तिशाली हो गया तथा कई अन्य प्रकार की सहकारी समितियों का भी जन्म हुआ। डैनमार्क में दुग्ध-उत्पादन (डेबरी) उद्योग में सहकारिता का प्रयोग बहुत सफल रहा है। उपज की बाजार में दिव्य और आवास निर्माण जैसी अनेक अन्य धार्मिक क्रियाओं के लिए भी सहकारी समितियाँ पाई जाती हैं। इसके अतिरिक्त सहकारी समितियाँ सरस्वों की शिक्षा मितव्ययता तथा नैतिक उत्पादन की दिशा जैसे अन्य कार्य भी करती हैं।

० रोबर्ट ओबन और उनके प्रयत्नों के विषय में प्रो० नन्दलाल बटनागर की पुस्तक 'सहकारिता के विचार एवं भारतीय सहकारिता' पृष्ठ १५-१६ देखिये।

सहकारिता के साम—

सहकारी आन्दोलन का यह संक्षिप्त वर्णन यहाँ केवल इस तथ्य की ओर संकेत करने के लिए दिया गया है कि सहकारिता निर्जन व असहाय व्यक्तियों के उत्थान के लिए बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हुई है। पिछड़े हुए देशों एक देश में पिछड़ी हुई जातियों के विकास व उन्नति के लिए सहकारिता एक अत्यन्त महत्वपूर्ण साधन है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि किसी बाह्य सहायता की अपेक्षा अपने ही प्रयत्नों एवं पारस्परिक सहायता द्वारा अधिक लाभ प्राप्त हो सकता है। सहकारिता देश में समजीवी वर्ग की आवश्यकताओं को सुधारने में भी बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है। भारत जैसे देश में सामान्य जनता के उत्थान के लिए तो सहकारिता की बहुत ही महत्ता है।

भारत में सहकारी आन्दोलन का संक्षिप्त इतिहास—

भारत में सहकारिता का जन्म ग्रामीण ऋणपरतता एवं महाजन के अत्याचारों के कारण हुआ। १९ वीं सताब्दी के अन्त में मद्रास सरकार ने ग्रामीण ऋण की समस्या का अध्ययन करने के लिए श्री क डरिक मिचससन को नियुक्त किया। उनकी रिपोर्ट १८९७ में प्रकाशित हुई। उन्होंने ग्रामीण ऋण की समस्या को मुमन्दाते के लिए रैफिन्स आचार की सहकारी साख्त समितियों की स्थापना का सुझाव दिया और अपनी रिपोर्ट का सारांश दो शब्दों में व्यक्त किया—“रेफिन्स को सामो” (Find Reliefmen)। प्रारम्भ में उनकी रिपोर्ट पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया। १९०२ में उत्तर प्रदेश के एक उच्च अधिकारी श्री हुपरनेक्स ने “The People's Bank of India” नामक पुस्तक लिखी तथा स्वयं अपने उत्तरदायित्व पर उत्तर प्रदेश में कुछ सहकारी समितियाँ बसाइं। १९०१ के अन्त में आयोग ने भी जोरदार शब्दों में साम्य संस्थाओं को प्रारम्भ करने की सिफारिश की थी। इन सबके परिणाम स्वरूप १९०४ में प्रथम सहकारी साम्य समिति अधिनियम पारित किया गया और इससे देश में सहकारी आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। इन अधिनियम के अनुसार सहकारी साख्त समितियाँ स्थापित की जा सकती थीं जिनको ग्रामीण एवं ‘गहरी’ दो श्रेणियों में विभाजित किया गया था। ग्रामीण समितियों में असीमित रूपता के सिद्धान्त को रखा गया था। समितियों के कार्य को देगरेत करने के हेतु प्रत्येक प्रान्त में रजिस्ट्रार नियुक्त किए गए। सरकार ने प्राय-कर, रजिस्ट्रेशन शुल्क तथा स्टैम्प-कर आदि से छूट आदि अनेक रियायतें भी दीं।

इस अधिनियम का विस्तार करने तथा इसमें दोषों का दूर करने के लिये १९१२ में ‘सहकारी समिति अधिनियम’ पारित किया गया। इसमें कम बिल्लु अन्तर्गत बीमा, आवास जैसी अर-भाग समितियों का गठन की भी आज्ञा दे दी गई और देगवास करने के लिये केन्द्रीय संगठनों का भी आम्नता दी गई। समितियों का वैधानिक रूप से वर्गीकरण किया गया अर्थात् ग्रामीण व गहरी समितियों के

स्वतन्त्र पर धन इत्यादि बर्णिकरण सीमित व असीमित श्रेयता वाली समितियों के आचार पर किया गया।

इस अधिनियम के पारित होने के बाद समितियों की संख्या धीरे-धीरे घटने लगी। १९१४ में सरकार ने धान्योत्पन्न की समीक्षा करने के लिये मकसूद समिति नियुक्त की। समिति ने धान्योत्पन्न के अनेक बंधों की ओर संकेत किया तथा सुधार के लिये कई महत्वपूर्ण सुझाव भी दिए परन्तु कुछ धन जाने के कारण इस पर कोई कार्यवाही नहीं की जा सकी। १९१६ के पश्चात् सहकारिता एक ऐसा प्रांतीय विषय बन गया जिसके लिए मंत्रीमंडल विभाग तथा केंद्र सचिव उत्तरदायी थे। मंत्रियों ने लोकप्रियता प्राप्त करने के उद्देश्य से सहकारिता का सीढ़ी से विस्तार किया। बहुत बड़ी संख्या में समितियाँ बनाई गयीं परन्तु उनके गुण एवं मुनियोजन की ओर बहुत कम ध्यान दिया गया। १९२६ में रोबिन क्रॉफ़ि आयोग धीरे-धीरे प्रांतीय व केन्द्रीय बैंकिंग आंध्र समिति ने भी सहकारिता के विचार धीरे-धीरे साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

१९२६ में वार्षिक मंत्री केंद्र धारण होने से पूर्व तक यह धान्योत्पन्न प्रगति करता रहा। परन्तु क्रॉफ़ि मूर्खों के विरले तथा धान्य ही किसानों की धार में कमी हो जाने के कारण धान्योत्पन्न को बहुत बड़ा प्रभाव मिला। अनेक समितियों का समापन (Liquidation) हो गया तथा धान्योत्पन्न के अनेक बंध सामने आ गए। १९१५ में रिजर्व बैंक ऑफ़ इण्डिया की स्थापना के पश्चात् यह धारा प्रकट की गई कि यह बैंक धान्योत्पन्न की प्रगति में सहायता करेगा। क्रॉफ़ि धान्य की समस्याओं का अध्ययन करने के लिए रिजर्व बैंक ने एक क्रॉफ़ि आंध्र विभाग भी खोला। परन्तु रिजर्व बैंक ने धारण में इस सहकारिता धान्योत्पन्न को कोई भी सहायता देने से एक एक के लिये नकार कर दिया जब तक की धान्योत्पन्न स्वयं ही अपने बंधों को दूर न कर ले। परन्तु रिजर्व बैंक ने मध्य-मध्य पर अनेक रिपोर्टों एवं समाप्तिनामों के द्वारा देश में सहकारिता धान्योत्पन्न के पुनर्वहन एवं पुनर्वास के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण सुझाव दिए हैं। १९१७ में प्रांतीय स्वायत्तता के पश्चात् मंत्रियों ने किसानों की आवश्यकताओं में सुधार की ओर विशेष ध्यान दिया और इसका प्रभाव सहकारी धान्योत्पन्न पर भी पड़ा। परन्तु फिर भी कुछ से पूर्व धान्योत्पन्न की स्थिति विशेष महत्वपूर्ण नहीं थी।

१९१६-१७ के युद्ध के समय धीरे-धीरे उत्तर पश्चात् क्रॉफ़ि बस्तुओं के मुख्य बंध जाने के कारण धान्योत्पन्न की स्थिति में कुछ सुधार हुआ। सहकारी समितियों के सदस्यों ने अपने अधिकांश ऋणों को धरा कर दिया और इससे धान्योत्पन्न की वित्तीय स्थिति धरती बन गई। उपरीक्षा सहकारिता एवं सहकारी लेडी लैडी धान्य सहकारी क्लबों में भी पर्याप्त वृद्धि हुई। धान्योत्पन्न की प्रगति का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि १९१७-१८ में सहकारी धान्योत्पन्न केवल ६ प्रतिशत जन संख्या तक पहुँच पाया था। १९१७-१८ में यह प्रतिशत १६ हो गई थी। १९१८

मे भारत सरकार ने 'सहकारिता आन्दोलन समिति' की नियुक्ति की। इसने आन्दोलन का विकास करने बहु-उद्देशीय समितियों का गठन करने तथा रिजर्व बैंक द्वारा अधिकाधिक सहायता देने की सिफारिश की। १९२१ में रिजर्व बैंक ने एक निर्देशन समिति नियुक्त की जिसमें देश में ग्रामीण साक्षर व्यवस्था का अध्ययन किया और १९२४ में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इसने ग्रामीण साक्षर के लिये एक समन्वित (Integrated) योजना की सिफारिश की। इसके परिणामस्वरूप १ जुलाई १९२२ को इम्पीरियल बैंक को स्टेट बैंक ऑफ इन्डिया के रूप में परिणत कर दिया गया ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में ४०० नयी शाखाएँ खोली जा सकें। १९२६ में रिजर्व बैंक ने कृषि साक्षर के लिये दो निधियों की स्थापना की। १९२७ में केंद्रीय बोधाम नियम की स्थापना हुई ताकि मुख्य-मुख्य क्षेत्रों में १०० बोधामों की स्थापना की जा सके। १९२६ में भारत सरकार तथा रिजर्व बैंक ने सहकारी कर्मचारियों को सहकारिता में प्रविष्टता देने के लिये संयुक्त रूप से मिलकर एक केंद्रीय समिति की स्थापना की। पूना में एक सहकारी वाणिज्य तथा पांच ग्राम्य सहकारी प्रविष्टता केंद्रों की स्थापना भी की जा चुकी है। पंचवर्षीय आयोजनाओं में भी देश में सहकारिता को आगे बढाने का मुद्दावार बन गया है, भारत में विकास कार्यक्रमों के लिये बहुत महत्वपूर्ण बताया गया है। इस प्रकार स आन्दोलन का विद्यमानता गैर-साक्षर समितियों का निरन्तर विकास हुआ है तथा आन्दोलन का भविष्य भी उज्ज्वल प्रतीत होता है। जनवरी १९२९ में कांग्रेस इस ले अपने मागपुर अधिवेशन में एक नये कृषि ङांघ (सहकारी लक्ष्य) की घोषणा की। पंचवर्षीय आयोजनाओं का मुख्य आधार भी सहकारिता को ही माना गया है। उत्तर प्रदेश में पञ्चायतों के साथ-साथ बहु-उद्देशीय सहकारी समितियों की योजना चालू की जा चुकी है। सवा सहकारी समितियों की स्थापना का कार्यक्रम भी आरम्भ कर दिया गया है। इसका उद्देश्य यह है कि चाहे उत्पादन या सेवा का कार्य सदस्यों द्वारा व्यक्तिगत रूप से किया जाय परन्तु सामान्य सेवाएं सेवा सहकारी समितियों द्वारा प्रदान की जाएं। यह भी प्रस्ताव है कि तृतीय पंचवर्षीय आयोजना के अन्तर्गत तमाम ग्रामीण परिवारों को सहकारिता आन्दोलन के अन्तर्गत ले लिया जाए।

भारत में सहकारी आन्दोलन के दोष —

भारत में सहकारी आन्दोलन को आरम्भ हुए लगभग २२ वर्ष हुए हैं और अभी तक इसका विकास बहुत उत्साहपूर्ण रूप से नहीं हो पाया है। रोयल कृषि आयोग ने कहा था कि "यदि भारत में सहकारिता अक्षय्य होती है तब भारतीय कृषि की उन्नततम आशाएँ अक्षय्य रहेंगी।" हमारे देश के सहकारी आन्दोलन में अनेक कृषि कार्य हैं। सबसे बड़ा दोष जनसाधारण की अतिशयता है। लोग सहकारिता के सिद्धान्तों को ठीक प्रकार से नहीं समझते। गाँवों में यह धारणा भी बन

"If Cooperation fails there will fail the best hope for Indian agriculture"

नहीं है कि सहकारी समितियों केवल महाजनो की स्थापनापद मात्र है। गहरों में भी अधिकतर यह दया गया है कि लोग साम पाने के अधिक उत्सुक रहते हैं और अपनी समितियों के प्रबन्ध में विशेष रचि नहीं लेते। अधिकतर समितियों में प्रबन्ध भी बड़ा ही दोषपूर्ण पाया जाता है। हिसाब किताब ठीक से नहीं रखा जाता है सदा-सरीदा ठीक से नहीं होती है और बैकस फाइल व रिकाई रखने में ही अधिकतर समय और शक्ति नष्ट की जाती है। ऋण देने में पक्षपात होता है और परिणाम स्वल्प अकरतमम् व्यक्तिगो की कमी-कमी ऋण नहीं मिल पाता है। किसी भी रूपक प्रथमा अधिक को बर्जे की तरफात ही धारक्यकता हुमा करनी है परन्तु इसके लिये उसे प्रायःना-भत्र बेना पड़ता है और कई सप्ताह तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है। वह होता-होकर महाजन के पास जाने को बाध्य हो जाता है। समितियों के कर्मचारी भी अधिकतर प्रशिक्षित नहीं होते हैं। समितियों के धन में बेईमानी और धन के भी धनक उदाहरण पाये जाते हैं। ऋण का निश्चित तिथि पर भुगतान भी बहुत कम किया जाता है और बकाया राशि की मात्रा भी बहुत अधिक पाई जाती है। दिन प्रतिदिन के कार्यों के लिये बिना वेतन पर काम करने वालों पर बहुत अधिक निर्भर रहा जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि प्रबन्ध में सकृशासता या जाती है। प्रारम्भ में सहकारिता धान्दोलन केवल साख-समितियों पर धन देता रहा और काफी समय तक गैर-साख सहकारी कार्यों पर ध्यान नहीं दिया गया।

सहकारी धान्दोलन का एक धन्य दोष यह है कि धनी तक यह बहुत कम धनुमध किया गया है कि सहकारिता जनसाधारण का धान्दोलन है एवं इसके प्रबन्ध का मार भी जनता का ही सीपना चाहिए। जनसाधारण पर सहकारिता सरकार द्वारा सौधी ययी है। समितियों के दिन प्रतिदिन के कार्यों में भी रजिस्ट्रार और महायक रजिस्ट्रार द्वारा पर्याप्त हस्तक्षेप किया जाता है। इसके प्रतिरिक्त सहकारी धान्दोलन में राजनीति भी जा गई है और गहकारी सेठी क नार्थ क्रम में भी यह देखा गया है कि न केवल धायत्री मतभेद है बरन् जो कुछ भी किया जा रहा है वह स्वानीय राजनैतिक मतधों के कहने से और उनके प्रबाध से किया जा रहा है।

सहकारिता धान्दोलन का बाधा —

धान्दोलन के बाध को केन्द्रीय सहकारी समितियों व प्रारम्भिक सहकारी समितियों के बीच विभाजित किया जा सकता है। केन्द्रीय सहकारी समितियाँ इस प्रकार हैं — प्रांतीय धर्मात् प्रदेशीय या शहर सहकारी बैंक, केन्द्रीय सहकारी बैंक तथा सहकारी संघ। इनका कार्य मुख्यतः निरीक्षण का तथा प्रारम्भिक समितियों की ऋण देने का है। समस्त राज्य के लिये एक सहकारी संघम भी स्थापित किया जा सकता है। प्रारम्भिक समितियाँ कृषि प्रथमा गैर-कृषि होती हैं तथा साख प्रथमा गैर-साख समितियाँ होती हैं। कृषि सहकारिता साख समितियाँ कृषकों को अपना धनार देने क निर्ध बनाई जाती हैं। बाजार में बिच्री करने जोधों की चकमकी करने धन्धे बीज व धार का प्रबन्ध करने धारि कार्यों के लिये कृषि गैर-साख समितियों

की स्थापना की जाती है। औद्योगिक अमिका गिल्डियो प्रादि का अन्तर्गत न सिध गैर-कृषि शासक समितियां बनाई जाती हैं। प्रावास निमाण बिक्री, उपभोग उदात्त प्रादि अमक कार्यों के लिय गैर-कृषि गैर-सास समितियां स्थापित की जाती हैं। एक अन्य नये प्रकार की समिति बहु-उद्देश्य सहकारी समिति है। इसमें सास न गैर-शास दोनों ही प्रकार के कार्य सम्मिलित रहत हैं। इस प्रकार राज्य-स्तर पर मिलर सहकारी समितियां प्रिमा-स्तर पर केन्द्रीय सहकारी समितियां तथा स्थानीय स्तर पर प्रारम्भिक सहकारी समितियां होती हैं। एक नई प्रकार सेवा सहकारी समितियों की है जिसमें सामान्य सेवार्थ तो समिति द्वारा प्रदान होती है परन्तु उत्पादन अमिकतम रूप स सदस्यों द्वारा किया जाता है।

सहकारिता एवं अम सहकारी उत्पादन —

सहकारी आन्दोलन के इस संक्षिप्त विवरण को ध्यान में रखते हुये अम हम भारत में अमिक अर्ग एवं सहकारिता के विषय पर विचार करेंगे। देश में औद्योगिक अमिकों के लिय सहकारी समितियों को प्रारम्भ करने की ओर अमो तक कोई विषय ध्यान नहीं दिया गया है। प्रथम समस्या तो यह है कि देश में सहकारी उत्पादन समितियां स्थापित हो सकती हैं या नहीं। इंग्लड में रोबट मोहन द्वारा औद्योगिक सहकारी समितियों को अमान का प्रयत्न किया गया था। परन्तु इसमें बहु सफल न हो सका था। वास्तव में सध तो यह है कि किसी भी देश में बड़े पैमाने के उद्योग में सहकारी उत्पादन सफल नहीं हुआ है। इसका कारण स्पष्ट है। प्रथम तो अमिक अमिक के विकास के साथ-साथ उत्पादन प्रक्रिया बढ़ी अमिक हो गई है। उद्यमकर्ता के कार्य इतने कठिन एवं अमिक हो गये हैं कि प्रत्येक अमिक उन्हें सन्तोषजनक अम स पूरा नहीं कर सकता। उद्यमकर्ता न सिध पर्याप्त बुगलता एवं आतुय का होना आवश्यक है। इस प्रकार की उच्च योग्यता एक बुगलता किसी सामारण अमिक में अथवा अरदाने में अमिकों न द्वारा चुने गये प्रतिनिधियों में पाना कठिन है। यह अमान नहीं की जा सकती कि उद्यमकर्ता क कार्यों को अमिक अतनी ही बुगलतापूर्वक निमा सकेंगे जितना कि योग्य एक अनुभव। अमिक नर मकत है और फिर उत्पादन की आधुनिक प्रक्रिया में अरविक पूंजी की आवश्यकता होती है जिसको विनियोजित अथवा एकत्र करना अमिकों की दामता के बाहर है। यह भी बहुत का अतता है कि एक बढ़ी सीमा तक अमिक स्वय ही उत्पादन सहकारिता की अमपसता के लिये उत्तरदायी है। उनमें आरम्भिक रूपों होती है तथा बहु अमने ही साथी द्वारा दिये गये आदेशों एवं निर्देशों को अतनी ही योग्यता न अथवा ही सफल नहीं करते जितना कि न किसी आस उद्यमकर्ता अथवा प्रयत्न कर्ता के द्वारा दिए गये आदेशों का पालन करत हैं। अत इंग्लड न अन्य देशों में अनेक बार अरदन करने पर भी उत्पादन सहकारिता बड़े पैमाने क उद्योगों में नहीं भी सफल नहीं हुई है। भारत में तो इसकी अमानता बहुत ही कम है क्योंकि यहाँ के अमिक अरदन निर्पेन एवं अमिकित है।

धन सह-साम्भेकारी समितियाँ — (Labour Co-partnership Societies)

परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि उत्पादन सहकारिता की किसी भी प्रकार सम्भावना नहीं है। छोटे पैमाने के उद्योगों तथा कृषि में धमिक स्वयं उत्पादक काम कर सकते हैं। औद्योगिक सहकारिता का एक मुख्य रूप धन सह-साम्भेकारी समितियाँ हैं जो इनसेब में स्थापित की गई हैं। यह समितियाँ उत्पादन के उन क्षेत्रों से प्रलय रहने का प्रयत्न करती हैं जहाँ कैबटरी उत्पादन से संघर्ष होने की सम्भावना होती है। वह केवल ऐसी ही वस्तुओं का उत्पादन करती हैं जो छोटे पैमाने पर उत्पादन व समय उपयुक्त होती हैं और बिक्री बिक्री कीजिए हो सकती हैं। इनसेब में उपभोक्ता मान्योसन व इन समितियों के संचालन की शरत बनाने में सहायता दी है क्योंकि इसने इनकी वस्तुओं की बिक्री का भार अपने ऊपर से लिया है तथा इन समितियों को ही विभिन्न वस्तुओं के लिए भांडर दिया जाता है। इनसेब में सहकारी उत्पादन केवल तीन प्रकार के उद्योगों में अर्थात् कपड़ा भूट व सूते और छपाई उद्योग में पाया जाता है। यह समितियाँ अपने सदस्यों से इस बात की प्रार्थना करती हैं कि वह सहकारी रूप से उत्पादित वस्तुओं को ही खरीदें क्योंकि ऐसी वस्तुओं गुण म अच्छे होने के साथ-साथ अच्छी धन दशाओं में उत्पादित की जाती है।

धमिक सहकारी उत्पादन समितियाँ — (Labour Co-operatives)

धन सहकारी उत्पादन समितियाँ भी बहुत लोकप्रिय रही हैं और काँग्रेटमी वस्तुएँ और ग्युबीसेब जैसे देशों में इनका पर्याप्त सफलता भी मिली है। ऐसी समितियाँ धमिक के समूहों को रोजगार पर समाने के लिए संगठित की जाती हैं और इनमें धमिक उपयुक्त रूप से काम करने के लिये संगठित होते हैं। भारत के कुछ राज्यों में भी धमिक सहकारी उत्पादन समितियाँ स्थापित की गई हैं। प्राप्त सूचना के अनुसार (अप्रैल १९२६ में) बम्बई में धन धमिक समितियों को बुरेब के निर्वाचन और नियन्त्रण में कुछ रियायत दी गई है। इन समितियों को इस बात से भी सूत्र दे दी गई है कि वह अमानत राशि जमा करें। कम ध्यात्र की हटों पर चरण देने की व्यवस्था भी की गयी है। इन समितियों के साम तथा हाथ में प्रवेष्टीय सरकारें भी हिस्सेदार हैं। छोटे-छोटे काम टेम्पर धादि धामनित किए बिना ही धमिक संविदा समितियों को दे दिए जाते हैं। तकनीकी सहायता अमानत राशि जमा करने से पूरा बिलीय सहायता धीन्दार धादि खरीदने के लिए चरण धादि बँधी घनेक मुबिधाएँ भी इन सहकारी समितियों को प्रदान की जाती हैं। केरल में धमिक संविदा सहकारी समितियों के संगठन की एक योजना को स्वीकृत कर लिया गया है। छोटे-छोटे काम इन समितियों को धन धीर सामान की निर्धारित माप से २ प्रतिशत धमिक पर दिए जाते हैं। सहकारी बैंकों द्वारा इन समितियों को कार्य की लागत का २२ प्रतिशत धन धमिक भी दे दिया जाता है। इन समितियों का भी अमानत राशि जमा करने से पूरा है। ठके के कार्य के लिए 'साई' धन भी इनसे केवल १ प्रतिशत दिया जाता है। उड़ीसा में टेंबर धामनित किए बिना स्थानीय काम इन

समितियों को बंदि जात हैं। सरकार इन समितियों का पूरा प्रदान करती है तथा ऋण देती है। इन अधिकांश सहकारी सविद्या समितियों का सरकार आर्थिक सहायता प्रदान करती है। पंजाब में जोड़े मूय्य क कुपस व धकुपस सभी बायों को सहकारी समितियों को प्रदान कर दिया जाता है। सार्वजनिक निर्माण विभाग की विद्युत् लाखा द्वारा भी सहकारी अधिकांश निर्माण समितियों का सीमित मूय्य बाय कुछ काम लिए जाते हैं। बांग्ला अधिकांश सहकारी समिति की कार्यशील पूंजी २ ००० ६० है तथा सदस्य संख्या ५०० है। मद्रास में कुपस अधिकांश की एक अधिकांश सविद्या समिति ने आधुनिक मकानों का निर्माण किया है। अरुणाध अधिकांश की अधिकांश समितियों ठेके पर अनेक कार्य करती हैं जैसे मकान, नहरें व सड़कें बनाना सड़क बनाने व सामान की वृत्ति करना आदि। राज्य का सहकारी विभाग इन समितियों को सहायता भी देता है और सहाय भी प्रदान करता है हिमाचल प्रदेश में अधिकांश सहकारी समितियां सड़कों पुलों आदि की मरम्मत के लिए सरकारी ठेके लेती है। इन्हें सहकारी विभाग द्वारा इनकी कार्यशील पूंजी को बढ़ा करने के लिए उपयुक्त भी प्रदान किए जाते हैं। मनीपुर में ऐसी समितियों को टैरर प्रामाणिक किए बिना छोटे-छोटे कार्य करने के लिए दिए जाते हैं।

अधिकांश सहकारी उत्पादन समितियों की विशेषताएँ —

इस प्रकार की अधिकांश सहकारी उत्पादन समितियां अधिकांश व मानिक बायों की क लिए बहुत सामर्थ्यक होती हैं। इन अधिकांश सहकारी उत्पादन समितियों की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं (क) अधिकांश धन साम कार्य करने बायों का स्वयं संचाल है तथा धन लेता को चुनते है (ख) अधिकांश धनो सामूहिक धन की धन को धनो दृष्टानुसार बांट लेते हैं (घ) अधिकांश को इस बात की स्वतन्त्रता रहती है कि वह किस प्रकार बाह्य कार्य करने की व्यवस्था कर सकते हैं। (घ) अधिकांश किसी बाह्य ठेकेदार की अधीनता में कार्य नहीं करते बल्कि कार्य को स्वयं तथा धनो उत्तरदायित्व पर करते हैं (ङ) अधिकांश मानिक व निरीक्षण में कार्य नहीं करते। कार्य पूरा हो जाने के बाद मानिक केवल यह देखा है कि काम यानुसार किया गया है धनबा नहीं, (च) यदि कार्य उत्पादन के हिमाक से निर्धारित होता है तब धनको धनरत दर पर मजदूरी दी जाती है। ऐसी समितियों को कार्य संचालने के मानिक को लाभ होता है क्योंकि एक तो कार्य धीमे पूरा हो जाता है तथा धनके उधको अधीन धनो में बचत हो जाती है। मानिक का अधिकांश में धनुषासन रखने का धार भी नहीं लेना पड़ता क्योंकि अधिकांश स्वयं ही काम का धन में ले लेते हैं और पूरा करते हैं।

भारत में अधिकांश सहकारी उत्पादन समितियों की सम्भावनायें —

भारत में अधिकांश अधिकांश सहकारी उत्पादन समितियों की गौर धनरतता है तथा धनके धनो में धनो धनरतता में लगे हैं। इन धनो में काम बहुत विषम होता है तथा छोटे धनो के धनो की अधिकांश धनरत और धनुषासन

भी बहुत धमिक रकना पड़ता है। परन्तु फिर भी कृषि धमिकों में धमिक सहकारी उत्पादन समितियों के लिए पर्याप्त धन है। जैसा कि कृषि धमिक के सम्मान में उल्लेख किया जा चुका है धमिकों की धमिक पूर्ति और निर्वहनता के कारण गाँवों में कृषि धमिकों का प्रत्यक्ष शोषण किया जाता है। यह कृषि धमिक सहकारी समितियाँ बनाकर संगठित हो सकते हैं तथा अपनी सौदाकारी शक्ति को बढ़ा सकते हैं। ऐसी धन सहकारी उत्पादन समितियाँ सार्वजनिक निर्माण विभागों में जाने हुए धमिकों में भी सफल हो सकती हैं। सरकार और स्थानीय बोर्डों और अधिकारियों को इन धमिक सहकारी उत्पादन समितियों का काम देने में प्राथमिकता देनी चाहिए। इसके ठेके के धमिकों की प्रणाली में जो शोष है वह भी दूर हो जायेगा।

उत्पादन सहकारिता एक छोटे पैमाने के उद्योग —

भारत में उत्पादन सहकारिता छोटे पैमाने के उद्योग क्षेत्रों में सफल हो सकती है। कुछ राज्यों में उत्पादन सहकारिता को सफलता भी मिली है। मद्रास में औद्योगिक सहकारी बुनकर समितियाँ सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं और उनकी संख्या २५० से भी अधिक है। यह समितियाँ मद्रास हाथ-करवा बुनकर राज्य सहकारी समिति से सम्बद्ध हैं। यह समिति प्रारम्भिक समितियों को कच्चा माल प्रदान करती है, उनके तैयार माल को बचती है, उनकी सहायता देती है तथा उनके कार्यों का नियन्त्रण तथा बिक्रय करती है। इस समिति ने मद्रास में तीन रपाईं कारखाने तीन हाथ-करवा कारखाने तथा एक रुपड़ा सपाईं कारखाने की स्थापना की है। मद्रास में धम्य औद्योगिक समितियों की संख्या १०९ है जो कायम खिलाने धारि बनाती हैं। बम्बई में ६ औद्योगिक सहकारी संस्थायें बनाई गई हैं जिनका कार्य यह है कि हाथ करवा उद्योग को संगठित करके रुपये के बिजाइनों को अधिक प्रोत्साहित बनायें, तथा इस हेतु उन्नत मूल्य व कच्चे माल को उपलब्ध करें, तथा सपाईं व रपाईं का कार्य भी करें और बिक्री के लिए माल को खरीद भी लें। सरकार इन संस्थाओं को प्रोत्साहन देकर सहायता करती है। उत्तर प्रदेश में ७८ बुनकर समितियाँ और एक राज्य औद्योगिक संगम है। उत्पादन व बिक्री सहकारी समितियों की कुल संख्या १०० है। हाथ-करवों के सूत की कुल मात्रा को बितरित करने के लिए राज्य में ३५ उत्पादन केन्द्र स्थापित किए गए हैं। बिहार, मध्य प्रदेश और केरल में भी बुनकर समितियाँ बनाई गई हैं जो रुपये व सूत का व्यव-विक्रय करती हैं।

हाथ करवा उद्योग में धमिक उत्पादन सहकारी समितियों के बनाए जाने का कारण यह है कि देश में रुपये की कमी रही है जो मुद्रा के रिशों में बिरोधिता अनुभव की गई थी। परन्तु इनसे यह विरिध होता है कि उत्पादन सहकारी समितियाँ उन उद्योगों में विशेषकर सफल हो सकती हैं जहाँ बोड़े धन व अधिक धन समित की आवश्यकता होती है। ताँबे पीतल सोहे आदि की वस्तुयें बनाने के तथा जमड़े रेशम बुड़ साबुन बीड़ी, गियार, टोकरों आदि के छोटे पैमाने के उद्योगों में औद्योगिक सहकारी उत्पादन समितियों के लिए प्रोत्साहन देना है। मद्रास शहर में कापड़े

समय से एक सहकारी सिगार कारखाना खामू है। इसमें धनिक ही व्यवस्था की जा सकती है तथा कार्य के लिए प्रशिक्षित श्रम पर मजदूरी पाते हैं। व्यापार में भी लाभ होता है उस पर उन्हें सामाजिक मिलना है। अतः धनिक सहकारी उत्पादन समितियों का विस्तार और छोटे पैमाने के उद्योगों में उनके विकास के लिए प्रयत्न किए जाने चाहिये। सरकार को इन समितियों को कुछ अनुदान देकर सहायता करनी चाहिए तथा इनकी सहायता के लिए कोई वित्तीय संस्था को स्थापित करने के लिए प्रोत्साहन देना चाहिए। ऐसी सहकारी समितियों को वित्तीय सहायता देने के लिए प्रदेशीय और केन्द्रीय सहकारी बैंक काफी सहायक सिद्ध हो सकते हैं। केन्द्रीय सरकार द्वारा औद्योगिक सहकारी उत्पादन समितियों के विकास के लिए अधिकारियों को विशेष प्रोत्साहन देने हेतु एक योजना खामू की गई है।

ग्रन्थ क्षेत्रों में सहकारिता —

कृषि के क्षेत्र में उत्पादन सहकारिता न तात्पर्य सहकारी नहीं है। परन्तु इसका विवेचन इस अध्याय के क्षेत्र के बाहर है। जहाँ तक धनिक सह-सामर्थी का सम्बन्ध है यह भी उत्पादन सहकारिता से एक भिन्न समस्या है और यह उद्योग में प्रबंधकों के साथ धनिकों के सहयोग से सम्बन्धित है। इस पर विचार साम सह-साजनों के अन्तर्गत पृष्ठ १४२-४३ पर पहले ही किया जा चुका है।

सहकारिता और धनिकों की श्रेण्यप्रस्तता —

ग्रन्थ क्षेत्रों में भी अनेक धनिक बैंक के लिए सहकारिता सहायक सिद्ध हो सकती है। एक महत्वपूर्ण समस्या जिसका सहकारिता द्वारा महत्तमपूर्वक समाधान किया जा सकता है श्रेण्यप्रस्तता की है। श्रेण्यप्रस्तता की घुटाइयों की घोर संकेत 'औद्योगिक धनिकों की श्रेण्यप्रस्तता' नाम अध्याय में किया जा चुका है। यदि धनिक एक सहकारी साधन समिति का संगठन कर सें तो उन्हें बहुत कम मूल की दर पर श्रेण्य मिल सकता है। इस प्रकार से महाजनों का धनिक क्षेत्रों को दूर किया जा सकता है। इस प्रकार की समितियाँ देश में सफलतापूर्वक कार्य कर रही हैं। रेलवे में ऐसी समितियों के उदाहरण मिलते हैं जो युद्ध से पूर्व सफलतापूर्वक कार्य कर रही थीं उदाहरणतः मद्रास व दक्षिणी मराठ रेलवे धनिक सहकारी सहरी बैंक, तथा मद्रास तथा दक्षिणी भारत रेलवे कर्मचारी सहकारी समिति तिरुचिनापली। मद्रास की समिति सबसे पुरानी है। यह १९०७ में प्रारम्भ की गई थी और उसके २५,००० सदस्य थे। १९४४-४५ में इसकी आय पूंजी १३ ६८ लाख रुपये थी व प्रारक्षित निधि की राशि ५ लाख रुपये से भी अधिक थी। यह सहकारी समिति अपने सदस्यों की बचत की राशि का १० लाख रुपये जमा करने में समर्थ हुई थी। १९४६ में इसकी वार्षिक पूंजी की कुल राशि लगभग ८० लाख रुपये थी। इसकी किसी बाहरी संस्था से सहायता उपार नहीं लिया या जो बहुत प्रशंसनीय बात थी। १९३३ साल रुपये का निष्पत्ती का व आकस्मिक व्यय निदान कर भी इस बैंक को १९४४-४५ में ६२,७०० रु० का लाभ हुआ था। दक्षिण भारत रेलवे कर्मचारी

सहकारी छात्र समिति के २५०० अमिक सदस्य थे। कुल वार्षिक मूल्य ७५,००० थी। इस समिति की स्थापना १९१९-२० में हुई थी। इसकी कार्यशाला पूरबी की राशि ३५० लाख ६० से भी अधिक थी। इस समिति को १९४४-४५ में ३२,००० रुपये का खान हुआ था। यह बैंक अपने सदस्यों की बचत की राशि का ७ लाख २० एकलित करने में सफल हो सका था। पर्यंत १९३९ में पश्चिमी बंगाल के कोयला क्षेत्रों में १२ सहकारी समितियाँ तथा बिहार के कोयला क्षेत्रों में ४७ सहकारी छात्र समितियाँ कार्य कर रही थी। इनका मुख्य कार्य अपने सदस्यों को कम बरों पर ऋण देना तथा उपमोक्षता वस्तुएँ उचित मूल्यों पर प्रदान करना है। इन उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि अमिक सहकारी छात्र समितियाँ बना लें और इनके प्रति बकायदार रहें तो उन्हें बहुत लाभ हो सकता है।

सहकारिता और धावास —

एक अन्य क्षेत्र जिससे औद्योगिक श्रमिकों के लिए सहकारिता लाभदायक सिद्ध हो सकती है वह धावास निर्माण के लिए सहकारी समितियों का बनाना है। धावास की चार औद्योगिक बरगों का उद्देश्य पहले ही किया जा चुका है और इनमें सुधार करने की तीव्र आवश्यकता को भी बताया जा चुका है। इस सम्बन्ध में सहकारी प्रयत्न बहुत महत्वपूर्ण और उपयोगी हो सकते हैं। श्रमिकों के लिए सहकारी धावास पर मकान बनाने के लिए सफल परीक्षण का उदाहरण मद्रास मिक्स सिमिटेड का है। इस मिला ने मद्रास के निकट हारवेपट्टी में एक बृहत् निर्माण समिति की स्थापना की है। इस योजना का उद्देश्य यह है कि मिला के निकट जाने तथा भीड़भाड़ पूर्ण भासे स्थान से दूर स्वस्थ श्रमिकों में श्रमिकों के लिए मकान बनाए जाएँ और अमिक क्रियावा देते हुए निरन्तर कई बरों तक रहने पर अन्ततः स्वयं ही इनके स्वामी बन जाएँ। इस बृहत् निर्माण समिति की स्थापना सितम्बर १९३० में की गई थी जबकि प्रत्येक मकान की लागत ६००० घाटी थी। मकान का क्रियावा ४०० प्रति माह निश्चित किया गया था और जो अमिक मकान में १२३ बरों तक रह लेता था वह इसका स्वामी बन जाता था। इस क्षेत्र में विद्युत प्रकाश पानी नाली, छड़कें पार्क स्कूल धारि सभी सुविधाओं सहित लगभग ६०० मकानों का निर्माण किया गया है। इस समिति को मालिकों द्वारा पर्याप्त वित्तीय सहायता भी मिली है। इससे स्पष्ट है दूसरे मालिकों को भी प्रेरणा लेनी चाहिए। मद्रास मिक्स ने ४०००० रुपये की धर पूरबी तमाई है और २ लाख रुपये का ऋण भी बिना व्याज के दिया है। इसके लिए मद्रास मिला से लगभग ५ मील दूर १०० एकड़ भूमि खरीदी गई थी। स्कूल अस्पताल, मञ्जार धारि की व्यवस्था करने के परभाव जाट बाँट दिए गए थे और इस प्रकार ६० मकान बनाए गए। स्वच्छ बल पूर्ति बल मल निकास का प्रबन्ध, बिद्युतीकरण तथा श्रमिकों को मद्रास में मिला तक लाने व वापिस ले जाने के लिए विशेष ट्रेन धारि की व्यवस्था करने में मालिकों ने १०० लाख रुपये व्यय किया। स्कूल औपचारिक व बल पूर्ति का

व्यवसायिकों द्वारा किया जाता है। इस बस्ती में मंगियों की व्यवस्था करने के लिए पंचायत प्रति मकान घाट घाने एकत्रित करती है। बस्ती का प्रबन्ध सहकारी आवास समिति द्वारा किया जाता है जिसका एक निदेशक मण्डल है। इस मण्डल में मूल मासिक, अमिक संप तथा मिस अमिकों के एक-एक प्रतिनिधि जिसे कन्स्ट्रक्शन तथा मकान जिसे बोर्ड का अध्यक्ष अध्यक्ष उप-अध्यक्ष होते हैं। यदि इस उदाहरण का सर्वत्र पालन किया जाय तो औद्योगिक श्रमिकों की आवास बचामों में पर्याप्त सुधार हो सकता है। उपरोक्त प्राप्त औद्योगिक आवास योजना के अन्तर्गत सरकार सहकारी वृह निर्माण समितियों को आर्थिक सहायता व ऋण प्रदान करती है। परन्तु इस सम्बन्ध में विशेष सफलता नहीं मिल सकी है। (देखिए पृष्ठ २२६-२२७ तथा २४१-४४४)।

सहकारिता और कैंटीन —

कार्य के घंटों के मध्य में कारखाने में श्रमिकों को भोजन प्रदान करने की सहकारिता के लिए पर्याप्त क्षेत्र है। इस उद्देश्य के लिए कारखानों में कैंटीन की व्यवस्था की गई है परन्तु अधिकतर उनका संचालन कारखाना मासिकों या अग्रेजों द्वारा किया जाता है। यदि कैंटीन का संचालन सहकारिता के आधार पर किया जाए तो उससे तीन लाभ होंगे। श्रमिकों को स्वच्छ भोजन मिलेगा मूल्य कम मिलेगा तथा वह स्वयं-सहायता व स्वयं-निर्भरता के सिद्धान्तों को समझ सकेंगे। परन्तु सहकारी आधार पर कैंटीन चलाने के लिए प्रारम्भ में मासिकों की पर्याप्त सहायता ही आवश्यकता है। मकान की भी मीठासी मिस में सहकारी आधार पर कैंटीन का संचालन किया जाता है। पहले कैंटीन का संचालन मिस प्रबंधकर्ताओं द्वारा किया जाता था परन्तु मई १९४० में इसका प्रबन्ध सहकारी मंडल को स्वतन्त्र कर दिया गया। कैंटीन धन सहकारी मंडल ने एक पुस्तक विधायक के रूप में चलाया जाता है तथा अपनी सभी आवश्यकताओं की चीजें मंडल से प्राप्त कर लेता है। कैंटीन विभाग में भोजन को साफ मूल्य या साफ मूल्य से कम पर बेचने के कारण जो हानि होती है उसकी पूर्ति मिस के द्वारा की जाती है। मिस से सहकारी मंडल को बिना मूल्य लिए भोजन बनाने के बर्तन तथा फर्निचर भी प्रदान किए हैं। इस सहकारी आधार पर प्रबन्ध करने की प्रणाली को कारखानों की सभी कैंटीनों में लागू करने का प्रयत्न करना चाहिए तथा प्रारम्भिक अवस्था में मासिकों को पर्याप्त वित्तीय सहायता देनी चाहिए।

उपभोक्ता सहकारी मण्डल — (Consumer & Co-operative Stores)

कारखाने के अंदर या धन बस्ती में उपभोक्ता सहकारी मण्डल की यदि स्थापना करके उतका संचालन किया जाए तो इसके अनेक लाभ होंगे। प्रथम तो मिस भर कार्य करने के पश्चात् श्रमिक को इन बातों के लिए बचतना से ही समय मिल पाता है कि वह बाजार जाकर अपनी आवश्यकताओं को बस्तुएँ खरी सके। दूसरे, दुकानदार के बटन खपित लाभ लेने के कारण बस्तुओं का मूल्य बहुत अधिक

होता है और मिसाइट होने के कारण कुछ वस्तुएँ भी नहीं मिल पातीं। तीसरे सब श्रमिकों को धार्मिक कठिनाई होती है तो उन्हें उधार चीजें लेनी पड़ती हैं। इन्हें उन्हें दोहरी हानि होती है, एक तो वस्तुओं का धार्मिक मूल्य देना पड़ता है और दूसरे उनसे ध्याय भी लिया जाता है। सहकारी भण्डार की स्थापना से यह सब शोष दूर हो सकते हैं। उधार करीदने के लिए उपनियमों में संशोधन किया जा सकता है। मद्रास में बिसेपतया एसी समितियाँ मानिकों द्वारा स्थापित की गई हैं और उनकी प्रशंसनीय सफलता भी प्राप्त हुई है। कुछ स्वार्थों पर मानिक श्रमिकों की मजदूरी में से वह राशि काट लेते हैं जो श्रमिकों को उपयोग सहकारिता भण्डार को देनी होती है। कुछ स्वार्थों पर मानिकों ने अनेक रिपायमें भी प्रदान की हैं। छात्रहरण भण्डार के लिए निःशुल्क इमारत एकाठ टेंट व क्लर्क प्रादि का कार्य करने के लिए कर्मचारियों को निःशुल्क सेवा देना नागमर वेंसिल कर्मीचर आदि को भी बिना शर्म के देना भण्डार एक सामान जाने से जाने के लिए यातायात की सुविधाएँ प्रदान करना कपड़ा प्रादि क्व करने के लिए उपदान देना प्रादि प्रादि। यह तो ठीक है कि धारम में धार्मिक सहकारी भण्डारों को इस प्रकार की सहायता मिलनी चाहिए परन्तु सहकारिता के सच्चे आदर्शों को प्राप्त करने के लिए इन भण्डारों को भीम ही धारमनिर्मर व स्वतन्त्र होने का प्रयत्न करना चाहिए।

उपसहार श्रमिकों के लिए सहकारिता का महत्व —

विद्वले पृष्ठी में श्रमिकों के द्वारा सहकारी प्रयत्नों का जो विवेचन किया गया है उससे स्पष्ट हो जाता है कि सहकारिता द्वारा धार्मिक काष्ठी सीमा एक मूलप्रस्तता में बच सकते हैं और गन्दी बस्तियों में रहने से छुटकारा पा सकते हैं। सहकारिता से ही वह निजी भोजनालयों में पन्ना व घणुड और इस पर भी महंगा भोजन करने से छुटकारा पा सकते हैं तथा अपनी आबरपकताओं की पूर्ति के लिए सोमी व धारपिक साम लेने वाले बुकानदारों से बहुत से भी बच सकते हैं। परिणामस्वरूप श्रमिकों के सामाजिक व धार्मिक कल्याण में धार्मिक उन्नति हो सकेगी। सहकारिता से श्रमिकों में मिठव्ययता और पारस्परिक सहायता की भावनाएँ भी बढ़ेगी तथा वह अच्छे नागरिक बन सकेंगे। उनमें घनुशासन से रहने और कार्य करने का स्वभाव पड़ जाएगा और उनका नैतिक स्तर भी ऊँचा हो जाएगा। शम-कल्याण कार्य भी श्रमिक स्वयं अपने हाथों से ही सकते हैं। स्वयं श्रमिकों द्वारा इन कार्यों को अपने हितों के लिए धार्मिक बुधसतापूर्वक बसाया जा सकता है।

परन्तु फिर भी जैसा कि धार्मिकोसन के संस्थापित विवेचन में ऊपर बताया जा चुका है, देश में सहकारी धार्मिकोसन के शोषों और श्रमिकों को दूर करने के प्रयत्न किए जाने चाहिए। यह धारपक है कि श्रमिकों को सहकारिता के सिद्धांतों की समझाया जाए तथा उन्हें स्वयं अपने ही कल्याण में सक्षिप्य रचि लेने के लिए उचित गिरा दी जाए। जो कठिनारया एक कठिनायी धार्मिक मंच को बनाने में सामने

घाटी हैं बहुधा वही कठिनाइयाँ श्रमिक सहकारी समिति के सफलतापूर्वक संघासन में घाटी हैं। परन्तु जसा ऊपर बताया जा चुका है सहकारी समितियाँ श्रमिक संघ से मिल्न होती हैं और उनके निर्माण में मासिकों से कोई संबंध नहीं होता। मासिकों को तो श्रमिकों के कल्याण के लिए सहकारी समितियों की स्थापना को प्रोत्साहन ही देना चाहिए। प्रारम्भिक अवस्था में तो सहकारिता भारतीय श्रमिकों में बिना किसी बाह्य सहायता के सफल नहीं हो सकती परन्तु अंततः श्रमिकों को स्वयं अपने पैरों पर ही खड़ा होना पड़ेगा अन्यथा यह सम्भवे घबों में सहकारिता नहीं होगी।

श्रम प्रशासन (Labour Administration)

१९३५ का भारत सरकार अधिनियम —

अप्रैल १९३७ से पूर्व भारत सरकार को श्रम मामलों में प्रांतीय सरकारों के ऊपर निरीक्षण, निर्बंधन और नियंत्रण का अधिकार था। परन्तु १९३७ में प्रांतीय स्वायत्तता के परभाव से राज्य अधिकारिता इस सम्बन्ध में अपने-अपने क्षेत्रों में स्वतन्त्र हो गये थे। १९३५ के भारत सरकार अधिनियम के अनुसार श्रम विभाग बनाने और अधिनियमों और विनियमों के प्रकाशन के कार्यों को केन्द्रीय सरकार और प्रांतीय सरकारों के बीच स्पष्ट रूप से विभाजित कर दिया गया था। संक्षेप में, पालों और तेल निष्कासन वाले क्षेत्रों में श्रम की सुरक्षा और विनियम बन्दरगाहों में गंगरोक (क्वार्टेन्टाइन) नाविकों और बहानों के लिये अस्पताल बन्दरगाहों के उंग रोबों से सम्बन्धित अस्पताल के विषयों को संघीय (केन्द्रीय) विधायी सूची में रखा गया था तथा निर्धन और बेरोजगारों की सहायता के विषयों को प्रांतीय विधायी सूची में रखा गया था। समवर्ती (Concurrent) विधायी सूची में प्रभावी ऐसी सूची जिसमें दिये हुए विषयों पर केन्द्रीय और प्रांतीय दोनों ही के विभाग सम्बन्धित कानून बना सकते थे निम्न विषय थे कारखाने श्रम कल्याण श्रम की दसवीं प्रोविदेन्ट फण्ड शालिकों की देयता और शालिकों की कठिपूति स्वास्थ्य बीमा जिसमें असमर्थता पेंशन भी सम्मिलित है, बृद्धावस्था पेंशन बेरोजगारी बीमा व्यापार संघ औद्योगिक व श्रम विवाद। श्रम कानूनों के प्रकाशन का उत्तरदायित्व प्रांतों पर था।

युद्ध-काल और इसके बाद से केन्द्रीय नियंत्रण —

परन्तु द्वितीय महायुद्ध छिड़ जाने के पश्चात् इस बात की तीव्र आवश्यकता अनुभव की गई थी उत्पादन को अधिकतम बढ़ाने के लिये पर्याप्त और सन्तुष्ट शालिकों का होना अत्यावश्यक है। इस कारण केन्द्रीय सरकार को हस्तक्षेप करना पड़ा और औद्योगिक शालिकों के कल्याण और कार्य की शर्तों की नियंत्रित और विनियमित करने के लिये सरकार ने विस्तृत अधिकारों को ग्रहण किया। जैसे जैसे युद्ध बढ़ता गया और प्रति शालिका वित्तृत होती गई जैसे ही समय-समय पर भारत सरकार के श्रम विभाग को घनेक शालिकों में हड़ किया गया। पराहुरणार्थ केन्द्रीय नियन्त्रित संस्थाओं में औद्योगिक सम्बन्धों की देख-रेख के लिये व्यवस्था की गई तथा एक समायाजित पुनःस्थापन संस्था की स्थापना की गई जिसका कार्य सेना से

निकसे हुए सैनिकों का पुनर्स्थापन करना और उन्हें पुनः रोजगार पर लगाना था। एक अन्य संस्था कारखानों के मुख्य सलाहकार के पदों पर स्थापित की गई जिसका कार्य कारखानों में कार्य की शर्तों सुधारने के लिये केन्द्रीय तथा प्रांतीय सरकारों को सलाह देना था। युद्ध के उत्काम परबात् ही धम समस्याओं की प्रनेकरूपता और गम्भीरता के कारण सरकार को धम विभाग का विभाजन करना पड़ा तथा ऐसे प्रनेक विषयों को जिनका धम से सीधा कोई सम्बन्ध नहीं था परन्तु जिनको धम विभाग द्वारा प्रघासित किया जाता था नवीन स्थापित निर्माण साम और एकि विभाग को हस्तांतरित कर दिया गया। प्रन्वुबर १९४६ में प्रांतीय धम मन्त्रियों के सम्मेलन में यह बात स्वीकार कर ली गई कि जहाँ तक हो सके धम विधान बनाने का कार्य केन्द्रीय सरकार द्वारा ही हो ताकि समान रूप से इस सम्बन्ध में तीव्र गति से पय उठाये जा सकें। इस बात को ध्यान में रखते हुये भारत सरकार के धम मंत्रालय ने धमिकों के स्वास्थ्य, कार्यक्षमता कार्य की शर्तों और जीवन-स्तर में सुधार के लिये धम विधान और धम प्रघासन का एक पञ्चवर्षीय कार्यक्रम तयार किया।

युद्ध-काल में धम सम्मेलनः—

युद्ध-काल में यह भी अनुभव किया गया कि युद्धोपरान्त धम कार्यक्रमों की योजना बना लेनी चाहिये तथा धम कानूनों में भी कुछ समायोजन होना चाहिये। फरवरी १९४०, १९४१ और १९४२ में प्रांतीय धम मन्त्रियों के सम्मेलन आयोजित किए गये। १९४१ और १९४२ में भारत सरकार ने धमिकों और मासिकों के प्रतिनिधियों से परामर्श भी किया। इन सम्मेलनों से सरकार आदरस्त हो गई कि यदि सरकार, धमिकों और मासिकों की एक संयुक्त समा समायोजित की जाती है तो अधिक प्रभावात्मक रूप और तीव्रता से कार्य किया जा सकता है क्योंकि इससे मासिकों और धमिकों के पारस्परिक मतभेदों को बाद-बिबाद और पारस्परिक समझौते से दूर करना सरल हो जाएगा। फरवरी १९४२ के अनुपुर् धम सम्मेलन में केन्द्रीय और प्रांतीय धमिकारियों के प्रतिरिक्त मासिकों और धमिकों के प्रतिनिधियों को भी सम्मिलित किया गया। इस सम्मेलन ने स्थायी त्रिदलीय संगठित व्यवस्था करने का निर्णय किया तथा परिपूर्ण (Plenary) धम सम्मेलन और स्थायी धम समिति (Standing Labour Committee) का गठन किया। परिपूर्ण सम्मेलन में, जिसकी समा कायिक होती थी ४४ सदस्य होते थे—२२ कार्य तो केन्द्र, प्रांत तथा देशीय राज्य सरकारों का प्रतिनिधित्व करते थे तथा ११ सदस्य मासिकों का और ११ सदस्य धमिकों का प्रतिनिधित्व करते थे। इसका कार्य उन विषयों पर केन्द्रीय सरकार को सलाह देना था जो विषय सलाह के लिए इस सम्मेलन को भेजे जाते थे। सलाह देते समय यह सम्मेलन उन मुद्दों का ध्यान रखता था जो धमिकों और मासिकों के साम्यता प्राप्त संगठनों के प्रतिनिधियों द्वारा तथा प्रांतीय और देशीय राज्य सरकारों द्वारा तथा राजा महापञ्चमों की परिषद् द्वारा दिये जाते थे। स्थायी

धम समिति की समाज भी मान्यता हो वह ही बुलाई जा सकती थी। इसमें २० सदस्य होते थे—१० सरकार का प्रतिनिधित्व करते थे और १० सदस्य मातृकों और धर्मिकों का प्रतिनिधित्व करते थे। इसका कार्य "सरकार द्वारा प्रस्तुत किए जाने वाले किसी भी मामले पर सलाह देना था।" समिति को सम्मेलन द्वारा चुने जाने वाले किसी भी मामले पर अपनी रिपोर्ट देनी होती थी।

जब इस नवीन व्यवस्था के कार्य का कुछ अनुभव हो गया तब यह पता लगा कि सम्मेलन और स्थायी धम समिति के कार्यों के बीच कोई स्पष्ट विभाजन नहीं किया गया था। अक्टूबर १९४४ में हुए धम सम्मेलन में यह निर्णय किया गया कि विभिन्न विषयों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जाए, एक तो परिपूर्ण धम सम्मेलन के लिए और दूसरे एक धम संस्था—धम कस्याए समिति के लिए। स्थायी धम समिति को विचार विमर्श करने वाली संस्था के रूप में ही नहीं बल्कि स्थायी धम समिति के एजेंट के रूप में भी कार्य करना चाहिए। परन्तु कोई भी निर्णय न हो सका और विदलीय व्यवस्था यथावत बनी रही। बाह-विवादों के दौरान में धर्मिकों के प्रतिनिधियों ने अन्तर्राष्ट्रीय धम संघन के धारा पर भारत में औद्योगिक समितियाँ बनाए जाने का सुझाव दिया। सरकार द्वारा इस सुझाव को मान लिया गया और तब से बागान सूटी बस्त्र कोयला खान सीमेंट बमड़ा ब बमड़ा रंगने धम खानें बुट, धाराए का निर्माण रसायन तथा लोहा ब इत्यादि जैसे महत्वपूर्ण उद्योगों के लिए औद्योगिक समितियाँ स्थापित की जा चुकी हैं। इन समितियों की समय-समय पर बैठकें होती रहती हैं और उद्योग से सम्बन्ध रखने वाली विदेष समस्यार्थों पर विचार किया जाता है तथा धर्मिकों के कस्याए के लिए सुझाव भी दिए जाते हैं।

त्रिदलीय धम व्यवस्था (Tripartite Labour Machinery)—

१९४७ में आठवें धम सम्मेलन में विदलीय व्यवस्था के पुनर्गठन पर पुनः विचार किया गया परन्तु कोई भी निर्णय न हो सका। इस प्रकार इस समय सरकारी विदलीय व्यवस्था में भारतीय धम सम्मेलन जिसको साधारणतया विदलीय धम सम्मेलन कहते हैं स्थायी धम समिति औद्योगिक समितियाँ और कुछ विदलीय प्रकार की समितियाँ प्राती हैं। इसके अतिरिक्त धम मंत्रियों के सम्मेलन का अर्थि बहु विदलीय नहीं है अर्थि अनिश्चित सम्बन्ध है। इसके अतिरिक्त १९३१ से उद्योग और धम अर्थि मातृक और मजदूरों का एक संयुक्त सलाहकार बोर्ड भी बनाया गया है। इन व्यवस्था में धम विज्ञान धम नीति तथा धम प्रशासन से सम्बन्धित अनेक बातों पर विचार और बाह-विवाद करने का अवसर मिलता है। अनेक उद्योगों में भी धम और मजूरी के बीच छोटा-छोटा सम्बन्ध बनाए रखने के लिए विदलीय धम व्यवस्था गठित की है। (देखिए पृष्ठ १७७-७८)। धम और रोजगार मंत्रालय की एक अन्धीयकारिक (Informal) सलाहकार समिति भी है। अन्य समितियाँ सलाहकार बोर्ड आदि अन्धीयकारिक हैं अन्तर्राष्ट्रीय धम सम्मेलन के अधिसूचनाओं पर एक समिति

(देखिए पृष्ठ ६१५) 'केन्द्रीय कार्यान्वित तथा मूल्यांकन समिति' (देखिए पृष्ठ १७४), मजदूरी से सम्बन्धित एक स्टीयरिंग बॉडी (देखिए पृष्ठ ५२१) मजदूरी पर्याप्त वेतन बोर्ड (देखिए पृष्ठ ५२२-२३) केन्द्रीय प्रतिक शिक्षा बोर्ड (देखिए पृष्ठ ३१७-१८) तथा मुरादा, निरीक्षण यम अनुसन्धान प्रादि पर कई सम्मेलन तथा गोटिंग्स। यम अनुसन्धान पर भी एक केन्द्रीय समिति बनाई गई है। इन सब समितियों व सम्मेलन प्रादि की बैठकें समय-समय पर होती रहती हैं। उदाहरणतया भारतीय यम सम्मेलन का २०वां अधिवेशन अभी हुआ ही (अगस्त १९६२) में नई देहली में हुआ है। स्वामी यम समिति का १६वां अधिवेशन २८ अगस्त १९६१ को नई देहली में हुआ था।

भारत सरकार का यम और रोजगार मंत्रालय—

यम व रोजगार मंत्रालय में मुख्य मन्त्रालय (सचिवालय) तथा निम्नलिखित सम्बन्ध एवं अधीनस्थ कार्यालय प्राते हैं (१) रोजगार तथा प्रशिक्षण महानिदेशालय, नई देहली (२) निदेशक, यम धुरो सिमता का कार्यालय (३) कार्यालय मुख्य यम प्रायुक्त, नई देहली (४) कार्यालय कोयला यम प्रायुक्त, बनबाद (५) कार्यालय कोयला यम प्रोबिडेण्ट फण्ड प्रायुक्त बनबाद (६) कार्यालय कल्याण प्रायुक्त अन्नक खान यम कल्याण निधि बनबाद (७) कार्यालय, अन्नक अन्नक खान यम कल्याण निधि परामर्श समिति अन्नक (नीलोड) तथा राजस्थान (भीलवाड) (८) कार्यालय मुख्य खान निरीक्षक बनबाद (९) कार्यालय मुख्य सप्ताहकार खारखाने नई देहली (१०) कार्यालय, पञ्चाली यम नियन्त्रक शिक्षा; (११) कार्यालय औद्योगिक अधिकरण बम्बई, बनबाद व देहली तथा बम्बई में यम अपीसीय अधिकरण का कार्यालय त्रिखको अन्न समाप्त कर दिया गया है (१२) राष्ट्रीय औद्योगिक अधिकरण बम्बई, बनबाद तथा कलकता (१३) विभिन्न उद्योगों के लिए मजदूरी बोर्ड उदाहरणतया सूती कपड़ा व सीमेंट के लिए बम्बई में, चीनी के लिए गोरखपुर में तथा रूट घोर बाधान के लिए कलकता में (१४) अमिर्षों की शिक्षा के लिए केन्द्रीय बोर्ड (१५) कार्यालय महानिदेशक उच्च कर्मचारी बीमा निदम नई देहली; (१६) कार्यालय केन्द्रीय प्रोबिडेण्ट फण्ड प्रायुक्त नई देहली (१७) गोरखपुर यम मंगलन गोरखपुर।

यहाँ तक भारत सरकार का सम्बन्ध है यम व रोजगार मंत्रालय यम से सम्बन्धित प्रश्नों के विचार के लिए केन्द्रीय एल है। यम नीति निर्धारित करने, यम कामुनों को लागू करने तथा यम कल्याण को विकसित करने में मन्त्रालय केन्द्रीय प्रशासकीय अंग है। यम क्षेत्र में यह उच्च सरकारों की प्रतिबिम्बियों को समापोहित करता है। यह विन्तीय यम सम्मेलन तथा भारत सरकार द्वारा प्रादेशिक उद्योग विशेष की समितियों के लिए सचिवालय का काम करता है तथा अन्तरराष्ट्रीय यम संगठन की कार्यवाहियों में भारत इसके द्वारा ही भाग लेता है। यम मन्त्रालय ने कृषि अमिर्षों की स्थिति का अध्ययन करने के लिए अगित भारतीय पृष्ठाद्य भी की

की विरुद्ध बर्लिन २३वें अध्याय में किया जा चुका है। इस सम्बन्ध में एक मूल्यांकन और नार्मल्लिड विभाग भी खोला गया है। इसका कार्य यह देखना है कि श्रम विभाग विभाजन निर्णय फँसने, अनुशासन संहिता आदि को औद्योगिकीकरण कार्यान्वित किया जाय। (रेसिप्ट पृष्ठ १७४)

१९४६ में निदेशक श्रम ब्यूरो विमता के नार्मल्लिय की स्थापना की गई। इसका कार्य श्रम सांख्यिकी को एकत्रित करना, उपरोक्ता मुख्य सूचकांकों को बनाना, काय की ब्याजों के नवीनतम आंकड़ों को एकत्रित करना मासिक 'इन्डियन सेक्टर रजट' (विसको प्रब बरनम कहा जाता है) का सम्पादन करना, देश में श्रम मामलों का, अपिहृत रूप से बरण करने वाली श्रमिक बायिक पुस्तिका (सेक्टर ईयर बुक) का प्रकाशन करना तथा नीति निर्धारण करने के लिये विशेष समस्याओं का सम्बोधन कर आंकड़े प्रस्तुत करना है। इसी ब्यूरो ने कृषि श्रमिक पुच्छाङ्ग और मजदूरी गणना पारिवारिक रजट आदि भी की है। विभिन्न श्रम अधिनियमों के कार्यों पर यह रिपोर्टें भी प्रकाशित करता है।

केन्द्रीय सरकार के क्षेत्र में आने वाले उद्योगों और संस्थानों में औद्योगिक सम्बन्धों का निबटारा करने के लिये १९४२ में मुख्य श्रम प्रायुक्त की नियुक्ति की गयी। इन संस्थानों में औद्योगिक विवादों की रोकथाम करना या निपटारा करना, कल्याणकारी कार्यों की देखभाल करना, श्रम शून्यों को भानू करना तथा कैंटीनों का संगठन करना इस प्रायुक्त का उत्तरदायित्व है। मुख्य श्रम प्रायुक्त की सहायता करने के लिये ६ क्षेत्रीय श्रम प्रायुक्त भी हैं जिनके प्रधान कार्यालय बम्बई, कलकत्ता बनारस कानपुर, नागपुर और मद्रास में हैं। बनारस में क्षेत्रीय श्रम प्रायुक्त के अन्तर्गत न केवल बिहार की कोयला खानें बल्कि पश्चिमी बंगाल तथा अन्य स्वामी की कोयला खानें भी आती हैं। इसके अतिरिक्त अनेक सुसह अधिकारी तथा एक कल्याणकारी सहायकार भी हैं। इस सब व्यवस्था को केन्द्रीय औद्योगिक सम्बन्ध व्यवस्था भी कहा जाता है (Central Industrial Relations Machinery)।

बनारस में कोयला खान कल्याण प्रायुक्त का कार्यालय कोयला खान श्रम कल्याण निधि अधिनियम के प्रशासन के लिये उत्तरदायी है। इसी प्रकार कोयला खान प्रोविडेंट फण्ड प्रायुक्त का कार्यालय कोयला खान बोर्ड तथा प्रोविडेंट फण्ड निधि योजनाओं के प्रशासन के लिये उत्तरदायी है। अन्नक खानों में अन्नक खान श्रम कल्याण निधि के प्रशासन के लिये बनारस में कल्याण प्रायुक्त नियुक्त किया गया है और अन्नक (निलौर) और राजस्थान (भीमवार) में अन्नक खानों के कार्यालय हैं। खानों के मुख्य निरीक्षक का कार्यालय बनारस में है और इसका उत्तरदायित्व भारतीय गान अधिनियम तथा खान मातृत्व हित साम अधिनियम को लागू करना खानों का निरीक्षण करना दुर्घटनाओं की जांच पड़ताल करना सांख्यिकी को एकत्रित करना खान स्वामियों को तन्त्रीकी सहाय देना मशीनरी की जांच पड़ताल करना तथा विधाय की रिपोर्टें प्रकाशित करना, आदि है।

कार्य की दशाओं कारखानों के डिजाइन अधिकारियों के आवास तथा औद्योगिक सुरक्षा स्वास्थ्य एवं कल्याण संग्रहण की देखरेख से सम्बन्धित सभी तकनीकी विषयों पर कारखानों के मुख्य समाहकार के कार्यालय द्वारा विचार किया जाता है। यह कार्यालय कारखानों के प्रशासन तथा स्वास्थ्य एवं सुरक्षा से सम्बन्धित पोस्टरों एवं तस्वीरों को तैयार करता है तथा कारखाना निरीक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था योदी अधिक अधिकनियम का प्रशासन सूचनाएं एकत्रित करने आदि के लिए भी उत्तरदायी है। मुख्य समाहकार की काम में सहायता देने के लिए तीन उप मुख्य समाहकार तथा ६ निरीक्षक भी हैं। यह कार्यालय एक केन्द्रीय धम सस्था बम्बई तीन प्रादेशिक औद्योगिक सुरक्षा स्वास्थ्य और कल्याण के संग्रहालय जो कतकता कोयम्बतूर तथा कानपुर में है उत्पादकता केन्द्र धर्मकराय प्रशिक्षण केन्द्र औद्योगिक मनोविज्ञान तथा शरीर विज्ञान केन्द्र आदि की भी व्यवस्था करता है।

सिमाय में पराबासी अधिक नियंत्रक कार्यालय का काय १९३२ के चाय क्षेत्र पराबासी अधिक अधिकनियम के उपबन्धों का निर्वाचन तथा उसका प्रशासन करना है तथा अधिकों की भर्ती व उन्हें पर आवित भेजने का व्यवस्था एवं चाय बागान व द्विपो के निरीक्षण आदि कार्यों का करन है।

औद्योगिक अधिकारियों के कार्यों का उत्पन्न औद्योगिक विवाद क अध्याय में, मजदूरी बोरों के कार्यों का उत्पन्न मजदूरी के अध्याय में तथा कमचारी राज्य बीमा नियम और केन्द्रीय प्रोबिडेन्ट फण्ड धानुषत क कार्यों का उत्पन्न सामाजिक सुरक्षा के अध्याय में किया जा चुका है। रोजगार तथा प्रशिक्षण महानिदेशालय तथा योरखपुर धम सपटन का उत्पन्न भर्ती के अध्याय में किया जा चुका है। केन्द्रीय अधिक सिंगा बोर्ड का उत्पन्न पृष्ठ ३१०-१८ पर किया गया है।

राज्यों में धम प्रशासन — (Labour Administration in States)

१९११ के 'ब' भाग राज्य (कानून) अधिनियम क धर्मगत कर्णाय धम कानून सभी 'ब' भाग क राज्यों पर लागू कर दिए गए थे। राज्यों क दुर्गतन क परचाय यह अधिनियम सब राज्यों पर लागू होते हैं। माने धम क लिए पारित किए गए एवं अपने क्षेत्र में लागू धम कानूनों के प्रशासन और कार्यान्विति क लिए तथा धम से सम्बन्धित चीजों तथा धम सूचनाओं को एकत्रित सचित तथा विश्लेषित करने के लिए सभी उद्योग प्रधान राज्यों ने अपनी धम-धमन व्यवस्था की है। सभी राज्यों में धम विभाग की स्थापना क अधिकृत धम धानुषकों की भी विपुल किया गया है जो धम प्रशासन क लिए उत्तरदायी है। इनके अधीन धर्मकर अधिकाठी होते हैं उदाहरणतया कारखानों के मुख्य निरीक्षण कारखाना अधिनियम के धर्मगत रोजगार, दुर्घटनाओं आदि से सम्बन्धित चीजों तथा मजदूरी कुण्ठान अधिनियम के धर्मगत मजदूरी एवं धम की सूचनाओं एकत्रित करते हैं। अधिक संघों के शिक्षाकार, अधिक संघों, उनकी सदस्यता एवं उनकी विधि से सम्बन्धित चीजों एकत्रित करते हैं, अधिक धर्मगत के धानुष, दुर्घटनाओं, धर्मगत कुण्ठान अधि-

से सम्बन्धित प्रांकों को एकत्रित करते हैं चाहे। १९४२ के औद्योगिक संश्लेषकी अभिनियम के अन्तर्गत बनेक राज्यों में समान आधार पर विस्तृत रूप से प्रांकों को एकत्रित करने के लिए संश्लेषी प्राधिकारियों की भी नियुक्ति की गई है। इस प्रकार से जो प्रांकों एकत्रित होते हैं उनका विस्मरण किया जाता है और उनमें से कुछ को भारत सरकार द्वारा प्रकाशित पत्रिकाओं तथा 'इण्डियन मेजर जनरल' में प्रकाशित किया जाता है।

उत्तर प्रदेश में श्रम प्रशासन — (Labour Administration in U P)

बिना प्रकार की सुचना का उत्तर उत्प्रेषण किया गया है वह उत्तर प्रदेश में श्रम प्रायुक्त की धीनता में संश्लेषी संगठन द्वारा एकत्रित तथा प्रकाशित की जाती है। हात्त ही में इस संगठन का पुनर्गठन किया गया है तथा इसको और अधिक शक्ति-वासी बनाया गया है। कानपुर के लिए श्रमिक-वर्ग के जीवन निर्वाह सुचकाओं को एकत्रित करने के अतिरिक्त धनक धर्मों में कृषि श्रमिकों की मजदूरी से सम्बन्धित, तथा ग्गुनतम मजदूरी अभिनियम के अन्तर्गत जाने जाने रोजगारों में औद्योगिक श्रमिकों की दसाओं से सम्बन्धित तथा कुछ विशेष क्षेत्रों में औद्योगिक श्रमिकों के पारिवारिक बजटों से सम्बन्धित पुस्तिका भी की गई है और की जा रही है।

उत्तर प्रदेश में श्रम विभाग के अध्यक्ष श्रम प्रायुक्त हैं। यह १९४६ के औद्योगिक रोजगार (स्वायी धारेस) अभिनियम के अन्तर्गत प्रमाण अधिकारी का, कर्मचारी प्रोबिडेन्ट फण्ड योजना के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश में क्षेत्रीय प्रोबिडेन्ट फण्ड कामुक्त का १९४१ के उत्तर प्रदेशीय जीनी एवं सामक मजदूर संघोग श्रमिक कल्याण तथा विकास निधि अभिनियम' के अन्तर्गत श्रम कल्याण प्रायुक्त का तथा १९४३ के औद्योगिक धावास अभिनियम के अन्तर्गत धावास प्रायुक्त का भी कार्य सम्पन्न करते हैं। श्रम प्रायुक्त को उनके कार्यों में सहायता देने के लिये दो अतिरिक्त श्रम प्रायुक्त हैं जो प्रशासन और कल्याण कार्यों के लिये हैं। इनमें से एक तो इस समय उत्तर प्रदेश में वृद्धावस्था पेंशन योजना तथा अनुसूचान, मेधा-बोधा श्रम प्रचार तथा स्वायी धारेसों की वेत-रेख कर रहे हैं और दूसरे कल्याण कार्यों की देख रेख करते हैं तथा इनकी सहायता के लिये एक कल्याण और धावास सलाहकार भी है। दो उप-श्रम प्रायुक्त हैं जिनमें से एक उप-श्रम प्रायुक्त औद्योगिक सम्बन्धों के हैं और एक उप-श्रम प्रायुक्त समान कार्यों के हैं तथा एक कारखानों का मुख्य निरीक्षक है तथा एक 'श्रमिकों का मुख्य निरीक्षक है तथा एक कार्यकृषमता सलाहकार है। यह ७ अधिकारी श्रम प्रायुक्त कार्यालय के विभिन्न अनुभागों (Sections) के कार्यों को सम्बन्धित पर वेतमान के लिये उत्तरदायी होते हैं। श्रम प्रायुक्त के कार्यालय में निम्नलिखित पूरा विकसित धर्मन धर्मन अनुभाग हैं और प्रत्येक अनुभाग में बनेक अधिकारी निरीक्षक पारि नियुक्त हैं — (१) कल्याण अनुभाग—यह अनुभाग अतिरिक्त श्रम प्रायुक्त (कल्याण) के अधीन है और इसकी सहायता के लिये एक सलाहकार, एक सहायक श्रम प्रायुक्त और दो सहायक कल्याण अधिकारी हैं। इसके अन्तर्गत

पाँच क्षेत्रीय कल्याण कार्यालय हैं जो कानपुर, भायरा बरेली, इलाहाबाद तथा मेरठ में हैं। (२) औद्योगिक सम्बन्ध अनुभाग—यह अनुभाग एक उप-ग्रम प्रायुक्त के अधीन है। इसके अन्तर्गत अनेक सुसह्य अधिकारी स्वामीय श्रम निरीक्षक श्रम निरीक्षक तथा श्रम सहायक आते हैं। इस समय इसके ७ प्रादेशिक कार्यालय हैं जो ९ सहायक श्रम प्रायुक्तों के अधीन हैं। (देसिए पृष्ठ १६६-७०) (३) कारखानों के मुख्य निरीक्षक की अध्यक्षता में कारखाना अनुभाग—इसमें कारखानों का एक उप-मुख्य निरीक्षक तथा अनेक कारखाना निरीक्षक हैं। कारखानों के मुख्य निरीक्षक बागान के मुख्य निरीक्षक भी हैं। (४) न्यूनतम मजदूरी और दुकान अनुभाग—यह पहले दो अनुभाग थे जो १९५५ में मिलाकर एक कर दिए गए थे। यह अनुभाग उप-ग्रम प्रायुक्त (औद्योगिक सम्बन्ध) की अध्यक्षता में है। इसकी सहायता के लिए दो सहायक श्रम प्रायुक्त दुकान और बाणिज्य संस्थानों का एक मुख्य-निरीक्षक तथा अनेक श्रम निरीक्षक और अन्य कर्मचारी हैं। (५) 'बोयसर्स' के मुख्य निरीक्षक की अध्यक्षता में एक बोयसर्स अनुभाग—इसमें बोयसर्स के ९ निरीक्षक हैं। (६) एक सहायक रजिस्ट्रार और श्रमिक संघ निरीक्षक की अध्यक्षता में एक श्रमिक संघ और स्वामी प्रादेश अनुभाग। (७) साक्षिकी अनुभाग—इसकी तीन शाखाएँ हैं—साक्षिकी अन्वेषण और प्रचार—प्रत्येक शाखा एक उत्तर प्रदेश राजकीय सेवा के अधिकारी के अधीन है। इसमें प्रचार और श्रम अन्वेषक साक्षिकी सहायक अधिकारियों को संलग्न करने वाले क्लर्क तथा अन्य सहायक होते हैं। (८) उत्तर प्रदेश राजकीय सेवा का एक सेवा अधिकारी की अध्यक्षता में एक सेवा और संस्थान अनुभाग। (९) शाश्वत से सम्बन्धित एक अनुभाग। (१०) कार्यसमता और बिचकीकरण से सम्बन्धित एक अनुभाग। (११) बुराबस्था पेंशन योजना से सम्बन्धित एक अनुभाग।

औद्योगिक विवादों की रोकथाम करने और उनके निबटारे से सम्बन्धित व्यवस्था का उत्प्रेषण सातवें अध्याय में किया जा चुका है।

वर्तमान संविधान में श्रम विषय—(Labour in the Present Constitution)

संविधान सभा द्वारा पारित भारत का नए संविधान की राप्डरिडि द्वारा २६ नवम्बर १९४६ को प्रमाणित किया गया। यह संविधान २६ जनवरी १९५० ग लागू हुआ जब भारत को सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न प्रजातन्त्रात्मक गणराज्य घोषित किया गया।

संविधान के प्राक्कथन में कहा गया है कि हम भारत के लोग भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न प्रजातन्त्रात्मक गणराज्य बनाएँ के लिए तथा उग्र गभी नागरिकों को सामाजिक धार्मिक और राजनीतिक न्याय देने के लिए तथा विचार अधिकारों के अन्तर्गत, श्रम और उपासना की स्वतन्त्रता के लिए तथा प्रतिनिधि और श्रमिकों की समता प्राप्त कराने के लिए तथा सब में बन्धुता की एकी भावना प्रियतम अर्थों का पौरव और राष्ट्रों की एकीता मुनिचित हो सकें अर्थन करने के लिए, इह संकल्प करते इस संविधान को स्वीकृत अधिकारिणित और आरम्भित करते हैं।

संविधान के अनुच्छेद २३ के अन्तर्गत मानव के पणन (Traffic), बेगार तथा अन्य बबरबस्ती से बचाए गए धन को निवेश कर दिया गया है। अनुच्छेद २४ के अन्तर्गत १४ वर्ष से कम आयु के बालकों को कारखानों, खानों या किसी भी संकट मय कार्यों में रोजगार पर नहीं सपाया जा सकता।

संविधान के भाग IV में राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है। यह देश के शासन के लिये मूल सिद्धान्त हैं और विधान बनाने में इनको लागू करना तथा जन कल्याण को विकसित करना राज्य का कर्तव्य है। संविधान के अनुच्छेद ३६, ४१, ४२ और ४३ धन नीति से सम्बन्धित हैं और उन्हें नीचे उद्धृत किया जाता है —

अनुच्छेद ३६ में उन अनेक नीति सिद्धान्तों का उल्लेख है जिनका राज्य को पालन करना चाहिये। विशेषतया राज्य अपनी नीति का ऐसा संवसादन करेगा कि सुनिश्चित रूप से (क) नर और नारी सभी मामलों को समान रूप से शोचिका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो (ख) समुदाय के शैतिक सम्पत्तियों का स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार से बितरित हो जिससे सार्वजनिक हितों का सर्वोत्तम अनुसन्धान हो (ग) प्राथमिक व्यवस्था इस प्रकार रहे कि धन और उत्पादन साधनों का संकेन्द्रण इस प्रकार न हो पाये कि जनसाधारण के हितों को हानि पहुँचे। (घ) पुरुषों और स्त्रियों दोनों को समान कार्य के लिये समान वेतन मिले। (ङ) पुरुषों और स्त्री श्रमिकों का स्वास्थ्य और शक्ति तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का कुतूपयोग न हो तथा नागरिक प्राथमिक आवश्यकताओं के कारण ऐसे व्यवसायों का करने को बाध्य न हो जो उनकी आयु और सामर्थ्य को देखते हुये अनुपयुक्त हों। (च) बासक और कियोतों की शोषण तथा नैतिक पतन से रक्षा हो और उनको प्राथमिक प्रभाव न रहे।

अनुच्छेद ४१ काम करने के अधिकार, शिक्षा पाने के अधिकार तथा विशेष मामलों में राज्य सहायता पाने के अधिकार से सम्बन्धित है। इसमें उल्लेख है कि राज्य अपनी प्राथमिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर कार्य और शिक्षा पाने के, तथा बेकारी, बुढ़ापा बीमारी असमर्थता तथा अनाथस्यक्त प्रभाव की अन्य अवस्थाओं में सार्वजनिक सहायता पाने की अधिकारों की पूर्ति की व्यवस्था करेगा।

अनुच्छेद ४२ में उल्लेख है कि राज्य कार्य की यथोचित और मानवीय शर्तों को सुनिश्चित करने के लिये तथा मातृत्व-हित लाभ के लिये व्यवस्था करेगा।

अनुच्छेद ४३ श्रमिकों के लिये निर्बाह मजदूरी प्राप्ति से सम्बन्धित है। इसमें उल्लेख है कि राज्य उपयुक्त विभाग, प्राथमिक व्यवस्था के संयोजन प्रदत्त प्रायः किसी प्रकार से शोचि हृदि शौचौचिक एवं अन्य प्रकार के श्रमिकों के लिये ऐसे कार्य निर्बाह मजदूरी तथा कार्य की शर्तों को प्राप्त करने की व्यवस्था करेगा जिनसे उनका रूढ़-शून्य का स्तर बरत और उचित हो सके तथा उनको विभाग और सामाजिक

तथा सांस्कृतिक सुविधाओं का पूर्ण भोग उठाने का अवसर प्राप्त हो सके। ग्रामीण क्षेत्रों में राज्य निजी धनका सहकारिता के आधार पर कुटीर उद्योग पथों को विकसित करने का प्रयत्न करेगा।

संविधान के भाग ११ अध्याय १ में केन्द्र और राज्यों (संघीय इकाइयों) के बीच विभागीय सम्बन्धों की व्याख्या की गई है। विधान बनाने के सम्बन्ध में विषयों को तीन सूचियों में विभाजित किया गया है —

(१) केन्द्रीय सूची—इस सूची में दिये गये विषयों में से किसी पर भी विधान बनाने का एकमात्र अधिकार संसद को है।

(२) समवर्ती सूची—इस सूची में दिये गये विषयों में से किसी पर भी विधान बनाने का अधिकार संसद धनका राज्य विधान मंडलों दोनों को ही है।

(३) राज्य सूची—कुछ परिस्थितियों के अन्तर्गत इस सूची में दिये गये विषयों में से किसी पर भी राज्य या इसके किसी भाग के लिये विधान बनाने का एकमात्र अधिकार राज्य विधान मंडलों को है।

संसद को ऐसे किसी भी विषय पर कानून बनाने का एकमात्र अधिकार है जिनका उल्लेख समवर्ती सूची धनका राज्य सूची में नहीं है।

संविधान के भाग २२, अनुसूची ७ में केन्द्रीय सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची के विषयों का उल्लेख है। इन सूचियों में धन से सम्बन्धित विषयों का उल्लेख निम्नलिखित किया जाता है :—

(१) केन्द्रीय सूची —

मद संख्या १३—अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों परिषदों एवं धन्य निकायों (Bodies) में भाग लेना और उनके द्वारा किये गये निर्णयों को लागू करना।

मद संख्या २८—बन्दरगाह संगरोध (बार्न्ट्राइम) और उनसे सम्बन्धित अस्पताल तथा नाविकों के तथा जहाजी अस्पताल।

मद संख्या ३३—घातों तथा तैस क्षेत्रों में धन सम्बन्धी व सुरक्षा की व्यवस्था का विनियमन।

मद संख्या ६१—केन्द्रीय न्यायपालिका से सम्बन्धित औद्योगिक विवाद।

मद संख्या ६३—(क) रोजगार व्यावसायिक तथा तकनीकी प्रशिक्षण तथा (घ) विदेश अध्ययन एवं अनुसंधान व विरासत के लिये न्यायिक एजेंसी एवं संस्थाओं की व्यवस्था।

मद संख्या ६४—इस सूची में दिये गये किसी भी विषय पर जाँच पड़ताल, सर्वेक्षण एवं प्राकृतिक एकत्रित करना।

(२) राज्य सूची —

मद संख्या १—रोजगार एवं असमर्थ व्यक्तियों की सहायता।

(३) समवर्ती सूची —

मद संख्या २०—धार्मिक एवं सामाजिक आन्दोलन।

मद संख्या २१—वाणिज्य एवं औद्योगिक एनाक्टिंग गूट (Combines) एवं प्रत्यास (Trust)।

मद संख्या २२—व्यापार संघ, औद्योगिक एवं धन विबाह।

मद संख्या २३—सामाजिक सुरक्षा तथा सामाजिक बीमा रोजगार तथा बरोजगारी।

मद संख्या २४—धन-कल्याण इसमें कार्य की पेशाएँ, प्रोबिबेन्ट फण्ड, पालकों की बेपत्ता धमिक क्षतिपूर्ति निबन्ध एवं बूढ़ावस्था की पेन्शनें एवं मातृत्व हित साम आदि सम्मिलित हैं।

मद संख्या २५—धमिकों का व्यावसायिक एवं तकनीकी प्रशिक्षण।

मद संख्या ३६—कारखाने।

मद संख्या ४३—समवर्ती सूची तथा राज्य सूची में दिए गए किसी भी विषय के लिए षीष पड़ताल एवं धीकड़े एकत्रित करना।

उपसंहार

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि धन प्रसादन में सरकार की धनिक कायदाहियाँ और संविधान में धन का विशेष रूप से उल्लेख धन समस्याओं की बढ़ती हुई महत्ता और राज्य द्वारा उसकी माम्यता के स्पष्ट प्रमाण हैं। यह धारा भी जा सकती है कि धन समस्याओं के सम्बन्ध में एक उचित व्यवस्था करने तथा धन कानूनों का उचित रूप से प्रसादन करने पर देश में धमिक-बर्ष की व्यवस्थाओं में बहुत सीमा तक सुधार हो सकेगा। यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि सम्मेलन, समितियाँ प्रस्ताव और कानून कितने भी क्यों न हों परन्तु उस समय तक यह सहायक नहीं हो सकते जब तक इन प्रस्तावों विधायियों और कानूनों को अपने हृदय ईमान दारी और उचित प्रकार से लागू नहीं किया जाता है। दुर्भाग्यवश हमारे देश में कायमी कार्यवाही एवं सामर्थ्यवादाही प्रथिक है। अधिकांश बर्ग अधिकतर कायमी पर धीकड़ों द्वारा परिणाम दिखाने में तिष्ठ रहते हैं। परिस्थिति का इस व्यावहारिक दृष्टिकोण से अध्ययन करने का प्रयत्न नहीं किया जाता कि वास्तव में धमिकों का हित ही भी रहा है या नहीं। इसका परिणाम यह होता है कि सुधार करने के लिए सरकार के धनिक प्रयत्नों का कोई लाभदायक फल नहीं निकलता और वास्तविक स्थिति बीसे ही बनी रहती है। सरकार को यह नहीं करना चाहिए कि जिस प्रकार से ब्रिटिश शासन में हीठा या उसी प्रकार से समितियों की नियुक्ति करने और सम्मेलनों को बुलाने की व्यवस्था ही करती रहे बरन् उल्लेख यह कर्तव्य है कि जन-सामारण के उदार के लिए व्यावहारिक पग चलाने की और धमिक ध्यान दे।

पंचवर्षीय आयोजनाएँ और श्रम

(The Five Year Plans and Labour)

अन्य नीति का सिद्धान्त — (The Doctrine of Laissez Faire)

अन्य नीति का प्रभाव बहुत समय तक प्रत्येक देश में व्यक्तियों पर छाया रहा और उद्योगों की आर्थिक नीतियाँ भी इस नीति से प्रभावित रहीं। यह विश्वास किया जाता था कि यदि स्व-हित सम्पादन को स्वतन्त्र छोड़ दिया जाए तो इसके अधिकतम निजी हित प्राप्त हो सकेगा। अन्य नीति में विश्वास रखने वालों की कारणों से कि आर्थिक मामलों में सर्वोत्तम परिणामों को प्राप्त करने के लिए राज्य को आर्थिक क्षेत्र से बाहर ही रहना चाहिए। निजी उद्यम ही सब आवश्यक बातों को पूरा करने के लिए पर्याप्त है क्योंकि इसके उपभोक्ताओं को तो कम मूल्यों के कारण तथा उत्पादकों को अधिक लाभ प्राप्ति के कारण फायदा होगा। लाभ कमाने की इच्छा का परिणाम यह होगा कि अधिकतम उत्पादन हो सकेगा। प्रतियोगिता के कारण लाभ अधिक न हो पाएँगे और जितना कि उत्पादन को प्रोत्साहन देने के लिए आवश्यक होंगे वही तक सीमित रहेंगे। परिणामस्वरूप प्रत्येक उत्पादक यथा-सम्भव कुशल होने का प्रयत्न करेगा और उपभोक्ताओं की इच्छाओं का यथा-सम्भव ध्यान रहेगा।¹

यह स्व-हित स्वतन्त्र रूप से छाया रहता है तो उसके अन्तर्गत आर्थिक प्रणाली निजी स्वामि की प्रेरणा से शासित होती है। उत्पादक बड़ी वस्तुएँ और उद्योगी ही मात्रा में उत्पन्न करते हैं जितनी कि उपभोक्ताओं द्वारा मांग की जाती है। उपभोक्ता अपनी वरजीह (Preferences) को मूल्यों के रूप में प्रकट करते हैं। विभिन्न वस्तुओं के मूल्यों से ही इस बात का निर्धारण होता है कि कौन-कौन सी वस्तुएँ तथा कितनी मात्रा में उत्पन्न की जाएँ। उत्पादन सामग्री का विभिन्न उपयोगों में किस प्रकार विनिधान (Allocation) किया जाए इसका निर्धारण भी मूल्यों के द्वारा ही होता है। इस प्रकार मूल्य यह प्रदूषण उत्पन्न है जिसके द्वारा सम्पूर्ण आर्थिक गति विधियों का नियंत्रण और पथ प्रदर्शन होता है।²

1 G D H. Cole : *Practical Economics* pages 7-8.

2 आयोजना की समस्याओं का विस्तृत विवरण लेखक तथा प्रो० पी० सी० माथुर द्वारा लिखित पुस्तक 'सांख्यिक सर्वेक्षण' में अध्याय ३२ में ३९ तक देखिए।

धायोजना के विचार का विकास —

अब तक नीति सदन ही अपने दृष्टिकोण में पूर्वीवादी रही है। यह नीति निजी मामलों के अस्तित्व को मान कर बनाई गई थी जिनके पास उत्पादन के विशेष साधन तथा धन को रोजगार पर समाने की क्षमता होती है। इस नीति में पूर्वी का निजी स्वामित्व भी मान लिया गया था। परन्तु पिछले कुछ वर्षों से इस अर्थशास्त्रीय नीति पर से लोगों का विश्वास घट गया है। यह देखा गया है कि स्वतन्त्र प्रति योगिता में उत्पादन प्रणाली बहुधा अस्थिर-अस्थिर हो जाती है और इसके कारण जन-साधारण को घोर परेशानियों का सामना करना पड़ता है। पूर्वीवादी समाज की प्रगति बिना बाधाओं के नहीं हो पाती। पूर्वीवादी प्रणाली में धार्मिक मन्त्री और ऐसी-वैसी कई अवस्थाओं का सामना करना पड़ता है। निर्बल का सबसे बड़ा शोषण किया जाता है और सामाजिक कल्याण की गति होती है। अतः यह आवश्यक समझ गया कि धार्मिक प्रणाली को इस प्रकार सगठित किया जाना चाहिये कि शोषण तथा ऐसी-वैसी धार्मिक अस्थिरता से छुटकारा पाया जा सके। अब मैं यह सिद्ध कर दिया कि धार्मिक धायोजना के द्वारा यह सम्भव हो सकता है। १९२६ में जब समस्त संसार मन्त्री और बेरोजगारी से पीड़ित था तब कम में धर्मियों की कमी की समस्या थी।

अतः धार्मिक मन्त्री के समय में जब संसार ने यह असाधारण घोर बुरी स्थिति देखी कि वस्तुओं की बाहुल्यता होने पर भी लोग भूख से मर रहे थे तब से समस्त संसार के लोगों में धायोजना का विचार बूढ़ होता चला गया है। अब धार्मिक प्रणाली की माँग और पूर्ण कौशलियों के अन्तर्गत स्वतन्त्र छोड़ देना सुरक्षित नहीं समझा जाता। अब ऐसे व्यक्ति बहुत कम हैं जो इस बात में विश्वास करते हैं कि धार्मिक अस्थिरताओं को स्वतन्त्र छोड़ दिया जाए तो उनके द्वारा देश के धार्मिक मामलों का स्वतः सर्वोत्तम निवारण हो जायेगा। सर विनियम बेवरिज ने कहा है “बहु-धाया करना कि व्यक्तिवादी रूप से छोटे-छोटे और पृथक्-उद्योग बन्धों से एक ऐसा उद्योग बन जायेगा जिसमें हर प्रकार से अधिकतम कुशलतापूर्वक कार्य होगा, ईसा ही होगा जैसे यह धायोजना की जाए कि अत्यन्त छोटे-छोटे सम्पत्ति के मामलों और निर्माण-कर्ता अपनी अनियमित व अस्थिर-स्थिर कार्यवाहियों से कोई ऐसा नियोजित नगर बना देंगे जिसमें अत्यन्त-स्थिर स्थान बहोती गतिमान तथा यातायात का व्यवस्था होना वैसी बातें न हों।” उत्पादकता और धायोजना के लिये तथा देश के बहुमुखी विकास में तीव्रता ज्ञान के लिये अब नियोजित अर्थ-व्यवस्था की स्वीकार कर लिया गया है। धायोजना का अर्थ और अक्षरी परिभाषा —

धायोजना केन्द्रीय नियन्त्रण को मान कर चलती है और इसमें यह अन्तर्निहित है कि राज्य के मामलों का जो भी उपयोग होता है वह सीधे सम्भारक और विमल-पूर्वक तथा एक निश्चित अर्थ को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। इसमें विवनी भी धार्मिक प्रणाली हैं जिन सबको निश्चित रूप से समायोजित और समन्वित

कर मिया जाता है ताकि व्यर्थ की प्रतियोगिता और कार्य का बुरापन समाप्त हो जाए। कार्ल फ्रेड्रिक ने अपनी एक पुस्तक 'Readings in Economic Planning' में 'मुई सार्विकन' की परिभाषा उद्धृत की है जिसने एक आयोजित अर्थ-व्यवस्था की व्याख्या इस प्रकार की है 'आयोजित अर्थ-व्यवस्था आर्थिक संगठन की एक ऐसी योजना है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति तथा पृथक-पृथक मशीन उद्यम और उद्योग सबको एक ही प्रणाली की समायोजित इकाइयाँ माना जाता है और इसका उद्देश्य यह होता है कि बिजने भी उपसम्ब साधन हैं उनका इस प्रकार से उपयोग किया जाए कि एक निश्चित समय में मनुष्य की आवश्यकताओं की अधिकतम सन्तुष्टि हो सके।' विक्रमन के शब्दों में "आर्थिक आयोजना का अर्थ यह है कि समस्त आर्थिक प्रणाली के व्यापक सर्वेक्षण के आधार पर एक निर्धारित करने वाली सत्ता द्वारा शोष-समरूप कर द्वारा तन मुख्य आर्थिक नियम लिए जाते हैं—जैसे क्या और कितना उत्पादन होना चाहिये और किन-किन में उसका बितरण होना चाहिये।" इयू० एन० मूब ने आयोजना की निम्नलिखित शब्दों में व्याख्या की है "आयोजना से तात्पर्य यह है कि राष्ट्रीय भावना से प्रेरित सामाजिक व्यापक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये समस्त आर्थिक क्रियाओं को राष्ट्रीय आधार पर निश्चित किए और बाँटे हुए शर्तों में तथा एक समायोजित इकाई में इस प्रकार यथास्थान स्थित कर दिया जाता है जैसे किसी पञ्जीकारी का भाग हो।"०

इस प्रकार आर्थिक आयोजना से आर्थिक क्रियाओं को नियंत्रित करने वाली सत्ता मुख्य के स्थान पर राज्य हो जाता है। आर्थिक प्रणाली पर मुख्य का नियन्त्रण समाप्त हो जाता है। विभिन्न उद्योगों में शान्तों का बितरण राज्य द्वारा किया जाता है और जिस मात्रा में राज्य चाहता है उसी मात्रा में बस्तुओं का उत्पादन होता है। इस प्रकार आयोजना द्वारा अर्थ-व्यवस्था की अर्थ व्यवस्था समाप्त हो जाती है और उसके स्थान पर देश की आर्थिक प्रणाली पर अन्तर्जातीय नियन्त्रण लागू कर दिया जाता है। उत्पादन बितरण आदि सब एक पूर्ण निश्चित आयोजना के अनुसार होते हैं। उपभोग के स्थान पर आर्थिक विषयों में राजनैतिक विषयों के साथ-साथ राज्य का प्रभुत्व पा जाता है। स्वार्थ के स्थान पर समाज हित के उद्देश्य से आर्थिक प्रक्रियाएँ प्रभावित होती हैं। आर्थिक आयोजना का उद्देश्य विभिन्न देशों में विभिन्न ही सकता है परन्तु सामान्य तन्त्र यही है कि आर्थिक जीवन में स्थिरता लाई जाय व्यायोजित बितरण हो और देश के शान्तों का अधिकतम उपयोग हो सके त्रिसे अर्थिक उत्पादन हो पूर्ण रोजगार हो तथा जीवन स्तर उँचा हो जाय।

* The shaping of all economic activities into group-defined spheres of action which are nationally mapped out and fitted as part of a mosaic into a co-ordinated whole for the purpose of achieving certain nationally conceived and socially comprehensive goals"

घाघार पर हो तथा बर्भीबारी प्रणाली का सम्भूतन कर दिया बाए । छोटे पैमाने के उद्योगों का संयोजन सहकारी बाघार पर किया जाना बाहिए तथा उनको घाामीख क्षेत्रों में प्रोत्साहन देने की नी सिफारिश थी ।

घाघोचना में देश-भ्यापी शक्ति बास्तब में 'बम्बई घाघोजना' के प्रकाशन से चलन हुई । यह घाघोजना १९४४ में बम्बई के ढाठ उद्योगपतियों द्वारा बनाई गई थी । घाघोजना में १५ बर्षों के दौरान में १ ००० करोड़ रुपये व्यय करके राष्ट्रीय बाय को पुनर्ना करने का सुझाव था । इसने देश के लिए सतुमित अर्ष-व्यवस्था की हसीन थी तथा उद्योग कृषि संघार, शिक्षा और घाघास के लिए लक्ष्य निर्धारित किए । घाघोजना के दूसरे भाग में वितरण की समस्या का उत्सेध किया गया था तथा इसका उद्देश्य राज्य समानबाद और पूंजीबाद के बीच समझौता स्थापित करना था । इस घाघोजना की भाषोचना इस भाषार पर की गई कि यह पूंजीबारी थी । इसकी महत्ता भी अय समाप्त हो गई है क्योंकि मूर्खों में वृद्धि तथा देश में बरकी हुई राजनीतिक व भाषिक परिस्थितियों के कारण इसके अनुमान अय गलत हो गए हैं ।

इसके परिचित थी एम० एन० राय द्वारा बनाई गई 'अन घाघोजना' (People's Plan) भी थी । इसकी सामत १० बर्षों के दौरान में १५,००० करोड़ रुपया अनुमानित की गई थी जो कृषि, उद्योग संघार व स्वास्थ्य पर व्यय की जाती थी । इस घाघोजना में कृषि के विकास पर बल दिया गया था भूमि के राष्ट्रीयकरण की हसीन भी गई थी तथा कृषि भूमि के क्षेत्र को ५०% तक बढ़ाया जाने का सुझाव दिया गया था । परन्तु यह अनुमान अयमन्य प्रतीत होते थे । अतः इस घाघोचना पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया ।

बर्षों के प्रो० एम० एन० अयबास (भी भीमन नाययस) ने भी 'वांजीबाद घाघोजना' (Gandhian Plan) बनाई । इस घाघोजना के उद्देश्य बहुत ऊंचे नहीं थे । इसमें पोपणा की गई थी कि भारतबर्ष एक निर्बन देश का अय घाघोजनाओं पर बड़ी अयराशि व्यय नहीं कर सकता था । इसकी अनुमानतः सामत ३,५०० करोड़ रुपये थी और उसको कृषि उद्योग यथायात अन स्वास्थ्य शिक्षा भादि-भादि अनेक अर्षों में बांटा गया था । घाघोजना का मुख्य उद्देश्य कुटीर उद्योगों की पुनर्स्थापना, कृषि में सुधार और अयत-निर्भरता का अयर्ष था । यह घाघोजना के लिए परिषदी प्रणाली अयनाने के बिच्छ थी । घाघोजना की यह घाघोचना की गई कि यह घाघु निक संघार में घोर घाघसंबादी व अय्याबहारिक थी ।

मुद्योत्तर पुननिर्माण के लिए नी भारत सरकार ने कुछ घाघीजनाएँ बनाई । पून १९४१ में अनेक पुननिर्माण समितियों की स्थापना की गई । पुलाई १९४४ में घाघोजना और विकास विभाग की स्थापना की गई । सरकार की घाघोजना की भागों में विभाजित थी तत्कालीन और दीर्घकालीन । तत्कालीन घाघोजना में बुद्ध से चांघिकालीन अर्ष-व्यवस्था में परिवर्तन की समस्या को सुलभना था-उत्साहरण

युद्ध सामग्री व प्रतिरिक्त स्टॉक को काम में लाना, युद्ध सैनिकों का पुनर्वास, युद्ध कर्मियों नियंत्रणों को कम करना और बीरे-बीरे दूर करना आदि। यह १,००० करोड़ रुपये की लागत की पंचवर्षीय आयोजना थी। शीपकासीन आयोजना में विद्युत-शक्ति के विकास सिंचाई, ग्रामीण एवं बड़े उद्योग बन्ने, मातायात सेवा तथा कृषि में सुधार के द्वारा देश के आर्थिक जीवन का सर्वाङ्गीण विकास करने का उद्देश्य था। धन के समान वितरण पर जोर दिया गया था।

१९५० का आयोजना आयोग — (Planning Commission of 1950)

यह सब आयोजनायें इस कारण पर आधारित थीं कि भारतवर्ष अविभाजित रहेगा। शरणार्थी पुनर्वास, काश्मीर युद्ध युद्धोत्तर मुद्रा प्रसार, खाद्य की कमी और व्यापार अक्षय बंधी घोर समस्याओं के बारे में कृती ने सोचा भी न था। युद्धोत्तर घटनाओं से यह सब आयोजनायें बेकार हो गईं। अतः यह आवश्यक हो गया है कि भारत में उपसम्पन्न मानवीय व भौतिक साधनों को ध्यान में रखकर एक नई आयोजना बनाई जाए। अतः मार्च १९५० में थी नईरू की अध्यक्षता में एक आयोजना आयोग की स्थापना की गई। इसका कार्य यह था कि भौतिक, पूंजीगत व मानवीय साधनों का ठीक-ठीक अनुमान लगाए तथा "देश के स्रोतों के समुचित व 'बहुत प्रभावशालक' उपयोग के लिए एक आयोजना बनाए जिससे देश के हर नागरिक को चाहे वह स्त्री हो अपना पुण्य, अधिकोपाजन के पर्याप्त साधन उपलब्ध हो सकें।" राश्यों में आयोजना तथा विकास प्रभागों की स्थापना की गई। आयोग ने तत्काल ही अपना काम प्रारम्भ कर दिया और १५ महीने पश्चात्, जुलाई १९५१ में, सरकार को प्रथम पंचवर्षीय आयोजना की प्रारम्भिक समीक्षा प्रस्तुत कर दी। पंचवर्षीय आयोजना अन्तिम रूप में थी नईरू द्वारा संसद में ८ दिसम्बर १९५२ को प्रस्तुत की गई। इस आयोजना की अवधि अर्धशत १९५१ से मार्च १९५६ तक रखी गयी।

कोलम्बो आयोजना — (The Colombo Plan)

कोलम्बो आयोजना राष्ट्रमंडलीय (Commonwealth) देशों के आर्थिक सम्बन्धों का ही एक भाग है। इस आयोजना का प्रमुदय जनवरी १९५० में कोलम्बो में हुए राष्ट्रमंडलीय देशों के विदेश मंत्रियों के विचार-विमर्श के परिणामस्वरूप हुआ। इस सम्मेलन में विश्व समस्याओं पर, विशेषतया दक्षिण और दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों की घोर आवश्यकताओं पर विचार विनिमय हुआ। इस सभा में एक सप्ताहकार समिति बनाई गई। इसका कार्य आवश्यकताओं का सर्वेक्षण करना उपसम्पन्न साधनों का सूचकांक करना तथा इस क्षेत्र में किए जाने वाले विकास कार्यों की घोर संसार का ध्यान आकषिप्त कराना था। इसका यह भी कार्य था कि अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के ऐसे प्रयत्न किए जाएँ जिनके अन्तर्गत इस क्षेत्र के देशों के विकासियों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाया जा सके। प्रारम्भ में इसके सदस्य आस्ट्रेलिया, कनाडा, श्रीलंका, भारतवर्ष, म्यूजीमड, पाकिस्तान, हांगकङ, मलाया तथा

प्रतिष्ठ कोर्नियो से । इसके पश्चात् १९५१ में कम्बोडिया सामोस विघटनाम तथा संयुक्तराष्ट्र अमेरिका १९५२ में बर्मा धीर नेपाल, १९५३ में हिंदेशिया तथा १९५४ में जापान फिलिपाइन्स धीर बाइर्मा भी इसके सदस्य हो गए । इस समय 'कोसम्बो आयोजना' में २० सदस्य हैं ।

कोसम्बो आयोजना का औपचारिक रूप से उत्पादन १ जुलाई १९५१ को किया गया । यह ३० जून १९५७ को समाप्त होने को थी । अक्टूबर १९५२ में समाहकार समिति के सिंगापुर सम्मेलन में आयोजना को ३० जून १९६१ तक बढ़ाना स्वीकार कर लिया गया और अब यह योजना स्वाइँ रूप से चल रही है । इस आयोजना के अन्तर्गत इस क्षेत्र के देश अपने विकास का समासम्भन प्रयत्न करते हैं । इन प्रयत्नों में क्षेत्र के बाहर के देशों द्वारा सहायता दी जाती है । आयोजना के पास १०६० लाख पीड की निधि थी । निधि में से राशि मुख्यतः माठायात और सहायवाह्य कृषि (इसमें नदी बाटी योजनाएँ भी सम्मिलित हैं) आवास स्वास्थ्य व शिक्षा उद्योग और खनिज (इसमें कोयला ईंधन व शक्ति सम्मिलित नहीं हैं) के लिए दी जाती है । १०६० लाख पीड को व्यय होगा उसके लिए १०६० लाख पीड आंतरिक साधनों से और ७५४० लाख पीड बाह्य साधनों से प्राप्त करने की व्यवस्था थी ।

आयोजना के अन्तर्गत भारत सहायता भी से रहा है और वे भी रहा है । भारतवर्ष ने रूस के पुनर्बापन तथा आकाशवाणी के विस्तार के लिए धारुसिया से मयूरभी और बुम्बा योजनाओं के लिए कनाडा से पश्चिम भारतीय चिकित्सा निगम संस्था व बेहमी पुनर्चिठरण योजना के लिए न्यूजीलैंड से तथा बुर्गापुर इस्पात कारखाने के लिए ब्रिटन से सहायता सी है । १९६१ तक भारत ने २४४ बिबेरी बिद्योपकों की सेवाएँ प्राप्त कीं तथा २४१० भारतीयों के लिए आयोजना के अन्तर्गत दूसरे देशों में प्रशिक्षण सुविधाएँ प्राप्त कीं । ये सेवाएँ स्वास्थ्य तथा चिकित्सा सम्बन्धी शिक्षा आब तथा कृषि, उद्योग तथा व्यापार शक्ति और ईंधन के साधन माठायात व संचार बाहन बेंडिंग सांख्यिकी, धराई आदि से सम्बन्धित थीं । अम प्रसाधन तथा शक्ति संयन्त्र में शिक्षा के लिए भी कुछ अधिकारियों को इंगलैंड भेजा गया । भारत को आर्थिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत भी दूसरे देशों से सहायता मिली है वह इस प्रकार है धारुसिया से १ करोड़ २० लाख पीड (१२५ करोड़ रुपए) कनाडा से २४००३० लाख डॉलर (११०२ करोड़ रुपए) जिसमें ३३० लाख डॉलर (१५०१ करोड़ रुपए) का ऋण भी सम्मिलित है, न्यूजीलैंड से २६ लाख पीड (३४ करोड़ रुपए) ।

दूसरी ओर भारत ने नेपाल तथा कोसम्बो क्षेत्र के अन्य देशों को सहायता भी दी है । १९६१ तक भारत ने बिभिन्न देशों के १६९४ व्यक्तियों को प्रशिक्षण सुविधाएँ प्रदान कीं । इनमें से २३२ व्यक्तियों को १९६०-६१ में प्रशिक्षण दिया । प्रशिक्षण हेतु ये व्यक्ति बर्मा श्रीलंका हिंदेशिया, जापान, मलाया, नेपाल,

फिलिपाइन्स सरकार, सिगापुर, पाइसेट और बियलनाम से आए। इन व्यक्तियों को सिविल व मैकेनिकल इंजीनियरिंग शिक्षा संवेद्यबाहुत कृपि, उद्योग सांख्यिकी, सहकारिता आदि में प्रशिक्षण दिया गया। इसके अतिरिक्त भारत ने अन्य देशों को विशेषज्ञों की सेवाएँ भी प्रदान की हैं। ये सेवाएँ सिबाई बकिंग लोहा व इस्पात हवाई सर्वेक्षण रेलम उद्योग दुग्ध बितरण धातु उत्पादन ट्रेक्टर इंजीनियरिंग राहवीर धनुसन्धान पीनी तथा चमड़ा बनाने की तकनीक रेडियो प्रसार धरत बचत योजनाएँ, कपडान सुधार, आयुर्वेदिक धनुसन्धान, सड़क यातायात धनुसन्धान हवाई जहाजों का चमडान बीमा योजना का राष्ट्रीयकरण, काजू उत्पादन आदि से सम्बन्धित थीं। १९६०-६१ में भारत ने मपान को २१ करोड़ रुपए की सहायता प्रदान की।

प्रथम पंचवर्षीय आयोजना का प्राक्षप —

(A Brief Outline of the First Five Year Plan)

उपरोक्त बर्णन को ध्यान में रखते हुए धर्म भारतवर्ष की प्रथम पंचवर्षीय आयोजना पर विचार किया जा सकता है। जुलाई, १९५१ में आयोजना की प्रस्तावित रूपरेखा प्रकाशित की गई जो पाँच बर्षों की अवधि धर्यात् मार्च १९५६ तक के लिए थी। प्रस्तावित रूपरेखा का उद्देश्य यह था कि आयोजना पर धितना भी सम्भव हो जनता द्वारा विचार विमर्ष किया जाए। इसको प्रस्तुत करते हुए धायोग ने कहा था 'प्रजातांत्रिक राज्य में आयोजना एक सामाजिक प्रक्रिया है और इसमें प्रत्येक नागरिक को किसी न किसी प्रकार से भाग लेने का अवसर मिलना चाहिए।' आयोजना धायोग ने केनीय व राज्य सरकारों मुख्य राजनतिक हलों के प्रतिनिधियों तथा अन्य विविष्ट व धनुभवी व्यक्तियों से परामर्ष करके आयोजना को अन्तिम रूप दिया। ८ दिसम्बर, १९५२ को संसद के समक्ष प्रथम आयोजना का यह अन्तिम रूप प्रस्तुत किया गया।

आयोजना का मुख्य उद्देश्य विकास की ऐसी प्रक्रिया को धामू करना था जिससे जीवन-स्तर ऊँचा हो जाए तथा व्यक्तियों को धधिक मध्मन और विविध प्रकार का जीवन व्यतीत करने के नए-नए अवसर प्राप्त हो सकें। इस आयोजना पर इस दृष्टिबोण से विचार किया जाना था कि इससे इस बात की भीत पड़ सक कि देश का भावी विकास तीव्रगति से हो।

आयोजना एक निरन्तर प्रक्रिया है इसलिए इस बात का विवेचन किया गया था कि प्रथम पंचवर्षीय आयोजना का मुख्य कार्य भारतीयों के सामाजिक और धधिक स्तरों को पर्याप्त रूप से ऊँचा उठाना था। उद्देश्य यह था कि प्रति व्यक्ति धाय १९७७ तक बढ़कर दुगुनी हो जाए तथा राष्ट्रीय धाय १९५१ में ६,००० करोड़ रुपयों से बढ़कर १९५६ में १०,००० करोड़ रुपए तक पहुँच जाए। यह भी धाना ध्यस्त की गई थी कि इस अवधि में राष्ट्रीय धाय के धनुपाठ में बचत की दर १९५१ में ५ प्रतिशत से बढ़कर १९५५-५६ में ६.७५%, १९६०-६१ में ११% तथा १९६७-६८ में २०% हो जाएगी। इसके परबात् धनुपाठ धधिक बढ़ाने की

हो गई थी, अर्थात् इसमें १०.८% की वृद्धि हुई। १९५०-५१ की तुलना में इपि उत्पादन में भी १९% की वृद्धि हुई। साथ उत्पादन में २९.८% की वृद्धि हुई। रई के उत्पादन की वृद्धि ३७.५% तथा मुख्य मुख्य तिसहन में उत्पादन की वृद्धि १३.२% रही। सिचाई की बड़ी बड़ी योजनाओं के परिणामस्वरूप ६० लाख एकड़ भूमि तथा छोटी योजनाओं के परिणामस्वरूप १ करोड़ अतिरिक्त भूमि सिचाई के अन्तर्गत आ गई। औद्योगिक उत्पादन में भी स्थाई गति से वृद्धि हुई जो १९५१ की अपेक्षा १९५६ में ४०% अधिक था। विद्युत् शक्ति का उत्पादन १९५०-५१ में २१ लाख किलोवाट का परन्तु १९५५-५६ में बढ़कर ३३ लाख किलोवाट हो गया। सीमेंट का उत्पादन भी १९५०-५१ में २७ लाख टन से बढ़कर १९५५-५६ में ४६ लाख टन हो गया। सार्वजनिक क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण औद्योगिक आयोजनाओं पूरा की गई और उनके अन्तर्गत कार्य आरम्भ हो गया था। तीन इस्पात कारखानों के उद्घाटन में आरम्भिक कार्य को पूरा किया जा चुका था।

इन पांच वर्षों में अर्थ-व्यवस्था में निवेश का अनुमान लगभग ३,१०० करोड़ रु० का है। १९५०-५१ में निवेश ४५० करोड़ रुपये से बढ़कर १९५५-५६ में ७९० करोड़ हो गया था। (अर्थात् राष्ट्रीय आय का ७.३%) प्रथम आयोजना आरम्भ होते समय जितने मूल्य थे उससे आयोजना के अन्त में मूल्य १३ / कम थे। मूल्यों में बढ़ने की प्रवृत्ति १९५५ के मध्य में वृष्टिगोचर होने लगी थी। देश के व्यापार सन्तुलन में भी सन्तोषजनक सुधार हुआ और इसमें १९५२-५३ में ७७ करोड़ रुपये तथा १९५३-५४ में १७ करोड़ रुपये की बर्गी (Surplus) हुई। विदेशी खाते में भी सन्तुलन रहा। आयोजना में विकास योजनाओं के अन्तर्गत तथा पांच वर्षों की अवधि में निजी क्षेत्र में निवेश के अन्तर्गत अतिरिक्त प्रयत्न नीकटियों में अनुमानतः ४५ लाख की वृद्धि हुई परन्तु इस पर भी बेरोजगारी की समस्या गम्भीर रूप आरणु किये रही।

समय समय पर आयोजना की आलोचना भी की गई है। यद्यपि यह कहा गया है कि आयोजना वास्तविक है तथापि इसमें अनेक भावपूर्ण बिचार मिलते हैं। केवल बुझावों को आयोजना नहीं कहा जा सकता। आयोजना का उद्देश्य सीमित था तथा अधिक ऊँचे नहीं थे। उदाहरणतः योजना-अभावित तक साथ स्थिति को बचाने मुझ-पूर्व स्तर की स्थिति पर माना था। आयोजना में आ आदि-कार्यों की गई था उनही भी आलोचना की गई। उदाहरणतः गंगा के विकास की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया था। यह नागरिकों के अतिरिक्त बनाने का उनमें राष्ट्रीय भावना का आचार के लिए बहुत आवश्यक है। इसके बिना कोई भी आयोजना सफल नहीं हो सकती। विदेशी खातों की भी आलोचना की गई। पाठ के अन्त पर भी अन्त व्यक्त की गई। आयोजना में बेरोजगारी की समस्या का भी कोई ठाम रूप प्रस्तुत नहीं किया गया था। यह भी कहा जा सकता है कि योजना के अन्त ओर अतिरिक्त बहुत अल्पमत होता रहा है तथा निवेश के अनुपात में अन्तर्गत काम प्राप्त नहीं

है। बाघ के क्षेत्र में देश की आत्म-निर्भरता का ध्येय पंचवर्षीय आयोजना को नहीं दिया जा सकता क्योंकि यह आत्म-निर्भरता स्व० भी राष्ट्रीय ग्रहण किये जाने की बुद्धि नीति के परिणामस्वरूप ही प्राप्त की जा सकती थी। १९७७-७८ तक राष्ट्रीय आय दुगुनी होने का लक्ष्य भी बहुत ऊँचा नहीं था। इसके अतिरिक्त आयोजना में भौतिक साधनों का विस्तृत अध्ययन करने की अपेक्षा वित्तीय आयोजना पर अधिक बल दिया गया था। यही नहीं वित्तीय आयोजना में भी अनेक दोष थे जो इस बात से स्पष्ट हैं कि वास्तविक व्यय (१ ६६० करोड़ ६०) तथा दोहराये गये अनुमानित व्यय (२ ३७८ करोड़ ६०) में काफी अंतर था।

यहाँ पर आयोजना और उसकी आलोचना के विषय में विस्तारपूर्वक विवरण की आवश्यकता नहीं है। इसके लिए लेखक की पुस्तक 'सार्वजनिक सर्वसाधन' का अध्ययन किया जा सकता है। यहाँ केवल इतना कह देना पर्याप्त होगा कि यह प्रथम अक्षर का जबकि देश में अखिल भारतीय स्तर पर आयोजना का प्रयत्न किया गया। निःसन्देह प्रथम पंचवर्षीय आयोजना के मातृ होने से हमारी धर्म व्यवस्था को बल और स्थायित्व मिला है। प्रथम आयोजना बहुत ऊँचे सपनों की आयोजना नहीं थी और इसकी अक्षर में अधिक बल इस बात पर दिया गया था कि बाघ की कमी को पूरा किया जाय और मुद्रा-स्थिति के भार को कम किया जाय। कोसम्बो आयोजना समाहार समिति ने अपनी अनुर्ध्व वार्षिक रिपोर्ट में आयोजना की सफलताओं व असफलताओं का विवरण दिया है। समिति के मतानुसार आयोजना की सफलताओं में कमी का कारण यह था कि व्यय किये जाने वाले धन की राशि संशोधित प्रायश्चित्तों तक भी नहीं पहुँच सकी सार्वजनिक क्षेत्र में भी साधनों का प्राथमिक विकास नहीं हुआ तथा निवेश की दर भी इतनी ऊँची न थी जिससे कि रोजगार की स्थिति पर कोई महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ सके। परन्तु साब ही उत्पादन अधिक करने तथा देश की उत्पादन क्षमता बढ़ाने में आयोजना अपने मुख्य उद्देश्य में सफल रही। उत्पादन सामान्यतः निर्धारित लक्ष्यों से भी बढ़ गया। देश की धर्म-व्यवस्था में पूर्वी निर्माण की गति भी बढ़ी। मुद्रा-स्थिति पर पर्याप्त नियंत्रण कर लिया गया था तथा बस्तुओं के अभाव का आधाकरण भी समाप्त हो गया था। सफलता असफलता दोनों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि आयोजना सफल तो रही परन्तु प्राणायाम रूप से नहीं। आयोजना आयोजक का कथन है कि सब बातों के देखते हुए यह कहा जा सकता है कि द्वितीय आयोजना के आरम्भ होने के समय प्रायश्चित्त स्थिति प्रथम आयोजना आरम्भ होने के समय से अपेक्षाकृत अच्छी थी, व्यक्तियों में अविचार अधिक था और सब और अधिक प्रयत्नों के लिए बढ़ी उत्पादन रिसाई देती थी। परन्तु इसके साथ ही कोसम्बो समिति के सदस्यों को भी भ्रमता नहीं

चाहिए। समिति ने कहा था कि सब कुछ हाथे हुए भी हमारे घम्बर नबिप्य क लिए धायन-सन्तुष्टि की भावना नहीं घानी चाहिए।

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना —

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना की प्रस्तावित रूपरेखा आयोजना धायोम द्वारा फरवरी १९३६ में प्रकाशित की गई। इनसे पूर्व माघ १९३५ में प्रो० पी० सी० महाभानवीस द्वारा आयोजना के मसौदे की रूपरता प्रकाशित की गई थी तथा आयोजना धायोम एक विल मंत्रामय क धर्म-विभाग द्वारा भी कुछ मसौदे प्रस्तुत किए गए थे। आयोजना अन्तिम रूप से १५ मई १९३६ को संसद के सम्मुख प्रस्तुत की गई और इसमें निवेश और उत्पादन के मसौदों को बना दिया गया था। इसका कारण यह था कि राजगार क बचसरो में वृद्धि की भावमयता धनुमन की गई थी तथा द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में धीछोगीकरण का बहुत अंश कायम होने क कारण अधिक मातायात सेवासों के लिए आवश्यकता करने की भी भावमयकता थी।

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना के मुख्य-मुख्य चरूप निम्न प्रकार हैं, यद्यपि यह सब उद्देश्य परस्पर एक दूसरे से सम्बन्धित हैं —

(१) राष्ट्रीय धाय में इतनी वृद्धि करना जिसमें देश क रहन-सहन का स्तर अंश हो।

(२) मूस और भारी उद्योगों के विकास पर जार देते हुए देश का ठेकी से धीछोगीकरण।

(३) राजगार के बचसरो का अधिक विस्तार।

(४) धाय और सम्पत्ति की बिधमताओं का निराकरण तथा धायिक धक्ति का पहले से अधिक समान वितरण।

धायिक नीति का उद्देश्य समाज के समाजवादी टाज की स्थापना होनी चाहिए, यह बात संसद सरकार और आयोजना द्वारा स्वीकृत की जा चुकी है। राज्य को धपने ऊपर मारी उत्तरदायित्व मने होंगे यथाकि राज्य ही समस्त समाज के मुख्य प्रतिनिधि के रूप में काय करता है। सार्वजनिक धन का विस्तार तीव्र गति से होना चाहिए। किसी धन को भी धपना कार्य समाज द्वारा धपनाई गई आयोजना के धेय में ही चकुर करना होगा। राज्य को उन सेवा में भी महत्वपूर्ण कार्य करना होगा जहाँ निजी उद्यम सरकारी सहायता के बिना धगति नहीं कर सकता। धायिक बसमानता में विस्तार कभी हानी चाहिए तथा पन सम्पत्ति और धायिक धधिकारों के एकत्रीकरण में भी कमी करनी चाहिए। राज्य का धनीय धममानशास को दूर करने का प्रयत्न भी करना चाहिए।

३० धर्षेय १९३६ का धीछोगिक नीति प्रस्ताव इन्ही बातों पर धायारित है। इसमें उद्योगों को तीन धेलियों में विभाजित किया गया है। प्रथम धगरी में वह उद्योग धाते हैं जिनके लिए राज्य का पूर्णतः उत्तरदायित्व है, यद्यपि राष्ट्रीय हित के लिए धायिक होने पर निजी उद्यम का सहयोग भी किया जा सकता है।

बेरोजगारी उत्पन्न हो जाती है। कई बार यह देखा गया है कि इन्फ्लू होते हुए भी एक व्यक्ति अपनी सारीरिक विद्वृति, दुर्बल मानसिक अवस्था, किसी दुर्घटना कोषपूर्व सिद्धा एवं प्रचिखण आदि के कारण कार्य नहीं कर पाता। तथापि यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि इन कारणों को पूर्णतया व्यक्तिगत कह देने का तात्पर्य यह हो जाता है कि इन कारणों का उत्तरदायित्व हम ऐसी परिस्थितियों पर बाल बैठे हैं जो इसके लिए उत्तरदायी नहीं हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अनेक सारीरिक कमियाँ प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से फौजदारी प्रणाली के कारण ही उत्पन्न होती हैं। यदि यह कारण मानसिक से सम्बन्धित है तो इन कमियों का उत्तरदायित्व मानसिक का ही होगा चाहिए अथवा यदि कारण कम विकसित प्रकार का है तो इनका उत्तर दायित्व राज्य पर होना चाहिए।

इसके अतिरिक्त बेरोजगारी के बाह्य कारण भी हैं जिन्हें प्राथमिक कारण कहा जा सकता है। इनमें से प्रथम कारण सामयिक उतार चढ़ाव (Cyclical Fluctuations) है। यह देखा गया है कि समृद्धि तथा मंदी के काल सपन्न नियमित रूप से कुछ सम्बन्धित पर एक दूसरे के पर्याय आते हैं तथा इस चक्र में इस विरवाह को अन्त दे दिया है कि प्राथमिक व्यवस्था में कुछ ऐसे अन्तर्निहित दोष हैं जो व्यापार में अन्त उत्पन्न कर देते हैं। मंदी के काल में व्यवसाय में कमी आ जाती है तथा बेरोजगारी बढ़ जाती है। समृद्धि और मंदी कालों के विभिन्न कारण हैं जिन्हें व्यापार चक्रों के सिद्धान्तों द्वारा समझना गया है। यह एक पुराना विषय है। द्वितीय कारण मौसमिक परिवर्तन है, अर्थात् माँग में परिवर्तन के कारण अथवा मनीषा लोगों या तकनीकी प्रवृत्ति के कारण उत्पादन प्रणालियों में परिवर्तन हो जाता है, अर्थात् विवेकीकरण योजनाएँ लागू करने के कारण बेरोजगारी उत्पन्न हो जाती है। तृतीय कारण यह है कि कुछ प्राथमिक क्रियाएँ धारणशील या मौसमी होती हैं जिनके कारण अपूर्ण रोजगार ही मिल पाता है। अर्थात्, एक व्यक्ति बनाते बाने तथा बेटी में कार्य करते बाने अमिक वर्ष घर पूर्णतया रोजगार नहीं पाते। इसके अतिरिक्त नैमित्तिक अमिक प्रणाली से यह स्पष्ट है कि कुछ कार्यों के लिए अस्थायी रूप से अमिक बाने लिए जाते हैं। ऐसे व्यक्ति सभी रोजगार पाते हैं जब व्यापार तीव्र होता है अथवा अन्य काल में वह बेरोजगार ही रहते हैं। यह भी उल्लेख किया जा सकता है कि मदा-रुपा अमिक संघ मानिकों को अमिकों की सीमांत उत्पादकता से अमिक मजदूरी देने को विवध करके बेरोजगारी उत्पन्न कर देते हैं क्योंकि इस कारण कभी न कभी मानिक अमिक की माँग बढ़ा देते हैं।

उक्त प्रकार प्रत्येक क्षेत्र में बेरोजगारी के अनेक कारण होते हैं। मुख्य कारण तो प्राथमिक तथा सामाजिक ही हैं। बेरोजगारी जब तक अन्त नहीं आती जब तक अन्तर्गत वा अन्तर्गत साम प्राप्त करना होगा तथा अन्तर्गत अन्तर्गत है लिए पर्याप्त मात्रा में पैंग के साधनों को विवधित नहीं कर पाती।

बेरोजगारी के प्रभाव—

बेरोजगारी के दुष्परिणाम इतने स्पष्ट हैं कि उनके विस्तार में बरतन करने की आवश्यकता नहीं है। बेरोजगारी का मय ही अधिक की प्रसन्नता तथा कार्य कुशलता पर कुछ प्रभाव डालता है। वास्तविक बेरोजगारी सम्भवतः इतनी ही विपत्तियाँ उत्पन्न कर देती है जितनी अस्वास्थ्य तथा रोग से उत्पन्न होती हैं। बेरोजगारी का अस्वास्थ्य प्रभाव स्पष्ट रूप से यह होता है कि अधिक की धाम कम हो जाती है। अधिक के पास यदि कुछ बचत होनी भी है तो वह साधारणतः इतनी उपभोग्य होती है कि उससे बहुत दिनों तक परिवार का गुजारा नहीं चल सकता। परिणामस्वरूप जीवन-स्तर गिर जाता है और भोजन वस्त्र आदि में प्रभाव उत्पन्न हो जाता है तथा प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित व्यक्ति पर ही नहीं बल्कि उसके समस्त परिवार पर संकट आ जाता है। यदि बेरोजगारी बसती रहे तो इससे स्थायी रूप से स्वास्थ्य को हानि पहुँचती है तथा नैतिक बन्धनों में स्थायी रूप से ढील आ जाती है। जब जीवन-स्तर गिर जाता है तो पीछे ही अधिक की कार्य-कुशलता पर प्रभाव पड़ता है और अधिक पुनः रोजगार में लगने के पदचात् भी यह अनुभव करता है कि उसकी तकनीकी कुशलता कम हो गई है जिससे उसकी पनापानन की शक्ति घट गई है। परिणामस्वरूप उस इस बात के लिए विषय होना पड़ता है कि जो भी अनुगत कार्य उसे मिले वह ही करे। इस प्रकार कमी-कमी अपना पूर्व का कुशल कार्य अधिक उदा के लिए खो बैठता है।

इसके अतिरिक्त सामाजिक दृष्टिकोण से भी बेरोजगारी बहुत अनाशुचि है। इस रूप में कोई संशय नहीं है कि "सामाजिक मूल्य में अस्थिरता तथा नीचता की कार्यवाही बन जाती है।" अनेक बेरोजगार व्यक्तियों को भीतर माँगने की आशंका पड़ जाती है। बेरोजगारी व्यक्ति के धर्म तथा उत्तरदायित्व की भावना को मरुत कर देती है। अविद्यमान रूप रोजगार के समय सबसे अधिक होता है। अतिरिक्त विचार बेरोजगार व्यक्ति के अस्थिरता में बहुत अस्वीकार्य आ जाते हैं। समाज में कोई व्यक्ति अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों को ठीकी पूरा कर सकता है जब वह सामाजिक रोजगार कर लगा हुआ हो। जीविकोपार्जन करने जाने को यदि रोजगार का आभाव है तो वह अपने परिवार में भी अस्थिरता बना रहता है तथा वह सामाजिक उत्तरदायित्वों को निभाते योग्य भी बन जाता है। रोजगार के अभाव में अनेक सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं। इस प्रकार रोजगार के अभाव में जो हानि होती है वह मजदूरी के रूप में ही हानि नहीं होती बल्कि उतने बड़ी अतिरिक्त होती है। बेरोजगारी से जन आत्मिक शक्तियों का हानि होता है जिसे कुछ से नहीं लाया जा सकता। कोई भी व्यक्ति शक्तिता हा कार्य कुशल क्यों न हो अतिरिक्त समय बेरोजगार रहने पर अपना ही उदा की कुशलता में कमी आ जायेगी। उनके हाथों से पूर्व प्रकार का कुशल कार्य नहीं हो सकेगा और उतने आत्मिक की शक्ति पड़ जायेगी। यह प्रकृति बेरोजगार व्यक्ति को रोजगार के अभाव बना देती है।

कर्म की शोध वास्तविक कार्य से अधिक बकाये वाली होती है। इसके परिष्कृत बेरोजगारी से उत्पन्न निम्न जीवन-स्तर के कारण अपमान्य जीवन से माता तथा बालकों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। अधिकतर माता को रोजगार पाने के लिए त्रिभङ्गना पड़ता है जिसके परिणामस्वरूप पड़ोसी में विषम पड़ जाता है। यदि माता को स्थानीय काम मिल भी जाता है तो वेतन भी पर बहुत कम होती है। परिणाम स्वरूप पंक्तिद्वयों के श्रमिकों की मजदूरी भी गिर जाती है। बालकों को विद्यालय से उठाना पड़ता है और अधिकतर इन बालकों को ऐसे रोजगार में समाना पड़ता है जिनमें श्रमिक में उन्नति की कोई सम्भावना नहीं होती।

ऊपर मिली बातों का प्रभाव एक साथ पड़ता है और यदि श्रमिकों को मिल भी जाते हैं तब भी जो हानि हो चुकी होती है उसकी पूर्ति कभी नहीं हो पाती। श्रमिकों की कार्य-कुशलता में स्थायी रूप से कमी आ जाती है तथा उसका परिणाम भी बहुत अधिक गिर जाता है। माता का स्वास्थ्य इतना गिर जाता है कि अपने बालों संतानों पर इसका बुरा प्रभाव पड़ना है। बालक बड़े होने पर उचित प्रकार से अपना जीवन-निर्वाह करने के योग्य नहीं रह जाते क्योंकि उन्हें उचित शिक्षा नहीं मिल पाती। इस प्रकार बेरोजगारी के ही शारीरिक सामाजिक तथा नैतिक प्रभाव होते हैं वह धारम में भी और धर्म में भी बहुत गम्भीर होते हैं। यद्यपि देश में बेरोजगारी होने से राष्ट्रीय सामाज्य तथा समाज कल्याण दोनों को ही हानि पहुंचती है।

बेरोजगारी का उपचार—

बेरोजगारी के उपचार के लिए यह सुझाव दिया जाता है कि धर्म की भाँव तथा पूर्ति में समुचित धर्म, श्रमिकों को अधिक नियमित प्रकार का कार्य दिमाने, तथा नैतिकता मम की बुराइयों को कम करने के लिए रोजगार बंधनों की स्थापना करनी चाहिए। व्यापार बंधनों के कारण उत्पन्न बेरोजगारी—मर्यादा मन्त्री के काम में उन्नत बेरोजगारी को राजकीय कार्यवाहियों द्वारा कम किया जा सकता है। मन्त्री से उचित समस्त व्यवसायों में कार्य के बंधनों को कम करके श्रमिकों को समय की परिधा बचाकर श्रम की भाँव बढ़ाई जा सकती है। श्रमिकों की भाँव-शारीरिक इमारतों, रेली सड़कों गल्लों आदि का निर्माण जैसे शारीरिक कार्यों को करके भी बढ़ादी जा सकती है। यह कार्य न केवल इनमें लगे हुए श्रमिकों को रोजगार देते हैं बल्कि इनमें लगे हुए श्रमिकों में विभिन्न वस्तुओं की भाँव उत्पन्न करके इन वस्तुओं के निजी उत्पादन को भी उत्साहित करते हैं। किन्तु इन समय कार्य को साधनी से प्रायोजित करना चाहिए जिससे जिससे संस्थाओं जैसे राष्ट्रीय रोजगार तथा विकास बोर्ड, स्थापित हो सकें जिनके हाथ ऐसे शारीरिक व्यवसाय को ठीक प्रकार से किया जा सके जो श्रम मन्त्री के प्रभाव दूर करने के लिये किया जाता है। सरकार को भी ठीक के व्यापार कास में ऐसी शारीरिक प्रयोजनार्थ नहीं आसू करनी चाहिये जिन्हें स्वयंभू किया जा सकता है या जिन्हें निजी

उद्योगपतियों को दिया जा सकता है। इसके प्रतिरिक्त मौसमी तथा घन्टहासीन बेरोजगारी विभिन्न व्यापारों का समियण करके हल की जा सकती है जिससे पूर्ण वर्ष रोजगार मिलता रहे। रोजगार के प्रयोग्य व्यक्तियों में से उनका राज्य द्वारा उपचार होना चाहिये जो शारीरिक रूप से प्रयोग्य हैं किन्तु ठीक हो सकते हैं। या सामाजिक पराधर्यी हैं उनके सुधार का भी प्रबन्ध किया जाना चाहिये। बेरोजगारी के काम में कष्टों को कम करने के लिये बेरोजगारी बीमा योजनाया का लागू किया जाना चाहिये। इनका विवेचन सामाजिक सुरक्षा के अन्तर्गत किया जा चुका है।

भारत में बेरोजगारी तथा उसके विभिन्न प्रकार—

भारत जैसे देश में बेरोजगारी के दुष्परिणाम पूर्णतया असहनीय हो जाते हैं। बेरोजगारी देश के लिये बहुत महानो पड़ती है। ऐसा देश जो खनिज वृषि तथा पशु के साधनों में धनी माना जाता है परन्तु खनिज साधनों का धनी तर पूर्ण साध नहीं उठाया गया है तथा जिसमें निम्न-ह मानव शक्ति का प्रमाय नहीं है उस देश में बेरोजगारी होने का धर्म यह होता है कि सम्भाव्य (Potential) राष्ट्रीय धन की बहुत हानि हो रही है।

भारत में साधारण समय में भी समस्त वर्गों में बेरोजगारी व्यापक बन ही पायी जाती है। विविध वर्ग में परिचित वर्ग में औद्योगिक श्रमिकों में तथा पेशी हलों में बेरोजगारी की बिबट समस्या है। देश में प्रचुर रोजगार भी बहुत अधिक है। ऐसा कि पंडित नेहरू ने संसद में प्रथम पञ्चवर्षीय योजना पर बाद-बिनाद के समय बताया था भारत में दो प्रकार के बेरोजगार व्यक्ति हैं—एक अनेसाहत कम संख्या वाले वर्ग के व्यक्ति हैं और एक बड़ी संख्या वाले वर्ग के। कम संख्या वाला वर्ग जो उन व्यक्तियों का है जो बिल्कुल परिधम नहीं करते और न कोई उत्पादक प्रयत्न करते हैं बल्कि दूसरों के धन पर जीवित एना चाहते हैं। इनकी धन किराय के रूप में या अन्य किसी प्रकार की हाठी है। ये व्यक्ति अनुत्पादक तथा बेरोजगार होते हैं। ये ऐसे व्यक्ति हैं जो समाज के उच्च तितर पर प्राचीन हैं। इन्हें काय करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि अन्य व्यक्ति इनके लिये पहिले ये ही या अन्य किसी समय धन उपार्जन कर चुके थे। यह उच्च स्तर पर बेरोजगार व्यक्ति होते हैं। ये न ही कार्य करते हैं न ही उत्पादन करते हैं बल्कि सम्भवतः दूसरों से अधिक उपभोग करते हैं। यह वे समाज पर भार हैं। इनकी प्रकार की बेरोजगारी दो शक्तियों में विभाजित हो जा सकती है। बेरोजगारों में से कुछ व्यक्ति प्राणमी होते हैं क्योंकि हमारे देश में सामन्तता को दान देने का व्यक्तियों द्वारा बड़ाया दिया जाता है। ऐसे प्राणमी व्यक्तियों की संख्या कई लाख भी हो सकती है किन्तु यह भी ऐसे व्यक्ति अनेसाहत कम हैं। हमने परभाव वास्तविक बेरोजगार माने हैं अर्थात् वे व्यक्ति जो यदि सरकार द्वारा दाने को कार्य कर सकते हैं, किन्तु बिनाको सरला से ऐसा करन नहीं मिल पाता। देश में ऐसे व्यक्तियों की ही बेरोजगारी की वास्तविक समस्या है।

देश में खेतीहर बेरोजगारी तथा अपूर्ण बेरोजगारी पामी जाती है। भूमि पर अधिक जनसंख्या का दबाव उपाय उद्योगों की कमी तथा खेतीहर कार्यों की मौसमी प्रकृति इस प्रकार की बेरोजगारी के कारण है। कृषि प्रत्येक ऋतुओं से परिपूर्ण है तथा इस पर निर्भर रहने वाले लाखों भारतीयों को इसके पूर्ण रोजगार नहीं मिलता। यद्यपि इस प्रकार की बेरोजगारी के सही प्राक्कृत्य प्राप्त नहीं है किन्तु इसकी सीमा इसी बात से ज्ञात हो जाती है कि भारतीय कृषक का अपूर्ण रोजगार के कारण जीवन-स्तर बहुत निरा हुआ है, तथा अधिक संख्या में भूमिहीन श्रमिक पाये जाते हैं।

इसके प्रतिरिक्त देश में औद्योगिक बेरोजगारी भी है क्योंकि औद्योगिक विकास की गति बहुत धीमी रही है। उद्योगों का स्थानीयकरण भी अपूर्ण है जिसके कारण कुछ केन्द्रों में बहुत उद्योग स्थापित हो गये हैं तथा बहुत भीड़ भाड़ हो गई है। परियामसम्बन्ध श्रमिकों को खपाने की क्षमता कम हो गई है। हमारे उद्योगों में उत्पादन की लागत भी काफी ऊँची है और वे उचित प्रकार से विक्रित नहीं हो पाते हैं। कुछ उद्योगों में बिजलीकरण योजनाओं ने भी श्रमिकों को रोजगार विहीन कर दिया है।

घिसित वर्गों में भी बेरोजगारी पामी जाती है। इसका कारण भी स्पष्ट है। हमारी शिक्षा प्रणाली बहुत अधिक साहित्यिक है तथा हमारे स्नातक कसकौं अथवा साहित्यिक कार्यों के प्रतिरिक्त अन्य कार्यों के लिये उपयुक्त नहीं रहते। स्नातकों की बढ़ती संख्या को सीमित कार्यों में खपाना सम्भव नहीं है अतः घिसित वर्गों में भी व्यापक रूप से बेरोजगारी फैली हुई है।

समस्त प्रकार की बेरोजगारी का मूल कारण देश का आर्थिक पिछड़ापन है। आर्थिक-क्रियायें बढ़ती जनसंख्या के साथ गति नहीं रख सकी हैं। समस्त प्रकार के रोजगार-सोध्य श्रमिकों की संख्या प्राप्त रोजगार की मात्रा से कहीं अधिक है। इसका कारण यह है कि देश के उत्पादक छात्रों का पूर्णतया तथा उचित रूप से उपयोग नहीं किया गया है। हमारी अर्ध-अनसुखा की अर्धवृत्तित प्रकृति ही बेरोजगारी का मुख्य कारण है। आयोजना आयोज्य बेरोजगारी के लिये निम्नलिखित बातों को मुख्य-उत्तरदायी मानता है (क) जनसंख्या में तीव्र वृद्धि (ख) पुरातन ग्रामीण उद्योगों का विनीन होना (ग) गैर-खेतीहर क्षेत्र का अपर्याप्त विकास, (घ) विभाजन के कारण जनसंख्या का अधिक संख्या में विस्थापन।

भारत में बेरोजगारी की सीमा —

ऊपर लिखित बातों से यह परिणाम निकसता है कि देश में बेरोजगार लोगों की संख्या बहुत अधिक है। मुद्र-काल में बेरोजगारी की समस्या दूर हो गई थी। क्योंकि मुद्र के सफलतापूर्वक संघातन के लिये सरकार ने बहुत अधिक संख्या में श्रमिकों को नौकरी पर लगाया था। परन्तु मुद्र समाप्त होने के पश्चात् लाखों श्रमिक बेरोजगार हो गए और जनकी पान्तिवासीय अर्ध-अनसुखा में

प्रभावियों की मिसा कर कुस कार्य दिवसों में से ३०% से अधिक दिन बेरोजगार रहते हैं या इनका रोजगार अपूर्ण रहता है। उपसम्भ मार्कों के आधार पर प्रायोजना प्रायोग ने अनुमान लगाया था कि १९३६ के प्रारम्भ में देश में बेरोजगारों की संख्या लगभग २३ लाख थी। उनमें से २२ लाख घरेली क्षेत्रों में तथा २८ लाख ग्रामीण क्षेत्रों में थे।

द्वितीय पंचवर्षीय प्रायोजना प्रवधि में जितने रोजगार के अवसर उपलब्ध हुए वे प्रत्येक वर्ष धन व्यय में वृद्धि के अनुपात से बहुत कम थे। यह कमी लगभग २० लाख थी थी। द्वितीय प्रायोजना प्रवधि में धनिक शक्ति में अनुमानित वृद्धि से कहीं अधिक वृद्धि हुई थीर यह अधिक वृद्धि १७ लाख थी थी। तीसरी प्रायोजना के प्रारम्भ होने पर पिछली बेरोजगारी का अनुमान २० लाख का है। इसके प्रतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यमान बहुत अधिक अपूर्ण रोजगार है। मई १९३३ धोर अगस्त १९३७ के मध्य राष्ट्रीय सेमिनस सर्वेक्षण द्वारा अनुसंधान से यह पता चलता है कि काम पर लगी हुई जनसंख्या में से घरेली क्षेत्रों में ८ से ९% तक तथा ग्रामीण क्षेत्रों में १० से ११ प्रतिशत तक जनसंख्या प्रति छात्राह घीसत रूप से ४२ बच्चे कार्य करती थी थीर यह प्रतिरिक्त रोजगार के लिए उपसम्भ थी। इस आधार पर प्रायोजना प्रायोग ने अनुमान लगाया है कि देश में बेरोजगारों की संख्या १५ करोड़ से १८ करोड़ तक है।

धन व रोजगार योजना के अन्तगत ही रोजगार बचतों के निर्धारण का धन शक्ति विभाग है उसके द्वारा १५ मई १९३७ को स्नातकों में बेरोजगारी के स्वरूप का एक अध्ययन किया गया था। इसके अनुसार धन राश्यों की अपेक्षा परिवर्धनी बंधास उत्तर-प्रवेश बन्दई व बेहूसी में बेरोजगार स्नातकों की संख्या अधिक थी। बेरोजगार महिला स्नातकों की सबसे अधिक संख्या केरल में थी। रोजगार के दृष्टिक्रम बेरोजगारों में ९३% संख्या पुरुषों की थी तथा ७% संख्या महिलाओं की थी। ४८ ३% कला स्नातक २२ ७% विज्ञान स्नातक तथा १२ ८% वाणिज्य स्नातक थे। कला व विज्ञान के स्नातकों की अपेक्षा वाणिज्य स्नातकों में बेरोजगारी अधिक थी।

राष्ट्रीय रोजगार सेवा द्वारा १९३३-३७ में रोजगार पाने वाले व्यक्तियों की संख्या धीर प्रकार का एक अध्ययन किया गया था। इससे पता चलता है कि देश में बेरोजगारी तीव्रवृत्ति से बढ़ रही है थीर नई नौकरियों की संख्या बढ़ती हुई बेरोजगारी से घट नहीं ला पा रही है। अध्ययन से यह पता चलता है कि इस प्रवधि में प्रति १०० नौकरियों के लिए प्रायियों की संख्या २००० थी थीर अधिक थी। अध्ययन के लिए चानू रजिस्ट्रारों में प्रायियों की ७ व्यवसायिक श्रेणियों में बांटा गया था। दिसम्बर १९३८ में इनकी संख्या अत्र तालिका में बताई गई है —

विभिन्न प्रकार की नौकरियों के शर्षी	संख्या	योग का प्रतिशत
औद्योगिक पर्यवेक्षण की नौकरियाँ	८ ६२३	०.८
कुशल एवं अर्द्ध-कुशल नौकरियाँ	८८ ६ ५	७.५
क्लर्की की नौकरियाँ	३०८ २०३	२६.१
वैयक्तिक नौकरियाँ	५६ १५०	४.८
परिशु नौकरियाँ	४३ ८२५	३.७
अकुशल बाप की नौकरियाँ	६२० ५४६	५.७
अन्य	५७,२६६	४.८
योग	११ ८३ २६६	१००.०

इस प्रकार अकुशल नौकरियों की संख्या में बहुत अधिक व्यक्ति थे। इनके बाद बरोजगारों में क्लर्कों की संख्या आती है। अन्वयन से यह भी पता चला कि औद्योगिक पर्यवेक्षण की नौकरियों की संख्या में बरोजगारों की संख्या सीमित थी और इस संख्या में शर्षियों की संख्या से बरोजगार भी कम आता था। कुशल एवं अर्द्ध-कुशल संख्या में तकनीकी व्यक्तियों का अनेकानेक अधिक संस्तुता से कार्य मिल जाता था तथा इस संख्या में शर्षियों की संख्या भी अनुभव की गई थी। अन्वयन काय और इसी प्रकार के अन्य व्यक्तियों में नौकरी पाने कास इतना व्यक्तियों की संख्या में सीमित से बृद्धि हुई थी। परेशु नौकरी पाने वालों की संख्या में शर्षी निजी व्यक्तियों की नौकरी की अनेक संस्तुता आदि जैसे सांस्कृतिक संस्थाओं में नौकरी करना अधिक पसन्द करते थे। अकुशल व क्लर्कों की संख्या में बरोजगारों की संख्या में निरन्तर बृद्धि हुई है। वैयक्तिक वर्ग की भी नौकरी मिलने में सबसे अधिक बृद्धि हुई और इसके पश्चात् क्लर्क-वर्ग आता था। इस अर्थ में ऐसे शर्षियों की संख्या जो शिगा के कार में नौकरी पाना चाहते थे इनमें से भी अधिक हो गई थी।

दिसम्बर १९६१ के अन्त में बरोजगार वर्गों के आन्वयन न जो शर्षियों की संख्या की उन्नति करने के हिसाब से शिगरा निम्नलिखित तालिका में दिया गया है—

(१)	संख्या (१,००० में)	कुल संख्या का प्रतिशत (३)
(१) वेतन तकनीकी तथा सम्बन्ध अधिक	८०	४.४
(२) अन्वयनीय कार्यालय तथा प्रशासकीय अधिक	४	०.३
(३) क्लर्की विभाग तथा सम्बन्ध अधिक	८६	४.६
(४) शर्षी कुशल तथा सम्बन्ध अधिक	१०	०.५
(५) शर्षी अकुशल की शर्षी तथा सम्बन्ध अधिक	६	०.३

(१)	(२)	(३)
(६) यातायात व संचार पन्नों में धमिक	३३	१६
(७) सिव्ही तथा उत्पादन प्रक्रिया क धमिक	१३४	७३
(८) सेवा कर्मचारी (उदाहरणतः बाकशी चौकीदार, मंजी धाकि)	७३	४०
(९) कार्य धनुमक एसे धमिक जिनका धम्य कोई नहीं करण नहीं है।	१०८	३६
(१०) एसे धमिक जिनका किसी पेणे या धम्यधाय में प्रविष्टण नहीं है मन्का एसे धमिक जिन्हें कोई विस्तार कार्य धनुमक नहीं है।	१२६३	७०१
योग	१८३३	१०००

रोजगार दस्तवों के नामू रजिस्ट्रों में लिखित बेरोजगारों (इसै स्कूल तथा उससे ऊपर के धमिक) की संख्या दिसम्बर १९३६ में ४३३,१११ से बढ़कर दिसम्बर १९६० में ५,०७,२२० हो गई थी। इनमें से ४६,३८४ स्नातक थे। रोजगार पाने के लिए इच्छुक स्त्रियों की संख्या में भी वृद्धि होती जा रही है। रोजगार दस्तवों में पंजीकृत महिला प्राधियों की संख्या दिसम्बर १९३८ में ८५,८८० से बढ़कर १,२१,१२४ दिसम्बर १९६६ में १,०५,८४२ हो गई थी और दिसम्बर १९६० में यह संख्या १,२१,१२४ थी।

रोजगार तथा प्रविष्टण के महा-निदेशक ने नमूने के आधार पर हाल ही में एक प्रकृत नारतीय स्नातक रोजगार सर्वेक्षण किया है। इस सर्वेक्षण का उद्देश्य इन स्नातकों के रोजगार व धाय धावि के विषय में जानकारी प्राप्त करना है जिन्होंने १९३४ में विश्वविद्यालयों से डिग्रियां प्राप्त की थी। (२२ ५०० स्नातकों की सूची में से २० हजार स्नातकों के पते प्राप्त हो सके थे और उन्हें प्रस्तावनी भेजी गई थी। ७ हजार स्नातकों के उत्तर प्राप्त हुए) जो सूचना मिसी उठे धारिणीकृत किया जा रहा है। बेहती विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों को वहां धीर किस प्रकार का रोजगार मिसा है उसका भी एक सर्वेक्षण हाल में किया गया है। विभिन्न राज्यों में रोजगार की प्रकृति धीर संधाननाओं पर एक धम्यधयन किया जा रहा है।

बेरोजगारी के धायधिक तथा राजनीतिक दोषों पर प्रभाव पड़ा है। बेरोजगारी बढ़ने से निर्यतता तथा धम्यधायता उत्पन्न हो जाती है जिनका प्रभाव पूर्ण समाज पर पड़ा है, तथा धायधिक जीवन में गिरावट धा जाती है। इसके परिणामस्वरूप धम्यधाय पन्नी तथा रोग जैसे बुराईयां उत्पन्न हो जाती हैं, जिनकी रकन धाय धम्यधाय नहीं कर सकता है। इसके अतिरिक्त बेरोजगारी देश की राजनीतिक स्थिरता की दृष्टि में पुन सगा देती है। भारतीय राजनीतिक तथा धायधिक परिवर्धन के बतमान संदर्भ में बेरोजगारी तथा इसके दुष्परिणाम की धम्यधयना नहीं की जा सकती। यह धायधाय प्रक ही नहीं है वरन् ऐसा प्रक है जिस पर सरकार

तथा बनता हीनों को ही सम्मीरणापूर्वक ध्यान देना चाहिए। प्रो० बी पी घादकर ने मणुना की है कि कार्य कुशलता के वर्तमान स्तर पर भारत में बेरोजगारी तथा अपूर्ण बेरोजगारी के कारण वार्षिक हानि एक हजार करोड़ रु० प्रति वर्ष से अधिक होती है। यह राशि समस्त प्रद्वैतीय सरकारों तथा भारत सरकार के सम्मिलित बजट से भी अधिक है। परन्तु बहुत कम व्यक्ति इस बात का अनुभव करते हैं कि प्रतिवर्ष देश में इतनी विनाश रूप से हानि हो रही है। हानि का अनुभव इसलिए नहीं होता क्योंकि मुद्रास्फोट हानि नहीं होती बरन् सम्मान्य धन की हानि होती है। किन्तु धन में केवल मुद्रा ही नहीं बरन् वस्तुयें तथा वास्तविक सेवायें भी सम्मिलित की जाती हैं।

भारत में बेरोजगारी का उपचार —

यद्यपि बेरोजगारी के उपचारों पर विचार किया जाना आवश्यक है। इस विषय में रोजगार बफ़्टर बहुत अधिक सहायक हो सकते हैं। प्रथम तो यदि रोजगार बफ़्टर मासिकों तथा कर्मचारियों में निकट सम्पर्क उत्पन्न करने के लिए कुशलता पूर्वक कार्य करें तो मासिकों तथा कर्मचारियों का कार्य सरल हो जाता है तथा रोजगार दिखाने की सामाजिक व्यवस्था उचित प्रकार से कार्य कर सक्ती है। रोजगार बफ़्टर देश में सामाजिक एवं धार्मिक व्यवस्थाओं के अनुसन्धान का प्रथम भी प्रदान करते हैं तथा यह यह संकेत कर सकते हैं कि बेरोजगारी में कितनी वृद्धि हो रही है और इस प्रकार सरकार को अपनी नीति निर्धारित करने तथा कार्यक्रम बनाने का प्रथम प्रदान करके धार्मिक विनाश से देश की रक्षा करते हैं। वे दफ़्तर धर्मियों को प्रवृत्त प्रदान कर सकते हैं तथा धर्मियों की गतिशीलता बढ़ा सकते हैं। भारत की राष्ट्रीय रोजगार सेवा ने कुछ उत्तम प्रकार के कार्य किये हैं परन्तु फिर भी इस संघटन में सुधार तथा इसके कार्यों में विस्तार करने की बहुत धर्म आवश्यकता है। इस समस्या का भर्ती के सम्पादन के अन्तर्गत विवेचन किया जा चुका है।

विभिन्न प्रकार की बेरोजगारी के हेतु विभिन्न उपचारों का अनुभव देना आवश्यक है यद्यपि ये धर्मों में पूर्णतया एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। छोटी-छोटी बेरोजगारी की समस्या सुलझाने के लिए स्पष्ट उपचार यह है कि भारतीय धर्म का पूर्णसंघटन किया जाय धर्मों के उत्तम भूमि धर्म पूजा एवं संगठन हो तथा भूमि धर्म जनसंख्या का श्वाभ काम करने के लिए कुटीर एवं समु ज्दोग धर्मों को स्थापित किया जाय। भूमि का पुनर्जागरण युवाओं के उत्तम उपयोग भूमि सम्बन्धी सुधार विचारों सुविचारों सहकारी लेनी भूमि का पुनर् विस्तार यदि कुछ ऐसे उपाय हैं जो इस समस्या को हल करने में सहायक हो सकते हैं।

धार्मिक बेरोजगारी का उपचार धार्मिक कुशलता में वृद्धि तथा धार्मिक धर्मों का पुनर्जागरण करने हो सकता है। यह समस्या पूजा निर्माण-व्यय तथा विवेक से सम्बन्धित है। संवर्धनीय धार्मिकताओं के अन्तर्गत धार्मिक विद्य के विभाग

कार्यकर्मी से औद्योगिक बेरोजगारी कम होने की प्राप्ति की जा सकती है किन्तु कुछ तकनीकी उपचारों की भी आवश्यकता है और इसके लिए हमें उपयुक्त सम्बन्धी वस्तुओं के उद्योगों का विकेन्द्रीकरण करना चाहिए तथा छोटे बसाने के शारील एवं कुटीर उद्योगों के पुनर्संरचना की साहसपूर्व नीति का अनुसरण करना चाहिए। इसी प्रकार निर्बलता से ग्रस्त माद्यों व्यक्तियों की रोजगार प्रदान किया जा सकता है। यह ध्यान में रखने योग्य बात है कि औद्योगिक क्षेत्रों में श्रमिकों की एक बड़ी संख्या शारील शोर्षों से घाटी है। अतः यदि ग्राम में रोजगार प्रदान कर दिया जाय तो औद्योगिक बेरोजगारी का स्वतः समाधान हो जाएगा।

लिखित बेरोजगारी का हल शिक्षा प्रणाली के पुनर्संरचना से हो सकता है। इसके लिए तकनीकी तथा व्यवसायिक अध्ययन पर अधिक बल देना चाहिए तथा मध्यवर्गीय युवकों को वासिण्य एवं कृषि सम्बन्धी रोजगार प्रहण करने के लिए उत्साहित करना चाहिए। अतः यह समस्या भी कृषि तथा उद्योगों के विकास से सम्बन्धित है क्योंकि जब तक रोजगार के स्रोत नहीं होंगे किसी भी प्रकार की शिक्षा से समस्या हल नहीं हो सकेगी। विरवनिद्यालयों तथा कानिनों के छात्रों में से अधिकतर छात्र शारील परिवारों से सम्बन्धित हैं। अतः हमें विस्थापित है कि यदि कृषि को प्राकर्यक तथा सामप्रद व्यवसाय बना दिया जाय तो उच्च साहित्यिक शिक्षा की उत्कर्ष तथा इच्छा स्वतः कम हो जाएगी। इसके अतिरिक्त हमारे देश की जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि हो रही है तथा यह अनुमान लगाया गया है कि प्रतिवर्ष २० लाख श्रम शक्ति में वृद्धि हो जाती है। परिवार नियोजन के द्वारा जन-संख्या की वृद्धि में रोक होनी चाहिए क्योंकि जब तक देश में व्यक्तियों की संख्या तथा देश में उपलब्ध साधनों में उचित सामंजस्य नहीं होया तथा धार्मिक विकास की गति जनसंख्या की वृद्धि की गति से नहीं बढ़ पायी तब तक बेरोजगारी की समस्या का समाधान नहीं हो सकता। अतः इस कुपई को दूर करने के हेतु हमारे सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्रों में संस्कारमक परिवर्तन की आवश्यकता है।

अतः बेरोजगारी की समस्या का दीर्घकालीन दृष्टिकोण से समासोकन होना चाहिए। बेरोजगारी का अनुक्रम उपचार धार्मिक आयोजना है। आयोजना ही हमें हम योग्य बना सकती है कि देश के वर्तमान बेकार मानवीय तथा प्राकृतिक साधनों को पन के उत्पादन में लगा सके। उचित धार्मिक आयोजना के द्वारा ही यह सम्भव है कि बेटी, उद्योग शिक्षा प्रणाली धारि में मुबार किए जा सकें तथा साधनों को उचित रूप से विकसित किया जा सके। बेरोजगारी की समस्या आयोजित धार्मिक प्रणाली के अन्तर्गत हल होनी चाहिए। इस में तथा धर्मोका जैसे पूजीपति देश में भी किए गए प्रयोगों से ज्ञान होता है कि ऐसा करना सम्भव है। यदि हम देश में बेरोजगारी की समस्या हल करना चाहते हैं तो सधु शारील एवं कुटीर उद्योगों के संरचना द्वारा श्रम प्रदान उपायों पर आयोजनाओं में अधिक बल दिया जाना चाहिए।

सम समस्यार्प एवं समान कम्पास

(३) उद्योग एवं खनिज	
(१) कुटीर एवं लघु उद्योग	
(७) जन मजदूरी व्यवस्थापन, राष्ट्रीय विस्तार सेवा व सम्बन्धित कार्यक्रम	७२०
(८) शिक्षा	४२०
(९) स्वास्थ्य	४११
(१०) अन्य समान सेवाएँ	३१०
(११) सरकारी नीकरियाँ	११६
	१२२
	४१४

(१२) अन्य कार्य जिनमें व्यापार और बाणिज्य भी सम्मिलित हैं (१) से (११) तक का योग भी सम्मिलित है (योग का ३२% के हिसाब से)

३१९९
२७०४
७९०१
८०००

कुल योग
वर्षात् समस्त

सब १२ में जो अनुपात दिया गया है वह अनुपात १९६१ की जनगणना के अनुसार ही निकाला गया है। इस वर्ष के व्यक्तियों का रूप को छोड़कर, अन्य सब वर्गों के रोजगार पर सगे हुए व्यक्तियों के हिसाब से अनुपात निकाला गया था। यह अनुमान लगाया गया था कि १९६१ में भी वही अनुपात रहेगा यद्यपि इस अनुपात के बढ़ने की सम्भावना थी क्योंकि विकास कार्यक्रमों की वृद्धि के कारण व्यापार और बाणिज्य में भी वृद्धि होगी।

उपरोक्त तालिका में दिए गए आंकड़ों के प्रतिरिक्त यह भासा भी गई थी कि यदि भूमि पुनर्बाँट योजनाओं बापाम के विकास व विस्तार की योजनाओं उद्योग विकास को योजनाओं बाकि के कारण १६ लाख नए रोजगार के इच्छुक प्राणीय व्यक्तियों को रोजगार मिल सकेगा।

ग्रामीण क्षेत्रों में अपूर्ण रोजगार को दूर करने में सिबाई योजनाओं तथा प्राणीय व छोटे पैमाने के उद्योग क्षेत्रों के विकास कार्यक्रम से भी सहायता मिलेगी।

प्रायोजना प्राणीय है यह निष्कर्ष निकाला जा कि "यद्यपि उपरोक्त बातों को देखते हुए बेरोजगारी दूर करने के लिए प्रायोजना के रोजगार सम्बन्धी कार्यक्रमों का परिणाम महत्वपूर्ण हो सकता है, परन्तु हमें द्वितीय पंचवर्षीय प्रायोजना की प्रथम में इस समस्या की ओर निरन्तर ध्यान देना पड़ेगा।"

प्रायोग ने १९६३ में घितियों में बेरोजगारी दूर करने के हेतु कार्यक्रम बनाने के लिए एक विवेक प्रायजन बन की नियुक्ति की थी। इस के अनुसार वर्तमान

घरघरों में वृद्धि की जाय। फिर भी हमारे देश में बेरोजगारों और अपूर्ण रोजगार की समस्या इतनी अधिक गम्भीर है कि द्वितीय आयोजना काम में इसके पूर्णतः समाधान की कोई सम्भावना नहीं थी। आयोजना में लगभग १ करोड़ व्यक्तियों के लिए प्रतिरिक्त रोजगार के घरघरों (परन्तु नौकरियां नहीं) के लिए कार्यक्रम था। पांच वर्ष की अवधि में रोजगार योग्य हो जाने वाले व्यक्तियों की संख्या भी १ करोड़ हो जाने का अनुमान था। इसके प्रतिरिक्त पिछले बेरोजगारों अर्थात् तत्कालीन बेरोजगारों की संख्या ४३ लाख थी। इस प्रकार यह स्पष्ट था कि आयोजना के बाद भी बेरोजगारी बनी रहेगी। फिर यह सब अनुमान इस पूर्वधारणा पर आधारित थे कि आयोजना मुबारक रूप से लागू हो सकेगी। यदि अर्थ-व्यवस्था के किसी भी क्षेत्र में कहीं रुकावट या बाधा या कार्यक्रम में देरी हो जाए, (जदाह्वयुक्त मातावात में), तब विकास कार्यक्रम और इसका परिणाम यह होगा कि रोजगार बट जाएगा।

यह स्पष्ट है कि रोजगार के घरघरों का विकास इतनी गति से नहीं हो रहा है कि बड़ी हुई शम वृद्धि को संतोषजनक रूप से सपाया जा सके। 'द्वितीय आयोजना के मूल्यांकन और सफलता की सम्भावनाओं की जांचिका' में यह उल्लेख था कि आयोजना के प्रथम दो वर्षों में कृषि को छोड़कर अन्य व्यवसायों में लगभग २० लाख व्यक्तियों के लिए रोजगार के घरघर उपलब्ध हो गए थे तथा आयोजना के तीसरे वर्ष में १० लाख व्यक्तियों के लिए प्रतिरिक्त रोजगार के घरघर मिलने की सम्भावना थी। ८० लाख व्यक्तियों की रोजगार प्रदान करने का जो लक्ष्य था उसमें संशोधन करना पड़ा था तथा यह अनुमान लगाया गया कि द्वितीय आयोजना अवधि में कृषि को छोड़कर अन्य व्यवसायों में लगभग १३ लाख व्यक्तियों का ही रोजगार मिल सकेगा। परन्तु यह भी अनुमान लगाया गया था कि आयोजना के प्रथम तीन वर्षों में अधिक से अधिक १० लाख व्यक्तियों को रोजगार मिल सका था। १९५६-६० में १३ लाख व्यक्तियों को रोजगार मिलने की सम्भावना व्यक्त की गई थी। द्वितीय आयोजना के अंतिम वर्ष में रोजगार का लक्ष्य महत्वाकांक्षी था क्योंकि इस वर्ष २० लाख व्यक्तियों के लिये रोजगार के घरघर प्रदान करने थे। इस प्रकार द्वितीय आयोजना अवधि में बड़े हुए सरप को—अर्थात् १३ लाख व्यक्तियों को रोजगार देना—सम्भव प्राप्त नहीं किया जा सकता था। वास्तव में स्थिति ऐसी थी कि द्वितीय आयोजना के प्रारंभ में बेरोजगारों की संख्या आयोजना प्रारम्भ होने के समय की संख्या से अधिक ही पायी थी। इससे यह पता चलता है कि अर्थ-व्यवस्था में विषेय इस प्रकार से नहीं हो रहा था कि शम वृद्धि में प्रति वर्ष होने वाली प्रतिरिक्त वृद्धि को संतोषजनक रूप से रोजगार पर सपाया जा सके।

आयोजना में रोजगार अवकाश के घरघरों को विशेष रूपों पर हड़ करने के प्रयत्न भी किए गए थे; जदाह्वयुक्त १०,००० व्यक्तापकों की नियुक्ति की एक

याचना का अनुमोदन किया गया था। अम मन्त्रालय ने त्रिशित बेरोजगारों को जब तक उन्हें पूरा-आवृत्त रोजगार नहीं मिल जाता तब तक-आवृत्त रोजगार प्रदान करने की एक योजना तैयार की थी। फिटर, डिग्री मिस्त्री, मेडिको मिस्त्री, मास्त्रामन, बर्डी आदि के व्यवसायों में त्रिशित बेरोजगारों को प्रविष्टता देने के लिये विभिन्न राज्यों में मुख्य मुख्य स्थानों पर प्रविष्टता कन्द्र स्थापित हुए थे। कुछ विश्वविद्यालयों में रोजगार स्यूरो की भी स्थापना की गई थी।

अक्टूबर १९३८ में त्रिन्सीय आचार पर राजगार पर ३ गण्डों का एक कर्णीय समिति की स्थापना की गई जिसका अध्यक्ष अम मंत्री हैं। इसका कार्य निरन्तर रूप से विभिन्न प्रकार की बेरोजगारी की समस्या पर विचार करना तथा रोजगार और रोजगार के अवसरों राष्ट्रीय रोजगार सेवा क बाधक तथा विविधों आदि के प्रविष्टता क विषय में अम क रोजगार मन्त्रालय को सलाह देना है। इस समिति की पहली बैठक २३ मई १९३९ को हुई थी। इनमें रोजगार की स्थिति का पुनर्वास्तोदन किया गया तथा तीसरी आयाचना में रोजगार की क्या स्थिति होगी इस पर भी विचार किया गया। अम गणिन आयाजित करने तथा रोजगार सम्बन्धी सूचना एकत्रित करने वाला व्यवस्था का हउ करने क लिए राष्ट्रीय रोजगार सेवा क बाधों पर तथा राष्ट्रीय आयाचनाओं क पूर्ण होने क कारण बकार हुये धर्मियों को अन्य स्थानों पर रोजगार पर लगाने के अलावा पर समिति ने विचार किया। रोजगार नियन्त्रण से सम्बन्धित उदम्यों पर विचार करने और रोजगार के नय अवसरों की समाधानों का पना लगाने क लिए इस समिति ने दो अध्यक्षन दलों की नियुक्ति भी की। अध्यक्षन दलों की एक सदस्य बैठक १ अक्टूबर १९३९ को हुई और इसमें इस बात पर विचार किया गया कि आयाचना कार्य-क्रमों में रोजगार के अवसरों को सर्वोत्तम रूप से विद्य प्रसार बढ़ाना जा सकता है। इस बैठक में अन्य विषयों के साथ साथ उत्तर प्रदेश के एक जिले (पहाड़हांगुर) में रोजगार का संभावनाओं के विषय में अग्रिम अध्ययन की एक रिपोर्ट पर भी विचार किया गया और यह सिद्धांत की गई कि ऐग अध्यक्षन सभी राज्यों के कुछ विषय जिलों में होने चाहिए। यह भी सिद्धांत की गई कि यदि सम्भव हो तो जिला आचार पर रोजगार क अवसरों में वृद्धि करने के कार्य को प्रोत्साहन देना चाहिए। इस बात पर भी विचार किया गया कि राजगार का परिष्कार करने क लिए जिला स्तर पर योजनाओं की कार्यान्विति में प्रभावपूर्ण रूप से सम्बन्धित करना चाहिए। राज्य सरकारों से यह भावना ली है कि रोजगार विनियम के कुछ क बाधों को धारण करने के लिए हर सम्भव प्रयत्न करने चाहिए।

तीसरी आयाचना में रोजगार की स्थिति —

भारत में आयाचना का एक मुख्य उद्देश्य सगरी को रोजगार दिलाना था है। परन्तु गृहीत आयाचना में कहा गया है कि कक्षा की दृष्टि में रोजगार क वर्तमान

धनसुर प्रदान करना उन अत्यन्त कठिन कार्यों में से एक है जिन्हें हमने पांच वर्षों में करना है। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी और धर्म बेरोजगारी अर्थात् अपूर्ण रोज मार दोनों ही साथ-साथ दिखाई पड़ते हैं और उनके बीच कोई स्पष्ट अन्तर प्रतीत नहीं होता। ग्रामों में साधारणतया बेरोजगारी का स्वरूप अपूर्ण रोजगार है। वहीरी क्षेत्रों में व्यापार, यातायात और उद्योग की स्थिति में जो उदार-बढ़ाव होता है उसी के अनुसार रोजगार में भी परिवर्तन होता है। प्रथम दो प्रायोगिकों के अनुभव से यह तात् हला है कि प्रायोगिक अवधि में जो नए रोजगार अवसर उपलब्ध हुए उनमें से अधिकतर वर कृषि क्षेत्र में थे। दूसरी प्रायोगिक अवधि में लगभग २० लाख नए रोजगार अवसरों का निर्माण हुआ जिनमें से १५ लाख वर-कृषि क्षेत्रों में थे।

रोजगार से सम्बन्धित अधिकड़े इस समय अर्थात् हैं परन्तु फिर भी जो सीमित मूचना उपलब्ध है उसके आधार पर यह अनुमान किया गया है कि द्वितीय पंचवर्षीय प्रायोगिक के अन्त तक बिना लोगों को रोजगार नहीं दिसाया जा सका उनकी संख्या लगभग १० लाख है। दूसरी पंचवर्षीय प्रायोगिक अवधि में बेरोजगार रह जाने वाले लोगों का जो अनुमान था वह केवल २१ लाख का था। इस अनुमान की तुलना में बेरोजगार रहने वाले लोगों में जो कृषि हुई उसका यह धर्म है कि रोजगार की समस्या पर प्रायोगिक का पर्याप्त प्रभाव पड़ा। किन्तु फिर भी अधिक बच में नए शामिल होने वाले लोगों की संख्या में जो निरन्तर कृषि हुई उस हिसाब से लोगों को रोजगार नहीं दिसाया जा सका। पूर्ण बेरोजगारी के अतिरिक्त बिना लोगों के पास कुछ काम है किन्तु जो अतिरिक्त कार्य भी करना चाहते हैं उनकी दृष्टि से अपूर्ण रोजगार वाले लोगों की संख्या लगभग १ करोड़ २० लाख से १ करोड़ ५० लाख तक है।

द्विती भी अवधि में अधिक बच में जो कृषि होती है उनकी यलना उन कुर्बों व स्थियों के अनुपात में की जाती है जो १२-१६ वर्ष के आयु वर्ग में पाते हैं क्योंकि यह अनुमान लगाया जाता है कि इस आयु के अर्थात् ही या तो सामवायक रोजगार पर सने होते हैं या रोजगार की तात्ताय में होते हैं। १९६१ की जनगणना से प्राप्त आँकड़ों के आधार पर यह अनुमान है कि तीसरी प्रायोगिक अवधि में अर्थात् बने में लगभग १ करोड़ ७० लाख लोगों को कृषि होगी। इस कृषि में से एक तिहाई कृषि वहीरी क्षेत्रों में होगी। इसके विपरीत यह अनुमान है कि तीसरी प्रायोगिक में १ करोड़ ४० लाख लोगों को — १ करोड़ २ लाख लोगों को वर कृषि कार्यों में और १२ लाख लोगों को कृषि कार्यों में — अतिरिक्त रोजगार दिसाया जायगा। अर्थात् अतिरिक्त तात्ताय में वर-कृषि कार्यों में रोजगार का विवरण दिया गया है।

प्रतिरिक्त गैर-कृषि रोजगार

(लाखों में)

क्षेत्र	तीसरी धापोबना में प्रतिरिक्त रोजगार
१ निर्माण	२३००
२ सिंचाई और बिजली	१००
३ रेल	१४०
४ अन्य मातायात और संचार	८८०
५ उद्योग और शक्ति	७३०
६ छोटे उद्योग	६००
७ बन मछली पालन और सम्बन्ध सेवाएँ	७२०
८ शिक्षा	३६०
९ स्वास्थ्य	१४०
१० अन्य सामाजिक सेवाएँ	०८०
११ सरकारी सेवा	१५०
योग	१०५०
१२ 'अन्य' क्षेत्रों में उद्योग और व्यापार सम्मिलित है (१ से ११ तक की मदों के कुल योग का ३९ प्रतिशत)	१०८०
कुल योग	२०२१०

● चूंकि निर्माण कार्य से बहुत बड़ी संख्या में रोजगार मिलता है इसलिए विभिन्न विकास क्षेत्रों में निर्माण कार्य में रोजगार का निम्न रूप में दिया गया विवरण उपयोगी होगा —

	(लाखों में)
(क) कृषि और सामुदायिक विकास	६१०
(ख) सिंचाई और बिजली	४६०
(ग) उद्योग और शक्ति क्षेत्रों में कृषि और लघु उद्योग भी सम्मिलित है	४६०
(घ) मातायात और संचार (रेल सहित)	१६०
(ङ) सामाजिक सेवाएँ	१५०
(च) विविध	०५०
योग	२१००

इस प्रकार अधिकांश क्षेत्रों में नए शामिल होने वाले लोगों को काम मिलाने पर चार ३० लाख लोगों के लिए प्रतिरिक्त रोजगार होना चाहिए।

कृषि धापोबना में यह सुझाव है कि रोजगार की समस्या को तीन मुख्य रूपों से सुलभता चाहिए। प्रथम धापोबना के बीच के सम्बन्ध होने प्रयत्न करें

हृषि जितय पट्टन की घोषणा रोजगार के प्रभावों का फैलाव अधिक व्यापक और समुचित रूप से हो। बृहत् ग्रामीण क्षेत्रों की औद्योगिकरण का एक बहुत बड़ा कार्य जम हाथ में लना चाहिए, जिसमें इन बातों पर विशेष धोर दिया जाय — ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली सप्लाया ग्रामीण औद्योगिक सम्पदाओं (Estates) का विकास ग्रामीण उद्योगों की उत्पत्ति और जन-शक्ति को प्रभावकारी रूप में फिर से काम में लवाना। तीसरे सधु उद्योगों द्वारा रोजगार बढ़ाने के अन्य उपायों के प्रतिरिक्त ग्रामीण निर्माण कार्य-कार्य (Works Programmes) को सक्रिय करने का मुख्य है जिनमें समय २३ लाख और सम्भवतः इसके भी अधिक लोगों को वर्ष में प्राप्त कर १०० मिल तक काम मिलेगा।

ग्रामीण औद्योगिकरण और गांवों में बिजली सप्लाया-यह दोनों सम्बन्ध कार्यक्रम हैं और ग्रामीण क्षेत्रों में स्थिर रोजगार के व्यवहार बढ़ाने के लिए इनका सबसे अधिक महत्व है। प्रत्येक क्षेत्र में धीरे धीरे छोटे छोटे कस्बों और गांवों में औद्योगिक विकास के केंद्र स्थापित करना आवश्यक है और यह उन्नत मातापाठ एवं अन्य सुविधाओं के द्वारा एक दूसरे से जुड़े हुए होने चाहियें। प्रत्येक क्षेत्र में ग्रामिण आयोजना के द्वारा हृषि सम्बन्धी और औद्योगिक विकास का कार्यक्रम बिजली की पूर्ति के साथ सम्बन्धित होना चाहिए।

अपूर्ण रोजगार की समस्या के स्थाई समाधान के लिए यह आवश्यक है कि न केवल सभी लोग हृषि कार्यों में बिजनाम का प्रयोग करें बल्कि इस हृषु ग्रामीण प्रापिक ढांचे को विभिन्न ढांचों में विकसित करना और उसे सुदृढ़ बनाया भी आवश्यक है। — ग्रामीण और सधु उद्योगों तथा 'प्रोसेसिंग' उद्योगों के विकास के लिए कार्यक्रमों को और अधिक पड़ाना होगा और ग्रामीण क्षेत्रों में नए उद्योग स्थापित करने होंगे। इत १ प्रकार जहां ग्रामीण कार्य व्यवस्था का निर्माण किया जा रहा है वहां समस्त ग्रामीण २ क्षेत्रों में व्यापक निर्माण कार्यक्रमों की आवश्यकता है, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहाँ ३ अधिकतम लोग भूमि पर निर्भर हैं और जहाँ अधिक बेरोजगारी और अपूर्ण रोजगार ४ कार्य किए जायेंगे। ग्रामीण हृषि के मन्वे मौसम में कार्यान्वित करने के लिए निर्माण ५ कार्य बनाए जायेंगे। गांवों में जो निर्माण कार्य होंगे उन सभी में ग्राम की प्रकृति (६ Pilot Projects) धारण की गई हैं। इनमें 'विचार' बन सप्लाया 'सृष्टि संरक्षण ७ शक्ति बनाता भूमि का पुनरोद्धार, संसार साधनों में सुधार प्रापिक की पूरक योजना ८ सम्बन्धित है। अन्तर्गत यह अनुमान है कि निर्माण कार्यक्रमों द्वारा पहले वर्ष ९ में १ लाख व्यक्तियों को रोजगार मिल जाएगा दूसरे वर्ष में ४ लाख से ३ लाख तक व्यक्तियों को और तीसरे वर्ष में लगभग १ 'लाख' व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त १० होगा और इस प्रकार बढ़ते बढ़ते आयोजना के अन्तर्गत वर्ष में लगभग २३ लाख

व्यक्तियों का रोजगार मिल सकता है। आयोजना की प्रवृत्ति में इस समस्या का समाधान पर कुल व्यय ₹५० करोड़ रुपये का हो सकता है।

सिद्धि बेरोजगारी की समस्या पर दो मार्गों में विचार किया जा सकता है—प्रथम विद्यते बेरोजगार तथा दूसरे नए कामे जाने बेरोजगार। रोजगार दफ्तरों के माध्यमों के अनुसार विद्यते सिद्धि बेरोजगारों को मग्या समग्र १० लाख है। तीसरी आयोजना की प्रवृत्ति में हार्ड स्कूल तथा इनसे ऊपर की शिक्षा प्राप्त लोगों की संख्या समग्र ३० लाख हो जाने का अनुमान है जिन्हें रोजगार मिलाना होगा। कृषि उद्योग और यातायात की उन्नति होने से कुशल और व्यावसायिक एवं तकनीकी परीक्षा प्राप्त किए हुए व्यक्तियों को रोजगार के अधिक अवसर प्राप्त होंगे। परंतु इस सम्बन्ध में शिक्षा प्रणाली का पुनर्गठन बहुत महत्वपूर्ण है। हाल के वर्षों में हाल से काम करने के प्रति पढ़े सिद्धि व्यक्तियों के मन में परिवर्तन हुआ है और उन्हें विकासशील कार्य-व्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुकूल बनाने के लिए बड़े पैमाने पर कार्य-क्रम हाल में लेने का विचार है। सहकारी समितियों और ब्रह्मचरिणी गरी तथा लोक-सांख्यिक संस्थाओं की स्थापना हो जाने से सामाजिक कार्य-व्यवस्था के अन्तर्गत पढ़े सिद्धि लोगों के लिए नियमित और निरन्तर रोजगार का योग काफी बढ़ जाएगा। सामाजिक कार्य-व्यवस्था में प्राप्त रोजगार से उन्हें वास्तव में उन्नति ही प्राप्त होगी जितनी कि वही म होती है। यह भी सम्भव हो जाएगा कि नारी बड़ी संख्या में पढ़े सिद्धि नवयुवकों को सामाजिक क्षेत्रों में जहाँ बिजली उपकरण की जा सके, छोटे छोटे उद्योग स्थापित करने में सहायता दी जाए।

- इस बात की भी आवश्यकता है कि जो आयोजनाएँ पूरी हो चुकी हैं या पूर्ण होने वाली हैं वहाँ से कुशल नवयुवकों को लेकर उन आयोजनाओं में मगया जाय जो आरम्भ होने वाली हैं। तीसरी आयोजना में इस कार्य के लिए जो व्यय का ही गई भी उसके अन्तर्गत संतोषजनक रूप से कार्य हुआ है। इस व्यवस्था को बनाए रखते हुए यदि इसी प्रकार की आयोजनाओं को और अधिक प्रवृत्ति में लेना आवश्यक था तो पूर्ण आयोजना करने इन्हें सामू किया जाय तो इस समस्या का अधिक सरलता से समाधान किया जा सकता है।

जैसा कि विद्यते पृष्ठों से स्पष्ट है— देश में बेरोजगारी की समस्या अत्यन्त गम्भीर है। द्वितीय आयोजना के अन्त में समग्र १० लाख व्यक्ति बेरोजगार थे। तृतीय आयोजना प्रवृत्ति में रोजगार के दृष्टिकोण ₹ करोड़ ७० लाख व्यक्ति और हो पाये। इसका अर्थ यह हुआ कि तीसरी पञ्चवर्षीय आयोजना प्रवृत्ति में बेरोजगारी को दूर करने के लिए ₹ करोड़ ६० लाख व्यक्तियों के लिए रोजगार के अवसर देने का कार्य परन्तु तीसरी आयोजना में जो कार्य-क्रम लिए गए हैं उनसे अनुमान करता ₹ करोड़ ४० लाख व्यक्तियों को (१ करोड़ ३ लाख और-नरिणी शत्रु म तथा ३३ लाख कृषि क्षेत्र में) रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे। यदि यह कार्य पूरा भी हो

जाता है तब भी तीसरी आयोजना के अन्त तक बेरोजगारों की संख्या १ करोड़ २० लाख होगी। एक आयोजना से दूसरी दूसरी से तीसरी और तीसरी से चौथी आयोजना में पुरानी बेरोजगारी का अन्त रहना अत्यन्त दमनीर समस्या है और इस घोर पर्याप्त रूप से ध्यान देना आवश्यक है।

पूर्ण रोजगार की समस्या — (Problem of Full Employment)

एक समस्या यह भी है कि भारत में पूर्ण रोजगार सम्भव है या नहीं। पूर्ण रोजगार की समस्या पर अर्थशास्त्रियों ने काफी विचार किया है। भारत में इस समस्या पर अभी से अधिकारिक विवेचन हो रहा है जबकि आयोजना धारण के प्रथम पंचवर्षीय आयोजना में इस घोर संकट किया या कि भारत पिछड़ा देश होने के कारण पूर्ण रोजगार को अपनी आर्थिक क्रियाओं का उद्देश्य नहीं मान सकता। अर्थ व्यवस्था के अर्थ की दृष्टियों को धूर करके ही पूर्ण रोजगार के कार्यक्रम को कार्यान्वित किया जा सकता है। पूर्ण रोजगार के कार्यक्रम को हाथ में लेने से पूर्व पूर्ण और प्रथम की कमियों को धूर कर लेना चाहिए। इस प्रकार देश में अर्थ व्यवस्था के विस्तार और उसमें विविधता आने की योजना बनाकर ही पूर्ण रोजगार के उद्देश्य को प्राप्त करने की सम्भावना हो सकती है।

पूर्ण रोजगार का आत्यर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमता की सीमा तक कार्य करता रहे बल्कि इसका आत्यर्थ उच्च रोजगार से है जो समान ऐसे इष्टतम बिन्दु (Optimum Point) तक पहुँच गया हो जब और अधिक बस्तुओं एवं सेवाओं की अपेक्षा मनुष्य पुनर्व (Leisure) अधिक पसन्द करने लगता है। सर विनियम बैबरिज ने पूर्ण रोजगार की परिभाषा इस प्रकार की है—पूर्ण रोजगार की अवस्था में मनुष्यों की अपेक्षा रिक्त स्थान अधिक होते हैं। प्रो० पीगू के अनुसार पूर्ण रोजगार का आत्यर्थ यह है कि बायू मजदूरी की दरों पर यदि रोजगार योग्य व्यक्ति कार्य करते का तैयार हों तो उन्हें रोजगार मिल जाता है। पूर्ण रोजगार की स्थिति के लिए उच्च को ध्यान रखना पड़ता है कि किसी भी समय रिक्त स्थानों की संख्या बेरोजगार व्यक्तियों से कम न हो। इसके अतिरिक्त कार्य उचित मजदूरी पर प्रदान किए जाने चाहिए और काम इस प्रकार स्थित होने चाहिए कि रोजगार के इच्छुक व्यक्ति उन्हें स्वीकार कर लें। यदि ये समस्याएँ उपरिष्ठ हैं तो एक कार्य के छूटने तथा दूसरे कार्य के आने के बीच का साधारण अन्तर आसन्न में बहुत कम हो जाएगा।

इस अन्त पर भी मतभेद है कि एक स्वतन्त्र व्यक्तिवाद समाज में पूर्ण रोजगार सम्भव है या नहीं। मास्वानी तथा कुछ अन्य व्यक्ति विरवाद करते हैं कि पूर्ण रोजगार अर्थ-व्यवस्था की अपनी प्रवृत्ति ही धर्म की भाँति तथा पूर्ण में सामंजस्य नहीं होने देती है। परिणामस्वरूप एक मौजूदा छूटने तथा दूसरी मौजूदा के मिलने के बीच का अन्तर बहुत अतिरिक्त तथा अन्त हो जाता है। सर विनियम बैबरिज तथा अन्य व्यक्तियों ने इस पर बल दिया है कि यद्यपि सर्व-अधिकार (Totalitarian)

राज्य की प्रपक्षा स्वतंत्र समाज में पूर्ण रोजगार कायम रखने की समस्या अधिक कठिन है तथापि एक स्थितिवादी धर्म-सम्बन्ध में हम प्रबन्धना को प्राप्त करना सम्भव भी नहीं है। मनु मुञ्च के अनुभव ने यह सिद्ध कर दिया है कि स्थितिवादी धर्म-सम्बन्ध में भी बेरोजगारी दूर की जा सकती है। यदि कोई स्थिति पुनः प्राप्त न कर सके तो कोई कारण नहीं है कि हम इसे धान्ति नाम में प्राप्त न कर सकें। राज्य द्वारा प्राथमिक क्षेत्र में रोजगार देने हेतु नियन्त्रण न पूर्ण रोजगार की स्थिति प्राप्त की जा सकती है परन्तु हमें पूरा कि पूरा रोजगार सम्भव हो सके कुछ नम उद्योगों का प्रावश्यक है। उद्योगों का स्थानीयकरण इस प्रकार नियन्त्रित होना चाहिए कि उपसम्पन्न धर्मियों का इनमें उचित प्रकार से वितरण हो सके। धर्मियों की मति धीमता का नियन्त्रण रोजगार क्षेत्रों द्वारा होना चाहिए। सरकारी तथा निजी क्षेत्रों दोनों का कुछ धन इतना और इस प्रकार होना चाहिए कि बस्तुओं तथा सेवाओं की मांग इतनी अधिक रहे कि यह मांग पूरी करने के लिए राष्ट्र की समस्त मानव शक्ति रोजगार में लगा दी जाए। पूर्ण रोजगार की नीति प्रदान करने में यह भी प्रावश्यक है कि प्राथमिक नियन्त्रणों को हट्ट किया जाए और उन्हें विस्तार से लागू किया जाए। इसके अतिरिक्त पूर्ण रोजगार की नीति के साथ-साथ सामाजिक सुरक्षा का कार्यक्रम भी लागू करना चाहिए अन्यथा पूरा रोजगार का कोई लाभ नहीं होगा। इस प्रकार पूर्ण रोजगार सब तक सम्भव नहीं हो सकता जब तक राज्य द्वारा कुछ प्रसाधारण अधिकार ग्रहण नहीं कर लिए जाते जैसे निवेद्यन सामन्तस्य तथा नियन्त्रण के अधिकार।

उपर्युक्त बातों को भारत जैसे देश में प्राप्त करना कठिन है यहाँ मानव शक्ति के पाँचवें भाग को रोजगार देना दुर्लभ कार्य प्रतीत होता है। किन्तु यदि उन स्थितियों की संख्या बहुत बढ़ता है जिनको रोजगार दिया जाना है तो हमारे साधन भी बहुत अधिक हैं। यदि बिक्रम की घोषणाएँ उचित प्रकार से कार्यान्वित की जाएँ तो हमारे जैसे देश में पूर्ण रोजगार प्राप्त करने में अधिक कठिनाई नहीं होगी। कुछ भी हो हम समय पूरा रोजगार प्राप्त करने का आदर्श भारत के लिए प्रदाना उचित ही है। हम आदर्श को प्राप्त करने के लिए हड़ मकल्प भी होना चाहिए।

मन्त्री के बाल तथा उसके प्रभाव का सामना करने के लिए मातियों द्वारा उपस्य —

(Ways Open to Employers to Meet Periods of Depression and their Effects)

जब हम एक ऐसे विषय का उन्मत्त करने किन्तु मातियों द्वारा किए गए एक प्रस्तावों को समझने में बहुत महत्त्व है जो प्रस्ताव माती नाम की हानियों को दूर करने के लिए इस प्रकार किए जाते हैं कि न तो उनमें राष्ट्रीय धन को हानि पहुँचे

घोर न उनके कारण बेरोजगारी फैले। जब मन्दी घाटी है तब परिणाम यह होता है कि मासिकों द्वारा किए गए उत्पादन की मात्रा कम हो जाती है और मासिक अनुभव करने लगता है कि यदि वह पहिले जैसे स्तर पर उत्पादन करता रहा तो उसे हानि होगी। इसलिए उसे कुछ कमी करनी पड़ती है। आवश्यक कटौती निम्न तीन उपायों में से किसी एक उपाय द्वारा हो सकती है — (१) मासिक धमिकों की एक विधेय संस्था को बर्खास्त कर दे और धर्म्य को पूर्ण रूप से रोजगार देता रहे (२) मासिक समस्त कर्मचारी वर्ग को कार्य में लगाए रखे किन्तु एक 'बदलती धमिक' (Rotation) प्रणाली को लागू कर दे जिसके अन्तर्गत उदाहरणतया मासिक तीन सप्ताह के लिए प्रणाली को लागू कर दे जिसके अन्तर्गत सप्ताह क्रम समय के लिए कार्य लेता रहे। यह कार्य में लगे रहें और चौथे सप्ताह खाली रहें प्रणाली (३) वह समस्त कर्मचारी वर्ग को लगाए रख परन्तु उनसे प्रत्येक सप्ताह कम समय के लिए कार्य लेता रहे। यह प्रणाली दूसरी प्रणाली से जिसमें परिवर्तन कार्य होता है भिन्न होती है।

पहली योजना को अर्थात् कुछ धमिकों के लिए पूर्ण रोजगार तथा धर्म्य धमिकों की बर्खास्तगी को नहीं बड़ा धमिक कुछ नहीं है, तरजीह दी जाती है और वहाँ मात्र पुनः बड़ जाने से उनकी पूर्ति भी धमिक होने की सम्भावना होती है। इसके परिणाम यह प्रणाली नहीं भी धमिक प्रचलित होती बड़ा धमिकों को समयानुसार मजदूरी दी जाती है। इसमें सबसे कम कार्य-कुशल धमिक पहिले बर्खास्त कर दिए जाते हैं। तथापि मासिक के लिए उन कुशल धमिकों को भी बर्खास्त किया जा सकता है। सम्भव नहीं हो सकता जो फौजारी न मासिक मशीनरी को बसाने के अन्तर्गत हो गए होते हैं या उन-कार्य करने वाले धमिकों को नहीं बर्खास्त किया जा सकता किन्तु किसी विशेष कार्य पर कुछ समय से लगे रहने के कारण विशेष योग्य प्राप्त कर ही है। इस उपाय को अपनाते में दूसरी कठिनाई यह है कि इस बात न मय रहता है कि कहीं बर्खास्त किए गए धमिक अक्षमता के विनिर्माण रहस्यों का उत्पादन न करें। इसके परिणाम मासिकों को धमिकों को बर्खास्त करते समय धमिक संघों के विशेष का सामना भी करना पड़ता है।

'बदलते धमिक' योजना (Rotation Plan) को अनुबिधा तथा अटिक्तता के कारण प्रबन्धकों का अधिक समर्पण नहीं मिला है। किन्तु बेरोजगारी बीमा के विकास के साथ कुछ क्षेत्रों में कम समय कार्य के उपाय की अपेक्षा यह उपाय अपनाया गया है। इसका कारण यह है कि यदि एक व्यक्ति बार सप्ताह में से एक सप्ताह कार्य नहीं पाएगा तो वह उस सप्ताह के लिए बेरोजगारी लाभ का धमिकारी हो जाएगा जबकि यदि वह कम समय योजना के अन्तर्गत एक हफ्ते में १२ घण्टे मष्ट करेगा तो उसे कोई लाभ नहीं मिलेगा। 'बदलते धमिक' योजना धमिकों की बर्खास्त प्रचलित है क्योंकि इसके अन्तर्गत पूर्ण कर्मचारी वर्ग का संस्था के एजिस्टेंटों में मात्र कार्य रहता है और वह रोजगार में लगे रहते हैं।

वीसवी योजना अर्थात् समस्त कर्मचारी बम के लिए 'बम समय कार्य करने की प्रणाली' को बर्हात ब्यवहार में लाया जाता है जहाँ कर्मचारियों को बर्हात करने तथा 'बदसते अधिक' योजना के लिए उचित परिस्थिति उपस्थित नहीं होती। यह प्रणाली बर्हात प्रणाली जाती है जहाँ कार्य के कुछ घण्टों में अन्य घण्टों की अपेक्षा अधिक व्यय पड़ता है, उदाहरणतया उस अवधि में जब प्रवास और ऊष्मा की अधिक मागत जाती है। इसके अतिरिक्त मासिक भी जब कुछ व्यक्तियों को कार्य पर लगाए रखने का इच्छुक होता है तभी इस योजना को प्रणाली है। कर्मचारियों को बर्हात करना तो उन उद्योगों में एक नियम सा बन जाता है जिनमें मजदूरी समयानुसार (प्रमानी) दी जाती है, जबकि बम समय प्रणाली बर्हात प्रणाली जाती है जहाँ मजदूरी कार्यानुसार (उत्तर) दी जाती है, क्योंकि ऐसी प्रणाली में सबसे कम कुशल अधिकों को बर्हात करने की इच्छा इतनी प्रबल नहीं होती।

यदि अन्य कोई रोजगार प्राप्त करने का अवसर है बिनापर जब व्यापार साधारणतः समृद्धि कर रहा है तब बमचारी बर्हात करने की योजना बम समय की योजना की अपेक्षा उत्तम रहती है। किन्तु जब पूर्ण व्यापार मन्द हों तो बमचारी बर्हात करना व्यायोजित नहीं होता। साधारणतः बम समय योजना को जिनमें 'बदसते अधिक' योजना भी आ सकती है जहाँ भी परिस्थिति बिनापर से अनुकूल हो, तब ही देनी चाहिए। इसके कुछ लाभ हैं। सबसे प्रथम तो बम समय योजना कर्मचारियों को बर्हात करने से कम अप्रदायक होती है। इसके अतिरिक्त बम समय योजना में अधिक व्यय में कटौती करते हैं तथा वे अपनी अपेक्षाकृत प्राराम की कुछ वस्तुओं छोड़ देते हैं तथा जीवन की मुख्य आवश्यकताओं पर अपना व्यय केन्द्रित कर देते हैं। यदि व्यय में यह कटौती एक तिहाई की सीमा तक है तब घटती तुष्टिकरण के नियमानुसार समस्त बलिदान कुछ तुष्टिकरण के एक तिहाई में कम होगा। किन्तु यदि इन व्यक्तियों में से जो तिहाई व्यक्ति पूरा रोजगार पर लगे रहते हैं तथा अन्य एक तिहाई हटा लिए जाते हैं तो समस्त बलिदान पहिली स्थिति की अपेक्षा अधिक होगा। इसका कारण यह है कि कुछ की बहु मात्रा जो पूर्ण रोजगार में लगे व्यक्तियों द्वारा प्राराम की वस्तुओं पर व्यय की जाती है यदि जब बैरोजगार हुए व्यक्तियों द्वारा जीवन की आवश्यकताओं पर व्यय की जाती है तो अपेक्षाकृत अधिक तुष्टिकरण प्रदान करेगी। दूसरे बम समय योजना अधिकों को बर्हात करने से उत्तम है क्योंकि इसमें अधिक की कार्य-बुल्लसता तथा बलिदान का भय कम होता है। यह व्यक्ति जो शीघ्र अवधि तक बैरोजगार रहता है अपने व्यापार से सम्पर्क तो बँटता है तथा पुनः कार्य करने मगता है और उसका स्वभाव तथा स्वास्थ्य को हानि पड़ती है। इस प्रकार वह धीरे-धीरे रोजगार के अन्य व्यक्तियों की श्रेणी में आ जाता है। अतः मासिकों द्वारा मन्त्री का गणना करने के लिए लिए गए उपायों में 'बम समय कार्य' कर्मचारी बर्हात करने की अपेक्षा अधिक उत्तम है क्योंकि कर्मचारी बर्हात करने में बैरोजगारी उत्तम हो जाती है।

परिशिष्ट ग

कामिक प्रबन्ध (Personnel Management) तथा मानवी सम्बन्धों (Human Relations) पर एक टिप्पणी

कामिक प्रबन्ध' प्रबन्ध कार्य का ही एक भाग है और मुख्यतः इसका सम्बन्ध संस्थान के भीतर ही मानवी सम्बन्धों से होता है। इसका जड़ रूप इन सम्बन्धों को ऐसे स्तर पर बनाए रखना है जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति के कल्याण को ध्यान में रखते हुए, उन समान व्यक्तियों को जो संस्थान में रोजगार पर लगे हुए हैं उस संस्थान के प्रमाणात्मक संचालन में व्यक्तिगत रूप से अंशदान देने के योग्य बनाया है।

इस प्रकार कामिक प्रबन्ध के अन्तर्गत निम्नलिखित बातें आती हैं (१) "कल्याण दृष्टि से कार्य"—इसका सम्बन्ध व्यक्तियों की उन भौतिक सुविधाओं से होता है जो उनके धारण के लिए आवश्यक है। (२) "कामिक दृष्टि से कार्य"—इसका मनुष्य के मनोवैज्ञानिक प्रबन्धन से सम्बन्ध है तथा इसमें मानवी सम्बन्ध के सभी पक्ष आ जाते हैं।

कामिक प्रबन्ध का मुख्य आधार कर्मचारियों के मानवीय व्यक्तित्व को सम्मत्ता प्रदान करना है। सीद्दार्थ-पूर्ण औद्योगिक सम्बन्ध बनाए रखने के लिए यह बात अत्यन्त आवश्यक है। अतः मानिक तथा कर्मचारियों के मध्य व्यक्तिगत सम्पर्क का होना अत्यन्त आवश्यक है। स्वच्छ भावस्वरूप सहयोग और कर्मचारियों तथा प्रबन्धकर्ताओं में सम्पर्क बनाए रखने के लिए अत्यन्त संस्थान में एक कामिक विभाग होना चाहिए।

कामिक प्रबन्ध के अन्तर्गत बहुत ही विस्तृत कार्य आते हैं। इसका सम्बन्ध व्यक्तियों के लिए कास्याण कार्य करने से ही नहीं है। वास्तविकता तो यह है कि कोई भी कार्य जो प्रबन्ध के प्रति व्यक्तियों में विश्वास की भावना को जन्म देता है और उनके हीनता बढ़ाता है तथा उनके कार्य कुशलता में सुधार करता है, कामिक प्रबन्ध के अन्तर्गत आ जाता है। अतः इनके अन्तर्गत प्रबन्ध के वह सभी कार्य सम्मिलित होते हैं, जिनका सम्बन्ध भर्ती रोजगार की शर्तों मरुदूरी, औद्योगिक सम्बन्धों कल्याण कायों दुर्घटनाओं की रोकथाम, आवास शिक्षा तथा प्रशिक्षण संयुक्त परामर्श तथा अनुमोचन प्रादि से होता है। इन सभी समस्याओं पर हम पिछले दृष्टियों में विचार कर चुके हैं। हमने इन बात पर भी बल दिया है कि यदि मानिकों और व्यक्तियों के मध्य निरन्तर सम्पर्क स्थापित हो जाय और मानवीय दृष्टि कोण से सब बातों को देखा जाय तो अनेक शय समस्याओं का बड़ी सुगमता से

निराकरण हो सकता है। अतः कामिक विभाग को बड़ी दुरुस्ततापूर्वक कार्य करना पड़ता है। कामिक अधिकारी एक धरन्त दुरुस्त व बुद्धिमान व्यक्ति होना चाहिए, जिसको धर्म समस्याओं तथा अधिकों की परिस्थितियों का विशेष ज्ञान हो।^१

यह बात उत्सहनीय है कि उद्योग में मानवी सम्बन्धों का प्रश्न दिन प्रति दिन महत्वपूर्ण एवं प्रभावशाली होता जा रहा है। विस्तृत अर्थों में 'उद्योग में मानवी सम्बन्ध' वाक्यांश से इस बात का बोध होता है कि उद्योग में रोज़मर्रा पर सचेत हुए व्यक्तियों में किस सम्बन्ध होने चाहिए। सक्रिय व्यावहारिक जीवन में यह वाक्यांश इन सम्बन्धों की धोर सन्धित करता है जो कि मानिकों अथवा पर्यवेक्षक को अपने नवीनम्य कमचारियों के प्रति धरनाने चाहिए और बनाए रखना चाहिए। यह समस्या धर्म अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गई है क्योंकि औद्योगिकरण व विस्तार तथा यन्त्रीकरण के कारण मानिक तथा अधिका के मध्य व्यक्तिगत सम्पर्क तो धर्म प्रबल अतीत की बात बनकर रह गई है। पर्याप्त मजदूरी तथा काय करन की उतीपन्नक दशाओं अथवा औद्योगिक सम्बन्धों व सिए अत्यन्त आवश्यक है। सक्रिय यह बातें स्वयं अपने धर्म न संस्थान की नीति निर्धारण में अधियों का अक्षय अह्योम प्राप्त नहीं कर सकती, अथ वन उनका सहयोग पाने के सिए मानवी रूप से यत्नहार नहीं किया जाता।^२ हमें यह भी याद रखना है कि अधिका भी अनुप्य होते हैं वह मातृक भी होते हैं उनमें भावनाएँ धोर इच्छाएँ भी होती हैं। यह उनकी मूल आवश्यकताओं धोर अरुम से उत्पन्न होती हैं अग मुरला धोर कामिक की भावना धोर स्नेह पूजा धोप भय अधिमान जिज्ञासा धारि की सुत्तियाँ। मानवी सम्बन्धों व धर्म न नीति निर्धारित करन के सिए इन सब बातों का ध्यान धरनय रक्षना जाना चाहिए। यद्यपि हम इन बात का मानकर अतठे हैं के सब उद्योगों का अहंर धन्य कायों के अहंरों की मीति अनुप्य के अरुन अरुन ही दशाओं में अरुति करना है अथवा अधिकाधिकों के अदानुसार, मानवाय साधकताओं की संतुष्टि करना है अथ वया यह अधिका न हागा कि इन अहंरों की सुति के कायों में मानवीय हृत्किण्ठा की अगेगा व। अथ धोर धन्य यत्ना का ध्यान न करन अधियों को अरुम उनकी अरुतदन अरुता की हृत्ति से ही अरुना

१ कामिक विभाग के कायों के अरुतला व सिए भी टी० एन० अरुनी की अरुत 'Indian Industrial Labour तथा भी अरुतला की पुनः Industrial Relations and Personnel Problems देसिये।

२ मेरठ कामिक अधिकाधर अरुतल व अरुतल पत्रयी १९३३ में की की० अ० धार० मेरठ अरुतल अरुतल अरुतल के अरुतल व। अरुतल अरुतल के अरुतल के अरुतल १९३३ का 'Indian Labour Gazette' देसिये।

काय ? वर्षों (सहस्रों) को सम्मानना तो सरल होता है क्योंकि यदि यन्त्र में कोई दोष उत्पन्न हो जाता है तब यह पता लग सकता है कि दोष कहाँ है और यन्त्र को ठीक किया जा सकता है परन्तु मनुष्य को सम्मानना बड़ा विषम कार्य है, क्योंकि यह कोई निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि क व्यक्ति या व्यक्तियों के एक वर्ग पर किसी परिस्थिति की बैसी ही प्रतिक्रिया होगी बैसी किसी दूसरे व्यक्ति या दूसरे व्यक्तियों के वर्ग पर होती है। इस कारण प्रबन्धकर्ताओं का इसी बात में साम होना कि वह केवल औद्योगिक श्रमिकों के क्रमशास्त्र में ही व्यक्तिगत रूप से रूचि न लें बल्कि श्रमिकों के परिवार के क्रमशास्त्र में भी रूचि प्रशयित करें।

मानवी सम्बन्धों की नीति को निर्धारित करने के लिए जो अधिक महत्वपूर्ण तत्व होते हैं उनको प्रत्यक्ष राष्ट्रीय अम संगठन की 'पाठ्य व्यापार समिति' के अधीन प्रविष्टान में पारित किए गए एक प्रस्ताव से उद्धृत किया जा सकता है — (१) हर संस्थान में रोजगार पर सचेत हुए प्रत्येक व्यक्ति के लिए कार्यों कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों के सुस्पष्ट विशेषीकरण के साथ साथ उच्च संस्थान का सुदृढ़ संगठनात्मक ढांचा होना चाहिए, (२) रोजगार की पर्याप्त रक्षाएँ होनी चाहिए जैसे उचित मजदूरी काम करने की प्रशंसा रक्षाएँ आदि (३) संस्थान में श्रमिकों को विधिपूर्वक घंटने नियुक्त करने तथा ठीक स्थान पर सजाने के लिए उपयुक्त नीतियाँ होनी चाहिए। (४) सबके लिए प्रशिक्षण व शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिये (५) सभी कर्मचारियों की जयति के लिए वास्तविक तथा समान प्रवृत्त हो तथा जब भी कमी सम्भव हो पदोन्नति या वेतन वृद्धि की जाए तथा लोकरुही की समाप्ति के सम्बन्ध में उपयुक्त नीतियाँ बनाई जाएं, (६) उच्च प्रबन्ध का प्रतिनिधित्व का कार्य करने वाले पध्विष्यक वर्ग की ओर अधिक ध्यान दिया जाए क्योंकि उनसे यह भाषा की जाती है कि वह श्रमिकों को प्रबन्धकों के ज़रूरतों से प्रसन्न करायें और श्रमिकों की श्राव्यकताओं और समस्याओं को प्रबन्धकों में श्रमिकों में तथा श्रमिकों के वर्गों में हर स्तर पर श्रमिकों और प्रबन्धकों में समन्वय रख सकेंगे। (७) संस्थान में एक दूसरे से सम्पर्क बनाने रखने की व्यवस्था हो। (८) संस्थान में वास्तविक सहयोग बढ़ाने के हर सम्भव प्रयत्न किए जाएं तथा ऐसे ठोस व स्थायी कदम उठाये जाएं जिससे श्रमिकों व श्रमिकों दोनों को ही बराबर का लाभ हो। इसके अतिरिक्त हर प्रयत्न में वास्तविक रूप से सह-सहकार्य होनी चाहिए अन्यथा मानवी सम्बन्धों को प्रसन्न बनाने के प्रयत्न सफल नहीं होंगे।

अमेरिका के एक व्यापारिक संस्थान ने मुख्य-मुख्य बातों की एक ऐसी सूची तैयार की है जो प्रबन्धकों को सदा ध्यान में रखनी चाहिए। यह बातें निम्नलिखित हैं — श्रमिक कर्मचारियों का वैयक्तिक रूप से सम्मान करना और उनके सम्बन्ध में व्यक्तिगत ज्ञान रखना ग्यापप्रियता स्पष्टवादिता निष्पक्षता ऐसा निरर्पण जिसमें पारदर्शिता की भावना न हो प्रयत्न कायदा पुरा करने की योग्यता, दूसरे व्यक्ति के

२,४४६ तक श्रमिकों को कार्य पर लमाने वाले कारखानों में, २३-२३४०० कु० रो० १०-७०० कु० रो० १०-८१० रुपये प्रतिमाह के वेतन मान में वे हैं— प्रतिदिन ३०० से ६६६ तक श्रमिकों को कार्य पर लमाने वाले कारखानों में, २००-१०-२३० कु० रो० १३-४०० रुपये प्रति माह के वेतन मान में । जहाँ श्रमिकों की संख्या २,३०० से भी अधिक है वहाँ घेड १ के कल्याण श्रमिकारी के शरीर बंड १ का एक प्रतिरिक्त कल्याण श्रमिकारी होगा । कल्याण श्रमिकारी कारखानों के जनरल मैनेजर के शरीर कार्य करेंगे और उसके मातहत होंगे । कल्याण श्रमिकारी उत्तर प्रदेश का निवासी होगा चाहिए । नियुक्ति के समय उसकी आयु २३ से ३३ वर्ष तक होनी चाहिए, हिन्दी का पठित ज्ञान होना चाहिए तथा अर्धसास्त्र प्रववा समाजसास्त्र की डिग्री तथा समाज सेवा में डिग्री या डिप्लोमा प्राप्त किए होना चाहिए । प्रथम और त्रितीय वेतन बंड के श्रमिकारियों के लिए क्रमशः पांच और तीन वर्ष का व्यवहारिक अनुभव होना आवश्यक है । श्रमिक-वर्ष की आयु ३५ वर्ष निश्चित की गई है । परन्तु प्रत्येक एक वर्ष है । परन्तु यह श्रमिक कार्य संतोषजनक न होने की प्रवस्था में बढ़ाई जा सकती है । ऐसे मामलों में रज्ज व शरीर की भी व्यवस्था है । कल्याण श्रमिकारी के कर्तव्य निम्न प्रकार हैं —

(१) श्रमिकों और प्रवक्ताओं के बीच सौहार्द-पूर्ण सम्बन्धों की बढ़ाना तथा उनके बीच सम्पर्क श्रमिकारी का कार्य करना; (२) कार्य की बधाओं के सम्बन्ध में श्रमिकों की शिकायतों और कठिनाइयों को, विद्यमान शीघ्र सम्भव हो दूर करने का प्रयत्न करना; (३) स्वास्थ्य, सुरक्षा और कल्याण के सम्बन्ध में श्रम कानूनों, शर्तों और शैक्षणिक नियमों की बधि रंग किया जाता है तो उसकी शूचना करवाने के मैनेजर या डेप्युटी मैनेजर को बना और इस धोर इनका ध्यान विभागा तथा कैंपेन विद्यालय गृह विद्यु गृह पर्याप्त शौचालय सुविधाओं, पीने का पानी शक्ति सुविधाओं के सम्बन्ध में व्यवस्था करने के लिए उचित कथम उद्योग (४) संस्थान के क्षेत्र के अन्दर और बाहर शैक्षीपूर्ण सम्पर्क बनाकर श्रमिकों के मनोभावों का अध्ययन करना तथा ऐसे मामलों को जिससे बिबाद प्रववा तथा उत्पन्न होने की सम्भावना हो श्रमिकों के ध्यान में आना ताकि सौहार्द-पूर्ण सम्बन्ध बने रहें; (५) संयुक्त उत्पादन कार्य समितियाँ श्रमिक प्रवक्ता समितियाँ सहकारी समितियाँ सुरक्षा प्रथम समितियाँ प्रववा कल्याण समितियों के निर्माण को प्रोत्साहन देना, प्रवक्ताओं को श्रेष्ठ प्रकार अनुशासन बनाए रखने में सहायता देना तथा श्रमिकों के हितों में सुविधा करने वाले नवी उपार्यों को प्रोत्साहन देना (६) श्रम कल्याण कार्यों को संघटित करना और जनकी रोगनाम करना तथा यह देरना कि कार्य की बधाओं के सम्बन्ध में शैक्षणिक उपकरणों को तैयार किया जाता है या नहीं- (७) ऐसे मामलों में जिनमें श्रम समाजों और श्रम कल्याण के विषयों की विशेष जानकारी की आवश्यकता होती है, प्रवक्ताओं को सहाय देना तथा श्रमिकों की रहने की प्रवस्थाओं में सुधार के लिए उचित वक उद्योग (८) शैक्षिक हड़ताल और शान्ति के समय

उत्सव व्यवहार रखना (६) धमिकों पर ऐसा प्रभाव डालना कि वह धर्म्य हड़ताल न करें और मामिकों पर ऐसा प्रभाव डालना कि वह धर्म्य तालाबगी घोषित न करें तथा लोड़-कोड़ एवं धर्म्य वीर-कानूनी कार्यों को रोकने के प्रयत्न करना (१०) धूस व भ्रष्टाचार का पता लगाना और रोकना तथा ऐसे मामलों को कारखाने के प्रबन्धकों के ध्यान में लाना (११) ऐसी सड़कों पुर्णों आदि की बगारों व विषय में सम्बन्धित प्राधिकारियों के सम्पूर्ण धमिकेन करना जिन पर होकर धमिके अपने कार्य पर धाते जाते हैं।

अन्तरकार्य प्रशिक्षण की योजना (सिंगे पृष्ठ ४६३)

(Scheme for Training within Industry)

इस योजना का उद्देश्य औद्योगिक संस्थानों में पर्यवेक्षी कर्मचारी वर्ग (Supervisory Staff) की निम्नलिखित योग्यताओं का विकास करना है (१) मार्ग प्रदर्शन योग्यता (२) अनुदेशन योग्यता (३) कार्य प्रणाली में सुधार करने की योग्यता। इस योजना में निम्नलिखित कार्यक्रम धाने हैं धमिक सम्बन्ध प्रशिक्षण, कार्य अनुदेशन प्रशिक्षण और कार्य प्रणाली प्रशिक्षण।

धमिक सम्बन्ध प्रशिक्षण (Job Relations) का कार्यक्रम मार्ग प्रदर्शन की योग्यता से सम्बन्धित है। इसका उद्देश्य यह है कि पर्यवेक्षक इन बात का अनुभव कर लें कि उनको अपने कर्मचारियों के सहयोग तथा बफरदारी से अच्छे परिणाम प्राप्त हो सकते हैं। पर्यवेक्षक को यह समझाना जाता है कि वह अपने माप कार्य करने वालों के प्रति जैसा व्यवहार करेगा वैसा ही व्यवहार उनको धमिकों से अपने लिए मिलेगा। धमिकों से बफरदारी की मांग नहीं की जा सकती। इनको तो अपने ही प्रयत्नों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। यदि दूगरों में हम मद्भव्यहार उत्पन्न करना चाहते हैं तो यह बहुत आवश्यक है कि हममें स्वयं अनुशासन धमिक माथा में होना चाहिए। प्रथम मानकी सम्बन्धों की देखभाल के लिए एक विवेक तन्त्रीक पर विचार विमर्श किया जाता है और उनको व्यवहार में लाया जाता है।

'कार्य अनुदेशन' (Job Instruction) के कार्यक्रम का उद्देश्य पर्यवेक्षकों की अनुदेशन योग्यता को विकसित करना है। इन कार्यक्रम के अन्तर्गत यह बताया जाता है कि धनक बटिनाइयाँ जो सामने धानी हैं वह धमिकों के धोग के कारण नहीं होतीं परन्तु गलत तथा दोषपूर्ण अनुदेशन के कारण होती हैं। पर्यवेक्षकों को यह सिखाया जाता है कि जो प्रशिक्षण वह दन हैं उनको धमिकों से पूर्ण सीखना बना लेनी चाहिए तथा अनुदेशन किस प्रकार का होना भी चाहिए से सीखार धर लना चाहिए ताकि कोई बात धूस न जाय। अनुदेशन को भी धमिकों के सामने दन प्रकार प्रस्तुत करना चाहिए कि धमिक उन कार्य में जो उन्हें सिखाया जा रहा है धानने से धाय लग जाय और उनमें रुचि लें।

धम समतयाएँ एवं समाज कल्याण

कार्य प्रणाली (Job Methods) के कार्यक्रम में पर्यवेक्षकों को—यह अनुभव बताया जाता है कि अपने अनुभव के कार्यों की प्रणाली के प्रति भी जनता कुछ उत्तरदायित्व है। यदि कार्य मीरठ पदा बनाने वाला है या ऐसा है जिसमें बना-बसक रूप से बनना फिरता पड़ता है, या कार्य करने में कुछ सतप होता है, तब पर्यवेक्षक को इस बात की प्रतीति नहीं करनी चाहिए कि कोई धम्य व्यक्ति याकर प्रणाली को ठीक कर देगा। उसमें स्वयं इतनी योग्यता होनी चाहिए कि कार्य किस प्रकार हो रहा है इसकी जांच करें तथा स्वयं अपने विचारपुसार भविकों के लिए कार्य सरल और अधिक सुरक्षित बना है।

घन्तरकार्य प्रविशण कार्यक्रम के लिए भारत सरकार ने 1928 में तकनीकी सहायता कार्यक्रम (Technical Assistance Programme) के अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय धम संगठन से एक विशेषज्ञ की सेवाएँ प्राप्त कीं जिसका नाम भी किती सोई थी था। पहलवाबाद बत्त उद्योग अनुसन्धान संस्था व पुनरुत्थ मिश्र व सघोप मंथम बड़ाबा के लिए थी थी ने प्रविशण कार्य-क्रमों का संभावन किया। उनके कार्य गत को दो बार और बढ़ाया गया और इस काम में उन्होंने ऐसोसियेटेड सीमेंट म्पनीज लि० तथा 'मैसूर कितक इन्डस्ट्रीज' में प्रविशण कार्यक्रमों का संभावन किया। अन्तरकर्म प्रविशण के एक धम्य विशेषज्ञ थी स्टीफन धार० पिपर्सन के म्बर 1928 में आ जाने के कारण प्रविशण कार्य-क्रम के अन्तर्गत प्रविशण कार्यों को सरकारी व निजी दोनों क्षेत्रों के औद्योगिक संस्थानों तक लागू करना हो गया। 1928 में इन प्रविशण कार्यक्रमों के अन्तर्गत प्रविशण पाये-वाने प्रयों की संख्या निम्नलिखित थी —

कार्य अनुदेशन (Job Instruction)	नागपुर	मई दिल्ली	बम्बई
कार्य प्रणाली (Job Methods)	10	12	13
भविक सम्बन्ध (Job Relations)	10	13	12
प्रविशण कार्यक्रमों का पुन निरीक्षण (Follow up)	10	12	12

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रविशित व्यक्तियों से यह धारा भी गई कि वह अपने वृत्त वृत्त संस्थानों में 'घन्तरकार्य प्रविशण' प्रणाली को लागू करेंगे। 'घोर पर्यवेक्षी कार्यकारी वर्ग' को पर्याप्त संख्या में प्रविशण देने। परन्तु इस प्रकार प्रविशण बनवैज्यों को लागू करने से ही बढ़े-शय की प्राप्ति नहीं होती थी। इस कारण 'पुन निरीक्षण' के कार्य का संभावन करना आवश्यक था। अन्तर्राष्ट्रीय धम संघटन के दोनों विंगेज उन औद्योगिक क्षेत्रों में पुन निरीक्षण के उद्देश्य से फिर गए जहाँ यह योजना प्रारम्भ की गई थी। टाटा मोटो व इत्याद कम्पनी तथा जमशेदपुर में यह योजना प्रारम्भ के लिए इस सम्बन्ध में कुछ कार्यों की व्यवस्था की गई। चौदण और पुनराण के उन औद्योगिक संस्थानों में जहाँ 10 से 20 अनुभव

१९५५ तक का अधिषि में योजना को लागू किया गया था पुन निरीक्षण की व्यवस्था की गई। अपना कामकाज समाप्त करने के पश्चात् १९५६ के शीघ्र में विधेयों में जब भारत छोड़ा तब उन्होंने अपना इस्पात इन्जीनियरिंग स्थापन मीमेट सेल व अनिन्न प्रादि १०० संस्थानों के अधिकारियों की प्रतिष्ठित कर दिया था तथा अन्तर्कार्य प्रतिष्ठान कार्यक्रम के अन्तर्गत लगभग ५००० पर्यटकों को प्रतिष्ठान लिया जा चुका था। ५० सं अधिषि फर्मों में नियमित रूप से पुन निरीक्षण की योजना भी लागू की गई थी।

थम मंत्रालय ने १९५४ में बम्बई में एक घन्तर-नाय प्रतिष्ठान केन्द्र (Centre) की स्थापना की। यह केन्द्र बेग में अन्तर्कार्य प्रतिष्ठान कार्यक्रमों को लागू करने और उनके विकास करने के लिए उत्तरदायी है। १९५७ में बम्बई व कानपुर में दो अन्तर्कार्य प्रतिष्ठान प्रायोजनाए लागू की गईं और १९५८ में कोयमटूर, बसकला और बम्बई में भी ये प्रायोजनाए आरम्भ की गईं। १९५९ में इस केन्द्र ने बम्बई में दो प्रायोजनाए और शुरू कीं तथा १९६० में १ प्रायोजना बम्बई में और १ हैदराबाद में आरम्भ की। प्रत्येक प्रायोजना में सरकारी व निजी वर्गों के १९५९ में १२ तथा १९६० में ११ प्रतिष्ठान-अधिकारियों ने भाग लिया। अन्तर्कार्य प्रतिष्ठान केन्द्र ने मार्च १९६० तक २१७ प्रतिष्ठान अधिकारियों को प्रशिक्षित किया। इन अधिकारियों ने अन्तर्कार्य प्रतिष्ठान योजना के अन्तर्गत कार्य अनुष्ठान कार्य प्रशासो तथा अन्तर्कार्य सम्बन्धों में ४०००० पर्यटकों को प्रशिक्षित किया है। अन्तर्कार्य और उद्योगों ने अन्तर्कार्य प्रतिष्ठान योजना को गहनतापूर्वक लागू किया है। १९५९-में इस केन्द्र ने दो नए कार्यक्रम आरम्भ किए—एक 'सम्बन्धित नेतृत्व' से सम्बन्धित था तथा दूसरा 'जापत्रम विज्ञान से सम्बन्धित था। १९६० में इस केन्द्र द्वारा दो अन्य कार्यक्रम आरम्भ किए गए। एक तो बाग विवाद से सम्बन्धित था तथा दूसरा कार्य भी सुरक्षा से। इन कार्यक्रम १९६१ में भी चलते थे और बाग विवाद के कार्यक्रम में बम्बई उत्तराखण्ड परियोजना में भी मई १९६१ में सक्रिय भाग लिया। केन्द्र ने 'अन्तर्कार्य प्रतिष्ठान' योजना को प्रगति और विकास पर 'सूत्र सेंटर' नामक एक मासिक पत्रिका का भी संचालन किया है।

यह भी उल्लेखनीय है कि प्रथम पंचवर्षीय आयोग ने अन्तर्कार्य प्रतिष्ठान कार्यक्रम को धन और योजना मंत्रालय के आयोग में एक विशेष भाग के रूप में सम्मिलित कर लिया था और धन मंत्रालय को पर्यटकों को लाने के विकास का उत्तरदायित्व सौंपा था। द्वितीय पंचवर्षीय आयोग में भी एक कार्यक्रम को जारी रखा गया और तीसरी आयोग में भी एक बार के अन्तर्कार्य और संकेत किया गया है।

यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि १९५८ में आरम्भ में ही धन और योजना मंत्रालय ने सरकारी कर्मचारियों के पर्यटन कर्मचारियों के प्रतिष्ठान के लिए कुछ प्रयोग शुरू किए हैं। यह प्रयोग 'अन्तर्कार्य प्रतिष्ठान' के विभागों पर आधारी

है। योजना के अन्तर्गत एक प्रसिद्धि अभिकारण ने अनेक विचार विमर्श बैठकों का आयोजन किया है।

रिक्सा बसाने का सम्मूलन

रिक्सा बसाने को समाप्त करने के प्रयत्न पर दम मंत्री सम्मेलन के १२ वें अधिवेशन में जो १९५२ में १ से ५ नवम्बर तक हुआ विचार किया गया था और यह सिद्धांत ही यह भी कि — (क) रिक्सा बसाने को धीरे धीरे समाप्त कर देना चाहिए, परन्तु जहाँ इस प्रकार का सम्मूलन सम्भव न हो वहाँ रिक्सा बाइकों की कार्य की दशाओं तथा उनकी बाइकरी परीक्षा के लिए उचित नियम बना देने चाहिए। इस सम्बन्ध में राज्य सरकारों के मार्ग दर्शनार्थ केन्द्रीय सरकार को कुछ धार्य नियम बना देने चाहिए (ख) जब तक रिक्साओं के पूर्ण सम्मूलन का प्रश्न विचारणीय है कोई भी नए लाइसेंस नहीं दिए जाने चाहिए।

राज्य सरकारों से प्रार्थना की गई थी कि वह रिक्सा बसाने को धीरे धीरे समाप्त करने के लिए एक योजना बनाएँ एवं राज्य उपायों के साथ साथ निम्न बातों का भी ध्यान करें —

(१) उस प्रबंध को निर्धारित कर दें जिससे हाथ से धक्का लाइकल से बसाने वाली रिक्सा संतोषजनक रूप से कार्य के योग्य सिद्ध हो सकती है और ऐसी प्रबंध को समाप्त के पश्चात् ऐसी रिक्साओं का बसाना बन्द कर दें।

(२) नई रिक्साओं और नए रिक्सा बाइकों के लिए नए लाइसेंस देना बन्द कर दें।

(३) ऐसे रोक निर्धारित कर दें जिनमें विशेष प्रकार की रिक्साओं तक सकती है। एक निर्धारित योजना के अनुसार ऐसे लोगों को धीरे-धीरे प्रति वर्ष कम कर दें।

केन्द्रीय सरकार ने हाथ से खींचने वाली तथा बाइकिंग रिक्साओं को लाइसेंस देनाके विषय में कुछ धार्य विनियम बनाएँ हैं और इन विनियमों को अगलाने के हेतु : राजस्व-संयोजकों से परिचालन कर दिया है। यह बात ध्यान है कि कुछ संबंधित कठिनाईयों के कारण सम्मूलन का प्रश्न अद्यय में पक गया है।

उद्योग में अनुशासन संहिता

(Code of Discipline in Industry)

विनियमों के अन्तर्गत (क) रिक्साओं के लिए नए लाइसेंस देना बन्द कर दें।

किसी भी उद्योग में अनुशासन संहिता का अभाव है कि कुछ मामलों में बाइकिंग समीक्षा प्रबंधों को बाइकरों द्वारा किए गए पत्रों को मांगू नहीं करते हैं। इसी प्रकार बाइकिंग संहिता के अभाव में अनुशासनहीनता बढ़ रही है। उद्योगों में अनुशासन संहिता को लागू करने और अनुशासन बसाने के लिए भारतीय दम सम्मेलन के १२ वें अधिवेशन में, जो अक्टूबर १९५० में हुआ था एक विनियम बनाया गया है।

समिति को स्थापना की गई थी। इस उप-समिति ने एक ऐसी धनुशासन-संहिता का निर्माण किया जिसमें दिए हुए मिडलैंडों का पालन मानिकों और शमिक गणों को करना चाहिए। स्थायी शम समिति ने अक्टूबर १९५७ में इन संहिता का धनुशोदन किया। माघ १९५८ में भारतीय शम सम्मेलन की उप-समिति की एक बैठक में इस संहिता को मानिका और शमिका के अखिल भारतीय मण्डलों द्वारा अनुमोदन प्राप्त हो गया था। परन्तु औपचारिक रूप में मई १९५८ में मैसूर में हुए १६ वें भारतीय शम सम्मेलन में ही इस संहिता का अनुमोदन किया गया। इस प्रकार यह संहिता १ जून १९५८ से कार्यान्वित की गई। इस संहिता का अनुशासन और अनुसमर्पन करके मानिक मण्डलों के सम्बन्धों को दृढ़ करने के लिए एक टोच बराम उठाया गया है।

इस धनुशासन संहिता को जिस अक्टूबर १९५७ में स्थायी शम समिति का अनुमोदन प्राप्त हुआ था मई १९५८ में भारतीय शम सम्मेलन द्वारा संशोधित किया गया। संशोधित संहिता को नीचे उद्धृत किया जाता है —

उद्योगों में (सरकारी व निजी दोनों ही श्रेणियों में) धनुशासन बनाए रखने के लिए, यह होना चाहिए कि (क) कानून और समझौता में (समय समय-समय पर विभिन्न स्तरों पर किए जाने वाले द्वितीय व तृतीय समझौते भी सम्मिलित हैं।) की गई व्याख्या के अनुसार मानिक और शमिक दोनों ही एक दूसरे के अधिकारों और उत्तरदायित्वों को उचित प्रकार से मानता हों। (ग) इस प्रकार की साम्यता के देने के पश्चात् सम्बन्धित परस्पर-संबन्ध और उचित प्रकार से अपने अधिकारों को निभायें।

केन्द्रीय और राज्य सरकारों का यह वाय होना कि शम कानून व शासन के लिए जो व्यवस्था की गई है उनमें यदि कोई कमी है तो उसका जीव बरें और उग टोक करें।

उद्योग में अन्तर्गत धनुशासन लाने और बनाए रखने के लिए —

प्रबन्धक और शमिक सच इस बात पर सहमत हैं — (१) किसी भी औद्योगिक विषय पर कोई भी एक-पक्षीय कार्यवाही नहीं की जानी चाहिए, तथा विवादों का उचित स्तर पर निपटारा किया जाता चाहिए, (२) विवादों के निपटारे के लिए जो भी वर्तमान व्यवस्था हो उसका उपयोग हर संभव किया जाना चाहिए, (३) बिना पूर्व सूचना के कोई हड़ताल या कामावन्दी नहीं की जाएगी। (४) प्रशासनिक विधानों में अपने विनाश प्रकट करते हुए बहू-पक्ष की प्रतिक्रिया करते हैं कि अपने सभी मण्डलों विवादों व विधानों का सामूहिक कार्यान्वयन सुनिश्चित और एकीकृत विधानों द्वारा निश्चित करेंगे (५) कोई भी एक (क) हड़ताल (ग) धमकी (ग) कामावन्दी, या (घ) कार्य स्थल में भी अहिंसा का सहारा नहीं लेना (६) दोनों पक्ष (क) मुकदमेबाजी (ग) हार्ड हड़ताल या बरतना (घ) कामावन्दी आदि से दूर रहने का प्रयत्न करेंगे (७) जब अपने प्रति-

निजियों के बीच तथा धर्मियों के बीच सभी स्तरों पर स्वस्थ सहयोग को प्रोत्साहन देने और पारस्परिक रूप से लिए गए समझौतों की भावना का प्रादर करेंगे (८) पारस्परिक रूप से यह एक ऐसी विक्रयत निवारण क्रियाविधि की व्यवस्था करेंगे जिसके द्वारा धीमे धीरे पूर्ण रूप से बांध के पश्चात् समझौते पर पहुँचा जा सके, (९) दोनों पक्ष विक्रयत निवारण क्रियाविधि के विभिन्न चरणों को मानने और कोई भी एक-पक्षीय ऐसा कार्य नहीं करेंगे जिससे इस व्यवस्था का उल्लंघन होता हो, तथा (१०) दोनों पक्ष प्रबन्धक कर्मचारियों और धर्मियों को अपने-अपने उत्तरदायित्वों के बारे में सलाह देने की व्यवस्था करेंगे।

प्रबन्धक इन बातों के लिए सहमत हैं — (१) बिना सहमति या समझौते के कार्य पार नहीं बढ़ायेंगे (२) धर्मियों के प्रति किसी भी प्रकार का अनुचित व्यवहार नहीं करेंगे (३) उनके इस अधिकार में हस्तक्षेप करना कि वह धर्मिक संघों के सदस्य बन सकते हैं या बने रह सकते हैं, (४) इस आधार पर कि कोई मजदूर धर्मिक संघों की कार्यवाहियों में भाग लेता है उसके विरुद्ध भेदभाव करना या उस पर दबाव डालना या बन्धन लगाया, (५) धर्मियों के प्रति अत्याचार करना या किसी भी रूप में अपने अधिकारों का दुरुपयोग करना (६) धर्मिकों का निबटारा करने व (७) समझौते, पंचाट, निर्णय व धारद्वी को लागू करने के लिए तत्काल कार्यवाही करेंगे (४) संस्थान में मुक्त-मुक्त स्थानों पर इस सहिता के उपबन्धों को स्वामीय भावनाओं में किञ्चित् कर प्रवर्धित करेंगे (५) ऐसी अनुशासनात्मक कार्यवाहियों के बीच जिनमें तत्काल बर्हास्तर्पीय न्यायोचित हो तथा जिनमें बर्हास्तर्पीय से पूर्व बैठावनी बॉट-अपट या मुमतामी का अन्य किसी प्रकार की अनुशासनात्मक कार्यवाही करनी चाहिए, अन्तर को स्पष्ट करेंगे तथा इस बात की भी व्यवस्था करेंगे कि सामान्य विक्रयत निवारण क्रियाविधि के माध्यम से ऐसी सभी अनुशासनात्मक कार्यवाहियों की अपनी की जा सके; (६) उन मामलों में अपने अधिकारियों तथा सदस्यों के प्रति उचित अनुशासनात्मक कार्यवाही करेंगे जहाँ जांच बढतास के परिणामस्वरूप यह पता चले कि वह ऐसे कार्यों के लिए उत्तरदायी थे जिनके कारण धर्मियों को अनुशासनहीनता कार्यवाही करने के लिए मजबूर होना पड़ा (७) मई १९५५ में १६वें माँछीय धर्म समझौते द्वारा निर्धारित जांच आधारों पर तथा संविदा के अनुबन्ध में विदे-एए स्तरों के अनुसारे संघों की मांगता देंगे।

संघ इस बात के लिए सहमत हैं — (१) किसी भी प्रकार का धार्मिक रूप प्रदर्शन द्वारा दबाव नहीं डालने (२) अघातपूर्ण प्रदर्शनों को न होने देने तथा संघों में किसी प्रकार का बलबा नहीं होने देने (३) अपने सदस्यों को या अन्य धर्मियों को कार्य के बन्धों के दायित्व में धर्मिक संघों की कार्यवाहियों में भाग नहीं लेने देने (४) यह कि कानून समझौते अपना प्रवर्धन द्वारा ऐसी व्यवस्था न कर दी गई हो (५) (क) कर्तव्य की उपाय (६) बेपरवाही से काम, (७) समझौते को

राशि, (घ) सामान्य कार्य में एकादक व्यवस्था बाधा तथा (ङ) अधस्ता (Insubordination) आदि जैसे अनुचित व्यवस्थाओं को हतोत्साहित करेंगे (२) पंचाङ्ग, समझौतों, निर्णयों निपटारों आदि का लागू कराने के लिए तत्काल कार्यवाही करेंगे (३) इस संहिता के उपबन्धों को स्थानीय भाषाओं में संघ के कार्यालयों में मुख्य-मुख्य स्थानों पर प्रदर्शित करेंगे (४) इस संहिता की भावना के विरुद्ध काम करने वाले पदाधिकारियों और सदस्यों के कार्यों की निन्दा करके और उनका विरुद्ध उचित कार्यवाही करेंगे ।

धनुशासन संहिता में जो उपरोक्त मुख्य निन्दान्त बनाये गये थे उनको संक्षेप में निम्न प्रकार पुनः बताया जा सकता है (१) मानिक और धार्मिक एक दूसरे के अधिकारों और उत्तरदायित्वों को भावना देंगे (२) किसी भी धार्मिक-धार्मिक मामले में कोई भी ऐसी एक-पक्षीय व्यवस्था स्वेच्छापूर्वक कार्यवाही नहीं करेंगे जिसके कारण पारस्परिक रूप से निरिच्छता की गई तथा स्थापित विवाहन विवाहन विवाहिकि की व्यवस्था होती हो (३) बिना पूरा सूचना लिए कोई तानाबाना व्यवस्था हड़ताल नहीं की जाएगी (४) हिंसा प्रयोग समरी हथियार उबरना, धनापार, भेदभाव संघ के कार्यक्रम व्यवस्था सामान्य कार्यों में रुकावट बर्तन के प्रति उदात्त व्यवस्था व्यवस्था धनुशासनहीनता सम्पत्ति व्यवस्था धर्मियों की राशि आदि जैसे कार्य कराये नहीं किए जाएंगे (५) कार्य करने सुविधा हाथिर हड़ताल या धरना मुकामेबाजी आदि जैसी धर्मों का सहारा नहीं लिया जायगा (६) विवादों के निपटारे के लिए बनाई हुई व्यवस्था का उपयोग करने के उपयोग बिना जायगा (७) दोनों पक्ष इस बात के लिए सहमत होंगे कि यह करने गव मजदूरों और निवासियों को पारस्परिक बाधा मुहूर्त और ऐच्छित विवाहन द्वारा गुणभावने (८) पंचाङ्ग निर्णयों समझौतों निपटारों आदि को हीनतापूर्वक तथा उत्तरदायक कार्यवाही किया जाएगा । (९) प्रत्येक ऐसे कार्य में निर्णय मौखिकता व्यवस्था में दिया पड़ती हो व्यवस्था जो इस संहिता के निन्दान्तों की भावना के विरुद्ध जाते हों दूर रहेंगे ।

मानिकों और धार्मिकों के वैयक्तिक संबंधों के तथा सरकार के प्रतिनिधियों की एक केन्द्रीय मूल्यांकन और कार्यवाही समिति की स्थापना इस उद्देश्य के की गई है कि धनुशासन संहिता को किस प्रकार से लागू किया जा रहा है इसका मूल्यांकन किया जाए । इस समिति का यह भी कार्य है कि इस कार्यको पंचाङ्ग, समझौतों आदि को लागू करने में देर होने के कारण व्यवस्थागत रूप में लागू करने के प्रयत्नों को जांच करे । इस समिति में इस बात पर जोर दिया है कि संहिता में निर्णय निन्दान्तों का उल्लंघनकार ही वास्तव में ही जाता चाहिए बल्कि उनमें ही जो वास्तव में निर्णय है उनका भी ध्यान रखा जाय । संहिता के उद्देश्यों का भी ध्यान रखकर निर्णय रूप में प्रचार करना चाहिए । केन्द्रीय मूल्यांकन और कार्यवाही समिति की कार्यवाही की रोकथाम करता है । उम्मा में भी इसी प्रकार की व्यवस्था और

यम समस्पाएँ एबं समान कस्याए

कार्यान्विति' व्यवस्था की गई है। (विशेष पृष्ठ १७४) यह प्रभाग बहुत से मन्त्रों का प्रशासक से बाहर ही प्रयोग करने में सफल हुआ है।

विद्यमान १९२८ में उद्योग म अनुशासन संहिता को लागू न करने पर कुछ उपाय प्रस्ताव पारित (Sanctions) निश्चित किए गए। इन उपायों को मालिकों और धर्मियों के केन्द्रीय संघों द्वारा लागू किया जाएगा। यदि कोई संघ संहिता को मंग करता है, तो उसे केन्द्रीय संघम द्वारा विद्यमान संघ सम्मिलित सम को चेतावनी संहिता मंग कोई मन्त्री प्रकृति की है तब केन्द्रीय संघम कोई दण्ड देगा। यदि किसी संघ देगा या निम्न करेगा (Censure) प्रस्ताव मंग कोई दण्ड देगा। यदि किसी संघ द्वारा संहिता को बार-बार मंग किया जाता है तो केन्द्रीय संघम ऐसे संघ को अपनी व्यवस्था से प्रभाग कर सकता है। संहिता का मन्त्री रूप से और जानबूझ कर उल्लंघन करने पर, ऐसे उल्लंघनों का व्यापक रूप से प्रचार किया जाएगा।

सन् १९२८ से अब तक इस अनुशासन संहिता को लागू किया गया विद्यमान १९२९ तक संहिता के उल्लंघन के ७७० मामलों की रिपोर्ट विभाग को मिली। इनमें से २२६ मामलों पर किसी प्रकार की कार्यवाही करने की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि या तो शिकायतें स्पष्ट नहीं थीं प्रस्ताव उन संघों से सम्बन्धित थीं जिन्होंने इस संहिता को स्वीकार नहीं किया था। १८० मामलों के क्षेत्र से सम्बन्धित थीं जिन्होंने

ये इसलिए उचित कार्यवाही करने के लिए ऐसे मामलों को उद्योगों के पास भेज दिया था। क्षेत्र १७१ मामलों में से २४२ (पर्याप्त ६२%) का या तो निपटाया कर दिया गया प्रस्ताव प्रस्तावों पर ध्यान इन उल्लंघनों की ओर इतराया गया और उनसे मामलों को ठीक करने को कहा गया। क्षेत्र मामलों की जांच की जा रही थी। १९६० में इस प्रभाग द्वारा संहिता के मंग करने की २२१ शिकायतें प्राप्त हुईं। इनमें से ९७१ शिकायतें मंग लागू तथा विवाचन निर्णयों की केन्द्रीय संघमालों में लागू न करने की थी। संहिता मंग करने के मामलों में से ७१ प्रतिशत मामले प्रत्येक पक्ष को सूचित किए गए थे और उनके द्वारा जो कुछ भी किया जा सके नहीं किया था उसे ठीक कर दिया गया। क्षेत्र मामलों पर भी जांच की जा रही थी। १९६१ में केन्द्रीय कार्यान्विति तथा मूल्यांकन प्रभाग द्वारा संहिता के केन्द्रीय संघमालों में मंग होने की ७०६ शिकायतें प्राप्त हुईं। २८% मामले प्रत्येक पक्ष के बहने पर ठीक कर दिए गए थे। १७% मामलों में शिकायतों का कोई आधार न था। २२% मामलों पर जांच की जा रही थी। प्रभाग द्वारा प्रत्येक पक्ष को यह भी समझा दी जाती है कि यह संहिता को मंग न करे। प्रभाग ने पक्षों से अनुत्तर (Persuade) करके भी अनेक बार हड़तालों को रोका है और विवाचनों का शान्तिपूर्वक निपटाया किया है।

अनुशासन संहिता से ऐच्छिक आधार पर औद्योगिक प्रशासन स्थापित करने और मालिकों और धर्मियों के सहयोग से औद्योगिक शांति को बनाये रखने की प्रक्रिया की वर्तमान नीति का बोध होता है। मालिकों और धर्मियों दोनों ही पक्षों

पर इसका अर्थ प्रभाव पड़ा है तथा इसे धीमागिक विवादा के प्रति एन मई विचारधारा उत्पन्न हो गई है। मामलों और धर्मिका व धर्म मया ने तथा राज्य सरकारों ने इस संहिता के लागू होने पर अनुचित प्रवृत्ति की है। राष्ट्रीय सरकार के विभागीय उपक्रमों (Undertakings) में भी इस संहिता को लागू करने का निर्णय कर लिया गया है।

सरकार अब इसमें भी अधिक एक महत्वपूर्ण क्षेत्र की ओर पय उठा रही है अर्थात् कार्य-कुशलता और कल्याण कार्य संहिता (Code of Efficiency and Welfare) लागू करने का विचार कर रही है। राष्ट्रीय धर्म व राजगार मन्त्रालय द्वारा इस संहिता का निर्माण किया गया है और इस संहिता का धनुशासन संहिता का पूरक कहा जा सकता है। इसका उद्देश्य उत्पादन उत्पादकता व कल्याण सुविधाओं में सुधार करना है। इस कार्य कुशलता संहिता पर नवम्बर १९५६ में भारतीय धर्म सम्मेलन में विचार विमर्श हुआ। संहिता के उद्देश्यों की पूर्ति करने की जा सकती है उस पर सोच विचार करने के लिए एक समिति की नियुक्ति की गई। इस समिति ने संहिता में सम्बन्धित सूचना एकत्रित करने के लिए एक प्रस्तावती बनाई, तथा सुझाव और टिप्पणियों के लिए मामलों और धर्मिका व राष्ट्रीय संघों में इसे परिभाषित किया। संहिता पर बगसौर में भारतीय धर्म सम्मेलन के १९६० अधिवेशन में जो अक्टूबर १९६१ में हुआ पुनः विचार किया गया तथा इस संहिता के विषयों का असो भाति जांच करने के लिए एक विभागीय समिति की नियुक्ति की गई है। यह कार्य-कुशलता तथा कल्याण कार्य संहिता धनुशासन संहिता से अलग है क्योंकि उसमें तो मामलों और धर्मिकों से कई बातें न करने के लिए कहा गया है परन्तु कार्य-कुशलता और कल्याण कार्य संहिता पनात्मक है और इसमें मामलों व धर्मिकों से ऐसी विषय कार्य करने को कहा गया है जिससे मोहान्द्रुज औद्योगिक सम्बन्ध बढ़ें और उत्पादन अधिक हो।

संघों को मान्यता प्रदान करने के लिए शर्तें —

(Criteria for Recognition of Unions)

संघों को मान्यता प्रदान करने के लिए धनुशासन संहिता के अनुच्छेदों में कुछ नियम दिए गए हैं। (१) जहाँ एक से अधिक संघ हैं वहाँ किसी संघ को मान्यता पान के लिए यह आवश्यक है कि वह संघ पंजीकृत होने के अन्तर्गत कम से कम एक वर्ष तक कार्य करता रहा हो। जहाँ बस एक संघ है वहाँ वह संघ लागू नहीं होगी। (२) संघ की सदस्यता में सम्मिलित संस्थान में कार्य करने वाले कम से कम १५ प्रतिशत अधिक होने चाहिए (संस्थान के उन व्यक्तियों की ही बनी जाती होगी जिन्होंने पिछले ६ महीनों में कम से कम तीन महीनों का कार्य किया है)। (३) यदि किसी स्थायी शोध के उद्योग के १५ प्रतिशत अधिक किसी संघ के सदस्य होते हैं तब वह संघ एक प्रतिनिधि संघ (Representative Union) के

शौचोपेक्षित संस्कारों के प्रबन्धकों और उनमें लगे हुए व्यक्तियों दोनों को स्वीकृत हों। शौचोपेक्षित सम्बन्धों की सुधारने में इसकी महत्ता पर जोर दिया गया। इस विषय पर विचार करने के लिए सम्मेलन ने एक उप-समिति नियुक्त की। मार्च १९३८ में उप-समिति ने अपनी एक बैठक में कुछ सिद्धान्तों को बनाया। इन सिद्धान्तों के अनुसार विधायक विचारण क्रियाविधि इस प्रकार होनी चाहिए कि (१) वह चाबू वैधानिक व्यवस्था की अनुपूरक हो और इस व्यवस्था का प्रयोग भी करे, (२) वह सरल और प्रौढित्वपूर्ण हो तथा (३) प्रबन्धकों पर यह उत्तरदायित्व डाले कि वह ऐसे प्राधिकारियों की नामावली कर दें जिनसे विभिन्न स्थलों पर सम्पर्क बनाया जा सके। निम्नी सम्बन्धों में सम्बन्धित जो सिद्धाण्टें हों उन्हें सबसे पहिले प्रबन्ध के उस प्राधिकारी के सम्मुख लाना चाहिए जो उस प्राधिकारी के औरत ऊपर का प्राधिकारी होता है जिसके बिन्दु विधायक की जाती है। उसके पश्चात् विधायक को विधायक विचारण-समिति के सम्मुख ले जाया जा सकता है। अन्य विधायकों को बिलका सम्बन्ध टोच दार की बसाधों से होता है सर्वप्रथम प्रबन्धक द्वारा नामावली किए गए प्राधिकारी के सम्मुख लाना चाहिए और बाद में विधायक विचारण समिति के सम्मुख ले जाना चाहिए। जब कोई विषय विधायक विचारण समिति के सम्मुख सबसे पहिले ला जाता है तब उसकी परीक्षा उच्च प्रबन्धकों के सम्मुख होनी चाहिए।

भारतीय सम सम्मेलन ने अपने १६ वें प्रतिवेदन में उप-समिति द्वारा प्रस्तुत सिद्धान्तों का अनुमोदन किया तथा प्रार्थना की कि इन सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए, एक सरल और नम्य (Flexible) विधायक विचारण क्रियाविधि बनायी जाए। परिणामस्वरूप सितम्बर १९३८ में एक आदर्श विधायक विचारण क्रियाविधि बनाई गई और विद्यतीय धारा में इसको स्वीकार कर लिया गया। प्राधिकारों के पास इनको परिभाषित कर दिया गया है जिससे यदि वहसे से ही उनक संस्कार में इससे उत्तम कोई विधायक विचारण क्रियाविधि नहीं है तो वह इस क्रियाविधि को लागू कर दें।

विधायक विचारण क्रियाविधि के प्रसारण के लिए जो व्यवस्था की जाती है उनके अन्तर्गत व्यक्तियों द्वारा विभागीय प्रतिनिधियों का चुनाव होता है अथवा तंत्रों द्वारा उन्हें मनोनीत कर दिया जाता है अथवा वहाँ कहीं नातिक नजरूर समितिवाँ हैं वहाँ व्यक्तियों के प्रतिनिधियों को इस व्यवस्था के लिए ले लिया जाता है। प्रबन्धकों को प्रत्येक विभाग के लिए ऐसे व्यक्ति नामावली करने होते हैं जिनके सम्मुख मामले को सर्वप्रथम रखा जा सके। इससे ध्यासा कम यह होता है कि विधायकों को विनामीय व्यक्तियों द्वारा चुना जाए। विधायक विचारण समिति में प्रबन्धकों और व्यक्तियों के एक प्रकार प्रतिनिधि होते हैं जिनकी संख्या ४ से ६ तक निर्धारित की गई है।

विधायक विचारण क्रियाविधि में उन विभिन्न उपधायों का विलुप्त रूप से उल्लेख किया गया है जिनक द्वारा कोई विधायक चुनी जा सकती है। सर्वप्रथम विधायक प्रबन्ध के विभागीय प्रतिनिधि के पास जाती है जिसकी ४८ पन्नों के अन्तर

धन्य निर्णय देना होता है। इसमें सज्जता न मिलने पर पीड़ित धमिक विभागीय समझौते के पास विभागीय अधिकारी के साथ जा सकता है। इस कार्य के लिए तीन दिन नियत हैं। इसके ऊपर गिरावट निवारण समिति द्वारा गिरावट पर बिपार किया जाता है। समिति को सात दिन के अन्दर अन्दर अपनी विचारों प्रबन्धक के पास भेजनी होती हैं। गिरावट निवारण समिति की विचारों करने के तीन दिन के अन्दर प्रबन्धकों का अन्तिम निर्णय धमिक के पास भेज दिया जाता है। यदि धमिक को इस निर्णय में सन्तुष्टि नहीं होती तब वह निर्णय पर पुनः बिपार के लिए अपील कर सकता है तथा तब प्रबन्धकों को सात दिन के अन्दर अपना निर्णय देना होता है। समझौता न होने की दशा में गिरावट को ऐच्छिक विराधन के लिए सीना जा सकता है। जब तक पीड़ित धमिक द्वारा उच्च प्रणय के अन्तिम निर्णय को सम्मोहार नहीं कर दिया जाता औपचारिक मुसत अस्तित्वा का उपयोग नहीं किया जा सकता।

गिरावट निवारण विचारविधि में अन्य घोर बातों का भी उल्लेख किया गया है, उदाहरणतः जब कोई गिरावट प्रबन्धकों द्वारा लिए गए आदेश के कारण उत्पन्न होती है तब विचारविधि के सम्मूह जाने में पूर्व उस आदेश को मानना आवश्यक है गिरावट निवारण समिति में धमिकों के प्रतिनिधियों का बिट्टी भी बाण्डाओं को देखने का अधिकार है और प्रबन्धकों के प्रतिनिधियों द्वारा किसी भी गैरनीय प्रवृत्ति के बाण्डाओं को गिनाने से इन्कार करने का अधिकार है। उस अवधि (30 घण्टे) का भी उल्लेख है जिसमें घनीय एक बरग से दूसरे बरग में जाई या सकती है। गिरावट दूर करने में अन्य हुए समय के लिए सुगान करने की भी व्यवस्था यदि है। बर्तालगी और अन्तर्दगी के बिपयों को गिरावट के सम्मूह में धमिक का यह अधिकार है कि वह बर्ताल या अन्तर्द गिनाने के एक सन्तर्द के अन्तर्द या ता बर्ताल करने का अधिकार विचारों के सम्मूह या प्रबन्धकों द्वारा निवृत्त किए गए प्रबन्ध अधिकारी के सम्मूह अन्तर्द कर सके।

धमिक प्रबन्धक सहयोग

(Labour-Management Co-operation)

आज सभी देशों में औद्योगिक मण्डलों को कम करने तथा मानिकों द्वारा धम संघटनों के विरोध को कम करने के लिए धमिक मण्डलों को अन्तर्द मानिकों को मानिकों के विरोध को कम करने के लिए धम मण्डलों के प्रति मानिकों का विरोध सुगान समायोज्य नहीं हुआ है परन्तु फिर भी बरती सीमा तक कम हो गया है। धमिक मण्डलों का सुगान उत्पन्न यह है कि जब सभी धम मानिकों और धमिकों में कोई अन्तर्द अन्तर्द मण्डल हो तब धम धमिकों के विचारों का सुगान करे। सुगान एवं अन्तर्द मानिकों की धमिक प्रवृत्तियों में जहाँ कुछी और धम अन्तर्द मानिकों में होते हैं तथा जहाँ मानिकों का सुगान उत्पन्न माधु बर्ताल है तब विचारों का सुगान अन्तर्द मानिकों का है।

हाल ही के वर्षों में नातिकों और धर्मियों के सम्बन्धों के विषय में एक नई विचारधारा देखने में आयी है और अब इस बात पर अधिक बल दिया जा रहा है कि पारस्परिक सम्बन्ध ऐसे होने चाहिए कि संघर्ष के स्थान पर इस प्रकार सहयोग से कार्य किया जाए कि सबका हित सम्पादित हो। धर्म समस्याओं के प्रति अब मानवीय दृष्टि कोश किया जाता है। अब धर्म को एक बर्ष नहीं समझा जाता बल्कि बजार में खरीदा बिकता बच्चा या सके वरन् धर्मिक को 'मानव' समझा जाता है। फ्लोरेन्सिया की घोषणा तथा अन्तर्राष्ट्रीय धर्म संघटन की कार्यवाहियों में भी दृष्टिकोश में इस प्रकार के परिवर्तन होने में काफी योगदान दिया है। इससे धर्मिक और प्रबन्धकों के सहयोग में नए दृष्टिकोश पैदा हुए हैं। इनके कारण अब रोजगार की संविदा के स्थान पर धर्मियों से अब साझेदारी की संविदा की जाती है, ताकि धर्म के हितों के लिए प्रत्येक पक्ष अपना-अपना योगदान दे सके।

धर्मिक प्रबन्धक सहयोग का विद्यमान इस बात पर आधारित है कि क्योंकि धर्मिक धर्म की नींवका के लिए इस बात पर निर्भर होते हैं कि कारखाना सुचारु रूप से चालू रहे, यद्यत् यह स्वाभाविक है कि व्यवसाय या उद्योग के मामलों में बहु दक्ष नों और उनके संभालन में उनका भी कुछ हाथ हो। धर्मिक-प्रबन्धक सहयोग में सबसे आवश्यक बात यह है कि पारस्परिक रूप से परामर्श किया जाए तथा प्रबन्धकों की योजना, नीति और समस्याओं से सभी स्तर के कर्मचारियों को सूचित रखा जाए तथा धर्मियों के विचारों से प्रबन्धकों को अवगत कराया जाए। इस प्रकार के परामर्श नाबिक नबदूर कमितियों अथवा धर्मिक प्रबन्धक समितियों के द्वारा औपचारिक रूप में अथवा कार्यान्वयन, परबिधक और धर्मियों के बीच पाद-विवाद व अनौपचारिक बातों के रूप में हो सकते हैं। इस प्रकार के सहयोग से मानव-वृत्त की महत्ता की पूर्ण भावना मिलेगी तथा संस्थान के संभालन में धर्मिक और धर्मिक दक्ष संगे। धर्मियों में नैतिक और वृद्धत्व की भावनाएँ समाप्त हो जायेंगी तथा धर्मिक और नातिक दोनों ही एक दूसरे को अपेक्षाकृत धर्म भाँति समझने का प्रयत्न करेंगे। इसका परिणाम यह होगा कि औद्योगिक धर्मिक होयै धर्मिक कार्य-वृद्धमत्ता हाथी तथा धर्मिक और धर्मिकार्थ में कपी होगी और यथासम्भव अधिकतर उत्पादन होगा।

वरन्तु इस समय तक कोई धर्मिक-प्रबन्धक सहयोग सफल नहीं हो सक्ता अब तक कि दोनों पक्ष अपने हृदय से ही सहयोग करना न चाहते हों तथा दोनों पक्षों की एक दूसरे का विरोध एवं अपेक्षा न हो। प्रबन्धकों को सभी मामलों में धर्मियों की सलाह लेनी चाहिए तथा संस्थान से सम्बन्धित सभी मामलों से उन्हें सूचित रखा चाहिए। इनकी प्रशिक्षण की सुविधाएँ भी देनी चाहिए तथा धर्मिक उत्पादन के कारण की काम उत्पन्न हो जयमें से धर्मियों को भी भाग देना चाहिए। अतुल्य परामर्श व्यवस्था का उद्देश्य यह नहीं होगा चाहिए कि धर्मिक संघों की महत्ता कम कर दी जाए। नापूरिक साझेदारी का कार्य धर्मिक संघों पर ही छोड़ देना चाहिए।

श्रमिक प्रबन्धक सहयोग के अनेक रूप हो सकते हैं। ऐसे सभी मामलों में प्रबन्धकों द्वारा श्रमिकों का सहयोग लिया जाता है अथवा उनसे परामर्श लिया जाता है श्रमिक प्रबन्धक सहयोग के अन्तर्गत या सकते हैं। मानिक मजदूर मण्डलियाँ, संयुक्त परामर्श समितियाँ प्रबन्ध की समुक्त परिषदें आदि इस माध्यम के विभिन्न रूप हैं। इन ही के अर्थों में श्रमिक प्रबन्धक सहयोग या परामर्श लिया जाता है कि श्रमिकों का उद्योग के प्रबन्ध में भाग है।

प्रबन्ध में श्रमिकों का भाग

(Workers Participation in Management)

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में आयोजना की सफलतापूर्वक कार्यान्वयन करने के लिए प्रबन्ध में श्रमिकों के अधिक माहुरण पर जोर दिया गया है। इसमें बताया गया है कि एम उद्योगों से (क) उत्पादनता बढ़ानी जिससे व्यवहार श्रमिकों और समाज का सामान्य हित होगा। (ग) उत्पादक मजदूरों और उत्पादन की प्रक्रियाओं में श्रमिकों का बड़ा भाग है यह बड़ा ध्येय प्रारम्भ में समझ लेंगे और (घ) मान्य श्रमिकों की श्रमिकों की इच्छा भी इसमें सम्मिलित हो जानी। इन सबका परिणाम औद्योगिक शांति उच्च औद्योगिक उत्पादन और श्रमिक सहयोग होगा। आयोजना में सिफारिश की गई है कि इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रबन्ध-विभाग की स्थापना द्वारा की जा सकती है जिनमें प्रबन्धक, कार्यान्वयन तथा श्रमिकों के प्रतिनिधि हों। ऐसी प्रबन्ध-परिषदों की सभी सम्बन्धित विषयों पर कार्य में अधिक और ठीक प्रकार में जानकारी देने का उद्देश्य प्रबन्धक का ज्ञान श्रमिकों को प्रबन्ध में प्रभावी रूप में कार्य कर सकें। प्रबन्ध-परिषद की एक श्रमिकों होना चाहिए कि वह संस्था में सम्बन्धित विभिन्न प्रश्नों पर विचार विमर्श कर सकें तथा उनके ध्येय प्रारम्भ में मजदूरों के उद्योगों की निगरानी कर सकें। परन्तु ऐसे विषय जो सामूहिक सौकराती में सम्बन्धित हैं परिषद के विचार क्षेत्र के बाहर हाने चाहिए। धारण में ऐसी व्यवस्था सम्बन्धित उद्योगों के बड़े-बड़े संस्थाओं में प्रयोग के रूप में लागू करनी चाहिए। एका पक्षों के साथ उद्योग का व्यापार विनिश्चित होना चाहिए तथा योजना का विचार प्रारम्भ किए प्रबन्धकों की पूर्ण क्षमता को ध्यान में रखकर ही लिया जाना चाहिए।

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में इन सिफारिशों के अनुसार भारत सरकार ने श्रमिकों के प्रबन्ध में भाग देने की एक विस्तृत योजना तैयार करने का निर्णय किया। इस कार्य की शुरुआत के लिए १९५६ में प्रारम्भिक दलों में एक सम्बन्धक बन गया था और वह इनके अर्थों में इस योजना के समानता को स्पष्ट देखाकर सम्बन्धक बन गए। सम्बन्धक दल की रिपोर्ट १९५७ में प्रस्तुत की गई। रिपोर्ट में इनके अर्थों में प्रबन्धक में श्रमिकों के भाग देने की योजना का अन्वयन किया गया है। इन में एक बात पर विशेष जोर दिया कि भारत में एक विस्तृत सम्बन्धक

किया जाना चाहिए ताकि इस प्रकार की योजना के विभिन्न पहलुओं को समीक्षा, प्रवर्धकों तथा पर्यवेक्षकों द्वारा ठीक प्रकार से समझा जा सके। रिपोर्ट में इस बात पर बल दिया गया है कि "संयुक्त परामर्श की स्थापना स्वयं संस्थान में ही होनी चाहिए," अर्थात् संयुक्त परामर्श का धर्म केवल दोनों पक्षों को आपस में मिश्रकर बैठाना ही नहीं होना चाहिए बल्कि इसका तात्पर्य यह होना चाहिए कि सभी विषयों में संयुक्त रूप से परामर्श हो। तकनीकी विद्यार्थी एवं पर्यवेक्षक इस संयुक्त परामर्श प्रणाली के प्रधान अंग होने चाहिए। रिपोर्ट में दृष्टिकोणों में परिवर्तन माप सेवे की व्यवस्था से निकट रूप में सम्पर्क बनाये रखने वाले हड़ भारत-विद्यार्थी समिक-सर्वों की स्थापना तथा मजदूर सौचोपेय सम्बन्धों की महत्ता पर बल दिया गया है ताकि समीक्षा की प्रवृत्ति में भाग लेने की योजना सफल हो सके। समिक-प्रवर्धक की संयुक्त परिषदें समिक सर्वों की स्थानापन्न नहीं होनी चाहिए। सामूहिक सौदागरी के कार्य ऐसी परिषदों के क्षेत्र के बाहर होने चाहिए। इस प्रकार मजदूरी बानस और निजी सिफारिशों आदि पर ऐसी संयुक्त परिषदों द्वारा विचार नहीं किया जाना चाहिए। संयुक्त परिषदों को उदाहरणतः ऐसे प्रश्नों पर विचार करना चाहिए, जैसे (१) स्थायी प्राप्ति में परिवर्तन, (२) छुट्टी (३) विवेकीकरण के लिए प्रस्ताव, (४) संस्थान का बन्द करना या उत्पादन प्रक्रियाओं को कम करना या बन्द करना (५) नई प्रणालियों को लागू करना (६) मरती और दण्ड के लिए कार्य-विधि। परिषदों को निम्नलिखित विषयों में सूचना प्राप्त करने और सुझाव देने का अधिकार भी होना चाहिए (१) संस्थान की सामान्य आर्थिक व्यवस्था, बाजार का दम उत्पादन तथा बिक्री कार्यक्रम (२) संस्थान का समझ तथा सामान्य सफलता (३) संस्थान की आर्थिक स्थिति को प्रभावित करने वाली परिस्थितियाँ (४) निर्माण और कार्य की प्रणालियाँ (५) आर्थिक सुख पत्र व साम हानि सेना तथा सम्बन्धित कायदात पत्राव सलसी आदि। इस भय को दूर करने के लिए कि परिषदों में कार्य के प्रति उदासीनता न या पाम इन परिषदों को कुछ प्रशासनात्मक उत्तरदायित्व सौंपे जा सकते हैं उदाहरणतः (१) कल्याण कार्यक्रमों का प्रशासन (२) सुरक्षा उपायों की देखभाल (३) व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा विद्यार्थी योजनाओं का संचालन (४) कार्य के दृष्टे और आठम के लिए अनुसूचि संचार करना (५) दुष्टियों की अनुसूचि पनामा तथा (६) महत्वपूर्ण सुझावों के लिए पारितोषिक देना। अल्पवय-मम परिषदों के बनाने में किसी भी बन्धन अपना अनिवार्यता के बिना या और बहु केवल ऐसे विचार बनाने के पक्ष में या विरुद्धे अन्तर्गत ऐसी परिषदों के बनाने की अनुमति मात्र मिल जाय। अथवा किसी संस्थान की विभिन्न स्तरों पर विभिन्न प्रकारों न ही ठी एक संस्थान के लिए केवल एक ही परिषद बनाने की निश्चयिता की गई थी। प्रारम्भ में बाहरी व्यक्तियों का सहयोग आवश्यक हो सकता है परन्तु अन्तरीय सत्या सीमित ही होनी चाहिए।

अल्पवय दम की मुख्य मुख्य निश्चयिमें जुलाई १९५७ में हुए भारतीय मज

सम्मेलन के १३ वें अधिवेशन में स्वीकृत कर ली गई थीं । १२ सदस्यों की एक उपसमिति बनाई गयी थी जिसका कार्य यह था कि इस विषय में और विस्तार से आँख पड़ताम करे कि प्रारम्भ में ऐच्छिक आचार पर कुछ चुने हुए संस्थानों में प्रबन्ध में धमिकों के भाग लेने की योजना लागू हो सकती है या नहीं । इस उपसमिति ने सिफारिश की कि पहले यह योजना सार्वजनिक व निजी क्षेत्र के चुने हुए ३० औद्योगिक संस्थानों में लागू की जानी चाहिए । उन संस्थानों में जहाँ यह योजना शुरू की जा सकती है तथा उन संस्थानों की जो इस योजना में सहयोग देने को तैयार थे एक सूची बनाई गई । यह निष्पत्ति किया गया कि परीक्षण हेतु जो इकाइयाँ छाँटी जाय उनको निम्न आचार पर चुना जाय (१) उनमें अच्छी प्रकार से स्थापित और सार्वजनिक धमिक संघ हों (२) संस्थान में कम से कम १०० धमिक कार्य करते हों (३) मासिक और धमिक सभ दोनों ही वैज्ञानिक संघटना के माध्यम हों (४) संस्थान की इस बात में कुछ प्रसिद्धि हो कि उनमें औद्योगिक सम्बन्ध स्थापित करने के हैं (५) दोनों पक्ष इस योजना को सहयोग की भावना से लागू करने के लिए तैयार हों । उपसमिति ने यह भी निर्णय किया कि एक पूरे संस्थान के लिए केवल एक परिषद् होनी चाहिए धमिकों के प्रतिनिधियों को धमिक सभों द्वारा मनोनीत किया जाना चाहिए तथा धमिकों के प्रतिनिधियों में बाहरी व्यक्तियों की संख्या २५ प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए । संयुक्त परिषद् में संस्थानों की संख्या १२ न अधिक नहीं होनी चाहिए । संयुक्त परिषद् की बैठकें भी कार्य के पदों के दौरान में ही होनी चाहिए ।

ईदृशनी में ३१ जनवरी एवं १ फरवरी १९३८ को हुए धमिक प्रबन्धक सहयोग के सेमिनार में भी उपसमिति की सिफारिशों पर विचार किया गया । केन्द्रीय धम व राजस्व मंत्रालय की पुनर्जाँच साम मन्त्रालय ने इस सेमिनार की अध्यक्षता की । इसमें मासिकों धमिकों व सरकार के १०० से भी अधिक प्रतिनिधियों ने भाग लिया । इसमें से उन ३० औद्योगिक इकाइयों के प्रतिनिधि भी थे जिनमें प्रबन्ध में धमिकों के भाग लेने की योजना को स्वीकृत कर लिया था या करने ही लागू कर चुके थे ।

सेमिनार में इस बात पर मतभेद था कि संयुक्त परिषदों में मासिकों और धमिकों के प्रतिनिधियों की संख्या बराबर बराबर होनी चाहिए तथा यह संख्या १२ से अधिक भी नहीं होनी चाहिए ताकि परिषदों का काम प्रभावशाली हो और उनका प्रबन्ध भी ठीक प्रकार में हो सके । छोटे संस्थानों में संस्थानों की संख्या ६ से कम नहीं होनी चाहिए । सेमिनार में इस बात पर भी सब सहमत थे कि जो भी निर्णय लिए जाएं वह सर्वसम्मति से हों ।

संयुक्त परिषदों की स्थापना के लिए एक आदेशक बात यह है कि संस्थान में अच्छी प्रकार से स्थापित और सार्वजनिक धमिक संघ हों । धमिक संस्थानों में प्रतिनिधित्व के प्रश्न पर भी सेमिनार में विस्तारपूर्वक विचार किया गया था । इस

बात पर सब सहमत थे कि धमिकों के प्रतिनिधि स्वयं अधिक ही होने चाहिए। परन्तु यहाँ अधिक सब यह अनुभव करें कि बाहरी व्यक्ति को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए उस स्थिति में ऐसे बाहरी सदस्यों की संख्या १ (अर्थात् २१% से अधिक नहीं) तक सीमित होनी चाहिए और पारस्परिक रूप से सहमत होने पर अधिक से अधिक यह संख्या दो हो सकती है। संयुक्त परिषदें इकाई आधार पर स्थापित की जानी चाहिए। जहाँ एक संस्थान में अनेक विभाग हैं वहाँ के लिए सेमिनार में यह निर्णय किया कि संयुक्त परिषदों में प्रतिनिधित्व का प्रत्यक्ष संघ और संस्थान पर ही छोड़ देना चाहिए। एक ही धन और एक ही प्रबन्ध के अन्तर्गत यदि विभिन्न संस्थान हों तो उनके सम्बन्ध में यह निर्णय किया गया कि योजना को प्रथम तो इकाई आधार पर प्रारम्भ करना चाहिए तथा उत्पश्चात् जब कुछ अनुभव हो जाए तब एक केन्द्रीय परिषद की स्थापना की जा सकती है।

प्रथम में धमिकों के भाग लेने के लिए उप-समिति द्वारा तैयार किए गए धारणा समझौते पत्र पर भी सेमिनार में विचार किया गया। इस समझौते पत्र में इस बात की व्यवस्था की गई है कि संयुक्त परिषदों को, अन्य बाहरी के अतिरिक्त प्रबन्धकों से संस्थान की सामान्य आर्थिक स्थिति उत्पादन और बिक्री कार्यक्रम आर्थिक गुणन पत्र व आम हानि के लेखे तथा सम्बन्धित कागजात व संस्थान के विकास और विस्तार के लिए बीचकालीन योजनाओं के विषय में सूचनाओं को प्राप्त करने का अधिकार होगा। कुछ बाद-विवाद के पश्चात् यह निर्णय किया गया कि संयुक्त परिषदों को न केवल ऐसी सूचनाओं को प्राप्त करने का अधिकार होना चाहिए बल्कि उन पर विचार करने और सुझाव देने का अधिकार भी होना चाहिए। इस बात पर भी सहमति प्रकट की गई कि संयुक्त परिषद को न केवल सदस्यों को सूचना और सामग्री देने की व्यवस्था करनी चाहिए बल्कि उनकी सूचना भी यथा सम्भव शीघ्र से शीघ्र देनी चाहिए। कुछ विषय मामलों में सूचना प्रति ठिमाही भी जानी चाहिए।

सेमिनार द्वारा अन्य जिन प्रश्नों पर विचार किया गया वह एक तो ऐसी व्यवस्था के सम्बन्ध में थे जिससे संयुक्त परिषदों तथा धन व योजनाएं अन्तःसमय के बीच सम्पर्क स्थापित किया जा सके तथा उन संस्थानों में प्रचाराण कार्यक्रमों के सम्बन्ध में व जहाँ प्रबन्ध में धमिकों के भाग लेने की योजना साधु थी। सेमिनार को इस बात का हृदय विदारक था कि संयुक्त परिषदें केवल पारस्परिक विश्वास और मित्र भाव के बातावरण में ही अग्रति कर सकती हैं।

बाद में यह निर्णय किया गया कि प्रथम में धमिकों का जो भी भाग हो वह संयुक्त प्रबन्ध परिषदों के रूप में हो। इन परिषद के तीन प्रमुख कार्य होंगे— (क) एक कार्य जिसके अन्तर्गत परिषद का उत्तरदायित्व समाहू बना होना उदाहरणतः निम्न बिन्दुओं में (१) स्थायी धारणा का प्रथम, (२) उनमें संशोधन, (३) उद्घाटन की नई प्रणालियों को लागू करना जिनसे धर्म-कारियों को पुनः योजना पर

सपाया या सके तथा (४) कुछ प्रक्रियाओं में कमी कर देना उरुठे कुछ समय के लिए रोक देना अथवा उन्हें पूर्णतः बन्द कर देना आदि। (ग) एम कार्य बिनके अन्तगत परिपदों को सुधनाओं को प्राप्त करने का अधिकार होगा उदाहरणतः निम्न विषयों में, (१) संस्थान की सामान्य सामू रहने की वाय्यता (२) बाजार की दवा उत्पान तथा बिक्री कार्यक्रम (३) संस्थान का संगठन तथा सामान्य मन्वामन (४) उत्पान और कार्य की प्रणालियाँ (५) विस्तार तथा इसी प्रकार के कार्यक्रमों की योजना आदि, तथा (ग) ऐसे कार्य बिनके अन्तगत परिपद का शक्ति प्रयोगनात्मक होगा उदाहरणतः निम्न विषयों में (१) बन्ध्याण बाप (२) गुरुता कार्यक्रम (३) प्याबसायिक प्रशिक्षण और शिक्षार्थी योजनाएँ (४) फाय सूची को तैयार करना तथा (५) पाठितोपिद्धों का देना आदि।

इस प्रकार मजदूरी बोनस बाप की सामान्य दवायें आदि के प्रश्नों पर मामिकों और धमिक सपा के बीच बार्ता के लिए काफी क्षेत्र छोड़ दिया गया है। निम्नी शिकायतों को भी समुक्त परिपदों के क्षेत्र में सम्मिलित नहीं किया गया है क्योंकि यह सम्भव है कि ऐसी शिकायतों में कारण धमिकों के प्रबन्धकर्ताओं के बीच सहयोग के बाधाकरण पर मुरा असर पड़े।

इसके पश्चात् २० दशकों में इन निर्णयों को लागू करने तथा गुरुतः प्रणय परिपदों को स्थापित करने के प्रयत्न किए गए। बार मरुपात—धर्मान् टाटा सोहा के इस्पात कम्पनी अमरौदपुर सिम्पनाम ग्रुप धर्मान् इन्डियन मंगल मोने कुर्ता और कर्ता मिस्स सि० मोदीनगर, (उ० प्र०) तथा राजनीय परिपान मंगल—अपने धमिकों को प्रबन्ध कार्य में भाग देने के लिए पहिले में ही गहमति प्राप्त कर चुके थे। तीन मस्याओं में विभागाय उत्पान समितियों की भी स्थापना की जा चुकी थी धर्मान् (१) टाटा सोहा के इस्पात क० (२) मोदी धर्मान् य कर्ता सिम्प तथा (३) इन्डियन एन्जुमिनियम यका सि० अमूर परिपदा मंगल। टाटा सोहा के इस्पात क० अमरौदपुर तथा इन्डियन एन्जुमिनियम अकर्म अमूर परिपदी मंगल में योजना के विषय में त्रितीय दलों द्वारा वा अल्पदता की रिपोर्ट भी प्रकाशित की जा चुकी है। धमिकों के प्रबन्ध में भाग देने के विषय में इन दो मस्याओं में वा प्रगति हुई है अथवा उत्तरा इन रिपोर्टों में दिया गया है।

सितम्बर १९४८ में बेनीय धम संस्थानय द्वारा प्रकाशित एक झारिवा में कहा गया है कि धमिकों के प्रबन्ध में भाग देने के सम्बन्ध में वा भी प्रगति हुई है वा निरुत्साहनक है। मार्च १९६० में थी गुजराती मान नन्ना में आ गया कि वह एक योजना की प्रगति में मनुष्ट नहीं था। मार्च १९६० तक ५ मंगल मन्वामन २३ दशकों में योजना का लागू किया या त्रिन्म से १२ ता मंगलरी क्षेत्र में ५५ तथा ८ दिनों क्षेत्र में। योजना की लागू करने वाला दशक में वा गुरुतः परिपदा की आवश्यकता के विषय में बार् टास मृपनायें प्रदान की है और म ही एम सिम्पना की मामिका में परामर्श दिया है त्रिन्मो धम संस्थापक म इन परिपदा को मृपना

द्वेष के लिए नियुक्त किया है। इस मन्व प्रगति का कारण दोनों पक्षों में सम्बन्ध और अन्व की भावना है। अधिकांश संघों में पारस्परिक प्रतिस्पर्धा है तथा अधिकांश संघ संगठन में अनेक दोष हैं जिसका उल्लेख भारतीय अधिकांश संघ आन्दोलन के प्रथम में किया जा चुका है। अधिकांश संघों में भाग लेने की योजना उस समय तक उपलब्ध नहीं हो सकती जब तक कि व्यक्तिवर्गीय व सुदृढ़ अधिकांश संघ न हों जो इस योजना के प्रति सहयोग का दृष्टिकोण धरने के तैयार हों। अधिकांश अधिकांश प्रतिष्ठित होते हैं तथा प्रथम में भाग लेने के विषय पर उनके विचार स्पष्ट होते हैं। आधुनिक औद्योगिक संस्थानों में प्रथम के लिए तकनीकी प्रशासनात्मक तथा वित्तीय क्षेत्रों में कुशल ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है जिसका इस समय अधिकांश में प्रभाव है। यदि संयुक्त प्रथम परिपक्षों में बाहरी व्यक्ति अधिकांश का प्रतिनिधित्व करते हैं तब स्थिति और भी बुरी होगी क्योंकि बाहरी व्यक्ति अधिकांश संघवाद और औद्योगिक सम्बन्धों को तो समझ सकता है परन्तु वह प्रथम तथा उद्योग की समस्याओं को नहीं समझ सकता। इनको तो कारखाने या संस्थान के मन्व कार्य करने वाला अधिकांश ही समझ सकता है। मासिकों को भी अधिकांश में पूर्ण विश्वास नहीं होता और वह उन्हें व्यापार के ऐसे भेद भी नहीं बताते जिनको ज्ञात किये बिना अधिकांश प्रथम में प्रभावशालक रूप में भाग नहीं ले सकते। बहुत से मासिक अपने अधिकारों और प्राधिकारों को छोड़ने के लिए तैयार नहीं हैं और जहाँ जहाँ भी यह योजनाएँ धरनाई गई हैं वह इस कारण नहीं कि मासिकों को उनमें कोई विशेष रूचि है बल्कि कई स्थानों पर अधिकांश को केवल बहुकामे के लिए यह योजनाएँ लागू की गई हैं। कई अधिकांश संघों को इस बात का भी डर है कि यदि अधिकांश ने इस सम्बन्ध में प्रथमों को सहायता दी तो वह वर्ग संघर्ष की विचारधारा को समाप्त कर देवे जिस विचारधारा में कई अधिकांश संघ अपना विश्वास रखते हैं। निदेशक मंडल में भी अधिकांश के प्रतिनिधित्व के प्रश्न पर कई बार विचार विमर्श हुआ है। परन्तु इस प्रकार का प्रतिनिधित्व सहायक सिद्ध नहीं होगा। साधारणतः निदेशक मंडल ऐसे प्रश्नों पर विचार करता है जिसमें अधिकांश के प्रतिनिधियों को कोई विशेष रूचि नहीं होती और वह बैठकों में सामान्य रूप से बातों की भाँति बैठे रहते हैं।

श्री बी० बी० गिरि का कथन है कि यदि अधिकांश संघों में अधिकांश को प्रथम में सम्मिलित किया जायेगा तब क्या तो प्रथमों द्वारा उन्हें प्रभावपूर्ण रूप से चुन कर दिया जायेगा या यदि अधिकांश कठोर प्रवृत्ति के हैं तो प्रथमों के प्रति उनका रूचि बाधा पहुँचाने वाला और उग्र प्रवृत्ति का होगा चाहे उनके इरादे कितने ही अच्छे क्यों न हों। इनमें से कोई भी स्थिति धर्म प्रथम के हित में नहीं होगी और अन्व पर भी प्रणय प्रभाव नहीं डालेगी। अतः श्री गिरि का कहना है कि आवश्यक क्या तो इस बात की है कि अधिकांश की समस्याओं पर प्रजातन्त्रात्मक तथा मानवीय रूप से विचार किया जाए।

अधिकांश के प्रथम में भाग लेने की योजना पर विचार के लिए बनाए गए

अध्ययन इस नए बूझने देशों में योजना के संचालन का भी पोंड़ा सा उन्मेष किया है। श्रमिकों के प्रबन्ध में भाग लेने की व्यवस्था प्रत्येक देश में भिन्न भिन्न है। ब्रिटिश और स्वीडन में श्रमिकों का प्रबन्ध में भाग संयुक्त संस्थाओं के द्वारा होता है। इन संस्थाओं का परामर्शदात्री स्वर होता है और यह पारस्परिक समझौते द्वारा स्थापित की जाती है जिनके पीछे कोई कामूनी बन्धन नहीं होता। ब्रिटिश में श्रमिकों का भाग लेने का निम्नो क्षेत्रों में संयुक्त परामर्शदात्री संस्थाएँ स्थापित की गई हैं। (देखिए पृष्ठ २०६-२०७)। परन्तु वहाँ श्रमिकों में इस सम्बन्ध में कोई विशेष उत्साह नहीं है क्योंकि वहाँ श्रमिकों में उद्योग में भाग लेने की सक्रिय भावना नहीं पाई जाती। स्वीडन में संयुक्त उद्योग परिषदें हैं उनको तुलन पत्र साम तथा हानि के लेखों व प्रशासन और सेवा परीक्षणों की रिपोर्टों को जीव करने का अधिकार है। बेल्जियम में भी श्रमिकों का भाग लेने की योजना को कानूनी मान्यता प्राप्त है। फ्रांस और जर्मनी में तो श्रमिकों का प्रतिनिधित्व प्रबन्धन मण्डल में भी होता है। बेल्जियम में संयुक्त कार्य परिषदें तथा फ्रांस में मानिक मजदूर समितियाँ भी स्थापना की गई हैं। जर्मनी में मानिक मजदूर परिषदें हैं। इसी प्रकार युगोस्लाविया में वहाँ निर्वाचित परिषदें तथा प्रबन्ध मण्डल के माध्यम से संस्थाओं को स्वयं श्रमिकों द्वारा संचालित किया जाता है। १९२० में यूगोस्लाविया विधान मन्त्रालय द्वारा एक नियम पारित किया गया (Basic Law on Managements of State Economic Enterprises and Higher Economic Association by the Workers Collectives) जिसके अन्तर्गत कारखाना यान्त्रिक तथा अन्य सभी संस्थाओं में प्रबन्ध को श्रमिक परिषदों को सौंप दिया गया है। अब जबकि यह परिषदें ही उद्योगों की प्रबन्धक हैं।

इस सम्बन्ध में विभिन्न देशों में अनेक अन्य विचारों में भी भिन्नता पाई जाती है जैसे प्रबन्ध में भाग लेने वाली व्यवस्था द्वारा जिन जिन मामलों पर विचार किया जाय इन मामलों पर किस सीमा तक उनका अधिकार हो तथा जिन प्रकार श्रमिकों के प्रतिनिधियों को चुना जाए, आदि। उदाहरण के लिए मानिक मजदूर समितियों के कार्य ब्रिटिश की तरह यद्यपि साधारण परामर्शदात्री ही है तथापि अत्यान्त योजनाओं का प्रशासन भी साधारणतः इन्हीं के द्वारा किया जाता है। श्रमिकों के प्रतिनिधियों का निर्वाचन अन्तर्गत सभी श्रमिकों द्वारा चुना जायता न किया जाता है परन्तु कुछ देशों में निर्वाचन श्रमिकों के द्वारा बनाई हुई उद्योगों की सूची तक ही सीमित होता है। श्रमिकों को भाग लेने का अधिकार देने के अन्तर्गत ही मिसत्रे हैं। यी सुझावों सामान्य का बहना है कि कुछ दूरस्थित होने से श्रमिकों के प्रबन्ध में भाग लेने की योजना के संचालन का उन्होंने जो अध्ययन किया है उनके दो मुख्य निष्कर्ष निकलते हैं। प्रथम तो यह है कि प्रबन्धकार्त्तियों और श्रमिकों के बीच परामर्श कल्पित नहीं करना है तथापि उनकी सहभागिता के लिए जो कुछ आवश्यक है वह यह है कि परामर्श उनकी आन्तरिक शक्ति है। दूसरे यह कि

कभी प्रयत्न नहीं किया जाता कि संयुक्त पंचमस्य व्यवस्था की स्थापना द्वारा श्रमिक वर्गों की प्रबलता की जाए।

इसमें तो कोई सन्देह नहीं है कि हम दूसरे देशों के अनुभवों से लाभ उठा सकते हैं परन्तु हमें यह न भूलना चाहिए कि हमारे देश की परिस्थितियाँ दूसरे देशों से भिन्न हैं। अतः हमें ऐसी योजना बनानी चाहिए जो हमारी परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुकूल हो। श्रमिकों के प्रवृत्ति में भाग लेने के विषय पर बहुत धीरे ध्यान प्राकृतिक हुआ है। इस समस्या पर विभिन्न स्तरों पर विचार विमर्श किया जा रहा है। प्रायः ११ दिसम्बर १९२० से २ जनवरी १९२६ तक जो द्वितीय अखिल भारतीय श्रम शर्षवास्त्र सम्मेलन हुआ था, उसमें भी इस विषय पर विचार किया गया था। सम्मेलन की अध्यक्षता श्री बी० बी० गिरि ने की थी। केंद्रीय रोजगार व श्रम मंत्रालय के संयुक्त सचिव श्री के० एन० सुखानियम श्रमिकों के प्रवृत्ति में भाग लेने का विषय के अनुमान के प्रदान से। जहाँ तक 'भाग लेने' के ठीक ठीक अर्थ का सम्बन्ध है, यह मत व्यक्त किया गया था कि 'भाग लेने' की कोई धन्य और निश्चित व्याख्या नहीं की जानी चाहिए परन्तु ऐसी व्याख्या मन्त्र होनी चाहिए। योजना लागू होने की प्रारम्भिक अवस्था में इसका अर्थ नेबल परामर्श ही सकता है परन्तु इसके पश्चात् इसको धीरे धीरे श्रमिकों के प्रवृत्ति में भाग लेने की उच्चतम सीमा तक पहुँचाया जा सकता है तथा संयुक्त प्रवृत्ति परिवर्तन को अनेक नाम दीये जा सकते हैं। संयुक्त परिषदों में बाह्य व्यक्तियों कोरम तथा पंचमस्यों की अवस्था के प्रश्न पर तथा एन्ड्रस प्राचार पर योजना के लागू करने के प्रश्न पर कुछ मतभेद था। श्रम मन्त्रालय में सम्मेलन के सदस्य अध्यक्ष इस की तथा उप-समिति की सिफारिशों से सगमम सहमत थे। प्रदान से प्रश्न में यह कहा कि इस योजना को पूर्ण सहयोग और सौच विचार करके तथा उचित प्रकार से लागू करने हों इसके परिणामों को देखना चाहिए। हम यह ध्यान नहीं रखनी चाहिए और न ही यह पूर्वस्व होना चाहिए कि योजना के परिणाम कोई बहुत बड़े निकलने। यदि इस योजना में सफलता प्राप्त करनी है तो हम इनको धीरे-धीरे चलाना चाहिए। धीरे प्रगति करके उठाने से पूर्व पहले काम को ठीक प्रकार से समाप्त कर लेना चाहिए। श्री बी० बी० गिरि ने इस बात पर भी जोर दिया कि श्रमिकों का प्रवृत्ति में भाग लेना वास्तविक अर्थों में सामक तब ही विद्य होना जब श्रमिक और प्रवृत्ति दोनों में यह भावना जा जाए कि उन्हें कम्बे से कम्पा मितावर कार्य करना है और अपने अपने उत्तरदायित्वों को ठीक-ठीक समझना है। दोनों पक्षों को यह समझना चाहिये कि वह एक ऐसी औद्योगिक प्रणाली में सहभागी हैं, जो समाज की प्रबलता बतुयें प्रदान करती है और इसलिए उनका के शिर्षों को एना करना उनका मुख्य कार्य है।

संयुक्त प्रवृत्ति परिषदों के कार्यों से जो अनुभव प्राप्त हुआ है उसके विहित ज्ञान है कि प्रवृत्ति में श्रमिकों के भाग लेने के विचार की शक्ति व शक्ति सहायता

की जा रही है। हाल ही में सितम्बर १९६२ में श्री मुलजारी वास मन्दा में बहिष्पी रोडवेज प्राइवेट लिमिटेड में संयुक्त प्रबन्ध परिषद् का उद्घाटन करते हुए कहा है कि प्रबन्ध में श्रमिकों के भाग लेने की योजना का काम बहुत उत्साहवर्धक तथा उद्योगीय रहा है तथा सरकार की श्रम नीति में यह योजना एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

परन्तु इस प्रकार की गई योजना के सम्बन्ध में यह अवश्यम्भावी है कि प्रारम्भ की कुछ कठिनाइयों को दूर करने में तथा प्रावश्यक प्रारम्भिक बातों को पूरा करने में समय का व्यवधान पड़ जाए। इस बात की प्रावश्यकता अनुभव की गई कि इस प्रश्न पर व्यापक रूप से फिर से विचार किया जाए। तथा इस योजना को विस्तृत रूप से कार्यान्वित करने में जो कठिनाइयाँ जा रही हैं उन्हें दूर करने के लिए उपाय सोचे जाए। प्रबन्ध में श्रमिकों के भाग पर द्वितीय सम्मेलन ८ व ९ मार्च १९६० में हुआ जिसमें घाटी स्थिति पर पुर्नानुमोदन किया गया। इस सम्मेलन में श्रमिकों के भाग लिया उद्योगी संयुक्त प्रबन्ध परिषदों के कार्य के बारे में परस्पर अपने अनुभव बताए। तथा उन कठिनाइयों का उस्तस किया जो योजना के प्रारम्भिक चरणों में उनका सामने आई, और यह बताया कि उन कठिनाइयों को दूर करने के लिए क्या पण उठाए गए थे। इस योजना के तीव्र गति में विस्तार करने के लिए सम्मेलन के मुख्य सुझाव निम्नलिखित थे — (१) केन्द्र में योजना की प्रगति के लिए जो व्यवस्था है उसे और दृढ़ किया जाए और इस प्रकार की व्यवस्था राज्यों में भी की जाए, (२) विभिन्न सत्त्वानों में संयुक्त प्रबन्ध परिषदों के कार्यों के बारे में सूचना प्रदान करने तथा उचित प्रसार के लिए उपयुक्त व्यवस्था की जाए (३) केन्द्र में एक विन्तीय समिति की स्थापना की जानी चाहिए जिसमें समय समय पर इस योजना की प्रगति का पुर्नानुमोदन किया जा सके और परिषदों के भाग में जाने वाली कठिनाइयों का पता लगा सके तथा उन्हें दूर करने के उपायों का सुझाव दिया जा सके।

केन्द्रीय सरकार ने प्रबन्ध में श्रमिकों के भाग लेने की योजना की प्रगति और विस्तार के लिए तथा योजना में सम्बन्धित राज्यों की देण्डाओं के लिए धन तथा रोजगार मंत्रालय के अन्तर्गत एक विभाग प्रभाव की स्थापना की है। मासिक और श्रमिकों के क्षेत्रीय संघटनों में यह प्रायंता की गई है कि यह सभी उद्योगों तथा घरों में सम्बन्धित इकाइयों के भागों का सुचारु में उठीं संयुक्त प्रबन्ध परिषदों बनाई जा सकती है। केन्द्रीय सरकारों में भी इस योजना को लागू करने और विचार करने में सम्बन्धित बातों को देण्डाओं के लिए उद्योगी व्यवस्था करने के लिए काम किया है। राजस्थान उद्योगी मन्त्र परिषदों बनाए तथा पंजाब में एक प्रकार की व्यवस्था कर दी गई है। मन्त्रालय क्षेत्र में इस योजना को विस्तार के लिए विचार पण उद्योगी जा रहे हैं। सभी मंत्रालयों का पूर्ण रूप से मन्त्रालय प्राप्त करने के लिए सरकारी १९६१ में क्षेत्रीय संघटनों की एक मन्दा हुई थी और इसमें एक निर्दिष्ट किया गया था कि मन्त्रालय स्तर पर इस योजना की प्रगति का एक मन्दा पुर्नानुमोदन किया जाए। योजना की प्रगति का प्रत्येक तीन मन्दा एक पुर्नानुमोदन करने के

लिए एक विशेष समिति की भी स्थापना कर दी गई। सेमिनार में ही नई सिफारिश के अनुसार प्रबन्ध में श्रमिकों के भाग से सम्बन्धित एक त्रिदलीय समिति की भी स्थापना की जा चुकी है। इसका उद्देश्य यह है कि संयुक्त प्रबन्ध परिपक्वों को योजना से सम्बन्धित सभी बातों पर समाह्वे के और मार्ग प्रदर्शन करे तथा उनसे सम्बन्धित सूचना के एकत्रित करने और प्रसार करने की व्यवस्था करे और संयुक्त रूप से समाह्वे करने के कार्यक्रम की तीव्रगति से लागू करने की सम्भावनाओं की खोज करे। इस समिति की पहली सभा पहली मई १९६१ को हुई। इसमें यह निश्चय किया गया कि श्रमिकों के शिक्षा सम्बन्धी कार्य कम की तीव्रगति से लागू करना चाहिए ताकि श्रमिक शक्ति उत्तरदायित्वों का बोझ उठाने के योग्य हो सकें। प्रबंधकों को संयुक्त प्रबन्ध परिपक्वों के कार्यों से अवगत करने के लिए सेमिनार भी आयोजित किए जाने चाहिए।

मार्च १९६२ के अन्त तक १२ उद्योगों में विभिन्न इकाइयों में २६ संयुक्त प्रबंध परिपक्व स्थापित हो चुकी थीं। इनमें से ११ सरकारी क्षेत्र में और १५ निजी क्षेत्र में थीं। २३ इकाइयों में संयुक्त प्रबंध परिपक्वों के कार्यों का सूचकांक करने के लिए अध्ययन भी किए जा चुके थे।

अस के क्षेत्र में अनुसंधान — (Research in the Field of Labour)

अस क्षेत्र में कार्य करने के मार्ग में एक बड़ी बाधा यह पड़ती है कि अम से सम्बन्धित सूचनाएँ बहुत अपर्याप्त हैं। इस बाधा का अनुभव करते हुए द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में पर्याप्त ऋणके प्राप्ति करने के लिए अनेक सर्वेक्षण योजनाओं की मजूरी की गई थी। द्वितीय आयोजना अन्त में तीन महत्वपूर्ण निम्नलिखित कार्य की गई थी (१) द्वितीय कृषि श्रमिक पूछताछ (रेलिये पृष्ठ ७२१-२६) (२) मजदूरी गणना (रेलिये पृष्ठ ५२३) तथा (३) पारिवारिक बजट सम्बन्धी पूछताछ (रेलिये पृष्ठ ५६२-६३)। आयोजना आयोग की अनुसन्धान कार्यक्रम समिति जो विश्वविद्यालयों और अन्य संस्थानों द्वारा अनुसन्धान व अन्वेषण कार्यों के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करती है, अम अनुसन्धान के विषय में भी अधिक रुचि से रही है और अम अनुसन्धान के लिए इसने एक विशेष उपसमिति भी बनाई है। अम से सम्बन्धित ऐसे विषयों पर अम पर यह समिति अनुसन्धान अर्थात् अन्वेषण योजनाओं की स्वीकृति देती है निम्न प्रकार है (क) कुछ चुनी हुई औद्योगिक इकाइयों में औद्योगिक सम्बन्धों के विषय में अध्ययन। (ख) प्रोत्साहन योजनाओं तथा विभिन्न उद्योगों में मजदूरी नियमानुसार प्रणालियों का अध्ययन। (ग) विभिन्न उद्योगों में नए मजदूरी मान (घ) किसी उद्योग या क्षेत्र में मजदूरी का स्तर (ङ) औद्योगीकरण, स्वयंनिर्माण और आयुनिकरण से श्रमिकों की श्रमवृत्ति (Attitude) और उनकी भाव पर जो प्रभाव पड़ा है उसका कुछ विशेष अन्वेषण उद्योगों में सूचकांक।

अम विषयों पर अनुसंधान कार्यक्रमों का समन्वय करने तथा उनकी प्रगति

अतिरिक्त १३ विश्वविद्यालय राजमार ब्यूरो भी स्थापित किए जा चुके थे। यह राजमार ब्यूरो निम्नलिखित विश्वविद्यालयों में थे— घसीमड़ हलाहाबाद, कलकता देहली मलनऊ, त्रिनेत्रम् बाराखसी, जगन्नीमड़ मोरखपुर, जगतपुर, मैसूर, छड़ी घामर, उम्रैन मोहाली तथा वास्तिवर। (पृष्ठ ४६ देखिए)

(ग) गारखपुर शम संस्था का प्रसारण पहली धर्मस १९६१ से राजमार बस्तों के निदेशासन को सौंप दिया गया है। कोपसा बानों के लिए भी ६ राजमार बस्तों कोल किए गए हैं जिनमें से ३ मध्य प्रदेश में हैं, २ पश्चिमी बंगाल में और १ बिहार में। अब अधिक मोरखपुर जाने के बजाए इन राजमार बस्तों में स्वयं को भर्ती के लिए पंजीकृत करा सकते हैं। (देखिए पृष्ठ ३६)

(घ) दिसम्बर १९६१ के अन्त तक राजमार बस्तों के पास रजिस्टर में दलित बेरोजगारों की संख्या ५,९०,०३० थी जबकि दिसम्बर १९६० में यह संख्या ५,०७,२३० थी। राजमार बस्त में पंजीकृत करने वाली महिलाओं की संख्या धर्मस १९६० से फरवरी १९६१ तक प्रति मास औसतम १५,१२१ थी तथा यह संख्या धर्मस १९६१ से फरवरी १९६२ की अवधि में १९,१३४ हो गई थी। फरवरी १९६२ के अन्त में राजमार बस्तों के पास रजिस्टर में महिला प्रापियों की संख्या १,४१,०९३ थी। (देखिए पृष्ठ ८४४)

(ङ) कर्मचारी राज्य बीमा योजना को पहली धर्मस से ३१ दिसम्बर १९६१ की अवधि में २२,८४५ अतिरिक्त धर्मिकों तक विस्तृत कर दिया गया। इस प्रकार इसके धर्मपथ १३२ केन्द्रों में १६,९६८ साल धर्मिक था पर। चिकित्सा सुविधाएं भी ५५,७०० अतिरिक्त परिवारों तक विस्तृत कर दी गईं और इस प्रकार ६२९ साल परिवारों को जिनमें २०,८३ साल सदस्य हैं चिकित्सा सुविधाएं प्रदान की जाने लगी हैं। अस्पताल बनाने के लिए दिसम्बर १९६१ तक ६२३ करोड़ रुपयों की स्वीकृति की जा चुकी है। इस प्रकार धर्मिकों के लिए ३२४६ रोगी घेव्याओं की व्यवस्था हो जाएगी। (देखिए पृष्ठ ३६९-७०)

(च) कर्मचारी प्रोविडेंट फंड योजना के धर्मपथ धर्मवर् १९६१ तक १६,२८१ घस्थाओं में धंधदान देने वालों की संख्या ३०,७३ साल थी। अगस्त १९६२ में ४ उद्योगों में धर्मान् सिगरट उद्योग बिद्यत मैकनिकल तथा सामान्य इन्जीनियरिंग उद्योग मोहा तथा स्पाथ उद्योग तथा कापन उद्योग में प्रोविडेंट फंड में धंधदान की दर ६३% से ६% तक बढ़ा देने के लिए राज्य समा में एक निबन्धक प्रस्तुत किया गया है। यह उल संस्थाओं में लागू नहीं होगा वहां ५० से कम धर्मिक कार्य करते हैं।

(छ) २५ मार्च १९६२ से कर्मचारी राज्य बीमा योजना धान्त्र प्रदेश में ३ केन्द्रों में (बुरदूल, डामास्वरम तथा राजापुम्परी) और पंजाब में चाबोकी गांव में लागू कर दी गई। (देखिए पृष्ठ ३६९)

(ज) आप सब परावासी धर्मिक धर्मिनियम में संशोधन करने पर बिहार

किया जा रहा है ताकि इस अधिनियम के अन्वय में जो रोजा जा सके और मासिकों को प्रथम रूप से धार्मिक भर्ती करने पर ध्यान दिया जा सके। (देखिए पृष्ठ ३६ तथा ६४७-४८)

(क) १९३६ में जामू कारखानों की संख्या ४९ ३६६ थी और इनमें रोजगार पर सगे धर्मिकों की औसत वार्षिक संख्या का अनुमान ३ ६३५ हुआ था। १९६० में जामू कारखानों की संख्या ४७ ६८७ थी तथा इनमें रोजगार पर सगे धर्मिकों की औसत वार्षिक संख्या का अनुमान ३ ७६४ हुआ था। (देखिए पृष्ठ ६)

(ख) सन् १९६१-६२ में उत्तर प्रदेश में ६७ धर्म कल्याण केन्द्र थे। जिनमें २६ 'क' श्रेणी के ३३ 'ख' श्रेणी के ३ 'ग' श्रेणी के तथा २ 'मीसमी' केन्द्र थे। १९६१-६२ के वर्ष के लिए उत्तर प्रदेश सरकार में धर्म कल्याण कार्यों के लिये १८ ६७ ४६७ रुपये की व्यवस्था है। (देखिए पृष्ठ २८६-८७)



परिशिष्ट घ

शब्दावली (Glossary)

(English to Hindi)

A			
Able-bodied	समर्थ	Apprenticeship	शिष्यता
Absenteeism	अनुपस्थिति	Approach	विचारवाच
Absolute	निपेक्ष	Aptitude	कौशल
Accession rate	नियुक्ति दर	Arbitration	विवाचन
Accident Prevention	दुर्घटना निवारक	Arrears	बकाया, देय
Accrue	प्रोचनवन	Artisan	गिस्ती, हस्तकार
Achievement	उपसम्पत्तियाँ	Asset	परिसम्पत्ति
Acquisition	अधिग्रहण	Assignment	अधिभ्यास
Acquit	निमुक्ति	Association	परिपत्र, संस्था
Act	अधिनियम	Assumption	पूर्वधारणा
Ad hoc	तरब	Attachment	कुर्की
Adjudicator	न्याय निर्णयक	Attendance Wage	हाजिरी की मजदूरी
Adjustment	बिबाचक	Audit	शेखा परीक्षा
Administration	संयोजन	Authorised	प्राधिकृत
Adolescent	प्रशासन	Authority	प्राधिकारी
Adult	किशोर	Automatic	स्वतः
Adulteration	बदलक	Auxiliary	सहायक
Advisory	निकाबट	Avocation	उपभोगसाय
Affiliation	समाहकार	Award	पंचाट, विवाचन निर्णय
Agent	सम्बन्ध	B	
Agreement	अधिकर्ता एजेंट	Back-log	पिछली
Allocation	करार	Bargaining	सीसा सीसाकारी
Allotment	बिनिधान	Basic	मूल
Amalgamation	नियतन	Benefit	हित
Amendment	समावेदन	Bill	विधेयक
Analysis	संशोधन	Bonus	बोनस
Annul	खिन्नेपण	Boss	प्रफसर, हाकिम
Anti-labour	रद्द करना	Bourgeois	बुजुर्ग
Appellate	अधिक विरोधी	Boycott	बहिष्कार
Appendix	अपीलीय	Breach of Contract	संविदा भंग
Appointment	परिशिष्ट	Breach of Trust	न्यास भंग
Apprentice	विद्यार्थी	Bureau	ब्यूरो
		Bureaucracy	नौकरशाही
		Business Union	काजगारी संघ

By-law	उपविधि	Craftsman	उद्योगी
Byproduct	पौष्ट उत्पादन	Credit worthiness	उपार पात्रता
Casual labour	सीमितक कर्मिक	Cumulative	संचयी
Casual leave	माकस्मिक छुट्टी	Current wage	प्रचलित मजदूरी
Censure	नित्या करता	Cyclical	चक्रीय
Children's allowance	संतान भत्ता	Day wages	दिवसी
Circulate	परिचालन	Decasualisation	स्वायीकरण
Circular	निर्देशन-पत्र	Decentralisation	वितेनीकरण
Class consciousness	वर्ग चेतना	Defaulter	बाजीदार
Classical Economists	संस्थापक धर्मशास्त्री	Deferred	पारंपारिक
Class Struggle	वर्ग संघर्ष	Demand Effective	समर्थ मांग
Code	संहिता	Depression	मन्दी
Cognizable	प्रमाण	Depreciation	मूल्य ग्राह
Collective Bargaining	सामूहिक सौदाकारी	Deurability	बाधनीयता
Commerce	वाणिज्य	Direct labour	प्रत्यक्ष श्रम
Compensable injury	पुतिपयोग्य क्षति	Director	निदेशक
Compensation	पूति, क्षति पूति	Disability	अक्षमता
Complementary	पूरक	Discharge	असह्यदगी
Comprehensive	व्यापक	Discipline	अनुपासन
Concentration	संकेन्द्रण	Disequilibrium	असंतुलन
Concept	संकल्पना	Discretionary	अविदेक
Conciliation	सुसह	Dismissal	अस्मात्कर्मि
Conduct	आचरण	Displacement	विरपावन
Consumer Price Index	उपभोगी मूल्य सूचकांक	Dispute	विवाद
Consumption	उपभोग	Dividend	सामाय
Contingency	आकस्मिकता	Division	प्रमाण अर्थन विभाजन
Contract	संहिता	Dock	सोनी
Contract labour	ठेके के कर्मिक	Domicile	अधिकारी
Contribution	संदान	Earning	कामजुट
Convention	सम्मेलन	Efficiency	वेद्यम क
Co-ordination	सदस्य	Eject	पात्रता
Partnership	एए-भागेदारी	Eligibility	पत्रकाम उत्पन्न
Corporation	निधम	Emigration	रोजगार क्षमता
Cost of living	निर्वाह व्यय	Employability	कामिक कर्मकारी
Council	सदस्य	Employee	कामिक
Craft guild	उद्योगी संघ	Employer	कर्मकारी
	उद्योगी	Employment	रोजगार
		Employment Counciling	रोजगार मध्यस्थी कागह सेवा

	व्यवस्थापन मन्त्रीय बन्दखण्ड	
Establishment	प्रतिष्ठान विवरणी	Handicapped
Evaluation	मूल्यांकन	Hobby centre
Evanescent	दृश्यमान	Housing
Exception	द्वारा	Human
Execute	निष्पन्न करना	Hygiene
Executive	कार्यालय	
Ex-officio	परदे	Idle resources
Ex-party	एक पक्षीय	Illegal
Ex-serviceman	पूर्वसेना सेवानिवृत्त	Illegitimate
Extend	व्यापकता सीमा	Immobility
Extensive	विस्तार	Immigrant
External	बाह्य	Implementation
Extramural	बहिर्मुखी	
F		
Fact	तथ्य	Indebtedness
Fatigue	थकान	Indentured
Fatal	घाति	Index-number
Factionalism	बाधक	Industrial-dise
Factors	कारण	
Factory	कारखाना	Industrial peace
Fair Wage	न्यायिक मजदूरी	Industrial rela
Federation	संघ	Inequalities
Follow up methods	पुनः निरीक्षण	Injunction
Forced labour	बैध	In-kind
Frictional	घर्षण	Instalment
Full Employment	पूर्ण रोजगार	Instigate
Fund	निधि	Institute
Funded	निधिबद्ध	Institutional
G		
Gainful	प्राप्तिकर, सामर्थ्यकर	Instructor
Gentleman's Agreement	मर्यादा कथार	Insured
Go-slow-tactics	कार्यमंदन युक्तियाँ	Intermediary
		Interim

Intermittent	अविराम	Liquidation (of debt)	प्रपाकरण
Interview	समासाप	Liquidity Preference	मरदी तरजीह
Intensive, Labour	धम प्रमाण	Living-wage	पर्याप्त-वेतन, निर्बाहिका
Intimidation	अभिज्ञास धमकाना	Local bodies	स्थानीय विभाग
Intra-mural	अन्तर्मुखी	Lock-out	तासाब-नी
Invalid	निबल	Localisation	स्थानीयकरण
Investigation	अनुसंधान	Lost-time	कार्य-समय-भंग
Investment/In put	निवेश		
Inventories	कच्चा या अर्ध-तैयार मास		
	J		
Job	काम, नौकरी कार्य	Management	प्रबंध प्रबंधन
Job-instruction	कार्यानुदेशन	Man-day	धम-दिन
Job-method	कार्य प्रणाली	Manufacture	विनिर्माण
Job-Relations-Training	धमिक सम्बन्ध प्रशिक्षण	Marine	समुद्री
Job-specification	कार्य-विविष्टि	Maritime	सामुद्रिक
Judiciary	न्यायांग	Maternity benefit	मातृत्व हित-साधन
Junior	अवर	Mature	परिपक्व
Jurisdiction	धमसवारी	Means-test	बीबिहा साधन बीच
	K	Memorandum	शापिका
Kidnap	अपहरण	Method deductive	निगमन रीति
	L	Method, inductive	आगमन रीति
Labour	धम, धमिक, मजदूर	Migratory character	प्रवासिता
Labourer	धमिक, कामगार	Migratory worker	प्रवासी धमिक
Labour Co-operatives	धमिक सहकारी उत्पादन समितियां	Minimum wage	न्यूनतम मजदूरी
Labour-Court	धम-न्यायालय	Mobility	गति-शीलता
Labour Machinery	धम-स्यबस्था	Mobilisation	सामाजिकी पुढाता
Labour Management Co-operation	धमिक प्रबन्धक सहयोग	Modernisation	आधुनिकीकरण
Labour-Market	धम-बाजार	Modification	विभरण रूप भंगन
Labour-Turnover	अभिवाहर्त	Money-wage	मरद मजदूरी
Laissez-fair	अबन्ध नीति	Moral	नैतिक
Lay-off	अबरो-छुटी	Morale	हौसगा
Lay out	विस्थास	Motion-study	गति-अध्ययन
Legitimate	बैध	Multipher	गुणक
Legislation	विधान	Multi-shift system	बहुपारी पद्धति
Levy	उगाही		
Liability	दायित्व	N	
Liquidation (of company)	समापन	Negative	अकारण
		Negotiation	परामर्श
		Net	निव
		Night shift	रात्रि शिफ्ट
		Nominal Wage	मरद मजदूरी
		Nomination	अवनीत, नामन

Employment Exchange	रोजगार बफ़र	Graduated wage	भारोही मजदूरी अनुदान अनुदान
Employment-oriented	रोजगार प्रधान	Grant	
Endorsement	पूटांकन	Gratuity	अनुवोपिक, अककाय प्राप्त पन
Enquiry	बांध पूछताछ	Grievance Procedure	सिद्दयत-निबारण-क्रियाविधि
Entrepreneur	उद्यमकर्ता	Guarantee	गारंटी
Environment	पर्यावरण		H
Establishment	माहीस वाठावरण प्रतिष्ठान	Handicapped	विकला
Evaluation	सिद्धयन्त्री	Hobby centre	उपस के
Evasion	मुक्यांकन	Housing	घाब
Exception	अपबंधन	Human	मानस
Execute	अपबाब	Hygiene	स्वास्थ्य विा
Executive	निय्यावन करना		I
Ex-officio	कार्याय	Idle resources	निर्धिक्रिय साधन
Ex-party	पदेन	Illegal	अबंध
Ex-serviceman	एक पक्षीय	Illegitimate	अबंध
Extend	नूनपुर्ब उैनिक	Immobility	परिहीनता
Extensive	अ्यापकता	Immigrant	आप्रवासी
External	विस्तार	Implementation	
Extra-mural	बाह्य	Indebtedness	कार्यान्वित
	F	Indentured	साधु होना
Fact	तथ्य	Index-number	अणुप्रस्तता
Fatigue	थालि	Industrial-disease	करारबद्ध
Fatal	कमालि	Industrial peace	सुचकांक
Factionalism	बातक	Industrial relations	उद्योग जनित बीमारी
Factors	नुटबन्दी		उद्योग घाति
Factory	उपादान	Inequalities	
Fair Wage	कारखाना फेक्ट्री	Injunction	मजदूर सम्बन्ध
Federation	उचित मजदूरी	Ir-kind	असमानतायें
Follow up methods	संमम	Instalment	मिपेमात्रा
Forced labour	पुनः निरीक्षण	Institute	त्रिप्त में
Frictional	बेगार	Instituts	किष्ठा संघिका
Full Employment	असंतुसनात्मक	Institutional	उत्पाता
Fund	पूछे रोजगार	Instructor	संस्थाप
Funded	नियि	Insured	सौत्थानिक
	G	Intermediary	अनुवेषक
Gainful	निधिबद्ध	Interim	बीमाइत
Gentleman s Agreement	पर्यकर, सामवायक		मध्यस्थ मध्यम
Go-slow-tactics	अयद करार		अन्तरिम
	कार्यन मंदन युक्तिवा		

Intermittent	संचिराम	Liquidation (of debt)	समाकरण
Interview	समासाप	Liquidity Preference	नकदी तरजीह
Intensive Labour	धम प्रचान	Living-wage	पर्याप्त-वेतन, निर्बाहिका
Intimidation	धमिवास धमकाना	Local bodies	स्थानीय निकाय
Intra-mural	धन्तमुंही	Lock-out	तामाबरी
Invalid	निवस	Localisation	स्थानीयकरण
Investigation	अनुसंधान	Lost-time	क्राय-समय-नाश
Investment/In put	निवेश		
Inventories	कच्चा या अर्ध-तैयार मास		
	J		M
Job	काम, नौकरी, कार्य	Management	प्रबंध प्रबंधक
Job-instruction	कार्यानुदेशन	Man-dav	धम पिन
Job-method	कार्य प्रणाली	Manufacture	बिनिर्माण
Job-Relations-Training	धमिक सम्बन्ध प्रशिक्षण	Marine	समुद्री
Job-specification	कार्य-विशिष्टि	Maritime	सामुद्रिक
Judiciary	न्यायांग	Maternity benefit	मातृत्व हित-साध
Junior	प्रबुर	Mature	परिपक्व
Jurisdiction	धमसंचारी	Means-test	जीविका साधन जाँच
	K	Memorandum	ज्ञापिका
Kidnap	सपहरण	Method deductive	निगमन रीति
	L	Method, inductive	धामन रीति
Labour	धम, धमिक, मजदूर	Migratory character	प्रवाहितता
Labourer	धमिक, कामगार	Migratory worker	प्रवासी धमिक
Labour Cooperatives	धमिक सहकारी उत्पादन समितियाँ	Minimum wage	न्यूनतम मजदूरी
Labour-Court	धम-न्यायालय	Mobility	संचिनीयता
Labour Machinery	धम-व्यवस्था	Mobilisation	सामाजिकी, पुढाना
Labour Management	धमिक प्रबन्धक सहयोग	Modernisation	धामुनीकरण
Labour-Market	धम-बाजार	Modification	विवरण, रूप धेवन
Labour-Turnover	धमिवाकत	Money-wage	नकद मजदूरी
Laissez-fair	प्रबंध मीति	Moral	नैतिक
Lay-off	वचरी-मुनी	Morale	हौसला
Lay out	निष्कास	Motion-study	गति-धमन
Legitimate	संच	Multipher	गुणक
Legislation	विधान	Multishift system	वृत्तवारी पञ्चि
Levy	उगाही		N
Liability	दायित्व	Negative	सवादात्मक
Liquidation (of company)	समापन	Negotiation	परजमन
		Net	निवत
		Night shift	रात्रि वारी
		Nominal Wage	नकद मजदूरी
		Nomination	समीचीन धमन

Repeal	निरसन करना	Stage	चरण
Representation	प्रतिवेदन	Standing Order	स्वाई भादेउ
Requisition	प्रतिग्रहण	Standard time	मानक समय
Resettlement	पुनः स्थापन	Standardisation	समानोकरण
Resources	साधन	Stipend	वजीफ़
Rest-pause	श्रम विराम	Strike	हड़ताल
Rest shelter	विश्राम स्थल	Subsidy	उपदान
Retrenchment	छटनी	Subsidiary	उपसंगी
Review	समीक्षा पुनर्निरीक्षण	Substitution	स्थानापन्न
Revolutionary	क्रांतिकारी	Substance level	निर्बाह स्तर
Rioting	बसबा	Subsidised Industrial Housing Scheme	उपदान प्राप्त औद्योगिक आवास-योजना
Risk	बोखिम	Supervisor	पर्यवेक्षण
Rival	स्पर्धी प्रतिद्वन्दी	Supply	सम्भरण
Rotation plan	बदलते धमिक योजना	Surface workers	खान के ऊपर क धमिक
S			
Sabotage	टोड़फोड़ ध्वस्तपंथ	Surplus	बेटी धमियेप
Safety campaign	सुरता प्रान्थोसन	Surveyers	खबेराक
Sanitation	बनमस निकास व्यवस्था	Survivor	उत्तर जीषी
Scarcity	हुसंभता	Suspension	निसम्नन
Scheme	योजना	Sweating	धमि-त्रम
Schedule	धनुमूधि	Sweated trades	घोषित धंसे
Scuffle	हाथापाई	T	
Seasonal	मौसमी सामयिक	Taxation	करापात
Security	बमानन सुरता	Technical	तानीरी
Self-sufficiency	आत्मनिर्भरता	Test	परीक्षण
Senior	प्रवर	Time study	समय धम्ययन
Separate rate	धियुक्ति दर	Time-lag	समय का ध्वरपात
Serfdom	ध्वि दासता	Time wage	धमानी
Settlement	समझौता	Threatened strike	घाउरिठ हड़ताल
Shift	पाटी	Thrift	धिमन्धिता
Shop	धमासय दुकान	Token strike	संकेतिक हड़ताल
Shop steward	धमासय प्रतिनिधि	Trade council	ध्वरपाय परिषद
Single shift system	एक पाटी	Trainee	प्रति तारी
Sit down strike	हाजिर हड़ताल	Training	प्रतिताता धिमनाई
Size	आकार	Training within industry	धमर-आय-धमितात
Skilled labour	कुशल धर्मकारी	Transaction	मीत ध्वरहार लेन-देन
Social Insurance	सामाजिक बीमा	Tribunal	धमिकरण
Social service agencies	सामाजिक सेवा संस्थाएँ		
Source	उत्पन्न स्थान		
Spread over	धम समय बितार		

	O		Process	प्रक्रिया
Occupation		व्यवसाय	Productivity	उत्पादकता
Off-shift		इतर पार्टी	Profit-sharing	लाभ सहभाजन
Ordinance		अध्यादेश	Progressive	आधुनिकी
Outlay		व्यय	Project	आयोजना
Out put		निष्पन्न	Proletariat	मजदूर वर्ग
Over-crowding		घटि-भीड़	Promulgation	प्रख्यापन
Over-lapping shafts			Proneness	प्रवृत्ति
Over-time		परस्पर व्यापी पार्टियां	Propagation	संचारण, प्रचार
Over work		समयोपरि, सवाई	Propensity to consume	उपभोग प्रवृत्ति
	P	घटि-भ्रम	Prosecution	अभियोग
Panel		नामिका	Prospects	सम्भावनाएं
Partial		आंशिक	Provident Fund	प्रोविडेंट फंड
Part time		अंश कालिक	Provision	उपबन्ध
Participation in Management			Psychology	मनोविज्ञान
Perennial		प्रबन्ध में भाग	Publicity	प्रकाश
Performance		निरन्तर भाव	Public sector	सरकारी क्षेत्र
Permissive		कार्य		
Perquisites		अनुज्ञात्मक	Qualification	Q
Personal		अतिरिक्त सुविधाएँ,	Quality	गुण
Personnel		सहायता	Quantity	मात्रा
Picketing		निजी, व्यक्तिगत	Questionnaire	प्रश्नमात्रा
Piece wage		कामिक	Quit rats	त्याग द
Plan		परना		R
Planning		व्यय	Ratification	सत्यांकन अनुसमर्थन
Planning Commission		आयोजना	Rationalisation	विवेक संगति विवेकीकरण
		आयोग	Recess	विभाषा अन्तराल
Pledging		आयोजना	Recruitment	भर्ती
Pool system		आयोग	Refer	निर्देशन करना
Positive		अनुबंध	Registration	पंजीकरण
Potential		पुनः प्रणाली	Regularisation	नियमानुसूचन
Preference		सकारणिक	Regulation	विनियम, विनियमन
Prerogative		सम्भाव्य	Rehabilitation	पुनर्वास
Priority		अभिमान्यता, सरबोह	Relative	सापेक्ष
Private sector		विशेषाधिकार	Remedy	उपचार
		अवकाश प्राप्ति	Remuneration	वेतन, वेतन, पारिश्रमिक
		निजी क्षेत्र		
		नर सरकारी क्षेत्र		
Privilege		विशेषाधिकार		
Probationary		परिधीय		

Repeal	निरसन करना	Stage	धरण
Representation	प्रतिवेदन	Standing Order	स्थायी आदेश
Requisition	अधिग्रहण	Standard time	मानक समय
Resettlement	पुनः स्थापन	Standardisation	समानिकरण
Resources	साधन	Stipend	वर्गीकृत
Rest-pause	अल्प विराम	Strike	हड़ताल
Rest shelter	विद्यमान स्थल	Subsidy	उपदान
Retrenchment	छटनी	Subsidiary	उपसंगी
Review	समीक्षा पुनर्निरीक्षण	Substitution	स्थानान्तरण
Revolutionary	क्रांतिकारी	Substance level	निर्वाह स्तर
Rooting	बसवा	Subsidised Industrial Housing Scheme	उपदान प्राप्त औद्योगिक आवास-योजना
Risk	बोझिम	Supervisor	पर्यवेक्षण
Rival	स्पर्धी प्रतिद्वन्द्वी	Supply	सम्भरण
Rotation plan	बदसते क्रमिक योजना	Surface workers	खान के ऊपर के क्रमिक
S			
Sabotage	तोड़फोड़, ध्वस्तपर्व	Surplus	वर्ती अधिव्यय
Safety campaign	सुरक्षा अभियोग	Surveyors	सर्वेक्षक
Sanitation	बनसत निकास व्यवस्था	Survivor	उत्तर जीवी
Scarcity	दुर्लभता	Suspension	निस्तन्वन
Scheme	योजना	Sweating	अति-व्यय
Schedule	घनसूचि	Sweated trades	घोरित धंधे
Scuffle	हाथापाई	T	
Seasonal	मौसमी, सामयिक	Taxation	कराधान
Security	समानत सुरक्षा	Technical	तकनीकी
Self-sufficiency	आत्मनिर्भरता	Test	परीक्षण
Senior	प्रवर	Time study	समय अध्ययन
Separate rate	विपुक्ति दर	Time-lag	समय का व्ययधान
Serfdom	इवि दासता	Time wage	समामी
Settlement	समझौता	Threatened strike	आयोजित हड़ताल
Shift	पारी	Thrift	मित्तन्वयिता
Shop	समानय दुकान	Token strike	संकेतिक हड़ताल
Shop steward	समानय प्रतिनिधि	Trade council	व्यवसाय परिषद्
Single shift system	एक पारी	Trustee	प्रतिप्राधी
Sit down strike	हाजिर हड़ताल	Training	प्रशिक्षण विद्यालय
Size	आकार	Training within industry	आयुध-आय-प्रशिक्षण
Skilled labour	कुशल कर्मचारी	Transaction	गौण अदालत में-केन
Social Insurance	सामाजिक बीमा	Tribunal	अधिकरण
Social service agencies	सामाजिक सेवा संस्थानें		
Source	उद्गम स्थान		
Spread over	समय समय बिस्तार		

धम समस्याएँ एवं समाज कल्याण

Tripartite
Truce
Trustee

त्रिपक्षीय
विराम संधि
न्यासी

Victimisation
सतना
Vocational
Voluntary

प्रत्याहार, संय करना
व्यावसायिक
ऐच्छिक

U

Underemployment

अपूर्ण रोजगार

Wages
Wage cut

मजदूरी
मजदूरी कटौती
मजदूरी घटाना

Under ground worker

खान का भीतर के श्रमिक

Wage differentials
Wages Fund Theory

मजदूरी अंतर
मजदूरी निधि सिद्धांत

Unemployment

बेकारी, बेरोजगारी

Wage Incentive System

प्रेरणात्मक मजदूरी प्रणाली

Unemployable
Unfair

रोजगार के असमर्थ
अनुचित

Wage, real

वास्तविक मजदूरी

Unionism

संघ पद्धति

Waiting period

प्रतीक्षाकाल

Unlawful

संघ पद्धति

Weighted

महत्त्वपूर्ण

Unorganised

विविध विच्छेद

White collar job

सफेद पौस नौकरी

Unregulated

अनियंत्रित

Whole time

पूर्ण कालिक

Unrest

असंतुष्टि

Working class

श्रमिक वर्ग

Upgrading

परोक्ष

Works Committee

कार्यक-मजदूर समिति

V

Vacancy
Ventilation

रिक्त स्थान
संवातन

Y

Yellow unions

पोषित संघ

